श्री वीर-सेवामन्दिर—सस्ती ग्रन्थमाला का आठवां पुष्प

श्री रविषेणाचार्य विरचित

पद्मपुराण

(श्रीराम-चरित)

हिन्दी भाषाकार

स्व० पं० दौलतराम जी

सम्पादक

हीरालाल सिद्धान्त-शास्त्री

भाद्रपद
वीरनि० २४७६
विक्रम सं० २००७

प्रथम बार ५०००

मूल्य ७) रुपया

प्रस्तावना

इस अवसर्पिणी कालमें उत्पन्न हुए तिरेसठ शलाकापुरुषोंमें तीर्थंकरोंके समान ही रामका नाम अति विश्रुत है। बल्कि यह कहना भी अत्युक्ति न होगी कि भारतवर्षमें उत्पन्न हुए महापुरुषोंमें रामका नाम ही सबसे अधिक लोगोंको द्वारा व्यवहृत होता है। रामका नाम इतना अधिक प्रसिद्ध क्यों हुआ? लोग बात-बातमें रामकी दुहाई क्यों देते हैं और अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिके साथ राम-राज्यका स्मरण क्यों किया जाता है? इन प्रश्नोंपर जब हम गहराई के साथ विचार करते हैं तो ज्ञात होता है कि रामके जीवनमें ऐसी अनेक घटनाएँ घटी हैं, जिनसे उनका नाम प्रत्येक भारतीयकी रग-रगमें समा गया है, उनका पवित्र चरित्र लोगोंके हृदयमें अंकित हो गया है और यही सब कारण हैं कि वे इतने अधिक लोकप्रिय महापुरुष सिद्ध हुए हैं।

रामके गुणोंकी गाथा उनके जीवन कालमें ही लोगोंके द्वारा गाई जाने लगी थी। कहा जाता है कि भारत वर्षका आदि काव्य वाल्मीकि-रामायण उनके जीवन-कालमें ही रचा गया था और महर्षि वाल्मीकिने उसे लव और अंकुशको पढ़ाया था। जो कुछ हो, पर इतना निश्चित है कि रामके चरित्र-चित्रण करनेवाले ग्रन्थोंमें वाल्मीकि-रामायण आदि ग्रन्थ है। जिसका सबसे बड़ा प्रमाण स्वयं इसी पद्मपुराणकी वह भूमिका है, जहांपर राजा श्रेणिकने भगवान् महावीरसे प्रश्न किया है कि

श्रूयन्ते लौकिके ग्रन्थे राक्षसा रावणादयः। वसाशोणितमांसादिपानभक्षणकारिणः ॥*

अर्थात्—लौकिक ग्रन्थमें ऐसा सुना जाता है कि रावणादिक राक्षस थे और वे मांस, वसा आदिका भक्षण और रक्तका पान करते थे।

विदित हो कि यहां लौकिक ग्रन्थसे अभिप्राय वाल्मीकि रामायणसे ही है। इससे भी अधिक पुष्ट प्रमाण इसमें आगेके वे श्लोक हैं, जहां पद्मपुराणकारने बड़ा दुख प्रकट करते हुए कहा है कि—

अहो कुकविभिर्मूर्खैर्विद्याधरकुमारकम्। अभ्याख्यानमिदं नीतो दुःकृतग्रन्थकच्छकैः ॥
एवंविधं किल ग्रन्थं रामायणमुदाहृतम्। शृण्वतां सकलं पापं क्षयमायाति तत्क्षणात् ॥+

अर्थात्—आश्चर्य है कि मूर्ख कवियोंने श्रेष्ठ विद्याधरोंके पवित्र चरित्रको इस प्रकार विरूप चित्रित किया? इस प्रकारका यह ग्रन्थ रामायण नामसे प्रसिद्ध है, जिसके सुननेसे सुननेवालोंके सर्व पाप क्षण भरमें क्षयको प्राप्त हो जाते हैं।

इस उल्लेखसे स्पष्ट है कि भगवान् महावीरके समयमें भी वाल्मीकि-रामायणका खूब प्रचार था और लोग उसे सुननेसे अपने पापोंका क्षय होना मानते थे।

पद्मपुराणकी रचनाका आधार

पद्मपुराणकी रचनाका आधार विद्वान् लोग 'पउमचरिउ' को मानते हैं, जो कि भ० महावीरके निर्वाणके लगभग ४५० वर्ष बाद रचा गया है, उसमें भी इसी प्रकारका उल्लेख है जिससे भी यही सिद्ध होता है कि उस समय वाल्मीकि रामायण जन-साधारणमें अत्यन्त प्रसिद्ध थी और उसमें चित्रण किया गया राम रावणका चरित्र ही लोग यथार्थ मानते थे। राम और रावणके चरित्र-विषयक भ्रान्तिके दूर करनेके लिये 'पउमचरिउ' और प्रस्तुत पद्मचरितकी रचना हुई है।

*पद्म० प० २ श्लो० २३०   +पद्म० प० २, श्लो० २३६-२३७

पद्मपुराणका रचना-काल

संस्कृत पद्मचरितकी रचना भ० महावीरके निर्वाणसे १२०३ वर्ष बाद हुई है* । यदि वीरनि०से ४७० वर्ष बाद विक्रम संवत्का प्रारम्भ माना जाय, तो पद्मपुराणका रचनाकाल विक्रम सं० ८३४ में समझना चाहिए।

दिगम्बर सम्प्रदायमें उपलब्ध कथा-साहित्यमें २-१ ग्रन्थोंको छोड़ कर यह ग्रन्थ सबसे प्राचीन है। यदि प्राकृत 'पउमचरिउ' भी दिगम्बर ग्रन्थ सिद्ध हो जाता है (जिसका कि अभी अन्तरंग-परीक्षण नहीं हुआ है) तो कहना पड़ेगा कि दिगम्बर कथा-ग्रन्थोंमें यह सर्व प्रथम है।

रामचरित्रका चित्रण

रामका चरित्र-चित्रण करने वाले ग्रन्थोंमें स्पष्टतः दो प्रकार पाये जाते हैं, एक पद्मपुराणका प्रकार और दूसरा उत्तरपुराणका प्रकार। जहां तक पद्मपुराणकी कथाका सम्बन्ध है, वह प्रायः रामायणका अनुसरण करती है। पर उत्तरपुराणमें रामका चरित्र एक नवीन ही ढंगसे चित्रित किया गया है। दोनोंमें कौन कथानक सत्य है, या सत्यके अधिक समीप है, इस बातके निर्णय करनेकी न कोई सामग्री उपलब्ध है और न हममें उसके निर्णय करनेकी शक्ति और योग्यता ही है। हम केवल धवलाकार वीरसेनाचार्यके शब्दोंमें इतना ही कह सकते हैं कि दोनों ही प्रामाणिक आचार्य हुए है, और हमें दोनों ही प्रकारोंका संग्रह करना चाहिए, यथार्थ स्वरूप तो केवलज्ञान-गम्य ही है।

पद्मपुराणके रचयिता आचार्य रविषेण

संस्कृत पद्मपुराणके रचयिता आचार्य रविषेण हैं। उन्होंने अपनी गुरु-परम्परा इस प्रकार दी है :—

ज्ञाताशेषकृतान्तसन्मुनिमनःसोपानपर्वावली, पारंपर्यसमाश्रितं सुवचनं सारार्थमत्यद्भुतम् ।
आसीदिन्द्रगुरोर्दिवाकरयतिः शिष्योऽस्य चार्हन्मुनिस्तस्माँल्लक्ष्मणसेनसन्मुनिरदः शिष्यो रविस्तु स्मृतम् ॥+

अर्थात्—भ० महावीरके पश्चात् अशेष आगमके जानने वाली आचार्य-परम्परामें इन्द्रगुरु हुए, उनके शिष्य दिवाकरयति हुए, उनके शिष्य अर्हन्मुनि और उनके शिष्य लक्ष्मणसेन हुए। उनके शिष्य रविषेण हुए, जिन्होंने यह पद्म मुनिका पवित्र चरित्र बनाया।

रविषेणाचार्यकी गुरु-परम्पराके आचार्योंने किन-किन ग्रन्थोंकी रचनाकी है, इसका यावधि कुछ पता नहीं लग सका। पर रविषेणाचार्यके उक्त शब्दोंसे इतना निश्चित है कि वे सब सर्व आगमके ज्ञाता थे। अतः गुरु पर्वक्रमसे रविषेणाचार्यको भी आगम-ज्ञान प्राप्त था। प्रस्तुत पद्मपुराणका स्वाध्याय करने पर पता चलता है कि रविषेणाचार्यको प्रथमानुयोग-सम्बन्धी कथा-साहित्यका कितना विशाल ज्ञान था। उन्होंने अपने इस ग्रन्थमें सहस्रों उपकथाएं निबद्ध की हैं। इसके अतिरिक्त चरणानुयोग, करणानुयोग और द्रव्यानुयोग-सम्बन्धी ज्ञान भी अत्यन्त बढ़ा-चढ़ा था, जिसका पता हमें उनके कथानकोंके बीच-बीच दिये गये स्वर्ग-नरकादिके वर्णन, द्वीप-समुद्रोंके चित्रण, आर्य-अनार्योंके आचार-विचार, रात्रि-भोजनादि और पुण्य-पापके फलादिकसे चलता है। शान्त और करुण रसका तो इतना सुन्दर चित्रण शायद ही अन्यत्र देखनेको मिलेगा। सीताके हरे जानेके पश्चात् रामकी दयनीय दशाका, लंकाके उपवनमें और देश-निष्कासनके पश्चात् वनमें छोड़ दिये जानेपर, तथा अग्निकुंडकी परीक्षामें उत्तीर्ण होनेके बादके वर्णन तो अलौकिक चमत्कारपूर्ण है। उन्हें पढ़ते हुए एक बार आंखोंसे आंसुओंकी धारा बहने लगती है और जब हम लक्ष्मणके दिवंगत होनेपर रामकी दशाको देखते हैं, उनके अकृत्रिम और लोकोत्तर भ्रातृप्रेमको पढ़ते हैं, तो उस समयका वर्णन करना हमारे लिए असंभवसा हो जाता है। संक्षेपमें कहा जाय, तो इस पद्मपुराणमें हमें सभी रसोंका यथास्थान सन्निवेश मिलेगा, पर इसमें प्रधानता करुण और शान्त रसकी ही है।

---

*द्विशताभ्यधिके समासहस्रे समतीतेऽर्धचतुर्थवर्षयुक्ते । जिनभास्करवर्धमानसिद्धे चरितं पद्ममुनेरिदं निबद्धम् ॥
पद्म० प० १२३, श्लो० १८१

+पद्म० प० १२३, श्लो० १६७

मूलग्रन्थका प्रमाण लगभग १८००० श्लोक है। जोकि श्री माणिकचन्द्र दि० जैनग्रन्थमाला बम्बईसे तीन भागोंमें मुद्रित हो चुका है। स्वाध्याय-प्रेमियोंसे मेरी प्रेरणा है कि वे एक बार मूलग्रन्थका अवश्य ही स्वाध्याय करें।

रामका व्यक्तित्व

यद्यपि पद्मचरित या पद्मपुराण नाम होनेसे इसमें मुख्यत: श्री रामका चरित्र चित्रण है, पर उनकी जीवन-सहचरी होनेके नाते सारे राम-चरित्रमे सीता सर्वत्र व्याप्त हैं। सीताके पिताकी सहायता करनेके कारण ही राम सर्व प्रथम सिंह-तनय या वीर-पुत्रके रूपमें लोगोंके सामने आये। सीताके स्वयंवर द्वारा रामके पराक्रमका यश सर्वत्र फैला। रावणपर विजय पानेके कारण वे जगत्प्रसिद्ध महापुरुषके रूप में विख्यात हुए। इसके बाद लोकापवादके कारण सीताका परित्याग करनेसे तो वे इतने अधिक प्रकाशमें आए कि आज हजारों वर्षों के बाद भी लोग राम-राज्यकी याद करते हैं। जब लोकापवादकी चर्चा रामके सामने आई-तो वे विचारते हैं कि:—

अपश्यन् क्षणमात्रं यां भवामि विरहाकुलः। अनुरक्तां त्यजाम्येतां दयितामधुना कथम्॥
चक्षुर्मानसयोर्वासं कृत्वा याऽवस्थिता मम। गुणधानीमदोषां तां कथं मुंचामि जानकीम्॥[1]

अर्थात्—जिस सीताको क्षणमात्र भी देखे बिना मैं विरहसे आकुल-व्याकुल हो जाता हूं उस अनुरक्त प्राण-प्यारी सीताका मैं कैसे परित्याग करूँ? जो मेरे नयन और मानसपर सदा अवस्थित है, गुणोंकी राजधानी है, सर्वथा निर्दोष है, उस प्यारी जानकीको मैं कैसे तजूं?

एक ओर लोकापवाद सामने खड़ा है और एक ओर निर्दोष प्राण प्रियाका दुःसह वियोग? कितनी विकट स्थिति है, राम अत्यन्त असमंजसमें पड़ जाते है, कुछ समयके लिए किंकर्त्तव्यविमूढ़से हो जाते हैं। उस समयकी मानसिक दशाका चित्रण करते हुए ग्रन्थकार कहते हैं:—

इतो जनपरीवादश्चेतः स्नेहः सुदुस्त्यजः। आहोऽस्मि भय-रागाभ्यां प्रक्षिप्तो गहनान्तरे॥
श्रेष्ठा सर्वप्रकारेण दिवौकोयोषितामपि। कथं त्यजामि तां साध्वीं प्रीत्या यातामिवैकताम्॥[2]

अर्थात्—एक ओर जनापवाद और एक ओर दुस्त्यज स्नेह। अहो, मैं दोनोंकी द्विविधामें पड़ा हुआ गहन वनके मध्य फैंक दिया गया हूँ। जो सीता देवांगनाओं से भी सर्व प्रकार श्रेष्ठ है, सती साध्वी है, मेरे प्राणोंके साथ एकत्वको प्राप्त हो रही है, उस सीताको मैं कैसे तजू?

फिर राम विचारते हैं:—

एतां यदि न मुंचामि साक्षाद् दुःकीर्तिमुद्गताम्। कृपणो मत्समो मह्यां तदैतस्यां न विद्यते॥[3]

अर्थात्—यदि इस सीताका परित्याग नहीं करता हूं तो इस महीपर मेरे समान और कोई कृपण न होगा!

यहांपर कृपण-शब्द खास तौरसे विचारणीय है। जो दान नहीं देता, वह कजूस कहलाता है, उसके लिए संसारमें कृपण शब्दका व्यवहार होता है। दानके लक्षणमें कहा है कि:—

अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम्। तत्वार्थ० अ० ७, सूत्र ३८.

अर्थात्—जो पर अनुग्रहके लिए अपनी वस्तुका त्याग किया जाता है, उसे दान कहते हैं। लोगोंमें फैले हुए अपवादको दूर करनेके लिए अपनी प्राणोंसे भी प्यारी वस्तु सीताका यदि मैं परित्याग नहीं कर सकता, तो मेरेसे बड़ा और कौन कृपण होगा। कितना यथार्थ चित्रण है रामकी मानसिक दशाका।

अन्तमें ग्रन्थकार स्वयं लिखते हैं कि—

---

[1] प० पर्व ९६, श्लो० ५९-६०। [2] पद्म० प० ९६ श्लो० ६९।७० [3] पद्म प० ९६ श्लो० ७१।

स्नेहापवादभयसंगतमानसस्य व्यामिश्रतीव्ररसवेगवशीकृतस्य ।
रामस्य गाढपरितापसमाकुलस्य कालस्तदा निरुपमः स बभूव कृच्छ्रः ॥[1]

अर्थात्—एक ओर जिनका चित्त गाढ स्नेहसे वशीकृत हैं और दूसरी ओर लोकापवादसे जिनका हृदय व्याकुल है, ऐसे स्नेह और अपवादसे व्याप्त चित्त रामका वह समय अत्यन्त कष्टप्रद था, जिसकी उपमा अन्यत्र मिल नहीं सकती है।

इस स्थितिमें सीताका परित्याग रामके लिए सचमुच महान् त्यागका आदर्श उपस्थित करता है। यह एक ऐसी घटना है कि जिससे राम सच्चे राम बने और कल्पान्त-स्थायी उनका यश आज भी दिग्दिगन्त-व्यापी हैं। यदि उनके जीवनमें यह घटना न घटती, तो लोग राम-राज्यकी याद भी इस प्रकार न करते।

सीताका आदर्श

सीताके परित्यागसे रामका नाम ही अमर नहीं हुआ, बल्कि सीता भी अमर हो गई। और यही कारण है कि लोग 'सीताराम' कहते हुए रामसे भी पहले सीताका नाम लेते हैं। यदि रामके कथानकमेंसे सीताका कथानक निकाल दिया जाय तो सारा कथानक निष्प्राण रह जायगा। सीताके प्रत्येक कार्यने भारतीय ही नहीं, अपितु संसारभरकी स्त्रियोंके सामने अनेक महान् आदर्श उपस्थित किये हैं। पतिकी विपत्तिके समय सदा साथ रहना, दुर्जनोंके बीचमें पड़ जानेपर भी अपने पातिव्रत्यको सुरक्षित रखना, रामके द्वारा परित्याग किये जानेपर भी रामके प्रति जरा सा भी अन्यथा भाव मनमें लाना, कितना बड़ा आदर्श है। जब रामका सेनापति सीताको भयंकर वनमें छोड़कर जाने लगता है, तब सीता सेनापतिसे कहती है—

सेनापते त्वया वाच्यो रामो मद्वचनादिदम्। यथा मत्त्यागजः कार्यो न विषादस्त्वया प्रभो ॥[2]

अर्थात्—हे सेनापते, तुम रामसे कहना कि वे मेरे त्याग करनेका कोई विषाद न करें।

इसके बाद भी सीता रामके लिए संदेशा देती है :—

अवलम्ब्य परं धैर्यं महापुरुष सर्वथा। सदा रक्ष प्रजां सम्यक् पितेव न्यायवत्सलः ॥[3]

अर्थात्—हे महापुरुष, मेरे वियोगसे दुःखी न होकर और परम धैर्यका अवलम्बन कर सदा न्यायवत्सल होकर पिताके समान प्रजाकी भले प्रकार रक्षा करना।

ओह, धन्य सीते, तुझे आगे आनेवाली अपनी विपत्तियोंका जरा भी ध्यान नहीं और प्रजाकी रक्षाका इतना ध्यान! इससे दो बातें बिलकुल स्पष्ट हो जाती हैं, एक तो यह कि रामके द्वारा अपने निर्वासित किये जानेसे सीताको रामके प्रति जरा सा भी क्षोभ नहीं था। वे अच्छी तरह जानती थीं कि रामका मेरे प्रति अगाध स्नेह है और पूर्ण विश्वास। पर प्रजाका ध्यान रखकर उन्हें मेरे परित्यागके लिए विवश होना पड़ा है। धन्य, पतिव्रते धन्य! जो रामके द्वारा एक गर्भिणी अबलाको संकटोंसे भरे हुए विकट वनमें छोड़ दिये जानेपर भी तुझे पतिके ऊपर जरा सा भी क्षोभ नहीं हुआ। और तेरा प्रजा-प्रेम भी रामसे कहीं बढ़कर है, जो इस अपनी दारुण-दशाके समय भी प्रजाका हित-चिन्तन करते हुए रामको पिताके समान वात्सल्यसे भरे हुए उसकी रक्षा करनेका संदेशा दे रही है।

इससे आगे सीता सेनापतिको और भी संदेश देती है :—

संसाराद् दुःखनिर्घोरान्मुच्यन्ते येन देहिनः। भव्यास्तद्दर्शनं सम्यगाराधयितुमर्हसि ॥
साम्राज्यादपि पद्माभ तदेव बहु मन्यते। नश्यत्येव पुनाराज्यं दर्शनं स्थिरसौख्यदम्।

---

[1] पद्म पर्व ९६, श्लो० ७२, [2] पर्व ९६, श्लो० ११७ [3] पर्व, ९६, श्लो० ११८, [4] पर्व, ९७, श्लो० १२०-१२२.

अर्थात्—जिस सम्यग्दर्शनके प्रभावसे भव्य जीव घोर संसार-सागरसे पार उतरते हैं, हे राम, तुम उस सम्यग्दर्शनकी भलीभांति आराधना करना। हे पद्माभ-पद्म, वह सम्यग्दर्शन साम्राज्यसे भी बढ़कर है। राज्य तो नष्ट हो जाता है, पर वह सम्यग्दर्शन स्थायी अविनश्वर सुखको देता है। सो हे पुरुषोत्तम राम, ऐसे सम्यग्दर्शनको तुम किसी अभव्य पुरुषके द्वारा निन्दा किये जानेपर छोड़ मत देना—जैसा कि लोकापवादके भयसे मुझे छोड़ दिया है !!!

कितना मार्मिक सन्देश है। धन्य सीते धन्य ? जो तू इतनी बड़ी विपत्तिमें पड़नेपर भी अपने प्रियको इतना दिव्य सन्देश दे रही है। सचमुच में तू सती-शिरोमणि और पतिव्रताओंमें अग्रणी है।

इसके बाद हम सीताके अतुल धैर्यको उस समय देखते हैं, जब भामंडल आदि जाकर पुंडरीक नगरसे सीताको अयोध्या लाते हैं, सीता रामके पास भरी सभामें सामने जाती है, चिर-वियोगके बाद पति-मिलनकी आशाएं हृदयमें हिलोरें भर रही हैं, ऐसे समयमें राम कहते हैं :—

ततोऽभ्यधायि रामेण सीते तिष्ठसि किं पुरः। अपसर्प न शक्तोऽस्मि भवतीमभिवीक्षितुम् ॥[1]

सीते, सामने क्यों खड़ी है, यहांसे हट जा, मैं तुझे नहीं देखना चाहता।

सैकड़ों वर्षोंके बाद और प्रियजनोंके द्वारा अत्यन्त स्नेहपूर्ण आग्रहके साथ लाई जानेपर भी सीताने जब रामके ये वचन सुने होंगे, तो पाठक स्वयं ही सोचें, उसकी उस समय क्या दशा हुई होगी ?

अन्तमें अपनेको संभालकर और किसी प्रकार शक्ति बटोरकर सीताने रामसे कहा—राम, यदि तुम्हें छोड़ना ही था, तो आर्यिकाओंके पास क्यों नहीं छुड़वा दिया। दोहलोंके पूरा करनेका बहाना क्यों किया, क्या मेरे साथ भी तुम्हें यह मायाचार करना चाहिए था ? तब राम निरुत्तर हो जाते हैं और कहते हैं :—

रामो जगाद जानामि देवि शीलं तवानघम्। मदनुव्रततां चोच्चैर्भावस्य च विशुद्धताम् ॥
परिवादमिमं किन्तु प्राप्ताऽसि प्रकटं परम्। स्वभावकुटिलस्वान्तामेतां प्रत्ययाय प्रजाम् ॥[2]

हे देवि, मैं तेरे निर्दोष शीलव्रतको भले प्रकार जानता हू, तुम्हारे भावोंकी विशुद्धता और मेरे अनुकूल पातिव्रत्यका भी खूब जानता हूँ, पर क्या करूं तुम लोकापवादको प्राप्त हुई, प्रजा स्वभावसे ही कुटिल चित्त होती है, उसे विश्वास पैदा करानेके लिए ऐसा करना पड़ा है।

अन्तमें सीता कहती है कि लोकमें सत्यकी परीक्षाके जितने प्रकार हैं, मैं उन्हें करनेके लिए तैयार हूँ। आप कहें तो मैं कालकूट विषका पान करूं आप कहें तो मैं आशीविष सर्पके मुखमें हाथ डालूं, और यदि कहें तो प्रज्वलित अग्निकी ज्वालामें प्रवेश करूं, आप हर प्रकारसे मेरे शीलकी परीक्षा कर सकते हैं, पर इस प्रकार मेरा परित्याग समुचित नहीं। तब राम क्षण-एक चुप रहकर कहते है, कि तू अग्निकुंडमें प्रवेशकर अपने शीलकी परीक्षा दे। तब सीता अति हर्षित होकर अपनी स्वीकृति देती है। रामकी आज्ञानुसार तीन सौ हाथ लम्बा चौड़ा चौकोन अग्निकुंड तैयार किया गया और चारों ओरसे उसमें अग्नि लगा दी गई। सहस्रों नर-नारी सीताका सत्य देखनेके लिए एकत्रित हुए। अग्निकुंडके चारों ओरसे प्रज्वलित हो जानेपर सीता अपने शीलकी परीक्षा देनेके लिए उद्यत हुई। लोगों में हाहाकार मच गया। नाना मुखोंसे नाना प्रकारकी बातें होने लगीं। उस समय सीता परमेश्वरका ध्यान करके कहती है :—

कर्मणा मनसा वाचा रामं मुक्त्वा परं नरम्। समुद्वहामि न स्वप्नेऽप्यन्यं सत्यमिदं मम ॥
यद्येतदनृतं वच्मि तदा मामेष पावकः। भस्मसाद्भावमप्राप्तामपि प्राप्यतु क्षणात् ॥[3]

[1]पर्व १०४, श्लो० ६३। [2]पर्व १०४, श्लो० ७२-७३. [3]पर्व १०५, श्लो० २५-२६.

इसीको एक दूसरे कविने कहा है :—

मनसि वचसि काये जागरे स्वप्नमार्गे यदि मम पतिभावो राघवादन्यपुंसि ।
तदिह दह शरीरं पावके मामकीनं सुकृत-विकृत नीते देव साक्षी त्वमेव ॥

अर्थात्—यदि मैंने मन-वचन-कायसे जागते हुए या स्वप्नमें भी रामचन्द्रको छोड़कर अन्य पुरुषका चिन्तवन भी किया हो तो यह अग्नि मेरे शरीरको क्षण भरमें भस्म कर डाले। हे देव, मेरे भले-बुरे कार्योंके विषयमें तुम्हीं साक्षी हो।

ऐसा कहकर सीताने अग्निकुंडमें प्रवेश किया। उसके बाद जो कुछ हुआ सो सर्व विदित है। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि जो मनसा, वाचा, कर्मणा शुद्ध शीलके धारक हैं, उन्हें संसारका कोई बड़े से बड़ा भी भय विचलित नहीं कर सकता।

लोग कहते हैं कि कथा ग्रथों और पुराणोंमें क्या रक्खा है, उनके पढ़नेसे क्या लाभ है? ऐसे लोगोंसे मैं कहना चाहता हूं कि सांसारिक प्रलोभनोंमें लुभानेवाली कथाओंके सुननेसे भले ही कोई लाभ न हो, पर उन महापुरुषोंकी कथाएं हृदय पर अपना अमिट प्रभाव डाले बिना नहीं रहती, जिनके जीवनमें एकसे बढ़कर एक दिलानेवाली अनेक घटनाएं घटी हैं, नाना संकट आए हैं, पर जो अपने प्रबल और अदमनीय उत्साह और पराक्रम द्वारा उनपर विजय प्राप्त करते हुए निरन्तर आगे उन्नति करते रहे और अन्तमें महापुरुष बनकर संसारके सामने एक पवित्र आदर्श उपस्थित कर गए। स्वयं रामका जीवन इसका ज्वलन्त उदाहरण है। उनके पवित्र चरित्रसे प्रभावित होकर रावण जैसे उनके प्रबल प्रतिपक्षी तकको अनेकों बार उनकी प्रशंसा करनी पड़ी है।

इसके अतिरिक्त जब हम अनेकों कथानकोंमें पुण्य-पापका फल प्रत्यक्ष देखते हैं, तो उसका ऐसा गहरा प्रभाव हृदयपर पड़ता है कि आत्मा सांसारिक-जंजालोंसे उद्विग्न होकर उनसे मुक्ति पानेके लिए तिलमिला उठती है और हृदय में ये भाव निरन्तर प्रवाहित होने लगते हैं, कि उपार्जित कर्मोंने जब महापुरुषों तकको नहीं छोड़ा, तब हम कौन गिनतीमे हैं! ये ही वे भाव हैं, जिनके द्वारा मनुष्य आत्म-कल्याणकी ओर प्रवृत्त होता है। अतः संसार-स्थितिका यथार्थ चित्रण करनेवाले, पुण्य-पापका फल प्रत्यक्ष दर्शानेवाले, महर्षियों द्वारा रचे गये महापुरुषोंके चरित्रोंका अवश्य अध्ययन करना चाहिये।

दीर्घसूत्री मनुष्य

दीर्घसूत्री मनुष्य किस प्रकार पड़ा-पड़ा नाना प्रकार के विकल्प किया करता है, इसका बहुत सुन्दर चित्रण ग्रन्थकारने भामंडलकी मनोवृत्तिको लक्ष्य करके किया है। भाषाकारके शब्दोंमें जरा उसकी बानगी देखिए—

मैं यह प्राण सुखसूं पाले हैं, इसलिए कैयक दिन राज्यके सुख भोग कल्याणका कारण जो तप सो करूंगा। यह काम-भोग दुर्निवार है, जो इन कर पाप उपजेगा सो ध्यानरूप अग्निकर क्षणमात्रविषै भस्म करूंगा। × × × इत्यादि मनोरथ करता हुआ भामंडल सैंकड़ों वर्ष एक मूहूर्त न्याईं व्यतीत करता भया। यह किया, यह करूं, यह करूंगा, ऐसा चिंतवन करता आयुका अन्त न जानता भया। एक दिन सतखणे महल के ऊपर सुन्दर सेज पर पौढ़ा हुता सो बिजुरी पड़ी अर तत्काल कालकूं प्राप्त भया।

दीर्घसूत्री मनुष्य अनेक विकल्प करें, परन्तु आत्माके उद्धारका उपाय न करें। तृष्णाकरि हता क्षणमात्र हू साता न पावै। मृत्यु सिर पर फिरै ताकी सुधि नाहीं। क्षणभंगुर सुखके निमित्त दुर्बुद्धि आत्महित न करै। विषय वासनाकर लुब्ध भया अनेक भांति विकल्प करता रहे, सो विकल्प कर्म-बन्धके कारण हैं। धन, यौवन, जीतव्य सब अस्थिर हैं। जो इनकूं अस्थिर जान सर्व परिग्रह त्याग कर आत्मकल्याण करें, सो भवसागरमें न डूबें। अर

मिथ्यादर्शनकाची जीव भवविषै कष्ट सहैं। हजारों शास्त्र पढे कर शान्तता न उपजी, तो कहा? अर एक ही पद कर शान्त दशा होय तो प्रशंसा योग्य है। × × × जो नाना प्रकार के अशुभ उद्यम कर व्याकुल हैं, उनकी आयु वृथा जाय है, जैसे हथेली में आया रत्न जाता रहे। ऐसा जान समस्त लौकिक कार्यकूं निरर्थक मान दुःखरूप इन्द्रियों के सुख तिनकूं तज कर परलोक सुधारवेके अर्थ जिनशासनविषै श्रद्धा करहु। (देखो पृ० ६१०)

कितना मार्मिक चित्रण है और ग्रन्थकार भामंडल के बहाने सर्व संसारी लोगों को मानो पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि—

काल करै सो आज कर, आज करै सो अब। पल में परलय होयगा, बहुरि करेगा कब॥

हिन्दी पद्मपुराण

उक्त संस्कृत पद्मचरितका हिन्दी अनुवाद 'पद्मपुराण' नामसे ही प्रसिद्ध है। जिस प्रकार हिन्दी संसारमें तुलसी रामायण अत्यधिक प्रसिद्ध और घर घरमें प्रचलित है, उसी प्रकार जैनियोंके यहां और खासकर दिगम्बरोंके यहां इस पद्मपुराणका अत्यधिक प्रचार है। दि० जैनियोंका शायद ही ऐसा कोई मन्दिर हो, जहांपर पद्मपुराणकी १-२ हस्त-लिखित प्रतियां न हों।

पद्मपुराणकी हिन्दी वचनिका पं० दौलतरामजी ने विक्रम सं० १८२३ में की है। वे जयपुरके निवासी थे। उनकी जाति खंडेलवाल और गोत्र काशलीवाल था। जयपुरमें उनके एक परम मित्र श्री रायमल्लजी रहते थे, उनके अत्यन्त स्नेह और प्रेरणासे पं० दौलतरामजी ने यह भाषा टीका बनाई। वे स्वयं अपने शब्दोंमें लिखते हैं।

रायमल्ल साधर्मी एक जाके घटमें स्व-पर विवेक। दयावन्त गुणवन्त सुजान पर-उपकारी परम निधान॥
दौलतराम सु ताको मित्र, तासों भाष्यो वचन पवित्र। पद्मपुराण महाशुभ ग्रन्थ तामें लोक शिखरको पंथ॥
भाषारूप होय जो येह बहुजन बांच करें अति नेह। ताके वचन हियमें धार भाषा कीनी मति-अनुसार॥

हिन्दी पद्मपुराणकी भाषा

हिन्दी पद्मपुराणकी भाषा ढूंढारी या राजस्थानी है, आजसे १०० वर्ष पहिले जितने भी प्रसिद्ध दिगम्बर जैन विद्वान् हुए हैं, वे प्रायः जयपुर या उसके आसपास ही हुए हैं और उन्होंने अपने यहां जन-साधारणमें प्रचलित राजस्थानी भाषामें ही अपने मौलिक या अनुवादित ग्रन्थ रचे हैं। फिर भी यह ढूंढारी भाषा इतनी श्रुति-मधुर और जन-प्रिय हुई है कि भारतवर्षके विभिन्न प्रान्तोंके निवासी सभी दिगम्बर जैन उसे भलीभांति समझ लेते हैं।

प्रस्तुत संस्करण

इस हिन्दी भाषा वचनिकाके कई संस्करण इससे पूर्व प्रकाशित हो चुके हैं। पर आज उसकी प्राप्ति असंभव सी हो रही थी। इसी बात को ध्यानमें रखकर श्री १०५ क्षुल्लक चिदानन्दजी महाराजकी प्रेरणानुसार सस्ती ग्रंथमाला के संचालकोंने इसे प्रकाशित करनेका निश्चय किया।

जहां तक मुझे ज्ञात है, अभी तकके पद्मपुराणके सभी संस्करण शास्त्राकार खुले पत्रोंमें ही प्रगट हुए हैं, पर खुले पत्रोंका घर-घरमें सुरक्षित रहना असंभव देख ग्रथमालाके संचालकोंने इसे पुस्तकाकारमें ही प्रगट करना उचित समझा। कागज देशी बढ़िया २०×३०का ३२ पौंडी लगाया गया है। छपाई-सफाईका पर्याप्त ध्यान रखा गया है प्रत्येक पर्वके प्रारम्भमें शीर्षक देकर स्वाध्याय प्रेमियोंके लिये एक खास सुविधा कर दी गई है। कथानकोंमें जहां कहीं कुछ स्खलन प्रतीत होता था, वह भी मूलग्रंथके अनुरूप शुद्ध कर दिया गया है। मेरी अत्यन्त उत्कट अभिलाषा थी कि इस हिन्दी वचनिकासे जहां-तहां कितने ही मूलश्लोकोंका अनुवाद छूट गया है, उसे जोड़ दूं। पर दो मासमें ही ८८ फार्मके ग्रन्थको छपाकर पाठकोंके हाथोंमें पहुँचा देनेके प्रबल आग्रहके कारण वैसा न किया जा सका।

कितने ही लोगोंकी इच्छा थी कि भाषाको आजकी हिन्दीके रूपमें परिवर्तित कर दिया जाय । पर ऐसा न किया जा सका । इसके दो कारण रहे—एक तो यह कि प्राचीन लोगों को उक्त ढूंढारी भाषा ही श्रवण-प्रिय प्रतीत होती थी । दूसरा कारण यह कि उसका वर्तमान रूपपरिवर्तित करना बहु समय-साध्य था । मुझे अच्छी तरह याद है कि मेरे पूज्य गुरु स्व० पं० घनश्यामदास जी न्यायतीर्थने ३४ वर्ष पूर्व श्री० स्व० पं० उदयलालजी काशलीवालकी प्रेरणासे विशुद्ध हिन्दीमें पद्मपुराणका अनुवाद किया था और जो प्रकाशनार्थ पं उदयलालजीके पास बम्बई भेजा भी जा चुका था । असमयमें दोनो विद्वानोंके दिवंगत हो जानेसे पता नहीं, वह अनुवाद कहां पड़ा हुआ अपना दुःखमयी जीवन बिता रहा है । यदि स्व० पं० उदयलालजीके उत्तराधिकारियोंके पास वह अनुवाद सुरक्षित हो, तो वे सस्ती ग्रन्थमालाको देनेकी कृपा करें, जिससे आगामी संस्करणमें उसे प्रकाशित किया जा सके ।

प्रस्तुत संस्करण भारतीय जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी संस्था कलकत्तासे मुद्रित पद्मपुराणकी कापीपरसे छपाया गया है । पर उसमें दि० जैन मन्दिर धर्मपुरा देहली शास्त्र भंडारकी हस्तलिखित प्रतिसे और मूल संस्कृत ग्रन्थसे मिलानकर यथास्थान आवश्यक संशोधन कर दिये गये हैं । कथानकोंके मध्य आये हुए देश, ग्राम और व्यक्तियोंके जो अशुद्ध नाम अभी तक मुद्रित होते आ रहे थे, उन्हें शुद्ध कर दिया गया है। ग्रन्थके शुद्ध छपानेमें भरसक प्रयत्न किया गया है । फिर भी यदि दृष्टि-दोषसे कोई अशुद्धि रह गई हो, तो उसे पाठकगण शुद्ध कर पढ़नेका प्रयत्न करेंगे और साथ ही हमें भी सूचित करेंगे, जिससे कि आगामी संस्करणमें उन्हें सुधारा जा सके ।

हीरालाल जैन

दरियागंज,
दिल्ली ।
ता० १४।६।५०

विषयानुक्रमणिका

पर्व सं०	विषय	पृष्ठ सं०

पद्म-पुराण-भाषा

भाषाकार—स्वर्गीय पण्डित दौलतरामजी

प्रथम पर्व

मंगलाचरण

दोहा—चिदानंद चैतन्यके, गुण अनन्त उरधार।
भाषा पद्मपुराणकी, भाषूं श्रुति अनुसार ॥१॥
पंच परमपद पद प्रणमि, प्रणमि जिनेश्वर वानि।
नमि जिन प्रतिमा जिनभवन, जिन मारग उरआनि ॥२॥
ऋषभ अजित संभव प्रणमि, नमि अभिनन्दनदेव।
सुमति जु पद्म सुपार्श्व नमि, करि चन्द्राप्रभु सेव ॥३॥
पुष्पदंत शीतल प्रणमि, श्रीश्रेयांसको ध्याय।
वासुपूज्य विमलेश नमि, नमि अनंतके पाय ॥४॥
धर्म शांति जिन कुन्थु नमि, और मल्लि यश गाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि नमि, नमि पारसके पाय ॥५॥
वर्द्धमान वरवीर नमि, सुरगुरुवर मुनि बंद।
सकल जिनंद मुनिंद्र नमि, जैनधर्म अभिनन्द ॥६॥
निर्वाणादि अतीत जिन, नमों नाथ चौबीस।
महापद्म परमुख प्रभू, चौबीसों जगदीश ॥७॥

होंगे तिनको बंदिकर, द्वादशांग उरलाय।
सीमंधर आदिक नमूं, दश दूने जिनराय ॥८॥
विहरमान भगवान ये, क्षेत्र विदेह मझारि।
पूजैं जिनको सुरपती, नागपती निरधार ॥९॥
द्वीप अढाईके विषैं, भये जिनेन्द्र अनंत।
होंगे केवलज्ञानमय, नाथ अनन्तानन्त ॥१०॥
सबको बंदन कर सदा, गणधर मुनिवर धाय।
केवलि श्रुतिकेवलि नमूं, आचारज उवझाय ॥११॥
वंदूं शुद्ध स्वभावको, धरूं सिद्धनको ध्यान।
संतनको परणामकर, नमि दृग व्रत निज ज्ञान ॥१२॥
शिवपुर दायक सुगुरु नमि, सिद्धलोक यश गाय।
केवलदर्शन ज्ञानको पूजूं मन वच काय ॥१३॥
यथाख्यात चारित्र अरु, क्षपकश्रेणि गुण ध्याय।
धर्म शुक्ल निज ध्यानको, वंदूं भाव लगाय ॥१४॥
उपशम वेदक क्षायिका, सम्यग्दर्शन सार।
कर वंदन समभावको, पूजूं पंचाचार ॥१५॥
मूलोत्तर गुण मुनिनके, पंच महाव्रत आदि।
पंच समिति और गुप्तित्रय, ये शिवमूल अनादि ॥१६॥
अनित्य आदिक भावना, सेऊं चित्त लगाय।
अध्यातम आगम नमूं, शांतिभाव उरलाय ॥१७॥
अनुप्रेक्षा द्वादश महा, चितवैं श्रीजिनराय।
तिनकी स्तुति करि भावसों, षोडश कारण ध्याय ॥१८॥
दशलक्षणमय धर्मकी, धर सरधा मन मांहि।
जीवदया सत शील, तप, जिनकर पाप नसाहिं ॥१९॥
तीर्थंकर भगवानके, पूजूं पंच कल्याण।
और केवलनिको नमूं, केवल अरु निर्वाण ॥२०॥
श्रीजिन तीरथ क्षेत्र नमि, प्रणमि उभय विधि धर्म।
थुतिकर चहुं विधि संघकी, तजकर मिथ्याभर्म ॥२१॥

वंदूं गौतम स्वामिके, चरण कमल सुखदाय।
वंदूं धर्म मुनीन्द्रको, जम्बूकेवलि ध्याय ॥२२॥
भद्रबाहुको कर प्रणति, भद्रभाव उरलाय।
वंदि समाधि सुतंत्रको, ज्ञानतने गुण गाय ॥२३॥
महा धवल अरु जयधवल, तथा धवल जिनग्रन्थ।
वंदूं तन मन वचन कर, जे शिवपुरके पंथ ॥२४॥
षट्पाहुड नाटक जुत्रय, तत्वारथ सूत्रादि।
तिनको वंदूं भाव कर, हरैं दोष रागादि ॥२५॥
गोमटसार अगाधि श्रुत, लब्धिसार जगसार।
क्षपणसार भवतार है, योगसार रस धार ॥२६॥
ज्ञानार्णव है ज्ञानमय, नमूं ध्यानका मूल।
पद्मनंदिपच्चीसिका, करे कर्म उन्मूल ॥२७॥
यत्याचार विचार नमि, नमूं श्रावकाचार।
द्रव्यसंग्रह नयचक्र फुनि,नमूं शांति रसधार ॥२८॥
आदिपुराणादिक सबै, जैन पुराण बखान।
वंदूं मन वच काय कर, दायक पद निर्वाण ॥२९॥
तत्वसार आराधना-सार महारस धार।
परमातमपरकाशको, पूजूं बारम्बार ॥३०॥
वंदूं विशाखाचार्यवर, अनुभवके गुण गाय।
कुन्दकुन्द पदधोक दे, कहूँ कथा सुखदाय ॥३१॥
कुमुदचंद्र अकलंक नमि, नेमिचन्द्र गुण ध्याय।
पात्रकेशरीको प्रणमि, समंतभद्र यश गाय ॥३२॥
अमृतचन्द्र यतिचन्द्रको, उमास्वामिको वंद।
पूज्यपादको कर, प्रणति पूजादिक अभिनंद ॥३३॥
ब्रह्मचर्यव्रत वंदिके, दानादिक उर लाय।
श्रीयोगीन्द्र मुनीन्द्रको, वंदूं मन वच काय ॥३४॥
वंदूं मुनि शुभचंद्रको, देवसेनको पूज।
करि वंदन जिनसेनको, जिनके सम नहिं दूज ॥३५॥

पद्मपुराण निधानको, हाथ जोड़ि सिर नाय ।
ताकी भाषा वचनिका, भाषूं सब सुखदाय ॥३६॥
पद्म नाम बलभद्रका, रामचन्द्र बलभद्र ।
भये आठवें धार नर, धारक श्री जिनमुद्र ॥३७॥
ता पीछे मुनिसुव्रतके, प्रगटे अतिगुणधाम ।
सुरनरवंदित धर्ममय, दशरथके सुत राम ॥३८॥
शिवगामी नामी महा,-ज्ञानी करुणावंत ।
न्यायवंत बलवंत अति, कर्महरण जयवंत ॥३९॥
जिनके लक्ष्मण वीर हरि, महाबली गुणवन्त ।
भ्रातभक्त अनुरक्त अति, जैनधर्म यशवंत ॥४०॥
चन्द्र सूर्यसे वीर ये, हरैं सदा पर पीर ।
कथा तिनोंकी शुभ महा, भाषी गौतम धीर ॥४१॥
सुनी सवै श्रेणिक नृपति, धर मरधा मन माहिं ।
सो भाषी रविषेणने, यामें संशय नाहिं ॥४२॥
महा सती सीता शुभा, रामचन्द्रकी नारि ।
भरत शत्रुघ्न अनुज हैं, यही बात उर धारि ॥४३॥
तद्भव शिवगामी भरत, अरु लव-अंकुश पूत ।
मुक्त भये मुनिवरत धरि, नमैं तिने पुरहूत ॥४४॥
रामचन्द्रको करि प्रणति, नमि रविषेण ऋषीश ।
रामकथा भाषूं यथा, नमि जिन श्रुति मुनिईश ॥४५॥

[मूलग्रंथकारका मंगलाचरण]

सिद्धं सम्पूर्णभव्यार्थं सिद्धेः कारणमुत्तमम् ।
प्रशस्त-दर्शन-ज्ञान-चारित्रप्रतिपादनम् ॥ १ ॥
सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्ट-पादपद्मांशु-केसरम् ।
प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ॥ २ ॥

अर्थ—सिद्ध कहिए कृतकृत्य हैं और सम्पूर्ण भए हैं सर्व सुन्दर अर्थ जिनके अथवा जो भव्य जीवोंके सर्व अर्थ पूर्ण करें हैं, आप उत्तम अर्थात् मुक्त हैं औरोंको मुक्तिके कारण हैं । प्रशंसा योग्य दर्शन ज्ञान और चरित्रके प्रकाशनहारे हैं । बहुरि सुरेन्द्रके मुकटकर

पूज्य हैं किरणरूप केसर ताको धरें चरणकमल जिनके, ऐसे भगवान् महावीर, जो तीन लोकके प्राणियोंको मंगलरूप हैं तिनको नमस्कार करूं हूँ।

भावार्थ—सिद्ध कहिए मुक्ति अर्थात् सर्व बाधा रहित उपमा रहित अनुपम अविनाशी जो सुख ताकी प्राप्तिके कारण श्रीमहावीर स्वामी जो काम, क्रोध, मान, मद, माया, मत्सर, लोभ, अहंकार पाखण्ड, दुर्जनता, क्षुधा, तृषा व्याधि, वेदना, जरा, भय, रोग, शोक, हर्ष, जन्म, मरणादि रहित हैं। शिव कहिए अविनश्वर हैं। द्रव्यार्थिकनयसे जिनकी आदि भी नाहीं और अन्त भी नाहीं, अछेद्य, अभेद्य, क्लेशरहित, शोकरहित, सर्वव्यापी, सर्वसम्मुख, सर्वविद्याके ईश्वर हैं। यह उपमा औरोंको नाहीं बने है। जो मीमांसक, सांख्य, नैयायिक, वैशेषिक, बौद्धादिक मत हैं तिनके कर्ता जैमिनि, कपिल, काणभिक्ष, अक्षपाद, कणाद बुद्ध हैं वे मुक्तिके कारण नाहीं। जटा मृगछाला वस्त्र अस्त्र, शस्त्र, स्त्री रुद्राक्ष कपालमालाके धारक हैं और जीवोंके दहन घातन छेदनविषैं प्रवृत्त हैं। विरुद्ध अर्थ कथन करनेवाले हैं। मीमांसक तो धर्मका अहिंसा लक्षण बताय हिंसाविषैं प्रवर्तें हैं और सांख्य जो हैं सो आत्माको अकर्ता और निर्गुण भोक्ता मानैं है और प्रकृति हीको कर्ता मानै है। और नैयायिक वैशेषिक आत्माको ज्ञानरहित जड़ मानै हैं और जगतकर्ता ईश्वर मानै है। और बौद्ध क्षणभंगुर मानै हैं। शून्यवादी शून्य मानै हैं। और वेदान्तवादी एक ही आत्मा त्रैलोक्यव्यापी नर नारक देव तिर्यंच मोक्ष सुख दुःखादि अवस्थाविषैं मानैं हैं इसलिये ये सर्व ही मुक्तिके कारण नाहीं। मोक्षका कारण एक जिन शासन ही है जो सर्व जीवमात्रका मित्र है। और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्रका प्रगट करनेवाला है ऐसे जिन शासनको श्रीवीतरागदेव प्रगटकर दिखावैं हैं। कैसे हैं श्रीवर्द्धमान वीतरागदेव वह सिद्ध कहिये जीवन्मुक्त हैं और सर्व अर्थकरि पूर्ण हैं मुक्तिके कारण हैं सर्वोत्तम हैं और सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रके प्रकाशनहारे हैं बहुरि कैसे हैं, इन्द्रनिके मुकटनिकरि स्पर्शे गये हैं चरणारविंद जिनके ऐसे श्रीमहावीर वर्द्धमान सन्मतिनाथ अन्तिम तीर्थंकर तिनकूं नमस्कार करूँ हूँ। तीनलोकके सर्वप्राणियोंको महामंगलरूप हैं महा योगीश्वर हैं मोह मल्लके जीतनहारे हैं अनंत बलके धारक हैं, संसार समुद्रविषैं डूब रहे जे प्राणी तिनके उद्धार करनहारे हैं शिव, विष्णु, दामोदर, त्र्यम्बक, चतुर्मुख, बुद्ध ब्रह्मा, हरि, शंकर, रुद्र, नारायण, हरि भास्कर, परममूर्ति इत्यादि जिनके अनेक नाम हैं तिनकों शास्त्रकी आदिविषैं महा मंगलके अर्थि सर्व विघ्नके विनाशवे निमित्त मन वचन कायकरि नमस्कार करूँ हूँ।

इस अवसर्पिणी कालमें प्रथम ही भगवान श्रीऋषभदेव भए सर्व योगीश्वरोंके नाथ सर्व विद्याके निधान स्वयम्भू तिनको हमारा नमस्कार होहु। जिनके प्रसाद कर अनेक भव्य जीव भवसागरसे तिरे। बहुरि दूजा श्री अजितनाथ स्वामी जीते हैं बाह्य अभ्यंतर शत्रु जिन्होंने हमको

रागादिक रहित करहु। अर तीजे संभवनाथ, जिनकरि जीवनको सुख होय और चौथे श्रीअभि-नंदन स्वामी आनंदके करनहारे हैं। और पांचवें सुमतिके दैनहारे सुमतिनाथ मिथ्यात्वके नाशक हैं, और छठे श्रीपद्मप्रभु ऊगते सूर्यकी किरणोंकरि प्रफुल्लित कमलके समान है प्रभा जिनकी। सातवें श्रीसुपार्श्वनाथ स्वामी सबके वेत्ता सर्वज्ञ सबके निकटवर्त्ती ही हैं। शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है प्रभा जिनकी ऐसे आठवें श्रीचन्द्रप्रभु ते हमारे भवताप हरो। प्रफुल्लित कुंदके पुष्प समान उज्ज्वल हैं दंत जिनके ऐसे नवमे श्रीपुष्पदंत जगतके कंत हैं। दशवें श्री शीतलनाथ शुक्ल ध्यानके दाता परम इष्ट ते हमारे क्रोधादिक अनिष्ट हरो। जीवोंको सकल कल्याणके कर्त्ता धर्मके उपदेशक ग्यारहवें श्रेयांसनाथ स्वामी ते हमको परम आनन्द करो। देवों कर पूज्य संतोंके ईश्वर कर्म शत्रुओंके जीतनेहारे बारहवें श्रीवासुपूज्य स्वामी ते हमको निज वास देओ। संसारके मूल जो रागादि मल तिनसे अत्यंत दूर ऐसे तेरहवें श्रीविमलनाथ देव ते हमारे कर्मकलंक हरो। अनंत ज्ञानके धारनहारे, सुन्दर है दर्शन जिनका ऐसे चौदहवें श्रीअनंतनाथ देवाधिदेव हमको अनंत ज्ञान-की प्राप्ति करो। धर्मकी धुराके धारक पंद्रहवें श्रीधर्मनाथ स्वामी हमारे अधर्मको हरकर परम धर्म-की प्राप्ति करो। जीते हैं ज्ञानावरणादिक शत्रु जिन्होंने ऐसे श्रीशांतिनाथ परम शांत हमको शांत-भावकी प्राप्ति करो। कुंथु आदि सर्व जीवोंके हितकारी सतरहवें श्रीकुंथुनाथ स्वामी हमको भ्रम-रहित करो। समस्तक्लेशसे रहित मोक्षके मूल अनंत सुखके भण्डार अठारहवें श्रीअरनाथ स्वामी कर्मरज रहित करो। संसारके तारक मोह मल्लके जीतनहारे बाह्याभ्यन्तर मलरहित ऐसे उन्नीसवें श्रीमल्लिनाथ स्वामी ते अनंतवीर्यकी प्राप्ति करो, भले व्रतोंके उपदेशक समस्त दोषोंके विदारक बीसवें श्रीमुनिसुव्रतनाथ जिनके तीर्थविषैं श्रीरामचन्द्रका शुभचरित्र प्रगट भया ते हमारे अव्रत मेट महाव्रतकी प्राप्ति करो। नम्रीभूत भये हैं सुर नर असुरोंके इन्द्र जिनको ऐसे इक्कीसवें श्रीनमिनाथ प्रभु ते हमकों निर्वाणकी प्राप्ति करो, समस्त अशुभ कर्म तेई भये अरिष्ट तिनके काटिवेकूं चक्र-की धारा समान बाईसवें श्रीअरिष्ट नेमि भगवान हरिवंशके तिलक श्रीनेमिनाथ स्वामी ते हमको यम नियमादि अष्टांग योगकी सिद्धि करो, तेईसवें श्रीपार्श्वनाथ देवाधिदेव इन्द्र नागेन्द्र चन्द्र सूर्य्यादिक कर पूजित हमारे भव सन्ताप हरो। चौवीसवें श्रीमहावीर स्वामी जो चतुर्थकालके अन्तमें भये हैं ते हमारे महा मंगल करो। जो और भी गणधरादिक महामुनि तिनकौं मन, वचन, कायकर बारम्बार नमस्कार कर श्रीरामचन्द्रके चरित्रका व्याख्यान करूं हूँ।

कैसे हैं श्रीराम, लक्ष्मी-कर आलिंगित है हृदय जिनका और प्रफुल्लित है मुख-रूपी कमल जिनका महा पुण्याधिकारी हैं, महाबुद्धिमान् हैं, गुणनके मंदिर, उदार है चरित्र जिनका, जिनका चरित्र केवल ज्ञानके ही गम्य है ऐसे जो श्रीरामचन्द्र उनका चरित्र श्रीगणधर-देव ही किंचित् मात्र कहनेको समर्थ हैं। यह बड़ा आश्चर्य है कि जो हम सारिखे अल्पबुद्धि

पुरुष भी उनके चरित्रको कहैं हैं यद्यपि हम सारिखे इस चरित्रको कहनेको समर्थ नहीं तथापि परंपरासे महामुनि जिस प्रकार कहते आए हैं उनके कहे अनुसार कुछ इक संक्षेपता कर कहैं हैं जैसे जिस मार्गविषैं मदमाते हाथी चालें तिस मार्ग विषैं मृग भी गमन करैं हैं और जैसे युद्ध-विषै महा सुभट आगे होय कर शस्त्रपात करैं हैं तिनके पीछैं और भी पुरुष रणविषैं जाय है अर सूर्य करि प्रकाशित जे पदार्थ तिनकूं नेत्रवारे लोक सुखसूं देखै हैं अर जैसे वज्रसूचीके मुख करि भेदी जो मणि उस विषैं सूत्र भी प्रवेश करैं हैं तैसे ज्ञानीनकी पंकतिकर भाषा हुआ चला आया जो रामसम्बन्धी चरित्र ताके कहनेको भक्ति कर प्रेरी जो हमारी अल्प बुद्धि सो भी उद्यमवती भई है। बड़े पुरुषके चिंतवन कर उपजा जो पुण्य ताके प्रसाद कर हमारी शक्ति प्रकट भई है। महापुरुषनके यशकीर्त्तनसे बुद्धिकी वृद्धि होय है और यश अत्यन्त निर्मल होय है और पाप दूर जाय है। यह प्राणीनका शरीर अनेक रोगोंकर भरा है इसकी स्थिति अल्प काल है और सत्पुरुपनकी कथा कर उपजाया जो यश सो जबतक चांद सूर्य्य हैं तबतक रहै है इसलिये जो आत्मवेदी पुरुष हैं वे सर्व यत्नकर महापुरुषनिके यश कीर्त्तनसे अपना यश स्थित करैं हैं। जिसने सज्जनोंको आनन्दकी देनहारी जो सत्पुरुषनकी रमणीक कथा उसका आरम्भ किया उसने दोनों लोकका फल लिया।

जो कान सत्पुरुषनकी कथा श्रवण विषं प्रवर्त्तैं हैं वे ही कान उत्तम हैं और जे कु-कथाके सुननहारे कान हैं वे कान नाहीं वृथा आकार धरैं हैं और जे मस्तक सत्पुरुषनकी चेष्टाके वर्णन विषैं घूमे हैं ते ही मस्तक धन्य हैं और जे शेष मस्तक हैं वे थोथे नारियल समान जानने। सत्पुरुषनके यश कीतन विषै प्रवृत्त जे होठ ते ही श्रेष्ठ है और जे शेष होठ हैं ते जोंककी पीठ समान विफल जानने। जे पुरुष सत्पुरुषनकी कथाके प्रसंग विषैं अनुरागको प्राप्त भये उनहीका जन्म सफल है। मुख वे ही हैं जो मुख्य पुरुषनिकी कथाविषैं रत भये, शेष मुख दांतरूपी कीडा-नका भरा हुआ बिल समान हैं और जे सत्पुरुषनिकी कथाके वक्ता हैं अथवा श्रोता हैं सो ही पुरुष प्रशंसा योग्य हैं और शेष पुरुष चित्राम समान जानने। गुण और दोषनिके संग्रहविषैं जे उत्तम पुरुष हैं ते गुणनहीकौं ग्रहण करै हैं जैसे दुग्ध और पानीके मिलापविषैं हंस दुग्धहीकौं ग्रहण करै है और गुण-दोषनिके मिलापविषैं जे नीच पुरुष हें ते दोषहीकौं ग्रहण करै हैं जैसे गजके मस्तकविषैं मोती मांस दोऊ हैं तिनविषं काग मोतीकौं तज मांसहीकौं ग्रहण करै हैं। जो दुष्ट हैं ते निर्दोष रचनाकौं भी दोष रूप देखैं हैं जैसे उल्लू सूर्यके बिम्बकौं तमालवृक्षके पत्र समान श्याम देखै हैं, जे दुर्जन हैं,ते सरोवरमें जल आनेकी जाली समान हैं जैसे जाली जलको तज तृण पत्रादि कंटकादिकको ग्रहण करै है तैंसे दुर्जन गुणकौं तज दोषनहीकौं धारैं हैं इसलिये सज्जन और दुर्ज-नका ऐसा स्वभाव जानकर जो साधु पुरुष हैं वे अपने कल्याण निमित्त सत्पुरुषनकी कथाके प्रबन्ध

विषैं ही प्रवृत्तैं हैं सत्पुरुषनिकी कथाके श्रवणसे मनुष्योंको परम सुख होय है। जे विवेकी पुरुष हैं उनको धर्मकथा पुण्यके उपजावनेका कारण है सो जैसा कथन श्रीवर्द्धमान जिनेन्द्रकी दिव्य-ध्वनिमें खिरा तिसका अर्थ गौतम गणधर धारते भए। और गौतमसे सुधर्माचार्य धारते भए ता पीछे जम्बूस्वामी प्रकाशते भए जम्बूस्वामीके पीछे पांच श्रुत केवली और भए वे भी उसी भांति कथन करते भये इसी प्रकार महा पुरुषनिकी परम्पराकर कथन चला आया उसके अनुसार रविषेणाचार्य्य व्याख्यान करते भये। यह सर्व रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष सावधान होकर सुनो। यह चरित्र सिद्ध पदरूप मंदिरकी प्राप्तिका कारण है और सर्वप्रकारके सुखका देनेहारा है। और जे मनुष्य श्रीरामचन्द्रको आदि दे जे महापुरुष तिनको चिंतवन करैं हैं वे अतिशयकर भावनके समूहकर नम्रीभूत होय प्रमोदकों धरै हैं तिनकौ अनेक जन्मोंका संचित किया जो पाप सो नाशको प्राप्त होय है और जे सम्पूर्ण पुराणका श्रवण करैं तिनका पाप दूर अवश्य ही होय, यामें सन्देह नाहीं, कैसा है पुराण ? चन्द्रमा समान उज्ज्वल है इसलिये जे विवेकी चतुर पुरुष हैं ते इस चरित्रका सेवन करैं। यह चरित्र बड़े पुरुषनिकर सेवने योग्य है।

इस ग्रन्थविषैं छह महा अधिकार हैं तिन विषैं अवांतर अधिकार बहुत हैं। मूल अधिकारनिके नाम कहे हैं। प्रथम ही १ लोकस्थिति, बहुरि २ वंशनिकी उत्पत्ति, पीछैं ३ वन-विहार अर संग्राम, तथा ४ लवणां-कुशकी उत्पत्ति, बहुरि ५ भवनिरूपण अर ६ रामचन्द्रका निर्वाण। श्रीवर्धमान देवाधिदेव सर्व कथनके वक्ता हैं, जिनको अतिवीर कहिये वा महावीर कहिये है। रामचरित्रके कारण श्रीमहावीर स्वामी हैं तातैं प्रथम ही तिनका कथन कीजिये है। विपुलाचल पर्वतके शिखरपर समोसरणविषैं श्रीवर्द्धमान स्वामी विराजे। तहां श्रेणिक राजा गौतम स्वामीसों प्रश्न करते भये। कैसे हैं गौतमस्वामी भगवानके मुख्य गणधर महा महंत हैं जिनका इन्द्रभूतिभी नाम है। आगे श्रीगौतमस्वामी कहै हैं तहां प्रश्न विषै प्रथम ही युगनिका कथन है। बहुरि कुलकरनिकी उत्पत्ति, अकस्मात् चन्द्र सूर्यके अवलोकनतैं जुगलियानिकूं भयका उपजना, सो प्रथम कुलकर प्रतिश्रुतके उपदेशतैं भयका दूर होना, बहुरि नाभिराजा अन्तके कुलकर तिनके घर श्रीऋषभदेवका जन्म, सुमेरु पर्वतविषैं इन्द्रादिक देवनिकरि जन्माभिषेक, बहुरि बाललीला अर राज्याभिषेक, कल्पवृक्षनिके वियोग करि उपज्या प्रजानिकूं दुःख,सो कर्म-भूमिकी विधिके बतावने करि दूर होना, बहुरि भगवानका वैराग्य, केवलोत्पत्ति, समोसरनकी रचना, जीवनिकूं धर्मोपदेश, बहुरि भगवानका निर्वाणगमन, भरत चक्रवर्ती अर बाहुबलिके परस्पर युद्ध, बहुरि विप्रनिकी उत्पत्ति, इक्ष्वाकु आदि वंशनिका कथन, विद्याधरनिका वर्णन, तिनके वंश विषैं राजा विद्युद्दंष्ट्रका जन्म संजयंत स्वामीकूं विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया सो उपसर्ग सहि करि अंतकृत केवली होइ करि निर्वाण गये,विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया यह जानि धरणेन्द्रने तासूं

कोप किया, ताकी विद्या छेद करी, बहुरि श्रीअजितनाथ स्वामीका जन्म, पूर्णमेघ विद्याधर भगवान् के शरणै आया। राक्षसद्वीपका स्वामी व्यन्तरदेव, तानै प्रसन्न होय पूर्णमेघकूं राक्षस द्वीप दिया। बहुरि सगरचक्रवर्तीकी उत्पत्तिका कथन, पुत्रनिके दुःखकरि दीक्षा ग्रहण अर मोक्ष प्राप्ति, पूर्णमेघके वंशविषैं महारक्षका जन्म, अर वानरवंशी विद्याधरनिकी उत्पत्तिका कथन, बहुरि विद्युत्केश विद्याधरका चरित्र, बहुरि उदधिविक्रम अर अमरविक्रम विद्याधरका कथन, वानरवंशीनिके किष्किंधापुरका निवास अर अन्धक विद्याधरका कथन, श्रीमाला विद्याधरीका संयम, विजयसंघके मरणतैं अशनिवेगके क्रोधका उपजना और सुकेशीके पुत्रनिका लंका आवनेका निरूपण, निर्घात विद्याधरके वधतैं माली नाम विद्याधर रावणके दादेका बड़ा भाई, ताके संपदाकी प्राप्तिका कथन, विजयार्धकी दक्षिणकी श्रेणीविषैं रथनूपुर नगरमें इन्द्रनामा विद्याधरका जन्म, इन्द्र सर्व विद्याधरनिका अधिपति है। इन्द्रके अर मालीके युद्धविषैं मालीका मरण, लंकाविषैं इन्द्रका राज्य, वैश्रवण नामा विद्याधरका थाणै रहना, सुमालीके पुत्र रत्नश्रवाका पुष्पांतक नामा नगर वसावना, केकसीका परणना, केकसीके शुभस्वप्नका अवलोकन, रावणका जन्म अर विद्यानिका साधन, विद्यानिके साधनविषैं अनावृत देव आय विघ्न किया, तहां रावणका अचल रहना बहुरि विद्या सिद्ध होना अर अनावृत देवका वश होना, अपने नगर आय माता पितासूं मिलना, बहुरि अपने पिताका पिता जो सुमाली, ताकूं बहुत आदरसों बुलावना, बहुरि मंदोदरीका रावणसों विवाह और बहुत राजानिकी कन्याका व्याहना, कुम्भकरणका चरित्र, वैश्रवणका कोप, यक्ष राक्षस कहावैं ऐसे विद्याधर तिनका बड़ा संग्राम, वैश्रवणका भागना बहुरि तप धरणा, अर रावणका लंकामें कुटुम्ब सहित आवना अर सर्व राक्षसनिकूं धीरज बंधावना अर ठौर-ठौर जिनमन्दिरका निर्मापण करना अर जिनधर्मका उद्योत करना, और श्रीहरिषेण चक्रवर्तीका चरित्र राजा सुमालीने रावणकूं कह्या, सो भावसहित सुनना। कैसा है हरिषेण चक्रवर्तीका चरित्र पापनिका नाश करण हारा, बहुरि तिलोकमण्डन हाथीका वश करना, अर राजा इन्द्रका लोकपाल यमनामा विद्याधर, ताने वानरवंशीके राजा सूर्यरजकूं पकरि बंदीखाने डार्या सो रावण सम्मेदशिखरकी यात्राकरि डेरा आये थे सो सूर्यरजके समाचार सुनि ताही समै गमन करना अर जाय यमकूं जीतना। यमके थाने उठावना अर याका भाजना, राजा सूर्यरजकूं बंदीतैं छुड़ावना अर किहकंधापुरका राज्य देना। बहुरि रावणकी बहिन सूर्पनखा, ताकूं खरदूषण हरि ले गया सो वाहीकूं परिणाय देना अर ताहि पाताल लंकाका राज देना, सो खरदूषणका पाताल लंका जाना चंद्रोदरकौं युद्धविषैं हनना, चंद्रोदरकी रानी अनुराधाकूं पतिके वियोगतैं महादुःखका होना, चन्द्रोदरके पुत्र विराधितका राज्यभ्रष्ट होय कहूँका कहूँ रहना, बाल्यका वैराग्य होना, सुग्रीवकूं राज्यकी प्राप्ति, कैलास पर्वतविषैं बाल्यका विराजना, रावणका बाल्यसूं कोपकरि कैलास उठावना, चैत्यालयनिकी भक्ति निमित्त,

बाल्यने पगका अंगुष्ठ दाब्या तब रावणका दबिकर रोवना, अर रानीनिकी विनतीतैं बालीका अंगुष्ठका ढीला करना।

अर बाल्यके भाई सुग्रीवका सुतारासूं विवाह, अर साहसगति विद्याधरकैं सुताराकी अभीलाषा हुती सो अलाभतैं संतापका होना, राजा अनारण्य अर सहस्त्र रश्मिका वैराग्य होना, अर रावणने यज्ञ नाश किया ताका वर्णन, अर राजा मधुके पूर्व भवका व्याख्यान, अर रावणकी पुत्री उपरंभाका मधुसौं विवाह, अर रावणका इन्द्रपर जाना, इन्द्र विद्याधरकौं युद्धकरि जीतना, पकरिकर लंकामें ल्यावना बहुरि छोड़ना, ताका वैराग्य लेय निर्वाण होना, रावणका प्रताप, अर सुमेरु पर्वत पर गमन, बहुरि पाछा आवना, अर अनंतवीर्य मुनिकूं केवलज्ञानकी प्राप्ति, रावणका नेम ग्रहण—जो परस्त्री मोहि न अभिलाषैं ताहि मैं न सेऊं—बहुरि हनुमानकी उत्पत्ति, कैसे हैं हनुमान? बानरवन्शीनिविषैं महात्मा हैं, कैलाशपर्वतविषैं अंजनीका पिता जो राजा महेन्द्र ताने पवनंजयका पिता जो राजा प्रह्लाद तासौं सम्भाषण किया—जो हमारी पुत्रीका तुम्हारे पुत्रसूं सम्बन्ध करहु। सो राजाप्रह्लादने प्रमाण किया। अंजनीका पवनंजयसूं विवाह बहुरि पवनंजयका अञ्जनीसौं कोप, अर चकवा चकवीके वियोगका वृत्तांत देखि अञ्जनीसूं प्रसन्न होना, अञ्जनीके गर्भका रहना। अर हनुमानके पूर्व जन्म, वनमें अञ्जनीकूं मुनिने कहे। अर हनुमानका गिरिकी गुफाविषैं जन्म, बहुरि अनुरुद्ध द्वीपमें वृद्धि, प्रतिसूर्य मामाने अञ्जनीकूं बहुत आदरसों राखी, बहुरि पवनंजयका भूताटवी विषैं प्रवेश अर पवनंजयके हाथीकूं देखि प्रतिसूर्यका तहां आवना, पवनंजयकूं अंजनीके मिलापका परमउत्साह होना, पुत्रका मिलाप होना, पवनंजयका रावणके निकट जाना। रावणकी आज्ञातें वरुणसूं युद्ध करि ताहि जीतना। रावणके बड़े राज्यका वर्णन, तीर्थंकरोंकी आयुकाय अन्तरालका वर्णन, बलभद्र नारायण, प्रति-नारायण चक्रवर्तीनिके सकल चरित्रका वर्णन। राजा दशरथकी उत्पत्ति, केकईकूं वरदानका देना, रामलक्ष्मण भरत, शत्रुघ्नका जन्म, सीताकी उत्पत्ति, भामण्डलका हरणा अर ताकी माताकूं शोकका होना। अर नारदने सीताका चरित्र चित्रपट भामण्डलकूं दिखाया सो देखकर मोहित होना। बहुरि जनकके स्वयंवर मंडपका वृत्तांत अर धनुष रतनका स्वयम्बर, मंडपमें धरना, श्रीरामचन्द्रका आवना, धनुषका चढ़ावना, अर सीताकूं विवाहना अर सर्वभूत-शरण्य मुनिके निकट दशरथका दीक्षा लेना, अर भामण्डलको पूर्व जन्मका ज्ञान होना, अर सीताका दर्शन। बहुरि केकयीके वरतैं भरतका राज्य, अर राम लक्ष्मण सीताका दक्षिण दिशाकूं गमन करना। वज्रकिरणका चरित्र, लक्ष्मणकूं कल्याणमालाका लाभ, अर रुद्रभूतकौं वशमें करना अर बालखिल्यका छुड़ावना, अर अरुणग्रामविषैं श्रीराम आए, तहाँ वनमें देवतानिने नगर बसाये तहाँ चौमासे रहना। लक्ष्मणके वनमालाका संगम, अतिवीर्यका वैराग्य, बहुरि लक्ष्मणके

जितपद्माकी प्राप्ति, अर कुलभूषण देशभूषण मुनिका चरित्र। श्रीरामने वंशस्थल पर्वतविषैं भगवानके मन्दिर, कराए तिनका वर्णन' अर जटायु पक्षीकूं व्रत प्राप्ति, पात्रदानके फलकी महिमा, संबूकका मरण, सूर्पनखाका विलाप, खरदूषणसूं लक्ष्मणका युद्ध, सीताका हरण, सीताकूं रामके वियोगका अत्यन्त शोक, अर रामकूं सीताके वियोगका अत्यन्त शोक, बहुरि विराधितविद्याधरका आगमन, अर खरदूषणका मरण, अर रतनजटीकैं रावणकरि विद्याका छेद, अर सुग्रीवका रामके निकट आवना बहुरि सुग्रीवके कारण श्रीरामने साहसगतिकों मारा अर सीताका वृत्तांत रतनजटीने श्रीराम सौं कह्या, श्रीरामका लंका ऊपरि गमन, राम रावणके युद्ध। राम लक्ष्मणकूं सिंहवाहिनी गरुड़वाहिनी विद्याकी प्राप्ति। लक्ष्मणके रावणकी शक्तिका लगना अर विशल्याके प्रसादतैं शक्ति दूर होना, रावणका शांतिनाथके मन्दिर विषैं बहुरूपिणी विद्याका साधना, अर रामके कटकके विद्याधर कुमारनिका लंकाविषैं प्रवेश, अर रावणके चित्तके डिगावनेका उपाय, पूर्णभद्र मणिभद्रके प्रभावतैं विद्याधर कुमारनिका पाछैं कटकमें आवना। रावणकूं विद्याकी सिद्धि, बहुरि रावणके युद्ध, रावणका चक्र लक्ष्मणके हाथ आवना रावणका परलोक गमन, रावणकी स्त्रीनिका विलाप। बहुरि केवलीका लंकाके वनविषैं आगमन। इन्द्रजीत कुम्भकरणादिका दीक्षा ग्रहण, अर रावणकी स्त्रीनिका दीक्षा ग्रहण। अर श्रीरामका सीतासूं मिलाप, विभीषणके भोजन, कैइक दिन लंकाविषैं निवास, बहुरि नारदका रामके निकट आवना। रामका अयोध्या गमन, भरतके अर त्रिलोकमण्डन हाथीके पूर्व भवका वर्णन। भरतका वैराग्य, राम लक्ष्मणका राज्य,अर रणविषैं मधुका अर लवणका मरण। मथुराविषैं शत्रुघ्नका राज्य, मथुराविषैं अर सकल देशविषैं धरणींद्रके कोपतैं रोगानिकी उत्पत्ति। बहुरि सप्तऋषीनिके प्रभावतैं रोगानिकी निवृत्ति। अर लोकापवादतैं सीताका वनविषैं त्यजन, अर वज्रजंघ राजाका वन विषैं आगमन, सीताकूं बहुत आदरतैं ले जाना। तहां लवणांकुशका जन्म अर लवणांकुश बड़े होइ अनेक राजानिकूं जीति वज्रजंघके राज्यका विस्तार करना। बहुरि अयोध्या जाय श्रीरामसूं युद्ध किया। अर सर्वभूषण मुनिकूं केवलज्ञानकी प्राप्ति, देवनिका आगमन। सीताके शीलतैं अग्निकुण्डका शीतल होना। अर विभीषणके पूर्व भवका वर्णन। कृतांतवक्रका तप लेना। स्वयम्बर मण्डपविषैं रामके पुत्रनितैं लक्ष्मणके पुत्रिनिका विरोध। बहुरि लक्ष्मणके पुत्रनिका वैराग्य। अर विद्युत्पाततैं भामण्डलका मरण। हनुमानका वैराग्य। लक्ष्मणकी मृत्यु। रामके पुत्रनिका तप, श्रीरामकूं लक्ष्मणके वियोगतैं अत्यन्त शोक, अर देवतानिके प्रतिबोधतैं मुनिव्रतका अंगीकार, केवलज्ञानकी प्राप्ति, निर्वाण गमन।

यह सब रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष मनकूं समाधान करिकै सुनहु। यह चरित्र सिद्धपदरूप मंदिरकी प्राप्तिका सिवाण है अर सर्व प्रकार सुखनिका दायक है। श्रीरामचन्द्रकौं आदि

है जे महामुनि तिनका जे मनुष्य चिंतवन करैं हैं, अतिशयपणेंकरि भावनिके समूहकरि नम्रीभूत होइ प्रमोदकूं धरैं हैं तिनका अनेक जन्मनिका संचित जो पाप सो नाश होय है। सम्पूर्ण पुराणका जे श्रवण करैं तिनका पाप दूर होय हा होय, यामें सन्देह कहा ? कैसा है पुराण ? चन्द्रमा समान उज्जवल है। तातैं जो विवेकी चतुर पुरुष हैं ते या चरित्रका सेवन करहु ? कैसा है चरित्र ? बड़े पुरुषनिकरि सेइवे योग्य है। जैसें सूर्यकरि प्रकाश्या जो मार्ग ताविषैं भले नेत्रनिके धारक पुरुष काहेको डिगैं ?

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थकी भाषा वचनिका विषैं पीठ-बंध विधान नामा प्रथम पर्व पूर्ण भया ॥ १ ॥

अथ लोकस्थिति महा अधिकार

(द्वितीय पर्व)

[विपुलगिर पर भगवान् महावीरका समवसरण और राजा श्रेणिक द्वारा राम कथाका प्रश्न]

जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें मगध देश अति सुन्दर है, जहां पुण्याधिकारी बसै हैं इन्द्रके लोक समान सदा भोगोपभोग करैं हैं जहां योग्य व्यवहारसे लोकपूर्ण मर्यादारूप प्रवृत्तैं हैं और जहां सरोवरमें कमल फूल रहे हैं और भूमिमें अमृत समान मीठे सांठेनिके बाड़े शोभायमान हैं और जहां नाना प्रकारके अन्नोंके समूहके पर्वत समान ढेर होय रहे हैं अरहटकी घड़ीसे सींचे जीरानिके घणाके खेत हरित होय रहे हैं, जहां भूमि अत्यन्त श्रेष्ठ है सर्व वस्तु निपजैं हैं। चांवलोंके खेत शोभायमान और मूंग मौठ ठौर ठौर फल रहे हैं गेहूँ आदि सर्व अन्नकों काहू भांति विघ्न नाहीं, और जहां भैंसकी पीठपर चढ़े ग्वाला गावैं हैं गऊओंके समूह अनेक वर्णके हैं जिनके गलेमें घण्टा बाजैं हैं और दुग्ध झरती अत्यन्त शोभैं हैं, जहां दूधमयी धरती होय रही है, अत्यन्त स्वादु रसके भरे तृण तिनको चरकर गाय भैंस पुष्ट होय रही हैं, और श्याम सुन्दर हिरण हजारों विचरैं हैं मानों इद्रके हजारों नेत्र ही हैं, जहां जीवनको कोई बाधा नाहीं, जिनधर्मियोंका राज्य है और वनके प्रदेश केतकीकी धूलीकरि धूसरित होय रहे हैं गंगाके पुलिन समान उज्जवल बहुत शोभायमान हैं और जहां केसरकी क्यारी अति मनोहर हैं और जहां ठौर ठौर नारियलके वृक्ष हैं और अनेक प्रकारके शाक पत्रसे खेत हरित हो रहे हैं और वनपाल नारियल आदि मेवानिका आस्वादन करैं हैं, और जहां दाडिमके बहुत वृक्ष हैं जहां सुवादि अनेक पक्षी बहुत प्रकारके फल भक्षण करै हैं, जहां बन्दर अनेक प्रकार किलोल करैं हैं, विजौराके वृक्ष

फल रहे हैं बहुत स्वादरूप अनेक जातिके फल तिनका रस पीकर पक्षी सुखसौं सोय रहे हैं और दाखके मण्डप छाय रहे हैं, जहां वन विषैं देव विहार करै हैं जहां खजूरकौं पथिक भक्षण करैं हैं केलाके वन फल रहे हैं ऊंचे ऊंचे अर्जुन वृक्षोंके वन सोहै हैं और नदीके तट गोकुलके शब्दसे रमणीक हैं, नदियोंमें मच्छीनिके समूह किलोल करै हैं तरंगके समूह उठैं हैं मानो नदी नृत्य ही करै हैं और हंसनिके मधुर शब्दोंकरि मानो नदी गान ही करै है जहां सरोवरके तीरपर सैारस क्रीड़ा करै हैं और वस्त्र आभरण सुगन्धादि सहित मनुष्योंके समूह तिष्ठै हैं, कमलोंके समूह फूल रहै हैं और अनेक जीव क्रीड़ा करै हैं, जहां हंसोंके समूह उत्तम मनुष्योंके गुणों समान उज्जवल सुन्दर शब्द सुन्दर चालवाले तिनकर वन धवल होय रहा है। जहां कोकिलानिके रमणीक शब्द और भंवरोंका गुंजार, मोरोंके मनोहर शब्द संगीतकी ध्वनि, वीन मृदंगोंका बाजना इनकरि दशों दिशा रमणीक होय रही हैं और वह देश गुणवन्त पुरुषोंसे भरा है, जहां दयावान् क्षमावान् शीलवान उदारचित्त तपस्वी त्यागी विवेकी आचारी लोग बसैं हैं, मुनि विचारै हैं, आर्यिका विहार करै हैं उत्तम श्रावक, श्राविका बसै हैं शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमाके समान है चित्तकी वृत्ति जिनकी, मुक्ताफल समान उज्जवल हैं, आनन्दके देनहारे हैं, और वह देश बड़े बड़े गृहस्थीनि करि मनोहर हैं, कैसे हैं गृहस्थी कल्पवृक्ष समान हैं, तृप्त किये हैं अनेक पथिक जिन्होंने जहां अनेक शुभ ग्राम हैं, जिनमें भले भले किसान बसै हैं और उस देश विषैं कस्तूरी कर्पूरादि सुगन्ध द्रव्य बहुत हैं और भांति भांतिके वस्त्र आभूषणोंकरि मण्डित नर नारी विचरै हैं मानो देव देवी ही हैं, जहां जैन वचन रूपी अंजन (सुरमा) से मिथ्यात्व रूपी दृष्टि विकार दूर होवै है और महा मुनियोंके तपरूपीअग्निसे पाप रूपी वन भस्म होय है ऐसा धर्मरूपी महा मनोहर मगध देश बसै है।

मगधदेशमें राजगृह नामा नगर महा मनोहर पुष्पोंकी वासकर महा सुगंधित अनेक सम्पदा कर भर्‌या है मानो तीन भवनका योवन ही है और वह नगर इन्द्रके नगर समान मन-का मोहनेवाला है। इन्द्रके नगरमें तो इन्द्राणी कुंकुम कर लिप्त शरीर विचरै हैं और इस नगरमें राजाकी रानी सुगन्धकर लिप्त शरीर विचरै हैं, महिषी ऐसा नाम रानीका है और भैंसका भी है सो जहां भैंस भी केसरकी क्यारीमें लोटकर केसरसौं लिप्त भई फिरै हैं और सुन्दर उज्जवल घरोंकी पंक्ति और टांचीनके घडे सफेद पाषाण तिनकी शिलानि करि मंदिर बनें हैं मानो चन्द्रकांति मणिका नगर बना है मुनियोंको तो वह नगर तपोवन भासै है, वेश्याको काम मन्दिर, नृत्यकारिणीनिकौं नृत्यका मन्दिर और वैरीनिकौं यमपुर है,सुभटनिकौं वीरनिका स्थान याचकनिको चिंतामणि, विद्यार्थीनिकौं गुरुगृह, गीत शास्त्रके पाठीनिकौं गंधर्व नगर, चतुरनिकौं सर्व कला (चतुराई) सीखनेका स्थान, और ठगनिका धूर्त्तनिका मन्दिर भासै है। संतनकौं साधुओंका

संक्रम, व्यापारीनिकौं लाभभूमि, शरणागतनिकौं वज्रपिंजर, नीतिके वेत्ताकौं नीतिका मन्दिर, कौतु कीनि (खिलारियौं) को कौतुकका निवास, कामिनीकौं अप्सराओंका नगर, सुखियाको आनन्दका निवास भासै है। जहां गजगामिनी शीलवंती व्रतवन्ती रूपवन्ती अनेक स्त्री हैं जिनके शरीरकी पद्मरागमणिकीसी प्रभा है और चन्द्रकांतिमणि जैसा वदन है सुकुमार अंग है पतिव्रता हैं व्यभिचारीनिकौं अगम्य है महा सौन्दर्ययुक्त हैं मिष्ट वचनकी बोलनेहारी हैं और सदा हर्षरूप मनोहर हैं मुख कमल जिनके और प्रमादरहित है चेष्टा जिनकी, सामायिक प्रोषध प्रतिक्रमणकी करनेहारी हैं व्रत नेमादिविषैं सावधान हैं अन्नका शोधन जलका छानना पात्रनिकूं भक्तिसे दान देना और दुखित भुखित जीवनिकौं दयाकर दान देना इत्यादि शुभ क्रियाविषैं सावधान हैं जहां महामनो हर जिनमन्दिर हैं जिनेश्वरकी भक्ति और सिद्धांतकी चरचा ठौर ठौर है। ऐसा राजगृह नगर बसा है जिसकी उपमा कथनमें न आवै, स्वर्ग लोक तो केवल भोगहीका विलास है और यह नगर भोग और योग दोनोंहीका निवास है जहां पर्वत समान तो ऊंचा कोट है और महागम्भीर खाई है जिसमें बैरी प्रदेश नाहीं कर सकैं ऐसा देवलोक समान शोभायमान राजगृह नगर बसे हैं।

राजगृह नगरमें राजा श्रेणिक राज्य करै है जो इन्द्र समान विख्यात है। बड़ा योद्धा, कल्याण रूप है प्रकृति जिसकी, कल्याण ऐसा नाम स्वर्णका और मंगलकाभी हैं सुमेरु तो सुवर्ण रूपहै और राजा कल्याण रूप है, वह राजा समुद्र समान गम्भीर है मर्य्यादा उलंघनका है भय जिसको, कलाके ग्रहणमें चन्द्रमाके समान है, प्रतापमें सूर्य समान है, धन सम्पदामें कुबेरके समान है शूरवीरपनेमें प्रसिद्ध है लोकका रक्षक है, महा न्यायवन्त है, लक्ष्मीकरि पूर्ण है, गर्वसे दूषित नहीं, सर्व शत्रुओंका विजय कर बैठा है तथापि शस्त्र (हथियार) का अभ्यास रखता है और जे आपसे नम्रीभूत भये हैं तिनके मानका बढ़ावनहारा है जे आपतैं कठोर हैं तिनके मानका छेदनहारा है और आपदा विषैं उद्वेग चित्त नाहीं, सम्पदाविषैं मदोन्मत्त नाहीं जिसकी निर्मल साधुओंमें रत्न बुद्धि है और रत्नके विषैं पाषाणबुद्धि है जो दानयुक्त क्रियामें बड़ा सावधान है और ऐसा सामन्त है कि मदोन्मत्त हाथीको कीट समान जानै है और दीन पर दयालु है जिसकी जिन शासनमें परम प्रीति है, धन और जीतव्यमें जीर्ण तृण समान बुद्धि है, दशों दिशा वश करी हैं प्रजाके प्रतिपालनमें सावधान हैं और स्त्रियोंको चर्मकी पुतलीके समान देखै है धनको रज समान गिनै है गुणनिकरि नम्रीभूत जो धनुष ताहीको अपना सहाई जानै है चतुरंग सेनाकों केवल शोभारूप मानै है।

भावार्थ—अपने वल पराक्रमसे राज करै है जिसके राजमें पवन भी वस्त्रादिकका हरण नाहीं करै, करै तो ठग चोरोंकी क्या बात जिसके राजमें क्रूर पशु भी हिंसा न करैं तो मनुष्य

हिंसा कैसें करें, यद्यपि राजा श्रेणिकसे वासुदेव बड़े होते हैं परन्तु उन्होंने वृष कहिए वृषासुरका पराभव किया है और यह राजा श्रेणिक वृष कहिए धर्म ताका प्रतिपालक है इसलिए उनसे श्रेष्ठ है और पिनाकी अर्थात् शंकर उसने राजा दक्षके गर्वको आताप किया और यह राजा श्रेणिक दक्ष अर्थात् चतुर पुरुषोंको आनन्दकारी है इसलिए शंकरसे भी अधिक है और इन्द्रके वंश नाहीं, यह वंश कर विस्तीर्ण है और दक्षिण दिशाका दिग्पाल जो यम सो कठोर है यह राजा कोमल-चित्त है और पश्चिम दिशाका दिग्पाल जो वरुण सो दुष्ट जलचरोंका अधिपति है इसके दुष्टोंका अधिकार ही नाहीं और उत्तर दिशाका अधिपति जो कुबेर, वह धनका रक्षक है यह धनका त्यागी है और बौद्धके समान क्षणिकमती नाहीं चन्द्रमाकी न्याई कलंकी नाहीं। यह राजा श्रेणिक सर्वोत्कृष्ट है जिसके त्यागका अर्थी पार न पावैं जिसकी बुद्धिका पार पण्डित न पावते भये शूरवीर जिसके साहसका पारन पावते भये, जिसकी कीर्ति दशों दिशामें विस्तरी है जिसके गुणनकी संख्या नाहीं सम्पदाका क्षय नाहीं सेना बहुत, बड़े बड़े सामंत सेवा करे हैं हाथी घोड़े रथ पयादे सब ही राजाका ठाठ सबसे अधिक है। पृथ्वी विषैं प्राणीका चित्त जिससे अति अनुरागी होता भया, जिसके प्रतापका शत्रु पार न पावते भये, सर्व कलाविषैं प्रवीण है इसलिये हम सारखे पुरुष वाके गुण कैसे गा सकें, जिसके क्षायिक सम्यक्त्वकी महिमा इन्द्र अपनी सभा विषैं सदा ही करैं है वह राजा मुनिराजके समूहमें वेतकी लताके समान नम्रीभूत है, और उद्धत वैरीनिको वज्रदण्डसे वश करनेवाला है जिसने अपनी भुजाओंसे पृथ्वीकी रक्षा करी है कोट खाई तो नगरकी शोभामात्र हैं। जिन चैत्यालयोंका करानेवाला जिनपूजाका करनेवाला जिसके चेलना नामा रानी महा पतिव्रता शीलवंती गुणवन्ती रूपवन्ती कुलवन्ती शुद्ध सम्यग्दर्शनकी धरनेवाली श्राविकाके व्रत पालनेवाली सर्व कलामें नपुण, उसका वर्णन कहां लग कहैं ऐसा उपमा कर रहित गुणोंका समूह राजा श्रेणिक राजगृह नगरमें राज करै है।

[अन्तिम तीर्थंकर महावीरके समवसरणका आगमन और राजा श्रेणिकका हर्ष-प्रकाश]

एक समय राजगृह नगरके समीप विपुलाचल पर्वतके ऊपर भगवान महावीर अन्तिम तीर्थंकर समोसरण सहित आय विराजे तब भगवानके आगमनका वृत्तांत वनपालने आनकर राजासे कहा और छहों ऋतुओंके फल फूल लाकर आगें धरे तब राजाने सिंहासनसे उठकर सात पैंड पर्वतके सम्मुख जाय भगवानको अष्टांग नमस्कार किया और वनपालको अपने सब आभरण उतारकर पारितोषिकमें देकर और भगवानके दर्शनोंको चलनेकी तैयारी करता भया।

श्रीवर्द्धमान भगवानके चरणकमल सुर नर असुरोंसे नमस्कार करने योग्य हैं गर्भकल्याणकविषैं छप्पन कुमारियोंने शोधा जो माताका उदर, उसमें तीन ज्ञान संयुक्त अच्युत स्वर्गसे आय विराजे हैं। और इन्द्रके आदेशसे धनपतिने गर्भमें आवनेसे छह मास पहिलेसैं रत्नवृष्टि

करके जिनके पिताका घर पूरा है और जन्म कल्याणकमें सुमेर पर्वतके मस्तकपर इन्द्रादि देवोंने क्षीरसागरके जल कर जिनका जन्माभिषेक किया हैं और धरा है महावीर नाम जिनका और बाल अवस्थामें इन्द्रने जो देवकुमार रखे तिन सहित जिन्होंने क्रीडा करी है और जिनके जन्ममें माता पिताकूं तथा अन्य समस्त परिवारकूं और प्रजाकू और तीन लोकके जीवनिकूं परम आनन्द हुवा नारकियोंका भी त्रास एक मुहूरतके वास्ते मिट गया जिनके प्रभावसे पिताके बहुत दिनोंके विरोधी जो राजा थे वे स्वयमेव ही आय नम्रीभूत भये और हाथी घोड़े रथ रत्नादिक अनेक प्रकारके भेट किये और छत्र चमर वाहनादिक तज दीन होय हाथ जोड़ आय पावनि पड़े, और नाना देशोंकी प्रजा आयकर निवास करती भई। जिन भगवानका चित्त भोगोंमें रत न हुआ जैसे सरोवरमें कमल जलसैं निर्लेप रहैं, तैसें भगवान् जगतको मायासे अलिप्त रहे भगवान स्वयंबुद्ध विजलीके चमत्कारवत् जगतकी मायाको चंचल जान वैरागी भये,और किया है लौकांतिक देवोंने स्तवन जिनका मुनिव्रतको धारणकर सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्रका आराधनकर घातिया कर्मोंका नाशकर केवल ज्ञानको प्राप्त भये। वह केवलज्ञान समस्त लोका-लोकका प्रकाशक है, ऐसे केवलज्ञानके धारक भगवानने जगतके भव्यजीवोंके निमित्त धर्मतीर्थ प्रगट किया, वह श्रीभगवान मलरहित पसेवसे रहित हैं जिनका रुधिर क्षीर (दूध) समान है और सुगंधित शरीर,शुभ लक्षण, अतुलबल, मिष्टवचन महा सुन्दरस्वरूप, समचतुरस्र-संस्थान वज्रवृषभनाराच संहननके धारक हैं जिनके विहारमें चारों ही दिशाओंमें दुर्भिक्ष नाहीं, सकल ईति भीतिका अभाव रहै है, और सर्व विद्याके परमेश्वर, जिनका शरीर निर्मल स्फटिक समान है अर आँखोंकी पलक नाहीं लागै, अर नख केश बढ़ैं नाहीं, समस्त जीवोंमें मैत्री भाव रहै, है, और शीतल मंद सुगंध पवन पीछे लगी आवै है, छह ऋतुके फल फूल फलैं हैं और धरती दर्पण समान निर्मल हो जाय है और पवनकुमार देव एक योजन पर्यंत भूमि तृण पाषाण कण्टकादि रहित करैं हैं और मेघकुमारदेव गंधोदककी सुवृष्टि महा उत्साहसे करैं हैं,और प्रभुके विहा-रमें देव चरणकमलके तलै स्वर्णमयी कमल रचैं हैं चरणोंको भूमिका स्पर्श नाहीं, आकाशमें ही गमन करें हैं, धरती पर छह ऋतुके सब धान्य फलैं हैं,शरदके सरोवरके समान आकाश निर्मल होय है और दशों दिशा धूम्रादिरहित निर्मल होय है, सूर्यकी कांतिको हरनेवाला सहस्र आरोंसे युक्त धर्मचक्र भगवानके आगे आगे चलै है, इस भांति आर्यखण्डमें विहार कर श्री महावीरस्वामी विपुलाचल पर्वत ऊपर आय विराजे हैं,उस पर्वतपर नाना प्रकारके जलके निरझरने झरैं हैं उनका शब्द मनका हरणहारा है,जहां बेलि और वृक्ष शोभायमान हैं। और जहां जातिविरोधी जीवोंनेभी वैरको छोड़ दिया है, पक्षी बोल रहे हैं, शब्दोंसे मानों पहाड़ गुंजार ही करैं हैं और भ्रमरोंके नादसे मानों पहाड़ गान ही कर रहा है, सघन वृक्षोंके तलै हाथियोंके समूह बैठे हैं, गुफाओंके

मध्य सिंह तिष्ठैं हैं, जैसैं कैलाश पर्वतपर भगवान ऋषभदेव विराजे थे तैसैं विपुलाचलपर श्रीवर्द्ध-मान स्वामी विराजैं हैं।

जब श्रीभगवान समोसरणमें केवलज्ञान संयुक्त विराजमान भये तब इन्द्रका आसन कम्पायमान भया, तब इन्द्रने जाना कि भगवान केवलज्ञान संयुक्त विराजैं हैं, मैं जायकर वंदना करूं, सो इन्द्र ऐरावत हाथी पर चढ़कर आए। वह हाथी शरदके बादल समान उज्जवल है मानों कैलाश पर्वत सुवर्णकी साकलनिसे संयुक्त है, जिसका कुम्भस्थल भ्रमरोंकी पंक्ति करि मण्डित है, जिसने दशों दिशा सुगंधसे व्याप्त करी है महा मदोन्मत्त है, जिसके नख सचिक्कण हैं, जिसके रोम कठोर हैं, जिसका मस्तक भले शिष्यके समान बहुत विनयवान और कोमल है, जिसका अंग दृढ़ है और दीर्घ काय है, जिसका स्कंध छोटा है, मद झरै है और नारद समान कलहप्रिय है, जैसें गरुड़ नागको जीतै, तैसें यह नाग अर्थात् हाथियोंको जीतै है, जैसें रात्रि नक्षत्रोंकी माला कहिये पंकति ताकरि शोभै है, तैसें यह नक्षत्रमाला जो आभरण तासों शोभै है। सिंदूर कर अरुण (लाल) ऊंचा जो कुम्भस्थल उससे देव मनुष्योंके मनको हरै है ऐसे ऐरावत गजपर चढ़ कर सुरपति आए। और भी देव अपने-अपने वाहनोंपर चढ़कर इन्द्रके संग आए। जिनके मुख कमल जिनेंद्रके दर्शनके उत्साहसे फूल रहे हैं, सोलह ही स्वर्गोंके समस्त देव और भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी सर्व ही आये और कमलायुध आदि अखिल विद्याधर अपनी स्त्रियों सहित आए, वे विद्याधर रूप और विभवमें देवोंके समान हैं।

तहां समोसरणविषैं इन्द्र भगवानकी ऐसे स्तुति करते भये। हे नाथ! महामोहरूपी निद्रामें सोता यह जगत् तुमने ज्ञानरूप सूर्यके उदयसे जगाया। हे सर्वज्ञ वीतराग! तुमको नमस्कार होहु, तुम परमात्मा पुरुषोत्तम हो, संसार समुद्रके पार तिष्ठो हो, तुम बड़े सार्थवाही हो, भव्य जीव चेतनरूपी धनके व्यापारी तुमारे संग निर्वाणद्वीपको जायेंगे तो मार्गमें दोषरूपी चोरोंसे नाहीं लुटेंगे, तुमने मोक्षाभिलाषियोंको निर्मल मोक्षका पंथ दिखाया और ध्यानरूपी अग्नि करि कर्म ईंधनको भस्म किया है। जिनके कोई बांधव नाहीं, नाथ नाहीं, दुःखरूपी अग्निके ताप करि संतापित जगतके प्राणी तिनके तुम भाई हो, और नाथ हो, परम प्रतापरूप प्रगट भए हो, हम तुमारे गुण कैसें वर्णन कर सकैं। तुमारे गुण उपमारहित अनन्त हैं, सो केवलज्ञानगोचर हैं, इस भांति इन्द्र भगवान्‌की स्तुति कर अष्टांग नमस्कार करते भये। समोशरणकी विभूति देख बहुत आश्चर्यको प्राप्त भये, सो संक्षेप-करि वर्णन करिये हैं:—

वह समोशरण नाना वर्णके अनेक महारत्न और स्वर्णसे रचा हुवा जिसमें प्रथम ही रत्नकी धूलिका धूलिसाल कोट है और उसके ऊपर तीन कोट हैं। एक एक कोटके चारि चारि द्वार हैं।

द्वारे द्वारे अष्ट मंगल द्रव्य हैं। और जहां रमणीक वापी हैं सरोवर हैं अर धुजा अद्भुत शोभा धरै है। तहां स्फटिक मणिकी भीति(दिवार)करि बारह कोठे प्रदक्षिणारूप बने हैं। एक कोठेमें मुनिराज हैं,दूसरेमें कल्पवासी देवोंकी देवांगना हैं,तीसरेमें आर्यिका हैं,चौथेमें जोतिषी देवोंकी देवी हैं, पांचवेंमें व्यन्तर देवी हैं, छठेमें भवनवासिनी देवी हैं,सातवेंमें जोतिषी देव हैं, आठवेंमें व्यंतर देव हैं, नवमेंमें भवनवासी, दशवेंमें कल्पवासी, ग्यारवेंमें मनुष्य, बारवेंमें तिर्यंच ॥ ये सर्व जीव परस्पर बैरभाव रहित तिष्ठैं हैं। भगवान् अशोक वृक्षके समीप सिंहासनपर विराजैं हैं, वह अशोकवृक्ष प्राणियोंके शोकको दूर करै है। और सिंहासन नाना प्रकारके रत्नोंके उद्योतसे इन्द्रधनुषके समान अनेक रंगोंको धरै है, इन्द्रके मुकुटमें जो रत्न लगै हैं, उनकी कांतिके समूहको जीतै हैं। तीन लोककी ईश्वरताके चिह्न जो तीन छत्र उनसै श्रीभगवान शोभायमान हैं और देव पुष्पोंकी वर्षा करैं हैं, चौसठ चमर सिर पर दुरैं हैं, दुंदुभी बाजे बाजै हैं, उनकी अत्यन्त सुन्दर ध्वनि होय रही है।

राजगृहनगरसे राजा श्रेणिक आवते भये। अपना मंत्री तथा परिवार और नगर-वासियों सहित समवशरणके पास पहुंच समोसरणकौं देख दूरहीसैं छत्र चमर वाहनादिक तज कर स्तुतिपूर्वक नमस्कार करते भये। पीछैं आय कर मनुष्योंके कोठेमें बैठे, अर कुंवर वारिषेण, अभयकुमार, विजयबाहु इत्यादिक राजपुत्र भी स्तुतिकर हाथजोड़ नमस्कार कर यथास्थान आय बैठे। जहां भगवानकी दिव्यध्वनि खिरै है, देव मनुष्य तिर्यंच सब ही अपनी अपनी भाषा-में समझै हैं। वह ध्वनि मेघके शब्दको जीतै है, देव और सूर्यकी कांतिको जीतनेवाला भामण्डल शोभै है, सिंहासन पर जो कमल है उसपर आप अलिप्त विराजैं। गणधर प्रश्न करैं हैं और दिव्यध्वनि विषैं सर्वका उत्तर होय है।

गणधर देवने प्रश्न किया कि हे प्रभो! तत्त्वके स्वरूपका व्याख्यान करो। तब भगवान् तत्त्वनिका निरूपण करते भये। तत्त्व दो प्रकारके हैं एक जीव दूसरा अजीव। जीवोंके दो भेद हैं सिद्ध और संसारी। संसारीके दो भेद हैं एक भव्य दूसरा अभव्य। मुक्त होने योग्यकौं भव्य कहिये और कोरडू (कुडकू) मूंग समान जो कभी भी न सीझै तिसकौं अभव्य कहिये। भगवान् के भाषे तत्त्वों का श्रद्धान भव्य जीवोंके ही होय, अभव्यकौं न होय, और संसारी जीवोंके एकें-द्रिय आदि भेद और गति, काय आदि चौदह मार्गणाओंका स्वरूप कह्या और उपशमश्रेणी क्षपकश्रेणी दोनोंका स्वरूप कहा और संसारी जीव दुःखरूप कहै, सो मूढ़ोंकौ दुःखरूप अवस्था सुखरूप भासै है, चारों ही गति दुख रूप हैं, नारकियोंको तो आंखके पलकमात्र भी सुख नाहीं, मारण, ताड़न,छेदन,भेदन शूलारोपणादिक अनेक प्रकारके दुःख निरंतर रहैं हैं। अर तिर्यंचोंको ताडन, मारण, लादन, शीत,उष्ण, भूख,प्यास आदिके अनेक दुःख हैं। और मनुष्योंकौ इष्टवियोग और अनिष्टसंयोग आदिके अनेक दुख हैं और देवोंको बड़े देवोंकी विभूति देखकर संताप

उपजै है और दूसरे देवोंका मरण देख बहुत दुःख उपजै है तथा अपनी देवांगनाओंका मरण देख वियोग उपजै है और जब अपना मरण निकट आवै, तब अत्यन्त विलापकरि झूरै हैं, इसी भांति महा दुःख कर संयुक्त चतुर्गतिमैं जीव भ्रमण करै है। कर्मभूमिमें जो मनुष्य जन्म पाकर सुकृत (पुण्य) नाहीं करै हैं उनके हस्त मैं प्राप्त हुआ अमृत जाता रहै है, संसारमें अनेक योनियोंमें भ्रमण करता हुआ यह जीव अनंत कालमैं कभी ही मनुष्य जन्म पावै है तब भीला-दिक नीच कुलमें उपजा तो क्या हुआ, अर म्लेच्छखण्डोंमैं उपजा तो क्या हुआ। और कदाचित् आर्यखण्डमें उत्तम कुलमें उपज्या, और अंगहीन हुआ तो क्या और सुन्दररूप हुआ और रोग संयुक्त हुआ तो क्या और सब ही सामग्री योग्य भी मिली, परन्तु विषयाभिलाषी होकर धर्ममें अनुरागी न भया तो कुछ भी नाहीं, इसलिए धर्मकी प्राप्ति अत्यन्त दुर्लभ है। कई एक तो पराये किंकर होय कर अत्यन्त दुःखसे पेट भरै हैं, कई एक संग्राममें प्रवेश करै हैं। संग्राम शस्त्रके पात से भयानक है और रुधिरके कर्दम (कीचड़) से महा ग्लानिरूप है। और कई एक किसाण वृत्तिकर क्लेशसे कुटुम्बका भरण पोषण करै हैं, जिसमें अनेक जीवोंकी हिंसा करनी पड़ती है। इस भांति अनेक उद्यम प्राणी करैं हैं उनमें दुःख क्लेश ही भोगै हैं, संसारी जीव विषयसुखके अत्यंत अभिलाषी हैं, कई एक तो दरिद्रतासे महादुःखी हैं, कई एक धन पाय कर चोर वा अग्नि वा जल वा राजादिके भयसे सदा आकुलतारूप रहै हैं, और कई एक द्रव्यको भोगते हैं परंतु तृष्णारूप अग्निके बढ़नेसे जलैं हैं, कई एकको धर्मकी रुचि उपजी है परन्तु उनकौं दुष्ट जीव संसारहीके मार्ग में डारैं हैं, परिग्रहधारियोंके चित्तकी निर्मलता कहांसे होय, और चित्तकी निर्मलता विना धर्मका सेवन कैसें होय? जबतक परिग्रहकी आसक्तता है तबतक जीव हिंसाविषै प्रवर्त्तै हैं और हिंसासे नरक निगोद आदि कुयोनिमें महा दुःख भोगै हैं, संसारभ्रमणका मूल हिंसा ही है, अर जीवदया मोक्षका मूल है। परिग्रहके संयोगसे राग द्वेष उपजै हैं, सो राग द्वेष ही संसारके दुःखके कारण हैं, कई एक जीव दर्शनमोहके अभावसे सम्यग्दर्शनको भी पावै हैं, परंतु चारित्रमोहके उदयसे चारित्रको नाहीं धारि सकै हैं; और कई एक चारित्रको भी धारकरि बाईस परीषहोंसे पीड़ित होय करि चारित्रसैं भ्रष्ट होय हैं, कई एक अणुव्रत ही धारै हैं, और कैई एक अणुव्रत भी धार नाहीं सकै हैं, केवल अव्रत सम्यक्ती ही होय हैं। अर संसारके अनंत जीव सम्यक्तसे रहित मिथ्यादृष्टि ही हैं। जो मिथ्यादृष्टि हैं, वे बार बार जन्म मरण करै हैं, दुखःरूप अग्निसे तप्तायमान भवसंकटमैं पड़ैं हैं, मिथ्यादृष्टि जीव जीभके लोलुपी हैं और काम-कलंकसे मलीन हैं, क्रोध मान माया लोभमैं प्रवर्त्तै हैं, और जो पुण्याधिकारी जीव संसार शरीर भोगनितैं विरक्त होय करि शीघ्र ही चारित्रको धारै हैं और निवाहै है और संयममैं प्रवर्त्तै हैं, वे महाधीर परम समाधिसे शरीर छोड़कर स्वर्गमें बड़े देव होकर अद्भुत सुख भोगै हैं। वहांसे चयकर उत्तम मनुष्य होकर मोक्ष पावै हैं। कई एक मुनि तपकर अनुत्तर विमानमैं अहमिन्द्र होय हैं तहां

तैं चयकरि तीर्थंकर पद पावै हैं, कई एक चक्रवर्ती बलदेव कामदेव पद पावै हैं, कई एक मुनि महातप कर निदान बांध स्वर्गमें जाय वहांसे चयकरि वासुदेव होय हैं, वे भोगको नाहीं तज सकै हैं। इस प्रकार श्रीवर्द्धमानस्वामीके मुखसे धर्मोपदेश श्रवण करि देव मनुष्य तिर्यंच अनेक जीव ज्ञानकौं प्राप्त भये, कई एक उत्तम पुरुष मुनि भए, कई एक श्रावक भए, कई एक तिर्यंच भी श्रावक भए। देव व्रत नाहीं धारण करि सकें हैं तातैं अव्रत सम्यक्तको ही प्राप्त भए, अपनी अपनी शक्ति अनुसार अनेक जीव धर्ममैं प्रवृत्त भये, पापकर्मके उपार्जनसे विरक्त भए, धर्म श्रवणकरि भगवानकौ नमस्कार करि अपने अपने स्थान गए। श्रेणिक महाराज भी जिनवचन श्रवणकरि हर्षित होय अपने नगरको गए।

अथानंतर सन्ध्या समय सूर्य अस्त होनेको सम्मुख भया अस्ताचलके निकट आया अत्यन्त आरक्तता (सुरखी) को प्राप्त भया, किरण मंद भई सो यह बात उचित ही है जब सूर्यका अस्त होय तब किरण मंद होय ही होंय, जैसैं अपने स्वामीको आपदा परै तब किसके तेज की वृद्धि रहै। चकवीनके अश्रुपात सहित जे नेत्र तिनको देख मानो दयाकरि सूर्य अस्त भया, भगवानके समवसरणविषैं तौ सदा प्रकाश ही रहैं है,रात्रि दिनका विचार नाहीं। अर सब पृथ्वी-विषैं रात्रि पड़ी, सन्ध्यासमय दिशा लाल भई, सो मानौं धर्म श्रवणकरि प्राणियोंके चित्तसे नष्ट भया जो राग सो सन्ध्याके छलकरि दशों दिशानिमें प्रवेश करता भया।

भावार्थ—रागका स्वरूप भी लाल होय है अर दिशाविषैं भी ललाई भई। अर सूर्यके अस्त होनेसे लोगोंके नेत्र देखनेसे रहित भए, क्योंकि सूर्यके उदयसैं जो देखनेकी शक्ति प्रगट भई थी सो अस्त होनेसैं नष्ट भई। अर कमल संकुचित भए जैसैं बड़े राजाओंके अस्त भए चौरादिक दुर्जन जगविषैं परधन हरणादिक कुचेष्टा करैं तैसैं सूर्यके अस्त होनेसैं पृथ्वीविषैं अन्धकार फैल गया। रात्रि समय घर घर चम्पेकी कलीके समान जो दीपक तिनका प्रकाश भया, वह दीपक मानो रात्रिरूप स्त्रीके आभूषण ही हैं। कमलके रससे तृप्त होय करि राजहंस शयन करते भए, अर रात्रिसम्बन्धी शीतल मंद सुगन्ध पवन चलती भई मानो निशा (रात) का स्वास ही है। अर भ्रमरोंके समूह कमलोंमें विश्राम करते भए,अर जैसैं भगवानके वचनोंकरि तीन लोकके प्राणी धर्म का साधनकर शोभायमान होय हैं तैसैं मनोज्ञ तारोंके समूह से आकाश शोभायमान भया। अर जैसैं जिनेन्द्रके उपदेशसे एकांतवादियोंका संशय विलाय जाय तैसैं चन्द्रमाकी किरणोंसे अन्धकार विलाय गया। लोगोंके नेत्रोंको आनंदका करनहारा चन्द्रमा उद्योत समय कम्पायमान भया, मानो अन्धकारपर अत्यंत कोप भया।

भावार्थ—क्रोध समय प्राणी कम्पायमान होय हैं अंधकारकरि जे लोक खेदको प्राप्त भए थे, वे चन्द्रमाके उद्योतकरि हर्षकौं प्राप्त भए, अर चंद्रमाकी किरणकौं स्पर्शकरि कुमुद प्रफुल्लित

भए। इस भांति रात्रिका समय लोकोंको विश्रामका देनहारा प्रगट भया। राजा श्रेणिकको सन्ध्या-समय सामायिकपाठ करते जिनेन्द्रकी कथा करते करते घनी रात्रि गई, सोनेकौं उद्यमी भया। कैसा है रात्रिका समय, जिसमें स्त्री पुरुषोंके हितकी वृद्धि होय है। राजाके शयनका महल गंगाके पुलिन (किनारों) समान उज्ज्वल है अर रत्नोंकी ज्योतिसे अतिउद्योत रूप है, अर फूलोंकी सुगंधि जहां झरोखोंके द्वारा आवै है अर महलके समीप सुन्दर स्त्री मनोहर गीत गाय रही हैं, अर महल के चौगिरद सावधान सामंतोंकी चौकी है, अर अति शोभा बन रही है, सेजपर अति कोमल बिछौनैं बिछ रहै हैं, वह राजा भगवानके पवित्र चरण अपने मस्तक पर धारै हैं अर स्वप्नमें भी बारंबार भगवान् हीका दर्शन करै है। अर स्वप्नमें गणधरदेवसे भी प्रश्न करै है। इस भांति सुखसैं रात्रि पूर्ण भई। पीछे मेघकी ध्वनिके समान प्रातके वादित्र वाजिते भए। उनके नादसे राजा निद्रा-से रहित भया।

प्रभात समय देहक्रिया करि राजा श्रेणिक अपने मनमें विचार करता भया कि भगवानकी दिव्यध्वनिमें तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिकके जो चरित्र कहे गए वे मैंने सावधान होकर सुनें। अब श्रीरामचन्द्रके चरित्र सुननेमें मेरी अभिलाषा है, लौकिक ग्रन्थोंमें रावणादिकको मांसभक्षी राक्षस कहा है,परन्तु वे विद्याधर महाकुलवंत कैसैं मद्य मांस रुधिरादिकका भक्षण करैं। अर रावणके भाई कुम्भकरणको कहै हैं कि वह छै महीनेकी निद्रा लेता था, अर उसके ऊपर हाथी फेरते अर ताते तेलसे कान पूरते, तो भी छह महीनासे पहले नहीं जागता, तब ऐसी भूख प्यास लगती कि अनेक हस्ती महिषा (भैंसा) आदि तिर्यंच, अर मनुष्योंको भक्षण कर जाता था,अर राधि रुधिरका पान करता तौ भी तृप्ति नहीं होती थी। अर सुग्रीव हनूमानादिक-को बानर कहै हैं परन्तु वे तो बडे राजा विद्याधर थे, बड़े पुरुषको विपरीत कहनेमें महा पापका बन्ध होय है। जैसैं अग्निके संयोगसे शीतलता न होय, अर तुषार (बर्फ) के संयोगसे उष्णता (गरमी) न होय, जलके मंथनसे घीकी प्राप्ति न होय, अर बालू रेतके पेलनेसे तैलकी प्राप्ति न होय, तैसैं महापुरुषोंके चरित्र विरुद्ध सुननेसे पुण्य न होय, अर लोक ऐसा कहै हैं कि देवोंके स्वामी इन्द्रको रावणने जीता। परन्तु यह बात न बनै, कहां वह देवोंका इन्द्र, अर कहां यह मनुष्य, जो इन्द्रके कोपमात्रसे ही भस्म होजाय। जाके ऐरावत हस्ती, वज्रसा आयुध, जिसकी ऐसी सामर्थ कि सर्व पृथिवीको वश कर ले, सो ऐसे स्वर्गके स्वामी इन्द्रको यह अल्प शक्तिका धनी मनुष्य विद्याधर कैसे लाकर बंदीमें डारैं, मृगसे सिंहको कैसैं वाधा होय ? तिलसे शिलाको पीसना, अर गिंडोलेसे सांपका मारना, अर श्वानसे गजेंद्रका हनना कैसैं होय ? अर लोक कहै हैं कि रामचन्द्र मृगादिककी हिंसा करते थे सो यह बात न बनैं, वे व्रती विवेकी दयावान् महा-पुरुष कैसैं जीवोंकी हिंसा करैं, सो यह बात न संभवै है। अर कैसैं अभक्ष्यका भक्षण करैं, अर

सुग्रीवका बड़ा भाई बालीको कहै हैं कि उसने सुग्रीवकी स्त्री अंगीकार करी, सो बड़ा भाई जो बाप समान है कैसैं छोटे भाईकी स्त्रीकूं अंगीकार करै, सो यह सर्व बात संभवै नाहीं। इसलिए गणधर देवको पूछकर श्रीरामचन्द्रकी यथार्थ कथा श्रवण-धारण करूं, ऐसा चिंतवन श्रेणिक महाराजने किया। बहुरि मनमें विचारै हैं कि नित्य गुरुनिके दर्शन करि अर धर्मके प्रश्न करि तत्त्व निश्चय करिए तौं परम सुख होय है ये आनंदके कारण हैं ऐसा विचार करि राजा सेजसे उठे, अर रानी अपने स्थान गई। कैसी है रानी जिसकी कांति लक्ष्मी समान है, महा पतिव्रता अर पतिकी बहुत विनयवान है। अर कैसा है राजा जिसका चित्त अत्यन्त धर्मानुरागमें निष्कम्प है। दोनों प्रभात क्रियाका साधन करते भए। अर जैसैं सूर्य शरदके बादलोंसे बाहिर आवै तैसैं राजा सुफेद कमलके समान उज्ज्वल सुगंध महलसे बाहिर आवतें भए, उस सुगंध महलमें भंवर गुजार करै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषा टीकाविषैं श्रेणिकने रामचन्द्र रावणके चरित्र सुननेके अर्थि प्रश्न करनेका विचार कीया ऐसा द्वितीय अधिकार संपूर्ण भया ॥२॥

(तृतीय पर्व)

[विद्याधर लोकका वर्णन]

आगैं राजा सभामें आय सर्व आभरण सहित बिराजे ताकी शोभा कहिये हैं, प्रभात ही बड़े बड़े सामन्त आये उनको द्वारपालने राजाका दर्शन कराया, सामंतोंके वस्त्र आभूषण सुन्दर हैं। उन समेत राजा हाथी पर चढ़कर नगरसे समोशरणको चाले। आगैं बन्दीजन विरद बखानते जाय हैं, राजा समोशरणके पास पहुंचे। कैसा है समोशरण—जहां अनंत महिमाके निवास महावीर स्वामी विराजै हैं, तिनके समीप गौतम गणधर तिष्ठै हैं। तत्त्वोंके व्याख्यानमें तत्पर अर कांतिमें चंद्रमाके तुल्य, प्रकाशमें सूर्यके समान, जिनके चरण वा नेत्ररूपी कमल अशोक वृक्षके पल्लव समान लाल हैं। अर अपनी शांतताकरि जगतको शांत करै हैं, मुनियोंके समूहके स्वामी हैं। राजा दूरसे ही समोशरणको देख करि हाथीसे उतर समोशरण गए, हर्ष करि फूल रहे हैं मुखकमल जिनके सो भगवानकी तीन प्रदक्षिणा दे हाथ जोड़ नमस्कार कर मनुष्योंकी सभामें बैठे।

प्रथम ही राजा श्रेणिकने श्रीगणधरदेवको 'नमोस्तु' कहकर समाधान (कुशल)

पूछकर प्रश्न किया—भगवन् ! मैं रामचरित्र सुननेकी इच्छा करूं हूँ। यह कथा जगतमें लोगोंने और भांति प्ररूपी है, इसलिये हे प्रभो ! कृपाकर संदेहरूप कीचडतैं जीवनिको काढो।

राजा श्रेणिकका प्रश्न सुन श्रीगणधरदेव अपने दांतोंकी किरणसे जगतको उज्ज्वल करते गंभीर मेघकी ध्वनि समान भगवानकी दिव्यध्वनिके अनुसार व्याख्यान करते भए। हे राजा तू सुन, मैं जिन आज्ञाप्रमाण कहूं हूं, कैसे हैं जिनवचन तत्त्वके कथनमैं तत्पर हैं, तू यह निश्चय करि कि रावण राक्षस नाहीं, मनुष्य है, मांसका आहारी नाहीं, विद्याधरोंका अधिपति हैं; राजा विनमिके वंशमें उपज्या है। अर सुग्रीवादिक बन्दर नाहीं, ये बड़े राजा मनुष्य हैं, विद्याधर हैं। जैसैं नीव विना मंदिरका मांडण न होय तैसैं जिन-वचन-रूपी मूल विना कथाकी प्रमाणता न होय है। इसलिए प्रथम ही क्षेत्र कालदिकका वर्णन सुनि। अर फिर महा पुरुषोंका चरित्र जो पापनिका विनाशन हारा है सो सुन।

[लोकालोक कालचक्र कुलकर नाभिराजा और श्रीऋषभदेव और भरतका वर्णन।]

गौतम स्वामी कहै हैं कि हे राजा श्रेणिक ! अनन्तप्रदेशी जो अलोकाकाश, ता मध्य तीन वातवलयतैं वेष्टित तीन लोक तिष्ठै हैं। तीन लोकनिके मध्य यह मध्यलोक है। इसमें असंख्यात द्वीप और समुद्र हैं। तिनके बीच लवणसमुद्रकरि वेढ्या लक्षयोजनप्रमाण यह जंबूद्वीप है, उसके मध्य सुमेरु पर्वत है वह मूलमें वज्रमणिमयी है अर ऊपर समस्त सुवर्णमयी है। बहुरि अनेक रत्नोंसे संयुक्त है, संध्या समय रक्तताकों धारैं जे मेघोंके समूहके तिनके समान स्वर्गपर्यंत ऊंचा शिखर है। शिखरके और सौधर्म्मस्वर्गके बीचमें एक बालकी अणीका अन्तर है। सुमेरु पर्वत निन्यानवे हजार योजन ऊंचा है अर एक हजार योजन स्कंद है। अर पृथ्वीविषैं तो दश हजार योजन चौडा है अर शिखरपर एक हजार योजन चौडा है। मानो मध्य लोकके नापनेका दंड ही है। जम्बूद्वीपमें एक देवकुरु एक उत्तरकुरु भोगभूमि है। अर भरत आदि सप्त क्षेत्र हैं षट्कुलाचलोंसे जिनका विभाग है। जम्बू अर शाल्मली यह दोय वृक्ष हैं। जम्बूद्वीपमैं चौंतीस विजयार्ध पर्वत हैं। एक एक विजयार्धमैं एक सौ दश दश विद्याधरोंकी नगरी हैं। एक एक नगरोकूं कोटि कोटि ग्राम लागै हैं। अर जम्बूद्वीपमैं बत्तीस विदेह, एक भरत, एक ऐरावत ऐसैं चौंतीस क्षेत्र हैं। एक एक क्षेत्रमैं एक एक राजधानी है, अर जम्बूद्वीपमैं गंगा आदिक १४ महानदी हैं अर छह भोगभूमि हैं। एक एक विजयार्धपर्वतमैं दोय दोय गुफा हैं सो चौंतीस विजयार्धके अडसठ गुफा हैं। षट्कुलाचलोंमैं अर विजयार्ध पर्वतोंमैं तथा वक्षार पर्वतोंमैं सर्वत्र भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं। अर जंबूद्वीप अर शाल्मली वृक्षमैं भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं जो रत्नोंकी

ज्योतिसे शोभायमान हैं जंबूद्वीपकी दक्षिण दिशाकी ओर राक्षसद्वीप है अर ऐरावत क्षेत्रकी उत्तर दिशामें गन्धर्व नामा द्वीप है अर पूर्व विदेहकी पूर्व दिशामें वरुण द्वीप है अर पश्चिम विदेहकी पश्चिम दिशामें किन्नर द्वीप है, वे चारों ही द्वीप जिन मन्दिरोंसे मण्डित हैं ॥

जैसें एक मासमें शुक्लपक्ष अर कृष्णपक्ष यह दोय पक्ष होय हैं तैसें ही एक कल्पमें अवसर्पिणी अर उत्सर्पिणी दोनों काल प्रवर्त्तें हैं, अवसर्पिणी कालमें प्रथम ही सुखमासुखमा कालकी प्रवृत्ति होय है, फिर दूसरा सुखमा, तीसरा सुखमादुखमा, चौथा दुखमासुखमा, पांचवां दुखमा अर छठा दुखमादुखमा प्रवर्त्तें है, तिसके पीछे उत्सर्पिणी काल प्रवर्त्तें है उसकी आदिमें प्रथम ही छठा काल दुखमादुखमा प्रवर्त्तें है फिर पांचवां दुखमा, फिर चौथा दुखमा-सुखमा फिर तीसरा सुखमादुखमा फिर दूसरा सुखमा फिर पहला सुखमासुखमा। इस प्रकार अरहटकी घडी समान अवसर्पिणीके पीछे उत्सर्पिणी-अर उत्सर्पिणीके पीछे अवसर्पिणी है, सदा यह कालचक्र इसी प्रकार फिरता रहता है, परन्तु इस कालका पलटना केवल भरत अर ऐरावत क्षेत्रमें ही है तातैं इनमें ही आयु कायादिककी हानि वृद्धि होय है, अर महाविदेह क्षेत्रादिमें तथा स्वर्ग पातालमें अर भोगभूमि आदिकमें तथा सर्व द्वीप समुद्रादिकमें कालचक्र नाहीं फिरता इसलिये उनमें रीति पलट नाहीं, एक ही रीति रहै है। देवलोकविषैं तो सुखमा-सुखमा जो पहला काल है सदा उसकी ही रीति रहै है। अर उत्कृष्ट भोगभूमिमें भी सुखमासुखमा कालकी रीति रहै है। अर मध्य भोगभूमिमें सुखमा अर्थात् दूजे कालकी रीति रहै है अर जघन्य भोगभूमिमें सुखमादुखमा जो तीसरा काल है उसकी रीति रहै है। अर महाविदेह क्षेत्रोंमें दुखमासुखमा जो चौथा काल है उसकी रीति रहै है। अर अढाई द्वीपके परे अन्तके आधे स्वयंभूरमण द्वीप पर्यंत बीचके असंख्यात द्वीपसमुद्रमें जघन्य भोगभूमिविषैं सदा तीजे कालकी रीति है। अर अन्तके आधे द्वीपविषै तथा अन्तमें स्वयंभूरमणसमुद्रविषैं तथा चारों कोणमें दुखमा अर्थात् पंचम कालकी रीति सदा रहै है अर नरकमें दुखमादुखमा जो छठा काल उसकी रीति रहै अर भरत ऐरावत क्षेत्रोंमें छहों ही काल प्रवर्त्तें है। जब पहला सुखमासुखमा काल प्रवर्त्तें है तब यहां देवकुरु उत्तरकुरु भोगभूमिकी रचना होय है कल्पवृक्षोंसे मंडित भूमि सुखमयी शोभै है। अर मनुष्यनिके शरीर तीन कोश ऊंचे अर तीन पल्यका आयु सब ही मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यचनिका होय है अर ऊगते सूर्य समान मनुष्यनिकी कांति होय है सब लक्षणपूर्ण लोक शोभै है, स्त्री पुरुष युगल ही उपजै हैं अर साथ ही मरै है, स्त्री पुरुषोंमें अत्यन्त प्रीति होय है, मरकर देवगति पावै है, भूमि कालके प्रभावसे रत्न सुवर्णमयी है अर कल्पवृक्ष दश जातिके सर्व ही मनवांछित पूर्ण करै है, जहां चारि चारि अंगुल के महासुगन्ध महामिष्ट अत्यन्त कोमल तृणोंसे भूमि आच्छादित है सर्व ऋतुके फल फूलोंसे वृक्ष शोभै हैं अर जहां हाथी घोडे गाय भैंस आदि अनेक जातिके पशु सुखसे रहै हैं।

अर मनुष्य कल्पवृक्षकरि उत्पन्न महा मनोहर आहार करैं हैं, जहां सिंहादिक भी हिंसक नाहीं, मांसका आहार नाहीं, योग्य आहार करैं हैं, अर जहां वापी सुवर्ण अर रत्ननिके सिवाण तिनकरि संयुक्त कमलनिकरि शोभित दुग्ध दही घी मिष्टान्नकी भरी अत्यन्त शोभाको धरै है, अर पहाड़ अत्यन्त ऊंचे नाना प्रकार रत्ननिकी किरणोंसे मनोज्ञ सर्व प्राणियोंको सुखके देनहारे पांच प्रकारके वर्णको धरैं विराजैं हैं, अर जहां नदी जलचरादि जन्तुरहित महारमणीक (दूध) घी मिष्टान्न जलकी भरी अत्यन्त स्वाद संयुक्त प्रवाहरूप वहै है, जिनके तट रत्ननिकी ज्योतिसे शोभायमान हैं। जहां वेइन्द्री, तेइन्द्री, चौइन्द्री, असैनी पंचेन्द्री तथा जलचरादि पंचेद्री जीव नाहीं, जहां थलचर, नभचर गर्भज तिर्यंच हैं, सो तिर्यंच भी युगल ही उपजै हैं, वहां शीत उष्ण वर्षा नाहीं, तीव्र पवन नाहीं, शीतल मंद सुगंध पवन चलै है अर काहू प्रकारका भय नाहीं, सदा अद्भुत उत्साह ही प्रवर्त्तै है अर ज्योतिरांग जातिके कल्पवृक्षनिकी ज्योति कर चांद सूर्य नजर नाहीं आवैं हैं, अर दश ही जातिके कल्पवृक्ष सर्व ही इन्द्रियनिके सुखास्वादके देनहारे शोभैं हैं, जहां खाना, पीना सोना, बैठना, वस्त्र, आभूषण, सुगंधादिक सर्व ही कल्पवृक्षोंसे उपजै हैं, अर भाजन तथा वादित्रादि महामनोहर सर्व ही कल्पवृक्षनि करि उपजैं हैं, ये कल्पवृक्ष वननस्पतिकाय नाहीं अर देवाधिष्ठित भी नाहीं, केवल पृथ्वीकायरूप सार वस्तु हैं तहां मनुष्योंके युगल ऐसे रमैं हैं जैसे स्वर्गलोकमें देव। या भांति गणधर देवने भोगभूमिका वर्णन किया।

आगैं राजा श्रेणिक भोगभूमिमें उपजनैका कारण पूछते भये तो गणधर देव कहै हैं जे सरलचित्त साधूनकूं आहारादिक दानके देनहारे ते भोगभूमिविषैं मनुष्य होय हैं। जैसे भले खेतमें बोया बीज बहुतगुणा होकर फलै है अर इक्षु (सांठे) में प्राप्त हुआ जल मिष्ट होय है अर गायने पिया जो जल सो दूध होय परिणमैं है तैसे व्रतनिकरि मंडित परिग्रहरहित मुनिकों दिया जो दान सो महाफल कूं फलै है, अर जैसैं नीरस क्षेत्रमें बोया बीज अल्प फलको प्राप्त होय अर नींबमें गया जल कटुक होय है तैसे ही भोगतृष्णासे जे कुदान करैं हैं ते भोगभूमिमें पशु-जन्म पावै हैं॥

भावार्थ—दान चार प्रकारका है एक आहारदान, दूजा औषधदान, तीजा शास्त्रदान चौथा अभयदान। तिसमें मुनि आर्यिका उत्कृष्ट श्रावकोंको भक्तिकर देना पात्रदान है अर गुणोंकर आप समान साधर्मी जनों को देना समदान है अर दुखित जीवको दया भावकर देना करुणादान है सर्व त्याग करके मुनिव्रत लेना सकलदान है। ये दानके भेद कहे। आगे कालचक्रकी रीति कहै हैं—

जैसैं एक मास विषैं शुक्लपक्ष अर कृष्णपक्ष दोऊ होय हैं, तैसैं एक कल्पविषैं अव-

सर्पिणी, उत्सर्पिणी दो काल प्रवर्तै हैं, अवसर्पिणी कालविषैं प्रथमही सुखमासुखमा काल प्रवर्त्या। बहुरि दूजा सुखमा, तीजा सुखमा-दुखमा। जब तीजे कालमें पल्यका आठवां भाग बाकी रहा तब कुलकर उपजे, तिनका वर्णन हे राजा श्रेणिक, तुम सुनहु। प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति भये तिनके वचन सुनकर लोक आनन्दको प्राप्त भये वह कुलकर अपने तीन जन्मको जाने हैं अर उनकी चेष्टा सुन्दर है अर वह कर्मभूमिमें व्यवहारके उपदेशक हैं। अर तिनके पीछे सहस्र कोटि असंख्यात वर्ष गये दूजा कुलकर सन्मति भया, तिनके पीछे तीसरा कुलकर क्षेमंकर, चौथा क्षेमंधर, पांचवां सीमंकर, छठा सीमंधर, सातवां विमलवाहन आठवां चक्षुष्मान्, नवां यशस्वी, दशवां अभिचन्द्र, ग्यारहवां चन्द्राभ, बारहवां मरुदेव, तेरहवां प्रसेनजित, चौदहवां नाभिराज यह चौदह कुलकर प्रजानिके पिता समान महा बुद्धिमान्, भले शुभ कर्मनिकरि उत्पन्न भये। जब ज्योतिरांग जातिके कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई अर चांद सूर्य नजर आए तिनको देखकरि लोग भयभीत भये। कुलकरोंको पूछते भये—हे नाथ! यह आकाशमें कहा दीखै है तब कुलकर कही, अब भोगभूमि निवृत्त भई, कर्मभूमिका आगमन है। ज्योतिरांग जातिके कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई है तातैं चांद-सूर्य नजर आए हैं, देव चार प्रकारके हैं-कल्पवासी, भवनवासी व्यंतर अर ज्योतिषी। तिनमें चांद सूर्य ज्योतिषियोंके इन्द्र प्रतींद्र हैं, चन्द्रमा तो शीतकिरण है अर सूर्य उष्णकिरण है। जब सूर्य अस्त होय है तब चन्द्रमा कांतिको धरै है अर आकाश विषैं नक्षत्रनिके समूह प्रकट होय हैं, सूर्यकी कांतिकरि नक्षत्रादि नाहीं भासैं हैं। तैसैं कल्पवृक्षनिकी ज्योतिकरि चन्द्र सूर्यादिक नाहीं भासते थे, अब कल्पवृक्षनिकी ज्योति मंद भई तातैं भासैं हैं। ऐसा कालका स्वभाव जान करि तुम भयकूं तजो, यह कुलकरका वचन सुनिकर तिनका भय निवृत्त भया॥

अथानंतर चौदहवें कुलकर श्रीनाभिराजा जगतपूज्य तिनके समयमें सब ही कल्पवृक्षोंका अभाव भया। अर युगल उत्पत्ति मिटी। ते अकेले ही उत्पन्न भये तिनके मरुदेवी राणी मनको हरणहारी उत्तम पतिव्रता जैसें चन्द्रमाके रोहिणी, समुद्रके गंगा, राजहंसके हंसिनी तैसें यह नाभिराजाके होती भई। कैसी है राणी सदा राजाके मन विषैं बसै है जाकी हंसिनीकीसी चाल अर कोयलकैसे वचन हैं जैसे चकवीकी चकवेसों प्रीति होय है तैसैं राणीकी राजासौं प्रीति होती भई। राणीकूं कहा उपमा दीजिये वे राणीसे न्यून दीखै हैं। सर्व लोकपूज्य मरुदेवी जैसें धर्मके दया होय तैसे त्रैलोक्यपूज्य जो नाभिराजा उसके परमप्रिय होती भई, मानो यह राणी आतापकी हरणहारी चन्द्रकलानि ही कर निरमापी (बनाई) है, आत्मस्वरूपकी जाननहारी सिद्धपदका है ध्यान जिसको, त्रैलोक्यकी माता महा पुण्याधिकारणी मानूं जिनवाणी ही है अर अमृतका स्वरूप तृष्णाकी हरणहारी मानूं रत्नवृष्टि ही है सखियोंको आनन्दकी उपजावनहारी महा रूपवती कामकी स्त्री जो रति उससे भी अति सुन्दरी है, महा आनन्दरूप

माता जिसका शरीर ही सर्व आभूषणका आभूषण है जिसके नेत्रोंके समान नीलकमल नाहीं, अर जाके केश भ्रमरहूतैं अधिक श्याम, सो केश ही ललाटके शृंगार हैं यद्यपि इनको आभूषणोंकी अभिलाष नाहीं तथापि पतिकी आज्ञा प्रमाण कर कर्णफूलादिक आभूषण पहिरे हैं जिनके मुखका हास्य ही सुगंधित चूर्ण है उन समान कपूरकी रज कहा, अर जिनकी वाणी बीणाके स्वरको जीते है उनके शरीरके रंगके आगे स्वर्ण कुंकुमादिकका रंग कहा ? जिनके चरणारविन्दनि पर भ्रमर गुंजार करै हैं नाभिराजा करि सहित मरुदेवी राणीके यशका वर्णन सैकडों ग्रंथोंमें भी न हो सकै तो थोड़ेसे श्लोकोंमें कैसे होय ?

जब मरुदेवीके गर्भविषैं भगवानके आवनेके छह महीना बाकी रहे तब इन्द्रकी आज्ञा से छप्पन कुमारिका हर्षित भई थकी माताकी सेवा करती भईं। अर १ श्री २ ह्री ३ धृति ४ कीर्ति ५ बुद्धि ६ लक्ष्मी यह षट् (६) कुमारिका स्तुति करती भईं, हे मात ! तुम आनन्दरूप हो हमको आज्ञा करहु, तुम्हारी आयु दीर्घ होऊ, या भांति मनोहर शब्द कहती भईं। अर नाना प्रकारकी सेवा करती भई। कईएक बीण बजाय महा सुन्दर गान कर माताको रिझावती भईं। अर कईएक आसन बिछावती भईं। अर कईएक कोमल हाथोंसे माताके पांव पलोटती भई, कईएक देवी माताको तांबूल (पान) देती भई, कईएक खड्ग हाथमें धारण कर माताकी चौकी देती भई, कईएक बाहरले द्वारमें सुवर्ण आसे लिये खड़ी होती भई, अर कईएक चवर ढोरती भई, कईएक आभूषण पहरावती भई, कईएक सेज बिछावती भई, कईएक स्नान करावती भई, कईएक आंगन बहारती भई, कईएक फूलोंके हार गूंथती, कईएक सुगन्ध लगावती भई, कई एक खाने पीनेकी विधिमें सावधान होती भई, कईएक जिसको बुलावे उसको बुलावती भई या भांति सर्व कार्य्य देवी करती भई, माताकूं काहु प्रकारकी भी चिन्ता न रहती भई।

एक दिन माता कोमल सेज पर शयन करती हुती, उसने रात्रिके पिछले पहर अत्यन्त कल्याणकारी सोलह स्वप्ने देखे १ पहले स्वप्नमें ऐसा चन्द्र समान उज्ज्वल मद झरता गाजता हाथी देखा जिसपर भ्रमर गुंजार करै हैं। २ दूजे स्वप्नमें शरदके मेघ समान उज्ज्वल धवल दहाड़ता हुआ बैल देखा जिसके बड़ा भारी कंधा है। ३ तीसरे स्वप्नमें चन्द्रमाकी किरण समान सफेद केशावली विराजमान सिंह देखा। ४ चौथे स्वप्नमें लक्ष्मीको हाथी सुवर्णके कलशों से स्नान करावता देखा, वह लक्ष्मी प्रफुल्लित कमलपर निश्चल तिष्ठै है। ५ पांचवें स्वप्नमें दो पुष्पोंकी माला आकाशमें लटकती हुई देखीं जिनपर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं। ६ छठे स्वप्नमें उदयाचल पर्वतके शिखरपर तिमिरके हरणहारे मेघपटलरहित सूर्यकूं देख्या। ७ सातवें स्वप्नमें कुमुदिनीको प्रफुल्लित करणहारा रात्रिका आभूषण जिसने किरणोंसे दशों दिशा उज्ज्वल करी हैं ऐसा तारोंका पति चन्द्रमा देख्या। ८ आठवें स्वप्नमें निर्मल जलमें कलोल करते

अत्यन्त प्रेमके भरे हुवे महामनोहर मीन युगल (दो मच्छ) देखे। ६ नवमें स्वप्नमें जिनके गलेमें मोतियोंके हार अर पुष्पोंकी माला शोभायमान है ऐसे पंच प्रकारके रत्नोंकर पूर्ण स्वर्णके कलश देखे अर १० दशवें स्वप्नमें नानाप्रकारके पचियोंसे संयुक्त कमलोंकर मंडित सुन्दर सिवाण (पैड़ी) कर शोभित निर्मल जलकर भर्‌या महा सरोवर देख्या। ११ ग्यारहवें स्वप्नमें आकाशके तुल्य निर्मल समुद्र देख्या जिसमें अनेक प्रकार के जलचर केलि करैं हैं अर उत्तुंग लहरें उठे हैं। बारहवें स्वप्नमें अत्यन्त ऊंचा नाना प्रकारके रत्नोंकर जड़ित स्वर्णका सिंहासन देख्या। १३ तेरहवें स्वप्नमें देवताओंके विमान आवते देखे जो सुमेरुके शिखर समान अर रत्ननिकरि मंडित चामरादिकरि शोभित देखे। अर १४ चौदवें स्वप्नमें धरणींद्रका भवन देख्या कैसा है भवन? जाके अनेक खण (मंजिल) हैं अर मोतियोंकी मालाकर मंडित रत्नोंकी ज्योतिकर उद्योतित मानो कल्पवृत्तकर शोभित है। १५ पंद्रहवें स्वप्नें में पंच वर्णके महारत्ननिकी राशि अत्यन्त ऊंची देखी, जहां परस्पर रत्नोंकी किरणोंके उद्योतसे इन्द्रधनुष चढ़ रहा है। १६ सोलहवें स्वप्नमें निर्धूम अग्नि ज्वालाके समूहकरि प्रज्वलित देखी। अथानंतर सुन्दर है दर्शन जिनिका ऐसे सोलह स्वप्न देखकर मंगल शब्दनिके श्रवणकरि माता प्रबोधकूं प्राप्त भई। आगैं तिन मंगल शब्दनिका कथन सुनहु॥

सखी जन कहै हैं—हे देवी? तेरे मुखरूप चंद्रमाकी कांतितैं लज्जावान हुआ जो यह निशाकर (चंद्रमा) सो मानो कांतिकरि रहित हुआ है। अर उदयाचलपर्वतके मस्तकपर सूर्य उदय होनेको संमुख भया है मानो मंगलके अर्थ सिंदूरसे लिप्त स्वर्णका कलश ही है अर तुम्हारे मुखकी ज्योतिसे अर शरीरकी प्रभासे तिमिरका चय होयगा अपना उद्योत बृथा जान दीपक मंद ज्योति भये हैं। अर पक्षियोंके समूह मनोहर शब्द करै हैं सो मानो तिहारे अर्थ मंगल ही पढै हैं। अर जो यह मंदिरमें बाग है ताके वृत्तोंके पत्र प्रभातकी शीतल मंद सुगंध पवनतैं हालैं हैं अर मंदिरकी वापिकामें सूर्यके बिम्बके विलोकनसे चकवी हर्षित भई मिष्ट शब्द करती संती चकवेको बुलावै है अर ये हंस तिहारी चाल देखिकरि करी है अति अभिलाषा जिन्होंने सो हर्षित होय महामनोहर शब्द करैं हैं अर सारसनिके समूहनि करि सुंदर शब्द होय रहे हैं। तातैं हे देवी! अब रात्रि पूर्ण भई तुम निद्राको तजो। यह शब्द सुनकर माता सेजसे उठी, कैसी है सेज? बिखर रहे हैं कल्पवृत्तनिके फूल अर मोती जाविषैं, मानो तारानिकरि संयुक्त आकाश ही है।

मरुदेवी माता सुगन्ध महलसे बाहिर आईं अर सकल प्रभातकी क्रियाकर जैसैं सूर्यकी प्रभा सूर्यके समीप जाय तैसैं यह रानी नाभिराजाके समीप गई, राजा देखकर सिंहासनतैं उठे, रानी बराबर आय बैठी, हाथ जोडकर स्वप्ननिके समाचार कहे, तब राजाने कहा—

हे कल्याणरूपिणी ! तेरे त्रैलोक्यका नाथ श्रीआदीश्वर स्वामी प्रगट होइगा। यह शब्द सुनकर वह कमलनयनी चंद्रवदनी परम हर्ष को प्राप्त भई। अर इन्द्रकी आज्ञासे कुवेर पंद्रह महीना तक रत्नोंकी वर्षा करते भए। जिनके गर्भमें आए छह मास पहिलेसे ही रत्नोंकी वरषा भई इसलिये इन्द्रादिक देव इनका हिरण्यगर्भ ऐसा नाम कहि स्तुति करते भए। अर तीन ज्ञानकर संयुक्त भगवान माताके गर्भमें आए विराजे माताकूं काहू प्रकारकी पीडा न भई।

जैसैं निर्मल स्फटिकके महलसे बाहिर निकसिए तैसे नवमें महीने ऋषभदेव स्वामी गर्भसे बाहिर आए तब नाभिराजाने पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया। त्रैलोक्यके प्राणी अति हर्षित भए, इन्द्रनिके आसन कंपायमान भए, अर भवनवासी देवनिके यहां विना बजाये शंख बाजे, अर व्यंतरनिके स्वयमेव ही ढोल बाजे, अर ज्योतिषीनि देवोंके अकस्मात् सिंहनाद बाजे, अर कल्पवासीनके विना बजाये घंटा बाजे, या भांति शुभ चेष्टानि करि तीर्थंकर देवका जन्म जान इन्द्रादिक देवता नाभिराजाके घर आये, कैसे हैं इन्द्र ऐरावत हाथीपर चढे है अर नाना प्रकारके आभूषण पहरे हैं, अनेक प्रकारके देव नृत्य करते भए देवनिके शब्दकरि दशों दिशा गुंजार करती भईं। अयोध्यापुरीकी तीन प्रदक्षिणा देय करि राजाके आंगनमें आए, कैसी है अयोध्या ? धनपतिनै रची है, पर्वत समान ऊंचे कोटसे मंडित है जिसकी गंभीर खाई है अर जहां नानाप्रकारके रत्नोंके उद्योतसे घर ज्योतिरूप होय रहे हैं तब इन्द्राणीकूं भगवानके लावनेको माताके पास भेजी, इन्द्राणी जाय नमस्कार करि मायामयी बालककूं माताके निकट राखि भगवानको लाय इन्द्रके हाथमें दिया। कैसे हैं भगवान ? त्रैलोक्यके रूपको जीतै ऐसा है रूप जिनका सो इन्द्र हजार नेत्रनिकरि भगवानका रूप देखता तृप्त न भया। बहुरि भगवानकूं सौधर्म इन्द्र गोद में लेय हस्ती पर चढे, ईशान इन्द्रने छत्र धरे, अर सनत्कुमार माहेन्द्र चमर ढोरते भये, अन्य सकल इन्द्र अर देव जय जयकार शब्द उच्चारते भए। फिर सुमेरु पर्वतके शिखरपर पांडुक शिलापर सिंहासन ऊपर पधराये अर अनेक बाजोंका शब्द होता भया जैसा समुद्र गरजै अर यक्ष किन्नर गंधर्व तुम्बरु नारद अपनी स्त्रियों सहित गान करते भये, कैसा है वह गान ? मन अर श्रोत्र (कान) का हरणहारा है, जहां बीन आदि अनेक वादित्र बाजते भए, अप्सरा हाव भावकर नृत्य करती भईं, अर इंद्र स्नानके अर्थ क्षीरसागरके जलतैं स्वर्णकलश भर अभिषेक करनेको उद्यमी भए कैसे हैं कलश, जिनका मुख एक योजनका है अर चार योजनका उदर है आठ योजन ओंडे अर कमल तथा पल्लवनिकरि ढके हैं मुख जिनके, ऐसे एक हजार आठ कलशोंसे इन्द्रने अभिषेक कराया। विक्रिया ऋद्धिकी सामर्थ्यसे इंद्रने अपने अनेक रूप किए, अर इन्द्रोंके लोकपाल सोम, वरुण, यम, कुवेर सर्व ही अभिषेक करावते भए, इंद्राणी आदि देवी अपने हाथोंसे भगवानके शरीर पर सुगंधका लेपन करती भईं। कैसी हैं इंद्राणी, पल्लव (पत्र)

समान, हैं कर जाके, अर महागिरि समान जो भगवान तिनको मेघ समान कलशनितैं अभिषेक कराया, गहना पहरावनेका उद्यम किया, चांद सूर्य समान दोय कुंडल कानोंमें पहराये, अर पद्मरागमणिके आभूषण मस्तक विषैं पहराए, जिनकी कांति दशों दिशाविषैं प्रगट होती भई। अर अर्द्धचन्द्राकार ललाटविषैं चंदनका तिलक किया, अर दोनों भुजानविषैं रत्नोंके बाजूबंद पहराए, अर श्रीवत्सलक्षणकरि युक्त जो हृदय उसपर नक्षत्रमाला समान मोतियोंका सत्ताईस लड़ीका हार पहराया अर अनेक लक्षणके धारक भगवानको महामणिमई कड़े पहराए। अर रत्नमयी कटिसूत्रसे नितंब शोभायमान भया जैसैं पहाड़का तट सांझकी विजलीकर शोभै अर सर्व अंगुरियोंविषैं रत्नजडित मुद्रिका पहराई।

इसभांति भक्तिकरि देवियोंने सर्व आभूषण पहराए सो त्रैलोक्यके आभूषण जो श्रीभगवान तिनके शरीरकी ज्योतितैं आभूषण अत्यन्त ज्योतिको धारते भए, अर आभूषणोंकरि आपके शरीरकी कहा शोभा होय, अर कल्पवृक्षके फूलोंसे युक्त जो उत्तरासन सो भी दिया, जैसैं तारानितैं आकाश शोभै है तैसैं पुष्पनि कर यह उत्तरासन शोभै है। बहुरि पारिजात, सन्तानकादिक जे कल्पवृक्ष तिनके पुष्पनिकरि सेहरा रच्या सिरपर पधराया जापर भ्रमर गुंजार करैं हैं। या भांति त्रैलोक्यभूषणको आभूषण पहराये। इन्द्रादिक देव स्तुति करते भए, हे देव! कालके प्रभावकरि नष्ट होगया है धर्म जाविषैं ऐसा यह जगत् महान अज्ञान अन्धकारकरि भर्‌या है ताविषैं भ्रमण करते भव्य जीव तेई भए कमल तिनको प्रफुल्लित करनेको अर मोहतिमिरके हरणको तुम सूर्य ऊगे हो। हे जिनचन्द्र! तुम्हारे वचनरूप किरणोंसे भव्य जीवरूपी कुमुदनीकी पंक्ति प्रफुल्लित होगी, भव्योंको तत्त्व दिखावनेके अर्थि इस जगतरूप घरमें तुम केवलज्ञानमयी दीपक प्रकट भए हो। अर पापरूप शत्रुओंके नाशने के अर्थि मानो तुम तीक्ष्ण बाण ही हो, अर तुम ध्यानाग्निकरि भवअटवीको भस्म करनेवाले हो, अर दुष्ट इन्द्रियरूप जो सर्प तिनके वशि करवेके अर्थि तुम गरुडरूप ही हो। अर संदेहरूप जे मेघ तिनके उड़ावनेको प्रबल पवन ही हो। हे नाथ! भव्यजीवरूपी पपैए तिहारे धर्मामृतरूप वचनके तिसाए तुमहीको महामेघ जानकरि सन्मुख भए देखैं हैं, तुम्हारी अत्यन्त निर्मल कीर्ति तीन लोकमें गाई जाती है, तुम्हारे ताईं नमस्कार होहु। अर तुम कल्पवृक्ष हो, गुणरूप पुष्पनिकरि मण्डित मनवांछित फलके देनेहारे हो, कर्मरूप काष्ठ के काटनेको तीक्ष्ण धारके धरण हारे महा कुठाररूप हो तातैं हे भगवान्! तुम्हारे अर्थि हमारा बारंबार नमस्कार होहु। अर मोहरूप पर्वतके भंजिवेको महा वज्ररूप ही हो, अर दुःखरूप अग्निके बुझावनेको तुम जलरूप ही हो, या अर्थि तुमको बारंबार नमस्कार करूं हूँ। हे निर्मलस्वरूप! तुम कर्मरूप रजके समूहसे रहित केवल आकाशरूप ही हो। या भांति इन्द्रादिक देव भगवान्‌की स्तुति करि बारंबार नमस्कार करि, ऐरावत गजपर चढाय अयोध्यामैं लावनेको सन्मुख

भए। अयोध्या आए। इंद्र माताकी गोदविषैं भगवानको पधराय कर परम आनंदित हो तांडव नृत्य करते भए। या भांति जन्मोत्सव कर देव अपने-अपने स्थानकको गए। माता पिता भगवानको देखकर बहुत हर्षित भए। कैसे हैं श्रीभगवान् ? अद्भुत आभूषणनितैं विभूषित हैं। बहुरि परम सुगन्धके लेपतैं चरचित हैं अर सुन्दर चारित्र है जिनके। अपने शरीरकी कांतिसे दशों दिशा प्रकाशित हो रही हैं महा कोमल शरीर है। माता कोमल शरीर है। माता भगवान को देख करि महा हर्षको प्राप्त भई अर कहनेमें न आवै सुख जिसका ऐसे परमानंद सागरमैं मग्न भई। वह माता भगवानको गोदमें लिये ऐसी शोभती भई जैसे ऊगते सूर्यतैं पूर्वदिशा शोभै। अर त्रैलोक्यके ईश्वरको देख नाभिराजा आपको कृतार्थ मानते भए पुत्रके गात्रको स्पर्श कर नेत्र हर्षित भए, मन आनंदित भया। समस्त जगतविषैं मुख्य ऐसे जे जिनराज तिनका ऋषभ नाम धर माता पिता सेवा करते भए। हाथके अंगुष्ठमें इन्द्रने अमृत रस मेल्या, उसको पानकर शरीर वृद्धिको प्राप्त भया। बहुरि प्रभुकी वय (उमर) प्रमाण इंद्रने देवकुमार राखे तिन सहित निःपाप क्रीड़ा (खेल) करते भये, कैसी है वह क्रीडा ? माता पिताकों अति सुख देनहारी है॥

अथानंतर भगवानके आसन शयन सवारी वस्त्र आभूषण अशन पान सुगंधादि विलेपन गीत नृत्य वादित्रादि सब सामग्री देवोपनीत होती भई। थोड़े ही कालमें अनेक गुणनिकी वृद्धि होती भई। उनका रूप अत्यंत सुन्दर जो वर्णनमें न आवै, मन अर नेत्रनिका तृप्त करनहारा, मेरुकी भीति समान महा उन्नत, महा दृढ वक्षस्थल शोभता भया अर दिग्गजनिके थंभ समान बाहु होती भई, कैसी है वह बाहु जगतके अर्थ पूर्ण करनेको कल्पवृक्ष ही है। बहुरि दोऊ जंघा त्रैलोक्यरूप घरके थांभवेको थंभ ही हैं अर मुख महासुन्दर मनोहर जिसने अपनी कांतितैं चंद्रमाको जीता है अर दीप्तिकरि जीता है सूर्य जिसने अर दोऊ हाथ कोमलहूते अति कोमल अर लाल हैं हथेलियां जिनकी अर केश महासुन्दर सघन दीर्घ वक्र पतले चीकने श्याम हैं मानों सुमेरुके शिखरपर नीलाचल ही विराजै हैं। अर रूप महा अद्भुत अनुपम सर्वलोकके लोचनको प्रिय जिसपर अनेक कामदेव वारि नाखिये, ऐसे सर्व उपमाको उलंघै सबका मन अर नेत्र हरै, या भांति भगवान कुमार अवस्थामें भी जगतको सुखदायक होते भए। उस समय कल्पवृक्ष सर्वथा नष्ट भए अर विना बोये धान आपतैं आप ऊगे, तिनतैं पृथिवी शोभती भई अर लोक निपट भोले, षट्कर्मतैं अनजान, उन्होंने प्रथम इक्षुरसका आहार किया। वह आहार कांति अर वीर्यादिकके करनेको समर्थ है। कैएक दिन पीछे लोगोंको क्षुधा बढ़ी, जो इक्षु रसतैं तृप्ति न भई तब सर्व लोक नाभिराजाके निकट आए, अर नमस्कार करि विनती करते भए कि, हे नाथ ! कल्पवृक्ष समस्त क्षय होगए अर हम क्षुधा तृषाकर पीडित हैं, तुमारे शरण आए हैं, तुम रक्षा

करो, यह कितनेक फलयुक्त वृक्ष पृथिवीपर प्रगट भए हैं इनकी विधि हम जानते नहीं हैं, इनमें कौन भक्ष्य हैं कौन अभक्ष्य हैं, अर गाय भैंसके थनों से कुछ झरै है पर वह क्या है ? अर यह व्याघ्र सिंहादिक पहले सरल थे, अब वक्रतारूप दीखैं हैं, अर ये महामनोहर स्थलपर अर जलमें पुष्प दीखैं हैं सो कहा हैं, हे प्रभु तुमारे प्रसाद कर आजीविका उपाय जानैं तो हम सुखसों जीवैं। यह वचन प्रजाके सुनकरि नाभिराजाको दया उपजी, नाभिराजा महाधीर तिनसों कहते भए कि या संसारविषै ऋषभदेव समान और कोऊ भी नाहीं जिनकी उत्पत्तिमें रत्नोंकी वृष्टि अर इंद्रादिक देवोंका आगमन भया, लोकनिको हर्ष उपज्या, वह भगवान महा अतिशय संयुक्त हैं तिनके निकट जायकर हम तुम आजीवकाका उपाय पूछैं, भगवानका ज्ञान मोहतिमिरके अन्त तिष्ठ्या है। तिन प्रजासहित नाभिराजा भगवानके समीप गए, अर समस्त प्रजा नमस्कार कर भगवानकी स्तुति करती भई, हे देव ! तुम्हारा शरीर सब लोकनिको उलंघकर तेजोमय भासै है। सर्व लक्षणसम्पूर्ण महा शोभायमान है अर तुम्हारे अत्यंत निर्मल गुण सब जगतमैं व्याप रहे हैं, वे गुण चंद्रमाकी किरण समान उज्ज्वल महा आनंदके करण हारे हैं। हे प्रभु ! हम या कार्यके अर्थ तुम्हारे पिताके पास आए थे सो ये तुम्हारे निकट लाए हैं। तुम महापुरुष महा विद्वान्, महा अतिशयकर मंडित हो, जो ऐसे बडे पुरुष भी तुमको सेवैं हैं, तातैं तुम दयालु हो, हमारी रक्षा करो। क्षुधा, तृषा हरनेका उपाय कहो। अर जाकरि सिंहादिक क्रूर जीवनिका भी भय मिटै सो उपाय बताओ। तब भगवान कृपानिधि कोमल है हृदय जिनका इंद्रको कर्मभूमिकी रीति प्रगट करने की आज्ञा करते भए। प्रथम नगर ग्राम गृहादिककी रचना भई अर जे मनुष्य शूरवीर जाने, तिनको क्षत्री वर्ण ठहराए अर उनको यह आज्ञा भई कि—तुम दीन अनाथनिकी रक्षा करो। कैएकनको वाणिज्यादिक कर्म बताकर वैश्य ठहराए। अर जो सेवादिक अनेक कर्मके करनहारे थे, उनको शूद्र ठहराए। या भांति भगवानने कहा जो यह कर्मरूप युग उसको प्रजा कृतयुग (सत्ययुग) कहते भए अर परम हर्षको प्राप्त भए। श्रीऋषभदेवके सुनंदा अर नंदा यह दो राणी भईं, बड़ी राणीके भरतादिक सौ पुत्र अर एक ब्राह्मी पुत्री भईं। अर दूसरी राणीके बाहुबल एक पुत्र अर सुन्दरी एक पुत्री भई। ऐसैं भगवानने त्रेसठ लाख पूर्वकाल तक राज किया। अर पहले बीस लाख पूर्व कुमार रहे, या भांति तिरासी लाख पूर्व गृहमें रहे।

एक दिन नीलांजना अप्सरा भगवानके निकट नृत्य करती विलाय (मर) गई, ताकों देखकर भगवानकी बुद्धि वैराग्यमें तत्पर भई। वह विचारने लगे कि ये संसारके प्राणी वृथा ही इंद्रियोंको रिझाकर उन्मत्त, चारित्रनिकी विडंबना करै हैं, अपने शरीरको खेदका कारण जो जगतकी चेष्टा, तातैं जगतके जीव सुख मानै हैं। इस जगतमें कई एक तो पराधीन

चाकर होय रहे हैं, कईएक आपको स्वामी मान तिनपर आज्ञा करै हैं, जिनके वचन गर्वतैं भरे हैं। धिक्कार है या संसारको, जामें जीव दुख ही भोगैं हैं अर दुखहीको सुख मान रहे हैं तातैं मैं जगतके विषय-सुखोंको तजकर तप-संयमादि शुभ चेष्टा कर मोक्षसुखकी प्राप्तिके अर्थि यत्न करूं। यह विषय सुख क्षणभंगुर हैं अर कर्मके उदयसे उपजे हैं, इसलिए कृत्रिम (बनावटी) हैं। या भांति श्रीऋषभदेवका मन वैराग्य चिंतवनमें प्रवर्त्या। तब ही लौकांतिक देव आय स्तुति करते भए कि—हे नाथ! तुमने भली विचारी। त्रैलोक्यमें कल्याणका कारण यह ही है। भरतक्षेत्रमें मोक्षका मार्ग विच्छेद भया था, सो आपके प्रसादतैं अब प्रवर्तैगा, ये जीव तुम्हारे दिखाए मार्गसे लोकशिखर अर्थात् निर्वाणको प्राप्त होंगे, या भांति लौकांतिक देव स्तुतिकर अपने धाम गए। अर इंद्रादिक देव आयकर तपकल्याणका समय साधते भए। रत्नजडित सुदर्शना नामा पालकीमें भगवान को चढ़ाया। कैसी है वह पालकी—कल्पवृक्षनिके फूलोंकी मालातैं महा सुगंधित है, अर मोतिनके हारोंसे शोभायमान है, भगवान ता पालकीपर चढ़कर घरतैं वनको चाले। नानाप्रकारके वादित्रोंके शब्द अर देवोंके नृत्यसे दशों दिशा शब्दरूप भई। अर महा विभूति संयुक्त तिलकनामा उद्यानमें गए। माता पितादिक सर्व कुटुंबतैं क्षमाभाव कराकर अर सिद्धोंको नमस्कारकर मुनिपद अंगीकार किया। समस्त वस्त्र आभूषण तजे अर केशोंका लौंच किया। वे केश इंद्रने रत्नोंके पिटारेमें रखकर क्षीरसागरमें डारे। भगवान जब मुनिराज भए तदि च्यार हजार राजा मुनिपदको न जानते हुवे केवल स्वामीकी भक्तिके कारण तिनके साथ नग्नरूप भए। भगवानने छः महीने पर्यंत निश्चल कायोत्सर्ग धर्‍या। अर्थात् सुमेरु पर्वत समान निश्चल होय तिष्ठे अर मन वा इंद्रियनिका निरोध किया।

अथानंतर कच्छ महाकच्छादिक जो चार हजार राजा नग्नरूप धारण करि दीक्षित भए हुते, ते सर्व ही क्षुधा-तृषादि परीषहनिकरि चलायमान भए। कईएक तो परीषहरूप पवनके मारे भूमिपर गिर पड़े, कईएक जो महा बलवान हुते, वे भूमिपर तो न पड़े परन्तु बैठ गये, कईएक कायोत्सर्गको तज क्षुधा-तृषातैं पीडित होय फलादिक आहार करते भए। अर कइएक गरमीतैं तप्तायमान होयकर शीतल जलमें प्रवेश करते भए, तिनकी यह चेष्टा देखकर आकाशमें देववाणी भई कि 'मुनिरूप धार करि तुम ऐसा काम मत करो, यह रूप धार करि तुमको ऐसा कार्य करना नरकादि दुखनिका कारण है' तदि वे नग्नमुद्रा तजकर बल्कल पत्र धारते भए, कईएक चरमादि धारते (पहनते) भए, कईएक दर्भ (कुशादिक) धारते भए अर फलादिकतैं क्षुधाको, शीतल जलतैं तृषाको निवारते भए। या प्रकार ये लोग चारित्र भ्रष्ट होयकर अर स्वेच्छाचारी बनकर भगवानके मतसे पराङ्मुख होय शरीरका पोषण करते भए। किसीने पूछा कि तुम यह कार्य भगवानकी आज्ञा तैं करो हो या मन ही ते करो हो? तब उन्होंने कह्या कि भगवान तो

मौनरूप हैं, कुछ कहते नाहीं। हम क्षुधा तृषा शीत उष्णसे पीडित होयकर यह कार्य करें हैं, बहुरि कईएक परस्पर (आपसमैं) कहते भए कि आवो गृहमैं जाकर पुत्र दारादिकका अवलोकन करैं। तदि उनमेंतैं किसीने कहा जो हम घरमैं जावैंगे तो भरत घरमेंतैं निकास देइंगे अर तीव्र दंड देंगे इसलिए घर नहीं जाना तदि बनहीमैं रहे। इन सबमैं महामानी मारीच भरतका पुत्र भगवानका पोता भगवें वस्त्र पहनकर परिव्राजिक (संन्यासी) का मार्ग प्रकट करता भया।

अथानंतर कच्छ महाकच्छके पुत्र नमि विनमि आयकर भगवानके चरणोंमें पड़े अर कहने लगे कि हे प्रभु, तुमने सबको राज दिया,हमको भी दीजिये या भांति याचना करते भए। तब धरणींद्रका आसन कंपायमान भया। धरणींद्रने आयकर इनको विजयार्द्धका राज दिया। कैसा है वह विजयार्द्ध पर्वत भोगभूमिके समान है। पृथिवी तलसे पचीस योजन ऊंचा है अर सवा छै योजनका कंद है अर भूमिपर पचास योजन चौड़ा है अर भूमितैं दश योजन ऊंचे उठिए तहां दश दश योजनकी दोय श्रेणी हैं एक दक्षिणश्रेणी एक उत्तरश्रेणी। इन दोनों श्रेणियोंमें विद्याधर बसै हैं। दक्षिणश्रेणीकी नगरी पचास अर उत्तरश्रेणीकी साठ, एक एक नगरीको कोटि-कोटि ग्राम लागैं हैं अर दश योजनसे बहुरि ऊपर दश योजन जाइये तहां गंधर्व, किन्नरादिक देवोंके निवास हैं। अर पांच योजन ऊपर जाइये तहां नव शिखर हैं। उनमें प्रथम सिद्धकूट उसमें भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं अर औरनिविषैं देवोंके स्थान हैं। सिद्धकूटपर चारणमुनि आयकर ध्यान धरैं हैं। विद्याधरों की दक्षिणश्रेणीकी जो पचास नगरी हैं उनमें रथनूपुर मुख्य है। अर उत्तरश्रेणीकी जो साठ नगरी हैं उनमें अलकावती नगरी मुख्य है। कैसा है वह विद्याधरनिका लोक स्वर्गलोकसमान है सुख जहां सदा उत्साह ही प्रवर्त्तै है, नगरीके बड़े-बड़े दरवाजे, अर कपाटयुगल, अर सुवर्णके कोट, गंभीर खाई, अर वन-उपवन वापी कूप सरोवरादिसे महा शोभायमान हैं। जहां सब ऋतुके धान अर सर्व ऋतुके फल-फूल सदा पाइए हैं, जहां सर्व औषधि सदा पाइये हैं, जहां सर्व कामका साधन है, सरोवर कमलोंसे भरे जिनमें हंस क्रीडा करै हैं अर जहां दधि दुग्ध घृत मिष्टान्नके सदृश जलके नीझरने बहैं हैं। कैसी हैं वापी जिनके मणिसुवर्णके सिवान (पैंड़ी) हैं अर कमलके मकरंदोंसे शोभायमान हैं। जहां कामधेनु-समान गाय हैं, अर पर्वत समान अनाजके ढेर हैं, अर मार्ग धूल-कंटकादिरहित हैं, मोटे वृक्षोंकी छाया है,अर महामनोहर जलके निवाण हैं। चौमासेमें मेघ मनवांछित बरसै हैं अर मेघोंकी आनंद-कारी ध्वनि होय है, शीतकालमें शीतकी विशेष बाधा नाहीं अर ग्रीष्मऋतुमें विशेष आताप नाहीं। जहां छै ऋतुके विलास हैं, जहां स्त्री सर्व आभूषण मंडित कोमल अङ्गवाली हैं अर सर्वकलानिमैं प्रवीण षट्कुमारिकासमान प्रभावाली हैं। कैसी हैं वह विद्याधरी, कईएक तो कमलके गर्भ समान प्रभाको धरै हैं,कईएक श्यामसुन्दर नील कमलकी प्रभाको धारै हैं,कईएक सिहझनाके फूल समान

रंगकूं धरै हैं, कईएक विद्युत समान ज्योतिको धरै हैं ये विद्याधरी, महासुगंधित शरीरवाली हैं मानों नंदन वनकी पवन ही से बनाई हैं,सुन्दर फूलोंके गहने पहरे हैं सो मानों वसंतकी पुत्री ही हैं अर चन्द्रमा समान कांति है मानो अपनी ज्योतिरूप सरोवरमें तिरै ही हैं। अर श्याम श्वेत सुरंग तीन वर्णके नेत्रनिकी शोभाको धरणहारी, मृगसमान हैं नेत्र जिनके, हंसनी समान है चाल जिनकी, वे विद्याधरी देवांगना समान शोभै हैं। अर पुरुष विद्याधर महासुन्दर शूरवीर सिंह-समान पराक्रमी हैं। महाबाहु महापराक्रमी आकाश-गमनविषैं समर्थ, भले लक्षण, भली क्रियाके धरणहारे, न्यायमार्गी, देवोंके समान हैं प्रभा जिनकी, ऐसी अपनी स्त्रियोंसहित विमानमें बैठि अढ़ाई द्वीपमैं जहां इच्छा होय तहां ही गमन करै हैं। या भांति दोनों श्रेणियोंमैं वे विद्याधर देव-तुल्य इष्टभोगनिको भोगते महाविद्याओंको धरै हैं, कामदेवसमान है रूप जिनका, अर चन्द्रमा समान है वदन जिनका। धर्मके प्रसादसे प्राणी सुखसंपति पावै हैं तातैं एक धर्म ही विषैं यत्न करो। अर ज्ञानरूप सूर्यसे अज्ञानरूप तिमिरको हरो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषैं विद्याधर लोकका कथन जा विषैं है ऐसा तीसरा अधिकार संपूर्ण भया ॥३॥

चौथा पर्व

[भगवान् ऋषभदेवका आहार-निमित्त विहार-वर्णन]

अथानंतर वे भगवान ऋषभदेव महाध्यानी सुवर्ण समान प्रभाके धरणहारे प्रभु जगतके हित करने निमित्त छै मास पीछैं आहार लेनेको प्रवृत्ते। लोक मुनिके आहारकी विधि जानैं नाहीं, अनेक नगर ग्रामविषैं विहार किया, मानो अद्भुत सूर्य ही विहार करै है जिन्होंने अपने देहकी कांतिसे पृथ्वीमंडल पर प्रकाश कर दिया है। जिनके कांधे सुमेरुके शिखर समान दैदीप्यमान हैं अर परम समाधानरूप अधोदृष्टि देखते, जीव दया पालते, विहार करै हैं। पुर ग्रामादिमें अज्ञानी लोक नाना प्रकारके वस्त्र, रत्न, हाथी, घोड़े, रथ, कन्यादिक भेट करते सो प्रभुके कुछ भी प्रयोजन नाहीं। या कारण प्रभु फिर वनको चले जांय हैं। या भांति छै महीने तक विधिपूर्वक आहारकी प्राप्ति न भई अर्थात् दीक्षा समयसे एक वर्ष विना आहार बीता। पीछैं विहार करते हुए हस्तिनापुर आये, तदि सर्व ही लोक पुरुषोत्तम भगवानको देखकर आश्चर्यको प्राप्त भये। राजा सोमप्रभ अर तिनके लघु भ्राता श्रेयांस ये दोनों ही भाई उठकर सन्मुख चाले, श्रेयांसको भगवानके देखनेतैं ही पूर्वभवका स्मरण भया, अर मुनिके आहारकी विधि जानी।

वह नृप भगवानकी प्रदक्षिणा देते ऐसे शोभै है मानो सुमेरुकी प्रदक्षिणा सूर्य ही दे रहा है, अर बारंबार नमस्कार कर रत्न-पात्रतैं अर्घ देय चरणारविन्द धोये, अर अपने शिरके केशनितैं पोंछे तदि आनन्दके अश्रुपात आये अर गद-गद वाणी भई। श्रेयांसने जिसका चित्त भगवानके गुणनिमैं अनुरागी भया है, महा पवित्र रत्ननिके कलशोंमें रखे हुवे महा शीतल मिष्ट इक्षुरसका आहार दिया। परम श्रद्धा अर नवधा भक्तिसे दान दिया, वर्षोपवास पारणा भई ताके अतिशयतैं देव हर्षित होय पांच आश्चर्य करते भए। प्रथम ही रत्ननिकी वर्षा भई। बहुरि कल्पवृक्षोंके पंच प्रकारके पुष्प बरसे। शीतल मंद सुगंध पवन चाली। अर अनेक प्रकार दुन्दुभी बाजे बाजे। अर यह देववाणी भई कि धन्य यह पात्र, अर धन्य यह दान, अर धन्य दानका देनहारा श्रेयांस। ऐसे शब्द देवताओंके आकाशमें भए श्रेयांसकी कीर्ति देखकर दानकी रीति प्रकट भई। देवतानिकर श्रेयांस प्रशंसा योग्य भए। अर भरतने अयोध्यातैं आयकर श्रेयांसकी बहुत स्तुति करी, अति प्रीति जनाई। भगवान आहार लेयकर वनमें गये।

अथानंतर भगवानने एक हजार वर्षपर्यंत महातप किया। अर शुक्लध्यानतें मोहका नाशकर केवल ज्ञान उपजाया। कैसा है वह केवलज्ञान ? लोकालोकका अवलोकन है जाविषैं। जब भगवान् केवलज्ञानको प्राप्त भए, तदि अष्ट प्रातिहार्य प्रगटे, प्रथम तो आपके शरीरकी कांतिका ऐसा मंडल हुआ जातें चन्द्र सूर्यादिका प्रकाश मंद नजर आवै, रात्रि-दिवसका भेद नजर न आवै, अर अशोकवृक्ष रत्नमई पुष्पोंसे शोभित रक्त हैं पल्लव जाके। अर आकाशतैं देवोंने फूलोंकी वर्षा करी, जिनकी सुगंधसे भ्रमर गुंजार करैं हैं महा दुंदुभी बाजोंकी ध्वनि होती भई, जो समुद्रके शब्दनितैं भी अधिक देवोंने बाजे बजाए। कैसे हैं देव, जिनका शरीर मायामई करि दीखता नाहीं। अर चन्द्रमाकी किरणतें भी अधिक उज्ज्वल चमर इन्द्रादिक ढारते भए। अर सुमेरुके शिखरतुल्य पृथिवीका मुकुट सिंहासन आपके विराजनेको प्रगट भया। कैसा है सिंहासन ? अपनी ज्योतिकर जीती है सूर्यादिककी ज्योति जाने। अर तीन लोककी प्रभुताके चिन्ह मोतियोंकी झालरसे शोभायमान तीन छत्र अति शोभैं हैं मानो भगवानके निर्मल यश ही हैं। अर समोशरणमैं भगवान सिंहासनपर विराजे सो समोशरणकी शोभा कहनेकूं केवली ही समर्थ हैं और नाहीं। चतुरनिकायके देव सब ही बंदना करनेको आए, भगवानके मुख्य गणधर वृषभसेन भये, आपके द्वितीय पुत्र अन्य भी बहुत जे मुनि भए थे, वे महा वैराग्यके धारणहारे मुनि आदि बारह सभाके प्राणी अपने अपने स्थानकविषैं बैठे। तदनंतर भगवानकी दिव्यध्वनि होती भई जो अपने नादकर दुंदुभी बाजोंकी ध्वनिको जीतै है। भगवान जीवोंके कल्याणनिमित्त तत्त्वार्थका कथन करते भये कि--तीन लोकमें जीवोंको धर्म ही परम शरण है, याहीतैं परम सुख होय है, सुखके अर्थि सभी चेष्टा करैं हैं अर सुख धर्मके निमित्तसे ही होय है, ऐसा जानकर धर्मका यत्न करहु।

जैसैं मेघ विना वर्षा नाहीं, बीज विना धान्य नाहीं, तैसैं जीवनिके धर्म बिना सुख नाहीं। अर जैसैं कोई पंगु (लंगड़ा) पुरुष चलनेकी इच्छा करै, अर गूंगा बोलनेकी इच्छा करै, अर अन्धा देखवेकी इच्छा करैं, तैसैं मूढ प्राणी धर्म विना सुखकी इच्छा करै है। जैसैं परमाणुतैं और कोई अल्प (सूक्ष्म) नाहीं, अर आकाशतैं कोई महान् (बड़ा) नाहीं तैसैं धर्म समान जीवोंका अन्य कोई मित्र नाहीं, अर दया समान कोई धर्म नाहीं। मनुष्यके भोग अर स्वर्गके भोग, अरै सिद्धनिके परम सुख धर्महीतैं होय हैं। तातैं धर्म बिना और उद्यमकरि कहा ? जे पंडित जीवदयाकर निर्मल धर्मको सेवै हैं तिनहीका ऊर्ध्व गमन है, दूसरे अधोगति जाय हैं। यद्यपि द्रव्यलिंगी मुनि तपकी शक्तितैं स्वर्गलोकमैं जाय हैं तथापि बड़े देवोंके किंकर होयकर तिनकी सेवा करै हैं। देवलोकमें नीच देव होना देव-दुर्गति है। सो देवदुर्गतिके दुःखको भोगकर तिर्यंचगतिके दुखको भोगै हैं, अर जे सम्यग्दृष्टि जिनशासनके अभ्यासी, तप-संयमके धारणहारे, देवलोकमें जाय हैं, ते इन्द्रादिक बड़े देव होयकर बहुत काल सुख भोग, देवलोकतैं चय मनुष्य होय मोक्ष पावै हैं। सो धर्म दोय प्रकारका है—एक यतिधर्म दूसरा श्रावकधर्म, तीजा धर्म जो मानै हैं वे मोह-अग्निसे दग्ध हैं। पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत अर चार शिक्षाव्रत यह श्रावकका धर्म है, श्रावक मरण समय सर्व आरम्भ तज शरीतैं भी निर्ममत्व होय समाधिमरण करि उत्तम गतिको जाय हैं। अर यतीनका धर्म पंच महाव्रत पंच समति तीन गुप्ति यह तेरह प्रकारका चारित्र है। दशों दिशा ही यतिके वस्त्र हैं, जो पुरुष यतिका धर्म धारै हैं, वे शुद्धोपयोगके प्रसाद करि निर्वाण पावैं हैं, अर जिनके शुभोपयोगकी मुख्यता है ते स्वर्ग पावै हैं, परंपराय मोक्ष जाय हैं। अर जे भावोंसे मुनियोंकी स्तुति करैं हैं ते हू धर्मको प्राप्त होय हैं, कैसे हैं मुनि, परम ब्रह्मचर्य्यके धारणहारे हैं। यह प्राणी धर्मके प्रभावतैं सर्व पापोंसे छूटै है अर ज्ञानकूं पावै है, इत्यादिक धर्मका कथन देवाधिदेवने किया सो सुनकर सर्व पापनितैं निवृत्त भए। अर देव मनुष्य सर्व ही परम हर्षकूं प्राप्त भए। कईएक तो सम्यक्तको धारण करते भए, कईएक सम्यक्त सहित श्रावकके व्रतकूं धारते भए, कईएक मुनिव्रत धारते भए। बहुरि सुर-असुर मनुष्य धर्म श्रवण कर अपने अपने धाम गए। भगवानने जिन जिन देशोंमें गमन किया उन उन देशोंमें धर्मका उद्योत भया। आप जहां जहां विराजे तहां तहां सौ सौ योजन तक दुर्भिक्षादिक सर्व बाधा मिटी। प्रभुके चौरासी गणधर भए, अर चौरासी हजार साधु भए, इनकरि मंडित सर्व उत्तम देशनिविषैं विहार किया।

अथानंतर भरत चक्रवर्तीपदकूं प्राप्त भए। अर भरतके भाई सब ही मुनिव्रत धार परमपदकों प्राप्त भए। भरतने कुछ काल छैं खंडका राज्य किया, अयोध्या राजधानी, नवनिधि, चौदह रत्न, प्रत्येककी हजार हजार देव सेवा करैं। तीन कोटि गाय, एक कोटि हल,

चौरासी लाख हाथी, इतने ही रथ, अठारा कोटि घोड़े, बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा अर इतने ही देश महासंपदाके भरे, छियानवे हजार रानी देवांगना समान, इत्यादिक चक्रवर्तीके विभवका कहां तक वर्णन करिए। पोदनपुरमें दूसरी माताका पुत्र बाहुबली, सो भरतकी आज्ञा न मानते भए, कह्या कि—हम भी ऋषभदेवके पुत्र हैं, किसकी आज्ञा मानें। तब भरत बाहुबलीपर चढ़े, सेना का युद्ध न ठहरा, दोऊ भाई परस्पर युद्ध करैं, यह ठहरा। तीन युद्ध थापे १ दृष्टियुद्ध, २ जल-युद्ध, अर ३ मल्लयुद्ध। तीनोंही युद्धोंमें बाहुबली जीते, अर भरत हारे, तब भरतने बाहुबलीपर चक्र चलाया, वह उनके चरम शरीरपर घात न कर सका, लौटकर भरतके हाथपर आया। भरत लज्जित भए, बाहुबली सर्व भोग त्याग करि वैरागी भए, एक वर्ष पर्यंत कायोत्सर्ग धरि निश्चल तिष्ठे शरीर बेलोंसे वेष्टित भया, सांपोंने बिल किए, एक वर्ष पीछैं केवलज्ञान उपज्या, भरतचक्रवर्तीने आय कर केवलीकी पूजा करी, बाहुबली केवली कुछ कालमें निर्वाणको प्राप्त भए। अवसर्पिणी-कालमैं प्रथम मोक्षको गमन किया। भरत चक्रवर्तीने निष्कंटक छै खण्डका राज्य किया, जिसके राज्यमैं विद्याधरोंके समान सर्व संपदाके भरे अर देवलोक समान नगर महा विभूति कर मंडित हैं जिनमैं देवों समान मनुष्य नानाप्रकारके वस्त्राभरण करि शोभायमान अनेक प्रकारकी शुभ चेष्टा करि रमते हैं, लोक भोगभूमि समान सुखी अर लोकपाल समान राजा अर मदनके निवासकी भूमि, अप्सरा समान नारियां, जैसैं स्वर्गविषैं इन्द्र राज करैं तैसैं भरतने एकछत्र पृथिवीविषैं राज किया। भरतके सुभद्रा राणी इन्द्राणी समान भई, जिसकी हजार देव सेवा करैं। चक्रीके अनेक पुत्र भए तिनकौं पृथिवीका राज दिया। इस प्रकार गौतम स्वामीने भरतका चरित्र श्रेणिक राजा से कहा।

[विप्रोत्पत्ति वर्णन]

अथानंतर श्रेणिकने पूछा—हे प्रभो! तीन वर्णकी उत्पत्ति तुमने कही सो मैंने सुनी अब विप्रोंकी उत्पत्ति सुना चाहूं हूँ सो कृपाकर कहो। गणधर देव जिनका हृदय जीवदयाकरि कोमल है अर मद-मत्सरकरि रहित है, वे कहते भए कि एक दिन भरतने अयोध्याके समीप भगवानका आगमन जान समोशरणमैं जाय वंदना कर मुनिके आहारको विधि पूछी। तब भग-वानकी आज्ञा भई कि मुनि तृष्णाकर रहित जितेंद्री अनेक मासोपवास करैं, पराए घर निर्दोष आहार लेय अन्तराय पड़े तो भोजन न करैं, प्राण-रक्षा-निमित्त निर्दोष आहार करैं, अर धर्मके हेतु प्राणको राखैं, अर मोक्षके हेतु उस धर्मको आचरैं जिसमैं किसी भी प्राणीको बाधा नाहीं। यह मुनिका धर्म सुन कर चक्रवर्ती विचारै हैं—अहो! यह जैनका व्रत महा दुर्धर है, मुनि शरीर से भी निःस्पृह (निर्ममत्व) तिष्ठै हैं तो अन्य वस्तुमैं तो उनकी वांछा कैसे होय? मुनि महा निर्ग्रन्थ निर्लोभी सर्व जीवोंकी दयाविषैं तत्पर हैं। मेरे विभूति बहुत है, मैं अणुव्रती श्रावककौं

भक्ति कर दूं अर दीन लोकनिका दया कर दूं, ये श्रावक भी मुनिके लघु भ्राता हैं, ऐसा विचारकर लोकनिकों भोजनके अर्थि बुलाए। अर व्रतियोंकी परीक्षा निमित्त आंगणमें जो शालि धान उर्द मूंगादि बोए थे, तिनके अंकुर ऊगे, सो अविवेकी लोक तो हरितकायको खूंदते आए, अर जे विवेकी थे, वे अंकुर जान खड़े होय रहे, तिनको भरत अंकुररहित जो मार्ग उसपर से बुलाया, अर व्रती जान बहुत आदर किया, अर यज्ञोपवीत (जनेऊ) कंठमें डाला, आदरसे भोजन कराया, वस्त्राभरण दिये, अर मनवांछित दान दिये, अर जे अंकुरको दल-मलते आए थे, तिनकौं अव्रती जान उनका आदर नहिं किया। अर व्रतियोंको ब्राह्मण ठहराए, चक्रवर्तीके माननेसे कैएक तो गर्वको प्राप्त भए, अर कैएक लोभकी अधिकतातैं धनवान् लोकनिको देख कर याचनाको प्रवर्ते।

तब मतिसमुद्र मंत्रीने भरतसे कहा कि—समोशरणमें मैंने भगवान्के मुखसे ऐसा सुना है कि जो तुमने विप्र धर्माधिकारी जानकर माने हैं, ते पंचमकालमें महा मदोन्मत्त होंयगे अर हिंसामें धर्म जान कर जीवोंको हनैंगे अर महा कषायसंयुक्त सदा पाप क्रियामें प्रवर्त्तैंगे अर हिंसाके प्ररूपक ग्रन्थोंको अकृत्रिम मान कर समस्त प्रजाको लोभ उपजावैंगे। महा आरम्भविषैं आसक्त परिग्रहमें तत्पर, जिनभाषित जो मार्ग ताकी सदा निंदा करैंगे। निर्ग्रंथ मुनिको देखि महा क्रोध करैंगे, ए वचन सुन भरत इनपर क्रोधायमान भए, तब यह भगवानके शरण गए। भगवानने भरतको कहा—हे भरत जो कलिकालविषैं ऐसा ही होना है, तुम कषाय मत करो। इस भांति विप्रोंकी प्रवृत्ति भई, अर जो भगवानके साथ वैराग्यको निकले ते चारित्रभ्रष्ट भये। तिन-मैंतैं कच्छादिक कैएक तो सुलटे, अर मारीचादिक नहीं सुलटे। तिनके शिष्य-प्रतिशिष्यादिक सांख्य योगमें प्रवर्ते, कोपीन (लंगोटी) पहरी, बल्कलादि धारे। यह विप्रनिकी अर परिव्राजक कहिये दंडीनिकी प्रवृत्ति कही।

अथानंतर अनेक जीवनिकों भवसागरसे तारकर भगवान ऋषभ कैलाशके शिखरसे लोकशिखर जो निर्वाण उसको प्राप्त भये। अर भरत भी कुछ काल राज्य कर जीर्ण तृणवत् राज्यको छोड़कर वैराग्यको प्राप्त भये, अन्तर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपज्या। पीछैं आयु पूर्णकर निर्वाणको प्राप्त भये।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणको भाषाटीकाविषैं श्रीऋषभका कथन जाविषै हैं ऐसा चौथा अधिकार संपूर्ण भया ॥४॥

अथ वंशोत्पत्ति नामा महाधिकार

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे वंशोंकी उत्पत्ति कहते भए कि हे श्रेणिक, इस जगतविषै महावंश जो चार तिनके अनेक भेद हैं। १ प्रथम इक्ष्वाकु वंश। यह लोकका का आभूषण है इसमैंसे सूर्य वंश प्रवर्त्या है। २ दूसरा सोम (चन्द्र) वंश चन्द्रमाकी किरण समान निर्मल है। ३ तीसरा विद्याधरोंका वंश अत्यन्त मनोहर है। ४ चौथा हरिवंश जगत विषैं प्रसिद्ध है। अब इनका भिन्न-भिन्न विस्तार कहैं हैं—

इक्ष्वाकुवंशमैं भगवान ऋषभदेव उपजे तिनके पुत्र भरत भये भरतके पुत्र अर्ककीर्ति भए, राजा अर्ककीर्ति महा तेजस्वी राजा हुए। इनके नामतैं सूर्यवंश प्रवर्त्या है। अर्क नाम सूर्यका है इसलिये अर्ककीर्तिका वंश सूर्यवंश कहलाता है। इस सूर्यवंशमैं राजा अर्ककीर्तिके सतयश नामा पुत्र भये, इनके बलांक, तिनके सुबल, तिनके रवितेज, तिनके महाबल, महाबलके अतिबल, तिनके अमृत, अमृतके सुभद्र, तिनके सागर, तिनके भद्र, तिनके रवितेज, तिनके शशी, तिनके प्रभूततेज, तिनके तेजस्वी, तिनके तपबल महाप्रतापी, तिनके अतिवीर्य, तिनके सुवीर्य तिनके उदितपराक्रम, सूर्य, तिनके इन्द्रद्युमणि तिनके महेन्द्रजित, तिनके प्रभूत, तिनके विभु तिनके अविध्वंस, तिनके वीतभी, तिनके वृषभध्वज, तिनके गरुणांक, तिनके मृगांक, इस भांति सूर्यवंशविषैं अनेक राजा भए, ते संसारके भ्रमणतैं भयभीत पुत्रोंको राज देय मुनिव्रतके धारक भए, महानिर्ग्रन्थ शरीरसे भी निस्पृही। यह सूर्यवंशीकी उत्पत्ति तुझे कही।

अब सोमवंशकी उत्पत्ति तुझे कहिये है सो सुन। ऋषभदेवकी दूसरी राणीके पुत्र बाहुबली तिनके सोमयश, तिनके सौम्य, तिनके महाबल, तिनके सुबल, तिनके भुजबली, इत्यादि अनेक राजा भये, निर्मल है चेष्टा जिनकी मुनिव्रत धारि परम धामको प्राप्त भए। कई एक देव होय मनुष्य जन्म लेकर सिद्ध भए। यह सोमवंशकी उत्पत्ति कही।

अब विद्याधरनिके वंशकी उत्पत्ति सुनहु। नमि, रत्नमाली, तिनके रत्नरथ, तिनके रत्नचित्र, तिनके चन्द्ररथ, तिनके वज्रजंघ, तिनके वज्रसेन, तिनके वज्रदंष्ट्र, तिनके वज्रध्वज, तिनके वज्रायुध, तिनके वज्र, तिनके सुवज्र, तिनके वज्रभृत, तिनके वज्राभ, तिनके वज्रबाहु, तिनके वज्रांक, तिनके वज्रसुन्दर, तिनके वज्रपाणि तिनके वज्रभानु तिनके वज्रवान, तिनके विद्युन्मुख, तिनके सुवक्र, तिनके विद्युद्दंष्ट्र, अर उर उनके पुत्र विद्युत अर विद्युदाभ, अर विद्युद्वेग, अर वैद्युत इत्यादि विद्याधरोंके वंशमैं अनेक राजा भए। अपने-अपने पुत्रनिको राज देय जिनदीक्षा धरि, राग-द्वेषका नाशकरि सिद्धपदको प्राप्त भये। कईएक देवलोक गये। जे मोहपाशसे बंधे हुते ते राज्यविषैं ही मरकरि कुगतिकौं गये।

[संजयंत मुनिके उपसर्गका कारण]

अब संजयंतमुनिके उपसर्गका कारण कहै हैं कि—विद्युद्दंष्ट्रनामा राजा दोऊ श्रेणीका अधिपति विद्याबलसे उद्धत विमानमैं बैठा विदेहक्षेत्रमैं गया, तहां संजयंतस्वामीको ध्यानारूढ देख्या, जिनका शरीर पर्वत समान निश्चल है, उस पापीने मुनिको देखकर पूर्वजन्मके विरोधसे उनको उठाकर पंचगिरि पर्वतपर धरे, अर लोकोंको कहा कि इसे मारो। पापी जीवोंने यष्टि मुष्टि पाषाणादि अनेक प्रकारसे उनको मारया, मुनिको शम भावके प्रसादसे रंचमात्र भी क्लेश न उपज्या, दुस्सह उपसर्गको जीत लोकालोकका प्रकाशक केवलज्ञान उपाज्या, सर्व देव वंदनाको आए, धरणेन्द्र भी आए, वह धरणेन्द्र पूर्वभवमें मुनिके भाई थे, इसलिये क्रोधकर सब विद्याधरनिको नागफांससे बांधे तब सबनिने विनती करी कि यह अपराध विद्युद्दंष्ट्रका है तब और तो छोड़े, अर विद्युद्दंष्ट्रको न छोड्या, मारनेको उद्यमी भये। तब देवोंने प्रार्थना करके छुड़ाया, सो छोड्या। परन्तु विद्या हर ली। तब याने प्रार्थना करी कि हे प्रभो! मुझे विद्या कैसैं सिद्ध होयगी, धरणेन्द्रने कहा कि संजयंतस्वामीकी प्रतिमाके समीप तप क्लेश करनेसे तुमको विद्या सिद्ध होयगी। परन्तु चैत्यालयके उल्लंघनसे तथा मुनियोंके उल्लंघनसे विद्याका नाश होवैगा, इसलिए तुमको तिनकी वंदना करके आगैं गमन करना योग्य है। तब धरणेन्द्रने संजयंतस्वामीको पूछया कि हे प्रभो! विद्युद्दंष्ट्रने आपको उपसर्ग क्यों किया? भगवान् संजयंतस्वामीने कहा कि मैं चतुर्गतिविषैं भ्रमण करता शकट नामा ग्राममें दयावान प्रियवादी हितकर नामा महाजन भया, निष्कपटस्वभाव साधुसेवामें तत्पर, सो समाधिमरण कर कुमुदावती नगरीमें न्यायमार्गी श्रीवर्धन नामा राजा हुवा, उस ग्राममें एक ब्राह्मण जो अज्ञान तपकर कुदेव हुआ था तहांसे चयकर राजा श्रीवर्धनके वह्निशिख नामा पुरोहित भया, वह महादुष्ट छानें (गुप्त रूपसे) अकार्यका करणहारा आपको सत्यघोष कहावै;परन्तु महा झूठा,परद्रव्यका हरणहारा,उसके कुकर्मको कोई न जानै, जगतमें सत्यवादी कहावै। एक नेमिदत्तसेठके रत्न हरे, राणी रामदत्ताने जूवामें पुरोहितकी अंगूठी जीती अर दासी हाथ पुरोहितके घर भेजकर रत्न मंगाये अर सेठको दिए,राजाने पुरोहितको तीव्र दण्ड दिया। वह पुरोहित मरकर एक भवके पश्चात् यह विद्याधरोंका अधिपति भया। अर राजा मुनिव्रत धारकर देव भए। कईएक भवके पश्चात् यह हम संजयंत भये सो इसने पूर्व भवके प्रसंगसे हमको उपसर्ग किया। यह कथा सुनि नागेन्द्र अपने स्थानको गए॥

अथानन्तर उस विद्याधरके दृढरथ भए, ताके अश्वधर्मा पुत्र भए, उसके अश्वायु, उसके अश्वध्वज, उसके पद्मनाभि, उसके पद्ममाली, उसके पद्मरथ, उसके सिंहयान, उसके मृगोद्धर्मा, उसके मेघास्त्र, उसके सिंहप्रभ, उसके सिंहकेतु, उसके शशांक, उसके चंद्राह्व, उसके चन्द्रशेखर, उसके इन्द्ररथ, ताके चन्द्ररथ, ताके चक्रधर्मा, उसके चक्रायुध, उसके चक्रध्वज

उसके मणिग्रीव, उसके मणयंक, उसके मणिभासुर, उसके मणिरथ, मणयास, उसके बिम्बोष्ठ, उसके लंबिताधर, उसके रक्तोष्ठ, उसके हरिचन्द्र, उसके पूर्णचन्द्र, उसके बालेंन्द्र, उसके चन्द्रमा, उसके चूड़, उसके व्योमचन्द्र, उसके उड़पानन, उसके एकचूड़, उसके द्विचूड़, उसके त्रिचूड़, उसके वज्रचूड़, उसके भूरिचूड़, उसके अर्कचूड़, उसके वन्हिजटी, उसके वन्हितेज, या भांति अनेक राजा भए। तिनमैं कईएक पुत्रनिको राज देय मुनि होय मोक्ष गए। कईएक स्वर्ग गए, कईएक भोगासक्त होय वैरागी न भए सो नरक तिर्यंचगतिको प्राप्त भए या भांति विद्याधरका वंश कह्या।

[द्वितीय तीर्थंकर अजितनाथकी उत्पति और जीवनादि परिचय, सगर चक्रवर्ती का वृत्तान्त]

आगैं द्वितीय तीर्थंकर श्रीअजितनाथ स्वामी उनकी उत्पत्ति कहै हैं। जब ऋषभदेव को मुक्ति गए पचास लाख कोटिसागर गए, चतुर्थकाल आधा व्यतीत भया, जीवनिकी आयु काय, पराक्रम घटते गए। जगतमैं काम लोभादिककी प्रवृत्ति बढ़ती भई। अथानन्तर इक्ष्वाकुकुल-में ऋषभदेवहीके वंशमें अयोध्या नगरमें राजा धरणीधर भए। तिनके पुत्र त्रिदश जय देवोंके जीतनेहारे, तिनके इन्द्ररेखा रानी ताके जितशत्रु पुत्र भया, सो पोदनापुरके राजा भव्यानंद तिनके अंभोदमाला राणी, ताकी पुत्री विजया जितशत्रुने परणी। जितशत्रुको राज देयकरि राजा त्रिदशजय कैलाश पर्वतपर निर्वाणको प्राप्त भए। अथानंतर—राजा जितशत्रुकी रानी विजया-देवीके अजितनाथ तीर्थंकर भए। तिनका जन्माभिषेकादिकका वर्णन ऋषभदेववत् जानना। जिन-के जन्म होते ही राजा जितशत्रुने सर्व राजा जीते। तातैं भगवानका अजित नाम धरया। अजित-नाथके सुनया, नन्दा आदि अनेक रानी भईं, जिनके रूपकी समानता इन्द्राणी भी न कर सकै। एक दिन भगवान अजितनाथ राजलोक सहित प्रभात समयमें ही वनक्रीडाको गए सो कमलोंका वन फूल्या हुआ देख्या। अर सूर्यास्त समय उस ही वनको सँकुचा हुआ देख्या, सो लक्ष्मीकी अनित्यता मानकर परम वैराग्यको प्राप्त भए। माता पितादि सर्व कुटुम्बतैं क्षमाभाव कराय ऋषभ-देवकी भांति दीक्षा धरी। दशहजार राजा साथ निकसे। भगवानने वेला पारणा अंगीकार किया। ब्रह्मदत्त राजाके घर आहार लिया। चौदह वर्ष तप करके केवलज्ञान उपजाया। चौतीस अतिशय तथा आठ प्रतिहार्य प्रगट भए। भगवानके नव्वे गणधर भए। अर एक लाख मुनि भए।

अजितनाथके काका विजयसागर जिनकी ज्योति सूर्यसमान है तिनकी रानी सुमंगला तिनके पुत्र सगर-द्वितीय चक्रवर्ती भए। सो नव निधि चौदह रत्न आदि इनकी विभूति भरत चक्रवर्तीके समान जाननी। तिनके समयमैं एक वृत्तान्त भया सो हे श्रेणिक! तुम सुनहु। भरतक्षेत्रके विजयार्धकी दक्षिणश्रेणीमें चक्रवाल नगर तहां राजा पूर्णघन विद्याधरनिके अधिपति महाप्रभाव-मंडित विद्याबलकरि अधिक तिनने विहायतिलक नगरके राजा सुलोचनकी कन्या उत्पलमती जाँची। राजा सुलोचनने निमित्तज्ञानीके कहनेतैं ताकूं न दीनी। अर सगर चक्र-

वर्तीकूं देनी विचारी। तब पूर्णघन सुलोचन पर चढ़ि आए, सुलोचनके पुत्र सहस्रनयन अपनी बहिनको लेकर भागे, सो वनमें छिप रहे। पूर्णघनने युद्धमें सुलोचनको मार नगरमें जाय कन्या ढूंढ़ी, परन्तु न पाई। तब अपने नगरको चले गये। सहस्रनयन निर्बल सो बापका बध सुन पूर्णमेघ पर क्रोधायमान भए, परन्तु कछु कर नाहीं सकै, छिद्र हेरैं, गहरे वनमें घुसा रहै। कैसा है वह वन, सिंह व्याघ्र अष्टापदादिकनिकर भरया है। पश्चात् चक्रवर्तीको एक मायामई अश्व लेय उड़्या, सो जिस वनमें सहस्रनयन हुते, तहां आये। उत्पलमतीने चक्रवर्तीको देखकर भाईको कहा कि चक्रवर्ती आपही यहां पधारे हैं। तब भाई प्रसन्न होयकर चक्रवर्तीको बहिन परणाई। सो यह उत्पलमती चक्रवर्तीका पटराणी स्त्रीरत्न भई। अर चक्रवर्तीने कृपा करि सहस्रनयनको दोनों श्रेणीका अधिपति किया। सो सहस्रनयनने पूर्णघनपर चढ़कर युद्धमें पूर्णघनको मारया, अर बापका बैर लिया। चक्रवर्ती छहखंड पृथिवीका राज करै, अर सहस्रनयन चक्रवर्तीका साला विद्याधरनिकी दोऊ श्रेणीका राज करै। अर पूर्णमेघका बेटा मेघवाहन भयकर भाग्या, सहस्र-नयनके योधा मारनेको लारें (पीछे) दौड़े सो मेघवाहन समोशरणमें श्रीअजितनाथकी शरण आया। इन्द्रने भयका कारण पूछया, तब मेघवाहनने कहा—'हमारे बापने सुलोचनको मारया था सो सुलोचनके पुत्र सहस्रनयनने चक्रवर्तीका बल पाय हमारे पिताको मारया अर हमारे बन्धु क्षय किये। अर मेरे मारनेके उद्यममें है सो मैं मंदिरतैं हंसोंके साथ उड़कर श्रीभगवानकी शरण आया हूँ'। ऐसा कहिकर मनुष्यनिके कोठेमें बैठ्या। अर सहस्रनयनके योधा याके मारणेको आये हुते ते इसको समोशरणमें आया जान पाछैं गए। अर सहस्रनयनको सकल वृत्तान्त कह्या तब वह भी समोशरणमें आया। भगवानके चरणारविंदके प्रसादतैं दोनों निर्वैर होय तिष्ठे। तदि गणधरने भगवानकूं इनके पिताका चरित्र पूछया। भगवान कहै हैं कि—जम्बूद्वीपके भरत-क्षेत्रविषैं सद्गति नामा, नगर तहां भावन नामा वणिक, ताके आतकी नामा स्त्री, अर हरिदास नामा पुत्र, सो भावन चार कोटि द्रव्यका धनी हुता तो भी लोभ करि व्यापार निमित्त देशां-तरको चाल्या। सो चलते समय पुत्रको सर्व धन सौंप्या। अर द्यूतादि कुव्यसन न सेवनेकी शिक्षा दीनी। हे पुत्र, यह द्यूतादि कुव्यसन सब दोषनिका कारण है, इनको सर्वथा तजने, इत्यादि शिक्षा देकर आप धनतृष्णाके कारण जहाजके द्वारा द्वीपांतरको गया। पिताके गए पीछैं पुत्रने सर्व धन वैश्या, जूआ, अर सुरापान इत्यादिक कुव्यसनकरि खोया। जब सर्व धन जाता रह्या, अर जुआरीनका देनदार होय गया तदि द्रव्यके अर्थि सुरंग लगाय राजाके महलमें चोरीकों गया। सो राजाके महलतैं द्रव्य लावै, अर कुव्यसन सेवै। कईएक दिनोंमें भावन परदेशतैं आया घरमें पुत्रको न देख्या। तदि स्त्रीको पूछया स्त्रीने कही कि "इस सुरंगमें होयकर राजाके महलमें चोरीको गया है" तब यह पिता, पुत्रके मरणकी आशंका

करि ताके लावनेको सुरंगमें पैठ्या। सो यह तो जावै था, अर पुत्र आवै था सो पुत्रने जान्या यह कोई बैरी आवै है सो उसने बैरी जानि खड्गसे मारया। पीछे स्पर्शकर जान्या यह तो मेरा बाप है, तब महादुखी होय डरकर भाग्या अर अनेक देश भ्रमणकरि मरया सो पिता पुत्र दोन्यों श्वान (कुत्ते) भए, फिर गीदड फिर मार्जार भए, फिर रीछ भये, फिर न्योला भये, फिर भैंसे भये, फिर बलध भये, सो इतने जन्मोंमें परस्पर घात करि मरे। फिर विदेहक्षेत्रविषैं पुष्कलावती देशमें मनुष्य भये। उग्र तप करि एकादश स्वर्गमें उत्तर अनुत्तर नामा देव भए, तहांतैं आयकर जो भावन नामा पिता हुता वह तो पूर्णमेघ विद्याधर भया। अर हरिदास नामा पुत्र हुता सो सुलोचन नामा विद्याधर भया। या ही वैरतैं पूर्णमेघने सुलोचनको मारया।

तब गणधर देवने सहस्रनयनको अर मेघवाहनको कह्या तुम अपने पिताओंका या भांति चरित्र जान संसारका वैर तजकर समताभावकूं धरो। अर सगरचक्रवर्तीने गणधरदेवको पूछ्या कि हे महाराज! मेघवाहन अर सहस्रनयनका वैर क्यों भया? तदि भगवानकी दिव्यध्वनिमें आज्ञा भई कि जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं पद्मक नामा नगर है तहां आरम्भ नामा गणितशास्त्रका पाठी महाधनवंत ताके दोय शिष्य एक चन्द्र एक आवली भये। इन दोनोंमें मित्रता हुती, अर दोनों धनवान, गुणवान विख्यात हुए,सो इनके गुरु आरम्भने जो अनेक नयचक्रमें अति विचक्षण हुता, मनमें विचारी कि कदाचित् यह दोनों मेरा पदभंग करें। ऐसा जानकर इन दोनोंके चित्त जुदे कर डारे। एक दिन चन्द्र गाय बेचवेकूं गोपालके घर गया सो गाय बेचकर वह तो घर आवता हुता अर आवली उसी गायको गोपालतैं खरीदकर लावता देख्या इस कारण मार्गमें चन्द्रने आवलीको मारया। सो म्लेच्छ भया अर चन्द्र मरकर बलध भया सो म्लेच्छने बलधको भख्यो। म्लेच्छ नरक तिर्यंच योनिमें भ्रमणकरि मूसा भया अर चन्द्रका जीव मार्जार भया। मार्जारने मूसा भख्या। बहुरि ये दोउ पापकर्मके योगतैं अनेक योनिमें भ्रमणकर काशीमें संभ्रमदेवकी दासीके पुत्र दोऊ भाई भए। एकका नाम कूट अर एकका नाम कार्पटिक, सो इन दोनोंको संभ्रमदेवने चैत्यालयकी टहलकूं राखे। सो मरकर पुण्यके योगतैं रूपानंद अर स्वरूपानंद नामा व्यंतरदेव भये। रूपानन्द तो चन्द्रका जीव अर स्वरूपानन्द आवलीका जीव। फिर रूपानन्द तौ चयकर कंलूवीका पुत्र कुलंधर भया। अर स्वरूपानन्द पुरोहितका पुत्र पुष्पभूत भया। ये दोनों परस्पर मित्र एक हालीके अर्थि वैरको प्राप्त भये। अर कुलंधर पुष्पभूतके मारवेको प्रवर्त्या, एक वृक्षके तलैं साधु विराजते हुते तिनसों धर्म श्रवणकर कुलंधर शांत भया। राजाने याको सामंत जान बहुत बढ़ाया। पुष्पभूत, कुलंधरको जिनधर्मके प्रसादतैं संपत्तिवान देखकरि जैनी भया। व्रत धर तीसरे स्वर्ग गया। अर कुलंधर भी तीसरे स्वर्गगया स्वर्गतैं चयकर दोनों धातकी खंडके विदेहविषैं अरिंजय पिता अर जयावती माताके पुत्र भये,एकका नाम अमरश्रुत दूजेका नाम धनश्रुत।

ये दोनों भाई बड़े योधा सहस्रशिरसके एतबारी चाकर जगतमें प्रसिद्ध हुवे। एक दिन राजा सहस्रशिरस हाथी पकड़नेको वनमें गया। ये दोनों भाई साथ गये। वनमें भगवान केवली विराजे हुते तिनके प्रतापतैं सिंह मृगादिक जातिविरोधी जीवोंको एक ठौर बैठे देख राजा आश्चर्यको प्राप्त भया। आगैं जाकर केवलीका दर्शन किया। राजा तो मुनि होय निर्वाण गये। अर ये दोनों भाई मुनि होय ग्यारहवें स्वर्ग गये। तहांतैं चयकर चन्द्रका जीव अमरश्रुत तो मेघवाहन भया अर आवलीका जीव घनश्रुत सो सहस्रनयन भया। यह इन दोनोंके वैरका वृत्तांत है। बहुरि सगर-चक्रवर्तीने भगवानकूं पूछ्या कि हे प्रभो! सहस्रनयनसों मेरा जो अति हित है सो इसमैं क्या कारण है? तब भगवानने कह्या कि वह आरम्भ नामा गणित शास्त्रका पाठी मुनिनको आहार दान देकर देवकुरु भोगभूमि गया। तहांतैं प्रथम स्वर्गका देव होय कर पीछे चद्रपुरमें राजा हरि रानी धरादेवीके प्यारा पुत्र व्रतकीर्तन भया। मुनिपद धारि स्वर्ग गया। अर विदेहक्षेत्रमें रत्न-संचयपुरमें महाघोष पिता चन्द्राणी माताके पयोबलनामा पुत्र होय मुनिव्रत धारि चौदहवें स्वर्ग गया तहांतें चयकर भरतक्षेत्रमें पृथिवीपुर नगरमें यशोधर राजा अर राणीजयाके घर जयकीर्तन नाम पुत्र भया सो पिताके निकट जिनदीक्षा लेकर विजय विमान गया। तहांतैं चयकर तू सगरचक्रवर्ती भया। अर आरम्भके भवमें आवली शिष्यके साथ तेरा स्नेह हुता सो अब आवलीका जीव सहस्रनयन तासों तेरा अधिक स्नेह है। यह कथा सुन चक्रवर्तीके विशेष धर्मरुचि हुई। अर मेघ-वाहन तथा सहस्रनयन दोनों अपने पिताके अर अपने पूर्वभव श्रवणकर निर्वैर भये, परस्पर मित्र भये। अर इनकी धर्मविषैं अतिरुचि उपजी। पूर्वभव दोनोंको याद आये, महाश्रद्धांवत होय भग-वानकी स्तुति करते भये कि—हे नाथ! आप अनाथनिके नाथ हैं, ये संसारकेप्राणी महादुखी हैं, तिनकौं धर्मोपदेश देकर उपकार करो हो, तुम्हारा किसीसे भी कुछ प्रयोजन नाहीं, तुम निःकारण जगतके बंधु हो, तुम्हारा रूप उपमा रहित है अर अप्रमाण बलके धरणहारे हो, इस जगतमैं तुम समान और नाहीं। तुम पूर्ण परमानंद हो,कृतकृत्य हो, सदा सर्वदर्शी सबके वल्लभ हो, किसीके चिंतवनमें नाहीं आते, जाने हैं सर्व पदार्थ जिनने, सबके अन्तर्यामी, सर्वज्ञ जगतके हितु हो हे जिनेन्द्र! संसाररूप अन्धकूपमें पड़े, ये प्राणी, तिनको धर्मोपदेशरूप हस्तावलंबन ही हो, इत्या-दिक बहुत स्तुति करी। अर यह दोनों मेघवाहन अर सहस्रनयन गदगदवाणी होय अश्रुपातकरि भीज गये हैं नेत्र जिनके, परम हर्षको प्राप्त भये। अर विधिपूर्वक नमस्कारकरि तिष्ठे, सिंहवीर्या-दिक मुनि इन्द्रादिक देव सगरादिक राजा परम आश्चर्यको प्राप्त भये।

अथानंतर भगवानके समोशरणविषैं राक्षसोंका इन्द्र भीम अर सुभीम मेघवाहनतैं प्रसन्न भए अर कहते भए कि हे विद्याधरके बालक मेघवाहन! तू धन्य है जो भगवान अजित-नाथकी शरणमैं आया, हम तेरेपर अति प्रसन्न भए हैं। हम तेरी स्थिरताका कारण कहै हैं तू

सुन, इस लवणसमुद्रमें अत्यन्त विषम महारमणीक हजारों अन्तरद्वीप हैं, लवणसमुद्रमें मगर-मच्छादिकके समूह रमैं हैं अर तिन अन्तर्द्वीपोंमें कहीं तो गंधर्व क्रीड़ा करैं हैं, कहीं किन्नरोंके समूह रमैं हैं, कहीं यक्षोंके समूह कोलाहल करैं हैं, कहीं किंपुरुष जातिके देव केलि करैं हैं, उनके मध्यमें एक राक्षसद्वीप है जो सातसौ योजन चौड़ा अर सातसौ योजन लम्बा है। उसके मध्यमें त्रिकूटाचल पर्वत है जो अत्यंत दुष्प्रवेश है, शरणकी ठौर है, पर्वतके शिखर सुमेरुके शिखर समान मनोहर हैं अर पर्वत नव योजन ऊंचा, पचास योजन चौड़ा है, नाना प्रकारकी रत्नोंकी ज्योतिके समूहकर जड़ित है, जाके सुवर्णमयी सुन्दर तट हैं, नाना प्रकारकी वेलों करि मंडित कल्पवृक्षनिकर पूर्ण है। ताके तलैं तीस योजन प्रमाण लंका नामा नगरी है रत्न अर सुवर्णके महलनिकर अत्यन्त शोभै है। जहां मनोहर उद्यान हैं, कमलनिकर मंडित सरोवर हैं, बड़े बड़े चैत्यालय हैं, वह नगरी इन्द्रपुरी समान है। दक्षिण दिशाका मंडन (भूषण) है, हे विद्याधर! तू समस्त बांधव वर्गकरि सहित तहां वसिकरि सुखसे रहो, ऐसा कहकर भीम नामा राक्षसनिका इन्द्र ताकूं रत्नमई हार देता भया। वह हार अपनी किरणोंसे महा उद्योत करै है। अर राक्षसनिका इन्द्र मेघवाहनका जन्मान्तरविषैं पिता हुता, तातैं स्नेहकरि हार दिया, अर राक्षसद्वीप दिया। तथा धरतीके बीचमें पाताल लंका, जिसमें अलंकारोदय नगर, छै योजन ओंड़ा, अर एकसौ साढ़े इकतीस योजन अर डेढ़ कला चौड़ा यह भी दिया। उस नगरमें वैरियोंका मन भी प्रवेश न कर सके, स्वर्ग समान महा मनोहर है। राक्षसोंके इन्द्रने कहा—कदाचित् तुझकूं परचक्रका भय भया हो तो इस पाताललंकामें सकल वंशसहित सुखसों रहियो, लंका तो राजधानी अर पाताल लंका भय निवारणका स्थान है, या भांति भीम सुभीमने पूर्णघनके पुत्र मेघवाहनको कह्या।

तब मेघवाहन परम हर्षको प्राप्त भया, भगवानकूं नमस्कार करके उठ्या, तब राक्षसोंके इंद्रने राक्षसविद्या दीनी, सो लेय आकाशमार्गसे विमानमें चढ़कर लंकाको चले, तदि सर्व भाइयोंने सुनी कि—मेघवाहनको राक्षसोंके इंद्रने अति प्रसन्न होय लंका दी है सो समस्त ही बंधुवर्गोंके मन प्रफुल्लित भए। जैसें सूर्यके उदयतैं समस्त ही कमल प्रफुल्लित होंय, तैसैं सर्व ही विद्याधर मेघवाहनपै आए। तिनकरि मंडित मेघवाहन चाले। कैएक तो राजा आगैं जाय हैं, कैएक पीछें, कैएक दाहिने, कैएक बांये, कैएक हाथियोंपर चढ़े, कैएक तुरंगनि (घोड़ों) पर चढ़े, कैएक रथोंपर चढ़े जांय हैं कैएक पालकीपर चढ़े जांय हैं अर अनेक पियादे जाय हैं। जय जय शब्द होय रहे हैं, दुंदुभि बाजे बाजैं हैं, राजापर छत्र फिरै हैं अर चमर ढुरै हैं, अनेक निशान (झंडे) चले जाय हैं। अनेक विद्याधर शीस नवावैं हैं, या भांति राजा चलते चलते लवणसमुद्र ऊपर आए। वह समुद्र आकाश समान विस्तीर्ण, अर पाताल समान ऊंडा, तमालवन समान श्याम है, तरंगोंके समूहतैं भरया है, अनेक मगर-मच्छ जिसमें कलोल करैं हैं, उस समुद्रको

देख राजा हर्षित भए, पर्वतके अधोभागमें कोट अर दरवाजे अर खाइयोंकरि संयुक्त लंकानामा महापुरी है तहां प्रवेश किया। लंकापुरीमें रत्नोंकी ज्योतिकरि आकाश संध्यासमान अरुण (लाल) होय रहा है, कुंदके पुष्प समान उज्ज्वल ऊंचे भगवानके चैत्यालयनिकरि मंडित पुरी शोभै हैं, चैत्यालयोंपर ध्वजा फहरा रही हैं, चैत्यालयोंकी वन्दना कर राजाने महलमें प्रवेश किया और भी यथायोग्य घरोंमें तिष्ठे रत्नोंकी शोभासे उसके मन अर नेत्र हरे गए।

*अथानंतर किन्नरगीतानामा नगरविषैं राजा रतिमयूख, अर राणी अनुमती, तिनकै सुप्रभा नामा कन्या, नेत्र अर मनकी चौरनहारी, कामका निवास, लक्ष्मीरूप, कुमुदिनीके प्रफुल्लित करनेकूं चंद्रमाकी चाँदनी, लावण्यरूप जलकी सरोवरी, आभूषणोंका आभूषण, इंद्रियानिके प्रमोदकी करणहारी, सो राजा मेघवाहनने ताकूं महा उत्साह करि परणी, ताके महारक्ष नामा पुत्र भया, जैसें स्वर्गमें इंद्र इंद्राणीसहित तिष्ठै तैसें राजा मेघवाहन राणी सुप्रभा सहित लंकाविषैं बहुत काल राज किया।

अथानंतर एक दिन राजा मेघवाहन अजितनाथकी बंदनाके अर्थि समोशरणमें गए। तहां और कथा हो चुकी, तब सगरने भगवानकूं नमस्कारकरि पूछया कि हे प्रभो! इस अविसर्पिणीकालविषैं धर्मचक्रके स्वामी तुम सारिखे जिनेश्वर कितने भए अर कितने होवेंगे? तुम तीन लोकके सुखके देनेवाले हो, तुम सारिखे पुरुषोंकी उत्पत्ति लोकविषैं आश्चर्यकारिणी है, अर चक्र-रत्नके स्वामी कितने होवेंगे तथा वासुदेव, प्रतिवासुदेव, बलभद्र कितने होवेंगे, या भांति सगरने प्रश्न किया? तब भगवान अपनी ध्वनि करि देवदुंदभीनिकी ध्वनिको निराकरण करते हुए व्याख्यान करते भए। अर्धमागधी भाषाके भाषणहारे भगवान तिनके होंठ न हालैं, यह बड़ा आश्चर्य है। कैसी है दिव्यध्वनि, उपजाया है श्रोतानिके कानोंको उत्साह जानैं। उत्सर्पिणी अविसर्पिणी प्रत्येककालविषैं चौवीस तीर्थंकर होय हैं, मोहरूप अंधकारकरि समस्त जगत आच्छादित हुवा जा समय धर्मका विचार नाहीं और कोई भी राजा नाहीं, ता समय भगवान ऋषभदेव उपजे, तिनने कर्मभूमिकी रचना करी, तबतैं कृतयुग कहाया। भगवानने क्रियाके भेदसे तीन वर्ण थापे। अर उनके पुत्र भरतने विप्र वर्ण थापा, भरतका तेज भी ऋषभ समान है, भगवान ऋषभदेवने जिनदीक्षा धरी अर भवतापकर पीड़ित भव्यजीवनिकों शमभावरूप जलकरि शांत किया। श्रावकके धर्म अर यतीके धर्म दोऊ प्रकट किए। जिनके गुणनिकी उपमाकूं जगतविषैं कोऊ पदार्थ नाहीं, कैलाशके शिखरतैं आप निर्वाण पधारे। ऋषभदेवकी शरण पाय अनेक साधु सिद्ध भए, अर कई एक स्वर्गके सुखकों प्राप्त भए, कई एक भद्रपरिणामी मनुष्यभवकों प्राप्त भए, अर कई एक मरीचादि मिथ्यात्वके रागकरि संयुक्त अत्यंत उज्ज्वल जो भगवानका मार्ग ताहि न अवलोकन करते भए, जैसें घुग्घू (उल्लू) सूर्यके प्रकाशको न जानैं, तैसें कुधर्मकूं अंगीकारकरि

कुदेव भए। बहुरि नरक तिर्यंचगतिकूं प्राप्त भए। भगवान ऋषभदेवको मुक्ति गए पचास लाख कोटि सागर गए तब सर्वार्थसिद्धसे चय करि द्वितीय तीर्थंकर हम अजित भए। जब धर्मकी ग्लानि होय अर मिथ्यादृष्टीनिका अधिकार होय, आचारका अभाव होय तब भगवान तीर्थंकर प्रकट होय धर्मका उद्योत करैं हैं अर भव्यजीव धर्मको पाय सिद्धस्थानकों प्राप्त होंय हैं। अब हमको मोक्ष गए पीछे बाईस तीर्थंकर और होंगे तीनलोकविषैं उद्योत करनेवाले ते सर्व मो सारखे कांति वीर्य विभूतिके धनी त्रैलोक्यपूज्य ज्ञानदर्शनरूप होंगे। तिनमें तीन तीर्थंकर शांति, कुंथु अर ए तीन चक्रवर्ती पदके भी धारक होवेंगे। तिनि चौवीसोंके नाम सुनहु ऋषभ १, अजित २ संभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५, पद्मप्रभ ६, सुपार्श्व ७, चंद्रप्रभ ८, पुष्पदन्त, ९, शीतल१० श्रेयांस ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनंत १४, धर्म १५, शांति, १६, कुंथु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०, नमि २१, नेमि २२, पार्श्वनाथ २३, महावीर २४, ये सब ही देवाधिदेव जिनमार्गके धुरंधर होहिंगे अर सर्वके गर्भावतारविषैं रत्ननिकी वर्षा होयगी, सर्वके जन्मकल्याणक सुमेरपर्वतपर क्षीरसागरके जलकरि होवेंगे, उपमारहित हैं तेजरूप सुख अर बल जिनके ऐसे सर्व ही कर्मशत्रुनिके नाशनहारे, महावीर स्वामीरूपी सूर्यके अस्त भए पीछे पाखंडरूप अज्ञानी चमत्कार करेंगे ते पाखंडी संसाररूप कूपविषैं आप पड़ेंगे अर औरनिकौं पाड़ैंगे। चक्रवर्त्ती-निमें प्रथम तौ भरत भए, दूसरा तू सगर भया, अर तीसरा सनत्कुमार चौथा मघवा, अर पांचवां शांति, छठा कुंथु, सातवां अर, आठवां सुभूम, नवमां महापद्म, दशवां हरिषेण, ग्यारहवां जयसेन बारहवां ब्रह्मदत्त, ये बारह चक्रवर्ती अर, वासुदेव नव, अर प्रति वासुदेव नव,बलभद्र नव होहिंगे। इनका धर्मविषैं सावधान चित्त होगा। ये अवसर्पिणीके महापुरुष कहे। याही भांति उत्सर्पणीविषैं भरत ऐरावत में जानने। या भांति महापुरुषोंकी विभूति अर कालकी प्रवृत्ति अर कर्मनिके वशतैं संसारका भ्रमण अर कर्म रहितोंको मुक्तिका निरुपम सुख यह सर्वकथन मेघवाहनने सुना, यह विचक्षण चित्तविषैं विचारता भया कि हाय! हाय! जिन कर्मनिकरि यह जीवआतापको प्राप्त होय है तिन्हीं कर्मनिको मोहमदिराकरि उन्मत्त भया यह जीव बांधै है। यह विषय विषवत् प्राणनिके हरणहारे कल्पनामात्र मनोज्ञ हैं। दुःखके उपजावनहारे हैं। इनमें रति कहा? या जीवने धन स्त्री कुटुंबादिविषैं अनेकभव राग किया; परन्तु ये पर पदार्थ याके नाहीं हुए। यह सदा अकेला संसार-विषै परिभ्रमण करै है अर सर्व कुटुंबादिक तब तक ही स्नेह करै हैं जबतक दानकरि उनका सन्मान करै है जैसैं श्वानके बालकको जब लग टुकड़ा डारिये, तो लग अपना है, अंतकालमें पुत्र कलत्र बांधव मित्र धनादिकके लार (साथ) कौन गया। अर ये कौनके साथ गये। ये भोग हैं ते काले सर्पके फण समान भयानक हैं, नरकके कारण हैं। तिनविषै कौन बुद्धिमान संग करै। अहो यह बड़ा आश्चर्य है। लक्ष्मी ठगनी अपने आश्रितनिकों ठगै है या समान और दुष्टता

कहां ! जैसैं स्वप्नविषैं किसी वस्तुका समागम होय है तैसैं कुटुंबका समागम जानना। अर जैसैं इंद्रधनुष क्षणभंगुर है तैसैं परिवारका सुख क्षणभंगुर जानना। यह शरीर जलके बुदबुदा समान असार है अर यह जीवितव्यविजलीके चमत्कारवत् असार चंचल है तातैं इन सबनिकौं तजिकरि एक धर्महीका सहाय अंगीकार करूं। धर्म कैसा है सदा कल्याणकारी ही है कदापि विघ्नकारी नाहीं, अर संसार शरीर भोगादिक चतुर्गतिके भ्रमणके कारण है, महादुखरूप हैं, सुख इन्द्र धनुषवत और शरीर जल बुदबुद् सदृश क्षणभंगुर है। ऐसा जानकरि उस राजा मेघवाहनने जिसका महा वैराग्य ही कवच है, महारक्ष नामा पुत्रको राज्य देकर भगवान श्री अजितनाथके निकट दीक्षा धारी, राजाके साथ अन्य एकसौ दश राजा वैराग्य पाय घररूप बंदीखानेतैं निकसे।

अथानंतर मेघवाहनका पुत्र महारक्ष राजपर बैठ्या सो चन्द्रमा समान दानरूपी किरणनिकरि कुटुंबरूपी समुद्रको पूर्ण करता संता लंकारूपी आकाशविषैं प्रकाश करता भया। बड़े बड़े विद्याधरनिके राजा स्वप्नविषैं भी ताकी आज्ञाको पायकर आदरतैं प्रतिबोध होय हाथ जोड़ि नमस्कार करते भए। उस महारक्षके प्राण समान प्यारी विमलप्रभा राणी होती भई, कैसी है वह राणी मानो छाया समान पतिकी अनुगामिनी है। ताके अमररक्ष उदधिरक्ष भानुरक्ष ये तीन पुत्र भए कैसे हैं वे पुत्र ? नाना प्रकारके शुभकर्म करि पूर्ण, जिनका बड़ा विस्तार अति ऊंचे, जगतविषैं प्रसिद्ध, मानों तीन लोक ही हैं।

अथानंतर अजितनाथ स्वामी अनेक भव्य जीवनिका निस्तारकर सम्मेदशिखरतैं सिद्धपदको प्राप्त भए। सगरकै छाणवें हजार राणी इंद्राणी तुल्य, अर पुत्र साठ हजार ते कदाचित् बंदनाकूं कैलाश पर्वतपर आए भगवानके चैत्यालयनिकी बंदना करि दंडरत्नतैं कैलाशके चौगिरद खाई खोदते भए। सो तिनको क्रोधकी दृष्टि करि नागेंद्रने देख्या, सो ये सब भस्म हो गये। उनमेंतैं दोय आयुकर्मके योगतैं बचे, एक भीमरथ अर दूसरा भगीरथ। तब सबनिने विचारी जो अचानक यह समाचार चक्रवर्तीकों कहेंगे तो चक्रवर्ती तत्काल प्राण तजैंगे, ऐसा जान इनको मिलनेतैं अर कहवेतैं पंडित लोकोंने मना किए, सर्व राजा अर मंत्री जा विधि आए थे, ताही विधि आए विनयकरि चक्रवर्तीके पास अपने अपने स्थान पर बैठे। तासमय एक वृद्ध ब्राह्मण कहता भया कि 'हे सगर ! देखहु या संसारकी अनित्यता जिसको देखकर भव्य जीवनिका मन संसारविषैं न प्रवर्तै। तो आगैं तुम्हारे समान पराक्रमी राजा भरत भये जिनने छै खंड पृथ्वी दासी समान बश करी, ताके अर्ककीर्ति पुत्र भये। महा पराक्रमी जिनके नामतैं सूर्यवंश प्रवर्त्या या भांति जे अनेक राजा भये, ते सर्व कालवश भए सो राजानिकी बात तो दूर ही रहो, जे स्वर्गलोक के इंद्र महा विभव करि युक्त हैं तेहु क्षणमें विलाय जाय हैं। अर जे भगवान तीर्थंकर तीनो लोककूं आनंद करणहारे हैं, तेहू आयुके अंत होने पर शरीरको तज निर्वाण पधारें हैं। जैसैं

पक्षी एक वृक्षपर रात्रिको आय बसैं हैं प्रभात अनेक दिशानिकूं गमन करैं हैं, यह प्राणीकुटुम्बरूपी वृक्षविषैं आय बसै हैं, स्थिति पूरीकर अपने कर्मके वशतैं चतुर्गति विषैं गमन करैं हैं। सबनितैं बलवान महाबली यह काल है, जाने बड़े२ बलवान निबल किये। अहो! बड़ा आश्चर्य है? बडे पुरुषनिका विनाश देखकर हमारा हृदय नाहीं फट जाय है। इन जीवनिका शरीर संपदा अर इष्टका संयोग सर्व इंद्रधनुष, वा स्वप्न वा विजली, वा झाग, वा बुदबुदा तिन समान जानना। इस जगतविषैं अैसा कोई नाहीं, जो कालतैं बचै। एक सिद्ध ही अविनाशी हैं, अर जो पुरुष पहाड़को हाथतैं चूर्णकरि डारैं, अर समुद्र शोष जावैं, तेहू कालके वदनमैं प्राप्त होय हैं यह मृत्यु अलंघ्य है। यह त्रैलोक्य मृत्युके वश है, केवल महामुनि ही जिनधर्मके प्रसादकरि मृत्युकों जीतैं हैं ऐसैं अनेक राजा कालवश भए, तैसैं हमहू कालवश होवेंगे। तीन लोकका यही मार्ग है ऐसा जानकर ज्ञानी पुरुष शोक न करैं। शोक संसारका कारण है या भांति वृद्ध पुरुषने कही अर याही भांति सर्व सभाके लोगोंने कही। ताही समय चक्रवर्तीने दोऊ बालक देखे तब ये मनमें विचारी कि सदा ये साठ हजार भेले होय मेरे पास आवते हुते, नमस्कार करते, अर आज ए दोनों ही दीनवदन दीखै हैं तातैं जानिए है कि और सब कालवशि भए। अर ये राजा मुझे अन्योक्तिकर समझावै हैं। मेरा दुःख देखवेकों असमर्थ हैं, ऐसा जानि राजा शोकरूप सर्पका डसा हुवा भी प्राणनिकों न तजता भया, मंत्रियोंके वचनतैं शोकको दबाय संसारको कदलीके गर्भवत् असार जानि इंद्रियनिके सुख छोड भगीरथको राज देय जिनदीक्षा आदरी। यह संपूर्ण छै खंड पृथिवी जीर्ण तृण समान जान तजी। भीमरथ सहित श्रीअजितनाथके निकट मुनि होय केवलज्ञान उपाय सिद्धपदको प्राप्त भए।

अथानंतर एक समय सगरके पुत्र भगीरथ श्रुतसागर मुनिको पूछते भये कि हे प्रभो! जो हमारे भाई एक ही साथ मरणको प्राप्त भये तिनविषैं मैं बचा, सो काहेतैं बचा? तब मुनि बोले कि एक समय चतुर्विधसंघ बंदना निमित्त संमेदशिखरको जाते हुते सो चलते २ अंतिकग्राममें आय निकसे। तिनको देखकर अंतिमग्रामके लोक दुर्वचन बोलते भए, हंसते भए। तहां एक कुम्हारने तिनको मनै करी अर मुनियोंकी स्तुति करता भया तदनंतर ता ग्रामके एक मनुष्यने चोरी करी। सो राजाने सर्व ग्राम जला दिया, उस दिन वह कुम्हार काहू ग्रामको गया हुता सो ही बचा। वह कुम्हार मरकरि वणिक भया। अर अन्य जे ग्रामके मरे थे द्विइंद्री, कौडी भये। कुम्हारके जीव महाजनने सर्व कौडी खरीदी बहुरि वह महाजन मरकर राजा भया, अर कौडी मर कर गिजाई भई, सो हाथीके पगके तले चूरी गई। राजा मुनि होय कर देव भये। देवतैं तू भगीरथ भया अर ग्रामके लोक कैएक भव लेय सगरके पुत्र भये। सो मुनिके संघकी निंदाके पापतैं जन्म जन्ममें कुगति पाई, अर तू स्तुति करनेतैं ऐसा भया। यह पूर्वभव सुनकर भगीरथ

प्रतिबोधकों पाय मुनिराजका व्रतधरि परमपदको प्राप्त भये।

बहुरि गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसैं कहैं हैं-हे श्रेणिक! यह सगरका चरित्र तो तुझे कहा। आगे लंकाकी कथा कहिये है सो सुनहु। महारिक्ष नामा विद्याधर बडी सम्पदाकरि पूर्ण लंकाविषैं निष्कंटक राज्य करै तो एक दिन प्रमद नामा उद्यानविषैं राजलोक सहित क्रीडाकूं गये, कैसा है प्रमद नाम उद्यान? कमलनिकरि पूर्ण जे सरोवर, तिनि करि अधिक शोभाकूं धरै है। अर नाना प्रकारके रत्ननिकी प्रभाकूं धरैं ऊंचे पर्वतोंसे महा रमणीक है अर सुगंधित पुष्पोंसे फूल रहे वृक्षोंके समूहसे मंडित, अर मिष्ट शब्दोंके बोलनहारे पक्षियोंके समूहसे अतिसुंदर है, जहां रत्नोंकी राशि है अर अति सघन पत्र पल्लवनि करि मंडित लताओं (वेलों) के मंडप तिनकरि छाय रह्या है ऐसे वनमें राजा राजलोकनिसहित नानाप्रकारकी कीड़ा करि रतिसागरविषैं मग्न हुता, जैसैं नंदनवनविषैं इंद्र कीड़ा करै तैसैं क्रीड़ा करी।

अथानंतर सूर्यके अस्त भये पीछैं कमल संकोचको प्राप्त भये। तिनविषैं भ्रमरको दबकर मूवा देखि राजाकै चिंता उपजी। कैसा है राजा, मोहकी भई है मंदता जाके अर भवसागरतैं पार होनेकी इच्छा उपजी। राजा विचारै है कि देखो मकरंदके रसमें आसक्त यह मूढ भौंरा गंधतैं तृप्त न भया तातैं मृत्युकूं प्राप्त भया। धिक्कार होहु या इच्छाकूं, जैसैं यह कमलके रसका आसक्त मधुकर मूवा, तैसैं मैं स्त्रियोंके मुखरूप कमलका भ्रमर हुआ मरकर कुगतिको प्राप्त होऊंगा। जो यह एक नासिका इंद्रियका लोलुपी नाशको प्राप्त भया, तो मैं तो पंच इंद्रियोंका लोभी हूं, मेरी क्या बात? अथवा यह चौइंद्री जीव अज्ञानी भूलै तौ भूलै, मैं ज्ञानसंपन्न विषयनिके वशि क्यों भया? शहतकी लपेटी खड्गकी धाराके चाटनेतैं सुख कहा? जीभहीके खंड होय हैं तैसैं विषयसेवनमें सुख कहा? अनंत दुःखोंका उपार्जन ही होय है। विषफल तुल्य ये विषय तिनतैं जे नर पराङ्मुख हैं तिनको मैं मनवचकायकरि नमस्कार करूं हूं। हाय! हाय! यह बडा कष्ट है जो मैं पापी घने दिनतक इन दुष्ट विषयनिकरि ठगाया गया। इन विषयनिका प्रसंग विषम है। विष तो एक भव प्राण हरै है अर ये विषय अनंतभव प्राण हरैं हैं। यह विचारि राजाने किया तासमय वनमें श्रुतसागरमुनि आये। वह मुनि अपने रूप करि चन्द्रमाकी चांदनीको जीतै हैं, अर दीप्तिकरि सूर्यकूं जीतै हैं, स्थिरताकरि सुमेरुतैं अधिक हैं। जिनका मन एक धर्मध्यानविषैं ही आसक्त है अर जीते हैं रागद्वेष दोय जिन्होंने, और तजे हैं मनवचकायके अपराध जिन्होंने, चार कषायोंके जीतनेहारे, पांच इंद्रियनिके वस करणहारे, छै कायके जीवनिपर दयालु, अर सप्तभयवर्जित, आठमदरहित, नव नयके वेत्ता, शीलकी नव वाडिके धारक, दशलक्षणधर्मके स्वरूप, परमतपके धरणहारे, साधुवोंके समूह सहित, स्वामी पधारै सो जीव-जंतुरहित पवित्र स्थान देख वनमें तिष्ठे, जिनके शरीरकी ज्योतिका दशों दिशामें उद्योत होगया।

अथानंतर वनपालके मुखतैं स्वामीको आया सुन राजा महारिच विद्याधर वनमें आये। कैसे हैं राजा ? भक्तिभाव करि विनयरूप है मन जिनका, वह राजा आयकरि मुनिके पांयनि पड़े। कैसे हैं मुनि ? अति प्रसन्न है मन जिनका अर कल्याणके देनहारे हैं चरण कमल जिनके। राजा समस्त संघको नमस्कार करि समाधान (कुशल) पूछ, एक क्षण बैठिकरि भक्तिभावतैं मुनितैं धर्मका स्वरूप पूछते भये। मुनिके हृदयमें शांतिभावरूपी चंद्रमा प्रकाश कर रहा था सो वचनरूपी किरणनिकरि उद्योत करते संते व्याख्यान करते भये कि–हे राजा ! धर्मका लक्षण जीवदया ही है अर ये सत्य वचनादि सर्व धर्महीका परिवार है। यह जीव कर्मके प्रभावतैं जिस गतिमें जाय है ताही शरीरमें मोहित होय है इसलिए तीनलोककी संपदा जो कोई देय तौ हू प्राणी अपने प्राणको न तजै, सब जीवनिको प्राण समान और कुछ प्यारा नाहीं सब ही जीवनिकों इच्छै हैं, मरनेको कोई भी न इच्छै। बहुत कहवे करि कहा ? जैसैं आपको अपने प्राण प्यारे हैं, तैसैं ही सबनिको प्यारे हैं तातैं जो मूरख परजीवनिके प्राण हरैं हैं, ते दुष्टकर्मी नरकमें पडैं हैं उन समान और कोऊ पापी नाहीं। यह जीवनिके प्राण हरि अनेक जन्म कुगतिमें दुःख पावैं हैं जैसैं लोहका पिंड पानीमैं डूबि जाय है, तैसैं हिंसक जीव भवसागरमें डूबै हैं। जे वचनकरि मीठे बोल बोलै हैं अर हृदयमें विषके भरे हैं, इंद्रियनिके वशि भए मलीन मन हैं, भले आचारतैं रहित स्वेच्छाचारी कामके सेवनहारे हैं, ते नरक तिर्यंच गतिविषैं भ्रमण करैं हैं। प्रथम तो या संसारविषैं जीवनिकौं मनुष्य देह दुर्लभ है बहुरि उत्तम कुल, आर्य क्षेत्र, सुन्दरता, धनकरि पूर्णता, विद्याका समागम, तत्त्वका जानना, धर्मका आचरण ये सब अति दुर्लभ हैं। धर्मके प्रसादतैं कैएक तो सिद्धपद पावैं हैं कैएक स्वर्ग-लोकविषैं सुख पायकरि परंपराय मोक्षको जाय हैं अर कईएक मिथ्यादृष्टि अज्ञान तपकरि देव होय स्थावरयोनिमें आय पड़ैं हैं। कईएक पशु होय हैं कईएक मनुष्यजन्ममें आवैं हैं। कैसा है माताका गर्भ मलमूत्रकरि भरया है अर कृमियोंके समूहकर पूर्ण है, महादुर्गंध अत्यंत दुस्सह, ताविषैं पित्त श्लेष्मके मध्यचर्मके जालतैं ढके ये प्राणी जननीके आहारका जो रसांश ताहि चाटै हैं। जिनके सर्व अंग संकुचि रहे हैं। दुःखके भारकरि पीड़ित नव महीना उदरविषैं बसिकरि योनिके द्वारतैं निकसै हैं। मनुष्यदेह पाय पापी धर्मको भूलैं हैं। सर्व योनियोंमें उत्तम हैं। मिथ्यादृष्टि नेम धर्म आचारवर्जित पापी विषयनिका सेवैं हैं। जे ज्ञानरहित कामके वशि पडे स्त्रीके वशी होय हैं ते महादुःख भोगते हुए संसारसमुद्रविषैं डूबैं हैं तातैं विषयकषाय न सेवने। हिंसाका वचन जामैं परजीवनिको पीडा होय सो न बोलना। हिंसा ही संसारका कारण हैं चोरी न करनी, सांच बोलना, स्त्रीकी संगति न करनी, धनकी वांछा न रखनी, सर्व पापारंभ तजनें, परोपकार करना, पर पीडा न करनी। यह मुनिकी आज्ञा सुनकरि धर्मका स्वरूप जान राजा वैराग्यको प्राप्त भए। मुनिकों नमस्कार करि अपने पूर्व भव पूछे। चार ज्ञानके धारक मुनि श्रुतसागर

संक्षेपताकरि पूर्वभव कहते भए कि हे राजन् ! पोदनापुरविषैं हितनामा एक मनुष्य ताके माधवी नामा स्त्री ताकैं प्रतिम नामा तू पुत्र भया। अर ताही नगरविषैं राजा उदयाचल, राणी उदयश्री ताका पुत्र हेमरथ राज करै सो एक दिन जिनमंदिरविषैं महापूजा करवाई, वहपूजा आनंदकी करणहारी है सो ताके जयजयकार शब्द सुनकरि तूने भी जयजयकार शब्द किया सो पुण्य उपार्ज्या। काल पाय मुवा, अर यक्षोंमें महायक्ष हुवा। एकदिन विदेहक्षेत्रविषैं कांचनपुर नगरके वनमें मुनियोंको पूर्व भवके शत्रुने उपसर्ग किया सो यक्षने ताको डराकर भगा दिया, अर मुनिनकी रक्षा करी, सो अति पुण्यकी राशी उपार्जी। कैएक दिन आयु पूरी करि यक्ष तडिदंगद नामा विद्याधर ताकी श्रीप्रभा स्त्रीके उदित नामा पुत्र भया। अमरविक्रम विद्याधरोंके ईश वंदनाके निमित्त मुनिके निकट आये थे तिनको देखकरि निदान किया। महा तपकर दूसरे स्वर्ग जाय तहांतैं चयकर तू मेघवाहनके पुत्र हुवा। हे राजा! तूने सूर्यके रथकी नाई संसारमें भ्रमण किया। जिह्वाका लोलुपी स्त्रियोंके वशवर्ती होय तैं अनंतभव धरे। तेरे शरीर या संसारमें ऐसेव्यतीत भए जो उनको एकत्र करिए तो तीनलोकमें न समावैं। अर सागरोंकी आयु स्वर्गविषैं तेरी भई। जब स्वर्गहीके भोगनितैं तू तृप्त न भया तो विद्याधरोंके अल्प भोगनितैं तू कहा तृप्त होयगा? अर तेरा आयु भी अब आठ दिन बाकी है यातैं स्वप्न इंद्रजाल समान जे भोग तिनतैं निवृत्त होहु। ऐसा सुन अपना मरण जान्न तो हू विषादकूं न प्राप्त भया। प्रथम तो जिन-चैत्यालयविषैं बड़ी पूजा कराई, पीछैं अनंत संसारके भ्रमणतैं भयभीत होकर अपने बड़े पुत्र अमररक्षको राज देय अरु लघु पुत्र भानुरक्षको युवराजपद देय आप परिग्रहको त्यागकरि तत्त्वज्ञानविषैं मग्न होय पाषाणके थंभ तुल्य निश्चल होय ध्यानमैं तिष्ठे। अर लोभकरि रहित भए खानपानका त्यागकरि शत्रुमित्रमें समान बुद्धि धार निश्चल होय कर मौनव्रतके धारक समाधिमरणकरि स्वर्गविषैं उत्तम देव भए।

अथानंतर किन्नरनाद नामा नगरीविषैं श्रीधर नामा विद्याधर राजा ताकै विद्या नामा रानी ताकै अरिंजयानामा कन्या सो अमररक्षने परणी। अर गंधर्वगीत नगरविषैं सुरसंन्निभ राजा ताकै रानी गांधारी ताकी पुत्री गंधर्वा सो भानुरक्षने परणी। बड़े भाई अमररक्षके दश पुत्र भए अर देवांगना समान छह पुत्री भई जिनके गुण ही आभूषण हैं, अर लघु भाई भानुरक्षके दश पुत्र अर छह पुत्री भई। सो उन पुत्रोंने अपने अपने नामके नगर बसाए कैसे हैं वे पुत्र? शत्रुनिके जीतनेहारे पृथिवीके रक्षक हैं। हेश्रेणिक! उन नगरोंके नाम सुनो। सन्ध्याकार १ सुवेल २ मनोह्लाद ३ मनोहर ४ हंसद्वीप ५ हरि ६ योध ७ समुद्र ८ कांचन ९ अर्धस्वर्ग १० ए दश नगर तो अमररक्षके पुत्रनिने बसाए। अर आवर्तनगर १ विघट २ अम्भाद ३ उत्कट ४ स्फुट ५ रितुग्रह ६ तट ७ तोय ८ आवली ९ रत्नद्वीप १० ये दश नगर भानुरक्षके पुत्रोंने बसाए। कैसे हैं वे नगर?

जिनमें नानाप्रकारके रत्नोंसे उद्योत होयरहा है सुवर्णकी भांति तिनकरि दैदीप्यमान वे नगर क्रीडाके अर्थि राक्षसोंके निवास होते भए, बड़े बड़े विद्याधर देशान्तरोंके वासी तहां आय महा उत्साहकरि निवास करते भए।

अथानन्तर पुत्रनिको राज देय अमररक्ष भानुरक्ष यह दोनों भाई मुनि होय महातप करि मोक्षपदकों प्राप्त भए। या भांति राजा मेघवाहनके वंशमें बड़े बड़े राजा भए। ते न्यायवंत प्रजापालन करि सकल वस्तुनितैं विरक्त होय मुनिके व्रत धारि कईएक मोक्षकों गए, कईएक स्वर्गविषैं देव भए। ता वंशविषैं एक राजा महारक्ष भए तिनकी राणी मनोवेगा ताके पुत्र राक्षस नामा राजा भए, तिनके नामते राक्षसवंश कहाया। ये विद्याधर मनुष्य हैं, राक्षस-योनि नाहीं। राजा राक्षसके राणी सुप्रभा ताके दोय पुत्र भए। आदित्यगति नामा बडा पुत्र। अर छोटा बृहत्कीर्ति ये दोऊ चंद्र सूर्य समान अन्यायरूप अन्धकारको दूर करते भए। तिन पुत्रनिको राज देय राजा राक्षस मुनि होय देवलोक गए। राजा आदित्यगति राज्य करै अर छोटा भाई युवराज हुवा, भडे भाई अदित्यगतिकी स्त्री सदनपद्मा अर छोटे भाईकी स्त्री पुष्पनखा भई। आदित्यगतिका पुत्र भीमप्रभ भया। ताकै हजार राणी देवांगना समान अर एकसौ आठ पुत्र भए सो पृथ्वीके स्तंभ होते भए। उनमें बड़े पुत्रको राज्य देय राजा भीमप्रभ वैराग्यको प्राप्त होय परमपदको प्राप्त भए। पूर्वे राक्षसनिके इंद्र भीम सुभीमने कृपाकर मेघवाहनको राक्षसद्वीप दिया सो मेघवाहनके वंशमें बड़े बड़े राजा राक्षसद्वीपके रक्षक भए, भीमप्रभका बडा पुत्र पूजार्ह, सो हू अपने पुत्र जितभास्करकों राज्य देय मुनि भए। अर जितभास्कर संपरिकीर्ति नामा पुत्रकोंराज्य देय मुनि भए, अर संपरिकीर्ति सुग्रीव नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। सुग्रीव हरिग्रीवको राज्य देय उग्रतप करि देवलोक गया। अर हरिग्रीव श्रीग्रीवकोंराज्य देय वैराग्यको प्राप्त भए। अर श्रीग्रीव सुमुख नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। अपने बडों होका मार्ग अंगीकार किया अर सुमुख भी सुव्यक्तको राज देय आप परम ऋषि भए। अर सुव्यक्त अमृतवेगकों राज देय वैरागी भए, अर अमृतवेग भानुगतिको राज देय यति भए। अर वे हू चिंतागतिको राज देय निश्चिन्त भए अर मुनिव्रत आदरते भये, चिन्तागति भी इंद्रको राज देय मुनींद्र भए। या भांति राक्षसवंशमें अनेक राजा भए। तथा राजा इंद्रके इंद्रप्रभ ताकै मेघ ताकै मृगारिदमन, ताकै पवि, ताकै इंद्रजीत, ताकै भानुवर्मा, ताकै भानु, सूर्यसमान तेजस्वी ताकै मुरारी, ताकै त्रिजित् ताकै भीम, ताकै मोहन, ताकै उद्धारक, ताकै रवि, ताकै चाकर, ताकै वज्रमध्य, ताकै प्रबोध, ताकै सिंहविक्रम, ताकै चामुंड, ताकै मारण, ताकै भीष्म, ताकै द्युपवाहु, ताकै अरिमदन, ताकै निर्वाणभक्ति, ताकै उग्रश्री, ताकै अर्हद्भक्त, ताकै अनुत्तर ताकै गतभ्रम, ताकै अनिल, ताकै लंक, ताकै चंड, ताकै मयूरवान, ताकै महाबाहु, ताकै मनोरम्य, ताकै भास्करप्रभ, ताकै बृहद्गति, ताकै बृहत्कांत अर ताकै अरिसंत्रास, ताकै चंद्रावर्त, ताकै

महारव, ताकै मेघध्वान, ताकै ग्रहक्षोभ, ताकै नक्षत्रदमन या भांति कोटिक राजा भए । बड़े विद्याधर महाबलकरि मंडित महाकांतिके धारी पराक्रमी परदाराके त्यागी, निज स्त्रीमें है संतोष जिनके, ऐसे लंकाके स्वामी, महासुंदर, अस्त्र शस्त्र कलाके धारक, स्वर्गलोकके आए अनेक राजा भए । ते अपने पुत्रनिकों राज देय जगततैं उदास होय जिनदीक्षा धारि कईएक तो कर्म-काटि निर्वाणको गए, जो तीन लोकका शिखर है । अर कईएक राजा पुण्यके प्रभावतैं प्रथम स्वर्गकों आदि देय सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त प्राप्त गए । या भांति अनेक राजा व्यतीत भए, जैसैं स्वर्गविषैं इंद्र राज्य करै लंकाका अधिपति घनप्रभ ताकी राणी पद्माका पुत्र कीर्त्तिधवल प्रसिद्ध भया । अनेक विद्याधर जिसके आज्ञाकारी । जैसे स्वर्गमें इंद्र राज करै तैसे लंकामें कीर्त्तिधवल राज करता भया । या भांति पूर्वभवविषैं किया जो तप ताके बल करि यह जीव देवगतिके तथा मनुष्यगतिके सुख भोगवै हैं । अर सर्वत्यागकर महाव्रत धरि आठ कर्म भस्म करि सिद्ध होय हैं अर जे पापी जीव खोटे कर्मनिविषैं आसक्त हैं ते या ही भवविषैं लोकनिंद्य होय मरकरि कुयोनिमें जाय हैं । अर अनेक प्रकार दुःख भोगवै हैं । ऐसा जान पापरूप अंधकारके हरवेको सूर्य समान जो शुद्धोपयोग ताको भजो ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषै राक्षसका कथन जाविषैं
ऐसा पांचवां अधिकार सम्पूर्ण भया ।। ५ ।।

(षष्ठम पर्व)

[बानर वंशियोंकी उत्पत्ति]

अथानंतर गौतम स्वामी कहै हैं–हे राजा श्रेणिक ! यह राक्षसवंश अर विद्याधरनिके वंशका वृत्तांत तो तुमसे कह्या, आगैं बानर वंशनिका कथन सुनो स्वर्ग समान जो विजयार्धगिरि ताकी दक्षिण श्रेणी विषैं मेघपुर नामा नगर ऊंचे महलोंसे शोभित हैं, तहाँ विद्याधरनिका राजा अतींद्र पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध भोगसंपदामें इंद्रतुल्य ताकै श्रीमती नामा रानी लक्ष्मी समान हुई । ताके मुखकी चांदनीकरि सदा पूर्णमासी समान प्रकाश होय है । ताके श्रीकंठ नामा पुत्र भया शास्त्रमें प्रवीण जिसके नामको सुनकरि विचक्षण पुरुष हर्षको प्राप्त होय । अर ताकै छोटी बहिन महा-मनोहर देवी नामा हुई, जाके नेत्र कामके बाण ही हैं ।

अथानंतर रत्नपुर नामा नगर अति सुन्दर, तहां पुष्पोत्तर नाम राजा विद्याधर महा-बलवान, ताकै पद्माभा नाम पुत्री देवांगना समान, अर पद्मोत्तर नामा पुत्र महा गुणवान, जाकै देखनेतैं अति आनन्द होय । सो राजा पुष्पोत्तर अपने पुत्रके निमित्त राजा अतींद्रकी पुत्री देवीको बहुत बार याचना करी, तो हू श्रीकंठ भाईने अपनी बहिन लंकाके धनी कीर्तिधवलकौं दीनी, अर पद्मोत्तरकौं न दीनी । यह बात सुन राजा पुष्पोत्तरने अति कोप किया, अर कहा कि देखो-

हममें कुछ दोष नाहीं, दारिद्र दोष नाहीं, मेरा पुत्र कुरूप नाहीं, अर हमारै उनकै कछु वैर भी नाहीं, तथापि मेरे पुत्रको श्रीकंठने अपनी बहिन न परणाई यह क्या युक्त किया ?

एक दिन श्रीकंठ चैत्यालयनिकी वंदनाके निमित्त सुमेरु पर्वत पर विमानमैं बैठकर गये। कैसा है विमान पवन समान वेगवाला अर अतिमनोहर है, सो वन्दनाकर आवते हुते, मार्गमें पुष्पोत्तरकी पुत्री पद्माभाका राग सुण्या अर वीनका बजाना सुण्या। कैसा है राग मन और श्रोत्रका हरनहारा सो राग सुन मन मोहित भया। तब अवलोकन किया सो गुरु समीप संगीत-गृहविषैं वीण बजावती पद्माभा देखी। ताके रूपसमुद्रविषैं उसका मन मग्न होगया, मनकूं काढ़िवेको असमर्थ भया, वाकी ओर देखता रह्या। अर यह भी अति रूपवान, सो याके देखवेकरि वह भी मोहित भई। ये दोनों परस्पर प्रेमसूतकरबन्धे सो वाका मन जान श्रीकंठ ताहि आकाशमैं लेय चल्या, तब परिवारके लोगोंने राजा पुष्पोत्तरपै पुकार करी कि तुम्हारी पुत्रीको राजा श्रीकंठ ले गया। सो राजा पुष्पोत्तरके पुत्रको श्रीकंठने अपनी बहिन न परणाई, ताकरि वह क्रोधरूप था ही। अब अपनी पुत्रीके हरवेकरि अत्यन्त कुपित होय सब सेना लेय श्रीकंठके मारवेकूं पीछे लग्या। दांतनिकरि होंठनिको पीसता क्रोधकरि जिसके नेत्र लाल होरहे हैं, ऐसे महाबलीको आवते देख श्रीकंठ डरया, अर भाजकर अपने बहनेऊ लंकाके धनी कीर्तिधवलकी शरण आया, सो समय पाय बड़ोंके शरणै जाय यह न्यायही है। राजा कीर्तिधवल श्रीकंठको देखि अपना साला जान बहुत स्नेह करि सामां आय मिल्या, छातीसों लगाय बहुत सन्मान किया। इनमें आपसमें कुशल वार्ता हो रही थी कि पुष्पोत्तर सेना सहित आकाशमें आये। कीर्तिधवलने उनको दूरतैं देख्या राजा पुष्पोत्तरके संग अनेक विद्याधरोंके समूह महा तेजवान हैं खड्ग, सेल, धनुष बाण इत्यादि शास्त्रनिके समूहकरि आकाशमैं तेज होय रह्या है, ऐसे मायामई तुरंग वायुके समान है वेग जिनका, अर काली घटा समान मायामई गज चलायमान है घंटा अर सूंड जिनकी, मायामई सिंह, अर बड़े २ विमान तिनकरि मंडित आकाश देख्या। उत्तर दिशाकी ओर सेनाका समूह देख राजा कीर्तिधवल क्रोधसहित हंसकर मंत्रियोंको युद्ध करनेकी आज्ञा दीनी। तब श्रीकंठ लज्जातैं नीचे होय गए अर श्रीकंठने कीर्तिधवलसे कह्या जो मेरी स्त्री अर मेरे कुटुम्बकी तो रक्षा आप करो, अर मैं आपके प्रतापतैं युद्धमैं शत्रुनिको जीत आऊंगा। तब कीर्तिधवल कहते भये कि यह बात तुझको कहना अयुक्त है, तुम सुखसों तिष्ठो युद्ध करनेको हम घनें ही हैं। जो यह दुर्जन नरमीतैं शांत होय तौ भला ही है, नहीं तो इनको मृत्युके मुखमैं देखोगे ऐसा कहि अपने स्त्रीके भाईको सुखसैं अपने महलमैं राखि पुष्पोत्तरके निकट बड़ी बुद्धिके धारक दूत भेजे। ते दूत जाय पुष्पोत्तरसों कहते भए जो हमारे मुखतैं तुमको राजा कीर्तिधवल बहुत आदरतैं कहै है कि तुम बड़े कुलमें उपजे हो, तुम्हारी चेष्टा निर्मल है, तुम सर्व शास्त्रके वेत्ता हो, जगत्-

में प्रसिद्ध हो, अर सबनिमैं वयकर बड़े हो, तुमने जो मर्यादाकी रीति देखी है सो काहूने कान-निसे सुनी नाहीं। यह श्रीकंठ हू चंद्रमाकी किरण समान निर्मल कुलविषैं उपज्या है, अर धन-वान है, विनयवान है, सुन्दर है, सर्वकलामैं निपुण है। यह कन्या ऐसे ही वरको देने योग्य है, कन्याके अर याके रूप अर कुल समान हैं, तातैं तुम्हारी सेनाका क्षय कौन अर्थ करावना? यह तो कन्यानिका स्वभाव ही है कि जो पराए गृहका सेवन करैं। दूत जब लग यह बात कह ही रहे थे कि पद्माभाकी भेजी सखी पुष्पोत्तरके निकट आई, अर कहती भई कि तुम्हारी पुत्रीने तुम्हारे चरणारविन्दको नमस्कार कर वीनती करी है जो मैं तो लज्जा करि तुम्हारे समीप नहीं आई, तातैं सखीको पठाई है 'हे पिता, या श्रीकंठका रंचमात्र हू दूषण नाहीं, अल्प हू अपराध नाहीं, मैं कर्मानुभवकरि याके संग आई हूँ। जे बड़े कुलमें उपजी स्त्री हैं तिनके एक ही वर होय है, तातैं या टालि (इसके सिवाय) मेरे अन्य पुरुषका त्याग है। ऐसैं आय सखीने वीनती करी, तब राजा सचिंत होय रहे, मनमें विचारी कि मैं सर्व बातोंमें समर्थ हूँ, युद्धमें लंकाके धनीको जीत श्रीकंठको बांधकर ले जाऊं; परन्तु मेरी कन्याहीने इसको वरया तो मैं याकूं कहा कहू? ऐसा जान युद्ध न किया। अर जो कीर्तिधवलके दूत आये हुते, तिनको सन्मान करि विदा किये। अर जो पुत्रीकी सखी आई थी ताको भी सन्मानकर विदा दीनी। ते हर्ष करि भरे लंकाकों अर राजा पुष्पोत्तर सर्व अर्थके वेत्ता पुत्रीकी वीनतीतैं श्रीकंठ पर क्रोध तजि अपने स्थानकों गए।

अथानंतर मार्गशिर सुदी पड़वाके दिन श्रीकंठ अर पद्माभाका विवाह भया। अर कीर्तिधवलने श्रीकंठसों कही जो 'तुम्हारे वैरी विजयार्धमें बहुत हैं, तातैं तुम इहां ही समुद्रके मध्यमें जो द्वीप है तहां तिष्ठो' तुम्हारे मनको जो स्थानक रुचै सो लेवो, मेरा मन तुमको छाँड़ि नाहीं सकै है। अर तुमहू मेरी प्रीतिका बंधन तुड़ाय कैसैं जावोगे? ऐसैं श्रीकंठसों कहिकर अपने आनंदनामा मंत्रीसों कही 'जो तुम महाबुद्धिमान् हो अर हमारे दादेके मुंह आगिले हो तुमतैं सार असार किछू छाना नाहीं। या श्रीकंठके योग्य जो स्थानक होय सो बताओ। तदि आनंद कहते भए कि—महाराज आपके सब ही स्थानक मनोहर हैं तथापि आप ही देखकरि जो दृष्टिमें रुचै सो देहु। समुद्रके मध्यमें बहुत द्वीप हैं, कल्पवृक्षसमान वृक्षोंसे मंडित, जहां नाना प्रकारके रत्न-निकरि शोभित बड़े बड़े पहाड़ हैं। जहां देव क्रीड़ा करैं हैं, तिन द्वीपोंमें महारमणीक नगर हैं, जहां स्वर्ण रत्ननिके महल हैं सो तिनके नाम सुनहु। संध्याकार, सुबेल, कांचन, हरिपुर, जोधन, जलधिध्वान, हंसद्वीप, भरक्षमठ अर्धस्वर्ग, कूटावर्त, विघट, रोधन, अमलकांत, स्फुटतट, रत्नद्वीप, तोयावली, सर अलंघन, नभोभान, क्षेम इत्यादि मनोज्ञ स्थानक हैं। जहां देव भी उपद्रव न कर सकैं। यहांतैं उत्तर भागविषैं तीनसौ योजन समुद्रके मध्य वानरद्वीप है जो पृथ्वीमें प्रसिद्ध है, जहां अवांतरद्वीप बहुत ही रमणीक हैं। कईएक तो सूर्यकांति मणिनकी ज्योतिसैं

दैदीप्यमान हैं। अर कईएक हरितमणिनिकी कांतिकरि ऐसे शोभै हैं मानो उगते हरे तृणोंसे भूमि व्याप्त होय रही है। अर कईएक श्याम इंद्रनीलमणिकी कांतिके समूहसे ऐसे शोभ हैं मानो सूर्यके भयतैं अंधकार वहां शरण आयकरि रहा है। अर कहूं लाल जे पद्मरागमणिनके समूहकरि मानों रक्त कमलोंका वन ही शोभै है। अर जहां ऐसी सुगंध पवन चालै है कि आकाशमें उडते पक्षी भी सुगंधसे मग्न होय जाय हैं। अर तहां वृक्षनिपर आय बैठै हैं। अर स्फटिकमणिनिके मध्य मिली जो पद्मरागमणि तिनकरि सरोवरमें कमल जाने जांय हैं। उन मणिनिकी ज्योति करि कमलनिके रंग न जाने जाय हैं। जहां फूलनिकी बासतैं पक्षी उन्मत्त भए ऐसै मधुर सुंदर शब्द करैं हैं मानों समीपके द्वीपनिसौं अनुराग भरी बातें करैं हैं। जहां औषधिनिकी प्रभाके समूहकरि अंधकार दूर होय है, सो अंधारे पक्षमें भी उद्योत ही रहै है। जहां फल पुष्प-निकरि मंडित वृक्षोंका आकार छत्र समान है। जिनकी बड़ी बड़ी डालैं हैं उनपर पक्षी मिष्ट शब्द कर रहे हैं। जहां विना वाहे धान आपसे ही उगैं हैं, कैसे हैं वे धान? वीर्य अर कांतिको विस्ती-रणहारे सो मंद पवनकरि हिलते हुए शोभै हैं। तिनकरि पृथ्वी मानों कंचुकी (चोली) पहरे है। अर जहां लालकमल फूल रहै हैं जिनपर भ्रमरोंके समूह गुंजार करैं हैं सो मानो सरोवरी ही नेत्रनिकरि पृथ्वीका विलास देखै है। नीलकमल तो सरोवरीनके नेत्र भए, अर भ्रमर भोहैं भए। जहां पौंढे अर सांठानिकी विस्तीर्ण वाड हैं। सो पवनकरि हालनेतैं शब्द करैं हैं ऐसा सुंदर बानरद्वीप है, उसके मध्यविषैं किहकुंदा नामा पर्वत है। वह पर्वत रत्न अर स्वर्णकी शिलाके समूहकरि शोभायमान है। जैसा यह त्रिकूटाचल मनोज्ञ है तैसा ही किहकुंद पर्वत मनोज्ञ है। अपने शिखरनिकरि दिशारूपी कांताको स्पर्श करै है। आनंद मंत्रीके ऐसे वचन सुनकर राजा कीर्तिधवल बहुत आनंद रूप भए। अर बानरद्वीप श्रीकंठको दिया। तब चैत्रके प्रथम दिन श्रीकंठ परिवारसहित बानरद्वीपमें गए। मार्गमें पृथ्वीकी शोभा देखते चले जांय हैं वह पृथ्वी नीलमणिनिकी ज्योतिकरि आकाश समान शोभै है अर महाग्रहोंके समूहकरि संयुक्त समुद्रको देखि आश्चर्यको प्राप्त भए, बानरद्वीप जाय पहुंचे। बानरद्वीप मानों दूसरा स्वर्ग ही है। अपने नीझ-रनोंके शब्दसे मानों राजा श्रीकंठको बुलावै ही है। नीझरनेके छींटे आकाशको उछलैं हैं सो मानों राजाके आवेकरि अति हर्षको प्राप्त भए। आनंदकरि हंसै हैं। नानाप्रकारकी मणिनिकी कांतिकरि उपज्या जो कांतिका सुंदर समूह ताकरि मानों तोरणनिके समूह ही ऊंचे चढ़ रहे हैं। अब राजा बानरद्वीपमें उतरे, अर सर्वओर चौगिरद अपनी नीलकमलसमान दृष्टि सर्वत्र विस्तारी। छुहारे, आंवले, कैथ, अगरचंदन, लाख, पीपरली, अर्जुन, कहिए सहीजणां, अर कदंब, आंमली, चारोली, केला, दाडिम, सुपारी, इलायची, लवंग, मौलश्री अर सर्व जातिके मेवोंसे युक्त नाना-प्रकारके वृक्षनिकरि द्वीप शोभायमान देख्या, ऐसी मनोहर भूमि देखी, जिसके देखे और ठौर दृष्टि

न जाय । जहां वृक्ष सरल अर विस्तीर्ण ऊपरि छत्रसे बन रहे हैं । सघन सुंदर पल्लव अर शाखा फूलनिके समूहकरि शोभै हैं अर महा रसीले स्वादिष्ट मिष्ट फलनिकरि नम्रीभूत होय रहे हैं अर वृक्ष अति रसीले, अति ऊंचे हू नाहीं, अति नीचे हू नाहीं, मानों कल्पवृक्ष ही शोभैं हैं । अर जहां बेलनिपर फूलोंके गुच्छे लग रहे हैं, जिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं सो मानों यह बेलि तो स्त्री है, उनके जो पल्लव हैं सो हाथोंकी हथेली हैं, अर फूलोंके गुच्छे कुच हैं, अर भ्रमर नेत्र हैं वृक्षोंसे लग रहे हैं । अर ऐसे ही तो सुंदर पक्षी बोलैं हैं अर ऐसे ही मनोहर भ्रमर गुंजार करैं हैं मानों परस्पर आलाप करैं हैं । जहां कईएक देश तो स्वर्णसमान कांतिकों धरैं हैं, कई-एक कमल समान, कईएक वैडूर्य मणि समान हैं । ते देश नानाप्रकारके वृक्षनिकरि मंडित है जिनको देखकर स्वर्णभूमि हू नहीं रुचै है । जहां देव क्रीड़ा करैं हैं, जहां हस सारिस, सूवा, मैना, कबूतर, कमेड़ी इत्यादि अनेक जातिके पक्षीनिके युगल क्रीड़ा करैं हैं, जहां हंस सारिस, सूवा, कबूतर, कमेड़ी इत्याद अनेक जातिके पक्षीनिके युगल कीड़ा करैं हैं. जीवनिकों किसी प्रकारकी बाधा नाहीं । नाना प्रकारके वृक्षनिकी मंडप. रत्न स्वर्णके अनेक निवास पुष्पनिकी अति सुगंधी, ऐसे उपवनमें सुंदर शिलानिके ऊपर राजा विराजे । अर सेना भी सकल वनमें उतरी । हंसों, मयूरोंके नाना प्रकारके शब्द सुने अर फल फुलोंकी शोभा देखी । सरोवरनिमें मीन केलि करते देखे । वृक्षोंके फूल गिरैं हैं अर पक्षियोंके शब्द होय रहे हैं सो मानों वह वन राजाके आवनेतैं फूलनिकी वर्षा ही करै है अर जयजयकार शब्द करै है । नानाप्रकारके रत्ननिकरि मंडित पृथ्वीमंडलकी शोभा देखि विद्याधरनिका चित्त बहुत सुखी भया । बहुरि नंदनवन सारिखा वह वन तामैं राजा श्रीकंठने क्रीड़ा करते संते बहुत बानर देखे । जिनकी अनेक प्रकारकी चेष्टा हैं, राजा देखिकरि मनमें चिंतवने लगा कि–तिर्यंच योनिके ये प्राणी मनुष्य समान लीला करैं हैं । जिनके हाथ पग सर्व आकार मनुष्यकासा है सो इनकी चेष्टा देखि राजा थकित होय रहे । निकटवर्ती पुरुषनिसों कही जो 'इनको मेरे समीप लाओ' सो राजा-की आज्ञातैं कईएक बानरनिकों पकरि लाए, सो राजाने उनको बहुत प्रीतिसौं राखे । अर तिनि-को नृत्य करणा सिखाया, अर उनके सफेद दांत दाडिमके फूलनिसों रंगकर तमाशे देखे अर उनके मुखमें सोनेके तार लगाय लगाय कौतूहल करावता भया । वे आपसमें परस्पर जूंवां काढैं, तिनके तमाशे देखे अर वे आपसमें स्नेह करैं वा कलह करैं, तिनके तमाशे देखे । राजाने ते कपि, पुरुषनिकूं रक्षा निमित्त सोंपे, अर मीठे मीठे भोजनकरि तिनकों पोखे । तिन बानरोंको साथ लेकर किहकुंद पर्वत पर चढे । राजाका चित्त सुंदर वृक्ष, सुंदर बेलि, पानीके नीझरणोंसे हरा गया । तहां पर्वतके ऊपर विषमतारहित विस्तीर्ण भूमि देखी । तहां किहकुंद नामा नगर बसाया । कैसा है वह नगर जहां बैरियोंका मन भी प्रवेश न कर सकै, चौदह योजन लंबा, अर

चौदह योजन चौडा, अर जो परिक्रमा करिए तो वियालीस योजन कछुइक अधिक होय। जाके मणियोंके कोट, रत्नोंके दरवाजे वा रत्नोंके, महल, रत्नोंका कोट इतना ऊंचा है कि अपने शिखरकरि मानो आकाशसों ही लग रह्या है। अर दरवाजे ऊंचे मणियोंसे ऐसे शोभैं हैं मानो यह अपनी ज्योतिसे थिरीभूत होय रहे हैं। घरनिकी देहली पद्मराग मणिनकी है सो अत्यंत लाल है मानो यह नगरी नारी स्वरूप है सो तांबूलकरि अपने अधर (होंठ) लाल कर रही है। अर दरवाजे मोतिनकी मालाकरि युक्त हैं सो मानों समस्त लोककी संपदाको हंसै हैं अर महलनिके शिखरनि पर चंद्रकांति मणि लगि रही हैं सो रात्रिमैं ऐसा भासै है मानो अंधेरी रात्रिमैं चंद्र उग रहा है। अर नाना प्रकारके रत्नोंकी प्रभाकी पंक्ति करि मानो ऊंचे तोरण चढ़ रहे हैं। तहां घरनिकी पंक्ति विद्याधरनिकी बनाई हुई बहुत शोभै है। घरनिके चौक मणिनके हैं अर जहां नगरके राजमार्ग बाजार बहुत सीधे हैं, तिनमें वक्रता नहीं। अति विस्तीर्ण है मानो रत्ननिके सागर ही हैं। सागर जलरूप हैं, यह स्थलरूप है। अर मंदिरनिके ऊपर लोगोंने कबूतरनिके निवास निमित्त स्थान कर राखे हैं। सो कैसे शोभैं हैं? मानों रत्ननिके तेजने अंधकार नगरीतैं काढ दिया है, सो शरण आयकर समीप पड्या है इत्यादि नगरका वर्णन कहां तक करिए। इंद्रके नगरके समान वह नगर जिसमें राजा श्रीकंठ पद्माभा रानीसहित जैसैं स्वर्गविषैं शचीसहित सुरेश रमै है, तैसैं बहुतकाल रमते भए। जे वस्तु भद्रशालवनमें तथा सौमनसवनमें तथा नंदनवनमें न पाइए ते राजाके वनमें पाई जावें।

एक दिन राजा महल ऊपर विराज रहे थे सो अष्टान्हिकाके दिनोंमें इंद्रको चतुरनिकायके देवनि सहित नंदीश्वरद्वीपको जाते देख्या। अर देवीनिके मुकुटनिकी प्रभाके समूहसे आकाशको अनेक रंगरूप ज्योतिसहित देख्या। अर बाजा बजानेवालोंके समूहकरि दशों दिशा शब्दरूप देखीं, किसीको किसीका शब्द सुनाई न देवै, कई एक देव मायामई हंसनिपर, तथा तुरंगनिपर, तथा हंसीनिपर अनेक प्रकारके वाहननिपर चढ़े जाते देखे, सो देवोंके शरीरकी सुगंधतासे दशोंदिशा व्याप्त होय गईं। तब राजा यह अद्भुत चरित्र देखि मनमें विचारी कि नंदीश्वर द्वीपको देव जाय हैं। यह राजा हू अपने विद्याधरों सहित नंदीश्वरद्वीपको जानेकी इच्छा करते भये। विना विवेक विमान पर चढ़करि रानीसहित आकाशके पथसे चाले। परंतु मानुषोत्तरके आगैं इनका विमान न चल सक्या, देवता चले गए, यह अटक रहे। तब राजाने बहुत विलाप किया, मनका उत्साह भंग होय गया, कांति और ही होय गई,। मन में विचारै है कि हाय! बड़ा कष्ट है, हम हीन शक्तिके धनी विद्याधर मनुष्य अभिमानको धरैं सो धिक्कार है हमको। मेरे मनमें यह हुती कि नंदीश्वर द्वीपमें भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं उनका मैं भावसहित दर्शन करूंगा, अर महा-मनोहर नानाप्रकारके पुष्प, धूप, गंध इत्यादि अष्ट द्रव्यनिकरि पूजा, करूंगा बारंबार धरती पर

मस्तक लगाय नमस्कार करूंगा इत्यादि जे मनोरथ किये हुते ते पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मकरि मेरे मंद भागीके भाग्यमें न भये। अथवा मैंने आगैं अनेक बार यह बात सुनी हुती के मानुषोत्तर पर्वतको उल्लंघ करि मनुष्य आगैं न जाय है, तथापि अत्यंत भक्ति रागकरि यह बात भूल गया। अब ऐसे कर्म करूं, जो अन्य जन्म विषैं नंदीश्वर द्वीप जानेकी मेरी शक्ति हो, यह निश्चय करि वज्रकंठ नामा पुत्रको राजदेय सर्व परिग्रहको त्याग करि राजा श्रीकंठ मुनि भए। एक दिन वज्रकंठने अपने पिताके पूर्व भव पूछनेका अभिलाष किया, वृद्ध पुरुष वज्रकंठको कहते भए कि जो हमको मुनियोंने उनके पूर्व भव ऐसे कहे हुते, जो पूर्वभवमें दो भाई वणिक हुते, तिनमें प्रीति बहुत हुती, सो स्त्रियोंने वे जुदे किए। तिनमें छोटा भाई दरिद्री अर बड़ा भाई धनवान् सो बड़ा भाई सेठकी संगतितैं श्रावक भया अर छोटा भाई कुव्यसनी दुखसौं दिन पूरे करै। बड़े भाईने छोटे भाईकी यह दशा देखि बहुत धन दिया अर भाईको उपदेश देय व्रत लिवाए। अर आप स्त्रीका त्यागकर मुनि होय समाधिमरण करि इंद्र भए। अर छोटा भाई शांत परिणामी होय शरीर छोड़ देव हुवा। देवसे चयकरि श्रीकंठ भया, बड़े भाईका जीव इंद्र भया था, सो छोटे भाईके स्नेहतैं अपना स्वरूप दिखावता संता नंदीश्वर द्वीप गया, सो इंद्रको देखि राजा श्रीकंठको जातिस्मरण हुवा सो वैरागी भए। यह अपने पिताका व्याख्यान सुन राजा वज्रकंठहू इन्द्रायुधप्रभ पुत्रको राज देय मुनि भए। अर इंद्रायुधप्रभ भी इंद्रभूत पुत्रकौं राज्य देय मुनि भए, तिनकै मेरु, मेरुकै मंदिर, तिनकै समीरणगति, तिनकै रविप्रभ, तिनकै अमरप्रभ पुत्र हुआ, सो लंकाके धनीकी बेटी गुणवती परणी, सो गुणवती राजा अमरप्रभके महलमें अनेक भांतिके चित्राम देखती भई। कहीं तो शुभ सरोवर देखे जिनमें कमल फूल रहे हैं, अर भ्रमर गुंजार करै हैं। कहीं नीलकमल फूल रहे है, हँसके युगल क्रीड़ा कर रहे हैं जिनकी चूंचनिमें कमलनिके तंतु ऐसे हंसनिके युगल क्रीडा करै हैं। अर क्रोंच, सारस इत्यादि अनेक पक्षियोंके चित्राम देखे, सो प्रसन्न भई। अर एक ठौर पंच प्रकारके रत्नोंके चूर्णसे बानरोंके स्वरूप देखे, विद्याधरोंने चितेरे हैं सो राणी बानरोंके चित्राम देखि भयभीत होय कांपने लगी। रोमांच होय आए। पसेवकी बूंदोंसे माथेका तिलक बिगड गया, अर आंखोंके तारे फिरने लगे, राजा अमरप्रभ यह वृत्तांत देखि घरके चाकरोंसे बहुत खिजे कि मेरे विवाहमें ये चित्राम किसने कराए। मेरी प्यारी राणी इनको देखि डरी। तब बड़े लोगोंने अरज करी कि महाराज! इसमें किसीका भी अपराध नाहीं, आपनैं कही जो यह चित्राम कराणेहारेने हमको विपरीत भाव दिखाया सो ऐसा कौन है जो आपकी आज्ञा सिवाय काम करै? सबनिके जीवनमूल आप हो, आप प्रसन्न होय करि हमारी विनती सुनो। आगैं तुम्हारे वंशमें पृथ्वीपर प्रसिद्ध राजा श्रीकंठ भए। जिनने यह स्वर्ग समान नगर बसाया। अर नानाप्रकारके कौतूहलका धारणहारा जो यह देश ताके वे मूलकारण ऐसे

होते भए जैसैं कर्मोंका मूलकारण रागादिक प्रपंच है। वननिके मध्य लतागृहमें सुखसों तिष्ठी हुई किन्नरी जिनके गुण गावै है, अर किन्नर हू गावै हैं, इन्द्र समान जिनकी शक्ति थी ऐसे वे राजा तिन्होंने अपनी स्थिर प्रकृतितैं लक्ष्मीकी चंचलता करि उपज्या जो अपयश सो दूर किया सो राजा श्रीकंठ इन बानरोंको देखकरि आश्चर्यको प्राप्त भए अर इन सहित रमें, मीठे २ भोजन इनको दिये, अर इनके चित्राम कढाये। पीछैं उनके वंशमें जो राजा भए तिनने मंगलीक कार्योंमें इनके चित्राम मँडाए, अर बानरनिसौं बहुत प्रीत राखी, तातैं पूर्वरीतिप्रमाण अब हू लिखे हैं। ऐसा कह्या तब राजा क्रोध तजि प्रसन्न होय आज्ञा करते भये जो हमारे बड़ेनिने मंगलकार्यमें इनके चित्राम लिखाए तो अब भूमिमें मत डारो जहां मनुष्यनिके पांव लगैं। मैं इनको मुकुटविषैं राखूंगा, अर ध्वजावोंमें इनके चिन्ह कराओ, अर महलोंके शिखर तथा छत्रोंके शिखरपर इनके चिन्ह करावो। यह आज्ञा मंत्रियोंको करी, सो मंत्रियोंने उस ही भांति किया। राजाने गुणवती राणीसहित परम सुख भोगते हुए विजयार्धकी दोऊ श्रेणीके जीतनेका मन किया। बड़ी चतुरंग सेना लेकर विजयार्ध गये। राजाकी ध्वजाओंमें अर मुकुटोंमें कपिनिके चिन्ह हैं। राजाने विजयार्ध जाय करि दोऊ श्रेणी जीत करि सब राजा वस किए। सर्व देश अपनी आज्ञामें किए। किसीका भी धन न लिया। जो बड़े पुरुष हैं तिनका यह व्रत है जो राजानिको नवावैं, अपनी आज्ञामें करैं, किसीका धन न हरैं। सो राजा सब विद्याधरनिकों आज्ञामें करि पीछे किहकूपुर आए। विजयार्धके बड़े २ राजा साथ आए। सब विद्याधरोंका अधिपति होय घनें दिनतक राज्य किया। लक्ष्मी चंचल हुती सो नीतिकी बेड़ी डालि निश्चल करी। तिनके पुत्र कपिकेतु भए जिनके श्रीप्रभा राणी बहुत गुणकी धरणहारी। ते राजा कपिकेतु अपने पुत्र विक्रमसंपन्नको राज्य देय वैरागी भए अर विक्रमसम्पन्न प्रतिबल पुत्रको राज्य देय वैरागी भए। यह राज्यलक्ष्मी विषकी बेलिके समान जानो। बडे पुरुषोंके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावकरि यह लक्ष्मी बिना ही यत्न मिलै है; परन्तु उनके लक्ष्मीमें विशेष प्रीति नाहीं। लक्ष्मीको तजते खेद नाहीं होय है। किसी पुण्यके प्रभावकरि राज्यलक्ष्मी पाय देवोंके सुख भोग फिर वैराग्यको प्राप्त होय करि परमपदको प्राप्त होय है। मोक्षका अविनाशी सुख उपकरणादि सामग्रीके आधीन नाहीं, निरंतर आत्माधीन है। वह महासुख अंतररहित है, अविनश्वर है। ऐसे सुखको कौन न वांछै? राजा प्रतिबलके गगनानंद पुत्र भए, तिनके खेचरानन्द, उसके गिरिनन्द। याभांति बानरवंशियोंके वंशमें अनेक राजा भये जो राज्य तजि वैराग्य धर स्वर्ग मोक्षको प्राप्त भए। इस वंशके समस्त राजाओंके नाम अर पराक्रम कौन कह सकै। जिसका जैसा लक्षण होय सो तैसा ही कहावै। सेवा करै सो सेवक कहावै, धनुष धारै सो धनुषधारी कहावै, परकी पीड़ा टालै सो शरणागति प्रतिपाल होय क्षत्री कहावै, ब्रह्मचर्य पालै सो ब्राह्मण कहावै, जो राजा राज्य तजिकर मुनि होय सो मुनि कहावै,

श्रम कहिये तप धारै सो श्रमण कहावै। यह बात प्रगट ही है लाठी राखै सो लाठीवाला कहावै, सेल राखै सो सेलवाला कहावै, तैसैं यह विद्याधर छत्र ध्वजाओंपर बानरोंके चिन्ह राखते भये तातैं बानरवंशी कहाये। भगवान श्रीवासुपूज्यके समय राजा अमरप्रभ भए तिनने बानरोंके चिह्न मुकुट छत्र ध्वजानिमें बनाए, तबतैं इनके कुलमें यह रीति चली आई,। या भान्ति संक्षेपतैं बानर-वंशीनिकी उत्पत्ति कही।

* अथानंतर या कुलविषैं महोदधि नामा राजा भये। जिनके विद्युतप्रकाश नामा राणी भई, वह राणी पतिव्रता स्त्रियोंके गुणनिकी निधान है। जिसने अपने विनय अंगकरि पतिका मन प्रसन्न किया है। राजाके सुन्दर सैकड़ों रानी हैं, तिनकी यह रानी शिरोभाग्य है। महा सौभाग्यवती रूपवती ज्ञानवती है, तिस राजाके महापराक्रमी एक सौ आठ पुत्र भये, तिनको राज्यका भार देय राजा महासुख भोगते भये। मुनि सुव्रतनाथके समयमें बानरवंशीनिमें यह राजा महोदधि भये। अर लंकामें विद्युतकेशके अर महोदधिके परम प्रीति भई। कैसे हैं ये दोऊ सकल प्राणियोंके प्यारे अर आपसमें एक चित्त, देह न्यारी भई तो कहा। सो विद्युतकेश मुनि भये, यह वृत्तान्त सुन महोदधि भी वैरागी भये। यह कथा सुन राजा श्रेणिकने गौतम स्वामीसौं पूछी—"हे स्वामी! राजा विद्युतकेश किस कारणसे वैरागी भये? तब गौतम स्वामीने कहा कि एक दिन विद्युतकेश प्रमदानामा उद्यानमें क्रीड़ा करनेको गये। कैसा है उद्यान जहाँ क्रीड़ाके निवास अति सुन्दर हैं, निर्मल जलके भरे सरोवर हैं तिनमें कमल फूल रहे हैं अर सरोवरनिमें नावैं डार राखी हैं। वनमें ठौर ठौर हिंडोले हैं, सुन्दर वृक्ष सुन्दर बेल अर क्रीड़ा करनेके सुवर्णके पर्वत, जिनके रत्नोंके सिवाण, वृक्ष मनोज्ञ फल फूलनिकरि मंडित, जिनके पल्लवसौं हालती लता अति शोभै हैं अर लताओंसे लपटि रहे हैं ऐसे वनमें राजा विद्युतकेश राणियोंके समूह विषैं क्रीड़ा करते हुए। कैसी है वह राणी मनकी हरणहारी पुष्पादिकके चूटनेमें आसक्त हैं जिनके पल्लव समान कोमल सुगंध हस्त, अर मुखकी सुगन्ध करि भ्रमर जिनपर भ्रमैं हैं। क्रीड़ाके समय राणी श्रीचन्द्राके कुच एक बानरने नखनितैं विदारै, तदि रानी खेद-खिन्न भई। रुधिर आय गया। राजाने रानीको दिलासा देय करि अज्ञानभावतैं बानरको बाणतैं बीध्या, सो बानर घायल होय एक गगनचारण महामुनिके पास जाय पड्या। वे दयालु बानरको कांपता देखि दयाकरि पंचणमोकार मन्त्र देते भये, सो बानर मरकरि उदधिकुमार जातिका भवनवासी देव उपज्या। यहाँ वनमें बानरके मरण पीछैं राजाके लोक अन्य बानरोंको मार रहे थे सो उदधिकुमारने अवधि-से विचारकर बानरोंको मारते जान मायामई बानरोंकी सेना बनाई। वे बानर ऐसे बने जिनकी दाढ विकराल, वदन विकराल, भौंह विकराल, सिंदूर सारिखा लाल मुखसौं डरानेवारे शब्दको कहते हुए आये। कैएक हाथमें पर्वत धरैं, कैएक मूलसे उपारे वृक्षोंको धरैं, कैएक हाथनिसौं

धरती कूटते संते, कईएक आकाशमें उछलते संते, क्रोधके मारकरि रौद्र है अंग जिनका, उन्होंने आय राजाको घेरथा कहते भये, अरे दुराचारी सम्हार, तेरी मृत्यु आई है तू बानरोंकू मारकरि अब किसकी शरण जायगा ?

तब विद्युतकेश डरथा अर जान्या कि यह बानरोंका बल नाहीं, देवमाया है, तब देहकी आशा छोड़ि महामिष्ट वाणी करके विनती करता भया कि—"महाराज ! आज्ञा करो, आप कौन हो, महादेदीप्यमान प्रचंड शरीर जिनके, यह बानरनिकी शक्ति नाहीं । आप देव हैं ।" तब राजाको अति विनयवान देखि महोदधि कुमार बोले "हे राजा ! बानर पशु जाति जिनका स्वभाव ही अति चंचल है उनको तैंने स्त्रीके अपराधसौं हते, सो मैं साधुके प्रसादसे देव भया । मेरी विभूति तू देखि ।" राजा कांपने लगया, हृदयविषैं भय उपज्या, रोमांच होय आए । तब महोदधि कुमारने कही—"तू मत डर ।" तब इसने कहा कि "जो आप आज्ञा करो सो करूं ।" तब देव इसको गुरुके निकट लेय गया । वह देव अर राजा ये दोनों मुनिकी प्रदक्षिणा देय नमस्कार करि जाय बैठे । देवने मुनिसों कहा कि—"मैं बानर हुता सो आपके प्रसादतैं देव भया । अर राजा विद्युतकेशने मुनिसौं पूछया कि मुझे क्या कर्तव्य है, मेरा कल्याण किस तरह होय ? तबि मुनि चार ज्ञानके धारक हुते सो तपोधन कहते भए कि हमारे गुरु निकट ही हैं उनके समीप चालो । अनादिकालका यही धर्म है कि गुरुओंके निकट जाय धर्म सुनिये । आचार्यनिके होते संते जो उनके निकट न जाय, अर शिष्य ही धर्मोपदेश देय तो वह शिष्य नहीं, कुमार्गी हैं आचारसे भ्रष्ट हैं । ऐसा तपोधनने कहा । तब देव अर विद्याधर चित्तमें चिंतवते भये कि ऐसे महा पुरुष हैं ते भी गुरुकी आज्ञा बिना उपदेश नाहीं करैं हैं । अहो ! तपका माहात्म्य अति अधिक है । मुनिकी आज्ञासे वह देव अर विद्याधर मुनिके लार मुनिके गुरुपै गये । तहां जाय करि तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कार करि गुरुके निकट न अति नीरे, न घने दूर बैठैं । महामुनिकी मूर्ति देखि देव अर विद्याधर आश्चर्यको प्राप्त भये । कैसी है महामुनिकी मूर्ति तपकी राशिकर उपजी जो दीप्ति ताकरि देदीप्यमान है । देखकरि नेत्रकमल फूल गये । महा विनयवान होय देव अर विद्याधर धर्मका स्वरूप पूछते भये ।

कैसैं हैं मुनि ? जिनका मन प्राणियोंके हितमें सावधान है, अर रागादिक जो संसारके कारण हैं तिनके प्रसंगसे दूर हैं । जैसैं मेघ गम्भीर ध्वनिकरि गर्जैं, अर वरसैं, तैसैं महागम्भीर ध्वनिकरि जगतके कल्याणके निमित्त परम धर्मरूप अमृत वरसावते भए । जब मुनि ज्ञानका व्याख्यान करने लगे, तब मेघकासा नाद (शब्द) जान लताओंके मंडपमें जो मयूर तिष्ठे थे वे नृत्य करते भए । मुनि कहते भए-अहो देव विद्याधरो ! तुम चित्त लगाय सुनो, तीन भवका आनंद करणहारे श्रीजिनराजने जो धर्मका स्वरूप कहा है सो मैं तुमको कहूं हूँ । कईएक जो प्राणी नीच-

बुद्धि हैं—विचार-रहित जडचित्त हैं, ते अधर्महीको धर्म जानि सेवै हैं जो मार्गको न जानैं सो घने कालमें भी मनवांछित स्थानको न पहुँचैं। मंदमति मिथ्यादृष्टि विषयाभिलाषी जीव हिंसा करि उपज्या जो अधर्म ताकों धर्म जान सेवैं हैं, ते नरक निगोदके दुख भोगवैं हैं। जे अज्ञानी खोटे दृष्टांतनिके समूहकरि भरे महापापनिके पुंज मिथ्या ग्रंथोंके अर्थ तिनकर धर्म जान प्राणिघात करैं हैं तेअनंतसंसार भ्रमण करैं हैंजेअधर्मचर्चा करके वृथा बकवाद करैं हैं ते दंडोंसे आकाशको कूटैं है सो कैसैं कूटा जाय? जो कदाचित् मिथ्यादृष्टियोंके कायक्लेशादि तप होय अर शब्द ज्ञान भी होय तो भी मुक्तिका कारण नाहीं, सम्यग्दर्शन विना जो जानपना है सो ज्ञान नाहीं, अर जो आचरण है सो कुचारित्र है मिथ्यादृष्टीनिका जो तप व्रत है सो पाषाण बराबर है अर ज्ञानी पुरुषोंके जो तप है सो सूर्यमणि समान है। धर्मका मूल जीवदया है, अर दयाका मूल कोमल परिणाम हैं, सो कोमल परिणाम दुष्टोंके कैसैं होय? अर परिग्रहधारी पुरुषनिकों आरंभ करि हिंसा अवश्य होय है, तातैं दयाके निमित्त परिग्रह आरंभ तजना चाहिए। तथा सत्यवचन धर्म है परन्तु जिस सत्यसे परजीवोंको पीड़ा होय सो सत्य नाहीं झूठ ही है। अर चोरीका त्याग करना, परनारी तजनी परिग्रहका परिमाण करना, संतोष व्रत धरना, इंद्रियोंके विषय निवारना, कषाय क्षीण करने, देव गुरु धर्मका विनय करना, निरंतर ज्ञानका उपयोग राखना, यह सम्यग्दृष्टि श्रावकोंके व्रत तुझे कहे। अब घरके त्यागी मुनियोंका धर्म सुनो, सर्व आरंभका परित्याग, दशलक्षण धर्मका धारण, सम्यग्दर्शनकरि युक्त महाज्ञान वैराग्यरूप यतिका मार्ग है। महामुनि पंच महाव्रतरूप हाथीके कांधे चढ़ैं हैं, अर तीन गुप्तरूप दृढ़ बखतर पहरैं हैं। अर पांच समितिरूप पयादोंसे संयुक्त हैं, नानाप्रकार तपरूप तीक्ष्ण शस्त्रोंसे मंडित हैं अर चित्तके आनंद करणहारे हैं ऐसे दिगम्बर मुनिराज कालरूप वैरीकों जीतैं हैं। वह कालरूप वैरी मोहरूप मस्त हाथीपर चढा है अर कषायरूप सामंतोंसे मंडित हैं। यतीका धर्म परमनिर्वाणका कारण है, महामंगलरूप है, उत्तम पुरुषनिकरि सेवने योग्य है। अर श्रावकका धर्म तो साक्षात् स्वर्गका कारण है अर परंपराय मोक्षका कारण है। स्वर्गमें देवोंके समूहके मध्य तिष्ठना मनवांछित इंद्रियोंके सुखको भोगै है अर मुनिके धर्मसे कर्म काट मोक्षके अतींद्रिय सुखको पावै है अतींद्रिय सुख सर्व बाधा रहित अनुपम है जिसका अंत नाहीं, अविनाशी है। अर श्रावकके व्रतकरि स्वर्ग जाय तहांतैं चय मनुष्य होय मुनिराजके व्रत धरि परमपदको पावै है। अर मिथ्यादृष्टि जीव कदाचित् तपकरि स्वर्ग जाय तो चयकर एकेंद्रियादिक योनिविषैं आयकर प्राप्त होय हैं, अनंत संसार भ्रमण करै है। तातैं जैन ही परम धर्म है अर जैन ही परम तप है, जैन ही उत्कृष्ट मत है। जिनराजके वचन ही सार हैं। जिनशासनके मार्गसे जो जीव मोक्ष प्राप्त होनेको उद्यमी हुआ ताकौं जो भव धरने पड़ें तो देव विद्याधर राजानिके भव तो विना चाहे सहज ही होय हैं जैसें खेतीके

करणहारेका उद्यम धान्य उपजानेका है घास, कबाड, पराल इत्यादि सहज ही होय हैं। अर जैसैं कोऊ पुरुष नगरको चाल्या ताको मार्गमें वृक्षादिकका संगम खेदका निवारण है तैसैं ही शिव-पुरीको उद्यमी भए जे महामुनि तिनको इंद्रादि पद शुभोपयोगके कारणसे होय हैं मुनिका मन तिनमें नाहीं, शुद्धोपयोगके प्रभावसे सिद्ध होनेका उपाय है तथा श्रावक अर जैनके धर्मसे जो विपरीत मार्ग है सो अधर्म जानना। जिससे यह जीव नाना प्रकार कुगतिमें दुःख भोगै है। तिर्यंच योनिमें मारण ताडन, छेदन, भेदन, शीत, उष्ण, भूख, प्यास इत्यादि नाना प्रकारके दुःख भोगै है अर सदाअंधकारसूं भरे जे नरक तिनविषैं अत्यंत उष्ण शीत महा विकराल पवन जहां अग्निके कण बरसै हैं नाना प्रकारके भयंकर शब्द जहां नारकियोंको घानीमें पेलै हैं करोंतिसे चीरै हैं। जहां भयकारी शाल्मली वृक्षोंके पत्र चक्र खड्ग सेलसमान हैं तिन करि तिनके तन खंड खंड होय हैं। जहां तांबा शीशा गालकर मदिराके पीवनहारे पापियोंको प्यावैं हैं अर मांस भक्षियों-को तिनहीके मांस काट काट उनके मुखमें देवैं हैं अर लोहेके तप्त गोले सिंडासानिसूं मुख फाड़-फाड़ जोरावरीसे मुखमें देवैं हैं अर परदारासंगम करनहारे पापियोंको ताती लोहेकी पुतलियोंसे चिपटावैं हैं। जहां मायामई सिंह, व्याघ्र, स्याल इत्यादि अनेक प्रकार बाधा करैं हैं अर जहां मायामयी दुष्ट पक्षी तीक्ष्णचोंचसे चूटैं हैं। नारकी सागरोंकी आयुपर्यंत नाना प्रकारके दुख, त्रास, मार भोगवै हैं, मारते मरै नाहीं आयु पूर्ण कर ही मरैं हैं। परस्पर अनेक बाधा करैं हैं अर जहां मायामयी मक्षिका अर मायामयी कृमि जिनके सूई समान तीक्ष्ण मुख तिनिसूं चूटैं हैं। ये सर्व मायामयी जानने और पशु पक्षी तथा विकलत्रय तहां नाहीं, नारकी जीव ही हैं तथा पंच प्रकारके स्थावर सर्वत्र हो हैं। महामुनि देव विद्याधरसूं कहै हैं नरकनिविषैं जो दुःख जीव भोगवैं हैं ताके कहिवेको कौन समर्थ है? तुम दोऊ कुगतिमें बहुत भ्रमे हो, ऐसा मुनिने कह्या, तब यह दोऊ अपना पूर्वभव पूछते भए। सो मुनि कहैं है। कैसैं हैं मुनि? संयम ही है मंडन जिनक। अहो! तुम मन लगाय सुनो—यह दुःखदाई संसार ताविषैं तुम मोहकरि उन्मत्त होय-करि परस्पर द्वेष धरते आपसमें मरण मारण करते अनेक कुयोनिविषैं प्राप्त भए, कर्मयोगतैं मनुष्य भवपाया तिनमें एक तो काशी नामादेशविषैं पारधी भया, दूजा श्रावस्तीनामा नगरीमें राजाका सुयशोदत्त नामा मंत्री भया। सो गृह त्यागकर मुनि भया, महा तपकरि युक्त अतिरू-पवान पृथिवीविषैं विहार करै, सो एक दिन काशीके वनविषैं जीव जंतुरहित पवित्र स्थानकविषैं मुनि विराजे हुते अर श्रावक श्राविका अनेकजन दर्शनकूं आए हुते, सो वह पापी पारधी मुनिको देख तीक्ष्ण वचनरूप शस्त्रतैं मुनिकूं वींधता भया। यह विचारकर कि यह निर्लज्ज मार्गभ्रष्ट स्नानरहित मलीन मुझकूं शिकारविषैं प्रवर्तितेकूं महा अमंगलरूप भया है, ये वचन पारधी-ने कहे, तब मुनिके ध्यानका विघ्न करणहारा संक्लेशभाव उपज्या, फिर मनमें विचारी कि मैं

मुनि भया सो मोकूं क्लेशरूप भाव कर्त्तव्य नाहीं, ऐसा क्रोध उपजै है जो एक मुष्टि प्रहारकर इस पापी पारधीको चूर्ण कर डारूं। सो तपश्चरणके प्रभावतैं मुनिके अष्टम स्वर्ग जायवेकूं जो पुण्य उपज्या था सो क्रोधकषायके योगतैं क्षीण होय, मरकर, ज्योतिषीदेव भया, तहांतैं चयकर तू विद्युतकेश विद्याधर भया अर वह पारधी बहुत संसार भ्रमणकर, लंकाके प्रमदनामा उद्यान विषैं बानर भया सो तैं स्त्रीके अर्थि बाण करि मारया सो बहुत अयोग्य किया। पशुका अपराध सामंतोंको लेना योग्य नाहीं। सो वह बानर नवकार मंत्रके प्रभावतैं उदधिकुमार देव भया।

ऐसा जानकर हे विद्याधरो! तुम वैरका त्याग करो, जातैं या संसारवनविषैं तुम्हारा भ्रमण होय रह्या है, जो तुम सिद्धोंके सुख चाहो हो तो रागद्वेष मत करो, सिद्धोंके सुखोंका मनुष्य अर देवोंसे वर्णन न होय सके, अनंत अपार सुख है, जो तुम मोक्षाभिलाषी हो, अर भले आचारकरि युक्त हो, तो श्रीमुनिसुव्रतनाथकी शरण लेहु। कैसे हैं मुनिसुव्रत? परमभक्तिसे युक्त इंद्रादिक देव भी तिनको नमस्कार करै हैं, इंद्र अहमिंद्र लोकपाल, सब तिनके दासनिके दास हैं, वे त्रिलोकीनाथ हैं तिनकी तुम शरण लेयकर परम कल्याणकूं प्राप्त होवोगे, कैसे हैं वे भगवान् 'ईश्वर' कहिए समर्थ हैं, सर्व अर्थपूर्ण है, कृतकृत्य हैं, ये जो मुनिके वचन तेई भई सूर्यकी किरण तिनकरि विद्युतकेश विद्याधरका मन कमलवत् फूल्या, सुकेशनामा पुत्रकों राज्य देय मुनिके शिष्य भए। कैसे हैं राजा—महाधीर हैं, सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रका आराधन करि उत्तम देव भए। किहकुपुरके स्वामी राजा महोदधि विद्याधर बानरवंशीनके अधिपति चन्द्रकांतमणियोंके महल ऊपर विराजे, अमृतरूप सुन्दर चर्चाकर इंद्रसमान सुख भोगते भये तिनपैं, एक विद्याधर श्वेतवस्त्र पहरैं शीघ्र जाय नमस्कार कर कहता भया कि हे प्रभो! राजा विद्युतकेश मुनि होय स्वर्ग सिधारे। यह वार्ता सुनकर राजा महोदधि भी भोगभावतैं विरक्त होय जैनदीक्षाविषैं बुद्धि धरी, अर ए वचन कहे कि मैं भी तपोवनकूं जाऊंगा। ये वचन सुनिकरि राजलोकमंदिरमें विलाप करते भये, सो विलापकरि महल गूंजि उठ्या। कैसे हैं राजलोक? वीणा बांसुरी मृदंगकी ध्वनि समान है शब्द जिनके अर युवराज भी आय कर राजासौं वीनती करता भया कि—राजा विद्युतकेशका अर अपना एक व्यवहार है, राजाने बालक पुत्र सुकेशको राज दिया है सो तिहारे भरोसे दिया है सो सुकेशके राज्यकी दृढता तुमकूं राखनी। जैसा उनका पुत्र तैसा तिहारा, तातैं कएक दिन आप वैराग्य न धारैं। आप नवयौवन हो, इंद्रकेसे भोगनिकरि यह निष्कंटक राज्य भोगो। या भांति युवराजने वीनती करी अर अश्रुअनिकी वर्षा करी तौ भी राजाके मनमें न आई। अर महानयके वेत्ता मंत्रीने भी अति दीन होय बहुत वीनती करी कि—हे नाथ! हम अनाथ हैं, जैसैं बेल वृक्षनिसौं लगि रही हैं तैसैं हम तुम्हारे चरननिसें लगि रहे हैं, तुम्हारे मनमैं हमारा मन तिष्ठै है

सो हमको छाँडिकर जावो योग्य नाहीं। या भांति बहुत बीनती करी, तौ हू राजा न मानी अर रानीने बहुत बीनती करी, चरणोंमें लोट गई, बहुत अश्रुपात डारे। कैसी है रानी गुणनिके समूहकरि राजाकी प्यारी हुती सो विरक्तभावकरि राजाने नीरस देखी। तब रानी कहै है कि हे नाथ! हम तिहारे गुणनिकरि बहुत दिननिकी बंधी अर तुम हमको बहुत लड़ाई, महालक्ष्मी समान हमको मायाकरि राखी, अब स्नेहपाश तोडि कहाँ जावो हो इत्यादि अनेक बात करी, सो राजा चित्तमें न धरी अर राजाके बडे २ सामंतनि हू ने बीनती करी कि–हे देव! या नवयौवनमें राज छांडि कहाँ जावो हो? सबनितैं मोह क्यों तज्या, इत्यादि अनेक स्नेहके वचन कहे, परन्तु राजाने काहूकी न सुनी। स्नेहपाश छेदि सर्वपरिग्रहका त्यागकरि प्रतिचन्द्र पुत्रको राज्य देय आप अपने शरीरहूतैं भी उदास होय दिगंबरी दीक्षा आदरी। कैसे हैं राजा? पूर्ण है बुद्धि जिनकी महा धीर वीर पृथ्वी पर चन्द्रमा समान उज्ज्वल है कीर्ति जाकी, सो ध्यानरूप गजपर चढकरि तपरूपी तीक्ष्णशस्त्रकरि कर्मरूपशत्रुकौं काट सिद्धपदकों प्राप्त भये। प्रतिचन्द्र भी कैएक दिन राजकर अपने पुत्र किहकन्धको राज्य देय अर छोटे पुत्र अंधकरूढको युवराजपद देय आप दिगम्बर होय शुक्लध्यानके प्रभावकरि सिद्धस्थानकों प्राप्त भये।

अथानंतर राजा किहकन्ध अर अंधकरूढ दोऊ भाई चाँद सूर्य समान औरोंके तेजकौं दाबिकरि पृथ्वीपर प्रकाश करते भए। तासमय विजयार्धपर्वतकी दक्षिणश्रेणीविषैं रथनूपुरनामा नगर सुरपुर समान, तहाँ राजा अशनिवेग महापराक्रमी दोऊ श्रेणीके स्वामी जिनकी कीर्ति शत्रुनिका मान हरनहारी, तिनके पुत्र विजयसिंह महारूपवान ते आदित्यपुरके राजा विद्यामंदिर विद्याधर ताकी रानी वेगवती, ताकी पुत्री श्रीमाला ताके विवाहनिमित्त जो स्वयंबर मण्डप रचा हुता अर अनेक विद्याधर आये हुते, तहाँ अशनिवेगके पुत्र विजयसिंह भी पधारे। कैसी है श्रीमाला जाकी कांतिकरि आकाशविषैं प्रकाश होय रह्या है, सकल विद्याधर सिंहासनपर बैठे। बडे २ राजानिके कुंवर थोड़े २ साथसों तिष्ठैं हैं, सबनिकी दृष्टि सोई भई नीलकमलनिकी पाँति सो श्रीमालाके ऊपर पड़ी। कैसी है श्रीमाला? किसीसे भी रागद्वेष नाहीं, मध्यस्थ परिणाम हैं अर ते विद्याधरकुमार मदनकरि तप्त है चित्त जिनका ते अनेक सविकार चेष्टा करते भए। कैएक तो माथेका मुकुट निकम्प था तो भी सुन्दर हाथनिकरि ठीक करते भये। कैएक खंजर निकारे हुता, तो भी करके अग्रभागसों हिलावते भये। कटाक्षनिकरि करी है दृष्टि जिन्होंने अर कैएकके किनारे मनुष्य चमर ढारते हुते अर बीजना करते हुते तौभी लीलासहित महासुन्दर रूमालसे अपने मुखको बयार करते भये, अर कैएक बामचरणपर दाहिना पांव मेलते भये, कैसे हैं राजानिके पुत्र—सुन्दर है रूप जिनका, नवयौवन हैं कामकलाविषैं निपुण हैं। दृष्टि तो कन्याकी ओर, अर पगके अंगुष्ठसौं सिंहासनपर किछू लिखते भए अर कैएक महामणियोंके समूहकरि युक्त जो सूत्र कटिमें गाढा बंध्या

हुता तौभी उसे संवार गाढा बांधते भए अर कैएक चंचल हैं नेत्र जिनके, निकटवर्तीनितैं केलि कथा करते भए, कैएक अपने सुन्दर कुटिल केशनिकों संभारते भए। कैएक जापर भंवरिनके समूह गुंजार करैं हैं ऐसे कमलको दाहिने हाथसों फिरावते भये, मकरंदकी रज विस्तारते भये इत्यादि अनेक चेष्टा राजानिके पुत्र स्वयंवरमंडपविषैं करते भये। कैसा है स्वयंवरमंडप, जाविषैं वीन बांसुरी मृदंग नगारे इत्यादि अनेक बाजे बाज रहे हैं अर अनेक मंगलाचरण होय रहे हैं, अर जहां बन्दीजननिके समूह सत्पुरुषनिके अनेक शुभ चरित्र वर्णन करैं हैं, स्वयंम्वरमण्डपविषैं सुमंगला नामा धाय जाके एक हाथमें स्वर्णकी छड़ी एक हाथमें वेंतकी छड़ी कन्याको हाथ जोड़ महा विनय कर कहती भई। कन्या नानाप्रकारके मणि भूषणनिकरि साक्षात् कल्पवेल समान है। हे पुत्री! यह मार्तंडकुंडल नामा कुंवर नभस्तिलकके राजा चन्द्रकुंडल रानी विमला तिनका पुत्र है, अपनी कांतिकरि सूर्यको भी जीतनहारा अति रमणीक है अर गुणनिका मण्डन है या सहित रमवेकी इच्छा है तो याकूं वर, कैसा है यह, शस्त्र शास्त्र विद्यामें निपुण है। तब यह कन्या याकों देख यौवनसों कछुइक चिगया जानि आगैं चाली। बहुरि धाय बोली हे कन्या! यह रत्नपुरका राजा विद्यांग रानी लक्ष्मी तिनका पुत्र विद्यासमुद्रघात नामा बहुत विद्याधरोंका अधिपति याका नाम सुन वैरी ऐसा कांपै जैसैं पीपलका पात पवनसों कांपै। महामनोहर हारोंसे युक्त याका सुन्दर वक्षस्थल ताविषैं लक्ष्मी निवास करै है तेरी इच्छा होय तो याकों वर, तब याकों भी सरलदृष्टिकरि देख आगैं चाली। बहुरि धाय बोली, कैसी है धाय-कन्याके अभिप्रायकी जाननहारी, हे सुते! यह इन्द्रसारिखा राजा वज्रशीलका कुंवर खेचरभानु वज्रपंजर नगरका अधिपति, याकी दोऊ भुजानिविषैं राज्यलक्ष्मी चंचल है तौ हू निश्चल तिष्ठै है याकूं देखकरि अन्य विद्याधर आगिया समान भासैं हैं। यह सूर्य समान भासै है एक तो मानकरि याका माथा ऊंचा है ही अर रत्ननिके मुकुटकरि अति ही शोभै है तेरी इच्छा है तो याके कण्ठविषैं माला डारि, तब यह कन्या कुमुदनी समान खेचरभानुको देख सकुचि गई आगे चाली, तब धाय बोली, हे कुमारी! यहा राजा चन्द्रानन चन्द्रपुरका धनी राजा चित्रांगद रानी पद्मश्रीका पुत्र याका वक्षस्थल महा सुन्दर चन्दनकरि चर्चित जैसैं कैलाशका तट चन्द्रकिरणकरि शोभै तैसैं शोभै है। उछले हैं किरणोंके समूह जाविषैं ऐसा मोतियोंका हार याके उरविषैं शोभै है। जैसैं कैलाशपर्वत उछलते हुये नीझरनोंके समूह करि शोभै है याके नामके अक्षरकरि वैरीनिका हू मन परम आनन्दकूं प्राप्त होय है अर दुख आताप करि रहित होय है। धाय श्रीमालासों कहै है–हे सौम्यदर्शने! कहिये सुखकारी है दर्शन जाका–ऐसी जो तू, सो तेरा चित्त याविषैं प्रसन्न होय तो जैसैं रात्रि चंद्रमातैं संयुक्त होय प्रकाश करै है तैसैं याके संगमकरि आल्हादकूं प्राप्त होहु। तब याविषैं भी याका मन प्रीतिको न प्राप्त भया जैसं चन्द्रमा नेत्रनिकों आनन्दकारी है तथापि कमलनिकी याविषैं

प्रसन्नता नाहीं। बहुरि धाय बोली—हे कन्ये! मन्दरकुंजनगरका स्वामी राजा मेरुकान्त रानी श्री-रम्भाका पुत्र पुरन्दर मानों पृथ्वीपर इन्द्र ही अवतरथा है, मेघ समान है ध्वनि जाकी, अर संग्राम विषैं जाकी दृष्टि शत्रु सहारवे समर्थ नाहीं, तौ ताके बाणनिकी चोट कौन सहारै? देव भी यासों युद्ध करवेको समर्थ नाहीं तो मनुष्यनिकी कहा बात? अति उन्नत याका सिर सो तू पायनि-पर माला डारि, ऐसा कह्या तौभी याके मनमें न आया; क्योंकि चित्तकी प्रवृत्ति विचित्र है। बहुरि धाय कहती भई—हे पुत्री! नाकार्धनामनगरका रक्षक राजा मनोजव रानी वेगिनी तिनका पुत्र महाबल सभारूप सरोवरविषैं कमल समान फूल रह्या है अर याके गुण बहुत हैं गिननेमें आवैं नाहीं, यह ऐसा बलवान है जो अपनी भौंह टेढी करवे करिही पृथ्वी मण्डलकों वश करै है अर विद्याबलकरि आकाशविषैं नगर वसावै है अर सूर्य ग्रहनक्षत्रादिककों पृथ्वीतलपर दिखावै है। चाहै तौ एक लोक नवा और वसावै, इच्छा करै तौ सूर्यकों चन्द्रमा समान शीतल करै, पर्वत चूर डारै, पवनकों थांभै, जलका स्थलकरि डारै, स्थलका जलकरि डारै इत्यादि याके विद्याबल वर्णन किये तथापि याका मन वाविषैं अनुरागी न भया और भी अनेक विद्याधर धायने दिखाये सो कन्याने दृष्टिमें न धरे, तिनकों उलंघि आगे चाली जैसैं चन्द्रमाकी किरण पर्वतनिको उलंघै, ते पर्वत श्याम होय जांय तैसैं जिन विद्याधरनिकों उलंघि गइ आगे गई तिनका मुख श्याम होय गया। सब विद्याधरनिकों उलंघिकरि याकी दृष्टि किहकंधकुमारविषैं गई ताके कण्ठमें वरमाला डारी तब विजयसिंह विद्याधरकी दृष्टि क्रोधकी भरी किहकन्ध अर अंध्रक दोऊ भाईनिपर गई। कैसा है विजयसिंह? विद्याबलकरि गर्वित है सो किहकन्ध अर अंध्रकको कहता भया कि यह विद्याधरोंका समाज तहाँ तुम बानर कौन अर्थ आये? विरूप है दर्शन तुम्हारा क्षुद्र कहिये तुच्छ हो कैसे हो तुम विनयरहित हो, या स्थानविषैं फलोंमे नम्रीभूत जे वृक्ष तिनकरि संयुक्त कोई रमणीक वन नाहीं, अर गिरिनिकी सुन्दर गुफा नीझरणोंकी धरणहारी जहाँ बानरोंके समूह क्रीडा करैं सो नाहीं। लालमुखके बानरो! तुमको इहां कौनने बुलाया? जो नीच दूत तुम्हारे बुलावने-कों गया होय ताका निपात करूं, अपने चाकरनिकों कही, इनको इहांतैं निकाल देवो ये वृथाही विद्याधर कहावैं हैं।

ये शब्द सुनकरि किहकंध अर अंध्रक दोनों भाई बानरध्वज महाक्रोधको प्राप्त भए जैसैं हाथिनिपर सिंह कोप करै अर तिनकी समस्त सेनाके लोक अपने स्वामियोंका अपवाद सुनि विशेष क्रोधकों प्राप्त भए। कईएक सामंत अपने दाहिने हाथकरि बावीं भुजाका स्पर्श करि शब्द करते भए अर कईएक क्रोधके आवेशकरि लाल भए हैं नेत्र जिनके कैसे हैं सामंतनिके नेत्र मानों प्रलय-कालके उल्कापात ही हैं, महाकोपको प्राप्त भए। कईएक पृथिवीविषैं दृढ बांधी है जड़ जिनकी ऐसे

वृक्षनिकों उखाडते भए, कैसे हैं वृक्ष फल अर पल्लवनिकूं धरै हैं। कईएक थंभ उखाड़ते भए अर कईएक सामंतोंके अगले घाव भी क्रोधकरि फट गए तिनमेंसैं रुधिरकी धारा निकसती भई सो मानो उत्पातके मेघ ही बरस हैं, कईएक गाजते भए सो दशोंदिशा शब्दकर पूरित भई, अर कईएक योधा सिरके केश विकरालते भए मानों रात्रि ही होय गई, इत्यादि अपूर्व चेष्टाओंसे बानरवंशी विद्याधरनिकी सेना समस्त विद्याधरनिके मारनेको उद्यमी भई, हाथिनिसे हाथी, घोड़ानितैं घोड़े रथनितैं रथ युद्ध करते भए, दोनों सेनाविषै महायुद्ध प्रवर्त्या, आकाशमें देव कौतुक देखते भए। यह युद्धकी वार्ता सुनकर राक्षसवंशी विद्याधरनिके अधिपति राजा सुकेश लंकाके धनी बानरवंशियोंकी सहायताको आए, राजा सुकेश किहकंध अर अंध्रकके परम मित्र हैं मानो इनके मनोरथको ही आये हैं, जैसैं भरत चक्रवर्तीके समय राजा अकंपनकी पुत्री सुलोचनाके निमित्त अर्ककीर्ति जयकुमारका युद्ध भया हुता तैसा यह युद्ध भया। यह स्त्री ही युद्धका मूलकारण है। विजयसिंहके अर राक्षसवंशी बानरवंशीनिके महायुद्ध भया ता समय किहकंध कन्याकूं ले गया अर छोटे भाई अंध्रकने खडगकरि विजयसिंहका सिर काट्या, एक विजयसिंहके विना ताकी सर्व सेना विखर गई। जैसैं एक आत्मा विना सर्व इंद्रियोंके समूह विघटि जांय। तब राजा अशनिवेग विजयसिंहका पिता अपने पुत्रका मरण सुनकरि शोक करि मूर्छाकों प्राप्त भया। अपनी स्त्रियोंके नेत्रके जलकरि सींचा है वक्षस्थल जाका सो घनी वेरमें मूर्छासे प्रबोधकूं प्राप्त भया पुत्रके वैरकरि शत्रुनिपर भयानक आकार किया ! ता समय ताका आकार लोक देख न सके मानों प्रलयकालके उत्पातका सूर्य ताके आकारकों धर है। सब विद्याधरनिकों लार लेजाय किहकुंपुर घेरया। सो नगरकूं घेरया जानि दोनों भाई बानरध्वज सुकेश सहित अशनिवेगसों युद्ध करवेकों नीसरे। सो परस्पर महायुद्ध भया। गदानि करि, शक्तीनिकरि, बाणनिकरि, पाशनिकरि, सेलनिकरि, खड्गनिकरि, महायुद्ध भया। तहां पुत्रके वधसों उपजी जो क्रोधरूप अग्निकी ज्वाला उससे प्रज्वलित जो अशनिवेग सो अंध्रकके सन्मुख भया। तब बड़े भाई किहकंधने विचारी कि मेरा भाई अंध्रक तो नवयौवन है अर यह पापी अशनिवेग महा बलवान है सो मैं भाईकी मदद करूं। तब किहकंध आया अर अशनिवेगका पुत्र विद्युद्वाहन किहकंधके सन्मुख आया सो किहकंधके अर विद्युद्वाहनके महायुद्ध प्रवर्त्या ता समय अशनिवेगने अंध्रकको मारया सो अंध्रक पृथ्वीपर पड़या, जैसैं प्रभातका चंद्रमा कांतिरहित होय तैसा अंध्रकका शरीर, कांति-रहित होय गया, अर किहकंधने विद्युद्वाहनके वक्षस्थलपर शिला चलाई सो वह मूर्छित होय गिरया, बहुरि सचेत होय तानैं वही शिला किहकंध पर चलाई सो किहंकध मूर्छा खाय घूमने लग्या, सो लंकाके धनीने सचेत किया अर किहंकधको किहकुंपुर ले आए, तब किहकंधने दृष्टि उघाड़ देख्या तो भाई नाहीं, तब निकटवर्तीनिको पूछने लग्या। मेरा भाई कहां है ? तब लोक नीचे होय रहे अर राजलोकमें अंध्रकके मरवेका विलाप हुवा

सो विलाप सुन किहकंध भी विलाप करने लग्या। शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान भया है चित्त जाका बहुत देरतक भाईके गुणनिका चिंतवन करता संता शोकरूप समुद्रमें मग्न भया। हाय भाई! मेरे होते संते तू मरणको प्राप्त भया, मेरी दक्षिण भुजा भंग भई, जो मैं एकक्षण तुझे न देखता तो महा व्याकुल होता सो अब तुमारे बिना प्राणनिको कैसे राखूंगा अथवा मेरा चित्त वज्रका है जो तेरा मरण सुनकर भी शरीरको नाहीं तजै है। हे बाल! तेरा वह मुलकना अर छोटी अवस्थामें महावीरचेष्टानिको चितार चितार मुझको महा दुःख उपजै है इत्यादि महाविलापकरि भाईके स्नेहसों किहकंध खेदखिन्न भया तब लंकाके धनी सुकेशने तथा और बड़े २ पुरुषोंने किहकंधको बहुत समझाया जो धीर पुरुषनिको यह रंक चेष्टा योग्य नाहीं, यह क्षत्रीनिका वीरकुल है सो महा साहसरूप है अर या शोकको पंडितोंने बड़ा पिशाच कह्या है, कर्मोंके उदयकरि भाईनिका वियोग होय है, यह शोक निरर्थक है, यदि शोक किए फिर आगमन होय तो शोक करिये। यह शोक शरीरको सोखै है अर पापोंका बंध करै है महामोहका मूल है तातैं या वैरी शोककूं तजकरि प्रसन्न होय कार्यविषैं बुद्धि धार। यह अशनिवेग विद्याधर अति प्रबल वैरी है अपना पीछा छोड़ैगा नाहीं, नाशका उपाय चिंतवै है तातैं अब जो कर्तव्य होय सो विचारो। वैरी बलवान होय तब प्रच्छन्न गुप्त) स्थानविषैं कालक्षेप करिये, तो शत्रुसे अपमानको न पाइए। फिर कईएक दिनमें वैरीका बल घटै तब वैरीको दबाइए, विभूति सदा एक ठौर नाहीं रहै है। तातैं अपनी पाताललंका जो बड़ोंमे आसरेकी ठौर है सो कुछ काल तहां रहिये जो अपने कुलमें बड़े हैं ते वा स्थानककी बहुत प्रशंसा करै हैं। जाको देखैं स्वर्ग-लोकमें भी मन न लागै, तातैं उठो, वह जगह वैरियोंमे अगम्य है या भांति राजा किहकंधको राजा सुकेशीने बहुत समझाया तो भी शोक न छाँड़ै, तब रानी श्रीमालाको दिखाई सो, ताके देखनेतैं शोकनिवृत्त भया। तब राजा सुकेशी अर किहकंध समस्त परिवारसहित पाताललंकाको चाले अर अशनिवेगका पुत्र विद्युद्वाहन तिनके पीछैं लाग्या, अपने भाई विजयसिंहके वैरतैं महा क्रोधवंत शत्रुनिके समूल नाश करनेको उद्यमी भया। तब नीति-शास्त्रके पाठीनिने समझाया, कैसें हैं वे पुरुष? जिनकी शुद्ध बुद्धि है, जो क्षत्री भागै तो ताके पीछैं न लागैं, अर राजा अशनिवेगने भी विद्युद्वाहनसौं कही जो अंधकने तुम्हारा भाई हत्या, सो मैं अंधकको रणमें मार्‌या, तातैं हे पुत्र! इस हठसौं निवृत्त होवो। दुःखीपर दया ही करनी। जिस कायरने अपनी पीठ दिखाई सो जीवित ही मृतक है ताका पीछा क्या करना, या भांति अशनिवेगने विद्युद्वाहनको समझाया, इतनेमें राक्षसवंशी अर वानरवंशी पाताललंका जाय पहुंचे। कैसा है नगर, रत्नोंके प्रकाशकरि शोभायमान हैं तहां शोक अर हर्ष धरते दोऊ निर्भय रहैं। एक समय अशनिवेग शरदमें मेघपटल देख अर उनको विलय होते देखे विषयोंसे विरक्त भए। चित्त विषैं विचारी- 'यह राज संपदा क्षणभंगुर है, मनुष्यजन्म अति दुर्लभ है सो मैं मुनिव्रत धारि

'आत्मकल्याण करूं' ऐसा विचारि सहस्रारि पुत्रकूं राजदेय आप विद्युद्वाहन सहित मुनि भए, अर लंकाविषैं पहले अशनिवेगने निर्घातनामा विद्याधर थानै राख्या हुता सो अब सहस्रारकी आज्ञाप्रमाण लंकाविषैं थानै रहै । एक समय निर्घात दिग्विजयको निकस्या सो संपूर्ण राक्षस द्वीपविषैं राक्षसनिका संचार न देख्या सबही घुस रहे हैं सो निर्घात निर्भय लंकामें रहै है । एक समय राजा किहकंध रानी श्रीमालासहित सुमेरु पर्वतसों दर्शन कर आवै था, मार्गमें दक्षिणसमुद्रके तटपर देवकुरु भोगभूमि समान पृथ्वीमें करनतटनामा वन देख्या, देखकरि प्रसन्न भए, अर श्रीमाला रानीसों कहते भए । रानीके सुंदर वचन वीणाके स्वर समान हैं, हे देवी ! तुम यह रमणीक वन देखो । जहां वृक्ष फूलोंकरि संयुक्त हैं, निर्मल नदी वहै है अर मेघके आकार समान धरणीमाला नामा पर्वत शोभै है, पवर्तके शिखर ऊंचे हैं अर कुंद-पुष्प समान उज्ज्वल जलके नीझरने झरैं हैं सो मानों यह पर्वत हसै ही है अर वृक्षोंकी शाखासे पुष्प पड़ै हैं सो मानो हमको पुष्पांजली ही देवैं हैं, अर पुष्पनिकी सुगंधकरि पूर्ण पवनतैं हालते जो वृक्ष तिनकरि मानों यह वन हमको देखि उठिकरि ताजीम (विनय) ही करैं हैं अर वृक्ष फलनिकरि नम्रीभूत होय रहे हैं सो मानो हमको नमस्कार ही करैं हैं जैसैं गमन करते पुरुषनिकूं स्त्री अपने गुणनितैं मोहितकरि आगैं जाने न दे है खड़ा करै है, तैसैं यह वन अर पर्वतकी शोभा हमको मोहितकर रा ै है—आगैं जानै न देहै । अर मैं भी इस पर्वतको उलंघ आगैं नहीं जाय सकूं, तातैं यहां ही नगर बसाऊंगा । जहां भूमिगोचरियोंका गमन नाहीं, पाताल लंकाकी जगह ऊंडी है और तहां मेरा मन खेदखिन्न भया है सो अब यहां रहनेतैं मन प्रसन्न होयगा । याभांति रानी श्रीमालासों कहिकर आप पहाड़सैं उतरे । तहां पहाड़ ऊपर स्वर्गसमान नगर बसाया । नगरका किहकंधपुर नाम धरया । तहां आप सर्व कुटुम्ब सहित निवास किया । कैसा है राजा किहकंध ? सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त है अर भगवानकी पूजाविषैं सावधान है, सो राजा किहकंधकी राणी श्रीमालाकै योगतैं सूर्यरज अर रक्षरज दोय पुत्र भए अर सूर्यकमला पुत्री भई जाकी शोभाकरि सर्व विद्याधर मोहित हुए।

अथानंतर मेघपुरका राजा मेरु ताकी रानी मघा, पुत्रमृगारिदमन तानै किहकंधकी पुत्री सूर्यकमला देखी, सो ऐसा आसक्त भया कि रातदिवस चैन जाके नाहीं पड़ै, तब वाकै अर्थि वाके कुटुम्बके लोगोंने सूर्यकमला जाँची, सो राजा किहकंधने रानी श्रीमालासे मंत्रकर अपनी पुत्री सूर्यकमला मृगारिदमनको परणाई, सो परणकर जावै था, मार्गमें कर्णपर्वत विषैं कर्णकुंडल नगर बसाया ।

अर लंकपुर कहिये पाताललंका उसमें सुकेश राजा, इंद्राणी नाम रानी, ताकै तीन पुत्र भये, माली, सुमाली अर माल्यवान । बड़े ज्ञानी, गुण ही हैं आभूषण जिनके, अपनी क्रीड़ाओंसे माता पिताका मन हरते भए । देवों समान है क्रीड़ा जिनकी सो तीनों पुत्र बड़े भए । महा

बलवान, सिद्ध भई हैं सर्व विद्या जिनको। एक दिन माता पिताने इनको कहा कि जो तुम क्रीड़ा करनेको किहकंधपुरकी तरफ जाओ तो दक्षिणके समुद्रकी ओर मत जाओ, तब ये नमस्कार करि माता पिताको कारण पूछते भए, तब पिताने कही हे पुत्रो! यह बात कहिवेकी नाहीं। तब पुत्रोंने बहुत हठि करि पूछी, तब पिताने कही कि लंकापुरी अपने कुलक्रमतैं चली आवै है श्रीअजितनाथ स्वामी दूसरे तीर्थंकरके समयसों लगायकर अपना इस खंडमैं राज है, आगैं अशनिवेगके अर अपने युद्ध भया सो परस्पर बहुत मरे, लंका अपनेतैं छूटी। अशनिवेगने निर्घात विद्याधरकूं थापौ राख्या, सो महा बलवान है अर क्रूर है तानैं देश देशमें हलकारे राखे हैं अर हमारा छिद्र हेरै है, यह पिताके दुखकी वार्ता सुनकर माली निश्वास नाखता भया अर आंखनितैं आंसू निकसे, क्रोध करि भर गया है चित्त जिसका अपनी भुजाओंका बल देखकरि पितासौं कहता भया कि हे तात! एते दिनों तक यह बात हमसों क्यों न कही, तुमने स्नेहकरि हमकों ठगा जे शक्तिवंत होयकरि बिना काम किए निरर्थक गाजै हैं ते लोकविषैं लघुताको पावै हैं सो अब हमको निर्घातपर चढनेकी आज्ञा देवो, हमारै यह प्रतिज्ञा है लंकाको लेकरि ही और काम करैं, तदि माता पिताने महा धीर वीर जान इनको स्नेहदृष्टिसे आज्ञा दी, तब ये पातललंकासों ऐसे निकसे मानो पाताललोकसैं भवनवासी देव निकसैं हैं। वैरी ऊपर अतिउत्साहतैं चाले कैसे हैं तीनों भाई? शस्त्रकलामें महाप्रवीण हैं। समस्त राक्षसोंकी सेना इनके लार चाली। तिनने त्रिकूटाचल पर्वत दूरसों देख्या, देखकरि जान लिया कि लंका याके नीचे वसै है सो मानों लंका लेही ली। मार्गविषैं निर्घातके कुटुंबी जो दैत्यादि कहावैं ऐसै विद्याधर मिले सो मालीसूं युद्ध करके बहुत मरे। कैएक पायन परे, कैएक स्थान छोड भाग गये, कैएक वैरीके कटकमें शरण आये, पृथ्वीमें इनकी बडी कीर्ति विस्तरी। निर्घात इनका आगमन सुन लंकासों बाहिर निकस्या। कैसा है निर्घात? जो युद्धमें महा शूर वीर है, छत्रकी छायाकरि आच्छादित किया है सूर्य जानैं तब दोऊ सेनानिमें महायुद्ध भया, मायामई हाथिनिकरि, घोडनिकरि, विमाननिकरि, रथनिकरि परस्पर युद्ध प्रवर्त्या, हाथीनिके मद झरनेतैं आकाश जलरूप होय गया अर हाथीनिके कान तेही भए ताडके बीजने उनकी पवनसे आकाश मानों पवन रूप होगया, परस्पर शस्त्रोंके घातकरि प्रगटी जो अग्नि ताकरि मानों आकाश अग्निरूप ही होगया, याभांति बहुत युद्ध भया तब मालीने विचारी कि दीननिके मारवेकरि कहा होय? निर्घातहीको मारिये, यह विचारि निर्घातपर आए, ऐसे शब्द कहते भये कहां है वह पापी निर्घात? सो निर्घातको देख करि प्रथम तो तीक्ष्ण बाणनिकरि रथतैं नीचे डारया फेर वह उठ्या महायुद्ध किया, तब मालीने खड्गकरि निर्घातकौं मारया, सो ताकूं मारया जानकरि ताके वंशके भागकरि विजयार्धविषैं अपने अपने स्थानक गये अर कैएक कायर होय मालीहीकी शरण आए। माली आदि तीनों भाइय-

निने लंकाविषैं प्रवेश किया। कैसी है लंका? महा मंगल रूप है माता पिता आदि समस्त परिवारनिकों लंकाविषैं बुलाया, बहुरि हेमपुरका राजा मेघविद्याधर रानी भोगवती तिनकी पुत्री चंद्रवती सो मालीनैं परनी। सो कैसी है चंद्रमती? मनकों आनंदकरनहारी है अर प्रीतिकूट नगरका राजा प्रीतिकांत रानी प्रीतिमती तिनकीपुत्री प्रीतिसंज्ञका सो सुमाली परणी, अर कनककांत नगरका राजा कनक रानी कनकश्री तिनकी पुत्री कनकावली सो माल्यवाननैं परणी। इनके कइएक पहिली रानी हुतीं तिनमें यह प्रथम रानी भई, अर प्रत्येक हजार २ रानी कछुइक अधिक होती भईं। मालीने अपने पराक्रमसे विजयार्धकी दोऊ श्रेणी वस करी। सर्व विद्याधर इनकी आज्ञा आशीर्वादकी नाईं माथै चढावते भए। कैएक दिनोंमें इनके पिता राजा सुकेश मालीको रज देय महामुनि भए, अर राजा किहकंध अपने पुत्र सूर्यरजकौं राज देय वैरागी भए, ए दोऊ परम मित्र राजा सुकेश अर किहकंध समस्त इंद्रयनिके सुखका त्यागकर अनेक भवके पापोंका हरनहारा जो जिनधर्म ताकौं पायकर सिद्ध स्थानके निवासी भये। हे श्रेणिक! याभांति अनेक राजा प्रथम राज्य अवस्थामें अनेक विलास करि फिर राज तजकरि आत्मध्यानके योगसे समस्त पापिनिकौं भस्म कर अविनाशी धामको प्राप्त भए। ऐसा जानकरि हे राजा! मोहको नाश कर शांतिदशाको प्राप्त होऊ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं
बानरवंशीनिका निरूपण है जाविषैं ऐसा छठा पर्व पूर्ण भया॥ ६॥

(सप्तम पर्व)

[रावणका जन्म और विद्या साधनादिका निर्देश]

अथानंतर रथनूपुर नगरविषैं राजा सहस्रार राज्य करैं, ताके रानी मानसुन्दरी रूप अर गुणोंमें अति सुन्दर सो गर्भिणी भई, अत्यन्त कृश भया है शरीर जाका, शिथिल होय गए हैं सर्व आभूषण जाके, तब भरतारने बहुत आदरसौं पूछी हे प्रिए! तेरे अंग काहेतैं क्षीण भये हैं, तेरे कहा अभिलाषा है, जो अभिलाषा होय, सो मैं अबार ही समस्त पूर्ण करूं, हे देवी! तू मेरे प्राणोंसे भी अधिक प्यारी है, याभांति राजाने कही तब रानी बहुत विनयकरि पतिसों वीनती करती भई कि हे देव! जा दिनतैं बालक मेरे गर्भमैं आया है ता दिनतैं यह मेरी वांछा है कि इन्द्रकीसी सम्पदा भोगूं सो मैंने लाज तज आपके अनुग्रहसे आपसौं अपना मनोरथ कह्या है, क्योंकि स्त्रीकी लज्जा प्रधान है सो मनकी बात कहिवेमें न आवै, तब राजा सहस्रारने जो महा विद्याबलकरि पूर्ण हुता, सो तिनने क्षणमात्रमें याके मनोरथ पूर्ण किये। तब यह राणी महाआनंद-

रूप भई, सर्व अभिलाषा पूर्ण भई अत्यन्त प्रताप अर कांतिकों धरती भई, सूर्य ऊपर होय नीसरै सो वाहूंको तेज सहार सकै नाहीं, अर सर्वदिशानिके राजानिके राजनिपर आज्ञा चलाया चाहै, नव महीने पूर्ण भये, तब पुत्रका जन्म भया, कैसा है पुत्र ? समस्त बांधवनिको परम सम्पदाका कारण है ! तब राजा सहस्रारने हर्षित होय पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया, अनेक बाजानिके शब्द करि दशों दिशा शब्दरूप भई । अर अनेक स्त्री नृत्य करती भई । राजाने याचकजननिको इच्छापूर्ण दान दिया, ऐसा विचार न किया जो यह देना न देना, सर्व ही दिया । अर हाथी गरजते हुये ऊंची सूंडकरि नृत्य करते भये। राजा सहस्रारने पुत्रका नाम इन्द्र धरथा, जादिन इंद्रका जन्म भया तादिन समस्त वैरिनिके घरमें अनेक उत्पात भए। अपशकुन भये अर भाइयनिके तथा मित्रनिके घरमें महा कल्याणके करणहारे शुभशकुन भये अर इन्द्रकुंवरकी बालक्रीडा तरुण पुरुषोंकी शक्तिको जीतनेहारी सुन्दर कर्मकी करणहारी, वैरियोंका गर्व छेदती भई । अनुक्रमकरि कुंवर यौवनको प्राप्त भया । कैसा है कुंवर ? अपने तेजकरि जीत्या है सूर्यका तेज जिसने अर कांतिसे जीत्या है चन्द्रमा अर स्थिरतासे जीत्या है पर्वत, अर विस्तीर्ण है वक्षस्थल जाका, दिग्गजनिके कुम्भस्थल समान ऊँचे हैं कांधे अर अति दृढ सुन्दर हैं भुजा, दश दिशानिकी दाबनहारी हैं दोऊ जंघा जिसकी, महा सुन्दर यौवनरूप महलके थांभनेको थम्भे समान होती भई । विजयार्ध पर्वतविषैं सर्व विद्याधर जाने सेवक किये जो यह आज्ञा करै सो सर्व करैं । यह महा विद्याधर बलकर मंडित यानै अपने यहां सब इन्द्रकैसी रचना करी । अपना महल इन्द्रके महल समान बनाया, अडतालीस हजार विवाह किये । पटरानीका नाम शची धरथा, छब्बीस हजार नटुवा नृत्य करैं, सदा इन्द्रकैसा अखाडा रहै, महामनोहर अनेक इन्द्रकैसे हाथी घोडे अर चंद्रमा समान महा उज्ज्वल ऊँचा आकाशके आंगनमें गमन करनेवाला किसीसे निवारया न जाय महा बलवान अष्टदन्त करि शोभित गजराज, जिसकी महा सुन्दर गोल सूंड ताकरि व्याप्तकी हैं दशों दिशा जानैं, ऐसा जो हाथी ताका नाम ऐरावत धरथा। चतुरनिकायके देव थापे अर परम शक्तियुक्त चार लोकपाल थापे। सोम १ वरुण २ कुबेर ३ यम ४ अर सभाका नाम सुधर्मा, वज्र आयुध, तीन सभा, अर उर्वशी मेनका रम्भा इत्यादि हजारां नृत्यकारिणी तिनकी अप्सरा संज्ञा ठहराई, सेनापतिका नाम हिरण्यकेशी अर आठ बसु थापे अर अपने लोकनिकों सामानिक त्रायस्त्रिंशतादि दश भेद देवसंज्ञा धरी । गावनहारे तिनका नाम नारद १ तुम्बुरु २ विश्वावसु ३ यह संज्ञा धरी। मंत्रीका नाम बृहस्पति इत्यादि सर्व रीति इन्द्र समान थापी, सो यह राजा इन्द्र समान सब विद्याधरनिका स्वामी पुण्यके उदयकरि इंद्रकै सी संपदाका धरनहार होता भया । ता समय लंकामें राजा माली राज करै सो महामानी जैसैं आगैं सर्व विद्याधरनिपर अमल करै था तैसा ही अबहू करै, इंद्रकी शंका न राखै, विजयार्धके समस्त घरोंमें अपनी आज्ञा राखै, सर्व विद्याधर राजानिके

राजमें महारत्न हाथी घोड़े मनोहर कन्या मनोहर वस्त्राभरण, दोनों श्रेणियोंमें जो सार वस्तु होय सो मंगाय लेय, ठौर २ हलकारे फिरवे करैं अपने भाइयनिके गर्वतैं महा गर्ववान पृथ्वीपर एक आपहीको बलवान जानै।

अब इंद्रके बलतैं विद्याधरलोक मालीकी आज्ञा भंग करने लगे, सो यह समाचार मालीने सुना अब अपने सर्व भाई अर पुत्र अर कुटुम्ब समस्त राक्षसबंशी अर किहकन्धके पुत्रादि समस्त बानरबंशी तिनको लार लेय विजयार्ध पर्वतके विद्याधरनि पर गमन किया। कैएक विद्याधर अति ऊँचे विमानों पर चढे कैएक चालते महल समान सुवर्णके रथोंपर चढे हैं, कैएक काली घटा समान हाथियोंपर चढे हैं, कैएक मनसमान शीघ्रगामी घोड़ेतिनपर चढे, कैएक सिंह शार्दूलनिपर चढे, कैएक चीतानिपर चढे हैं,कै एक बलधनि पर चढे हैं,कैएक ऊटों पर,कैएक खचरानिपर, भैंसेंपर, कैएक हंसानिपर, कैएक स्यालानिपर इत्यादि अनेक मायामई बाहनोंपर चढे आकाशका आंगन आच्छादते थके, महा देदीप्यमान शरीर धरकर माली की लार चढे। प्रथम प्रयाणमें ही अपशकुन भए तब मालीतैं छोटा भाई सुमाली कहता भया, बडे भाईमें है अनुराग जाका, हे देव! यहां ही मुकाम करिये आगैं गमन न करिये अथवा लंकामें उलटा चलिये आज अपशकुन बहुत भए हैं। सूके वृक्षकी डालीपर एक पगको संकोचे काग तिष्ठया है, अत्यन्त आकुलित है चित्त जाका, बारंबार पंख हलावै है, सूका काठ चोंचमें लिये सूर्यकी ओर देखै है, अर क्रूरशब्द बोलै है, सो हमारा गमन मनै करै है अर दाहिनी ओर रौद्र है मुख जाका ऐसी स्यालिनी रोमांश धरती हुई भयानक शब्द करै है अर सूर्यके बिंबके मध्य प्रविष्ट हुई जलैरीमें रुधिर झरता देखिये है अर मस्तकरहित धड नजर आवे है अर महा भयानक वज्रपात होय है। कैसा है वज्रपात? कम्पाया है समस्त पर्वत जानैं अर आकाशमें बिखरि रहे हैं केश जिसके ऐसी मायामई स्त्री नजर आवै है, अर गर्दभ आकाशकी तरफ ऊंचा मुखकर खुरके अग्रभागकरि धरतीको खोदता हुवा कठोर शब्द करै है इत्यादि अपशकुन होय हैं। तब राजा माली सुमालीतैं हंसकर कहते भए। कैसा है राजा माली? अपनी भुजानिके बलकरि शत्रुनिको गिनते नाहीं। अहो वीर! वैरिनको जीतना मनमें विचार विजयहस्तीपर चढे महा पुरुष धीरताको धरते कैसें पीछे बाहुडैं जे शूरवीर दांतनिकरि डसे हैं अधर जिन्होंने, अर टेढी करी है भौंह जिन्होंने, अर विकराल है मुख जिनका, अर बैरीनिको डरावैं है आंख जिन्होंकी, तीक्ष्ण बाणनिकरि पूर्ण अर बाजे हैं अनेक बाजे जिनके अर मदझरते हाथिनपर चढे हैं अथवा तुरंगनपर चढे हैं महावीर रसके स्वरूप आश्चर्यकी दृष्टि करि देवोंने देखे जो सामंत वे कैसें पाछै बाहुडैं? अर मैंने या जन्ममें अनेक लीलाविलास किये। सुमेरुपर्वतकी गुफा तहां नंदनवन आदि मनोहरवन तिनमें देवांगना समान अनेकरानी सहित नानाप्रकारकी क्रीडा करी अर आकाशमें लगरहे हैं शिखर जिनके ऐसे

रत्नमयी चैत्यालय जिनेंद्रदेवके कराए, विधिपूर्वक भाव सहित जिनेंद्रदेवकी पूजाकरी अर अर्थी जो जाचे सो दिया ऐसे किमिच्छिक दान दिये। इस मनुष्य लोकमें देवोंकैसे भोग भोगे अर अपने यशकरि पृथ्वीपर वंश उत्पन्न किया, तातैं या जन्ममें तौ हम सब बातोंमें इच्छा पूर्ण हैं। अब जो महा संग्राममें प्राणोंको तजैं तौ यह शूरवीरनिकी रीति ही है परन्तु क्या हम लोकोंसे यह कहावें कि माली कायर होय, पाछे हटगया अथवा तहां ही मुकाम किया। यह निंदाके लोकनिके शब्द धीरवीर कैसैं सुनें ? धीर वीरोंका चित्त क्षत्रियव्रतमें सावधान है। भाईको या भांति कहि आप वैताडके ऊपर सेना सहित क्षणमात्रमें गये सब विद्याधरों पर आज्ञा पत्र भेजे, सो कैएक विद्याधरनिने न माने, तिनके पुर ग्राम उजाडे अर उद्याननिके वृक्ष उपार डारे जैसैं कमलके वनको माता हाथी उखाडै, तैसैं राक्षसकुलिके विद्याधर महाक्रोधकौं प्राप्त भए हैं तदि प्रजाके लोग मालीके कटकतैं डरकर कांपते संते रथनूपुर नगरमें राजा सहस्रारके शरण गये। चरणनिको नमस्कारकर दीनवचन कहते भए कि हे प्रभो! सुकेशका पुत्र माली राक्षसकुली समस्त विद्याधरनिपर आज्ञा चलावै सर्व विजयार्धमें हमको पीडा करै है। आप हमारी रक्षा करो, तब सहस्रारने आज्ञा करी कि हे विद्याधरो! मेरा पुत्र इन्द्र है ताके शरण जाय सर्व वीनती करो वह तुम्हारी रक्षा करनेकों समर्थ है जैसैं इन्द्र स्वर्गलोककी रक्षा करै है तैसैं यह इन्द्र समस्त विद्याधरोंका रक्षक है।

तब समस्त विद्याधर इंद्रपै गए, हाथ जोडि नमस्कार करि सर्व वृत्तांत कहे। तब इंद्र माली ऊपर क्रोधायमान होय गर्वकरि मुलकते संते सर्वलोकनिको कहते भए। कैसे है इंद्र ? पास धरया जो वज्रायुध ताकी ओर देख्या लाल भए हैं नेत्र जिनके, मैं लोकपाल लोकनिकी रक्षा करूं, जो लोकका कंटक होय ताहि हेरकर मारूं, अर वह आप ही लडनेको आया तो या समान और क्या ? रणके नगारे बजाए। कैसे है वे वादित्र जिनके श्रवणकरि माते हाथी गजके बंधनको उखाडै हैं, समस्त विद्याधर युद्धका साजकरि इंद्रपै आए। बखतर पहरैं हाथमें अनेकप्रकारके आयुध लिएं परम हर्ष धरते संते कईएक घोडनिपर चढे तथा हस्ती, ऊंट, सिंह, व्याघ्र, स्याली, तथा मृग, हंस, छेला, बलद, मींडा, इत्यादि मायामई अनेक वाहनोंपर बैठि आए, कैएक विमानमें बैठे, कैएक मयूरोंपर चढे कईएक खच्चरनिपर चढकरि आए। इंद्रने जो लोकपाल थापे हैं, ते अपने अपने वर्गसहित नानाप्रकारके हथियारनिकरियुक्त भौंह टेढी किये आए भयानक हैं मुख जिनके। पाब हस्तिका नाम ऐरावत तापरइंद्र चढे बखतर पहिरे शिरपर छत्र फिरते हुए रथनूपुरतैं बाहिर निकसे। सेनाके विद्याधर जो देव कहावैं सो इन देवनिके अर लंकाके राक्षसनिके साथ महायुद्ध प्रवर्त्या।

हे श्रेणिक! ये देव अर राक्षस समस्त विद्याधर मनुष्य हैं, नमि विनमिके वंशके हैं

ऐसा युद्ध प्रवर्त्या जो कायरनितैं देख्या न जाय, हाथियनितैं हाथी घोड़ेनतैं घोड़े पयादनितैं पयादे लड़े। सेल मुद्गर सामान्य चक्र खड्ग गौफरा मूसल गदा कनक पाश इत्यादि अनेक आयुधनिकरि युद्ध भया। सो देवोंकी सैनाने कछुइक राक्षसोंका बल घटाया, तब वानवंशी राजा सूर्यरज रक्षरज राक्षसवंशियोंके परममित्र राक्षसोंकी सेनाको दब्या देख युद्धको उद्यमी भए सो इनके युद्धतैं समस्त इंद्रकी सेनाके लोक देवजातिके विद्याधर हटे। इनका बल पाय राक्षसकुली विद्याधर लंकाके लोक देवनितैं महायुद्ध करते भए। अस्त्रोंके समूहसे आकाशमें अंधेरा कर डारया, राक्षस अर वानरवंशियोंसे देवोंका बल हरया देख इंद्र आप युद्ध करनेकों उद्यमी भये समस्त राक्षसवंशी अर वानरवंशी मेघरूप होकर इंद्ररूप पर्वतपर गाजते हुये शस्त्रकी वर्षा करते भये। सो इंद्र महायोधा कुछ भी विषाद न करता भया। किसीका वाण आपकों न लगने दिया सबनिके वाण काट डारे अर अपने वाणनिकरि कपि अर राक्षसोंको दबाये। तब राजा माली लंकाके धनीकी सेनाको इंद्रके बलकरि व्याकुल देख इंद्रतैं युद्ध करवेको आप उद्यमी भये। कैसे हैं राजा माली ? क्रोधकरि उपज्या जो तेज ताकरि समस्त आकाशमैं किया है उद्योत जिन्होंने। इंद्रके अर मालीके परस्पर महायुद्ध प्रवर्त्या। मालीके ललाट पर इंद्रने वाण लगाया सो मालीने उस वाणकी वेदना न गिनी अर इंद्रके ललाटपर शक्ती लगाई सो इंद्रके रक्त झरने लगा अर माली उछलकर इंद्रपै आया तब इंद्रने महाक्रोधसे सूर्यके बिंब समान चक्रसे मालीका शिर काट्या, माली भूमिपर पड्या तब सुमाली मालीको मुआ जानि अर इंद्रको महा बलवान जानि सब परिवार सहित भाग्या। सुमालीको भाईका अत्यंत दुःख हुवा, जब यह राक्षसवंशी अर वानरवंशी भागे तब इंद्र इनके पीछे लाग्या तब सौमनामा लोकपालने जो स्वामीकी भक्तिमैं तत्पर है इंद्रसे विनती करी कि हे प्रभो! जब मो सारिखा सेवक शत्रुनिके मारवेको समर्थ है तब आप इनपर क्यों गमनकरैं ? सो मुझे आज्ञा देवो। शत्रुनिकों निर्मूल करूं। तब इंद्रने आज्ञा करी, यह आज्ञा प्रमाण इनके पीछे लाग्या अर वाणनिके पुंज शत्रुओंपर चलाये सो कपि अर राक्षसनिकी सेना वाणनिकरि बेधीगई जैसे मेघकी धाराकरि गायनिके समूह व्याकुल होय तैसैं तिनकी सर्व सेना व्याकुल भई।

अथानंतर अपनी सेनाको व्याकुल देखि सुमालीका छोटाभाई माल्यवान बाहुडकर सौमपर आये अर सौमकी छातीमें भिण्डिपाल नामा हथियार मारा सो मूर्छित होगया सो जबलग वह सावधान होय तब लग राक्षसवंशी अर वानरवंशी पाताललंका जाय पहुंचे मानो नया जन्म भया, सिंहके मुखसे निकले, सौमने सावधान होकर सर्व दिशा शत्रुओंसे शून्य देखी, तब लोकनिकरि गाइये जस जाके बहुत प्रसन्न होय इंद्रके निकट गया अर इंद्र विजय पाय ऐरावत हस्तीपर चढ्या लोकपालनिकरि मंडित शिरपर छत्र फिरते चंवर ढुरते आगैं अप्सरा नृत्य करती

बडे उत्साहसैं महाविभूति सहित रथनूपुरविषैं आये। कैसा है रथनूपुर ? रत्नमयी वस्त्रोंकी ध्वजाओंसे शोभै है, ठौर ठौर तोरणनिकरि शोभायमान है, जहां फूलनिके ढेर होय रहे हैं, अनेक प्रकार सुगंधसे देवलोक समान है सुंदर नारियां झरोखोंमें बैठी इंद्रकी शोभा देखैं हैं, इंद्र राज महलमैं आए अति विनयथकी माता पिताके पायन पडे, तदि मातापिताने माथे हाथ धरथा अर गात्र स्पर्शे आशीश दई, इंद्र वैरीनिकू जीति अति आनन्दकों प्राप्त भया। प्रजापालनविषैं तत्पर इंद्रके समान भोग भोगे, विजयार्ध पर्वत तो स्वर्ग समान अर यह राजा इंद्र सर्व लोकविषैं प्रसिद्ध भया॥

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसैं कहै हैं—कि हे श्रेणिक ! अब लोकपालकी उत्पत्ति सुनौ। ये लोकपाल स्वर्गलोकतैं चयकर विद्याधर भए हैं, राजा मकरध्वज रानी अदिति तिनका पुत्र सोम नामा लोकपाल महा कांतिधारी सो इन्द्रनैं ज्योतिपुर नगरमें थापा अर पूर्व दिशाका लोकपाल किया अर राजा मेघरथ रानी वरुणा उनका पुत्र वरुण उसको इन्द्रने मेघपुर नगरमें थापा अर पश्चिम दिशाका लोकपाल किया जाके पास पाश नामाआयुध जिसका नाम सुनकर शत्रु अति डरैं अर राजा किहकंधसूर्य रानी कनकावली उसका पुत्र कुवेर महा विभूतिवान उसको इन्द्रने कांचनपुरमें थापा अर उत्तरदिशाका लोकपाल किया अर राजा बालाग्निविद्याधर रानी श्रीप्रभा उसका पुत्र यम नामा तेजस्वी उसको किहकुंपुरमें थापा अर दक्षिणदिशाका लोकपाल किया अर असुर नामा नगर ताके निवासी विद्याधर वे असुर ठहराये अर यक्षकीर्ति नामा नगरके विद्याधर यक्ष ठहराए अर किन्नर नगरके किन्नर, गंधर्व नगरके गंधर्व इत्यादिक विद्याधरोंकी देव संज्ञा धरी, इन्द्रकी प्रजा देव जैसी क्रीडा करै। यह राजा इन्द्र मनुष्य योनिमें लक्ष्मीका विस्तार पाय लोगोंसे प्रशंसा पाय आपको इंद्र ही मानता भया अर कोई स्वर्गलोक है, इंद्र है, देव है यह सर्व बात भूल गया अर आपहीको इन्द्र जाना, विजयार्धगिरिको स्वर्ग जाना अपने थापै लोकपाल जाने अर विद्याधरोंको देव जानैं, याभांति गर्वको प्राप्त भया कि मोतैं अधिक पृथ्वीपर और कोऊ नाहीं, मैं ही सबकी रक्षा करूं। यह दोनों श्रेणियोंका अधिपति होय ऐसा गर्वा कि मैं ही इन्द्र हूं।

अथानंतर कौतुकमंगल नगरका राजा व्योमबिंदु पृथ्वीपर प्रसिद्ध उसके रानी मंदवती उसके दो पुत्री भई, बडी कौशिकी छोटी केकसी। सो कौशिकी राजा विश्रवको परणाई। जे यक्षपुर नगरके धनी, तिनके वैश्रवण पुत्र भया अति शुभ लक्षणका धारणहारा कमल सारिखे नेत्र जाके उसको इंद्रने बुलाकर बहुत सन्मान किया अर लंकाके थाने राखा अर कहा मेरे आगे चार लोकपाल हैं तैसे तु पांचवा महा बलवान है तब वैश्रवणने विनती करी कि—"प्रभो जो आज्ञा करो सो ही मैं करू" ऐसा कह इंद्रको प्रणाम कर लंकाको चल्या सो इन्द्रके आज्ञा प्रमाण

लंकाके थाने रहै जाको राक्षसोंकी शंका नाहीं जिसकी आज्ञा विद्याधरोंके समूह अपने सिरपर धरैं हैं।

पाताललंकाविषैं सुमालीके रत्नश्रवा नामा पुत्र भया महा शूर वीर दातार जगतका प्यारा उदारचित्त मित्रनिके उपकार निमित्त है जीवन जाका, अर सेवकोंके उपकार निमित्त है प्रभुत्व जाके, पंडितोंके उपकार निमित्त है प्रवीणपणा जाका, भाइयोंके उपकार निमित्त है लक्ष्मीका पालन जाके, दरिद्रियोंके उपकार निमित्त है ऐश्वर्य जाका, साधुओंकी सेवा निमित्त है शरीर जाका, जीवनके कल्याण निमित्त है वचन जाका, सुकृतके स्मरण निमित्त है मन जाका, धर्मके अर्थ है आयु जाकी, शूरवीरताका मूल है स्वभाव जाका, सो पिता समान सब जीवोंको दयालु, जाके परस्त्री माता समान, परद्रव्य तृण समान, पराया शरीर अपने शरीर समान, महा गुणवान, जो गुणवंतोंकी गिनती करें, तहां याकौं प्रथम गिनें अर दोषवन्तोंकी गिणतीविषैं नहीं आवै उसका शरीर अद्भुत परमाणुओंकरि रचा है, जैसी शोभा इसमें पाइये तैसी और ठौर दुर्लभ है, संभाषणमें मानों अमृत ही सींचै है, अर्थियोंको महादान देता भया। धर्म अर्थ काममें बुद्धिमान, धर्मका अत्यंत प्रिय, निरंतर धर्महीका यत्न करै, जन्मान्तरसे धर्मको लिये आया है, जिसके बडा आभूषण यश ही है अर गुण ही कुटुम्ब है, सो धीर वीर वैरियोंका भय तजकर विद्या साधनके अर्थ पुष्पक नामा वनमें गया। कैसा है वह वन, भूत पिशाचादिकके शब्दसे महा भयानक है यह तो वहां विद्या साधै है अर राजा व्योमविंदुने अपनी पुत्री केकसी इसकी सेवा करनेको इसके ढिंग भेजी सो सेवा करै हाथ जोडे रहै, आज्ञाकी है अभिलाषा जाके, कैएक दिनोंमें रत्नश्रवाका नियम समाप्त भया, सिद्धोंको नमस्कार कर मौन छोडा। केकसीको अकेली देखी। कैसी है केकसी? सरल हैं नेत्र जाके नीलकमल समान सुंदर अर लालकमल समान है मुख जाका कुंदके पुष्प समान हैं दन्त, अर पुष्पोंकी माला समान है कोमलसुंदर भुजा, अर मूंगा समान है कोमल मनोहर अधर, मौलश्रीके पुष्पोंकी सुगंध समान है निश्वास जाके, चंपेकी कली समान है रंग जाका, अथवा उस समान चंपक कहां अर स्वर्ण कहां? मानो लक्ष्मी रत्नश्रवाके रूपमें वश हुई, कमलोंके निवासको तज सेवा करनेको आई है। चरणारविंदकी ओर हैं नेत्र जाके, लज्जासे नम्रीभूत है शरीर जाका, अपने रूप वा लावण्यसे कूंपलोंकी शोभाको उलंघती हुई श्वासनकी सुगंधतासे जाके मुखपर भ्रमर गुंजार करै हैं। अति सुकुमार है तनु जाका, अर यौवन आंवतासा है मानों इसकी अति सुकुमारताके भयसे यौवन भी स्पर्शता शंकै है मानों समस्त स्त्रियोंका रूप एकत्रकर बनाई है अद्भुत सुन्दरता जाकी, मानों साक्षात् विद्या ही शरीर धारकर रत्नश्रवाके तपसे वशी होकर महा कांतिकी धरणहारी आई है। तब रत्नश्रवा जिनका स्वभाव ही दयावान है केकसीकों पूछते भए कि तू कौनकी पुत्री है? अर कौन अर्थ अकेली यूथसे बिछुरी मृगीसमान महावन

में रहे है अर तेरा क्या नाम है तब यह अत्यंत माधुर्यतारूप गदगद वाणीसे कहती भई–'हे देव! राजा व्योमबिंदु रानी नन्दवती तिनकी मैं केकसी नामा पुत्री आपकी सेवा करनेको पिताने राखी है। ताही समय रत्नश्रवाको मानस्तम्भिनी विद्या सिद्ध भई, सो विद्याके प्रभावसे उसी वनमें पुष्पांतकनामा नगर बसाया अर केकसीको विधिपूर्वक परणा, अर उसी नगरमें रह कर मनवांछित भोग भोगते भए, प्रिया प्रीतममें अद्भुत प्रीति होती भई, एक क्षण भी आपसमें वियोग सहार न सके। यह कैकसी रत्नश्रवाके चित्तका बंधन होती भई, दोनों अत्यंत रूपवान नवयौवन महाधनवान इनके धर्मके प्रभावसे किसी भी वस्तुकी कमी नाहीं। यह रानी पतिव्रता पतिकी छाया समान अनुगामिनी होती भई।

एक समय यह रानी रत्नके महलमें सुंदर सेजपर पडी हुती। कैसी है सेज? क्षीरसमुद्रकी तरंगसमान उज्ज्वल हैं वस्त्र जहां, अर महा कोमल हैं, अनेक सुगंधकरि मंडित है, रत्नोंका उद्योत होय रहा है रानीके शरीरकी सुगंधसे भ्रमर गुंजार करै हैं, अपने मनका मोहनहारा जो अपना पति उसके गुणोंको चिंतवती हुई अर पुत्रकी उत्पत्तिको वांछती हुई पडी हुती सो रात्रिके पिछले पहर महाआश्चर्यके करणहारे शुभ स्वप्नें देखे। बहुरि प्रभातविषैं अनेक बाजे बाजे, शंखोंका शब्द भया, मागध वंदीजन विरद बखानते भए, तब रानी सेजसे उठकर प्रभातक्रिया कर महामंगलरूप आभूषण पहरे सखियोंकर मंडित पति ढिंग आई, राजा रानीको देख उठे बहुत आदर किया। दोऊ एक सिंहासनपर विराजे, रानी हाथ जोड राजासे विनती करती भई–"हे नाथ! आज रात्रिके चतुर्थपहरमें तीन शुभ स्वप्न देखे हैं एक महाबली सिंह गाजता अनेक गजेंद्रोंके कुंभस्थल विदारता हुआ परम तेजस्वी आकाशसे पृथ्वीपर आय मेरे मुखमें होकर कुक्षिमें आया, अर सूर्य अपनी किरणोंसे तिमिरका निवारण करता मेरी गोदमें आय तिष्ठया, अर चंद्रमा अखंड है मंडल जाका सो कुमुदनको प्रफुल्लित करता अर तिमिरको हरता हुआ मैंने अपने आगे देख्या। यह अद्भुत स्वप्न मैंने देखे सो इनके फल क्या हैं? तुम सर्व जानने योग्य हो स्त्रियोंको पतिकी आज्ञा ही प्रमाण है। तब यह बात सुन राजा स्वप्नके फलका व्याख्यान करते भए। राजा अष्टांग निमित्तके जाननहारे जिनमार्गमैं प्रवीण हैं। हे प्रिये! तेरे तीन पुत्र होंगे जिनकी कीर्ति तीन जगतमें विस्तरैगी बडे पराक्रमी कुलके वृद्धि करणहारे पूर्वोपार्जित पुण्यसे महासम्पदाके भोगनहारे देवोंसमान अपनी कांतिसे जीत्या है चंद्रमा, अपनी दीप्तिसे जीता है सूर्य, अपनी गम्भीरताकरि जीत्या है समुद्र, अर अपनी स्थिरतासे जीत्या है पर्वत जिन्होंने, स्वर्गके अत्यंत सुख भोग मनुष्यदेह धरैंगा महाबलवान जिनको देव भी न जीत सकैं, मनवांछित दानके देनहारे, कल्पवृक्ष समान अर चक्रवर्ती समान ऋद्धि जिनके अपने रूपकरि सुंदर स्त्रियोंके मन हरणहारे अनेक शुभ लक्षणोंकर मंडित, उतंग है वक्षस्थल जिनका, जिनका नाम ही श्रवणमात्रसे

महाबलवान वैरी भय मानेंगे तिनमें प्रथम पुत्र आठवां प्रतिवासुदेव होयगा, महासाहसी शत्रुओं-के मुखरूप कमल मुद्रित करनेको चंद्रमा समान तीनों भाई ऐसे योद्धा होंगे कि युद्धका नाम सुनकर जिनके हर्षके रोमांच होंयगे, अर बडा भाई कछुइक भयंकर होयगा जिस वस्तुकी हठ पकडेगा सो न छोडेगा जिसको इंद्र भी समझानेको समर्थ नाहीं। ऐसा पतिका वचन सुनकर रानी परम हर्षको प्राप्त होय विनय थकी भरतारको कहती भई। हे नाथ! हम दोऊ जिनमार्गरूप अमृतके स्वादी कोमलचित्त अपनें पुत्र क्रूरकर्मा कैसे होंय। अपने तो जिनवचनमें तत्पर कोमल परिणामी होना चाहिए। अमृतकी बेलपर विषपुष्प कैसे लगैं? तब राजा कहते भए कि हे वरानने! सुंदर है मुख जाका ऐसी तू हमारे वचन सुन। यह प्राणी अपने अपने कर्मके अनुसार शरीर धरै है तातैं कर्म ही मूल-कारण है हम मूलकारण नाहीं, हम निमित्त कारण हैं, तेरा बडा पुत्र जिनधर्मी तो होयगा परंतु कछुइक क्रूरपरिणामी होयगा अर ताके दोऊ लघु वीर महाधीर जिनमार्गविषैं प्रवीण गुणग्रामकरि पूर्ण भली चेष्टाके धरणहारे शीलके सागर होवेंगे। संसार भ्रमणका है भय जिनकों धर्मविषैं अति दृढ महा दयावान सत्य वचनके अनुरागी होवेंगे। तिन दोऊनिके ऐसा ही साम्यकर्मका उदय है, हे कोमलभाषिणी! हे दयावती! प्राणी जैसा कर्म करै है तैसा ही शरीर धरै है ऐसा कहकर वे दोऊ राजा राणी जिनेंद्रकी महापूजाविषैं प्रवर्ते। कैसे हैं वे? रात दिवस नियम धर्मविषैं सावधान हैं॥

अथानंतर प्रथम ही गर्भविषैं रावण आए, तब माताकी चेष्टा कुछइक क्रूर होती भई, यह वांछा भई कि वैरियोंके सिर पर पांव धरूं। राजा इंद्रके ऊपर आज्ञा चलाऊं, विना कारण भोंहें टेढ़ी करनी, कठोर वाणी बोलना यह चेष्टा होती भई। शरीरमें खेद नाहीं, दर्पण विद्यमान हैं तौ भी खड्गमें मुख देखना, सखी जनसूं खीझ उठना, काहूकी शंका न राखनी ऐसी उद्धत चेष्टा होती भई। नवमें महीने रावणका जन्म भया, जा समय पुत्र जन्म्या तासमय वैरियोंके आसन कंपायमान भए; सूर्यमान है ज्योति जाकी ऐसा बालक तांकू देखकर परिवारके लोकनिके नेत्र थकित होय रहे हैं। देव दुंदभी बाजे बजने लगे, वैरिनके घरविषैं अनेक उत्पात होने लगे, माता पिताने पुत्रके जन्मका अतिहर्ष किया, प्रजाके सर्व भय मिटे पृथ्वीका पालक उत्पन्न भया, सेज पर सूधे पडे अपनी लीला कर देवनिसमान है दर्शन जिनका, राजा रत्नश्रवाने बहुतदान दिया। आगैं इनके बडे जो राजा मेघवाहन भए उनको राक्षसनिके इंद्र भीमने हार दिया हुता जाकी हजार नागकुमार देव रक्षा करें, सो हार पास धरा था सो प्रथमदिवसहीके बालकने खैंच लिया, बालककी मुट्ठीमें हार देख माता आश्चर्यको प्राप्त भई अर महास्नेहतैं बालकको छातीसैं लगाय लिया अर सिर चूंमा अर पिताने भी हार सहित बालकको देख मनमें विचारी कि यह कोई महापुरुष है, हजार नागकुमार जाकी सेवा करैं ऐसै हारतैं होता ही बालक क्रीडा करता

भया । यह सामान्य पुरुष नाहीं याकी शक्ति ऐसी होयगी जो सर्व मनुष्योंको उलंघै । आगे चारणमुनिने मुझे कहा हुता कि तेरे पदवीधर पुत्र उत्पन्न होवेंगे सो प्रतिवासुदेव शलाका पुरुषप्रगट भए हैं । हारके योगसे दशबदन पिताको नजर आए तब उसका दशानन नाम धरया बहुरि कुछ कालमें कुम्भकरण भये सो सूर्य समान है तेज जिनका, बहुरि कुछ इक कालमें पूर्णमासीके चंद्रमा समान है वदन जाका ऐसी चंद्रनखा बहिन भई, बहुरि विभीषण भए महासौम्य धर्मात्मा पापकर्मतैं रहित मानो साक्षात् धर्महीं देहधारी अवतरा है यद्यपि जिनके गुणनिकी कीर्ति जगतविषैं गाइए है ऐसे दशाननकी बालक्रीडा दुष्टनिको भयरूप होती भई । अर दोऊ भाईयनिकी क्रीडा सौम्य रूप होती भई । कुंभकर्ण अर विभीषण दोनोंके मध्य चन्द्रनखा चांद सूर्यके मध्य सन्ध्या समान शोभती भई । रावण बालअवस्थाको उलंघ करि कुमारअवस्थामें आया । एक दिन रावण अपनी माताकी गोदमें तिष्ठे था, अपने दांतनिकी कांतिसे दशों दिशामें उद्योत करता संता जिसके सिर पर चूडामणि रत्न धरा है ता समय वैश्रवण आकाशमार्गसे जाय था सो रावणके ऊपर होय निकस्या अपनी कांति करि प्रकाश करता संता विद्याधरोंके समूहकरि युक्त महा बलवान विभूतिका धनी मेघसमान अनेक हाथियों-की घटा मदकी धारा बरसते जिनके विजली समान सांकल चमकै महा शब्द करते आकाश मार्ग-से निकसे सो दशों दिशा शब्दायमान होय गईं । आकाश सेना करि व्याप्त होय गया । सो रावणने ऊंची दृष्टिकर देख्या तो बडा आडंबर देखकर माताकूं पूंछी यह कौन है ? अर अपने मानसे जगतको तृण समान गिनता महा सेनासहित कहां जाय है ? तब माता कहती भई "तेरी मौसी का बेटा है, सर्व विद्या याकूं सिद्ध है, महालक्ष्मीवान है, शत्रुओंको भय उपजावता संता पृथ्वी विषैं विचरै है, महा तेजवान है, मानों दूसरा सूर्य ही है । राजा इन्द्रका लोकपाल है । इन्द्रनै तिहारे दादाका भाई माली युद्धमें हराया अर तुम्हारे कुलमें चली आई जो लंका-पुरी वहांसे तुम्हारे दादेको निकासकर ये राख्या सो लंकामें थाणै रहै हैं । यह लंकाके लिये तेरा पिता निरन्तर अनेक मनोरथ करै है रात दिन चैन नाहीं पडै है अर मैं भी इस चिंतामें सूख गई हूँ । पुत्र ! स्थानभ्रष्ट होनेतैं मरण भला ? ऐसा दिन कब होय जो तू अपने कुलकी भूमिको प्राप्त होय अर तेरी लक्ष्मी हम देखैं, तेरी विभूति देख करि तेरे पिताका अर मेरा मन आनन्दको प्राप्त होय, ऐसा दिन कब होयगा जब तेरे यह दोनों भाइयोंको विभूति सहित तेरी लार इस पृथ्वीपर प्रतापयुक्त हम देखेंगे । तिहारे कंटक न रहेगा" यह माताके दीनवचन सुन अर अश्रुपात डारती देखकर विभीषण बोले, कैसे हैं विभीषण ? प्रगट भया है क्रोधरूप विषका अंकूर जिनकै, हे माता ! कहां यह रंक वैश्रवण विद्याधर, जो दैव होय तो भी हमारी दृष्टिमें न आवै । तुमने इसका इतना प्रभाव वर्णन किया सो कहा ? तू वीरप्रसवनी अर्थात् योधाओंकी माता

है, महाधीर है अर जिनमार्गमें प्रवीण है यह संसारकी क्षणभंगुर माया तो तैं छानी नाहीं, काहेकौं ऐसे दीन वचन कायर स्त्रियोंके समान तू कहै है ? क्या तोकूं रावणकी खबर नाहीं है महा श्रीवत्सलक्षणकर मंडित अद्‌भुत पराक्रमका धरण हारा महाबली अपार है चेष्टा जाकी भस्म करि जैसे अग्नि दबी रहै तैसे मौन गह रह्या। यह समस्त शत्रुवर्गनिके भस्म करनेको समर्थ है, तेरे मनविषैं अबतक नहीं आया है, यह रावण अपनी चालसे चित्तको भी जीते है अर हाथकी चपेटसे पर्वतोंको चूरकरडारे है याकी दोऊभूजा त्रिभुवनरूप मंदिरके स्तम्भ हैं अर प्रतापको राजमार्ग है। क्षत्रवतीरूप वृक्षके अंकुर है सो क्या तैनें नहीं जाने ? या भांति विभीषणने रावणके गुण वर्णन किये। तब रावण मातासे कहता भया, हे माता ! गर्वके वचन कहने योग्य नांहीं, परन्तु तेरे सन्देहके निवारण अर्थि मैं सत्य कहूं हूं सो तू सुन। जो यह सकल विद्याधर अनेक प्रकार विद्याकरि गर्वित दोऊ श्रेणिनिके एकत्र होयकर मेरेसे युद्ध करैं तौ भी मैं सबनिकूं एक भुजासे जीतूं।

[रावणका, दोनों भाइयों सहित भीम नामक महावनमें विद्या साधन करना]

तथापि हमारे विद्याधरनिके कुलविषैं विद्याका साधन उचित है सो करते लाज नाहीं, जैसैं मुनिराज तपका आराधन करैं तैसैं विद्याधर विद्याका आराधन करैं, सो हमको करना योग्य है। ऐसा कहकर दोऊ भाईयनिसहित माता पिताको नमस्कारकर नवकार मन्त्रका उच्चारणकर रावण विद्या साधनेको चाले। माता पिताने मस्तक चूमा अर असीस दीनी, पाया है मंगलसंस्कार जिन्होंने, स्थिरभूत है चित्त जिनका, घरतैं निकरिकर हर्षरूप होय भीम नामा महावनमें प्रवेश किया। कैसा है वन ? जहां सिंहादि क्रूर जीव नाद कर रहे हैं, विकराल है दाढ अर वदन जिनके अर सूते जे अजगर तिनके निश्वाससे कंपायमान हैं वडे वडे वृक्ष जहां अर नीचे हैं व्यंतरोंके समूह जहां जिनके पायनसे कंपायमान है पृथ्वीतल जहां, अर महा गंभीर गुफाओंमें अन्धकारका समूह फैल रहा है, मनुष्योंकी तो कहा बात ? जहां देव भी गमन न कर सकैं हैं जाकी भयंकरता पृथिवीमें प्रसिद्ध है, जहां पर्वत दुर्गम महा अधंकारको धरैं गुफा अर कंटकरूप वृक्ष हैं मनुष्योंका संचार नाहीं। तहां ये तीनों भाई उज्ज्वल धोती दुपट्टा धारे शांतिभावको ग्रहणकर सर्व आशा निवृत्तकर विद्याके अर्थि तप करवेकौं उद्यमी भए। कैसैं हैं ते भाई निशंक है चित्त जिनका, पूर्ण चंद्रमा समान है वदन जिनका, विद्याधरनिके शिरोमणि, जुदे जुदे वनमें विराजे हैं, डेढ दिनमें अष्टाक्षर मंत्रके लक्ष जाप किये सो सर्वकामप्रदा विद्या तीनोंभाईयनिकौं सिद्ध भई, सो मनवांछित अन्न इनको विद्या पहुंचावे क्षुधाकी वांछा इनको न होती भई। बहुरि ये स्थिरचित्त होय सहस्रकोटि षोडशाक्षरमन्त्र जपते भए। उससमय जम्बूद्वीपका अधिपति अनावृत्ति नामा यक्ष, स्त्रीनि सहित क्रीडा करता आय प्राप्त हुवा। सो ताकी देवांगना इन तीनों भाईनिकूं महा रूपवान अर

नवयौवन अर तपविषैं सावधान है मन जिनका ऐसे देख कौतुक कर इनके समीप आई। कमल समान हैं मुख जिनके, भ्रमर समान हैं श्याम सुंदर केश जिनके, केएक आपसमें बोलीं—"अहो! यह राजकुमार अतिकोमलशरीर कांतिधारी वस्त्राभरणरहित कौन अर्थि तप करै है? ऐसे इनके शरीरकी कांति भोगनि विना न सोहै, कहां इनकी नवयौवन वय अर कहां यह भयानक वनविषैं तप करना" बहुरि इनके तपके डिगावनेके अर्थ कहती भईं—"अहो अल्पबुद्धि! तुम्हारा सुन्दर रूपवान शरीर भोगका साधन है, योगका साधन नाहीं; तातैं काहेकों तपका खेद करो हो, उठो घर चलो, अब भी कुछ गया नाहीं" इत्यादि अनेक वचन कहे, परन्तु इनके मनमें एकहू न आई। जैसैं जलकी बिन्दु कमलके पत्र पर न ठहरै। तब वे आपसमें कहती भईं, हे सखी! ये काष्ठमई हैं सर्व अंग इनके निश्चल दीखें हैं ऐसा कहकर क्रोधायमान होय तत्काल समीप आईं। इनके विस्तीर्ण हृदय पर कुंडलकी दीनी तौ भी ये चलायमान न भए। स्थिरीभूत हैं चित्त जिनका, कायर पुरुष होय सोई प्रतिज्ञासे डिगैं, देविनिके कहते अनावृत यक्षने हंसकर कहा-भो सत्पुरुषो! काहेकों दुर्धर तप करो हो, अर किस देवको आराधो हो, ऐसे कह्या तौऊ ये बोले नाहीं, चित्रामके होय रहे। तब अनावृतयक्षने क्रोध किया कि जम्बूद्वीपका देव तो मैं हूँ मुझको छांडकरि कौनकूं ध्यावैं हैं। ये मंदबुद्धि हैं इनको उपद्रव करनेके अर्थि अपने किंकरनिकों आज्ञा दई सो किंकर स्वभावहीसे क्रूर हुते अर स्वामीके कहेसे उन्होने और भी अधिक अनेक उपद्रव किये। केएक तो पर्वत उठाय उठाय लाए अर इनके समीप पटके तिनके भयंकर शब्द भए। केएक सर्पहोय सर्व शरीरसे लिपट गए, केएक नाहर होय मुख फाडकर आए अर केएक शब्द काननिमें ऐसे करते भए जिनको सुनकर लोक बहिरे होजांय, तथा मायामई डांस बहुत किये सो इनके शरीरतैं आय लगे अर मायामई हस्ती दिखाये, असराल पवन चलाई, मायामई दावानल लगाई याभांति अनेक उपद्रव किए, तो भी यह ध्यानसे, न डिगे, निश्चल है अंतः करण जिनका। तब देवोंने मायामई भीलनिकी सेना बनाई। अंधकार समान काल विकराल आयुधोंको धर इनको ऐसी माया दिखाई कि पुष्पांतक नगर ध्वस्त भया अर महायुद्धमें रत्नश्रवाको कुटुम्ब सहित बंधा हुवा दिखाया अर यह दिखाया कि माता केकसी विलाप करै है कि हे पुत्रो! इन चांडाल भीलनिने तिहारे पिताकूं महाउपद्रव किया अर ये चांडाल मारै हैं, पावोंमें बेड़ी डारी हैं, माथेके केश खींचैं हैं। हे पुत्रो! तुम्हारे आगे मोकूं ये म्लेच्छ भील पल्लीमें लिये जांय हैं, तुम कहते हुते जो समस्त विद्याधर एकत्र होय मुझसे लडैं तौ भी न जीता जाऊं, सो यह वार्ता तुम मिथ्या ही कहते। अब तुम्हारे आगैं म्लेच्छ चांडाल मोकूं केश पकड खींचे लिये जाय हैं, तुम तीनों ही भाई इन म्लेच्छनितैं युद्ध करवे समर्थ नाहीं, मंद पराक्रमी हो। हे दशग्रीव! तेरा स्तोत्र विभीषण वृथा ही करै था तू तो एक ग्रीवा भी नाहीं जो माताकी रक्षा न करै। अर यह कुंभकरण हू हमारी पुकार काननितैं सुनै नाहीं, अर ये विभीषण

कहावै है सो वृथा है एक भीलतैं भी लडनेकूं समर्थ नाहीं अर यह म्लेच्छ तिहारी बहिन चंद्रनखाको लिये जाय हैं सो तुमको लज्जा नाहीं अर विद्या जो साधिए सो माता पिताकी सेवा अर्थि, सो विद्या किस काम आवेगी ? इत्यादि मायामई देवनिनैं चेष्टा दिखाई तौहू ये ध्यानसे नाहीं डिगे। तब देवोंने एक भयानक माया दिखाई अर्थात् रावणके निकट रत्नश्रवाका सिर कट्या दिखाया। रावणके निकट भाईनिके भी सिर कटे दिखाए अर भाइयोंके निकट रावणका भी सिर कट्या दिखाया सो रावण तो सुमेरुपर्वत समान अति निश्चल ही रहे। जो ऐसा ध्यान महामुनि करै तो अष्टकर्मनिकूं छेदै, परंतु कुंभकर्ण विभीषणके कछुएक व्याकुलता भई; परंतु कुछ विशेष नाहीं, सो रावणको तो अनेक सहस्र विद्या सिद्धि भईं, जेते मंत्र जपनेके नेम किये थे ते पूर्ण होनेसे पहिले ही विद्या सिद्ध भई। धर्मके निश्चयतैं कहा न होय ? ऐसा दृढ निश्चय भी पूर्वोपार्जित उज्ज्वल कर्मतैं होय है, कर्म ही संसारका मूलकारण है, कर्मानुसार यह जीव सुखदुख भोगवै है, समयविषैं उत्तम पात्रोंको विधिसे दान देना अर दयाभाव करि सदा ही सबको देना अर अन्त समयमें समाधिमरण करना अर सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति किसी उत्तम जीवहीके होय है कैएकके तो विद्या दशवर्षमें सिद्ध होय है कैएकके क्षणमात्रमें यह सब कर्मनिका प्रभाव जानो। रात दिन धरतीविषैं भ्रमण करो, अथवा जलविषैं प्रवेश करो तथा पर्वतके मस्तक परो, अनेक शरीरके कष्ट करो तथापि पुण्यके उदय विना कार्यसिद्धि नाहीं। जे उत्तम कर्म नाहीं करैं हैं ते वृथा ही शरीर खोवैं हैं, तातैं आचार्यनिकी सेवा कार्य सर्व आदरतैं करनी, देखि। पुरुषनिको सदा पुण्य ही करना योग्य है। पुण्यविना कहांतैं सिद्धि होय ? हे श्रेणिक ! पुण्यका प्रभाव देखि जो थोडे ही दिनोंमें विद्या अर मंत्रविधि पूर्ण भये पहिले ही रावणको महाविद्या सिद्ध भई। जे जे विद्या सिद्धि भई तिनके संक्षेपतासे नाम सुनहु। नभःसंचारिणी, कामदायिनी, कामगामिनी, दुर्निवारा, जगतकंपा, प्रगुप्ति, भानुमालिनी, अणिमा, लघिमा, क्षोभ्या, मनस्तंभनकारिणी, संवाहिनी, सुरध्वंसी, कौमारी, वध्यकारिणी, सुविधाना, तमोरूपा, दहना, विपुलोदरी, शुभप्रदा, रजोरूपा, दिनरात्रिविधायिनी, वज्रोदरी, समाकृष्टि, अदर्शिनी, अजरा, अमरा, अनवस्तंभिनी, तोयस्तंभिनी, गिरिदारिणी, अवलोकिनी, ध्वंशी धीरा, घोरा, भुजंगिनी, वीरिनी, एकभुवना, अवध्या, दारुणा, मदनासिनी, भास्करी, भयसंभूति, ऐशानी, विजया, जया, बंधिनी मोचनी, वाराही, कुटिलाकृति, चित्तोद्भवकरी, शांति, कौवरी, वशकारिणी, योगेश्वरी, बलोत्साही, चंडा, भीतिप्रवर्षिणी इत्यादि अनेक महाविद्या रावणकों थोडे ही दिननिमें सिद्ध भईं। तथा कुम्भकरणको पांच विद्या सिद्ध भईं उनके नाम सर्वहारिणी, अतिसंवर्धिनी, जंभिनी, व्योमगामिनी, निद्रानी, तथा विभीषणको चार विद्या सिद्ध भईं सिद्धार्था, शत्रुदमनी, व्याघाता, आकाशगामिनी यह तीनों ही भाईविद्याके ईश्वर होते भए अर देवनिके उपद्रवतैं मानों नवे जन्ममें आए। तब यक्षोंका पति अनावृत जंबूद्वीपका स्वामी इनको

विद्यायुक्त देखकर बहुतस्तुति करी अर दिव्य आभूषण पहराए, रावणने विद्याके प्रभावकरि स्वयंप्रभनगर बसाया । वह नगर पर्वतके शिखर समान ऊंचे महलोंकी पंक्तिसे शोभायमान है अर रत्नमई चैत्यालयोंसे अति प्रभावको धरैं हैं । जहां मोतीनिकी झालरीकरि ऊंचे झरोखे शोभैं हैं, पद्मरागमणियोंके स्तंभ हैं, नानाप्रकारके रत्ननिके रंगके समूहकरि जहां इंद्रधनुष होय रह्या है, रावण भाईनिसहित ता नगरमें विराजै । कैसे हैं राजमहल ? आकाशमें लग रहे हैं शिखर जाके, विद्याबलकरि पंडित रावण सुखसूं तिष्टै ।

जंबूद्वीपका अधिपति अनावृत देव रावणसौं कहता भया—"हे महामते ! तेरे धैर्यकरि मैं बहुत प्रसन्न भया अर मैं सर्व जंबूद्वीपका अधिपति हू, तू यथेष्ट वैरियोंको जीतता संता सर्वत्र विहार कर । हे पुत्र ! मैं बहुत प्रसन्न भया, अर स्मरणमात्रतैं तेरे निकट आऊंगा । तब तुझे कोई भी न जीत सकेगा अर बहुत काल भाइयोंसहित सुखसों राज कर, तेरे विभूति बहुत होहु" या भांति आशीर्वाद देय वारंवार याकी स्तुतिकर यक्ष परिवारसहित अपने स्थानको गया । समस्त राक्षसवंशी विद्याधरोंने सुनी जो रत्नश्रवाका पुत्र रावण महाविद्यासंयुक्त भया सो सबको आनंद भया । सर्व ही राक्षस बडे उत्साह सहित रावणके पास आए । कैएक राक्षस नृत्य करैं हैं, कैएक गान करैं हैं, कैएक शत्रुपक्षकों भयकारी गाजैं हैं, कैएक ऐसे आनंद करि भरगये हैं कि आनंद अंगमें न समावै है, कैएक हंसै हैं, कैएक केलि कर रहैं हैं, सुमाली रावणका दादा अर छोटा भाई माल्य-वान तथा सूर्यरज रक्षरज राजा बानरवंशी सब ही सुजन आनंदसहित रावणपै चालैं, अनेक वाहनोंपर चढे हर्षसों आवैं हैं, रत्नश्रवा रावणके पिता पुत्रके स्नेहकरि भर गया है मन जाका ध्वजाओंसे आकाशको शोभित करता संता परम विभूति-सहित महामंदिरसमान रत्ननिके रथपर चढि आया । वंदीजन विरद बखानैं हैं, सर्व इकट्ठे होयकर पंचसंगम नामा पर्वतपर आए । रावण सन्मुख गया, दादा पिता अर सूर्यरज रक्षरज बडे हैं सो इनको प्रणामकर पांयन लागया अर भाईनिको बगलगीरि कर मिला, अर सेवक लोगोंको स्नेहकी नजरसे देख्या अर अपने दादा पिता अर सूर्यरज रक्षरजसौं बहुत विनयकर कुशलक्षेम पूछी ! बहुरि उन्होंने रावणसे पूछी, रावणको देख गुरुजन ऐसे खुशी भये जो कहनेमें न आवै । बारंबार रावणको सुखवार्ता पूछैं अर स्वयंप्रभ नगरको देखिकर अश्चर्यकों प्राप्त भए । देवलोक समान यह नगर ताकूं देख कर राक्षसवंशी अर बानरवंशी सब ही अति प्रसन्न भए, अर पिता रत्नश्रवा अर माता केकसी, पुत्रके गातको स्पर्शते संते अर इसको बारंबार प्रणाम करता हुआ देखकर बहुत आनंदको प्रप्त भए । दुपहरके समय रावणने बडोंको स्नान करावनेका उद्यम किया तदि सुमाली आदि रत्नोंके सिंहासनपर स्नानके अर्थि विराजे । सिंहासनपर इनक चरणपल्लवसारिखे कोमल अर लाल कैसे शोभते भए जैसैं उदयाचल पर्वतपर सूर्य शोभै । बहुरि स्वर्णरत्नोके कलशादिसे स्नान कराया । कलश

कमलके पत्रनिकरि अच्छादित हैं मुख जिनके अर मोतियोंकी मालाकरि शोभै हैं अर महा कांतिको धरैं हैं अर सुगंधजलकरि भरे हैं, जिनकी सुगंधिकरि दशों दिशा सुगंधमयी होय रही हैं अर जिनपर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं। स्नान करावते जब कलशोंका जल डारिए है तदि मेघ सारिखे गाजैं हैं, पहले सुगंध द्रव्यनिका उबटना लगाया पीछैं स्नान कराया। स्नानके समय अनेकप्रकारके वादित्र बाजे, स्नान कराकर दिव्य वस्त्राभूषण पहराए अर कुलवंतिनी रानियोंने अनेक मंगलाचरण किए, रावणादि तीनों भाई देवकुमार सारिखे गुरुनिका अति विनयकर चरणोंकी वंदना करते भए, तब बडोंने बहुत आशीर्वाद दिये 'हे पुत्रो! तुम बहुत काल जीवो अर महासपदा भोगो, तुम्हारीसी विद्या औरमें नाहीं'। सुमाली माल्यवान सूर्यरज रक्षरज अर रत्नश्रवा इन्होंने स्नेहकरि रावण कुंभकरण विभीषणको उरसों लगाया बहुरि समस्त भाई अर समस्त सेवकलोग भलीविधिसौं भोजन करते भए। रावणने बडेनिकी बहुत सेवा करी अर सेवक लोगोंका बहुत सन्मान किया, सबनिको वस्त्राभूषण दिये। सुमाली आदि सर्व ही गुरुजन फूलगए हैं नेत्र जिनके रावणसे अति प्रसन्न होय पूछतेभए। हे पुत्रो! तुम बहुत सुखसे रहो, तब नमस्कार कर कहते भए—हे प्रभो! हम आपके प्रसादकरि सदा कुशलरूप हैं, बहुरि मालीकी बात चाली, सो सुमाली शोकके भारकरि मूर्छा खाय गिरा, तदि रावणने शीतोपचारकरि सचेत किया अर समस्त शत्रुओंके समूहके घातरूप सामंतताके वचन कहकर दादाको बहुत आनंदरूप किया। सुमाली कमलनेत्र रावणको देखकरि अति आनंदरूप भए—अहो पुत्र! तेरा उदार पराक्रम जाहि देख देवता प्रसन्न होय। अहो कांति तेरी सूर्यको जीतनहारी, गंभीरता तेरी समुद्रसे अधिक है, पराक्रम तेरा सर्व सामंतनिकूं उलंघै, अहो वत्स! हमारे राक्षस कुलका तू तिलक प्रगट भया है जैसैं जंबूद्वीपका आभूषण सुमेरु है अर आकाशके आभूषण चांद सूर्य हैं, तैसैं हे पुत्र रावण! अब हमारे कुलका तू मंडन है। महा आश्चर्यकी करणहारी तेरी चेष्टा सकल मित्रोंको आनंद उपजावै है, जब तू प्रगट भया, तब हमकौं कया चिंता है। आगे अपने वंशमें राजा मेघवाहन आदि बडे २ राजा भये, वे लंकापुरीका राज करके पुत्रोंको राज देय मुनि होय मोक्ष गए। अब हमारे पुण्यकरि तू भया! सर्व राक्षसोंके कष्टका हरणहारा शत्रुवर्गका जीतनहारा तू महा साहसी हम एक मुखनैं तेरी प्रशंसा कहांलों करैं, तेरे गुण देव भी न कहि सकैं! ये राक्षसवंशी विद्याधर जीवनकी आशा छोड बैठे हुते सो अब सबकी आशा बंधी। तू महाधीर प्रगट भया है। एक दिन हम कैलाश पर्वत गए हुते, तहाँ अवधिज्ञानीमुनिको हमने पूछी कि--हे प्रभो! लंकामें हमारा प्रवेश होयगा कि नहीं?' तब मुनिने कही कि--'तुम्हारे पुत्रका पुत्र होयगा ताके प्रभावकरि तुम्हारा लंकामें प्रवेश होयगा। वह पुरुषोंमें उत्तम होयगा। तुम्हारा पुत्र रत्नश्रवा राजा व्योमबिंदुकी पुत्री केकसीको परणैगा ताकी कुक्षिमें वह पुरुषोत्तम प्रगट होयगा, सो भरतक्षेत्रके तीन

खण्डका भोक्ता होगा। महा बलवान, विनयवान, जाकी कीर्ति दशोंदिशामें विस्तरैगी। वह वैरियोंसे अपना वास छुडावैगा अर वैरियोंके वास दावैगा सो यामें आश्चर्य नाहीं, सो तू महा-उत्सवरूप कुलका मंडन प्रगट्या है, तेरासा रूप जगतमें और काहूका नाहीं, तू अपने अनुपमरूप-करि सबके नेत्र अर मनकों हरै है, इत्यादिक शुभ वचनोंसे सुमालीने रावणकी स्तुति करी। तब रावण हाथ जोड़ नमस्कारकरि सुमालीसों कहता भया कि हे प्रभो! तुम्हारे प्रसादकरि ऐसा ही होहु। ऐसा कहिकर णमोकार मंत्र जप पंचपरमेष्ठीनिकौं नमस्कार किया, सिद्धोंका स्मरण किया जिनसैं सर्व सिद्ध होंय।

आगैं गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसौं कहै हैं—हे श्रेणिक! उस बालकके प्रभावसे बन्धुवर्ग सर्व राक्षसवंशी अर बानरवंशी अपने अपने स्थानक आय बसे, वैरियोंका भय न किया। याभांति पूर्वभवके पुण्यसे पुरुष लक्ष्मीकों प्राप्त होय हैं। अपनी कीर्तिसे व्याप्त करी है दशों दिशा जिसने, इस पृथ्वीमें बडी उमरका बूढा होना तेजस्विताका कारण नाहीं है जैसैं अग्निका कण छोटा ही बडे वनको भस्म करै है अर सिंहका बालक छोटा ही माते हाथियोंके कुम्भस्थल विदारै है अर चन्द्रमा उगता ही कुमुदोंको प्रफुल्लित करै है अर जगतका संताप दूर करै है अर सूर्य ऊगता ही कालीघटासमान अंधकारको दूर करै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै रावणका जन्म और विद्यासाधन कहनेवाला सातवां पर्व पूर्ण भया ॥७॥

(अष्टम पर्व)

[दशानन (रावण) का कुटुम्बादि परिचय और विभवका दिग्दर्शन]

अथानंतर दक्षिण श्रेणीमें असुरसंगीत नामा नगर तहाँ राजा मय विद्याधर बडे योधा विद्याधरोंमें दैत्य कहावैं, जैसैं रावणके बडे राक्षस कहावैं, इन्द्रके कुलके देव कहावैं। ये सब विद्याधर मनुष्य हैं। राजा मयकी रानी हैमवती पुत्री मन्दोदरी, जिसके सर्व अंगोपांग सुन्दर, विशाल नेत्र, रूप अर लावण्यता रूपी जलकी सरोवरी ताकों नवयौवनपूर्ण देख पिताको परणा-वनेकी चिंता भई। तब अपनी रानी हैमवतीसौं पूछ्या 'हे प्रिये! अपनी पुत्री मंदोदरी तरुण अवस्थाकों प्राप्त भई सो हमको बडी चिंता है। पुत्रियोंके यावनके आरम्भसे जो संतापरूप अग्नि उपजै तामें माता पिता कुटुम्बसहित इंधनके भावको प्राप्त होय हैं तातैं तुम कहो, यह कन्या किसको परणावैं? गुणमें कुलमें कान्तिमें इसके समान होय ताकों दैनी। तब रानी कहती भई हे देव! हम पुत्रीके जनने अर पालनेमें हैं। परणावना तुम्हारै आश्रय है जहां तुम्हारा चित्त

प्रसन्न होय तहां देहु। जो उत्तम कुलकी बालिका हैं ते भरतारके अनुसार चालैं हैं। जब रानीने यह कह्या तब राजाने मंत्रिनितैं पूछ्या। तब किसीने कोई बताया, किसीने इंद्र बताया कि वह सब विद्याधरोंका पति है ताकी आज्ञालोपतैं सर्व विद्याधर डरैं हैं। तब राजा मयने कही मेरी तो रुचि यह है जो यह कन्या रावणको दैनी, क्योंकि उसको थोडे ही दिनोंमें सर्व विद्या सिद्ध भई हैं तातैं यह कोई बडा पुरुष है, जगतको आश्चर्यका कारण है तब राजाके वचन मारीच आदि सब मंत्रियोंने प्रमाण किये। मंत्री राजाके साथ कार्यमें प्रवीण है। तब भले ग्रह लग्न देख क्रूर ग्रह टार मारीचको साथ लेय राजा मय कन्याके परणावनेको कन्या रावणपै ले चाले। रावण भीम नामा वनमैं चंद्रहास खड्ग साधनेको आये हुते अर चंद्रहासको सिद्धकर सुमेरुपर्वतके चैत्यालयोंकी वन्दनाको गए हुते, सो राजा मय हलकारोंके कहनेसे भीम नामा वनमें आये, कैसा है वह वन? मानों काली घटाका समूह ही है, जहाँ अति सघन अर ऊँचे वृक्ष हैं, वनके मध्य एक ऊंचा महल देख्या मानो अपने शिखरनिकरि स्वर्गको स्पर्शै है। रावणने जो स्वयंप्रभ नामा नया नगर बसाया है ताके समीप ही यह महल है, सो राजा मय विमानतैं उतरि करि महलके समीप डेरा किया अर वादित्रादि सर्व आडम्बर छोडि कैएक निकटवर्ती लोकनि सहित मन्दोदरी को लेय महलपर चढे। सातवें खण गये तहाँ रावणकी बहिन चन्द्रनखा बैठी हुती, कैसी है चन्द्रनखा? मानो साक्षात् वनदेवी ही है। या चन्द्रनखाने राजा मयको अर ताकी पुत्री मंदोदरीको देखकर बहुत आदर किया सो बडे कुलके बालकनिके यह लक्षण ही हैं, बहुरि विनयसंयुक्त इनके निकट बैठी। तब राजामय चन्द्रानखाको पूछते भये 'हे पुत्री! तू कौन है? कौन कारण या वनमैं अकेली बसै है?' तब चन्द्रनखा बहुत विनयसों बोली--'मेरा बडा भाई रावण सो बेला करि चंद्रहास खड्गको सिद्ध करि अब मोहि खड्गकी रक्षा सोंपि सुमेरुपर्वतके चैत्यालयनिकी वन्दनाको गए हैं। मैं भगवान श्रीचंद्रप्रभुके चैत्यालयविषैं तिष्ठूं हूँ, तुम बडे हितू संबधी हो जो तुम रावणसूं मिलवे आये हो, तो क्षणइक यहाँ विराजो।' या भांति इनके बात होय है अर रावण आकाशके मार्ग होय आये ही, सो तेजका समूह नजर आया। तब चन्द्रनखाने कही 'अपने तेजसे सूर्यके तेजको हरता थका यह रावण आया है।' तब राजामय "मेघनिके समूह समान श्यामसुन्दर अर विजुरी समान चमकते हुये आभूषण पहिरे" रावणकूं देखि बहुत आदरतैं उठ खडे रहे, अर रावणसैं मिले अर सिंहासनपर विराजे, तब राजामयके मंत्री मारीच तथा वज्रमध्य अर वज्रनेत्र अर नभस्तडित्, उग्र, नक्र, मरुध्वज, मेधावी, सारण, शुक ये सब ही रावणको देखि बहुत प्रसन्न भए अर राजा मयसों कहते भये। 'हे देव! आपकी बुद्धि अति प्रवीण है, जो मनुष्यनिमें महा पदार्थ था सो तुम्हारे मनमें वस्या' याभांति मयसे कहकर ये मयके मंत्री रावणसौं कहते भए--'हे रावण! हे महाभाग्य! आपका अद्भुत रूप अर महा पराक्रम है अर तुम अति विनय-

वान अतिशयके धारी अनुपम वस्तु हो। यह राजामय दैत्योंका अधिपति दक्षिणश्रेणीमें असुर-संगीत नामा नगरका राजा है, पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध है। हे कुमार! तुम्हारे गुणनिविषैं अनुरागी हुआ आया है।'

तब रावणने इनका बहुत शिष्टाचार किया अर पाहुणगति करी अर बहुत मिष्ट वचन कहे। सो यह बड़े पुरुषनिके घरकी रीति ही है कि जो अपने द्वार आवैं तिनका आदर करैं ही करैं। रावण मयके मंत्रिनिसौं कहा कि ये दैत्यनाथ बड़े हैं मोहि अपना जान अनुग्रह किया। तब मयने कहा कि हे कुमार! तुमको यही योग्य है जे तुम सारिखे साधु पुरुष हैं तिनके सज्जनता ही मुख्य है। बहुरि रावण श्रीजिनेश्वरदेवकी पूजा करनेको जिनमंदिरविषैं गए। राजा मयको अर याके मंत्रीनिहूकूं ले गये। रावणने बहुत भावसे पूजा करी, भगवानके आगैं स्तोत्र पढे, बारम्बार हाथ जोड़ि नमस्कार किये रोमांच होय आये, अष्टांग दंडवतकर जिनमंदिरतें बाहिर आए। कैसे है रावण? अधिक है उदय जिनका अर महासुन्दर है चेष्टा जिनकी, चूडमणि करि शोभै है शिर जिनका, चैत्यालयतैं बाहिर आय राजा मयसहित आप सिंहासनपर विराजे। राजासे वैताड पर्वतके विद्याधरोंकी बात पूछी अर मंदोदरीकी ओर दृष्टि गई तो देखकर मन मोहित भया। कैसी है मंदोदरी? सौभागरूप रत्ननिकी भूमिका, सुन्दर हैं नख जाके, कमल समान हैं चरण जाके, स्निग्ध है तनु जाका अर केलाके थंभसमान मनोहर है जंघा जाकी, लावण्यतारूप जलका प्रभाव ही है, महालज्जाके योगतैं नीची है दृष्टि जाकी, सुवर्णके कुंभसमान हैं स्तन जाके पुष्पोंसे अधिक है सुगंधता अर सुकुमारता जाकी अर कोमल हैं दोऊ भुजलता जाकी अर शंखके कंठ समान है ग्रीवा (गरदन) जाकी पूर्णिमाके चन्द्रमा समान है मुख जाका शुकहूतैं अधिक सुन्दर है नासिका जाकी, मानो दोऊ नेत्रनिकी कांतिरूपी नदीका यह सेतुबन्ध ही है। मूंगा अर पल्लवसे अधिक लाल हैं अधर (होठ) जाके, अर महाज्योतिको धरैं अति मनोहर हैं कपोल जाके, अर वीणा का नाद, भ्रमरका गुंजार अर उन्मत्त कोयलके शब्दमें भी अति सुन्दर हैं शब्द जाके, अर कामकी दूती समान सुन्दर है दृष्टि जाकी, नीलकमल अर रक्तकमल अर कुमुद भी जीते ऐसी श्यामता आरक्तता शुक्लताको धरैं, मानों दशोंदिशामें तीन रङ्गके कमलोंके समूह ही विस्तार राखे हैं अर अष्टमीके चन्द्रमा समान मनोहर है ललाट जाका अर लम्बे बांके काले सुगन्ध सघन सचिक्कण हैं केश जाके, कमल समान है हाथ अर पाव जाके अर हंसनी तथा हस्तिनीकी चालकूं जीतै ऐसी है चाल जाकी अर सिंहहूतैं अति क्षीण है कटि जाकी, मानों साक्षात् लक्ष्मी ही कमलके निवासको तजकर रावणके निकट ईर्षाको धरती हुई आई है। क्योंकि मेरे होते संते रावणके शरीरको विद्या क्यों स्पर्शै, ऐसैं अद्भुत रूपको धरणहारी मंदोदरी रावणके मन अर नयननिकूं हरती भई। सकल रूपवती स्त्रीनिके रूप लावण्य एकत्रकरि इसका

शरीर शुभ कर्मनिके उदयकरि बना है, अंग अंगमें अद्भुत आभूषण पहरैं महा मनोज्ञ मंदोदरीको अवलोकनिकरि रावणका हृदय काम बाणकरि बींध्या गया, महा मधुरताकरि युक्त जो वह ताविषैं रावणकी दृष्टि गयी संती नीठ नीठ पाछी आई; परंतु मत्त मधुकरकी नाईं घूमने लग गई, रावण चित्तमें चिंतवै है कि यह उत्तम नारी कौन है? श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, सरस्वती इनमेंसौं यह कौन है? परणी है वा कुमारी? समस्त श्रेष्ठ स्त्रियोंकी यह शिरोभाग्य है, यह मन इन्द्रियनिकौं हरणहारी, जो मैं परणूं तो मेरा नवयौवन सफल है, नाहीं तो तृणवत् वृथा है। ऐसा चिंतवन रावणने किया। तब राजा मय मन्दोदरीके पिता बडे प्रवीण याका अभिप्राय जानि मन्दोदरीको निकट बुलाय रावणसौं कही—"याके तुम ही पति हो' यह वचन सुन रावण अतिप्रसन्न भया मानों अमृतकरि सींच्या है गात जाका, हर्षके अंकुर समान रोमांच होय आए। सर्व वस्तुनिकी इनके सामग्री हुती ही, ताही दिन मन्दोदरीका विवाह भया। रावण मंदोदरीकौं परणकरि अति प्रसन्न होय स्वयंप्रभ नगरमें गए, राजा मय भी पुत्रीको परणाय निश्चिंत भए। पुत्रीके विछोहतैं शोकसहित अपने देशको गए। रावणने हजारों राणी परणीं, उन सबकी शिरोमणी मंदोदरी होती भई। मंदोदरी भर्त्तारके गुणोंमें हरा गया है मन जाका पतिकी अति आज्ञाकारणी होती भई, रावण तासहित जैसैं इंद्र इंद्राणी-सहित रमै तैसैं सुमेरुके नंदनवनादि रमणीक स्थाननिमैं रमते भये। कैसी है मंदोदरी? सर्व चेष्टा मनोज्ञ हैं जाकी, अनेक विद्या जो रावणने सिद्ध करी हैं तिनकी अनेक चेष्टा रावण दिखावते भए। एक रावण अनेक रूप धर अनेक स्त्रियोंके महलोंमें कौतूहल करैं, कभी सूर्यकी नाईं तपै, कभी चंद्रमाकी नाईं चांदनी विस्तारैं, अमृत बरसै कभी अग्निकी नाईं ज्वाला विस्तारै कभी मेघकी नाईं जलधारा स्रवै, कभी पवनकी नाईं पहाड़ोंको चलावै, कभी इन्द्रकीसी लीला करै, कभी वह समुद्रकीसी तरंग धरै, कभी वह पर्वत समान अचल दशा ग्रहै। कभी माते हाथी समान चेष्टा करै, कभी पवनतैं अधिक वेगवाला अश्व बन जाय। क्षणमें नजीक, क्षणमें अदृश्य, क्षणमें सूक्ष्म क्षणमें स्थूल, क्षणमें भयानक, क्षणमें मनोहर या भांति रमता भया।

एक दिवस रावण मेघवर पर्वतपर गया तहां एक वापिका देखी। निर्मल है जल जाका अनेक जातिके कमलनिसे रमणीक है अर क्रौंच हंस चकवा सारस इत्यादि अनेक पक्षीनिके शब्द होय रहे हैं। अर मनोहर हैं तट जाके, सुंदर सिवाणोंकरि शोभित हैं, जिसके समीप अर्जुन आदि जातिके बडे बडे वृक्षोंकी छाया होय रही है, जहां चंचल मीनकी कलोलनिकरि जलके छींटे उछल रहे है। तहां रावण अति सुदंर छै हजार राजकन्या क्रीडा करती देखीं। कैएक तो जलकेलिमें छींटे उछालै हैं, कैएक कमलनिके वनमें घुसी हुई कमलवदनी कमलनिकी शोभाको जीतै हें। भ्रमर कमलोंकी शोभाको छोड़कर इनके मुखपर गुंजार करैं हैं, कैएक मृदंग

बजावै हैं, कैएक वीण बजावैहैं, ये समस्त कन्या रावणको देखकरि जलक्रीडाकौं तज खडी होय रहीं, रावण भी उनके बीच जाय जल-क्रीडा करने लगे, तब वे भी जलक्रीडा करने लगगई। वे सर्व रावणका रूप देख कामवाणकरि बींधी गई। सबकी दृष्टि यासौं ऐसी लगी जो अन्यत्र न जाय। याके अर उनके रागभाव भया। प्रथम मिलापकी लज्जा अर मदनका प्रगट होना सो तिनका मन हिंडौलेमें झूलता भया। तिन कन्याओंमें जो मुख्य हैं उनका नाम सुनो, राजा सुरसुंदर रानी सर्वश्रीकी पुत्री पद्मावती, नीलकमल सारिखे हैं नेत्र जाके बहुरि राजा बुध राणी मनोवेगा ताकी कन्या अशोकलता मानो साक्षात् अशोककी लता ही है। अर राजा कनक राणी संध्याकी पुत्री विद्युत्प्रभा जो अपनी प्रभाकर विजुलीकी प्रभाको लज्जावंत करै है सुंदर है दर्शन जाका, बड़े कुलनिकी बेटी, सब ही अनेक कलाकर प्रवीण उनमें ये मुख्य हैं मानो तीन लोककी सुंदरता ही मूर्ति धरकर विभूति सहित आई हैं। सो रावण ये छैः हजार कन्या गंधर्व विवाहकर परणी। ते भी रावणसहित नाना प्रकारकी क्रीडा करती भई।

तदि इनकी लार जे खोजे वा सहेली हुतीं ते इनके माता पितानिसे सकल वृत्तांत जाकर कहती भई। तब उन राजाओंने रावणके मारिवेको क्रूर सामन्त भेजे, ते भ्रुकुटी चढाए होठ डसते आए, नाना प्रकारके शस्त्रोंकी वर्षा करते भए। ते सकल अकेले रावणने क्षणमात्रमें जीत लिये। तदि भागकर कांपते हुये राजा सुरसुंदरपै गए, जायकर हथियार डार दिये अर बीनती करते भए 'हे नाथ! हमारी आजीविकाकों दूर करो अथवा घर लूट लेवो अथवा हाथ पांव छेदो तथा प्राण हरो, हम रत्नश्रवाका पुत्र जो रावण तासूं लडवेको समर्थ नाहीं। ते समस्त छै हजार राजकन्या उसने परणीं अर उनके मध्य क्रीड़ा करै है। इंद्र सारिखा सुंदर चंद्रमा समान कांतिधारी, जाकी क्रूर दृष्टि देव भी न सहार सकैं, ताके सामने हम रंक कौन? हमनैं घनें ही सूरवीर देखे, रथनूपुरकाधनी राजाइंद्र आदि याकी तुल्य कोऊ नाहीं। यह परम सुंदर महा शूरवीर है। ऐसे वचन सुन राजा सुरसुंदर महा क्रोधायमान होय राजा बुध अर कनक सहित बड़ी सेना लेय निकसे और भी अनेक राजा इनके संग भए, सो आकाशमें शस्त्रनिकी कांतिसे उद्योत करते आए। इन सब राजाओंको देखकरि ये समस्त कन्या भयकर व्याकुल भई अर हाथ जोड़ रावणसौं कहती भई कि हे नाथ! हमारे कारण तुम अत्यंत संशयको प्राप्त भए, हम पुण्यहीन हैं अब आप उठकर कहीं शरण लेवो; क्योंकि ये प्राण दुर्लभ हैं तिनकी रक्षा करो। यह निकट ही श्रीभगवानका मंदिर है तहां छिप रहो, यह क्रूर बैरी तुमको न देख आप ही उठ जावेंगे। ऐसे दीन वचन स्त्रीनिके सुन अर शत्रूनिका कटक निकट आया देख रावणने लाल नेत्र किये अर इनिसौं कहते भए, 'तुम मेरा पराक्रम नाहीं जानो हो, काक अनेक भेले भए तो कहा, गरुडको जीतेंगे? एक सिंहका बालक अनेक मदोन्मत्त हाथियोंके मदकूं दूर करै है।' ऐसे

रावणके वचन सुन स्त्री हर्षित भई, अर बीनती करी "हे प्रभो! हमारे पिता अर भाई अर कुटुंबनिकी रक्षा करहु" तब रावण कहते भए-'हे प्यारी हो! ऐसैं ही होयगा तुम भय मत करो, धीरता गहो।, यह बात परस्पर होय है। इतनेमें राजाओंके कटक आए, तदि रावण विद्याके रचे विमानमें बैठ क्रोधकरि उनके सन्मुख भया ते सकल राजा उनके योधाओंके समूह जैसैं पर्वतपर मोटी धारा मेघकी बरसे तैसैं बाणोंकी वर्षा करते भए। वह रावण विद्याओंके सागर ताने शिलानिपरि सर्व शस्त्र निवारे अर कैयकनिको शिलानकरि ही भयको प्राप्त किए। बहुरि मनमें विचारा कि इन रंकोंके मारवेकरि कहा इनमें जो मुख्य राजा हैं तिनहीको पकड लेवो। तब इन राजानिकों तामस शस्त्रोंसे मूर्छितकर नागपाससे बांधलिया। तब इन छै हजार स्त्रियोंने बीनती कर छुडाये, तदि रावणने तिन राजानिकी बहुत सुश्रूषा करी। तुम हमारे परम हितु संबंधी हो, तब वे रावणका शूरत्वगुण देख महा विनयवान रूपवान देख बहुत प्रसन्न भए। अपनी अपनी पुत्रीनिका विधिपूर्वक पाणिग्रहण कराया। तीन दिन तक महा उत्सव प्रवर्त्या। ते राजा रावणकी आज्ञा लेय अपने अपने स्थानकों गए। रावण मंदोदरीके गुणोंकर मोहित है चित्त जाका सो स्वयंप्रभ नगरमें आए तब याको स्त्रीनसहित आया सुन कुंभकरण विभीषण भी सन्मुख गए, रावण बहुत उत्साहसे स्वयंप्रभनगरमें आए अर सुरराजवत् रमते भए।

अथानंतर कुंभपुरका राजा मंदोदर ताके राणी स्वरूपा ताकी पुत्री तडिन्माला सो कुंभकर्ण जाका प्रथम नाम भानुकर्ण था, तानैं परणी। कैसे हैं कुम्भकर्ण? धर्मविषैं आसक्त है बुद्धि जिनकी, अर महा योधा हैं अनेक कलागुणमें प्रवीण हैं। हे श्रेणिक! अन्यमती लोक जो इनकी कीर्ति और भांति कहै हैं कि मांस अर लोहूका भक्षण करते हुते, छै महीनाकी निद्रा लेते सो नाहीं। इनका आहार बहुत पवित्र स्वादरूप सुगंधमय था, प्रथम मुनीनिकों आहार देय अर आर्यादिकको आहार देय दुखित भुखित जीवनिको आहार देय कुटुंब सहित योग्य आहार करते हुते। मांसादिककी प्रवृत्ति नहीं थी। अर निद्रा इनको अर्धरात्रि पीछे अलप थी, सदाकाल धर्मविषैं लवलीन था चित्त जिनका। चरमशरीरी जो लोग बडे पुरुषनिको झूठा कलंक लगावै हैं ते महापापका बंध करै है ऐसा करना योग्य नाहीं।

अथानंतर दक्षिण श्रेणीमें ज्योतिप्रभनामा नगर तहां राजा विशुद्धकमल राजा मयका बडा मित्र ताके रानी नंदनमाला पुत्री राजीवसरसी सो विभीषणने परणी, अति सुंदर उस रानी सहित विभीषण अति कौतूहल करते भए अनेक चेष्टा करते जिनको रतिकेलि करते तृप्ति नाहीं। कैसे हैं विभीषण? देवनिके समान परम सुंदर है आकार जिनका। अर कैसी है रानी? लक्ष्मीसे भी अधिक सुंदर है। लक्ष्मी तो पद्म कहिए कमल ताकी निवासिनी है अर यह रानी पद्मराग-मणिके महलकी निवासिनी है।

अथानंतर रावणकी राणी मंदोदरी गर्भवती भई सो याकों माता पिताके घर लैगए तहां इंद्रजीतका जन्म भया। इंद्रजीतका नाम समस्त पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध हुआ। अपने नानाके घर वृद्धिको प्राप्त भया, सिंहके बालककी नाईं साहसरूप उन्मत्त क्रीडा करता भया। रावणने पुत्रसहित मंदोदरी अपने निकट बुलाई, सो आज्ञा प्रमाण आई। मंदोदरीके माता पिताकों इनके विछोहका अति दुःख भया। रावण पुत्रका मुख देखकरि परम आनंदको प्राप्त भया, सुपुत्र समान और प्रीतिका स्थान नाहीं, फिर मंदोदरीकों गर्भ रह्या, तदि माता पिताके घर फेरि लेगए तहां मेघनादका जन्म भया। फिर भरतारके पास आई, भोगके सागरमें मग्न भई। मंदोदरीने अपने गुणोंसे पतिका चित्त वश किया। अब ये दोनों बालक इंद्रजीत अर मेघनाद सज्जनोंको आनदके करणहारे सुंदर चारित्रके धारक तरुण अवस्थाकूं प्राप्त भए। विस्तीर्ण हैं नेत्र जिनके, सो वृषभ समान पृथ्वीका भार चलावनहारे हैं॥

अथानंतर वैश्रवण जिन जिन पुरोंमें राज करै, उन हजारों पुरोंमें कुम्भकरण धावे करते भये। जहां इंद्रका वैश्रवणका माल होय सो छीनकर अपने स्वयंप्रभ नगरीमें ले आवैं या बातसों वैश्रवण इंद्रके जोरकरि अति गर्वित है। सो वैश्रवणका दूत द्वारपालसों मिल सभामें आया, अर सुमालीसों कहता भया। हे महाराज। वैश्रवण नरेंद्रने जो कह्या है सो तुम चित्त देय सुनो। वैश्रवणने यह कहा है कि तुम पंडित हो, कुलीन हो, लोकरीतिके ज्ञायक हो, बडे हो, अकार्यतैं भयभीत हो, औरोंको भले मार्गके उपदेशक हो, ऐसे जो तुम सो तुम्हारे आगैं ये बालक चपलता करैं, तो क्या तुम अपने पोतानिको मनैं न करो। तिर्यंच अर मनुष्यमें यही भेद है कि मनुष्य तो योग्य अयोग्यको जानै है अर तिर्यंच न जानै है, यही विवेककी रीति है करने योग्य कार्य करिए, न करने योग्य कार्य न करिए। जो दृढ चित्त हैं वे पूर्व वृत्तांतको नाहीं भूलें हैं अर बिजुलीसमान क्षणभंगुर विभूतिके होते संतै भी गर्वको नाहीं धरै हैं। आगैं क्या राजा मालीके मरवेकरि तुम्हारे कुलकी कुशल भई है? अब यह क्या स्यानपन है जो कुलके मूलनाशका उपाय करते हो। ऐसा जगतमैं कोऊ नाहीं जो अपने कुलके मूलनाशको आदरै। तुम कहा इंद्रका प्रताप भूल गए जो ऐसे अनुचित काम करो हो, कैसे हैं इंद्र? विध्वंस किये हैं समस्त वैरी जानैं समुद्र समान अथाह है बल जाका, सो तुम मींडकके समान सर्पके मुखमें क्रीडा करो हो। कैसा है सर्पका मुख? दाढरूपी कंटकनिकरि भरया है अर विषरूपी अग्निके कण जामैंतैं निकसै हैं ये तुम्हारे पोते चौर हैं अपने पोते पडोतोंको जो तुम शिक्षा देनेको समर्थ नाहीं हो तो मुझै सोंपो, मैं इनको तुरन्त सीधे करूं अर ऐसा न करोगे तो समस्त पुत्र पौत्रादि कुटुम्बसहित बेडियोंसे बंधे मलिन स्थानमें रुके देखोगे, तामैं अनेक भांतिकी पीडा इनको होगी। पाताल लंकातैं नीठि २ (मुश्किलतैं) बाहिर निकसे हो, अब फिर तहां ही प्रवेश

किया चाहो हो ? या प्रकार दूतके कठोर वचनरूपी पवनकरि स्पर्श्या है मनरूपी जल जिसका ऐसा रावणरूपी समुद्र अति क्षोभको प्राप्त भया। क्रोधकरि शरीरमें पसेव आय गया अर आंखोंकी आरक्ततासैं समस्त आकाश लाल होय गया, अर क्रोधरूपी स्वरके उच्चारणतैं सर्व दिशा बधिर करता हुआ, अर हाथियोंका मद निवारता हुवा गाज कर ऐसा बोल्या "कौन है वैश्रवण अर कौन है इन्द्र ? जो हमारे गोत्रकी परिपाटी करि चली आई जो लंका, ताको दाब रहे हैं। जैसैं काग अपने मनमें सियाना होय रहै अर स्याल आपको अष्टापद मानैं, तैसैं वह रंक आपको इन्द्र मान रह्या है सो वह निर्लज्ज है अधम पुरुष है अपने सेवकनिपै इन्द्र कहाया तो क्या इन्द्र होय गया ? हे कुदूत ! हमारे निकट तू ऐसे कठोर वचन कहता हुआ भी कुछ भय नाहीं करै है ?" ऐसा कहकर म्यानतैं खड्ग काढ्या सो आकाश खड्गके तेज करि ऐसा व्याप्त होगया जैसैं नीलकमलोंके वनकरि महा सरोवर व्याप्त होय।

तब विभीषणने बहुत विनयकरि रावणसैं विनती करी, अर दूतको मारने न दिया अर यह कहा "महाराज ! यह पराया चाकर है इसका अपराध क्या ? जो वह कहावै सो यह कहै। यामैं पुरुषार्थ नाहीं। अपनी देह आजीविकानिमित्त पालनेको बेची है यह सूआ समान है। ज्यों दूसरा बुलावै त्यों बोलैं। यह दूत लोग हैं इनके हिरदेमें इनका स्वामी पिशाचरूप प्रवेश कर रह्या है। उसके अनुसार वचन प्रवर्तें हैं जैसें वाजिंत्री जा भांति बादित्रको बजावै ताही भांति बाजैं, तैसैं इनका देह पराधीन है स्वतन्त्र नाहीं, तातैं हे कृपानिधे ! प्रसन्न होवो अर दुखी जीवों पर दया ही करो। हे निष्कपट, महाधीर ! रङ्कनिके मारवेतैं लोकमैं बडी अपकीर्ति होय है। यह खड्ग तुम्हारा शत्रुलोगोंके शिरपर पडैगा, दीननिके वध करवेयोग्य नाहीं। जैसैं गरुड गेडुओंको न मारै तैसैं आप अनाथनिको न मारो" या भांति विभीषणने उत्तम वचन रूपी जलकरि रावणकी क्रोधाग्नि बुझाई। कैसे हैं विभीषण ? महासत्पुरुष हैं, न्यायके वेत्ता है। रावणके पायनि पड़ि दूतको बचाया अर सभाके लोकोंने दूतको बाहिर निकाला। धिक्कार है सेवकका जन्म जो पराधीन दुःख सहै है।

दूतने जायकरि सर्व समचार वैश्रवणसैं कहे। रावणके मुखकी अत्यंत कठोरवाणीरूपी ईंधनसों वैश्रवणके क्रोध रूपी अग्नि उठी सो चित्तविषैं न समावै, वह मानों सर्व सेवकोंके चित्तको बांट दीनी। भावार्थ—सर्व क्रोधरूप भए। रण संग्रामके बाजे बजाए, वैश्रवण सर्व सेना लेय युद्धके अर्थि बाहिर निकसे या वैश्रवणके वंशके विद्याधर यक्ष कहावैं सो समस्त यक्षोंको साथ लेय राक्षसनिपर चाले। अति झलझलाट करते खड्ग सेल चक्र बाणादि अनेक आयुधोंको धरैं हैं अंजनगिरि समान माते हाथीनिके मद झरैं हैं मानों नीझरने ही हैं तथा बड़े रथ अनेक रत्नोंकरि जड़े संध्याके बादलके रंग समान मनोहर महा तेजवंत अपने वेगकरि पवनको जीतैं हैं

तैसे ही तुरंग अर पयादेनिके समूह समुद्र समान गाजते युद्धके अर्थि चाले। देवोंके विमान समान सुंदर विमानों पर चढ़े विद्याधर राजा वैश्रवणके लार चालै अर रावण इनके पहिले ही कुंभकरणादि भाईनि सहित बाहर निकसे। युद्धकी अभिलाषा रखती हुई दोनों सेनाओंका संग्राम गुंज नामा पर्वतके ऊपर भया, शस्त्रोंके संपातसे अग्नि दिखाई देने लगी। खड्गनिके घातसैं, घोड़ानिके हींसनेसैं, पयादानिके नादसे, हाथीनिके गरजनेतैं, रथानिके परस्पर शब्दसैं, वादित्रोंके बाजनेसे तथा वाणोंके उग्र शब्दसे इत्यादि अनेक भयानक शब्दोंसे रणभूमि गाज रही है, धरती आकाश शब्दायमान होय रहे हैं, वीर रसका राग होय है, योधाओंके मद चढ रह्या है, यमके वदन समान चक्र तीक्ष्ण है धारा जिनकी अर यमराजकी जीभ समान खड्ग रुधिरकी धारा वर्षावनहारी अर यमकै रोम समान सेल, यमका आंगुली समान शर (वाण) अर यमकी भुजा समान परिघ (कुल्हाड़ा) अर यमकी मुष्टि समान मुद्गर इत्यादि अनेक शस्त्रकरि परस्पर महायुद्ध प्रवर्त्या, कायरोंको त्रास अर योधाओंको हर्ष उपज्या। सामंत सिरके बदले यशरूप धनको लेवै हैं। अनेक राक्षस अर कपि जातिके विद्याधर अर यक्ष जातिके विद्याधर परस्पर युद्ध कर परलोककौं प्राप्त भए। कुछ इक यक्षोंके आगे राक्षस पीछे हटे तदि रावण अपनी सेनाको दबी देख आप रणसंग्रामको उद्यमी भए। कैसे हैं रावण? महामनोज्ञ सफेद छत्र सिरपर फिरै हैं जाके, कालमेघसमान चंद्रमंडलकी कांतिका जीतनहारा रावण धनुष बाण धारै, इंद्रधनुषसमान अनेक रंगका बखतर पहिरै, शिरपर मुकुट धरै, नाना प्रकारके रत्नोंके आभूषणसंयुक्त, अपनी दीप्ति करि आकाशमें उद्योत करता आया। रावणको देखकर यक्ष जातिके विद्याधर क्षणमात्र विलखे, तेज दूर होगया, रणकी अभिलाषा छोड पराङ्मुख भए, त्रासकरि आकुलित भया है चित्त जिनका, भ्रमरकी नाईं भ्रमते भए। तब यक्षोंके अधिपति बड़े बड़े योधा एकट्ठे होयकरि रावणके सन्मुख आए। रावण सबके छेदनेको प्रवर्त्या, जैसैं सिंह उछलकर माते हाथीनिके कुंभस्थल विदारै, तैसैं रावण कोपरूपी वचनके प्रेरे अग्निस्वरूप होयकर शत्रुसेनारूपी वनको दाह उपजावते भए। सो पुरुष नाहीं, सो रथ नाहीं, सो अश्व नाहीं, सो विमान नाहीं जो रावणके वाणोंसे न बींध्या गया। तब रावणको रणमें देख वैश्रवण भाईपनेका स्नेह जनावता भया अर अपने मनमें पछताया, जैसैं बाहुबलि भरतसौं लड़ाई करि पछताए हुते, तैसैं वैश्रवण रावणसौं विरोध करि पछताया। हाय! मैं मूर्ख ऐश्वर्यसे गर्वित होयकर भाईके विध्वंस करनेमें प्रवर्त्या। यह विचार करि वैश्रवण रावणसौं कहता भया—'हे दशानन! यह राजलक्ष्मी क्षणभंगुर है, याके निमित्त तू कहा पाप करै। मैं तेरी बड़ी मौसीका पुत्र हूं तातैं भाइयोंसे अयोग्य व्यवहार करना योग्य नाहीं। अर यह जीव प्राणियोंकी हिंसा करके महा भयानक नरककौं प्राप्त होय है, नरक महा दुखसौं भरया है। कैसे हैं जगतके जीव विषयोंकी अभिलाषामें फंसै हैं आंखोंकी पलक

मात्र क्षणमात्र जीवना क्या तू न जानै है। भोगोंके कारण पापकर्म काहेकों करै है? तब रावणने कहा—'हे वैश्रवण! यह धर्म श्रवणका समय नाहीं जो माते हाथियोंपर चढै अर खड्ग हाथमें धरै, सो शत्रुओंको मारे तथा आप मरै बहुत कहनेसे क्या? तू तलवारके मार्गविषैं तिष्ठ, अथवा मेरे पांवपरि पड़। यदि तू धनपाल है तो हमारा भंडारी हो, अपना कर्म करते पुरुष लज्जा न करै। तब वैश्रवण बोले—'हे रावण! तेरी आयु अल्प है तातैं ऐसे क्रूर वचन कहै है। शक्ति प्रमाण हमारे ऊपर शस्त्रका प्रहार कर। तब रावण कही—तुम बडे हो प्रथम वार तुम करो तब रावण ऊपर वैश्रवण बाण चलाए जैसैं पहाड़के ऊपर सूर्य किरण डारैं। सो वैश्रवणके बाण रावणने अपने बाणनिकरि काट डारे, अर अपने बाणनिकरि शर मण्डपकरि डारा। बहुरि वैश्रवण अर्धचंद्र बाणकरि रावणका धनुष छेद्या अर रथतैं रहित किया तदि रावणने मेघनादनामा रथपर चढकर वैश्रवणसूं युद्ध किया, उल्कापात समान वज्रदंडोंसे वैश्रणका बखतर चूर डारया। अर वैश्रवणके सुकोमल हृदयविषैं भिण्डमाल मारीं, सो मूर्छाकों प्राप्त भया। तब ताकी सेनाविषैं अत्यंत शोक भया अर राक्षसोंके कटकविषैं बहुत हर्ष भया। अर वैश्रवणके लोक वैश्रवणकूं रणखेततैं उठायकर यक्षपुर ले गए अर रावण शत्रुओंको जीतकर रणसे निवृत्ते। सुभटनिके शत्रुनिके जीतवेहीका प्रयोजन है, धनादिकका प्रयोजन नाहीं।

अथानंतर वैश्रवणका वैद्योंने यतन किया सो अच्छा हुवा तब अपने चित्तमें विचारै है जैसैं पुष्प रहित वृक्ष तथा सींग टूटा बैल, कमल विना सरोवर न सोहै, तैसैं मैं शूरवीरता विना न सोहू। जे सामंत हैं अर क्षत्रीवृत्तिका विरद धारै हैं तिनका जीतव्य सुभटताही करि शोभै है अर तिनकूं संसारविषैं पराक्रमहीतैं सुख है सो मेरे अब नाहीं रहा, तातैं अब संसारका त्यागकर मुक्तिका यत्न करूं। यह संसार असार है, क्षण भंगुर है, याहीतैं सत्पुरुष विषय-सुखकों नाहीं चाहै हैं। यह अंतराय-सहित है अर अल्प है दुखी है ये प्राणी पूर्वभवविषैं जो अपराध करै है ताका फल इस भवविषैं पराभव होय है सुख दुःखका मूलकारण कर्म ही है अर प्राणी निमित्तमात्र है तातैं ज्ञानी तिनसैं कोप न करै। कैसा है ज्ञानी संसारके स्वरूपको भली भांति जानै है। यह केकसीका पुत्र रावण मेरे कल्याणका निमित्त हुवा है जानै मोकूं गृहवासरूप महा फाँसीसैं छुडाया, अर कुम्भकरण मेरा परम बांधव, जानैं यह संग्रामका कारण मेरे ज्ञानका निमित्त बनाया ऐसा विचार कर वैश्रवणने दिगम्बरी दीक्षा आदरी। परमतपकूं आराधकरि परमधाम पधारे, संसार-भ्रमणसैं रहित भए।

अथानंतर रावण अपने कुलका अपमानरूप मैल धोकर सुख अवस्थाको प्राप्त भया, समस्त भाइयोंने उसको राक्षसोंका शिखर जाना वैश्रवणकी असवारीका पुष्पकनामा विमान महा मनोग्य है, रत्नोंकी ज्योतिके अंकुर छूट रहे हैं झरोखे ही हैं नेत्र जाके, निर्मल कांतिके धारणहारे,

महा मुक्ताफलकी झालरोंसे मानों अपने स्वामीके वियोगसे अश्रुपात ही डारैं है अर पद्मरागमणीनिकी प्रभातैं आरक्तताको धारैं है, मानों यह वैश्रवणका हृदय ही रावणके किये घावसे लाल होय रहा है अर इंद्रनील मणीनिकी प्रभा कैसैं अतिश्याम सुन्दरताकों धरैं हैं मानो स्वामीके शोकसे सांउला होय रहा है, चैत्यालय वन बापी सरोवर अनेक मंदिरोंसे मंडित मानों नगरका आकार ही है। रावणके हाथके नाना प्रकारके घावसे मानों घायल हो रहा है, रावणके मंदिरसमान ऊंचा जो वह विमान उसको रावणको सेवक रावणके समीप लाए। वह विमान आकाशका मंडन है। इस विमानको वैरीके भंगका चिह्न जान रावणने आदरा अर किसीका कुछ भी न लिया। रावणके किसी वस्तुकी कमी नाहीं। विद्यामई अनेक विमान हैं तथापि पुष्पक विमानमें विशेष अनुरागसे चढ़े। रत्नश्रवा तथा केकसी माता अर समस्त प्रधान सेनापति तथा भाई बेटों सहित आप पुष्पक विमानमें आरूढ़ भया अर पुरजन नाना प्रकारके वाहनों पर आरूढ़ भए, पुष्पकके मध्य महा कमलवन है तहां आप मंदोदरी आदि समस्त राजलोकों सहित आय विराजे। कैसे हैं रावण ? अखंड है गति जिनकी अपनी इच्छासे आश्चर्यकारी आभूषण पहर हैं अर श्रेष्ठ विद्याधरी चमर ढोरे हैं मलयागिरिके चन्दनादि अनेक सुगंध अंगपर लगी हैं, चंद्रमाकी कीर्ति समान उज्ज्वल छत्र फिरैं हैं मानों शत्रुओंके भंगसे जो यश विस्तारा है उस यशसे शोभायमान है। धनुष त्रिशूल खड्ग सेल पाश इत्यादि अनेक हथियार जिनके हाथमें ऐसे जो सेवक तिनकर संयुक्त हैं। महा भक्तियुक्त हैं अर अद्भुत कर्मनिके करणहारे हैं तथा बडे बडे विद्याधर राजा सामन्त शत्रुनिके समूहके क्षय करणहारे अपने गुणनिकरि स्वामीके मनके मोहनहारे महा विभवकरि शोभित तिनकरि दशमुख मंडित है परम उदार सूर्यकासा तेज धारता पूर्वोपार्जित पुण्यका फल भोगता संता दक्षिण समुद्रकी तरफ जहां लंका है ता ओर इंद्रकीसी विभूतिकरि युक्त चाल्या। कुंभकरण भाई हस्तीपर चढे, विभीषण रथपर चढे, अपने लोगों सहित महाविभूतिकरि मंडित रावणके पीछे चाल्यै। राजामय मंदोदरीके पिता दैत्यजातिके विद्याधरोंके अधिपति भाइयों सहित अनेक सामंतनिकरि युक्त तथा मारीच, अंबर, विद्युतवज्र, वज्रोदर, बुधवज्राक्ष, क्रूर, क्रूरनक्र, सारन, सुनय, शुक इत्यादि मंत्रियों सहित महा विभूतिकर मंडित अनेक विद्याधरोंके राजा रावणके संग चाल्ये। कैएक सिंहोंके रथ चढे, कैएक अष्टापदोंके रथपर चढकरि वन पर्वत समुद्रकी शोभा देखते पृथ्वीपर विहार किया अर समस्त दक्षिण दिशा वश करी।

अथानंतर एक दिन रावणने अपने दादा सुमालीसे पूछया-'हेप्रभो! हे पूज्य! या पर्वतके मस्तक पर सरोवर नाहीं सो कमलनिका वन कैसे फूल रहा है, यह आश्चर्य है अर कमलोंका वन चंचल होय यह निश्चल है।' या भांति सुमालीसूं पूछया। कैसा है रावण ? विनयकरि नम्रीभूत है शरीर जाका तब सुमाली 'नमः सिद्धेभ्यः' ये मंत्र पढकरि कहते भए-हे पुत्र! यह

कमलनिके बन नाहीं, या पर्वतके शिखरविषैं पद्मरागमणिमयी हरिषेण चक्रवर्तीके कराए चैत्यालय हैं। जिनपर निर्मल ध्वजा फरहरे हैं। अर नाना प्रकारके तोरणोंसे शोभे हैं। कैसे हैं हरिषेण ? महा सज्जन पुरुषोत्तम थे जिनके गुण कहनेमें न आवैं। हे पुत्र ! तू उतरकर पवित्र मन होकर नमस्कार कर। तब रावण बहुत विनय करि जिनमंदिरनिकूं नमस्कार किया अर बहुत आश्चर्यको प्राप्त भया, अर सुमालीसूं हरिषेण चक्रवर्तीकी कथा पूछी। हे देव ! आपने जिसके गुण वर्णन किए ताकी कथा कहो।' यह विनती करी। कैसा है रावण ? वैश्रवणका जीतनहारा बडेनिविषैं है अति विनय जाकी। तब सुमाली कहै है-हे रावण ! तैं भली पूछी। पापका नाश करणहारा हरिषेणका चरित्र सो सुन। कंपिल्यानगरविषैं राजा सिंहध्वज तिनके रानी वप्रा महा गुणवती सौभाग्यवती राजाके अनेक राणी थी परंतु राणी वप्रा उनमें तिलक थी, ताकै हरिषेण चक्रवर्ती पुत्र भए। चौसठ शुभ लक्षणनिकरि युक्त, पापकर्मके नाश करनहारे सो इनकी माता वप्रा महा धर्मवती सदा अष्टानिकाके उत्सवविषैं रथयात्रा किया करै सो याकी सौतन रानी महालक्ष्मी सौभाग्यके मदसे कहती भई कि पहिले हमारा ब्रह्मरथ नगरविषैं भ्रमण करेगा पीछे तिहारा निकसेगा। यह बात सुन रानी वप्रा हृदयविषैं खेदखिन्न भई मानों वज्रपातकरि पीडी गई। उसने ऐसी प्रतिज्ञा करी कि हमारे वीतरागका रथ अठाइयोंमें पहिले निकसे तो हमको आहार करना अन्यथा नाहीं, ऐसा कहकर सर्व काज छोड दिया, शोककरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका अर अश्रुपातकी बून्द आंखनिसों डालती हुई। माताको देखकर हरिषेण कही-'हे मात ! अब तक तुमने स्वप्नमात्रमें भी रुदन न किया, अब यह अमंगलकार्य क्यों करो हो ?' तदि माता सर्व वृत्तांत कह्या। सुनकर हरिषेण मनमें सोची कि क्या करूं ? एक ओर पिता एक ओर माता। मैं संकटमें पड्या, माताकूं अश्रुपात सहित देखवे समर्थ नाहीं अर एक ओर पिता जिनसूं कुछ कहा न जाय तदि उदास होय घरतैं निकसि वनकूं गए तहां मिष्ट फलनिका भक्षण करते अर सरोवरनिका निर्मल जल पीवते निर्भय विहार किया। इनका सुन्दर रूप देखकर ता वनके निर्दयी पशु भी शांत हो गये। ऐसे भव्य जीव किसको प्यारे न हों। तहां वनविषैं भी जब माताका रुदन याद आवै तब इनकूं ऐसी बाधा उपजै जो वनकी रमणीकताका सुख भूल जावै सो हरिषेण चक्रवर्ती वनविषैं वनदेवता समान भ्रमण करते जिनको मृगी नेत्रनिकरि देखे हैं सो वनविषैं विहार करते शतमन्यु नाम तापसके आश्रम गये। कैसा है आश्रम ? वनके जीवनिका है आश्रय जहां।

अथानन्तर कालकल्प नामा राजा अति प्रबल जाका बडा तेज अर बडी फौजसूं आनकर चंपा नगरी घेरी सो तहां राजा जनमेजय सो जनमेजय अर कालकल्पमें युद्ध भया। आगे जनमेजयने महलमें सुरंग बना राखी हुती सो ता मार्ग होयकर जनमेजयकी माता नागमती

अपनी पुत्री मदनावली सहित निकसी अर शतमन्यु तापसके आश्रममें आई। सो नागमतीकी पुत्री हरिषेण चक्रवर्तीका रूप देखकर कामके बाणनिकरि बींधी गई। कैसे हैं कामके बाण? शरीरमें विकलताके करणहारे हैं। तब वाकू और भांति देख नागमती कहती भई-हे पुत्री! तू विनयवान होयकर सुनि कि मुनिने पहिले ही कहा हुता कि यह कन्या चक्रवर्तीकी स्त्रीरत्न होयगी सो यह चक्रवर्त्ती तेरे वर हैं। यह सुनकर अति आसक्त भई। तब तापसीने हरिषेणको निकास दिया; क्योंकि उसने विचारी कि कदाचित् इनके संसर्ग होय तो इस बातसे हमारी अपकीर्ति होयगी। सो चक्रवर्ती इनके आश्रमसे और ठौर गये अर तापसीको दीन जान युद्ध न किया। परंतु चित्तमें वह कन्या बसी रही सो इनको भोजनविषैं अर शयनविषैं काहू प्रकार स्थिरता नाहीं। जैसे भ्रामरी विद्याकरि कोऊ भ्रमै तैसैं ये पृथ्वीमें भ्रमते भए। ग्राम, नगर, वन, उपवन, लताओंके मंडपमें इनको कहीं भी चैन नाहीं, कमलोंके वन दावानल समान दीखै अर चंद्रमाकी किरण वज्रकी सूई समान दीखै अर केतकी वरछी की अणी समान दीखै,पुष्पोंकी सुगंध मनको न हरै चित्तमें ऐसा चिंतवते भए जो मैं यह स्त्रीरत्न वरूं तो मैं जायकर माताका भी शोक संताप दूर करूं। नदियोंके तटनिपर अर वनविषैं ग्रामविषैं नगरविषैं, पर्वतपर भगवानके चैत्यालय कराऊं। यह चिंतवन करते संते अनेक देश भ्रमते सिन्धुनंदन नगरके समीप आए। कैसे हैं हरिषेण? महा बलवान अति तेजस्वी हैं वहां नगरके बाहिर अनेक स्त्री क्रीड़ाको आई हुतीं, सो एक अंजनगिरि समान हाथी मद झरता स्त्रियोंके समीप आया। महावतने हेला मारकर स्त्रियोंसे कही "जो यह हाथी मेरे वश नाहीं, तुम शीघ्र ही भागो! तब वे स्त्रियां हरिषेणके शरणे आईं, हरिषेण कैसा है परम दयालु है महायोधा हैं। वह स्त्रियोंको पीछे करके आप हाथीके सन्मुख भए, अर मनमें विचारी जो वहां तो वे तापस दीन थे तातें उनसे मैंने युद्ध न किया वे मृग समान थे परंतु यहां यह दुष्ट हस्ती मेरे देखते स्त्री बालादिकको हने अर मैं सहाय न करूं सो यह क्षत्रीवृत्ति नाहीं, यह हस्ती इन बालादिक दीन जनको पीडा देनेको समर्थ है जैसे बैल सींगोंसे बांबीनकूं खोदै परंतु पर्वतके खोदनेको समर्थ नाहीं, अर कोई बाणसे केलेके वृक्षको छेदे परंतु शिलाको न छेद सकै तैसैं ही यह हाथी योधाओंको उड़ायवे समर्थ नाहीं, तदि आप महावतको कठोर वचनकरि कही कि हस्तीको यहांसे दूर कर, तब महावतने कही तू भी बड़ा ढीठ है, हाथीको मनुष्य जानै है, हाथी आप ही मस्त होय रहा है तेरी मौत आई है अथवा दुष्ट ग्रह लग्या है, सो तूं यहांसे वेगि भाग, तब आप हँसे अर स्त्रियोंको तो पीछे कर अर आप ऊपरको उछल हाथीके दांतनिपर पग देय कुम्भस्थलपर चढे अर हाथीसे बहुत क्रीड़ा करी। कैसे हैं हरिषेण? कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके अर उदार है वक्षस्थल जिनका, अर दिग्गजोंके कुम्भस्थल समान हैं कांधे जिनके अर

स्तम्भ समान हैं जांघ जिनकी। तब ये वृत्तांत सुन सब नगरके लोग देखनेको आए। राजा महल ऊपर चढ्या देखै था सो आश्चर्यको प्राप्त भया। अपने परिवारके लोक भेज इनकूं बुलाया। यह हाथीपर चढ नगरमें आए। नगरके नर नारी समस्त इनको देख देख मोहित होय रहे, क्षणमात्रमें हाथी कूं निर्मद किया। यह अपने रूपसे समस्तका मन हरते नगरविषैं आए। राजाकी सौ कन्या परणी, सर्व लोकनिविषैं हरिषेणकी कथा भई। राजासे अधिकार सम्मान पाय सर्व बातोंसे सुखी है तौ भी तापसियोंके वन में जो स्त्री देखी थी उस विना एक रात्रि वर्ष समान वीतै। मनमें चिंतवते भये जो मुझ विना वह मृगनयनी उस विषमवनमें मृगी समान परम आकुलताको प्राप्त होयगी, तातैं मैं ताके निकट शीघ्र ही जाऊं, यह विचारते रात्रिविषैं निद्रा न आती, जो कदाचित् अल्प निद्रा आई तौ भी स्वप्न विषैं उसहीको देखा। कसी है वह ? कमल सारिखे हैं नेत्र जाके मानों इनके मनहीमें वस रही है।

अथानंतर विद्याधर राजा शक्रधनु ताकी पुत्री जयचंद्रा उसकी सखी वेगवती वह हरिषेणको रात्रिविषैं उठायकरि आकाश विषैं ले चाली। निद्राके क्षय होनेपर आपको आकाशमें जाता देख कोपकर उससे कहते भए, हे पापिनी ! तू हमकों कहां ले जाय है। यद्यपि यह विद्याबलकर पूर्ण है तौ भी इनको क्रोधरूप मुष्टि बांधे होंठ डसते देखकर डरी अर इनसे कहती भई, हे प्रभु ! जैसैं कोई मनुष्य जा वृक्षकी शाखापर बैठा होय ताहीको काटै तो क्या यह सयानपना है ? तैसे मैं तिहारी हितकारिणी अर तुम मोहि हतो यह उचित नाहीं, मैं तुमको जाके पास ले जाऊं हूं जो निरंतर तुम्हारे मिलापकी अभिलाषिनी है। तब यह मनमें विचारते भए कि यह मिष्टभाषिणी परपीडाकारिणी नाहीं है इसकी आकृति मनोहर दीखै है अर आज मेरी दाहिनी आंख भी फडके, इसलिये यह हमारी प्रियाकी संगमकारिणी है बहुरि याकूं पूछी—'हे भद्रे ! तू अपने आवनेका कारण कह।' तब वह कहै कि—सूर्योदय नगरमें राजा शक्रधनु रानी धारा अर पुत्री जयचंद्रा वह गुण रूपके मदसे महा उन्मत्त है कोई पुरुष उसकी दृष्टिमेंन आवै, पिता जहां परणाया चाहै सो यह धारै नाहीं। मैंने जिस जिस राजपुत्रोंके रूप चित्रपटपर लिखे दिखाए उनमें कोई भी ताके चित्तमें न रुचै। तब मैंने तिहारे रूपका चित्रपट दिखाया तब वह मोहित भई अर मोकूं ऐसैं कहती भई कि मेरा इस नरसे संयोग न होय तो मैं मृत्युकूं प्राप्त होऊंगी अर अधम नरसे संबंध न करूंगी तब मैंने उसको धैर्य बंधाया अर मैं ऐसी प्रतिज्ञा करी-जहां तेरी रुचि है मैं उसे न लाऊं तो अग्निमें प्रवेश करूंगी। अति शोकवंत देख मैंने यह प्रतिज्ञा करी। ताके गुणकरि मेरा चित्त हरया गया है सो पुण्यके प्रभावसे आप मिले, मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण भई, ऐसा कह सूर्योदयनगरमें ले गई। राजा शक्रधनुसे ब्योरा कहा सो राजाने अपनी पुत्रीका इनसे पाणिग्रहण कराया अर वेगवतीका बहुत यश माना इनका विवाह देख परिजन

अर पुरजन हर्षित भए। कैसे हैं ये वर कन्या? अद्भुतरूपके निधान हैं इनके विवाहकी वार्ता सुन कन्याके मामाके पुत्र गंगाधर महीधर क्रोधायमान भए जो या कन्याने हमको तजकर भूमिगोचरी वरया। यह विचारकर युद्धको उद्यमी भए। तब राजा शक्रधनु हरिषेणसूं कहता भया कि मैं युद्धमें जाऊं हूं आप नगरविषैं तिष्ठो। वे दुराचारी विद्याधर युद्ध करनेको आए हैं, तब हरिषेण ससुरसे कहते भए कि जो पराए कार्यको उद्यमी होय सो अपने कार्यको कैसे उद्यम न करैं? तातैं हे पूज्य! मोहि आज्ञा करो मैं युद्ध करूंगा। तब ससुरने अनेक प्रकार निवारण किया पर यह न रहे, नाना प्रकार हथियारनिकरि पूर्ण जिसमें पवनगामी अश्व जुरे अर सूरवीर सारथी हांके ऐसे रथ पर चढे इनके पीछे बडे २ विद्याधर चाले। कई हाथियोंपर चढे, कई अश्वोंपर चढे, कई रथोंपर चढे परस्पर महा युद्ध भया। कछुइक शक्रधनुकी फौज हटी तब आप हरिषेण युद्ध करनेको उद्यमी भए, सो जिस ओर रथ चालाया उस ओर घोडा, हस्ती, मनुष्य, रथ, कोऊ टिकै नाहीं। सब बाणनिकरि वींधे गए। सब कांपते युद्धसे भागे। महा भयभीत हो कहते भए 'गंगाधर महीधरने बुरा किया जो ऐसे पुरुषोत्तमतैं युद्ध किया। यह साक्षात् सूर्य समान है, जैसे सूर्य अपनी किरण पसारै तैसैं यह बाणकी वर्षा करै है।' अपनी फौज हटी देख गंगाधर महीधर भाजे, तब इनके क्षणमात्रमें रत्न भी उत्पन्न भए, दशवां चक्रवर्ती महा प्रतापको धरैं पृथ्वीविषैं प्रगट भया। यद्यपि चक्रवर्तीकी विभूति पाई, परंतु अपनी स्त्री रत्न जो मदनावली उसके परणवेकी इच्छासैं द्वादश योजन परिमाण कटक साथ ले राजाओंको निवारते तपस्वियोंके वनके समीप आए। तपस्वी वनफल लेकर आय मिले, पहिले इनका निरादर किया था ताकरि शंकावान हुते सो इनको अति विवेकी पुण्यधिकारी देख हर्षित भए। शतमन्युका पुत्र जो जनमेजय अर मदनावलीकी माता नागमती उन्होंने मदनावली चक्रवर्तीको विधिपूर्वक परणाई तब आप चक्रवर्तीकी विभूतिसहित काम्पिल्यनगर आए, बत्तीस हजार मुकुटबंध राजाओंने संग आकर माताके चरणारविंदको हाथ जोड नमस्कार किया, माता वप्रा ऐसे पुत्रको देखि ऐसी हर्षित भई जो गातमें न समावैं, हर्षके अश्रुपात करि व्याप्त भए हैं लोचन जाके तब चक्रवर्तीने जब अष्टानिका आई तो भगवानका रथ सूर्यसे भी महा मनोज्ञ काढा, अष्टानिकाकी यात्रा करी। मुनि श्रावकनिकूं परम आनन्द भया, बहुत जीव जिनधर्म अंगीकार करते भए। सो यह कथा रावण सुमालीसौं कही। हे पुत्र! ता चक्रवर्तीने भगवानके मंदिर पृथ्वीविषैं सर्वत्र पुर ग्रामादिविषैं पर्वतनिपर तथा नदीनके तटपर अनेक चैत्यालय रत्नस्वर्णमयी कराये। वे महापुरुष बहुतकाल चक्रवर्तीकी संपदा भोगि मुनि होय महातपकरि लोकशिखर सिधारे। यह हरिषेणका चरित्र रावण सुनकर हर्षित भया। सुमालीकी बारंवार स्तुति करी, अर जिनमंदिरनिका दर्शनकर रावण डेरा आये, डेरा सम्मेदशिखरके समीप भया।

अथानंतर रावणको दिग्विजयविषैं उद्यमी देख मानों सूर्य भी भयँकरि दृष्टिगोचरसूं रहित भया, ताकी अरुणता प्रगटी, मानों रावणके अनुराग ही करि जगत हर्षित भया। बहुरि संध्या मिटकर रात्रिका अन्धकार फैल्या मानों अंधकार ही प्रकाशके भयसे दशमुखके शरण आया, बहुरि रात्रि व्यतीत भई अर प्रभात भया, अर रावण प्रभातकी क्रियाकर सिंहासन विराजे, अकस्मात् एक ध्वनि सुनी, मानो वर्षाकालका मेघ ही गरज्या जाकर सकल सेना भयभीत हुई अर कटकके हाथी जिन वृक्षोंसे बंधे थे तिनका भंग करते भए, कनसेरे ऊंचेकर तुरंग हींसते भये तब रावण बोले-'यह क्या है? यह मरवेकूं हमारे ऊपर कौन आया? यह वैश्रवण आया अथवा इन्द्रका प्रेरा सोम आया अथवा हमको निश्चल तिष्ठे देख कोई और शत्रु आया'। तब रावणकी आज्ञा पाय प्रहस्त सेनापति उस ओर देखनेको गया सो पर्वतके आकार मदोन्मत्त अनेक लीला करता हाथी देख्या।

तब आय रावणसौं बीनती करी कि हे प्रभो! मेघकी घटा समान यह हाथी है। इसको इंद्र भी पकडनेको समर्थ न भया। तब रावण हंसकर बोले–हे प्रहस्त! अपनी प्रशंसा करनी योग्य नाहीं, मैं इस हाथीको क्षणमात्रमें वश करूंगा। यह कहकर पुष्पक विमानमें चढि जाय हाथी देख्या, भले २ लक्षणनकरि इंद्रनीलमणि समान अति सुंदर है श्याम शरीर जाका कमल समान आरक्त है तालुवा जाका अर महामनोहर उज्वल दीर्घ गोल हैं नेत्र जाके दांत सात हाथ ऊंचा नो हाथ चौडा कछुइक पीत हैं, सुन्दर है पीठ जाकी अगला अंग उतंग है, अर लांबी है पूंछ जाकी, अर बडी है सूंड़ जाकी, अत्यंत स्निग्ध सुन्दर हैं नख जाके, गोल कठोर सुन्दर है कुम्भस्थल जाका, प्रबल हैं चरण जाके, माधुर्यताको लिये महावीर गंभीर है गर्जना जाकी अर झरते हुवे मदकी सुगंधतासे करैं हैं भ्रमर गुंजार जापर, दुंदुभी बाजनिकी ध्वनि समान गंभीर है नाद जाका, अर ताडवृक्षके पत्र समान जो कान तिनकूं हलावता, मन अर नेत्रनिकी हरनहारी जो सुन्दरलीला ताकूं करता, रावणनैं हस्तीकूं देख्या। देखकरि बहुत प्रसन्न भया, हर्ष कर रोमांच होय आए। तब पुष्पक नामा विमानसे उतर गाढी कमर बांधकर उसके आगैं जाय शंख पूरया ताके शब्दकरि दशों दिशा शब्दायमान भई। तब शंखका शब्द सुन चित्तमें क्षोभकूं पाय हाथी गरज्या अर दशमुखके सम्मुख आया! बलकर गर्वित तब रावण अपने उत्तरासनका गेंद बनाय शीघ्र ही हाथीकी ओर फेंका। रावण गजकेलि विषैं प्रवीण है सो हाथी तो गेंदके सूंघनेको लगा अर रावण आकाशविषैं उछलकरि भ्रंगोंकी ध्वनिसे शोभित गजके कुम्भस्थलपर हस्ततल मारया, हाथीने सूंडसे पकडनेका उद्यम किया। तदि रावण अति शीघ्रता कर दोऊ दांतके बीच होय निकस गए, हाथीसूं अनेक क्रीडा करी, दशमुख हाथीकी पीठ पर चढ़ बैठे, हाथी विनयवान शिष्यकी न्याईं खडा होय रहा, तब आकाशसे रावण पर पुष्पोंकी

वर्षा भई अर देवोंने जय जयकार शब्द किए। अर रावणकी सेना बहुत हर्षित भई, रावणने हाथीका "त्रैलोक्यमंडन" नाम धरया याकौं पाय रावण बहुत हर्षित भया। रावणने हाथीके लाभका बहुत उत्सव किया अर सम्मेदशिखर पर्वतपर जाय यात्रा करी। विद्याधरोंने नृत्य किया। वह रात्रि वहां ही रह्या। प्रभात हुवा, सूर्य उगा सो मानों दिवसने मंगलका कलश रावणको दिखाया। कैसा है दिवस? सेवाकी विधिविषैं प्रवीण है। तब रावण डेरामें आय सिंहासनपर विराजे हाथीकी कथा सभाविषैं कहते भये।

ता समय एक विद्याधर आकाशतैं रावणके निकट आया सो अत्यंत कम्पायमान जाके पसेवकी बूंद झरैं हैं, बहुत खेदखिन्न घायल हुआ अश्रुपात करता, जर्जरा है तनु जाका, हाथ जोडि नमस्कारकरि विनती करता भया। हे देव! आज दशवां दिन है राजा सूर्यरज अर रत्नरज बानरवंशी विद्याधर तिहारे बलकरि है बल जिनमें सो आपका प्रताप जानि अपनै किहकंध नगर लेनेके अर्थ अलंकारोदय जो पाताललंका तहांतैं अति उछाहसे चाल्ये। कैसे हैं दोऊ भाई? तिहारे बलकरि महा अभिमान युक्त जगतको तृण समान मानैं ते किहकंधपुर जाय घेरया। तहां इन्द्रका यमनामा दिग्पाल ताके योधा युद्ध करनेको निकसे, हाथमें हैं आयुध जिनके, बानरवंशिनके अर यमके लोगोंमें महायुद्ध भया। परस्पर बहुत लोक मारे गए, तब युद्धका कलकलाट सुन यम आप निकसा, कैसा है यम? महाक्रोधकरि पूर्ण अति भयंकर न सहा जाय है तेज जाका, सो यमके आवते ही बानरवंशियोंका बल भागा। अनेक आयुधनिकर घायल भए। यह कथा कहता कहता वह विद्याधर मूर्छाको प्राप्त भया। तब रावणने शीतोपचा-करि सावधान किया, अर पूछा–'आगे क्या भया? तब वह विश्राम पाय हाथ जोड फिर कहता भया–'हे नाथ? सूर्यरजका छोटा भाई रत्नरज अपने दलको व्याकुल देख आप युद्ध करने लगे। सो यमके साथ बहुत देरतक युद्ध किया। यम अतिबली उसने रत्नरजको पकड लिया तब सूर्यरज युद्ध करने लगे, बहुत युद्ध भया, यमने आयुधका प्रहार किया सो राजा घायल होय मूर्छित भए, तब अपने पक्षके सामंतोंने राजाको उठाय मेघला वनमें ले जाय शीतोपचारकरि सावधान किया। बहुरि यम महापापी अपना यमपना सत्य करता संता एक बंदीगृह बनाया। उसका नरक नाम धरया तहां वैतरनी आदि सर्व विधि बनाई, जे जे वाने जीते अर पकडे वे सर्व नरकमें दिये सो उस नरकमें कैयक तो मर गए, कैयक दुख भोगै हैं, वहां उस नरकमें सूर्यरज अर रत्नरज ये भी दोनों भाई हैं। यह वृत्तांत मैं देखकर बहुत व्याकुल होय आपके निकट आया हूँ। आप उनके रक्षक हो अर जीवनमूल हो उनके आपका ही विश्वास है, अर मेरा नाम शाखावली है मेरा पिता रणदक्ष, माता सुश्रोणी, मैं रत्नरजका प्यारा चाकर, सो आपको यह वृत्तांत कहनेको आया हूं, मैं तो आपको जतावा देय निश्चिन्त भया। अपने पक्षको

दुःख अवस्थामें जान आपको जो कर्तव्य होय सो करो।

तब रावणने उसे दिलासा कर याहि संतोष दे याके घावका यत्न कराया, अब तत्काल सूर्यरज रक्षरजके छुडावनेको महाक्रोधकर यमपर चाल्ये अर मुसकरायकर कहते भए—कहा यम रंक हमसे युद्ध कर सकै ? जो मनुष्य उसने वैतरणी आदि क्लेशके सागरमें डार राखे हैं, मैं आज ही उनको छुडाऊंगा अर उस पापीने जो नरक बना राख्या है ताहि विध्वंस करूंगा। देखो दुर्जनकी दुष्टता! जीवोंको ऐसे संताप देहै। यह विचारकर आपही चाले। प्रहस्त सेनापति आदि अनेक राजा बडी सेनासे आगे दौडे। नानाप्रकारके वाहनोंपर चढे शस्त्रोंके तेजसे आकाशमें उद्योत करते अनेक वादित्रोंके नाद होते महा उत्साहसे चाले, विद्याधरोंके अधिपति किहकूंपुरके समीप गए। सो दूरसे नगरके घरोंकी शोभा देखकरि आश्चर्यको प्राप्त भए, किहकूपुरकी दक्षिण दिशाके समीप यम विद्याधरका बनाया हुवा कृत्रिम नरक देख्या जहां एक ऊँचा खाडा खोद राखा है अर नरककी नकल बनाय राखी है। अनेक नरनिके समूह नरकमें राखे हैं तब रावणने उस नरकके रखवारे जे यमके किंकर हुते कूटकर काढ दिये अर सर्व प्राणी सूर्यरज रक्षरज आदि दुख सागरसे निकासे। कैसैं हैं रावण? दीननके बंधु दुष्टोंको दंड देनहारे हैं। वह सर्व नरक स्थान ही दूर किया। यह वृत्तांत परचक्रके आवनेका सुन यम बडे आडंबरसे सर्व सेनासहित युद्ध करवेकूं आया। मानो समुद्र ही क्षोभको प्राप्त भया। पर्वत सारिखे अनेक गज मदधारा झरते, भयानक शब्द करते, अनेक आभूषणयुक्त, उनपर महा योधा चढे, अर तुरंग पवन सारिखे चंचल जिनकी पूंछ चमर समान हालती अनेक आभूषण पहरैं, उनकी पीठ पर महाबाहू सुभट चढे, अर सूर्यके रथ समान अनेक ध्वजाओंकी पंक्तिसे शोभायमान, जिनमें बडे बडे सामंत बखतर पहरैं, शस्त्रोंके समूह धारैं बैठे, इत्यादि महासेना सहित यम आया। तब विभीषणने यमकी सर्व सेना अपने बाणोंसे हटाई। कैसे हैं विभीषण? रणविषैं प्रवीण रथविषैं आरूढ हैं। विभीषणके बाणोंसे यम किंकर पुकारते हुये भागे। यम, किंकरोंके भागने अर नारकियोंके छुडानेसे महा क्रूर होकर विभीषणपर रथ चढ्या धनुषको धारे आया। ऊंची है ध्वजा जाकी, काले सर्प समान कुटिल केश जाके, भ्रकुटी चढाए लाल हैं नेत्र जाके, जगत रूप ईंधनके भस्म करणेको अग्नि समान आप तुल्य जो बडे बडे सामंत उन कर मंडित युद्ध करणेको अपने तेजसे आकाश विषैं उद्योत करता संता आप आया। तब रावण यमको देख विभीषणकूं निवार आप रणसंग्रामविषैं उद्यमी भए। यमके प्रतापसे सर्व राक्षस सेना भयभीत होय रावणके पीछे आय गई। कैसा है यम? अनेक आडम्बर धरैं है, भयानक है मुख जाका, रावण भी रथपर आरूढ होकर यमके सन्मुख भए। अपने बाणनके समूह यमपर चलाए। इन दोनोंके बाणनकरि आकाश आच्छादित भया, कैसे हैं बाण? भयानक है शब्द जिनका, जैसैं मेघोंके समूहसे आकाश

व्याप्त होय, तैसे वाणोंसे आच्छादित होगया। रावणने यमके सारथीको प्रहार किया सो सारथी भूमिमें पडा अर एक बाण यमको लगाया सो यम भी रथसे गिरता भया। तब यम रावणको महा बलवान देखि दक्षिण दिशाका दिग्पालपणा छोड भाग्या। सारे कुटुम्बको लेकर परिजन पुरजन सहित रथनूपुर गया। इंद्रसूं नमस्कार कर बीनती करता भया। "हे देव! आप कृपा करो, अथवा कोप करो, आजीवका राखहु अथवा हरो तिहारी जो वांछा होय सो करो। यह यमपणां मुझसे न होय। मालीके भाई सुमालीका पोता दशानन महा योधा, जिसने पहिले तो वैश्रवण जीता वह तो मुनि होगया अर मुझे भी उसने जीता सो मैं भागकर तुम्हारे निकट आया हूं। उसका शरीर वीररससे बनो हैं। वह महात्मा है, वह जेष्ठके मध्यान्हका सूर्य समान कभी भी न देखा जाय है।" यह वार्ता सुन कर रथनूपुरका राजा इंद्र संग्रामको उद्यमी भया, तब मंत्रियोंके समूहने मने किया, कैसें हैं मंत्री? वस्तुका यथार्थ स्वरूप जाननहारे हैं। तब इंद्र समझकर बैठ रहा। इंद्र यमका जमाई है, उसने यमको दिलासा दिया कि तुम बडे योधा हो, तुम्हारे योधापनेमें कमी नाहीं। परंतु रावण प्रचंड पराक्रमी है यातैं तुम चिंता न करो, यहां ही सुखसे तिष्ठो, ऐसा कहकर इनका बहुत सन्मान कर राजा इंद्र राजलोकमें गए अर कामभोगके समुद्रमें मग्न भए। कैसा है इंद्र? बडा है विभूतिका मद जाकै, रावणके चरित्रके जो जो वृत्तान्त यमने कहे हुते, वैश्रवणका वैराग्य लेना, अर अपना भागना वह इंद्रको ऐश्वर्यके मदमें भूल गए। जैसैं अभ्यास विना विद्या भूल जाय, अर यम भी इंद्रका सत्कार पाय अर असुर संगीत नगरका राज पाय मान भंगका दुःख भूल गया। मनमें मानता भया कि—जो मेरी पुत्री महा रूपवन्ती सो तो इंद्रके प्राणोंसे भी प्यारी है, अर मेरा अर इंद्रका बडा सम्बन्ध है तातैं मेरे कहा कमी है?

अथानंतर रावणने किहकंधपुर तो सूर्यरजको दिया अर किहकूंपुर रक्षरजको दिया। दोउनकों सदाके हितु जान बहुत आदर किया। रावणके प्रसादसे बानरवंशी सुखसैं तिष्टे। रावण सब राजनिका राजा महा लक्ष्मी अर कीर्तिकों धरैं दिग्विजय करै। बड़े २ राजा दिनप्रति आय आय मिलैं, सो रावणका कटकरूप समुद्र अनेक राजाओंकी सेनारूपी नदीसे पूरित होता भया, अर दिन दिन विभव अधिक होता भया, जैसैं शुक्लपक्षका चन्द्रमा दिन दिन कलाकरि बढता जाय तैसैं रावण दिन दिन बढता जाय। पुष्पक नामा विमानविषैं आरूढ होय त्रिकूटाचलके शिखर पर आय तिष्ठा। कैसा है विमान? रत्ननिकी मालासे मंडित है, अर ऊंचे शिखरोंकी पंक्तिकरि विराजित हैं, शीघ्र जहां चाहै वहां जाय ऐसे विमानका स्वामी रावण महा धीर्यताकरि मण्डित पुण्यके फलका है उदय जाकै। जब रावण त्रिकूटाचलके शिखर सिधारे, सब बातोंमें प्रवीण तब राक्षसोंके समूह नाना प्रकारके वस्त्राभूषणकरि मण्डित परमहर्षकूं प्राप्त भए। सर्व राक्षस

रावणको ऐसे मंगल वचन गम्भीर शब्द कहते भये "हे देव ! तुम जयवंत होवो, आनन्दको प्राप्त होवो, चिरकाल जीवो, वृद्धिको प्राप्त होवो, उदयकों प्राप्त होवो" निरन्तर ऐसे मंगल वचन गम्भीर शब्द कर कहते भए। कई एक सिंह शार्दूलनिपर चढे, कई एक हाथी घोडनिपर चढे, कईएक हंसनि पर चढे, प्रमोदकरि फूल रहे हैं नेत्र जिनके, देवनि कैसा आकार धरैं, जिनका तेज आकाश विषैं फैल रहा है वन पर्वत अन्तरद्वीपके विद्याधर राक्षस आए समुद्रको देखकर विस्मयको प्राप्त भए। कैसा है समुद्र ? नाहीं दीखै है पार जिसका, अति गम्भीर है, महामत्स्यादि जलचरों कर भरा है तमाल वन समान श्याम है, पर्वत समान ऊंची ऊंची उठे हैं लहरनिके समूह जाविषैं, पाताल समान औंडा, अनेक नाग नागनिकरि भयानक नाना प्रकारके रत्ननिके समूह करि शोभायमान नानाप्रकारकी अद्भुत चेष्टाकों धारैं। अर लंकापुरी अति सुन्दर हुती ही अर रावणके आनेसे अधिक समारी गई है। कैसीहै लंका, अति देदीप्यमान रत्नोंका कोट है जाकै अर गम्भीर खाईकर मण्डित है, कुंदके पुष्प समान अति उज्ज्वल स्फटिक मणिके महल हैं जिनमें। इन्द्र नीलमणियोंकी जाली शोभै हैं, अर कहू इक पद्मराग मणियोंके अरुण महल हैं, कहूं इक पुष्पराग मणिनके महल, कहू इक मरकतमणिनके महल हैं इत्यादि अनेक मणियनिके मन्दिरनिकरि लंका स्वर्गपुरी समान है। नगरी तौं सदा ही रमणीक है परंतु धनीके आयवेकरि अधिक बनी है, रावणने अतिहर्षसे लंकामें प्रवेश किया। कैसा है रावण ? जाकों काहूकी शंका नाहीं, पहाड समान हाथी तिनकी अधिक शोभा बनी है अर मन्दिर समान रत्नमई रथ बहुत सम्हारे हैं, अश्वोंके समूह हींसते चलायमान चमर समान हैं पूछ जिनकी, अर विमान अनेक प्रभाको धरैं इत्यादि महा विभूति कर रावण आया। चंद्रमाके समान उज्वल सिरपर छत्र फिरते, अनेक ध्वजा पताका फरहरती, वंदीजनोंके समूह विरद बखानते, महामंगल शब्द होते, वीण वांसुरी शंख इत्यादि अनेक वादित्र बाजते, दशोंदिशा अर आकाश शब्दायमान होरहा है या विधि लंकामें पधारै। तब लंकाके लोग अपने नाथका आगमन देख दर्शनके लालसी हाथनिमें अर्घ लिएं पत्र फल पुष्प रत्न लिएं अनेक सुन्दर वस्त्र आभूषण पहरैं सब नगर-के लोग रागरंग सहित रावणके समीप आए, वृद्धनिकूं आगैं धर तिनके पीछै आय नमस्कार-करि कहते भये 'हे नाथ ! लंकाके लोग अजितनाथके समयसे आपके घरके शुभचिन्तक हैं सो स्वामीको अति प्रबल देख अति प्रसन्न भए हैं, भांति भांतिकी आसीस दीनी, तब रावणने बहुत दिलासा देकर सीख दीनी तब रावणके गुण गावते अपने अपने घरको गये।

अथानन्तर रावणके महलमें कौतुकयुक्त नगरकी नरनारी अनेक अभूषण पहिरैं, रावणके देखनेकी है इच्छा जिनको, सर्व घरके कार्य छोड २ पृथ्वीनाथके देखनेकों आईं। कैसैहैं रावण ? वैश्रवणके जीतनहारे तथा यम विद्याधरके जीतनहारे अपने महलविषैं राजलोकसहित

सुखसूं तिष्ठै, कैसा है महल ? चूडामणि समान मनोहर है और भी विद्याधरोंके अधिपति यथायोग्य स्थानकविषैं आनन्दसूं तिष्ठै, देवनि समान हैं चरित्र जिनके।

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे श्रेणिक ! जो उज्वल कर्मके करणहारे हैं तिनका निर्मल यश पृथ्वीविषैं होय है, नाना प्रकारके रत्नादिक सम्पदाका समागम होय है अर प्रबल शत्रुओंका निर्मूल पृथ्वी विषैं होय है। सकल त्रैलोक्यविषैं गुण विस्तरै हैं, या जीवके प्रचण्ड वैरी पांच इंद्रियोंके विषय हैं, जो जीवकी बुद्धि हरैं हैं, अर पापोंका बन्ध करैं हैं,। यह इंद्रियोंके विषय धर्मके प्रसादसे वशीभूत होय हैं अर राजाओंके बाहिरले वैरी प्रजाके बाधक ते भी आय पावोंविषैं पड़े हैं ऐसा मानकर जो धर्मके विरोधी विषयरूप वैरी हैं वे विवेकियोंको वश करने योग्य हैं। तिनका सेवन सर्वथा न करना, जैसैं सूर्यकी किरणोंसे उद्योत होते संते भली दृष्टिवाले पुरुष अन्धकारकरि व्याप्त ओंडे खंधकविषैं नाहीं पड़ैं हैं तैसैं जे भगवानके मार्गविषैं प्रवर्त्तें हैं तिनके पापबुद्धिकी प्रवृत्ति नाहीं होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिकाविषैं दशग्रीवका निरूपण करनेवाला आठवां पर्व पूर्ण भया ॥८॥

(नवमा पर्व)

[बाली मुनिका निरूपण]

अथानंतर आगे अपने इष्टदेवकूं विधिपूर्वक नमस्कार करि उनके गुण स्तवनकरि किहकंधपुरविषैं राजा सूर्यरज बानरवंशी, तिनकी रानी चंद्रमालिनी अनेक गुणसम्पन्न ताके बाली नामा पुत्र भए। सो वर्णन करिए हैं सो हे भव्य ! तू सुन। कैसे हैं बाली ? सदा उपकारी शीलवान पंडित प्रवीण धीर लक्ष्मीवान शूरवीर ज्ञानी अनेक कला संयुक्त सम्यग्दृष्टि महाबली राजनीतिविषैं प्रवीण, धैर्यवान, दयाकर भीगा है चित्त जिनका, विद्याके समूह करि गर्वित मंडित कांतिवान तेजवंत हैं।

ऐसे पुरुष संसारमें विरले ही हैं जो समस्त अढाई द्वीपनिके जिनमंदिरनिके दर्शनमें उद्यमी हैं। कैसैं हैं वे जिनमंदिर ? अति उत्कृष्ट प्रभावकर मंडित हैं, बाली तीनों काल अति श्रेष्ठ भक्तियुक्त संशयरहित श्रद्धावंत जंबूद्वीपके सर्व चैत्यालयनिके दर्शन कर आवै, महा पराक्रमी शत्रुपक्षका जीतनहारा नगरके लोगोंके नेत्ररूपी कुमुदके प्रफुल्लित करनेको चन्द्रमा समान जिसको किसीकी शंका नाहीं, किहकंधपुरविषैं देवनकी न्याई रमैं। कैसा है किहकंधपुर ? महारमणीक, नाना प्रकारके रत्नमयी मंदिरनिकरि मंडित, गज तुरंग रथादिसे पूर्ण, नाना प्रकारका व्यापार है

जहां, अर अनेक सुन्दर हाटनिकी पंक्तिनकर युक्त है जहां, जैसैं स्वर्गविषैं इंद्र रमै तैसैं रमै है। अनुक्रमतैं जाके छोटा भाई सुग्रीव भया सो महाधीर वीर मनोज्ञरूपकरि युक्त महा नीतिवान विनयवान है, ये दोनों ही वीर कुलके आभूषण होते भए जिनका आभूषण बड़ोंका विनय है। सुग्रीवके पीछे श्रीप्रभा बहिन भई, जो साक्षात् लक्ष्मी,रूपकर अतुल्य है, अर किहकंधपुरविषैं सूर्यरजका छोटा भाई रक्षरज ताकी रानी हरिकांता ताके पुत्र नल अर नील होते भए। सुजनोंके आनंदके उपजावनहारे महासामंत रिपुकी शंकारहित मानों किहकंधपुरके मंडन ही हैं। इन दोनों भाइयनिके दो दो पुत्र महागुणवंत भए। राजा सूर्यरज अपने पुत्रोंको यौवनवंत देख मर्यादाके पालक जान आप विषयोंको विष मिश्रित अन्न समान जान संसारसे विरक्त भए। कैसे हैं राजा सूर्यरज? महाज्ञानवान हैं। बालीको पृथ्वीके पालने निमित्त राज दिया अर सुग्रीवको युवराजपद दिया, अपने स्वजन परिजन समान जाने, अर यह चतुर्गतिरूप जगत महादुःखकरि पीड़ित देख विहतमोहनामा मुनिके शिष्य भए जैसा भगवानने भाष्या तैसा चारित्र धारया, कैसैं हैं मुनि सूर्यरज? शरीरविषैं भी नाहीं है ममत्व जिनके, आकाश सारिखा निर्मल है अंतः करण जिनका, समस्त परिग्रहरहित पवनकी नाईं पृथ्वीविषैं विहार किया। विषयकसायरहित मुक्तिके अभिलाषी भए।

अथानंतर बालीके ध्रुवा नामा स्त्री महा पतिव्रता गुणोंके उदयसे सैकड़ों रानियोंमें मुख्य उस सहित ऐश्वर्यको धरैं राजा बाली बानरवंशियोंके मुकुट विद्याधरनि करि मानिये हैं आज्ञा जाकी, सुन्दर हैं चरित्र जाके सो देवनके ऐसे सुख भोगते भए, किहकंधपुरमें राज करैं।

रावणकी बहिन चंद्रनखा जिसके सर्व गात मनोहर राजा मेघप्रभका पुत्र खरदूषणने जिस दिनसे इसको देखा उस दिनसे कामबाणकरि पीड़ित भया याकों हरा चाहै। सो एक दिन रावण, राजा प्रवर रानी आवली उनकी पुत्री तनूदरी उसके अर्थ एक दिन रावण गए सो खरदूषणने लंका रावण विना खाली देख चिन्तारहित होय चन्द्रनखा हरी। कैसा है खरदूषण? अनेक विद्याका धारक मायाचारमें प्रवीण है बुद्धि जाकी, दोऊ भाई कुम्भकरण अर विभीषण बडे शूरवीर हैं परंतु छिद्र पायकरि मायाचारकरि कन्याकूं हर ले गया, तब वे क्या करैं ता पीछैं सेना दौडने लगी तब कुंभकरण विभीषणने यह जानकर मनै करी कि खरदूषण पकड्या तो जावै नाहीं अर मारण योग्य नाहीं। बहुरि रावण आए तब ए वार्ता सुनि अति क्रोध किया, यद्यपि मार्गके खेदसे शरीरविषैं पसेव आया हुता तथापि तत्काल खरदूषणपर जानेको उद्यमी भए। कैसा है रावण? महामानी है, एक खड्गहीका सहाय लिया अर सेना भी लार न लीनी, यह विचारा कि जो महावीर्यवान पराक्रमी हैं तिनके एक खड्गहीका सहाय है तब मंदोदरीने हाथ जोड़ विनती करी कि-'हे प्रभो! आप प्रकट लौकिक स्थितिके ज्ञाता हो, अपने घरकी कन्या औरको दैनी अर औरोंकी आप लैनी, इन कन्याओंकी उत्पत्ति ऐसी ही है अर खरदूषण चौदह हजार विद्या-

धरोंका स्वामी है, जो विद्याधर युद्धसे कदै ही पीछे न हटैं, बडे बलवान हैं अर इस खरदूषणको अनेक सहस्र विद्या सिद्ध हैं, महागर्ववंत हैं, आप समान शूरवीर है यह वार्ता लोकनिसैं क्या आपने नाहीं सुनी है, आपके अर उसके भयानक युद्ध प्रवर्तें, तब भी हारजीतका संदेह ही है अर वह कन्या हर लेगया है सो वह हरणकरि दूषित भई है औरनकूं जो देने आवै सो खरदूषणके मारनेसे वह विधवा होय है अर सूर्यरजको मुक्ति गए पीछे चन्द्रोदर विद्याधर पाताललंकामें थाने हुता ताहि काढकर यह खरदूषण तुम्हारी बहिनसहित पातालंकाविषैं तिष्ठै है तिहारा सम्बन्धी है।' तब रावण बोले हे प्रिये ! मैं युद्धसे कभी भी नहीं डरूं; परंतु तिहारे वचन नहीं उलंघने अर बहिन विधवा नहीं करनी सो हमने क्षमा करी, तब मंदोदरी प्रसन्न भई।

अथानंतर कर्मनिके नियोगसे चंद्रोदर विद्याधर कालकूं प्राप्त भया, तब ताकी स्त्री अनुराधा गर्भिणी बलकरि वर्जित विचारी भयानक वनमें हिरणीकी नाईं भ्रमै, सो मणिकांत पर्वतपर सुंदर पुत्र जन्या। शिला ऊपर पुत्रका जन्म भया, कैसी है शिला ? कोमल पल्लव अर पुष्पोंके समूहसे संयुक्त है, अनुक्रमसे बालक वृद्धिकूं प्राप्त भया। यह बनवासिनी माता उदास चित्त पुत्रकी आशासे पुत्रकूं पालै, जब यह पुत्र गर्भमें आया तबहीसे इनके माता पिताको वैरिकरि विराधना उपजी, तातैं याका नाम विराधित धरा। यह विराधित राजसम्पदावर्जित जहां २ राजानिपै जाय तहां तहां याका आदर नाहीं, जो निज स्थानकतैं रहित होय ताका सन्मान कहांतैं होय ? जैसैं सिरकाकेश स्थानकतैं छूट्या आदर न पावै। यह राजाका पुत्र सो खरदूषणको जीति वे समर्थ नाहीं, सो चित्तविषैं खरदूषणका उपाय चिंतवता हुआ सावधान रहै, अर अनेक देशनिमें भ्रमण करै, षट्कुलाचलनिविषैं अर सुमेरु आदि पर्वतनिविषैं चढा रमणीक वनविषैं जो अतिशय स्थानक हैं जहां देवनिका आगमन है तहां यह विहार करै अर संग्रामविषैं योद्धा लड़ें तिनके चरित्र देखै आकाशविषैं देवों-के साथ संग्राम देखा। कैसा है ? संग्राम गज, अश्व, रथादिकर पूर्ण है अर ध्वजा छत्रादिककर शोभित है याभांति विराधित कालक्षेप करै अर लंकाविषै रावण इंद्रकी नाईं सुखसूं तिष्ठै।

अथानंतर सूर्यरजका पुत्र बाली रावणकी आज्ञातैं विमुख भया। कैसा है बाली ? अद्भुत कर्म की करणहारो जो महाविद्या तिनकरि मण्डित है अर महाबली है तब रावणने बालीपै दूत भेजा। सो दूत महा बुद्धिमान किहकंधपुर जायकर बालीसे कहता भया—'हे वानराधीश ! दशमुख तुमकूं आज्ञा करी है सो सुनो। कैसे हैं दशमुख ! महाबली, महातेजस्वी, महालक्ष्मीवान, महानीतिवान, महासेनाकरियुक्त, प्रचंडनकूं दंड देनहारे, महा उदयवान, जिस समान भरतक्षेत्रमें दूजा नाहीं, पृथ्वीके देव अर शत्रुओंका मान मर्दन करनहारा है। यह आज्ञा करी है जो तिहारे पिता सूर्यरजको मैंने राजा यम वैरीको काढकर किहकंधपुरमें थाप्या अर तुम सदाके हमारे मित्र हो; परन्तु आप अब उपकार भूलकर हमसों पराङ्मुख रहो हो, यह योग्य नाहीं है,

मैं तुम्हारे पितासे भी अधिक प्रीति तुमसे करूंगा, अब तुम शीघ्र ही हमारे निकट आवो, प्रणाम करो अर अपनी बहिन श्रीप्रभा हमको परणावो, हमारे संबंधसे तुमको सर्व सुख होयगा। दूतने कही—ऐसी रावणकी आज्ञा प्रमाण करो। सो बालीके मनमें और बात तो आई, परन्तु एक प्रणाम की न आई, काहेतैं? जो याकैं देव गुरु शास्त्र विना औरकों नमस्कार नाहीं करै, यह प्रतिज्ञा है। तब दूतने फिर कही हे कपिध्वज! अधिक कहनेसे कहा? मेरे वचन तुम निश्चय करो अल्प लक्ष्मी पाकर गर्व मत करो, या तो दोनों हाथ जोड प्रणाम करो या आयुध पकडो। या तो सेवक होयकर स्वामीपर चंवर ढौरो, या भागकर दशों दिशाविषैं विचरो, या सिर नवावो या खैंचिके धनुष निवावो। या रावणकी आज्ञाको कर्णका आभूषण करहु अथवा धनुषका प्रत्यंचा खैंचकर कानोंतक लावो, रावण आज्ञा करी है कै तो मेरे चरणारविंदकी रज माथे चढावहु या रणसंग्रामविषैं सिरपर टोप धरो, या तो बाण छोडो या धरती छोडो, या तो हाथमें वेत्र दंड लेकर सेवा करो या बरछी हाथमें पकड़ो, या तो अंजली जोड़हु या सेना जोड़हु। या तो मेरे चरणोंके नखविषैं मुख देखहु या खड्गरूप दर्पणमें मुख देखहु। ये कठोर वचन रावणके दूतने बालीसे कहे। तब बालीका व्याघ्रविलंबी नामा सुभट कहता भया। रे कुदूत! नीचपुरुष! तू ऐसैं अविवेक वचन कहै है सो तू खोटे ग्रहकर ग्रह्या है, समस्त पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध है पराक्रम अर गुण जाका, ऐसा बाली देव तेरे कुराजसने अबतक कर्णगोचर नहीं किया। ऐसा कहकर सुभटने महा क्रोधायमान होकर दूतके मारणेकूं खड्गपर हाथ धर्या तब बालीने मने किया जो इस रंकके मारनेमें कहा? यह तो अपने नाथके कहे प्रमाण वचन बोलै है अर रावण ऐसे वचन कहावै है सो उसीकी आयु अल्प है तब दूत डरकर शिताव (जल्दी) रावणपै गया रावणको सकल वृत्तांत कह्या, सो रावण महाक्रोधकूं प्राप्त भया। दुस्सह तेजवान रावणने बडी सेनाकरि मंडित बखतर पहन शीघ्र ही कूच किया। रावणका शरीर तेजोमय परमाणुओंसे रचा गया है रावण किहकंधपुर पहुचे। तदि बाली संग्रामविषैं प्रवीण महा भयानक शब्द सुनकर युद्धके अर्थ बाहिर निकसनेका उद्यम किया तब महाबुद्धिमान नीतिवान जे सागर वृद्धादिक मंत्री तिनने वचनरूप जलकर शांत किया कि—हे देव! निष्कारण युद्ध करनेसे कहा? क्षमा करो आगे अनेक योधा मान करके क्षय गए। कैसे हैं वे योधा? रण ही है प्रिय जिनकूं, अष्टचन्द्र विद्याधर अर्ककीर्तिके भुजके आधार जिनके देव सहाई तौ भी मेघेश्वर जयकुमारके बाणों कर क्षय भए, रावणकी बडी सेना है जिसकी ओर कोई देख सकै नाहीं, खड्ग गदा सेल बाण इत्यादि अनेक आयुधोंकरि भरी है—अतुल्य है। तातैं आप संदेहकी तुला जो संग्राम उसके अर्थ न चढो। तब बालीसे कही अहो मंत्री हो अपनी प्रशंसा करनी योग्य नाहीं, तथापि मैं तुमको यथार्थ कहूं हूं कि इस रावणको सेनासहित एक क्षणमात्रमें बाएं हाथकी हथेलीसे चूर डारनेको

समर्थ हूं; परन्तु यह भोग क्षणविनश्वर हैं इनके अर्थ निर्दय कर्म कौन करै ? जब क्रोधरूपी अग्निसे मन प्रज्वलित होय तब निर्दय कर्म होय है। यह जगतके भोग केलेके थंभ समान असार हैं तिनको पाकर मोहवंत जीव नरकमें पडै है। नरक महा दुखोंसे भरया है, सर्व जीवोंको जीतव्य वल्लभ है सो जीवनिके समूहको हतकर इंद्रियनिके भोगतैं सुख पाइए है तिनकरि गुण कहां ? इंद्रियसुख साक्षात् दुःखही हैं, ये प्राणी संसाररूपी महाकूपमें अरहटकी घडीके यंत्र समान रीती भरी करते रहते हैं। कैसै हैं ये जीव ? विकल्प जालसे अत्यंत दुःखी हैं श्रीजिनेंद्र देवके चरणयुगल संसारके तारणेके कारण हैं तिनकूं नमस्कारकर औरकूं कैसै नमस्कार करूं ? मैंने पहलेसे ऐसी प्रतिज्ञा करी है कि देव गुरु शास्त्रके सिवा औरको प्रणाम न करूं तातैं मैं अपनी प्रतिज्ञा भंग भी न करूं अर युद्धविषैं अनेक प्राणियोंका प्रलय भी न करूं बल्कि मुक्तिकी देनहारी सर्व संगरहित दिगंबरी दीक्षा धरूं, मेरे जो हाथ श्रीजिनराजकी पूजामें प्रवर्तैं, दानविषैं प्रवर्तैं, अर पृथ्वीकी रक्षाविषैं प्रवर्तैं वे मेरे हाथ कैसे किसीको प्रणाम करैं ? अर जो हस्तकमल जोड़कर पराया किंकर होवे उसका कहा ऐश्वर्य ? अर कहा जीतव्य ? वह तो दीन है ऐसा कहकर सुग्रीवको बुलाय आज्ञा करते भये कि, हे बालक ! सुनो तुम रावणको नमस्कार करो वा न करो, अपनी बहिन उसे देवो अथवा मत देवो मेरे कछु प्रयोजन नाहीं, मैं संसारके मार्गसे निवृत्त भया, तुमको रुचै सो करो। ऐसा कहकर सुग्रीवको राज्य देय आप गुणनिकरि गरिष्ठ श्रीगगनचन्द्र मुनिपै परमेश्वरी दीक्षा आदरी। परमार्थमें लगाया है चित्त जिनने अर पाया है परम उदय जिनने वे बाली योधा परम ऋषि होय एक चिद्रूप भावमें रत भए। सम्यग्दर्शन है निर्मल जिनके, सम्यक्ज्ञानकरि युक्त है आत्मा जिनका, सम्यक्चारित्रविषैं तत्पर बारह अनुप्रेक्षाओंका निरंतर विचार करते भए। आत्मानुभवमें मग्न मोह जालरहित स्वगुणरूपी भूमिपर विहार करते भये। कैसी है गुण भूमि ? निर्मल आचारी जे मुनि तिनकर सेवनीक है। बाली मुनि पिताकी नाईं सर्व जीवोंपर दयालु बाह्याभ्यंतर तपसे कर्मकी निर्जरा करते भए। वे शांतबुद्ध तपोनिधि महाऋद्धिके निवास होते भए, सुन्दर है दर्शन जिनका ऊंचे ऊंचे गुणस्थानरूपी जे सिवाण तिनके चढनेमें उद्यमी भए। भेदी है अंतरंग मिथ्या भावरूपी ग्रंथि (गांठ) जिनने, बाह्याभ्यंतर परिग्रहरहित जिन सूत्रके द्वारा कृत्य अकृत्य सब जानते भये। महा गुणवान महासंवरकर मंडित कर्मोंके समूहको खिपावते भए प्राणोंकी रक्षामात्र सूत्रप्रमाण आहार लेय हैं अर प्राणनिकूं धर्मके निमित्त धारैं हैं अर धर्मकूं मोक्षके अर्थ उपार्जैं हैं, भव्यलोकनिकूं आनन्दके करनहारे उत्तम हैं आचरण जिनके ऐसे बाली मुनि और मुनियोंको उपमा योग्य होते भये अर सुग्रीव रावणको अपनी बहिन परणायकर रावणकी आज्ञा प्रमाण किहकंधपुरका राज्य करता भया।

पृथ्वीविषैं जो जो विद्याधरोंकी कन्या रूपवती थीं रावणने वे समस्त अपने पराक्रमसे परणी, नित्यालोक नगरमें राजा नित्यालोक राणी श्रीदेवी तिनकी रत्नावली नामा पुत्री उसको परणकर रावण लंकाको आवते हुते सो कैलाश पर्वत ऊपर आय निकसे सो पुष्पक विमान तहांके जिनमंदिरनिके प्रभाव करि अर बाली मुनिके प्रभाव करि आगैं न चल सका। कैसा है विमान ? मनके वेग समान चंचल है जैसै सुमेरुके तटकूं पायकरि वायुमडंल थंभै तैसैं विमान थंभा। तब घंटादिकका शब्द होता रह गया मानों त्रिलषा होय मौनको प्राप्त भया, तदि रावण विमानको अटका देख मारीच मंत्रीसे पूछते भए कि यह विमान कौन कारणसे अटक्या तदि मारीच सर्व वृत्तांत विषैं प्रवीण कहता भया । हे देव ! सुनो यह कैलाश पर्वत है यहां कोई मुनि कायोत्सर्गकरि तिष्ठैं हैं, शिलाके ऊपर रत्नके थंभ समान सूर्यके सम्मुख ग्रीष्ममें आतापनयोग धर तिष्ठै हैं, अपनी कांतिसे सूर्यकी कांतिको जीतता हुआ विराजैं हैं, यह महामुनि धीरवीर है, महाघोर वीर तपको धरै हैं, शीघ्र ही मुक्तिको प्राप्त हुआ चाहै है इसलिए उतरकर दर्शन करि आगे चालो तथा विमान पीछे फेर कैलाशको छोडकर और मार्ग होय चलो, जो कदाचित् हठकर कैलाशके ऊपर होय चलोगे तो विमान खंड खंड हो जायगा, यह मारीचके वचन सुनकर राजा यमका जीतनहारा रावण अपने पराक्रमसे गर्वित होकर कैलाश पर्वतको देखता भया। कैसा है पर्वत ? मानो व्याकरण ही है; क्योंकि नानाप्रकारके धातुनि करि भरया है अर सहस्त्र गुण युक्त नाना प्रकारके सुवर्णकी रचनासे रमणीक पद पंक्तियुक्त नाना प्रकारके स्वरों कर पूर्ण है। बहुरि कैसा है पर्वत ? ऊंचे तीखे शिखरनिके समूहकरि शोभायमान है, आकाशसे लग्या है, निसरने उछलते जे जलके नीझरने तिनकरि प्रकट हंसै ही है कमल आदि अनेक पुष्प तिनकी सुगंध सोंई भई सुरा ताकरि मत्त जे भ्रमर तिनकी गुंजारसे अति सुंदर है नाना प्रकारके वृक्षनिकरि भरयाहै, बडे २ शालके जे वृक्ष तिनकर मंडित जहां छहों ऋतुओंके फल फूल शोभै हैं, अनेक जातिके जीव विचरै हैं, जहां असी असी औषध हैं जिनके त्रासतैं सर्पोंके समूह दूर रहे हैं। महा मनोहर सुगंधसे मानों वह पर्वत सदा नवयौवनहीको धरै है अर मानों वह पर्वत पूर्वपुरुष समान ही है। विस्तीर्ण जे शिला वे ही हैं हृदय जाके अर शाल वृक्ष वे ही महा भुजा अर गंभीर गुफा सो ही वदन अर वह पर्वत शरद ऋतुके मेघ समान निर्मल तट तिनकरि सुंदर मानों दुग्ध समान अपनी कांतिसे दशों दिशाको स्नान ही करावै है। कईइक गुफानिविषैं सूते जे सिंह तिनकर भयानक है, कहूं इक सूते जे अजगर तिनके स्वांसकरि हालैं हैं वृक्ष जहां, कहू इक भ्रमतैं क्रीडा करते जे हिरणोंके समूह तिनकर शोभै है, कहूंइक मातै हाथीनिके समूहसे मंडित है वन जहां कहूं इक फूलनिके समूह करि मानो रोमांच होय रहा है अर कहूंइक वनकी सघनता करि भयानक है, कहूंइक कमलोंके वनसे शोभित है सरोवर जहां, कहू इक बानरनिके समूह वृक्षनिकी

शाखानिपर केलि कर रहे हैं अर कहूं इक गैंडानके पगकरि छेदे गए हैं जे चंदनादि सुगंध वृक्ष तिनकरि सुगंधित होय रहा है, कहूंइक विजलीके उद्योत करि मेल्या जो मेघमण्डल उस समान शोभाको धरै है, कहूं इक दिवाकर समान जे ज्योतिरूप शिखर तिनकरि उद्योतरूप किया है आकाश जानैं, ऐसा कैलाशपर्वत देखि रावण विमानतैं उतरथा। तहां ध्यानरूपी समद्रविषैं मग्न अपने शरीरके तेजसे प्रकाश की हैं दशों दिशा जिनने, ऐसे बाली महामुनि देखे। दिग्गजनकी सुण्ड समान दोऊ भुजा लंबाए, कायोत्सर्ग धरैं खडे, लिपटि रहे हैं शरीरसे सर्प जिनके, मानों चंदनके वृक्ष ही हैं। आतापनशिलापर निश्चल खडे प्राणियोंको ऐसा दीखैं मानों पाषाणका थंभ ही है। रावण बाली मुनिको देखकरि पूर्व बैर चितारि पापी क्रोधरूपी अग्निसे प्रज्वलित भया। भृकुटि चढाय होंठ डसता कठोर शब्द मुनिको कहता भया—"अहो यह कहा तप तेरा, जो अब भी अभिमान न छूट्या। मेरा विमान चलता थांम्या कहां उत्तम क्षमारूप वीतरागका धर्म अर कहां पापरूप क्रोध तू वृथा खेद करै है। अमृत अर विषको एक किया चाहै है तातैं मैं तेरा गर्व दूर करूंगा, तुझ सहित कैलाशपर्वतको उखाड समुद्रमें डार दूंगा।" ऐसे कठोर वचन कहकर रावणने विकराल रूप किया। सर्व विद्या जे साधी हैं तिनकी अधिष्ठाता देवी चिंतवनमात्रसे आय ठाढ़ी भई, सो विद्याबलकरि रावणने महारूप किया, धरतीको भेद पातालमैं पैठा, महा पापविषैं उद्यमी है, प्रचण्ड क्रोधकरि लाल हैं नेत्र जाके, अर हूंकार शब्दकरि वाचाल है मुख जाका, भुजाओंकर कैलाशपर्वतके उखाडनेका उद्यम किया, तब सिंह, हस्ती, सर्प, हिरण इत्यादि अनेक जीव अर अनेक जातिके पक्षी भयकरि कोलाहल शब्द करते भए। जलके नीझरने टूट गए, जल गिरने लगा, वृक्षोंके समूह फट गए, पर्वतकी शिला अर पाषाण पडते भए, तिनके विकराल शब्दकरि दशों दिशातैं कैलाश पर्वत चलायमान भया। जो देव क्रीडा करते हुते ते आश्चर्यको प्राप्त भए, दशों दिशाकी ओर देखते भए, अर जो अप्सरा लताओंके मण्डपमें केलि करतीं हुतीं सो लतानिकों छांडिकरि आकाशमें गमन करतीं भईं। भगवान बालीने रावणका कर्त्तव्य जान आप धीर वीर क्रोध रहित कछु भी खेद न मान्या, जैसैं निश्चल विराजते हुते तैसैं ही रहै। चित्तमें ऐसा विचार किया जो या पर्वतपर भगवानके चैत्यालय अति उतंग महासुन्दरताकरि शोभित सर्व रत्नमयी भरत चक्रवर्तीके कराए हैं, जहां निरंतर भक्तिसंयुक्त सुर असुर विद्याधर पूजाको आवैं हैं, सो या पर्वतके कम्पायमान होनेकरि चैत्यालयनिका भंग न होय अर यहां अनेक जीव विचरैं हैं तिनकूं बाधा न होय, ऐसा विचारकरि अपने चरणका अंगुष्ठ ढीला दाब्या सो रावण महाभाराक्रांत होय दब्या। बहु रूप बनाया था सो भंग भया, महादुःख कर व्याकुल नेत्रोंसे रक्त झरने लगा, मुकुट टूट गया अर माथा भीग गया, पर्वत बैठ गया, रावणके गोड छिल गए, जंघा भी छिल गई, तत्काल पसेवनिमें भीग गया अर धरती पसेव करि गीली भई रावणके गात्र

सकुच गए, कुछवे समान होय गया, तब रोने लगा, ताही कारणसे पृथ्वीमें रावण कहाया। अबतक दशानन कहावै था। इसके अत्यंत दीन शब्द सुनकरि इसकी राणी अत्यंत विलाप करतीं भई, अर मंत्री सेनापति लारके सर्व सुभट पहिले तो भ्रमकर वृथा युद्ध करनेको उद्यमी भए थे पीछे मुनिका अतिशय जान सर्व आयुध डार दिये, मुनिके कायबल ऋद्धिके प्रभावतैं देव दुंदुभी बजने लगे अर कल्पवृक्षोंके फूलोंकी वर्षा भई, तापर भ्रमर गुंजार करते भए, आकाशमें देव देवी नृत्य करते भए, गीतकी ध्वनि होती भई। तब महामुनि परमदयालुने अंगुष्ठ ढीला किया।

रावण पर्वतके तलेसैं निकसि बाली मुनिके समीप आय नमस्कार कर क्षमा कराई अर जान्या है तपका बल जानैं, योगीश्वरकी बारम्बार स्तुति करता भया। हे नाथ! तुमने भरहीतैं यह प्रतिज्ञा करी हुती जो मैं जिनेंद्र मुनींद्र जिनशासन सिवा काहूकूं भी प्रणाम न करूं सो यह सब सामर्थ्यका फल है। अहो धन्य है निश्चय तिहारा अर धन्य यह तपका बल। हे भगवान्! तुम योग शक्तिसे त्रैलोक्यको अन्यथा करनेको समर्थ हो; उत्तमक्षमा धर्मके योगसे सबपै दयालु हो, किसीपर क्रोध नाहीं। हे प्रभो! जैसा तपकर पूर्ण मुनिको बिना ही यत्न परमसामर्थ्य होय है तैसैं इंद्रादिकके नाहीं। धन्य गुण तिहारे, धन्य रूप तिहारा, धन्य कांति तिहारी, धन्य आश्चर्यकारी बल तिहारा, अद्‌भुत दीप्ति तिहारी, अद्‌भुत शील, अद्भुत तप त्रैलोक्यमें जे अद्‌भुत परमाणु हैं तिनकरि सुकृतका आधार तिहारा शरीर बना है, जन्महीतैं महाबली सर्व सामर्थके धरनहारे तुम नव यौवनमें जगत्‌की मायाको तज करि परम शांतस्वरूप जो अरहंतकी दीक्षा ताहि प्राप्त भए हो सो यह अद्भुत कार्य तुम सारिखे सत्पुरुषोंकर ही बनै है। मुझ पापीने तुम सारिखे सत्पुरुषोंसे अविनय किया सो महा पापका बंध किया! धिक्कार मेरे मन वचन कायको, मैं पापी मुनिद्रोहमें प्रवर्त्या, जिनमंदिरनिका अविनय भया, आप सारिखे पुरुषरत्न अर मुझ सारिखे दुर्बुद्धि सो सुमेरु अर सरसोंकासा अंतर है मोकूं मरतेकूं आज आप प्राण दिए, आप दयालु हमसारिखे दुष्ट दुर्जन तिन ऊपर भी क्षमा करो इस समान और कहा। मैं जिनशासनको श्रवण करूं हूं, जानूं हू देखूं हू यह संसार असार है, अस्थिर है, दुःखस्वभाव है, तथापि मैं पापी विषयनिसे वैराग्यको नाहीं प्राप्त भया, धन्य हैं वे पुण्यवान महापुरुष अल्प संसारी मोक्षके पात्र जे तरुण अवस्थाहीमें विषयोंको तजि मोक्षका मार्ग मुनिव्रत आचरै हैं या भांति मुनिकी स्तुतिकरि तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि अपनी निंदा करि बहुत लज्जावान होय मुनिके समीप जे जिनमंदिर हुते तहां बंदनाको प्रवेश किया, चंद्रहास खड्गको पृथ्वीविषैं मेलि अपनी राणीनिकरि मण्डित जिनवरका अर्चन करता भया। भुजामेंसे नसरूप तांत काढकर वीणा समान बजावता भया। भक्तिमें पूर्ण है भाव जाका स्तुतिकर जिनेंद्रके गुणानुवाद गावता भया। हे देवाधिदेव! लोकालोकके देखनहारे नमस्कार हो तुमकूं। कैसे हो? लोकको उलंघे ऐसा है

तेज तिहारा। हे कृतार्थ महात्मा नमस्कार हो। कैसे हो? तीन लोककरि करी है पूजा जिनकी, नष्ट किया है मोहका वेग जिन्होंने, वचनसे अगोचर, गुणनिके समूहके धरनहारे महा ऐश्वर्यकरि मण्डित मोक्षमार्गके उपदेशक, सुखकी उत्कृष्टतामें पूर्ण, समस्त कुमार्गसे दूर, जीवनको मुक्ति अर मुक्तिके कारण, महाकल्याणके मूल, सर्व कर्मके साक्षी ध्यानकर भस्म किए हैं पाप जिन्होंने, जन्म मरणके दूर करनहारे समस्तके गुरु आपके कोई गुरु नाहीं, आप किसीको नवे नाहीं, अर सबकरि नमस्कार करने योग्य आदिअन्तरहित समस्त परमार्थके जाननहारे, आपको केवली विना अन्य न जान सकै, सर्व रागादिक उपाधिसे शून्य सर्वके उपदेशक, द्रव्यार्थिकनयसे सब नित्य है अर पर्यायार्थिकनयसे सब अनित्य है ऐसा कथन करनहारे, किसी एक नयसे द्रव्य गुणका भेद, किसी एक नयसे द्रव्य गुणका अभेद, ऐसा अनेकांत दिखावनहारे जिनेश्वर सर्व रूप एकरूप चिद्रूप अरूप जीवनको मुक्तिके देनहारे ऐसे जो तुम, सो तिनको हमारा बारम्बार नमस्कार होहु।

श्री ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदंत, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्यकेताईं बारंबार नमस्कार हो, पाया है आत्मप्रकाश जिन्होंने विमल, अनंत, धर्म, शांतिकेताईं नमस्कार हो, निरंतर सुखोंके मूल सबको शांतिके करता कुन्थु जिनेन्द्रकेताईं नमस्कार हो, अरनाथकेताईं नमस्कार हो, मल्लिमहेश्वरकेताईं नमस्कार हो, मुनिसुव्रतनाथकेताईं, जो महाव्रतोंके देनहारे अर अब जो होवेंगे नमि, नेम, पार्श्व, वर्द्धमान तिनकेताईं नमस्कार हो, अर जो पद्मनाभादिक अनागत होवेंगे तिनको नमस्कार हो, अर जे निर्वाणादिक अतीत जिन भए तिनको नमस्कार हो। सदा सर्वदा साधुओंको नमस्कार हो, अर सर्व सिद्धोंको निरंतर नमस्कार हो। कैसे हैं सिद्ध? केवलज्ञानरूप केवलदर्शनरूप क्षायिक सम्यक्त्वरूप इत्यादि अनंत गुणरूप हैं।" यह पवित्र अक्षर लंकाके स्वामीने गाए।

रावण द्वारा जिनेन्द्रदेवकी महास्तुति करनेसे धरणेन्द्रका आसन कम्पायमान भया, तब अवधिज्ञानसे रावणका वृत्तांत जान हर्षसे फूले हैं नेत्र जिनके, सुन्दर है मुख जिनका, देदीप्यमान मणियोंके ऊपर जे मणि उनकी कांतिसे दूर किया है अंधकारका समूह जिनने, पातालसे शीघ्र ही नागोंके राजा कैलाश पर आए। जिनेंद्रको नमस्कारकरि विधिपूर्वक समस्त मनोज्ञ द्रव्योंसे भगवानकी पूजाकरि रावणसे कहते भए—'हे भव्य! तैंने भगवानकी स्तुति बहुत करी अर जिनभक्तिके बहुत सुंदर गीत गाए। सो हमको बहुत हर्ष उपज्या, हर्ष करि हमारा शरीर आनन्दरूप भया। हे राक्षसेश्वर! धन्य है तू जो जिनराजकी स्तुति करै है। तेरे भावकरि अवार हमारा आगमन भया है मैं तेरेसे संतुष्ट भया तू वर मांग। जो मनवांछित वस्तु तू मांगे सो दूं। जो वस्तु मनुष्योंको दुर्लभ है सो तुम्हें दूं। तब रावण कहते भए हे नागराज! जिनवंदनातुल्य और कहा शुभ वस्तु है, सो मैं आपसे मागूं। आप सर्व बात समर्थ मनवांछित

देने लायक हैं। तब नागपति बोले-हे रावण ! जिनेंद्रकी वंदनाके तुल्य और कल्याण नाहीं। यह जिनभक्ति आराधी हुई मुक्तिके सुख देवै है तातैं या तुल्य और कोई पदार्थ न हुआ न होयगा।' तब रावणने कही—हे महामते ! जो इससे अधिक और वस्तु नाहीं तो मैं कहा याचूं ?' तब नागपति बोले-'तैनें जो कहा सो सर्व सत्य है, जिनभक्तिसे सब कुछ सिद्ध होय है याकों कुछ दुर्लभ नाहीं, तुम सारिखे मुझ सारिखे अर इंद्र सारिखे अनेक पद सर्व जिनभक्तिसे ही होय हैं। अर यह तो संसारके सुख अल्प हैं विनाशीक हैं इन की क्या बात ? मोक्षके अविनाशी जो अतींद्री-सुख वे भी जिनभक्तिकरि प्राप्त होय हैं। हे रावण ! तुम यद्यपि अत्यंत त्यागी हो महा विनयवान बलवान हो महाऐश्वर्यवान हो गुणनिकरि शोभित हो तथापि मेरा दर्शन तुमको वृथा मत होय, मैं तेरेसे प्रार्थना करूं हू कि तू कुछ मांग, यह मैं जानूं हू तू जाचक नाहीं, परंतु मैं अमोघ विजयानामा शक्ति विद्या तुझै दूं हूं सो हे लंकेश ! तू ले, हमारा स्नेह खण्डन मत कर। हे रावण ! किसीकी दशा एकसी कभी नहीं रहती, संपत्तिके अनंतर विपत्ति अर विपत्तिके अनंतर संपत्ति होती है, जो कदाचित् मनुष्य शरीर है अर तुझपर विपत्ति पडे तो यह शक्ति तेरे शत्रुकी नाशनैहारी अर तेरी रक्षाकी करनहारी होयगी। मनुष्योंकी क्या बात इससे देव भी डरै हैं यह शक्ति अग्नि ज्वालाकरि मंडित विस्तीर्ण शक्तिकी धारनेहारी है। तब रावण धरणेन्द्रकी आज्ञा लोपनको असमर्थ होता हुआ शक्तिको ग्रहण करता भया, क्योंकि किसीसे कुछ लेना अत्यंत लघुता है सो इस बातसे रावण प्रसन्न नहीं भया। रावण अति उदारचित्त है। तब धरणेन्द्रकूं रावणने हाथ जोड नमस्कार किया। धरणेंद्र आप अपने स्थानको गए। कैसैं हैं धरणेंद्र ? प्रगटा है हर्ष जिनके, रावण एक मास कैलाश पर रहकर भगवानके चैत्यालयोंकी महाभक्तिसे पूजाकरि अर बालीमुनिकी स्तुतिकरि अपने स्थानक गए।

बालीमुनिने जो कछुइक मनके क्षोभसे पापकर्म उपार्ज्या हुता सो गुरुओंके निकट जाय प्रायश्चित्त लिया, शल्य दूरकरि परम सुखी भए। जैसैं विष्णुकुमार मुनिने मुनियोंकी रक्षानिमित्त बालीका पराभव किया हुता अर गुरुसे प्रायश्चित लेय परम सुखी भए थे, तैसैं बाली मुनिने चैत्यालयोंकी अर अनेक जीवोंकी रक्षा निमित्त रावणका पराभव किया, कैलाश थांभा फिर गुरुपै प्रायश्चित लेय शल्य मेट परम सुखी भए। चारित्रसे, गुप्तिसे, धर्मसे, अनुप्रेक्षासे समितिसे, परीषहोंके सहनेसे महासंवरको पाय कर्मोंकी निर्जराकरि बाली मुनि केवलज्ञानको प्राप्त भए, अष्टकर्मसे रहित होय लोकके शिखर अविनाशी स्थानमें अविनाशी अनुपम सुखको प्राप्त भए अर रावणने मनमें विचारा कि जो इंद्रियोंको जीतै तिनको मैं जीतिवे समर्थ नाहीं, तातैं राजाओं-को साधुओंकी सेवा ही करना योग्य है ऐसा जान साधूनिकी सेवामें तत्पर होता भया, सम्यग्दर्श-नसे मंडित जिनेश्वरमें दृढ है भक्ति जिसकी, काम भोगमें अतृप्त यथेष्ट सुखसे तिष्ठता भया।

यह बालीका चरित्र पुण्याधिकारी जीव, भावविषैं तत्पर है बुद्धि जाकी भलीभांति सुनै सो कबहू अपमानकूं प्राप्त न होय अर सूर्य समान प्रतापकूं प्राप्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका विषैं बाली मुनिका निरूपण करनेवाला नवमा पर्व पूर्ण भया ॥ ६ ॥

(दशम पर्व)

[राजा सुग्रीव और रानी सुताराका वृत्तान्त]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं- हे श्रेणिक! यह बालीका वृत्तांत तोकूं कह्या अब सुग्रीव अर सुतारा राणीका वृत्तांत कहता हूं सो सुनि, ज्योतिपुर नामा नगर तहां राजा अग्निशिख, राणी ह्री तिनकी पुत्री सुतारा, जो संपूर्ण स्त्रीगुणनिकरि पूर्ण, सर्व पृथ्वीविषैं रूप गुणकी शोभासे प्रसिद्ध, मानों कमलोंका निवास तज साक्षात् लक्ष्मी ही आई है अर राजा चक्रांक उसकी राणी अनुमति तिनका पुत्र साहसगति महादुष्ट एक दिन अपनी इच्छासे भ्रमण करैं था सो ताने सुतारा देखी। देखकर काम शल्यतैं अत्यंत दुखी भया, निरंतर सुताराको मनविषैं धरता भया। उन्मत्त है दशा जाकी ऐसा दूत भेज सुताराको याचता भया अर सुग्रीव भी बारंबार याचता भया। कैसी है वह सुतारा? महामनोहर है। तब राजा अग्निशिख सुताराका पिता दुविधामें पड गया कि कन्या किसको दैनी तब महाज्ञानी मुनिको पूछी। मुनिचन्द्रने कहा कि साहसगतिकी अल्प आयु है अर सुग्रीवकी दीर्घ आयु है तब अमृत समान मुनिके वचन सुनकर राजा अग्निशिख सुग्रीवको दीर्घ आयुवाला जानकर अपनी पुत्रीका पाणिग्रहण कराया। सुग्रीवका पुण्य विशेष है जो सुताराकी प्राप्ति भई, तदनंतर सुग्रीव अर सुताराके अंग अर अंगद दोय पुत्र भए अर वह पापी साहसगति निर्लज्ज सुताराकी आशा छोडै नाहीं। धिक्कार है कामचेष्टाको, वह कामाग्निकरि दग्ध चित्तविषैं ऐसा चिंतवै कि वह सुखदायिनी कैसे पाऊं? कब उसका मुख चंद्रमासे अधिक मैं निरखूं? कब उस सहित नंदनवनविषैं क्रीडा करूं? ऐसा मिथ्या चिंतवन करता संता रूपपरवर्तिनी शेमुषी, नामा विद्याके आराधनेको हिमवंत नामा पर्वतपर जायकरि अत्यंत विषम गुफाविषैं तिष्ठकर विद्याके आराधनेको आरम्भ करता भया। जैसैं दुखी जीव प्यारे मित्रको चितारैं तैसैं विद्याको चितारता भया।

अथानंतर रावण दिग्विजय करनेको निकस्या। वन पर्वतादिकरि शोभित पृथ्वी देखता अर समस्त विद्याधरोंके अधिपति अंतरद्वीपों के वासियोंको अपने वश करता भया। अर तिनको आज्ञा करि तिनहीके देशोंमें थापता भया। कैसा है रावण? अखण्ड है आज्ञा जाकी अर विद्याधरोंमें

सिंहसमान बडे बडे राजा महापराक्रमी रावणने वश किये तिनको पुत्र समान जान बहुत प्रीति करता भया। महन्त पुरुषोंका यही धर्म है कि नम्रतामात्रसे ही प्रसन्न होवें। राक्षसोंके वंशमें अथवा कपिवंशमें जे प्रचंड राजा हुते वे सर्व वश किए, बड़ी सेनाकरि संयुक्त आकाशके मार्ग गमन करता जो दशमुख पवन समान है वेग जाका, उसका तेज विद्याधर सहिवेको असमर्थ भए। संध्याकार, सुवेल, हेमापूर्ण सुयोधन हंसद्वीप वारिहल्लादि इत्यादि द्वीपोंके राजा विद्याधर नमस्कार कर भेंट ले आय मिले, सो रावणने मधुर वचन कह बहुत संतोषे अर बहुत संपदाके स्वामी किए। जे विद्याधर बडे २ गढ तिनके निवासी हुते वे रावणके चरणारविंदको नम्रीभूत होय आय मिले, जो सार वस्तु थी सो भेंट करी। हे श्रेणिक! समस्त बलनिविषैं पूर्वोपार्जित पुण्यका बल प्रबल है ताके उदयकरि कौन वश न होय, सबही वश होय हैं।

अथानंतर रथनूपुरका राजा जो इंद्र उसके जीतिवेको गमनको प्रवर्त्या सो जहां पातालंलकाविषैं खरदूषण बहणेऊ है, वहां जाय डेरा किया। पातालंलकाके समीप डेरा भया, रात्रिका समय था खरदूषण शयन करै था सो चंद्रनखा रावणकी बहिनने जगाया, पातालंलकासे निकसकरि रावणके निकट आया, रत्नोंके अर्घ देय महाभक्तिसे परम उत्साहकरि रावणकी पूजा करी। रावणने भी बहणेऊपनाके स्नेहकरि खरदूषणका बहुत सत्कार किया। जगतविषैं बहिन बहणेऊ समान अर कोई स्नेहका पात्र नाहीं। खरदूषणने चौदह हजार विद्याधर मनवांछित नाना रूपके धारनहारे रावणको दिखाए। रावण खरदूषणकी सेना देख बहुत प्रसन्न भए। आप समान सेनापति किया, कैसा, है खरदूषण? महा शूरवीर है उसने अपने गुणोंसे सर्व सामंतोंका चित्त वश किया है। हिडंब हैहिडिंब, विकट, त्रिजट, हयमाकोट, सुजट, टंक, किहकंधाधिपति, सुग्रीव तथा त्रिपुर, मलय, हेमपाल कोल, वसुंदर इत्यादिक अनेक राजा नानाप्रकारके बाहननिपर चढ़े नाना प्रकार शस्त्र विद्याविषैं प्रवीण अनेक शस्त्रनिके अभ्यासी तिनकरि युक्त पातालंलकातैं खरदूषण रावण के कटकविषैं आया जैसैं पाताललोकसे असुरकुमारोंके समूहकरि युक्त चमरेंद्र आवै, याभांति अनेक विद्याधर राजाओंके समूहकरि रावणका कटक पूर्ण होता भया जैसैं बिजली आप इंद्रधनुपकरि युक्त मेघमालानिके समूह तिनकर श्रावणमास पूर्ण होय ऐसे एकहजार ऊपर अधिक अक्षौहिणी दल रावणके होय चुका दिन दिन बढता जाय है अर हजार हजार देवनिकरि सेवायोग्य रत्न नानाप्रकार गुणनिके समूहके धरणहारे उनकरि युक्त अर चंद्रकिरण समान उज्ज्वल चमर जापर ढुरै हैं, उज्ज्वल छत्र सिरपर फिरै हैं, जाका रूप सुंदर है, महाबाहु महाबली पुष्पक नामा विमानपर चढ़ा सुमेरु समान स्थिर सूर्यसमान ज्योति, अपने विमानादि बाहन सम्पदाकरि सूर्यमण्डलको आच्छादितकरता हुआ इन्द्रका विध्वंस मनमें विचारकर रावणने प्रयाण किया। कैसा है रावण? प्रबल है पराक्रम जाका, मानों आकाशको समुद्र समान करता

भया, देदीप्यमान जे शस्त्र सोई भई कलोल, अर हाथी घोडे प्यादे ये ही भए जलचर जीव, अर छत्र भंवर भए, अर चमर तुरंग भए, नानाप्रकारके रत्नोंकी ज्योति फैल रही है अर चमरोंके दण्ड मीन भए—'हे श्रेणिक! रावणकी विस्तीर्ण सेनाका वर्णन कहां लग करिये, जिसको देखकर देव डरैं तौ मनुष्यनिकी बात कहा? इन्द्रजीत, मेघनाद, कुम्भकर्ण, विभीषण, खरदूषण, निकुम्भ, कुंभ इत्यादि बहुत सुजन रणमें प्रवीण, सिद्ध है विद्या जिनको महाप्रकाशवन्त शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण हैं, जिनकी कीर्ति बड़ी है महासेनाकरि युक्त देवताओंकी शोभाको जीतते हुए रावणके संग चाले। विंध्याचल पर्वतके समीप सूर्य अस्त भया मानो रावणके तेजकरि विलषा होय तेज रहित भया, वहां सेनाका निवास भया मानो विंध्याचलने सेना सिरपर धारी है विद्याके बलसे नानाप्रकारके आश्रय लिये। फिर अपनी किरणनि करि अन्धकारके समूहकूं दूर करता संता चन्द्रमा उदय भया, मानो रावणके भयकरि रात्रि रत्नका दीपक लाई है अर मानो निशा स्त्री भई चांदनीकरि निर्मल जो आकाश सोई वस्त्र उसको धरैं तारानिके जे समूह तेई सिरविषैं फूल गूंथे हैं चन्द्रमा ही है बदन जाका नाना प्रकारकी कथाकर तथा निद्राकर सेनाके लोकनिने रात्रि पूर्ण करी फिर प्रभातके वादित्र बाजे मंगल पाठ कर रावण जागे। प्रभात-क्रिया करी, सूर्यका उदय भया मानो सूर्य भुवनविषैं भ्रमणकर किसी ठौर शरण न पाया तब रावणहीके शरण आया। पुनः रावण नर्मदाके तट आए। कैसी है नर्मदा? शुद्ध स्फटिक मणि समान है जल जाका अर उसके तीर अनेक वनके हाथी रहैं हैं सो जलमें केलि करैं हैं उसकर शोभायमान है अर नानाप्रकारके पक्षियोंके समूह मधुर गान करैं हैं सो मानो परस्पर संभाषण ही करैं हैं। फेन कहिए झागके पटल इन करि मंडित है तरंगरूप जे भौंह उनके विलास करि पूर्ण है। भंवर ही हैं नाभि जाके, अर चंचल जे मीन तेई हैं नेत्र जाके, अर सुंदर जे पुलिन तेई हैं कटि जाके, नाना प्रकारके पुष्पनिकरि संयुक्त निर्मल जल ही है वस्त्र जाका, मानो साक्षात् सुंदर स्त्री ही हैं ताहि देखकर रावण बहुत प्रसन्न भए। प्रबल जे जलचर उनके समूहकरि मण्डित है, गंभीर है कहू एक वेगरूप बहै है, कहूं एक मंदरूप बहै है, कहूं एक कुण्डलाकार बहै है, नाना चेष्टानिकरि पूर्ण ऐसी नर्मदाको देखकर कौतुकरूप भया है मन जाका सो रावण नदीके तीर उतरा। नदी भयानक भी है अर सुन्दर भी है।

अथानंतर माहिष्मती नगरीका राजा सहस्ररश्मि पृथ्वीविषैं महा बलवान मानों सहस्ररश्मि कहिये सूर्य ही है उसके हजारों स्त्री सो नर्मदाविषैं रावणके कटकके ऊपर सहस्ररश्मिने जलयंत्रकरि नदीका जल थांभ्या अर नदीके पुलिनविषैं नाना प्रकारकी क्रीड़ा करी। कोई स्त्री मान कर रही थी ताको बहुत शुश्रूषाकरि प्रसन्न करा, दर्शन, स्पर्शन, मान फिर मानमोचन प्रणाम, परस्पर जलकेलि हास्य, नाना प्रकार पुष्पोंके भूषणनिके शृंगार इत्यादि

अनेक स्वरूप क्रीडा करी। मनोहर है रूप जाका जैसे देवियोंसहित इंद्र क्रीडा करै तैसै राजा सहस्ररश्मिने क्रीडा करी। जे पुलिनके बालू रेतविषैं रत्ननिके मोतियोंके आभूषण टूटकर पड़े सो न उठाये जैसे मुरझाई पुष्पोंकी मालाको कोई न उठावै, कईएक राणी चंदनके लेपकरि संयुक्त जलविषैं केलि करती भई सो जल धवल होय गया, कईएक केसरके कीचकरि जलको गाले हुए सुवर्णके समान पीत करती भई, कईएक ताम्बूलके रंगकरि लाल जे अधर तिनके प्रक्षालनिकरि-नीरको अरुण करती भई, कईएक आखोंके अंजन धोवनेकरि श्याम करती भई सो क्रीड़ा करती जे स्त्री उनके आभूषणनिके सुन्दर शब्द अर तीरविषैं जे पक्षी उनके सुन्दर शब्द राजाके मनको मोहित करते भये अर नदीके निकासकी ओर रावणका कटक था सो रावण स्नानकरि पवित्र वस्त्र पहिर नाना प्रकारके आभूषणनिकरि युक्त नदीके रमणीक पुलिनमें बालूका चौतरा बंधाय उसके ऊपर वैडूर्य मणियोंके हैं दंड जिसके ऐसा मोतियोंकी झालरी संयुक्त चंदोवा तान श्रीभगवान अरहंतदेवकी नाना प्रकार पूजा करै था, बहुत भक्तिसे पवित्र स्तोत्रों करि स्तुति करै था सो उपरासका ? जलका प्रवाह आया सो पूजामें विघ्न भया, नाना प्रकार की कलुषता सहित प्रवाह वेग दे आया, तब रावण प्रतिमाजीको लेय खड़े भये अर क्रोधकरि कहते भए-जो यह क्या है ? सो सेवकने खबर दीनी कि हे नाथ! यह कोई महा क्रीडावंत पुरुष सुन्दर स्त्रीनिके बीच परम उदयको धरैं नाना प्रकारकी लीला करै है अर सामन्त लोक शस्त्रनिकूं धरैं दूर २ खड़े हैं, नाना प्रकार जलके यंत्र बांधे उनसे यह चेष्टा भई है, अन्य राजाओंके सेना चाहिए तातैं उसके सेना तो शोभा मात्र है अर उसके पुरुषार्थ ऐसा है जो और ठौर दुर्लभ है, बड़े २ सामंतोंसे उसका तेज न सहा जाय अर स्वर्गविषैं इंद्र है परन्तु यह तो प्रत्यक्ष ही इंद्र देखा। यह वार्ता सुनकर रावण क्रोधको प्राप्त भए भौंह चढ़ गईं आंख लाल हो गईं, ढोल बाजने लगे, वीररसका राग होने लगा, नाना प्रकारके शब्द होय हैं, घोड़े हींसैं हैं, गज गाजें हैं, रावणने अनेक राजाओंको आज्ञा करी कि यह सहस्र-रश्मि दुरात्मा है इसे पकड़ लाओ। ऐसी आज्ञाकरि आप नदीके तटपर पूजा करने लगे। रत्न सुवर्णके जे पुष्प उनको आदि देय अनेक सुंदर जे द्रव्य उनसे पूजा करी। अर अनेक विद्याधरोंके राजा रावणकी आज्ञा आशिषाकी नाईं माथे चढाय युद्धकूं चाले, राजा सहस्ररश्मिने परदलको आवता देखि स्त्रियोंको कहा कि तुम डरो मत, धीरज बँधाय आप जलसे निकसे, कलकलाट शब्द सुन परदल आया जान माहिष्मती नगरीके योधा सज कर हाथी घोड़े रथनिपर चढे। नाना प्रकारके आयुध धरैं स्वामी-धर्मके अत्यंत अनुरागसे राजाके ढिंग आए, जैसैं सम्मेदशिखर पर्वतका एक ही काल छहों ऋतु आश्रय करै तैसें समस्त योधा तत्काल राजापै आए, विद्याधरनिकी फौज आवती देखकर सहस्ररश्मिके सामंत जीतव्यकी आशा छोडकर

घनव्यूह रचकर धनी की आज्ञाविना ही लड़नेंको उद्यमी भए। जब रावणके योधा युद्ध करने लगे तब आकाश में देवनिकी वाणी भई कि अहो, यह बड़ी अनीति है, ये भूमिगोचरी अल्प बली विद्याबलकरि रहित माया युद्धकूं कहा जानैं ? इनसे विद्याधर मायायुद्ध करैं यह कहा योग्य हैं ? अर विद्याधर घने अर यह थोड़े ऐसे आकाशविषैं देवनिके शब्द सुनकर जे विद्याधर सत्पुरुष थे वे लज्जावान होय भूमिमें उतरे, दोनों सेनाओंमें परस्पर युद्ध भया। रथनिके हाथीनिके घोड़निके, असवार तथा पियादे तलवार बाण गदा सेल इत्यादि आयुधोंकरि परस्पर युद्ध करने लगे सो बहुत युद्ध भया। परस्पर अनेक मारे गये न्याय युद्ध भया, शस्त्रोंके प्रहारकरि अग्नि उठी, सहस्ररश्मिकी सेना रावणकी सेनाकरि कछुइक हटी तदि सहस्ररश्मि रथपर चढकर युद्धको उद्यमी भए। माथैं मुकुट धरे बखतर पहरे धनुषको धारैं, अति तेजको धरैं विद्याधरोंके बलको देखकरि तुच्छमात्र भी भय न किया, तब स्वामीको तेजवंत देखि सेनाके लोग जे हटे हुते थे ते आगैं आय करि युद्ध करने लगे, दैदीप्यमान हैं शस्त्र जिनके अर जे भूल गए हैं घावोंकी वेदना, ये रणधीर भूमिगोचरी राक्षसनिकी सेनामें ऐसें पड़े जैसें माते हाथी समुद्रमें प्रवेश करैं अर सहस्ररश्मि अति क्रोधको करते हुए। बाणोंके समूहकरि जैसें पवन मेघको हटावै तैसें शत्रुओंको हटावते भए तदि द्वारपाल रावणसे कही हे देव! देखो इसने तुम्हारी सेना हटाई है यह धनुषका धारी रथपर चढ़ा जगतको तृणवत् देखे है, इसके बाणनिकरि तुम्हारी सेना एक योजन पीछे हटी है तब रावण सहस्ररश्मिको देखि आप त्रैलोक्यमंडन हाथीपर सवार भया। रावणको देखकरि शत्रुभी डरे रावण बाणनिकी वर्षा करता भया सहस्ररश्मिको रथसे रहित किया तब सहस्ररश्मि हाथीपर चढ़करि रावणके सन्मुख आया अर बाण छोड़े सो रावणके बखतरको भेदि अंगविषैं चुभैं तब रावणने बाण देहसे काढ़ि डारे, सहस्ररश्मिने हंसकर रावणसों कहा—अहो रावण ! तू बड़ा धनुषधारी कहावै है, ऐसी विद्या कहांतैं सीखी, तुझैं कौन गुरु मिल्या, पहिले धनुषविद्या सीख फिर हमसे युद्ध करि। ऐसे कठोर शब्द श्रवणतैं रावण क्रोधको प्राप्त भए। सहस्ररश्मिके केशनिमैं सेलकी दीनी, तब सहस्ररश्मिके रुधिरकी धारा चली, जाकरि नेत्र घूमने लगे। पहिले अचेत होय गया पीछे सचेत होय आयुध पकड़ने लग्या तदि रावण उछलकरि सहस्ररश्मिपर आय पड़े, अर जीवता पकड़ लिया बांधकर अपने स्थान ले आए। ताहि देखि सब विद्याधर आश्चर्यको प्राप्त भए कि सहस्ररश्मि जैसे योधाकों रावणने पकड्या। कैसे हैं रावण? धनपति यक्षके जीतनहारे, यमके मान मर्दन करन-हारे, कैलाशके कंपावनहारे, सहस्ररश्मिका यह वृत्तांत देखि सहस्ररश्मि जो सूर्य सो भी मानों भय करि अस्ताचलको प्राप्त भया, अन्धकार फैल गया। भावार्थ-रात्रिका समय भया। भला बुरा दृष्टिमें न आवैं तब चंद्रमाका बिंब उदय भया सो अंधकारके हरणेको प्रवीण मानों

रावणका निर्मल यश ही प्रगट्या है। युद्धविषैं जे योधा घायल भए थे तिनका वैद्योंकरि यत्न कराया अर जो मूवे थे तिनको अपने बंधुवर्ग रणखेतसों ले आए तिनकी क्रिया करी। रात्रि व्यतीत भई, प्रभातके वादित्र बाजने लगे, फिर सूर्य रावणकी वार्ता जाननेके अर्थि राग कहिए ललाईको धारता हुवा कंपायमान उदय भया। सहस्ररश्मिका पिता राजा शतबाहु जो मुनिराज भए थे, जिनको जंघाचरण ऋद्धि थी, वे महातपस्वी चंद्रमाके समान कांत सूर्य समान दीप्तिमान, मेरुसमान स्थिर, समुद्र सारिखे गंभीर, सहस्ररश्मिको पकड्या सुनकर जीवनिकी दयाके करणहारे परम दयालु शांतचित्त जिनधर्मी जान रावणपै आए। रावण मुनिको आवते देख उठ सामने जाय पायनि पड़े, भूमिमें लग गया है मस्तक तिनका, मुनिको काष्ठके सिंहासनपर विराजमान करि रावण हाथ जोड़ नम्रीभूत होय भूमिविषैं बैठे। अति विनयवान होय मुनिसों कहते भए–हे भगवान् ! कृपानिधान ! तुम कृतकृत्य तुम्हारा दर्शन इंद्रादिक देवोंको दुर्लभ है, तुम्हारा आगमन मेरे पवित्र होनेके अर्थि है। तब मुनि इसको शलाका पुरुष जानि प्रशंसाकरि कहते भए। हे दशमुख ! तू बडा कुलवान बलवान विभूतिवान देवगुरुधर्मविषैं भक्तिभावयुक्त है। हे दीर्घायु शूरवीर ! क्षत्रियोंकी यही रीति है जो आपसैं लडै उसका पराभव कर उसे वश करैं। सो तुम महाबाहु परम क्षत्री हो तुमतैं लडवेको कौन समर्थ है अब दयाकर सहस्ररश्मिको छोड़ो। तब रावण मंत्रियों सहित मुनिको नमस्कार करि कहते भए। हे नाथ ! मैं विद्याधर राजनिकों वश करनेको उद्यमी भया हूं, लक्ष्मीकर उन्मत्त रथनूपुरका राजा इंद्र तानैं मेरे दादेका बडा भाई राजा माली युद्धमें मारया है तासूं हमारा द्वेष है, सो मैं इंद्र ऊपर जाय था, मार्गमें रेवा कहिये नर्मदा उसपर डेरा भया सो पुलिनपर बालूके चौंतरेपर पूजा करैं था सोई इसने उपरासकी अर जलयंत्रोंकी केलि करी सो जलका वेग निकासको आया। सो मेरी पूजामें विघ्न भया तातैं यह कार्य किया है, विना अपराध मैं द्वेष न करूं अर मैं इनके ऊपर गया तब भी इनने क्षमा न कराई कि प्रमादकरि विना जाने मैंने यह कार्य किया है तुम क्षमा करो, उलटा मानके उदयकरि मेरेसे युद्ध करने लग्या अर कुवचन कहे, कारण ऐसा भया, जो मैं भूमिगोचरी मनुष्योंको जीतने समर्थ न भया तो विद्याधरोंको कैसे जीतूंगा ? कैसे हैं विद्याधर ? नानाप्रकारकी विद्याकरि महापराक्रमवंत हैं। तातैं जो भूमिगोचरी मानीं है, तिनको प्रथम वश करूं, पीछैं विद्याधरोंको वश करूं। अनुक्रमसे जैसैं सिवान चढ़ि मंदिरमैं जाइए है तातैं इनको वश किया अब छोडना न्याय ही है फिर आपकी आज्ञा समान और क्या ? कैसे हो आप महापुण्यके उदयतैं होय है दर्शन जाका। ऐसे वचन रावणके सुन इंद्रजीतने कही हे नाथ ! आपने बहुत योग्य वचन कहे। ऐसै वचन आप विना कौन कहै। तदि रावणने मारीच मंत्रीको आज्ञा करी कि सहस्ररश्मिको छुडाय महाराजके निकट ल्यावो। तदि मारीचने अधिकारीको आज्ञा करी सो आज्ञा-

प्रमाण जो नांगी तलवारनिके हवाले था सो ले आए। सहस्ररश्मि अपने पिता जो मुनि तिनको नमस्कार करि आय बैठया। रावणने सहस्ररश्मिका बहुत सत्कार करि बहुत प्रसन्न होय कह्या हे महाबल! जैसें हम तीनों भाई तैसें चौथा तू। तेरे सहायकरि रथनूपुरका राजा, इंद्र भ्रमतें कहावै है, ताहि जीतूंगा अर मेरी राणी मन्दोदरी ताकी लहुरी बहिन स्वयंप्रभा सो तुझै परणाऊंगा। तब सहस्ररश्मि बोले धिक्कार है इस राज्यको यह इंद्रधनुषसमान क्षणभंगुर है अर इन विषयनिको धिक्कार है ये देखने मात्र मनोज्ञ हैं, महा दुखरूप हैं। अर स्वर्गको धिक्कार, जो अव्रत असंयमरूप है। अर मरणके भाजन इस देहको भी धिक्कार अर मोकों धिक्कार जो एते काल विषयासक्त होय इतने काल कामादिक वैरीनि करि ठगाया अब मैं ऐसा करूं जाकरि बहुरि संसार वनविषैं भ्रमण न करूं। अत्यंत दुःखरूप जो चारगति तिनमैं भ्रमण करता बहुत थक्या। अब भवसागरमैं जासों पतन न होय सो करूंगा। तब रावण कहते भए यह मुनिका व्रत वृद्धनिकूं शोभै है। हे भव्य! तू तो नवयौवन है तब सहस्ररश्मिने कहा—'कालके यह विवेक नाहीं जो वृद्धहीको ग्रसै तरुणको न ग्रसै। काल सर्वभक्षी है, बाल वृद्ध युवा सबहीको ग्रसै है जैसे शरदका मेघ क्षणमात्रमें विलाय जाय तैसें यह देह तत्काल विनसै है। हे रावण! जो इन भोगनिहीके विषय सार होय तौ महापुरुष काहेकों तजैं, उत्तम है बुद्धि जिनकी ऐसे मेरे यह पिता इन्होंने भोग छोड योग आदरया सो योग ही सार है'। यह कहकर अपने पुत्रकों राज देय रावण सौं क्षमा कराय पिताके निकट जिनदीक्षा आदरी अर राजा अरण्य अयोध्याका धनी सहस्ररश्मिका परममित्र है सो उनसे पूर्ववचन था जो हम पहिले दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे अर उनने कही हुती हम दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे सो उनपै वैराग्यके समाचार भेजे। भले मनुष्योंने राजा सहस्ररश्मिका वैराग्य होनेका वृत्तांत राजा अरण्यसे कह्या सो सुनकर पहिले तो सहस्ररश्मिका गुण स्मरणकरि आंसू भरि विलाप किया फिर विषादको तजिकर अपने समीपवर्ती लोगनिकूं महा बुद्धिमान कहते भए जो रावण वैरीका भेषकरि उनका परम मित्र भया जो ऐश्वर्यके पींजरे विषैं राजा रुक रहे थे विषयोंकर मोहित था चित्त जिनका सो पींजरे तैं छुडाया। यह मनुष्यरूपी पक्षी, माया जालरूप पींजरेमें पडया है सो परम हितू ही छुडावै है। माहिष्मती नगरीका धनी राजा सहस्ररश्मि धन्य है जो रावण रूप जहाजको पायकरि संसार रूप समुद्रको तिरैगा। कृतार्थ भया अत्यंत दुखका देनहारा जो राजकाज महापाप ताहि तजकर जिनराजका व्रत लेनेको उद्यमी भया। याभांति मित्रकी प्रशंसाकरि आप भी लघु पुत्रको राज देय बडे पुत्र सहित राजा अरण्य मुनि भए। हे श्रेणिक! कोई एक उत्कृष्ट पुण्यका उदय आवै तब शत्रुका अथवा मित्रका कारण पाय जीवकों कल्याणकी बुद्धि उपजै अर पापकर्मके उदयकरि दुर्बुद्धि उपजै जो कोई प्राणीकौं धर्मके मार्गमें लगावै सोई परम मित्र है अर जो भोग

सामग्रीमें प्रेरै सो परम वैरी है, अस्पृश्य है। हे श्रेणिक! जो भव्य जीव यह राजा सहस्ररश्मिकी कथा भावधर सुनै सो मुनिव्रतरूप संपदाको प्राप्त होयकरि परम निर्मल होय, जैसैं सूर्यके प्रकाशकरि तिमिर जाय तैसैं जिनवाणीके प्रकाशकरि मोहतिमिर जाय॥

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिकाविषैं सहस्ररश्मि अर अनरण्यके वैराग्य निरूपण करनेवाला दसवां पर्व पूर्ण भया॥१०॥

(एकादश पर्व)

[राजामारुतके यज्ञका विनाश और रावणकी दिग्विजयका निरूपण]

अथानंतर रावणने जे पृथ्वीविषैं मानी राजा सुने ते ते सव नवाए, अपने वश किये अर जो अपने आप आयकरि मिले तिनपर बहुत कृपा करी। अनेक राजानिकरि मंडित सुभूम चक्रवर्तीकी नाइं पृथ्वी विषैं विहार किया नाना देशनिके उपजे नाना भेषके धारणहारे नाना प्रकार आभूषणनिके पहरने हारे नाना प्रकारकी भाषाके बोलनहारे, नाना प्रकारके वाहनोंपर चढे नाना प्रकारके मनुष्यनिकरि मंडित अनेक राजा तिन सहित दिग्वजय करता भया ठौर २ रत्नमयी सुवर्णमयी अनेक जिनमंदिर कराए अर जीर्ण चैत्यालयनिका जीर्णोद्धार कराया देवाधिदेव जिनेंद्रदेवकी भावसहित पूजा करी ठौर २ पूजा कराई जो जैनधर्मके द्वेषी दुष्ट मनुष्य हिंसक थे तिनको शिक्षा दीनी अर दरिद्रीनिकों दयाकरि धनकरि पूर्ण किया अर सम्यग्दृष्टि श्रावकनिका बहुत आदर किया, साधर्मीनिपर है वात्सल्यभाव जाका अर जहां मुनि सुनें तहां जाय भक्तिकरि प्रणाम करै, जे सम्यक्त्व-रहित द्रव्यलिंगी मुनि अर श्रावक हुते तिनकी भी शुश्रूषा करी, जैनीमात्रका अनुरागी उत्तर दिशाको दुस्सह प्रताप प्रगट करता संता विहार करता भया जैसैं उत्तरायणके सूर्यका अधिक प्रताप होय तैसैं पुण्यकर्मके प्रभावकरि रावणका दिन दिन अधिक तेज होता भया।

अथानंतर रावणने सुनी कि राजपुरका राजा बहुत बलवान् है, अतिअभिमानको धरता थका किसीको प्रणाम नाहीं करै है अर जन्मतैं ही दुष्टचित्त है मिथ्यामार्गकर मोहित है अर जीवहिंसारूप यज्ञमार्गविषैं प्रवर्त्या है। तदि यज्ञका कथन सुन राजा श्रेणिकने गौतमस्वामीसूं कह्या। हे प्रभो! रावणका कथन तो पीछे कहिये पहले यज्ञकी उत्पत्ति कहो, यह कौन वृत्तांत है जामें प्राणी जीवघातरूप घोरकर्ममें प्रवर्तैं हैं तदि गणधरदेवने कही—'हे श्रेणिक! अयोध्याविषैं इक्ष्वाकुवंशी राजा ययाति ताकी राणी सुरकांता अर पुत्र वसु था, सो जब पढ़नेयोग्य भया तब क्षीरकदंब ब्राह्मणपै पढ़नेको सौंप्या। क्षीर कदंबकी स्त्री स्वस्तिमती थी अर एक नारद ब्राह्मण देशांतरी धर्मात्मा सो क्षीरकदंबपै पढ़ै अर क्षीरकदंबका पुत्र पर्वत महापापी सो हू पढ़ै। क्षीरकदंब अति

धर्मात्मा सर्वशास्त्रनिमें प्रवीण शिष्यनिकूं सिद्धान्त तथा क्रियारूप ग्रंथ तथा मंत्रशास्त्र काव्य व्याकरणादि अनेक ग्रंथ पढ़ावै। एक दिन नारद वसु अर पर्वत इन तीनों सहित क्षीरकदंब बनविषैं गए। तहां चारण मुनि शिष्यनि सहित विराजे हुते सो एक शिष्य मुनिने कह्या ये चार जीव हैं, एक गुरु तीन शिष्य। तिनमेंतैं एक गुरु एक शिष्य ये दोय तो सुबुद्धि हैं अर दो शिष्य कुबुद्धी हैं ऐसे शब्द सुनिकरि क्षीरकदंब संसारतैं अत्यंत भयभीत भए शिष्यनिकों तो सीख दीनी सो अपने २ घर गए मानो गायके बछड़े बंधनसे छूटे, अर क्षीरकदंबनैं मुनिपै दीक्षा धरी। जब शिष्य घर आए तदि क्षीरकदंबकी स्त्री स्वस्तिमती पर्वतको पूछती भई तेरा पिता कहां, तू अकेलाही घर क्यों आया ? तदि पर्वत ने कही हमको तो पिताजीने सीख दीनी अर कह्या हम पीछेसे आवैं हैं। यह वचन सुन स्वतिमतीके विकल्प उपज्या। पतिके आगमनकी है वांछाजाके, दिन अस्त भया, तो हू न आए। तब महाशोकवती होय पृथ्वीपर पड़ी अर रात्रिविषैं चकवीकी नाई दुखकरि पीड़ित विलाप करती भई-हाय हाय ! मैं मंदभागिनी प्राणनाथ विना हनी गई। किसी पापीने उनको मारया अथवा किसी कारणकरि देशांतरको उठ गए अथवा सर्वशास्त्रविषैं प्रवीण हुते सो सर्वपरिग्रहकों त्यागकरि वैराग्य पाय मुनि होय गए, या भांति विलाप करते रात्रि पूर्ण भई। जब प्रभात भया तब पर्वत पिताकों ढूंढने गया। उद्यानमें नदीके तटपर मुनियोंके संघसहित श्रीगुरु विराजे हुते तिनके समीप विनयसहित पिता बैठ्या देख्या तदि पाछा आयकर मातासौं कही कि हे माता ! हमारा पिता तो मुनियोंने मोह्या है सो नग्न होय गया है तब स्वस्तिमती निश्चय जानकरि पतिके वियोगते अति दुखी भई। हाथनिकरि उरस्थलको कूटती भई अर पुकारकर रोवती भई सो नारद महाधर्मात्मा यह वृत्तांत सुनकरि स्वस्तिमतीपै शोकका भरया आया ताके देखवेकरि अत्यंत रोवने लागी अर सिर कूटती भई, शोकविषैं आपनेको देखकरि शोक अतीव बढै है तदि नारदने कही-हे माता ! काहेकों वृथा शोक करो हो, वे धर्मात्मा जीव पुण्याधिकारी सुंदर है चेष्टा जिनकी, जीतव्यको अस्थिर जानकरि, तप करनेको उद्यमी भए सो निर्मल है बुद्धि जिनकी, अब शोक किएतैं पीछैं घर न आवैं याभांति नारदने संबोधी तदि किंचित् शोक मंद भया, घरविषैं तिष्ठी, महा दुःखित भरतारकी स्तुति भी करैं अर निंदा भी करै। यह क्षीरकदंबके वैराग्यका वृत्तांत सुन राजा ययाति तत्वके वेत्ता हू वसु पुत्रको राज्य देय महामुनि भए। वसुका राज्य पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध भया। आकाशतुल्य स्फटिक मणि ताके सिंहासनके पाये बनाए ता सिंहासन पर तिष्ठै सो लोक जानै कि राजा सत्यके प्रतापकरि आकाशविषैं निराधार तिष्टै है।

अथानंतर हे श्रेणिक ! एक दिन नारदके अर पर्वतके शास्त्र-चर्चा भई तदि नारदने कही कि भगवान वीतरागदेवने धर्म दोय प्रकार प्ररूप्या है एक मुनिका दूसरा

गृहस्थीका। मुनिका महाव्रतरूप है, गृहस्थीका अणुव्रतरूप है। जीवहिंसा, असत्य, चोरी, कुशील, परिग्रह इनका सर्वथा त्याग सो तो पंच महाव्रत तिनकी पच्चीस भावना यह मुनिका धर्म है। अर इन हिंसादिक पापोंका किंचित् त्याग सो श्रावकका व्रत है। श्रावकके व्रतनिमें पूजा दान शास्त्रविषैं मुख्य कह्या है पूजाका नाम यज्ञ है "अजैर्यष्टव्यम्" या शब्दका अर्थ मुनिने याभांति कह्या है जो बोनेमें न ऊगें जिनमें अंकुरशक्ति नाहीं ऐसे शालिधान यव तिनका विवाहादिक क्रियानिविषैं होम करिए यह भी आरंभी श्रावककी रीति है। ऐसे नारदके वचन सुन पापी पर्वत बोला अज कहिये छेला (बकरा) तिनका आलंभन कहिये हिंसन ताका नाम यज्ञ है। तदि नारद कोपकरि दुष्ट पर्वतसों कहते भये हे पर्वत! ऐसैं मत कहै महा भयंकर वेदना है जाविषैं, ऐसे नरकमें तू पड़ैगा। दया ही धर्म है, हिंसा पाप है। तब पर्वत कहने लाग्या मेरा तेरा न्याय राजा वसुपै होयगा जो झूठा होयगा ताकी जिह्वा छेदी जायगी या भांति कहकर पर्वत मातापै गया। नारदकै अर याकै जो विवाद भया सो सर्व वृत्तांत मातासौं कह्या, तब माताने कह्या कि तू झूठा है तेरा पितासौं हमने व्याख्यान करते अनेकबार सुन्या है जो अज बोई हुई न उगैं, ऐसी पुरानी शालि तथा पुराना यव तिनका नाम है छेलेका नाहीं, जीवनिका भी कभी होम किया जाय है? । तू देशांतर जाय मांसभक्षणका लोलुपी भया है, तातैं मानके उदयकरि झूठ कह्या सो तुझै दुःखका कारण होयगा। हे पुत्र! निश्चय सेती तेरी जिह्वा छेदी जायगी। मैं पुण्यहीन अभागिनी पति अर पुत्ररहित भई क्या करूंगी, या भांति पुत्रसौं कहकरि वह पापिनी चितारती भई कि राजा वसुकै गुरुदक्षिणा हमारी धरोहर है, ऐसा जानि अति व्याकुल भई। वसुके समीप गई। राजाने स्वस्तिमतीको देखि बहुत विनय किया। सुखासन बैठाई, हाथ जोड़ि पूछता भया हे माता! तुम आज दुखित दीखो हो, जो तुम आज्ञा करो सोही करूं? तदि स्वस्तिमती कहती भई हे पुत्र! मैं महादुःखिनी हू जो स्त्री अपने पतिकरि रहित होय ताकौं काहेका सुख, संसारमें पुत्र दोय भांतिके हैं। एक पेटका जाया एक शास्त्रका पढ़ाया। सो इनमें पढ़ाया पुत्र विशेष है। एक समल है दूसरा निर्मल है। मेरे धनीके तुम शिष्य हो, तुम पुत्रतैं हू अधिक हो, तुम्हारी लक्ष्मी देखकरि मैं धैर्य धरूं हू। तुम कही थी माता दक्षिणा लेवो, मैं कही समय पाय लूंगी। वह वचन याद करो। जे राजा पृथिवीके पालनमें उद्यमी हैं ते सत्य ही कहै हैं अर जे ऋषि जीवदयाके पालनेमें तिष्ठै हैं ते भी सत्य ही कहै हैं। तू सत्यकर प्रसिद्ध है मोकौं दक्षिणा देवो। या भांति स्वस्तिमतीने कह्या तदि राजा विनयकरि नम्रीभूत होय कहते भये—हे माता! तिहारी आज्ञातैं जो नाहीं करने योग्य काम है सो भी मैं करूं। जो तिहारे चित्तमें होय सो कहो। तब पापिनी ब्राह्मणीने नारद अर पर्वतके विवादका सर्व वृत्तांत कह्या अर कह्या जो मेरा पुत्र सर्वथा झूठा है परंतु याके झूठको तुम सत्य करो। मेरे कारण ताका

मानभंग न होय। तदि राजाने यह अयोग्य जानते हुए भी ताकी बात दुर्गतिका कारण प्रमाण करी, तदि वह राजाको आशीर्वाद देय घर आई। बहुत हर्षित भई। दूजे दिन प्रभात ही नारद पर्वतराजके समीप आए, अनेक लोक कौतूहल देखनेको आए सामंत मंत्री देशके लोग बहुत आय भेलैं भए। तदि सभाके मध्य नारद पर्वत दोऊनिमें बहुत विवाद भया, नारद तो कहै अज शब्दका अर्थ अंकुरशक्तिरहित शालि है अर पर्वत कहै पशु है। तदि राजा वसुको पूछ्या तुम सत्यवादीनिमें प्रसिद्ध हो जो क्षीरकदंब अध्यापक कहते हुते सो कहो। तदि राजा कुगतिकों जानहारा कहता भया जो पर्वत कहै है सोई क्षीरकदंब कहते हुते। या भांति कहते ही सिंहासन-के स्फटिकके पाए टूट गये, सिंहासन भूमिमें गिर पड्या तदि नारदने कह्या, हे वसु! असत्यके प्रभावतैं तेरा सिंहासन डिगा अबहु तुमकूं सांच कहना योग्य है। तदि मोहके मदकरि उन्मत्त भया यह ही कहता भया जो पर्वत कहै सो सत्य है तदि महापापके भारकरि हिंसामार्गके प्रवर्तनतैं तत्काल ही सिंहासनसमेत धरतीमें गड़ गया। राजा मरकरि सातवें नरक गया। कैसा है नरक? अत्यंत भयानक है वेदना जहां, तदि राजा वसुको मूवा देखि सभाके लोग वसु अर पर्वतको धिक्कार धिक्कार कर कहते भए अर महा कलकलाट शब्द भया, दयाधर्म उपदेशकरि नारदकी बहुत प्रशंसा भई अर सर्व कहते भये (यतो धर्मस्ततो जयः) पापी पर्वत हिंसाके उपदेशकरि धिक्कार-दंडको प्राप्त भया। पापी पर्वत देशांतरोंमें भ्रमण करता संता हिंसामई शास्त्रकी प्रवृत्ति करता भया, आप पढ़ै औरनिको पढ़ावै, जैसैं पतंग दीपकमें पड़ै तैसैं कईएक बहिर्मुख जीव कुमार्गमें पड़े। अभक्ष्यका भक्षण अर न करनेयोग्य काम करना ऐसा लोकनिकौं उपदेश दिया अर कहता भया कि यज्ञहीके अर्थि ये पशु बनाये हैं, यज्ञ स्वर्गका कारण है तातैं जो यज्ञमें हिंसा होय सो हिंसा नाहीं अर सौत्रामणिनाम यज्ञके विधानकरि सुरापानका हू दूषण नाहीं अर गोयज्ञ नाम यज्ञविषैं अगम्यागम्यहू (परस्त्रीसेवन भी) करैं हैं। ऐसा पर्वतने लोकनिकौं हिंसादिमार्ग-का उपदेश दिया। आसुरी मायाकरि जीव स्वर्ग जाते दिखाये। कईएक क्रूर जीव कुकर्ममें प्रवर्तनकरि कुगतिके अधिकारी भये। हे श्रेणिक! यह हिंसायज्ञकी उत्पत्तिका कारण कह्या। अब रावणका वृतांत सुनो।

रावण राजपुर गए तहां राजा मरुत हिंसाकर्ममें प्रवीण यज्ञशालाविषैं तिष्ठै था। संवर्तनामा ब्राह्मण यज्ञ करावै था, तहां पुत्रदारादिसहित अनेक विप्र धनके अर्थी आए हुते और अनेक पशु होम निमित्त लाए। ता समय अष्टम नारद पदवीधर बड़े पुरुष आकाशमार्गतैं आय निकसे। बहुत लोकनिका समूह देख आश्चर्य पाय चित्तमें चिंतवते भए कि यह नगर कौनका है और यह दूरपर सेना कौनकी पडी है। अर नगरके समीप एते लोग किस कारण एकत्र भए हैं। ऐसा मनमें विचार आकाशतैं भूमिपर उतरे॥

[नारद उत्पत्ति वर्णन]

अथानंतर यह बात सुन राजा श्रेणिक गौतमस्वामीकौं पूछते भए हे भगवन् ! यह नारद कौन है यामैं कैसै कैसै गुण अर याकी उत्पत्ति किह भांति है ? तदि गणधरदेव कहते भए। हे श्रेणिक ! एक ब्रह्मरुचि नाम ब्राह्मण था ताके कुरमी नामा स्त्री, सो ब्राह्मण तापसके व्रत धरि वनमें जाय कंदमूल फल भक्षण करै ब्राह्मणी भी संग रहै ताकौं गर्भ रह्या तहां एकदिन मार्गके वशतैं कुछ संयमी महामुनि आए। क्षणएक विराजे। ब्राह्मणी अर ब्राह्मण समीप आय बैठे। ब्राह्मणी गर्भिणी पांडुर है शरीर जाका गर्भके भारकरि दुखित सांस लेती मानों सर्पणी ही है, ताकौं देखिकरि मुनिकौं दया उपजी। तिनमेंसैं बडे मुनि बोले देखो यह प्राणी कर्मके वशकरि जगतविषैं भ्रमै है। धर्मकी बुद्धिकरि कुटुंबको तजिकरि संसारसागरतैं तरणेकेअर्थि तो वनविषैं आया सो हे तापस ! तैंनैं क्या दुष्टकर्म किया ? स्त्री गर्भवती करी। तेरेमैं अर गृहस्थीमें कहा भेद है। जैसैं वमन किया जो आहार ताकूं मनुष्य न भखै तैसैं विवेकी पुरुष तजे हुए कामादिकनिकौं फिर नाहीं आदरै। जो कोई भेष धरै अर स्त्रीका सेवन करै सो भयानक वनमैं स्यालिनी होय अनेक कुजन्म पावै। नरकनिगोदमें पडै है, जो कोई कुशील सेवता सर्व आरंभनिमें प्रवर्त्या मदोन्मत्त आपकौं तापसी मानै है सो महा अज्ञानी है। यह कामसेवन ताकरि दग्ध दुष्टचित्त जो-दुरात्मा आरंभविषैं प्रवर्तै ताकैं तप काहेका ? कुदृष्टिकर गर्वित भेषधारी विषयाभिलाषी जो कहै मैं तपसी हूं सो मिथ्यावादी है। व्रती काहेका ? सुखसों बैठना, सुखसूं सोवना, सुखसूं आहार ? विहार करना ओढना बिछावना आदि सब काज करै अर आपकौं साधु मानै सो मूर्ख आपको ठगै है। बलता जो घर तहांतैं निकसे फिर ताहीमैं कैसैं प्रवेश करै ? अर जैसैं छिद्र पाय पिंजरेसे निकस्या पक्षी भी फिर आपकों पिंजरेविषैं नाहीं डार तैसैं विरक्त होय फिर कौन इंद्रीनिके वश परै ? जो इन्द्रीनिके वश होय सो लोकविषैं निंदा योग्य है। आत्मकल्याणको न पावै है। सर्व परिग्रहके त्यागी मुनिको एकाग्रचित्त कर एक आत्मा ही ध्यावने योग्य है सो तुम सारिखे आरंभी तिनकरि आत्मा कैसैं ध्याया जाय ? प्राणीनिके परिग्रहके प्रसगंकरि रागद्वेष उपजै है, रागकरि काम उपजै है, द्वेषकरि जीवहिंसा होय है, कामक्रोधकरि पीडित जो जीव ताकै मनकों मोह पीडै है। मूर्खके कृत्य अकृत्यविषैं विवेकरूप बुद्धि न होय। जो अविवेकतैं अशुभकर्म उपार्जै है सो घोरसंसार-सागरमें भ्रमै है। यह संसर्गके दोष जानकरि जे पंडित हैं ते शीघ्र ही वैरागी होय हैं। आपकरि आपकों जानि विषयवासनातैं निवृत्त होय परमधामको पावैं हैं। याभांति परमार्थरूप उपदेशनिके वचननिकरि महामुनिने संबोध्या। तदि ब्राह्मण ब्रह्मरुचि निर्मोही होय मुनि भया। कुरमी नामा स्त्रीका त्यागकरि गुरुके संग ही विहार किया। गुरुमें है धर्मराग जाके अर वह ब्राह्मणी कुरमी

शुद्ध है बुद्धि जाकी सो पापकर्मतैं निवृत्त होय श्रावकके व्रत आदरै। जान्या है रागादिकके वशतैं संसारका परिभ्रमण जानै सो कुमार्गका संग छोड्या। जिनराजकी भक्तिविषैं तत्पर होय भर्ता रहित अकेली महासती सिंहनीकी नाईं महावनविषैं भ्रमै। दसवें महीने पुत्रका जन्म भया तदि वाकों देखकरि वह महासती ज्ञान क्रियाकी धरणहारी चित्तविषैं चिंतवती भई जो यह पुत्र परिवारका संबंध महा अनर्थका मूल मुनिराजने कहा हुता सो सत्य है तातैं मैं या पुत्रका प्रसंगका परित्यागकरि आत्मकल्याण करूं अर यह पुत्र महा भाग्यवान है याके रक्षक देव हैं याने जे कर्म उपार्जे हैं तिनका फल अवश्य भोगैगा। वनमैं तथा समुद्रविषैं अथवा वैरियोंके वशविषैं पड्या जो प्राणी ताकी पूर्वोपार्जित कर्म ही रक्षा करै है और कोऊ नाहीं अर जाकी आयु क्षीण होय है सो माताकी गोद विषैं बैठा हू मृत्युके वश होय है। ये सब संसारी जीव कर्मोंके आधीन हैं। भगवान सिद्धपरमात्मा कर्मकलंकरहित हैं ऐसा जान्या है तत्त्वज्ञान जानैं सो महानिर्मल बुद्धिकरि बालककों वनविषैं तजकरि यह ब्राह्मणी विकल्परूप जो जड़ता ताकरि रहित अलोकनगरविषैं आई। जहां इंद्रमालिनी नामा आर्या अनेक आर्यानिकी गुरुनी हुती तिनके समीप आर्या भई, सुंदर है चेष्टा जाकी।

अथानंतर आकाशके मार्ग जृंभ नामा देव जाता हुता सो पुण्याधिकारी रुदनादि-रहित जो बालक ताहि देख्या, दयावान होय उठाय लिया, बहुत आदरतैं पाल्या, अनेक आगम अध्यात्मशास्त्र पढ़ाए, तातैं सिद्धांतका रहस्य जाननैं लग्या, महा पंडित भया, आकाश-गामिनी विद्या हू सिद्ध भई, यौवनकों प्राप्त भया, श्रावकके व्रत धारे शीलव्रत विषैं अत्यंत दृढ अपने माता पिता जे आर्यिका मुनि भये हुते तिनकी वंदना करै, कैसा है नारद? सम्यग्दर्शनविषैं तत्पर ग्यारमी प्रतिमाके क्षुल्लक श्रावकके व्रत लेय विहार किया परंतु कर्मके उदयतैं तीव्र वैराग्य नाहीं, न गृहस्थी न संयमी, धर्मप्रिय है अर कलह भी प्रिय है। वाचालपनेमें प्रीति है, गायन विद्यामें प्रवीण अर राग सुननेविषैं विशेष अनुरागवाला है मन जाका महाप्रभावकरि युक्त राजानिकरि पूजित जाकी आज्ञा कोई लोप न सकै। पुरुष स्त्रीनिविषैं सदा जिसका अति सन्मान है। अढाई द्वीपविषैं मुनि जिनचैत्यालनिका दर्शन करै, सदा धरती आकाश विषैं भ्रमता ही रहै, कौतूह-लमें लगी है दृष्टि जाकी देवनिकरि वृद्धि पाई अर देवनिके समान है महिमा जाकी, पृथ्वीविषैं देवऋषि कहावै, सदा सर्वत्र प्रसिद्ध विद्याके भावकरि किया है अद्भुत उद्योत जानैं।

सो नारद विहार करते संते कदाचित् मरुतके यज्ञकी भूमिपर जाय निकसे, सो बहुत लोकनिकी भीड़ देखी अर पशु बंधे देखे, तब दयाभावकरि संयुक्त होय यज्ञभूमिमें उतरे तहां जायकरि मरुतसे कहने लगे–'हे राजा! जीवनिकी हिंसा दुर्गतिका ही द्वार है, तैंनैं यह महा-पापका कार्य क्यों रच्या है?' तब मरुत कहता भया–'यह संवर्त ब्राह्मण सर्व शास्त्रनिके अर्थविषैं

प्रवीण यज्ञका अधिकारी है यह सर्व जानै है याहीतैं धर्म चर्चा करो। यज्ञ करि उत्तम फल पाइये है।' तदि नारद यज्ञ करावनहारेसे कहते भए—'अहो मानव! तैं यह क्या कर्म आरंभ्या है? यह कर्म सर्वज्ञ जो वीतराग हैं तिनने दुःखका कारण कह्या है। तदि संवर्त ब्राह्मण कोपकरि कहता भया अहो अत्यंत मूढता तेरी तू सर्वथा अमिलती बात कहै है। तैंनै कोई सर्वज्ञ रागवर्जित वीतराग कह्या सो जो सर्वज्ञ वीतराग होय सो वक्ता नाहीं अर जो वक्ता है सो सर्वज्ञ वीतराग नाहीं अर अशुद्ध मलिन जे जीव तिनका कह्या वचन प्रमाण नाहीं अर जो अनुपम सर्वज्ञ है सो कोई देखने में आवै नाहीं तातैं वेद अकृत्रिम है, वेदोक्त मार्ग प्रमाण है। वेदविषैं शूद्र बिना तीन वर्णनिकौं यज्ञ करावना कह्या है, यह यज्ञ अपूर्व धर्म है, स्वर्गके अनुपम सुख देवै है। वेदीके मध्य पशुनिका वध पाप का कारण नाहीं, शास्त्रनिमें कह्या जो मार्ग सो कल्याण ही का कारण है अर यह पशूनिकी सृष्टि विधातानैं यज्ञहीके अर्थि रची है तातैं यज्ञमें पशुके वधका दोष नाहीं। ऐसैं संवर्त ब्राह्मणके विपरीत वचन सुन नारद कहते भए—हे विप्र! तैंनैं यह सर्व अयोग्य रूप ही कह्या है—कैसा है तू? हिंसामार्गकर दूषित है आत्मा जाका। अब तू ग्रंथार्थका यथार्थ भेद सुन। तू कहै है सर्वज्ञ नाहीं, सो यदि सर्वथा सर्वज्ञ न होय तो शब्दसर्वज्ञ, अर्थसर्वज्ञ, बुद्धिसर्वज्ञ, यह तीन भेद काहेकूं कहे। जो सर्वज्ञ पदार्थ है तदि ही कहनेमें आवै है जैसैं सिंह है तो चित्राममें लिखिए है तातैं सर्वका देखनहारा सबका जाननहारा सर्वज्ञ है। सर्वज्ञ न होय तो अमूर्तीक अतींद्रिय पदार्थको कौन जानै? तातैं सर्वज्ञका वचन प्रमाण है अर तैंनैं कह्या जो यज्ञमें पशुका वध दोषकारी नाहीं सो पशुको वध करते समय दुःख होय है कि नाहीं, जो दुःख होय है तो पापहू होय है जैसैं पारधी हिंसा करै है सो जीवनकौं दुःख होय है अर उसको पापहू होय है अर तैंनैं कही विधाता सर्वलोकका कर्त्ता है अर यह पशु यज्ञके अर्थि बनाए हैं सो यह कथन प्रमाण नाहीं, भगवान कृतार्थ है तिनको सृष्टि बनाने तैं क्या प्रयोजन? अर कहोगे ऐसी क्रीडा है तो कृतार्थका काज नाहीं, क्रीडा करै ताकूं बालक समान जानिए अर जो सृष्टि रचै तौ आपसारिखी रचै वह सुखपिंड अर यह सृष्टि दुःखरूप है, जो कृतार्थ होय सो कर्ता नाहीं अर कर्ता है सो कृतार्थ नाहीं। जाकै कछु इच्छा है सोही करै, जाके इच्छा है ते ईश्वर नाहीं अर ईश्वर बिना करवे समर्थ नाहीं, तातैं यह निश्चय भया जाकै इच्छा है सो करने समर्थ नाहीं अर जो करवेमैं समर्थ है ताके इच्छा नाहीं तातै जाकों तुम विधाता कर्ता मानो हो, सो कर्मकरि पराधीन तुम सारिखा ही है अर ईश्वर है सो अमूर्तीक है जाकै शरीर नाहीं सो शरीर बिना सृष्टि कैसैं रचै? अर यज्ञके निमित्त पशु बनाए सो वाहनादि कर्मविषैं क्यों प्रवर्ते? तातैं यह निश्चय भया कि इस भवसागरविषैं अनादिकालतैं इन जीवोंने रागादिभावकरि कर्म उपार्जे हैं तिनकरि नानायोनिविषैं भ्रमण करै है यह जगत अनादिनिधन है—काहूका किया नाहीं, संसारी जीव कर्माधीन हैं अर जो तुम

यह कहोगे कि–कर्म पहिले हैं या शरीर पहिले है? सो जैसैं बीज अर वृक्ष तैसें कर्म अर शरीर जाननैं। बीज तैं वृक्ष है अर वृक्षतैं बीज है, जिनके कर्मरूप बीज दग्ध भया तिनके शरीररूप वृक्ष नाहीं अर शरीरवृक्ष विना सुख दुखादि फल नाहीं तातैं यह आत्मा मोक्षअवस्थामें कर्मरहित मनइंद्रियनितैं अगोचर अद्भुत परम आनंदको भोगै हैं। निराकारस्वरूप अविनाशी है सो अविनाशीपद दयाधर्मतैं ही पाइए है। तू कोई पुण्यके उदय करि मनुष्य भया ब्राह्मणका कुल पाया तातैं पारधियोंके कर्मतैं निवृत्त हो अर जो जीवहिंसातैं यह मानव स्वर्ग पावै है तो हिंसाके अनुमोदनतैं राजा वसु नरकमें क्यों पडे? जो कोई चूनका पशु बनायकरि घात करै है सो भी नरकका अधिकारी होय है तो साक्षात् पशुघातकी कहा बात? अबहू यज्ञके करणहारे ऐसा शब्द कहै हैं– 'हो वसु! उठ स्वर्गविषैं जावो'। यह कहकर अग्निविषैं आहुति डारै हैं। तातैं सिद्ध भया कि वसु नरकमें गया अर स्वर्ग न गया तातैं हे संवर्त! यह यज्ञ कल्याणका कारण नाहीं अर जो तू यज्ञ ही करै तो जैसैं हम कहें सो कर। यह चिदानंद आत्मा सो तो यजमान नाम कहिए (यज्ञका करणहारा) अर शरीर है सो विनयकुण्ड कहिए होमकुंड अर संतोष है सो पुरोडास कहिए यज्ञकी सामग्री अर जो सर्व परिग्रह है सो हवि कहिए होमनेयोग्य वस्तु अर माधुर्य कहिये केश तेई दर्भ कहिये डाभ, तिनका उपारना, लोंच करना अर जो सर्व जीवनिकी दया सोई दक्षिणा अर जाका फल सिद्धपद ऐसा जो शुक्लध्यान सोई प्राणायाम अर जो सत्यमहाव्रत सोई यूप कहिए यज्ञविषैं काष्टका स्थंभ जातै पशुको बांधै हैं अर यह चंचल मन सोई पशु अर तपरूप अग्नि अर पांच इंद्रिय तेई समधि कहिए इंधन यह यज्ञ धर्मयज्ञ कहिए है। अर तुम कहोहो कि यज्ञकरि देवोंकी तृप्ति कीजिये है सो देवनकै तो मनसा आहार है तिनका शरीर सुगंधमय है अन्नादिकहीका आहार नाहीं तो मांसादिककी कहा बात? कैसा है मांस महा दुर्गंध जो देख्या न जाय, पिताका वीर्य माताका लहू ताकरि उपज्या कृमीनिकी है उत्पत्ति जिसविषैं महा अभक्ष सो मांस देव कैसे भखैं? अर तीन अग्नि या शरीरविषैं हैं एक ज्ञानाग्नि दूसरी दर्शनाग्नि तीसरी उदराग्नि सो इन्हींको आचार्य दक्षिणाग्नि गार्हपत्य आहवनीय कहै हैं अर स्वर्गलोकके निवासी देव हाडमांसका भक्षण करैं तो देव काहेके? जैसैं स्वान, स्याल, काक, तैसें वे भी भए। ये वचन नारदने कहे।

कैसे हैं नारद? देवऋषि हैं अनेकांतरूप जिनमार्गके प्रकाशिवेकौ सूर्यसमान महा तेजस्वी दैदीप्यमान है शरीर जिनका, शास्त्रार्थज्ञानके निधान तिनको मंदबुद्धि संवर्त कहा जीतै। सो पराभवको प्राप्त भया तदि निर्दई क्रोधके मारकर कंपायमान आशीविष सर्पसमान लाल हैं नेत्र जाके महा कलकलाट करि अनेक विप्र भेले होय लड़नेकों काष्ठकष्ठ हस्तपादादिकर नारदके मारनेकौं उद्यमी भए। जैसैं दिनमें काक घूघू पर आवै सो नारद भी कैयकनिकौं मुक्कीनतैं

कैयकनिकौं मुद्गरसैं, कैयकनिकौं कोहनीसे मारते हुए भ्रमण करते हुए। अपने शरीररूप शस्त्र-करि अनेकनिकौं हत्या बहुत युद्ध भया। निदान यह बहुत अर नारद अकेले सो सर्वगात्रमें अत्यंत आकुलताको प्राप्त भये। पक्षीकी नाईं बंधकोंने घेरया आकाशविषैं उड़वेको असमर्थ भए, प्राण संदेहको प्राप्त भए, ताही समय रावणका दूत राजा मरुतपै आया हुता सो नारदको घेरया देखि पाछा जाय रावणतैं कही- हे महाराज! जाके निकट मोहि भेज्या हुता सो महा दुर्जन है ताके देखतैं थके द्विजोंने अकेले नारदको घेरया है अर मारै हैं जैसैं कीडी दलसर्पको घेरै सो मैं यह बात देख न सक्या सो आपको कहिवनेको आया हूं। तदि रावण यह वृत्तान्त सुन क्रोधकौं प्राप्त भया, पवनसे भी शीघ्रगामी जे वाहन तिनपर चढ़ि चलनेको उद्यमी भया अर नंगी तलवारनिके धारक जे सामन्त ते अगाऊ दौड़ाए ते एक पलकमें यज्ञशाला जाय पहुँचे, तत्काल ही नारदको शत्रुओंके घेरतैं छुड़ाया अर निर्दई मनुष्य जो पशूनिको घेरि रहे हुते सो सकल पशु तत्काल छुड़ाए। यज्ञके यूप कहिए स्तंभ ते तोड़ डारे अर यज्ञके करावनहारे विप्र बहुत कूटे, यज्ञशाला बखेर डारी, राजाकौं भी पकड़ लिया, रावणने द्विजनितैं बहुत कोप किया जो मेरे राज्य-विषैं जीवघात करै यह क्या बात? सो ऐसैं कूटे जो अचेत होय धरतीपर गिर पडे, तब सुभट-लोक इनकौं कहते भये अहो जैसा दुख तुमको बुरा लागै है अर सुख भला लागै है तैसा पशु-निके भी जानों अर जैसा जीतव्य तुमको बल्लभ है तैसा सकल जीवनिकों जानों, तुमको कूटते कष्ट होय है तो पशुयोंको विनाशनेतैं क्यों न होय? तुम पापका फल सहो आगैं नरकनिमें दुख भोगोगे सो घोडों आदिके सवार तथा खेचर भूचर सब ही पुरुष हिंसकनिको मारने लगे, तब वे विलाप करने लगे, हमको छोडो फिर ऐसा काम न करेंगे ऐसे दीन वचन कह विलाप करते भए अर रावणका तिनपर अत्यंत क्रोध सो छोडे नाहीं, तदि नारद महा दयावान रावणसौं कहने लगे हे राजन्! तेरा कल्याण होवै, तैंने इन दुष्टोंसे मुझे छुड़ाया अब इनकी भी दयाकर, जिन-शासनमें काहूकौं पीडा देनी लिखी नाहीं। सब जीवनिकौं जीतव्य प्रिय है। तैंने सिद्धांतमें क्या यह बात न सुनी है कि जो हुंडावसर्पिणी कालविषैं पाखंडिनिकी प्रवृत्ति होय है अबके चौथेका-लके आदिमें भगवान ऋषभ प्रगटे तीन जगत्में उच्च जिनको जन्मते ही देव सुमेरु पर्वत पर ले गये, क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराया वे महाकांतिके धारी ऋषभ जिनका दिव्य चरित्र पापोंका नाश करनहारा तीनलोकमें प्रसिद्ध है सो तैंने क्या न सुन्या, वे भगवान जीवोंके दयालु जिनके गुण इन्द्र भी कहनेको समर्थ नाहीं, तै वीतराग निर्वाणके अधिकारी इस पृथ्वीरूप स्त्रीको तजकरि जगतके कल्याण निमित्त मुनिपदको आदरते भये। कैसे हैं प्रभु! निर्मल है आत्मा जिनका, कैसी है पृथ्वीरूप स्त्री? जो विंध्याचल पर्वत अर हिमालय पर्वत तेई हैं उतंग कुच जाके अर आर्यक्षेत्र है मुख जाका सुंदर नगर तेई चूडे तिनकरि युक्त है अर समुद्र है

कटिमेखला जाकी अर जे नीलवन तेई हैं सिरके केश जाके नानाप्रकारके जे रत्न तेई आभूषण हैं। ऋषभदेवने मुनि होयकरि हजार वर्ष तक महातप किया, अचल है योग जिनका, लंबायमान हैं बाहु जिनकी, स्वामीके अनुरागकरि कच्छादि चारहजार राजाओंने मुनिके धर्म जाने विनाही दीक्षा धरी। सो परीषह सह न सके तदि फलादिकका भक्षण अर बक्कलादिका धारणकरि तापसी भए, ऋषभदेवने हजार वर्ष तक तपकर वटवृक्षके तले केवलज्ञान उपजाया तदि इन्द्रादिक देवोंने केवल-ज्ञानकल्याण किया, समोसरणकी रचना भई। भगवानकी दिव्यध्वनिकर अनेक जीव कृतार्थ भए। जे कच्छादिक राजा चारित्र भ्रष्ट भये हुते ते धर्ममें दृढ होय गए, मारीचके दीर्घ संसारके योगतैं मिथ्याभाव न छूट्या अर जिसस्थानपर भगवानको केवलज्ञान उपज्या ता स्थानकमें देवोंकरि चैत्यालयनिकी स्थापना भई। ऋषभदेवकी प्रतिमा पधराई अर भरत चक्रवर्तीने विप्रवर्ण थाप्या हुता, ते जलविषैं तेलकी बूंदवत् विस्तारकों प्राप्त भया। उन्होंने यह जगत मिथ्याचारकरि मोहित किया, लोक अति कुकर्मविषैं प्रवर्ते सुकृतका प्रकाश नष्ट होय गया। जीव साधूनिके अनादरमें तत्पर भए। आगैं सुभूम चक्रवर्तीने नाशको प्राप्त किए थे तौ भी इनका अभाव न भया, हे दशानन! तो करि कैसैं अभावको प्राप्त होंहिंगे,तातैं तू प्राणीनिकी हिंसातैं निवृत्त होहु। काहूकी कभी भी हिंसा कर्त्तव्य नाहीं। अर जब भगवानके उपदेशकरि जगत मिथ्यामार्गकरि रहित न होय, कोई एक जीव सुलटै तो हम सारिखे तुम सारिखों कर सकल जगतका मिथ्यात्व कैसैं जाय? कैसे हैं भगवान? सर्वके देखनहारे सर्वके जाननहारे। या भांति देवर्षि जे नारद तिनके वचन सुनकर केकसी माताकी कुक्षिमें उपज्या जो रावण सो पुराण कथा सुनकर अति प्रसन्न भया अर बारंबार जिनेश्वरदेवको नमस्कार किया। नारद अर रावण महापुरुषनिकी मनोज्ञ जे कथा तिनके कथनकरि क्षणएक सुखसौं तिष्ठे, महापुरुषोंकी कथामें नाना प्रकारका रस भरया है जिनमें ऐसी है।

अथानंतर राजा मरुत हाथ जोड़ि धरतीसौं मस्तक लगाय रावणको नमस्कारकरि विनती करता भया—हे देव, हे लंकेश! मैं आपका सेवक हू आप प्रसन्न होउ, मैं अज्ञानी अज्ञा-नीनिके उपदेशकरि हिंसामार्गरूप खोटी चेष्टा करी सो आप क्षमा करो। जीवोंके अज्ञानकरि खोटी चेष्टा होय है, अब मुझे धर्मके मार्गमें लेवो अर मेरी पुत्री कनकप्रभा आप परणो, जे संसारमें उत्तम पदार्थ हैं तिनके आपही पात्र हो। तदि रावण प्रसन्न भए। कैसैं हैं रावण? जो नम्रीभूत होय ताविषैं दयावान हैं, तब रावणने पुत्री परणी अर ताहि अपनो कियो। सो रावणके अति वल्लभा भई। मरुतने रावणके सामंतलोक बहुत पूजे, नानाप्रकारके वस्त्राभूषण, हाथी, घोडे, रथ, दिए, कनकप्रभा सहित रावण रमता भया ताके एक वर्ष बाद कृतचित्रनामा पुत्री भई, सो देखनहारे लोकनिको रूपकर आश्चर्यकी उपजावनहारी मानों मूर्तिवंत शोभा ही है।

रावणके सामंत महाशूरवीर तेजस्वी जीतकरि उपज्या है उत्साह जिनकै संपूर्ण पृथ्वीतलमैं भ्रमते भए। तीन खंडमें जो राजा प्रसिद्ध हुता अर बलवान हुता सो रावणके योधानिके आगैं दीनताकों प्राप्त भया। सबही राजा वश भए, कैसे हैं राजा ? राज्यके भंगका है भय जिनको, विद्याधरलोक भरतक्षेत्रका मध्यभाग देखि आश्चर्यकौं प्राप्त भए। मनोज्ञ नदी, मनोज्ञ पहाड़, मनोज्ञ वन, तिनको देख लोक कहते भए अहो! स्वर्ग भी यातैं अधिक रमणीक नाहीं, चित्तविषैं ऐसैं उपजै है जो यहां ही वास करिए। समुद्रसमान विस्तीर्ण सेना जाकी ऐसा रावण जासमान और नाहीं। अहो अद्भुत धैर्य अद्भुत उदारता या रावणकी, यह सब विद्याधरनिमैं श्रेष्ठ नजर आवै है या भांति समस्त लोक-प्रशंसा करैं हैं। जा जा देशविषैं रावण गया तहां तहां लोक प्रशंसा करैं फिर जहां जहां रावण गया तहां तहां लोक सन्मुख आय मिलते भए। जे जे पृथ्वीविषैं राजानिकी सुंदर पुत्री हुतीं ते रावण-ने परणी। जा नगरके समीप रावण जाय निकसै ताहीं नगरके नर-नारी देखकरि आश्चर्यकूं प्राप्त होवें। स्त्री सकल काम छोड़ि देखवेको दौड़ीं, कैयक झरोखानिमें बैठि ऊपरसे असीस देय फूल डारैं। कैसा है रावण ? मेघसमान श्यामसुंदर पाकी किंदूरीसमान लाल हैं अधर जाके अर मुकुट विषैं नानाप्रकारकी जे मणि तिनकरि शोभै है सीस जाका, मुक्ताफलनिकी ज्योति सोई भया जल ताकरि पखारया है चंद्रमासमान वदन जाका, इंद्रनीलमणि समान श्याम सघन जे केश अर सहस्र पत्र कमलसमान नेत्र तत्काल खैंच्या नम्रीभूत हुआ जो धनुष ताके समान वक्र स्याम चिकने, भौंह युगल ताकरि शोभित, शंखसमान ग्रीवा (गरदन) जाकी, अर वृषभसमान कांधे जाके, पुष्ट विस्तीर्ण वक्षस्थल जाके, दिग्गजकी सूंडसमान भुजा जाके, केहरी समान कटि जाकी, कदलीके समान सुंदर जंघा जाकी, कमल समान चरण, समचतुरस्रसंस्थानकको धरैं महामनोहर शरीर जाका, न अधिक लंबा, न अधिक ओछा, न कृश, न स्थूल, श्रीवत्सलक्षणको आदि देय बत्तीस लक्षणनिकरि युक्त अर अनेकप्रकार रत्ननिकी किरणोंकरि देदीप्यमान है मुकुट जाका अर नाना-प्रकारकी मणिनिकरि मंडित नानाप्रकारके मनोहर हैं कुंडल जाके, बाजूबंदकी दीप्तिकरि देदीप्य-मान हैं भुजा जाकी अर मोतीनिके हारकरि शोभै है उर जाका, अर्धचक्रवर्तीकी विभूतिका भोगनहारा। ताहि देख प्रजाके लोक बहुत प्रसन्न भए। परस्पर बात करैं हैं कि यह दशमुख महाबलवान जीत्या है मौसीका बेटा वैश्रवण जानैं, अर जीत्या है राजा यम जिसने, कैलाशके उठानेकों उद्यमी भया अर प्राप्त कराया है राजा सहस्ररश्मिको वैराग्य जानैं मरुतके यज्ञका विध्वंस करणहारा, महा शूरवीर साहसका धारी हमारे सुकृतके उदयकरि या दिशाको आया। यह केकसी माताका पुत्र याके रूपका अर गुणनिका कौन वर्णन कर सकै, याका दर्शन लोकनिकों परम उत्सवका कारण है, वह स्त्री पुण्यवती धन्य है जाके गर्भतैं यह उत्पन्न भया अर वह पिता धन्य है जातैं यानैं जन्म पाया अर वे बंधुलोक धन्य हैं जिनके कुलविषैं यह प्रगट्या अर जे स्त्री इनकी

रानी भई तिनके भाग्यकी कौन कहै। याभांति स्त्री झरोखानिमैं बैठी बात करै हैं, अर रावणकी असवारी चली जाय है। जब रावण आय निकसै तदि एक मुहूर्त गांवकी नारी चित्रामकी सी होय रहैं, ताके रूप सौभाग्यकरि हरयो गया है चित्त जिनका, स्त्रीनिको अर पुरुषनिको रावणकी कथाको टारि और कथा न रही। देशनिविषैं तथा नगर ग्राम तथा गांवनिके बाडे तिनविषैं जे प्रधान पुरुष हैं ते नानाप्रकारकी भेंट लेयकरि आय मिले अर हाथ जोड़ि नमस्कारकरि विनती करते भए–हे देव! महाविभवके पात्र तुम, तिहारे घरविषैं सकल वस्तु विद्यमान हैं, हे राजानिके राजा! नंदनादि वनमैं जे मनोज्ञ वस्तु पाइए हैं ते भी सकल वस्तु चिंतवनमात्रतैं ही तुमको सुलभ हैं ऐसी अपूर्व वस्तु क्या है जो तुम्हारी भेंट करैं तथापि यह न्याय है कि रीते हाथनि राजानिसौं न मिलिए, तातैं कछू हम अपनी माफिक भेंट करै हैं। जैसैं भगवान जिनेंद्रदेवकी देव सुवर्णके कमलोंकर पूजा करै हैं तिनको क्या मनुष्य आप योग्य सामग्रीकर नाहीं पूजै हैं? याभांत नानाप्रकारके देश देशनिके सामंत बडी ऋद्धिके धारी रावणको पूजते भए। रावण तिनका मिष्टवचननि करि बहुत सन्मान करता भया। रावण पृथ्वीकौं बहुत सुखी देख प्रसन्न भया जैसे कोई अपनी स्त्रीकौं नानाप्रकारके रत्न आभूषणनिकर मंडित देख सुखी होय। जहां रावण मार्गके वशतैं जाय निकसै ता देशविषैं विना बाहे धान स्वयमेव उत्पन्न भए। पृथ्वी अति शोभायमान भई प्रजाके लोक परम आनंदको धरते संते अनुरागरूपी जलकरि याकी कीर्तिरूपी बेलिको सींचते भए। कैसी है कीर्ति? निर्मल है स्वरूप जाका, किसान लोग ऐसैं कहते भए कि बडे भाग्य हमारे, जो हमारे देशमें रत्नश्रवाका पुत्र रावण आया। हम रंक लोग कृषिकर्ममें आसक्त रूखे अंग, खोटे वस्त्र, हाथ पग कर्कश, क्लेशतैं हमारे सुख स्वादरहित एता काल गया अब इसके प्रभावतैं हम संपदादिकरि पूर्ण भए। पुण्यका उदय आया सर्व दुखनिका दूर करणहारा रावण आया। जिन जिन देशनिमैं यह कल्याणका भरथा विचरै ते देश सर्वसंपदाकरि पूर्ण होय। दशमुख दलिद्रीनिका दलिद्र देख न सकै जिनको दुःख मेटवेकी शक्ति नाहीं तिन भाइनिकरि कहा सिद्धि होय है यह तो सर्व प्राणियोंका बडा भाई होता भया। यह रावण अपने गुणनिकरि लोगनिकौं आनंद उपजावता भया जाके राजमें शीत अर उष्ण भी प्रजाको बाधा न करसकै तो चोर चुगल बटमार तथा सिंह गजादिकनिकी बाधा कहांसे होय? जाके राज्यविषैं पवन पानी अग्निकी भी प्रजाको बाधा न होय सर्व बात सुखदाई ही होती भई।

अथानंतर रावणकी दिग्विजयविषैं वर्षाऋतु आई मानों रावणसों साम्ही आय मिली मानों इंद्रने श्यामघटा रूपी गजकी भेंट भेजी। कैसे हैं काले मेघ? महा नीलाचल समान बिजुरीरूप स्वर्णकी सांकल धरैं अर बगुलनिकी पंक्ति तेई भई ध्वजा, तिनकरि शोभित हैं शरीर जिनके, इंद्रधनुष रूप आभूषण पहरे जब वर्षाऋतु आई तब दशों दिशानिमें अंधकार होगया, रात्रि दिवस-

का भेद जान्या न पडे सो यह युक्त ही है श्याम होय सो श्यामता ही प्रगट करै। मेघ भी श्याम अर अंधकार भी श्याम, पृथ्वीविषैं मेघकी मोटी धारा अखंड बरसती भई। जो मानिनी नायिकानिके मनविषैं मानका भार हुता सो मेघके गर्जनकरि क्षणमात्रविषैं विलाय गया अर मेघकी ध्वनिकरि भयकों पाई जे मानिनी भामिनी ते स्वयमेव ही भरतारसों स्नेह करती भई। जे शीतल कोमल मेघकी धारा ते पंथीनिको बाणके भावकों प्राप्त करती भईं, मर्मकी विदारणहारी धारानिके समूहकरि भेदा गया है हृदय जिनका असे पंथी ते महाव्याकुल भए हैं मानों तीक्ष्ण-चक्रकरि विदारे गए हैं। नवीन जो वर्षाका जल ताकरि जडताकों प्राप्त भए पंथी क्षणमात्रमें चित्राम जैसे होय गए अर जानिए कि क्षीरसागरके भरे जो मेघ सो गायनिके उदर विषै बैठे हैं तातैं निरंतर ही दुग्धकी धारा वर्षे है। वर्षाके समय किसान कृषिकर्मको प्रवर्तैं हैं। रावणके प्रभाव-करि महाधनके धनी होते भए। रावण सब ही प्राणियोंको महा उत्साहका कारण होता भया।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसों कहै हैं कि हे श्रेणिक! जे पूर्ण पुण्याधिकारी हैं तिनके सौभाग्यका वर्णन कहां तक करिए। इंदीवर कमल सारिखा श्याम रावण स्त्रियोंके चित्तको अभिलाषी करता संता मानों साक्षात् वर्षाकालका स्वरूप ही है, गंभीर है ध्वनि जाकी जैसा मेघ गाजै तैसा रावण गाजै सो रावणकी आज्ञातैं सर्व नरेंद्र आय मिले, हाथ जोड नम-स्कार करते भए। जो राजानिकी कन्या महा मनोहर ते रावणको स्वयमेव वरती भई। ते रावणको वरकर अत्यंत क्रीडा करती भई। जैसैं वर्षा पहाडको पायकरि अति वरषै। कैसी है वर्षा? पयोधर जे मेघ तिनके समूहकरि संयुक्त है। अर कैसी है स्त्री पयोधर जे कुच तिनकरि मंडित है। कैसा है रावण पृथ्वीके पालनेको समर्थ है। वैश्रवण यक्षका मानमर्दन करनहारा दिग्विजयको चढया समस्त पृथ्वीको जीतै सो ताहि देखकरि मानो सूर्य लज्जा अर भयकरि व्याकुल होय दबि गया। भावार्थ— वर्षाकालविषैं सूर्य मेघपटलनिकरि आच्छादित होय है अर रावणके मुखसमान चंद्रमा भी नाहीं सो मानों लज्जाकरि चंद्रमा भी दबि गया क्योंकि वर्षाकालमें चंद्रमा भी मेघ-मालाकरि आच्छादित होय है अर तारे भी नजर नाहीं आवे हैं सो मानो अपना पति जो चंद्रमा ताहि रावणके मुखकरि जीत्या जानि भाज गए। अर पगथली अत्यंत लाल अर रावणकी स्त्रियों-की अत्यंत लाल जानकर लज्जावान होय कमलोंके समूह भी छिप गए मानों यह वर्षाऋतु स्त्री समान है, विजुरी तेई कटिमेखला, जो इंद्रधनुष वह वस्त्राभूषण पयोधर जे मेघ वे ही पयोधर कहिए कुच अर रावण महामनोहर केतकीकी वास तथा पद्मनी स्त्रियोंके शरीरकी सुगंध इत्यादि सर्व सुगंध अपने शरीरकी सुगंधताकरि जीतता भया जाके सुगंध श्वासरूप पवनके खैंचे भ्रमरनिके समूह गुंजार करते भए। गंगाका तट जो अति मनोहर है तहां डेराकरि वर्षाऋतु पूर्ण करी। कैसा है गंगाका तट जाके तीर सुंदर हरित तृण शोभैं हैं, नाना प्रकारके पुष्पोंकी सुगंधता फैल

रही है। बडे बडे वृक्ष शोभै हैं! कैसा है रावण? जगतका बंधु कहिए हितु है। अति सुखसों चातुर्मास्य पूर्ण किया। हे श्रेणिक! जे पुण्याधिकारी मनुष्य हैं तिनका नाम श्रवणकर सर्वलोक नमस्कार करैं हैं अर सुंदर स्त्रियोंके समूह स्वयमेव आय वरैं हैं अर ऐश्वर्यके निवास परम विभव प्रगट होय हैं। उनके तेजकरि सूर्य भी शीतल होय हैं ऐसा जानकर आज्ञा मान संशय छोड़ पुण्यके प्रबन्धका यत्न करो।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै मरुतके यज्ञका विध्वंस अर रावणके दिग्विजयका वर्णन करनेवाला ग्यारहवां पर्व पूर्ण भया॥११॥

(द्वादश पर्व)

[इन्द्र नामक विद्याधर का पराभव कथन]

अथानंतर रावण मंत्रियोंसे विचार करता भया एकांतविषैं। अहो मंत्रियो! यह अपनी कन्या कृतचित्रा कौनको परनावैं। इंद्रसों संग्रामविषैं जीतनेका निश्चय नाहीं तातैं पुत्रीका पाणिग्रहण मंगलकार्य प्रथम करना योग्य है। तदि रावणको पुत्रीके विवाहकी चिंताविषैं तत्पर देखि राजा हरिवाहनने अपना पुत्र निकट बुलाया सो हरिवाहनके पुत्रको अति सुंदराकार विनयवान देखिकर पुत्रीके परणायवेका मनोरथ किया। रावण अपने मनमें चिंतवता भया कि सर्व नीतिशास्त्रविषैं प्रवीण अहो मथुरा नगरीका नाथ राजा हरिवाहन निरंतर हमारे गुणनिकी कीर्तिविषैं आसक्त है मन जाका याकों प्राणोंहूते प्यारा मधु नामा पुत्र प्रशंसा योग्य है। महाविनयवान् प्रीतिपात्र महारूपवान् अति गुणवान् मंत्री मेरे निकट आया। तदि रावणसों कहते भए—'हे देव यह मधुकुमार महापराक्रमी याके गुण वर्णनमें न आवैं तथापि कछुइक कहैं हैं याके शरीरविषैं अत्यंत सुगंधता है जो सर्वलोकनिके मनको हरै ऐसा है रूप जाका। याका मधु नाम यथार्थ है मधुनाम मिष्टान्नका है सो यह मिष्टवादी है अर मधुनाम मकरंदका है सो यह मकरंदतैं भी अतिसुगंध है अर याके एते ही गुण आप मत जानों असुरनिका इंद्र जो चमरेंद्र ताने याकों महागुणरूप त्रिशूलरत्न दिया है। सो त्रिशूलरत्न वैरिनपर डारया वृथा न जाय अत्यंत देदीप्यमान है सो आप याकी करतूत करि याके गुण जानोहीगे। वचनोंकरि कहां लग कहैं तातैं—'हे देव! यासों संबंध करनेकी बुद्धि करो। यह आपसे संबंध करि कृतार्थ होयगा, ऐसा जब मंत्रियोंने कहा तदि रावणने याको अपना जमाई निश्चय किया अर जमाई योग्य जो सामग्री सो याको दीनी। बडी विभूतिसों रावणने अपनी पुत्री परणाई सर्व लोक हर्षित भए। यह रावणकी पुत्री साक्षात् पुण्यलक्ष्मी महा सुंदर शरीर पतिके मन अर नेत्रनिकी हरनहारी जगत्में ऐसा सुगंध नाहीं ऐसे

सुगंधशरीरको धारनहारी ताको पायकर मधु अति प्रसन्न भया ॥

अथानंतर राजा श्रेणिक जिनको कौतूहल उपज्या है सो गौतमस्वामीसों पूछते भए—हे नाथ ! असुरेंद्रने मधुको कौन कारण त्रिशूल रत्न दिया दुर्लभ है संगम जाका । तदि गौतमस्वामी जिनधर्मीनितैं है वात्सल्य जिनके, त्रिशूल रत्नकी प्राप्तिका कारण कहते भए । हे श्रेणिक ! धातकीखंड नामा द्वीप तहां ऐरावत क्षेत्र शतद्वार नगर तहां दोय मित्र होते भए । महा प्रेमका है बंधन जिनके एकका नाम सुमित्र दूसरेका नाम प्रभव । सो ये दोनों एक चटशालामें पढ़कर पंडित भए । कईएक दिनोंमें सुमित्र राजा भया । सर्व सामंतनिकरि सेवित पूर्वोपार्जित पुण्यकर्मके प्रभावतैं परम उदयको प्राप्त भया अर दूजा मित्र प्रभव सो दलिद्रकुलमें उपज्या, महादलिद्री । सो सुमित्रने महास्नेहतैं अपनी बराबर कर लिया । एक दिन राजा सुमित्रकों दुष्ट घोड़ा हरकर वनमें लेगया । तहां दुरिददंष्ट्रनाम भीलनिका राजा सो याकों अपने घर लेगया ताको वनमाला पुत्री परणाई सो वह वनमाला साक्षात वनलक्ष्मी ताको पाय राजा सुमित्र अति प्रसन्न भया । एक मास तहां रह्या । बहुरि भीलोंकी सेना लेकर स्त्री सहित शतद्वार नगरमैं आवै था अर प्रभव ढूंढनेको निकस्या सो मार्गमें स्त्री सहित मित्रको देखा । कैसी है वह स्त्री मानों कामकी पताका ही है । सो देखकरि यह पापी प्रभव मित्रकी भार्याविषैं मोहित भया अशुभकर्मके उदयसे नष्ट भई है कृत्य अकृत्यकी बुद्धि जाकी प्रबल कामके बाणनिकर बीध्या संता अति आकुलताको प्राप्त भया । आहार निद्रादिक सर्व विस्मरण भया संसारमें जेती व्याधी हैं तिनमें मदन व्याधी है जाकरि परम दु:ख पाइए है, जैसे सर्व देवनिमें सूर्य प्रधान है तैसे समस्त रोगनिके मध्य मदन प्रधान है । तब सुमित्र प्रभवको खेद-खिन्न देखि पूछते भए—हे मित्र ! तू खेद-खिन्न क्यों है ? तदि यह मित्रकों कहने लगा जो तुम वनमाला परणी ताको देख करि चित्त व्याकुल भया है । यह बात सुन करि राजा सुमित्र मित्रमें है अति स्नेह जाका अपने प्राण-समान मित्रको अपनी स्त्रीके निमित्त दुखी जानि स्त्रीको मित्रके घर पठावता भया । अर आप आपा छिपाय मित्रके झरोखेमें जाय बैठा अर देखैं कि यह क्या करै जो मेरी स्त्री याकी आज्ञा प्रमाण न करै, तो मैं स्त्रीका निग्रह करूं अर जो याकी आज्ञा प्रमाण करै तो सहस्र ग्राम दूं । वनमाला रात्रिके समय प्रभवके समीप जाय बैठी । तदि प्रभव पूछता भया हे भद्रे ! तू कौन है ? । तब इसने विवाह पर्यंत सर्व वृत्तान्त कह्या । सुनकरि प्रभव प्रभारहित होय गया चित्तविषैं अति उदास भया । विचारै है—हाय ! हाय ! मैं यह क्या अशुभ भावना करी, मित्रकी स्त्री माता समान कौन बांछै है, मेरी बुद्धि भ्रष्ट भई, या पापतैं मैं कब छूटूं । बनै तो अपना सिर काट डारूं, कलंकयुक्त जीवन करि कहा ? ऐसा विचार मस्तक काटनेके अर्थ म्यानतैं खड्ग काढ्या, खड्गकी कांति करि दशों दिशाविषैं प्रकाश होय गया तब तलवारको कंठके

समीप ल्याया अर सुमित्र झरोखेमें बैठ्या हुता सो कूद कर आय हाथ पकड़ लियो, मरतेको बचाय लीया, छांतीसो लगाय करि कहने लगा - हे मित्र ! आत्मघातका दोष तू न जानै है जे अपने शरीरका अविधिसे निपात करै हैं ते शूद्र मरकरि नरकविषैं जाय पड़े हैं। अनेक भव अल्प आयुके धारक होय हैं। यह आत्मघात निगोदका कारण है। याभांति कहकरि मित्रके हाथसों खड्ग छीन लिया अर मनोहर वचनकरि बहुत संतोष्या। अर कहने लगा कि—हे मित्र ! अब आपसमें परस्पर परम मित्रता है सो यह मित्रता परभवमैं रहै कि न रहै । यह संसार असार है। यह जीव अपने कर्मके उदयकरि भिन्न भिन्न गतिकों प्राप्त होय है, या संसारमें कौन किसका मित्र अर कौन किसका शत्रु है सदा एक दशा न रहै है। यह कहकरि दूसरे दिन राजा सुमित्र महामुनि भए, पर्याय पूर्णकरि दूजे स्वर्ग ई[illegible] इंद्र भये। तहातैं चयकरि मथुरापुरीमें राजा हरिवाहन जाके राणी माधवी तिनकै मधु नामा पुत्र भए। हरिवंशरूप आकाशविषैं चंद्रमा समान भए। अर प्रभव सम्यक्त विना अनेक योनियोंमें भ्रमणकरि विश्वावसुकी ज्योतिषमती जो स्त्री ताकै शिखी नामा पुत्र भया। सो द्रव्यलिंगी मुनि होय महातपकरि निदानके योगतैं असुरोंके अधिपति चमरेंद्र भए। तदि अवधिज्ञानकरि अपने पूर्व भव विचार सुमित्र नामा मित्रके गुण अति निर्मल अपने मनविषैं धारै, सुमित्र राजाका अतिमनोज्ञ चरित्र चितार करि असुरेंद्रका हृदय प्रीतिकरि मोहित भया। मनविषैं विचारया कि राजा सुमित्र महागुणवान मेरा परम हुता सर्व कार्योंमें सहाई था, ता सहित मैं चटशालाविषैं विद्या पढा, मैं दरिद्री हुता तानै आप समान विभूतिवान किया अर मैं पापी दुष्टचित्तने ताकी स्त्रीविषैं खोटे भाव किए तौ हू तानैं द्वेष न किया, स्त्री मेरे घर पठाई, मैं मित्रकी स्त्रीकों माता समान जान अति उदास होय अपना शिर खड्गतैं काटने लाग्या तदि ताहीने थांभ लिया अर मैंने जिनशासनकी श्रद्धा विना मरकर अनेक दुख भोगे अर जे मोक्षमार्गके प्रवर्तनहारे साधु पुरुष तिनकी निंदा करी सो कुयोनिविषैं दुःख भोगे अर वह मित्र मुनिव्रत अंगीकारकरि दूजे स्वर्ग इंद्र भया। तहांतैं चयकरि मथुरापुरीविषैं राजा हरिवाहनका पुत्र मधुवाहन भया है अर मैं विश्वावसुका पुत्र शिखीनाम द्रव्यलिंगी मुनि होय असुरेंद्र भया। यह विचार उपकारका खैंच्या परम प्रेमकरि भीजा है मन जाका, अपने भवनसे निकसकरि मध्यलोकविषैं आया। मधुवाहन मित्रसों मिल्या महारत्नोंकरि मित्रका पूजन किया, सहस्रांत नामा त्रिशूल रत्न दिया, मधुवाहन चमरेंद्रकों देखि बहुत प्रसन्न भया फिर चमरेंद्र अपने स्थानकों गया। हे श्रेणिक ! शस्त्र विद्याका अधिपति सिहोंका है वाहन जाके, ऐसा मधुकुंवर हरिवंशका तिलक रावण है श्वसुर जाका सुखसों तिष्ठै है। यह मधुका चरित्र जो पुरुष पढ़ै सुनै सो कांतिको प्राप्त होय अर ताके सर्व अर्थ सिद्ध होय।

अथानंतर मरुतके यज्ञका नाश करणहारे जो रावण सो लोकविषैं अपना प्रभाव

विस्तारता हुवा शत्रुनिको वश करता संता अठारह वर्ष विहार करि जैसैं स्वर्गमें इंद्र हर्ष उपजावै तैसैं उपजावता भया। पृथिवीका पति कैलाश पर्वतके समीप आय प्राप्त भए। तहां निर्मल है जल जाका ऐसी मंदाकिनी कहिए गंगा समुद्रकी पटराणी कमलनिके मकरंदकरि पीत है जल जाका ऐसी गंगाके तीर कटकके डेरे कराए और आप कैलाशके कुक्षविषैं डेरा करि क्रीडा करता भया। गंगाका स्फटिक समान जल निर्मल तामैं खेचर भूचर जलचर क्रीडा करते भए, जे घोडे रजविषैं लोटैंकरि मलिन शरीर भए हुते ते गंगामें निहलाय जलपान कराय फिर ठिकाने लाय बांधे। हाथी सपराए। रावण बालीका वृत्तांत चितार चैत्यालयनिकों नमस्कारकरि धर्मरूप चेष्टा करता तिष्ठ्या।

अथानंतर इंद्रने दुलंघिपुर नामा नगरविषैं नलकूवर नामा लोकपाल थाप्या हुता सो रावणको हलकारोंके मुखतैं नजीक आया जानि इंद्रके निकट शीघ्रगामी सेवक भेजे और सर्व वृत्तांत लिख्या जो रावण जगतको जीतता समुद्ररूप सेनाको लिए हमारी जगह जीतनेके अर्थि निकट आय पड्या है या ओरके सर्वलोक कंपायमान भए हैं सो यह समाचार लेकर नलकूवरके हलकारी मनुष्य इंद्रके निकट आये, इंद्र भगवानके चैत्यालयनिकी बंदनाको जाते हुते सो मार्गविषैं इंद्रको पत्र दिया। इंद्रने बांच कर सर्व रहस्य जान करि पाछा जबाव लिख्या जो मैं पांडुवनके चैत्यालयनिकी बंदनाकरि आऊं हू इतने तुम बहुत यत्नसों रहना, अमोघशस्त्र कहिए खाली न पड़ै ऐसा जो शस्त्र ताके धारक हो अर मैं भी शीघ्रही आऊं हू ऐसी लिखकर बंदना-विषैं आसक्त है मन जाका वैरीकी सेनाको न गिनता संता पांडुकवन गया अर नलकूवर लोकपालने अपने निज वर्गसों मंत्रकरि नगरकी रक्षामें तत्पर विद्यामय सौ योजन ऊंचा बज्रशाल नामा कोट बनाया, प्रदक्षिणाकरि तिगुणा। रावणने नलकूवरका नगर जानके अर्थि प्रहस्त नामा सेनापति भेज्या सो जायकरि पाछा आय रावणसों कहता भया--हे देव! मायामई कोटिकरि मंडित वह नगर है सो लिया न जाय। देखो प्रत्यक्ष दीखै है। सर्व दिशाओंमें भयानक विकराल दाढको धरे सर्प समान शिखर जाके अर बलता जो सघन बांसनका वन ता समान देखी न जाय ऐसी ज्वालाके समूहकरि संयुक्त उठै हैं स्फुलिंगोंकी राशि जामें अर याके यंत्र बैतालका रूप धरैं विकराल हैं दाढ जिनकी, एक योजनके मध्य जो मनुष्य आवै ताको निगलै हैं, तिन यंत्रनिविषैं प्राप्त भए जे प्राणियोंके समूह तिनका यह शरीर न रहै जन्मांतरमें और शरीर धरै। ऐसा जानकर आप दीर्घदर्शी हो, सो या नगरके लेनेका उपाय विचारो। तदि रावण मंत्रियोंसे उपाय पूछने लाग्या सो मंत्री मायामई कोटके दूर करवेका उपाय चिंतवते भए। कैसे हैं मंत्री? नीतिशास्त्रविषैं अति प्रवीण हैं।

अथानंतर नलकूवरकी स्त्री उपरंभा इंद्रकी अप्सरा जो रंभा ता समान है गुण अर

रूप जाका पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध, सो रावणकों निकट आया सुन अति अभिलाषा करती भई। आगैं रावणके रूप गुण श्रवणकर अनुरागवती थी ही, रात्रिविषैं अपनी सखी विचित्रमालाकों एकांतमें ऐसैं कहती भई–हे सुंदरी! मेरे तू प्राण समान सखी है, तो समान और नाहीं। अपना अर जाका एक मन होय ताकों सखी कहिए, मेरेमें अर तेरेमें भेद नाहीं, तातैं हे चतुरे! निश्चयतैं मेरे कार्यका साधन तू करै तो तुझे अपनी चित्तकी बात कहूं। जे सखी है ते निश्चयसेती जीतव्यका अवलंबन होय हैं। जब ऐसें रानी उपरंभाने कह्या। तदि सखी विचित्रमाला कहती भई--हे देवी एती बात कहा कहो हो? हम तो तिहारे आज्ञाकारी जो मनवांछित कार्य कहो सोही करैं। मैं अपने मुखसों अपनी स्तुति कहा करूं, अपनी स्तुति करना लोकविषैं निंद्य है, बहुत क्या कहूं। मोहि तुम मूर्तिवती साक्षात् कार्यकी सिद्धि जानो। मेरा विश्वासकरि तिहारे मनविषैं जो होय सो कहो। हे स्वामिनी हमारे होते तोहि खेद कहा। तब उपरंभा निश्वास लेकर कपोलविषैं कर धर मुखमेंतैं न निकसते जो वचन ते बारंबार प्रेरणाकरि बाहिर निकासती भई। हे सखी! बालपनेहीसों लेकर मेरा मन रावणविषैं अनुरागी है, मैं लोकविषैं प्रसिद्ध महा सुंदर ताके गुण अनेक बार सुने हैं सो मैं अंतरायके उदयकरि अबतक रावणके संगमको प्राप्त न भई। चित्तविषैं परम प्रीति धरूं हूं अर अप्राप्तिका मेरे निरंतर पछतावा रहै है। हे रूपिणी। मैं जानूं हूं यह कार्य प्रशंसा योग्य नाहीं, नारी दूजे नरके संयोगकरि नरकविषैं पड़ै है, तथापि मैं मरणकों सहिवे समर्थ नाहीं तातैं हे मिष्टभाषिणी! मेरा उपाय शीघ्र कर अब वह मेरे मनका हरणहारा निकट आया है। काहू भांति प्रसन्न होय मेरा तासों संयोग कर दे। मैं तेरे पायन पड़ूं हूं। ऐसा कहकरि वह भामिनी पाय परने लागी, तदि सखीने सिर थांभ लिया अर यह कही कि हे स्वामिनी! तिहारा कार्य क्षणमात्रविषैं सिद्ध करूं। यह कहि कर दूती घरसैं निकसी, जानै है इन सकल बातनकी रीति, अति सूक्ष्म श्याम वस्त्र पहरकर आकाशके मार्ग रावणके डेरेविषैं आई। राजलोकमें गई, द्वारपालोंतैं अपने आगमनका वृत्तांत कहकर रावणके निकट जाय प्रणाम किया। आज्ञा पाय बैठकर विनती करती भई–हे देव! दोषके प्रसंगतैं रहित तिहारे सकल गुणनिकरि या सकल लोक व्याप्त हो रह्या है, तुमको यही योग्य है, अति उदार है विभव तिहारा, यह पृथ्वीविषैं सबहीको तृप्त करो हो, तुम सबके आनंद निमित्त प्रगट भए हो। तिहारा आकार देख कर यह मनविषैं जानिए है कि तुम काहूकी प्रार्थना भंग न करो, तुम बड़े दातार सबके अर्थ पूर्ण करो हो, तुम सारिखे महंत पुरुषनिकी जो विभूति है सो परोपकारहीके अर्थि है सो आप सबनिको सीख देयकरि एक क्षण एकांत विराजकर चित्त लगाय मेरी बात सुनो तो मैं कहूं। तदि रावणने ऐसा ही किया तदि याने उपरंभाका सकल वृत्तांत कानविषैं कह्या।

तदि रावण दोनों हाथ काननपर धरि सिर धुनि नेत्र संकोच केकसी माताके पुत्रनि-

विषैं उत्तम सदा आचार-परायण कहते भए। हे भद्रे ! कहा कही ? यह काम पापके बंधका कारण कैसें करनेमें आवै, मैं पर-नारियोंको अंग-दान करनेविषैं दरिद्री हूं, ऐसे कर्मोंको धिक्कार होउ। तैनें अभिमान तज कर यह बात कही, परंतु जिनशासनकी यह आज्ञा है विधवा अथवा धनीकी राणी अथवा कुंवारी तथा वेश्या सर्व ही पर-नारी सदा काल सर्वथा तजनी। परनारी रूपवती है तो कहा? यह कार्य लोक अर परलोकका विरोधी विवेकी न करै,जो दोनों लोक भ्रष्ट करै सो काहेका मनुष्य ? हे भद्रे! पर-पुरुषकरि जाका अंग मर्दित भया ऐसी जो परदारा सो उच्छिष्ट भोजन समान है, ताहि कौन नर अंगीकार करै ? यह बात सुन विभीषण महामंत्री सकल नयके जाननहारे राजविद्याविषैं श्रेष्ठ है बुद्धि जिनकी सो रावणकों एकांतविषैं कहते भए-हे देव ! राजानिके अनेक चरित्र हैं काहू समय काहू प्रयोजनके अर्थ किंचित्मात्र अलीक भी प्रतिपादन करै हैं तातैं आप यासूं अत्यंत रूखी बात मत कहो। वह उपरंभा वश भई संती कछु गढके लेनेका उपाय कहेगी ऐसे वचन विभीषणके सुनकर रावण राजविद्यामें निपुण मायाचारी विचित्रमाला सखीसों कहते भए, हे भद्रे वह मेरेमें मन राखे है अर मेरे विना अत्यंत दुखी है तातैं वाके प्राणनिकी रक्षा मोकूं करनी योग्य है सो प्राणोंसे न छूटै या प्रकार पहले उसको ले आवो,जीवोंके प्राणोंकी रक्षा यही धर्म है ऐसा कहकर सखीको सीख दीनी, सो जाय कर उपरंभाको तत्काल लेआई, रावणने याका बहुत सन्मान किया। तदि वह मदनसेवनकी प्रार्थना करती भई। रावणने कही-हे देवी ! दुर्लंघनगर विषैं मेरी रमणेकी इच्छा है यहां उद्यानविषैं कहां सुख ? ऐसा करो जो नगरविषैं तुम सहित रमूं। तदि वह कामातुर ताकी कुटिलताको न जानकरि स्त्रियोंका मूढ स्वभाव होय है, तानै नगरके मायामई कोटभंजनका उपाय आसालका नाम विद्या दीनी अर बहुत आदरतैं नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र दिये। देवनिकरि करिए है रक्षा जिनकी, तदि विद्याके लाभतैं तत्काल मायामई कोट जाता रहा जो सदाका कोट था सोई रह गया तदि रावण बड़ी सेना लेकर नगरके निकट गया। अर नगरके कोलाहल शब्द सुनकर राजा नलकूवर क्षोभकों प्राप्त भया। मायामई कोटको न देखकरि विषाद मन भया अर जानी कि रावणने नगर लिया। तथापि महा पुरुषार्थको धरता संता युद्ध करवेको बाहिर निकस्या, अनेक सामंतनि सहित परस्पर शस्त्रनिके समूहकरि महासंग्राम प्रवर्त्या। जहां सूर्यके किरण भी नजर न आवें, क्रूर है शब्द जहां विभीषणने शीघ्र ही लातकी दे नलकूवरका रथ तोड़ डारया अर नलकूवरको पकड़ लिया जैसैं रावणने सहस्रकिरणको पकड़ा हुता तैसैं विभीषणने नलकूवरको पकड्या। रावणकी आयुधशालाविषैं सुदर्शनचक्ररत्न उपज्या। उपरंभाको रावणने एकांतविषैं कही जो तुम विद्यादानसों मेरी गुरु हो, अर तुमको यह योग्य नाहीं जो अपने पतिको छोड़ दूजा पुरुष सेवो अर मुझे भी अन्याय-मार्ग सेवना योग्य नाहीं, या भांति याकूं दिलासा करी। अर नलकूवरकों याके अर्थि

छोड्या। कैसा है नलकूवर ? शस्त्रनिकरि विदारया गया है बखतर जाका, नहीं लगा है शरीरके घाव जाके। रावणने उपरंभासे कही या भरतारसहित मनवांछित भोग कर। कामसेवनविषैं पुरुषोंमैं कहा भेद है अर अयोग्य कार्य करनेतैं मेरी अकीर्ति होय अर मैं ऐसे करूं तो और लोग भी या मार्गविषैं प्रवर्तैं। पृथ्वीविषैं अन्यायकी प्रवृत्ति होय अर तू राजा आकाशध्वजकी बेटी तेरी माता मृदुकांता सो तू विमल कुलविषैं उपजी शीलको राखने योग्य है। या भांति रावणने कही तदि उपरंभा लज्जायमान भई अपने भरतारविषैं संतोष किया। अर नलकूवर भी स्त्रीका व्यभिचार न जान स्त्रीसहित रमता भया अर रावणसों बहुत सन्मान पाया। रावणकी यही रीति है कि जो आज्ञा न मानैं ताका पराभव करै, अर जो आज्ञा मानैं ताका सन्मान करै। अर युद्धविषैं मारया जाय सो मारया जावो, अर पकड्या आवै ताकों छोड़ दे। रावणने संग्रामविषैं शत्रुनिको जीतनेतैं बड़ा यश पाया, बड़ी है लक्ष्मी जाके महासेनाकरि संयुक्त वैताड पर्वतके समीप जाय पड्या।

तब राजा इंद्र रावणकों समीप आया सुनकर अपने उमराव जे विद्याधर देव कहावैं तिन समस्तहीसों कहता भया हो विश्वसी आदि देव हो ! युद्धकी तैयारी करो। कहा विश्राम कर रहे हो। राक्षसनिका अधिपति आया, यह कह करि इंद्र अपने पिता जो सहस्रार तिनके समीप सलाह करवेको गया। नमस्कारकरि बहुत विनयसंयुक्त पृथिवीपर बैठ बापसों पूछी। हे देव ! वैरी प्रबल अनेक शत्रुनिको जीतनहारा निकट आया है सो क्या कर्तव्य है ? हे तात ! मैंने काम बहुत विरुद्ध किया जो यह वैरी होता ही प्रलयको न प्राप्त किया, कांटा उगता ही होठनतैं टूटे अर कठोर परे पीछें चुभै, रोग होता ही मेटै तो सुख उपजै, अर रोगकी जड वधै तो कटना कठिन है, तैसें क्षत्री शत्रुकी वृद्धि होनै न दे, मैं याके निपातका अनेक वेर उद्यम किया परन्तु आपने वृथा मनै किया तब मैं क्षमा करी। हे प्रभो ! मैं राजनीतिके मार्गकरि विनती करूं हूं। याके मारवेमैं असमर्थ नाहीं हूं। ऐसे गर्व अर क्रोधके भरे पुत्रके वचन सुनकर सहस्रारने कही— हे पुत्र ! तू शीघ्रता मत करि, अपने श्रेष्ठ मंत्री हैं तिनसों मंत्र विचार। जे विना विचारे कार्य करैं हैं तिनके कार्य विफल होय हैं। अर्थकी सिद्धिका निमित्त केवल पुरुषार्थ नाहीं है। जैसें कृषिकर्मका है प्रयोजन जाकैं ऐसा जो किसान ताकूं मेघकी वृष्टि विना कहा कार्य सिद्ध होय ? अर जैसें चटशालाविषैं शिष्य पढ़ैं हैं सर्व ही विद्याको चाहैं हैं परंतु कर्मके वशतैं काहूकों विद्यासिद्धि होय है, काहूको सिद्धि न होय, तातैं केवल पुरुषार्थसों ही सिद्धि न होय। अब भी रावणसों मिलापकरि जब वह अपना भया तब तू पृथिवीका निःकंटक राज्य करैगा अर अपनी पुत्री रूपवती नामा महारूपवती रावणको परणाय दे यामैं दोष नाहीं। यह राजानिकी रीति ही है, पवित्र है बुद्धि जिनकी ऐसे पिताने इंद्रको न्यायरूप वार्ता कही परंतु इंद्रके मनमें

न आई। क्षणमात्रमें रोषकरि लाल नेत्र होय गए, क्रोधकरि पसेव आय गये, महाक्रोधरूप वाणी कहता भया—हे तात! मारने योग्य वह शत्रु ताहि कन्या कैसे दीजिये, ज्यों ज्यों उमर अधिक होय त्यों त्यों बुद्धि क्षय होय है तातैं तुम यह बात योग्य न कही। कहो, मैं कौनसों घाट हू, मेरे कौन वस्तुकी कमी है जातैं तुम ऐसे कायर वचन कहे। जा सुमेरुके पायनि चांद सूर्य लागि रहे सो उतंग सुमेरु कैसे औरनिकूं नवै। जो वह रावण पुरुषार्थ करि अधिक है तो मैं भी तातैं अत्यंत अधिक हूं अर दैव उसके अनुकूल है तो यह बात निश्चय तुम कैसे जानी? अर जो कहोगे तानैं बहुत वैरी जीते हैं तो अनेक मृगनिको हतनहारा जो सिंह ताहि कहा अष्टापद न हनै। हे पिता! शस्त्रनिके संपातकरि उपज्या है अग्निका समूह जहां ऐसे संग्रामविषैं प्राण त्यागना भला है परंतु काहूसों नम्रीभूत होना बड़े पुरुषनिकों योग्य नाहीं। पृथिवीपर मेरी हास्य होय कि यह इंद्र रावणसों नम्रीभूत हुवा पुत्री देकरि मिल्या सो तुमने यह तो विचारा ही नाहीं। अर विद्याधरपनेकरि हम अर वह बराबर हैं परंतु बुद्धि पराक्रममें वह मेरी बराबर नाहीं। जैसैं सिंह अर स्याल दोऊ वनके निवासी हैं, परन्तु पराक्रममें सिंह तुल्य स्याल नाहीं, ऐसैं पितासों गर्वके वचन कहे। पिताकी बात मानी नाहीं, पितातैं विदा होयकरि आयुधशालामें गए। क्षत्रीनिकों हथियार बांटे, अर बक्तर बांटे, अर सिंधूराग होने लगे, अनेक प्रकारके वादित्र बजने लगे। अर सेनामें यह शब्द भाया कि हाथियोंको सजावो, घोडोंके पलान कसो, रथोंके घोड़े जोड़ो, खड्ग बांधो, बक्तर पहरो, धनुष बाण लो, सिरपर टोप धरो, शीघ्र ही खंजर लावो इत्यादि शब्द देव जातिके विद्याधरोंके होते भए।

अथानंतर योधा कोपकों प्राप्त भए, ढोल बजाने लगे, हाथी गाजने लगे, घोड़े हींसने लगे और धनुषके टंकार होने लगे, योधाओंके गुंजार शब्द होने लगे और वंदीजन विरद बखानने लगे। जगत शब्दमई होय गया, सर्व दिशा तरवार तथा तोमर जातिके शस्त्र तथा पांसिन करि ध्वजानिकरि शस्त्रनिकरि और धनुषनिकरि आच्छादित भई और सूर्य भी आच्छादित होय गया। राजा इंद्रकी सेनाके जे विद्याधर देव कहावैं ते समस्त रथनूपुरतैं निकसे। सर्वसामग्री धरे युद्धके अनुरागी दरवाजे आय भेले भए। परस्पर कहैं हैं रथ आगैं करि, माता हाथी आया है! हे महावत, हाथी इस स्थानतैं परैं करि। हो घोड़के सवार! कहां खडा हो रहा है घोडेको आगैं ले, या भांतिके वचनालाप होते संते शीघ्र ही देव बाहिर निकसे गाजते आए सेनाविषैं शामिल भए और राक्षसनिके सन्मुख आए। रावणके अर इंद्रके युद्ध होने लगा। देवोंने राक्षसोंकी सेना कछू हटाई, शस्त्रनिके जे समूह तिनके प्रहारकार आकाश आच्छादित होय गया। तदि रावणके योधा वज्रवेग, हस्त, प्रहस्त, मारीच, उद्भव, वज्रवक्र, शुक, घोर, सारन, गगनोज्वल, महाजठर मध्याभ्रक्रूर इत्यादि अनेक विद्याधर बडे योधा राक्षसवंशी नानाप्रकारके वाहनोंपर चढ़े अनेक आयुधोंके धारक देवोंसे लड़ने लगे। तिनके प्रभावकरि क्षणमात्रमें देवनिकी सेना हटी।

तब इंद्रके बडे योधा कोपकरि भरे युद्धकों सन्मुख भए तिनके नाम मेघमाली, तडित्पिंग, ज्वलिताच, अरि-संज्वर, पावकस्यंदन इत्यादि बड़े बड़े देवोंने शस्त्रोंके समूह चलावते संते राचसनिकों दबाया सो कछुइक शिथिल होय गए तब और बड़े २ राच्चस इनको धैर्य बंधवाते भए महासामंत राचसवंशी विद्याधर प्राण तजते भए परंतु शस्त्र न डारते भए। राजा महेंद्रसेन वानरवंशी राचसनिके बड़े मित्र तिनका पुत्र प्रसन्नकीर्ति तानैं बाणोंके प्रहारकरि देवनि की सेना हटाई, राचसनिके बलकूं बडा धैर्य बंधाया तब प्रसन्नकीर्तिके बाणनिके प्रभावकरि देव हटे तदि अनेक देव प्रसन्नकीर्तिपर आए सो प्रसन्नकीर्तिने अपने बाणनिकरि विदारे। जैसे खोटे तपस्वियोंका मन मन्मथ (काम) विदारै। तब और बडे २ देव आए कपि राचस अर देवोंके खड्ग कनक गदा शक्ति धनुष मुद्गर इनकरि अति युद्ध भया, [illegible] माल्यवानका बेटा श्रीमाली रावणका काका महा प्रसिद्ध पुरुष अपनी सेनाकी मददके अर्थि देवनिपर आया। सूर्य समान है कांति जाकी सो ताके बाणनिकी वर्षातैं देवोकी सेना हट गई। जैसैं महाग्राह समुद्रको झकोलै तैसैं देवनिकी सेना श्रीमालीने झकोली, तब इंद्रके योधा अपने बलकी रचानिमित्त महाक्रोधके भरे अनेक आयुधोंके धारक शिखि केशर दंडाग्र कनक प्रवर इत्यादि इंद्रके भानजे बाण वर्षाकरि आकाशकों आच्छादते संते श्रीमाली पर आए सो श्रीमालीने अर्धचन्द्र बाणतैं उनके शिररूप कमलोंकरि पृथ्वी आच्छादित करी। तब इंद्रने विचारया कि यह श्रीमाली मनुष्योंविषै महायोधा राचसवंशियोंका अधिपति माल्यवानका पुत्र है यानै मेरे बडे २ देव मारे हैं अर ये मेरे भानजे मारे या राचसके सन्मुख मेरे देवोंमें कौन आवै यह अतिवीर्यवान महातेजस्वी देख्या न जाय तातैं मैं युद्धकरि याहि मारूं। नातर यह मेरे अनेक देवनिकों हतैगा। असा विचारि अपने जे देव जाति के विद्याधर श्रीमालीतैं कंपायमान भए हुते तिनको धैर्य बंधाय आप युद्ध करवेको उद्यमी भया। तब इंद्रका पुत्र जयंत बापके पायनिपरि विनती करता भया, हे देवेंद्र! मेरे होते संते आप युद्ध करो तदि हमारे जन्म निरर्थक है। हमको आपने बाल अवस्थाविषै अति लड़ाए अब तिहारे ढिग शत्रुनिको युद्धकरि हटाऊं यह पुत्रका धर्म है। आप निराकुल विराजिये जो अंकुर नखतैं छेद्या जाय तापर फरसी उठावना कहा? ऐसा कहकरि पिताकी आज्ञा लेय मानों अपने शरीरकरि आकाशकों ग्रसैगा असा क्रोधायमान होय युद्धके अर्थि श्रीमालीपर आया। श्रीमाली याकों युद्धयोग्य जान खुशी भया याके सन्मुख गए। ये दोनों ही कुमार परस्पर युद्ध करने लगे। धनुष खैंच बाण चलावते भये। इन दोनों कुमारनिका बडा युद्ध भया। दोनों ही सेनाके लोक इनका युद्ध देखते भए सो इनका युद्ध देखि आश्चर्यको प्राप्त भए। श्रीमालीने कनक नामा हथियारकरि जयंतका रथ तोड्या अर ताको घायल किया सो मूर्च्छा खाय पड्या फिर सचेत होय लडने लग्या। श्रीमालीके भिंडामालकी दीनी, रथ तोड्या अर मूर्च्छित किया। तदि देवनिकों

सेनाविषै अति हर्ष भया अर राक्षसनिकों सोच भया। फिर श्रीमाली सचेत भया तदि जयंतके सन्मुख भया, दोनोंमें महायुद्ध भया। दोनों सुभट राजकुमार युद्ध करते शोभते भए। मानों सिंहके बालक ही हैं, बड़ी देरमें इंद्रके पुत्र जयंतने माल्यवानका पुत्र जो श्रीमाली ताकै गदाकी छाती विषै दीनी सो पृथ्वी पर पड्या, बदन कर रुधिर पडने लग्या, तत्काल सूर्य अस्त हो जाय तैसें प्राणांत होय गया। श्रीमालीकों मार करि इंद्रका पुत्र जयंत शंखनाद करता भया। तदि राक्षसैनिकी सेना भयभीत भई अर पाछी हटी। माल्यवानके पुत्र श्रीमालीकों प्राणरहित देख अर जयंतको उद्यत देखि रावणके पुत्र इंद्रजीतने अपनी सेना को धैर्य बंधाया अर कोपकरि जयंतके सन्मुख आया सो इंद्रजीतने जयंतका बखतर तोड डाल्या अर अपने बाणनि करि जयंतको जर्जर किया तदि इंद्र जयंतको घायल देखि छेद्या गया है बखतर जाका, रुधिरकरि लाल होय गया है शरीर जाका ऐसा देखिकर आप युद्धकों उद्यमी भया। आकाशकों अपने आयुधनिकरि आच्छादित करता संता अपने पुत्रकी मददके अर्थि रावणके पुत्रपर आया तब रावणकों सुमति नामा सारथीने कहा हे देव ऐरावत हाथीपर चढ्या लोकपालनिकरि मंडित हाथविषै चक्र धरै मुकुटके रत्ननिकी प्रभाकरि उद्योत करता संता उज्वल छत्रकरि सूर्यको आच्छादित करता संता क्षोभको प्राप्त भया ऐसा जो समुद्र तासमान सेनाकरि संयुक्त जो यह इंद्र महाबलवान है इंद्रजीतकुमार यासूं युद्ध करने समर्थ नाहीं तातैं आप उद्यमी होयकरि अहंकारयुक्त जो यह शत्रु ताहि निराकरण करो। तब रावण इंद्रको सन्मुख आया देखि आगैं मालीमरण यादकरि अर हाल श्रीमालीका बधकरि महाक्रोधरूप भया अर शत्रुनिकरि अपने पुत्रको बेढ्या देख आप दौड्या, पवन समान है वेग जाका ऐसे रथविषै चढया, दोनों सेनाके योधानिविषै परस्पर विषम युद्ध होता भया, सुभटनिके रोमांच होय आए, परस्पर शस्त्रनिके निपातकरि अंधकार होय गया, रुधिरकी नदी बहने लगी, योधा परस्पर पिछाने न परैं, केवल ऊंचे शब्दकरि पिछाने परैं, अपने स्वामीके प्रेरे योधा अति युद्ध करते भए। गदा शक्ति बरछी मूसल खड्ग बाण परिघजातिके शस्त्र, कनकजातिके शस्त्र, चक्र कहिये सामान्यचक्र, बरछी तथा त्रिशूल पाश, मुसंडी जातिके शस्त्र, कुहाड़ा मुद्गरवज्र पाषाण हल दण्ड कोणजातिके शस्त्र, बांसनके बाण अर नानाप्रकारके शस्त्र तिनकरि परस्पर अति युद्ध भया। परस्पर उनके शस्त्र उनने काटे, उनके उनोंने काटे अति विकराल युद्ध होते परस्पर शस्त्रनिके घातकरि अग्नि प्रज्वलित भई। रणविषै नानाप्रकारके शब्द होय रहे हैं, कहीं मारलो मारलो ये शब्दहोय हैं, कहींएक रण-रण कहीं किण-किण त्रम-त्रम दम छमछम पटपट छसछस ढढढढ तथा तटतट चटचट घघघघ इत्यादि शत्रुनिकरि उपजे अनेक प्रकारके शब्दनिकर रणमंडल शब्दरूप होयगया। हाथीनिकरि हाथी मारे गए, घोड़निकर घोड़े मारे गए रथोंकर रथ तोड़े गए, पियादनिकर पियादे हते गए, हाथियोंकी सूंडकर उछले जे जलके छांटे तिनकरि

शस्त्र संपातकरि उपजी थी जो अगिन सो शांत भई। परस्पर गज युद्धकर हाथीनके दांत टूट पड्या गजमोती बिखर गए, योधानिमें परस्पर यह आलाप भए-हो शूरवीर अस्त्र चलाय! कहा कायर होय रह्या है? भटसिंह हमारे खडगका प्रहार संभार, हमारेतैं युद्धकरि। यह मूवा, तू अब कहां जाय है अर कोई कोइसूं कहै तू यह युद्धकला कहां सीख्या, तरवारका भी सम्हारना न जानै है। अर कोई कहै है तू इस रणतैं जा अपनी रक्षाकर तू कहा युद्ध करना जानैं, तेरा शस्त्र मेरे लाग्या सो मेरी खाज भी न मिटी, तैं वृथा ही धनीकी आजीविका अबतक खाई, अबतक तैं युद्ध कहीं देख्या नाहीं, कोई ऐसैं कहै हैं तू कहा कांपै है, तू थिरता भज, मुष्टि दृढ राख, तेरे हाथतैं खडग गिरैगा इत्यादि योधानिमैं परस्पर आलाप होते भए। कैसे हैं योधा महा उत्साहरूप हैं जिनको मरनेका भय नाहीं अपने अपने स्वामीनिके आगैं सुभट भले दिखाए। किसीकी एक भुजा शत्रुकी गदाके प्रहारकरि टूट गई है तो भी एक ही हाथतैं युद्ध करता रह्या। काहूका सिर टूट पडया तो धड ही लडै है योधानिके बाणनिकरि वक्षस्थल विदारे गए परंतु मन न चिगे, सामंतनिके सिर पडे परंतु मान न छोडया, शूरवीरनिके युद्धमें मरण प्रिय है हारकर जीवना प्रिय नाहीं, ते चतुर महा धीर वीर महापराक्रमी महासुभट यशकी रक्षा करते संते शस्त्रनिके धारक प्राण त्याग करते भये परंतु कायर होयकरि अपयश न लिया। कोई एक सुभट मरता थका भी वैरीके मारवेकी अभिलाषाकरि क्रोधका भरया वैरीके ऊपर जाय पड्या ताकों मार आप मरया। काहूके हाथनितैं शस्त्र शत्रुके शस्त्र-घातकरि निपात भए तदि वह सामंत मुष्टिरूप जो मुद्गर ताके घातकरि शत्रुकों प्राणरहित करता भया। कोई एक महासुभट शत्रुनिकों भुजानितैं मित्रवत् आलिंगनकरि मसल डारता भया। कोई एक सामंत परचक्रके योधानिकी पंक्तिको हणता संता अपने पक्षके योधानिका मार्ग शुद्ध करता भया। कोईएक जोधा रणभूमिविषैं परते संते भी वैरीनिको पीठ न दिखावते भए सूधे पडे। रावण अर इंद्रके युद्धमें हाथी घोडे रथ योधा हजारों पडे, पहिले जो रज उठी हुती सो मदोन्मत्त हाथियोंके मदझरनेकरि तथा सामंतनिके रुधिरका प्रवाहकरि दबगई। सामंतोंके आभूषणनिकरि रत्नोंकी ज्योतिकरि आकाशविषै इंद्रधनुष होय गया। कोईएक योधा बायें हाथिकर अपनी आंतां थांभ करि महा भयंकर खडग काढि वैरी ऊपर गया। कोईयेक योधा अपनी आंतही करि गाढी कमर बांधे होठ डसता शत्रु ऊपर गया। कोईएक आयुधरहित होय गया तो भी रुधिरका रंग्या रोषविषैं तत्पर वैरीके माथेपर हस्तका प्रहार करता भया, कोईएक रणधीर महा शूरवीर युद्धका अभिलाषी पाशकरि वैरीको बांधकरि छोड देता भया, रणकर उपज्या है हर्ष जाकै ऐसा। कोई एक न्यायसंग्रामविषैं तत्पर वैरीको आयुध रहित देखकरि आप भी आयुध डारि खडे होय रहे, कोईएक अंत समय संन्यास धार नमोकार मंत्रका उच्चारणकरि स्वर्ग प्राप्त भए, कोईएक योधा

आशीविष सर्पसमान भयंकर पड़ता २ भी प्रतिपक्षीको मारकरि मरया। कोईएक अर्धसिर छेद्या गया ताहि वामैं हाथविषै दाबि महापराक्रमी दौडकर शत्रुका सिर पाडया। केईएक सुभट पृथ्वीकी आगल समान जो अपनी भुजा तिनहीकरि युद्ध करते भए। केईएक परम क्षत्रिय धर्मज्ञ शत्रुको मूर्छित भया देखि आप पवन झोल सचेत करते भए। याभांति कायरनिको भयका उपजावनहारा अर योधानिको आनंदका उपजावनहारा महा संग्राम प्रवर्त्या। अनेक तुरंग अनेक योधा शस्त्रनिकरि हते गए, अनेक रथ चूर्ण चूर्ण होय गए, अनेक हाथियोंकी सूंड कट गई, घोडानिके पांव टूट गए, पूंछ कट गई, पियादे काम आय गए, रुधिरके प्रवाहकरि सर्व दिशा आरक्त होयगई, एता रण भया सो रावण किंचित्मात्र भी न गिन्या। रणविषै है कौतूहल जाके ऐसे सुभटभावका धारक रावण सुमति नामा सारथीकों कहता भया—हे सारथी। इस इंद्रके सन्मुख रथ चलाय, अर सामान्य मनुष्योंके मारवेकरि कहा। ये तृण समान सामान्य मनुष्य तिन पर मेरा शस्त्र न चालै मेरा मन महायोधावोंके ग्रहण विषैं तत्पर है, यह क्षुद्र मनुष्य अभिमानतैं इंद्र कहावै है, याहि आज मारूं अथवा पकडूं। यह विडंबनाका करणहारा पाखंड करि रह्या है सो तत्काल दूर करूं। देखो याकी ढीठता आपको इंद्र कहावै है अर कल्पनाकर लोकपाल थापे हैं अर इन मनुष्योंने विद्याधरोंकी देव संज्ञा धरी है। देखो अल्पसी विभूति पाय मूढमति भया है, लोक-हास्यका भय नाहीं। जैसैं नट सांग धरया है, दुर्बुद्धि आपको भूल गया। पिताके वीर्य माताके रुधिर करि मांस हाडमई शरीर माताके उदरतैं उपज्या तोहू वृथा आपको देवेंद्र मानै है। विद्याके बलकरि याने यह कल्पना करी है जैसैं काग आपको गरुड कहावै तैसैं यह इंद्र कहावै है। याभांति जब रावणने कह्या तब सुमति सारथीने रावणका रथ इंद्रके सन्मुख किया। रावणको देख इंद्रके सब सुभट भागे। रावणसों युद्ध करवेको कोई समर्थ नाहीं। रावण सर्वको दयालु दृष्टिकर कीट समान देखै, रावणके सन्मुख ए इंद्र ही टिका अर सर्व कृत्रिम देव याका छत्र देख भाज गए। जैसैं चंद्रमाके उदयतैं अंधकार जाता रहै। कैसा है रावण? वैरियोंकर झेल्या न जाय जैसैं जलका प्रभाव ढाहेनिकरि थांभ्या न जाय। अर जैसैं क्रोधसहित चित्तका वेग मिथ्यादृष्टि तापसीनिकर थांभ्या न जाय तैसैं सामंतोंकरि रावण थांभ्या न जाय। इंद्र भी कैलाश पर्वतसमान हाथीपर चढ्या धनुषनिको धरे तरकशतैं तीर काढता रावणके सन्मुख आया, कानतक धनुषको खींच रावणपर बाण चलाया जैसैं पहाड़पर मेघ मोटी धारा बर्षावै तैसैं रावणपर इंद्रने बाणनिकी वर्षा करी। रावणने इंद्रके बाण आवते आवते काट डारे अर अपने बाणनिकरि शरमंडप किया। सूर्यकी किरण बाणनिकरि दृष्टि न आवैं, ऐसा युद्ध देख नारद आकाशविषै नृत्य करता भया। कलह देख उपजै है हर्ष जाको, जब इंद्रने जान्या कि यह रावण सामान्य शस्त्रकर असाध्य है, तदि इंद्रने अग्निबाण रावणपर चलाया, ताकरि

रावणकी सेनाविषैं आकुलता उपजी। जैसैं बांसनिका वन प्रजलै अर ताकी तडतडात ध्वनि होय आगनकी ज्वाला उठै तैसैं अग्निवाण प्रज्वलता संता आया तब रावणने अपनी सेनाको व्याकुल देख, तत्कालही जलबाण चलाया सो मेघमाला उठी, पर्वत समान जलकी मोटी धारा बरससे लगी क्षणमात्रमैं अग्निबाण बुझ गया। तब इंद्रने रावणपर तामस बाण चलाया ताकरि दशों दिशानिमें अंधकार होय गया रावणके कटकविषै काहूको कुछ भी न सूझै तब रावणने प्रभास्त्र कहिए प्रकाशबाण चलाया ताकरि क्षणमात्रमें सकल अंधकार विलय होय गया। जैसैं जिनशासनके प्रभावकरि मिथ्यात्वका मार्ग विलय जाय। फिर रावणने कोपकरि इंद्रपै नागवाण चलाया सो मानो महा काले नाग ही चलाए, भयंकर है जिह्वा जिनकी,ते सर्प इंद्रकै अर सकल सेनाकै लिपट गए सर्पनिकरि वेढ्या इंद्र अति व्याकुल भया। जैसैं भवसागरविषै जीव कर्म जालकर वेढ्या व्याकुल होय है, तब इंद्रने गरुडबाण चितारया सो सुवर्णसमान पीत पंखनिके समूहकरि आकाश पीत होय गया अर पांखीनिकी पवनकरि रावणका कटक हालने लग्या मानों हिंडोलेमें झूलै है, गरुडके प्रभावकर नाग ऐसे विलाय गए जैसें शुक्लध्यानके प्रभावकरि कर्मनिके बंध विलय होय जांय, जब इंद्र नागबंधनितैं छूटकर जेठके सूर्यसमान अति दारुण तपता भया तदि रावणने त्रैलोक्यमंडन हाथीको इंद्रके ऐरावत हाथीपर प्रेरया। कैसा है त्रैलोक्यमंडन ? सदा मद झरै है अर वैरियोंको जीतनहारा है। इंद्रने भी ऐरावतको त्रैलोक्यमंडन पर धकाया, दोनों गज महा गर्वके भरे लडने लगे, झरै है मद जिनके, क्रूर हैं नेत्र जिनके, हालैं हैं कर्ण जिनके, देदीप्यमान है विजुरी समान स्वर्णकी सांकल जिनके, दोऊ हाथी शरदके मेघसमान अति गाजते परस्पर अति भयंकर जो दांत तिनके घातनिकरि पृथ्वीको शब्दायमान करते चपल हैं शरीर जिनका, परस्पर सूंडोंसे अद्भुत संग्राम करते भए।

तब रावणने उछलकरि इंद्रके हाथीके मस्तकपर पग धरि अति शीघ्र ताकरि गजके सारथीको पादप्रहारतैं नीचें डारया अर इंद्रको वस्त्रतैं बांध्या अर बहुत दिलासा देयकरि पकडि अपने गजपर लेय आया अर रावणके पुत्र इंद्रजीतने इंद्रका पुत्र जयंत पकड्या, अपने सुभटोंको सौंप्या; अर आप इंद्रके सुभटोंपर दौड्या तदि रावणने मनै किया--हे पुत्र ! अब रणतैं निवृत्त होवो, क्योंकि समस्त विजयार्धके जे निवासी विद्याधर तिनका चूडामणि पकड लिया है। अब समस्त अपने अपने स्थानक जावो, सुखसों जीवो, शालितैं चावल लिया, तब परालका कहा काम ? जब रावणने ऐसा कह्या तब इंद्रजीत पिताकी आज्ञातैं पाछा बाहुड्या अर सर्व देवनिकी सेना शरदके मेघसमान भाग गई। जैसैं पवनकरि शरदके मेघ विलाय जांय। रावणकी सेनामें जीतके वादित्र बाजे, ढोल नगारे शंख झांझ इत्यादि अनेक वादित्रनिका शब्द भया। इंद्रको पकड्या देख रावणकी सेना अति हर्षित भई। रावण लंकामें चलवेको उद्यमी भया , सूर्यके रथ समान रथ

ध्वजानिकरि शोभित अर चंचल तुरंग नृत्य करते भए। अर मद झरते हुए नाद करते हाथी तिनपरि भ्रमर गुंजार करैं हैं इत्यादि महा सेनाकरि मंडित राक्षसनिका अधिपति रावण लंकाके समीप आया। तब समस्त बंधुजन अर नगरके रक्षक तथा पुरजन सब ही दर्शनके अभिलाषी भेंट लेय लेय सन्मुख आए अर रावणकी पूजा करते भए। जे बड़े हैं तिनकी रावणने पूजा करी, रावणकों सकल नमस्कार करते भए अर बड़ोंको रावण नमस्कार करता भया। कैयकनिको कृपादृष्टिकरि कैयकनिकों मंदहास्य करि कैयकनिको वचननिकरि रावण प्रसन्न करता भया। बुद्धिके बलतैं जान्या है सबका अभिप्राय जानैं, लंका तो सदा ही मनोहर है परंतु रावण बड़ी विजयकरि आया तातैं अधिक समारी है, ऊंचे रत्ननिके तोरण निरमापे, मंदमंद पवनकरि अनेक वर्णकी ध्वजा फरहरैं हैं, कुंकुमादि सुगंध मनोज्ञ जलकरि सींच्या है, समस्त पृथिवीतल जहां और सब ऋतुके फूलनिकरि पूरित है राजमार्ग जहां अर पंच वर्ण रत्ननिके चूर्ण करि रचे हैं मंगलीक मांडने जहां अर दरवाजोंपर थांभे हैं पूर्ण कलश कमलोंके पत्र अर पल्लवनितैं ढके, संपूर्ण नगरी वस्त्राभरणकरि शोभित है। जैसैं देवोंसे मंडित इंद्र अमरावती में आवै, तैसैं विद्याधरनिकरि वेढ्या रावण लंकामें आया। पुष्पकविमानमें बैठ्या, दैदीप्यमान है मुकुट जाका, महारत्नोंके बाजूबंद पहिर निर्मल प्रभाकरयुक्त मोतियोंका हार वक्षस्थल पर धार, अनेक पुष्पोंके समूह करि विराजित, मानों वसंतहीका रूप है सो ताको हर्षतैं पूर्ण नगरके नर नारी देखते देखते तृप्त न भए। ऐसी मनोहर मूरत है। असीस देय हैं। नानाप्रकारके वादित्रोंके शब्द होय रहे हैं, जय जयकार शब्द होय हैं। आनंदतैं नृत्यकारिणी नृत्य करैं हैं इत्यादि हर्षसंयुक्त रावणने लंकामें प्रवेश किया। महा उत्साहकी भरी लंका ताहि देखि रावण प्रसन्न भए। बंधुजन सेवकजन सब ही आनंदकों प्राप्त भए। रावण राजमहलमें आए। देखो भव्यजीव हो! रथनूपूरके धनी राजा इंद्रने पूर्वपुण्यके उदयतैं समस्त वैरियोंके समूह जीतकर सर्वसामग्रीपूर्ण तिनको तृणवत् जानि सबको जीतकर दोन्यों श्रेणिका राज बहुत वर्ष किया अर इंद्रके तुल्य विभूतिकों प्राप्त भया। अर जब पुण्य क्षीण भया तदि सकल विभूति विलय होय गई, रावण ताकों पकड़करि लंकामें ले आया तातैं मनुष्यके चपल सुखको धिक्कार होहु। यद्यपि स्वर्गलोकके देवनिका विनाशीक सुख है तथापि आयुपर्यंत और रूप न होय अर जब दूसरी पर्याय पावै तब औररूप होय अर मनुष्य तो एक ही पर्यायमें अनेक दशा भोगै तातैं मनुष्य होय जे मायाका गर्व करैं हैं ते मूर्ख हैं। अर यह रावण पूर्व पुण्यतैं प्रबल वैरीनिको जीतिकरि अति वृद्धिको प्राप्त भया। यह जानकरि भव्य जीव सकल पापकर्मका त्याग कर शुभकर्महीको अंगीकार करो।

इतिश्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणसंस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं इन्द्रका पराभवनाम बारहवां पर्व पूर्ण भया ॥१२॥

(त्रयोदश पर्व)

[विद्याधर इन्द्रका निर्वाण गमन]

अथानंतर इंद्रके सामंत धनीके दुःखतैं व्याकुल भए तदि इंद्रका पिता सहस्रार जो उदासीन श्रावक है, तासों बीनती करी इंद्रके छुड़ावनेके अर्थि सहस्रारको लेयकरि लंकामैं रावणके समीप गए। द्वारपालनिसों बीनतीकरि इंद्रके सकल वृत्तांत कहकरि रावणके ढिग गए, रावणने सहस्रारकों उदासीन श्रावक जानकरि बहुत विनय किया इनको सिंहासन दिया, आप सिंहासनतैं उतरि बैठे, सहस्रार रावणकों विवेकी जानि कहता भया, हे दशानन! तुम जगजीत हो, सो इन्द्रको भी जीत्या तिहारी भुजानिकी सामर्थ्य सबनिने देखी, जे बड़े राजा हैं ते गर्ववंतनिके गर्व दूरकरि फिर कृपा करैं, तातैं अब इन्द्रको छोड़ो! यह सहस्रारने कही अर जे चारों लोकपाल हुते तिनके मुंहतैं भी यही शब्द निकस्या मानों सहस्रारका प्रतिशब्द ही कहते भये। तब रावण सहस्रारकों तो हाथ जोड़ि यही कही जो आप कहो सोई होगा अर लोकपालनितैं हसकरि क्रीड़ारूप कही, जो तुम चारों लोकपाल नगरीविषैं बुहारी देवो। कमलनिका मकरन्द अर तृण-कंटकरहित पुरी करो अर इन्द्र सुगंध करि पृथ्वीको सींचै अर पांच वर्णके सुगंध मनोहर जो पुष्प तिनतैं नगरीकों शोभित करो। यह बात जब रावणने कही तब लोकपाल तो लज्जावान होय नीचे होय गये अर सहस्रार अमृतरूप वचन बोले, हे धीर तुम जाकों जो आज्ञा करो सोही वह करै तुम्हारी आज्ञा सर्वोपरि है। यदि तुम सारिखे गुरुजन पृथ्वीके शिक्षादायक न होंय तो पृथ्वीके लोक अन्यायमार्गविषैं प्रवर्तैं, यह वचन सुनकर रावण अति प्रसन्न भए। अर कही, हे पूज्य! तुम हमारे तात-तुल्य हो, अर इंद्र मेरा चौथा भाई याकों पायकर मैं सकल पृथ्वी कंटकरहित करूंगा। याकों इन्द्रपद वैसा ही है अर यह लोकपाल ज्योंके त्यों ही हैं अर दोन्यों श्रेणीके राज्यतैं और अधिक चाहो सो लेहु। मोमैं अर यामैं कछु भेद नाहीं। अर आप बड़े हो, गुरुजन हो, जैसैं इन्द्रको शिक्षा देवो तैसैं मोहि देवो, तिहारी शिक्षा अलंकाररूप है। अर आप रथनूपुरविषैं विराजो अथवा यहां विराजो दोऊ आपही की भूमि हैं ऐसैं प्रिय वचनकरि सहस्रारका मन बहुत संतोष्या तब सहस्रार कहने लाग्या, हे भव्य! आप सारिखे सज्जन पुरुषनिकी उत्पत्ति सर्व लोकनिकों आनन्दकारिणी है। हे चिरंजीव! तिहारे शूरवीरपनेका आभूषण यह उत्तम विनय समस्त पृथ्वीविषैं प्रशंसाकों प्राप्त भया है। तिहारे देखनेकरि हमारे नेत्र सफल भए। धन्य तिहारे माता पिता, जिनतैं तिहारी उत्पत्ति भई। कुंदके पुष्पसमान उज्वल तिहारी कीर्ति, तुम समर्थ अर क्षमावान, दातार अर निर्गर्व, ज्ञानी अर गुणप्रिय तुम जिनशासनके अधिकारी हो। तुमने हमको जो कही यह तिहारा घर है अर जैसैं इन्द्र पुत्र तैसैं मैं, सो तुम इन बातोंके लायक हो तिहारे मुखतैं ऐसे ही वचन झरैं, तुम महाबाहू दिग्गजनिकी सूंड

समान भुजा तिहारी, तुम सारिखे पुरुष या संसारविषैं विरले हैं परन्तु जन्मभूमि माता-समान है सो छांडी न जाय, जन्मभूमिका वियोग चित्तको आकुल करै है, तुम सर्व पृथ्वीके पति हो परन्तु तुमको भी लंका प्रिय है। मित्र बांधव अर समस्त प्रजा हमारे देखनेके अभिलाषी आवनेका मार्ग देखै हैं। तातैं हम रथनूपुर ही जायेंगे अर चित्त सदा तुम्हारे समीप ही है। हे देवनिके प्यारे! तुम बहुत काल पृथ्वीकी निर्विघ्न रक्षा करो। तब रावणने ताही समय इंद्रको बुलाया और सहस्रारके लार किया अर आप रावण कितनीक दूर तक सहस्रारको पहुंचाने गए और बहुत विनयकरि सीख दीनी, सहस्रार इन्द्रको लेयकरि लोकपालनि सहित विजयार्धगिरिपर आए सर्व राज्य ज्योंका त्यों ही है। लोकपाल आयकरि अपने अपने स्थानक बैठे परंतु मानभंगसे असाताको प्राप्त भए, ज्यों २ विजयार्धके लोक इंद्रके लोकपालनिको अर देवनिको देखैं त्यों २ यह लज्जा कर नीचे होय जांय अर इंद्रकै भी न तो रथनूपुरमैं प्रीति, न रानियोंसे प्रीति, न उपवनादिमें प्रीति, न लोकपालोंमें प्रीति, न कमलोंके मकरंदसों पीत होय रहा है जल जिनका ऐसे मनोहर सरोवर तिनमैं प्रीति, और न किसी क्रीडाविषैं प्रीति, यहांतक कि अपने शरीरसों भी प्रीति नहीं, लज्जाकर पूर्ण है चित्त जाका सो ताको उदास जानि अनेक विधिकर प्रसन्न किया चाहैं और कथाके प्रसंगतैं वह बात भुलाया चाहैं परंतु यह भूले नाहीं। सर्व लीला विलास तजे, अपने राजमहलके मध्य गंधमादन पर्वतके शिखर समान ऊंचा जो जिनमंदिर ताकै एक थंभके माथेविषैं रहै कांतिरहित होय गया है शरीर जाका, पंडितनिकरि मंडित यह विचार करै है कि धिक्कार है या विद्याधर पदके ऐश्वर्यको जो एक क्षणमात्रविषैं विलाय गया, जैसैं शरद ऋतुके मेघनिके समूह अत्यंत ऊंचे होवें परंतु क्षणमात्रविषैं विलय जांय तैसैं ते शस्त्र ते हाथी ते योधा ते तुरंग समस्त तृणसमान होय गए, पूर्वै अनेक बार अद्भुत कार्यके करणहारे। अथवा कर्मोंकी यह विचित्रता है कौन पुरुष अन्यथा करनेको समर्थ है, तातैं जगतमें कर्म प्रबल हैं। मैं पूर्व नानाविध भोग सामग्रियोंके निपजावनहारे कर्म उपार्जे हुते सो अपना फल देयकरि खिरि गए, जातैं यह दशा वरतै है। रणसंग्रामविषैं शूरवीर सामंतनिका मरण होय तो भला, जाकरि पृथ्वीविषैं अपयश न होय, मैं जन्मतैं लेकर शत्रुओंके सिरपर चरण देकर जिया सो मैं इंद्र शत्रुका अनुचर होयकर कैसैं राज्य-लक्ष्मी भोगूं। तातैं अब संसारके इंद्रिय-जनित सुखोंकी अभिलाषा तजकर मोक्षपदकी प्राप्तिके कारण जे मुनिव्रत तिनको अंगीकार करूं। रावण शत्रुका भेष धरि मेरा महा मित्र आया तानै मोहि प्रतिबोध दिया। मैं असार सुखके आस्वादविषैं आसक्त हुता ऐसा विचार इंद्रने किया ताही समय निर्वाणसंगम नामा चारण मुनि विहार करते हुए आकाश मार्गतैं जाते हुते सो चैत्यालयके प्रभावकरि उनका आगैं गमन न होय सक्या तब वे चैत्यालय जानि नीचें उतरे, भगवानके प्रतिबिंबका दर्शन किया। मुनि चार ज्ञानके धारक थे, सो उनको राजा इंद्रने उठकरि नमस्कार

किया, मुनिके समीप जाय बैठ्या, बहुत देरतक अपनी निंदा करी, सर्व संसारका वृत्तांत जानन-हारे मुनिने परम अमृतरूप वचननिकरि इंद्रको समाधान किया कि--हे इंद्र ! जैसैं अरहटकी घड़ी भरी रीती होय हैं अर रीती भरी होयहैं तैसैं यह संसारकी माया क्षणभंगुर है याके और प्रकार होनेका आश्चर्य नाहीं, मुनिके मुखसों धर्मोपदेश सुन इंद्रने अपने पूर्वभव पूछे, तब मुनि कहै हैं, कैसे हैं मुनि ? अनेक गुणनिके समूहतैं शोभायमान हैं। हे राजन् ! अनादिकालका यह जीव चतुर्गतिविषैं भ्रमण करै है, जो अनंत भव धरे सो केवलज्ञानगम्य हैं। कैयक भव कहिए हैं सो सुन।

शिखापद नामा नगरविषैं एक मानुषी महा दलिद्रनी जाका नाम कुलवंती सो चीपड़ी, अमनोज्ञ नेत्र, नाक चिपटी अनेक व्याधिकी भरी, पापकर्मके उदयकरि लोगनिकी जूठ खायकर जीवै। खोटे वस्त्र अभागिनी फाट्या अंग महा रूक्ष खोटे केश, जहां जाय तहां लोक अनादरै हैं, जाको कहीं सुख नाहीं। अंतकालविषैं शुभमति होय एक मुहूर्तका अनशन लिया, प्राण त्यागकरि किंपुरुष देवकै शीलधरा नामा किन्नरी भई, तहांतैं चयकरि रत्ननगरविषैं गोमुखनामा कलुंबी ताकै धरनी नामा स्त्री, ताके सहस्रभाग नामा पुत्र भया। सो परम सम्यक्तको पायकरि श्रावकके व्रत आदरे,शुक्रनामा नवमा स्वर्ग तहां जाय उत्तम देव भया। तहांसे चयकर महा विदेहक्षेत्रके रत्नसंचय नगरविषैं मणिनामा मंत्री ताकै गुणावली नामा स्त्री ताकै सामंतवर्धन नामा पुत्र भया सो पिताके साथ वैराग्य अंगीकार किया। अति तीव्र तप किए तत्त्वार्थविषैं लग्या है चित्त जाका निर्मल सम्यक्तका धारी, कषायरहित बाईस परीषह सहकरि शरीर त्याग नवग्रैवक गया। अहमिन्द्रके बहुत काल सुख भोगकरि राजा सहस्रार विद्याधरके रानी हृदयसुन्दरी तिनकै तू इंद्र नामा पुत्र भया या रथनूपुर नगरविषैं जन्म लिया। पूर्वके अभ्यासकरि इंद्रके सुखमें मन आसक्त भया तू विद्याधरोंका अधिपति इंद्र कहाया अब तू वृथा मनविषैं खेद करै है' जो मैं विद्याविषैं अधिक हुना सो शत्रुनिकरि जीत्या गया है सो हे इंद्र ! कोइ निर्बुद्धि कोदों बोयकरि वृथा शालिकी प्रार्थना करै है। ये प्राणी जैसैं कर्म करै हैं। तैसै फल भोगै हैं। तैंने भोगका साधन शुभकर्म पूर्व किया हुता सो क्षीण भया, कारण विना कार्यकी उत्पत्ति ना होय है। या बातका आश्चर्य कहा ? तूने याही जन्मविषैं अशुभ कर्म किए, तिनकरि यह अपमानरूप फल पाया अर रावण तो निमित्तमात्र है। तैंने जो अज्ञान चेष्टा करी सो कहा नाहीं जानै है, तू ऐश्वर्य मदकरि भ्रष्ट भया बहुत दिन भए तातैं तोहिं याद नाहीं आवै है। एकाग्रचित्तकरि सुन ! अरिंजयपुरमें वह्निवेग नामा विद्याधर राजा ताकी रानी वेगवती, पुत्री अहिल्या ताका स्वयंवरमंडप रच्या हुता तहां दोनों श्रेणीके विद्याधर अति अभिलाषी होय विभवकरि शोभायमान गए अर तू भी बड़ी संपदासहित गया अर एक चंद्रावर्त नामा नगरका धनी राजा आनंदमाल सो भी तहां

आया। अहिल्याने सबको तजकरि ताके कंठविषै वरमाला डाली। कैसी है अहिल्या ? सुंदर है सर्व अंग जाका सो आनंदमाल अहिल्या को परणकरि जैसैं इंद्र इंद्राणीसहित स्वर्गलोकमें सुख भोगै तैसैं मनवांछित भोग भोगता भया। सो जा दिनतैं अहिल्या परणी ता दिनतैं तेरे यासों ईर्षा बढ़ी। तैंने वाको अपना बड़ा बैरी जान्या, कैएक दिन वह घरविषै रहा फिर वाकों ऐसी बुद्धि उपजी कि यह देह विनाशीक है यासों मुझे कछु प्रयोजन नाहीं, अब मैं तप करूं जाकरि संसारका दुःख दूर होय। ये इंद्रियनिके भोग महाठग तिनविषैं सुखकी आशा कहां ? ऐसा मनमें विचारकरि वह ज्ञानी अंतरात्मा सर्व परिग्रहको तजकरि परम तप आचरता भया। एक दिन हंसावली नदी के तीर कायोत्सर्ग धर तिष्ठै था सो तैंने देख्या ताके देखनेमात्र रूप ईंधनकरि बढ़ी है क्रोधरूप अग्नि जाके सो तैं मूर्खने गर्वकर हांसी करी। अहो आनंदमाल ! तू काम भोगविषैं अति आसक्त हुता अहिल्याका रमण अब कहां ? विरक्त होय पहाड़ सारिखा निश्चल तिष्ठ्या है। तत्त्वार्थके चिंतवनविषैं लग्या है अत्यंत स्थिर मन जाका। या भांति परम मुनिकी तैंने अवज्ञा करी सो वह तो आत्मसुखविषैं मग्न, तेरी बात कुछ हृदयविषैं न धरी। उनके निकट उनका भाई कल्याण नामा मुनि तिष्ठै था तानैं तोहि कही यह महामुनि निरपराध तैंनै इनकी हांसी करी सो तेरा भी पराभव होगा। तब तेरी स्त्री सर्वश्री सम्यग्दृष्टि साधूनिकी पूजा करनहारी तानैं नमस्कारकरि कल्याणस्वामीको उपशांत किया जो वह शांत न करती तो तू तत्काल साधूनिकी कोपाग्नितैं भस्म हो जाता। तीन लोकमें तप-समान कोई बलवान नाहीं, जैसी साधुओंकी शक्ति है तैसी इंद्रादिक देवोंकी शक्ति भी नाहीं। जे पुरुष साधु लोगोंका निरादर करैं हैं ते इस भवमें अत्यंत दुख पाय नरक निगोदविषैं पड़ैं हैं, मनकर भी साधुओंका अपमान न करिए। जे मुनिजनका अपमान करैं हैं ते इसभव अर परभवविषैं दुखी होय हैं क्रूरचित्त मुनियोंको मारैं अथवा पीड़ा करैं हैं सो अनंतकाल दुःख भोगवैं मुनिकी अवज्ञा समान और पाप नाहीं। मनवचन-कायकरि यह प्राणी जैसे कर्म करैं हैं तैसे ही फल पावैं हैं। या भांति पुण्य पाप कर्मोंके फल भले बुरे जीव भोगैं हैं। ऐसा जानकरि धर्मविषैं बुद्धिकरि। अपने आत्माको संसारके दुःखनितैं निवृत्त करो। महामुनिके मुखसों राजा इंद्र पूर्व भव सुन आश्चर्यको प्राप्त भया। नमस्कारकरि मुनिसों कहता भया—हे भगवान ! तिहारे प्रसादतैं मैंने उत्तम ज्ञान पाया, अब सकल पाप क्षणमात्रविषैं विलय गए, साधुनिके संगतैं जगतविषैं कुछ दुर्लभ नाहीं, तिनके प्रसादकर अनन्त जन्मविषैं न पाया जो आत्मज्ञान सो पाइए है। यह कहकरि मुनिको बारंबार वंदना करी। मुनि आकाशमार्ग विहार कर गए। इंद्र गृहस्थाश्रमतैं परम वैराग्यको प्राप्त भया। जलके बुदबुदा समान शरीरको असार जानि धर्मविषैं निश्चल बुद्धिकर अपनी अज्ञान चेष्टाको निंदता संता वह महापुरुष अपनी राज्य-विभूति पुत्रको देयकरि अपने बहुत पुत्रनिसहित अर लोकपालनिसहित तथा अनेक राजानि-

सहित सर्वकर्मनिकी नाश करनहारी जिनेश्वरी दीक्षा आदरी, सर्व परिग्रहका त्याग किया। निर्मल है चित्त जाका, प्रथम अवस्थाविषैं जैसा शरीर भोगमैं लगाया हुता तैसा ही तपके समूहमें लगाया ऐसा तप औरनितैं न बन पड़ै, पुरुषोंकी बड़ी शक्ति है जसी भोगोंमें प्रवर्तै तैसैं विशुद्ध भावविषैं प्रवर्तै है। राजा इंद्र बहुत काल तपकरि शुक्लध्यानके प्रतापतैं कर्मनिका क्षय-करि निर्वाण पधारे। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसों कहै हैं—देखो! बड़े पुरुषोंके चरित्र आश्चर्यकारी हैं, प्रबल पराक्रमके धारक बहुत काल भोगकरि वैराग्य लेय अविनाशी सुखकों भोगवै हैं, यामैं कछु आश्चर्य नाहीं। समस्त परिग्रहका त्यागकर क्षणमात्रविषैं ध्यानके बलतैं मोटे पापनिका क्षय करैं हैं। जैसे बहुत कालतैं ईंधनकी राशि संचय करी सो क्षणमात्रमें अग्निके संयोगकरि भस्म होय है। ऐसा जानकर हे प्राणी! आत्मकल्याणका यत्न करो। अंतःकरण विशुद्ध करो, मृत्युके दिनका कुछ निश्चय नाहीं, ज्ञानरूप सूर्यके प्रतापकरि अज्ञान तिमिरको हरो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणसंस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं इंद्रका निर्वाणगमन नामा तेरहवां पर्व पूर्ण भया॥१३॥

(चतुर्दश पर्व)

[अनतवीर्य केवलीके धर्मोपदेशका वर्णन]

अथानंतर रावण विभव और देवेंद्रसमान भोगनिकरि मूढ़ है मन जाका, सो मन-वांछित अनेक लीला विलास करता भया। यह राजा इंद्रका पकड़नहारा एकदिन सुमेरुपर्वतके चैत्यालयनिकी वंदनाकरि पीछे आवता हुता, सप्त क्षेत्र, षट् कुलाचल तिनकी शोभा देखता नाना-प्रकारके वृक्ष नदी सरोवर स्फटिकमणिहूते निर्मल महा मनोहर अवलोकन करता थका सूर्यके भवन-समान विमानमें विराजमान महा विभूतिकरि संयुक्त लंकाविषैं आवनेका है मन जाका सो तत्काल महा मनोहर उतंग नाद सुनता भया। तब महा हर्षवान होय मारीच मंत्रीकों पूछता भया, हे मारीच! यह सुन्दर महानाद काहेका है और दशों दिशा काहेतैं लाल होय रही हैं। तब मारीचने कहा, हे देव! यह केवलीकी गंधकुटी है और अनेक देव दर्शनको आवैं हैं तिनके मनोहर शब्द होय रहे हैं अर देवनिके मुकुटआदिकी किरणनिकरि यह दशों दिशा रंगरूप होय रही हैं। इस स्वर्ण पर्वतविषै अंनतवीर्य मुनि तिनको केवलज्ञान उपज्या है, ये वचन सुनकरि रावण बहुत आनंदको प्राप्त भया। सम्यक्दर्शनकरि संयुक्त है अर इंद्रका वश करणहारा है महाकांतिका धारी आकाशतैं केवलीकी वंदनाके अर्थि पृथ्वीपर उतर्या, वंदनाकर स्तुति करी। इंद्रादिक अनेक देव केवलीके समीप बैठे हुते, रावण भी हाथ जोड़ नमस्कारकरि अनेक विद्या-धरनि सहित उचित स्थानकमें तिष्ठ्या।

चतुरनिकायके देव तथा तिर्यंच अर अनेक मनुष्य केवलीके समीप तिष्ठे हुते ता-समय किसी शिष्यने पूछया हे देव, हे प्रभो! अनेक प्राणी धर्म अर अधर्मके स्वरूप जाननेकी तथा तिनके फल जाननेकी अभिलाषा राखै हैं अर मुक्तिके कारण जानना चाहैं हैं सो तुम ही कहने योग्य हो, सो कृपाकर कहो। तब भगवान केवलज्ञानी अनंतवीर्य मर्यादरूप अक्षर जिनमें विस्तीर्ण अर्थ अति निपुण शुद्ध संदेहरहित सबके हितकारी प्रियवचन कहते भए। अहो भव्य जीव हो! यह जीव चेतनालक्षण अनादिकालका निरन्तर अष्टकर्मनिकरि बंध्या आच्छादित है आत्मशक्ति जाकी सो चतुर्गतिमें भ्रमण करै है चौरासी लाख योनियोंमें नाना प्रकार इंद्रियों-करि उपजी जो वेदना ताहि भोगता संता सदाकाल दुखी होय रागी द्वेषी मोही हुआ कर्मनिके तीव्र मंद मध्य विपाकतैं कुम्हारके चक्रवत् पाया है चतुर्गतिका भ्रमण जानैं ज्ञानावरणी कर्मकरि आच्छादित है ज्ञान जाका सो अतिदुर्लभ मनुष्यदेही पाई तो भी आत्महितको नाहीं जानै है रसनाका लोलुपी स्पर्श इन्द्रीका विषयी पांच हू इन्द्रियोंके वश भया अति निंद्य पाप कर्मकरि नरकविषैं पडै है जैसैं पाषाण पानीमैं डूबै है कैसा है नरक? अनेक प्रकार करि उपजे जे महा-दुख तिनका सागर है। महा दुखकारी है जे पापी क्रूरकर्मी धनके लोभी माता पिता भाई पुत्र स्त्री मित्र इत्यादि सुजन तिनको हनै हैं जगतमैं निंद्य है चित्त जिनका ते नरकमें पड़ैं हैं तथा जे गर्भपात करैं हैं तथा बालक हत्या करैं हैं, वृद्धकों हणै हैं, अबला (स्त्रियों) की हत्या करैं हैं, मनुष्योंकों पकडै हैं, रोकै हैं, बांधै हैं, मारैं हैं, पक्षी तथा मृगनिको हनै हैं, जे कुबुद्धि स्थलचर जलचर जीवोंकी हिंसा करै हैं, धर्मरहित है परिणाम जिनका ते महावेदनारूप जो नरक ता विषैं पड़ैं हैं अर जे पापी शहदके अर्थि मधुमाखियोंका छाता तोडैं हैं तथा मांसआहारी मद्य-पायी शहदके भक्षण करनहारे, वनके भस्म करनहारे, तथा ग्रामनिके बालनहारे, बंदीके करणहारे, गायनिके घेरनहारे, पशुघाती महा हिंसक भील अहेड़ी बागरा पारधी इत्यादि पापी महानरकमैं पड़ैं हैं अर जे मिथ्यावादी परदोषके भाषणहारे अभक्ष्यके भक्षण करनहारे परधनके हरणहारे पर-दाराके रमनहारे वेश्यानिके मित्र हैं ते घोर नरकमैं पड़ैं हैं जहां काहू की शरण नाहीं, जे पापी मांसका भक्षण करैं हैं ते नरकमें प्राप्त होय हैं तहां तिनहीका शरीर काट काट तिनके मुखविषैं दीजिए है। अर ताते लोहेके गोले तिनके मुखमें दीजिए है। अर मद्यपान करनेवालोंके मुखमें सीसा गाल गाल डारिये है। अर परदारा-लंपटियोंको ताती लोहेकी पूतलियोंसे आलिंगन करावैं हैं। जे महापरिग्रहके धारी महा आरंभी क्रूर है चित्त जिनका प्रचंड कर्मके करनहारे हैं ते सागरां-पर्यंत नरकमें बसै हैं। साधुओंके द्वेषी, पापी मिथ्यादृष्टि कुटिल कुबुद्धी रौद्रध्यानी मरकर नरक-में प्राप्त होय हैं। जहां विक्रियामई कुल्हाड़े तथा खड्ग चक्र करोंत अर नानाप्रकारके विक्रिया-मई शस्त्र तिनकरि खंड खंड कीजिए है फिर शरीर मिल जाय है आयु पर्यंत दुख भोगवैं

हैं तीक्ष्ण हैं चोंच जिनकी ऐसे मायामई पक्षी ते तन विदारैं हैं तथा मायामई सिंह, व्याघ्र श्वान, सर्प, अष्टापद, ल्याली, बीछू तथा और प्राणियोंसे नाना प्रकारके दुख पावें हैं। नरकके दुखनिको कहां लग वर्णन करिए अर जे मायाचारी प्रपंची विषयाभिलाषी हैं ते प्राणी तिर्यंचगतिकों प्राप्त होय हैं तहां परस्पर वंध अर नानाप्रकारके शस्त्रनिकी घाततैं महादुख पावें हैं तथा वाहन तथा अति भारका लादना शीत उष्ण क्षुधा तृषादिकरि अनेक दुख भोगवें हैं। यह जीव भवसंकटविषैं भ्रमता स्थलविषैं जलविषैं गिरिविषैं तरुविषैं और गहनवनविषैं अनेक ठौर सूता एकेंद्री, बेइंद्री तेइंद्री चौइन्द्री पंचेंद्री अनेक पर्यायनिमें अनेक जन्म मरण किए। जीव अनादिनिधन है याका आदि अंत नाहीं, तिलमात्र भी लोकाकाशविषैं प्रदेश नाहीं, जहां संसारभ्रमणविषैं इस जीवने जन्म मरण न किए हों। अर जे प्राणी निर्गर्व कपटरहित स्वभाव ही कर संतोषी हैं ते मनुष्यदेहको पावें है सो यह नर-देह परम निर्वाण सुखका कारण ताहि पायकरि भी जे मोह-मदकरि उन्मत्त कल्याणमार्गको तजकरि क्षणमात्रमें सुखके अर्थि पाप करैं हैं ते मूर्ख हैं मनुष्य भी पूर्वकर्मके उदयकरि कोई आर्यखंडविषैं उपजैं हैं, कोई म्लेच्छखंडविषैं उपजैं हैं तथा कोई धनाढ्य कोई अत्यन्त दरिद्री होय हैं कोई कर्मके प्रेरे अनेक मनोरथ पूर्ण करैं हैं, कोई कष्टसों पराए घरोंमें प्राणपोषण करैं हैं, केई कुरूप केई रूपवान केई दीर्घआयु केई अल्पआयु केई लोकनिकों वल्लभ केई अभावने केई सभाग केई अभागे केई औरोंको आज्ञा देवें केई औरनके आज्ञाकारी, केई यशस्वी केई अपयशी केई शूर केई कायर केई जलविषैं प्रवेश करैं केई रणमें प्रवेश करैं केई देशांतरमें गमन करैं केई कृषिकर्म करैं केई व्यापार करैं केई सेवा करैं। या भांति मनुष्य-गतिविषैं भी सुख दुखकी विचित्रता है, निश्चय विचारिए तो सर्वगतिमें दुख ही है, दुखहीको कल्पनाकर सुख मानैं हैं। अर मुनिव्रत तथा श्रावकके व्रतनिकरि तथा अव्रत सम्यक्त्वकरि तथा अकामनिर्जरातैं, तथा अज्ञानतपतैं देवगति पावें हैं। तिनमें केई बड़ी ऋद्धिके धारी केई अल्प ऋद्धिके धारी आयु कांति प्रभाव बुद्धि सुख लेश्याकरि ऊपरले देव चढ़ते अर शरीर अभिमान अर परिग्रहसे घटते देवगतिमें भी हर्ष विषादकर कर्मका संग्रह करैं हैं। चतुर्गतिमें यह जीव सदा अरहटकी घडीके यंत्र समान भ्रमण करैं हैं। अशुभ संकल्पनितैं दुखको पावें हैं, अर दानके प्रभावतैं भोग-भूमिविषैं भोगनिकों पावें हैं, जे सर्व परिग्रह रहित मुनिव्रतके धारक हैं सो उत्तमपात्र कहिये। अर जे अणुव्रतके धारक श्रावक हैं तथा श्राविका तथा आर्यिका सो मध्यमपात्र कहिए हैं। अर व्रत-रहित सम्यग्दृष्टि है सो जघन्यपात्र कहिए है। इन पात्रनिकों विनयभक्तिकरि आहार देना सो पात्रका दान कहिये अर बाल वृद्ध अंध पंगु रोगी दुर्बल दुःखित भुखित इनको करुणाकर अन्न जल औषधि वस्त्रादिक दीजिए सो करुणादान कहिये उत्तम पात्रकै दानकरि उत्कृष्ट भोगभूमि, अर मध्यम-पात्रके दानकरि मध्यम भोगभूमि अर जघन्यपात्रके दानकरि जघन्य भोगभूमि होय है जो नरक

निगोदादि दुःखनितैं रक्षा करै सो पात्र कहिये। सो सम्यग्दृष्टि मुनिराज हैं ते जीवनिकी रक्षा करै हैं। जे सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्रकर निर्मल हैं ते परम पात्र कहिये। जिनके मान-अपमान, सुख-दुख, तृण-कांचन दोनों बराबर हैं, तिनकों उत्तम पात्र कहिये। जिनके रागद्वेष नाहीं जे सर्व परिग्रहरहित महा तपस्वी आत्मध्यानविषैं तत्पर ते मुनि उत्तम पात्र कहिए तिनकों भावकरि अपनी शक्तिप्रमाण अन्न जल औषधि देनी तथा वनमैं तिनके रहनेके निमित्त वस्तिका करावनी तथा आर्यानिकों अन्न जल वस्त्र औषधि देनीं। श्रावक श्राविका सम्यग्दृष्टियोंको अन्न जल वस्त्र औषधि इत्यादि सर्व सामग्री देनी बहुत विनयकरि सो पात्रदानकी विधि है दीन अंधादि दुःखित जीवोंको अन्न वस्त्र आदि देना, बंदीतैं छुडावना यह करुणादानकी रीति है।

यद्यपि यह पात्रदान तुल्य नाहीं, तथापि योग्य है, पुण्यका कारण है। अर पर उपकार सो ही पुण्य है। अर जैसे भले क्षेत्रमें बोया बीज बहुत गुणा होय फलै है तैसे शुद्धचित्तकरि पात्रनिकों किया दान अधिक फलकों फलै है, अर जे पापी मिथ्यादृष्टि रागद्वेषादियुक्त व्रतक्रिया-रहित महामानी ते पात्र नाहीं अर दीन हू नाहीं तिनको देना निष्फल है। नरकादिका कारण है। जैसैं ऊसर (कल्लर) खेतविषैं बोया बीज वृथा जाय है। अर जैसैं एक कूपका जल ईखविषैं प्राप्त भया मधुरताकों लहै है अर नींबविषैं गया कटुकताको भजै है, तथा एक सरोवरका जल गायनैं पिया सो दूधरूप होय परणवै है अर सर्पने पिया विष होय परणवै है तैसैं सम्यग्दृष्टि पात्रनिको भक्तिकरि दिया जो दान सो शुभ फलको फलै हैं। अर पापी पाखंडी मिथ्यादृष्टि अभिमानी परिग्रही तिनकों भक्तिकरि दिया दान अशुभ फलकों फलै है। जे मांस-आहारी मद्यपायी कुशीली आपको पूज्य मानै तिनका सत्कार न करना, जिनधर्मियोंकी सेवा करनी, दुःखियोंको देख दया करनी, अर विपरीतियोंपै मध्यस्थ रहना, दया सब जीवोंपर राखनी किसीको क्लेश न उपजावना। अर जे जिनधर्मतैं परान्मुख हैं परवादी हैं ते भी धर्मको करना ऐसा कहैं हैं परंतु धर्मका स्वरूप जानै नाहीं तातैं जे विवेकी हैं ते परखकरि अंगीकार करै हैं। कैसे हैं विवेकी? शुभोपयोगरूप है चित्त जिनका, ते ऐसा विचार करै हैं जे गृहस्थ स्त्रीसंयुक्त आरम्भी परिग्रही हिंसक कामक्रोधादिकर संयुक्त गर्भवंत धनाढ्य अर आपको पूज्य मानै तिनको भक्तिकरि बहुत धन देना ताविषैं कहा फल है अर तिनकरि आप कहा ज्ञान पावै? अहो यह बड़ा अज्ञान है, कुमारगतैं ठगे जीव ताहि पात्रदान कहै हैं। और दुखी जीवोंको करुणादान न करै हैं दुष्ट धनाढ्यनिको सर्व अवस्थामें धन देय है सो वृथा धनका नाश करै हैं, धनवंतनिकों देनेतैं कहा प्रयोजन, दुखियोंको देना कार्यकारी है। धिक्कार है तिन दुष्टनिको जे लोभके उदयकरि खोटे ग्रंथ बनाय मूढ़ जीवनिकों ठगै हैं। जे मृषावादके प्रभावनैं मांसहूँका भक्षण ठहरावैं हैं पापी पाखंडी मांसका भी त्याग न करैं तो

और कहा करेंगे। जे क्रूर मांसका भक्षण करै हैं तथा जो मांसका दान करै हैं ते घोरवेदना-युक्त जो नरक ताविषैं पड़ें हैं और जे हिंसाके उपकरण शस्त्रादिक तथा जे बन्धनके उपाय पांसी इत्यादि तिनका दान करै हैं तथा पंचेंद्रिय पशुओं का दान करै हैं और जे इन दानोंको निरूपण करै हैं ते सर्वथा निंद्य हैं। जो कोई पशुका दान करै और वह पशु बांधनेकरि मारवे-करि ताड़वेकरि दुखी होय तो देनहारेको दोष लगै और भूमिदान भी हिंसाका कारण है। जहां हिंसा तहां धर्म नाहीं। श्रीचैत्यालयके निमित्त भूमिका देना युक्त है और प्रकार नाहीं जो जीव-घातकरि पुण्य चाहै हैं ते जीव पाषाणतैं दुग्ध चाहै हैं, तातैं एकेंद्री आदि पंचेंद्री पर्यंत सब जीवनिको अभयदान देना और विवेकियोंको ज्ञानदान देना, पुस्तकादि देना और औषध अन्न जल वस्त्रादि सबकों देना, पशुओंको सूखे तृण देना और जैसैं समुद्रविषैं सीप मेघका जल पिया सो मोती होय परणवै है, तैसैं संसारविषैं द्रव्यके योगतैं सुपात्रनिकों यव आदि अन्न भी दिये तो महा फलकों फलै हैं अर जो धनवान होय सुपात्रों को श्रेष्ठ वस्तुका दान नाहीं करै हैं सो निंद्य हैं। दान बड़ा धर्म है सो विधिपूर्वक करना पुण्य पापविषैं भाव ही प्रधान है। जो विना भाव दान करै हैं सो गिरिके सिर पर बरसे जल समान हैं, सो कार्यकारी नाहीं, क्षेत्रविषैं बरसै है सो कार्यकारी हैं। जो कोई सर्वज्ञ वीतरागदेवकों ध्यावै है और सदा विधिपूर्वक दान करै है ताके फलको कौन कह सके। तातैं भगवानके प्रतिबिंब तथा जिनमंदिर जिनपूजा जिनप्रतिष्ठा सिद्धक्षेत्रोंकी यात्रा चतुर्विध संघकी भक्ति, शास्त्रोंका सर्व देशोंविषैं प्रचार करना यह धन खर्चनेके सप्त महाक्षेत्र हैं। तिनविषैं जो धन लगावै सो सफल है। तथा करुणादान परोपकारविषैं लागै सो सफल है।

अर जे आयुधका ग्रहण करै हैं ते द्वेषसंयुक्त जानने, जिनके राग-द्वेष है तिनके मोह भी है अर जे कामिनीके संगतैं आभूषणोंको धारण करै हैं ते रागी जानने, अर मोह विना राग-द्वेष होय नाहीं, सकल दोषोंका मोह कारण है जिनके रागादि कलंक है ते संसारी जीव हैं। जिनके ये नाहीं ते भगवान है। जे देश-काल-कामादिके सेवनहारे हैं ते मनुष्य-तुल्य है, तिनमें देवत्व नाहीं; तिनकी सेवा शिवपुरका कारण नाहीं। अर काहूके पूर्वपुण्यके उदयकरि शुभ मनोहर फल होय है। सो कुदेवसेवाका फल नाहीं कुदेवनिकी सेवातैं संसारिक सुख भी न होय तो शिवसुख कहांतैं होय तातैं कुदेवनिको सेवना बालूको पेल तेलका काढ़ना है अर अग्निके सेवनतैं तृषाका बुझावना है जैसैं कोई पंगुको पंगु देशांतर न ले जाय सकै, तैसैं कुदेवोंके आराधनतैं परमपदकी प्राप्ति कदाचित् न होय। भगवान विना और देवोंके सेवनका क्लेश करै सो वृथा है। कुदेवनिमें देवत्व नाहीं। अर जे कुदेवोंके भक्त हैं ते पात्र नाहीं, लोभकरि प्रेरे प्राणी हिंसाकर्मविषैं प्रवर्तैं हैं हिंसाका भय नाहीं, अनेक उपायकर लोकनितैं धन लेय

हैं संसारी लोक भी लोभी सो लोभियोंपै ठगावै हैं, तातैं सर्व दोष-रहित जिन-आज्ञा प्रमाण जो महादान करै सो महाफल पावै, वाणिज्य-समान धर्म है, कभी किसी वाणिज्यविषैं अधिक नफा होय, कभी अल्प होय, कभी टोटा होय, कहूं मूल ही जाता रहै, अल्पतैं बहुत होय भी जाय, बहुतसे अल्प होय जाय अर जैसैं विषका कण सरोवरीमें प्राप्त भया सरोवरीको विषरूप न करै तैसैं चैत्यालयादि-निमित्त अल्प हिंसा सो धर्मका विघ्न न करै, तातैं गृहस्थी भगवानके मंदिर करावैं। कैसे हैं गृहस्थी? जिनेंद्रकी भक्तिविषैं तत्पर हैं अर व्रत क्रियामैं प्रवीण हैं। अपनी विभूतिप्रमाण जिनमंदिर कराय जल चंदन धूप दीपादिकर पूजा करनीं। जे जिनमंदिरादिमें धन खरचैं, ते स्वर्गलोकमें तथा मनुष्यलोकविषैं अत्यंत ऊंचे भोग भोगि परमपद पावै हैं अर जे चतुर्विध संघको भक्तिपूर्वक दान करै हैं ते गुणनिके भाजन हैं, इंद्रादिपदके भोगोंकों पावै हैं तातैं जे अपनी शक्तिप्रमाण सम्यग्दृष्टि पात्रनिकों भक्तिकरि दान करै हैं तथा दुखियोंको दयाभावकरि दान करै हैं सो धन सफल है। अर कुमारगतैं लाग्या जो धन सो चोरनिकरि लूट्या जानो। अर आत्मध्यानके योगतैं केवलज्ञानकी प्राप्ति होय है, जिनको केवलज्ञान उपज्या तिनको निर्वाणपद प्राप्त होय है। सिद्ध सर्व लोकके शिखर तिष्ठै हैं। सर्व बाधारहित अष्टकर्मरहित अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतसुख अनंतवीर्यकरि संयुक्त शरीरतैं रहित अमूर्तिक पुरुषाकार जन्म-मरणतैं रहित अविचल विराजै हैं। जिनका संसारविषैं आगमन नाहीं। मन इंद्रीनतै अगोचर हैं यह सिद्धपद धर्मात्मा जीव पावै हैं। अर पापी जीव लोभरूप पवनसे वृद्धिकौ प्राप्त भई जो दुखरूप अग्नि तामैं, बलते सुकृतरूप जल विना सदा क्लेशकों पावै हैं पाप रूप अन्धकारके मध्य तिष्ठे मिथ्यादर्शनके वशीभूत हैं। केई एक भव्यजीव धर्मरूप सूर्यकी किरणनिकरि पाप तिमिरकों हर केवलज्ञानको पावै हैं अर ये जीव अशुभरूप लोहेके पिंजरेमें पड़े आशारूप पाशकरि बेढ़े धर्मरूप बांधव करि छूटै हैं। व्याकरणहूतैं धर्मशब्दका यही अर्थ होय है जो धर्म आचरता संता दुर्गतिविषैं पड़ते प्राणियोंको थांभै सो धर्म कहिए। ता धर्मका जो लाभ सो लाभ कहिए। जिनशासनविषैं जो धर्मका स्वरूप कह्या है सो संक्षेपसे तुमको कहै हैं धर्मके भेद अर धर्मके फलके भेद एकाग्र मनकर सुनो। हिंसातैं, असत्यतैं, चोरीतैं, कुशीलतैं, धन अर परिग्रहके संग्रहतैं, विरक्त होना इन पापोंका त्याग करना सो महाव्रत कहिये। विवेकियोंको उसका धारण करना, अर भूमि निरख कर चलना, हित-मित संदेहरहित वचन बोलना, निर्दोष आहार लेना, यत्नतैं पुस्तकादि उठावना मेलना, निर्जंतु भूमिविषैं शरीरका मल डारना ये पांच समिति कहिए तिनका पालना यत्नकरि अर मनवचनकायकी जो वृत्ति ताका अभाव ताका नाम तीन गुप्ति कहिए सो परम आदरतैं साधुनिको अंगीकार करनी। क्रोध, मान, माया, लोभ ये कषाय जीवके महाशत्रु हैं। सो क्षमातैं क्रोधको जीतना अर मार्दव कहिए

निर्गर्व परिणाम तिनकरि मनको जीतना, आर्जव कहिए सरल परिणाम निष्कपट भाव ताकरि मायाचारको जीतना, अर संतोषतैं लोभको जीतना, शास्त्रोक्त धर्मके करनहारे जे मुनि तिनको कषायोंका निग्रह करना योग्य है। ये पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, कषाय-निग्रह, मुनिराजका धर्म है अर मुनिका मुख्य धर्म त्याग है जो सर्वत्यागी होय सो ही मुनि है अर स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र ये प्रसिद्ध पांच इंद्री तिनका वश करना सो धर्म है अर अनशन कहिए उपवास, अवमोदर्य कहिए अल्प आहार, व्रतपरिसंख्या कहिये विषम प्रतिज्ञाका धारण अटपटी बात विचारनी, या विधि आहार मिलेगा तो लेवैंगे, नातर नाहीं। अर रसपरित्याग कहिए रसनिका त्याग, विविक्तशय्यासन कहिए एकांत वनविषैं रहना, स्त्री तथा बालक तथा नपुंसक तथा ग्राम्य पशु इनकी संगति साधुओंको न करनी तथा और भी संसारी जीवोंकी संगति न करनी मुनिको मुनिहोकी संगति करनी अर कायक्लेश कहिए ग्रीष्ममें गिरिशिखर, शीतविषैं नदीके तीर, वर्षामें वृक्षके तलैं तीनों कालके तप करना, तथा विषम भूमिविषैं रहना, मासोपवासादि अनेक तप करना, ये षट् बाह्य तप कहे। अब आभ्यंतर षट् तप सुनो—प्रायश्चित कहिए जो कोई मनतैं तथा वचनतैं तथा कायतैं दोष लाग्या सो सरल परिणामकरि श्रीगुरुके निकट प्रकाशकरि तपादि दंड लेना, बहुरि विनय कहिये देव गुरु शास्त्र साधर्मियोंका विनय करना तथा दर्शन ज्ञान चारित्रका आचरण सोही इनका विनय अर इनके जे धारक तिनका आदर करना, आपतैं जो गुणाधिक होय ताहि देखकरि उठ खड़ा होना, सन्मुख जाना, आप नीचे बैठना, उनको ऊंचे बिठाना, मिष्ठ वचन बोलना दुख पीडा मटानी, अर वैयाव्रत कहिए जे तपकरि तप्तायमान है रोगकरि युक्त है गात्र जिनका, वृद्ध हैं अथवा नव वयके जे बालक हैं तिनका नाना प्रकार यत्न करना, औषध पथ्य देना उपसर्ग मेटना, अर स्वाध्याय कहिए जिनशासनका वाचना पूछना, आम्नाय कहिये परिपाटी, अनुप्रेक्षा कहिए बारंबार चितारना, धर्मोपदेश कहिए धर्मका उपदेश देना, अर व्युत्सर्ग कहिये शरीरका ममत्व तजना तथा एक दिवस आदि वर्ष पर्यंत कायोत्सर्ग धरना अर आर्त-रौद्र ध्यानका त्यागकरि धर्मध्यान शुक्लध्यानका ध्यावना ये छह प्रकार आभ्यंतर तप कहे। ये बाह्याभ्यंतर द्वादश तपही सार धर्म हैं। या धर्मके प्रभावसे भव्य जीव कर्मनिका नाश करैं हैं अर तपके प्रभावकरि अद्भुत शक्ति होय है सर्व मनुष्य अर देवोंको जीतनेकूं समर्थ होय है। विक्रियाशक्तिकरि जो चाहै सो करै। विक्रियाके अष्ट भेद हैं। अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व। सो महामुनि तपोनिधि परम शांत हैं, सकल इच्छातैं रहित हैं अर ऐसी सामर्थ्य है चाहैं तो सूर्यका आताप निवारैं, चाहैं तो जल वृष्टि करि क्षणमात्रविषैं जगतको पूर्ण करैं, चाहैं तो भस्म करैं, क्रूर दृष्टिकर देखैं तो प्राण हरैं, कृपा-दृष्टिकर देखैं तो रंकसे राजा करैं, चाहैं तो रत्न-स्वर्णकी वर्षा करैं, चाहै तो पाषाणकी वर्षा करैं इत्यादि सामर्थ्य है; परंतु करै नाहीं। करैं तो चारित्रका नाश

होय। तिन मुनियोंके चरण-रजकरि सर्व रोग जांय, मनुष्योंको अद्भुत विभवके कारण तिनके चरण-कमल हैं। जीव धर्मकर अनंतशक्तिको प्राप्त होय हैं धर्मकर कर्मनिको हरै हैं। अर कदाचित् कोऊ जन्म लेय तौ सौधर्म स्वर्ग आदि सर्वार्थसिद्धिपर्यंत जाय स्वर्गविषैं इंद्रपद पावैं तथा इंद्र समान विभूतिके धारक देव होंय जिनके अनेक स्वर्णके मंदिर, स्वर्णके, स्फटिक मणिके, वैडूर्यमणिके थंभ अर रत्नमई भींति देदीप्यमान अर सुंदर झरोखनिकरि शोभायमान पद्मरागमणि आदि नाना प्रकारकी मणिके शिखर हैं जिनके, अर मोतियोंकी झालरोंसे शोभित अर जिन महलोंमें अनेक चित्राम, सिंहोंके, गजोंके, हंसोंके स्वानोंके, हिरणों मयूर कोकिलादिकोंके दोनों भींतिविषैं रत्नमई चित्राम शोभायमान हैं। चंद्रशालादिकरि युक्त, ध्वजोंकी पंक्तिकरि शोभित, अत्यंत मनके हरण-हारे मंदिर सजे हैं आसनादिकरि संयुक्त जहां नाना प्रकारके वादित्र बाजे हैं, आज्ञाकारी सेवक देव अर महा मनोहर देवांगना, अद्भुत देवलोकके सुख महा सुंदर सरोवर कमलादिक रसयुक्त, कल्पवृक्षोंके वन विमान आदि विभूतियां यह सभी जीव धर्मके प्रभावकरि पावैं हैं। अर कैसे हैं स्वर्गनिवासी देव ? अपनी कांतिकरि अर दीप्तिकरि चांद सूर्यको जीते हैं स्वर्गलोकविषैं रात्रि अर दिवस नाहीं, षट्ऋतु नाहीं, निद्रा नाहीं अर देवोंका शरीर माता पितासे उत्पन्न नाहीं होता। जब अगला देव खिर जाय तब नया देव उपपाद शय्याविषैं उपजै है जैसैं कोई सूता मनुष्य सेजतैं जाग उठै तैसैं क्षणमात्रमें देव उपपाद शय्याविषैं नवयौवनको प्राप्त भया प्रकट होय हैं। कैसा है तिनका शरीर ? सात धातु-उपधातु रहित, निर्मल रज पसेव अर रोगनितैं रहित सुगंध पवित्र कोमल परम शोभायुक्त नेत्रोंको प्यारा ऐसा औपपादिक शुभ वैक्रियक देवोंका शरीर होय सो ये प्राणी पावैं है। जिनके आभूषण महा देदीप्यमान तिनके समूह करि दशों दिशामें उद्योत होय रहा है अर तिन देवनिकै देवांगना महासुंदर हैं कमलोंके पत्र समान सुंदर हैं चरण जिनके, अर केलेके थंभ समान है जंघा जिनकी, कांचीदाम(तगडी)करि शोभित सुंदर कटि अर नितंब जिनके, जैसैं गजनिके घंटीका शब्द होय तैसै कांचीदामकी क्षुद्र घंटिकानिका शब्द होय है। उगते चंद्रमात अधिक कांति धरै हैं, मनोहर हैं स्तन मंडल जिनका, रत्नोंके समूहकरि जीतै अर चांदनीको जीतै ऐसी है प्रभा जिनकी, मालतीकी जो माला ताहूतैं अति कोमल भुजलता है जिनकी, महा अमोलिक वाचाल मणिमई चूड़े तिनकरि शोभित हैं हाथ जिनके, अर अशोकवृक्षकी कोंपल समान कोमल अरुण हैं हथेली जिनकी, अति सुन्दर करकी आंगुली, शंख-समान ग्रीवा, कोकिलहूतैं अति मनोहर हैं कंठ जिनके, अति लाल अति सुंदर रसके भरे अधर, तिनकरि आच्छादित, कुंदके पुष्प समान दंत अर निर्मल दर्पण-समान सुंदर हैं कपोल जिनके, लावण्यताकरि लिप्त भई हैं सर्व दिशा अर अति सुंदर तीक्ष्ण कामके बाण-समान नेत्र सो नेत्रोंकी कटाक्ष कर्णपर्यंत प्राप्त भई हैं, सोई मानों कर्णाभरण भए अर पद्मरागमणि आदि अनेक मणिनिके आभूषण अर मोतियोंके हार तिनकरि मंडित, अर

भ्रमर समान श्याम अति सूक्ष्म अति निर्मल अति चीकने अति सघन वक्रता धरैं लंबे केश अति कोमल शरीर, अति मधुर स्वर, अत्यन्त चतुर सर्व उपचारकी जाननहारी महा सौभाग्यवंती रूपवंती गुणवंती मनोहर क्रीडाकी करणहारी नंदनादि वनोंतैं उपजी जो सुगंध ताहूतैं अति सुगंध है श्वास जिनके, पराए मनका अभिप्राय चेष्टाएं जान जांय ऐसी प्रवीण पंचेंद्रियोंके सुखकी उपजावनहारी मनवांछित रूपकी धरणहारी ऐसी स्वर्गमें जो अप्सरा सो धर्मके फलतैं पाइए है अर जो इच्छा करै सो चितवतमात्र सर्व सिद्ध होंय, इच्छा करै सो ही उपकरण प्राप्त होय, जो चाहैं सो सदा संग ही हैं, देवांगनानिकर देव मनवांछित सुख भोगै हैं। जो देवलोकमें सुख हैं तथा मनुष्यलोकविषैं चक्रवर्त्यादिकनिके सुख हैं सो सर्व धर्मका फल जिनेश्वर देवने कह्या है अर तीनलोकमैं जो सुख ऐसा नाम धरावैं हैं तो सर्व धर्मकरि ही उत्पन्न होय हैं। जे तीर्थंकर तथा चक्रवर्ती बलभद्र कामदेव दि,दाता भोक्ता मर्यादके कर्त्ता,निरन्तर हजारों राजानिकरि तथा देवनिकरि सेइए हैं सो सर्व धर्मका फल है। अर जो इंद्र स्वर्गलोकका राज्य, हजारों जे देव मनोहर-आभूषणके धरणहारे तिनका प्रभुत्व धरै हैं, सो सर्व धर्मका फल है, यह तो सकल शुभोपयोग-रूप व्यवहार धर्मके फल कहे। अर जे महामुनि निश्चय रत्नत्रयके धरणहारे मोह-रिपुका नाशकरि सिद्धिपद पावैं हैं सो शुद्धोपयोगरूप आत्मीक धर्मका फल है सो मुनिका धर्म मनुष्यजन्म विना नहीं पाइए है, तातैं मनुष्य देह सर्व जन्मविषैं श्रेष्ठ है, जैसैं मृग कहिए वनके जीव तिनमें सिंह, अर पक्षियोंविषै गरुड अर मनुष्योंविषै राजा, देवोंविषै इन्द्र, तृणानिविषै शालि, वृक्षनिविषै चंदन अर पाषाणविषै रत्न श्रेष्ठ है, तैसैं सकल योनिविषै मनुष्यजन्म श्रेष्ठ है। तीन लोकविषै धर्म सार है अर धर्मविषै मुनिका धर्म सार है। सो मुनिका धर्म मनुष्य-देहतैं ही होय है तातैं मनुष्य जन्म समान और नाहीं। अनंत काल यह जीव परिभ्रमण करै है तामैं मनुष्य-जन्म कष्ट ही पावै है यह मनुष्य देह महादुर्लभ है। ऐसे दुर्लभ मनुष्यदेहको पाय जो मूढ़ प्राणी समस्त क्लेशनिकरि रहित करणहारा जो मुनिका धर्म अथवा श्रावकका धर्म नाहीं करै है सो बारंबार दुर्गतिविषैं भ्रमण करै है। जैसैं समुद्रविषैं गिरया महागुणनिका धरणहारा रत्न बहुरि हाथ आवना दुर्लभ है, तैसैं भवसमुद्रविषैं नष्ट भया नरदेह बहुरि पावना दुर्लभ है। या मनुष्य-देहविषैं शास्त्रोक्त धर्मका साधनकरि केई मुनिव्रत धर सिद्ध होय हैं अर केई स्वर्गनिवासी देव तथा अहमिंद्रपद पावैं, परंपरा मोक्ष पद पावैं हैं, या भांति धर्म अधर्मके फल केवलीके मुखतैं सुनकरि सब ही सुखको प्राप्त भए। ता समय कमल-सारिखे हैं नेत्र जाके ऐसा कुंभकरण सो हाथ जोड़ नमस्कारकरि पूछता भया, उपज्या है अति आनंद जाके। हे नाथ! मेरे अब भी तृप्ति न भई, तातैं विस्तारकरि धर्मका व्याख्यान विधिपूर्वक मोहि कहो। तब भगवान अनंतवीर्य कहते भए- 'हे भव्य! धर्मका विशेष वर्णन सुनो—जाकरि यह प्राणी संसारके बंधननितैं छूटै सो

धर्म दोय प्रकार है—एक महाव्रतरूप दूजा अणुव्रतरूप। सो महाव्रतरूप यतिका धर्म है, अणुव्रतरूप श्रावकका धर्म है। यति घरके त्यागी हैं, श्रावक गृहवासी हैं। तुम प्रथम ही सर्व पापनिका नाश करणहारा सर्व परिग्रहके त्यागी जे महामुनि तिनका धर्म सुनो।

या अवसर्पिणी कालविषैं अबतक ऋषभदेवतैं लगाय मुनिसुव्रत पर्यंत बीस तीर्थंकर हो चुके हैं अब चार और होंयगे। या भांति अनंत भए अर अनंत होवेंगे सो सबनिका एक मत है। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका समय है। सो अनेक महापुरुष जन्ममरणके दुःखकरि महा भयभीत भए, या शरीरको एरंडकी लकड़ी समान असार जानि सर्वपरिग्रहका त्याग करि मुनिव्रतको प्राप्त भए। ते साधु अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रहत्यागरूप पंच महाव्रत तिनविषैं रत, तत्वज्ञानविषैं तत्पर, पंच समितिके पालनहारे, तीन गुप्तिके धरनहारे, निर्मलचित्त महापुरुष परमदयालु निजदेहविषैं भी निर्ममत्व राग भाव-रहित जहां सूर्य अस्त होय तहां ही बैठ रहैं, कोई आश्रय नाहीं, तिनके कहा परिग्रह होय, पापका उपजावनहारा जो परिग्रह सो तिनके बालके अग्र भागमात्र हू नाहीं, ते महाधीर महामुनि सिंह-समान साहसी, समस्त प्रतिबंध-रहित पवन सारिखे असंगी, तिनके रंचमात्र भी संग नाहीं, पृथिवी समान क्षमावन्त, जल सारिखे विमल, अग्नि सारिखे कर्मको भस्म करनहारे आकाश सारिखे अलिप्त, अर सर्व संबंध रहित, प्रशंसा योग्य है चेष्टा जिनकी, चंद्र-सारिखे सोम्य, सूर्य-सारिखे तिमिरके हरता, समुद्र सारिखे गंभीर, पर्वत सारिखे अचल, काछिवा समान इंद्रियोंके संकोचनहारे, कषायनिकी तीव्रता रहित अट्ठाईस मूलगुण चौरासी लाख उत्तरगुणोंके धरणहारे, अठारह हजार शीलके भेद तिनके धारक, तपोनिधि मोक्षमार्गी जिनधर्ममें लवलीन, जैनशास्त्रोंके पारगामी अर सांख्य, पातंजल, बौद्ध, मीमांसक, नैयायिक, वैशेषिक वेदांती इत्यादि परशास्त्रोंके भी वेत्ता, महाबुद्धिमान सम्यग्दृष्टि यावज्जीव पापनिके त्यागी यम-नियमके धरनहारे परम संयमी, परम त्यागी, निर्गर्व अनेक ऋद्धिसंयुक्त महामंगलमूर्ति जगतके मंडन, महागुणवान, केई एक तो ताही भवमें कर्म काट सिद्ध होंय, कई-एक उत्तमदेव होंय, दोय-तीन भवमें ध्यानाग्निकरि समस्त कर्म काष्ठ को भस्म करि अविनाशी सुखको प्राप्त होय हैं। यह यतीका धर्म कह्या। अब स्नेहरूपी पींजरेमें पड़े जे गृहस्थी तिनका द्वादशव्रतरूप जो धर्म सो सुनो। पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत अर अपनी शक्तिप्रमाण हजारों नियम, त्रसघातका त्याग, अर मृषावादका परिहार, परधनका त्याग, परदारा परित्याग, अर परिग्रहका परिमाण, तृष्णाका त्याग ये पांच अणुव्रत अर हिंसादिका प्रमाण, देशोंका प्रमाण, जहां जिनधर्मका उद्योत नाहीं तिन देशनिका त्याग, अनर्थदंडका त्याग ये तीन गुणव्रत हैं अर सामायिक, प्रोषधोपवास, अतिथिसंविभाग, भोगोपभोगपरिमाण, ये चार शिक्षाव्रत ये बारह व्रत हैं अब इन व्रतोंके भेद सुनो। जैसैं अपना शरीर आपको प्यारा है तैसा

सबनिको प्यारा है ऐसा जान सर्वजीवनिकी दया करनी। उत्कृष्ट धर्म जीव दया ही भगवानने कह्या है, जे निर्दई जीव हनै हैं तिनके रंचमात्र भी धर्म नाहीं अर जामैं परजीवनिको पीड़ा होय सो वचन न कहना पर-बाधाकारी वचन सोई मिथ्या, अर परउपकाररूप वचन सोई सत्य। अर जे पापी चोरी करें पराया धन हरैं हैं ते इ भवमें बध-बंधनादि दुख पावै हैं, कुमरणतैं मरैं हैं अर परभव नरकमैं पडै हैं, नाना प्राकरके दुख पावै हैं चोरी दुःखका मूल है, तातैं बुद्धिमान सर्वथा पराया धन न हरै हैं। सो जाकरि दोनों लोक बिगडैं ताहि कैसैं करैं। अर सर्पिणी-समान पर-नारीकों जानिकरि दूरहीतैं तजो, यह पापिनी पर-नारी काम-लोभके वशीभूत पुरुषकी नाश करनहारी है। सर्पिणी तो एक भव ही प्राण हरै है। अर परनारी अनन्त भव प्राण हरै है। कुशीलके पापतैं निगोदमें जाय हैं सो अनंत जन्म मरण करै हैं अर याही भवविषैं मारना ताडना आदि अनेक दुःख पावै हैं। यह परदारा-संगम नरक-निगोदके दुःसह दुःखनिका देनहारा है। जैसैं कोई पर पुरुष अपनी स्त्रीका पराभव करै तो आपकों बहुत बुरा लागै अति दुःख उपजै, तैसैं ही सकलकी व्यवस्था जाननी। अर परिग्रहका परिमाण करना, बहुत तृष्णा न करनी जो यह जीव इच्छाकों न रोकै तो महा दुखी होय। यह तृष्णा ही दुःखका मूल है, तृष्णा-समान और व्याधि नाहीं। या ऊपर एक कथा है सो सुनो—एक भद्र, दूजा कांचन ये दोय पुरुष हुते तिनमैं भद्र फलादिकका बेचनहारा सो एक दीनारमात्र परिग्रहका परिमाण करता भया। एक दिवस मार्गमें दीनारोंका बटुवा पड्या देख्या तामैंसों एक दीनार कौतूहलकरि लीनी अर दूजा कांचन है नाम जिसका तानैं सर्व बटुवा ही उठाय लीया सो दीनारनिका स्वामी राजा तानैं बटुवा उठावता देखि कांचनको पिटाया अर गामतैं काढ्या अर भद्रने एक दीनार लीनी हुती सो राजाको विना मांगे स्वयमेव सौंप दीनी। राजाने भद्रका बहुत सन्मान किया ऐसा जानकरि बहुत तृष्णा न करनी। संतोष धरना ये पांच अणुव्रत कहे।

बहुरि चार दिशा, चार विदिशा एक अधः एक ऊर्ध्व, इन दश दिशानिका परिमाण करना कि इस दिशाको एती दूर जाऊंगा, आगैं न जाऊंगा। बहुरि अपध्यान कहिए खोटा चिंतवन, पापोदेश कहिए अशुभ कार्यका उपदेश, हिंसादान कहिए विष फांसी लोहा सीसा खड्गादि शस्त्र, तथा चाबुक इत्यादि जीवनिके मारवेके उपकरण मांग्या देना, तथा जे जाल रस्सा इत्यादि बंधनके उपाय तिनका व्यापार अर श्वान मार्जार चीतादिकका पालना अर कुश्रुति-श्रवण कहिए कुशास्त्र का श्रवण, प्रमादचर्या कहिए प्रमादकरि वृथा छैकायके जीवोंकी विराधना करनी, ये पांचप्रकारके अनर्थदंड तजने, अर भोग कहिए आहारादिक उपभोग कहिए स्त्री वस्त्राभूषणादिक, तिनका परिमाण करना अर्थात् बे विचार जे अभक्ष्य-भक्षणादि, परदारा-सेवनादि, अयोग्य विषय हैं तिनका तो सर्वथा त्याग अर जे योग्याहार तथा स्वदार-सेवनादि तिनका नियमरूप परिमाण यह भोगोपभोगपरिसंख्याव्रत कहिए। ये तीन गुणव्रत

कहे अर सामायिक कहिए समताभाव पंचपरमेष्ठी अर जिनधर्म, जिनवचन, जिनप्रतिमा, जिनमंदिर तिनका स्तवन अर सर्व जीवनिसों क्षमाभाव सो प्रभात मध्यान्ह सायंकाल छै छै घड़ी तथा चार २ घड़ी तथा दोय दोय घड़ी अवश्य करना अर प्रोषधोपवास कहिये दोय आठैं,दोय चौदस, एक मासमें चार उपवास षोड़श पहरके पौषें संयुक्त अवश्य करनें। सोलह पहरतक संसारके कार्यका त्याग करना,आत्मचिंतवन तथा जिनभजन करना। अर अतिथिसंविभाग कहिए अतिथि जे परिग्रहरहित मुनि जिनके तिथिवारका विचार नाहीं सो आहारके निमित्त आवैं महागुणोंके धारक तिनको विधिपूर्वक अपने वित्तानुसार बहुत आदरतैं योग्य आहार देना अर आयुके अंत विषै अनशन व्रतधर समाधिमरण करना सो सल्लेखनाव्रत कहिए। ये चार शिक्षाव्रत कहे। या प्रकार पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत ये बारह व्रत जानने। जे जिनधर्मी हैं तिनके मद्य मांस मधु मांखण उदुंबरादि अयोग्य फल, रात्रिभोजन बींध्या अन्न, अनछाना जल, परदारा तथा दासी वेश्यासंगम इत्यादि अयोग्य क्रियाका सर्वथा त्याग होय है यह श्रावकके धर्म पालकर समाधिमरण कर उत्तम देव होय फिर उत्तम मनुष्य होय सिद्धपद पावै है अर जे शास्त्रोक्त आचरण करनेको असमर्थ हैं न श्रावकके व्रत पालैं,न यतिके, परन्तु जिनभाषितकी दृढ श्रद्धा है ते भी निकट संसारी हैं, सम्यक्तके प्रसादसे व्रतको धारण करि शिवपुरको प्राप्त होय हैं। सर्व लाभमें श्रेष्ठ जो सम्यग्दर्शनका लाभ ताकरि ये जीव दुर्गतिके त्रासतैं छूटै है। जो प्राणी भावतैं श्रीजिनेन्द्रदेवको नमस्कार करै हैं सो पुण्याधिकारी पापोंके क्लेशतैं निवृत्त होय हैं अर जो प्राणी भावकरि सर्वज्ञदेवको सुमरै है ता भव्यजीवके अशुभकर्म कोटि भवके उपार्जे तत्काल क्षय होय हैं, अर जो महाभाग्य त्रैलोक्यविषैं सार जो अरहंतदेव तिनको हृदयविषैं धारै हैं सो भवकूपविषैं नाहीं परै हैं। ताके निरन्तर सर्व भाव प्रशस्त हैं अर ताकों अशुभ स्वप्न न आवै, शुभ स्वप्न ही आवैं। अर शुभ शकुन ही होय हैं। अर जो उत्तम जन "अर्हते नमः" यह वचन भावतैं कहै हैं ताके शीघ्र ही मलिन कर्मका नाश होय है या विषै संदेह नाहीं। मुक्तियोग्य प्राणीका चित्तरूप कुमुद परम निर्मल वीतराग जिनचंद्रकी कथारूप जो किरण तिनके प्रसंगतैं प्रफुल्लित होय है। अर जो विवेकी अरहंत सिद्ध साधुवों ताईं नमस्कार करै हैं सो सर्व जिनधर्मीनिका प्यारा है। ताहि अल्प संसारी जानना। अर जो उदारचित्त श्रीभगवानके चैत्यालय करावै, जिनबिंब पधरावै है, जिनपूजा करै है, जिनस्तुति करै है, तिनकै या जगतविषैं कछु दुर्लभ नाहीं। नरनाथ कहिए राजा होहु, अथवा कुटुंबी कहिए किसान होहु, धनाढ्य होहु तथा दलिद्री होहु, जो मनुष्य धर्मकरि युक्त है सो सर्व त्रैलोक्यविषैं पूज्य है। जे नर महाविनयवान हैं अर कृत्य अकृत्यके विचारविषैं प्रवीण हैं जो यह कार्य करना यह न करना ऐसा विवेक धरै हैं, ते विवेकी धर्मके संयोगतैं गृहस्थनिविषैं मुख्य हैं। जे जन मधु मांस मद्य आदि अभक्ष्यका

संसर्ग नाहीं करैं हैं तिनहीका जीवन सफल है। अर शंका कहिए जिन वचनोंमें संदेह, कांक्षा कहिये या भवविषैं अर परभवविषैं भोगनिकी वांछा, विचिकित्सा कहिए रोगी वा दुखीकों देख घृणा करनी आदर नाहीं करना, अर आत्मज्ञानतैं दूर जे परदृष्टि कहिए जिनधर्मतैं परान्मुख मिथ्यामार्गी तिनकी प्रशंसा करनी, अर अन्य शासन कहिए हिंसामार्ग ताके सेवनहारे जे निर्दयी मिथ्यादृष्टि तिनके निकट जाय स्तुति करनी ये पांच सम्यग्दर्शनके अतीचार हैं। तिनके त्यागी जे जंतु कहिए प्राणी ते गृहस्थिनिविषैं मुख्य हैं। अर जो प्रियदर्शन कहिए प्यारा है दर्शन जाका, सुंदर वस्त्राभरण पहिरे सुगंध शरीर, मार्ग चलते धरतीको देखता निर्विकार जिनमंदिरमें जाय हैं, शुभ कार्यनिविषैं उद्यमी ताके पुण्यका पार नाहीं। अर जो पराए द्रव्यको तृणसमान देखैं हैं, अर परजीव को आप समान देखैं हैं, अर परनारीको माता समान देखै हैं सो धन्य हैं। अर जाके ये भाव हैं ऐसा दिन कब होयगा जो मैं जिनेंद्रीदीक्षा लेयकरि महामुनि होय पृथ्वी विषैं निर्द्वंद्व विहार करूंगा, ये कर्म-शत्रु अनादिके लगे हैं तिनका क्षयकरि कब सिद्धपद प्राप्त करूं, या भांति निरंतर ध्यान-कर निर्मल भया है चित्त जाका ताके कर्म कैसैं रहैं, भयकरि भाग जांय। केयक विवेकी सात आठ भवमें मुक्ति जाय है, कैयक दोय तीन भवविषैं संसारसमुद्रके पार होय हैं, कैयक चरमशरीरी उग्र तपकरि शुद्धोपयोगके प्रसादतैं तद्भव मुक्त होय हैं। जैसैं कोई मार्गका जाननहारा पुरुष शीघ्र चलै जो शीघ्र ही स्थानकों जाय पहुचै, अर कोई धीरे २ चलै तो घने दिनमें जाय पहुंचै, परन्तु मार्ग चलै सो पहुंचै ही अर जो मार्ग ही न जानै अर सौ-सो योजन चालै तो भी भ्रमता ही रहै इष्ट स्थानको न पहुंचे। तैसैं मिथ्यादृष्टि उग्र तप करैं तो भी जन्म-मरणवर्जित जो अविनाशीपद ताहि न प्राप्त होय। संसार वनविषैं ही भ्रमैं, नहीं पाया है मुक्तिको मार्ग तिनने। कैसा है संसार वन? मोहरूप अंधकारकरि आच्छादित है अर कषायरूप सर्पनिकरि भरया है। जिस जीवके शील नाहीं, व्रत नाहीं, सम्यक्त नाहीं, त्याग नाहीं, वैराग्य नाहीं, सो संसारसमुद्रको कैसैं तिरैं। जैसैं विंध्याचल पर्वततैं चाल्या जो नदीका प्रवाह ताकरि पर्वत-समान ऊंचे हाथी बह जांय, तहां एक शशा क्यों न बहैं? तैसैं जन्म जरा मरणरूप भ्रमणको धरै संसाररूप जो प्रवाह ताविषैं जे कुतीर्थी कहिए मिथ्यामार्गी अज्ञान तापस हैं तेई डूबै हैं फिर तिनके भक्तोंका कहा कहना? जैसैं शिला जलविषैं तिरवे समर्थ नाहीं तैसैं परिग्रहके धारी कुदृष्टि शरणागतिनिकों तारवे समर्थ नाहीं। अर जे तत्त्वज्ञानी तपकरि पापनि-के भस्म करणहारे हलके होय गए हैं कर्म जिनके, ते उपदेशथकी प्राणियोंको तारने समर्थ हैं। यह संसार-सागर महाभयानक है। यामैं यह मनुष्यक्षेत्र रत्नद्वीप समान है सो महा कष्टतैं पाइए है, तातैं बुद्धिवंतनिको या रत्नदीपविषैं नेमरूप रत्न ग्रहण करने अवश्य योग्य हैं। यह प्राणी या देहको तजकरि परभवविषैं जायगा अर जैसैं कोई मूर्ख तागाके अर्थि महामणिके हारका तागा निकालनेको महामणियोंका चूर्ण करै तैसैं यह जड़बुद्धि विषयके अर्थ धर्मरत्नको चूर्ण करै

है अर ज्ञानी जीवोंको सदा द्वादश अनुप्रेक्षाका चिंतवन करना ये शरीरादि सर्व अनित्य हैं, आत्मा नित्य है या संसारविषैं कोई शरण नाहीं, आपको आप ही शरण है तथा पंच परमेष्ठीका शरण है। अर संसार महा दुखरूप है चतुर्गतिविषैं काहू ठौर सुख नाहीं,एक सुखका धाम सिद्धपद है। यह जीव सदा अकेला है याका कोई संगी नाहीं। अर सर्व द्रव्य जुदे जुदे हैं, कोई काहूसों मिलै नाहीं। अर यह शरीर महा अशुचि है, मलमूत्रका भरया भाजन है, आत्मा निर्मल है अर मिथ्यात्व अव्रत कषाय योग प्रमादनिकरि कर्मका आस्रव होय है अर व्रत समिति गुप्ति दशलक्षण धर्म अनुप्रेक्षानिका चिंतवन,परीषहजय चारित्रकरि संवर होय है आस्रवका रोकना सो संवर। अर तपकर पूर्वोपार्जित कर्मकी निर्जरा होय है अर यह लोक षट्द्रव्यात्मक अनादि अकृत्रिम शाश्वत है, लोकके शिखर सिद्धलोक है लोकालोकका ज्ञायक आत्मा है अर जो आत्मस्वभाव सो ही धर्म है, जीवदया धर्म है अर जगतविषैं शुद्धोपयोग दुर्लभ है सोई निर्वाणका कारण है। या प्रकार द्वादश अनुप्रेक्षा विवेकी सदा चिंतवै। या भांति मुनि अर श्रावकके धर्म कहे। अपनी शक्ति-प्रमाण जो धर्म सेवै उत्कृष्ट मध्यम तथा जघन्य सो सुरलोकादिविषैं तैसा ही फल पावै। या भांति केवली कही तब भानुकर्ण कहिए कुंभकर्णने केवलीसों पूछी--हे नाथ! भेदसहित नियमका स्वरूप जानना चाहूं हूं। तब भगवानने कही--हे कुंभकर्ण! नियममें अर तपमें भेद नाहीं, नियमकरि युक्त जो प्राणी सो तपस्वी कहिए तातैं बुद्धिमान नियमविषैं सर्वथा यत्न करै। जेता अधिक नियम करै सो ही भला, अर जो बहुत न बनै तो अल्प ही नियम करना परंतु नियम विना न रहना। जैसैं, बनै सुकृतका उपार्जन करना। जैसैं मेघकी बूंद परै हैं तिन बूंदनिकरि महानदीका प्रवाह होय जाय है सो समुद्रविषैं जाय मिलै है, तैसैं जो पुरुष दिनविषैं एक मुहूर्तमात्र भी आहारका त्याग करै सो एक मासमें एक उपवासके फलकों प्राप्त होय ताकरि स्वर्गविषैं बहुत काल सुख भोग, मनवांछित भोग प्राप्त होय। जो कोई जिनमार्गकी श्रद्धा करता संता यथाशक्ति तप नियम करै ता महात्माके दीर्घकाल स्वर्गविषैं सुख होय। बहुरि स्वर्गतैं चयकर मनुष्यभवविषैं उत्तम भोग पावै है।

एक अज्ञान तापसीकी पुत्री वनविषैं रहै सो महादुखवंती वदरीफल (बेर) आदि कर आजीविका पूर्ण करै तानैं सत्संगतैं एक मुहूर्तमात्र भोजनका नियम लिया, ताके प्रभावतैं एक दिन राजाने देखी आदरतैं परणी बहुत संपदा पाई अर धर्मविषैं बहुत सावधान भई, अनेक नियम आदरे सो जो प्राणी कपटरहित होय जिनवचनकों धारण करै सो निरंतर सुखी होय, परलोकमें उत्तमगति पावै। अर जो दो मुहूर्त दिवस प्रति भोजनका त्याग करै ताके एकमास विषैं दोय उपवासका फल होय। तीस मुहूर्तका एक अहोरात्रि गिनो। अर तीनमुहूर्त प्रति दिन अन्न जलका त्यागकरै तो एक मासविषैं तीन उपवासका फल होय। या भांति जेता अधिक नियम तेता ही अधिक फल। नियमके प्रसादकरि ये प्राणी स्वर्गविषैं अद्भुत सुख भोगै हैं

अर स्वर्गतैं चयकर अद्भुत चेष्टाके धरणहारे मनुष्य होय हैं। महाकुलवंती महारूपवंती महागुणवंती महालावण्यकर लिप्त मोतियोंके हार पहरैं। अर मनके हरनहारे जे हाव भाव विलास विभ्रम तिनकों धरें जे शीलवंती स्त्री, तिनके पति होय हैं अर स्त्री स्वर्गतैं चयकर बड़े कुलविषैं उपजि बड़े राजनिकी रानी होय हैं,लक्ष्मी समान है स्वरूप जिनका। अर जो प्राणी रात्रिभोजनका त्याग करैं हैं अर जलमात्र नाहीं ग्रहै हैं ताके अति पुण्य उपजै है पुण्यकरि अधिक प्रताप होय है अर जो सम्यग्दृष्टि व्रत धारैं ताकैं फलका कहा कहना? विशेष फल पावै, स्वर्गविषैं रत्नमई विमान तहां अप्सरावोंके समूहके मध्यमें बहुतकाल धर्मके प्रभावकरि तिष्ठै है। बहुरि दुर्लभ मनुष्य देही पावै तातैं सदा धर्मरूप रहना, अर सदा जिनराजकी उपासना करनी। जे धर्मपरायण है तिनको जिनेन्द्रका आराधन ही परमश्रेष्ठ है। कैसे है जिनेंद्रदेव? जिनके समोशरणकी भूमि रत्न-कांचनकर निर्मापित देव मनुष्य तिर्यंचनिकर वंदनीक है। जिनेंद्रदेव आठ प्रातिहार्य चौंतीस अतिशय महा अद्भुत हजारों सूर्यसमान तेज महा सुंदर रूप नेत्रोंको सुखदाता है, जो भव्य जीव भगवानकों भावकर प्रणाम करैं सो विचक्षण थोड़े ही कालविषैं संसार-समुद्रको तिरैं।

श्रीवीतरागदेवके सिवाय कोई दूसरा जीवनिको कल्याणकी प्राप्तिका उपाय और नाहीं, तातैं जिनेंद्रचंद्रहीका सेवन योग्य है अर अन्य हजारों मिथ्यामार्ग उवट मार्ग हैं तिनविषैं प्रमादी जीव भूल रहे हैं, तिन कुतीर्थीनिके सम्यक्त नाहीं। अर मद्य मांसादिकके सेवनतैं दया नाहीं। अर जैनविषैं परमदया है, रंचमात्र भी दोषकी प्ररूपणा नाहीं। अर अज्ञानी जीवोंके यह बडी जड़ता है जो दिवसमैं आहारका त्याग करैं अर रात्रिमें भोजनकर पाप उपार्जैं। चार पहर दिन अनशन व्रत किया ताका फल रात्रिभोजनतैं जाता रहै। महापापका बंध होय, रात्रिका भोजन महा अधर्म जिन पापियोंने धर्म कह कलप्या, कठोर है चित्त जिनका तिनको प्रतिबोधना बहुत कठिन है। जब सूर्य अस्त होय जीव-जंतु दृष्टि न आवैं तब जो पापी विषयनिका लालची भोजन करै है सो दुर्गतिके दुखकों प्राप्त होय है। योग्य अयोग्यको नाहीं जानै है। जो अविवेकी पापबुद्धि अंधकारके पटल कर अच्छादित भए हैं नेत्र जाके, रात्रिको भोजन करै हैं सो मक्षिका कीट केशादिकका भक्षण करै हैं। जो रात्रि भोजन करै हैं सो डाकिनी, राक्षस श्वान, मार्जार, मूसा आदिक मलिन प्राणियोंका उच्छिष्ट आहार करै हैं। अथवा बहुत प्रपंचकर कहा? सर्वथा यह व्याख्यान है कि जो रात्रिको भोजन करै है सो सर्व अशुचिका भोजन करै है, सूर्यके अस्त भये पीछे कछु दृष्टि न आवै तातैं दोय मुहूर्त दिवस बाकी रहे तबतैं लेकर दोय मुहूर्त दिन चढे तक विवेकियोंको चौविध आहार न करना। अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य ये चार प्रकारके आहार तजने। जे रात्रि भोजन करै हैं मनुष्य नहीं पशु हैं, जो जिनशासनतैं

विमुख व्रत नियमसे रहित रात्रि-दिवस भखवै ही करै हैं सो परलोकविषैं कैसै सुखी होय ? जो दयारहित जीव जिनेंद्रदेवकी जिनधर्मकी अर धर्मात्माओंकी निंदा करै है सो परभवमें महा नरकमें जाय हैं अर नरकतैं निकसकर तिर्यंच तथा मनुष्य होय सो दुर्गंधमुख होय हैं। मांस, मद्य, मधु, निशिभोजन, चोरी, अर परनारी जो सेवै हैं सो दोनों जन्म खोवें हैं। जो रात्रिभोजन करै है सो अल्प-आयु हीन व्याधि-पीडित सुख-रहित महादुखी होय हैं। रात्रिभोजनके पापतैं बहुतकाल जन्म मरणके दुख पावे हैं, गर्भवासविषैं बसै हैं, रात्रिभोजी अनाचारी, शूकर, कूकर, गर्दभ मार्जार, काग, बनि नरक-निगोद, स्थावर, त्रस, अनेक योनियोंमें बहुत काल भ्रमण करै हैं हजारों अवसर्पिणीकाल अर हजारों उत्सर्पिणी काल कुयोनिनविषैं दुःख भोगे हैं। जो कुबुद्धि निशिभोजन करै हैं सो निशाचर कहिए राक्षस-समान है अर जे भव्यजीव जिनधर्मको पाकर नियमविषैं तिष्ठे हैं, सो समस्त पापोंको भस्मकर मोक्षपदको पावै हैं। जो व्रत लेयकरि भंग करै सो दुःखी ही हैं। जे अणुव्रतोंमें परायण रत्नत्रयके धारक श्रावक हैं ते दिवसविषैं ही भोजन करैं, दोषरहित योग्य आहार करैं जे दयावान रात्रिभोजन न करैं ते स्वर्गविषैं सुख भोगकर तहांतैं चयकर चक्रवर्त्यादिकके सुख भोगै हैं, शुभ है चेष्टा जिनकी उत्तम व्रत-नियम चेष्टाके धरनहारे सौधर्मादि स्वर्गविषैं ऐसे भोग पावैं जो मनुष्योंको दुर्लभ हैं अर देवोंतैं मनुष्य होय सिद्धपद पावैं हैं। कैसे मनुष्य होय ? चक्रवर्त्ती, कामदेव, बलदेव, महामंडलीक, मंडलीक महाराजा, राजाधिराज महाविभूतिके धनी, महागुणवान, उदारचित्त, दीर्घआयु, सुन्दररूप, जिनधर्मके मर्मी, जगतके हितु, अनेक नगर ग्रामादिकोंके अधिपति,नानाप्रकारके बाहनोंकर मंडित, सर्वलोकके वल्लभ, अनेक सामंतोंके स्वामी, दुस्सह तेजके धारनहारे ऐसे राजा होय हैं अथवा राजावोंके मंत्री पुरोहित सेनापति राजश्रेष्ठी तथा श्रेष्ठी बड़े उमराव महासामंत मनुष्योंमें यह पद रात्रिभोजनके त्यागी पावै हैं। देवनिके इंद्र, भवनवासियोंके इंद्र चक्रके धनी मनुष्योंके इंद्र महालक्षणोंकरि संपूर्ण दिन-भोजनतैं होय हैं। सूर्य सारिखे प्रतापी, चंद्रमा सारिखे सौम्यदर्शन, अस्तको प्राप्त न होय प्रताप जिनका, देवनि-समान हैं भोग जिनके ऐसे तेई होंइ जे सूर्य अस्त भए पीछें भोजन न करें अर स्त्री रात्रिभोजनके पापतैं माता पिता भाई कुटुंबरहित अनाथ कहिए पतिरहित अभागिनी शोक दरिद्रकर पूर्ण, रूक्ष फटे अधर, हस्त-पादादि सूका शरीर, चिपटी नासिका, जो देखे सो ग्लानि करै, दुष्टलक्षण बुरी, मांजरी आंधी, लूली, गूंगी बहरी, बावरी, कानी, चीपडी, दुर्गंधयुक्त, स्थूल अधर खोटे कर्ण, भूरे ऊंचे बुरे सिरके केश, तूंबडीके बीज समान दांत, कुवर्ण, कुलक्षण, कांतिरहित, कठोर अंग, अनेक रोगोंकी भरी,मलिन फटे वस्त्र, उच्छिष्टकी भक्षणहारी, पराई मजूरी करणहारी नारी होय है। रात्रिभोजनकी करणहारी नारी जो पति पावै तो कुरूप कुशील कोढ़ी बुरे कान, बुरी नाक, बुरी आंख चिंतावान

धन कुटुंबरहित ऐसा पावै। रात्रिभोजनतैं विधवा बालविधवा महादुखवती, जल काष्ठादिक भारके वहनहारी, दुःखकरि भरै है उदर जाका, सर्व लोग करै हैं अपमान जाका, वचनरूप वसूलोंकर छीला है चित्त जाका, अनेक फोडा फुनसीकी धरणहारी, ऐसी नारी होय है। अर जे नारी शीलवंती शांत है चित्त जिनका, दयावंती रात्रिभोजनका त्याग करै हैं, ते स्वर्गविषैं मनवांछित भोग पावै हैं। तिनकी आज्ञा अनेक देव देवी सिरपर धारै हैं, हाथ जोड सिर निवाय सेवा करै हैं।

स्वर्गमें मनवांछित भोग कर और महा लक्ष्मीवान ऊंच कुलमें जन्म पावै हैं, शुभ लक्षण संपूर्ण सर्वगुणमंडित सर्वकलाप्रवीण, देखनहारोंके मन और नेत्रोंको हरणहारी, अमृत-समान वचन बोले, आनंदका उपजावनहारी, जिनके परिणवेकी अभिलाषा चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, तथा विद्याधरोंके अधिपति राखें, विजुरी समान है कांति जिनकी, कमल समान है वदन जिनका, सुंदर कुंडल आदि आभूषणनिकी धरणहारी, सुंदर वस्त्रोंकी पहरनहारी नरेंद्रकी रानी दिनमें भोजनतैं होय हैं। जिनके मनवांछित अन्न धन होय हैं और अनेक सेवक नानाप्रकारकी सेवा करैं, जे दयावंती रात्रिविषैं भोजन न करैं श्रीकांत सुप्रभा सुभद्रा लक्ष्मी तुल्य होवें। तातैं नर अथवा नारी नियमविषैं है चित्त जिनका ते निशिभोजनका त्याग करैं। यह रात्रिभोजन अनेक कष्टका देनहारा है, रात्रिभोजनके त्यागविषैं अति अल्प कष्ट है परंतु याके फलकरि अति उत्कृष्ट होय है,तातैं विवेकी यह व्रत आदरैं,अपने कल्याणको कौन न वांछै। धर्म तो सुखकी उत्पत्तिका मूल है और अधर्म दुखका मूल है,ऐसा जानकर धर्मको भजो,अधर्मको तजो। यह वार्ता लोकविषैं समस्त बाल-गोपाल जानै हैं जो धर्मतैं सुख होय है अर अधर्मकरि दुःख होय है। धर्मका माहात्म्य देखो जाकरि देवलोकके च्ये उत्तम मनुष्य होय हैं,जल-स्थलके उपजे जे रत्न तिनके स्वामी अर जगतकी मायातैं उदास परंतु केयक दिनतक महाविभूतिके धनी होय गृहवास भोगै हैं,जिनके स्वर्ण रत्न वस्त्र धान्यनिके अनेक भंडार हैं,जिनके विभवकी बड़े २ सामंत नानाप्रकारके आयुधोंके धारक रक्षा करैं तिनके बहुत हाथी घोड़े रथ पयादे बहुत गाय भैंस अनेक देश ग्राम नगर मनके हरनहारे पांच इंद्रियोंके विषय अर हंसनीकीसी चाल चलें अति सुंदर शुभ लक्षण मधुर शब्द नेत्रोंको प्रिय मनोहर चेष्टाकी धरणहारी नानाप्रकार आभूषणकी धरणहारी स्त्री होय हैं। सकल सुखका मूल जो धर्म है ताहि कैयक मूर्ख जानै ही नाहीं, तातैं तिनके धर्मका यत्न नाहीं अर कैयक मनुष्य सुनकर जानै हैं जो धर्म भला है परंतु पापकर्मके वशतैं अकार्यविषैं प्रवर्तैं हैं सुखका उपाय जो धर्म ताहि नाहीं सेवैं हैं। अर कैयक अशुभकर्मके उपशान्त होते उत्तम चेष्टाके धारणहारे श्रीगुरुके निकट जाय धर्मका स्वरूप उद्यमी होय पूछै हैं। ते श्रीगुरुके वचन-प्रभावतैं वस्तुका रहस्य जान-कर श्रेष्ठ आचरणको आचरै हैं। ये नियम जे धर्मात्मा बुद्धिमान पापक्रियातैं रहित होयकर करैं

हैं ते महा गुणवंत स्वर्गविषैं अद्भुत सुख भोगै हैं परंपराय मोक्ष पावै हैं। जे मुनिराजोंको निरंतर आहार देय हैं अर जिनके ऐसा नियम है कि मुनिके आहारका समय टार भोजन करैं, पहिले न करैं ते धन्य हैं तिनके दर्शनकी अभिलाषा देव राखै हैं। दानके प्रभावकरि मनुष्य इंद्रका पद पावै अथवा मनवांछित सुखका भोक्ता इंद्रके बराबरके देव होय हैं। जैसैं वटका बीज अल्प है सो बडा वृक्ष होय परणवै है, तैसैं दान तप अल्प भी महाफलके दाता हैं। सहस्रभट सुभटने यह व्रत लिया हुता कि मुनिके आहारकी वेला उलंघकरि भोजन करूंगा सो एक दिन ऋद्धिके धारी मुनि आहारकों आए, सो निरंतराय आहार भया तब रत्नवृष्टि आदि पंचाश्चर्य सुभटके घर भए। वह सहस्रभट धर्मके प्रसादतैं कुवेरकांत सेठ भया। सबके नेत्रोंको प्रिय, धर्मविषैं जाकी बुद्धि सदा आसक्त है, पृथ्वीविषै विख्यात है नाम जाका, उदार पराक्रमी महा धनवान जाके अनेक सेवक जैसैं पूर्णमासीका चंद्रमा तैसा कांतिधारी परमभोगोंका भोक्ता, सर्व शास्त्रप्रवीण पूर्वधर्मके प्रभावकरि ऐसा भया। बहुरि संसारतैं विरक्त होय जिनदीक्षा आदरी संसारकों पार भया तातैं जे साधुके आहारके समयतैं पहिले आहारके न करनेका नियम धारैं ते हरिषेण चक्रवर्तीकी नाई महा उत्सवकों प्राप्त होय हैं। हरिषेण चक्रवर्ती याही व्रतके प्रभाव करि महा पुण्यको उपार्जन करि अनन्त लक्ष्मीका नाथ भया। ऐसे ही जे सम्यग्दृष्टि समाधानके धारी भव्य जीव मुनिके निकट जायकर एकबार भोजनका नियम करै हैं, ते एकभुक्तिके प्रभावकर स्वर्ग विमानविषै उपजै हैं। जहां सदा प्रकाश है अर रात्रि दिवस नाहीं, निद्रा नाहीं, तहां सागरांपर्यंत अप्सरावोंके मध्य रमै हैं। मोतिनके हार रत्नोंके कड़े, कटिसूत्र मुकुट बाजूबंद इत्यादि आभूषण पहरें जिनपर छत्र फिरें, चमर ढुरें ऐसे देवलोकके सुखभोग चक्रवर्त्यादि पद पावे हैं। उत्तम व्रतोंविषै आसक्त जे अणुव्रतके धारक श्रावक शरीरको विनाशीक जानकर शांत भया है हृदय जिनका, अष्टमी चतुर्दशीका उपवास शुद्धमन होय प्रोषध संयुक्त धारे हैं ते सौधर्मादि सोलहवें स्वर्गविषैं उपजै हैं बहुरि मनुष्य होय भववनको तजै हैं, मुनिव्रतके प्रभावकरि अहमिंद्रपद तथा मुक्तिपद पावै हैं। जे व्रत गुणशील तपकर मंडित हैं ते साधु जिनशासनके प्रसादकरि सर्वकर्म-रहित होय सिद्धनिका पद पावै हैं। जे तीनों कालविषैं जिनेंद्रदेवकी स्तुति कर मन वचन कायकरि नमस्कार करै हैं अर सुमेरु पर्वत सारिखे अचल मिथ्यास्वरूप पवनकर नाहीं चलै है, गुणरूप गहने पहरैं, शीलरूप सुगंध लगावै हैं सो कईएक भव उत्तम देव उत्तम मनुष्यके सुख भोगकर परम स्थानको प्राप्त होय हैं। ये इंद्रियनिके विषय जीवने जगतविषैं अनंतकाल भोगे तिन विषयोंसे मोहित भया विरक्त भावको नाहीं भजै है, यह बडा आश्चर्य है। जो इन विषयोंको विषमिश्रित अन्नसमान जानकर पुरुषोत्तम कहिये चक्रवर्ती आदि उत्तम पुरुष भी सेवै हैं, संसारमें भ्रमते हुवे इस जीवके जो सम्यक्त्व उपजै और एक भी नियम व्रत साधै तो यह मुक्तिका बीज है और जिन प्राणधारियोंके

एक भी नियम नाहीं ते पशु हैं अथवा फूटे कलश हैं, गुणरहित हैं। अर जे भव्य जीव संसार-समुद्रको तिरा चाहै हैं, ते प्रमादरहित होय गुण अर व्रतनिकरि पूर्ण सदा नियमरूप रहैं, जे मनुष्य कुबुद्धि खोटे कर्म नाहीं तजैं हैं अर व्रत नियमको नाहीं भजैं हैं ते जन्मके अंधेकी नाईं अनंतकाल भववनविषैं भटकैं हैं या भांति जे श्रीअनंतवीर्य केवली तेई भए तीन लोकके चंद्रमा तिनके वचनरूप किरणके प्रभावतैं देव विद्याधर भूमिगोचरी मनुष्य तथा तिर्यंच सर्व ही आनंदको प्राप्त भए। कईएक उत्तम मानव मुनि भए तथा श्रावक भए सम्यक्तको प्राप्त भए। और कई एक उत्तम तिर्यंच भी सम्यक्दृष्टि श्रावक अणुव्रत धारी भए अर चतुरनिकायके देवोंमें कई एक सम्यग्दृष्टि भए क्योंकि देवनिके व्रत नाहीं।

अथानंतर एक धर्मरथ नामा मुनि रावणको कहते भए—'हे भद्र कहिये भव्यजीव, तू भी अपनी शक्ति प्रमाण कछु नियम धारण कर। यह धर्मरत्नका द्वीप है अर भगवान केवली महा महेश्वर हैं या रत्नद्वीपतैं कछु नियमरूप रत्न ग्रहण कर, काहेको चिंताके भारके वशि होय रह्या है, महापुरुषनिके त्याग खेदका कारण नाहीं। जैसैं कोई रत्नद्वीपमें प्रवेश करै अर वाका मन भ्रमै जो मैं कैसा रत्न लूं तैसैं याका मन आकुलित भया जो मैं कैसा व्रत लूं यह रावण भोगासक्त सो याके चित्तमें यह चिंता उपजी जो मेरे खान पान तो सहज ही पवित्र है, सुगंध मनोहर पौष्टिक शुभ स्वाद, मांसादि मलिन वस्तुके प्रसंगतैं रहित आहार है अर अहिंसा व्रत आदि श्रावकका एकहू व्रत करिवे समर्थ नाहीं, मैं अणुव्रत हू धारवे समर्थ नाहीं तो महाव्रत कैसैं धारूं, माते हाथी समान चित्त मेरा सर्व वस्तु विषैं भ्रमता फिरै है, मैं आत्मभावरूप अंकुशतैं याको वश करवे समर्थ नाहीं। जे निर्ग्रंथका व्रत धरै हैं, ते अग्निकी ज्वाला पीवैं हैं अर पवनको वस्त्रमैं बांधै हैं अर पहाडको उठावैं हैं। मैं महाशूरवीर भी तप व्रत धरने समर्थ नाहीं। अहो धन्य हैं वे नरोत्तम! जो मुनिव्रत धारैं हैं, मैं एक यह नियम धरूं जो परस्त्री अत्यंत रूपवती भी होय तो ताहि बलात्कार करि न इच्छूं अथवा सर्वलोकमें ऐसी कौन रूपवती नारी है जो मोहि देखकर मन्मथकी पीडी विकल न होय अथवा ऐसी कौन परस्त्री है जो विवेकी जीवनिके मनको वश करै। कैसी है परस्त्री, परपुरुषके संयोगकरि दूषित है अंग जाका, स्वभावहीकरि दुर्गंध विष्टाकी राशि ताविषैं कहा राग उपजै? ऐसा मनमें विचार भावसहित अनंतवीर्य केवलीको प्रणाम करि देव मनुष्य असुरोंकी साक्षितामें प्रगट ऐसा वचन कहता भया, हे भगवान! इच्छारहित जो पर-नारी ताहि मैं न सेवूं। यह मेरे नियम है। अर कुंभकर्ण अर्हंत, सिद्ध, साधु, केवलीभाषित धर्मका, शरण अंगीकार करि सुमेरु पर्वत सारिखा है अचल चित्त जाका सो यह नियम करता भया जो मैं प्रात ही उठकर प्रति दिन जिनेंद्रकी अभिषेक पूजा स्तुति कर मुनिको विधिपूर्वक आहार देयकरि आहार करूंगा अन्यथा नाहीं। मुनिके आहारकी बेला पहिले सर्वथा भोजन न करूंगा। अर सर्व पुरुष,

साधुनिकों नमस्कार करि और भी घने नियम लिये। अर देव कहिये कल्पवासी असुर कहिये भवनत्रिक अर विद्याधर मनुष्य हर्षतैं प्रफुल्लित हैं नेत्र जिनके, सर्व केवलीको नमस्कार कर अपने स्थान गए। रावण भी इंद्रकीसी लीला धरैं प्रबल पराक्रमी लंकाकी ओर पयान करता भया अर आकाशके मार्ग शीघ्र ही लंकाविषैं प्रवेश किया। कैसा है रावण? समस्त नर-नारियोंके समूहने किया है गुण वर्णन जाका अर कैसी है लंका, वस्त्रादिकरि बहुत समारी है। राजमहलमें प्रवेश कर सुखसे तिष्ठते भए। राजमंदिर सर्व सुखका भरया है। पुण्याधिकारी जीवनिके जब शुभकर्मका उदय होय है, तब नाना प्रकारकी सामग्रीका विस्तार होय है। गुरुके मुखतैं धर्मका उपदेश पाय परमपदके अधिकारी होय हैं ऐसा जानकरि जिनश्रुतमें उद्यमी है मन जिनका ते बारंबार निज-परका विचार-कर धर्मका सेवन करैं विनयकर जिन शास्त्र सुननेवालोंके जो ज्ञान है सो रविसमान प्रकाशको धरै है, मोहतिमिरका नाश करै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणसंस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं अनंतवीर्यकेवलीके धर्मोपदेशका वर्णन करनेवाला चौदहवां पर्व पूर्ण भया ॥१४॥

पंचदश पर्व

[अंजनासुंदरी और पवनंजयकुमारके विवाहका वर्णन]

अथानंतर ताही केवलीके निकट हनुमानने श्रावकके व्रत लिए अर विभीषणने भी व्रत लिए, भाव शुद्ध होय व्रत नियम आदरे। जैसा सुमेरु पर्वतका स्थिरपना होय ताहूतैं अधिक हनूमानका शील अर सम्यक्त परम निश्चल प्रशंसा योग्य है। जब गौतम स्वामीने हनुमानका अत्यंत सौभाग्य आदि वर्णन किया, तब मगध देशके राजा श्रेणिक हर्षित होय गौतम स्वामीसों पूछते भए। हे भगवन् गणाधीश! हनुमान कैसे लक्षणोंका धारणहारा, कौनका पुत्र, कहां उपज्या? मैं निश्चय कर ताका चरित्र सुन्या चाहूं हूं नदि सत्पुरुषनिकी कथाकरि उपज्या है प्रमोद जाकों ऐसे इंद्रभूति कहिए गौतमस्वामी आह्लादकारी वचन कहते भए- 'हे नृप! विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणी पृथ्वीसों दश योजन ऊंची तहां आदित्यपुर नामा मनोहरनगर, तहां राजा प्रह्लाद रानी केतुमती तिनके पुत्र वायुकुमार ताका विस्तीर्ण वक्षस्थल लक्ष्मीका निवास। सो वायुकुमारकों संपूर्ण यौवन धरैं देखकरि पिताके मनविषैं इनके विवाहकी चिंता उपजी। कैसा है पिता? परंपराय संतानके बढ़ावनेकी है वांछा जाके। अब जहां यह वायुकुमार परणेगा सो कहिए है। भरतक्षेत्रमें समुद्रतैं पूर्व दक्षिण दिशाके मध्य दंतीनामा पर्वत, जाके ऊंचे शिखर आकाशतैं लगि रहे हैं नाना-प्रकार वृक्ष औषधि तिनकरि संयुक्त अर जलके नीझरने झरैं हैं, जहां इंद्र-तुल्य राजा महेंद्र

विद्याधर तानैं महेंद्रपुर नगर बसाया। राजाके हृदयवेगा रानी ताकै अरिंदमादि सो पुत्र महागुणवान अर अंजनासुंदरी पुत्री सो मानों त्रैलोक्यकी सुंदरी जे स्त्री तिनके रूप एकत्र करि बनाई है। नील कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, कामके बाण समान तीक्ष्ण दूरदर्शी कर्णांतिक कटाक्ष अर प्रशंसायोग्य करपल्लव, रक्तकमल समान चरण,हस्तीके कुंभस्थल समान कुच,अर केहरी समान कटि,सुंदर नितंब, कदलीस्तंभ समान कोमल जंघा शुभलक्षण प्रफुल्लित मालती समान मृदु बाहुयुगल, गंधर्वादि सर्व कलाकी जाननहारी मानों साक्षात् सरस्वती ही है अर रूपकरि लक्ष्मीसमान सर्वगुणमंडित एक दिवस नवयौवनमें कंदुक क्रीड़ा करती भ्रमण करती सखियों सहित रमती पिताने देखी, सो जैसैं सुलोचनाकों देखकर राजा अकंपनको चिंता उपजी हुती, तैसैं अंजनाको देख राजा महेंद्रको चिता उपजी। तब याकै वर ढूंढनेविषैं उद्यमी भए। संसारविषैं माता पिताको कन्या दुःखका कारण है। जे बड़े कुलके पुरुष हैं तिनकों कन्याकी ऐसी चिंता रहै है। यह मेरी कन्या प्रशंसायोग्य पतिको प्राप्त होय अर बहुत काल याका सौभाग्य रहै अर कन्या निर्दोष सुखी रहै। राजा महेंद्रने अपने मन्त्रीनिसौं कही—जो तुम सर्व वस्तुविषैं प्रवीण हो कन्या योग्य श्रेष्ठ वर मोहि बतावो। तदि अमरसागर मंत्रीने कही—यह कन्या राक्षसोंका अधीश जो रावण ताहि देवो। सर्व विद्याधरनिका अधिपति ताका संबंध पाय तुम्हारा प्रभाव समुद्रांत पृथ्वीविषैं होयगा। अथवा इंद्रजीत अथवा मेघनादको देवो अर यह भी तुम्हारे मनविषैं न आवै तो कन्याका स्वयंवर रचो ऐसा कहकरि अमरसागर मंत्री चुप रह्या। तब सुमतिनामा मंत्री महापंडित बोल्या--रावणके तो स्त्री अनेक हैं अर महा अहंकारी ताकों परणावैं तो भी आपसमें अधिक प्रीति न होय,अर कन्याकी वय छोटी अर रावणकी वय अधिक सो बनै नाहीं। इंद्रजीत तथा मेघनादको परणैं तो उन दोनोंमें परस्पर विरोध होय, आगै राजा श्रीषेणके पुत्रनिविषैं विरोध भया, तातैं यह न करना। तब ताराधन्य मंत्री कहता भया—दक्षिणश्रेणीविषैं कनकपुर नामा नगर है तहां राजा हिरण्यप्रभ ताके रानी सुमना पुत्र सौदामिनीप्रभ सो महा यशवंत कीर्तिधारी नवयौवन नववय अति सुंदर रूप सर्व विद्या कलाका पारगामी लोकनिके नेत्रनिकों आनंदकारी अनुपम गुण, अपनी चेष्टातैं हर्षित किया है सकल मंडल जानै अर ऐसा पराक्रमी है जो सर्व विद्याधर एकत्र होय तासों लड़ैं तो भी ताहि न जीतैं। मानों शक्तिके समूहकरि निर्माप्या है। सो यह कन्या ताहि देहु। जैसी कन्या तैसा वर, योग्य संबंध है। यह वार्ता सुन कर संदेहपराग नामा मंत्री माथा धुनि, आंख मींचकर कहता भया। यह सौदामिनीप्रभ महा भव्य है ताके निरंतर यह विचार है कि यह संसार अनित्य है सो संसारका स्वरूप जान बरस अठारहमें वैराग्य धारैगा, विषयाभिलाषी नाहीं, भोगरूप गजबंधन तुड़ाय गृहस्थीका त्याग करैगा, बाह्याभ्यंतर परिग्रहका त्यागकरि केवलज्ञानको पाय मोक्ष जायगा, सो याहि परणावै तौ कन्या पति बिना शोभा न पावै, जैसैं चंद्रमा बिना

रात्रि नीकी न दीखै। कैसा है चंद्रमा? प्रकाश करणहारा है, तातैं तुम इंद्रके नगर समान आदित्यपुर नगर है, रत्ननिकरि सूर्य-समान देदीप्यमान है। तहां राजा प्रह्लाद महाभोगी पुरुष चंद्रसमान कांतिका धारी, ताके रानी केतुमती कामकी ध्वजा, तिनके वायुकुमार कहिए पवनंजय नामा पुत्र पराक्रमका समूह रूपवान शीलवान गुणनिधान सर्व कलाका पारगामी शुभ शरीर महा-वीर खोटी चेष्टासों रहित, ताके समस्त गुण सर्व लोकनिके चित्तविषैं व्याप रहे हैं, हम सौ वर्षमें हू न कह सकैं, तातैं आप ही वाहि देख लेहु। पवनंजयके ऐसे गुण सुन सर्वही हर्षको प्राप्त भए। कैसा है पवनंजय? देवनिके समान है द्युति जाकी जैसैं निशाकरकी किरणोंकर कुमुदिनी प्रफुल्लित होय तैसैं कन्या भी यह वार्ता सुनकरि प्रफुल्लित भई।

अथानंतर बसंत ऋतु आई, स्त्रियोंके मुख कमलकी लावण्यताकी हरणहारी शीतऋतु गई, कमलिनी प्रफुल्लित भई, नवीन कमलोंके समूहकी सुगंधताकरि दशों दिशा सुगंध मय भई, कमलोंपर भ्रमर गुंजार करते भये। कैसे हैं भ्रमर? मकरंद कहिये पुष्पानकी सुगंधरज ताके अभिलाषी हैं। वृक्षनिके पल्लव पत्र पुष्पादि नवीन प्रकट भए। मानों वसंतके लक्ष्मीके विलापसों हर्षके अंकुर ही उपजे हैं अर आम्र मौल आए, तिनपर भ्रमर भ्रमैं हैं, लोकनिके मनकों कामबाण बींधते भए, कोकिलानिके शब्द मानिनी नायिकानिके मानका मोचन करते भए। वसंतसमय परस्पर नर-नारियनिके स्नेह बढ़ता भया। हिरण जो है सो दूबके अंकुर उखाड़ हिरणीके मुखमें देता भया। सो ताकों अमृत-समान लागै, अधिक प्रीत होती भई अर बेल वृक्षनितैं लिपटी, कैसी हैं बेल? भ्रमर ही है नेत्र जिनके। दक्षिण दिशाकी पवन चाली सो सब हीको सुहावनी लागी। पवनके प्रसंगकरि केसरके समूह पड़े सो मानों वसंतरूपी सिंहके केशोंके समूह ही हैं। महा सघन कौरव जातिके जे वृक्ष तिनपर भ्रमरोंके समूह शब्द करै हैं मानों वियोगिनी नायि-कानिके मनको खेद उपजायवेको वसंतनै प्रेरे हैं, अर अशोक जातिके वृक्षनिकी नवीन कोंपल लहलहाट करै है सो मानों सौभाग्यवती स्त्रियोंके रागकी राशि ही भासै हैं। अर वनोंमें कैसूला (टेसू) अत्यंत फूल रहे हैं सो मानों वियोगिनी नायिकानिके मनकों दाह उपजावनेकों अग्नि समान हैं। दशों दिशाविषै पुष्पनिके समूहकी सुगंध रज ताहि मकरंद कहिये सो परागकरि ऐसी फैल रही हैं मानों वसंत जो है पटवास कहिए सुगंध चूर्ण अबीर ताकरि महोत्सव करै है। ताकरि एक दिन भी स्त्री पुरुष परस्पर वियोगको नहीं सहार सकैं हैं। ता ऋतुविषैं विदेश गमन कैसैं रुचै, ऐसी रागरूप वसंत ऋतु प्रगट भई, तासमय फागुण सुदि अष्टमीसों लेकर पूर्णमासी तक अष्टान्हिकाके दिन महामंगलरूप हैं, सो इंद्रादिक देव शची आदि देवी पूजाके अर्थि नंदीश्वर-द्वीप गए अर विद्याधर पूजाकी सामग्री लेयकर कैलाश गये। श्रीऋषभदेवके निर्वाणकल्याणकरि वह पर्वत पूजनीक है, सो समस्त परिवार सहित अंजनाके पिता राजा महेंद्र हू गए। तहां भगवान-

की पूजाकरि स्तुतिकरि अर भावसहित नमस्कारकर सुवर्णकी शिलापर सुखसों विराजे। अर राजा प्रह्लाद पवनंजयके पिता तेहू भरत चक्रवर्तीके कराये जे जिनमंदिर तिनकी वंदनाके अर्थि कैलाश पर्वत पर गए सो वंदनाकरि पर्वतपर विहार करते राजा महेंद्रकी दृष्टिविषैं आए। सो महेंद्रकों देखकर प्रीतिरूप है चित्त जिनका, प्रफुल्लित भए हैं नेत्र जिनके, ऐसे, जे प्रह्लादते निकट आए। तब महेंद्र उठकरि सन्मुख आयकर मिले। एक मनोज्ञ शिलापर दोनों हितसौं तिष्ठे, परस्पर शरीरादि कुशल पूछते भए तब राजा महेंद्र कही हे मित्र! मेरे कुशल काहेकी? कन्या वर-योग्य भई सो ताके परणावनेकी चिंताकरि चित्त व्याकुल रहै है, जैसी कन्या है तैसा वर चाहिए अर बड़ा घर चाहिए कौनकों दें, यह मन भ्रमैं है। रावणकों परणाइए तो ताके स्त्री बहुत हैं अर आयु अधिक है अर जो ताके पुत्रोंविषैं देय तो तिनमें परस्पर विरोध होय। अर हेमपुरका राजा कनकद्युति ताका पुत्र सौदामिनीप्रभ कहिए विद्युत्प्रभ सो थोड़े ही दिन विषैं मुक्तिकों प्राप्त होयगा, यह वार्ता सर्व पृथ्वीपर प्रसिद्ध है, ज्ञानी मुनिने कही है। हमने भी अपने मंत्रियोंके मुखतैं सुनी है। अब हमारे यह निश्चय भया है कि आपका पुत्र पवनंजय कन्याके वरिवे योग्य है, यही मनोरथ करि हम यहां आए हैं, सो आपके दर्शनकर अति आनंद भया, जाकरि कछु विकल्प मिट्या। तब प्रह्लाद बोले मेरे भी चिंता पुत्रके परणावनेकी है तातैं मैं भी आपका दर्शनकरि अर वचन सुन वचनतैं अगोचर सुखकों प्राप्त भया, जो आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण है। मेरे पुत्रका बड़ा भाग्य जो आपने कृपा करी, वर कन्याका विवाह मानसरोवरके तटपर करना ठहरया। दोनों सेनामें आनंदके शब्द भए ज्योतिषियोंने तीन दिनका लग्न थाप्या।

अथानंतर पवनंजयकुमार अंजनाके रूपकी अद्भुतता सुनकरि तत्काल देखनेको उद्यमी भया, तीन दिन रह न सक्या, संगमकी अभिलाषाकरि यह कुमार कामके वश हुआ, कामके दश वेगोंकर पूरित भया। प्रथम विषयकी चिंताकरि व्याकुल भया, अर दूजे वेग देखनेकी अभिलाषा उपजी, तीजे वेग दीर्घ उच्छ्वास नाखने लग्या, चौथे वेग कामज्वर उपज्या, मानों चंदनके अग्नि लागी, पांचवें वेग अंग खेदरूप भया, सुगंध पुष्पादितैं अरुचि उपजी, छठे वेग भोजन विषसमान बुरा लाग्या, सातवें वेग ताकी कथाकी आसक्तताकर विलाप उपज्या, आठवें वेग उन्मत्त भया विभ्रमरूप सर्पकर डस्या गीत नृत्यादि अनेक चेष्टा करने लग्या, नवमें वेग महामूर्च्छा उपजी, दशवें वेग दुःखके भारसों पीड़ित भया। यद्यपि यह पवनंजय विवेकी था, तथापि कामके प्रभावकरि विह्वल भया सो कामको धिक्कार हो, कैसा है काम? मोक्षमार्गका विरोधी है, कामके वेगकरि पवनंजय धीरज-रहित भया, कपोलनिसे कर लगाय शोकवान होय बैठ्या, पसेव टपके हैं कपोलनितैं जाके, उष्ण निश्वासकर मुरझाए हैं होंठ जाके, अर शरीर कंपायमान भया वारंवार जँभाई लेने लग्या अर अत्यंत अभिलाषारूप शल्यतैं चिंतावान भया,

स्त्रीके ध्यानतैं इंद्रियां व्याकुल भई, मनोज्ञ स्थान भी याकों अरुचिकारी भासैं, चित्तकी शून्यता धारता संता तजी हैं समस्त शृंगारादि क्रिया जानैं। क्षणमात्रविषैं तो आभूषण पहिरैं, क्षणमात्रविषैं खोल डारैं, लज्जारहित भया। क्षीण होगया है समस्त अंग जाका, ऐसी चिंता धारता भया कि वह समय कब होय जो मैं वा सुंदरीकों अपने पास बैठी देखूं, अर वाके कमलतुल्य गात्रको स्पर्श करूं,वा कामिनीके रसकी वार्ता करूं, वाकी बात ही सुन करि मेरी यह दशा भई है, न जानिए और कहा होय, वह कल्याणरूपिणी जाके हृदयमें वसै है ता हृदयमें दुःखरूप अग्निका दाह क्यों होय? स्त्री तो निश्चयसेती स्वभावतैं ही कोमलचित्त होय है मोहि दुख देवेअर्थि चित्त कठोर क्यों भया? यह काम पृथ्वीविषैं अनंग कहावै है, जाके अंग नाहीं सो अंग विना ही मोहि अंगरहित करै है, मार डारै है! जो याके अंग होय तो न जाने कहा करै, मेरी देहविषैं घाव नाहीं परंतु वेदना बहुत है। मैं एक जगह बैठ्या हूँ अर मन अनेक जगह भ्रमै है। ये तीन दिन वाहि देखै विना मोहि कुशलसों न जांय तातैं ताके देखनका उपाय करूँ, जाकरि मेरे शांति होय। अथवा सर्व कार्योंमें मित्र-समान जगतविषैं और आनंदका कारण कोई नाहीं, मित्रतैं सर्व कार्य सिद्ध होय हैं ऐसा विचार अपना जो प्रहस्त नामा मित्र सर्वविश्वासका भाजन तासों पवनंजय गदगद वाणी करि कहता भया। कैसा है मित्र? किनारे ही बैठ्या है छायाकी मूर्ति ही है अपना ही शरीर मानों विक्रियाकरि दूजा शरीर होय रह्या है ताहि या भांति कही हे मित्र! तू मेरा सर्व अभिप्राय जानै है तोहि कहा कहूं? परंतु यह मेरी दुःख अवस्था मोहि वाचाल करै है। हे सखे! तुम विना यह बात कौनसों कही जाय? तू समस्त जगतकी रीति जानै है जैसैं किसान अपना दुःख राजासों कहै, अर शिष्य गुरुसों कहै, अर स्त्री पतिसों कहै, अर रोगी वैद्यसों कहै, बालक मातासों कहै, तो दुख छूटै तैसैं बुद्धिमान अपने मित्रसों कहै, तातैं मैं तोहि कहूँ हूँ। वह राजा महेंद्रकी पुत्री ताको श्रवण कर ही कामवाणकरि मेरी विकल दशा भई है जो ताके देखे विना मैं तीन दिन निवाहिवे समर्थ नाहीं, तातैं कोई ऐसा यत्न कर जो मैं वाहि देखूं ताहि देखे विना मेरे स्थिरता न आवै अर मेरी स्थिरतासों तोहि प्रसन्नता होय, प्राणियोंको सर्व कार्यसे जीतव्य वल्लभ है; क्योंकि जीतव्यके होते सते आत्मलाभ होय है। या भांति पवनंजयने कही तदि प्रहस्त मित्र हंसे, मानों मित्रके मनका अभिप्राय पायकरि कार्य सिद्धिका उपाय करते भए। हे मित्र! बहुत कहनेकरि कहा? अपने मांही भेद नाहीं जो करना होय ताकरि ढील न करना याभांति तिन दोनोंके वचनालाप होय हैं, एते ही सूर्य मानों इनके उपकार निमित्त अस्त भया तब सूर्यके वियोगसों दिशाऐं काली पड़ गईं अंधकार फैल गया, क्षणमात्रमें नीला वस्त्र पहिरे निशा प्रगट भई। तब रात्रिके समय उत्साह सहित मित्रको पवनंजय कहते भए। हे मित्र! उठो, आवो तहां चलें, जहां वह मनकी हरणहारी

प्राणवल्लभा तिष्ठै है तदि ये दोनों मित्र विमानमें बैठि आकाशके मार्ग चाले, मानों आकाशरूप समुद्रके मच्छ ही हैं क्षणमात्रविषैं जाय अंजनाके सतखणे महलपर चढ़ि झरोखोंमें मोतिनकी झालरोंके आश्रय छिप बैठे, अंजना सुंदरीको पवनंजय कुमारने देख्या कि पूर्णमासीके चंद्रमाके समान है मुख जाका, मुखकी जोतिसों दीपक मंद ज्योति होय रहे, हैं अर श्याम श्वेत अरुण त्रिविध रंगको लिए नेत्र महा सुंदर हैं, मानों कामके बाण ही हैं अर कुच ऊंचे महा मनोहर शृंगाररसके भरे कलश ही हैं, नवीन कोंपलसमान लाल सुंदर सुलक्षण हैं हस्त अर पांव जाके अर नखोंकी कांतिकरि मानों लावण्यताको प्रगट करती सोभै है अर शरीर महासुंदर है अति नाजुक क्षीण काट कुचोंके भारनितैं मति कदाचित् भग्न हो जाय ऐसी शंकाकरि मानों त्रिवलीरूप डोरीतैं प्रतिबद्ध है। अर जाकी जंघा लावण्यताको धरै हैं, सो केलेहूतैं अति कोमल मानों कामके मंदिरके स्तंभ ही हैं सो मानों वह कन्या चांदनी रात ही है। मुक्ताफलरूप नक्षत्रनिकरि इंदीवर—कमल समान है रूप जाका। सो पवनंजयकुमार एकाग्र लगे हैं नेत्र जाके अंजनाको भले प्रकार देख सुखकी भूमिको प्राप्त भया। ताही समय वसंतिलका नामा सखी महाबुद्धिवती अंजनासुंदरीतैं कहती भई—हे सुरूपे! तू धन्य हैं जो तेरे पिताने तुझे वायुकुमारको दीनी ते वायुकुमार महा प्रतापी हैं तिनके गुण चंद्रमाकी किरण समान उज्ज्वल हैं, तिनकरि समस्त जगत व्याप्त होय रहा है तिनके गुण सुन अन्य पुरुषोंके गुण मंद भासैं हैं जैसैं समुद्रमें लहर तिष्ठै तैसैं तू वा योधाके अंगविषैं तिष्ठैगी कैसी है तू? महा मिष्टभाषिणी चंद्रकांति रत्ननिकी प्रभाको जीतै ऐसी कांति तेरी तू रत्नकी धरा रत्नाचल पर्वतके तटविषैं पड़ी तुम्हारा संबंध प्रशंसाके योग्य भया, याकरि सर्वही कुटुंबके जन प्रसन्न भए। याभांति जब पतिके गुण सखीने गाए तदि वह लाजकी भरी चरणनिके नखकी ओर नीचे देखती भई आनंदरूप जलकरि हृदय भर गया अर पवनंजयकुमारहू हर्षतैं फूल गए हैं नेत्रकमल जाके, हर्षित भया है वदन जाका।

ता समय एक मिश्रकेशी नामा दूजी सखी होंठ दाबिकर चोटी हलायकर बोली अहो परम अज्ञान तेरा यह कहा पवनंजयका संबंध सराह्या जो विद्युत्प्रभ कुंवरसों संबंध होता तो अतिश्रेष्ठ था, जो पुण्यके योगतैं कन्याका विद्युत्प्रभ पति होता तो याका जन्म सफल होता। हे वसंतमाला! विद्युत्प्रभ और पवनंजयमें इतना भेद है जितना समुद्र अर गोष्पदमें भेद है। विद्युत्प्रभकी कथा बड़े बड़े पुरुषोंके मुखतैं सुनी है जैसैं मेघके बूंदकी संख्या नाहीं तैसैं ताके गुणनिका पार नाहीं। वह नवयौवन है। महा सौम्य विनयवान, देदीप्यमान, प्रतापवान्, गुणवान्, रूपवान, विद्यावान्, बुद्धिमान्, बलवान्, सर्व जगत चाहै है दर्शन जाका सब यही कहै हैं कि यह कन्या वाहि देनी थी सो कन्याके बापने सुनी—वह थोड़े ही वर्षमें मुनि होयगा। तातैं संबंध

न किया सो भला न किया, विद्युत्प्रभका संयोग एक क्षणमात्र ही भला अर क्षुद्र पुरुषका संयोग बहुत काल भी किस अर्थ ? यह वार्ता सुनकर पवनंजय क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भए क्षणमात्रमैं और ही छाया होय गई रसतैं विरस आय गया लाल आंखैं होय गई होंठ डसकर तलवार म्यानसों काढ़ी अर प्रहस्त मित्रसों कहते भए याहि हमारी निंदा सुहावै अर यह दासी ऐसे निंद्य वचन कहै अर यह सुनै सो इन दोनोंका शिर काट डारूं। विद्युत्प्रभ इनके हृदयका प्यारा है, सो कैसें सहाय करेगा, यह वचन पवनंजयके सुन प्रहस्त मित्र रोषकर कहता भया—हे सखे हे मित्र ! ऐसे अयोग्य वचन कहनेकरि कहा ? तिहारी तलवार बड़े सामंतनिके सीसपर पड़े स्त्री अवला अवध्य है तापर कैसें पड़ै ? यह दुष्ट दासी इनके अभिप्राय विना ऐसे कहै है तुम आज्ञा करो तो या दासीको एक दंडकी चोटसों मार डालूं परंतु स्त्रीहत्या, बालहत्या, पशुहत्या, दुर्बल मनुष्यकी हत्या इत्यादि शास्त्रमें वर्जनीय कही है। ये वचन मित्रके सुनकर पवनंजय क्रोधको भूल गए अर मित्रको दासी पर क्रूर देखिकर कहते भए। हे मित्र ! तुम अनेक संग्रामके जीतनहारे यशके अधिकारी माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारनहारे तुमको दीनपर दया ही करनी योग्य है अर सामान्य पुरुष भी स्त्री हत्या न करैं तो तुम कैसें करो। जे बड़े कुलमें उपजे पुरुष हैं अर गुणोंकरि प्रसिद्ध हैं शूरवीर हैं तिनका यश अयोग्य क्रियातैं मलिन होय है तातैं उठो जा मार्ग आए ताही मार्ग चालो जैसें छाने आए हुते तैसें ही चाले। पवनंजयके मनमें भ्रांति पड़ी कि या कन्याको विद्युत्प्रभ ही प्रिय है. तातैं वाकी प्रशंसा सुनै है, हमारी निंदा सुनै है जो याहि न भावै तो दासी काहेको कहै, यह रोष धर अपने कहे स्थानक पहुचे। पवनंजयकुमार अंजनासौं अति फीके पड़ गए, चित्तमें ऐसे चिंतवते भए कि दूजे पुरुषका है अनुराग जाको ऐसी जो अंजना सो विकराल नदीकी नाईं दूरहीतैं तजनी। कैसी है वह अंजनारूप नदी ? संदेहरूप जे विषम भंवर तिनको धरै है अर खोटे भावरूप जे ग्राह तिनसों भरी है अर वह नारी वनी समान है अज्ञानरूप अंधकारसों भरी इंद्रियरूप जे सर्प तिनको धरै है पंडितनिको कदाचित् न सेवना। खोटे राजाकी सेवा और शत्रुके आश्रय जाना और शिथिल मित्र और अनासक्त स्त्री तिनतैं सुख कहां ? देखो जे विवेकी हैं ते इष्टबंधु तथा सुपुत्र अर पतिव्रता नारी इनका भी त्यागकर महाव्रत धारै हैं और शूद्र पुरुष कुसंग भी नहीं तजै है ! मद्यपायी वैद्य और शिक्षारहित हाथी अर निःकारण वैरी, क्रूरजन अर हिंसारूप धर्म अर मूर्खनितैं चर्चा अर मर्यादाका उलंघना, निर्दयी देश, बालक राजा, स्त्री परपुरुष-अनुरागिनी, इनको विवेकी तजै। या भांति चिंतवन करता पवनंजयकुमार ताके जैसें दुलहिनिसों प्रीति गई तैसें रात्रि हू गई, अर पूर्व दिशा विषैं संध्या प्रगट भई, मानो पवनंजयने अंजनाका राग छोड्या सो भ्रमता फिरै है । भावार्थ रागका स्वरूप लाल है अर इनतैं जो राग मिट्या सो मानें संध्याके मिसकरि पूर्व दिशामें

प्रवेश किया है। अर सूर्य ऐसा आरक्त उग्या जैसें स्त्रीके कोपतैं पवनंजयकुमार कोप्या। कैसा है सूर्य? तरुणबिंबको धरै है। बहुरि जगतकी चेष्टाका कारण है। तब पवनंजयकुमार प्रहस्त मित्रकों कहते भए अत्यन्त अरुचिकौं धरै अंजनासौं विमुख है मन जाका। हे मित्र! यहां अपने डेरे है सो यहांतैं वाका स्थानक समीप है। सो यहां सर्वथा न रहना ताको स्पर्श कर पवन आवै सो मोहि न सुहावै, तातैं उठो अपने नगर चालैं, ढील करनी उचित नाहीं। तब मित्र कुमारकी आज्ञा प्रमाण सेनाके लोगोंकों पयानकी आज्ञा करता भया। समुद्र-समान सेना रथ घोड़े हाथी पयादे इनका बहुत शब्द भया। कन्याका निवास नजीक ही है सो सेनाके पयानके शब्द कन्याके कानमें पड़े, तब कुमारका कूच जानकर कन्या अति दुखित भई। वे शब्द कानको ऐसे बुरे लागे जैसें वज्रकी शिला कानमें प्रवेश करै अर ऊपरसों मुद्गरनिकी घात पड़ै। मनमें विचारती भई। हाय हाय! मोहि पूर्वोपार्जित कर्मने महानिधान दिया था सो छिनाय लिया, कहा करूं अब कहा होय मेरे मनोरथ हुता जो इस नरेंद्रके साथ क्रीड़ा करूंगी सो और ही भांति दृष्टि आवै है, सो अपराध कछु न जान पड़ै है परंतु यह मेरी बैरिन मिश्रकेशी ताने निंद्य वचन कहे हुते सो कदाचित् कुमारको यह खबर पहुँची होय अर मोविषैं कुमया करी होय। यह विवेक-रहित पापिनी कटु भाषिणी धिक्कार याहि जानैं मेरा प्राणवल्लभ मोतैं कृपारहित किया, अब जो मेरे भाग्य होय अर मेरा पिता मुझपर कृपाकरि प्राणनाथको पाछा बहोड़ै अर उनकी सुदृष्टि होय तो मेरा जीतव्य है अर जो नाथ मेरा परित्याग करै तौ मैं आहारकौं त्याग करि शरीरकौं तजूंगी ऐसा चिंतवन करती वह सती मूर्च्छा खाय धरतीपर पड़ी जैसैं बेलिकी जड़ उपाड़ी जाय अर वह आश्रयतैं रहित होय कुमलाय जाय तैसैं कुमलाय गई। तब सर्व सखीजन यह कहा भया ऐसे कहकर अति संभ्रमकौ प्राप्त भईं शीतल क्रियासौं याहि सचेत किया तब यासूं मूर्च्छाका कारण पूछया सो यह लज्जाकरि कहि न सकै, निश्चल लोचन होय रही।

अथानंतर पवनंजयकी सेनाके लोक मनविषैं आकुल भए अर विचार करते भए जो निःकारण कूच काहेका? यह कुमार विवाह करने आया हुता सो दुलहिनको परण करि क्यों न चलै, याके कोप काहेतैं भया याको कौनने कहा, सर्व वस्तुकी सामग्री है, काहू वस्तुकी कमी नाहीं। याका सुसर बडा राजा कन्या अतिसुंदरी, यह परान्मुख क्यों भया। तब कैयक हंस करि कहते भए याका नाम पवनंजय है सो अपनी चंचलतातैं पवनहूकों जीतै है अर कैयक कहते भए अभी स्त्रीका सुख नाहीं जानै है, तातैं ऐसी कन्याकों छोड़करि जायवेकों उद्यमी भया है, जो याकैं रतिकालका राग होय तो जैसैं वनहस्ती प्रेमके बंधनकरि बंधै हैं तैसे यह बंध जाय, याभांति सेनाके सामंत कहै हैं अर पवनंजय शीघ्रगामी वाहन पर चढ चलनेकों उद्यमी भए। तब कन्याका पिता राजा महेंद्र कुमारका कूच सुनकर अति आकुल भया समस्त भाईनि

सहित राजा प्रल्हादपै आया। प्रल्हाद अर महेंद्र दोनों आय कुमारको कहते भए। हे कन्याणरूप हमको शोकका करणहारा यह कूच काहेको करिए है अहो कौनने आपको कह्या है, शोभायमान तुम कौनको अप्रिय हो, जो तुमको न रुचै सो सबहीको न रुचै। तिहारे पिताका अर हमारा वचन जो सदोष होय तो भी तुमको मानना योग्य है सो तौ हम समस्त दोषरहित कहै हैं तुमको अवश्य धारणा योग्य है। हे शूरवीर कूचतैं पाछे फिरो हमारे दोउनिके मनवांछित सिद्ध करो। हम तुम्हारे गुरुजन है, सो तुम सारिखे सत्पुरुषोंको गुरुजनोंकी आज्ञा आनंदका कारण है। ऐसा जब राजा महेंद्रने अर प्रल्हादने कह्या तब ये कुमार धीर-वीर विनयकरि नम्रीभूत भया है मस्तक जाका, जब तातनैं अर ससुरनैं बहुत आदरसों हाथ पकड़े तब यह कुमार गुरुजनोंकी जो गुरुता सो उलंघनको असमर्थ भया। तिनकी आज्ञातैं पाछा बाहुड्या अर मनमें विचारी की याहि परणकरि तज दूंगा ताकि दुःखसों जन्म पूरा करै अर औरका भी याहि संयोग न होय सकै।

अथानंतर कन्या प्राणवल्लभको पाछा आया सुनकर हर्षित भई रोमांच होय आए लग्नके समय इनका विवाह-मंगल भया, जब दुलहिनका कर-ग्रहण कराया सो अशोकके पल्लव-समान आरक्त अति कोमल कन्याके कर सो या विरक्तचित्तके अग्निकी ज्वाला-समान लाग। विना इच्छा कुमारकी दृष्टि कन्याके तनुपर काहू भांति गई सो क्षणमात्र भी न सह सक्या जैसे कोई विद्युत्पातकों न सह सकै। कन्याके प्रीति, वरके अप्रीति यह याके भावकों न जाने ऐसा जान मानों अग्नि हंसती भई और शब्द करती भई। बड़े विधानसों इनका विवाहकरि सर्वबंधुजन आनंदकों प्राप्त भए। मानसरोवरके तट विवाह भया नाना प्रकार वृक्ष लता फल पुष्प विराजित जो सुंदर वन तहां परम उत्सवकरि एक मास रहे। परस्पर दोनों समधियोंने अति हितके वचन आलाप कहे। परस्पर स्तुति महिमा करी, सन्मान किए, पुत्रीके पिताने बहुत दान दिया। अपने अपने स्थानकों गए।

हे श्रेणिक जे वस्तुका स्वरूप नाहीं जानैं हैं अर विना समझे पराये दोष ग्रहैं, ते मूर्ख हैं। अर पराए दोषकर आप ऊपर दोष आय पड़ै है सो सब पापकर्मका फल है। पाप आतापकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै अजनापवनजयका विवाह वर्णन करनेवाला पंद्रहवां पर्व पूर्ण भया॥१५॥

षोडश पर्व

[अंजना और पवनंजयकुमारका मिलाप]

अथानंतर पवनंजयकुमारने अंजनासुंदरीको परण कर ऐसी तजी जो कबहूँ बात न बूझै, सो वह सुंदरी पतिके असंभाषणतैं अर कृपादृष्टि कर न देखवेतैं परम दुःख करती भई। रात्रिमें भी निद्रा न लेय। निरंतर अश्रुपात ही झरा करैं, शरीर मलिन होय

गया, पतिसों अति स्नेह, धनीका नाम अति सुहावै, पवन जावै सो भी अति प्रिय लागै, पतिका रूप तो विवाहकी वेदीमें अवलोकन किया हुता ताका मनमें ध्यान करबो करै अर निश्चल लोचन सर्व चेष्टा रहित बैठी रहै। अंतरंग ध्यानमें पतिका रूप निरूपणकरि बाह्य भी दर्शन किया चाहै सो न होय। तदि शोककरि बैठी रहै, चित्रपटविषैं पतिका चित्राम लिखनेका उद्यम करै, तदि हाथ कांप करि कलम गिर पड़ै, दुर्बल होय गया है समस्त अंग जाका, ढीले होय कर गिर पड़ै हैं सर्व आभूषण जाके, दीर्घ उष्ण जे उच्छ्वासनिकरि मुरझाय गए हैं कपोल जाके, अंगमैं वस्त्रके भी भारकरि खेदकों धरती संती, अपने अशुभ कर्मों को निंदती, माता-पितानिको वारंवार याद करती संती, शून्य भया है हृदय जाका, दुःखकर क्षीण शरीर मूर्च्छा आय जाय, चेष्टारहित होय जाय, अश्रुपातकरि रुक गया है कंठ जाका, दुखकर निकसै हैं वचन जाके, विह्वल भई संती दैव कहिए पूर्वोपार्जित कर्म ताहि उलाहना देय चंद्रमाकी किरण हू करि जाकों अतिदाह उपजै, अर मंदिरविषैं गमन करती मूर्च्छा खाय गिर पड़ै, अर विकल्पकी मारी ऐसा विचार करि अपने मनहीमें पतिसों बतलावै। हे नाथ! तिहारे मनोज्ञ अंग मेरे हृदयमें निरंतर तिष्ठै हैं मोहि आताप क्यों करै हैं अर मैं आपका कछु अपराध नाहीं किया, निःकारण मेरेपर कोप क्यों करो, अब प्रसन्न होवो, मैं तिहारी भक्त हू, मेरे चित्तके विषादकों हरो। जैसैं अंतरंग दर्शन देवो हो, तैसै बहिरंग देवो। यह मैं हाथ जोड़ वीनती करूं हूँ। जैसैं सूर्य विना दिनकी शोभा नाहीं, अर चंद्रमा विना रात्रिकी शोभा नाहीं, अर दया क्षमा शील संतोषादि गुण विना विद्या शोभै नाहीं, तैसैं तिहारी कृपा विना मेरी शोभा नाहीं, या भांति चित्तविषैं बसै जो पति ताहि उलाहना देय। अर बड़े मोतियों समान नेत्रनितैं आंसुवनिकी बूंद भरैं, महा कोमल सेज अर अनेक सामग्री सखीजन करैं परंतु याहि कछु न सुहावैं, चक्रारूढ़ समान मनमैं उपज्या है वियोगसे भ्रम जाकों, स्नानादि संस्काररहित कभी भी केश समारे गूंथै नाहीं, केश भी रूखे पड़ गये, सर्व क्रियामें जड़, मानों पृथिवीहीका रूप होय रही है। अर निरंतर आंसुवनिके प्रवाहतें मानौं जलरूप ही होय रही है। हृदयके दाहके योगतैं मानौं अग्निरूप ही होय रही है अर निश्चलचित्तके योगतैं मानों वायुरूप ही होय रही है अर शून्यताके योगतैं मानों गगनरूप ही होय रही है। मोहके योगतैं आच्छादित होय रह्या है ज्ञान जाका, भूमिपर डार दिए हैं सर्व अंग जानैं, बैठ न सकै अर तिष्ठै तौ उठ न सकै, अर उठै तौ देहीकों थांभ न सकै, सो सखीजनका हाथ पकड़ि विहार करै सो पग डिग जाय। अर चतुर जे सखीजन तिनसों बोलनेकी इच्छा करै परंतु बोल न सकै। अर हंसनी कबूतरी आदि गृहपक्षी तिनसों क्रीड़ा किया चाहै पर कर न सकै। यह विचारी सबोंसे न्यारी बैठी रहै पतिमें लग रहा है मन अर नेत्र जाका, निःकारण पतितैं अपमान पाया सो एक दिन बरस बराबर जाय। यह

याकी अवस्था देखि सकल परिवार व्याकुल भया, सब ही चिंतवते भए कि—एता दुख याहि विना कारण क्यों भया है। यह कोई पूर्वोपार्जित पापकर्मका उदय है। पिछले जन्ममैं यानैं काहूके सुखविषैं अंतराय किया है, सो याकै भी सुखका अंतराय भया। वायुकुमार तो निमित्तमात्र है। यह बारी भोरी निर्दोष याहि परणकरि क्यों तजी, ऐसी दुलहिन सहित देवनिसमान भोग क्यों न करै। यानैं पिताके घर कभी रंचमात्र हू दुख न देख्या सो यह कर्मानुभव कर दुखके भारकों प्राप्त भई। याकी सखीजन विचारै है कि कहा उपाय करैं, हम भाग्यरहित हमारे यत्न-साध्य यह कार्य नाहीं, कोई अशुभकर्मकी चाल है अब ऐसा दिन कब होयगा वह शुभ मुहूर्त शुभ वेला कब होयगी जो वह प्रीतम या प्रियाकों समीप लेय बैठेगा, अर कृपादृष्टिकर देखैगा, मिष्ट-वचन बोलैगा यह सबके अभिलाषा लाग रही है।

अथानंतर राजा वरुण ताकै रावणसों विरोध पड़्या, वरुण महा गर्ववान रावणकी सेवा न करै, सो रावणने दूत भेज्या दूत जाय वरुणसों कहता भया। दूत धनीकी शक्तिकर महाकांतिको धरै है। अहो विद्याधराधिपते वरुण! सर्वका स्वामी जो रावण तानै यह आज्ञा करी है जो आप मोहि प्रणाम करो अथवा युद्धकी तैयारी करो। तब वरुणनै हंसकर कही, हो दूत! कौन है रावण,कहां रहै है जो मोहि दबावै है। सो मैं इंद्र नाहीं हूँ वह वृथा गर्वित लोकनिंद्य हुता मैं वैश्रवण नाहीं, यम नाही, मैं सहस्ररश्मि नाहीं, मैं मरुत नाहीं, रावणके देवाधिष्ठित रत्नोंकरि महा गर्व उपज्या है वाकी सामर्थ्य है तो आवो, मैं वाहि गर्वरहित करूंगा अर तेरी मृत्यु नजीक है जो हमसों ऐसी बात कहै है। तब दूत जायकर रावणसों सर्व वृत्तांत कहता भया। रावणने कोपकर समुद्र-तुल्य सेनासहित जाय वरुणका नगर घेरया अर यह प्रतिज्ञा करी जो मैं याहि देवाधिष्ठित रत्न विना ही वश करूंगा। मारूं अथवा बांधूं। तब वरुणके पुत्र राजीव पुंडरी-कादिक क्रोधायमान होय रावणके कटकपर आए। रावणकी सेनाके अर इनके बड़ा युद्ध भया, परस्पर शस्त्रनिके समूह छेद डारे। हाथी हाथियोंसे,घोड़े घोड़ोंसे,रथ रथोंसे,भट भटोंसे महायुद्ध करते भए, बड़े बड़े सामंत होंठ डसि डसि करि लाल नेत्र हैं जिनके वे महा भयानक शब्द करते भए। बड़ी बेरतक संग्राम भया। सो वरुणकी सेना रावणकी सेनासों कछुइक पीछे हटी। तब अपनी सेना-कों हटी देख वरुण राक्षसनिकी सेनापर आप चलाय करि आया, कालग्नि-समान भयानक, तब रावण दुर्निवार वरुणकों रणभूमिविषै सन्मुख आवता देखकर आप युद्ध करनेको उद्यमी भया। वरुणकै अर रावणकै आपसविषैं युद्ध होने लगा। अर वरुणके पुत्र खरदूषणसों युद्ध करते भए। कैसे हैं वरुणके पुत्र? महाभटोंके प्रलय करनहारे, अर अनेक माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारनहारे, सो रावण क्रोधकरि दीप्त है मन जाका, महाक्रूर जो भृकुटि तिनकरि भयानक है मुख जाका, कुटिल हैं केश जाके, जब लगि धनुषके बाण तान वरुणपर चलावै तब लग वरुणके पुत्रोंने रावणके

बहनेऊ खरदूषणको पकड़ लिया, तब रावणने मनमें विचारी जो हम वरुणसों युद्ध करैं अर खरदूषणका मरण होय तो उचित नाहीं, तातैं संग्राम मनैं किया, जे बुद्धिमान हैं ते मंत्रविषैं चूकैं नाहीं, तब मंत्रियोंने मंत्रकर सब देशोंके राजा बुलाए, शीघ्रगामी पुरुष भेजे, सबनिकों लिखा, बड़ी सेनासहित शीघ्र ही आवो। अर राजा प्रह्लादपर भी पत्र लेय मनुष्य आया सो राजा प्रह्लादने स्वामीकी भक्तिकरि रावणके सेवकनिका बहुत सन्मान किया अर उठकर बहुत आदरसों पत्र माथैं चढ़ाया, अर बांच्या सो पत्रविषैं या भांति लिखा था कि पातालपुरके समीप कल्याण रूप स्थानकमैं तिष्ठता महाक्षेमरूप विद्याधरोंके अधिपतियोंका पति सुमालीका पुत्र जो रत्नश्रवा, ताका पुत्र राक्षसवंशरूप आकाशविषैं चंद्रमा अैसा जो रावण सो आदित्यनगरके राजा प्रह्लादकों आज्ञा करै है। कैसा है प्रह्लाद ? कल्याणरूप है, न्यायका वेत्ता है, देश-काल-विधानका ज्ञायक है। हमारा बहुत वल्लभ है। प्रथम तो तिहारे शरीरकी कुशल पूछै है, बहुरि यह समाचार है कि-हमकों सर्व खेचर भूचर प्रणाम करैं हैं, हाथोंकी अंगुली तिनके नखकी ज्योतिकर ज्योतिरूप किए हैं निज शिरके केश जिनने, अर एक अति दुर्बुद्धि वरुण पातालनगरमें निवास करै है, सो आज्ञातैं परान्मुख होय लड़नेको उद्यमी भया है। हृदयकों व्यथाकारी विद्याधरोंके समूहकरि युक्त है। समुद्रके मध्य द्वीपको पायकर वह दुरात्मा गर्वकों प्राप्त भया है, सो हम ताके ऊपर चढ़कर आए हैं। बड़ा युद्ध भया। वरुणके पुत्रोंने खरदूषणको जीवता पकड़्या है सो मंत्रियोंने मंत्रकरि खरदूषणके मरणकी शंकातैं युद्ध रोक दिया है, तातैं खरदूषणकों छुड़ावना, अर वरुणको जीतना सो तुम अवश्य शीघ्र आइयो, ढील मत करियो। तुम सरिखे पुरुष कर्तव्यमें न चूकैं, अब सब विचार तिहारे आयवे पर है। यद्यपि सूर्य तेजके पुंज है तथापि अरुण सरिखा सारथी चाहिए। तब राजा प्रह्लाद पत्रके समाचार जानि मंत्रियोंसों मंत्र कर रावणके समीप चलनेकों उद्यमी भया। तब प्रह्लाद-को चलता सुनकर पवनंजयकुमारनें हाथ जोड़ि गोडनितैं धरती स्पर्श नमस्कारकर विनती करी। हे नाथ ! मुझ पुत्रके होते संते तुमको गमन युक्त नाहीं, पिता जो पुत्रको पालै है सो पुत्रका यही धर्म है कि पिताकी सेवा करै। जो सेवा न करै तो जानिए पुत्र भया ही नाहीं। तातैं आप कूच न करैं मोहि आज्ञा करैं, तब पिता कहते भए, हे पुत्र ! तुम कुमार हो, अब तक तुमने कोई युद्ध देख्या नाहीं। तातैं तुम यहां रहो मैं जाऊंगा। तब पवनंजयकुमार कनकाचलके तट समान जो वक्षस्थल ताहि ऊंचाकर तेजके धरणहारे वचन कहता भया--हे तात ! मेरी शक्तिका लक्षण तुमने देख्या नाहीं, जगतके दाहवेमें अग्निके स्फुलिंगेका क्या वीर्य परखना। तुम्हारी आज्ञारूप आशिषाकर पवित्र भया है मस्तक मेरा, ऐसा जो मैं इंद्रको भी जीतनेकों समर्थ हूं, यामैं संदेह नाहीं। ऐसा कहकर पिताकों नमस्कारकर महा हर्ष संयुक्त उठकरि स्नान भोजनादि शरीरकी क्रिया करी, अर आदरसहित जे कुलमैं वृद्ध हैं, तिन्होंने असीस दीनी। भावसहित अरहंत सिद्धकों नमस्कार-

करि परम कांतिको धरता संता महा मंगलरूप पितासों विदा होवेकों आया सो पिताने अर माताने मंगलके भयतैं आंसू न काढ़े, आशीर्वाद दिया। हे पुत्र! तेरी विजय होय, छाती सों लगाय मस्तक चूम्या। पवनंजयकुमार श्री भगवानका ध्यान धर माता पिताको प्रणामकरि जे परिवारके लोग पायनि पड़े तिनको बहुत धैर्य बंधाय सबसों अति स्नेह कर विदा भए। पहले अपना दाहिना पांव आगैं धर चले। फुरकै है दाहिनी भुजा जिनकी अर पूर्ण कलश जिनके मुखपर लाल पल्लव तिनपर प्रथम ही दृष्टि पड़ी, अर थंभसों लगी हुई द्वारै खड़ी जो अंजना सुंदरी आंसुवनि करि भीज रहे हैं नेत्र जाके, तांबूलादिरहित धूसरे होय रहे हैं अधर जाके, मानों थंभविषैं उकेरी पुतली ही है। कुमारकी दृष्टि सुंदरीपर पड़ी सो क्षणमात्रविषैं दृष्टि संकोच कोपकरि बोले। हे दुरीक्षण कहिए दुःखकारी है दर्शन जाका, या स्थानकतैं जावो तेरी दृष्टि उल्कापात समान है, सो मैं सहार न सकूं। अहो बड़े कुलकी पुत्री कुलवंती! तिनमैं यह ढीठपणा कि मनै किए भी निर्लज्ज ऊभी रहैं। ये पतिके अतिक्रूर वचन सुने तो भी याहि अति प्रिय लागै जैसैं घने दिनके तिसाए पपैयेकों मेघकी बूंद प्यारी लागै, सो पतिके वचन मनकरि अमृत समान पीवती भई, हाथ जोड़ि चरणारविंदकी ओर दृष्टि धरि गदगद वाणीकर डिगते डिगते वचन नीठि नीठि कहती भई–हे नाथ! जब तुम यहां बिराजते हुते, तबहू मैं वियोगिनी ही हुती; परंतु आप निकट हैं सो आशाकरि प्राण कष्टतैं टिक रहे हैं अब आप दूर पधारै हैं मैं कैसे जीऊंगी। मैं तिहारे वचनरूप अमृतके आस्वादनेकी अति आतुर तुम परदेशकों गमन करते समय स्नेहतैं दयालु चित्त होयकर वस्तीके पशु पक्षियोंको भी दिलासा करी, मनुष्योंकी तो कहा बात? सबसों अमृत समान वचन कहे, मेरा चित्त तिहारे चरणारविंदविषैं है, मैं तिहारी अप्राप्तिकर अति दुखी औरनिकी श्रीमुखतै एती दिलासा करी, मेरी औरनिके मुखतैं ही दिलासा कराई होती। जब मोहि आपने तजी तब जगतमे शरण नाहीं, मरण ही है। तब कुमारने मुख सकोचकर कोपसों कही, मर। तब यह सती खेद-खिन्न होय धरतीपर गिर पड़ी। पवनकुमार यासों कुमयाहीविषैं चाले। बड़ी ऋद्धिसहित हाथी पर असवार होय सामंतो सहित पयान किया। पहले ही दिनविषैं मानसरोवर जाय डेरे भए, पुष्ट हैं वाहन जिनके सो विद्याधरनिकी सेना देवोंकी सेना समान आकाशतैं उतरती संती अति शोभायमान भासती भई। कैसी है सेना, ? नानाप्रकारके जे वाहन अर शस्त्र तेई हैं आभूषण जाके, अपने २ वाहनोके यथायोग्य यत्न कराए स्नान कराए खानपानका यत्न कराया।

अथानंतर विद्याके प्रभावतैं मनोहर एक बहुखणा महल बनाया चौड़ा अर ऊंचा सो आप मित्र सहित महल ऊपर विराजे ? संग्रामका उपज्या है अति हर्ष जिनके, झरोखनिकी जालीके छिद्रकरि सरोवरके तटके वृक्षनिकों देखते हुते, शीतल मंद सुगंध पवनकरि वृक्ष मंद मंद

हालते हुते, अर सरोवरविषैं लहर उठती हुती सरोवरके जीव कछुवा, मीन, मगर अर अनेक प्रकारके जलचर गर्वके धरणहारे तिनकी भुजानिकरि किलोल होय रही हैं। उज्ज्वल स्फटिकमणि समान निर्मल जल है जामें, नानाप्रकारके कमल फूल रहे हैं हंस, कारंड, क्रौंच; सारस इत्यादि पक्षी सुंदर शब्द कर रहे हैं जिनके सुननेतैं मन अर कर्ण हर्ष पावैं। अर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं तहां एक चकवी, चकवे बिना अकेली वियोगरूप अग्नितैं तप्तायमान अति आकुल नाना प्रकार चेष्टाकी करणहारी अस्ताचलकी ओर सूर्य गया सो वा तरफ लग रहे हैं नेत्र जाके अर कमलिनी-के पत्रनिके छिद्रोंविषैं बारंबार देखै है, पांखनिकौं हलावती उठै है अर पड़ै है। अर मृणाल कहिए कमलकी नालका तार ताका स्वाद विष-समान देखै है, अपना प्रतिबिम्ब जलविषैं देखकरि जानै है कि यह मेरा प्रीतम है, सो ताहि बुलावै है सो प्रतिबिम्ब कहा आवै तदि अप्राप्तितैं परम शोकको प्राप्त भई है। कटक आय उतरथा है सो नाना देशनिके मनुष्योंके शब्द अर हाथी घोड़ा आदि नानाप्रकारके पशुवनिके शब्द सुनकर अपने वल्लभ चकवाकी आशाकर भ्रमै है चित्त जाका अश्रुपात सहित हैं लोचन जाके, तटके वृक्षपर चढ़ि चढ़िकरि दशों दिशाकी ओर देखै है, प्रीतमकों न देखकरि अति शीघ्र ही भूमिपर आय पड़ै हैं, पांख हलाय कमलिनीकी जो रज शरीरके लागी है सो दूर करै है सो पवनकुमारने घनी बेर तक दृष्टि धारि चकवीकी दशा देखी, दयाकर भीज गया है चित्त जाका, चित्तमें ऐसा विचारै है कि प्रीतमके वियोग करि यह शोक रूप अग्निविषैं बलै है। यह मनोज्ञ मानसरोवर अर चंद्रमाकी चांदनी चंदन-समान शीतल सो या वियोगिनी चकवीकों दावानल समान है, पति बिना याकों कोमल पल्लव भी खड्ग समान भासै है। चंद्रमा-की किरण भी वज्र समान भासै है, स्वर्ग हू नरकरूप होय आचरै है। ऐसा चिंतवनकर याका मन प्रिया विषैं गया। अर या मानसरोवरपर ही विवाह भया हुता सो वे विवाहके स्थानक दृष्टिमें पड़े सो याकों अति शोकके कारण भए, मर्मके भेदनहारे दुःसह करौंत समान लागे। चित्तविषैं विचारता भया—हाय ! हाय ! मैं क्रूरचित्त पापी वह निर्दोष वृथा तजी, एक रात्रिका वियोग चकवी न सहार सकै तो बाईस वर्षका वियोग वह महासुंदरी कैसें सहारै ? कटुक वचन वाकी सखीने कहे हुते, वाने तो न कहे हुते, मैं पराए दोषकरि काहेको ताका परित्याग किया। धिक्कार है मो सारिखे मूर्खको, जो बिना विचारे काम करै। ऐसे निष्कपट प्राणीको बिना कारण दुख अवस्था करी मैं पापचित्त हूं, वज्र समान है हृदय मेरा, जो मैंने एते वर्ष ऐसी प्राणवल्लभा-कों वियोग दिया, अब क्या करूं पितासों विदा होयकर घरतैं निकस्या हूं, कैसें पाछा जाऊं बड़ा संकट पड्या, जो मैं वासौं मिले बिना संग्राममैं जाऊं, तो वह जीवै नाहीं, अर वाके अभाव भये मेरा भी अभाव होयगा, जगतविषैं जीतव्य समान कोई पदार्थ नाहीं तातैं सर्व संदेहका निवारणहारा मेरा परम मित्र प्रहस्त विद्यमान है ताहि सर्व भेद पूछूं। वह सर्व प्रीतिकी रीतिमें प्रवीण है। जे विचार

कर कार्य करै हैं, ते प्राणी सुख पावैं हैं ऐसा पवनकुमारकों विचार उपज्या सो प्रहस्त मित्र ताके सुखविषैं सुखी दुखविषैं दुखी याकों चिंतावान देख पूछता भया कि–हे मित्र ! तुम रावणकी मदद करनेको वरुण सारिखे योधासों लड़नेकों जावो हो, सो अति प्रसन्नता चाहिये तब कार्यकी सिद्धि होय। आज तिहारा वदनरूप कमल क्यों मुरझाया दीखै है, लज्जाको तजकरि मोहि कहो, तुमको चिंतावान देखकर मेरे व्याकुलभाव भया है। तब पवनंजयने कही—हे मित्र ! यह वार्ता काहूसों कहनी नाहीं। परंतु तुम मेरे सर्व रहस्यके भाजन हो तोसूं अंतर नाहीं। यह बात कहते परम लज्जा उपजै है। तब प्रहस्त कहते भये जो तिहारे चित्तविषैं होय सो कहो, जो तुम आज्ञा करो सो बात और कोई न जानैगा, जैसैं ताते लोहेपर पड़ी जलकी बूंद विलाय जाय, प्रगट न दीखै, तैसैं मोहि कही बात प्रगट न होय। तब पवनकुमार बोले–हे मित्र ! सुनो–मैं कदापि अंजनासुंदरीसों प्रीति न करी सो अब मेरा मन अति व्याकुल हैं, मेरी क्रूरता देखो,एते वर्ष परणे भए सो अब तक वियोग रह्या, निष्कारण अप्रीति भई,सदा वह शोककी भरी रही। अश्रुपात झरते रहे, अर चलते समय द्वारै खड़ी विरह रूप दाहसों मुरझा गया है मुखरूप कमल जाका, सर्व लावण्य संपदारहित मैंने देखी, अब ताके दीर्घ नेत्र नीलकमल समान मेरे हृदयको बाणवत् भेदैं हैं, तातैं ऐसा उपाय कर जाकरि मेरा वासों मिलाप होय। हे सज्जन ! जो मिलाप न होयगा तो हम दोनोका ही मरण होयगा। तब प्रहस्त क्षणएक विचारकरि बोले तुम माता पितासों आज्ञा मांग शत्रुके जीतवेको निकसे हो, तातैं पीछे चलना उचित नाहीं, अर अबतक कदापि अंजनासुंदरी याद करी नाहीं अर यहां बुलावैं तो लज्जा उपजै है, तातैं गोप्य चलना अर गोप्य ही आवना, वहां रहना नाहीं। उनका अवलोकनकर सुख संभाषणकरि आनंदरूप शीघ्र ही आवना। तब आपका चित्त निश्चल होयगा परम उत्साहरूप चलना शत्रुके जीतनेका निश्चय यही उपाय है। तब मुद्गर नामा सेनापतिकों कटक रक्षा सौंपकरि मेरुकी वंदनाका मिसकरि प्रहस्त मित्रसहित गुप्त ही सुगंधादि सामग्री लेयकरि आकाशके मार्गसों चाले। सूर्य भी अस्त होय गया अर सांझका प्रकाश भी गया, निशा प्रकट भई। अंजनासुंदरीके महलपर जाय पहुंचे। पवनकुमार तो बाहिर खड़े रहे प्रहस्त खबर देनेकों भीतर गए, दीपकका मंद प्रकाश था, अंजना कहती भई–कौन है ? वसंतमाला निकट ही सोती हुती, सो जगाई, वह सब बातोंविषैं निपुण उठकर अंजनाका भय निवारण करती भई। प्रहस्तने नमस्कारकरि जब पवनंजयके आगमनका वृत्तांत कहा तब सुंदरीने प्राणनाथका समागम स्वप्न समान जान्या, प्रहस्तकों गद्गद वाणीकरि कहती भई–हे प्रहस्त ! मैं पुण्यहीन पतिकी कृपाकरि वर्जित, मेरे ऐसा ही पाप कर्मका उदय आया, तू हमसों कहा हंसै है, पतिसों जिसका निरादर होय वाकी कौन अवज्ञा न करै ? मैं अभागिनी दुःख अवस्थाकों प्राप्त भई, कहांतैं सुख

अवस्था होय। तब प्रहस्तने हाथ जोड़ि नमस्कारकरि विनती करी–हे कल्याणरूपिणि! हे पतिव्रते! हमारा अपराध क्षमा करो अब सब अशुभ कर्म गए, तिहारे प्रेमरूप गुणका प्रेरया तेरा प्राणनाथ आया। तेरेसे अति प्रसन्न भया तिनकी प्रसन्नताकरि कहा कहा आनंद न होय, जैसें चंद्रमाके योगकरि रात्रिकी अति मनोज्ञता होय। तब अंजनासुंदरी क्षणएक नीची होय रही अर वसंतमाला प्रहस्तसों कही --हे भद्रे! मेघ बरसै जब ही भला, तातैं प्राणनाथ इनके महल पधारे, सो इनका बड़ा भाग्य अर हमारा पुण्यरूप वृक्ष फल्या। यह बात होय रही हुती ताही समय आनंदके अश्रुपातकरि व्याप्त होय गए हैं नेत्र जिनके सो कुमार पधारे ही। मानों करुणा-रूप सखी ही प्रीतमकों प्रियाके ढिग ले आई। तब भय-भीत हिरणीके नेत्र-समान सुंदर हैं नेत्र जाके ऐसी प्रिया पतिकों देख सन्मुख जाय हाथ जोड़ि सीस निवाय पांयनि पड़ी। तब प्राण-वल्लभने अपने करतैं सीस उठाय खड़ी करी। अमृत समान वचन कहे कि--हे देवी! क्लेशका सकल खेद निवृत्त होवै। सुंदरी हाथ जोड़ि पतिके निकट खड़ी हुती। पतिने अपने करतैं कर पकड़करि सेजपर बिठाई, तब नमस्कारकर प्रहस्त तो बाहिर गए अर वसंतमाला हू अपने स्थान जाय बैठी। पवनंजयकुमारने अपने अज्ञानतैं लज्जावान होय सुंदरीसों वारंवार कुशल पूछी अर कही हे प्रिये? मैंने अशुभ कर्मके उदयतैं जो तिहारा वृथा निरादर किया सो क्षमा करो। तब सुंदरी नीचा मुखकरि मंद मंद वचन कहती भई, हे नाथ! आपने पराभव कछु न किया, कर्मका ऐसा ही उदय हुता। अब आपने कृपा करी अति स्नेह जताया सो मेरे सर्व मनोरथ सिद्ध भए आपके ध्यान कर संयुक्त मेरा हृदय सो आप सदा हृदयहीविषैं विराजते आपका अनादर हू आदर समान भास्या। याभांति अंजना सुंदरीने कहा तब पवनंजयकुमार हाथ जोड़ कहते भए कि हे प्राण-प्रिये! मैं वृथा अपराध किया। पराए दोषतैं तुमको दोष दिया सो तुम सब अपराध हमारा विस्मरण करो। मैं अपना अपराध क्षमावने निमित्त तिहारे पायनि परूं हूं, तुम हमसों अति प्रसन्न होवो, ऐसा कहकर पवनंजयकुमारने अधिक स्नेह जनाया तब अंजनासुंदरी पतिका एता स्नेह देखकरि बहुत प्रसन्न भई अर पतिकों प्रियवचन कहती भई, हे नाथ मैं अति प्रसन्न भई, हम तिहारे चरणारविंदकी रज हैं, हमारा इतना विनय तुमकों उचित नाहीं, ऐसा कहकर सुखसों सेजपर विराजमान किए, प्राणनाथकी कृपाकरि प्रियाका मन अति प्रसन्न भया अर शरीर अति-कांतिकों धरता भया, दोनों परस्पर अतिस्नेहके भरे एक चित्त भए। सुखरूप जागृति रहे, निद्रा न लीनी। पिछले पहर अल्प निद्रा आई, प्रभातका समय होय आया तब यह पतिव्रता सेजसों उतर पतिके पाय पलोटने लगी, रात्रि व्यतीत भई, सो सुखमें जानी नाहीं, प्रात समय चन्द्रमा-की किरण फीकी पड़ गई, कुमार आनंदके भारमें भर गए अर स्वामीकी आज्ञा भूल गए, तब मित्र प्रहस्तने कुमारके हितविषैं है चित्त जाका, ऊंचा शब्दकर वसंतमालाको जगाकर भीतर

पठाई अर मंद मंद आपहु सुगंधित महलमें मित्रके समीप गए, अर कहते भए हे, सुंदर ! उठो, अब कहा सोवो हो ? चन्द्रमा भी तिहारे मुखकी कांतिकरि रहित होय गया है यह वचन सुनकर पवनंजय प्रबोधको प्राप्त भए । शिथिल है शरीर जिनका, जंभाई लेते, निद्राके आवेशकरि लाल है नेत्र जिनके, कानोंको बांए हाथकी तर्जनी अंगुलीसों खुजावते, खुले हैं नेत्र जिनके, दाहिनी भुजा संकोचकरि अरिहंतका नाम लेकर सेजसों उठे, प्राणप्यारी आपके जगनेतैं पहिले ही सेजसों उतरकरि भूमिविषैं विराजै है लज्जाकर नम्रीभूत हैं नेत्र जाके, उठते ही प्रीतमकी दृष्टि प्रियापर पड़ी । बहुरि प्रहस्तको देखकरि, "आवो मित्र" शब्द कहकर सेजसों उठे, प्रहस्तने मित्रसों रात्रिकी कुशल पूछी, निकट बैठे, मित्र नीतिशास्त्रके वेत्ता कुमारसों कहते भए । हे मित्र ! अब उठो प्रियाजीका सन्मान बहुरि आयकर करियो, कोई न जानै, या भांति कटकमें जाय पहुचैं । अन्यथा लज्जा है । रथनूपुरका धनी किन्नरगीतनगरका धनी रावणके निकट गया चाहै है सो तिहारी ओर देखै है । जो वे आगैं आवैं तो हम मिलकर चलें । अर रावण निरंतर मंत्रियोंतैं पूछैं है जो पवनंजयकुमारके डेरे कहां हैं अर कब आवेंगे, तातैं अब आप शीघ्र ही रावणके निकट पधारो । प्रियाजीसो विदा मांगो, तुमकों पिताकी अर रावणकी आज्ञा अवश्य करनी है । कुशल क्षेमसो कार्यकर शिताब ही आवैंगे । तब प्राणप्रियासों अधिक प्रीति करियो । तब पवनंजयने कही हे मित्र ! ऐसे ही करना । ऐसा कहकर मित्रको तो बाहिर पठाया अर आप प्राणवल्लभासों अतिस्नेहकर उरसों लगाय कहते भए हे प्रिये अब हम जाय हैं, तुम उद्वेग मत करियो, थोड़े ही दिनोंमें स्वामीका कामकर हम आवेंगे तुम आनंदसों रहियो । तब अंजनासुंदरी हाथ जोड़कर कहती भई, हे महाराजकुमार ! मेरा ऋतुसमय है सो गर्भ मांहि अवश्य रहेगा अर अबतक आपकी कृपा नाहीं हुती, यह सर्व जानैं हैं सो माता पितासो मेरे कल्याणके निमित्त गर्भका वृत्तांत कह जावो । तुम दीर्घदर्शी सब प्राणियोंमें प्रसिद्ध हो, ऐसे जब प्रियाने कह्या तब प्राणवल्लभाको कहते भए । हे प्यारी ! मैं माता पितासो विदा होय निकस्या सो अब उनके निकट जाना बनै नाहीं, लज्जा उपजै है । लोक मेरी चेष्टा जान हंसैंगे, तातैं जबतक तिहारा गर्भ प्रकाश न पावै ताके पहिले ही मैं आवूं हू तुम चित्त प्रसन्न राखो, अर कोई कहै तो ये मेरे नामकी मुद्रिका राखो, हाथोंके कड़े राखो, तुमको सब शांति होयगी, ऐसा कहकर मुद्रिका दई अर वसंतमालको आज्ञा दई, इनकी सेवा बहुत नीके करियो, आप सेजसो उठे प्रिया विषैं लग रह्या है प्रेम जिनका कैसी है सेज, संयोगके योगतैं बिखर रहे हैं हारके मुक्ताफल जहां अर पुष्पनिकी सुगंध मकरंदतैं भ्रमैं हैं भ्रमर जहां । क्षीरसागरकी तरंग समान अति उज्ज्वल बिछे हैं पट जहां आप उठकर मित्रके सहित विमानपर बैठि आकाशके मार्ग चाले । अंजना सुंदरीने अमंगलके कारण आंसू न काढ़े । हे श्रेणिक ! कदाचित् या लोकविषैं उत्तम वस्तुके संयोगतैं किंचित् सुख होय है सो क्षणभंगुर है अर

देहधारियोंके पापके उदयतैं दुख होय है, सुख दुख दोनों विनश्वर हैं, तातैं हर्ष विषाद न करना। हो प्राणी हो, ! जीवोंको निरंतर सुखका देनहारा दुःखरूप अंधकारका दूर करणहारा जिनवर-भाषित धर्म सोई भया सूर्य ताके प्रतापकरि मोह-तिमिर हरहु।

इतिश्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै पवनंजय अंजनाका संयोग वर्णन करनेवाला सोलहवां पर्व पूर्ण भया ॥१६॥

सप्तदश पर्व

[अंजनाके गर्भका प्रगट होना और सासू द्वारा घरसे निकाला जाना]

अथानंतर कैयक दिनोंविषैं महेंद्रकी पुत्री जो अंजना ताके गर्भके चिन्ह प्रगट भए। कछुइक मुख पांडुवर्ण होय गया मानों हनुमान गर्भमें आया सो तिनका यश ही प्रगट भया है। मंद चाल चलने लगी जैसा मदोन्मत्त दिग्गज विचरै है, स्तनयुगल अति उन्नतिको प्राप्त भए, श्यामलीभूत है अग्रभाग जिनके, आलसतैं वचन मंद मंद निसरैं, भौंहोंका कंप होता भया, इन लक्षणनिकरि ताहि सासू गर्भिणी जानकर पूछती भई। तैंने यह कर्म कौनतैं किया, तब यह हाथ जोड़ प्रणामकर पतिके आवनेका समस्त वृत्तांत कहती भई तदि केतुमती सासू क्रोधायमान भई। महा निठुर वाणीरूप पाषाणकर पीड़ती भई। कहा हे पापिनि ! मेरा पुत्र तेरैतैं अति विरक्त तेरा आकार भी न देख्या चाहै, तेरे शब्दको श्रवणविषैं धारै नाहीं, माता पितासों विदा होयकर रणसंग्रामको बाहिर निकस्या वह धीर कैसैं तेरे मंदिरमें आवै, हे निर्लज्ज ! धिकार है तुझ पापनी-कों। चंद्रमाकी किरण समान उज्ज्वल वंशकों दूषण लगावनहारी यह दोनों लोकमें निंद्य अशुभ-क्रिया तैंनें आचरी अर तेरी यह सखी वसंतमाला याने तोहि ऐसी बुद्धि दीनी, कुलटाके पास वेश्या रहै तब काहेकी कुशल ? मुद्रिका अर कड़े दिखाए तो भी ताने न मानी, अत्यंत कोप किया। एक क्रूर नामा किंकर बुलाया, वह नमस्कारकर आय ठाड़ा भया, तब क्रोधकर केतुमतीने लाल नेत्र कर कहा हे क्रूर ! सखी सहित याहि गाड़ीमें बैठाय महेंद्रनगरके निकट छोड़ा आवो। तब क्रूर केतुमतीकी आज्ञातैं सखीसहित अंजनाकों गाड़ीमें बैठायकर महेंद्रनगर-की ओर ले चाल्या। कैसी है अंजना सुंदरी ? अति कांपै है शरीर जाका, महा पवनकर उपड़ी जो बेल तासमान निराश्रय, अति आकुल कांतिरहित दुःखरूप अग्निकर जल गया है हृदय जाका, भयंकर सासूकों कछु उत्तर न दिया। सखीकी ओर धरे हैं नेत्र जानैं मनकर अपने अशुभ कर्मको वारंवार निंदती अश्रुधारा नाखती निश्चल नहीं है चित्त जाका, सो क्रूर इनको लेय चाल्या सो क्रूरकर्मविषैं अति प्रवीण है। दिवसके अंतमें महेंद्रनगरके समीप पहुचायकर नमस्कार

कर मधुर वचन कहता भया। हे देवि! मैं अपनी स्वामिनीकी आज्ञातैं तुमको दुखका कारण कार्य किया, सो क्षमा करहु ऐसा कहकर सखीसहित सुंदरीकूं गाड़ीतैं उतार विदा होय गाड़ी लेय स्वामिनीपै गया। जाय विनती करी—आपकी आज्ञाप्रमाण तिनकूं तहां पहुचाय आया हू।

अथानंतर महा उत्तम महा पतिव्रता जो अंजनासुंदरी ताहि पतिके योगतैं दुखके भारतैं पीड़ित देख सूर्य भा मानो चिंताकर मंद हो गई है प्रभा जाकी, अस्त होय गया अर रुदनकर अत्यंत लाल होय गए हैं नेत्र जाके, ऐसी अंजना सो मानो याके नेत्रकी अरुणताकर पश्चिमदिशा रक्त होय गई, अंधकार फैल गया, रात्रि भई, अंजनाके दुःखतैं निकसी जो आंसूनकी धारा तेई भए मेघ तिनकर मानों दशों दिशा श्याम होय गई अर पंछी कोलाहल शब्द करते भए सो मानों अंजनाके दुखतैं दुखी भए पुकारै हैं। वह अंजना अपवादरूप महादुःखका जो सागर तामैं डूबी क्षुधादिक दुख भूल गई, अत्यंत भयभीत अश्रुपात नाखै रुदनकरै, सो वसंतमाला सखी धैर्य बंधावै, रात्रीको पल्लवका सांथरा बिछाय दिया सो याको निद्रा रंच भी न आई। निरंतर उष्ण अश्रुपात पड़ैं सो मानों दाहके भयतैं निद्रा भाज गई, वसंतमाला पांव दाबै, खेद दूर किया दिलासा करी, दुखके योगकर एक रात्रि वर्ष बराबर बीती। प्रभातमें सांथरेकों तजकर नाना संकल्प विकल्पनिके सैंकड़ानि शंका करि अति विह्वल पिताके घरकी ओर चाली। सखी छाया समान संग चाली। पिताके मंदिरके द्वार जाय पहुंची। भीतर प्रवेश करती द्वारपालने रोकी, दुःखके योगतैं और ही रूप होय गया सो जानी न पड़ी। तब सखीने सब वृत्तांत कह्या सो जानकर शिलाकवाट नामा द्वारपालने एक और मनुष्यकों द्वारै मेलि आप राजाके निकट जाय नमस्कार करि विनती करी। पुत्रीके आगमनका वृत्तांत कह्या। तब राजाके निकट प्रसन्नकीर्ति नामा पुत्र बैठ्या हुता सो राजाने पुत्रकों आज्ञा करी-- तुम सम्मुख जाय उसका शीघ्र ही प्रवेश करावो अर नगरकी शोभा करावो तुम तो पहिले जावो और हमारी असवारी तयार करावो हम भी पीछेतैं आवै हैं, तदि द्वारपालने हाथ जोड़ नमस्कारकर यथार्थ विनती करी। तब राजा महेंद्र लज्जाका कारण सुनकर महा कोपवान भए अर पुत्रकों आज्ञा करी कि पापिनीकूं नगरमें तैं काढ़ देवो, जाकी वार्ता सुनकर मेरे कान मानो वज्रकर हते गए हैं। तब एक महोत्साह नामा बड़ा सामंत राजाका अतिवल्लभ, सो कहता भया, हे नाथ! ऐसी आज्ञा करनी उचित नाहीं, वसंतमालासों सब ठीक पाड़ लेहु, सासू केतुमती अति क्रूर है अर जिनधर्मतैं पराङ्मुख है, लौकिकसूत्र जो नास्तिकमत ताविषैं प्रवीण है तानैं विना विचारया झूठा दोष लगाया, यह धर्मात्मा श्रावकके व्रतकी धरणहारी, कल्याण आचारविषैं तत्पर पापिनी सासूने निकासी है अर तुम भी निकासौ तो कौनके शरणै जाय, जैसैं व्याघ्रकी दृष्टितैं मृगी त्रासको प्राप्त भई संती महा गहन वनका शरण लेय, तैसैं यह भोली निष्कपट सासूतैं शंकित भई तुम्हारे

शरण आई है, मानों जेठके सूर्यकी किरणके संतापतैं दुखित भई, महावृक्षरूप जो तुम सो तिहारे आश्रय आई है, यह गरीबिनी विह्वल है आत्मा जाका, अपवादरूप जो आताप ताकर पीड़ित तिहारे आश्रय भी साता न पावै तो कहां पावै ? मानों स्वर्गतैं लक्ष्मी ही आई है। द्वारपालने रोकी सो अत्यंत लज्जाकों प्राप्त भई विलखिकरि माथा ढांकि द्वारै खड़ी है आपके स्नेहकर सदा लाड़ली है, सो तुम दया करो यह निर्दोष है, मंदिरमांहि प्रवेश करावो। अर केतुमतीकी क्रूरता पृथिवीविषैं प्रसिद्ध है, ऐसे न्यायरूप वचन महोत्साह सामंतने कहे, सो राजा कान न धरैं, जैसैं कमलोंके पत्रनिविषैं जलकी बूंद न ठहरै तैसैं राजाके चित्तमैं यह बात न ठहरी। राजा सामंतसों कहते भए यह सखी वसंतमाला सदा याके पास रहै अर याहीके स्नेहके योगतैं कदाचित् सत्य न कहै तो हमको निश्चय कैसैं आवै, यातैं याके शीलविषैं संदेह है, सो याकों नगरतैं निकास देहु। जब यह बात प्रसिद्ध होयगी तो हमारे निर्मल कुलविषैं कलंक आवैगा जे बड़े कुलकी बालिका निर्मल हैं अर महा विनयवंती उत्तम चेष्टाकी धरणहारी हैं ते पीहर सासुरै सर्वत्र स्तुति करने योग्य हैं। जे पुण्याधिकारी बड़े पुरुष जन्महीतैं निर्मल शील पालैं हैं ब्रह्मचर्यको धारण करैं हैं अर सर्व दोषका मूल जो स्त्री तिनकों अंगीकार नाहीं करैं हैं ते धन्य हैं। ब्रह्मचर्य समान और कोई व्रत नाहीं अर स्त्रीके अंगीकारमैं यह सफल होय है, जो कुपूत बेटा बेटी होय अर उनके अवगुण पृथिवीविषैं प्रसिद्ध होय तो पिताका धरतीमें गड़ जाना होय है। सबही कुलकों लज्जा उपजै है, मेरा मन आज अति दुःखित होय रह्या है, मैं यह बात पूर्व अनेक वार सुनी हुती जो यह भरतारके अप्रिय है अर वह याहि आंखतैं नाहीं देखै है, सो ताकरि गर्भकी उत्पत्ति कैसैं भई, तातैं यह निश्चयसेती सदोष है। जो कोई याहि मेरे राज्यमें राखेगा सो मेरा शत्रु है। ऐसे वचन कहकर राजाने कोपकर जैसैं कोई जानैं नाहीं या भांति याकों द्वारतैं निकाल दीनी। सखीसहित दुखकी भरी अंजना राजाके निजवर्गके जहां जहां आश्रयके अर्थि गई, सो आनैं न दीनी, कपाट दिए, जहां बाप ही क्रोधायमान होय निराकरण करै, तहां कुटुंबकी कैसी आशा, वे तो सब राजाके आधीन हैं। ऐसा निश्चयकर सबतैं उदास होय सखीसों कहती भई, आंसूवोंके समूहकर भीज गया है अंग जाका, हे प्रिये यहां सर्व पाषाणचित्त हैं, यहां कैसा वास ? तातैं वनमें चालैं, अपमानतैं तो मरना भला। ऐसा कहकर सखीसहित वनको चाली, मानों मृगराजतैं भयभीत मृगी ही है शीत उष्ण अर वातके खेदकरि पीड़ित वनमैं बैठि महा रुदन करती भई। हाय हाय ! मैं मंदभागिनी दुखदाई जो पूर्वोपार्जित कर्म ताकरि महा कष्टकों प्राप्त भई। कौनके शरण जाऊं कौन मेरी रक्षा करै, मैं दुर्भाग्य सागरके मध्य कौन कर्मतैं पड़ी। नाथ ! मेरा अशुभ कर्मका प्रेरया कहांतैं आया ? काहेको गर्भ रह्या, मेरा दोनों ही ठौर निरादर भया। माताने भी मेरी रक्षा न करी, सो वह कहा करै

अपने धनीकी आज्ञाकारिणी पतिव्रतानिका यही धर्म है अर नाथ मेरा यह वचन कह गया हुता कि तेरे गर्भकी वृद्धितैं पहिले ही मैं आऊंगा सो होय नाथ, दयावान होय वह वचन क्यों भूले? अर सासूने विना परखे मेरा त्याग क्यों किया? जिनके शीलमें संदेह होय तिनके परखनेके अनेक उपाय हैं अर पिताकों मैं बाल-अवस्था विषैं अति लाड़ली हुती, निरंतर गोदमैं खिलावते हुते सो विना परखे मेरा निरादर किया इनकी ऐसी बुद्धि क्यों उपजी? अर मातानैं मुझे गर्भमें धारी, प्रतिपालन किया अब एक बात भी मुखतैं न निकाली कि इसके गुण दोषका निश्चय कर लेवें। अर भाई जो एक माताके उदरसों उत्पन्न भया हुता, सोहू मो दुःखिनीकों न राख सक्या, सब ही कठोर चित्त होय गए। जहां माता पिता भ्राताहीकी यह दशा, तहां काका बाबाके दूर भाई तथा प्रधान सामंत कहा करैं अथवा उन सबका कहा दोष? मेरा जो कर्मरूप वृक्ष फल्या सो अवश्य भोगना। या भांति अंजना विलाप करै सो सखी भी याके लार विलाप करै। मनतैं धैर्य जाता रह्या अत्यंत दीन मन होय यह ऊंचे स्वरतैं रुदन करै सो मृगी भी याकी दशा देख आंसू डालवे लागी, बहुत देरतक रोनेतैं लाल होय गए हैं नेत्र जाके तब सखी वसंतमाला महाविचक्षण याहि छातीसूं लगाय कहती भई--हे स्वामिनि! बहुत रोनेतैं क्या लाभ? जो कर्म तैंने उपार्ज्या है सो अवश्य भोगना है, सब ही जीवनिके कर्म आगैं पीछैं लग रहे हैं सो कर्मके उदयविषैं शोक कहा? हे देवि! जे स्वर्गलोकके देव सैकड़ों अप्सरावोंके नेत्रनिकर निरंतर अवलोकिए है, तेहू सुकृतके अंत होते परम दुःख पावै हैं। मनमैं चिंतिए कछु और, होय जाय कछु और। जगतके लोक उद्यममैं प्रवर्तैं हैं तिनकों पूर्वोपार्जित कर्मका उदय ही कारण है, जो हितकारी वस्तु आय प्राप्त भई सो अशुभकर्मके उदयतैं विघटि जाय। अर जो वस्तु मनतैं अगोचर है सो आय मिले। कर्मनिकी गति विचित्र हैं तातैं बाई! तू गर्भके खेदकरि पीड़ित है वृथा क्लेश मत कर, तू अपना मन दृढ़ कर। जो तैंने पूर्वजन्ममें कर्म उपार्जे हैं तिनके फल टारे न टरैं। अर तू तो महाबुद्धिमती है तोहि कहा सिखावूं जो तू न जानती होय तो मैं कहूं, ऐसा कहकर याके नेत्रनिके आंसू अपने वस्त्रतैं पोंछे। बहुरि कहती भई--हे देवि! यह स्थानक आश्रय रहित है, तातैं उठो आगैं चालैं या पहाड़के निकट कोई गुफा होय जहां दुष्ट जीवनिका प्रवेश न होय, तेरे प्रसूतिका समय आया है सो कईएक दिन यत्नसूं रहना। तब यह गर्भके भारतैं जो आकाश-के मार्ग चलनेमें हू असमर्थ है तो भूमिपर सखीके संग गमन करती महा कष्टकरि पांव धरती भई। कैसी है वनी? अनेक अजगरनितैं भरी, दुष्ट जीवनिके नादकरि अत्यंत भयानक अति सघन नाना प्रकारके वृक्षनिकरि सूर्यकी किरणका भी संचार नाहीं, जहां सूईके अग्रभाग समान डाभकी अणी अतितीक्ष्ण जहां कंकर बहुत अर माते हाथीनिके समूह अर भीलोंके समूह बहुत हैं अर बनीका नाम मातंगमालिनी है जहां मनकी भी गम्यता नाहीं तो तनकी कहा गम्यता?

सखी आकशामार्गतैं जायवेको समर्थ अर यह गर्भके भारकरि समर्थ नाहीं तातैं सखी याके प्रेमके बंधनसों बंधी शरीरकी छाया समान लार लार चालै है। अंजना वनीको अतिभयानक देखकर कांपै है, दिशा भूल गई, तब वसंतमाला याकों अति व्याकुल जानि हाथ पकड़ि कहती भई हे स्वामिनि! तू डरै मत, मेरै पाछैं पाछैं चली आवो।

तब यह सखीके कांधै हाथ मेलि चली जाय, ज्यों ज्यों डाभकी अणी चुभै त्यों त्यों अति खेदखिन्न होय विलाप करती देहकों कष्टतैं धारती जलके नीझरने जे अति तीव्र वेग संयुक्त वहैं तिनकों अति कष्टतैं पार उतरती अपने जे सब स्वजन अति निर्दई तिनका नाम चितार अपने अशुभ कर्मकों वारंवार निंदती बेलोंको पकड़ भयभीत हिरणी कैसे हैं नेत्र जाके अंगविषैं पसेवको धारती कांटोंसे वस्त्र लगि जांय सो छुड़ावती, लहूतैं लाल होय गए हैं चरण जाके, शोकरूप अग्निके दाहकरि श्यामताकों धरती, पत्र भी हालै तो त्रासकों प्राप्त होती, चलायमान है शरीर जाका बारंबार विश्राम लेती, ताहि सखी निरंतर प्रियवाक्य कर धैर्य बंधावै, सो धीरैं धीरैं अंजना पहाड़की तलहटी आई, तहां आंसू भरि बैठि गई। सखीसों कहती भई अब मुझमें एक पग धरनेकी हू शक्ति नाहीं,यहां ही रहूगी,मरण होय तो होय। तब सखी अत्यंत प्रेमकी भरी महा प्रवीण मनोहर वचननिकरि याकों शांति उपजाय नमस्कार करि कहती भई-हे देवि! यह गुफा नजदीक ही है कृपाकर इहांतैं उठकर वहां सुखसों तिष्ठो, यहां क्रूर जीव विचरैं हैं, तोकों गर्भकी रक्षा करनी है, तातैं हठ मति कर। ऐसा कह्या तब वह आतापकी भरी सखीके वचनकरि अर सघन वनके भयकरि चलवेको उठी,तब सखी हस्तावलंबन देयकर याकों विषमभूमितैं निकासकर गुफाके द्वारपर लेय गई। विना विचारे गुफामें बैठनेका भय होय सो ये दोनों बाहिर खड़ी विषम पाषाणके उलंघवेकर उपज्या है खेद जिनकों,तातैं बैठ गई। तहां दृष्टि धर देख्या। कैसी है दृष्टि? श्याम श्वेत आरक्त कमल समान प्रभाकों धरैं सो एक पवित्र शिलापर विराजे चारणमुनि देखे पल्यंकासन धरैं अनेक ऋद्धि संयुक्त निश्चल हैं श्वासोच्छ्वास जिनके,नासिकाके अग्र भागपर धरी है, सरल दृष्टि जिनने,शरीर स्तंभ समान निश्चल है,गोदपर धरया जो बांमा हाथ ताके ऊपर दाहिना हाथ समुद्र समान गंभीर, अनेक उपमासहित विराजमान आत्मस्वरूपका जो यथार्थ स्वभाव जैसा जिनशासनविषैं गाया है तैसा ध्यान करते, समस्त परिग्रहरहित पवन जैसैं असंगी, आकाश जैसैं निर्मल, मानों पहाड़के शिखर ही हैं सो इन दोनोंने देखे। कैसे हैं वे साधु? महापराक्रमके धारी महाशांत ज्योतिरूप है शरीर जिनका। ये दोनों मुनिके समीप गईं, सर्व दुःख विस्मरण भया, तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड़ि नमस्कार किया, मुनि परम बांधव पाए, फूल गए हैं नेत्र जिनके, जा समय जो प्राप्ति होनी होय सो होय, तदि ये दोनों हाथ जोड़ विनती करती भई। मुनिके चरणारविंदकी ओर धरैं हैं अश्रुपातरहित स्थिर नेत्र जिनने। हे भगवान्! हे कल्याणरूप!

हे उत्तम चेष्टाके धरणहारे ? तिहारे शरीरमें कुशल है। कैसा है तिहारा देह ? सर्व तपव्रत आदि साधनेका मूल कारण है, हे गुणनिके सागर ! ऊपरां ऊपर तपकी है वृद्धि जिनकी, हे महा-क्षमावान, शांतभावके धारी, मन इंद्रियोंके जीतनहारे ! तिहारा जो विहार है सो जीवनिके कल्याण-निमित्त है, तुम सारिखे पुरुष सकल पुरुषनिकों कुशलके कारण हैं सो तिहारी कुशल कहा पूछनी। परंतु यह पूछनेका आचार है, तातैं पूछी है, ऐसा कहि विनयतैं नम्रीभूत भया है शरीर जिनका सो चुप होय रहीं अर मुनिके दर्शनतैं सर्व भय रहित भई ॥

अथानंतर मुनि अमृततुल्य परमशांतिके वचन कहते भये—हे कल्याणरूपिणि ! हे पुत्री ! हमारे कर्मानुसार सब कुशल है। ये सर्व ही जीव अपने अपने कर्मोंका फल भोगवैं हैं। देखो कर्मनिकी विचित्रता, यह राजा महेंद्रकी पुत्री अपराध रहित कुटुंबके लोगनिने काढ़ी है। सो मुनि बड़े ज्ञानी विना कहे सब वृत्तांतके जाननहारे तिनको नमस्कारकर वसंतमाला पूछती भई--हे नाथ ! कौन कारणतैं भरतार यासों बहुत दिन उदास रहे ? बहुरि कौन कारण अनुरागी भए अर यह महासुखयोग्य वनविषैं कौन कारणतैं दुखको प्राप्त भई। कौन मंदभागी याके गर्भमें आया जाकरि याकों जीवनेका संशय भया। तदि स्वामी अमितिगति तीन ज्ञानके धारक सर्व वृत्तांत यथार्थ कहते भए। यही महा पुरुषोंकी वृत्ति है जो पराया उपकार करें। मुनि वसंतमालासों कहै हैं--हे पुत्री ! याके गर्भविषैं उत्तम बालक आया है, सो प्रथम तो ताके भव सुनि। बहुरि जा कारणतैं यह अंजना ऐसे दुखको प्राप्त भई जो पूर्व भवमें पापका आचरण किया सो सुन।

(हनुमान और अंजनाके पूर्वभव)

जम्बूद्वीपमें भरत नामा क्षेत्र तहां मंदरनाम नगर, तहां प्रियनंदी नामा गृहस्थ, ताके जाया नाम स्त्री अर दमयंत नामा पुत्र सो महा सौभाग्यसंयुक्त कल्याणरूप जे दया क्षमा शील संतोषादि गुण तेई है आभूषण जाके, एक समय वसंतऋतुमें नंदनवन तुल्य जो वन तहां नगरके लोग क्रीड़ाको गए। दमयंतने भी अपने मित्रों सहित बहुत क्रीडा करी अबीरादि सुगंध-निकरि सुगंधित है शरीर जाका अर कुंडलादि आभूषणनिकरि शोभायमान सो तानैं ताही समय महामुनि देखे कैसे हैं मुनि ? अंबर कहिए आकाश सो ही है अंबर कहिए वस्त्र जिनके, तप ही है धन जिनका अर ध्यान स्वाध्याय आदि जे क्रिया तिनविषैं उद्यमी, सो यह दमयंत महा देदीप्यमान क्रीड़ा करते जे अपने मित्र तिनको छोड़ मुनियोंकी मंडलीमें गया। वंदना कर धर्म का व्याख्यान सुन सम्यग्दर्शन संयुक्त भया श्रावक-व्रत धारे। नाना प्रकारके नियम अंगीकार किए। एकदिन जे सप्त गुण दाताके अर नवधा भक्ति तिनकरि संयुक्त होय साधुनिकों आहार दान दिया, कयक दिनविषैं समाधिमरणकर स्वर्गलोकको प्राप्त भया, नियमके अर दानके प्रभावतैं

अद्‌भुत भोग भोगता भया, सैकड़ों देवांगनानिके नेत्रनिकी कांति ही भई नीलकमल तिनकी मालाकरि अर्चित चिरकाल स्वर्गके सुख भोगे। बहुरि स्वर्गतैं चयकरि जम्बूद्वीपमैं मृगांकनामा नगरमैं हरिचंद नामा राजा ताकी प्रियंगुलक्ष्मी रानी, ताकै सिंहचंद नामा पुत्र भया। अनेक कला गुणनिविषै प्रवीण अनेक विवेकियोंके हृदयमें वसै, तहां भी देवोंकैसे भोग किए, साधुवों की सेवा करी। बहुरि समाधिमरणकर देवलोक गया। तहां मनवांछित अति उत्कृष्ट सुख पाए। कैसा है वह देव, देवियोंके जे वदन तेई भए कमल तिनके जो वन तिनके प्रफुल्लित करनेको सूर्य समान है। बहुरि तहांतैं चयकरि या भरतक्षेत्रविषैं विजयार्ध गिरिपर अरुणपुर नगरमैं राजा सुकंठ रानी कनकोदरी ताकै सिंहवाहन नामा पुत्र भया। अपने गुणनिकरि खैंचा है समस्त प्राणियोंका मन जानैं, तहां देवोंकैसे भोग भोगे। अप्सरा-समान स्त्री तिनके मनके चोर। भावार्थ—अतिरूपवान अति गुणवान सो बहुत दिन राज्य किया। श्रीविमलनाथजीके समोसरणमैं उपज्या है आत्मज्ञान अर संसारतैं वैराग्य जिनको सो लक्ष्मीवाहन नामा पुत्रको राज्य देय संसारकों असार जानि लक्ष्मीतिलक मुनिके शिष्य भए। श्रीवीतराग देवका भाख्या महाव्रतरूप यतिका धर्म अंगीकार किया। अनित्यादि द्वादश अनुप्रेक्षाका चिंतवनकरि ज्ञानचेतनारूप भए। जो तप काहू पुरुषतैं न बनै सो तप किया, रत्नत्रयरूप अपने निजभावनिविषैं निश्चल भए। परम तत्त्वज्ञानरूप आत्माके अनुभवविषैं मग्न भए। तपके प्रभावतैं अनेक ऋद्धि उपजी। सर्व बात समर्थ जिनके शरीरको स्पर्शकरि पवन आवै सो प्राणियोंके अनेक रोग दुःख हरै परंतु आप कर्म-निर्जराके कारण बाईस परीषह सहते भए। बहुरि आयु पूर्णकर धर्मध्यानके प्रसादतैं ज्योतिषचक्रको उलंघकर सातवां लांतव नामा स्वर्ग तहां बड़ी ऋद्धिके धारी देव भए। चाहैं जैसा रूप करैं, चाहैं जहां जाय, जो वचनकरि कहनेमें न आवै। ऐसे अद्भुत सुख भोगे परंतु स्वर्गके सुखविषैं मग्न न भए। परम धामकी है इच्छा जिनको, तहांतैं चयकरि या अंजनाकी कुक्षिविषैं आए हैं, सो महा परमसुखके भाजन हैं। बहुरि देह न धारेंगे, अविनाशी सुखको प्राप्त होवेंगे, चरम शरीरी हैं। यह तो पुत्रके गर्भमें आवनेका वृत्तांत कह्या। अब हे कल्याणचेष्टिनि! यानैं जिमकारणतैं पतिका विरह अर कुटुम्बतैं निरादर पाया सो वृत्तांत सुन। इस अंजनासुंदरीने पूर्वभवमें देवाधिदेव श्रीजिनेंद्रदेवकी प्रतिमा पटरानी पदके अभिमानकरि सौकिन (सौत) के ऊपर क्रोधकर मंदिरतैं बाहिर निकासी, ताही समय एक संयमश्री आर्यिका याके घर आहारको आई हुती, तपकरि पृथिवीपर प्रसिद्ध हुती सो याके द्वारा श्रीजीकी मूर्तिका अविनय देख पारणा न किया। पीछे चाली अर याको अज्ञानरूप जान महा दयावंती होय उपदेश देती भई। जे साधुजन हैं ते सबका भला ही चाहै हैं। जीवनिके समझावनेके निमित्त विना पूछे ही साधुजन श्रीगुरुकी आज्ञातैं धर्मोपदेश देनेकों प्रवर्तैं हैं। ऐसा जानकरि वह संयमश्री शीलसंयमरूप आभूषणकी धरणहारी

पटराणीको महामाधुर्यभरे अनुपम वचन कहती भई, हे भोरी ! सुन तू राजाकी पटराणी है अर महारूपवती है, राजा का बहुत सन्मान है, भोगनिका स्थानक है, शरीर तेरा सो पूर्वोपार्जित पुण्यका फल है । या चतुर्गतिविषैं जीव भ्रमैं है, महादुःख भोगैं है, कबहुक अनंतकालविषैं पुण्यके योगतैं मनुष्यदेह पावैं है । हे शोभने ! मनुष्यदेह काहू पुण्यके योगतैं पाई है, तातैं यह निंद्य आचार तू मत कर, योग्य क्रिया करनेके योग्य है । यह मनुष्यदेह पाय जो सुकृत न करैं हैं सो हाथ में आया रत्न खोवै हैं मन तथा वचन तथा कायसे जो शुभक्रियाका साधन है सोई श्रेष्ठ है अर अशुभ क्रियाका साधन हैं सो दुःखका मूल है । जे अपने कल्याणके अर्थि सुकृतविषैं प्रवर्तैं हैं, तेई उत्तम हैं, यह लोक महानिंद्य अनाचार का भरया है । जे संत संसारसागरतैं आप तिरैं हैं, औरनिको तारैं हैं, भव्यजीवोंको धर्मका उपदेश देय हैं तिन समान और उत्तम नाहीं, ते कृतार्थ हैं, तिन मुनिके नाथ सर्व जगतके नाथ धर्मचक्री श्रीअरहंत देव तिनके प्रतिबिंबका जे अविनय करैं हैं ते अज्ञानी अनेक भवविषैं कुगतिके महादुख पावैं हैं । सो वे दुःख कौन वर्णन कर सकै । यद्यपि श्रीवीतरागदेव राग-द्वेषरहित हैं जे सेवा करैं तिनतैं प्रसन्न नाहीं, अर जे निंदा करैं तिनतैं द्वेष नाहीं, महामध्यस्थ भाव को धारैं हैं परंतु जे जीव सेवा करैं ते स्वर्ग-मोक्ष पावैं हैं । जे निंदा करैं ते नरक-निगोद पावैं । काहेतैं, जीवोंके शुभ अशुभपरणामनितैं सुख-दुःखकी उत्पत्ति होय हैं । जैसैं अग्निके सेवनतैं शीतका निवारण होय है अर खान-पानतैं क्षुधा-तृषाकी पीड़ा मिटै है, तैसैं जिनराजके अर्चनतैं स्वयमेव ही सुख होय है अर अविनयतैं परम दुख होय है । अर हे शोभने ! जे संसारविषैं दुख दीखैं हैं ते सर्व पापके फल हैं अर जे सुख हैं ते धर्मके फल हैं । सो तू पूर्व पुण्यके प्रभावतैं महाराजकी पटराणी भई अर महासंपत्तिवती भई अर अद्भुत कार्यका करणहारा तेरा पुत्र है अब तू ऐसा कर जो सुख पावै । मेरे वचनतैं अपना कल्याणकर । हे भव्ये ! सूर्यके अर नेत्रके होते संते तू कूपमें मत पड़ै जो ऐसे कर्म करेगी तो घोर नरकमें पड़ेगी, देवगुरुशास्त्रका अविनय करना अनंत दुःखका कारण है अर ऐसे दोष देखे जो मैं तोहि न संबोधूं तो मोहि प्रमादका दोष लागै है, तातैं तेरे कल्याण निमित्त धर्मोपदेश दिया है जब श्रीआर्यिकाजीने ऐसा कह्या तब यह नरकतैं डरी सम्यग्दर्शन धारण किया । श्राविकाके व्रत आदरे श्रीजीकी प्रतिमा मंदिरविषैं पधराई, बहुत विधानतैं अष्ट-प्रकारकी पूजा कराई, या भांति राणी कनकोदरीकों आर्यिका धर्मका उपदेश देय अपने स्थानकों गई अर वह कनकोदरी श्रीसर्वज्ञदेव का धर्म आराधकर समाधिमरणकर स्वर्गलोकमें गई, तहां महासुख भोगे अर स्वर्गतैं चयकर महेन्द्रकी राणी जो मनोवेगा ताके अंजनासुंदरी नामा तू पुत्री भई । सो पुण्यके प्रभावतैं राजकुलविषैं उपजी उत्तम वर पाया अर जो जिनेन्द्रदेवकी प्रतिमाकों एकक्षण मंदिरके बाहिर राखा ताके पापकरि धनीका वियोग अर कुटुम्बतैं पराभव पाया ।

विवाहके तीन दिन पहिले पवनंजय प्रच्छन्नरूप आए रात्रिमें तिहारे झरोखेविषैं प्रहस्तमित्रके सहित बैठे हुते सो ता समय मिश्रकेशी सखीने विद्युत्प्रभकी स्तुति करी, अर पवनंजयकी निंदा करी ता कारण पवनंजय द्वेषकों प्राप्त भए। बहुरि युद्धके अर्थ घरतैं चाले मानसरोवरपर डेरा किया तहां चकवीका विरह देखकर करुणा उपजी, सो करुणा ही मानो सखीका रूप होय कुमारकों सुंदरीके समीप लाई, तब ताकै गर्भ रह्या। बहुरि कुमार प्रच्छन्न ही पिताकी आज्ञाके साधिवेके अर्थि रावणके निकट गए। ऐसा कहकर फिर मुनि अंजनासों कहते भए, महा करुणाभावकर अमृतरूप वचन खिरते भए, हे बालिके! तू कर्मके उदयकरि ऐसे दुःखकों प्राप्त भई तातैं बहुरि ऐसा निंद्य कर्म मत करना। संसारसमुद्रके तारणहारे जे जिनेंद्रदेव तिनकी भक्ति कर। या पृथिवीविषैं जे सुख हैं ते सर्व जिनभक्तिके प्रतापतैं होय हैं ऐसे अपने भव सुनकर अंजना विस्मयको प्राप्त भई अर अपने किए जे कर्म तिनको निंद्यती अति पश्चात्ताप करती भई। तब मुनिने कही हे पुत्री! अब तू अपनी शक्तिप्रमाण नियम लेहु अर जिनधर्मका सेवन कर, यति-व्रतियोंकी उपासनाकर। तैंनैं ऐसे कर्म किए थे जो अधोगतिको जाती परंतु संयमश्री आर्याने कृपाकर धर्मका उपदेश दिया सो हस्तावलंबन देय कुगतिके पतनतैं बचाई अर यह बालक तेरे गर्भविषैं आया है सो महा कल्याणका भाजन है। या पुत्रके प्रभावतैं तू परमसुख पावेगी, तेरा पुत्र अखंडवीर्य है, देवनि-हूकरि जीत्या न जाय। अर अब थोड़े ही दिनमें तेरा तेरे भरतारतैं मिलाप होयगा, तातैं हे भव्ये! तू अपने चित्तमें खेद मत करै, प्रमादरहित जो शुभ क्रिया तामैं उद्यमी होहु। ये मुनिके वचन सुन अंजना अर वसंतमाला बहुत प्रसन्न भईं अर बारंबार मुनिको नमस्कार किया, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके। मुनिराजने इनको धर्मोपदेश देय आकाशमार्गतैं विहार किया। सो निर्मल है चित्त जिनका ऐसे संयमनिको यही उचित है कि जो निर्जन स्थानक होय तहां निवास करैं सो भी अल्प ही रहैं, या प्रकार निज-भव सुन अंजना पापकर्मतैं अति डरी अर धर्मविषैं सावधान भई वह गुफा मुनिके विराजवेतैं पवित्र भई हुती सो तहां अंजना वसंतमालासहित पुत्रका प्रसूति समय देखकर रही।

गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहैं हैं—हे श्रेणिक! अब वह महेंद्रकी पुत्री गुफामें रहै, वसंतमाला विद्याबलकरि पूर्ण विद्याके प्रभावकरि खान-पान आदि याके मनवांछित सर्व सामग्री करै। अथानंतर अंजना पतिव्रता पिया रहित वनविषैं अकेली सो मानो सूर्य याका दुख देख न सक्या सो अस्त होने लग्या, मानो याके दुखतैं सूर्यहूकी किरण मंद होय गई, सूर्य अस्त होय गया, पहाड़के शिखर अर वृक्षनिके अग्रभागमें जो किरणोंका उद्योत रह्या था सो भी संकोच लिया।

अथानंतर संध्याकर क्षणएक आकाशमंडल लाल होय गया सो मानो अब क्रोधका भरया सिंह आवेगा, ताके लाल नेत्रनिकी ललाई फैली है बहुरि होनहार जो उपसर्ग ताकी प्रेरी

शीघ्र ही अंधकारका स्वरूप रात्रि प्रगट भई मानो राक्षसिनी ही रसातलतैं नीसरी है, पक्षी संध्या समय चिगचगाटकर गहन वनमें शब्दरहित वृक्षनिके अग्रभागपर तिष्ठे मानों रात्रिकों श्यामस्वरूप डरावनी देख भयकर चुप होय रहे। शिवा कहिए स्यालिनी तिनके भयानक शब्द प्रवर्तैं सो मानों होनहार उपसर्गके ढोल ही बाजै हैं।

अथानंतर गुफाके मुख सिंह आया, कैसा है सिंह? विदारे हैं हाथियोंके जे कुंभस्थल, तिनके रुधिरकर लाल होय रहे हैं केश जाके, अर काल समान क्रूर भृकुटीको धरै अर महा विषम शब्द करता जिसके शब्दकरि वन गुंजि रह्या है अर प्रलयकालकी अग्निकी ज्वाला समान जीभकों मुखरूप गुफातैं काढ़ता, कैसी है जीभ? महाकुटिल है अनेक प्राणियोंकी नाश करनहारी बहुरि जीवनिके खैंचनेको जाकी अंकुश समान-श्याम जीभ। तीक्ष्ण दाढ़ महा कुटिल है रौद्र सबनिको भयंकर है अर जाके नेत्र अतित्रासके कारण ऊगता जो प्रलयकालका सूर्य ता समान तेजको धरैं, दिशाओंके समूहको रंगरूप करै। वह सिंह पूंछकी अणीको मस्तक ऊपर धरै नखकी अणीतैं विदारी है धरती जानै, पहाड़के तट समान उरस्थल अर प्रबल है जांघ जाकी, मानों वह सिंह मृत्युका स्वरूप दैत्य समान अनेक प्राणियोंका क्षय करणहारा अंतकको भी अंतक समान, अग्नितैं भी अधिक प्रज्वलित, ऐसे डरावने सिंहको देखकर वनके सब जीव डरे। ताके नादकर गुफा गाज उठी, सो मानों भयकर पहाड़ रोवनैं लाग्या। अर याका निठुर शब्द वनके जीवोंके कानिनिको ऐसा बुरा लाग्या मानों भयानक मुद्गरका घात ही है। जाके चिरमी समान लाल नेत्र सो ताके भयकरि हिरण चित्राम कैसे होय रहे। अर मदोन्मत्त गजनिका मद जाता रह्या, सब ही पशुगण अपने अपने ताईं बच्चानि कूं लेय भयकरि कंपायमान वृक्षोंके आसरै होय रहे। नाहरकी ध्वनि सुन अंजनाने ऐसी प्रतिज्ञा करी जो उपसर्गतैं मेरा शरीर जाय तो मेरे अनशनव्रत है उपसर्ग टरे भोजन लेना। अर सखी वसंतमाला खडग हैं हाथमैं जाके कबहूं तो आकाशविषै जाय, कबहू भूमिपर आवै अतिव्याकुल भई पक्षिणीकी नाईं भ्रमै। ये दोनों महा भयवान कंपायमान है हृदय जिनका तब गुफाका निवासी जो मणिचूल नामा गंधर्वदेव तासूं ताकी रत्नचूला नामा स्त्री महादयावंती कहती भई, हे देव! देखो ये दोनों स्त्री सिंहतै महाभयभीत हैं अर अति विह्वल हैं, तुम इनकी रक्षा करो, तब गंधर्वदेवकों दया उपजी तत्काल विक्रियाकरि अष्टापदका स्वरूप रच्या सो सिंहका अर अष्टापदका महा भयंकर शब्द होता भया सो अंजना हृदयमें भगवानका ध्यान धरती भई अर वसंतमाला सारसकी नाईं विलाप करै, हाय अंजना! पहिले तो तू धनीके अप्रिय दुर्भागिनी भई बहुरि काहूइक प्रकार धनीका आगमन भया सो तातैं तोकों गर्भ रह्या सो सासने विना समझे घरतैं निकासी, बहुरि माता पितानेहू न राखी, सो महा भयानक वनविषै आई। तहां पुण्यके योगतैं मुनिका दर्शन भया, मुनिने धैर्य बंधाया, पूर्वभव कहे,

धर्मोपदेश देय आकाशके मार्ग गए, अर तू प्रसूतिकेअर्थि गुफाविषै रही सो अब या सिंहके मुखमें प्रवेश करैगी हाय ! हाय ! राजपुत्री निर्जन वनविषै मरणको प्राप्त होय है, अब या वनके देवता दयाकर रक्षा करो। मुनिने कहीं हुती जो तेरा सकल दुःख गया सो कहा मुनिहूके वचन अन्यथा होय हैं ? या भांति विलाप करती वसंतमाला हिंडोले झूलनेकी नाईं एक स्थल न रहे क्षणविषैं अंजना सुंदरीके समीप आवै क्षणविषैं बाहिर जावै।

अथानंतर वह गुफाका गंधर्वदेव जो अष्टापदका स्वरूप धरि आया हुता ताने सिंहके पंजेकी दीनी तब सिंह भाग्या अर अष्टापद सिंहको भगाय कर निजस्थानक गया। यह स्वप्न-समान सिंह और अष्टापदके युद्धका चरित्र देख वसंतमाला गुफामें अंजना सुंदरीके समीप आई, पल्लवोंसे भी अति कोमल जो हाथ तिनकरि विश्वासती भई, मानो नवा जन्म पाया, हितकर संभाषण करती भई, सो एक वर्ष बराबर जाय है रात्रि जिनकी ऐसी यह दोनों कभी तो कुटुंबके निर्दईपनेकी कथा करैं, कभी धर्मकथा करैं। अष्टापदने सिंहको ऐसे भगाया जैसें हाथीको सिंह भगावे अर सर्पको गरुड़ भगावे। बहुरि वह गंधर्वदेव बहुत आनंदरूप होय गावने लग्या सो ऐसा गावता भया जो देवोंके भी मनका मोहै ता मनुष्योंका कहा बात ? अर्धरात्रिके समय सब शब्दरहित होय गए तब यह गावता भया अर वारंवार वीणाको अति रागतैं बजावता भया और भी तारके बाजे बजावता भया अर मंजीरादिक बजावता भया मृदंगादिक बजावता भया, बांसुरी आदिक फूकके बाजे बजावता भया। अर सप्तस्वरोंमें गाया तिनके नाम षडज १, ऋषभ २, गांधार ३, मध्यम ४, पंचम ५, धैवत ६, निषाद ७. इन सप्त स्वरोंके तीन ग्राम शीघ्र मध्य विलंबित अर इकीस मूर्छना हैं सो गंधर्वोमें जे बड़े देव हैं तिनके समान गान किया। या गान विद्यामें गंधर्वदेव प्रसिद्ध हैं। उचास स्थानक रागके हैं सो सब ही गंधर्वदेव जानैं हैं। भगवान श्री-जिनेंद्रदेवके गुण सुंदर अक्षरोंमें गाए। मैं श्रीअरिहंत देवको भक्ति कर वंदू हू। कैसे हैं भगवान ? देव अर दैत्योंकर पूजनीक हैं। देव कहिये स्वर्गवासी, दैत्य कहिए ज्योतिषी किंनर अर भवनवासी, ये चतुरनिकायके देव हैं, सो भगवान सब देवोंके देव हैं, जिनको सुर-नर विद्याधर अष्ट द्रव्यतैं पूजैं हैं। बहुरि कैसे हैं ? तीन भुवनमे अति प्रवीन हैं अर पवित्र हैं अतिशय जिनके ऐसे जे श्रीमुनिसुव्रतनाथ तिनके चरणयुगलमें भक्ति पूर्वक नमस्कार करूं हू जिनके चरणारविंदके नखनिकी कांति इंद्रके मुकुटकी रत्नोकी ज्योतिको प्रकाश करै है, ऐसे गान गंधर्वदेवने गाए। सो वसंतमाला अतिप्रसन्न भई ऐसे राग कभी सुने नाहीं थे, सो विस्मयकर व्याप्त भया है मन जाका वा गीतकी अति-प्रशंसा करती भई। धन्य यह गीत काहूने अतिमनोहर गाए, मेरा हृदय अमृतकर आर्द्र किया। अंजनाको वसंतमाला कहती भई, यह कोई दयावान् देव हैं जानैं अष्टापदका रूप धारि सिंहको भगाया अर हमारी रक्षा करी अर यह मनोहर राग याहीनैं अपने आनंदके अर्थि गाए हैं। हे देवि ! हे शोभने, हे शीलवंती ! तेरी दया सब ही करैं। जे भव्य जीव हैं तिनके महाभयंकर

वनविषैं देव मित्र होय हैं, या उपसर्गके विनाशतैं निश्चय तेरा पतिसों मिलाप होयगा अर तेरे पुत्र अद्भुत पराक्रमी होयगा। मुनिके वचन अन्यथा न होंय, सो मुनिके ध्यान कर जो पवित्र गुफा ता विषैं श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमा पधराय दोनो सुगंध द्रव्यनितैं पूजा करती भईं। दोनोंके चित्तविषैं यह विचार कि प्रसूति सुखतैं होय। वसंतमाला नानाभांति अंजनाके चित्तको प्रसन्न करै है अर कहती भई कि हे देवि! मानों यह वन अर गिरि तिहारे पधारनेतैं परम हर्षकों प्राप्त भया है सो नीझरनेके प्रवाहकर यह पर्वत मानों हंसै ही है अर यह वनके वृक्ष फलोंके भारतैं नम्रीभूत लहलहाट करै हैं, कोमल हैं पल्लव जिनके, विखर रहे है फूल जिनके, सो मानों हर्षको प्राप्त भए हैं। अर जे मयूर सूवा मैना कोकिलादिक मिष्ट शब्द कर रहे हैं सो मानों वन पहाड़तैं वचनालाप करै हैं। कैसा हे पर्वत नानाप्रकारकी जे धातु तिनकी है खान जहां, अर सघन वृक्षोंके जे समूह सो इस पर्वतरूप राजाके सुन्दर वस्त्र हैं, अर यहां नानाप्रकारके रत्न हैं सोई या गिरिके आभूषण भए, अर या पर्वतमे भली भली गुफा हैं अर यहां अनेक जातिके सुगंध पुष्प हैं, अर या पर्वत ऊपर बड़े बड़े सरोवर हैं तिनमे सुगंध कमल फूल रहें हैं तेरा मुख महासुंदर अनुपम सो चन्द्रमाकी और कमलकी उपमाकों जीतै हैं। हे कल्याणरूपिणि! चिंताके वश मति होहु, धैर्य धर, या वनमें सर्व कल्याण होयगा, देव सेवा करैंगे। पुण्याधिकारिणी तेरा शरीर निष्पाप है, हर्षतैं पक्षी शब्द करै हैं सो मानों तेरी प्रशंसा ही करै हैं। यह वृक्ष शीतल मंद सुगंध पवनके प्रेरे पत्रोंके लहलहाटतैं मानो तेरे विराजवे करि महाहर्षको प्राप्त भए नृत्य ही करै हैं। अब प्रभातका समय भया है, पहले तो आरक्त संध्या भई सो मानों सूर्यने तेरी सेवा निमित्त सखी पठाई। अर अब सूर्य भी तेरा दर्शन करनेके अर्थि मानों उदय होनेको उद्यमी भया है। यह प्रसन्न करनेकी बात वसंतमालानैं जब कही तब अंजना सुंदरी कहती भई, हे सखी! तोहि होते संते मेरे निकट सर्व कुटुम्ब है अर यह वन ही तेरे प्रसादतैं नगर है। जो या प्राणीकों आपदामैं सहाय करै है सो ही परम बांधव है अर जो बांधव दुःखदाता है सो ही परम शत्रु है। या भांति परस्पर मिष्ट-संभाषण करती ये दोनों गुफामैं रहैं, श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमाका पूजन करैं। विद्याके प्रभावतैं वसंतमाला खान-पान आदि बड़ी विधिसेती सब सामग्री करै। वह गंधर्वदेव सब प्रकार इनकी दुष्ट जीवनितैं रक्षा करै अर निरंतर भक्तितैं भगवानके अनेक गुण नानाप्रकारके राग रचना करि गावै।

(हनुमान का जन्म)

अथानंतर अंजनाके प्रसूतिका समय आया। तब वह वसंतमाला से कहती भई हे सखी! आज मेरे कछु व्याकुलता है तब वसंतमाला बोली--हे शोभने! तेरे प्रसूतिका समय है, तू आनन्दको प्राप्त होहु तब याके लिए कोमल पल्लवोंकी सेज रची। तापर याके पुत्रका जन्म भया जैसैं पूर्व दिशा सूर्यको प्रगट करै तैसैं यह हनुमानको प्रगट करती भई। पुत्रके जन्मतैं गुफाका अंधकार जाता रह्या प्रकाशरूप होय गई। मानों सुवर्णमई ही भई। तदि अंजना पुत्रकों उरसों लगाय दीनताके

वचन कहती भई कि हे पुत्र ! तू गहन वनविषैं उत्पन्न भया तेरे जन्मका उत्सव कैसे करूं ? जो तेरा दादेके तथा नानाके घर जन्म होता तो जन्मका बड़ा उत्सव होता, तेरा मुखरूप चंद्रमाके देखवेतैं कौनको आनंद न होय, मैं कहा करूं, मंदभागिनी सर्व वस्तु रहित हू। दैव कहिए पूर्वोपार्जित कर्मने मोहि दुःखदायिनी दशाको प्राप्त करी जो मैं कछु करनेको समर्थ नाहीं हूं परंतु प्राणीनिकों सर्व वस्तुतैं दीर्घायु होना दुर्लभ है। सो हे पुत्र ! चिरजीवी होहु तू है तो मेरे सर्व है। यह प्राणोंका हरणहारा महा गहन वन है यामैं जो मैं जीवूं हू सो तो तेरे ही पुण्यके प्रभावतैं। ऐसे दीनताके वचन अंजनाके मुखतैं सुनकरि वसंतमाला कहती भई कि हे देवि ! तू कल्याणपूर्ण है ऐसा पुत्र पाया। यह सुंदर लक्षण शुभरूप दीखै है बड़ी ऋद्धिका धारी होयगा। तेरे पुत्रके उत्सवतैं मानों यह बेलिरूप वनिता नृत्य करै हैं चलायमान हैं कोमल पल्लव जिनके, अर जो भ्रमर गुंजार करैं हैं सो मानो संगीत करैं हैं। यह बालक पूर्ण तेज है सो याके प्रभावकरि तेरे सकल कल्याण होंयगे। तू वृथा चितावती मत हो। या भांति इन दोऊनिके वचनालाप होते भए।

अथानंतर वसंतमालाने आकाशमैं सूर्यके तेज समान प्रकाशरूप एक ऊंचा विमान देख्या सो देख कर स्वामिनीसो कह्या तब वह शंका कर विलाप करती भई, यह कोई निःकारण वैरी मेरे पुत्रको ले जायगा अथवा मेरा कोई भाई है। तिनके विलाप सुन विद्याधरने विमान थांभ्या, दया संयुक्त आकाशतैं उतरया। गुफाके द्वार पर विमानको थांभि महा नीतिवान महा विनयवान शंकाकों धरता संता स्त्री सहित भीतर प्रवेश किया, तब वसंतमालाने देखकरि आदर किया। यह शुभ मन विनयतैं बैठ्या और क्षणएक बैठ करि महामिष्ट अर गंभीरवाणी कहकर वसंतमालकों पूछता भया। ऐसे गम्भीर वचन कहता भया मानो मयूरनिको हर्षित करता मेघ ही गरज्या है। सुमर्यादा कहिए मर्यादाकी धरणहारी यह बाई कौनकी बेटी, कौनने परणी, कौन कारणतैं महावनमें रहे है। यह बड़े घरकी पुत्री है कौन कारणतैं सब कुटुम्बतैं रहित भई है अथवा या लोकविषैं रागद्वेष रहित जे उत्तम जीव हैं तिनके पूर्व कर्मोके प्रेरे निःकारण वैरी होय हैं तदि वसंतमाला दुःखके भारकरि रुक गया है कंठ जाका आसूं डारती नीची है दृष्टि जाकी कष्टकर वचन कहती भई। महानुभाव ! तिहारे वचनहीतैं तिहारे मनकी शुद्धता जानी जाय हैं। जैसे रोग अर मृत्युका मूल जो विषवृक्ष ताकी छाया हू सुंदर न होय अर जैसे दाहके नाशका मूल जो चंदनका वृक्ष ताकी छाया भी सुंदर लागै है सो तुम सारिखे जे गुणवान पुरुष हैं सो शुद्धभाव प्रकट करनेके स्थानक हैं। आप बड़े हो, दयालु हो यदि तिहारे याके दुःख सुनवेकी इच्छा है तो सुनहु मैं कहू हू। तुम सारिखे बड़े पुरुषनिकों कह्या संता दुःख निवृत्त होय है। तुम दुःखहारी पुरुष हो, तिहारा यही स्वभाव ही है जो आपदाविषैं सहाय करो। सो मैं कहू सुनहु। यह अंजना सुंदरी राजा महेंद्रकी पुत्री है, वह राजा पृथिवीपर प्रसिद्ध महा

यशवान्,नीतिवान् निर्मल स्वभाव है। और राजा प्रह्लाद का पुत्र पवनंजय गुणोंका सागर ताकी प्राण हू तैं प्यारी यह स्त्री है,सो पवनंजय एक समय बापकी आज्ञातैं रावणके निकट वरुणसों युद्धके अथि विदा होय चाले हुते सो मानसरोवरतैं रात्रिकों याके महलमैं गोप्य आए तातैं, याको गर्भ रह्या सो याकी सासूका क्रूर स्वभाव दयारहित महामूर्ख था ही वाके चित्तमें गर्भका भर्म उपज्या तब वानै याकों पिताके घर पठाई। यह सब दोषरहित महासती शीलवंती निर्विकार है सो पिताने भी अकीर्तिके भयतैं न राखा। जे सज्जन पुरुष हैं ते झूठे भी दोषतैं डरै हैं। यह बड़े कुलकी बालिका सर्व आलंबन रहित या वनविषैं मृगीसमान रहै है। मैं याकी सेवा करूं हूं। इनके कुलक्रमतैं हम आज्ञाकारी सेवक हैं इतवारी हैं अर कृपापात्र हैं सो यह आज या वनविषैं प्रसूति भई हैं। यह वन नाना उपसर्गका निवास है न जानिए कैसे याकों सुख होयगा। हे राजन्! यह याका वृत्तांत संक्षेपतैं तुमसों कह्या अर सम्पूर्ण दुःख कहांतक कहू या भांति स्नेहकरि पूरित जो वसंतमालाके हृदयका राग सो अंजनाके तापरूप अग्नितैं पिघल्या संता अंगमें न समाया सो मानों वसंतमालाके वचन द्वारकरि बाहिर निकस्या। तब वह राजा प्रतिसूर्य हनूरुहनाम द्वीपका स्वामी वसंतमालासू कहता भया--हे भव्ये! मैं राजा चित्रभानु अर राणी सुंदरमालिनीका पुत्र हू, यह अंजना मेरी भानजी है। मैंने बहुत दिनमें देखी सो पिछानी नाहीं ऐसा कहकर अंजनाका बाल्यावस्थातैं लेकर सकल वृत्तांत कहकर गद्गद वाणीकर वचनालापकर आसू डालता भया। तब पूर्ण वृत्तांत कहिनेतैं अंजनाने याकों मामा जान गले लागि बहुत रुदन किया सो मानों सकल दुःख रुदन-सहित निकस गया। यह जगतकी रीति है हितुको देख अश्रुपात पड़ै हैं वह राजा भी रुदन करने लाग्या अर ताकी रानी भी रोवने लागी। वसंतमालाने भी अति रुदन किया इन सबके रुदनतैं गुफा गुंजार करती भई सो मानो पर्वतने भी रुदन किया। जलके जे नीझरने तेई भए अश्रुपात तिनतैं सब वन शब्दमई होय गया। वनके जीव जे मृगादि सो भी रुदन करते भए। तदि राजा प्रतिसूर्यने जलतैं अंजनाका मुख प्रक्षालन कराया अर आप भी जलतैं मुख पखाल्या। वन हू शब्द-रहित होय गया मानों इनकी वार्ता सुनना चाहै है। अंजना प्रतिसूर्यकी स्त्रीतैं सम्भाषण करती भई सो बड़ोंकी यह रीति है जो दुःखविषैं हू कर्तव्यतैं न चूकैं। बहुरि अंजना मामासों कहती भई हे पूज्य! मेरे पुत्रका समस्त शुभाशुभ वृत्तांत ज्योतिषीनितैं पूछो तब सांवत्सर नामा ज्योतिषी लार था ताकों पूछ्या तब ज्योतिषी बोल्या बालकके जन्मकी वेला बताओ तब वसंतमालाने कही आज अर्धरात्रि गए जन्म भया है तब लग्न थाप कर बालकके शुभ लक्षण जान ज्योतिषी कहता भया कि यह बालक मुक्तिका भाजन है। बहुरि जन्म न धरैगा जो तिहारे मनमें संदेह है तो मैं संक्षेपतासों कहू हू सो सुनो—चैत्रवदी अष्टमीकी तिथि है अर श्रवण नक्षत्र है अर सूर्य मेषका उच्चस्थानविषैं बैठ्या है अर चंद्रमा वृषका है अर मकरका मंगल है अर बुध मीनका है अर बृहस्पति कर्कका है सो उच्च है।

शुक्र तथा शनैश्चर दोनों मीनके हैं सूर्य पूर्ण दृष्टिकर शनिको देखै है अर मंगल दश विश्वा सूर्यको देखै है अर बृहस्पति पंद्रह विश्वा सूर्यको देखै है अर सूर्य बृहस्पतिको दश विश्वा देखै है अर चंद्रमाको पूर्ण दृष्टि करि बृहस्पति देखै है अर बृहस्पतिको चंद्रमा देखै है अर बृहस्पति शनिश्चरको पंद्रहविश्वा देखै है अर शनिश्चर बृहस्पतिको दशविश्वा देखै हैं। बृहस्पति शुक्रको पंद्रह विश्वा देखै है अर शुक्र बृहस्पतिको पंद्रह विश्वा देखै हैं याके सब ही ग्रह बलवान बैठे हैं सूर्य और मंगल दोनो याका अद्भुत राज्य निरूपण करै हैं अर बृहस्पति अर शनि मुक्तिका देनहारा जो योगीन्द्रपद ताका निर्णय करै हैं। जो एक बृहस्पति ही उच्चस्थान बैठ्या होय तो सर्व कल्याणके प्राप्तिका कारण है अर ब्रह्मनामा योग है अर मुहूर्त शुभ है सो अविनाशी सुखका समागम याके होयगा या भांति सब ही ग्रह अति बलवान बैठे हैं सो सब दोषरहित यह होयगा। ऐसा ज्योतिषीने जब कह्या तब प्रतिसूर्यने ज्योतिषीको बहुत दान दिया अर मानजीको अतिहर्ष उपजाया अर कही कि हे वत्से ! अब हम सब हनूरुहद्वीपको चालैं तहां बालकका जन्मोत्सव भलीभांति होयगा। तदि अंजना भगवानकी वंदना कर पुत्रको गोदीमें लेय गुफाका अधिपति जो वह गंधर्वदेव तासों बारंबार क्षमा कराय प्रतिसूर्यके परिवार सहित गुफातैं निकसी अर विमानके पास आय उभी रही मानो साक्षात् वनलक्ष्मी ही है। कैसा है विमान ? मोतीनिके जे हार सोई मानो नीझरने हैं अर पवनकी प्रेरी क्षुद्रघण्टिका बाज रही है अर लहलहाट करती जे रत्नोंकी झालरी तिनतैं शोभायमान अर केलिके वनोंतैं शोभायमान है, सूर्यके किरणके स्पर्श कर ज्योतिरूप होय रह्या है अर नाना प्रकारके रत्ननिकी प्रभाकर ज्योतिका मंडल पड़ रह्या है सो मानो इंद्रधनुष ही चढि रह्या है अर नाना प्रकारके वर्णोंकी सैकड़ों ध्वजा फरहरै हैं अर वह विमान कल्पवृक्ष समान मनोहर नाना प्रकारके रत्ननिकरि निर्मापित नाना रूपको धरै मानो स्वर्गलोकतैं आया है, सो वा विमानमें पुत्रसहित अंजना वसंतमाला तथा राजा प्रतिसूर्यका परिवार सकल बैठकर आकाशके मार्ग चाले. सो बालक कौतुककर मुलकता संता माताकी गोदमेतैं उछलकर पर्वत ऊपर जा पड़्या, माता हाहाकार करती भई अर राजा प्रतिसूर्यके सर्वलोक हाहाकार करते भए अर राजा प्रतिसूर्य बालकके ढूढनेको आकाशतैं उतरिकरि पृथिवी पर आया, अंजना अतिदीन भई विलाप करै है। ऐसा विलाप करै है जाको सुनकर तिर्यंचनिका मन भी करुणा कर कोमल होय गया। हाय पुत्र ! कहा भया दैव कहिए पूर्वोपार्जित कर्मने कहा किया मोहि रत्न संपूर्ण निधान दिखायकरि बहुरि हर लिया, पतिके वियोगके दुःखतैं व्याकुल जो मैं सो मेरे जीवनका अवलंबन जो बालक भया हुता सो भी पूर्वोपार्जित कर्मने छिनाय लिया। सो माता तो यह विलाप करै है अर पुत्र पर्वत पर पड़्या सो पर्वतके हजारों खंड होय गए अर महा शब्द भया प्रतिसूर्य देखै तो बालक एक शिला ऊपर सुखसे विराजै है, अपने अंगूठे

आप ही चूसै है, क्रीड़ा करै है अर मुलकै है अति शोभायमान सूधे पड़े हैं लहलहाट करै हैं कर चरणकमल जिनके, सुंदर है शरीर जिनका वे कामदेव पदके धारक उनको कौनकी उपमा दीजै ? मंद मंद जो पवन ताकरि लहलहाट करता जो रक्तकमलोंका वन ता समान है प्रभा जिनकी, अपने तेजकरि पहाड़के खंड खंड किए ऐसे बालककों दूरतैं देखकर राजा प्रतिसूर्य अति आश्चर्यकों प्राप्त भया । कैसा है बालक ? निष्पाप है शरीर जाका, धर्मका स्वरूप, तेजका पुंज असे पुत्रको देख माता बहुत विस्मयकों प्राप्त भई, उठाय सिर चूमा अर छातीसों लगाय लियाँ तब प्रतिसूर्य अंजनातैं कहता भया हे बालिके ! यह बालक तेरा समचतुरस्रसंस्थान वज्रवृषभनाराचसंहननका धरणहारा महा वज्रका स्वरूप है । जाके पड़नेकरि पहाड़ चूर्ण होय गया । जब या बालककी ही देवनितैं अधिक अद्भुत शक्ति है तो यौवन अवस्थाकी शक्तिका कहा कहना ? यह निश्चय सेती चरमशरीरी है । तद्भवमोक्षगामी है फिर देह न धारैगा याकी यही पर्याय सिद्धपदका कारण है असा जानकर तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड़ सिर नवाय अपनी स्त्रीनिके समूह सहित बालककों नमस्कार करता भया । यह बालक, ताकी जे स्त्री तिनके जे नेत्र तेई भए श्याम श्वेत अरुणकमल तिनकी माला तिनकरि पूजनीक अति रमणीक मंद मंद मुलकनका करणहारा सब ही नर-नारीनिका मन हरै, राजा प्रतिसूर्य पुत्रसहित अंजना भानजीको विमानमैं बैठाय अपने स्थानक लेय आया । कैसा है नगर ? ध्वजा-तोरणनिकरि शोभायमान है राजाकों आया सुन सर्व नगरके लोक नाना प्रकारके मंगल द्रव्यनिसहित सन्मुख आए । राजा प्रतिसूर्यने नगरमें प्रवेश किया, वादित्रोंके नादतैं व्याप्त भई हैं दशों दिशा जहां, बालकके जन्मका बड़ा उत्सव विद्याधरने किया । जैसा स्वर्गलोकविषैं इंद्रकी उत्पत्तिका उत्सव देव करै हैं । पर्वतविषैं जन्म पाया अर विमानतैं पड़करि पर्वतकों चूर्ण किया तातैं बालकका नाम माता अर बालकके मामा प्रतिसूर्यने श्रीशैल ठहराया अर हनूरुहद्वीपविषैं जन्मोत्सव भया तातैं हनूमान यह नाम पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध भया । वह श्रीशैल (हनूमान) हनूरुहद्वीपविषैं रमैं । कैसा है कुमार ? देवनि समान है प्रभा जिनकी महाकांतिवान सबकों महा उत्सवरूप है शरीरकी क्रिया जाकी सर्वलोकके मन अर नेत्रनिकों हरनहारा प्रतिसूर्यके पुरविषैं विराजै है ।

अथानंतर गणधर देव राजा श्रेणिकतैं कहै हैं हे नृप ! प्राणीनिके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावतैं गिरिनिका चूर्ण करनहारा महाकठोर जो वज्र सो भी पुष्प समान कोमल होय परणवै है अर महा आतापकी करणहारी जो अग्नि सो भी चंद्रमाकी किरण समान तथा विस्तीर्ण कमलिनीके वन समान शीतल होय है अर महा तीक्ष्ण खड्गकी धारा सो महा मनोहर कोमल लता समान होय है । ऐसा जानकर जे विवेकी जीव हैं ते पापतैं विरक्त होय हैं कैसा है पाप ? महा दुःख देनेविषैं प्रवीण है । तुम जिनराजके चरित्र विषैं अनुरागी होवो । कैसा है जिनराजका

चरित्र ? सारभूत जो मोक्षका सुख ताके देनेविषैं चतुर है, यह समस्त जगत निरंतर जन्म-जरा-मरणरूप सूर्यके आतापतैं तप्तायमान है तामें हजारों जे व्याधि हैं सोई किरणोंका समूह है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं हनुमानकी जन्म कथाका वर्णन करनेवाला सत्रहवा पर्व पूर्ण भया ॥१७॥

अष्टादश पर्व

[पवनंजयका युद्धसे प्रत्यागमन और अंजनाका अन्वेषण]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसौं कहै हैं हे मगधदेशके मंडन ! यह श्री-हनुमानजीके जन्मका वृत्तांत तो तोहि कह्या अब हनुमानके पिता पवनंजयका वृत्तांत सुन। पवनंजय पवनकी नाई शीघ्र ही रावणपै गया अर रावणकी आज्ञा पाय वरुणतैं युद्ध करता भया। सो बहुत देरतक नानाप्रकारके शस्त्रनिकरि वरुणके अर पवनंजयके युद्ध भया, सो युद्धविषैं वरुणको बांध लिया। तानै जो खरदूषणको बांध्या हुता सो छुड़ाया। अर वरुणको रावणके समीप लाया, वरुणने रावणकी सेवा अंगीकार करी, रावण पवनंजयतैं अति प्रसन्न भए तब पवनंजय रावणसौं विदा होय अंजनाके स्नेहतैं शीघ्र ही घरको चाले। राजा प्रह्लादने सुनी कि पुत्र विजय कर आया तब ध्वजा तोरण मालादिकोंसे नगर शोभित किया, तब सब ही परिजन पुरजन लोग सन्मुख आय नगरके सर्व नर नारी इनके कर्त्तव्यकी प्रशंसा करै हैं। राजमहलके द्वारे अर्घादिककरि बहुत सन्मानकर भीतर प्रवेश कराया। सारभूत मंगलीक वचननिकरि कुंवरकी सबहीने प्रशंसा करी। कुंवर माता पिताको प्रणामकरि सबका मुजरा लेय क्षणएक सभाविषैं सबनिकी शुश्रूषाकर आप अंजनाके महल पधारे। प्रहस्तमित्र लार सो वह महल जैसा जीवरहित शरीर सुंदर न लागै, तैसैं अंजना विना मनोहर न लागै, तब मन अप्रसन्न होय गया। प्रहस्तसौं कहते भए। हे मित्र ! यहां वह प्राणप्रिया कमलनयनी नहीं दीखै है सो कहां है। यह मंदिर ताके विना मुझै उद्यान समान भासै है अथवा आकाश समान शून्य भासै है तातैं तुम वार्ता पूछो, वह कहां है ? तब प्रहस्त माहिले लोगनितैं निश्चयकर सकल वृत्तांत कहता भया। तब याके हृदयको क्षोभ उपज्या माता पितासों विना पूछे ही मित्रसहित महेंद्रके नगरमें गए। चित्तमें उदास जब राजा महेंद्रके नगरके समीप जाके पहुंचे तब मनमें ऐसा जान्या जो आज प्रियाका मिलाप होयगा। तदि मित्रसों कहते भए कि हे मित्र ! देखो यह नगर मनोहर दिखै है, जहां वह सुंदर कटाक्षकी धरनहारी सुंदरी विराजै है। जैसैं कैलाशपर्वतके शिखर शोभायमान दीखै है तैसैं यह महलके शिखर रमणीक दीखै हैं अर वनके वृक्ष ऐसे सुंदर हैं मानों वर्षाकालकी सघन घटा ही है। ऐसी

वार्ता मित्रसों करते संते नगरके पास जाय पहुंचे। मित्र भी बहुत प्रसन्न करता भया। राजा महेंद्रने सुनी कि पवनंजयकुमार विजयकर पितासों मिल यहां आए हैं तब नगरकी बड़ी शोभा कराई अर आप अर्घादिक उपचार लेय सन्मुख आया बहुत आदरतैं कुंवरको नगरमें लाए। नगरके लोगोंने बहुत आदरतैं गुण वर्णन किये। कुंवर राजमंदिरमैं आए। एक मुहूर्त ससुरके निकट विराजे, सबहीका सन्मान किया अर यथायोग्य वार्ता करी बहुरि राजातैं आज्ञा लेयकर सासूका मुजरा करया, बहुरि प्रियाके महल पधारे। कैसे हैं कुमार? कांताके देखनेकी है अभिलाषा जाकै तहां भी स्त्रीको न देख्या तब अति विरहातुर होय काहूकों पूछया—हे बालिके। यहां हमारी प्रिया कहां है? तब वह बोली हे देव! यहां तिहारी प्रिया नाहीं, तब वाके वचनरूप वज्रकर हृदय चूर्ण होय गया अर कान मानों ताते खारे पानीसे सींचे गए, जैसा जीवरहित मृतक शरीर होय तैसा होय गया, शोकरूप दाहकरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका, यह ससुरारके नगरतैं निकसिकरि पृथिवीविषैं स्त्रीके वार्ताके निमित्त भ्रमता भया, मानों वायुकुमारको वायु लागी। तब प्रहस्तमित्र याकों अति आतुर देखकरि याके दुःखतैं अति दुखी भया अर यासों कहता भया हे मित्र! कहा खेद खिन्न होय हैं? अपना चित्त निराकुल कर। यह पृथिवी केतीक है जहां होयगी वहां ठीककर लेवैंगे, तब कुमारने मित्रसों कही तुम आदित्यपुर मेरे पितापै जावो अर सकल वृत्तांत कहो जो मुझे प्रियाकी प्राप्ति न होयगी तो मेरा जीवना नहीं होयगा, मैं सकल पृथिवीपर भ्रमण करूं हूं अर तुम भी ठीक करो। तब मित्र यह वृत्तांत कहनेको आदित्यपुर नगरविषैं आया पिताकों सब वृत्तांत कह्या अर पवनकुमार अंबरगोचर हाथीपर चढकरि पृथिवीविषैं विचरता भया, अर मनविषैं यह चिंता करी कि वह सुंदरी कमलसमान कोमल शरीर शोकके आतापकरि संतापको प्राप्त भई कहां गई, मेरा ही है हृदयविषैं ध्यान जाके वह गरीबिनी विरहरूप अग्नितैं प्रज्वलित विषमवनमैं कौन दिशाकों गई, वह सत्यवादिनी निःकपट धर्मकी धरनहारी गर्भका है भार जाकै मत कदापि वसंतमालासों रहित होय गई होय। वह पतिव्रता श्रावकके व्रत पालनहारी राजकुमारी शोककर अंध होय गए हैं दोनों नेत्र जाके, अर विकट वनविषैं विहार करती क्षुधासों पीड़ित अजगरकर युक्त जो अंधकूप तामैं ही पड़ी हो, अथवा वह गर्भवती दुष्ट पशुओंके भयंकर शब्द सुन प्राणरहित ही होय गई होय, वह प्राणनितैं भी अधिक प्यारी या भयंकर अरण्यविषैं जलविना प्यासकर सूख गए हैं कंठ-तालु जाके, सो प्राणोंसे रहित होय गई होय? वह भोरी कदाचित् गंगाविषैं उतरी होय तहां नाना प्रकारके ग्राह सो पानीमें वह गई हो, अथवा वह अतिकोमल तनु डाभकी अणीकर विदारे गए होंय चरण जाके सो एक पैंड़ भी पग धरनेकी शक्ति नाहीं सो न जानिए कहा दशा भई अथवा दुःखतैं गर्भपात भया होय अर कदाचित् वह जिनधर्मकी सेवनहारी महाविरक्तभाव होय आर्या भई होय। ऐसा चिंतवन करते पवनंजयकुमारनैं पृथिवीविषैं भ्रमण किया सो वह प्राणवल्लभा न

देखी। तदि विरहकरि पीडित सर्वजगतको शून्य देखता भया, मरणका निश्चय किया, न पर्वतविषैं, न मनोहर वृक्षनिविषैं, न नदीके तटपर काहू ठौर ही प्राणप्रिया विना उसका मन न रमता भया ऐसा विवेकवर्जित भया जो सुंदरीकी वार्ता वृक्षनिको पूछे। भ्रमता २ भूतरव नामा वनमैं आया तहां हाथीतैं उतरथा अर जैसैं मुनि आत्माका ध्यान करैं तैसैं प्रियाका ध्यान करै। बहुरि हथियार अर बखतर पृथिवीपर डार दिए। अर गजेन्द्रतैं कहते भए हे गजराज! अब तुम वनविषैं स्वच्छन्द विहारी होवो, हाथी विनयकरि निकट खड़्या है आप कहे हैं, हे गजेन्द्र! नदीके तीरमे शल्यकीवन है ताके जो पल्लव सो चरते विचरो अर यहां हथिनीनिके समूह हैं सो तुम नायक होय विचरो। कुंवरने ऐसा कह्या; परंतु वह कृतज्ञ धनीके स्नेहविषैं प्रवीण कुंवरका संग नहीं छोड़ता भया। जैसैं भला भाई भाईका संग न छोड़ै। कुंवर अति शोकवंत ऐसे विकल्प करै कि अति मनोहर जो वह स्त्री ताहि यदि न पाऊं तो या वन विषैं प्राण त्याग करूं, प्रिया विषैं लग्या है मन जाका, ऐसा जो पवनंजय ताहि वनविषैं रात्रि भई सो रात्रिके चार पहर चार वर्ष समान वीते। नानाप्रकारके विकल्पकरि व्याकुल भया। यहांकी तो यह कथा। अर मित्र पितापै गया सो पिताकों वृत्तांत कह्या। पिता सुनकर परम शोककों प्राप्त भया, सबकों शोक उपज्या। अर केतुमती माता पुत्रके शोककरि अति पीड़ित होय रोवती संती प्रहस्तसूं कहती भई कि जो तू मेरे पुत्रको अकेला छोड़ आया सो भला न किया। तदि प्रहस्तने कही मोहि अति आग्रहकर तिहारे निकट भेज्या सो आया अब तहां जाऊंगा सो माताने कही—वह कहां है? तब प्रहस्तने कही जहां अंजना है तहां होयगा तदि यानैं कही अंजना कहां है, तानैं कही मैं न जानूं। हे माता! जो विना विचारै शीघ्र ही काम करैं तिनको पश्चात्ताप होय। तिहारे पुत्रने ऐसा निश्चय किया कि जो मैं प्रियाकों न देखूं तो प्राणत्याग करूं। यह सुनकर माता अति विलाप करती भई। अंतःपुरकी सकल स्त्री रुदन करती भई, माता विलाप करै है—हाय मो पापिनीने कहा किया? जो महासतीको कलंक लगाया जाकरि मेरा पुत्र जीवनके संशयकों प्राप्त भया। मैं क्रूरभावकी धरणहारी महावक्र मंदभागिनीने विना विचारे यह काम किया। यह नगर यह कुल अर विजयार्ध पर्वत अर रावण का कटक पवनंजय विना शोभै नाहीं, मेरे पुत्र समान और कौन, जानैं वरुण जो रावणहूतैं असाध्य ताहि रणविषैं क्षणमात्रमैं बांध लिया। हाय वत्स! विनयके आधार गुरु पूजनमैं तत्पर, जगतसुंदर विख्यातगुण तू कहां गया? तेरे दुखरूप अग्निकरि तप्तायमान जो मैं, सो हे पुत्र! मातासों वचनालाप कर, मेरा शोक निवार। ऐसे विलाप करती अपना उरस्थल अर सिर कूटती जो केतुमती सो तानैं सब कुटुम्ब शोकरूप किया। प्रह्लाद हू आंसू डारते भए। सर्व परिवारकों साथ लेय प्रहस्तको अग्रगामी कर अपने नगरतैं पुत्रकों ढूंढ़नेको चाले। दोनों श्रेणियों-के सर्व विद्याधर प्रीतिसों बुलाये सो परिवार सहित आए। सब ही आकाशके मार्ग कुंवरका

ढूंढ़ै हैं पृथिवीमें देखै हैं अर गंभीर वन और लतावोंमें देखै हैं पर्वतोंमें देखै हैं अर प्रतिसूर्यके पास भी प्रह्लादका दूत गया सो सुनकर महा शोकवान भया। अर अंजनासों कह्या सो अंजना प्रथम दुःखतैं भी अधिक दुःखकों प्राप्त भई अश्रुधारा करि वदन पखालती रुदन करती भई, कि हाय नाथ, मेरे प्राणोंके आधार! मुझमें बांध्या है मन जिन्होंने सो मोहि जन्मदुखारिकों छोड़करि कहां गए? कहा मुझसों कोप न छोड़ो हो, जो सर्व विद्याधरनितैं अदृश्य होय रहे हो। एक बार एक भी अमृत समान वचन मोसों बोलो, एते दिन ये प्राण तिहारे दर्शनकी वांछाकरि राखे हैं अब जो तुम न दीखो तो ये प्राण मेरे किस कामके है, मेरे यह मनोरथ हुता कि पतिका समागम होयगा सो दैवने मनोरथ भग्न किया। मुझ मंदभागिनीके अर्थि आप कष्ट अवस्थाकों प्राप्त भए तिहारे कष्टकी दशा सुनकर मेरे प्राण पापी क्यों न विनश जांय। ऐसैं विलाप करती अंजनाकों देखकरि वसंतमाला कहती भई—'हे देवि! ऐसे अमंगल वचन मत कहो, तिहारे धनीसों अवश्य मिलाप होयगा अर प्रतिसूर्य बहुत दिलासा करता भया कि तेरे पतिकों शीघ्र ही लावैं हैं ऐसा कह कर राजा प्रतिसूर्यने मनतैं भी उतावला जो विमान ताविषैं चढ़कर आकाशतैं उतरकर पृथिवीविषैं ढूढ़्या प्रतिसूर्यके लार दोनों श्रेणियोंके विद्याधर अर लंकाके लोग यत्नकरि ढूंढ़ै हैं देखते देखते भूतरव नामा अटवीविषैं आए। तहां अंबरगोचर नामा हाथी देख्या, वर्षाकालके सघन मेघ समान है आकार जाका तदि हाथीकों देखकरि सर्व विद्याधर प्रसन्न भए कि जहां यह हाथी है तहां पवनंजय है। पूर्वैं हमने यह हाथी अनेक बार देख्या है यह हाथी अंजनगिरि समान है रंग जाका, अर कुंदके फूल समान श्वेत हैं दांत जाके, अर जैसी चाहिये तैसी सुंदर है सूंड जाकी। जब हाथीके समीप विद्याधर आए तब याहि निरंकुश देख डरे। अर हाथी विद्याधरोंके कटकका शब्द सुन महाक्षोभकों प्राप्त भया, हाथी महाभयंकर दुर्निवार शीघ्र है वेग जाका मदकर भीज रहे हैं कपोल जाके, अर हाले हैं अर गाजै हैं कान जाके जिस दिशाको हाथी दौड़ै ताही दिशातैं विद्याधर हट जावें, यह हाथी लोगोंका समूह देख स्वामीकी रक्षाविषैं तत्पर सूंडसों बंधी है तलवार जाके। महाभयंकर पवनंजयका समीप न तजै सो विद्याधर त्रास पाय याके समीप न आवैं तब विद्याधरोंने हथिनियोंके समूहसों याहि वश किया क्योंकि जेते वशीकरणके उपाय हैं, तिनमें स्त्री समान और कोई उपाय नाहीं तब ये आगे आय पवनकुमारको देखते भए। मानो काठका है मौनसो बैठ्या है, वे यथायोग्य याका उपचार करते भए। पर यह चिंतामें लीन काहूसों न बोलै। जैसैं ध्यानरूढ़ मुनि काहूसों न बोलें तब पवनंजयके माता पिता आंसू डारते याके मस्तकको चूमते भए अर छातीसों लगावते भए अर कहते भए कि हे पुत्र! तू ऐसा विनयवान हमको छोड़करि कहां आया महाकोमल सेजपर सोवनहारा तेरा शरीर या भीमवनविषैं कैसैं रात्रि व्यतीत करी ऐसैं वचन कहे तो भी न बोलै। तदि याहि नम्रीभूत और मौनव्रत धरै, मरणका है निश्चय

जाके ऐसा जानकरि समस्त विद्याधर शोकको प्राप्त भए पिता सहित सब विलाप करते भए।

तदि प्रतिसूर्य अंजनाका मामा सब विद्याधरनिकों कहता भया कि मैं वायुकुमारसों वचनालाप करूंगा तब वह पवनंजयकों छातीसों लगायकर कहता भया, हे कुमार! मैं समस्त वृत्तांत कहूं हूं सो सुनो। एक महा रमणीक संध्याभ्रनामा पर्वत तहां अनंगवीचि नामा मुनिको केवलज्ञान उपज्या था सो इंद्रादिकदेव दर्शनको आए हुते अर मैं भी गया हुता सो वंदनाकर आवता हुता सो मार्गमें एक पर्वतकी गुफा ता ऊपर मेरा विमान आया सो मैंने स्त्रीके रुदनकी ध्वनि सुनी मानों बीन बाजै है तब मैं वहां गया, गुफाविषैं अंजना देखी। मैंने वनके निवासका कारण पूछया तदि वसंतमालाने सर्व वृत्तांत कह्या। अंजना शोक कर विह्वल रुदन करै सो मैं धैर्य बंधाया अर गुफामें ताके पुत्रका जन्म भया सो गुफा बालकके शरीरकी कांतिकर प्रकाश रूप होय गई मानों सुवर्णकी रची है यह वार्ता सुनकर पवनंजय परम हर्षकों प्राप्त भए। अर प्रतिसूर्यकों पूछते भए "बालक सुखसों तिष्ठै है?" प्रतिसूर्यने कह्या बालककों मैं विमानमें थापकर हनूरुह-द्वीपको जाय था सो मार्गमें बालक एक पर्वतपर पड़या सो पर्वतके पड़नेका नाम सुनकर पवनं-जयने हाय हाय ऐसा शब्द कह्या। तदि प्रतिसूर्यने कह्या सोच मत करहु जो वृत्तांत भया सो सुनहु जायकरि सर्व दुखसों निवृत्त होय। बालककों पड़या देख मैं विलाप करता विमानतैं नीचे उतरया तब क्या देखा पर्वतके खंड खंड होय गए अर एक शिलापर बालक पड़या है अर ताकी ज्योतिकरि दशों दिशा प्रकाशरूप होय रही हैं तब मैंने तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर बालककों उठाय लिया अर माताकों सौंप्या सो माता अति विस्मयकों प्राप्त भई। पुत्रका श्रीशैल नाम धरया। वसंतमाला अर पुत्र सहित अंजनाकों हनुरुहद्वीप ले गया वहां पुत्रका जन्मोत्सव भया। सो बालकका दूजा नाम हनुमान भी है। यह तुमको मैंने सकल वृत्तांत कह्या। हमारे नगरमें वह पतिव्रता पुत्रसहित आनंदसों तिष्ठै है। यह वृत्तांत सुनकर पवनंजय तत्काल अंजनाके अवलोकनके अभिलाषी हनुरुहद्वीपकों चाले अर सर्व विद्याधर भी इनके संग चाले। हनुरुहद्वीपमें गए सो दोय महीना सबको प्रतिसूर्यने बहुत आदरसो राख्या। बहुरि सब प्रसन्न होय अपने अपने स्थानककों गए। बहुत दिनोंमें पाया है स्त्रीका संयोग जानैं सो ऐसा पवनंजय यहां ही रहै। कैसा है पवनंजय? सुंदर है चेष्टा जाकी और पुत्रकी चेष्टासों अति आनंदरूप हनूरुहद्वीपमें देवनिकी नाईं रमते भए। हनूमान नवयौवनकों प्राप्त भए। मेरुके शिखर समान है सीस जाका सर्व जीवनिके मनके हरणहारे होते भए, सिद्ध भई हैं अनेक विद्या जाकों अर महा-प्रभावरूप विनयवान् महाबली सर्व शास्त्रनिके अर्थविषैं प्रवीण परोपकार करनेको चतुर, पूर्वभव स्वर्गमें सुख भोगि आए अब यहां हनुरुहद्वीपविषैं देवोंकी नाईं रमैं हैं।

हे श्रेणिक! गुरुपूजामें तत्पर श्रीहनूमानके जन्मका वर्णन अर पवनंजयका अंजनाकों

मिलाप यह अद्भुत कथा नाना रसकी भरी है, जे प्राणी भावधर यह कथा पढ़ैं, पढ़ावैं सुनै, सुनावैं, तिनकी अशुभ कर्ममें प्रवृत्ति न होय, शुभक्रियामें उद्यमी होंय। अर जो यह कथा भावधर पढ़ैं पढ़ावैं उनकी परभवमें शुभगति अर दीर्घ आयु होय, शरीर निरोग सुंदर होय, महा-पराक्रमी होय, अर उनकी बुद्धि करनेयोग्य कार्यके पारकों प्राप्त होय, अर चंद्रमा समान निर्मल-कीर्ति होय, अर जासों स्वर्ग-मुक्तिके सुख पाइए ऐसे धर्मकी बढ़वारी होय, जो लोकविषैं दुर्लभ वस्तु हैं सो सब सुलभ होंय सूर्य समान प्रतापके धारक होंय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं पवनंजयअंजनाका मिलाप वर्णन करनेवाला अठारहवां पर्व पूर्ण भया ॥१८॥

एकोनविंश पर्व

[हनुमानका युद्ध मे जाकर विजय प्राप्तकर अनेक कन्याओंसे विवाह करना]

अथानंतर राजा वरुण बहुरि आज्ञालोप भया तदि कोप करि तापर रावण फेर चढ़े। सर्व भूमिगोचरी विद्याधरनिकों अपने समीप बुलवाया, सबके निकट आज्ञापत्र लेय दूत गए। कैसा है रावण? राज्य-कार्यविषैं निपुण है, किहकंधापुरके धनी अर अलकाके धनी, रथनूपुर अर चक्रवालपुरके धनी तथा वैताढ्यकी दोनों श्रेणीके विद्याधर तथा भूमिगोचरी सबही आज्ञा-प्रमाण रावणके समीप आए, हनूरुहद्वीपविषैं भी प्रतिसूर्य तथा पवनंजयके नाम आज्ञापत्र लेय दूत आए सो ये दोनों आज्ञापत्रको माथे चढ़ाय दूतका बहुत सन्मान कर आज्ञाप्रमाण गमनको उद्यमी भए। तदि हनुमानको राज्याभिषेक देने लागे। वादित्रादिकके समूह बाजने लागे अर कलश हैं हाथमें जिनके ऐसे मनुष्य आगैं आय ठाढ़े, भए। तदि हनुमानने प्रतिसूर्य अर पवनंजयकों पूछया यह कहा है? तदि उन्होंने कही—हे वत्स! तू हनुरुहद्वीपका प्रतिपालन कर, हम दोनोंकों रावण बुलावै है सो रावणकी मददके अर्थि जांय हैं। रावण वरुण पर जाय है। वरुणने बहुरि माथा उठाया है महासामंत है ताके बड़ी सेना है पुत्र बलवान हैं। अर गढ़का बल है तदि हनुमान विनय कर कहते भए कि मेरे होते तुमको जाना उचित नाहीं, तुम मेरे गुरुजन हो। तब उन्होंने कही हे वत्स! तू बालक है अब तक रण देख्या नाहीं। तदि हनुमान बोले अनादिकालतैं जोव चतुर्गतिविषैं भ्रमण करै है पंचमगति जो मुक्ति सो जब तक अज्ञानका उदय है तब तक जीवने पाई नाहीं। परंतु भव्यजीव पावैं ही हैं। तैसैं हमने अब तक युद्ध किया नाहीं परंतु अब युद्धकर वरुणको जीतैंहींगे। अर विजय कर तिहारे पास आवैं। सो जब पिता आदि कुटुंबके जन उनने राखनेका घना ही यत्न किया परंतु ये न रहते जाने तदि उन्होंने आज्ञा दई। यह स्नान भोजन कर पहिले पहिल मंगलीक द्रव्यों कर भगवान्‌की पूजा कर अरहंत

सिद्धकों नमस्कार कर माता पिता अर मामाकी आज्ञा लेय बड़ोंका विनयकरि यथायोग्य संभाषण कर सूर्यतुल्य उद्योतरूप जो विमान तामैं चढ़कर शस्त्रके समूहकरि संयुक्त जे सामंत उन सहित दशों दिशामें व्याप्त रह्या है यश जाका लंकाकी ओर चाल्या सो त्रिकूटाचलके सन्मुख विमानमें बैठ्या जाता ऐसा शोभता जैसा मंदराचलके सन्मुख जाता ईशान इंद्र शोभै है। तदि जलवीचिनामा पर्वतपर सूर्य अस्त भया। कैसा है पर्वत ? समुद्रकी लहरोंके समूहकर शीतल हैं तट जाके, तहां रात्रि सुखसों पूर्ण करी। अर करी है महा योधानितैं वीररसकी कथा जानैं महा उत्साहकर नानाप्रकारके देश द्वीप पर्वतोंको उलंघता समुद्रके तरंगनिकरि शीतल जे स्थानक तिनकों अवलोकन करता समुद्रविषैं बड़े बड़े जलचर जीवनिकों देखता रावणके कटकमें पोंहच्या। हनूमानकी सेना देखकरि बड़े बड़े राक्षस विद्याधर विस्मयकों प्राप्त भए, परस्पर वार्ता करैं हैं यह बली श्रीशल हनूमान भव्यजीवोंविषैं उत्तम, जानैं बालअवस्थामे गिरिको चूर्ण किया। ऐसे अपने यशको श्रवण करता हनूमान रावणके निकट गया, रावण हनूमानकों देखकर सिंहासनसों उठे अर विनय किया। कैसा है सिंहासन ? पारिजातादिक कहिए कल्पवृक्षोंके फूलोंसे पूरित है, जाकी सुगंधकरि भ्रमर गुंजार करैं हैं, जाके रत्ननिकी ज्योतिकर आकाशविषैं उद्योत होय रह्या है, जाके चारों ही तरफ बड़े सामंत हैं ऐसे सिंहासनतैं उठकर रावणने हनूमानकों उरसों लगाया। कैसा है हनूमान ? रावणके विनयकरि नम्रीभूत होय गया है शरीर जाका, रावण हनूमानकों निकट लेय बैठ्या, प्रीतिकर प्रसन्न है मुख जाका, परस्पर कुशल पूछी अर परस्पर रूपसंपदा देख हर्षित भए। दोनों ही महाभाग्य ऐसे मिले मानों दोय इंद्र मिले, रावण अति स्नेहकरि पूर्ण है मन जाका सो कहता भया पवनकुमारने हमतैं बहुत स्नेह बढ़ाया जो ऐसा गुणोंका सागर पुत्र हमपर पठाया। ऐसे महाबलीको पायकरि मेरे सर्व मनोरथ सिद्ध होवेंगे ऐसा तेजस्वी और नाहीं जैसा यह योधा सुन्या तैसा ही है यामैं संदेह नाहीं। यह अनेक शुभ लक्षणोंका भरया है याके शरीरका आकार ही गुणोंको प्रगट करै है। रावणने जब हनूमानके गुण वर्णन किए तदि हनूमान नीचा होय रह्या, लज्जावंत पुरुषकी नाईं नम्रीभूत है शरीर जाका, सो संतोंकी यह रीति है। अब रावणका वरुणसे संग्राम होयगा सो मानो सूर्य भयकर अस्त होनेको उद्यमी भया, मंद होय गईं हैं किरण जाकी। सूर्यके अस्त भए पीछैं संध्या प्रगट भई, बहुरि गई सो मानों प्राणनाथकी विनयवंती पतिव्रता स्त्री ही है अर चंद्रमारूप तिलककों धरे रात्रिरूप स्त्री शोभती भई। बहुरि प्रभात भया सूर्यकी किरणनिकरि पृथ्वीविषैं प्रकाश भया, तब रावण समस्त सेनाकों लेय युद्धको उद्यमी भया। हनूमान विद्याकर समुद्रको भेद वरुणके नगरविषैं गया, वरुणपर जाता हनूमान ऐसी कांतिको धरता भया जैसा सुभूम चक्रवर्ती परशुरामके ऊपर जाता शोभै। रावणको कटकसहित आया जानकर वरुणकी प्रजा भयभीत भई, पाताल पुंडरीक-

नगरका वह धनी सो नगरमें योधावोंके महाशब्द होते भए। योधा नगरसों निकसे, मानों वह योधा असुरकुमार देवोंके समान हैं अर वरुण चमरेंद्र तुल्य है, महाशूरवीरपने करि गर्वित अर वरुणके सौ पुत्र महा उद्धत युद्ध करनेको आए। नाना प्रकारके शस्त्रोंके समूहकरि रोका है सूर्यका दर्शन जिन्होंने, सो वरुणके पुत्रोंने आवते ही रावणका कटक ऐसा व्याकुल किया जैसैं असुरकुमार देव क्षुद्र देवोंको कंपयमान करै, चक्र, धनुष, वज्र, सेल, बरछी इत्यादि शस्त्रोंके समूह राक्षसनिके हाथसे गिर पड़े अर वरुणके सौ पुत्रनिके आगे राक्षसनिका कटक ऐसा भ्रमता भया जैसा वृक्षनिका समूह अशनिपातके भयसे भ्रमैं। तब अपने कटककूं व्याकुल देख रावण वरुणके पुत्रनिपर गया जैसे गजेंद्र वृक्षनिकूं उपाड़ै तैसैं बड़े बड़े योधानिकूं उपाड़ै, एक तरफ रावण अकेला, एक तरफ वरुणके सौ पुत्र, सो तिनके बाणनिकर रावणका शरीर भेदा गया तथापि रावण महायोधाने कछु न गिन्या, जैसें मेघके पटल गाजते वर्षते सूर्यमंडलको आच्छादित करें तैसैं वरुणके पुत्रनिने रावणको वेढ्या। अर कुंभकरण इंद्रजीतसूं वरुण लड़ने लाग्या। जब हनूमानने रावणको वरुणके पुत्रनिकरि वेढ्या टसूके फूलोंके रंगसमान आरक्त शरीर देख्या तदि रथमें असवार होय वरुणके पुत्रनिपर दौड्या। कैसा है हनूमान? रावणसूं प्रीतियुक्त है चित्त जाका, अर शत्रुरूप अंधकारके हरिवेकूं सूर्य समान है। पवनके वेगसे भी शीघ्र वरुणके पुत्रों पर गया सो हनूमानसे वरुणके पुत्र सौ ही कंपायमान भए जैसैं मेघके समूह पवनसे कंपायमान होंय। बहुरि हनूमान वरुणके कटक पर ऐसा पड़्या जैसा माता हाथी कदलीके वनमें प्रवेश करै, कईयकिनिकूं विद्यामई लांगूल पाशकर बांध लिया, अर कईयकोंको मुद्गरके घात कर घायल किया, वरुणका समस्त कटक हनूमानतैं हारया जैसैं जिनमार्गीके अनेकांत नयकरि मिथ्यादृष्टि हारैं। हनूमानको अपने कटकविषैं रण क्रीड़ा करते देख राजा वरुणने क्रोपकर रक्त नेत्र किए अर हनूमान पर आया। तब रावण वरुणकूं हनूमान पर आवता देख आप जाय रोक्या जैसैं नदीके प्रवाहको पर्वत रोकै, वरुणके अर रावणके महायुद्ध भया। तब ताही समयमें वरुणके सौ पुत्र हनूमानने बांध लिए अर कैयकनिकूं मुद्गरनिके घातकरि घायल किए। सो वरुण सौऊ पुत्रनिकूं बांधे सुनकर शोककर विह्वल भया, अर विद्याका स्मरण न रह्या तदि रावणने याको पकड़ लिया सो मानों वरुण सूर्य अर याके पुत्र किरण तिनके रोकनकरि मानो रावण राहूका रूप धरता भया। वरुणको कुम्भकरणके हवाले किया अर आप डेरा भवनोन्माद नाम वनमें किया। कैसा है वह वन? समुद्रकी शीतल पवनसे महाशीतल है सो ताके निवासकर सेनाको रणजनित खेद रहित किया। अर वरुणको पकड़ा सुन उसकी सेना भागी, पुण्डरीकपुरविषैं जाय प्रवेश किया। देखो पुण्यका प्रभाव जो एक नायकके हारनेतैं सबकी हार, अर एक नायकके जीतनेतैं सबकी जीत। कुम्भकरणने कोपकर

वरुणके नगर लूटनेका विचार किया तदि रावण मनें किया, यह राजानिका धर्म नहीं। कैसे है रावण, करुणाकरि-कोमल है चित्त जाका, सो कुंभकरणसे कहते भए—हे बालक! तैंने यह दुराचारकी बात कही? जो अपराध था सो तो वरुणका था प्रजाका कहा अपराध? दुर्बलको दुख देना दुर्गतिका कारण है अर महा अन्याय है ऐसा कहकर कुंभकरणको प्रशांत किया। अर वरुणको बुलाया। कैसा है वरुण? नीचा है मुख जाका। तदि रावण वरुणको कहते भए हे प्रवीण! तुम शोक मत करो जो तैं युद्धाविषैं पकड़ा गया, योधानिकी दोय ही रीति हैं, मारे जांय अथवा पकड़े जांय। अर रणतैं भागना यह कायरनिका काम है तातैं तुम हमपै क्षमा करो। अर अपने स्थानक जाय कर मित्र बांधव सहित सकल उपद्रवरहित अपना राज्य सुखतैं करहु। ऐसे मिष्ट वचन रावणके सुनकर वरुण हाथ जोड़ रावणसूं कहता भया—हे वीराधिवीर! तुम या लोकविषैं महापुण्याधिकारी हो, तुमसे जो वैर भाव करै सो मूर्ख है। अहो स्वामिन्! यह तिहारा परम धैर्य हजारों स्तोत्रनितैं स्तुति करने योग्य है, तुमने देवाधिष्ठित रत्न विना मुझे सामान्य शस्त्रोंसे जीता, कैसे हो तुम? अद्भुत है प्रताप जिनका। अर पवनके पुत्र हनूमानके अद्भुत प्रभावकी कहा महिमा कहूँ? तिहारे पुण्यके प्रभावतैं ऐसे ऐसे सत्पुरुष तिहारी सेवा करै हैं। हे प्रभो! यह पृथ्वी काहूके गोत्रमें अनुक्रमणकर नाहीं चली आई है यह केवल पराक्रमके वश है। शूरवीर ही याके भोक्ता हैं। सो आप सर्व योधाओंके शिरोमणि हो सो भूमिका प्रतिपालन करहु। हे उदारकीर्ति! हमारे स्वामी आप ही हो, हमारे अपराध क्षमा करहु। हे नाथ! आप जैसी उत्तम क्षमा कहूँ न देखी तातैं आप सारीखे उदार चित्त पुरुषसे सम्बन्ध कर मैं कृतार्थ होऊंगा तातैं मेरी सत्यवती नामा पुत्री आप परणो, याके परिणवे योग्य आप ही हो, या भांति वीनती कर उत्साहतैं पुत्री परणाई। कैसी है वह सत्यवती? सर्वरूपवतियोंका तिलक है, कमल समान है मुख जाका, वरुणने रावणका बहुत सत्कार किया अर कई एक प्रयाण रावणके लार गया, रावणने अति स्नेहकरि सीख दीनी तदि वरुण अपनी राजधानीमें आया, पुत्रीके वियोगतैं व्याकुल है चित्त जाका, कैलाश-कंप जो रावण ताने हनूमानका अतिसन्मानकर अपनी बहन जो चंद्रनखा ताकी पुत्री अनंगकुसुमा महारूपवती सो हनूमानको परणाई सो हनूमान ताकूं परण कर अतिप्रसन्न भए। कैसी है अनंगकुसुमा? सर्वलोक विषै जो प्रसिद्ध गुण तिनकी राजधानी है बहुरि कैसी है कामके आयुध हैं नेत्र जाके, अर अति सम्पदा दीनी अर कर्णकुण्डलपुरका राज्य दिया, अभिषेक कराया, ता नगरमें हनूमान सुखसूं विराजे जैसैं स्वर्गलोकमें इन्द्र विराजैं। तथा किहकूंपुर नगरका राजा नल ताकी पुत्री हरमालिनी नामा रूप सम्पदाकर लक्ष्मीको जीतनहारी सो महाविभूतितैं हनूमानको परणाई तथा किन्नरगीत नगरविषैं जे किन्नरजातिके विद्याधर तिनकी सौ पुत्री परणी या भांति एकसहस्र रानी परणीं। पृथ्वीविषैं हनूमानका श्रीशल

नाम प्रसिद्ध भया। काहेतैं, पर्वतकी गुफामैं जन्म भया था। सो हनूमान पहाड़ पर आय निकसे सो देख अति प्रसन्न भए। रमणीक है तलहटी जाकी वह पर्वत पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध भया।

अथानंतर किहकंधपुर नगरविषैं राजा सुग्रीव ताके रानी सुतारा चंद्रसमान कांतिकू धरैं है मुख जाका अर रति समान है रूप जाका, तिनके पुत्री पद्मरागा नवीन कमल समान है रंग जाका, अर अनेक गुणनिकरि मंडित है, पृथ्वीपर प्रसिद्ध लक्ष्मी समान सुंदर हैं नेत्र जाके, ज्योतिके मण्डलसे मंडित है मुखकमल जाका, अर महा गजराजके कुम्भस्थल समान ऊंचे कठोर स्तन हैं जाके, अर सिंह समान है कटि जाकी, महा विस्तीर्ण अर लावण्यतारूप सरोवरमें मग्न है मूर्ति जाकी, जाहि देख चित्त प्रसन्न होय, शोभायमान है चेष्टा जाकी, ऐसी पुत्रीको नवयौवन देख माता-पिताकों याके परणायवेकी चिंता भई या योग्य वर चाहिए सो माता पिताको रात-दिन निद्रा न आवै अर दिनमें भोजनकी रुचि गई, चिंतारूप है चित्त जिनका। तब रावणके पुत्र इंद्रजीत आदि अनेक राजकुमार कुलवान शीलवान तिनके चित्रपट लिखे, रूप लिखाय सखियोंके हाथ पुत्रीको दिखाए, सुंदर है कांति जिनकी सो कन्याकी दृष्टिमें कोई न आया, अपनी दृष्टि संकोच लीनी। बहुरि हनुमानका चित्रपट देख्या ताहि देखकर शोषण, संतापन, उच्चाटन, मोहन, वशीकरण कामके यह पंचबाणोंसे वेधी गई। तब ताहि हनुमानविषैं अनुरागिनी जान सखीजन ताके गुण वर्णन करती भई। हे कन्ये! यह पवनंजयका पुत्र जो हनुमान ताके अपार गुण कहांलों कहैं। अर रूप सौभाग्य तो याके चित्रपटमें तैंने देखे तातैं याको वर, माता पिताकी चिंता निवार। कन्या तो चित्रपटको देख मोहित भई हुती अर सखी जनोंने गुण वर्णन किया ही है तब लज्जाकर नीची होय गई अर हाथमें क्रीड़ा करनेका कमल था ताकी चित्रपटमें दी। तब सबने जाना कि यह हनुमानसे प्रीतिवंती भई। तब याके पिता सुग्रीवने याका चित्रपट लिखाय भले मनुष्यके हाथ वायुपुत्रपै भेजा। सो सुग्रीवका सेवक श्रीनगरमें गया अर कन्याका चित्रपट हनुमानको दिखाया सो अंजनाका पुत्र सुताराकी पुत्रीके रूपका चित्रपट देख मोहित भया। यह बात सत्य है कि कामके पांच ही बाण हैं परंतु कन्याके प्रेरे पवनपुत्रके मानों सौ बाण होय लागे। चित्तमें चिंतवता भया मैं सहस्र विवाह किए अर बड़ी २ ठौर परणा, खरदूषणकी पुत्री रावणकी भानजी परणी तथापि जब लग यह पद्मरागा न परणूं तौ लग परणा ही नाहीं, ऐसा विचार महाऋद्धिसंयुक्त एकक्षणमें सुग्रीवके पुरमें गया। सुग्रीव सुना जो हनुमान पधारे तब सुग्रीव अति हर्षित होय सन्मुख आए, बड़े उत्साहसे नगरमें लेगए सो राजमहलकी स्त्री झरोखनिकी जालीसे इनका अद्‌भुत रूप देख सकल चेष्टा तज आश्चर्यरूप होय गई। अर सुग्रीवकी पुत्री पद्मरागा इनके रूपको देखकर चकित होय गई। कैसी है कन्या? अति सुकुमार है शरीर जाका, बड़ी विभूतिकरि पवनपुत्रसे पद्मरागाका विवाह भया,

जैसा वर तैसी वींदनी सो दोनों अति हर्षको प्राप्त भए। स्त्री सहित हनुमान अपने नगरमें आए। राजा सुग्रीव और राणी सुतारा पुत्रीके वियोगतैं कैएक दिन शोकसहित रहे अर हनुमान महालक्ष्मीवान् समस्त पृथ्वीपर प्रसिद्ध है कीर्ति जाकी सो ऐसे पुत्रकूं देख पनंजय अर अंजना महासुखरूप समुद्रविषै मग्न भए। रावण तीन खंडका नाथ अर सुग्रीव समान है पराक्रम जाका, हनूमान सारिखे महाभट विद्याधरोंके अधिपति तिनका नायक लंका नगरीविषैं सुखसों रमैं, समस्त लोककूं सुखदाई जैसैं स्वर्गलोकविषैं इंद्र रमै तैसैं रमै। विस्तीर्ण है कांति जाकी, महासुन्दर अठारह हजार रानी तिनके मुखकमल तिनका भ्रमर भया, आयु व्यतीत होती न जानी, जाके एक स्त्री कुरूप और आज्ञारहित होय सो पुरुष उन्मत्त होय रहे है। जाके अष्टादश सहस्र पद्मिनी पतिव्रता आज्ञाकारिणी लक्ष्मीसमान होंय ताके प्रभावका कहा कहना? तीन खंडका अधिपति अनुपम है कांति जाकी समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी सिरपर धारे हैं आज्ञा जाकी सो सर्व राजावोंने अर्धचक्री पदका अभिषेक कराया और अपना स्वामी जान्या। विद्याधरनिके अधिपति तिनकरि पूजनीक है चरणकमल जाके, लक्ष्मी कीर्ति कांति परिवार जासमान औरके नाहीं, मनोज्ञ है देह जाका, वह दशमुख राजा चंद्रमा समान बड़े बड़े पुरुषरूप जे ग्रह तिनसे मंडित आल्हादका उपजावनहारा कौनके चित्तको न हरे? जाके सुदर्शनचक्र सर्व कार्यकी सिद्धि करणहारा देवाधिष्ठित मध्यान्हके सूर्यकी किरणोंके समान है किरणोंका समूह जाविषें, उद्धत प्रचंड नृपवर्ग आज्ञा न मानें तिनका विध्वंसक, अति देदीप्यमान नाना प्रकारके रत्ननिकरि मंडित शोभता भया। और दंडरत्न दुष्ट जीवनिको कालसमान भयंकर देदीप्यमान है उग्र तेज जाका मानो उल्कापातका समूह ही है सो प्रचंड याकी आयुधशाला विषैं प्रकाश करता भया, सो रावण आठमा प्रतिवासुदेव सुन्दर है कीर्ति जाकी, पूर्वोपार्जित कर्मके वशतैं कुलकी परिपाटीकर चली आई जो लंकापुरी ताविषैं संसारके अद्भुत सुख भोगता भया। कैसा है रावण! राक्षस कहावें ऐसे जे विद्याधर तिनके कुलका तिलक है। अर कैसी है लंका कोई प्रकारका प्रजाको नहीं है दुख जहां, श्रीमुनिसुव्रतनाथके मुक्ति गए पीछे अर श्रीनमिनाथके उपजनेसे पहिले रावण भया सो बहुत पुरुष जे परमार्थरहित मूढ़ लोक तिन्होंने उनका कथन औरसे और किया, मांसभक्षी ठहराया सो वे मांसाहारी नहीं थे, अन्नके आहारी थे, एक सीताके हरणका अपराध बना, ताकरि मारे गए और परलोकविषै कष्ट पाया। कैसा है श्रीमुनिसुव्रतनाथका समय? सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी उत्पत्तिका कारण है। सो वह समय बीते बहुत वर्ष भए तातें तत्त्वज्ञानरहित विषयी जीवोंने बड़े पुरुषनिका वर्णन औरसे और किया पापाचारी शीलव्रतरहित जे मनुष्य सो तिनकी कल्पना जालरूप फांसीकर अविवेकी मंदभाग्य जे मनुष्य तेई भए मृग सो बांधे। गौतमस्वामी कहै हैं ऐसा जानकर हे श्रेणिक! इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि कर

वंदनीक जो जिनराजका शास्त्र सोई भया रत्न ताहि अंगीकार कर। कैसा है जिनराजका शास्त्र ? सूर्यतैं अधिक है तेज जाका। अर कैसा है तू ? जिनशास्त्रके श्रवणकर जान्या है वस्तुका स्वरूप जाने, अर धोया है मिथ्यात्वरूप कर्दमका कलंक जाने।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावणका चक्रराज्याभिषेक वर्णन करनेवाला उन्नीसवां पर्व पूर्ण भया ॥१९॥

विद्याधर वंशका वर्णनरूप प्रथम कांड समाप्त भया।

विंशति पर्व

[त्रेषठ शालाका पुरुषोंके पूर्व भव आदिका वर्णन]

अथानंतर राजा श्रेणिक महा विनयवान् निर्मल है बुद्धि जाकी सो विद्याधरनिका सकल वृत्तांत सुन कर गौतम गणधरके चरणारविंदको नमस्कार कर आश्चर्यको प्राप्त होता संता कहता भया–हे नाथ ! तिहारे प्रसादतैं आठवां प्रतिनारायण जो रावण ताकी उत्पत्ति और सकल वृत्तांत मैंने जान्या। तथा राक्षसवंशी और वानरवंशी जे विद्याधर तिनके कुलका भेद भली भांति जान्या। अब मैं तीर्थंकरोंके पूर्व भव सहित सकल चरित्र सुना चाहू हू ? कैसा है तिनका चरित्र ? बुद्धिकी निर्मलताका कारण है अर आठवें बलभद्र,जे श्रीरामचन्द्र सकल पृथिवीविषैं प्रसिद्ध, सो कौन वंश विषै उपजे तिनका चरित्र कहो। अर तीर्थंकरनिके नाम अर उनके माता पिताके नाम सब सुनवेकी मेरी इच्छा है सो तुम कहने योग्य हो। या भांति जब श्रेणिकने प्रार्थना करी तब गौतम गणधर भगवत चरित्रके प्रश्न कर बहुत हर्षित भए ! कैसे हैं गणधर ? महा बुद्धिमान परमार्थविषैं प्रवीण। ते कहे हैं कि हे श्रेणिक ! पापके विध्वंसका कारण अर इंद्रादिक कर नमस्कार करने योग्य चौवीस तीर्थंकरनिके नाम अर इनके पितादिकनिके नाम सर्व पूर्व भव सहित कथन करूं हू। तू सुन, ऋषभ १ अजित २ संभव ३ अभिनंदन ४ सुमति ५ पद्मप्रभ ६ सुपार्श्व ७ चन्द्रप्रभ ८ पुष्पदंत (दूजा नाम सुविधिनाथ) ९शीतल १० श्रेयांस ११ वासपूज्य १२ विमल १३ अनन्त १४ धर्म १५ शांति १६ कुंथु १७ अर १८ मल्लि १९ मुनिसुव्रत २० नमि २१ नेमि २२ पार्श्व २३ महावीर २४ जिनका अब शासन प्रवर्तं है ये चौवीस तीर्थंकरनिके नाम कहे हैं। अब इनकी पूर्व भवकी नगरीनिके नाम कहै है। पुण्डरीकनी १ सुसीमा २ क्षेमा ३ रत्नसंचयपुर ४ ऋषभदेव आदि तीन तीन एक एक नगरीविषै अनुक्रमतैं वासुपूज्य पर्यंतकी ये चार नगरी पूर्व भवके निवासकी जाननी। अर महानगर १३ अरिष्टपुर १४ सुभद्रिका १५ पुण्डरीकनी १६ सुसीमा १७ क्षेमा १८वीतशोका १९ चम्पा २० कौशांबी २१ हस्तिनागपुर २२ साकेता २३ छत्राकार २४ ये चौवीस तीर्थंकरनिकी या भवके पहले जो देवलोक ता भव पहिले जो मनुष्यभव ताकी

स्वर्गपुरी समान राजधानी कही । अब तिनके परभवके नाम सुनो—वज्रनाभि १ विमलवाहन २विपुलख्याति ३ विपुलवाहन ४ महाबल ५ अतिबल ६ अपराजित ७ नंदिषेण ८ पद्म ९महापद्म १० पद्मोत्तर ११ पंकजगुल्म १२ कमलसमान है मुख जाका ऐसा नलिनगुल्म १३ पद्मासन १४ पद्मरथ १५ दृढ़रथ १६ मेघरथ १७ सिंहरथ १८ वैश्रवण १९ श्रीधर्मा २० सुरश्रेष्ठ २१ सिद्धार्थ २२ आनंद २३ सुनंद २४ ये तीर्थंकरनिके या भव पहिले तीजे भवके नाम कहे । अब इनके पूर्वभवके पितानिके नाम सुन—वज्रसेन १ महातेज २ रिपुदमन ३ स्वयंप्रभ ४ विमलवाहन ५ सीमंधर ६ पिहिताश्रव ७ अरिंदम ८ युगंधर ९ सर्वजनानंद १० अभयानन्द ११ वज्रदंत १२ वज्रनाभि १३ सर्वगुप्ति १४ गुप्तिमान् १५ चिंतारक्ष १६ विमलवाहन १७ घनरव १८ धीर १९ संवर २० त्रिलोकीरवि २१ सुनंद २२ वीतशोक २३ प्रोष्ठिल २४ ये पूर्व भवके पितानिके नाम कहे । अब चौवीस तीर्थंकर जिस जिस देवलोकसे आए तिन देवलोकोंके नाम सुनो । सर्वार्थसिद्धि १ वैजयन्त २ ग्रैवेयक ३ वैजयन्त ४ ऊर्ध्वग्रैवेयक ५ वैजयन्त ६ मध्यग्रैवेयक ७ वैजयन्त ८ अपराजित ९ आरणस्वर्ग १० पुष्पोत्तर विमान ११ कापिष्ठस्वर्ग १२ शुक्रस्वर्ग १३ सहस्रारस्वर्ग १४ पुष्पोत्तर १५ पुष्पोत्तर १६ पुष्पोत्तर १७ सर्वार्थसिद्धि १८ विजय १९ अपराजित २० प्राणत २१वैजयन्त २१ आनत २३ पुष्पोत्तर २४ ये चौवीस तीर्थंकरोंके आवनेके स्वर्ग कहे ।

अब आगे चौवीस तीर्थंकरनिकी जन्मपुरी जन्म नक्षत्र माता पिता अर वैराग्यके वृक्ष अर मोक्षके स्थान मैं कहूं हूं सो तुम सुनो । अयोध्या नगरी, पिता नाभिराजा,माता मरुदेवी,राणी,उत्तराषाढ़ नक्षत्र, वट वृक्ष, कैलाश पर्वत, प्रथम जिन, हे मगध देशके भूपति तोहि अतींद्रिय सुखकी प्राप्ति करहु १ । अयोध्या नगरी, जितशत्रु पिता, विजया माता, रोहिणी नक्षत्र, सप्तच्छद वृक्ष, सम्मेदशिखर अजितनाथ हे श्रेणिक तुझे मंगलके कारण होहु २ । श्रावस्ती नगरी, जितारि पिता, सेना माता, पूर्वाषाढ़ नक्षत्र,शाल वृक्ष,सम्मेदशिखर संभवनाथ तेरे भव-बंधन हरहु ३ । अयोध्यापुरी नगरी, संवर पिता, सिद्धार्था माता, पुनर्वसु नक्षत्र, साल वृक्ष, सम्मेदशिखर अभिनंदन तोहि कल्याणके कारण होहु ४ । अयोध्यापुरी नगरी, मेघप्रभ पिता, सुमंगला माता, मघा नक्षत्र, प्रियंगु वृक्ष, सम्मेदशिखर सुमतिनाथ जगत्में महा मंगलरूप तेरे सर्व विघ्न हरहु ५ । कौशांबी नगरी धारण पिता, सुसीमा माता,चित्रा नक्षत्र,प्रियंगु वृक्ष,सम्मेदशिखर पद्मप्रभ तेरे काम-क्रोधादि अमंगल हरहु ६ । काशीपुरी नगरी, सुप्रतिष्ठ पिता, पृथिवी माता, विशाखा नक्षत्र, शिरीष वृक्ष, सम्मेदशिखर सुपार्श्वनाथ हे राजन् तेरे जन्म-जरा-मृत्यु हरहु ७ । चंद्रपुरी नगरी, महासेन पिता, लक्ष्मणा माता, अनुराधा नक्षत्र, नागवृक्ष, सम्मेदशिखर चंद्रप्रभ तोहि शांतिभावके दाता होहु ८ । काकंदी नगरी सुग्रीव पिता, रामा माता, मूल नक्षत्र, शाल वृक्ष, सम्मेदशिखर पुष्पदंत

तेरे चित्तको पवित्र करहु ९। भद्रिकापुरी नगरी, दृढ़रथ पिता, सुनंदा माता, पूर्वाषाढ़ नक्षत्र, प्लक्ष वृक्ष, सम्मेदशिखर शीतलनाथ तेरे त्रिविध ताप हरहु १०। सिंहपुर नगरी, विष्णुराज पिता, विष्णुश्री देवी माता, श्रवण नक्षत्र, तिन्दुक वृक्ष,सम्मेदशिखर श्रेयांसनाथ तेरे विषय-कषाय हरहु, कल्याण करहु ११। चंपापुरी नगरी, वासुपूज्य पिता, विजयामाता, शतभिषा नक्षत्र, पाटल वृक्ष, निर्वाणक्षेत्र चम्पापुरीका वन, श्रीवासुपूज्य तोहि निर्वाणकी प्राप्ति करहु १२। कंपिला नगरी कृतवर्मा पिता, सुरम्या माता, उत्तराषाढ़ नक्षत्र, जंबू वृक्ष, सम्मेदशिखर विमलनाथ तोहि रागादिमल-रहित करहु १३। अयोध्यानगरी, सिंहसेन पिता, सर्वयशा माता, रेवती नक्षत्र, पीपल वृक्ष, सम्मेदशिखर अनंतनाथ तुझे अंतर-रहित करहु १४। रत्नपुरी नगरी, भानु पिता, सुव्रता माता, पुष्य नक्षत्र, दधिपर्ण वृक्ष, सम्मेदशिखर धर्मनाथ तोहि धर्मरूप करहु १५। हस्तिनागपुर नगर, विश्वसेन पिता, ऐरा माता, भरणी नक्षत्र, नंदीवृक्ष, सम्मेदशिखर शांतिनाथ तुझे सदा शांति करहु १६। हस्तिनागपुर नगर, सूर्य पिता, श्रीदेवी माता, कृतिका नक्षत्र, तिलक वृक्ष, सम्मेदशिखर कुंथुनाथ हे राजेंद्र तेरे पाप-हरणके कारण होहु १७। हस्तिनागपुर नगर, सुदर्शन पिता, मित्रा माता, रोहिणी नक्षत्र, आम्रवृक्ष, सम्मेदशिखर अरनाथ हे श्रेणिक! तेरे कर्मरज हरहु १८। मिथिलापुरी नगरी, कुंभ पिता, रक्षता माता, अश्विनी नक्षत्र, अशोक वृक्ष, सम्मेदशिखर, मल्लिनाथ हे राजा तेरा मन शोक रहित करहु १९। कुशाग्र नगर, सुमित्र पिता, पद्मावती माता श्रवण नक्षत्र, चम्पक वृक्ष, सम्मेदशिखर मुनिसुव्रतनाथ सदा तेरे मनविषैं वसहु २०। मिथिलापुरी नगरी, विजय पिता, वप्रा माता, अश्विनी नक्षत्र, मौलश्रीवृक्ष सम्मेदशिखर, नमिनाथ तेरे धर्मका समागम करहु २१। सौरीपुर नगर समुद्रविजय पिता,शिवादेवी माता,चित्रा नक्षत्र, मेषशृंग वृक्ष, गिरिनार पर्वत, नेमिनाथ तुझे शिवसुखदाता होवहु २२। काशीपुरी नगरी, अश्वसेन पिता,वामा माता, विशाख नक्षत्र,धवल वृक्ष,सम्मेदशिखर, पार्श्वनाथ तेरे मनको धैर्य देहु २३। कुण्डलपुर नगर,सिद्धार्थ पिता,प्रियकारिणी माता,उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र,शाल वृक्ष, पावापुर महावीर तुझे परम मंगल करहु,आप-समान करहु २४। आगे चौबीस तीर्थंकरनिके निर्वाण क्षेत्र कहिए है—ऋषभदेवका निर्वाणकल्याणक कैलाश,१ वासुपूज्यका चंपापुर २ नेमिनाथका गिरनार ३ महावीरका पावापुर ४ औरनिका सम्मेदशिखर है। शांति कुंथु अर ये तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती भी भए अर कामदेव भी भए राज्य छोड़ वैराग्य लिया। अर वासुपूज्य मल्लिनाथ नेमिनाथ पार्श्वनाथ महावीर ये पांच तीर्थंकर कुमार अवस्थामें वैरागी भए राज भी न किया और विवाह भी न किया। अन्य तीर्थंकर महामंडलीक राजा भए, राज छोड़ वैराग्य लिया और चन्द्रप्रभ पुष्पदंत ये दोय श्वेत वर्ण भए और श्रीसुपार्श्वनाथ प्रियंगु-मञ्जरीके रंग समान हरितवर्ण भए और पार्श्वनाथका वर्ण कच्चा शालि-समान हरितवर्ण भया, पद्मप्रभका वर्ण कमल-समान आरक्त भया और वासु-

पूज्यका वर्ण टेसूके फूल समान आरक्त भया और मुनिसुव्रतनाथका वर्ण अञ्जनगिरिसमान श्याम और नेमिनाथका वर्ण मोरके कंठ-समान श्याम और सोलह तीर्थंकरोंके ताता सोनेके समान वर्ण भया। ये सब ही तीर्थंकर इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादिकोंमे पूजने योग्य और स्तुति करने योग्य भए और सबहीका सुमेरुके शिखर पांडुकशिला पर जन्माभिषेक भया, सबहीके पंच कल्याण प्रकट भये, संपूरण कल्याणकी प्राप्तिका कारण है सेवा जिनकी वे जिनेंद्र तेरी अविद्या हरें। या भांति गणधरदेवने वर्णन किया तब राजा श्रेणिक नमस्कारकर विनती करते भए–हे प्रभो! छहों कालकी वर्तमान आयुका प्रमाण कहो और पापकी निवृत्तिका कारण परम तत्त्व जो आत्मस्वरूप उसका वर्णन वारंवार करो और जिस जिनेंद्रके अंतरालमें श्रीरामचंद्र प्रकट भए सो आपके प्रसादतें मैं सर्व वर्णन सुना चाहू हूं ऐसा जब श्रेणिकने प्रश्न किया तब गणधरदेव कृपा कर कहते भए–कैसे हैं गणधरदेव? क्षीरसागरके जल समान निर्मल है चित्त जिनका, हे श्रेणिक! कालनामा द्रव्य है सो अनन्त समय है जाकी आदि अंत नाहीं ताकी संख्या कल्पनारूप दृष्टांतमे पल्य-सागरादि रूप महामुनि कहै हैं। एक महायोजन-प्रमाण लंबा चौड़ा ऊंचा गोल गर्त (गढ्ढा) उत्कृष्ट भोगभूमिका तत्कालका जन्म्या हुवा मेंढ़का बच्चा ताके रोमके अग्रभागतें भरिए सो गर्त घना गाढ़ा भरिए और सौ वर्ष गए एक रोम काढ़े सो व्यवहारपल्य कहिए सो यह कल्पना दृष्टांत-मात्र है काहूने ऐसा किया नाहीं यातें असंख्यातगुणा उद्धारपल्य है इससे संख्यातगुणी अद्धापल्य है ऐसी दस कोटा कोटि पल्य जाय तदि एक सागर कहिए और दश कोटा-कोटि सागर जाय तब एक अवसर्पिणीकाल कहिए और दस कोटाकोटि सागरकी एक उत्सर्पिणी और बीस कोटाकोटि सागरका कल्पकाल कहिए। जैसैं एक मासमें शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष ये दोय वर्तें तैसैं एक कल्पकालविषै एक अवसर्पिणी और एक उत्सर्पिणी ये दोय वर्तें। इनके प्रत्येक २ छह छह काल हैं तिनमें प्रथम सुखमासुखमा काल चार कोटाकोटि सागरका है दूजा सुखमा काल तीन कोटाकोटि सागरका है, तीजा सुखमा दुखमा काल दो कोटाकोटि सागरका है और चौथा दुखमासुखमा काल बयालीस हजार वर्ष घाट एक कोटाकोटि सागरका है, पंचमा दु:खमा काल इकीस हजार वर्षका है, छठा दु:खमादु:खमा काल सो भी इक्कीस हजार वर्षका है यह अवसर्पिणीकालकी रीति कही, प्रथम कालसे लेय छठे काल-पर्यंत आयु आदि सब घटती गई और इससे उलटी जो उत्सर्पणी उसमें फिर छठेसे लेकर पहिले पर्यंत आयु काय बल पराक्रम बढ़ते गए यह कालचक्रकी रचना जाननी।

अथानंतर जब तीजे कालमें पल्यका आठवां भाग बाकी रहा तब चौदह कुलकर भए तिनका कथन पूर्व कर आए हैं। चौदहवें नाभिराजा तिनके आदि तीर्थंकर ऋषभदेव पुत्र भए। तिनको मोक्ष गए पीछे पचास लाख कोटि सागर गए श्री अजितनाथ द्वितीय तीर्थंकर

भए। उनके पीछे तीस लाख कोटि सागर गए श्रीसंभवनाथ भए। ता पीछे दश लाख कोटि सागर गए श्री अभिनन्दन भए। ता पीछें नव लाख कोटि सागर गए श्रीसुमतिनाथ भए। ता पीछे नव्वे हजार कोटि सागर गए श्रीपद्मप्रभ भए। ता पीछे नव हजार कोटि सागर गए श्री सुपार्श्वनाथ भए। ता पीछे नौसौ कोटि सागर गए श्रीचन्द्रप्रभ भए। ता पीछे नव्वै कोटि सागर गए श्रीपुष्पदंत भए। ता पीछे नव कोटि सागर गए श्रीशीतलनाथ भए। ता पीछे सौ सागर घाट कोटि सागर गए श्रेयांसनाथ भए। ता पीछे चव्वन सागर गए श्रीवासुपूज्य भए। ता पीछे तीस सागर गए श्रीविमलनाथ भए। ता पीछे नव सागर गए श्रीअनन्तनाथ भए। ता पीछें चार सागर गए श्रीधर्मनाथ भए। ता पीछे पान पल्यघाट तीन सागर गए श्री शांतिनाथ भए। ता पीछे आधा पल्य गए श्रीकुन्थुनाथ भए। ता पीछे हजार कोटि वर्षघाट पाव पल्य गए श्रीअरनाथ भए। उनके पीछे पैंसठ लाख चौरासी हजार वर्षघाट हजार कोटि वर्ष गए श्रीमल्लिनाथ भए। ता पीछे चौअन लाख वर्ष गए श्रीमुनिसुव्रतनाथ भए। उनके पीछे छह लाख वर्ष गए श्रीनमिनाथ भए। उनके पीछे पांच लाख वर्षगए श्रीनेमिनाथ भए। उनके पीछे पौने चौरासी हजार वर्ष गए श्रीपार्श्वनाथ भए। उनके पीछे अढाई सौ वर्ष गए श्रीवर्द्ध-मान भए। जब वर्द्धमानस्वामी मोक्षकों प्राप्त होवेंगे तब चौथे कालके तीन वर्ष साढे आठ महीना बाकी रहेंगे और इतने हीं तीजे कालके बाकी रहे थे तब श्रीऋषभदेव मुक्ति पधारे। हे श्रेणिक! धर्मचक्रके अधिपति श्रीवर्द्धमान इन्द्रके मुकुटके रत्ननिकी जो ज्योति सोई भया जल ताकरि धोए हैं चरणयुगल जिनके सो तिनको मोक्ष पधारे पीछे पांचवां काल लगेगा जामैं देवनिका आगमन नाहीं और अतिशयके धारक मुनि नाहीं। केवलज्ञानकी उत्पत्ति नाहीं, चक्रवर्ती बलभद्र और नारायणकी उत्पत्ति नाहीं, तुम सारिखे न्यायवान राजा नाहीं, अनीतिकारी राजा होवेंगे और प्रजाके लोक दुष्ट महा ढीठ परधन हरवेकों उद्यमी होवेंगे, शील-रहित व्रतरहित महाक्लेश व्याधिके भरे मिथ्यादृष्टि घोरकर्मी होवेंगे और अतिवृष्टि अनावृष्टि टिड्डी सूवा मूषक अपनी सेना और पराई सेनायें जो सप्त ईतियां तिनका भय सदा ही होयगा, मोहरूप मदिराके माते राग द्वेषके भरे भौंहको टेढा करनहारे क्रूर दृष्टि पापी महामानी कुटिल जीव होवेंगे। कुवचनके बोलनहारे क्रूरजीव धनके लोभी पृथिवीपर ऐसे विचरेंगे जैसे रात्रिविषैं घूघू विचरै और जैसैं पटवीजना चमत्कार करैं तैसैं थोडे ही दिन चमत्कार करैंगे। वे मूर्ख दुर्जन जिनधर्मसैं परान्मुख कुधर्मविषैं आप प्रवर्तेंगे औरोंको प्रवर्तावेंगे। परोपकार-रहित पराए कार्योंमें निरुद्यमी, आप डूबेंगे औरोंको डबोवेंगे। वे दुर्गतिगामी आपको महंत मानेंगे ते क्रूरकर्म चंडाल मदोन्मत्त अनर्थकर माना है हर्ष जिन्होंने मोहरूप अंधकारकरि अंधे कलिकालके प्रभावतैं हिंसारूप जे कुशास्त्र वेई भए कुठार तिनकरि अज्ञानी जीवरूप वृक्षनिकों काटेंगे। पंचम कालके आदिमें मनुष्योंका सात हाथका

ऊंचा शरीर होयगा और एकसौ वीस वर्षकी उत्कृष्ट आयु होयगी। फिर पंचम कालके अन्त दोय हाथका शरीर और वीस वर्षकी आयु उत्कृष्ट रहैगी। बहुरि छठेके अन्त एक हाथको शरीर उत्कृष्ट सोला वर्षकी आयु रहेगी, वे छठे कालके मनुष्य महा विरूप मांसाहारी महा दुखी पापक्रियारत महारोगी तिर्यंच-समान महा अज्ञानी होवेंगे, न कोई सम्बन्ध, न कोई व्यवहार न कोई ठाकुर न कोई चाकर, न राजा न प्रजा, न धन न घर न सुख, महादुखी होवेंगे। अन्याय कामके सेवनहारे धर्मके आचारसे शून्य महापापके स्वरूप होहिंगे। जैसैं कृष्णपक्षमें चन्द्रमाकी कला घटै और शुक्लपक्षमें बढै तैसैं अवसर्पिणीकालमें घटै उत्सर्पिणीविषैं बढै, अार जैसे दक्षिणायणमें दिन घटै और उत्तरायणमें बढै तैसैं अवसर्पिणी उत्सर्पिणीविषैं हानि वृद्धि जाननी। ये तीर्थंकरनिका अंतराल तोहि कह्या।

हे श्रेणिक! अब तू तीर्थंकरनिके शरीरकी ऊंचाइका कथन सुन। प्रथम तीर्थंकरका शरीर पांचसौ धनुष ५००, दूजेका साढे चारसौ धनुष ४५०, तीजेका चारसै धनुष ४००, चौथेका साढे तीनसै धनुष ३५०, पांचवेंका तीनसै धनुष ३००, छठेका ढाईसौ धनुष २५०, सातवेंका दो सौ धनुष २००, आठवेंका डेढसो धनुष १५०, नौवेंका सौ धनुष १००, दसवेंका नब्बे धनुष ९०, ग्यारहवेंका अस्सी धनुष ८०, बारहवेंका सत्तर धनुष ७०, तेरहवेंका साठ धनुष ६०, चौदहवेंका पच्चास धनुष ५० पन्द्रहवेंका पैंतालीस धनुष ४५, सोलहवेंका चालीस धनुष ४०, सत्रहवेंका पैंतीस धनुष ३५, अठारहवेंका तीस धनुष ३०, उन्नीसवेंका पच्चीस धनुष २५, बीसवेंका बीस धनुष २०, इक्कीसवेंका पंद्रह धनुष १५, बाईसवेंका दस धनुष १०, तेईसवेंका नौ हाथ ९, चोवीसवेंका सात हाथ ७। अब आगैं इन चौवीस तीर्थंकरनिकी आयुका प्रमाण कहिए है प्रथमका चौरासी लाख पूर्व (चौरासी लाख वर्षका एक पूर्वांग और चौरासी लाख पूर्वांगका एक पूर्व होय है) और दूजेका बहत्तर लाख पूर्व, तीजेका साठ लाख पूर्व, चौथेका पचास लाख पूर्व, पांचवेंका चालीस लाख पूर्व, छठेका तीस लाख पूर्व, सातवेंका बीस लाख पूर्व, आठवेंका दस लाख पूर्व, नवमेंका दोय लाख पूर्व, दसवेंका एक लाख पूर्व, ग्यारहवेंका चौरासी लाख वर्ष, बारहवेंका बहत्तर लाख वर्ष, तेरहवेंका साठ लाख वर्ष, चौदहवेंका तीस लाख वर्ष, पंद्रहवेंका दस लाख वर्ष, सोलहवेंका लाख वर्ष, सत्रहवेंका पचानवैं हजार वर्ष, अठारहवेंका चौरासी हजार वर्ष, उन्नीसवेंका पचावन हजार वर्ष, बीसवेंका तीस हजार वर्ष, इक्कीसवेंका दस हजार वर्ष, बाईसवेंका हजार वर्ष, तेईसवेंका सौ वर्ष, चौवीसवेंका बहत्तर वर्षका आयु प्रमाण जानना।

अथानंतर ऋषभदेवके पहिले जे चौदह कुलकर भए तिनके आयु-कायका वर्णन करिए है— प्रथम कुलकरकी काय अठारहसौ धनुष, दूसरेकी तेरासौ धनुष, तीसरेकी आठसौ धनुष, चाथेकी सात सौ पिचत्तर धनुष, पांचवेंकी साढे सातसौ धनुष, छठेकी सवा सातसौ धनुष, सातवेंकी

सातसौ धनुष, आठवेंकी पौने सातसौ धनुष, नवमेंकी साढ़े छै सौ धनुष, दसवेंकी सवा छै सौ धनुष,ग्यारहवेंकी छै सौ धनुष,बारहवेंकी पौने छै सौ धनुष,तेरहवेंकी साढ़े पांच सौ धनुष,चौदहवेंकी सवा पांचसौ धनुष। अब इन कुलकरनिकी आयुका वर्णन करै हैं—पहिलेकी आयु पल्यका दसमा भाग, दूजेकी पल्यका सावां भाग, तीजेकी पल्यका हजारवां भाग, चौथेकी पल्यका दस हजारवां भाग, पांचमेंकी पल्यका लाखवां भाग, छठेकी पल्यका दस लाखवां भाग, सातवेंकी पल्यका कोडवां भाग, आठवेंकी पल्यका दस कोडवां भाग, नवमेंकी पल्यका सौ कोडवां भाग, दसवेंकी पल्यका हजार कोंडवां भाग,ग्यारहवेंकी पल्यका दश हजार कोडवां भाग,बारहवेंकी पल्यका लाख कोडवां भाग तेरहवेंकी पल्यका दस लाख कोडवां भाग, चौदहवेंकी कोटि पूर्वकी आयु भई।

अथानंतर हे श्रेणिक, अब तू बारह जे चक्रवर्ती तिनकी वार्ता सुन। प्रथम चक्रवर्ती भरत श्री ऋषभदेवके यशस्वती राणी ताकूं सुनंदा भी कहै हैं ताके पुत्र या भरतक्षेत्रका अधिपति ते पूर्व-भवविषैं पुंडरीकिनी नगरीनिषै पीठ नाम राजकुमार थे वे कुशसेन स्वामीके शिष्य होय मुनिव्रत धर सर्वार्थसिद्धि गए। तहांसैं चयकर षट्खंडका राज्य कर फिर मुनि होय अंतर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपजाय निर्वाणको प्राप्त भए। फिर पृथिवीपुर नामा नगरविषैं राजा विजयतेज यशोधर नामा मुनिके निकट जिनदीक्षा धर विजयनाम विमान गए, वहांसे चयकर अयोध्याविषै राजा विजय, राणी सुमंगला, तिनके पुत्र सगर नाम द्वितीय चक्रवर्ती भए, ते महा भोग भोगकर इंद्रसमान देव विद्याधरनिकरि धारिए है आज्ञा जिनकी, ते पुत्रनिके शोककरि राज्यका त्यागकर अजितनाथ-के समोशरणमें मुनि होय केवल उपजाय सिद्ध भए । और पुंडरीकिनी नगरीविषैं एक राजा शशिप्रभ वह त्रिमलस्वामीका शिष्य होय ग्रैवेयक गये। वहांसे चयकर श्रावस्ती नगरीमें राजा सुमित्रा, राणी भद्रवती , तिनके पुत्र मघवा नाम तृतीय चक्रवर्ती भये, लक्ष्मीरूप वेलके लिपटने-को वृक्ष, ते श्रीधर्मनाथके पीछे शांतिनाथके उपजनेसे पहिले भए। समाधानरूप जिनमुद्रा धार सौधर्मस्वर्ग गए। फिर चौथे चक्रवर्ती जो श्रीसनत्कुमार भए तिनकी गौतमस्वामीने बहुत बड़ाई करी। तब राजा श्रेणिक पूछते भए हे प्रभो! वे किस पुण्यसे ऐसे रूपवान् भए तब उनका चरित्र संक्षेपताकर गणधर कहते भए। कैसा है सनत्कुमारका चरित्र जो सौ वर्षमें भी कोऊ कहिवेकों समर्थ नाहीं। यह जीव जब लग जैनधर्मको नाहीं प्राप्त होय है तब लग तिर्यंच नारकी कुमानुष कुदेव कुगतिमैं दुःख भोगवै है, जीवोंने अनंत भव किए सो कहां लों कहिए परंतु एक एक भव कहिए हैं। एक गोवर्धन नाम ग्राम,तहां भले भले मनुष्य वसैं तहां एक जिनदत्त नाम श्रावक बडा गृहस्थ जैसैं सर्व जलस्थानकोंसे सागर शिरोमणि है और सर्व गिरनिमैं सुमेरु और सर्व ग्रहोंविषैं सूर्य, तृणोंमें इक्षु,बेलोंमें नागर वेलि,वृक्षोंमें हरिचंदन प्रशंसायोग्य है तैसैं कुलोंमें श्रावकका कुल सर्वोत्कृष्ट आचारकर पूजनीक है सुगतिका कारण है, सो जिनदत्त नामा श्रावक गुणरूप आभूषणनिकरि

मंडित श्रावकके व्रत पाल उत्तम गति गया और ताकी स्त्री विनयवती महापतिव्रता श्रावकके व्रत पालनहारी सो अपने घरकी जगहमें भगवानका चैत्यालय बनाया सकल द्रव्य तहां लगाया और आर्यिका होय महातपकर स्वर्गमें प्राप्त भई अर ताही ग्रामविषैं एक और हेमबाहु नामा गृहस्थ आस्तिक दुराचारसे रहित सो विनयवतीका कराया जो जिनमंदिर ताकी भक्तिकरि जयदेव भया। सो चतुर्विध संघकी सेवामें सावधान सम्यग्दृष्टि जिनवंदनामें तत्पर, सो चयकर मनुष्य भया। बहुरि देव, बहुरि मनुष्य। याभांति भव धर महापुरी नगरविषैं सुप्रभ नामा राजा ताकैं तिलकसुंदरी रानी गुण-रूप आभूषणकी मंजूषा ताके धर्मरुचि नामा पुत्र भया, सो राज्य तज सुप्रभनाम पिता जो मुनि ताका शिष्य होय मुनिव्रत अंगीकार करता भया। पंच महाव्रत पंच समिति तीन गुप्तिका प्रतिपालक आत्म-ध्यानी गुरुसेवामें अत्यन्त तत्पर, अपनी देहविषैं अत्यन्त निस्पृह, जीवदयाका धारक, मन इन्द्रियोंका जीतनहारा शीलका सुमेरु, शंका आदि जे दोष तिनसे अतिदूर, साधुओंका वैयाव्रत करनहारा, सो समाधिमरणकर चौथे देवलोकविषैं गया तहां सुख भोगता भया तहांसे चयकर नागपुरमें राजा विजय, राणी सहदेवी तिनके सनत्कुमार नामा पुत्र चौथा चक्रवर्ती भया। छह खण्ड पृथ्वीमें जाकी आज्ञा प्रवर्त्ती सो महारूपवान, एक दिवस सौधर्म इंद्रने इनके रूपकी अति प्रशंसा करी सो रूप देखनेको देव आए सो प्रच्छन्न आयकर चक्रवर्तीका रूप देख्या। ता समय चक्रवर्तीने कुस्तीका अभ्यास किया था सो शरीर रजकर धूसरा होय रहा था अर सुगंध उबटना लगाया था अर स्नानकी एक धोती ही पहिने नाना प्रकारके जे सुगंध जल तिनसे पूर्ण नाना प्रकारके रत्ननिके कलश तिनके मध्य स्नानके आसनपर बिराजे हुते सो देव रूपको देख आश्चर्यको प्राप्त भए। परस्पर कहते भए जैसा इंद्रने वर्णन किया तैसा ही है यह मनुष्यका रूप देवोंके चित्तको मोहित करणहारा है। बहुरि चक्रवर्ती स्नानकर वस्त्राभरण पहर सिंहासन पर आय विराजे रत्नाचलके शिखरसमान है ज्योति जाकी, अर वह देव प्रकट होय कर द्वारे आय ठाढ़े रहे। अर द्वारपालसे हाथ जोड़ चक्रवर्तीको कहलाया जो स्वर्गलोकके देव तिहारा रूप देखने आए है। तब चक्रवर्ती अद्भुत् शृंगार किए विराजे हुते ही तब देवोंके आयवेकरि विशेष शोभा करि तिनको बुलाया ते आय चक्रवर्तीका रूप देख माथा धुनते भए, अर कहते भए, एकक्षण पहिले हमने स्नानके समय जैसा देखा था तैसा अब नाहीं, मनुष्योंके शरीरकी शोभा क्षण भंगुर है धिक्कार है इस असार जगतकी मायाको! प्रथम दर्शनमें जो रूप यौवनकी अद्भुतता हुती सो क्षणमात्रमें ऐसे विलाय गई, जैसैं विजुली चमत्कार कर क्षणमात्रमें विलाय जाय है। ये देवनिके वचन सनत्कुमार सुन रूप अर लक्ष्मीको क्षणभंगुर जान वीतराग भावधर महामुनि होय महातप करते भए। महाऋद्धि उपजी। पुनि कर्म निर्जरा निमित्त महारोगकी परिषह सहते भए, महा ध्यानारूढ़ होय समाधिमरण कर सनत्कुमार स्वर्ग सिधारे। वे शांतिनाथके पहिले अर

मघवा तीजा चक्रवर्ती ताके पीछे भए। अर पुण्डरीकिनी नगरीविषैं राजा मेघरथ वह अपने पिता धनरथ तीर्थंकरके शिष्य मुनि होय सर्वार्थसिद्धिको पधारे। तहांतैं चयकर हस्तिनापुरमें राजा विश्वसेन, राणी ऐरा, तिनके शांतिनाथ नामा सोलहवें तीर्थंकर अर पंचम चक्रवर्ती भए। जगतकूं शांतिके करणहारे जिनका जन्मकल्याणक सुमेरु पर्वतपर इंद्रने किया। बहुरि षट्खण्ड पृथ्वीके भोक्ता भए। राज्यको तृण समान जान तजा, मुनिव्रत धर मोक्ष गए। बहुरि कुंथुनाथ छठे चक्रवर्ती सत्रहवें तीर्थंकर, अरनाथ सातवें चक्रवर्ती अठारवें तीर्थंकर ते मुनि होय निर्वाण पधारे। सो तिनका वर्णन तीर्थंकरोंके कथनमें पहिले कहा ही है। अर धान्यपुर नगरमें राजा कनकप्रभ सो विचित्रगुप्त स्वामीके शिष्य मुनि होय स्वर्ग गए। तहांतैं चयकर अयोध्या नगरीविषैं राजा कीर्तिवीर्य, रानी तारा, तिनके सुभूमन अष्टम चक्रवर्ती भए, जाकरि यह भूमि शोभायमान भई, तिनके पिताका मारणहारा जो परशुराम तानैं क्षत्री मारे हुते अर तिनके सिर थंभनविषैं चिनाए हुते सो सुभूम अतिथिका भेषकर परशुरामके भोजनको आए। परशुरामने निमित्तज्ञानीके वचनतैं क्षत्रिनिके दांत पात्रमें मेलि सुभूमकों दिखाये, तदि दांत खीरका रूप होय परणये अर भोजनका पात्र चक्र होय गया ताकरि परशुरामकों मारया। परशुरामने क्षत्री मारे और सात वार पृथिवी निःक्षत्री करी हुती सो सुभूम परशुरामको मार द्विजवर्गतैं द्वेष किया। अर इकीस वार पृथिवी अब्राह्मण करी। जैसैं परशुरामके राज्यमें क्षत्री कुल छिपाय रहे हुते तैसैं याके राज्में विप्र अपने कुल छिपाय रहे सो स्वामी अरनाथके मुक्ति गए पीछे अर मल्लिनाथके होयवे पहिले सुभूम भए अति भोगासक्त निर्दय परिणामी अव्रती मरकर सातवें नरक गए। अर वीतशोका नगरी ताविषैं राजा चित्त सुप्रभस्वामीके शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वर्ग गए तहांतैं चयकर हस्तिनापुर विषैं राजा पद्मरथ, रानी, मयूरी, तिनके महापद्म नामा नौमे चक्रवर्ती भए। षट्खंडपृथिवीके भोक्ता तिनकी आठ पुत्री महारूपवंती सो रूपके अतिशयकरि गर्वित तिनके विवाहकी इच्छा नाहीं सो विद्याधर तिन हर ले गये सो चक्रवर्तीने छुड़ाय मंगाई। ये आठों ही कन्या आर्यिकाके व्रत धर समाधिमरणकर देवलोकमें प्राप्त भई। अर विद्याधर इनको ले गए हुते ते भी विरक्त होय मुनिव्रत धर आत्म-कल्याण करते भए। यह वृत्तांत देख महापद्म चक्रवर्ती पद्मनामा पुत्रको राज्य देय विष्णु नामा पुत्र-सहित वैरागी भए, महातपकर केवल उपजाय मोक्षकों प्राप्त भए। सो महापद्म चक्रवर्ती अरनाथ स्वामी-के मुक्ति गए पीछे अर मल्लिनाथके उपजनेसे पहिले सुभूमके पीछे भए। अर विजय नामा नगरविषैं राजा महेंद्रदत्त, ते अभिनंदन स्वामीके शिष्य होय महेंद्र स्वर्गको गए। तहांसे चयकर कांपिल-नगरमें राजा हरिकेतु ताकी रानी विप्रा तिनके हरिषेण नामा दसवें चक्रवर्ती भए। तिनने सर्व भरतक्षेत्रकी पृथ्वी चैत्यालयनिकर मंडित करी। अर मुनिसुव्रतनाथ स्वामीके तीर्थमें मुनि होय सिद्धपदकूं प्राप्त भए। राजपुर नामा नगरमें राजा असिकांत थे वह सुधर्ममित्रस्वामीके

शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वर्ग गये। तहांतैं चयकर राजा विजय रानी यशोवती तिनके जयसेन नामा ग्यारहवें चक्रवर्ती भए। ते राज्य तज दिगम्बरी दीक्षा धर रत्नत्रयका आराधनकर सिद्ध-पदको प्राप्त भए। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नमिनाथ स्वामीके अन्तरालमें भये। अर काशीपुरी में राजा सम्भूत, ते स्वतंत्रलिंग स्वामीके शिष्य मुनि होय पद्मयुगल नामा विमानविषैं देव भए। तहांतैं चयकर कांपिल नगरमें राजा ब्रह्मरथ रानी चूला तिनके ब्रह्मदत्त नामा बारहवें चक्रवर्ती भए। ते छै खण्ड पृथ्वीका राज्यकर मुनिव्रत विना रौद्रध्यानकर सातवें नरक गये। यह श्रीनेमिनाथ स्वामीको मुक्ति गये पीछे पार्श्वनाथ स्वामीके अंतरालमें भए। ये बारह चक्रवर्ती बड़े पुरुष हैं,छै खंड पृथिवीके नाथ जिनकी आज्ञा देव विद्याधर सब मानैं हैं। हे श्रेणिक! तोहि पुण्य पापका फल प्रत्यक्ष कह्या सो यह कथन सुनकर योग्य कार्य करना, अयोग्य कार्य न करना। जैसे बटसारी विना कोई मार्गमें चलै तो सुखसूं स्थानक नाहीं पहुचे, तैसैं सुकृत विना परलोकमें सुख न पावै। कैलाशके शिखर समान जे ऊंचे महल तिनमें जो निवास करै हैं सो सर्व पुण्यरूप वृक्षका फल है अर जहां शीत उष्ण पवन पानीकी बाधा ऐसी कुटियोंमें बसै हैं दलिद्र-रूप कीचमें फंसे हैं सो सर्व अधर्मरूप वृक्षका फल है। विंध्याचल पर्वतके शिखर समान ऊंचे जे गजराज तिनपर चढ़कर सेनासहित चलैं हैं चंवर ढुरै हैं सो सर्व पुण्यरूप वृक्षका फल है। जे महा तुरंगनिपर चमर ढुरते अर अनेक असवार पियादे जिनके चौगिर्द चलैं हैं सो सब पुण्यरूप राजाका चरित्र है। अर देवनिके विमान-समान मनोज्ञ जे रथ तिनपर चढ़कर जे मनुष्य गमन करै हैं सो पुण्यरूप पर्वतके मीठे नीझरने हैं। अर जो फटे पग अर फाटे मैले कपड़े अर पियादे फिरै हैं सो सब पापरूप वृक्षका फल है। अर जो अमृत-सारिखा अन्न स्वर्णके पात्रमें भोजन करै हैं सो सब धर्म रसायनका फल मुनियोंने कहा है अर जो देवोंका अधिपति इंद्र अर मनुष्योंका अधिपति चक्रवर्ती तिनका पद भव्य जीव पावै हैं सो सब जीवदयारूप बेलका फल है। कैसे हैं भव्य जीव कर्मरूप कुंजरको शार्दूल-समान हैं। अर राम कहिए बलभद्र, केशव कहिए नारायण तिनके पद जो भव्य जीव पावै हैं सो सब धर्मका फल है।

हे श्रेणिक! आगे वासुदेवोंका वर्णन करिये है सो सुनि—या अवसर्पिणीकालके भरतक्षेत्रके नव वासुदेव हैं प्रथम ही इनके पूर्वभवकी नगरियोंके नाम सुनो—हस्तिनागपुर १ अयोध्या २ श्रावस्ती ३ कौशांबी ४ पोदनापुर ५ शैलनगर ६ सिंहपुर ७ कौशांबी ८ हस्तिनागपुर ९। ये नव ही नगर कैसे हैं? सर्व ही द्रव्यके भरे हैं अर ईति-भीतिरहित हैं। अब वासुदेवोंके पूर्व भवके नाम सुनो—विश्वानंदी १ पर्वत २ धनमित्र ३ सागरदत्त ४ विकट ५ प्रियमित्र ६ मानचेष्टित ७ पुनर्वसु ८ गंगदेव जिसे निर्णामिक भी कहै हैं ९। ये नव ही वासुदेवोंके जीव पूर्व भवविषैं विरूप दौर्भाग्य राज्यभ्रष्ट होय हैं बहुरि मुनि होय महा तप करै हैं। बहुरि निदानके

योगतैं स्वर्गविषैं देव होय हैं तहांतैं चयकर बलभद्रके लघु भ्राता वासुदेव होय हैं तातैं तपतैं निदान करना ज्ञानियोंको वर्जित है। निदान नाम भोगाभिलाषका है सो महा भयानक दुःख देनेकों प्रवीण हैं। आगे वासुदेवोंके पूर्वभवके नाम सुनो, जिनपै इन्होंने मुनिव्रत आदरे—संभूत १ सुभद्र २ वसुदर्शन ३ श्रेयांस ४ भूतिसंग ५ वसुभूति ६ घोषसेन ७ परांभोधि ८ द्रुमसेन ९। अब जिस जिस स्वर्गतैं आय वासुदेव भए तिनके नाम सुनो—महाशुक्र १ २ लांतव ३ सहस्रार ४ ब्रह्म ५ महेंद्र ६ सौधर्म ७ सनत्कुमार ८ महाशुक्र ९। आगे वासुदेवोंकी जन्मपुरियों-के नाम सुनो, पोदनापुर १ द्वापुर २ हस्तिनागपुर ३ बहुरि हस्तिनागपुर ४ चक्रपुर ५ कुशाग्रपुर ६ मिथिलापुर ७अयोध्या ८मथुरा ९ये वासुदेवोंके उत्पत्तिके नगर हैं। कैसे हैं नगर ? समस्त धन-धान्य कर पूर्ण महा उत्सवके भरे हैं। आगैं वासुदेवोंके पिताके नाम सुनो–प्रजापति १ब्रह्मभूत २ रौद्रनंद ३ सौम ४ प्रख्यात ५ शिवाकर ७ दशरथ ८ वसुदेव ९ बहुरि इन नव वासुदेवोंकी माताओंके नाम सुनो—मृगावती १ माधवी २ पृथिवी ३ सीता ४ अंबिका ५ लक्ष्मी ६ केशिनी ७ सुमित्रा ८ देवकी ९ । ये नव ही वासुदेवोंकी नव माता कैसी हैं अतिरूपगुणनिकरि मण्डित महा सौभाग्यवती जिनमती हैं। आगें नव वासुदेवोंके नाम सुनो–त्रिपृष्ट १ द्विपृष्ट २ स्वयंभू ३ पुरुषोत्तम ४ पुरुषसिंह ५ पुंडरीक ६ दत्त ७ लक्ष्मण ८ कृष्ण ९। आगे नव ही वासुदेवोंकी पटराणियोंके नाम सुनो—सुप्रभा १ रूपिणी २ प्रभवा ३ मनोहरा ४ सुनेत्रा ५ विमलसुंदरी ६ आनंदवती ७ प्रभावती ८ रुक्मिणी ९ ये वासुदेवोंकी मुख्य पटराणी कैसी हैं ? महागुण कलानिपुण धर्मवती व्रतवती हैं।

अथानंतर अब नव बलभद्रोंका वर्णन सुनो सो पहिले नव ही बलभद्रोंकी पूर्व जन्मकी पुरियों-के नाम कहै–पुंडरीकिनी १पृथिवी २ आनंदपुरी ३ नंदपुरी ४ वीतशोका ५ विजयपुर ६ सुसीमा ७ क्षेमा ८ हस्तिनागपुर ९। अब बलभद्रोंके नाम सुनो–बाल १ मारुतदेव २ नंदिमित्र ६ महा-बल ४पुरुषर्षभ ५सुदर्शन ६वसुधर ७श्रीरामचंद्र ८शंख ९। अब इनके पूर्वभवके गुरुओंके नाम सुनो जिनपै इन्होंने जिनदीक्षा आदरी। अमृतार १ महासुव्रत २ सुव्रत ३ वृषभ ४ प्रजापाल ५ दमवर ३ सुधर्म ७ आर्णव ८ विद्रुम ९। बहुरि नव बलदेव जिन जिन देवलोकनितैं आए तिनके नाम सुनहु–तीन बलभद्र तो अनुत्तरविमानतैं आए, अर तीन सहस्रार स्वर्गतैं आए, दो ब्रह्मस्वर्गतैं आए अर एक महा शुक्रतैं आया। अब इन नव बलभद्रोंकी मातानिके नाम सुनो क्योंकि पिता तो बलभद्रोंके और नारायणोंके एक ही होय हैं, भद्रांभोजा १ सुभद्रा २ सुवेषा ३सुदर्शना ४ सुप्रभा ५ विजया ६ वैजयंती ७ अपराजिता जाहि कौशल्या भी कहै हैं ८ रोहिणी ९। नव बलभद्र नव नारायण तिनमें पांच बलभद्र पांच नारायण तो श्रेयांसनाथ स्वामीके समयसे आदि लेय धर्मनाथ स्वामीके समय-पर्यंत भए और छठे और सातवें अरनाथ स्वामीकों मुक्ति गए पीछे

मल्लिनाथ स्वामीके पहिले भए और अष्टम बलभद्र वासुदेव मुनिसुव्रतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नेमिनाथ स्वामीके समय पहिले भए। अर नवमें श्रीनेमिनाथके काकाके बेटे भाई महाजिनभक्त अद्भुत क्रियाके धारणहारे भए। अब इनके नाम सुनहु—१ अचल २ विजय ३ भद्र ४ सुप्रभ ५ सुदर्शन ६ नंदिमित्र (आनंद) ७ नंदिषेण (नंदन) ८ रामचंद्र ९ पद्म। आगे जिन महामुनियोंपै बलभद्रोंने दीक्षा धरी तिनके नाम कहिए हैं—सुवर्णकुंभ १ सत्यकीर्ति २ सुधर्म ३ मृगांक ४ श्रुतिकीर्ति ५ सुमित्र ६ भवनश्रुत ७ सुव्रत ८ सिद्धार्थ ९। यह बलभद्रोंके गुरुवोंके नाम कहे महातपके भार कर कर्मनिर्जराके करणहारे तीन लोकमें प्रकट है कीर्ति जिनकी नव बलभद्रोंके आठ तो कर्मरूप वनको भस्म कर मोक्ष प्राप्त भए। कैसा है संसार वन ? आकुलताको प्राप्त भए हैं नाना प्रकारकी व्याधि कर पीडित प्राणी जहां। बहुरि वह वन कालरूप जो व्याघ्र ताकरि अति भयानक है, अर कैसा है यह वन ? अनंत जन्मरूप जे कंटकवृक्ष तिनका है समूह जहां। विजय बलभद्र आदि श्रीरामचंद्र पर्यंत आठ तो सिद्ध भए और पद्मनामा जो नवमां बलभद्र वह ब्रह्मस्वर्गमें महाऋद्धिका धारी देव भया।

अब नारायणोंके शत्रु जे प्रतिनारायण तिनके नाम सुनो-- अश्वग्रीव १ तारक २ मेरक ३ मधुकैटभ ४ निशुंभ ५ बलि ६ प्रह्लाद ७ रावण ८ जरासिंध ९ अब इन प्रतिनारायणोंकी राजधानियोंका नाम सुनो--अलका १ विजयपुर २ नंदनपुर ३ पृथ्वीपुर ४ हरिपुर ५ सूर्यपुर ६ सिंहपुर ७ लंका ८ राजगृही ९ ये नौ ही नगर कैसे हैं महा रत्न जडित अति दैदीप्यमान स्वर्गलोक समान हैं।

हे श्रेणिक ! प्रथम ही श्रीजिनेंद्रदेवका चरित्र तुझे कह्या। बहुरि भरत आदि चक्रवर्तियोंका कथन कह्या और नारायण,बलभद्र तिनका कथन कह्या इनके पूर्व जन्म सकल वृत्तांत कहे,अर प्रति-नारायण तिनके नाम कहे। ये त्रेसठ शलाकाके पुरुष हैं तिनमें कैयक पुरुष तो जिनभाषित तपकरि ताही भवमें मोक्षको प्राप्त होय है, कैयक स्वर्ग प्राप्त होय हैं पीछे मोक्ष पावै हैं। अर कैयक जे वैराग्य नाहीं धरे है चक्री तथा हरि प्रतिहरि ते कैयक भवधर फिर तपकर मोक्षको प्राप्त होय हैं, ये संसारके प्राणी नाना प्रकारके जे पाप तिनकरि मलीन मोहरूप सागरके भ्रमणमें मग्न महा दुःखरूप चार गति तिनमें भ्रमणकर तप्तायमान सदा व्याकुल होय हैं, ऐसा जानकर जे निकट संसारी भव्य जीव हैं ते संसारका भ्रमण नाही चाहैं हैं, मोह तिमिरका अंतकरि सूर्यसमान केवलज्ञानका प्रकाश करैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं चौदह कुलकर चौवीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नव नारायण, नव प्रतिनारायण, नव बलभद्र, ग्यारह रुद्र, इनके माता पिता पूर्वभव नगरीनिके नाम पूर्व गुरु कथन नाम वर्णन करनेवाला बीसवां पर्व पूर्ण भया ॥२०॥

इक्कीसवां पर्व

[श्रीरामचन्द्रके वंशका वर्णन]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं--हे मगधाधिपति ! आगैं अष्टम बलभद्र जो श्रीरामचंद्र, तिनका संबंध कहिए है सो सुनहु--अर राजनिके वंश अर महा पुरुषनिकी उत्पत्ति, तिनका कथन कहिए हैं सो उरमें धारहु। भगवान दशम तीर्थंकर जे शीतलनाथस्वामी तिनकों मोक्ष गए पीछैं कौशांबी नगरीविषैं एक राजा सुमुख भया। अर ताही नगरमें एक श्रेष्ठी वीरक, ताकी स्त्री वनमाला, सो अज्ञानके उदयतैं राजा सुमुखने घरमें राखी, फिर विवेककों प्राप्त होय मुनियोंको दान दिया सो मरकर विद्याधर भया, और वह वनमाला विद्याधरी भई। सो ता विद्याधरने परणी। एक दिवस ये दोनों क्रीड़ा करवेकूं हरिक्षेत्र गए अर वह श्रेष्ठी वीरक वनमालाका पति विरहरूप अग्निकर दग्धायमान सो तपकर देवलोकको प्राप्त भया। एक दिवस अवधिकर वह देव अपने बैरी सुमुखके जीवको हरिक्षेत्रविषैं क्रीड़ा करता जान क्रोधकर तहांतैं भार्या सहित उठाय लाया सो वा क्षेत्रविषैं हरि ऐसा नामकरि प्रसिद्ध भया जाही कारणसे याका कुल हरिवंश कहलाया। ता हरिके महागिरि नामा पुत्र भया, ताके हिमगिरि, ताके वसुगिरि, ताके इंद्रगिरि, ताके रत्नमाल, ताके संभूत, ताके भूतदेव इत्यादि सैकड़ों राजा हरिवंशविषैं भए। ताही हरिवंशविषैं कुशाग्र नामा नगर विषैं एक राजा सुमित्र जगत्‌विषैं प्रसिद्ध भया। कैसा है राजा सुमित्र ? भोगोंकर इंद्रसमान, कांतिकरि जीत्या है चंद्रमा जाने अर दीप्तिकर जीत्या है सूर्य अर प्रतापकर नवाए हैं शत्रु जाने। ताके राणी पद्मावती, कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, शुभ लक्षणनिकरि संपूर्ण, अर पूर्ण भए हैं सकल मनोरथ जाके, सो रात्रिविषैं मनोहर महलमें सुख रूप सेजपर सूती हुती सो पिछले पहर सोलह स्वप्न देखे—गजराज १, वृषभ २, सिंह ३, लक्ष्मी स्नान करती ४, दोय पुष्पमाला ५, चंद्रमा ६, सूर्य ७, दोय मच्छ जलमें केलि करते ८, जलका भरा कलश कमल समूहसे मुंह ढका ९, सरोवर कमल पूर्ण १०, समुद्र ११, सिंहासन रत्न-जटित १२, स्वर्गलोकके विमान आकाशतैं आवते देखे १३, अर नागकुमारके विमान पातलतैं निकसते देखे १४, रत्ननिकी राशि १५, निर्धूम अग्नि १६। तब राणी पद्मावती सुबुद्धिवंती जागकर आश्चर्यरूप भया है चित्त जाका, प्रभातकी क्रियाकर विनयरूप भई भरतारके निकट आई पतिके सिंहासनपै आय विराजी, फूल रह्या है मुखकमल जाका, महान्यायकी वेत्ता, पतिव्रता हाथ जोड़ नमस्कार कर पतिसों स्वप्नोंका फल पूछती भई। तब राजा सुमित्र स्वप्नोंका फल यथार्थ कहते भए। तादि ही रत्नोंकी वर्षा आकाशतैं बरसती भई। साढ़े तीन कोटि रत्न एक संध्यामें बरसे सो त्रिकाल संध्या वर्षा होती भई। पंद्रह महीनों लग

राजाके घरमें रत्नधारा वर्षी। अर जे षट्कुमारिका ते समस्त परिवार सहित माताकी सेवा करती भई। अर जन्म होते ही भगवानकूं क्षीरसागरके जलकरि इंद्र लोकपालनिसहित सुमेरु पर्वतपर स्नान करावते भए। अर इंद्रने भक्तिथकी पूजा अर स्तुतिकर नमस्कार करी फिर सुमेरुतैं ल्याय माताकी गोदविषैं पधराए। जबसे भगवान माताके गर्भमें आए तबहीतैं लोक अणुव्रतकरि महाव्रतकरि विशेष प्रवर्तें अर माता व्रतरूप होती भई तातैं पृथिवीविषैं मुनिसुव्रत कहाए। अंजनगिरि समान है वर्ण जिनका, परन्तु शरीरके तेजसे सूर्यकों जीतते भए, अर कांतिकर चंद्रमाकूं जीतते भए। सब भोग सामग्री इंद्रलोकतैं कुबेर लावैं। अर जैसा आपकों मनुष्यभवमें सुख है तैसा अहमिंद्रनिकों नाहीं। अर हाहा हूहू तुंवर नारद विश्वावसु इत्यादि गंधर्वनिकी जाति हैं सो सदा निकट गान करा ही करैं, अर किन्नरी जातिकी देवांगना तथा स्वर्गकी अप्सरा नृत्य किया ही करैं, अर वीणा बांसुरी मृदंग आदि वादित्र नाना विधके देव बजाया ही करैं। अर इंद्र सदा सेवा करैं। अर आप महासुंदर यौवन अवस्था विषैं विवाह भी करते भए सो जिनके राणी अद्भुत आवती भई, अनेक गुण कला चातुर्यताकर पूर्ण हाव भाव विलास विभ्रमकी धरणहारी। सो कैयक वर्ष आप राज किया, मनवांछित भोग भोगे। एक दिवस शरदके मेघ विलय होते देख आप प्रतिबोधकों प्राप्त भए। तब लौकांतिक देवनिने आय स्तुति करी तब सुव्रतनाम पुत्रकूं राज्य देय वैरागी भए। कैसे हैं भगवान? नाहीं है काहू वस्तुकी वांछा जिनके आप वीतराग भावधर दिव्य स्त्रीरूप जो कमलनिका वन तहांतैं निकसे। कैसा है वह सुंदर स्त्रीरूप कमलनिका वन? सुगंधकरि व्याप्त किया है दशों दिशाका समूह जाने, बहुरि महादिव्य जे सुगंधादिक तेई हैं मकरंद जामें और सुगंधताकर भ्रमैं हैं भ्रमरोंके समूह जाविषैं, अर हरितमणिकी जे प्रभा तिनके जो पुंज सोई हैं पत्रनिका समूह जाविषैं, अर दांतोंकी जो पंक्ति तिनकी जो उज्वल प्रभा सोई है कमल तंतु जाविषैं, अर नाना प्रकार आभूषणनिके जे नाद तेई भए पक्षी उनके शब्द तिनकरि पूरित है अर स्तनरूप जे चकवे तिनकर शोभित है अर उज्ज्वल कीर्तिरूप जे राजहंस तिनकरि मंडित है सो ऐसे अद्भुत विलास तजकर वैराग्यके अर्थ देवोपनीत पालकीविषैं चढकर विपुलनाम उद्यान विषैं गए। कैसे हैं भगवान मुनिसुव्रत? सर्व राजनिके मुकुटमणि हैं सो वनमैं पालकीतैं उतरकर अनेक राजानिसहित जिनेश्वरी दीक्षा धरते भए। बेले पारणा करना यह प्रतिज्ञा आदरी। राजगृहनगरमें वृषभदत्त महाभक्तिकर श्रेष्ठ अन्न कर पारणा करावता भया। आप भगवान महाशक्तिकरि पूर्ण कुछ क्षुधा की बाधा करि पीड़ित नाहीं परंतु आचारांगसूत्रकी आज्ञा प्रमाण अंतरायरहित भोजन करते भए। वृषभदत्त भगवानकूं आहार देय कृतार्थ भया। भगवान कैयक महीना तपकर चम्पाके वृक्षतले शुक्लध्यानके प्रतापतैं घातिया कर्मनिका नाशकर केवलज्ञानकूं प्राप्त भए। तब इंद्रसहित देव आयकर प्रणाम अर स्तुतिकर धर्मश्रवण करते भए। आपने यति

श्रावकका धर्म विधिपूर्वक वर्णन किया। धर्म श्रवणकर कई मनुष्य मुनि भए, कई मनुष्य श्रावक भए, कई तिर्यंच श्रावकके व्रत धारते भए अर देवनिकों व्रत नाहीं सो कई देव सम्यक्त्वको प्राप्त होते भए। श्रीमुनिसुव्रतनाथ धर्मतीर्थका प्रवर्तनकर सुर असुर मनुष्यनिकरि स्तुति करने योग्य अनेक साधुवोंसहित पृथिवीपर विहार करते भए। सम्मेदशिखरपर्वतसे लोकशिखरकूं प्राप्त भए यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका चरित्र जे प्राणी भावधर सुनें तिनके समस्त पाप नाशकूं प्राप्त होंय अर ज्ञानसहित तपसे परम स्थानकूं पावें जहांतें फेर आगमन न होय।

अथानंतर मुनिसुव्रतनाथके पुत्र राजा सुव्रत बहुत काल राज्य कर दक्ष पुत्रको राज्य देय जिनदीक्षा धर मोक्षकों प्राप्त भए। अर दक्षके एलावर्धन पुत्र भया, ताके श्री वर्धन, ताके श्रीवृक्ष, ताके संजयंत, ताके कुणिम, ताके महारथ, ताके पुलोम इत्यादि अनेक राजा हरिवंशविषैं भए तिनमें कैयक मुक्तिको गए, कईएक स्वर्गलोक गए। या भांति अनेक राजा भए। बहुरि याही कुलविषैं एक राजा वासवकेतु भया मिथिला नगरीका पति ताके विपुला नामा पटरानी, सुंदर हैं नेत्र जाके सो वह रानी परम लक्ष्मीका स्वरूप ताके जनक नामा पुत्र होते भए। समस्त नयोंमें प्रवीण वे राज्य पाय प्रजाकों ऐसे पालते भए जैसैं पिता पुत्रको पालै। गौतमस्वामी कहै हैं–हे श्रेणिक! यह जनककी उत्पत्ति कही, जनक हरिवंशी हैं।

(दशरथ की उत्पत्ति आदि का वर्णन)

अब ऋषभदेवके कुलमें राजा दशरथ भए तिनके वंशका वर्णन सुन—इक्ष्वाकुवंशमें श्री-ऋषभदेव निर्वाण पधारे बहुरि तिनके पुत्र भरत भी निर्वाण पधारे। सो ऋषभदेवके समयसे लेकर मुनिसुव्रतनाथके समय पर्यंत बहुत काल बीत्या, तामैं असंख्य राजा भए। कैयक तो महादुर्द्धर तपकर निर्वाणकों प्राप्त भए कई एक अहमिंद्र भए, कैयक इंद्रादिक बड़ी ऋद्धिके धारी देव भए, कैयक पापके उदयकर नरकमें गए, सो थोरे। हे श्रेणिक! या संसारमें अज्ञानी जीव चक्रकी नाई भ्रमण करै हैं, कबहूं स्वर्गादिक भोग पावैं हैं तिनविषैं मग्न होय क्रीड़ा करैं हैं, कैयक पापी जीव नरक निगोदमें क्लेश भोगैं हैं। ये प्राणी पुण्य पापके उदयतैं अनादिकाल भ्रमण करै हैं। कबहू कष्ट, कबहू उत्सव। याद विचार कर देखिए तो दुःख मेरु-समान, सुख राई-समान है। कयक द्रव्यरहित क्लेश भोगवै हैं, कैयक बाल अवस्थामें मरण करैं हैं, कैयक शोक करै हैं, कैयक रुदन करै हैं, कैयक विवाद करैं हैं, कैयक पढ़ैं हैं, कैयक पराई रक्षा करै हैं, कैयक पापी बाधा करै हैं, कैयक गरजैं हैं, कैयक गान करै हैं, कैयक पराई सेवा करै हैं, कैयक भार वहै हैं, कैयक शयन करै हैं, कैयक पराई निंदा करैं हैं, कैयक केलि करै हैं, कैयक युद्धकरि शत्रुवोंको जीतैं हैं, कैयक शत्रुको पकड़ छोड़ देय हैं, कैयक कायर युद्धको देख भागै हैं, कैयक शूरवीर पृथ्वीका राज्य करै हैं, विलास करै हैं, बहुरि राज्य तज वैराग्य धारै हैं

कैयक पापी हिंसा करै हैं, परद्रव्यकी वांछा करै हैं, परद्रव्यकूं हरै हैं, दौडै हैं, कूट-कपट करै हैं, ते नरकमें पडै हैं। अर जे कैयक लज्जा धारै हैं, शील पालै हैं, करुणाभाव धारै हैं क्षमा-भाव धारै है,परद्रव्य तजै हैं, वीतरागताको भजै हैं, संतोष धारै हैं, प्राणियोंको साता उपजावै हैं ते स्वर्ग पाय परंपराय मोक्ष पावैं हं,जे दान करै हैं,तप करै हैं,अशुभ क्रियाका त्याग करै हैं, जिनेंद्रकी अर्चा करै हैं, जैनशास्त्रकी चर्चा करै हैं, सब जीवनिसूं मित्रता करै हैं, विवेकियोंका विनय करै हैं ते उत्तम पद पावैं हैं, कैयक क्रोध करै हैं, काम सेवै हैं, राग द्वेष मोहके वशीभूत हैं, पर जीवोंको ठगै हैं, ते भव सागरमें डूबै हैं, नाना विध नाचै हैं, जगतमें राचै हैं, खेद-खिन्न हैं, दीर्घ शोक करै हैं, झगड़ा करै हैं, संताप करै हैं, असि मसि कृषि वाणिज्यादि व्यापार करै हैं, ज्योतिष वैद्यक यंत्र मंत्रादिक करै हैं, शृंगारादि शास्त्र रचे हैं वे वृथा पच पच कर मरें हैं इत्यादि शुभाशुभ कर्मकरि आत्मधर्मको भूल रहे हैं, संसारी जीव चतुर्गतिविषें भ्रमण करै हैं, या अवसर्पिणी कालविषै आयु काय घटती जाय है, श्रीमल्लिनाथके मुक्ति गए पीछे मुनिसुव्रतनाथके अंतरालविषें या क्षेत्रमें अयोध्या नगरीविषें एक विजय नामा राजा भया, महा शूरवीर प्रतापकरि संयुक्त प्रजाके पालनविषें प्रवीण, जीते हैं समस्त शत्रु जानैं, ताके हेम-चूलनी नामा पटरानी, ताके महागुणवान् सुरेंद्रमन्यु नामा पुत्र भया। ताके कीर्तिसमा नामा रानी, ताके दोय पुत्र भए एक वज्रबाहु, दूजा पुरंदर चंद्र-सूर्य-समान है कांति जाकी महागुणवान अर्थसंयुक्त है नाम जिनके वे दोऊ भाई पृथिवीविषैं सुखसूं रमते भये।

अथानंतर हस्तिनागपुरमे एक राजा इंद्रवाहन ताके राणी चूड़ामणी ताके पुत्री मनोदया अतिसुंदरी सो वज्रबाहुकुमारने परणी। सो कन्याका भाई उदयसुंदर बहिनके लेनेकूं आया सो वज्र-बाहुकुमारका स्त्रीसूं अतिप्रेम था, स्त्री अति सुंदरी सो कुमार स्त्रीके लार सासरे चाल्ये। मार्ग-विषैं वसंतका समय था और वसंतगिरि पर्वतके समीप जाय निकसे ज्यों ज्यों वह पहाड़ निकट आवै त्यों त्यों उसकी परम शोभा देख कुमार अतिहर्षकूं प्राप्त भए। पुष्पनिकी जो मकरंदता उससे मिली सुगंध पवन सो कुमारके शरीरसे स्पर्शी ताकरि ऐसा सुख भया जैसा बहुत दिनोंके बिछुरे मित्रसों मिले सुख होय। कोकिलनिके मिष्ट शब्दनिकरि अतिहर्षित भया जैसैं जीतका शब्द सुन हर्ष होय। पवनसे हालै हैं वृक्षोंके अग्रभाग सो मानो पर्वत वज्रबाहुका सन्मान ही करै हैं और भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानों वीणाका नाद ही होय है वज्रबाहुका मन प्रसन्न भया, वज्रबाहु पहाड़की शोभा देखे है कि यह आम्रवृक्ष, यह कर्णिकार जातिका वृक्ष यह, रौद्र जातिका वृक्ष फलनिकरि मंडित, यह प्रयालवृक्ष, यह पलाशका वृक्ष, अग्नि समान देदीप्यमान हैं पुष्प जाकै, वृक्षनिकी शोभा देखते देखते राजकुमारकी दृष्टि मुनिराज पर पड़ी देखकर विचारता भया यह थंभ है, अथवा पर्वतका शिखर है, अथवा मुनिराज हैं? कायोत्सर्ग धर

खड़े जो मुनि तिनविषै वज्रबाहुका ऐसा विचार भया, कैसे हैं मुनि जिनको ठूंठ जानकर जिनके शरीरसे मृग खाज खुजावैं हैं, जब नृप निकट गया तब निश्चय भया कि जो ये महा योगीश्वर विदेह अवस्थाको धरे कायोत्सर्ग ध्यान धरे स्थिर रूप खड़े हैं, सूर्यकी किरणनिकरि स्पर्श्या है मुखकमल जिनका और महासर्पके फण समान देदीप्यमान भुजावोंको लंबाय ऊभे हैं सुमेरुका जो तट उस समान सुंदर है वक्षस्थल जिनका और दिग्गजोंके बांधनेके थंभ तिन समान अचल है जंघा जिनकी तपसे क्षीण शरीर हैं परंतु कांतिसे पुष्ट दीखैं हैं, नासिकाके अग्रभागविषैं लगाए हैं निश्चल सौम्य नेत्र जिन्होंने आत्माकूं एकाग्र ध्यावैं हैं ऐसे मुनिकूं देखकर राजकुमार चिंतवता भया, अहो धन्य हैं ये महामुनि शांतिभावके धारक जो समस्त परिग्रहकूं तजकर मोक्षाभिलाषी होय तप करैं हैं इनकूं निर्वाण निकट है, निज कल्याणमें लगी है बुद्धि जिनकी परजीवनिकूं पीड़ा देनेसे निवृत्त भया है आत्मा जिनका, अर मुनिपदकी क्रिया करि मंडित हैं। जिनके शत्रु मित्र समान हैं। तृण अर कंचन समान, पाषाण अर रत्न समान, मान और मत्सरसे रहित है मन जिनका। वश करी हैं पांचों इंद्रियें जिन्होने निश्चल पर्वत समान वीतराग भाव हैं जिनको देखें जीवनिका कल्याण होय या मनुष्यदेहका फल इनहीने पाया, यह विषयकषायोंसे न ठगाए, कैसे हैं विषय कषाय? महा क्रूर हैं अर मलिनताके कारण है, मैं पापी कर्म-पाशकरि निरंतर बंधा जैये चंदनका वृक्ष सर्पोंसे वेष्टित होय है तैसैं मैं पापी असावधानचित्त अचेत-समान होय रहा, धिक्कार है मुझे मैं भोगादिरूप जो महा पर्वत उसके शिखर-पर निद्रा करूं हू सो नीचेही पड़ूंगा जो इस योगींद्रकी सी अवस्था धरूं तो मेरा जन्म कृतार्थ होय ऐसा चितवन करते वज्रबाहुकी दृष्टि मुनिनाथमैं अत्यंत निश्चल भई मानों थंभसे बांधी गई। तब उसका उदयसुंदर साला इसको निश्चल दृष्टि देख मुलकता हुवा याहि हास्यके वचन कहता भया मुनिकी ओर अत्यंत निश्चल होय निरखो हो सो क्या दिगम्बरी दीक्षा धरोगे? तब वज्रबाहु बोले जो हमारा भाव था सो तुमने प्रकट किया। अब तुम इसही भावकी वार्ता कहो। तब वह इसको रागी जान हास्यरूप बोला कि तुम दीक्षा धरोगे तो मैं भी धरूंगा परंतु इस दीक्षासे तुम अत्यंत उदास होवोगे, तब वज्रबाहु बोले यह तो ऐसे ही भई यह कहकर विवाहके आभूषण उतार डारे और हाथीसे उतरे तब मृगनयनी स्त्री रोने लगी। स्थूल मोती समान अश्रुपात डारती भई तब उदयसुंदर आंसू डार कहता भया। हे देव! यह हास्यमें कहा विपरीत करो हो? तब वज्रबाहु अति मधुर बचनसूं ताको शांतता उपजावते कहते भए–हे कल्याणरूप! तुम समान उपकारी कौन। मैं कूपमें पड़ूं था सो तुमने राखा, तुम समान मेरा तीनलोकमें मित्र नाहीं। हे उदयसुंदर! जो जन्म्या है सो अवश्य मरेगा और जो मूआ है सो अवश्य जन्म्येगा, ये जन्म और मरण अरहटकी घडी समान हैं तिनमें संसारी जीव निरंतर भ्रमें हैं। यह जीतव्य बिजलीके चमत्कार

समान है तथा जलकी तरंग समान तथा दुष्ट सर्पकी जिह्वा समान चंचल है, यह जगतके जीव दुःखसागरविषै डूब रहे हैं। यह संसारके भोग स्वप्नके भोग समान असार हैं जलके बुदबुदा समान काया है सांझके रंग समान यह जगतका स्नेह है और यह यौवन फूलसमान कुमलाय जाय है यह तुम्हारा हंसना भी हमको अमृतसमान कल्याणरूप भया। क्या हास्यसे, जो औषधिको पीए तो रोगको न हरै अवश्य हरै ही। अर तुम हमको मोक्षमार्गके उद्यमके सहाई भए तुम समान हमारे और हितु नाहीं मैं संसारके आचारविषै आसक्त होय रहा था सो वीतराग-भावको प्राप्त भया। अब मैं जिनदीक्षा धरूं हूं तुम्हारी जो इच्छा होय सो तुम करो ऐसा कहकर सर्व परिवारसूं क्षमा कराय वह गुणसागर नामा मुनि तप ही है धन जिनके तिनके निकट जाय चरणारविंदको नमस्कारकरि विनयवान होय कहता भया हे स्वामी! तुम्हारे प्रसादसे मेरा मन पवित्र भया अब मैं संसाररूप कीचसे निकस्या चाहूं हूं तब इसके वचन सुन गुरुने आज्ञा दई तुमको भवसागरसे पार करणहारी यह भगवती दीक्षा है, कैसे हैं गुरु, सप्तम गुणस्थानसे छठे गुणस्थान आए हैं यह गुरुकी आज्ञा उरमें धार वस्त्राभूषणका त्याग कर पल्लव समान जे अपने कर तिनसे केशोंका लौंचकर पल्यंकासन धरता भया। इस देहको विनश्वर जान देहसे स्नेह तजकर राज-पुत्रीको और राग अवस्थाको तज मोक्षकी देनहारी जो जिन दीक्षा सो अंगीकार करता भया। और उदयसुंदरको आदि दे छव्बीस राजकुमार जिनदीक्षा धरते भये, कैसे हैं वे कुमार कामदेव समान है रूप जिनका, तजे हैं राग द्वेष मद मत्सर जिन्होंने, उपज्या है वैराग्यका अनुराग जिनके, परम उत्साहके भरे नग्न मुद्रा धरते भए। अर यह वृत्तांत देख वज्रबाहुकी स्त्री मनोदेवी पतिके अर भाईके स्नेहसो मोहित हुई मोह तज आर्यिकाके व्रत धारती भई सर्ववस्त्राभूषण तज कर एक सुफेद साड़ी धरती भई महा तप व्रत आदरे। यह वज्रबाहुकी कथा इसका दादा जो राजा विजय उसने सुनी सभाके मध्य बैठ्या था सो शोकसे पीड़ित होय ऐसे कहता भया—यह आश्चर्य देखो कि मेरा पोता नवयौवनविषैं विषयको विष-समान जान विरक्त होय मुनि भया और मो सारिखा मूर्ख विषयोंका लोलुपी वृद्ध अवस्थामें भी भोगोंको न तजता भया सो कुमारने कैसे तजे? अथवा वह महाभाग्य जो भोगोंको तृणवत् तजकर मोक्षके निमित्त शांतभावोंमें तिष्ठया, मैं मंद भाग्य जराकर पीड़ित हूँ सो इन पापी विषयोंने मोहि चिर काल ठग्या, कैसे हैं ये विषय? देखनेमें तो अति सुंदर हैं परंतु फल इनके अति कटुक हैं। मेरे इंद्रनील मणि समान श्याम जो केशोंके समूह थे सो अब कफकी राशि समान श्वेत होय गए। जे यौवन अवस्थामें मेरे नेत्र श्यामता श्वेतता अरुणता लिये अति मनोहर थे सो अब ऊंडे पड़ गये। और मेरा जो शरीर अति देदीप्यमान शोभायमान महाबलवान स्वरूपवान था सो वृद्ध अवस्थाविषै वर्षासे हता जो चित्राम ता समान होय गया, जे धर्म अर्थ काम तरुण अवस्थाविषैं भली भांति सधैं हैं सो

जराकर मंडित जे प्राणी तिनसे सधना विषम हैं धिक्कार है। मो पापी दुराचारी प्रमादीकों जो मैं चेतन थका अचेतन दशा आदरी। यह झूठा घर झूठी माया झूठी काया झूठे बांधव झूठा परिवार तिनके स्नेहकरि भवसागरके भ्रमणमें भ्रमा। ऐसा कहकर सर्व परिवारसों क्षमा कराय छोटा पोता जो पुरंदर उसे राज्य देय अपने पुत्र सुरेंद्रमन्यु सहित राजा विजयने वृद्ध अवस्थामें निर्वाणघोष स्वामीके समीप जिनदीक्षा आदरी। कैसा है राजा? महा उदार है मन जाका।

अथानंतर पुरंदर राज्य करै है उसके पृथिवीमती रानी ताके कीर्तिधर नामा पुत्र भया, सो गुणोंका सागर पृथ्वीविषें विख्यात वह विनयवान अनुक्रमकर यौवनकों प्राप्त भया। सर्व कुटुंबकों आनंद बढ़ावता संता अपनी सुंदर चेष्टाएं सबकों प्रिय भया। तब राजा पुरंदरने अपने पुत्रकों राजा कौशलकी पुत्री परणाई। अर इसकों राज्य देय राजा पुरंदरने गुण ही हैं आभरण जाकैं क्षेमंकर मुनिके समीप मुनिव्रत धरे कर्मनिर्जराका कारण महा तप आरंभा।

अथानंतर राजा कीर्तिधर कुलक्रमसे चला आया जो राज्य उसे पाय जीते हैं सब शत्रु जिसने, देव-समान उत्तम भोग भोगता संता रमता भया। एक दिवस राजा कीर्तिधर प्रजाका बन्धु, जे प्रजाके बाधक शत्रु तिनकों भयंकर सिंहासनविषैं जैसैं इंद्र विराजे तैसैं विराजै थे सो सूर्यग्रहण देख चित्तमें चिन्तवते भए कि देखो यह सूर्य जो ज्योतिका मंडल है सो राहुके विमानके योगसे श्याम होय गया, यह सूर्य प्रतापका स्वामी अंधकारकों मेट प्रकाश करै है और जिसके प्रतापसे चंद्रमाका बिंब कांतिरहित भासै हैं और कमलिनीके वनकों प्रफुल्लित करै है सो राहुके विमानसे मंदकांति भासै है उदय होता ही सूर्य ज्योति-रहित होय गया, तातैं संसारकी दशा अनित्य है। यह जगतके जीव विषयाभिलाषी रंक-समान मोह-पाशसे बंधे अवश्य कालके मुखमें पड़ेंगे, ऐसा विचारकर यह महाभाग्य संसारकी अवस्थाकों क्षणभंगुर जान मंत्री पुरोहित सेनापति सामंतनिकों कहता भया कि यह समुद्र-पर्यंत पृथिवीके राज्यकी तुम भलीभांति रक्षा करियो, मैं मुनिके व्रत धरूं हूं। तब सबही विनती करते भए—हे प्रभो! तुम विना यह पृथिवी हमसे दबै नाहीं, तुम शत्रुवोंके जीननहारे हो, लोकोंके रक्षक हो, तुम्हारी वय भी नव यौवन है इसलिए यह इंद्रतुल्य राज्य कैयक दिन करो, इस राज्यके पति अद्वितीय तुम ही हो, यह पृथिवी तुमहीसे शोभायमान है। तब राजा बोले यह संसार अटवी अति दीर्घ है इसे देख मोहि अति भय उपजै है कैसी है, यह भवरूप अटवी अनेक जे दुख वेई हैं फल जिनके ऐसे कर्मरूप वृक्षनिसे भरी है अर जन्म जरा मरण रोग शोक रति अरति इष्टवियोग अनिष्टसंयोगरूप अग्निसे प्रज्वलित है, तब मंत्री जनोंने राजाके परिणाम विरक्त जान बुझे अंगारोंके समूह लाय धरे और तिनके मध्य एक वैडूर्यमणि ज्योतिका पुंज अति अमोलक लाय धरया सो मणिके प्रतापसैं कोयला प्रकाशरूप होय गए। फिर वह मणि उठाय लई तब वह कोयला नीके न लागे तब

मंत्रियोंने राजासे विनती करी हे देव! जैसें यह काष्ठके कोयला रत्ननिविना न शोभै है तैसें तुम विना हम सब ही न शोभैं। हे नाथ! तुम विना प्रजाके लोक अनाथ मारे जायगे और लूटे जांयगे। अर प्रजाके नष्ट होते धर्मका अभाव होवेगा तातैं जैसा तुम्हारा पिता तुमको राज्य देय मुनि भया था तैसें तुम भी अपने पुत्रकों राजदेय जिनदीक्षा धरियो। या भांति प्रधान पुरुषोंने विनती करी तब राजाने यह नियम किया कि जो मैं पुत्रका जन्म सुनूं उस ही दिन मुनिव्रत धरूं! यह प्रतिज्ञाकर इंद्र समान भोग भोगता भया। प्रजाकों साता उपजाय राज्य किया जिसके राज्यमें किसी भांतिका भी प्रजाकों भय न उपजा। कैसा है राजा? समाधान रूप है चित्त जाका। एक समय राणी सहदेवी राजा सहित शयन करती थी सो उसको गर्भ रह्या, कैसा पुत्र गर्भमें आया संपूर्ण गुणनिका पात्र और पृथिवीके प्रतिपालनकों समर्थ सो जब पुत्रका जन्म भया तब राणीने पतिके वैरागी होनेके भयसे पुत्रका जन्म प्रकट न किया। कैयक दिवस वार्ता गोप राखी। जैसें सूर्यके उदयकों कोई छिपाय न सकै, तैसें राजपुत्रका जन्म कैसें छिपै? किसी दरिद्री मनुष्यने द्रव्यके अर्थके लोभतैं राजासे प्रकट किया। तब राजाने मुकुट आदि सर्व आभूषण अंगसे उतार उसको दिए और घोषशाखा नामा नगर महारमणीक अति धनकी उत्पत्तिका स्थानक सौ गांव सहित दिया और पुत्र पंद्रह दिनका माताकी गोदमें तिष्ठै था सो तिलककर उसको राजपद दिया। जिससे अयोध्या अति रमणीक होती भई। और अयोध्याका नाम कौशल भी है तातैं उसका सुकौशल नाम प्रसिद्ध भया। कैसा है सुकौशल? सुन्दर है चेष्टा जाकी, सुकौशलकों राज्य देय राजा कीर्तिधर घररूप वंदीगृहतैं निकसकरि तपोवनकों गए मुनिव्रत आदरे, तपमे उपज्या जो तेज उससे जैसें मेघपटलसे रहित सूर्य शोभै, तैसैं शोभते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषै वज्रबाहु कीर्तिधर माहात्म्य वर्णन करनेवाला इक्कीसवा पर्व पूर्ण भया॥२१॥

बाईसवां पर्व

[सुकौशलका दीक्षा लेना और भयंकर उपसर्ग सह कर इष्ट प्राप्ति करना]

अथानंतर कैयक वर्षमें कीर्तिधर मुनि पृथिवीसमान है क्षमा जिनके, दूर भया है मान मत्सर जिनका और उदार है चित्त जिनका, तपकरि शोखा है सर्व अंग जिन्होंने, अर लोचन ही हैं सर्व आभूषण जिनके, प्रलंबित हैं महाबाहु और जूडे प्रमाण धरती देख अधोदृष्टि गमन करैं हैं जैसें मत्त गजेन्द्र मन्द मन्द गमन करै तैसें जीवदयाके अर्थ धीरा-धीरा २ गमन करैं हैं, सर्व विकार रहित महा सावधानी ज्ञानी महा विनयवान लोभ-रहित पंच आचारके पालनहारे,

जीवदयासे विमल है चित्त जिनका, स्नेहरूप कर्दमसे रहित, स्नानादि शरीरसंस्कारसे रहित, मुनिपदकी शोभासे मंडित, सो आहारके निमित्त बहुत दिनोंके उपवासे नगरमें प्रवेश करते भए। तिनकों देखकर पापिनी सहदेवी उनकी स्त्री मनमें विचार करती भई कि कभी इनको देख मेरा पुत्र भी वैराग्यकों प्राप्त न होय तब महा क्रोधकर लाल होय गया है मुख जाका, दुष्ट चित्त द्वारपालनिसों कहती भई, यह यति नग्न महा मलिन घरका खोऊ है इसे नगरसे बाहिर निकास देवो फिर नगरमें न आवने पावे। मेरा पुत्र सुकुमार है भोला है कोमल चित्त है सो उसे देखने न पावै, या सिवाय और भी यति हमारे द्वारे आवने न पावें। रे द्वारपाल हो! इस बातमें चूक पड़ी तो मैं तुम्हारा निग्रह करूंगी जबसे यह दया-रहित, बालक पुत्रकों तजकर मुनि भया तबसूं इस भेषका मेरे आदर नाहीं, यह राज्यलक्ष्मी निंद है अर लोगोंको वैराग्य प्राप्त करावै है भोग छुड़ाय योग सिखावै है जब राणीने ऐसे वचन कहे तब ते क्रूर द्वारपाल बैंतकी छड़ी है हाथमें जिनके मुनिकों मुखसें दुर्वचन कहकर नगरसें निकास दिए अर आहारकों और भी साधु नगरमें आए हुते वे भी निकास दिए। मत कदाचित् मेरा पुत्र धर्म-श्रवण करै। या भांति कीर्तिधरका अविनय देख राजा सुकौशलकी धाय महाशोक कर रुदन करती भई। तब राजा सुकौशल धायकों रोवती देख कहते भए हे माता! तेरा अपमान करै ऐसा कौन? माता तो मेरी गर्भ-धारण मात्र है और तेरे दुग्धकरि मेरा शरीर वृद्धिकों प्राप्त भया सो मेरे तू मातासें भी अधिक है। जो मृत्युके मुखमें प्रवेश किया चाहे सो तोहि दुखावै जो मेरी माताने भी तेरा अनादर किया होय तो मैं उसका अविनय करूं, औरोंकी क्या बात? तब वसंतलता धाय कहती भई हे राजन्! तेरा पिता तुझे बालअवस्थामें राज्य देय संसाररूप कष्टके पींजरेसे भयभीत होय तपोवनको गए सो वह आज इस नगरमें आहारकों आए थे सो तिहारी माताने द्वारपालनिसों आज्ञाकर नगरतैं कढ़ाए। हे पुत्र! वे हमारे सबके स्वामी सो उनका अविनय मैं देख न सकी तातैं मैं रुदन करूं हू और तिहारी कृपाकर मेरा अपमान कौन करै? और साधुवोंको देखकर मेरा पुत्र ज्ञानकों प्राप्त होय ऐसा जान मुनिनका प्रवेश नगरसे निषेध्या सो तिहारे गोत्रविषैं यह धर्म परंपरायसे चला आया है कि जो पुत्रकों राज्य देय पिता वैरागी होय हैं और तिहारे घरसे आहार विना कभी भी साधु पाछे न गए। यह वृत्तांत सुन राजा सुकौशल मुनिके दर्शनकों महलसे उतर चमर छत्र वाहन इत्यादि राजचिह्न तजकर कमलसे भी अतिकोमल जो चरण सो उबाणे ही मुनिके दर्शनकों दौड़े और लोकनिकों पूछते जावें तुमने मुनि देखे, तुमने मुनि देखे या भांति परम अभिलाषासंयुक्त अपने पिता जो कीर्तिधर मुनि तिनके समीप गए। अर इनके पीछे छत्र-चमर-वारे सब दौड़े ही गए, महामुनि उद्यानविषैं शिलापर विराजे हुते सो राजा सुकौशल अश्रुपात कर पूर्ण हैं नेत्र जाके, शुभ है भावना जाकी, हाथ जोड़ि नमस्कार करि बहुत विनयसों मुनिके आगैं खड़े द्वारपालनिने

द्वारतैं निकासे थे सो ताकर अतिलज्जावंत होय महामुनिसों विनती करते भए—हे नाथ! जैसें कोई पुरुष अग्नि प्रज्वलित घरविषैं सूता होवे ताहि कोऊ मेघके नाद-समान ऊंचा शब्द कर जगावै, तैसैं संसाररूप गृह, जन्म-मृत्युरूप अग्निकरि प्रज्वलित ताविषै मैं मोह-निद्राकरि युक्त शयन करूं था सो मोहि आप जगाया। अब कृपा कर यह तिहारी दिगंबरी दीक्षा मोहि देहु। यह कष्टका सागर संसार तासों मोहि उबारहु। जब ऐसे वचन मुनिसों राजा सुकौशलने कहे, तब ही समस्त सामंत लोक आए और रानी विचित्रमाला गर्भवती हुती सो हू अति कष्टकरि विषादसहित समस्त राजलोक सहित आई। इनकों दीक्षाके लिए उद्यमी सुन सब ही अंतः-पुरके अर प्रजाके शोक उपज्या। तब राजा सुकौशल कहते भए या रानी विचित्रमालाके गर्भ-विषैं पुत्र है, ताहि मैं राज्य दिया। ऐसा कहकरि निस्पृह भए आशारूप फांसीको छेदि स्नेह-रूप जो पींजरा ताहि तोड़ स्त्रीरूप बंधनसों छूट जीर्ण तृणवत राज्यकों जानि तज्या और वस्त्रा-भूषण सब ही तजि बाह्याभ्यंतर परिग्रहका त्याग करके केशनिका लोंच किया अर पद्मासन धार तिष्ठे। कीर्तिधर मुनींद्र इनके पिता तिनके निकट जिनदीक्षा धरी। पंच महाव्रत पांच समिति तीन गुप्ति अंगीकार करि सुकौशल मुनि गुरुके संग विहार किया। कमल समान आरक्त जो चरण तिनकरि पृथिवीकों शोभायमान करते संते विहार करते भए। अर इनकी माता सहदेवी आर्तध्यानकरि मरकैं तिर्यंच योनिमैं नाहरी भई। अर ए पिता पुत्र दोनों मुनि महाविरक्त जिनकों एक स्थानक रहना नाहीं, पिछले पहर दिनसूं निर्जन प्रासुक स्थान देखि बैठि रहैं। अर चातुर्मासिकमें साधुवोंको विहार न करना सो चातुर्मासिक जान एक स्थान बैठि रहैं। दशों दिशाकों श्याम करता संता चातुर्मासिक पृथिवीविषैं प्रवर्त्या, आकाश मेघमालाके समूहकरि ऐसा शोभे मानों काजलतैं लिप्या है। अर कहूं एक बगुलानिकी पंक्ति उड़ती ऐसी सोहै मानों कुमुद फूल रहे हैं। अर ठौर ठौर कमल फूल रहे हैं, जिनपर भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानों वर्षाकालरूप राजाके यश ही गावैं हैं, अंजनगिरि समान महानील जो अंधकार ताकरि जगत् व्याप्त होय गया, अर मेघके गाजनेतैं मानो चांद सूर्य डर कर छिप गए, अखंडजलकी धारातैं पृथिवी सजल होय गई अर तृण ऊग उठे सो मानों पृथिवी हर्षके अंकुर धरै है। अर जलके प्रवाहकरि पृथ्वीविषैं नीचा ऊंचा स्थल नजर नाहीं आवै। अर पृथ्वीविषैं जलके समूह गाजै हैं अर आकाशविषैं मेघ गाजै हैं सो मानों ज्येष्ठका समय जो वैरी ताहि जीतकर गाज रहे हैं। अर धरती नीझरननिकरि शोभित भई। भांति भांतिकी वनस्पति पृथ्वीविषैं ऊगी सो ताकरि पृथिवी ऐसी शोभै है मानों हरितमणिके समान बिछोना कर राखे हैं। पृथिवीविषैं सर्वत्र जल ही जल होय रहा है मानो मेघ ही जलके भारतैं टूट पड़े हैं। अर ठौर ठौर इन्द्रगोप अर्थात् बीर-बहूटी दीखै हैं सो मानों वैराग्यरूप वज्रतैं चूर्ण भए रागके खंड ही पृथिवीविषैं फैल रहे हैं अर

विजलीका तेज सर्व दिशाविषैं विचरै है सो मानों मेघ नेत्रकरि जलपूरित तथा अपूरित स्थानककों देखै है। अर नाना प्रकारके रंगको धरै जो इन्द्रधनुष ताकरि मण्डित आकाश सो ऐसा शोभता भया मानों अति ऊंचे तोरणों कर युक्त है। अर दोऊ पालि ढाहती महा भयानक भ्रमरकों धरै अतिवेगकर युक्त कलुषतासंयुक्त नदी वहै है। सो मानों मर्यादारहित स्वच्छंद स्त्रीके स्वरूपको आचरै है। अर मेघके शब्दकर त्रासकों प्राप्त भई जे मृगनयनी विरहिणी ते स्तंभनिसूं स्पर्श करै हैं अर महा विह्वल हैं पतिके आवनेकी आशाविषैं लगाए हैं नेत्र जिनने। ऐसे वर्षाकालविषैं जीवदयाके पालनहारे महाशांत अनेक निर्ग्रंथ मुनि प्रासुक स्थानविषैं चौमासी उपवास लेय तिष्ठे। अर जे गृहस्थ श्रावक साधु सेवाविषैं तत्पर ते भी चार महीना गमनका त्याग कर नानाप्रकारके नियम धर तिष्ठे। ऐसै मेघकर व्याप्त वर्षाकालविषैं वे पिता पुत्र यथार्थ आचारके आचरनहारे प्रेतवन कहिए श्मसान ताविषैं चार महीना उपवास धर वृक्षके तलैं विराजे। कभी पद्मासन, कभी कायोत्सर्ग, कभी वीरासन आदि अनेक आसन धरै चातुर्मास पूर्ण किया। कैसा है वह प्रेतवन? वृक्षनिके अन्धकार करि महा गहन है अर सिंह व्याघ्र रींछ स्याल सर्प इत्यादि अनेक दुष्ट जीवनिकरि भरया है, भयंकर जीवनिको भी भयकारी महा विषम है, गीध सियाल चील इत्यादि जीवनिकर पूर्ण होय रहा है, अर्धदग्ध मृतकनिका स्थानक महा भयानक विषम भूमि मनुष्यनिके सिरके कपालके समूहकर जहां पृथिवी श्वेत होय रही है और दुष्ट शब्द करते पिशाचनिके समूह विचरै हैं अर जहां तृणजाल कंटक बहुत हैं सो ये पिता पुत्र दोनों मुनि धीर वीर पवित्र मन चार महीना तहां पूर्ण करते भए।

अथानंतर वर्षा ऋतु गई शरद ऋतु आई सो मानों रात्रि पूर्ण भई, प्रभात भया। कैसा है प्रभात? जगतके प्रकाश करनेमें प्रवीण है। शरदके समय आकाशविषैं बादल श्वेत प्रगट भए अर सूर्य मेघपटल रहित कांतिसों प्रकाशमान भया। जैसैं उत्सर्पिणीकालका जो दुःखमाकाल ताके अन्तमें दुखमासुखमाके आदि ही श्रीजिनेंद्रदेव प्रकट होंय। अर चंद्रमा रात्रि-विषैं तारानिके समूहके मध्य शोभता भया, जैसैं सरोवरके मध्य तरुण राजहंस शोभै। अर रात्रिमें चंद्रमाकी चांदनीकर पृथ्वी उज्ज्वल भई सो मानो क्षीरसागर ही पृथ्वीविषैं विस्तर रह्या है। अर नदी निर्मल भई कुरचि सारस चकवा आदि पक्षी सुंदर शब्द करने लगे अर सरोवरमें कमल फूले जिन पर भ्रमर गुंजार करै हैं अर उड़ैं हैं सो मानों भव्यजीवनिने मिथ्यात्व-परिणाम तजे हैं सो उड़ते फिरैं हैं। भावार्थ-मिथ्यात्वका स्वरूप श्याम अर भ्रमरका भी स्वरूप श्याम। अनेक सुगन्धका है प्रचार जहां ऐसे जे ऊंचे महल तिनके निवासविषैं रात्रिके समय लोक निज प्रियानिसहित क्रीड़ा करै हैं। शरदऋतुविषैं मनुष्यनिके समूह महाउत्सवकर प्रवर्तैं हैं, सन्मान किया है मित्र बांधवनिका जहां अर जा स्त्री पीहर गई तिनका सासरे आगमन होय

है। कार्तिक सुदी पूर्णमासीके व्यतीत भए पीछे तपोधर जे मुनि ते जैनतीर्थोंमें विहार करते भए। तदि ये पिता अर पुत्र कीर्तिधर सुकौशल मुनि समाप्त भया है नियम जिनका, शास्त्रोक्त ईर्या-समितिसहित पारणाके निमित्त नगरकी ओर विहार करते भए। अर वह सहदेवी सुकौशलकी माता मरकरि नाहरी भई हुती सो पापिनी महाक्रोधकी भरी लोहूकर लाल है केशोंके समूह जाके, विकराल है वदन जाका, तीक्ष्ण है दाढ़ जाके कषायरूप पीत हैं नेत्र जाके, सिरपर धरी है पूछ जाने, नखोंकरि विदारे हैं अनेक जीव जाने अर किए हैं भयंकर शब्द जाने मानों मरी ही शरीर धरि आई है। लहलहाट करे है लाल जीभका अग्रभाग जाका, मध्यान्हके सूर्य समान आतापकारी सो पापिनी सुकौशल स्वामीको देखकरि महावेगतैं उछलकर आई, ताहि आवती देख वे दोनों मुनि सुंदर हैं चरित्र जिनके सर्व आलंबन रहित कायोत्सर्ग धर तिष्ठे सो पापिनी सिंहनी सुकौशल स्वामीका शरीर नखो करि विदारती भई। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे राजन्! देख संसारका चरित्र ? जहां माता पुत्रके शरीरके भक्षणका उद्यम करै है या उपरांत और कष्ट कहा ? जन्मांतरके स्नेही बांधव कर्मके उदयतैं वैरी होय परिणमैं तदि सुमेरुतैं भी अधिक स्थिर सुकौशल मुनि शुक्लध्यानके धरणहारे तिनको केवलज्ञान उपज्या, अंतकृत-केवली भए। तब इंद्रादिक देवोने आय इनके देहकी कल्पवृक्षादिक पुष्पनिसो अर्चा करी, चतुरनिकायके सर्व ही देव आए अर नाहरीको कीर्तिधर मुनि धर्मोपदेश वचनोंसे संबोधते भए—हे पापिनी! तू सुकौशलकी माता सहदेवी हुती अर पुत्रसे तेरा अधिक स्नेह हुता ताका शरीर तैंने नखनितैं विदारया। तब वह जातिस्मरण होय श्रावकके व्रतधर संन्यास धारणकर शरीर तजि स्वर्गलोकमें गई। बहुरि कीर्तिधर मुनिको भी केवलज्ञान उपज्या तब इनके केवलज्ञानकी सुर असुर पूजाकर अपने अपने स्थानकों गए। यह सुकौशल मुनिका माहात्म्य जो कोई पुरुष पढ़ै सुनै सो सर्व उपसर्गतैं रहित होय सुखसो चिरकाल जीवै।

अथानंतर सुकौशलकी राणी विचित्रमाला ताके संपूर्ण समयपर सुंदर लक्षणकरि मंडित पुत्र होता भया। जब पुत्र गर्भमे आया तबहीतैं माता सुवर्णकी कांतिको धरती भई। तातैं पुत्रका नाम हिरण्यगर्भ पृथिवीपर प्रसिद्ध भया, सो हिरण्यगर्भ ऐसा राजा भया मानों अपने गुणनिकर बहुरि ऋषभदेवका समय प्रकट किया, सो राजा हरिकी पुत्री अमृतवती महामनोहर ताहि तानैं परणी। राजा अपने मित्र बांधवनिकरि संयुक्त पूर्ण द्रव्यके स्वामी मानों स्वर्णके पर्वत ही हैं। सर्व शास्त्रार्थके पारगामी देवनि समान उत्कृष्ट भोग भोगते भए। एक समय राजा उदार है चित्त जिनका दर्पणमें मुख देखते हुते सो भ्रमर समान श्याम केशनिके मध्य एक सुफेद केश देख्या। तब चित्तमें विचारते भए कि यह कालका दूत आया बलात्कार यह जराशक्ति कांतिकी नाश करणहारी ताकरि मेरे अंगोपांग शिथिल होवेंगे। यह चंदनके वृक्षसमान मेरी काया अब

जरारूप अग्निकरि जल्या अंगारतुल्य होयगी। यह जरा छिद्र हेरै ही है सो समय पाय पिशाचनीकी नाईं मेरे शरीरमें प्रवेशकर बाधा करेगी। अर कालरूप सिंह चिरकालतैं मेरे भक्षणका अभिलाषी हुता सो अब मेरे देहकों बलात्कारतैं भखेगा, धन्य है वह पुरुष जो कर्मभूमिको पायकर तरुण अवस्थामैं व्रतरूप जहाजविषैं चढ़िकर भवसागरकों तिरै, ऐसा चिंतवनकर राणी अमृतवतीका पुत्र जो नघोष ताहि राजविषैं थापकरि विमलमुनिके निकट दिगंबरी दीक्षा धरी। यह नघोष जबतैं माताके गर्भमें आया तबहीतैं कोई पापका वचन न कहै तातैं नघोष कहाए। पृथ्वीपर प्रसिद्ध हैं गुण जिनके, तिन गुणोंके पुंज तिनके सिंहिका नाम राणी ताहि अयोध्याविषैं राख उत्तर दिशाके सामंतोंको जीतवेको चढ़े, तब राजाकों दूर गया जान दक्षिण दिशाके राजा बड़ी सेनाके स्वामी अयोध्या लेनेको आए। तब राणी सिंहिका महाप्रतापिनी बड़ी फौजकरि चढ़ी। सो सर्व वैरीनिकों रणमे जीतकर अयोध्या दृढ़ थाना राखि आप अनेक सामंतनिकों लेय दक्षिणदिशा जीतनेकों गई। कैसी है राणी? शस्त्रविद्या अर शास्त्रविद्याका किया है अभ्यास जानै, प्रतापकरि दक्षिणदिशाके सामंतोंका जीतकर जयशब्दकर पूरित पाछी अयोध्या आई, अर राजा नघोष उत्तर दिशाको जीतकर आए सो स्त्रीका पराक्रम सुन कोपकों प्राप्त भए, मनमें विचारी जे कुलवंती स्त्री अखंडित शीलकी पालनहारी हैं तिनमें एती धीठता न चाहिये ऐसा निश्चयकर राणी सिंहिकासों उदास चित्त भए, यह पतिव्रता महाशीलवती पवित्र है चेष्टा जाकी पटराणीके पदतैं दूर करी सो महादरिद्रताकों प्राप्त भई।

अथानंतर राजाके महादाहज्वरका विकार उपज्या सो सर्व वैद्य यत्न करैं, पर तिनको औषधि न लागै। तब राणी सिंहिका राजाकों रोगग्रस्त जानकर व्याकुलचित्त भई अर अपनी शुद्धताके अर्थि यह पतिव्रता पुरोहित मंत्री सामंत सबनिको बुलायकर पुरोहितके हाथ अपने हाथका जल दिया, अर कही कि यदि मैं मन वचन कायकरि पतिव्रता हू तो या जलकरि सींच्या राजा दाहज्वरकर रहित होवे, तब जल करि सींचते ही राजाका दाहज्वर मिट गया अर हिमविषैं मग्न जैसा शीतल होय गया, मुखतैं ऐसे मनोहर शब्द कहता भया जैसैं वीणाके शब्द होवै। अर आकाशविषैं यह शब्द होते भए कि यह राणी सिंहिका पतिव्रता महाशीलवंती धन्य है धन्य है, आकाशतैं पुष्प वर्षा भई। तब राजाने राणीको महाशीलवंती जान बहुरि पटराणीका पद दिया अर बहुत दिन निष्कंटक राज्य किया। बहुरि अपने बड़ोंके चरित्र चित्तविषैं धरि संसारकी मायातैं निस्पृह होय सिंहिका राणीका पुत्र जो सौदास ताहि राज देय आप धीर वीर मुनिव्रत धरे। जो कार्य परंपराय इनके बड़े करते आए है सो किया, सौदास राज करै सो पापी मांस-आहारी भया, इनके वंशमें किसीने यह आहार न किया, यह दुराचारी अष्टान्हिकाके दिवसविषैं भी अभक्ष्य आहार न तजता भया। एक दिन रसोईदारसों कहता भया कि—मेरे मांसभक्षणका

अभिलाष उपज्या है, तब तानै कही—हे महाराज ! अष्टान्हिकाके दिन हैं, सर्व लोक भगवान् की पूजा कर व्रत नियमविषैं तत्पर हैं, पृथिवीपर धर्मका उद्योत होय रह्या है, इन दिनोंमें यह वस्तु अलभ्य है। तदि राजाने कही या वस्तु विना मेरा मन रहै नाहीं, तातैं जा उपायकरि यह वस्तु मिलै सो कर। तदि रसोईदार यह राजाकी दशा देख नगरके बाहिर गया एक मूवा हुवा बालक देख्या ताही दिन वह मूवा था सो ताहि वस्त्रमें लपेट वह पापी लेय आया, स्वादु वस्तुनिकरि ताहि मिलाय पकाय राजाकों भोजन दिया, सो राजा महादुराचारी अभक्ष्यका भक्षण कर प्रसन्न भया। अर रसोईदारतैं एकांतमे पूछता भया कि हे भद्र ! यह मांस तू कहांतैं लाया अब तक ऐसा मांस मैंने भक्षण नहीं किया हुता। तदि रसोईदार अभयदान मांग यथावत् कहता भया। तब राजा कहता भया ऐसा ही मांस सदा लाया कर। तदि रसोईदार बालकनिकों लाडू बांटता भया। तिन लाडुओंके लालचवशि बालक निरंतर आवैं सो बालक लाडू लेयकर जावें तब जो पीछे रह जाय ताहि यह रसोईदार मार राजाको भक्षण करावै। निरंतर नगरविषैं बालक छीजने लगे, तदि यह वृत्तांत लोकनिने जान रसोईदारसहित राजाकों देशतैं निकाल दिया। अर याकी राणी कनकप्रभा ताका पुत्र सिंहरथ ताहि राज्य दिया। तदि यह पापी सर्वत्र निरादर हुआ महादुखी पृथिवीपर भ्रमण किया करै। जे मृतक बालक लोग मसानविषैं डार आवैं तिनको भखै जैसैं सिंह मनुष्योंका भक्षण करै। तातैं याका नाम सिंहसौदास पृथिवी-विषैं प्रसिद्ध भया। बहुरि यह दक्षिणदिशाकों गया तहां मुनिके दर्शन कर धर्म श्रवणकर श्रावक के व्रत धारता भया। बहुरि एक महापुर नामा नगर तहांका राजा मूवा ताके पुत्र नहीं था तब सबने यह विचार किया पाटबंध हस्ती जाय जाहि कांधे चढ़ाय लावै सोई राजा होवै तदि याहि कांधे चढ़ाय हस्ती लेय गया तब याकों राज्य दिया। यह न्यायसंयुक्त राज्य करै अर पुत्रके निकट दूत भेज्या कि तू मेरी आज्ञा मान, तदि वानै लिख्या जा तू महा निंद्य है मैं तोहि नमस्कार न करूं। तब यह पुत्रपर चढ़करि गया। याहि आवता सुन लोग भागने लगे कि यह मनुष्यनिकों खायगा, पुत्रके अर याके महायुद्ध भया, सो पुत्रको युद्धमें जीत दोनो ठौरका राज्य पुत्रकों देयकर आप महा वैराग्यकों प्राप्त होय तपके अर्थि वनमें गया।

अथानंतर याके पुत्र सिंहरथके ब्रह्मरथ पुत्र भया, ताके चतुर्मुख, ताके हेमरथ, ताके सत्यरथ, ताके पृथुरथ, ताके पयोरथ, ताके दृढ़रथ, ताके सूर्यरथ,, ताके मानधाता, ताके वीरसेन, ताके पृथ्वीमन्यु, ताके कमलबंधु, दीप्तितैं मानों सूर्य ही है। समस्त मर्यादामें प्रवीण ताके रविमन्यु, ताके वसंततिलक, ताके कुबेरदत्त, ताके कुंथुभक्त सो महा कीर्तिका धारी, ताके शतरथ, ताके द्विरदरथ, ताके सिंह-दमन, ताके हिरण्यकश्यप, ताके पुंजस्थल, ताके ककुस्थल, ताके रघु, पराक्रमी। यह इक्ष्वाकुवंश श्रीऋषभदेवतैं प्रवर्त्या। सो वंशकी महिमा हे श्रेणिक ! तोहि कही। ऋषभदेवके

वंशमें श्रीरामचन्द्र पर्यंत अनेक बड़े बड़े राजा भए ते मुनिव्रत धार मोक्ष गए। कैयक अहमिंद्र भए, कई एक स्वर्गमें प्राप्त भए। या वंशविषैं पापी विरले भए।

बहुरि अयोध्या नगरविषैं राजा रघुके अनरण्य पुत्र भया, जाके प्रतापकरि उद्यानमें बस्ती होती भई, ताके पृथ्वीमती राणी महा गुणवंती महाकांतिकी धरणहारी महारूपवंती महापतिव्रता ताके दोय पुत्र होते भए। महा शुभलक्षण एक अनंतरथ दूसरा दशरथ। सो राजा सहस्ररश्मि माहिष्मती नगरीका पति ताकी अर राजा अनरण्यकी परम मित्रता होती भई मानों ये दोनों सौधर्म अर ईशान इंद्र ही हैं। जब रावणने युद्धमें सहस्ररश्मिको जीत्या अर तानैं मुनिव्रत धरे सो सहस्ररश्मिके अर अनरण्यके यह वचन हुता कि जो तुम वैराग्य धारो तब मोंहि जतावना, अर मैं वैराग्य धारूंगा तो तुम्हें जताऊंगा, सो वाने जब वैराग्य धारया तदि अनरण्यको जतावा दिया। तदि राजा अनरण्यने सहस्ररश्मिको मुनि हुवा जानकरि दशरथ पुत्रकों राज्य देय आप अनंतरथ पुत्रसहित अभयसेन मुनिके समीप जिनदीक्षा धारी, महातपकरि कर्मोंका नाशकर मोक्षकों प्राप्त भए। अर अनंतरथ मुनि सर्व परिग्रहरहित पृथ्वीपर विहार करते भए। बाईस परिषहके सहनहारे किसी प्रकार उद्वेगकों न प्राप्त भए तदि इनका अनंतवीर्य नाम पृथिवीपर प्रसिद्ध भया। अर राजा दशरथ राज्य करै सो महासुंदर शरीर नवयौवनविषैं अति शोभायमान होता भया अनेकप्रकार पुष्पनिकरि शोभित मानों पर्वतका उतंग शिखर ही है।

अथानंतर दर्भस्थल नगरका राजा कौशल प्रशंसायोग्य गुणोंका धरणहारा ताके राणी अमृतप्रभा ताकी पुत्री कौशल्या, ताहि अपराजिता भी कहै हैं। काहेतैं कि यह स्त्रीके गुणनिकरि शोभायमान कामकी स्त्री रति-समान महासुंदर किसीतैं न जीती जाय महारूपवंती सो राजा दशरथने परणी। बहुरि एक कमलसंकुल नामा बड़ा नगर तहांका राजा सुबंधुतिलक ताके राणी मित्रा ताके पुत्री सुमित्रा सर्वगुणनिकरि मंडित महारूपवंती जाहि नेत्र रूप कमलनिकरि देख मन हर्षित होय। पृथिवीपर प्रसिद्ध सो भी दशरथने परणी। बहुरि एक और महाराजा नामा राजा ताकी पुत्री सुप्रभा रूप-लावण्यकी खानि जाहि लखैं लक्ष्मी लज्जावान होय सो हू राजा दशरथने परणी, अर राजा दशरथ सम्यग्दर्शनकों प्राप्त होते भए अर राज्यका परम उदय पाय सो सम्यग्दर्शनकों रत्नों समान जानते भए अर राज्यकों तृण समान मानते भए कि जो राज्य न तजै तो यह जीव नरकमें प्राप्त होय, राज्य तजैं तो स्वर्ग मुक्ति पावै। अर सम्यग्दर्शनके योगतैं निसंदेह ऊर्ध्वगति ही है सो ऐसा जानि राजाके सम्यग्दर्शनकी दृढ़ता होती भई। अर जे भगवानके चैत्यालय प्रशंसायोग्य आगैं भरत चक्रवर्त्यादिकने कराए हुते तिनमें कैयक ठौर कैयक भंग भावकों प्राप्त भए हुते सो राजा दशरथने तिनकों मरम्मत कराय ऐसे किए मानों नवीन ही हैं अर इंद्रनिकरि नमस्कार करनेयोग्य महा रमणीक जे तीर्थंकरनिके कल्याणक स्थानक तिनकी रत्ननिके

समूह करि यह राजा पूजा करता भया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसों कहै हैं--हे भव्यजीव! राजा दशरथ सारिखे जीव परभवमें महाधर्मको उपार्जनकर अति मनोज्ञ देवलोककी लक्ष्मी पायकर या लोकमें नरेंद्र भये हैं, महाराज ऋद्धिके भोक्ता सूर्य समान दशों दिशाविषैं है प्रकाश जिनका।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषैं राजा सुकौशलका माहात्म्य अर तिनके वंशविषैं राजा दशरथकी उत्पत्तिका कथन वर्णन करनेवाला बाईसवां पर्व पूर्ण भया ॥२२॥

तेईसवां पर्व

[रावणके दशरथके पुत्र और जनककी पुत्रीसे मरणकी शंका और उसका निराकरण]

अथानंतर एक दिन राजा दशरथ महा तेज प्रतापकरि संयुक्त सभामें विराजते हुते। कैसे हैं राजा? जिनेंद्रकी कथाविषैं आसक्त है मन जिनका अर सुरेन्द्र समान है विभव जिनका। ता समय अपने शरीरके तेजकरि आकाशविषैं उद्योत करते नारद आए। तब दूरहीसों नारदको देखकर राजा उठकर सन्मुख गए। बड़े आदरसों नारदकूं ल्याय सिंहासनपर विराजमान किए। राजाने नारदकी कुशल पूछी, नारदने कही जिनेंद्रदेवके प्रसाद करि कुशल है। बहुरि नारदने राजाकी कुशल पूछी, राजाने कही देव धर्म गुरुके प्रसादकरि कुशल है। बहुरि राजाने पूछी--हे प्रभो! आप कौन स्थानकतें आए, इन दिनोंमें कहां कहां विहार किया, कहा देख्या? कहा सुन्या? तुमतैं अढाई द्वीपमें कोई स्थान अगोचर नाहीं। तदि नारद कहते भए। कैसे हैं नारद? जिनेंद्रचंद्रके चरित्र देखकर उपज्या है परम हर्ष जिनको, हे राजन! मैं महा विदेहक्षेत्रनिविषैं गया हुता, कैसा है वह क्षेत्र? उत्तम जीवनिकरि भरया है, जहां ठौर ठौर श्रीजिनराजके मंदिर अर ठौर २ महामुनिराज विराजे हैं जहां धर्मका बड़ा उपकार अतिशयकरि उद्योत है। श्रीतीर्थंकरदेव चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेवादि उपजैं हैं तहां श्रीसीमंधर स्वामीका मैंने पुंडरीकिनी नगरीमें तपकल्याणक देख्या। कैसी है पुंडरीकिनी नगरी? नाना प्रकारके रत्ननिकरि जे महल तिनके तेजतैं प्रकाशरूप है। अर सीमंधरस्वामीके तपकल्याणकविषैं नाना प्रकारके देवनिका आगमन भया तिनके भांति-भांतिके विमान ध्वजा अर छत्रादि करि महाशोभित अर नानाप्रकारके जे वाहन तिनकरि नगरी पूर्ण देखी अर जैसा श्रीमुनिसुव्रतनाथका सुमेरु विषै जन्माभिषेकका उत्सव हम सुनें हैं तैसा श्रीसीमंधरस्वामीके जन्माभिषेकका उत्सव मैंने सुन्या। अर तपकल्याणक तो मैंने प्रत्यक्ष ही देखा अर नाना प्रकारके रत्ननिकरि जड़ित जिनमंदिर देखे जहां महा मनोहर भगवानके बड़े बड़े बिंब विराजैं हैं अर विधिपूर्वक निरंतर पूजा होय है। अर महा विदेहतैं मैं

सुमेरु पर्वत आया, सुमेरुकी प्रदक्षिणा कर सुमेरुके वन तहां भगवानके जे अकृत्रिम चैत्यालय तिनका दर्शन किया--हे राजन् ! नंदन वनके चैत्यालय नाना प्रकारके रत्ननिसूं जड़े अतिरमणीक मैं देखे। जहां स्वर्णके पीत अति देदीप्यमान हैं सुंदर हैं मोतियोंके हार अर तोरण जहां, जिनमंदिर देखते सूर्यका मंदिर कहा ? अर चैत्यालयनिकी वैडूर्य मणिमई भीति देखीं तिनमें गज सिंहादिरूप अनेक चित्राम मढ़े हैं अर जहां देव देवी संगीत शास्त्ररूप नृत्य कर रहे हैं अर देवारण्यवनविषैं चैत्यालय तहां मैने जिन प्रतिमाका दर्शन किया अर कुलाचलनिके शिखरविषैं जिनेंद्रके चैत्यालय मैं देखे, वंदे। या भांति नारद कही तब राजा दशरथ 'देवेभ्यो नमः' ऐसा शब्द कहकर हाथ जोड़ सिर नवाय नमस्कार करता भया।

बहुरि नारदने राजाकूं सैन करी तदि राजाने दरबारको कहकर सबको सीख दीनी। आप एकांत विराजे तब नारद कही—हे सुकौशल देशके अधिपति ! चित्त लगाय सुन, तेरे कल्याणकी बात कहू हू, मैं भगवानका भक्त जहां जिनमंदिर होय तहां वंदना करूं हूं सो लंकामें गया हुता। तहां महा मनोहर श्रीशांतिनाथका चैत्यालय वंद्या सो एक वार्ता विभीषणादिके मुखसे सुनी कि रावणने बुद्धिसार निमित्तज्ञानीकों पूछा कि मेरी मृत्यु कौन मिमित्ततें है ? तदि निमित्तज्ञानी कही—दशरथका पुत्र अर जनक राजाकी पुत्री इनके निमित्ततैं तेरी मृत्यु है, सुनकर रावण सचित भया, तब विभीषण कही—आप चिंता न करहु दोऊनिके पुत्र पुत्री न होय ता पहिले दोऊनकों मैं मारूंगा सो तिहारे ठीक करनेकों विभीषणने हलकारे पठाए हुते सो वे तिहारा स्थान निरूपादि सब ठीक कर गए हैं। अर मेरा विश्वास जान मुझे विभीषणने पूछी कि क्या तुम दशरथ और जनकका स्वरूप नीके जानो हो ? तब मैं कही मोहि उनको देखे बहुत दिन भए हैं, अब उनको देख तुमको कहूगा सो उनका अभिप्राय खोटा देखकर तुमपै आया सो जब तक वह विभीषण तिहारे मारनेका उपाय करै ता पहिले तुम आपा छिपाय कहीं बैठ रहो। जे सम्यग्दृष्टि जिनधर्मी देव गुरु धर्मके भक्त हैं तिन सबनिसों मेरी प्रीति है तुम सारिखोंसे विशेष है तुम योग्य होय सो करहु तिहारा कल्याण होहु। अब मैं राजा जनकसे यह वृत्तांत कहने जाऊ हू तब राजाने उठ नारदका सत्कार किया। नारद आकाशके मार्ग होय मिथिलापुरीकी ओर गए, जनककों समस्त वृत्तांत कह्या नारदको भव्य जीव जिनधर्मी प्राणनिहूतैं प्यारे हैं नारद तो वृत्तांत कह देशांतरको गए अर दोनों ही राजावोंको मरणकी शंका उपजी। राजा दशरथने अपने मंत्री समुद्रहृदयको बुलाय एकांतमें नारदका सकल वृत्तांत कह्या। तब राजाके मुखतैं मंत्री ए महाभयके समाचार सुन कर स्वामीकी भक्तिविषैं परायण अर मंत्रशक्तिविषैं महा श्रेष्ठ राजाकूं कहता भया—हे नाथ ! जीतव्यके अर्थ सकल करिए है जो त्रिलोकीका राज्य आवै अर जीव जाय तो कौन अर्थ ? तातैं जौं लग मैं तिहारे वैरीनिका उपाय

करूं तब लग तुम अपना रूप छिपाय कर पृथिवीपर विहार करहु, ऐसा मंत्री कह्या । तदि राजा देश भंडार नगर याकों सौंपकर नगरतैं बाहिर निकसे । राजाके गए पीछे मंत्रीने राजा दशरथके रूपका पुतला बनाया एक चेतना नाहीं और सब राजाहीके चिह्न बनाए, लाखादि रसके योग-कर उसविषैं रुधिर निरमाप्या अर शरीरकी कोमलता जैसी प्राणधारीके होय तैसी ही बनाई सो महिलके सातवें खणमें सिंहासनविषैं राजा विराजमान किया सो समस्त लोकनिकों नीचेसे मुजरा होय, ऊपर कोई जाने न पावे, राजाके शरीरमें रोग है पृथिवीपर ऐसा प्रसिद्ध किया । एक मंत्री अर दूजा पूतला बनानेवाला यह भेद जानैं, इनहूकूं देखकर ऐसा भ्रम उपजै जो राजा ही है। अर यही वृत्तांत राजा जनकके भया । जो कोई पंडित हैं तिनके बुद्धि एकसी ही होय है । मंत्रीनिकी बुद्धि सबके ऊपर होय विचरै है । यह दोनों राजा लोकस्थितिके वेत्ता पृथिवीविषैं भागे फिरैं, आपदाकालविषैं जे रीति बताई हैं ता भांति करैं जैसैं वर्षाकालमें चांद सूर्य मेघके जोरसे छिपे रहैं तैसैं जनक और दशरथ दोऊ छिप रहे ।

यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे मगधदेशके अधिपति ! वे दोऊ बड़े राजा महा सुंदर हैं राजमंदिर जिनके अर महामनोहर देवांगना सारिखी स्त्री जिनके, महा-मनोहर भोगनिके भोक्ता, सो पायन पियादे दलिद्री लोकनिकी नाईं कोई नहीं संग जिनके अकेले भ्रमते भए, धिक्कार है संसारके स्वरूपको ऐसा निश्चयकर जो प्राणी स्थावर जंगम सब जीवनिकूं अभयदान दे सो आप भी भयसे कंपायमान न हो, इस अभयदान समान कोऊ दान नाहीं, जाने अभयदान दिया तानैं सब ही दिया, अभयदानका दाता सत्पुरुषनिमें मुख्य है ।

अथानंतर विभीषणने दशरथ जनकके मारवेकूं सुभट विदा किए अर हलकारे जिनके संगमें ते सुभट शस्त्र हैं हाथनिमें जिनके महाक्रूर छिपे छिपे रात दिन नगरीमें फिरैं, राजाके महल अति ऊंचे सो प्रवेश न कर सकैं । इनकूं दिन बहुत लगे तब विभीषण स्वयमेव आय महलमें गीत नाद सुन महलमें प्रवेश किया । राजा दशरथ अंतःपुरके मध्य शयन करता देख्या विभीषण तो दूर ठाढ़े रहे अर एक विद्युत्विलसित नामा विद्याधर ताकों पठाया कि याका मस्तक ले आवो । सो आय मस्तक काट विभीषणकों दिखाया अर समस्त राजलोक रोय उठे विभीषण इनका और जनकका सिर समुद्रविषैं डार आप रावणके निकट गया रावणकों हर्षित किया । इन दोनों राजनिकी राणी विलाप करैं फिर यह जानकर कि कृत्रिम पूतला था तब यह संतोषकर बैठ रहीं । अर विभीषण लंका जाय अशुभकर्मके शांतिके निमित्त दान पूजादि शुभ क्रिया करता भया। अर विभीषणके चित्तमें ऐसा पश्चाताप उपज्या जो देखो मेरे कौन कर्म उदय आया जो भाईके मोहसे वृथा भय मान वापुरे रंक भूमिगोचरी मृत्युकों प्राप्त किए जो कदाचित् आशीविष (आशीविष सर्प कहिए जिसे देख विष चढ़ै) जातिका सर्प होय तो भी क्या गरुड़कों प्रहार

कर सकै ? कहां वह अल्प ऐश्वर्यके स्वामी भूमिगोचरी, अर कहां इंद्र समान शूरवीरताका धरणहारा रावण, अर कहां मूसा कहां केशरी सिंह, जाके अवलोकनतैं माते गजराजनिका मद उतर जाय। कैसा है केशरी सिंह ? पवन समान है वेग जाका अथवा जा प्राणीकों जा स्थानकमें जा कारणकरि जेता दुःख अर सुख होना है सो ताको ताकर ता स्थानकविषैं कर्मनिके वशकरि अवश्य होय है अर यह निमित्तज्ञानी जो कोऊ यथार्थ जानैं तो अपना कल्याणही क्यों न करै जाकरि मोक्षकू अविनाशी सुख पाइए, निमित्तज्ञानी पराई मृत्युको निश्चय जाने तो अपनी मृत्युके निश्चयसे मृत्युके पहिले आत्मकल्याणक क्यों न करै ? निमित्तज्ञानीके कहनेसे मैं मूर्ख भया, खोटे मनुष्यनिकी शिक्षासे जे मन्दबुद्धि हैं ते अकार्यविषैं प्रवर्तैं हैं। यह लंकापुरी पाताल है तल जाका ऐसा जो समुद्र ताके मध्य तिष्ठै जो देवनिहू को अगम्य तहां विचारे भूमिगोचरियोके कहांसे गम्य होय ? मैं यह अत्यंत अयोग्य किया बहुरि ऐसा काम कबहू न करूं, ऐसी धारणा धार उत्तम दीप्तिसे युक्त जैसैं सूर्य प्रकाश रूप विचरैं तैसैं मनुष्यलोकमें रमते भए।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै राजा दशरथ अर जनकको विभीषणकृत मरण भय वर्णन करनेवाला तेईसवां पर्व पूर्ण भया ॥२३॥

चौबीसवां पर्व

[दशरथ और कैकयीका विवाह]

अथानंतर गौतमस्वामी कहै हैं-हे श्रेणिक ! अनरण्यके पुत्र दशरथने पृथ्वीपर भ्रमण करते केकईको परणा सो कथा महा आश्चर्यकी कारण तू सुन। उत्तर दिशाविषैं एक कौतुकमंगल नामा नगर ताके पर्वत समान ऊंचे कोट, तहां राजा शुभमति राज करै सो वह शुभमति नाममात्र नाहीं यथार्थ शुभमति ही है, ताकी रानी पृथुश्री गुण रूप आभरणनिकरि मंडित, ताके केकई पुत्री, द्रोणमेघ पुत्र भए, जिनके गुण दशों दिशामें व्याप्त रहे, केकई अतिसुंदर सर्व अंग मनोहर अद्भुत लक्षणनिकी धरणहारी सर्व कलावोंकी पारगामिनी अति शोभित भई। सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त श्राविकाके व्रत पालनहारी जिनशासनकी वेत्ता महा श्रद्धावंती तथा सांख्य पातंजल वैशेषिक वेदांत न्याय मीमांसा चार्वाकादिक परशास्त्रनिके रहस्यकी ज्ञाता तथा लौकिकशास्त्र शृंगारादिक तिनका रहस्य जानैं, नृत्यकलामें अति निपुण, सर्व भेदोंसे मंडित जो संगीत सो भलीभांति जानैं, उर कंठ सिर इन तीन स्थानकसे स्वर निकसे हैं अर स्वरोंके सात भेद हैं-षडज १ ऋषभ २ गांधार ३ मध्यम ४ पंचम ५ धैवत ६ निषाद ७ सो केकईको सर्वगम्य अर तीन प्रकारका लय शीघ्र १ मध्य २ विलंबित ३ अर चार प्रकारका ताल स्थायी १ संचारी २ आरोहक ३ अवरोहक ४ अर तीन प्रकारकी भाषा संस्कृत १ प्राकृत

२ शौरसेनी ३ स्थाईचालके भूषण चार प्रसंगादि १ प्रसन्नान्त २ मध्यप्रसाद ३ प्रसन्नांद्यवसान ४ अर संचारीके छह भूषण निवृत्त १ प्रस्थिल २ विंदु ३ प्रखोलित४ तमोमंद ५ प्रसन्न ६ आरोहणका एक प्रसन्नादि भूषण अर अवरोहणके दो भूषण प्रसन्नान्त १ कुहर २ ये तेरह अलंकार अर चार प्रकार वादित्र जे ताररूप सो तांत १ और चामके मढे ते आनद्ध २ अर बांसुरी आदि फूकके बाजे वे सुषिर ३ अर कांसीके बाजे वे घन ४ ये चार प्रकारके वादित्र जैसें केकई बजावै तैसें और न बजावें, गीत नृत्य वादित्र ये तीन भेद हैं सो नृत्यमें तीनों आए। अर रसके भेद नव शृंगार १ हास्य २ करुण ३ वीर ४ अद्‌भुत ५ भयानक ६ रौद्र ७ वीभत्स ८ शांत ६ तिनके भेद जैसें केकई जानै तैसैं और कोऊ न जानै। अक्षर मात्रा अर गणितशास्त्रमें निपुण, गद्य-पद्य सर्वमें प्रवीण, व्याकरण छंद अलंकार नाममाला लक्षणशास्त्र तर्क इतिहास अर चित्रकलामें अतिप्रवीण तथा रत्नपरीक्षा अश्वपरीक्षा नरपरीक्षा शस्त्रपरीक्षा गजपरीक्षा वृक्षपरीक्षा वस्त्रपरीक्षा सुगंधपरीक्षा सुगंधादिक द्रव्यनिका निपजावना इत्यादि सर्व बातनिमें प्रवीण ज्योतिष विद्यामें निपुण बाल वृद्ध तरुण मनुष्य तथा घोड़ हाथी इत्यादि सबके इलाज जानै, मंत्र औषधादि सर्वमें तत्पर वैद्यविद्यानिधान सर्व कलामें सावधान महाशीलवंत महामनोहर युद्धकलामें अतिप्रवीण शृंगारादि कलामें अति निपुण विनय ही है आभूषण जाके, कला अर गुण अर रूपमें ऐसी कन्या और नाहीं। गौतम स्वामी कहै हैं-हे श्रेणिक! बहुत कहवेकर कहा? केकईके गुणनिका वर्णन कहां तक करिए। तब ताके पिताने विचारा कि ऐसी कन्याके योग्य वर कौन? स्वयंवरमंडप करिए तहां यह आप ही वरै। ताने हरिवाहन आदि अनेक राजा स्वयंवरमंडपमें बुलाए सो विभवकर संयुक्त आए। वहां भ्रमते संते जनकसहित दशरथ हू आये सो यद्यपि इनके निकट राज्यका विभव नाही तथापि रूप अर गुणनिकरि सर्व राजावोंतें अधिक हैं, सर्व राजा सिंहासन पर बैठे अर केकईकों द्वारपाली सबनिके नाम ग्राम गुण कहै हैं सो वह विवेकिनी साधुरूपिणी मनुष्योंके लक्षण जाननेवाली प्रथम तो दशरथकी ओर नेत्ररूप नीलकमलकी माला डारी बहुरि वह सुंदर बुद्धिकी धरनहारी जैसे राजहंसिनी बगुलोंके मध्य बैठे जो राजहंस उसको ओर जाय तैसै अनेक राजावोंके मध्य बैठा जो दशरथ ताकी ओर गई सो भावमाला तो पहिले ही डाली हुती अर द्रव्यरूप जो रत्नमाला सो भी लोकाचारके अर्थ दशरथके गलेमें डारी। तदि कैयक नृप जे न्यायवंत बैठे हुते ते प्रसन्न भए अर कहते भए कि जैसी कन्या थी वैसा ही योग्य वर पाया। अर कैयक विलखे होय अपने देश उठ गए। अर कैयक जे अति धीठ थे ते क्रोधायमान होय युद्धकूं उद्यमी भए, अर कहते भए जे बड़े बड़े वंशके उपजे अर महाऋद्धिकरि मंडित ऐसे नृप उनको तजकर यह कन्या नहीं जानिए कुल-शील जिसका ऐसा यह विदेशी उसे कैसे वरै, खोटा है अभिप्राय जाका ऐसी कन्या है इसलिए इस

विदेशीको यहांसे काढ़कर कन्याके केश पकड़ बलात्कार हरलो ऐसा कहकर वे दुष्ट कैयक युद्धकों उद्यमी भए। तदि राजा शुभमति अति व्याकुल होय दशरथकूं कहता भया हे भव्य ! मैं इन दुष्टनिकूं निवारूं हू तुम इस कन्याकों रथमें चढ़ाय अन्यत्र जावो जैसा समय देखिए तैसा करिए सर्व राजनीतिमें यह बात मुख्य है। या भांति जब ससुरने कह्या तदि राजा दशरथ अत्यंत धीर है बुद्धि जिनकी, हंसकर कहते भए हे महाराज ! आप निश्चिन्त रहो, देखो इन सबनिकों दशों दिशाकों भगाऊं ऐसा कहकर आप रथविषैं चढ़े और केकईकों चढाय लीनी। कैसा है रथ ? जाकैं महामनोहर अश्व जुडे हैं, कैसे हैं दशरथ ? मानों रथपर चढ़े शरदऋतुके सूर्य ही हैं। अर केकई घोड़ोंकी वाघ समारती भई। केकई कैसी है ? महापुरुषार्थके स्वरूपकूं धरैं युद्धकी मूर्ति ही है पतिसूं विनती करती भई, हे नाथ ? आपकी आज्ञा होय और जाकी मृत्यु उदय आई होय उसहीकी तरफ रथ चलाऊं ! तदि राजा कहते भये कि हे प्रिये ! गरीबनिके मारवेकर क्या जो इस सर्व सेनाका अधिपति हेमप्रभ है जाके सिरपर चंद्रमा सारिखा सफेद छत्र फिरैं है ताकी तरफ रथ चला। हे रणपण्डिते ! आज मैं इस अधिपतिहीकों मारूंगा। जब दशरथने ऐसा कह्या तदि वह पतिकी आज्ञा प्रमाण वाही ओर रथ चलावती भई। कैसा है रथ ! ऊंचा है सुफेद छत्र जाके, अर तरंगरूप है महाध्वजा जाके। रथविषैं ये दोनों दम्पती देवरूप विराजे हैं इनका रथ अग्नि समान है जे या रथकी ओर आए वे हजारों पतंगकी न्याई भस्म भए। दशरथके चलाए जे बाण तिनसे अनेक राजा बींधे गए सो क्षणमात्रमें भागे। तब हेमप्रभ जो सबनिका अधिपति था उसके प्रेरे अर लज्जावान होय दशरथसूं लड़वेकों हाथी घोड़ा रथ पयादोंसे मंडित आए, किया है शूरपनेका महा शब्द जिनने, तोमर जाति के हथियार बाण चक्र कनक इत्यादि अनेक जातिके शस्त्र अकेले दशरथ पर डारते भए। सो बड़ा आश्चर्य है दशरथ राजा एक रथका स्वामी था सो युद्ध समय मानो असंख्यात रथ होय गए अपने बाणनिकरि समस्त वैरियनिके बाण काट डाले अर आप जे बाण चलाए वे काहूकी दृष्टिमें न आए और शत्रुवोंके लागे सो राजा दशरथने हेमप्रभकों क्षणमात्रमें जीत लिया। ताकी ध्वजा छेदी, छत्र उड़ाया और रथके अश्व घायल किए, रथ तोड़ डाला, रथतैं नीचे डार दिया। तदि वह राजा हेमप्रभ और रथ पर चढ़ कर भयकर कंपायमान होय अपना यश काला कर शीघ्रही भाग्या। दशरथने आपको बचाया स्त्रीकूं बचाई अपने अश्व बचाए। वैरियोंके शस्त्र छेदे अर वैरियोंको भगाया। एक दशरथ अनंतरथ जसे काम करता भया। एक दशरथ सिंह समान उसको देख सर्व योधा सर्व दिशाकों हिरण समान होय भागे, अहो धन्य शक्ति या पुरुषकी अर धन्य शक्ति याकी ऐसा शब्द ससुरकी सेनामें और शत्रुवोंकी सेनामें सर्वत्र भया। अर वंदीजन विरद वखानते भए। राजा दशरथने महाप्रतापकूं धरैं कौतुकमंगल नगरविषैं केकईसूं पाणिग्रहण किया महामंगलाचार भया राजा केकईकों परणकर

अयोध्या आए और जनक भी मिथिलापुर गए। फिर इनका जन्मोत्सव और राज्याभिषेक विभूतिसे भया अर समस्त भय रहित इंद्र समान रमते भए।

अथानंतर सर्व रानियोंके मध्य राजा दशरथ केकईसूं कहते भये, हे चंद्रवदनी! तेरे मनमें जा वस्तुकी अभिलाषा होय सो मांग, जो तू मांगे सोई देऊं। हे प्राणप्यारी! तेरेसे मैं अति प्रसन्न भया हूं जो तू अति विज्ञानमे उस युद्धमें रथको न प्रेरती तो एकसाथ एते वैरी आए थे तिनको मैं कैसे जीतता, जब रात्रिको अन्धकार जगत में व्याप रह्या है जो अरुण सारिखा सारथी न होय तो उसे सूर्य कैसे जीतै। या भांति केकईके गुण वर्णन राजाने किए। तदि पति-व्रता लज्जाके भार कर अधोमुख होय गई। राजाने बहुरि कही वर मांग, तब केकईने वीनती करी हे नाथ! मेरा वर आपके धरोहर रहै जा समय मेरी इच्छा होयगी ता समय लूंगी। तब राजा प्रसन्न होय कहते भये हे कमलवदनी मृगनयनी श्वेतता श्यामता आरक्तता ये तीन वर्णको धरे अद्भुत हैं नेत्र याके, अद्भुत बुद्धि तेरी है महा नरपतिकी पुत्री अति नयकी वेत्ता सर्वकलाकी पारगामिनी सर्व भोगोपभोगकी निधि तेरा वर मैं धरोहर राख्या, तू जब जो मांगेगी सो ही मैं दूंगा। अर सबही राजलोक केकईको देख हर्षको प्राप्त भए और चित्तमें चिंतवते भए यह अद्भुत बुद्धिनिधान है सो कोई अपूर्व वस्तु मांगेगी, अल्प वस्तु कहा मांगे।

अथानंतर गौतमस्वामी श्रेणिकसे कहे हैं हे श्रेणिक! लोकका चरित्र मैं तुझे संक्षेपताकर कह्या। जो पापी दुराचारी हैं वे नरक-निगोदके परम दुःख पावै हैं अर जे धर्मात्मा साधुजन हैं वे स्वर्ग मोक्षमें महा सुख पावै है। भगवानकी आज्ञाके अनुसार बड़े सत्पुरुषनिके चरित्र तुझे कहे, अब श्रीरामचंद्रकी उत्पत्ति सुन। कैसे हैं श्रीरामचंद्रजी? महा उदार प्रजाके दुखहरणहारे महान्यायवंत महा धर्मवंत महा विवेकी महा शूरवीर महा ज्ञानी इक्ष्वाकुवंशका उद्योत करणहारे बड़े सत्पुरुष हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै रानी केकईकूं राजा दशरथका वरदान कथन वर्णन करनेवाला चौबीसवा पर्व पूर्ण भया॥ २४॥

पच्चीसवां पर्व

[राम लक्ष्मण आदि चारों भाईयोंका जन्म और विद्याभ्यास]

अथानंतर जाहि अपराजिता कहै हैं ऐसी जो कौशल्या सो रत्नजड़ित महलविषैं महासुंदर सेज पर सूती थी सो रात्रिके पिछले पहर अतिशयकरि अद्भुत स्वप्न देखती भई। उज्ज्वल हस्ती इंद्रके ऐरावत हस्तीसमान १ महाकेसरी सिंह ५ अर सूर्य ३ तथा सवकलापूर्ण

चंद्रमा ४ ये पुराण पुरुषोंके गर्भमें आवनेके अद्भुत स्वप्न देख आश्चर्यको प्राप्त भई। फिर प्रभातके वादित्र और मंगल शब्द सुनकर सेजसे उठी, प्रभात क्रियासे निवृत्त भई। स्वप्नें देखने करि हर्षकूं प्राप्त भया है मन जाका विनयवंती सखीजन-मंडित भरतारके समीप जाय सिंहासन पर बैठी। कैसी है राणी? सिंहासनको शोभित करणहारी,हाथ जोड़ नम्रीभूत होय महामनोहर स्वप्ने जे देखे तिनका वृत्तांत स्वामीसूं कहती भई। तदि समस्त विज्ञानके पारगामी राजा स्वप्ननिका फल कहते भए–हे कांते! परम आश्चर्यकारी तेरे मोक्षगामी पुत्र अंतर बाह्य शत्रुवोंका जीतनहारा महा-पराक्रमी होयगा। रागद्वेष मोहादिक अंतरंग शत्रु कहिये, अर प्रजाके बाधक दुष्ट भूपति बहिरंग शत्रु कहिए। या भांति राजा कही तदि राणी अति हर्षित होय अपने स्थानक गई, मंद मुलकन रूप जो केश उनमे संयुक्त हैं मुखकमल जाका। अर राणी केकई पतिसहित श्रीजिनेंद्रके जे चैत्यालय तिनमें भाव-संयुक्त महापूजा करावती भई सो भगवानकी पूजाके प्रभावसैं राजाका सर्व उद्वेग मिटा चित्तमें महा शांति होती भई।

अथानंतर राणी कौशल्याके श्रीरामका जन्म भया। राजा दशरथने महा उत्सव किया, छत्र चमर सिंहासन टार बहुत द्रव्य याचकनिकों दिए, उगते सूर्यसमान है वर्ण रामका, कमल समान हैं नेत्र और लक्ष्मीसे आलिंगित है वक्षस्थल जाका, तातैं माता पिता सर्व कुटुंबने इनका नाम पद्म धरा। फिर राणी सुमित्रा अति सुंदर है रूप जाका सो महा शुभ स्वप्न अवलोकन कर आश्चर्यको प्राप्त होती भई। वे स्वप्न कैसे, सो सुनो--एक बड़ा केहरी सिंह देख्या, लक्ष्मी और कीर्ति बहुत आदरसे सुंदर जलके भरे कलश कमलसे ढके उनसे स्नान करावैं हैं और आप सुमित्रा बड़े पहाड़के मस्तकपर बैठी हैं अर समुद्र पर्यंत पृथिवीकों देखै है अर दैदीप्यमान है किरणनिके समूह जाके ऐसा सूर्य देख्या। अर नाना प्रकारके रत्ननिकरि मंडित चक्र देख्या। ये स्वप्न देख प्रभातके मंगलीक शब्द भए। तब सेजसे उठकर प्रात:क्रियाकर बहुत विनयसंयुक्त पतिके समीप जाय मिष्टवाणीकरि स्वप्ननिका वृत्तांत कहती भई। तदि राजा कही हे वरानने! कहिए सुंदर है वदन जाका, तेरे पृथिवीपर प्रसिद्ध पुत्र होयगा, शत्रुवोंके समूहका नाश करन-हारा महातेजस्वी आश्चर्यकारी है चेष्टा जाकी ऐसा पतिने कहा तदि वह पतिव्रता हर्षकरि भरया है चित्त जाका अपने स्थानक गई,सर्व लोकनिकों अपने सेवक जानती भई। फिर याके परमज्योति-का धारी पुत्र होता भया मानो रत्नोंकी खानविषैं रत्न ही उपज्या सो जैसा श्रीरामके जन्मका उत्सव किया हुता तैसा ही उत्सव भया। जा दिन सुमित्राके पुत्रका जन्म भया ताही दिन रावणके नगरविषैं हजारों उत्पात होते भए, अर हितुवोंके नगरविषैं शुभ शकुन भए। इंदीवर कमल समान श्यामसुंदर अर कांतिरूप जलका प्रवाह भले लक्षणनिका धरणहारा तातैं माता पिताने लक्ष्मण नाम धरया। राम लक्ष्मण ये दोऊ बालक महामनोहर रूप मूंगा समान हैं लाल होंठ

जिनके अर लाल कमल समान हैं कर अर चरण जिनके, माखनहूतैं अतिकोमल है शरीरका स्पर्श जिनका, अर महासुगंध शरीर ये दोऊ भाई बाललीला करते कौनके चित्तकूं न हरैं ? चंदनकरि लिप्त है शरीर जिनका, केसरका तिलक किए कैसैं सोहै हैं मानों विजयार्धगिरि अर अंजनगिरि ही हैं। स्वर्णके रससे लिप्त है शरीर जिनका, अनेक जन्मका बढ़ा जो स्नेह तातैं परम स्नेहरूप चंद्र सूर्य समान ही हैं। महल मांही जावें तब तो सर्व स्त्रीजनकों अतिप्रिय लागैं। अर बाहिर आवैं तब सर्व जननिकों प्यारे लागैं। जब ये वचन बोलैं तब मानों जगतकों अमृतकर सींचें हैं, अर नेत्रनिकर अवलोकन करैं हैं तब सबनिकों हर्षकरि पूर्ण करैं हैं, सबनिके दारिद्र हरणहारे सबके हितु सबके अंतःकरण पोषणहारे मानों ये दोऊ हर्षकी अर शूरवीरताकी मूर्ति ही हैं, अयोध्यापुरीविषैं सुखसूं रमते भए। कैसे हैं दोनों कुमार ? अनेक सुभट करैं हैं सेवा जिनकी, जैसें पहले बलभद्र विजय अर वासुदेव त्रिपृष्ट होते भए तिन समान है चेष्टा जिनकी। बहुरि केकईकै दिव्यरूपका धरणहारा महाभाग्य पृथिवीविषैं प्रसिद्ध भरत नामा पुत्र भया। बहुरि सुप्रभाकै सर्व लोकमें सुंदर शत्रुवोंका जीतनहारा शत्रुघ्न ऐसा नाम पुत्र भया। अर रामचंद्रका नाम पद्म तथा बलदेव, अर लक्ष्मणका नाम हरि अर वासुदेव, अर अर्द्धचक्री भी कहै हैं, एक दशरथकी जो चार राणी सो मानों चार दिशा ही हैं तिनके चार ही पुत्र समुद्र समान गंभीर पर्वत समान अचल जगतके प्यारे, इन चारों ही कुमारनिका पिता विद्या पढ़ावनेके अर्थि योग्य पाठकको सौंपते भए।

अथानंतर कांपिल्य नामा नगर अतिसुंदर, तहां एक शिवी नामा ब्राह्मण, ताकी इषु नामा स्त्री, ताके अरि नामा पुत्र, सो महा अविवेकी अविनई माता पिताने लड़ाया सो महा कुचेष्टाका धरणहारा हजारों उलहनोंका पात्र होता भया, यद्यपि द्रव्यका उपार्जन, धर्मका संग्रह, विद्याका ग्रहण, वा नगरमें ये सब ही बातें सुलभ हैं परन्तु याकों विद्या सिद्ध न भई। तदि माता पिता विचारी विदेशमें याहि सिद्धि होय, यह विचार खेद खिन्न होय घरतैं निकास दिया, सो महा दुखी होय केवल वस्त्र याके पास सो यह राजगृह नगरमें गया। तहां एक वैवस्वत नामा धनुर्विद्याका पाठी महा पण्डित, ताके हजारों शिष्य विद्याका अभ्यास करैं, ताकै निकट ये अरि यथार्थ धनुषविद्याका अभ्यास करता भया सो हजारों शिष्यनिविषैं यह महा प्रवीण होता भया। ता नगरका राजा कुशाग्र सो ताके पुत्र भी वैवस्वतके निकट बाणविद्या पढ़ै सो राजाने सुनी कि एक विदेशी ब्राह्मणका पुत्र आया है जो राजपुत्रनितैंहू अधिक बाणविद्याका अभ्यासी भया सो राजा मनमें रोष किया। जब यह बात वैवस्वतने सुनी तब अरिकौ समझाया कि तू राजाके निकट मूर्ख होय जा, विद्या मत प्रकाशै, सो राजाने धनुषविद्याके गुरुकों बुलाया जो मैं तेरे सर्व शिष्यनिकी विद्या देखूंगा तब सब शिष्यनिकों लेयकर गया। सर्व ही शिष्योंने यथायोग्य

अपनी अपनी बाणविद्या दिखाई, निशाने वींधे, ब्राह्मणका जो पुत्र अरि, ताने ऐसे बाण चलाए सो विद्यारहित जाना गया। तब राजाने जानी, याकी प्रशंसा काहूने झूठी कही। तब वैवस्वतकों सर्व शिष्यनि सहित सीख दीनी तब अपने घर आया वैवस्वतने अपनी पुत्री अरिको परणाय विदा किया। सो रात्रि ही पयाणकर अयोध्या आया। राजा दशरथसों मिल्या अपनी बाणविद्या दिखाई। तब राजा प्रसन्न होय अपने चारों पुत्र बाणविद्या सीखनेकों याके निकट राखे। ते बाणविद्याविषैं अतिप्रवीण भए जैसैं निर्मल सरोवरमें चंद्रमाकी कांति विस्तारकों प्राप्त होय तैसैं इनविषैं बाणविद्या विस्तारको प्राप्त भई। और और भी अनेक विद्या गुरुसंयोगतैं-तिनकों सिद्ध भई जैसैं काहू ठौर रत्न मिले होवें अर ढकनेसे ढके होवें सो ढकना उघाड़े प्रकट होय तैसैं सर्व विद्या प्रगट भई। तब राजा अपने पुत्रनिकूं सर्व शास्त्रविषैं अति प्रवीणता देख अर पुत्रोंका विनय उदार चेष्टा अवलोकन कर अतिप्रसन्न भया। इनके सर्व विद्यावोंके गुरुवोंकी बहुत सन्मानता करी। राजा दशरथ गुणोंके समूहसे युक्त, महा ज्ञानीने जो उनकी वांछा हुती तातैं अधिक संपदा दीनी, दानविषैं विख्यात है कीर्ति जाकी। केतेक जीव शास्त्रज्ञानकों पायकर परम उत्कृष्टताकों प्राप्त होय हैं, अर कैएक जैसेके तैसे ही रहे हैं, अर कैयक विषम कर्मके योगतैं मदकरि आंधे होय हैं जैसैं सूर्यकी किरण स्फटिकगिरिके तटविषैं अति प्रकाशकों धरै है, और स्थानकविषैं यथास्थित प्रकाशको धरै है अर उल्लुवोंके समूहमें अति तिमिररूप होय परणवै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं चारि भाईनिके जन्मका वर्णन करनेवाला पच्चीसवां पर्व पूर्ण भया ॥२५॥

छब्बीसवां पर्व

[राजा जनकके भामंडल और सीताकी उत्पत्ति]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहैं हैं हे श्रेणिक! अब जनकका कथन सुनहु। राजा जनककी स्त्री विदेहा ताहि गर्भ रह्या सो एक देवके यह अभिलाषा हुई कि जो याके बालक होय सो मैं ले जाऊं। तब श्रेणिकने पूछी हे नाथ! वा देवके ऐसी अभिलाषा काहेतैं उपजी सो मैं सुना चाहूं। तदि गौतमस्वामी कहते भए हे राजन्! चक्रपुरनामा एक नगर है तहां चक्र-ध्वज नामा राजा ताके रानी मनस्विनी तिनके पुत्री चित्तोत्सवा सो कुवांरी चटशालामें पढ़ै। अर राजाका पुरोहित धूम्रकेश ताके स्वाहा नामा स्त्री ताका पुत्र पिंगल सो भी चटशालामें पढ़ै। सो चित्तोत्सवाका अर पिंगलका चित्त मिल गया सो इनकूं विद्याकी सिद्धि न भई, जिनका मन कामबाणकरि बेध्या जाय तिनकूं विद्या अर धर्मकी प्राप्ति न होय है। प्रथम स्त्री पुरुष संसर्ग होय, बहुरि प्रीति उपजे, प्रीतितैं परस्पर अनुराग बढ़ै, बहुरि विश्वास उपजै, ताकरि विकार उपजै

जैसैं हिंसादिक पंच पापनिकरि अशुभकर्म बंधै तैसैं स्त्रीसंगतैं काम उपजै है।

अथानंतर वह पापी पिंगल चित्तोत्सवाकूं हर ले गया जैसे कीर्तिकों अपयश हर ले जाय, जब दूर देशनिविषैं हर ले गया तदि सब कुटुम्बके लोकनि जानी, अपने प्रमादके दोषकरि ताने वह हरी है जैसैं अज्ञान सुगतिकों हरै तैसैं वह पिंगल कन्याकूं चोरीकरि हर ले गया। परन्तु धनरहित शोभै नाहीं जैसैं लोभी धर्म वर्जित तृष्णाकरि न सोहै। सो यह विदग्ध नगरमें गया तहां अन्य राजानिकी गम्यता नाहीं, सो निर्धन नगरके बाहिर कुटी बनायकर रह्या ता कुटीके किवाड़ नाहीं अर यह ज्ञान विज्ञान रहित तृण-काष्ठादिका संग्रहकर विक्रयकर उदर भरै, दारिद्रके सागरमें मग्न सो स्त्रीका अर आपका उदर महाकठिनतासूं भरै। तहां राजा प्रकाशसिंह अर रानी प्रवरावलीका पुत्र जो राजा कुण्डलमण्डित सो याकी स्त्रीकूं देख शोषण संतापन उच्चाटन वशीकरण मोहन ये कामके पंच बाण इनकरि बंध्या गया। ताने रात्रिकों दूती पठाई सो चित्तोत्सवाको राजमंदिरमें ले गई जैसैं राजा सुमुखके मंदिरविषैं दूती वनमालाको ले गई हुती सो कुण्डलमंडित वासहित सुखसूं रमै।

अथानंतर वह पिंगल काष्ठका भार लेकर घर आया सो सुन्दरीकूं न देख अतिकष्टके समुद्रमें डूबा, विरहकरि महा दुखित भया, काहू ठौर सुख न पावै चक्रविषै आरूढ़ समान याका चित्त व्याकुल भया, हरी गई है भार्या जाकी ऐसा जो यह दीन ब्राह्मण सो राजापै गया अर कहता भया—हे राजन्! मेरी स्त्री तिहारे राजमें चोरी गई, जे दरिद्री आर्तिवंत भयभीत स्त्री वा पुरुष उनका राजा ही शरण है, तब राजा धूर्त सो राजाने मन्त्रीकों बुलाय झूठमूठ कहा याकी स्त्री चोरी गई है ताहि पैदा करो, ढील मत करो, तब एक सेवकने नेत्रोंकी सैन मार कर झूठ कहा—हे देव! मैं या ब्राह्मणकी स्त्री पोदनापुरके मार्गमें पथिकनिके साथ जाती देखी सो आर्यिकानिके मध्य तप करवेको उद्यमी है तातैं हे ब्राह्मण! तू ताहि लाया चाहे तो शीघ्र ही जा, ढील काहेकों करै। ताका अवार दीक्षा धरनेका समय कहां, तरुण है शरीर जाका अर महा श्रेष्ठ स्त्रीके गुणनिसे पूर्ण है ऐसा जब झूठ कहा तब ब्राह्मण गाढ़ी कमर बांध शीघ्र वाकी ओर दौड्या, जैसे तेज घोड़ा शीघ्र दौड़े। सो पोदनापुरमें चैत्यालय तथा उपवनादि वनमें सर्वत्र ढूंढी, काहू ठौर न देखी। तब पाछा विदग्ध नगरमें आया, सो राजाकी आज्ञातैं क्रूर मनुष्योंने गलहटा देय लष्टमुष्टि प्रहार कर दूर किया, ब्राह्मण स्थानभ्रष्ट भया क्लेश भोगा, अपमान लहा, मार खाई। एते दुःख भोग कर दूर देशांतर उठ गया, सो प्रिया विना याकों किसी ठौर सुख नाहीं जैसैं अग्निमें पड़ा सर्प धूंसै तैसैं यह रात दिन धूंसता भया, विस्तीर्ण कमलनिका वन याहि दावानल समान दीखै अर सरोवर अवगाह करता विरहरूप अग्निसे बलै। या भांति यह महा दुखी पृथिवीविषैं भ्रमण करै। एक दिन नगरसे दूर वनमें मुनि देखे। मुनिका नाम आर्यगुप्ति, बड़े

आचार्य तिनके निकट जाय हाथ जोड़ नमस्कार कर धर्म श्रवण करता भया, धर्म श्रवण कर याको वैराग्य उपजा महा शांतचित्त होय जिनेंद्रके मार्गकी प्रशंसा करता भया। मनमें विचारै है अहो यह जिनराजका मार्ग परम उत्कृष्ट है। मैं अंधकारमें पड़ा हुता सो यह जिनधर्मका उपदेश मेरे घटमें सूर्य समान प्रकाश करता भया। मैं अब पापोंका नाश करणहारा जो जिनशासन ताका शरण लेऊं, मेरा मन और तन विरहरूप अग्निमें जरै है सो मैं शीतल करूं, तब वह गुरुकी आज्ञातैं वैराग्यकों पाय परिग्रहका त्याग कर दिगम्बरी दीक्षा धरता भया, पृथिवी पर विहार करता सर्व संगका परित्यागी नदी पर्वत मसान वन उपवनोंमें निवास करता तपकर शरीरका शोषण करता भया। जाके मनको वर्षाकालमें अति वर्षा भई तो भी खेद न उपज्या और शीतकालमें शीत वायुकरि जाका शरीर न कांपा और ग्रीष्म ऋतुमें सूर्यकी किरण कर व्याकुल न भया। याका मन विरहरूप अग्निकर जला हुता सो जिनवचनरूप जलकी तरंगकरि शीतल भया। तपकर शरीर अर्धदग्ध वृक्षके समान होय गया।

विदग्धपुरका राजा जो कुंडलमंडित ताकी कथा सुनहु-राजा दशरथके पिता अनरण्य अयोध्यामें राज्य करै सो यह कुंडलमंडित पापी गढ़के बलकर अनरण्यके देशकों विराधै जैसे कुशील पुरुष मर्यादा लोप करै तैसैं यह ताकी प्रजाको बाधा करै। राजा अनरण्य बड़ा राजा ताके बहुत देश सो याने कैयक देश उजाड़े। जैसे दुर्जन गुणोंको उजाड़ै। अर राजाके बहुत सामंत विराधे जैसैं कषाई जीवनिके परिणाम विराधैं। अर योगी कषायोंका निग्रह करै तैसैं याने राजासे विरोध कर अपने नाशका उपाय किया। सो यद्यपि यह राजा अनरण्यके आगे रंक है तथापि गढ़के बलसे पकड़ा न जाय जैसैं मूसा पहाड़के नीचे जो बिल तामें बैठ जाय तब नाहर क्या करै। सो राजा अनरण्यको या चिंतासें रात दिन चैन न पड़ै। आहारादिक शरीरकी क्रिया अनादरसे करै। तब राजाका बालचंद्रनामा सेनापति सो राजाको चिंतावान् देख पूछता भया—हे नाथ! आपको व्याकुलताका कारण कहा? जब राजाने कुंडलमंडितका वृत्तांत कहा। तब बालचंद्रने राजासे कही आप निश्चिंत होवो, उस पापी कुंडलमंडितको बांधकर आपके निकट ले आऊं। तब राजाने प्रसन्न होय बालचंद्रको विदा किया। चतुरंग सेना ले बालचंद्र सेनापति चढ्या सो कुंडलमंडित मूर्ख चित्तोत्सवासे आसक्तचित्त सर्व राज्यचेष्टारहित महाप्रमादमें लीन था, नहीं जाना है लोकका वृत्तांत जाने वह कुंडलमंडित नष्ट भया है उद्यम जाका सो बालचंद्रने जायकर क्रीडामात्रमें जैसा मृगको बांधे तैसे बांध लिया अर उसके सर्व राज्यमें राजा अनरण्यका अधिकार किया अर कुंडलमंडितकों राजा अनरण्यके समीप लाया। बालचंद्र सेनापतिने राजा अनरण्यका सर्व देश बाधा रहित किया, राजा सेनापतिसे बहुत हर्षित भया अर बहुत बधारा अर पारितोषिक दिये। अर कुंडलमंडित अन्यायमार्गतैं राज्यसे भ्रष्ट भया हाथी घोड़े रथ पयादे सब गए,

शरीरमात्र रह गया, पयादे फिरें सो महादुखी पृथ्वीपर भ्रमण करता खेदखिन्न भया, मनमें बहुत पछतावै जो मैं अन्यायमार्गीने बड़ोंसे विरोधकर बुरा किया । एक दिन यह मुनियोंके आश्रम जाय आचार्यकों नमस्कारकर भावसहित धर्मका भेद पूछता भया । गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै है हे राजन्! दुखी दरिद्री कुटुम्बरहित व्याधिकरि पीड़ित तिनमैं काहू एक भव्यजीवके धर्म बुद्धि उपजै है । ताने आचार्यसूं पूछा-हे भगवन्! जाकी मुनि होनेकी शक्ति न होय सो गृहस्थाश्रममें कैसे धर्मका साधन करै ? आहार भय मैथुन परिग्रह यह चार संज्ञा तिनमें तत्पर यह जीव कैसें पापनिकरि छूटै सो मैं सुना चाहू हू आप कृपाकर कहो । तब गुरु कहते भये, धर्म जीवदयामई है—ये सर्व प्राणी अपनी निंदाकर अर गुरुनिके पास आलोचनाकर पापतैं छूटै हैं । तू अपना कल्याण चाहै है अर शुद्ध धर्मकी अभिलाषा करै है तौ हिंसाका कारण महाघोर कर्म लहू अर वीर्यसे उपजा ऐसा जो मांस ताका भक्षण सर्वथा तज । सर्व ही संसारी जीव मरणतैं डरै हैं । तिनके मांसकर जे अपने शरीरकों पोखैं हैं ते पापी निःसंदेह नरकमें पड़ेंगे । जे मांसका भक्षण करै हैं अर नित्य स्नान करै हैं तिनका स्नान वृथा है । अर मूड़ मुड़ाय भेष लिया सो भेष भी वृथा है । अर अनेक प्रकारके दान उपवासादिक यह मांसाहारीकों नरकसे नाहीं बचा सकै है । या जगतमें ये सर्व ही जातिके जीव पूर्वजन्ममें या जीवके बांधव भए हैं तातैं जो पापी मांसका भक्षण करै हैं ताने तो सर्व बांधव भखे । जो दुष्ट निर्दई मच्छ मृग पक्षि-योंको हनै हैं अर मिथ्यामार्गमें प्रवर्तै हैं सो मधु-मांसके भक्षणतैं महाकुगतिविषैं जावैं है । यह मांस वृक्षनितें नाहीं उपजै है, भूमितें नाहीं उपजै है अर कमलकी न्याई जलसे नाहीं निपजै है अथवा अनेक वस्तूनिके योगतैं जैसैं औषधि बनै है तैसें मांसकी उत्पत्ति नाहीं होय है, दुष्ट जीव निर्दयी वा गरीब बड़ा वल्लभ है जीतव्य जिनको ऐसे पक्षी मृग मत्स्यादिक तिनको हन कर मांस उपजावै हैं सो उत्तम जीव दयावान नाहीं भखैं हैं । अर जिनके दुग्धकरि शरीर वृद्धिकों प्राप्त होय ऐसी गाय भैंस छेरी तिनके मृतक शरीरको भखै हैं अथवा मार मारकर भखे हैं तथा तिनके पुत्र पौत्रादिककों भखैं हैं ते अधर्मी महा नीच नरक-निगोदके अधिकारी हैं जो दुरा-चारी मांस भखै हैं ते माता पिता पुत्र मित्र सहोदर सर्व ही भखैं । या पृथ्वीके तले भवनवासी अर व्यंतर देवनिके निवास हैं अर मध्यलोकमें भी हैं ते दुष्ट कर्मके करनहारे नीच देव हैं जो जीव कषाय सहित तापस होय हैं ते नीच देवनिमें निपजै हैं । पातालमें प्रथम ही रत्नप्रभा पृथ्वी ताके तीन भाग, तिनमें खर अर पंक भागमें तो भवनवासी अर व्यंतर देवनिके निवास हैं अर बहलभागमें पहिला नरक ताके नीचे छह नरक और हैं । ये सातों नरक छह राजूमें हैं अर सातवें नरकके नीचे एक राजूमें निगोदादि स्थावर ही हैं, त्रस जीव नाहीं हैं अर निगोदसे तीन लोक भरे हैं ।

अथानंतर नरकका व्याख्यान सुनहु—कैसे हैं नारकी जीव ? महाक्रूर, महाकुशब्द बोलनहारे, अति कठोर है स्पर्श जाका, महा दुर्गन्ध अन्धकाररूप नरकमें पड़े हैं, उपमारहित जे दुःख तिनका भोगनहारा है शरीर जिनका, महा भयंकर नरक ताहि कुम्भीपाक कहिए जहां वैतरणी नदी है अर तीक्ष्ण कंटकयुक्त शाल्मलीवृक्ष जहां असिपत्रवन तीक्ष्ण खड्गकी धारा समान है पत्र जिनके, अर जहां देदीप्यमान अग्निसे तप्तायमान तीखे लोहेके कीले निरंतर हैं। उन नरकनिमें मधु-मांसके भक्षणहारे अर जीवनिके मारणहारे निरंतर दुख भोगैं हैं। जहां एक आध अंगुल मात्र भी क्षेत्र सुखका कारण नाहीं। अर एकपलकोभी नारकियोंको विश्राम नाहीं। जो चाहैं कि कहूँ भाजकर छिप रहें तो जहां जांय तहां ही नारकी मारैं। अर असुरकुमार पापी देव बताय देय। महाप्रज्वलित अंगार-तुल्य जो नरककी भूमि ताविषैं पड़े ऐसे विलाप करैं जैसें अग्निमें मत्स्य व्याकुल हुआ विलाप करै। अर भयसे व्याप्त काहू प्रकार निकस कर अन्य ठौर गया चाहैं तो तिनको शीतलता निमित्त और नारकी वैतरणी नदीके जलसे छांटे देय सो वैतरणी महादुर्गंध क्षारजलकी भरी ताकरि अधिक दाहकों प्राप्त होंय। बहुरि विश्रामके अर्थ असिपत्रवनमें जांय सो असिपत्र सिरपर पड़े मानों चक्र खड्ग गदादिक हैं तिनकरि विदारे जावें छिद गए हैं नासिका कर्ण कंधा जंघा आदि शरीरके अंग जिनके, नरकमें महा विकराल महा दुखदाई पवन है। अर रुधिरके कण वरसैं हैं जहां घानिमें पेलिए हैं अर क्रूर शब्द होय हैं तीक्ष्ण शूलोंसे भेदिए है महा विलापके शब्द करैं हैं अर शाल्मली वृक्षनिसे घसीटिए हैं अर महा मुद्गरोंके घातसे कूटिए हैं। अर जब तिसाए होय हैं तब जलकी प्रार्थना करैं हैं तब उन्हें तांवा गलाकर प्यावैं हैं तातैं देह महा दग्धायमान होय है ताकर महादुखी होय हैं अर कहैं हैं। कि हमें तृषा नाहीं तो पुनि बलात्कार इनको पृथ्वीपर पछाड़ कर ऊपर पग देय संडासियोंसे मुख फाड़ ताता तांवा प्यावैं हैं तातैं कंठ भी दग्ध होय हैं अर हृदय भी दग्ध होय है। नारकियोंको नारकीनिका अनेक प्रकारका परस्पर दुःख तथा भवनवासी देव जे असुरकुमार तिनकरि करवाया दुःख सो कौन वर्णन कर सके। नरकमें मद्य-मांसके भक्षणसे उपजा जो दुःख ताहि जानकर मद्य-मांसका भक्षण सर्वथा तजना। ऐसे मुनिके वचन सुन नरकके दुखसे डरा है मन जाका, ऐसा जो कुंडलमंडित सो बोला--हे नाथ ! पापी जीव तो नरक हीके पात्र हैं, अर जे विवेकी सम्यग्दृष्टि श्रावकके व्रत पालैं हैं तिनकी कहा गति है ? तब मुनि कहते भए जे दृढव्रत सम्यग्दृष्टि श्रावकके व्रत पालैं हैं ते स्वर्ग-मोक्षके पात्र होय हैं औरहू जे जीव मद्य मांस शहतका त्याग करैं हैं ते भी कुगतिसे बचैं हैं जे अभक्ष्यका त्याग करैं हैं सो शुभगति पावैं हैं। जो उपवासादिक रहित हैं अर दानादिक भी नाहीं बनैं हैं परंतु मद्य-मांसके त्यागी हैं तो भले हैं। अर जो कोई शीलव्रत मंडित है अर जिनशासनका सेवक है अर श्रावकके व्रत पालै

है ताका कहा पूछना ? सो तो सौधर्मादि स्वर्गमें उपजै ही है । अहिंसाव्रत धर्मका मूल कहा है, अहिंसा मांसादिकके त्यागीके अत्यंत निर्मल होय है । जे म्लेच्छ अर चांडाल हैं अर दयावान होवें हैं ते मधु मांसादिकका त्याग करै हैं सो भी पापनिसे छूटै हैं, पापनिकरि छूटा हुआ पुण्यको ग्रहै है अर पुण्यके बंधनसे देव अथवा मनुष्य होय है अर जो सम्यग्दृष्टि जीव हैं सो अणुव्रतको धारण कर देवोंका इंद्र होय परम भोगोंको भोगै हैं बहुरि मनुष्य होय मुनिव्रत धर मोक्षपद पावै हैं । ऐसे आचार्यके वचन सुनकर यद्यपि कुंडलमंडित अणुव्रतके धारनेमें शक्तिरहित है तो भी सीस नवाय गुरूनिकूं सविनय नमस्कारकर मद्य-मांसका त्याग करता भया, अर समीचीन जो सम्यग्दर्शन ताका शरण ग्रहा, भगवानकी प्रतिमाको नमस्कार अर गुरुवोंको नमस्कारकर देशांतरको गया । मनमें ऐसी चिंता भई कि मेरा मामा महापराक्रमी है सो निश्चय सेती मुझे खेदखिन्न जान मेरी सहायता करेगा । मैं बहुरि राजा होय शत्रूनिकों जीतूंगा । ऐसी आशा धर दक्षिणदिशा जायवेकों उद्यमी भया सो अति खेदखिन्न दुखसे भरा धीरा २ जाता हुता सो मार्गमें अत्यन्त व्याधि वेदनाकर सम्यक्तरहित होय मिथ्यात्वगुणठाने मरणकों प्राप्त भया । कैसा है मरण ? नाहीं है जगतमें उपाय जाका सो जिससमय कुंडलमंडितके प्राण छूटे सो राजा जनककी स्त्री विदेहाके गर्भमें आया ताही समय वेदवतीका जीव जो चित्तोत्सवा भई हुती सो भी तपके प्रभावकरि सीता भई सो हू विदेहाके गर्भमें आई । ये दोनों एक गर्भमें आए अर वह पिंगल ब्राह्मण जो मुनिव्रत धर भवनवासी देव भया हुता सो अवधिकर अपने तपका फल जान बहुरि विचारता भया कि वह चित्तोत्सवा कहां, अर वह पापी कुंडलमंडित कहां, जाकरि मैं पूर्वभवमें दुख अवस्थाकों प्राप्त भया, अब वे दोनों राजा जनककी स्त्रीके गर्भमें आए हैं सो वह तो स्त्रीकी जाति पराधीन हुती । उस पापी कुंडलमंडितने अन्याय मार्ग किया सो यह मेरा परम शत्रु है जो गर्भमें विराधना करूं तो रानी मरणको प्राप्त होय सो यासैं मेरा वैर नाहीं । तातैं जब यह गर्भतैं बाहिर आवै तब मैं याहि दुख दूं ऐसा चितवता हुआ पूर्वकर्मके वैरकरि क्रोधायमान जो देव सो कुंडलमंडितके जीवपर हाथ मसले ऐसा जानकर सर्व जीवनिकूं क्षमा करनी, काहूकूं दुःख न देना, जो कोई काहूकूं दुःख देय है सो आपकों ही दुःखसागरमें डुबोवै है ।

अथानंतर समय पाय रानी विदेहाके पुत्र अर पुत्रीका युगल जन्म भया तब वह देव पुत्रको हरता भया सो प्रथम तो क्रोधके योगकरि ताने ऐसी विचारी कि मैं याहि शिलापर पटक मारूं । बहुरि विचारी कि धिक्कार है मोकूं, मैं ऐसा अनन्त संसारका कारण पाप चितया । बालहत्या समान और कोई पाप नाहीं । पूर्व भवमें मैं मुनिव्रत धरे हुते सो तृणमात्रका भी विराधन न किया सर्व आरंभ तजा, नाना प्रकार तप किए श्रीगुरुके प्रसादसे निर्मल धर्म पाय ऐसी विभूतिको प्राप्त भया । अब मैं ऐसा पाप कैसैं करूं ? अल्पमात्र भी पापकर महादुःखकी प्राप्ति होय है।

पापकरि यह जीव संसारवनविषैं बहुत काल दुखरूप अग्निमें जलै है। अर जो दयावान निर्दोष है भावना जाकी महा सावधानरूप है सो धन्य है, सुगति नामा रत्न वाके हाथमें है। वह देव ऐसा विचारकर दयावान होयकर बालककों आभूषण पहिराय काननिविषैं महा दैदीप्यमान कुण्डल घाले। पर्णलब्धि नामा विद्याकर आकाशतैं पृथिवीविषैं सुखकी ठौर पधराय आप अपने धाम गया। सो रात्रिके समय चंद्रगति नामा विद्याधरने या बालकको आभरणकी ज्योतिकर प्रकाशमान आकाश-से पड़ता देखा तब विचारी कि यह नक्षत्रपात भया, या विद्युत्पात भया, यह विचारकर निकट आय देखैं तो बालक है तब हर्षकर बालककों उठाय लिया अर अपनी रानी पुष्पवती जो सेजमें सूती हुती ताकी जांघोंके मध्य धर दिया। अर राजा कहता भया--हे राणी! उठो उठो तिहारे बालक भया है, बालक महाशोभायमान हैं। तब रानी सुंदर है मुख जाका, ऐसे बालककों देख प्रसन्न भई, जाकी ज्योतिके समूहकर निद्रा जाती रही, महाविस्मयकों प्राप्त होय राजाकों पूछती भई हे नाथ! यह अद्भुत बालक कौन पुण्यवती स्त्रीने जाया। तब राजाने कही--हे प्यारी तैंने जना, तो समान और पुण्यवती कौन है, धन्य है भाग्य तेरा, जाके ऐसा पुत्र भया। तब वह रानी कहती भई--हे देव मैं तो बांझ हू मेरे पुत्र कहा, एक तो मुझे पूर्वोपार्जित कर्मने ठगी बहुरि तुम कहा हास्य करो हो? तब राजाने कही हे देवी! तुम शंका मत करहु स्त्रियोंके प्रच्छन्न (गुप्त) भी गर्भ होय है। तब रानीने कही ऐसे ही होहु, परंतु याके मनोहर कुंडल कहांतैं आए, ऐसे भूमंडलमें नाहीं। तब राजाने कही हे राणी ऐसे विचारकर कहा? यह बालक आकाशसे पड़ा अर मैं झेला तुझे दिया। यह बड़े कुलका पुत्र है याके लक्षणनिकर जानिए है यह मोटा पुरुष है। अन्य स्त्री तो गर्भके भारकर खेदखिन्न भई है परंतु हे प्रिये! तैंनें याहि सुखसे पाया अर अपनी कुक्षिमें उपजा भी बालक जो माता पिताका भक्त न होय अर विवेकी न होय शुभ काम न करै तो ताकर कहा? कई एक पुत्र शत्रु समान परणवैं हैं तातैं उदरके पुत्रका कहा विचार? तेरे यह पुत्र सुपुत्र होयगा शोभनीक वस्तुमें सन्देह कहा? अब तुम या पुत्रको लेवो अर प्रसूतिके घर्में प्रवेशकर। अर लोकनिको यही जनवाना जो रानीके गुप्त गर्भ हुता सो पुत्र भया। तब राणी पतिकी आज्ञा-प्रमाण प्रसन्न होय प्रसूतिगृहविषैं गई, प्रभातविषैं राजाने पुत्रके जन्मका उत्सव किया। रथनूपुरमें पुत्रके जन्मका ऐसा उत्सव भया जो सर्व कुटुम्ब अर नगरके लोग आश्चर्यकों प्राप्त भए। रत्ननिके कुंडलकी किरणोंकर मंडित जो यह पुत्र सो माता पिताने याका नाम प्रभामण्डल धरा। अर पोषनेके निमित्त धायको सौंपा। सब अंतःपुरकी राणी आदि सकल स्त्री तिनके हाथरूप कमलनिका भ्रमर होता भया। भावार्थ—यह बालक सर्व लोकनिकों वल्लभ, बालक सुखसों तिष्ठै है, यह तो कथा यहां ही रही॥

अथानंतर मिथिलापुरीविषैं राजा जनककी रानी विदेहा पुत्रको हरा जान विलाप

करती भई, अति ऊंचे स्वरसूं रुदन किया सर्व कुटुंबके लोक शोकसागरमें पड़े। रानी ऐसे पुकारे मानों शस्त्रकर मारी है। हाय! हाय पुत्र! तुझे कौन ले गया, मोहि महादुखका करणहारा वह निर्दई कठोर चित्तके हाथ तेरे लेने पर कैसे पड़े? जैसे पश्चिम दिशाकी तरफ सूर्य आय अस्त होय जाय तैसें तू मेरे मंदभागिनीके आयकर अस्त होय गया। मैं हू परभवविषैं काहूका बालक विछोहा हुता सो मैं फल पाया, तातैं कभी भी अशुभ कर्म न करना। जो अशुभ कर्म है सो दुखका बीज है। जैसे बीज विना वृक्ष नाहीं तैसे अशुभ कर्म विना दुख नाहीं। जा पापीने मेरा पुत्र हरथा सो मोकूं ही क्यों न मार गया, अर्धमुईकर दुःखके सागरमें काहेको डुबो गया। या भांति रानी अति विलाप किया। तदि राजा जनक आय धैर्य बंधावते भये हे! प्रिये तू शोकको मत प्राप्त होहु तेरा पुत्र जीवै है काहू ने हरथा है सो तू निश्चय सेती देखेगी, वृथा काहेको रुदन करै है। पूर्व कर्मके भावकर गई वस्तु कोई तो देखिए कोई न देखिए, तू थिरताकों प्राप्त होहु। राजा दशरथ मेरा परम मित्र है सो वाकों यह वार्ता लिखू हू वह अर मैं तेरे पुत्रकूं तलाशकर लावेंगे, भले २ प्रवीण मनुष्य तेरे पुत्रके ढूढ़िवेकों पठावेंगे। या भांति कहकर राजा जनकने अपनी स्त्रीको संतोष उपजाय दशरथके पास लेख भेजा सो दशरथ लेख बांच महाशोकवंत भए, राजा दशरथ अर जनक दोऊननें पृथ्वीमें बालककों तलाश किया परंतु कहू देख्या नाहीं। तदि महाकष्टकर शोकको दाब बैठ रहे। ऐसा कोई पुरुष वा स्त्री नाहीं जो इस बालकके गए आंसुओं-कर भरे नेत्र न भया होय, सब ही शोकके वश होय रुदन करते भए।

अथानंतर प्रभामण्डलके गए या शोक भुलावनेकूं महामनोहर जानकी बाललीलाकर सर्व बंधुलोककूं आनंद उपजावती भई। महा हर्षकूं प्राप्त भई जो स्त्रीजन तिनकी गोदमें तिष्ठती अपने शरीरकी कांतिकर दशों दिशाकूं प्रकाशरूप करती वृद्धिकूं प्राप्त भई। कैसी है जानकी? कमल सारिखे हैं नेत्र जाके अर महासुकंठ प्रसन्न वदन मानो पद्मद्रहके कमलके निवाससे साक्षात् श्रीदेवी ही आई है, याके शरीररूप क्षेत्रविषैं गुणरूप धान्य निपजते भए। ज्यों २ शरीर बढ़ा त्यों त्यों गुण बढ़े। समस्त लोकनिकूं सुखदाता अत्यंत मनोज्ञ सुंदर लक्षणनिकर संयुक्त है अंग जाका, सीता कहिए भूमि ता समान क्षमाकी धरणहारी तातैं जगतविषै सीता कहाई। वदनकर जीत्या है चंद्रमा जाने, पल्लव समान है कोमल आरक्त हस्ततल जाके, महाश्याम महासुंदर इंद्रनीलमणि समान है केशनिके समूह जाका, अर जीती है मदकी भरी हंसिनीकी चाल जानैं, अर सुंदर भौंह जाकी, अर मौलश्रीके पुष्प समान मुखकी सुगंध, गुंजार करै हैं भ्रमर जापर, अति कोमल है पुष्पमाला समान भुजा जाकी अर केहरी समान है कटि जाकी, अर महा श्रेष्ठ रसका भरा जो केलिका थंभ ता समान है जंघा जाकी, स्थलकमल समान महामनोहर है चरण जाके, अर अतिसुंदर है कुचयुग्म जाका, अति शोभायमान है रूप जाका, महाश्रेष्ठ मंदिरके आंगन विषै महारमणीक सातसै

कन्याओंके समूहमें शास्त्रोक्त क्रीड़ा करै, जो कदाचित् इंद्रकी पटरानी शची वा चक्रवर्तीकी पटरानी सुभद्रा याके अंगकी शोभाकूं किंचित्मात्र भी धरै तो वे अति मनोज्ञरूप भासैं ऐसी यह सीता सबनितैं सुन्दर है, याकूं रूप गुणयुक्त देख राजा जनक विचारया, जैसै रति कामदेव हीके योग्य है तैसैं यह कन्या सर्व विज्ञानयुक्त दशरथके बड़े पुत्र जो राम तिनहीके योग्य है, सूर्यकी किरणके योगतैं कमलनिकी शोभा प्रकट होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै सीता प्रभामण्डलका जन्म वर्णन करनेवाला छब्बीसवां पर्व पूर्ण भया ॥२६॥

सत्ताईसवां पर्व

[राम लक्ष्मणद्वारा म्लेच्छ राजाकी पराजय]

अथानंतर राजा श्रेणिक यह कथा सुनकर गौतमस्वामीकों पूछता भया हे प्रभो! जनकने रामका कहा माहात्म्य देख्या जो अपनी पुत्री देनी विचारी? तब गणधर चित्तको आनंदकारी वचन कहते भए—हे राजन्! महा पुण्याधिकारी जो श्रीरामचन्द्र तिनका सुयश सुनि, जा कारणतैं जनक महा बुद्धिमान्ने रामकूं अपनी कन्या देनी विचारी। वैताढ्यपर्वतके दक्षिणभागविषैं अर कैलाश पर्वतके उत्तरभागविषैं अनेक अंतर देश बसै हैं तिनमें एक अर्द्धबरवर देश असंयमी जीवनिका है मान्य जहां महा मूढ़जन निर्दयी म्लेच्छ लोकनिकरि भरया ता विषै एक मयूरमाल नामा नगर कालके नगर समान महा भयानक, तहां आतरंगतम नामा म्लेच्छ राज्य करै सो महापापी दुष्टनिका नायक महा निर्दयी बड़ी सेनातैं नानाप्रकारके आयुधनिकर मण्डित सकल म्लेच्छ संग लेय आय देश उजाडनेकूं आए सो अनेक देश उजाडे। कैसे हैं म्लेच्छ? करुणाभाव--रहित प्रचंड हैं चित्त जिनके, अर अत्यंत है दौड़ जिनकी, सो जनक राजाका देश उजाड़नेकूं उद्यमी भए जैसैं टिड्डीदल आवै तैसैं म्लेच्छोंके दल आए सबकों उपद्रव करने लगे। तब राजा जनकने अयोध्याको शीघ्र ही मनुष्य पठाए, म्लेच्छके आवनेके सब समाचार राजा दशरथकूं लिखे सो जनकके जन शीघ्र ही जाय सकल वृत्तांत दशरथकूं कहते भए—हे देव! जनक वीनती करी है परचक्र भीलनिका आया सो सब पृथिवी उजाड़े है, अनेक आर्यदेश विध्वंस किए ते पापी प्रजाकूं एक वर्ण किया चाहें है सो प्रजा नष्ट भई तब हमारा जीवेकर कहा, अब हमको कहा कर्त्तव्य है? उनसे लड़ाई करना अथवा कोई गढ़ पकड़ तिष्ठें, लोकनिकूं गढमें राखें कालिन्दीभागा नदीकी तरफ विषमस्थल हैं कहां जावैं? अथवा विपुलाचलकी तरफ जावें, अथवा सर्व सेना सहित कुंजगिरिकी ओर जावें, परसेना महा भयानक आवै है। साधु श्रावक सर्वलोक अति विह्वल हैं ते पापी गौ

आदि सब जीवनिके भक्षक हैं सो जो आप आज्ञा देहु सो करैं। यह राज्य भी तिहारा और पृथिवी भी तिहारी, यहांकी प्रतिपालना सब तुमकूं कर्त्तव्य है। प्रजाकी रक्षा किए धर्मकी रक्षा होय है श्रावक लोक भावसहित भगवानकी पूजा करैं हैं, नाना प्रकारके व्रत धरैं हैं, दान करैं हैं शील पालैं हैं सामायिक करैं हैं पोषा पडिक्रमण करैं हैं, भगवानके बड़े बड़े चैत्यालय तिनविषैं महा उत्सव होय है, विधि पूर्वक अनेक प्रकार महा पूजा होय है, अभिषेक होय है विवेकी लोक प्रभावना करैं हैं अर साधु दशलक्षणधर्म कर युक्त आत्मध्यानमें आरूढ मोक्षका साधक तप करैं है सो प्रजाके नष्ट भए साधु अर श्रावकका धर्म लुप्त है। अर प्रजाके होते धर्म अर्थ काम मोक्ष सब सधैं हैं। जो राजा परचक्रतैं पृथिवीकी प्रतिपालना करै सो प्रशंसा के योग्य है। राजाके प्रजाकी रक्षातैं या लोक परलोकविषैं कल्याणकी सिद्धि होय है। प्रजा विना राजा नहीं अर राजा विना प्रजा नहीं, जीवदयामय धर्मका जो पालन करै सो इस लोक परलोकमें सुखी होय है। धर्म अर्थ काम मोक्ष की प्रवृत्ति लोकनिके राजाकी रक्षासे होय है अन्यथा कैसे होय ? राजाके भुजबलकी छाया पायकर प्रजा सुखसे रहै है जाके देशमें धर्मात्मा धर्म सेवन करै हैं दान तप शील पूजादिक करै हैं सो प्रजाकी रक्षा के योगतैं छठा अंश राजाकों प्राप्त होय है। यह सब वृत्तांत राजा दशरथ सुनकर आप चलनेकों उद्यमी भए अर श्रीरामको बुलाय राज्य देना विचारया। वादित्रनिके शब्द होते भए, सब मंत्री आए सब सेवक आए, हाथी-घोड़े रथ-पयादे सब आय ठाढे भए, जलके भरे स्वर्णमयी कलश सेवक लोग स्नानके निमित्त भर लाए, अर शस्त्र बांधकरि बड़े बड़े सामंत लोक आए। अर नृत्यकारिणी नृत्य करती भई। अर राजलोककी स्त्री जन नाना प्रकारके वस्त्र आभूषण पटलनिमें ले आई। यह राज्याभिषेकका आडंबर देखकर राम दशरथसूं पूछते भये कि हे प्रभो! यह कहा है! तब दशरथ कही – हे भद्र! तुम या पृथिवीकी प्रतिपालना कर, मैं प्रजाके हित निमित्त शत्रु-बनिके समूहतैं लड़ने जाऊं हू, वे शत्रु देवनिकरहू दुर्जय हैं। तदि कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके ऐसे श्रीराम कहते भए—हे तात! ऐसे रंकन पर एता परिश्रम कहा ? ते आपके जायबे लायक नाहीं, वे पशु समान दुरात्मा जिनसूं संभाषण करना उचित नाहीं तिनके सन्मुख युद्धकी अभिलाषाकर आप कहां पधारें। उन्दरू (चूहा) के उपद्रव कर हस्ती कहा क्रोध करै ? अर रूईके भस्म करवेके अर्थ अग्नि कहा परिश्रम करै ? तिनपर जायवेकी हमकूं आज्ञा देहु येही उचित है। ये रामके वचन सुन दशरथ अति हर्षित भए तदि रामकूं उरसूं लगाय कहते भए— हे पद्म! कमल समान हैं नेत्र जाके ऐसे तुम बालक सुकुमार अंग कैसें उन दुष्टनिकूं जीतोगे, यह बात मेरे मनमें न आवै। तब राम कहते भए हे तात! कहा तत्काल उपज्या अग्निकी कणिका मात्र हू विस्तीर्ण वनकों भस्म न करै ? करै ही करै, छोटी बड़ी अवस्थासूं कहा

प्रयोजन ? अर जैसैं अकेला ऊगता ही बालसूर्य घोर अंधकारकूं हरै ही है तैसैं हम बालक तिन दुष्टनिकूं जीतैं ही जीतें। ये वचन रामके सुन राजा दशरथ अति प्रसन्न भए,रोमांच होय आए। अर बालपुत्रकूं भेजनेका कछुइक विषाद उपज्या, नेत्र सजल होय गए। राजा मनमें विचारै है जो महा पराक्रमी त्यागादि व्रतके धरणहारे क्षत्री तिनकी यही रीति है जो प्रजाकी रक्षाके निमित्त अपने प्राण तजनेका उद्यम करें। अथवा आयुके क्षय विना मरण नाहीं यद्यपि गहन रणमें जाय तौ हू न मरै ऐसा चिंतवन करता जो राजा दशरथ ताके चरणकमलयुगलको नमस्कारकरि राम लक्ष्मण बाहिर नीसरे। सब शास्त्र अर शस्त्र विद्याविषैं प्रवीण,सर्व लक्षणनिकरि पूर्ण,सबकूं प्रिय है दर्शन जिनका, चतुरंग सेनाकरि मंडित, विभूतिकरि पूर्ण अपने तेजकर देदीप्यमान दोऊ भाई राम-लक्ष्मण रथविषैं आरूढ़ होय जनककी मदत चाले। सो इनके जायवे पहिले जनक अर कनक दोऊ भाई,परसेनाका दो योजन अंतर जान युद्ध करवेकूं चढ़े हुते। सो जनक कनकके महारथी योधा शत्रुनिके शब्द न सहते संते म्लेच्छनिके समूहमें जैसैं मेघकी घटामें सूर्यादिक ग्रह प्रवेश करैं तैसें यह थे, सो म्लेच्छोंके अर सामंतनिके महायुद्ध भया जाके देखैं अर सुने रोमांच होय आवैं। कैसा संग्राम भया ? बड़े शस्त्रनिकरि किया है प्रहार जहां, दोऊ सेनाके लोक व्याकुल भए, कनककूं म्लेच्छनिका दबाव भया तदि जनक भाईकी मदतके निमित्त अति क्रोधायमान होय दुर्निवार हाथियोंकी घटा प्रेरता भया सो वे बरबर देशके म्लेच्छ महा भयानक जनककूं दबावते भये। ताही समय राम लक्ष्मण जाय पहुंचे, अति अपार महागहन म्लेच्छनिकी सेना रामचंद्र देखी, सो श्रीरामचंद्रका उज्वल छत्र देख कर शत्रुनिकी सेना कंपायमान भई, जैसैं पूर्णमासीके चंद्रमाका उदय देखकर अंधकारका समूह चलायमान होय। म्लेच्छनिके बाणनिकरि जनकका बखतर टूट गया हुता अर जनक खेदखिन्न भया हुता सो रामने धैर्य बंधाया जैसैं संसारी जीव कर्मनिके उदय कर दुःखी होय सो धर्मके प्रभावतैं दुःखनितैं छूटैं सुखी होय तैसैं जनक रामके प्रभावकर सुखी भया, चंचल तुरंगनि कर युक्त जो रथ ताविषैं आरूढ़ जो राघव महा-उद्योतरूप है शरीर जिनका बखतर पहिरे हार अर कुंडल कर मंडित धनुष चढ़ाए और बाण हाथमें सिंहके चिन्हकी है ध्वजा जिनके,अर जिन पर चमर ढुरे हैं और महामनोहर उज्ज्वल छत्र सिर पर फिरै हैं,पृथिवीके रक्षक धीर वीर है मन जिनका,ऐसे श्रीराम लोकके वल्लभ प्रजाके पालक शत्रुनिकी विस्तीर्ण सेनाविषैं प्रवेश करते भए, सुभटनिके समूह कर संयुक्त जैसे सूर्य किरणनिके समूह कर सोहैं हैं तैसैं शोभते भए। जैसैं माता हाथी कदली वनमें बैठ्या केलनिके समूहका विध्वंस करै तैसैं शत्रुनिकी सेनाका भंग किया। जनक अर कनक दोऊ भाई बचाए। अर लक्ष्मण जैसैं मेघ बरसै तैसैं बाणनिकी वर्षा करता भया, तीक्ष्ण सामान्य चक्र अर शक्ति कुठार करौत इत्यादि शस्त्रनिके समूह लक्ष्मणके भुजानिकर चले, तिन कर अनेक म्लेच्छ

मुवे । जैसे फरसीनकर वृक्ष कटैं ते भील पारधी महा म्लेच्छ लक्ष्मणके बाणनि कर विदारे गये हैं उरस्थल जिनके, कट गई हैं भुजा अर ग्रीवा जिनकी, हजारों पृथिवीविषैं पड़े तदि वे पृथिवीके कंटक तिनकी सेना लक्ष्मण आगैं भागी। लक्ष्मण सिंहसमान दुर्निवार ताहि देखकर जे म्लेच्छोंमें शार्दूलसमान हुते तेहू अति क्षोभकूं प्राप्त भए। महावादित्रके शब्द करते अर मुखतैं भयानक शब्द करते अर धनुष बाण खड्ग चक्रादि अनेक शस्त्रनिकूं धरैं, अर रक्त वस्त्र पहिरे खंजर जिनके हाथमे नाना वर्णका अंग जिनका, कैयक काजल समान श्याम कैयक कर्दम कैयक ताम्रवर्ण, वृक्षनिके बक्कल पहिरे अर नाना प्रकारके गेरुवादि रंग तिनकरि लिप्त हैं अंग जिनके अर नाना प्रकारके वृक्षनिकी मंजरी तिनके हैं छोगा सिरपर जिनके, अर कौड़ी सारिखे हैं दांत जिनके अर विस्तीर्ण हैं उदर जिनके ऐसैं भासैं मानो कुटजजातिके वृक्ष ही फूलैं हैं। अर कैयक निज हाथनिविषैं आयुधनिकूं धरे कठोर हैं जंघा जिनकी, भारी भुजानिके धरणहारे मानूं असुरकुमार देवनिसारिखे उन्मत्त, महानिर्दयी पशुमांसके भक्षक महामूढ़ जीवहिंसाविषैं उद्यमी, जन्महीतैं लेकर पापनिके करणहारे, तत्काल खोटे आरंभके करणहारे, अर सूकर भैंस व्याघ्र ल्याली इत्यादि जीवनिके चिह्न हैं जिनकी ध्वजानिमें, नाना प्रकारके जे वाहन तिनपर चढ़े, पत्रनिके छत्र जिनके, नानाप्रकार युद्धके करणहारे, अति दौड़के करणहारे, महा प्रचंड तुरंग समान चंचल, ते भील मेघमाला समान लक्ष्मणरूप पर्वतपर अपने स्वामीरूप पवनके प्रेरे बाणवृष्टि करते भए। तदि लक्ष्मण तिनके निपात करवेकूं उद्यमी तिनपर दौड़े,महाशीघ्र है वेग जिनका, जैसैं महा गजेंद्र वृक्षनिके समूहपर दौड़ै सो। लक्ष्मणके तेज प्रतापकरि वे पापी भागे सो परस्पर पगनि कर मसले गए। तदि तिनका अधिपति आतरंगतम अपनी सेनाकूं धैर्य बंधाय सकल सेनासहित आप लक्ष्मणके सन्मुख आया महाभयंकर युद्ध किया, लक्ष्मणकूं रथरहित किया, तदि श्रीरामचंद्र अपना रथ चलाय, पवन-समान है वेग जाका, लक्ष्मणके समीप आए, लक्ष्मणकूं दूजे रथ पर चढ़ाय अर आप जैसैं अग्नि वनकूं भस्म कर तैसैं तिनकी अपार सेना बाणनिरूप अग्निकर भस्म करी। कैयक तो बाणनिकर मारे, अर कैयक कनकनामा शस्त्रनिकरि विध्वंसे, कैयक तोमरनामा आयुधनिकरि हते, कैयक सामान्य चक्रनामा शस्त्रनिकरि निपात किए। वह म्लेच्छनिकी सेना महाभयंकर दश दिशाकूं जाती रही,छत्र चमर ध्वजा धनुष आदि शस्त्र डार डार भाजे। महा पुण्याधिकारी जो राम तिनने एकनिमिषमें म्लेच्छनिका निराकरण किया। जैसैं महामुनि क्षणमात्रमें सर्व कषायनिका निराकरण करैं तैसैं म्लेच्छनिका निपात किया। वह पापी आतरंगतम अपार सेनारूप समुद्रकरि आया हुता सो भयकरि युक्त दस घोड़ाके असवारनिसूं भाग्या। तदि श्रीराम आज्ञा करी ये नपुंसक युद्धतैं परान्मुख होय भागैं अब इनके मारवेकरि कहा ? तब लक्ष्मण भाईसहित पाछे बाहुड़े, वे म्लेच्छ

भयकरि व्याकुल होय सह्याचल विंध्याचलके वननिमें छिप गए। श्रीरामचंद्रके भयतैं पशु हिंसादिक दुष्ट कर्मकूं तजि वनके फलनिका आहार करैं जैसैं गरुड़तैं सर्प डरैं तैसैं श्रीरामसूं डरते भए। लक्ष्मण सहित श्रीराम शांत है स्वरूप जिनका, राजा जनककूं बहुत प्रसन्न कर विदा किया। अर आप अपने पिताके समीप अयोध्याकूं चाले, सर्व पृथ्वीके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह सबकूं परम आनंद उपजाया, सबनिके परम हर्षकरि रोमांच होय आए। रामके प्रभावसे सर्व पृथ्वी शोभायमान भई जैसैं चतुर्थकालके आदि ऋषभदेवके समय संपदासे शोभायमान भई हुती। धर्म अर्थ कामकरि युक्त जे पुरुष तिनसे जगत ऐसा भासता भया जैसैं बर्फके अवरोध कर वर्जित जे नक्षत्र तिनसूं आकाश शोभै। गौतमस्वामी कहै हैं हे राजा श्रेणिक! ऐसा रामका माहात्म्य देखकर जनक अपनी पुत्री सीता रामकूं देनी विचारी। बहुत कहवेकरि कहा जीवनिके संयोग तथा वियोगका कारण मात्र एक कर्मका उदय ही है सो वह श्रीराम श्रेष्ठ पुरुष महासौभाग्यवंत अतिप्रतापी औरनमें न पाइए ऐसे गुणनिकरि पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध होता भया जैसैं किरणनिके समूहकर सूर्य महिमाकूं प्राप्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं म्लेच्छनिकी हार, रामकी जीतका कथन वर्णन करनेवाला सत्ताईसवां पर्व पूर्ण भया ॥२७॥

अट्ठाईसवां पर्व

[सीताका स्वयंवर और रामके साथ विवाह]

अथानंतर ऐसे पराक्रमकर पूर्ण जो राम तिनकी कथा विना, नारद एक क्षण भी न रहे सदा राम कथा करवो ही करै। कैसा है नारद, रामके यश सुनकर उपज्या है परम आश्चर्य जाकों। बहुरि नारदने सुनी जो जनकने रामको जानकी देनी विचारी। कैसी है जानकी? सर्व पृथिवीविषैं प्रगट है महिमा जाकी। नारद मनमें चिंतवता भया एक वार सीताकूं देखूं जो कैसी है, कैसे लक्षणनिकर शोभायमान है जो जनकने रामको देनी करी है। सो नारद शील संयुक्त है हृदय जाका, सीताके देखवेकूं सीताके घर आया। सो सीता दर्पणमें मुख देखती हुती सो नारदकी जटा दर्पणमें भासी सो कन्या भयकर व्याकुल भई मनमें चितवती भई, हाय माता यह कौन है, भयकर कम्पायमान होय महलके भीतर गई। नारद भी लारही महलमें जाने लागे तब द्वारपालीने रोका सो नारदके अर द्वारपालीके कलह हुवा, कलहके शब्द सुन खड्ग-के अर धनुषके धारक सामंत दौड़े ही गए, कहते भए पकड़ लो पकड़ लो यह कौन है? ऐसे तिन शस्त्रधारियोंके शब्द सुनकर नारद डरा, आकाशविषैं गमनकर कैलाश पर्वत गया। तहां तिष्ठकर

चिंतवता भया। जो मैं महाकष्टकूं प्राप्त भया सो मुश्किलसे बचा, नवा जन्म पाया; जैसे पक्षी दावानलसे बाहिर निकसै तैसैं मैं वहांसे निकस्या। सो धीरे धीरे नारदकी कांपनी मिटी अर ललाटके पसेव पूंछ केश विखर गए हुते ते समारकर बांधे। कांपे हैं हाथ जाके, ज्यों ज्यों वह बात याद आवै त्यों त्यों निश्वास नाखै महाक्रोधायमान होय मस्तक हलाएं ऐसैं विचारता भया कि देखो कन्याकी दुष्टता, मैं अदुष्टचित्त सरलस्वभाव रामके अनुरागतैं ताके देखवेकूं गया हुता सो मृत्यु समान अवस्थाकूं प्राप्त भया, यम समान दुष्ट मनुष्य मोहि पकड़वेकूं आए सो भली भई जो बचा, पकड़ा न गया। अब वह पापिनी मो आगे कहां बचे? जहां जहां जाय तहां ही उसे कष्टमें नाखूं। मैं विना वादित्र बजाए नाचूं सो जब वादित्र बाजै तब कैसे टरूं, ऐसा विचारकर शीघ्र ही वैताड्यकी दक्षिणश्रेणीविषैं जो रथनूपुर नगर वहां गया, महा सुन्दर जो सीताका रूप सो चित्रपटविषैं लिख लेगया। कैसा है सीताका रूप? महा सुंदर है। ऐसा लिखा मानों प्रत्यक्ष ही है, सो उपवनविषैं भामंडल चंद्रगतिका पुत्र अनेक कुमारनिसहित क्रीड़ा करनेकूं आया हुता सो चित्रपट उसके समीप डार आप छिप रह्या सो भामण्डलने यह तो न जान्या कि यह मेरी बहिनका चित्रपट है। चित्रपट देख मोहित चित्त भया, लज्जा अर शास्त्रज्ञान अर विचार सब भूल गया, लम्बे २ निश्वास नाखै, होठ सूक गये, गात शिथिल हो गया, रात्रि अर दिवस निद्रा न आवै, अनेक मनोहर उपचार कराये तो भी इसे सुख नाहीं, सुगंध पुष्प अर सुंदर आहार याहि विष समान लगे। शीतल जल छांटिये तौ भी संताप न जाय। कबहू मौन पकड़ रहे, कबहू हंसै, कबहू विकथा बकै, कबहू उठ खड़ा रहै, वृथा उठ चलै, बहुरि पाछा आवै असी चेष्टा करै मानों याहि भूत लगा है। तब बड़े बड़े बुद्धिमान् याहि कामातुर जान परस्पर बात करते भए जो यह कन्याका रूप किसीने चित्रपटविषैं लिखकर याके ढिग आय डारया सो यह विक्षिप्त होय गया। कदाचित् यह चेष्टा नारदने ही करी होय? तब नारदने अपने उपायकर कुमारकूं व्याकुल जान लोगनकी बात सुन कुमारके बंधूनिकूं दर्शन दिया तब तिननें बहुत आदर कर पूछा हे देव! कहो यह कौनकी कन्याका रूप है। तुमने कहां देखी। यह कोऊ स्वर्गविषैं देवांगनाका रूप है, अथवा नागकुमारीका रूप है, या पृथिवीविषैं आई होवेगी, सो तुमने देखी? तब नारद माथा हिलायकर बोला कि मिथिला नामा नगरी है वहां महासुंदर राजा इंद्रकेतुका पुत्र जनक राज्य करै है ताके विदेहा रानी है सो राजाको अतिप्रिय है तिनकी पुत्री सीताका यह रूप है ऐसा कहकर फिर नारद भामण्डलसे कहते भए, हे कुमार! तू विषाद मतकर, तू विद्याधर राजाका पुत्र है तोहि यह कन्या दुर्लभ नाहीं, सुलभ ही है। अर तू रूपमात्रसे ही क्या अनुरागी भया। यामैं बहुत गुण हैं याके हाव भाव विलासादिक कौन वर्णन कर सकै अर यही देखे तेरा चित्त वशीभूत हुआ सो क्या आश्चर्य है। जिसे देख बड़े पुरुषनिका भी चित्त मोहित होजाय। मैं तो

आकारमात्र पटमें लिख्या है ताकी लावण्यता वाहीविषैं है लिखवेमें कहां आव, नवयौवन रूप जलकर भरा जो कांतिरूप समुद्र ताकी लहरनिविषैं वह स्तनरूप कुंभनिकर तिरै है। अर ऐसी स्त्री तोहि टार और कौनको योग्य, तेरा अर वाका संगम योग्य है या भांति कहकर भामंडलकूं अति स्नेह उपजाया। अर आप नारद आकाशविषैं विहार किया। भामंडल कामके बाणकर बीध्या अपने चित्तमें विचारता भया कि यदि वह स्त्रीरत्न शीघ्र ही मुझे न मिलै तो मेरा जीवना नाहीं। देखो यह आश्चर्य है वह सुंदरी परमकांतिकी धारणहारी मेरे हृदयमें तिष्ठती हुई अग्निकी ज्वालासमान हृदयकूं आताप करै है। सूर्य है सो बाह्य शरीरकों आताप करै है अर काम है सो अन्तर बाह्य दाह उपजावै है। सूर्यके आताप निवारवेकूं तो अनेक उपाय हैं परंतु कामके दाह निवारवेकूं उपाय नाहीं। अब मुझे दो अवस्था आय बनी हैं कै तो वाका संयोग होय अथवा कामके बाणनिकर मेरा मरण होयगा, निरंतर ऐसा विचारकर भामंडल विह्वल होय गया। सो भोजन तथा शयन सब भूल गया, ना महलविषैं ना उपवन विषैं याहि काहू ठौर साता नाहीं, यह सब वृत्तांत कुमारके व्याकुलताका कारण नारदकृत कुमारकी माता जानकर कुमारके पिताकूं कहती भई-हे नाथ! अनर्थका मूल जो नारद तानै एक अत्यन्त रूपवती स्त्री-का चित्रपट लायकर कुमारकूं दिखाया सो कुमार चित्रपटकूं देखकर अति विभ्रम चित्त होय गया सो धैर्य नाहीं धरै है लज्जारहित होय गया है बारंवार चित्रपटकूं निरखै है अर सीता ऐसे शब्द उच्चारण करै है, अर नाना प्रकारकी अज्ञान चेष्टा करै हैं, मानूं याहि वाय लगी है तातैं तुम शीघ्र ही साता उपजावनेका उपाय विचारो। वह भोजनादिकतैं परान्मुख होय गया है सो वाके प्राण न छूटैं ता पहिले ही यत्न करहु। तब यह वार्ता चंद्रगति सुनकर अति व्याकुल भया अपनी स्त्रीसहित आयकर पुत्रकूं ऐसे कहता भया हे पुत्र! तू स्थिरचित्त हो, अर भोजनादि सर्व क्रिया जैसैं पूर्वैं करै था, तैसैं कर। जो कन्या तेरे मनमें वसी है सो तुझे शीघ्र ही परणाऊंगा, या भांति कहकर पुत्रको शांतता उपजाय राजा चंद्रगति एकांतविषैं हर्ष विषाद अर आश्चर्यकूं धरता संता अपनी स्त्रीसूं कहता भया—हे प्रिये! विद्याधरनिकी कन्या अतिरूपवंती अनुपम उनकूं तजकर भूमिगोचरिनका संबंध हमकूं कहां उचित, अर भूमिगोचरनिके घर हम कैसैं जावैंगे। अर जो कदाचित् हम जाय प्रार्थना करैं अर वह न दें तो हमारे मुखकी प्रभा कहां रहेगी? तातैं कोई उपायकर कन्याके पिताकूं यहां शीघ्र ही ल्यावें ऐसा उपाय नाहीं, तब भामंडलकी माता कहती भई हे नाथ! युक्त अथवा अयुक्त तुम ही जानो, तथापि ये तिहारे वचन मुझे प्रिय लागैं। तब एक चपलवेग नामा विद्याधर अपना सेवक आदरसहित बुलाय कर राजा सकल वृत्तांत वाके कानमें कहा, अर नीके समझाया सो चपलवेग राजाकी आज्ञा पाय बहुत हर्षित होय शीघ्र ही मिथला नगरीको चाल्या। जैसैं प्रसन्न भया तरुणहंस सुगंधकी भरी जो कमलिनी ताकी ओर जाय। यह शीघ्र ही

मिथला नगरी जाय पहुंच्या । आकाशतैं उतरकर अश्वका भेष धर गौ महिषादि पशूनिकूं त्रास उपजावता भया, राजाके मंडलमें उपद्रव किया । तब लोकनिकी पुकार आई, सो राजा सुनकर नगरके बाहिर निकस्या, प्रमोद उद्वेग अर कौतुकका भरया राजा अश्वकूं देखता भया । कैसा है अश्व ? नवयौवन है अर उछलता संता अति तेजकूं धरै, मन समान है वेग जाका, सुंदर हैं लक्षण जाके, अर प्रदक्षिणारूप महा आवर्तकूं धरै है मनोहर है मुख जाका, अर महा बलवान खुरोंके अग्रभाग-कर मानों मृदंग ही बजावै है जापर कोई चढ़ न सकै, अर नासिकाका शब्द करता संता अति-शोभायमान है ऐसे अश्वकूं देखकर राजा हर्षित होय वारंवार लोगनिसूं कहता भया यह काहूका अश्व बंधन तुड़ाय आया है। तब पंडितनिके समूह राजासूं प्रियवचन कहते भए—हे राजन् ! या तुरंगके समान कोई तुरंग नाहीं, औरोंकी तो क्या बात ऐसा अश्व राजाके भी दुर्लभ, आपके भी देखनेमें ऐसा अश्व न आया होयगा । सूर्यके रथके तुरंगनिकी अधिक उपमा सुनिए है सो या समान तो ते भी न होयेंगे, कोई दैवके योगतैं आपके निकट ऐसा अश्व आया है सो आप याहि अंगीकार करहु । आप महापुण्याधिकारी हो तब राजाने अश्वको अंगीकार किया । अश्व-शालामें ल्याय सुंदर डोरीतैं बांधा अर भांति भांतिकी योग सामग्रीकर याके यत्न किए, एक मास याकूं यहां हुआ । एक दिन सेवकने आय राजाकूं नमस्कार कर विनती कीनी हे नाथ ! एक वनका मतंगज आया हैं सो उपद्रव करै है तब राजा बड़े गजपर असवार होय वा हाथीकी ओर गए, वह सेवक जिसने हाथीका वृत्तांत आय कहा था ताके कहे मार्गकर राजाने महावनमें प्रवेश किया सो सरोवरके तट हाथी खड़ा देखा अर चाकरनिसूं कहा जो एक तेज तुरंग ल्यावो। तब मायामई अश्वकूं तत्काल लेगए । सुंदर है शरीर जाका राजा उसपर चढ़े सो वह आकाश-में राजाकूं ले उड़ा। तब सब परिजन पुरजन हाहाकार कर शोकवंत भए। आश्चर्यकर व्याप्त हुवा है मन जिनका तत्काल पाछे नगरमें गए ।

अथानंतर वह अश्वके रूपका धारक विद्याधर मन समान है वेग जाका अनेक नदी पहाड़ वन उपवन नगर ग्राम देश उलंघन कर राजाकूं रथनूपर ले गया । जब नगर निकट रह्या तब एक वृक्षके नीचे आय निकस्या सो राजा जनक वृक्षकी डाली पकड़ लूंब रहा । वह तुरंग नगरविषै आया। राजा वृक्षतैं उतर विश्रामकर आश्चर्य सहित आगैं गया तहां एक स्वर्णमई ऊंचा कोट देख्या । अर दरवाजा रत्नमई तोरणनि कर शोभायमान अर महासुंदर उपवन देख्या । ताविषैं नाना जातिके वृक्ष अर बेल फल फूलनिकर संपूर्ण देखे जिनपर नाना प्रकारके पक्षी शब्द करैं हैं । अर जैसैं सांझके बादले होवें तैसैं नाना रंगके अनेक महल देखे मानों ये महल जिन-मंदिरकी सेवा ही करैं हैं । तब राजा खड़गको दाहिने हाथमें मेल सिंह समान अति निशंक क्षत्री व्रतमें प्रवीण दरवाजे पर गया । दरवाजेके भीतर नाना जातिके फूलनिकी बाड़ी रत्न स्वर्ण

के सिवाण जाके ऐसी वापिका स्फुटिकमणि समाम उज्ज्वल है जल जाका, अर महा सुगंध मनोज्ञ विस्तीर्ण कुंद जातिके फूलनिके मंडप देखे। चलायमान है पल्लवोंके समूह जिनके अर संगीत करै हैं भ्रमरोंके समूह जिनपर। अर माधवी लतानिके समूह फूले देखे महा सुंदर, अर आगे प्रसन्न नेत्रनिकर भगवानका मंदिर देख्या। कैसा है मंदिर, मोतिनिकी झालरिनिकर शोभित रत्ननिके झरोखनिकर संयुक्त, स्वर्णमई हजारां महास्तम्भ तिनकर मनोहर, अर जहां नाना प्रकारके चित्राम सुमेरुके शिखर समान ऊंचे शिखर, अर वज्रमणि जे हीरा तिनकर बेढ्या है पीठ (फरश) जाका ऐसे जिनमंदिरकूं देखकर जनक विचारता भया कि यह इंद्रका मंदिर है, अथवा अहमिंद्रका मंदिर है, ऊर्ध्वलोकतें आया है अथवा नागेंद्रका भवन पातालतें आया है, अथवा काहू कारणतैं सूर्यकी किरणनिका समूह पृथिवीविषै एकत्र भया है। अहो उस मित्र विद्याधरने मेरा बड़ा उपकार किया जो मोहि यहां ले आया, ऐसा स्थानक अब तक देख्या नाहीं। भला मंदिर देख्या ऐसा चिंतवन कर महामनोहर जो जिनमंदिर ताविषैं बैठि फूल गया मुख कमल जाका श्रीजिनराजका दर्शन किया। कैसे हैं श्रीजिनराज? स्वर्ण समान है वर्ण जिनका, अर पूर्णमासीके चंद्रमा समान है सुंदर मुख जिनका, अर पद्मासन विराजमान अष्ट प्रातिहार्य संयुक्त कनकमई कमलनिकर पूजित, अर नाना प्रकारके रत्ननिकर जड़ित जे छत्र ते हैं सिरपर जिनके, अर ऊंचे सिंहासनपर तिष्ठै हैं। तब जनक हाथ जोड़ सीस निवाय प्रणाम करता भया हर्षकर रोमांच होय आए, भक्तिके अनुरागकर मूर्च्छाकूं प्राप्त भया। क्षणएकमें सचेत होय भगवानकी स्तुति करने लाग्या। अति विश्रामकूं पाय परम आश्चर्यकूं धरता संता जनक चैत्यालयविषैं तिष्ठै है। वह चपलवेग विद्याधर जो अश्वका रूपकर इनको ले आया हुता सो अश्वका रूप दूर कर राजा चंद्रगति के पास गया अर नमस्कार कर कहता भया—मैं जनककूं ले आया, मनोज्ञ वनमें भगवानके चैत्यालयविषैं तिष्ठै है, तब राजा सुनकर बहुत हर्षकूं प्राप्त भया। थोड़ेसे समीपी लोग लार लेय राजा चंद्रगति उज्ज्वल है मन जाका पूजाकी सामग्री लेय मनोरथ समान रथ पर आरूढ़ होय चैत्यालयविषैं आया सो राजा जनक चंद्रगतिकी सेनाकूं देख अर अनेक वादित्रनिका नाद सुनकर कछुइक शंकायमान भया। कैयक विद्याधर मायामई सिंहोंपर चढ़े हैं, कैएक मायामई हाथिनि पर चढ़े हैं, कैएक घोड़ावों पर चढ़े, कैएक हंसों पर चढ़े, तिनके बीच राजा चंद्रगति हैं सो देखकर जनक विचारता भया जो विजयार्ध पर्वत पर विद्याधर बसैं हैं ऐसी मैं सुनता हुता सो ये विद्याधर हैं। विद्याधरनिकी सेनाके मध्य यह विद्याधरोंका अधिपति कोई परम दीप्ति कर शोभै है ऐसा चिंतवन जनक करै है। ताही समय वह चंद्रगति राजा दैत्यजातिके विद्याधरनिका स्वामी चैत्यालयविषैं आय प्राप्त भया। महाहर्षवंत नम्रीभूत है शरीर जाका, तब जनक ताकूं देखकर कछुइक भयवान होय भगवानके सिंहासनके नीचे बैठ रहा, अर वह राजा चंद्रगति भक्ति कर

भगवानके चैत्यालयविषैं जाय प्रणामकर विधिपूर्वक महा उत्तम पूजा करी, अर परम स्तुति करता भया। बहुरि सुंदर हैं स्वर जाके ऐसी वीणा हाथमें लेयकर महाभावना सहित भगवानके गुण गावता भया। सो कैसें गावै है सो सुनो, अहो भव्यजीव हो जिनेंद्रको आराधहु, कैसे हैं जिनेंद्रदेव ? तीन लोकके जीवनिकूं वर-दाता, अर अविनाशी है सुख जिनके, अर देवनिमें श्रेष्ठ जे इंद्रादिक तिनकर नमस्कार करने योग्य हैं। कैसे हैं वे इंद्रादिक महा उत्कृष्ट जो पूजाका विधान ताविषैं लगाया है चित्त जिन्होंने। अहो उत्तम जन हो श्रीऋषभदेवको मन वच कायकर निरंतर भजो। कैसे हैं ऋषभदेव ? महा उत्कृष्ट हैं अर शिवदायक हैं, जिनके भजेतें जन्म २ पापके किये समस्त विलय होय हैं। अहो प्राणी हो जिनवरको नमस्कार करहु, कैसे हैं जिनवर ? महा अतिशय धारक हैं, कर्मनिके नाशक हैं, अर परमगति जो निर्वाण ताकूं प्राप्त भए हैं। अर सर्व सुरासर नर विद्याधर उन कर पूजित हैं चरण कमल जिनके, क्रोधरूप महावैरीका भंग करनहारे हैं। मैं भक्तिरूप भया जिनेंद्रकूं नमस्कार करूं हूं। उत्तम लक्षणकर संयुक्त है देह जिनका अर विनय कर नमस्कार करैं हैं सर्व मुनियोंके समूह जिनकों, ते भगवान नमस्कार मात्र ही से भक्तोंके भय हरैं हैं। अहो भव्य जीव हो ! जिनवरको बारंबार प्रणाम करहु, वे जिनवर अनुपम गुणको धरैं हैं, अर अनुपम है काया जिनकी, अर हते हैं संसारमई सकल कुकर्म जिनने, अर रागादिक रूप जे मल तिनकर रहित महानिर्मल हैं, अर-ज्ञाननावरणादिक रूप जो पट तिनके दूर करनहारे पार करवेकूं अति प्रवीण हैं, अर अत्यन्त पवित्र हैं, या भांति राजा चंद्रगति वीण बजाय भगवानकी स्तुति करी, तब भगवानके सिंहासनके नीचेतैं राजा जनक भय तज कर जिनराजकी स्तुति कर निकस्या महा-शोभायमान। तब चंद्रगति जनककूं देख हर्षित भया है मन जाका, सो पूछता भया तुम कौन हो, या निर्जन स्थानकविषैं भगवानके चैत्यालयविषैं कहांतै आए हो, तुम नागोंके पति नागेन्द्र हो, अथवा विद्याधरोंके अधिपति हो ? हे मित्र ! तुम्हारा नाम क्या है सो कहो ? तब जनक कहता भया हे विद्याधरोंके पति ! मैं मिथला नगरीसे आया हू अर मेरा नाम जनक है। माया-मई तुरंग मोहि ले आया है। जब ये समाचार जनकने कहे तब दोऊ अति प्रीतिकर मिले, परस्पर कुशल पूछी, एक आसन पर बैठ फिर क्षण एक तिष्ठकर दोऊ आपसमें विश्वासकों प्राप्त भए। तब चन्द्रगति और कथाकर जनककूं कहते भए, हे महाराज ! मैं बड़ा पुण्यवान, जो मोहि मिथला नगरीके पतिका दर्शन भया, तिहारी पुत्री महा शुभ लक्षणनिकर मण्डित है, मैं बहुत लोगनिके मुखसे सुनी है सो मेरे पुत्र भामंडलको देवो, तुमसे सम्बन्ध पाय मैं अपना परम उदय मानूंगा। तब जनक कहते भए हे विद्याधराधिपति ! तुम जो कही सो सब योग्य है, परन्तु मैं मेरी पुत्री राजा दशरथके बड़े पुत्र जो श्रीरामचन्द्र तिनकूं देनी करी है। तब चन्द्रगति बोले काहेते उनको देनी करी है ? तब जनकने कही जा तुमको सुनिवेको कौतुक है तो सुनहु। मेरी

मिथिलापुरी रत्नादिक धनकर अर गौ आदि पशुअनि कर पूर्ण सो अर्धबर्बर देशके म्लेच्छ महा भयंकर उन्होंने आय मेरे देशको पीड़ा करी, धनके समूह लूटने लगे, अर देशमें श्रावक अर यति का धर्म मिटने लगा सो मेरे अर म्लेच्छोंके महा युद्ध भया। ता समय राम आय मेरी अर मेरे भाई की सहायता करी। वे म्लेच्छ जो देवोंसे भी दुर्जय सो जीते। अर रामका छोटा भाई लक्ष्मण इन्द्र समान पराक्रमका धरणहारा है अर बड़े भाईका सदा आज्ञाकारी। महा विनयकर संयुक्त है। वे दोनों भाई आय कर जो म्लेच्छनिकी सेनाको न जीतते तो समस्त पृथिवी म्लेच्छमई हो जाती। वे म्लेच्छ महा अविवेकी शुभ क्रिया रहित, लोककूं पीड़ाकारी महाभयंकर विष समान दारुण उत्पातका स्वरूप ही हैं। सो रामके प्रसाद कर सब भाज गए। पृथिवीका अमंगल मिट गया। वे दोनों राजा दशरथके पुत्र महादयालु लोकनिके हितकारी तिनकूं पायकर राजा दशरथ सुखसे सुरपति समान राज्य करै है। ता दशरथके राज्यविषैं महा संपदावान लोक वसै हैं अर दशरथ महा शूरवीर है। जाके राज्यमें पवनहू काहूका कछु नाहीं हर सकै, तो और कौन हरे? राम लक्ष्मणने मेरा ऐसा उपकार किया। तब मोहि ऐसी चिंता उपजी जो मैं इनका कहा प्रतिउपकार करूं। रात्रि दिवस मोहि निद्रा न आवती भई। जाने मेरे प्राण राखे, प्रजा राखी, ता राम समान मेरे कौन? मोते कबहु कछु उनकी सेवा न बनी, अर उनने बड़ा उपकार किया। तब मैं विचारता भया—जो अपना उपकार करै अर उसकी सेवा कछु न बनै तो कहा जीतव्य? कृतघ्नका जीतव्य तृण समान है। तब मैंने मेरी पुत्री सीता नवयौवन-पूर्ण राम-योग्य जान रामको देनी विचारी। तब मेरा सोच कछु इक मिट्या। मैं चितारूप समुद्रमें डूबा हुता सो पुत्री नावरूप भई तातैं मैं सोचसमुद्रतैं निकस्या। राम महा तेजस्वी हैं। यह वचन जनकके सुन चंद्रगतिके निकटवर्ती और विद्याधर मलिनमुख होय कहते भए। अहो तुम्हारी बुद्धि शोभायमान नाहीं। तुम भूमिगोचरी हो, अपंडित हो। कहां वे रंक म्लेच्छ अर कहां उनके जीतवेकी बड़ाई, यामें कहा रामका पराक्रम? जाकी एती प्रशंसा तुमने म्लेच्छनिके जीतवे कर करी। रामका जो एता स्तोत्र किया सो इसमें उलटी निंदा है। अहो तुम्हारी बात सुन हांसी आवै है। जैसैं बालकको विषफल ही अमृत भासै है, अर दरिद्रीकूं बदरी फल (बेर) ही नीके लागैं, अर काक सूके वृक्षविषैं प्रीति करै, यह स्वभाव ही दुर्निवार है। अब तुम भूमिगोचरियोंका खोटा संबंध तजकर यह विद्याधरोंका इंद्र राजा चंद्रगति तासूं संबंध करहु। कहां देवों समान सम्पदाके धरणहारे विद्याधर, कर कहां वे रंक भूमिगोचरी सर्वथा अति दुखी, तब जनक बोले, क्षीरसागर अत्यंत विस्तीर्ण है परंतु तृषा हरता नाहीं, अर वापिका थोड़े ही मिष्ट जलसे भरी है सो जीवनिकी तृषा हरै है। अर अंधकार अत्यंत विस्तीर्ण है वाकरि कहा, अर दीपक अल्प

भी है परंतु पृथिवीमें प्रकाश करै है, पदार्थनिको प्रकट करै है। अर अनेक माते हाथी जो पराक्रम न कर सकै सो अकेला केसरी सिंहका बालक करै है ऐसे जब राजा जनकने कहा तब वे सर्व विद्याधर कोपवंत होय अति क्रूर शब्दकर भूमिगोचरियोंकी निंदा करते भए। हो जनक! वे भूमिगोचरी विद्याके प्रभावतैं रहित सदा खेदखिन्न शूरवीरतारहित आपदावान,तुम कहा उनकी स्तुति करो हो। पशुनिमें अर उनमें भेद कहा? तुममें विवेक नाहीं,तातैं उनकी कीर्ति करो हो? तब जनक कहते भए—हाय! हाय! बड़ा कष्ट है जो मैंने पापके उदयकर बड़े पुरुषनिकी निंदा सुनी। तीन भवनमें विख्यात जे भगवान ऋषभदेव इंद्रादिक देवनिमें पूजनीक तिनका इक्ष्वाकुवंश लोकमें पवित्र सो कहा तुम्हारे श्रवणमें न आया, तीन लोकके पूज्य श्रीतीर्थंकरदेव, अर चक्रवर्ती बलभद्र नारायण सो भूमिगोचरियोंमें उपजे,तिनकूं तुम कौन भांति निंदो हो। अहो विद्याधरो, पंचकल्याणककी प्राप्ति भूमिगोचरियोंके ही होय है, विद्याधरोंमें कदाचित् किसीके तुमने देखी? इक्ष्वाकुवंशमें उपजे बड़े बड़े राजा जो षट् खंड पृथिवीके जीतनहारे तिनके चक्रादि महारत्न अर बड़ी ऋद्धिके स्वामी चक्रके धारी, इंद्रादिककर गाई है उदार कीर्ति जिनकी,ऐसे गुणोंके सागर कृतकृत्य पुरुष ऋषभदेवके वंशके बड़े २ पृथिवीपति या भूमिमैं अनेक भए। ताही वंशमें राजा अनरण्य बड़े राजा भए। तिनके राणी सुमंगला, ताके दशरथ पुत्र भए जे क्षत्री धर्ममें तत्पर लोकनिकी रक्षा निमित्त अपना प्राण त्याग करते न शंकैं, जिनकी आज्ञा समस्त लोक सिर पर धरैं, जिनकी चार पटराणी मानों चार दिशा ही हैं। सर्व शोभाकूं धरैं, गुणनिकरि उज्ज्वल पांच सौ और राणी,मुखकर जीता है चंद्रमा जिनने, जे नाना प्रकारके शुभ चरित्रनिकर पतिका मन हरैं हैं। अर राजा दशरथके राम बड़े पुत्र जिनकूं पद्म कहिए,लक्ष्मी कर मंडित है शरीर जिनका, दीप्ति कर जीता है सूर्य अर कीर्ति कर जीता है चंद्रमा, स्थिरता कर जीता है सुमेरु, शोभा कर जीता है इंद्र, शूरवीरता कर जीते हैं सर्व सुभट जिनने,सुंदर हैं चरित्र जिनके, जिनका छोटा भाई लक्ष्मण जाके शरीरमें लक्ष्मीका निवास, जाके धनुषको देख शत्रु भयकर भाज जावें,अर तुम विद्याधरोंको उनसे भी अधिक बतावो हो? सो काक भी तो आकाशमें गमन करै है तिनमें कहा गुण है? अर भूमिगोचरनिमें भगवान तीर्थंकर उपजै हैं तिनको इंद्रादिक देव भूमिमें मस्तक लगाय नमस्कार करैं हैं विद्याधरोंकी कहा बात? ऐसे वचन जब जनकने कहे तब वे विद्याधर एकांतमें तिष्ठकर आपसमें मंत्र कर जनककूं कहते भए, हे भूमिगोचरनिके नाथ! तुम राम लक्ष्मणका एता प्रभाव ही कहो हो, अर वृथा गरज गरज बातें करो हो,सो हमारे उनके बल पराक्रमकी प्रतीति नाहीं, तातैं हम कहैं हैं सो सुनहु-एक वज्रावर्त, दूजा सागरावर्त ये दो धनुष तिनकी देव सेवा करैं हैं सो ये धनुष वे दोनों भाई चढ़ावें, तो हम उनकी शक्ति जानें। बहुत कहनेकर कहा, जो वज्रावर्त धनुष राम चढ़ावें तो तुम्हारी कन्या परणैं

नातर हम बलात्कार कन्याकूं यहां ले आवेंगे, तुम देखते ही रहोगे। तब जनकने कही यह बात प्रमाण है। तब उनने दोऊ धनुष दिखाए सो जनक उन धनुषनिकूं अति विषम देखकर कछुइक आकुलताकूं प्राप्त भया। बहुरि वे विद्याधर भाव थकी भगवानकी पूजा स्तुति कर गदा अर हलादि रत्नोंकर संयुक्त धनुषनिकूं ले और जनककूं ले मिथिलापुरी आए। अर चंद्रगति उपवनसे रथनूपुर गया। जब राजा जनक मिथिलापुरी आए, तब नगरीकी महाशोभा भई, मंगलाचार भए, अर सब जन सम्मुख आए। अर वे विद्याधर नगरके बाहिर एक आयुधशाला बनाय तहां धनुष धरे, अर महा गर्वको धरते संते तिष्ठे। जनक खेदसहित किंचित् भोजन खाय चिंताकर व्याकुल उत्साह-रहित सेजपर पड़े। तहां महा नम्रीभूत उत्तम स्त्री बहुत आदर सहित चंद्रमाकी किरणसमान उज्ज्वल चमर ढारती भई। राजा अति दीर्घ निःश्वास महा उष्ण अग्नि समान नाखें। तब रानी विदेहाने कहा हे नाथ! तुमने कौन स्वर्गलोककी देवांगना देखी, जिसके अनुरागकर ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त भए हो, सो हमारे जाननेमें वह कामिनी गुणरहित निर्दई है जो तुम्हारे आतापविषै करुणा नाहीं करै है। हे नाथ! वह स्थानक हमैं बतावो जहांतैं वाहि ले आवैं। तुम्हारे दुखकर मोहि दुख अर सकल लोकनिकूं दुख होय है। तुम ऐसे महासौभाग्यवंत ताहि कहा न रुचै। वह कोई पाषाणचित्त है। उठो राजावोंको जे उचित कार्य होंय सो करो। यह तिहारा शरीर है तो सब ही मनवांछित कार्य होंगे, या भांति राणी विदेहा जो प्राणहूतैं प्रिया हुती सो कहती भई। तब राजा बोले—हे प्रिये, हे शोभने, हे वल्लभे! मुझे खेद और ही है, तू वृथा ऐसी बात कही, काहेको अधिक खेद उपजावै है तोहि या वृत्तांतकी गम्य नाहीं तातैं ऐसे कहै है। वह मायामई तुरंग मोहि विजयार्धगिरिमें ले गया, तहां रथनूपुरके राजा चंद्रगतिसे मेरा मिलाप भया। सो वानै कही तुम्हारी पुत्री मेरे पुत्रको देवो। तब मैंने कही मेरी पुत्री दशरथके पुत्र श्रीरामचंद्रको देनी करी है। तब वाने कही जो रामचंद्र वज्रावर्त धनुषकूं चढावें तो तिहारी पुत्री परणें, नातर मेरा पुत्र परणैगा। सो मैं तो पराए वश जाय पड्या तब उनके भय थकी, अर अशुभकर्मके उदय थकी यह बात प्रमाण करी सो वज्रावर्त अर सागरावर्त दोऊ धनुष ले विद्याधर यहां आए हैं ते नगरके बाहिर तिष्ठै हैं। सो मैं ऐसी जानूं हूं ये धनुष इंद्रहूते चढ़ाए न जांय जिनकी ज्वाला दशों दिशामें फैल रही है अर मायामई नाग फुंकारैं हैं सो नेत्रनिसों तो देखा न जावैं। धनुष विना चढ़ाए ही स्वतःस्वभाव महाभयानक शब्द करैं हैं, इनको चढ़ायवेकी कहा बात, जो कदाचित् श्रीरामचंद्र धनुषकूं न चढ़ावें तो यह विद्याधर मेरी पुत्रीकूं जोरावरी ले जावेंगे, जैसैं स्यालके समीपतैं मांसकी डली खग कहिए पक्षी ले जांय। सो धनुषके चढ़ायवेका बीस दिन बाकी हैं, एही करार है जो न बना तो वह कन्याकूं ले जांयगे, फिर याका देखना दुर्लभ है। हे श्रेणिक! जब राजा जनक या भांति कही तब राणी विदेहाके नेत्र अश्रुपातसूं भर आए, अर पुत्रके हरवेका दुःख भूल

भई हुती सो याद आया। एक तो प्राचीन दुख, बहुरि नवीन दुख, अर आगामी दुख सो महा-शोककर पीड़ित भई, महा शब्दकर पुकारने लगी, ऐसा रुदन किया जो सकल परिवारके मनुष्य विह्वल होगए। राजासूं रानी कहै है हे देव! मैं ऐसा कौनसा पाप किया जो पहिले तो पुत्र हरया गया अर अब पुत्री भी हरी जाय है। मेरे तो स्नेहका अवलंबन एक यह शुभ चेष्टित पुत्री ही है। मेरे तिहारे सर्व कुटुम्ब लोगनिके यह पुत्री ही आनंदका कारण है सो पापिनीके एक दुख नाहीं मिटै है अर दूजा दुःख आय प्राप्त होय है। या भांति शोकके सागरमें पड़ी रानी रुदन करती ताहि राजा धैर्य बंधाय कहते भए हे रानी! रुदनकर कहा? जो पूर्वै या जीवने कर्म उपार्जे हैं वे उदय अनुसार फलै हैं, संसाररूप नाटकका आचार्य जो कर्म सो समस्त प्राणीनिकूं नचावै है, तेरा पुत्र गया सो अपने अशुभके उदयतैं गया, अब शुभ कर्मका उदय है सो सकल मंगल ही होहिं। ऐसे नाना प्रकारके सार वचननिकर राजा जनकने रानी विदेहाकूं धैर्य बंधाया, तब रानी शांतिकूं प्राप्त भई।

बहुरि राजा जनक नगर बाहिर जाय धनुषशालाके समीप स्वयंवर मंडप रच्या, अर सकल राजपुत्रनिके बुलायवेकूं पत्र पठाये, सो पत्र बांच बांच सर्व राजपुत्र आए। अर अयोध्या नगरीको हू दूत भेजे सो माता पिता संयुक्त रामादिक चारों भाई आए, राजा जनक बहुत आदर-कर पूजे। सीता परमसुंदरी सातसौ कन्याओंके मध्य महलके ऊपर तिष्टै है। बड़े २ सामंत याकी रक्षा करैं, अर एक महा पंडित खोजा जानैं बहुत देखी बहुत सुनी है अर स्वर्णरूप वेतकी छड़ी जाके हाथमें, सो ऊंचे शब्दकर कहै है प्रत्येक राजकुमारको दिखावै है—हे राजपुत्री, यह श्रीरामचन्द्र कमललोचन राजा दशरथके पुत्र हैं, तू नीके देख। अर यह इनका छोटा भाई लक्ष्मीवान् लक्ष्मण है महा ज्योतिकूं धरै। अर यह इनका भाई महाबाहु भरत है। अर यह यातैं छोटा शत्रुघ्न है। यह चारों ही भाई गुणनिके सागर हैं। इन पुत्रनिकर राजा दशरथ पृथ्वीकी भली भांति रक्षा करै है जाके राज्यमें भयका अंकुर नाहीं। अर यह हरिवाहन महा बुद्धिमान् काली घटासमान है प्रभा जाकी। अर यह चित्ररथ महागुणवान, तेजस्वी महा सुंदर है। अर यह दुर्मुख नामा कुमार अतिमनोहर महातेजस्वी है अर यह श्रीसंजय, यह जय, यह भानु, यह सुप्रभ, यह मंदिर, यह बुध, यह विशाल, यह श्रीधर, यह वीर, यह बंधु, यह भद्रबल, यह मयूरकुमार इत्यादि अनेक राजकुमार महापराक्रमी महासौभाग्यवान निर्मल वंशके उपजे, चंद्रमा समान निर्मल है कांति जिनकी, महागुणवान भूषणके धरणहारे परम उत्साहरूप महाविनयवंत, महाज्ञानी महा-चतुर आय इकट्ठे भए हैं। अर यह संकाशपुरका नाथ याके हस्ती पर्वतसमान, अर तुरंग महाश्रेष्ठ, अर रथ महा मनोज्ञ, अर योधा अद्भुत पराक्रमके धारी, अर यह सुरपुरका राजा, यह रंध्रपुरका राजा, यह नंदनपुरका राजा, यह कुंदपुरका अधिपति, यह मगध देशका राजेंद्र यह कंपिल्य नगरका नरपति, इनमें

कैयक इक्ष्वाकुवंशी, अर कैयक नागवंशी, अर कैयक सोमवंशी, अर कैयक उग्रवंशी, अर कैयक हरिवंशी, अर कैयक कुरुवंशी इत्यादि महागुणवंत जे राजा सुनिए हैं ते सर्व तेरे अर्थ आए हैं। इनके मध्य जो पुरुष वज्रावर्त धनुषकूं चढ़ावै ताहि तू वर। जो पुरुषनिमें श्रेष्ठ होयगा ताहीसूं यह कार्य होयगा। या भांति खोजा कही। अर राजा जनक सबनिकूं एकत्र कर सर्व ही राजकुमार अनुक्रमतैं धनुषको ओर पठाए सो गए। सुंदर है रूप जिनका, सो सर्व ही धनुषकूं देख कंपायमान भए। धनुषतैं सर्व ओर अग्निकी ज्वाला विजुली समान निकसै, अर मायामई भयानक सर्प फुंकार करैं। तब कैयक तो कानोंपर हाथ धर भागे, अर कैयक धनुषकूं देख कर दूर ही कीलेसे ठाढ़े रहे कांपै हैं समस्त अंग जिनके, अर मुंद गए हैं नेत्र जिनके। अर कैयक ज्वरकरि व्याकुल भए। अर कई एक धरतीविषैं गिर पड़े, अर कैयक ऐसे भए जो बोल न सकैं; अर कैयक मूर्च्छाकूं प्राप्त भए। अर कैयक धनुषके नागनिके श्वासकरि जैसैं वृक्षका सूका पत्र पवनसे उड़ा उड़ा फिरै, तैसैं उड़ते फिरैं। अर कैयक कहते भए जो अब जीवते घर जावें तो महादान करें सकल जीवानकूं अभयदान देवें। अर कैयक ऐसे कहते भए, यह रूपवती कन्या है तो कहा, याके निमित्त प्राण तो न देने। अर कैयक कहते भए—यह कोई मायामई विद्याधर आया है सो राजावोंके पुत्रनिकूं बाधा उपजाई है। अर कैयक महाभाग ऐसे कहते भए—अब हमारे स्त्रीतैं प्रयोजन नाहीं, यह काम महा दुखदाई है। जैसैं अनेक साधु अथवा उत्कृष्ट श्रावक शीलव्रत धारै हैं तैसैं हमहू शीलव्रत धारेंगे, धर्मध्यानकर काल व्यतीत करेंगे। या भांति सर्व परान्मुख भए। अर श्रीरामचंद्र धनुष चढ़ावनेकूं उद्यमी उठकर महामाते हाथीकी नाईं मनोहर गतिसे चलते जगतकूं मोहते धनुषके निकट गए सो धनुष रामके प्रभावतैं ज्वाला रहित होय गया जैसा सुंदर देवोपनीत रत्न है तैसा सौम्य होय गया। जैसैं गुरुके निकट शिष्य सौम्य होय जाय। तब श्रीरामचंद्र धनुषकूं हाथ लेय करि चढ़ाय कर खैंचते भए सो महाप्रचंड शब्द भया, पृथिवी कंपायमान भई। कैसा है धनुष ? विस्तीर्ण है प्रभा जाकी, जैसा मेघ गाजै तैसा धनुषका शब्द भया, मयूरनिके समूह मेघका आगमन जान नाचने लगे। जाके तेजके आगैं सूर्य ऐसा भासने लग्या जैसा अग्निका कण भासै। अर स्वर्णमई रजकर आकाशके प्रदेश व्याप्त होय गए। यह धनुष देवाधिष्ठित है सो आकाशविषैं धन्य धन्य शब्द कहते भए। अर पुष्पनिकी वर्षा होती भई। देव नृत्य करते भए। तब राम महादयावंत धनुषके शब्दकरि लोकनिकूं कंपायमान देख धनुषकूं उतारते भए। लोक ऐसे डरे मानों समुद्रके भ्रमरमें आय गए हैं। तब सीता अपने नेत्रनि करि श्रीरामकूं निरखती भई। कैसे हैं नेत्र ? पवनकरि चंचल जैसैं कमलोंका दल होय तातैं अधिक है कांति जिनकी, अर जैसा कामका बाण तीक्ष्ण होय तैसैं तीक्ष्ण हैं। सीता रोमांचकर संयुक्त मनकी वृत्तिरूप माला जो प्रथम देखते ही इनके ओर प्रेरी हुती, बहुरि लोकचार

निमित्त हाथमें रत्नमाला लेकर श्रीरामके गलेमें डारी, लज्जासे नम्रीभूत है मुख जाका, जैसैं जिनधर्मके निकट जीवदया तिष्ठै, तैसैं रामके निकट सीता आय तिष्ठी। श्रीराम अतिसुंदर हुते सो याके समीपतैं अत्यंत सुंदर भासते भए, इन दोऊनिके रूपका दृष्टांत देवेमें न आवै। अर लक्ष्मण दूजा धनुष सागरावर्त क्षोभकूं प्राप्त भया जो समुद्र ताके समान है शब्द जाका, उसे चढ़ाय खैंचते भए, सो पृथिवी कम्पायमान भई। आकाशमें देव जयजयकार शब्द करते भए, अर पुष्पवर्षा होती भई। लक्ष्मण धनुषकूं चढ़ाय खैंचकर जब बाणपर दृष्टि धरी, तब सर्व डरे, लोकनिकूं भयरूप देख आप धनुषकी पिणच(प्रत्यंचा)उतार महाविनय संयुक्त रामके निकट आए, जैसे ज्ञानके निकट वैराग्य आवै। लक्ष्मणका ऐसा पराक्रम देख चंद्रगतिका पठाया जो चंद्रवर्द्धन विद्याधर आया हुता सो अतिप्रसन्न होय अष्टादश कन्या विद्याधरनिकी पुत्री लक्ष्मणकूं दीनी। श्रीराम लक्ष्मण दोऊ धनुष लेय महाविनयवन्त पिताके पास आए, अर सीता हू आई। अर जेते विद्याधर आए हुते सो राम लक्ष्मणका प्रताप देख चंद्रवर्द्धनकी लार रथनूपुर गए, जाय राजा चंद्रगतिकूं सर्व वृत्तांत कह्या सो सुनकर चिंतावान होय तिष्ठ्या। अर स्वयम्बर मंडपमें रामके भाई भरत हू आए हुते सो मनमें ऐसा विचारते भए कि मेरा अर राम लक्ष्मणका कुल एक, अर पिता एक, परंतु इनकासा अद्भुत पराक्रम मेरा नाहीं, यह पुण्याधिकारी हैं, इनकेसे पुण्य मैंने न उपार्जे। यह सीता साक्षात् लक्ष्मी कमलके भीतर दल समान है वर्ण जाका, राम सारिखा पुण्याधिकारी हीकी स्त्री होय। तब केकई इनकी माता सर्व कलाविषैं प्रवीण भरतके चित्तका अभिप्राय जान पतिके कानविषैं कहती भई—हे नाथ! भरतका मन कछुइक विलखा दीखै है, ऐसा करो जो यह विरक्त न होय। इस जनकके राणी सुप्रभा उसकी पुत्री लोकसुंदरी है, सो स्वयंवर मंडपकी विधि बहुरि करावो अर वह कन्या भरतके कण्ठमें वरमाला डारे तो यह प्रसन्न होय। तब दशरथ याकी बात प्रमाणकर कनकके कान पहुँचाई। तब कनक दशरथकी आज्ञा प्रमाणकर जे राजा गए हुते सो पीछे बुलाए। यथायोग्य स्थानविषैं तिष्ठे सब जे भूपति तेई भए नक्षत्रनिके समूह तिनके मध्य तिष्ठता जो भरतरूप चंद्रमा ताहि कनककी पुत्री लोकसुंदरीरूप शुक्लपक्षकी रात्रि सो महाअनुरागकरि वरती भई मनकी अनुरागतारूप माला तो पहिले अवलोकन करते ही डारी हुती, बहुरि लोकाचारमात्र सुमन कहिये पुष्प तिनकी वरमाला भी कण्ठमें डारी। कैसी है जनककी पुत्री? कनक समान है प्रभा जाकी, जैसे सुभद्रा भरत चक्रवर्तीकूं वरया हुता, तैसे यह दशरथके पुत्र भरतकों वरती भई। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे श्रेणिक! कर्मनिकी विचित्रता देख, भरत जैसे विरक्त चित्त राजकन्या पर मोहित भए, अर सब राजा विलखे होय अपने अपने स्थानक गए, जानै जैसा कर्म उपार्जा होय, तैसा ही फल पावै है। किसीके द्रव्यको दूसरा चाहने वाला न पावै।

अथानंतर मिथिलापुरीमें सीता अर लोकसुंदरीके बिवाहका परम उत्सव भया। कसी है मिथिलापुरी ध्वजा अर तोरणनिके समूहकरि मंडित है अर महा सुगंध करि भरी है, शंख आदि वादित्रनिके समूहसे पूरित है, श्रीरामका अर भरतका विवाह महो उत्सव सहित भया। द्रव्यकरि भिक्षुक लोक पूर्ण भए। जे राजा विवाहका उत्सव देखवेकूं रहे हुते ते दशरथ अर जनक कनक दोनों भाईसे अति सन्मान पाय अपने अपने स्थानक गये। राजा दशरथके पुत्र चारों रामकी स्त्री सीता भरतकी स्त्री लोकसुंदरी महा उत्सवनिसूं अयोध्याके निकट आये। कैसे हैं दशरथके पुत्र सकल पृथिवीविषैं प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी, अर परमरूप परमगुण सोई भया समुद्र ताविषैं मग्न हैं, अर परम रत्ननिके आभूषण तिनकर शोभित है शरीर जिनके, माता पिताकूं उपजाया है महाहर्ष जिननें नाना प्रकारके वाहन तिनकर पूर्ण जो सेना सोई भया सागर, जहां अनेक प्रकारके वादित्र बाजे हैं जैसैं जलनिधि गाजैं ऐसी सेना सहित राजमार्ग होय महल पधारे। मार्गमें जनक अर कनककी पुत्रीकूं सब ही देखै हैं सो देख देख अति हर्षित होय हैं अर कहै हैं इनकी तुल्य और कोऊ नाहीं। यह उत्तम शरीरकूं धरै हैं इनके देखवेकूं नगरके नर नारी मार्गमें आय इकट्ठे भये तिनकरि मार्ग अति संकीर्ण भया। नगरके दरवाजेसों लेय राजमहल पर्यंत मनुष्यनिका पार नाहीं, किया है समस्त जननिने आदर जिनका ऐसे दशरथके पुत्र इनके श्रेष्ठ गुणनिकी ज्यों-ज्यों लोक स्तुति करें त्यों-त्यों ये नीचे नीचे हो रहें। महासुखके भोगनहारे ये चारों ही भाई सुबुद्धि अपने अपने महलनिमें आनन्दसों विराजै। यह सब शुभ कर्मका फल विवेकी जन जानकर ऐसे सुकृत करहु जाकरि सूर्यतैं अधिक प्रताप होय। जेते शोभायमान उत्कृष्ट फल हैं ते सर्व धर्मके प्रभावतैं हैं। अर जे महानिंद्य कटुक फल हैं ते सब पापकर्मके उदयतैं हैं, तातैं सुखके अर्थि पाप क्रियाकूं तजहु अर शुभ क्रिया करहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं राम लक्ष्मणका धनुष चढ़ायवने आदि प्रताप वर्णन अर रामका सीतासों तथा भरतका लोकसुन्दरीसों विवाह वर्णन करनेवाला अट्ठाईसवां पर्व पूर्ण भया ॥२८॥

उनतीसवां

[राजा दशरथका धर्म-श्रवण]

अथानंतर आषाढ़ शुक्ला अष्टमीतैं अष्टाह्निका का महा उत्सव भया। राजा दशरथ जिनेंद्रकी महा उत्कृष्ट पूजा करनेकूं उद्यमी भया, राज्य धर्मविषैं अति सावधान है। राजाकी सब रानी पुत्र बांधव तथा सकल कुटुम्ब जिनराजके प्रतिबिम्बनिकी महा पूजा करवेकूं उद्यमी भए। केई बहुत आदरसे पंच वर्णके जे रत्न तिनके चूर्णका मांडला मांडे हैं। अर कई नाना-

प्रकारके रत्ननिकी माला बनावैं हैं । भक्तिविषैं पाया है अधिकार जिनने, अर कोऊ एला (इलायची) कपूरादि सुगंध द्रव्यनिकरि जलकूं सुगंध करैं हैं, अर कोऊ सुगंध जलसे पृथिवी-को छांटै हैं, अर कोऊ नाना प्रकारके परम सुगंध पीसे हैं, अर कोऊ जिनमंदिरोंके द्वारनिकी शोभा अति देदीप्यमान वस्त्रनिकरि करावैं हैं, अर कोऊ नानाप्रकारकी धातुओंके रंगोंकर चैत्या-लयनिकी भीतियोंको मडवावें हैं, या भांति अयोध्यापुरीके सब ही लोक वीतराग देवकी परम भक्तिको धरते संते अत्यंत हर्षकरि पूर्ण जिनपूजाके उत्साहसे उत्तम पुण्यकूं उपार्जते भए। राजा दशरथ भगवानका अति विभूतिकरि अभिषेक करावता भया। नाना प्रकारके वादित्र बाजते भए। तब राजा अष्ट दिनोंके उपवास किए, अर जिनेन्द्रकी अष्ट प्रकारके द्रव्यनितैं महा पूजा करी अर नाना प्रकारके सहज पुष्प अर कृत्रिम कहिए स्वर्ण रत्नादिकके रचे पुष्प तिनकरि अर्चा करी जैसैं नंदीश्वर द्वीपविषैं देवनिकरि संयुक्त इन्द्र जिनेंद्रकी पूजा करैं तैसैं राजा दशरथने अयोध्यामें करी। अर राजा चारों ही पटरानियोंको गंधोदक पठाया, सो तीनके निकट तो तरुण स्त्री ले गई सो शीघ्र ही पहुँचा। वे उठकर समस्त पापोंका दूर करनहारा जो गन्धोदक ताहि मस्तक अर नेत्रनितैं लगावती भई। अर रानी सुप्रभाके निकट वृद्ध खोजा ले गया हुता सो शीघ्र नहीं पहुचा, तातैं रानी सुप्रभा परम कोप अर शोककूं प्राप्त भई। मनमें चितवती भई जो राजा उन तीन रानिनिको गन्धोदक भेज्या अर मोहि न भेज्या सो राजाका कहा दोष है, मैं पूर्व जन्ममें पुण्य न उपजाया। वे पुण्यवती महा सौभाग्यवती प्रशंसा करने योग्य हैं जिनको भगवानका महा पवित्र गन्धोदक राजाने पठाया। अपमानकर दग्ध जो मैं सो मेरे हृदयका ताप और भांति न मिटै अब मुझे मरण ही शरण है। ऐसा विचार एक विशाखनामा भण्डारीकूं बुलाय कहती भई–हे भाई! यह बात तू काहूसे मत कहियो मोहि विषतैं प्रयोजन है सो तू शीघ्र ले आ। तब प्रथम तो वाने शंकायवान होय लायवेमें ढील करी। बहुरि विचारी कि औषधि निमित्त मंगाया होगा सो लैवेकूं गया। अर शिथिल-गात्र मलिन-चित्त वस्त्र ओढ़ सेज पर पड़ी। राजा दशरथने अंतःपुर मैं आय कर तीन रानी देखी सुप्रभा न देखी, सुप्रभासूं राजाका बहुत स्नेह सो इसके महलमें राजा आय खड़े रहे। ता समय जो विष लेनेकूं पठाया हुता सो ले आया अर कहता भया--हे देवि, यह विष लेहु। यह शब्द राजाने सुना तब उसके हाथसे उठाय लिया अर आप रानीकी सेज पर बैठ गए। तब रानी सेजसे उतर कर नीचे बैठी तब राजा आग्रहकर सेज ऊपर बैठाई अर कहते भए–हे वल्लभे! ऐसा क्रोध काहेतैं किया जाकर प्राण तजा चाहै है। सर्व वस्तुनितैं जीतव्य प्रिय है। अर सर्व दुःखोंसे मरणका बड़ा दुःख है ऐसा तोहि कहा दुःख है जो विष मंगाया। तू मेरे हृदय का सर्वस्व है जाने तुझे क्लेश उपजाया हो ताको मैं तत्काल तीव्र दण्ड दूं। हे सुंदरमुखी! तू जिनेन्द्रका सिद्धांत जानै है। शुभ अशुभ गतिके कारण जानै है जे विष तथा शस्त्र आदिसे

अपघात कर मरै हैं ते दुर्गतिमें पड़ै हैं ऐसी बुद्धि तोहि क्रोधसे उपजी सो क्रोधकों धिक्कार, यह क्रोध महा अन्धकार है अब तू प्रसन्न हो। जे पतिव्रताहै तिनने जौ लग प्रीतमके अनुरागके वचन न सुने तौ लग ही क्रोधका आवेश हैं। तब सुप्रभा कहती भई हे नाथ! तुम पर कोप कहा? परंतु मुझे ऐसा दुःख भया जो मरण बिना शांत न होय। तब राजा कही, हे रानी! तोहि ऐसा कहा दुख भया? तब रानी कही भगवानका गंधोदक और रानिनिकूं पठाया अर मोहि न पठाया सो मोमैं कौन कार्यकर हीनता जानी? अबलों तुम मेरा कभी भी अनादर न किया, अब काहेतैं अनादर किया? यह बात राजासों रानी कहै है ता समय वृद्ध खोजा गंधोदक ले आया, अर कहता भया, हे देवि! यह भगवानका गंधोदक नरनाथ तुमको पठाया सो लेहु। अर ता समय तीनों रानी आई अर कहती भई--हे मुग्धे! पतिकी तोपर अति कृपा है तू कोपको काहे प्राप्त भई? देख हमकूं तो गंधोदक दासी ले आई, अर तेरे वृद्ध खोजा ले आया। पतिके तोसूं प्रेमकी न्यूनता नाहीं, जो पतिमें अपराध भी होय अर वह आय स्नेहकी बात करै तो उत्तम स्त्री प्रसन्न ही होय हैं। हे शोभने! पतिसूं क्रोध करना सुखके विघ्नका कारण है सो कोप उचित नाहीं सो तिनने जब या भांति संतोष उपजाया तब सुप्रभाने प्रसन्न होय गंधोदक शीश पर चढ़ाया अर नेत्रनिकूं लगाया। राजा खोजासे कोपकर कहते भए—हे निकृष्ट, तैं एती ढील कहां लगाई? तब वह भय कर कंपायमान होय हाथ जोड़ सीस निवाय कहता भया, हे भक्तवत्सल! हे देव, हे! विज्ञान-भूषण! अत्यन्त वृद्ध अवस्था कर हीन शक्ति जो मैं सो मेरा कहा अपराध, मोपर आप कोप करो सो मैं क्रोधका पात्र नाहीं। प्रथम अवस्थाविषैं मेरे भुज हाथीके सूंड-समान हुते, उरस्थल प्रबल अर जांघ गजबंधन तुल्य हुतीं, अर शरीर दृढ़ हुता। अब कर्मनिके उदयकरि शरीर शिथिल होय गया। पूर्वैं ऊंची नीची धरती राजहंसकी न्याईं उलंघ जाता, मनवांछित स्थान जाय पहुँचता। अब स्थानकतैं उठा भी नहीं जाय है। तिहारे पिताके प्रसादकर मैं यह शरीर नाना प्रकार लड़ाया था सो अब कुमित्रकी न्याई दुखका कारण होय गया। पूर्वैं मुझे वैरीनिके विदारनेकी शक्ति हुती, सो अब तो लाठीके अवलंबनकर महा कष्टसूं फिरूं हूँ। बलवान पुरुष-निकर खैंचा जो धनुष वा समान वक्र मेरी पीठ हो गई है अर मस्तकके केश अस्थि-समान श्वेत होय गए हैं। अर मेरे दांत हू गिर गए, मानों शरीरका आताप देख न सकैं। हे राजन्! मेरा समस्त उत्साह विलय गया, ऐसे शरीरकर कोई दिन जीवूं हूँ सो बड़ा आश्चर्य है। जराकरि अत्यन्त जर्जर मेरा शरीर सांझ सकारे विनस जायगा। मोहि मेरी कायाकी सुधि नाहीं तो और सुध कहां से होय? पूर्वैं मेरे नेत्रादिक इन्द्रिय विचक्षणता कूं धरे हुते, अब नाममात्र रह गए हैं। पांय धरूं किसी ठौर, अर परैं काहू ठौर। समस्त पृथिवीतल दृष्टिकर श्याम भासै है ऐसी अवस्था होय गई तो बहुत दिननितैं राजद्वारकी सेवा है सो नाहीं तज सकूं हूं। पके फल समान जो

मेरा तन ताहि काल शीघ्र ही भक्षण करेगा। मोहि मृत्युका ऐसा भय नाहीं,जैसा चाकरी चूकने-का भय है। अर मेरे आपकी आज्ञा हीका अवलंबन है और अवलंबन नाहीं,शरीरकी अशक्तिता कर विलंब होय ताकूं मैं कहा करूं। हे नाथ! मेरा शरीर जराके आधीन जान कोप मत करो,कृपा ही करो। ऐसे वचन खोजाके राजा दशरथ सुनकर वाम हाथ कपोलके लगाय चिंतावान होय विचारता भया अहो! यह जलके बुदबुदा समान असार शरीर क्षणभंगुर है,अर यह यौवन बहुत विभ्रमकूं हू धरै सन्ध्याके प्रकाश समान अनित्य है, अर अज्ञानका कारण है। बिजलीके चमत्कार समान शरीर अर संपदा तिनके अर्थ अत्यन्त दुःखके साधन कर्म यह प्राणी करै है, उन्मत्त स्त्रीके कटाक्ष समान चंचल, सर्पके फण समान विषके भरे, महातापके समूहके कारण ये भोग ही जीवनकूं ठगैं हैं, तातैं महाठग हैं, ये विषय विनाशीक इनसे प्राप्त हुआ जो दुख सो मूढ़निकूं सुखरूप भासै है, ये मूढ जीव विषयनिकी अभिलाषा करै हैं, अर इनकूं मनवांछित विषय दुष्प्राप्य हैं विषयोंके सुख देखनेमात्र मनोज्ञ हैं, अर इनके फल अति कटुक हैं, ये विषय इन्द्रायणके फल समान हैं, संसारी जीव इनकूं चाहै हैं सो बड़ा आश्चर्य है। जे उत्तमजन विषयनिकूं विषतुल्य जानकर तजैं हैं अर तप करैं हैं ते धन्य हैं, अनेक विवेकी जीव पुण्या-धिकारी महा उत्साहके धरणहारे जिनशासनके प्रसादकरि प्रबोधकूं प्राप्त भए हैं। मैं कब इन विषयनिका त्यागकर स्नेहरूप कीचसे निकस निर्वृत्तिका कारण जिनेंद्रका तप आचरूंगा। मैं पृथिवीकी बहुत सुखसे प्रतिपालना करी,अर भोग भी मनवांछित भोगे, अर पुत्र भी मेरे महापराक्रमी उपजे। अब भी मैं वैराग्यविषैं विलंब करूं तो यह बड़ी विपरीत है। हमारे वंशकी यही रीति है कि पुत्रकूं राज्यलक्ष्मी देकर वैराग्यको धारण कर महाधीर तप करनेकूं वनमें प्रवेश करै। ऐसा चिंतवनकर राजा भोगनितैं उदास चित्त कई एक दिन घरमें रहे। हे श्रेणिक! जो वस्तु जा समय जा क्षेत्रमें जाकी जाको जेती प्राप्त होनी होय सो ता समय ता क्षेत्रमें तासे ताकूं तेती निश्चय सेती होय ही होय।

गौतम स्वामी कहै हैं,हे मगध देशके भूपति! कैयक दिनोंमें सर्व प्राणीनिके हितू सर्वभूपति नामा मुनि बड़े आचार्य मनःपर्य्ययज्ञानके धारक पृथिवीविषैं विहार करते संघसहित सरयू नदीके तीर आए। कैसे हैं मुनि? पिता समान छहकायके जीवनिके पालक,दयाविषैं लगाई है मन वचन कायकी क्रिया जिन,आचार्यकी आज्ञा पाय कैयक मुनि तो गहन वनमें विराजे,कैयक पर्वतनिकी गुफानिमें, कैयक वनके चैत्यालयनिमें, कैयक वृक्षनिके कोटरनिमें इत्यादि ध्यान योग्य स्थाननिमें साधु तिष्ठे। अर आप आचार्य महेंद्रोदय नामा वनमें एक शिलापर जहां विकलत्रय जीवनिका संचार नाहीं, अर स्त्री नपुंसक बालक ग्राम्यजन पशुनिका संसर्ग नाहीं, ऐसा जो निर्दोष स्थानक तहां नागवृक्षोंके नीचे निवास किया। महागंभीर महाक्षमावान जिनका दर्शन दुर्लभ, कर्म खिपावनके

उद्यमी महा उदार है मन जिनका, महामुनि तिनके स्वामी वर्षाकाल पूर्ण करवेकूं समाधि योग धर तिष्ठे। कैसा है वर्षाकाल ? विदेश गमन किया तिनकूं भयानक है। वर्षती जो मेघमाला अर चमकनी जो विजुरी अर गरजती कारी घटा तिनकी भयंकर जो ध्वनि ताकरि मानों सूर्यको खिझावता संता पृथिवीपर प्रकट भया है। सूर्य ग्रीष्म ऋतुविषैं लोकनिकूं आतापकारी हुता सो अब स्थूल मेघकी धाराके अंधकारतैं भय थकी भाज मेघमालामें छिप्या चाहै है। अर पृथिवीतल हरे नाजके अंकुरनिरूप कंचुकिन कर मंडित है अर महानदियनिके प्रवाह वृद्धिकूं प्राप्त भए हैं ढाहा पहाड़तैं वहै हैं। इस ऋतुमें जे गमन करे हैं ते अति कम्पायमान होय हैं। अर तिनके चित्तमें अनेक प्रकार की भ्रांति उपजै है, ऐसी वर्षा ऋतुमें जैनी जन खड्गकी धारा समान कठिन व्रत निरंतर धारैं हैं। चारण मुनि अर भूमिगोचरी मुनि चातुर्मासिकमें नानाप्रकारके नियम धरते भए। हे श्रेणिक ! वे तेरी रक्षा करहु, रागादिक परणतितैं तोहि निवृत्त करहु।

अथानंतर प्रभात समय राजा दशरथ वादित्रनिके नादकरि जाग्रत भया जैसैं सूर्य उदयकूं प्राप्त होय। अर प्रातः समय कूकड़े बोलने लगे सारिस चकवा सरोवर तथा नदियनिके तटविषैं शब्द करते भए। स्त्री पुरुष सेजनितैं उठे। भगवानके चैत्यालय तिनविषैं भेरी मृदंग वीणा वादित्रनिके नाद होते भए। लोक निद्राकूं तज जिन-पूजनादिक विषैं प्रवर्ते। दीपक मंद ज्योति भए। चंद्रमाकी प्रभा मंद भई। कमल फूले,कुमुद मुद्रित भए, अर जैसैं जिन सिद्धांतके ज्ञातानिके वचननिकरि मिथ्यावादी विलय जांय तैसैं सूर्यकी किरणनिकरि ग्रह तारा नक्षत्र छिप गए। या भांति प्रभात समय अत्यंत निर्मल प्रकट भया। तब राजा देहकृत्य क्रियाकर भगवानकी पूजाकर वारंवार नमस्कार करता भया। अर भद्र जातिकी हथिनीपर चढ़ देवनि सारिखे जे राजा तिनके समूहनिकर संयुक्त ठौर २ मुनिनकूं अर जिनमंदिरनिकूं नमस्कार करता महेंद्रोदय वनमें पृथिवी-पति गया, जाकी विभूति पृथिवीकूं आनंद उपजावनहारी वर्षोंपर्यंत व्याख्यान करिए तौ भी न कह सकिए। जो मुनि गुणरूप रत्ननिका सागर जा समय याकी नगरीके समीप आवैं ताही समय याकूं खबर होय जा मुनि आए हैं तब ही यह दर्शनकूं जाय सो सर्वभूतहित मुनिकूं आए सुन तिनके निकट केते समीपी लोकनि सहित आया। हथिनीसूं उतर अति हर्षका भरया नमस्कारकर महाभक्ति संयुक्त सिद्धांत-संबंधी कथा सुनता भया। चारों अनुयोगनिकी चर्चा अवधारी, अर अतीत अनागत वर्तमान कालके जे महापुरुष तिनके चरित्र सुने। लोकालोकका निरूपण अर छह द्रव्यनिका स्वरूप, छह कायके जीवनिका वर्णन, छह लेश्याका व्याख्यान, अर छहों कालका कथन, अर कुलकरनिकी उत्पत्ति, अर अनेक प्रकार क्षत्रियादिकनिके वंश अर तत्त्व, नव पदार्थ पंचास्तिकायका वर्णन आचार्यके मुखतैं श्रवणकर सब मुनियनिकूं बारंवार नमस्कार-कर राजा धर्मके अनुरागकरि पूर्ण नगरमें आए, जिनधर्मके गुणनिकी कथा निकटवर्ती राजानिसों अर मंत्रियनिसूं कर अर सबनिकूं विदाकर महलमें प्रवेश करता भया। विस्तीर्ण हैं विभव जाके

अर राणी लक्ष्मीतुल्य परमकांतिकर संपूर्ण चंद्रमा समान सम्पूर्ण सुन्दर वदनकी धरणहारी, नेत्र अर मनकी हरण हारी,हाव भाव विलास विभ्रमकर मंडित महा निपुण परम विनयकी करणहारी, प्यारी तेई कमलनिकी पंक्ति तिनकूं राजा सूर्य समान प्रफुल्लित करता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताको भाषावचनिकाविषै अष्टान्हिका आगम अर राजा दशरथका धर्मश्रवण कथा नाम वर्णन करनेवाला उनतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥२६॥

तीसवां पर्व

[भामंडल का मिलाप]

अथानंतर मेघके आडंबरकर युक्त जो वर्षाकाल सो गया अर आकाश संभारे खड्ग-की प्रभा समान निर्मल भया। पद्म महोत्पल पुंडरीक इंदीवरादि अनेक जातिके कमल प्रफुल्लित भए। कैसे हैं कमलादिक पुष्प, विषयी जीवनिकूं उन्मादके कारण हैं। अर नदी सरोवरादिविषैं जल निर्मल भया, जैसा मुनिका चित्त निर्मल होय तैसा। अर इंद्रधनुष जाते रहे। पृथ्वी कर्दम रहित होय गई। शरदऋतु मानूं कुमुदनिके प्रफुल्लित होनेसे हंसती हुई प्रकट भई। बिजुरियोंके चमत्कारकी संभावना हो गई। सूर्य तुलाराशिपर आया, शरदके श्वेत बादरे कहू कहूं दृष्टि आवें सो क्षणमात्रमें विलाय जांय। निशारूप नवोढ़ा स्त्री संध्याके प्रकाशरूप महा सुंदर लाल अधरनिकूं धरे चांदनीरूप निर्मल वस्त्रनिकूं पहिर चंद्रमारूप है चूड़ामणि जाके सो अत्यंत शोभती भई। अर वापिका निर्मल जलकी भरी मनुष्यनिके मनकूं प्रमोद उपजाती भई। चकवा चकवीके युगल करैं हैं केलि जहां, अर मदोन्मत्त जे सारस ते करैं है नाद जहां,कमलनिके वनमें भ्रमते जो राजहंस अत्यंत शोभाकूं धरैं है सो सीताकी है चिंता जाके ऐसा जो भामडल ताहि यह ऋतु सुहावनी न लगी, अग्नि समान भासै है जगत जाकूं। एक दिन यह भामंडल लज्जाकूं तजकर पिताके आगे वसंतध्वज नामा जो परम मित्र ताहि कहता भया। कैसा है भामंडल ? अरतिसे पीडित है अंग जाका, मित्रसूं कहै है हे मित्र ! तू दीर्घ-सोची है अर पर-कार्यविषैं उद्यमी है एते दिन होय गए तोहि मेरी चिंता नाहीं। व्याकुलतारूप भ्रमणकूं धरै जो आशारूप समुद्र ताविषैं डूबा हू मोहि आलंबन कहा न देवो ? ऐसे आर्तध्यानकर युक्त भामंडलके वचन सुन राज-सभाके सब लोक प्रभाव-रहित विषाद-संयुक्त होय गए। तब तिनकूं महा शोककर तप्तायमान देख भामंडल लज्जासे अधोमुख होय गया। तब एक बृहत्केतु नामा विद्याधर कहता भया अब कहा छिपाय राखो, कुमारसूं सर्व वृत्तांत यथार्थ कहो जाकरि भ्रांति न रहै। तब वे सर्व वृत्तांत भामंडलसूं कहते भए—हे कुमार ! हम कन्याके पिताकूं यहां ले आए हुते, कन्याकी बात याचना करी, सो वाने कही मैं कन्या रामकूं देनी करी है। हमारे अर वाके वार्ता बहुत भई वह न मानै। तब वज्रावर्त धनुषका करार भया जो धनुष राम चढावें तो कन्याकूं परणैं, नातर हम यहां ले आवेंगे अर भामंडल विवाहेगा। सो धनुष लेकर यहांसे विद्याधर मिथिलापुरी गए।

सो राम महा पुण्याधिकारी धनुष चढ़ाया ही। तब स्वयंवर मंडपमें जनककी पुत्री अति गुणवती महा विवेकवंती पतिके हृदयकी हरणहारी व्रत नियमकी धरनहारी नवयौवन मंडित, दोषनिकरि अखंडित, सर्व कलापूर्ण शरदऋतुकी पूर्णमासीके चंद्रमा समान मुखकी कांतिकूं धरै, लक्ष्मी सारिखे शुभलक्षण लावण्यताकरि युक्त सीता महासती श्रीरामके कंठमें वरमाला डार वल्लभा होती भई। हे कुमार! वे धनुष वर्तमान कालके नाहीं, गदा अर हल आदि देवोपनीत रत्ननिकर युक्त अनेक देव जिनकी सेवा करैं हैं कोई जिनकूं देख न सकै सो वज्रावर्त सागरावर्त दोऊ धनुष राम लक्ष्मण दोऊ भाई चढ़ावते भए। वह त्रिलोकसुंदरी रामने परणी अयोध्या ले गए। सो अब वह बलात्कार देवनिकरि भी न हरी जाय, हमारी कहा बात? अर कदाचित् कहोगे रामको परणाये पहले ही क्यों न हरी? जनकका मित्र रावणका जमाई मधु है सो हम कैसें हर सकैं। तातैं हे कुमार! अब संतोष आदरौ निर्मलता भजहु, होनहार होय सो होय इंद्रादिक भी और भांति न कर सकैं। तब धनुष चढ़ावनेका वृत्तांत अर रामसे सीताका विवाह होगया सुन भामंडल अति लज्जावान होय विषादकरि पूर्ण भया, मनमें विचारै है जो मेरा यह विद्याधरका जन्म निरर्थक है। जो मैं हीन पुरुषकी न्याई ताहि न परण सक्या। ईर्षा अर क्रोधकर मंडित होय सभाके लोकनिकूं कहता भया, कहा तुम्हारा विद्याधरपना, तुम भूमिगोचरिनितेहू डरो हो। मैं आप जायकर भूमिगोचरिनिकूं जीत ताकूं ले आऊंगा। अर जे धनुषके अधिष्ठाता उनकूं धनुष दे आये तिनका निग्रह करूंगा ऐसा कहकर शस्त्र सजि विमानविषैं चढ आकाशके मार्ग गया। अनेक ग्राम नदी नगर वन उपवन सरोवर पर्वतादि पूर्ण पृथिवीमंडल देख्या। तब याकी दृष्टि जो अपने पूर्व भवका स्थानक विदग्धपुर पहाड़निके बीच हुता वहां पड़ी, चित्तमें चिंतई कि यह नगर मैंने देख्या है? जातिस्मरण होय मूर्च्छा आय गई। तब मंत्री व्याकुल होय पिताके निकट ले आए। चन्दनादि शीतल द्रव्यनिकरि छांट्या, तब प्रबोधकूं प्राप्त भया। राजलोककी स्त्री याहि कहती भई हे कुमार! तुमको यह उचित नाहीं जो माता पिताके निकट ऐसी लज्जारहित चेष्टा करहु। तुम तो विचक्षण हो, विद्याधरनिकी कन्या देवांगनाहूतैं अतिसुंदर है ते परणो, लोक-हास्य कहा करावो हो? तब भामंडल लज्जा अर शोक करि मुख नीचा किया, अर कहता भया धिक्कार है मोकूं, मैं महामोहकरि विरुद्ध कार्य चिंत्या जो चांडालादि अत्यंत नीचकुल हैं तिनहूके यह कर्म न होय। मैं अशुभ कर्मनिके उदयकरि अत्यंत मलिन परिणाम किए। मैं अर सीता एकही माताके उदरसे उपजे हैं। अब मेरे अशुभ कर्म गया तब यथार्थ जानी, सो याके ऐसे वचन सुनकर अर शोककर पीड़ित देख याका पिता राजा चंद्रगति गोदमें लेय मुख चूम पूछता भया हे पुत्र! यह तू कौन भांति कही, तब कुमार कहता भया—हे तात! मेरा चरित्र सुनहु। पूर्वभवविषैं मैं इस ही भरतक्षेत्रविषैं विदग्धपुर नगर तहां कुंडलमंडित राजा हुता परमंडलका लूटनहारा, सदा विग्रहका करणहारा, पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध निज प्रजाका पालक महाविभवकर संयुक्त

सो मैं पापी मायाचारकर एक विप्रकी स्त्री हरी। सो वह विप्र तो अतिदुखी होय कहीं चला गया अर मैं राजा अनरण्यके देशमें बाधा करी सो अनरण्यका सेनापति बालचंद्र मोहि पकड़ ले गया अर मेरी सर्वसंपदा हर लीनी। मैं शरीरमात्र रह गया, कैएक दिनमें बंदीगृहतैं छूट्या सो महा-दुःखित पृथ्वीविषैं भ्रमण करता मुनियोंके दर्शनकूं गया, महाव्रत अणुव्रतका व्याख्यान सुन्या, तीन लोकपूज्य जो सर्वज्ञ वीतरागदेव तिनका पवित्र जो मार्ग ताकी श्रद्धा करी। जगतके बांधव जे श्रीगुरु तिनकी आज्ञाकर मैंने मद्य-मांसका त्यागरूप व्रत आदर्‌या, मेरी शक्ति हीन हुती तातैं ये विशेष व्रत न आदर सक्या। जिनशासनका अद्भुत माहात्म्य जो मैं महापापी हुता सो एते ही व्रतसे मै दुर्गतिमें न गया। जिनधर्मके शरणकरि जनककी रानी विदेहाके गर्भमें उपज्या अर सीता भी उपजी सो कन्या सहित मेरा जन्म भया। अर वह पूर्वभवका विरोधी विप्र जाकी मैं स्त्री हरी हुती सो देव भया अर मोहि जन्मतें ही जैसैं गृद्ध पक्षी मांसकी डलीकूं ले जाय तैसैं नक्षत्रनितैं ऊपर आकाशविषैं ले गया। सो पहिले तो तानैं विचार किया कि याकूं मारूं। बहुरि करुणाकरि कुंडल पहराय लघुपर्ण विद्याकर मोहि यन्त्रसों डार्‌या, सो रात्रिविषैं पड़ता तुमने झेल्या अर दयावान होय अपनी रानीकूं सौंप्या, सो मैं तिहारे प्रसादतैं वृद्धिकूं प्राप्त भया, अनेक विद्याका धारक भया। तुमने बहुत लड़ाया, अर माता मेरी बहुत प्रतिपालना करी। भामंडल ऐसे कहके चुप हो रहा। राजा चंद्रगति यह वृत्तांत सुनकर परम प्रबोधकूं प्राप्त भया अर इंद्रियनिके विषयनिकी वासना तज महा वैराग्य अंगीकार करवेकूं उद्यमी भया। लोकधर्म कहिए स्त्रीसेवन सोई भया वृक्ष ताहि सुखफलसूं रहित जान्या, अर संसारका बंधन जानकर अपना राज्य भामंडलकूं देय आप सर्वभूतहित स्वामीके समीप शीघ्र आया। वे सर्व-भूतहित स्वामी पृथ्वीविषैं सूर्यसमान प्रसिद्ध गुणरूप किरणनिके समूह कर भव्य जीवनिकूं प्रति-बुद्ध करनहारे सो राजा चंद्रगति विद्याधर महेंद्रोदय उद्यानविषैं आय मुनिकी अर्चना करी। बहुरि नमस्कार स्तुति कर सीस नवाय हाथ जोड़ या भांति कहता भया—हे भगवन्! तिहारे प्रसाद-कर मैं जिनदीक्षा लेय तप किया चाहूं हूं, मैं गृहवासतैं उदास भया। तब मुनि कहते भए भवसागरसूं पार करणहारी यह भगवती दीक्षा है सो लेहु। राजा तो वैराग्यकूं प्राप्त भया अर भामंडलके राज्यका उत्सव होता भया, ऊंचे स्वर नगारे बाजे, नारी गीत गावती भई, वांसुरी आदि अनेक वादित्रनिके समूह बाजते भए। ताल मंजीरा वांसरी आदि वादित्र बाजे, 'शोभायमान जनक राजाका पुत्र जयवंत होवे' ऐसा बंदीजननिका शब्द होता भया सो महेंद्रोदय उद्यानविषैं ऐसा मनोहर शब्द रात्रिविषैं भया जातैं अयोध्याके समस्त जन निद्रा-रहित होय गए। बहुरि प्रातःसमय मुनिराजके मुखतैं महाश्रेष्ठ शब्द सुनकर जैनीजन अति हर्षकूं प्राप्त भए। अर सीता 'जनक राजाका पुत्र जयवंत हो' ऐसी ध्वनि सुनकर मानों अमृतसे सींची गई, रोमांचकर संयुक्त भया है सर्व अंग जाका, अर फरकै है बांई आंख जाकी, मनमें चितवती भई

जो यह बारंबार ऊंचा शब्द सुनिए कि जनक राजाका पुत्र जयवंत होऊ सो मेरा हू पिता जनक है कनकका बड़ा भाई, अर मेरा भाई जन्मता ही हरया गया था सो वही न होय? असा विचारकर भाईके स्नेहरूप जलकर भीज गया है मन जाका, सो ऊंचे स्वरकर रुदन करती भई। तब राम अभिराम कहिए सुंदर है अंग जाका, महामधुर वचनकर कहते भए--हे प्रिये! तू काहेकूं रुदन करै है, जो यह तेरा भाई है तो अब खबर आवै है अर जो और है तो हे पंडिते! तू कहा सोच करै है, जे विचक्षण हैं ते मुएका हरेका गएका नष्ट हुएका शोच न करैं। हे वल्लभे! जे कायर हैं अर मूर्ख हैं उनके विषाद होय है। अर जे पंडित हैं पराक्रमी हैं तिनके विषाद नाहीं होय है। या भांति रामके अर सीताके वचनालाप होवै हैं ताही समय बधाईवारे मंगल शब्द करते आए। तब राजा दशरथने महाहर्षतैं बहुत आदरतैं नाना प्रकारके दान करे अर पुत्र कलत्रादि सर्व कुटुम्बसहित वनमे गया सो नगरके बाहिर चारों तरफ विद्याधरनिकी सेना सैंकड़ों सामंतनिसे पूर्ण देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया, विद्याधरनिने इंद्रके नगर तुल्य सेनाका स्थानक क्षणमात्रमें बनाय राखा है। जाके ऊंचे कोट, बड़ा दरवाजा, जे पताका तोरण तिनतैं शोभायमान रत्ननिकरि मंडित ऐसा निवास देख राजा दशरथ जहां वनमें साधु विराजे हुते तहां गया, नमस्कारकर स्तुतिकर राजा चंद्रगतिका वैराग्य देख्या। विद्याधरनिसहित श्रीगुरुकी पूजा करी। राजा दशरथ सर्व बांधवसहित एक तरफ बैठ्या अर भामंडल सर्व विद्याधरनिसहित एक तरफ बैठ्या। विद्याधर अर भूमिगोचरी मुनिके पास यति अर श्रावकका धर्म श्रवण करते भए। भामंडल पिताके वैराग्य होयवेकर कछुइक शोकवान बैठा तब मुनि कहते भए जो यतिका धर्म है सो शूरवीरोंका है, जिनके गृहवास नाहीं, महा शांत दशा है, आनंदका कारण है, महा दुर्लभ है, कायर जीवनिकूं भयानक भासै है। भव्यजीव मुनिपदकूं पाय कर अविनाशी धामकूं पावैं हैं। अथवा इंद्र अहमिंद्र पद लहै हैं, लोकके शिखर जो सिद्ध स्थानक हैं सो मुनिपद विना नाहीं पाइये है कैसे हैं मुनि? सम्यग्दर्शनकरि मंडित हैं, जिनमार्गसे निर्वाणके सुखकूं प्राप्त होय अर चतुर्गतिके दुखतैं छूटै सोही मार्ग श्रेष्ठ है सो सर्वभूतहित मुनिने मेघकी गर्जना समान है ध्वनि जिनकी सर्व जीवनिके चित्तकूं आनंदकारी ऐसे वचन कहे। कैसे हैं मुनि? समस्त तत्त्वोंके ज्ञाता। सो मुनिके वचनरूप जल, संदेहरूप तापकूं हरता जीवनिने कर्णरूप अंजुली-निकरि पीए। कैयक मुनि भए, कैयक श्रावक भए, महा धर्मानुरागकर युक्त है चित्त जिनका। धर्मका व्याख्यान हो चुक्या तब दशरथ पूछता भया--हे नाथ! चंद्रगति विद्याधरकूं कौन कारण वैराग्य उपज्या? अर सीता अपने भाई भामंडलका चरित्र सुनवेकी इच्छा करती भई। कैसी है सीता? महाविनयवंती है। तब मुनि कहते भए--हे दशरथ! तुम सुनहु, इन जीवनिकी अपने अपने उपार्जे कर्मनिकर विचित्र गति है। यह भामंडल पूर्वै संसारमें अनंत काल भ्रमणकर अति

दुखित भया, कर्मरूपी पवनका प्रेरया या भवमें आकाशसूं पड़ता राजा चंद्रगतिकूं प्राप्त भया, सो चंद्रगति अपनी स्त्री पुण्यवतीकूं सौंप्या, सो नवयौवनमें सीताका चित्रपट देख मोहित भया। तब जनककूं एक विद्याधर कृत्रिम अश्व होय ले गया, यह करार ठहरया जो धनुष चढ़ावै सो कन्या परणै। बहुरि जनककूं मिथिलापुरी लेय आए अर धनुष श्रीरामने चढ़ाया, अर सीता परणी। तब भामंडल विद्याधरनिके मुखसे यह वार्ता सुन क्रोधकर विमानमें बैठा आवै था सो मार्गमें पूर्वभवका नगर देख्या। तब जातिस्मरण हुआ जो मैं कुंडलमंडित नामा या विदग्धपुरका राजा अधर्मी हुता। पिंगल ब्राह्मणकी स्त्री हरी बहुरि मोहि अनरण्यके सेनापतिने पकड्या, देशतैं काढ़ दिया, सर्वस्व लूट लिया। सो महापुरुषनिके आश्रय आय मधु-मांसका त्याग किया, शुभ परिणामनितैं मरणकर जनककी राणी विदेहाके गर्भतैं उपज्या। अर वह पिंगल ब्राह्मण जाकी स्त्री याने हरी सो वनसे काष्ठ लाय स्त्री-रहित शून्य कुटी देख अति विलाप करता भया कि हे कमल नयनी! तेरी रानी प्रभावती सारिखी माता अर चक्रध्वज सारिखे पिता तिनकूं अर बड़ी विभूति, अर बड़ा परिवार, ताहि तज मोसूं प्रीतिकर विदेश आई, रूखे आहार अर फाटे वस्त्र तैनें मेरे अर्थसे आदरे! सुंदर हैं सर्व अंग जाके अब तू मोंहि तज कहां गई? या भांति वियोग-रूप अग्नि कर दग्धायमान वह पिंगल विप्र पृथ्वीविषैं महा दुखसहित भ्रमणकर मुनिराजके उपदेशतैं मुनि होय तप अंगीकार करता भया, तपके प्रभावतैं देव भया सो मनमें चिंतवता भया कि वह मेरी कांता सम्यक्तरहित हुती सो तिर्यंचगतिकूं गई, अथवा मायाचाररहित सरल परिणाम हुती सो मनुष्यनी भई, अथवा समाधिमरणकर जिनराजकूं उरमें धर देवगतिकूं प्राप्त भई? अर वह दुष्ट कुंडलमंडित जानै आगैं मेरी स्त्री हरी हुती सो कहां? तब अवधिकरि जनककी स्त्रीके गर्भमें आया जान जन्म होते ही बालककूं हरया, सो चंद्रगति झेल्या। अर रानी पुष्पवतीको सौंप्या, सो भामंडल जातिस्मरण होय सर्व वृत्तांत चंद्रगतिकूं कहा। जो सीता मेरी बहिन है अर रानी विदेहा मेरी माता है अर पुण्यवती मेरी प्रतिपालक माता है। यह वार्ता सुन विद्याधरनिकी सर्व सभा आश्चर्य-कूं प्राप्त भई। अर चंद्रगति भामंडलकूं राज्य देय संसार शरीर अर भोगनितैं उदास होय वैराग्य अंगीकार करना विचारया। अर भामंडलकूं कहता भया—हे पुत्र! तेरे जन्मदाता माता पिता तेरे शोककरि महादुखी तिष्ठैं हैं सो अपना दर्शन देय तिनके नेत्रनिकूं आनन्द उपजाय। सो स्वामी सर्वभूतहित मुनिराज राजा दशरथसूं कहै हैं यह राजा चन्द्रगति संसारका स्वरूप असार जान हमारे निकट आय जिन दीक्षा धरता भया, जो जन्म्या है सो निश्चयसे मरेहीगा, अर जो मूवा है सो अवश्य नया जन्म धरेगा, यह संसारकी अवस्था जान चंद्रगति भवभ्रमणतैं डरया। ये मुनिके बचन सुनकर भामंडल पूछता भया—हे प्रभो! चंद्रगतिका पुष्पवतीका मोपर अधिक स्नेह काहेतैं भया, तब मुनि बोले, ये पूर्वभवके तेरे माता पिता हैं सो सुन। एक दारूनामा

ग्राम वहां ब्राह्मण विमुचि ताके स्त्री अनुकोशा, अर अतिभूत पुत्र, ताकी स्त्री सरसा, अर एक कयान नामा परदेशी ब्राह्मण सो अपनी माता ऊर्या सहित दारूग्राममें आया सो पापी अतिभूत की स्त्री सरसाकू' अर इनके घरके सारभूत धनकू' ले भागा। सो अतिभूत महादुखी होय ताके ढूंढवेकू' पृथ्वीपर भटक्या। अर याका पिता कैयक दिन पहिले दक्षिणाके अर्थ देशांतर गया हुता सो घर पुरुषनि विना सूना होय गया। जो घरमें थोड़ा बहुत धन रहा था सो भी जाता रहा। अर अतिभूतकी माता अनुकोशा सोदारिद्रकरि महादुखी, यह सब वृत्तांत विमुचिने सुना कि घर का धन हू गया, अर पुत्रकी बहू हू गई, अर पुत्र ढूंढवेकू' निकसा है सो न जानिये कौन तरफ गया? तब विमुचि घर आया अर अनुकोशाकू' अति विह्वल देख धैर्य बंधाया। अर कयानकी माता ऊर्या सो हू महादुःखिनी पुत्र अन्याय कार्य किया ताकरि अति लज्जायमान सो कहके दिलासा करी जो तेरा अपराध नाहीं अर आप विमुचि पुत्रके ढूंढवेकू' गया सो एक सर्वारि नाम नगर ताके वनमें एक अवधिज्ञानी मुनि सो लोकनिके मुखतैं उनकी प्रशंसा सुनी। जो अवधिज्ञानरूप किरणों कर जगतमें प्रकाश करै हैं। तब यह मुनिपै गया, धन अर पुत्रवधूके जानेसे महादुखी हुता ही सो मुनिराजकी तपोऋद्धि देखकर अर संसारकी झूठी माया जान तीव्र वैराग्य पाय विमुचि ब्राह्मण मुनि भया अर विमुचिकी स्त्री अनुकोशा अर कयानकी माता ऊर्या ये दोनों ब्राह्मणी कमलकांता आर्यिकाके निकट आर्यिकाके व्रत धारती भई। सो विमुचि मुनि अर वे दोनों आर्यिका तीनों जीव महानिस्पृह धर्मध्यानके प्रसादतैं स्वर्गलोक गए। कैसा है वह लोक सदा प्रकाशरूप है, विमुचिका पुत्र अतिभूत हिंसामार्गका प्रशंसक अर संयमी जीवोंका निन्दक सो आर्त रौद्र ध्यानके योगतैं दुर्गति गया अर यह कयान भी दुर्गति गया। अर वह सरसा अतिभूतकी स्त्री जो कयानकी लार निकसी हुती सो बलाहक पर्वतकी तलहटीमें मृगी भई, सो व्याघ्रके भयतैं मृगोंके यूथसे अकेली होय दावानलमें जल मुई, सो जन्मांतरमें चित्तोत्सवा भई, अर वह कयान भव-भ्रमण कर ऊंट भया। धूम्रकेशका पुत्र पिंगल भया, अर वह अतिभूत सरसाका पति भव-भ्रमण करता राक्षस सरोवरके तीर हंस भया, सो सिचानूने इसका सर्व अंग घायल किया सो चैत्यालयके समीप पड़ा। तहां गुरु शिष्यको भगवानका स्तोत्र पढ़ावता भया सो याने सुना, हंसकी पर्याय छोड़ दस हजार वर्षकी आयुका धारी नगोत्तम नामा पर्वतविषैं किन्नर देव भया। तहांतैं चयकर विदग्धपुरका राजा कुंडलमंडित भया, सो पिंगलके पाससे चित्तोत्सवा हरी सो ताका सकल वृत्तांत पूर्वैं कहा ही है। अर वह विमुचि ब्राह्मण जो स्वर्गलोककू' गया हुता सो राजा चंद्रगति भया, अनुकोशा ब्राह्मणी पुष्पवती भई अर वह कयान कई भव लेय पिंगल होय मुनिव्रत धार देव भया सो वाने भामंडलकू' होते ही हरया, अर वह ऊर्या ब्राह्मणी देवलोकतैं चयकर रानी विदेहा भई। यह सकल वृत्तांत राजा दशरथ सुनकर भामंडलतैं मिल्या

अर नेत्र अश्रुपाततैं भर लिये। अर संपूर्ण सभा यह कथा सुनकर सजल नेत्र होय गई अर रोमांच होय आए। अर सीता अपने भाई भामंडलकूं देख स्नेह कर मिली, अर रुदन करती भई, हे भाई! मैं तोहि प्रथम ही देख्या। अर श्रीराम लक्ष्मण उठकर भामंडलतैं मिले, मुनिकूं नमस्कार कर खेचर भूचर सब ही वनसे नगरकूं गए। भामंडलसूं मंत्र कर राजा दशरथने जनक राजाके पास विद्याधर पठाया। अर जनककूं आवने अर्थ विमान भेजे। राजा दशरथने भामंडलका बहुत सन्मान किया। अर भामंडलकूं अति रमणीक महल रहिवेकूं दीए जहां सुन्दर वापी सरोवर उपवन हैं सो वहां भामंडल सुखसूं तिष्ठ्या। अर राजा दशरथने भामण्डलके आवनेका बहुत उत्सव किया, याचकनिकूं वांछासे भी अधिक दान दिया, सो दरिद्रता रहित भए। अर राजा जनकके निकट पवनहूते अति शीघ्रगामी विद्याधर गए, जाय कर पुत्रके आगमनकी वधाई दी। अर दशरथका अर भामण्डलका पत्र दिया सो वांचकर जनक अति आनन्दकूं प्राप्त भया, रोमांच होय आए। विद्याधरसूं राजा पूछै है हे भाई! यह स्वप्न है या प्रत्यक्ष है? तू आ हमसों मिल, ऐसा कहकर राजा मिले अर लोचन सजल होय आए जैसा हर्ष पुत्रके मिलनेका होय तैसा पत्र लानेवालेसे मिलनेका भया, सम्पूर्ण वस्त्र आभूषण ताहि दिए, सब कुटुम्बके लोग भेले होय उत्सव किया, अर वारम्वार पुत्रका वृत्तांत ताहि पूछै हैं अर सुन सुन तृप्त न होय। विद्याधर सकल वृत्तांत विस्तारसूं कह्या। ताही समय राजा जनक सर्व कुटुम्बसहित विमानमें बैठ अयोध्यामें चाले सो एक निमिषमें जाय पहुंचे। कैसी है अयोध्या? जहां वादित्रनिके नाद होय रहे हैं। जनक शीघ्र ही विमानतैं उतर पुत्रतैं मिल्या, सुखकर नेत्र मिल गए, क्षण एक मूर्च्छा आय गई। बहुरि सचेत होय अश्रुपातके भरे नेत्रनिसूं पुत्रकूं देखा, अर हाथसे स्पर्शा। अर माता विदेहा हू पुत्रकूं देख मूर्च्छित होय गई। बहुरि सचेत होय मिली अर रुदन करती भई, जाके रुदनकूं सुनकर तिर्यंचनिकूं भी दया उपजै। हाय पुत्र! तू जन्मतैं ही उत्कट वैरीतैं हरा गया हुता तेरे देखवे चितारूप अग्नि कर मेरा शरीर दग्ध भया हुता सो तेरे दर्शनरूप जलकरि सींचा शीतल भया। अर धन्य है वह राणी पुष्पवती विद्याधरी जानैं तेरी बाल लीला देखी, अर क्रीडा कर धूसरा तेरा अंग उरसे लगाया, अर मुख चूमा, अर नवयौवन अवस्थाविषैं चन्दन कर लिप्त सुगन्धनिकर युक्त तेरा शरीर देख्या, ऐसे शब्द माता विदेहाने कहे। अर नेत्रनितैं अश्रुपात झर, स्तनतैं दुग्ध झरा अर विदेहाकूं परम आनन्द उपज्या, जैसैं जिनशासन की सेवक देवी आनन्द सहित तिष्ठै तैसैं पुत्रकूं देख सुखसागरमें तिष्ठी। एक मास पर्यंत यह अयोध्यामें रहे। फिर भामंडल श्रीरामसूं कहते भए हे देव! या जानकीको तिहारो ही शरण हैं, धन्य है भाग्य याके जो तुम सारिखे पति पाए ऐसे कह बहिनकूं छातीसे लगाया अर माता विदेहा सीताकूं उरसे लगाय कर कहती भई हे पुत्री! सास ससुरकी अधिक सेवा करियो, अर ऐसा करियो जो

सर्व कुटुम्बमें तेरी प्रशंसा होय सो भामण्डलने सबकूं बुलाया। जनकका छोटा भाई जो कनक उसे मिथिलापुरीका राज्य सौंपकर जनक अर विदेहाकूं अपने स्थानक ले गया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं कि हे मगधदेशके अधिपति! तू धर्मका माहात्म्य देख, जो धर्मके प्रसादतैं श्रीरामदेवके सीता सारिखी स्त्री भई, गुण-रूपकर पूर्ण जाका भामंडलसा भाई विद्याधरनिका इन्द्र अर देवाधिष्ठत वे धनुष सो रामने चढ़ाए। अर जिनके लक्ष्मणसा भाई सेवक, यह श्रीरामका चरित्र भामंडलके मिलापका वर्णन जो निर्मल चित्त होय सुनै ताहि मनवांछित फलकी सिद्धि होय, अर निरोग शरीर होय सूर्य समान प्रभावकूं पावै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै भामंडलका मिलाप वर्णन करनेवाला तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥३०॥

इकतीसवां पर्व

[राजा दशरथका पूर्व-भव सुनकर संसारसे विरक्त होना]

अथानंतर राजा श्रेणिक गौतमस्वामीसूं पूछते भए--हे प्रभो! वे राजा दशरथ जगतके हितकारी राजा अनरण्यके पुत्र बहुरि कहा करते भए? अर श्रीराम लक्ष्मणका सकल वृत्तांत मैं सुना चाहूं हूँ कृपा करके कहो, तुम्हारा यश तीन लोकमें विस्तर रहा है। तब मुनियोंके स्वामी महातप तेजके धरनहारे गौतम गणधर कहते भए जैसा यथार्थ कथन श्री सर्वज्ञदेव वीतरागने भाख्या है भव्योत्तम! तू सुन--जब राजा दशरथ बहुरि मुनियोंके दर्शनोंकूं गए सो सर्वभूतहित स्वामीकूं नमस्कारकर पूछते भए--हे स्वामी! मैं संसारमें अनंत जन्म धरे सो कई भवकी वार्ता तिहारे प्रसादसे सुनकर संसारकू तजा चाहू हू। तब साधु दशरथकूं भव सुननेका अभिलाषी जानकर कहते भए हे राजन्! सब संसारके जीव अनादिकालसे कर्मोंके संबंधसे अनंत जन्म मरण करते दुःख ही भोगते आए हैं। इस जगतमें जीवनिके कर्मोंकी स्थिति उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तीन प्रकारकी है अर मोक्ष सर्वमें उत्तम है जाहि पंचमगति कहै हैं सो अनंत जीवनिमें कोई एकके होय है सबनिको नाहीं। यह पंचमगति कल्याणरूपिणी है जहां ते बहुरि आवागमन नाहीं। वह अनंत सुखका स्थानक शुद्ध सिद्ध पद इंद्रियविषयरूप रोगनिकरि पीड़ित मोहकर अन्ध प्राणी ना पावैं। जे तत्त्वार्थश्रद्धानकर रहित वैराग्यतैं बहिर्मुख हैं अर हिंसादिकमें हैं प्रवृत्ति जिनकी तिनकूं निरन्तर चतुर्गतिका भ्रमण ही है। अभव्योंको तो सर्वथा मुक्ति नाही, निरंतर भव भ्रमण ही है। अर भव्यनिके कोई एकको निवृत्ति है। जहां तक जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल है सो लोकाकाश है। अर जहां अकेला आकाश ही है सो अलोकाकाश है। लोकके शिखर सिद्ध विराजैं है, या लोकाकाशमें

चेतना लक्षण जीव अनंत हैं जिनका विनाश नाहीं, संसारी जीव निरंतर पृथ्वीकाय जलकाय अग्निकाय वायुकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय ये छै काय तिनमें देह धार भ्रमण करै हैं। यह त्रैलोक्य अनादि अनंत है यामें स्थावर जंगम जीव अपने अपने कर्मनिके समूहकरि बंधे नाना योनिविषै भ्रमण करै हैं। अर जिनराजके धर्मकर अनंत सिद्ध भए अर अनंत सिद्ध होयंगे अर होय हैं। जिनमार्ग टारकर और मार्ग मोक्ष नाहीं। अर अनंतकाल व्यतीत भया, अनंत काल व्यतीत होयगा, कालका अंत नाहीं। जो जीव संदेहरूप कलंककर कलंकी हैं, अर पापकर पूर्ण हैं, अर धर्मनिकूं नाहीं जानै हैं, तिनकैं जैनका श्रद्धान कहांतैं होय! अर जिनके श्रद्धान नाहीं सम्यक्तरहित हैं, तिनके धर्म कहांतैं होय? अर धर्मरूप वृक्ष विना मोक्षफल कैसें पावै? अज्ञान अनंत दुःखका कारण है जे मिथ्यादृष्टि अधर्मविषैं अनुरागी हैं अर अति उग्र पापकर्मरूप कंचुकी (चोला) कर मंडित हैं। रागादि विषके भरे हैं तिनका कल्याण कैसें होय, दुख ही भोगवै हैं। एक हस्तिनापुरविषैं उपास्तिनामा पुरुष ताकी दीपनी नामा स्त्री सो मिथ्याभिमानकर पूर्ण जाके कछु नियम व्रत नाहीं, श्रद्धानरहित महाक्रोधवंती अदेखसकी कषायरूप विषकी धारणहारी, महादुर्भाव निरंतर साधुनिकी निंदा करणहारी कुशब्द बोलनहारी महा कृपण कुटिल आप काहूकूं अन्न न देय अर जो कोई दान करै ताकूं मनैं करै, धनकी धिरानी अर धर्म न जानैं इत्यादिक महादोषकी भरी मिथ्यामार्गकी सेवक सो पापकर्मके प्रभावकर भवसागरविषैं अनंतकाल भ्रमण करती भई। अर उपास्ति दानके अनुरागकर चंद्रपुर नगरविषैं भद्रनामा मनुष्य ताके धारिणी स्त्री ताके धारण नामा पुत्र भया। भाग्यवान बहुत कुटुंबी ताके नयनसुंदरी नामा स्त्री सो धारण शुद्ध भावतैं मुनिनिको आहारदान देय अंतकाल शरीर तजकर धातुकीखंड द्वीपविषैं उत्तरकुरु भोगभूमिमें तीन पल्य सुख भोग देवपर्याय पाय तहांतैं चयकर पृथुलावती नगरीविषैं राजा नंदिघोष रानी वसुधा ताके नंदिवर्धन नामा पुत्र भया। एक दिन राजा नंदिघोष यशोधर नामा मुनिके निकट धर्म श्रवणकर नंदिवर्धनकूं राज्य देय आप मुनि भया। महातपकर स्वर्गलोक गया। अर नंदिवर्धन श्रावकके व्रत धारे, पंच नमोकारके स्मरणविषैं तत्पर कोटिपूर्व पर्यंत महाराजपदके सुख भोग कर अंतकाल समाधि मरणकर पंचमें देवलोक गया। तहांतैं चयकर पश्चिम विदेहविषैं विजयार्ध पर्वत तहां शशिपुर नामा नगर तहां राजा रत्नमाली ताके राणी विद्युल्लता ताके सूर्यजय नामा पुत्र भया। एकदिन रत्नमाली महा बलवान सिंहपुरका राजा वज्रलोचन तासूं युद्ध करवेकूं गया। अनेक दिव्य रथ हाथी घोड़े पियादे महापराक्रमी सामंत लार, नानाप्रकार शस्त्रनिके धारक, राजा होठ डसता धनुष चढ़ाय वस्त्र पहिरे रथविषैं आरूढ़ भयानक आकृतिकूं धरै आग्नेय विद्याधर शत्रुके स्थानककूं दग्ध करवेकी है इच्छा जाके, ता समय एक देव तत्काल आय कर कहता भया– हे रत्नमाली! तैं यह कहा आरंभ्या। अब तू क्रोध तज, मैं

तेरा पूर्व भवका वृत्तांत कहूं हू सो सुन–भरतक्षेत्रविषैं गांधारी नगरी तहां राजा भूति, ताके पुरोहित उपमन्यु सो राजा अर पुरोहित दोनों पापी मांस-भक्षी। एकदिन राजा केवलगर्भस्वामीके मुखतैं व्याख्यान सुन यह व्रत लिया,जो मैं पापका आचरण न करूं सो पुत्र उपमन्यु पुरोहितने छुड़ाय दिया, एक समय राजापर शत्रुओंकी धाड़ आई। सो राजा अर पुरोहित दोनों मारे गए। पुरोहितका जीव हाथी भया सो हाथी युद्धमें घायल होय अंतकाल नमोकार मंत्रका श्रवणकर तहां गांधारी नगरीविषैं राजा भूतिकी रानी योजनगंधा ताकै अरिसूदन नामा पुत्र भया सो तानै केवलगर्भ मुनिका दर्शनकर पूर्व जन्म स्मरण किया तब वैराग्य उपजा सो मुनिपद आदरा,समाधि-मरण कर ग्यारवें स्वर्गविषैं देव भया। सो मैं उपमन्यु पुरोहितका जीव अर तू राजा भूति मरकर मंदारण्यविषैं मृग भया। दावानलमें जर मूवा, मरकर कलिंजनामा नीच पुरुष भया। सो महापापकर दूजे नरक गया सो मैं स्नेहके योगकर नरकविषै तुझे संबोधा। आयु पूर्णकर नरकमे निकस रत्नमाली विद्याधर भया सो तू वे अब नरकके दुख भूल गया। यह वार्ता सुन रत्नमाली सूर्यजय पुत्रसहित परम वैराग्यकूं प्राप्त भया। दुर्गतिके दुखसे डरया, तिलकसुंदर स्वामीका शरण लेय पिता पुत्र दोनों मुनि भए। सूर्यजय तपकर दशमें देवलोकमें देव भया। तहांतैं चयकर राजा अनरण्यका पुत्र दशरथ भया। सो सर्वभूतहित मुनि कहै हैं अल्पमात्र भी सुकृतकर उपास्तिका जीव कैयक भव विषैं बड़के बीजकी न्याईं वृद्धिकूं प्राप्त भया। तू राजा दशरथ उपास्तिका जीव है अर नंदिवर्धनके भवविषैं तेरा पिता राजा नंदिघोष मुनि होय ग्रैवेयक गया सो तहांतैं चयकर मैं सर्वभूतहित भया। अर जो राजा भूतिका जीव रत्नमाली भया हुता सो स्वर्गसूं आयकर यह जनक भया। अर उपमन्यु पुरोहितका जीव जाने रत्नमालीको संबोधा हुता सो जनकका भाई कनक भया। या संसारविषैं न कोई अपना है न कोई पर है। शुभाशुभ कर्मोंकर यह जीव जन्म मरण करै है यह पूर्व भवका वर्णन सुन राजा दशरथ निसंदेह होय संयमको सम्मुख भया। गुरुके चरणनिकों नमस्कारकर नगरमें प्रवेश किया निर्मल है अंत:करण जिनका,मनमें विचारता भया कि यह महामंडलेश्वर पदका राज्य महा सुबुद्धि जे राम तिनको देकर मैं मुनिव्रत अंगीकार करूं। राम धर्मात्मा हैं अर महा धीर हैं धैर्यको धरै हैं, यह समुद्रांत पृथिवीका राज्य पालवे समर्थ हैं। अर भाई भी इनके आज्ञाकारी हैं। ऐसा राजा दशरथने चिंतवन किया। कैसे हैं राजा? मोहतैं परान्मुख अर मुक्तिके उद्यमी। तासमय शरद ऋतु पूर्ण भई अर हिमऋतुका आगमन भया। कैसी है शरदऋतु? कमल ही हैं नेत्र जाके, अर चंद्रमाकी चांदनी सोही है उज्ज्वल वस्त्र जाके, सो मानों हिमऋतुके भयकर भाग गई।

अथानंतर हिमऋतु प्रगट भई, शीत पड़ने लगा, वृक्ष दहे अर ठंढी पवनकर लोक व्याकुल भए। जा ऋतुविषैं धनरहित प्राणी जीर्ण कुटीमें दुखसे काल व्यतीत करै हैं, कैसे हैं,

दरिद्री ? फट गए हैं अधर चरण जिनके, अर बाजैं हैं दांत जिनके अर रूखे हैं केश जिनके, अर निरंतर अग्निका है सेवन जाके, अर कभी भी उदरभर भोजन न मिले, कठोर है चर्म जिनका। अर घरमें कुभार्याके वचनरूप शस्त्रनिकर विदारा गया है चित्त जिनका, अर काष्ठादिकके भार लायवेको कांधे कुठारादिकको धरे वन वन भटके हैं अर शाक बोरषलि आदि ऐसे आहारकर पेट भरैं हैं अर जे पुण्यके उदयकरि राजादिक धनाढ्य पुरुष भए हैं ते बड़े महलोंमें तिष्टैं हैं अर शीतके निवारणहारे अगरके धूपकी सुगंधिताकरयुक्त सुंदर वस्त्र पहरे हैं। अर सुवर्ण अर रूपादिकके पात्रोंमें षटरससंयुक्त सुगधित स्निग्ध भोजन करैं हैं,केसर अर सुगंधादिकर लिप्त हैं अंग जाके, अर जिनके निकट धूपदानमें धूप खेइये है। अर परिपूर्ण धनकर चिंता-रहित हैं, झरोखोंमें बैठे लोकनिको देखैं हैं अर जिनके समीप गीत नृत्यादिक विनोद होयबो करै है, रत्नोंके आभूषण अर सुगंध मालादिककर मंडित सुंदर कथामें उद्यमी है अर जिनके विनयवान अनेक कलाकी जाननहारी महारूपवान पतिव्रता स्त्री हैं। पुण्यके उदयकरि ये संसारी जीव देव-गति मनुष्यगतिके सुख भोगैं है, अर पापके उदयकरि नरक तिर्यंच तथा मानुष होय दुख दरिद्र भोगवैं हैं, सब लोक अपने अपने उपार्जित कर्मके फल भोगवैं हैं। ऐसे मुनिके बचन दशरथ पहिले सुने हुते संसार तैं विरक्त भया, द्वारपालकूं। कहता भया, कैसा है द्वारपाल ? भूमिविषैं थाप्या है मस्तक अर जोड़े हैं हाथ जाने, नृपति ताको आज्ञा करी।

हे भद्रे ! सामंत मंत्री पुरोहित सेनापति आदि सबको ल्यावो, तब वह द्वारपाल द्वारेपर आय दूजे मनुष्यको द्वारपर मेलि तिनकी आज्ञा प्रमाण बुलावनेकों गया, तब वे आयकर राजाकूं प्रणामकरि यथायोग्य स्थानकविषै तिष्ठे, विनती करते भए। हे नाथ ! आज्ञा करहु क्या कार्य है ? तब राजा कही--मैं संसारका त्यागकर निश्चय सेती संयम धारूंगा। तब मंत्री कहते भए। हे प्रभो ! तुमको कौन कारण वैराग्य उपज्या ? तब नृपति कही जो प्रत्यक्ष यह समस्त जगत सूके तृणकी न्याईं मृत्युरूप अग्निकर जरै हैं अर जो अभव्यनिकूं अलभ्य अर भव्यनिकूं लेने योग्य ऐसा सम्यक्तसहित संयम सो भव-तापका हरणहारा अर शिवसुखका देनहारा है, सुर असुर नर विद्याधरनिकरि पूज्य प्रशंसा योग्य है। मैं आज मुनिके मुखसे जिनशासनका व्याख्यान सुन्या।कैसा है जिनशासन ? सकलपापोंका वर्जन हारा है। तीनलोकविषैं प्रकट महा सूक्ष्म है चर्चा जाविषैं अति निर्मल उपमारहित है। सर्व वस्तुनिमें सम्यक्त परम वस्तु है ता सम्यक्तका मूल जिनशासन है, श्री गुरुओंके चरणारविंदके प्रसादकर मैं निवृत्तिमार्गमें प्रवृत्या, मेरी भवभ्रांतिरूप नदीकी कथा आज मैं मुनिके मुखसे सुनी अर मोहि जातिस्मरण भया। सो मेरे अंग देखो त्रास कर कांपे हैं। कैसी है मेरी भव-भ्रांति नदी ? नानाप्रकारके जे जन्म वे ही हैं भ्रमर जामैं, मोहरूप कीच करि मलिन कुतर्करूप ग्राहनिकरि पूर्ण महादुःखरूप लहर उठै हैं

निरंतर जामैं, मिथ्यारूप जलकर भरी, मृत्यु रूप मगर-मच्छनिका है भय जाविषै रुदनके महा-शब्दकूं धरै अधर्म प्रवाह कर वहती अज्ञानरूप पर्वततैं निकसी संसाररूप समुद्रमें है प्रवेश जाका सो अब मैं इस भव-नदीकूं उलंघकर शिवपुरी जायवेका उद्यमी भया हूं। तुम मोह के प्रेरे कछु वृथा मत कहो, संसार समुद्र तर निर्वाण द्वीप जाते अंतराय मत करहु। जैसैं सूर्यके उदय होते अंधकार न रहै तैसैं सम्यग्ज्ञानके होते संशय-तिमिर कहां रहै। तातैं मेरे पुत्रकूं राज्य देहु, अब ही पुत्रका अभिषेक करावहु, मैं तपोवनमें प्रवेश करूं हूं। ए वचन सुन मंत्री सामंत राजाकूं वैराग्यका निश्चय जान परम शोककूं प्राप्त भए। नीचे होय गए हैं मस्तक जिनके, अर अश्रुपात कर भर गए हैं नेत्र जिनके, अंगुरी कर भूमिकूं कुचरते क्षणमात्रमें प्रभा-रहित होय गए, मौनमे तिष्ठे। अर सकलही रणवास प्राणनाथका निर्ग्रंथ व्रतका निश्चय सुनि शोककूं प्राप्त भया, अनेक विनोद करते हुते सो तजकर आसुंओंसे लोचन भर लिए, अर महा रुदन किया। भरत पिताका वैराग्य सुन आप भी प्रतिबोधकूं प्राप्त भए, चित्तमें चिंतवते भए--अहो यह स्नेहका बंध छेदना कठिन है। हमारा पिता ज्ञानकूं प्राप्त भया जिनदीक्षा लेवेकूं इच्छै है, अब इनके राज्यकी चिंता कहां। मोहि तो न किसीको कुछ पूछना, न कछु करना, तपोवनमें प्रवेश करूंगा, संयम धारूंगा। कैसा है संयम ? संसारके दु:खनिका क्षय करणहारा है। अर मेरे या देह करहू कहा ? कैसा है यह देह व्याधिका घर है अर विनश्वर है सो यदि देहीसे मेरा संबंध नाहीं तो दु:खरूप बांधवनिसों कहा संबंध ? यह सब अपने कर्म फलके भोक्ता हैं, यह प्राणी मोह कर अंधा है, वनविषैं अकेला ही भटकै है, कैसा है दु:खरूप वन ? अनेक भव-भयरूप वृक्षनितैं भरया है।

अथानंतर केकई सकल कलाकी जाननहारी भरतकी यह चेष्टा जान अति शोककूं धरती भई, मनमें चिंतवैहै--भरतार अर पुत्र दोनों ही वैराग्य धारया चाहै हैं, कौन उपाय करि इनका निवारण करूं, या भांति चिंताकर व्याकुल भया है मन जाका, तब राजाने जो वर दीया हुता सो याद आया। अर शीघ्र ही पतिपै जाय आधे सिंहासनपर बैठी। अर वीनती करती भई, हे नाथ ! सर्व ही स्त्रीनिके निकट तुम मोहि कृपाकर कही हुती जो तू मांग सो मैं देऊं, सो अब देवो। तुम सत्यवादी हो, अर दान करि निर्मल कीर्ति तिहारी जगतविषैं विस्तर रही है। तब दशरथ कहते भए--हे प्रिये ! जो तेरी वांछा होय सो ही लेहू। तब राणी केकई आंसू डारती संती कहती भई--हे नाथ ! हमपै ऐसी कहा चूक भई, जो तुम कठोर चित्त किया हमकूं तजा चाहो हो, हमारा जीव तो तिहारे आधीन है अर यह जिनदीक्षा अत्यंत दुर्धर सो लेयवेको तुम्हारी बुद्धि काहेकूं प्रवर्ती है? यह इंद्र समान जे भोग तिन कर लड़ाया जो तिहारा शरीर सो कैसे मुनिपद धारोगे ? कैसा है मुनिपद, अत्यंत विषम है। या भांति जब रानी केकईने कह्या तब आप कहते भए--हे कांते ! समर्थनिकूं कहा विषम ? मैं तो निसंदेह मुनिव्रत धारूंगा, तेरी अभिलाषा होय सो मांग लेहु।

रानी चिंतावान होय नीचा मुखकर कहती भई, हे नाथ! मेरे पुत्रकूं राज्य देहु। तब दशरथ बोले, यामें कहा संदेह? तैं धरोहर मेली हुती सो अब लेहु, तैं जो कहा सो हम प्रमाण किया, अब शोक तज, तैं मोहि ऋण-रहित किया। तब राम लक्ष्मणकूं बुलाय दशरथ कहते भए--कैसे हैं दोऊ भाई? महा विनयवान हैं पिताके आज्ञाकारी हैं। राजा कहै है, हे वत्स! यह केकई अनेक कलाकी पारगामिनी, याने पूर्व महा घोर संग्रामविषैं मेरा सारथिपना किया, यह अति चतुर है, मेरी जीत भई, तदि मैं तुष्टायमान होय याहि वर दीया जो तेरी वांछा हो सो मांग,तब याने वचन मेरे धरोहर मेला। अब यह कहै है मेरे पुत्रकूं राज्य देवो,सो जो याके पुत्रकूं राज्य न देऊं तो याका पुत्र भरत संसारका त्याग करै अर यह पुत्रके शोककरि प्राण तजै। अर मेरी वचन चूकवेकी अकीर्ति जगत्‌में विस्तरै। अर यह काम मर्यादातैं विपरीत है जो बड़े पुत्रकूं छोड़कर छोटे पुत्रकूं राज्य देना। अर भरतकूं सकल पृथिवीका राज्य दीए तुम लक्ष्मण-सहित कहां जावो,तुम दोऊ भाई परम क्षत्री तेजके धरन हारे हो। तातैं हे वत्स! मैं कहा करूं? दोऊ ही कठिन बात आय बनी। मैं अत्यंत दुःखरूप चिंताके सागरमें पड्या हूं। तब श्रीरामचंद्र महा विनयकूं धरते संते कहते भए, पिताके चरणारविंदकी ओर हैं नेत्र जिनके, अर महा सज्जनभावकूं धरैं हैं। हे तात! तुम अपना वचन पालहु, हमारी चिंता तजहु, जो तिहारे वचन चूकनेकी अपकीर्ति होय अर हमारे इंद्रकी सम्पदा आवै तो कौन अर्थ? जो सुपुत्र हैं सो ऐसा ही कार्य करैं जाकर माता पिताकूं रंचमात्र भी शोक न उपजै। पुत्रका यही पुत्रपना पंडित कहै हैं--जो पिताकूं पवित्र करै, अर कष्टतैं रक्षा करै। पवित्र करणा यह कहावै जो उनकूं जिनधर्मके सम्मुख करै। दशरथके अर राम लक्ष्मणके यह बात होय है, ताही समय भरत महलतैं उतरथा, मनमें विचारी--मैं कर्मनिकूं हनूं मुनिव्रत धरूं। सो लोकनिके मुखतैं हाहाकार शब्द भया। तब पिताने विह्वल चित्त होय भरतकूं वन जायवेतैं राख्या, गोदमें ले बैठे, छातीसूं लगाय लिया, मुख चूमा, अर कहते भए--हे पुत्र! तू प्रजाका पालनकर, मैं तपके अर्थि वनमें जाऊं हूं। भरत बोले--मैं राज्य न करूं, जिनदीक्षा धरूंगा। तब राजा कहते भए--हे वत्स! कई एक दिन राज्य करहु। तिहारी नवीन वय है, वृद्ध अवस्थामें तप करियो। भरत कही--हे तात! जो मृत्यु है सो बाल वृद्ध तरुणकूं नाहीं देखै है, सर्वभक्षी है तुम मोहि वृथा काहेकूं मोह उपजावो हो। तब राजा कही--हे पुत्र! गृहस्थाश्रमविषैं भी धर्मका संग्रह होय है, कुमानुषनितैं नाहीं बनै है। तब भरत कही--हे नाथ! इंद्रियनिके वशतैं काम क्रोधादिक भरे गृहस्थनिकूं मुक्ति कहां? तब भूपतिने कही--हे भरत मुनिनहूमें सब की तद्भवमुक्ति नाहीं होय है,कोई एक की होय है तातैं तू कई-यक दिन गृहस्थधर्म आराधि। तब भरत कही- हे देव! आप जो कही सो सत्य है परंतु गृहस्थ-निका तो यह नियम ही है जो मुक्ति न होय,अर मुनिनिमैं कोई की होय,कोई को न होय। गृहस्थधर्मतैं

परंपराय मुक्ति होय है साक्षात् नाहीं, तातैं हीनशक्ति वारेनिका काम है, मोहि यह बात न रुचै, मैं महाव्रत ही धरणेका अभिलाषी हू। गरुड कहा पतंगनिकी रीति आचरै ? कुमानुष कामरूप अग्निकी ज्वालाकरि परम दाहकूं प्राप्त भए संते स्पर्शनइंद्रिय अर जिह्वा इंद्रियकरि अधर्म कार्यकूं करै हैं, तिनकूं निवृत्ति कहां ? पापी जीव धर्मतैं विमुख विषय-भोगनिकूं सेयकरि निश्चयसेती महा दुःखदाता जो दुर्गति ताहि प्राप्त होय हैं, ये भोग दुर्गतिके उपजावनहारे अर राखे न रहैं, क्षण-भंगुर हैं तातैं त्याज्य ही हैं। ज्यों ज्यों कामरूप अग्निमें भोगरूप ईंधन डारिए त्यों त्यों अत्यंत तापकी करणहारी कामाग्नि प्रज्वलित होय है, तातैं हे तात ! तुम मोहि आज्ञा देवो जो वनमें जाय विधिपूर्वक तप करूं, जिनभाषित तप परम निर्जराका कारण है, या संसारतैं मैं अतिभयकूं प्राप्त भया हू। अर हे प्रभो ! जो घरही विषैं कल्याण होय तो तुम काहेको घर तजि मुनि हुआ चाहो हो ? तुम मेरे तात हो, सो तातका यही धर्म है जो संसार-समुद्रतैं तारै, तपकी अनुमोदना करै, यह बात विचक्षण पुरुष कहै हैं। शरीर स्त्री धन माता पिता भाई सकलकूं तजि यह जीव अकेला ही परलोककूं जाय है, चिरकाल देवलोकके सुख भोगै है, तो हू यह तृप्त न भया, सो कैसे मनुष्यनिके भोगकरि तृप्त होय ? पिता भरतके ये वचन सुनकर बहुत प्रसन्न भया, हर्षथकी रोमांच होय आए, अर कहता भया–हे पुत्र ! तू धन्य है, भव्यनिविषैं मुख्य है, जिनशासनका रहस्य जानि प्रतिबोधकूं प्राप्त भया है। तू जो कहै है सो प्रमाण है, तथापि हे धीर ! तैं अब तक कबहुं मेरी आज्ञा भंग न करी, तू विनयवान पुरुषोंमें प्रधान है, मेरी वार्ता सुनि। तेरी माता केकईने युद्धविषैं मेरा सारथीपना किया, वह युद्ध अति विषम हुता, जामें जीवनेकी आशा नाहीं, सो याके सारथीपनेकरि युद्धविषैं विजय पाई, तब मैं तुष्टायमान होय याकूं कहा जो तेरी वांछा होय सो मांग। तब याने कही यह वचन भंडार रहै, जादिन मोहि इच्छा होयगी तादिन मांग लूंगी, सो आज याने यह मांगी कि मेरे पुत्रकूं राज्य देहु, सो मैं प्रमाण किया। अब हे गुणनिधे ! तू इंद्रके राज्य समान यह राज्य निःकंटक करि। मेरी प्रतिज्ञा भंगकी अकीर्ति जगतविषैं न होय, अर यह तेरी माता तेरे शोककरि तप्तायमान होय मरणकों न पावै, कैसी है यह ? निरंतर सुखकर लड़ाया है शरीर जानै। अपत्य कहिए पुत्र, ताका यही पुत्रपना है कि माता पिताकूं शोकसमुद्रमें न डारे यह बात बुद्धिमान कहै हैं, या भांति राजा कही।

अथानंतर श्रीराम भरतका हाथ पकड़ महामधुर वचनकरि प्रेमकी भरी दृष्टिकरि देखते संते कहते भए, हे भ्रात ! तातने जैसे वचन तोहि कहे ऐसे और कौन समर्थ, जो समुद्रसे रत्नोंकी उत्पत्ति होय सो सरोवरसे कहां ? अबार तेरी वय तपके योग्य नाहीं, कैयक दिन राज्य कर, जासैं पिताकी कीर्ति वचनके पालिवेकी चन्द्रमा समान निर्मल होय। अर तो सारिखे पुत्रके होते संते माता शोककर तप्तायमान मरणकूं प्राप्त होय यह योग्य नाहीं। अर मैं पर्वत अथवा वनविषैं

ऐसी जगह निवास करूंगा जो कोई न जानै,तू निरिंचत राज्य करि । मैं सकल राजऋद्धि तज देशतैं दूर रहूंगा, अर पृथ्वीको पीड़ा काहू प्रकार न होयगी, तातैं अब तू दीर्घ सांस मत डारै, कैयक दिन पिताकी आज्ञा मान राज्य करि न्याय सहित पृथ्वीको रक्षा कर, हे निर्मल-स्वभाव ! यह इक्ष्वाकुवंशनिका कुल ताहि तू अत्यंत शोभायमान करि, जैसैं चंद्रमा ग्रह नक्षत्रादिकको शोभायमान करै है । भाईका यही भाईपना पंडितनिने कहा है कि भाईनिकी रक्षा करै संताप हरै । श्रीरामचंद्र ऐसे वचन कहिकर पिताके चरणनिको भावसहित प्रणाम कर चल पड़े । तब पिताकूं मूर्च्छा आय गई, काष्ठके स्तंभ समान शरीर होय गया, राम तर्कश बांध धनुष हाथमें लेय माताकूं नमस्कार कर कहते भए—हे माता ! हम अन्य देशकूं जांय हैं, तुम चिंता न करनी, तब माताको भी मूर्च्छा आय गई,बहुरि सचेत होय आंसू डारती संती कहती भई—हाय पुत्र ! तुम मोहि शोकके समुद्रमें डार कहां जावो हो, तुम उत्तम चेष्टाके धरणहारे हो, माताका पुत्र ही अवलंबन है जैसैं शाखाके मूल आधार है । माता रुदनकरि विलाप करती भई। तब श्रीराम माताकी भक्तिविषैं तत्पर ताहि प्रणामकर कहते भए--हे माता ! तुम विषाद मत करहु । मैं दक्षिणदिशाविषैं कोई स्थान कर तुमकूं निसंदेह बुलाऊंगा । हमारे पिताने माता केकईकूं वर दिया हुता सो भरतकूं राज्य दिया । अब मैं यहां रहूं नाहीं, विंध्याचलके वनविषैं, अथवा मलयाचलके वनविषैं तथा समुद्रके समीप स्थान करूंगा । मैं सूर्य समान यहां रहू तो भरत चंद्रमाकी आज्ञा ऐश्वर्यरूप कांति न विस्तरै । तब माता नम्रीभूत जो पुत्र ताहि उरसूं लगाया रुदन करती संती कहती भई-- हे पुत्र ! मोकूं तिहार लार ही चलना उचित है, तुमकूं देखे विना मैं प्राणनिकूं राखिवे समर्थ नाहीं,जे कुलवंती स्त्री है तिनके पिता अथवा पति तथा पुत्र ये ही आश्रय हैं। सो पिता तो कालवश भया, अर पति जिनदीक्षा लेयवेकूं उद्यमी भया है । अब तो पुत्रहीका अवलंबन है सो तुमहूं छांड चाले तो मेरी कहा गति होसी ? तब राम बोले हे माता ! मार्गमें पाषाण अर कंटक बहुत हैं,तुम कैसैं पायन चलोगी?तातैं कोऊ सुखका स्थानककरि असवारी भेज तुमकूं बुलाऊंगा। मोहि तिहारे चरणनिकी सौगंध है, तिहारे लेनेकूं मैं आऊंगा, तुम चिंता मत करहु । ऐसे कह माताकूं शांतता उपजाय सीख दीनी । बहुरि पितापैं गए । पिता मूर्च्छित होय गये हुते सो सचेत भए। पिताकूं प्रणामकर और मातानिपैं गए सुमित्रा, केकई, सुप्रभा कौशल्या सबनिकूं प्रणाम कर सीख करी । कैसे हैं राम ? न्यायविषैं प्रवीण, निराकुल है चित्त जिनका, तथा भाई बंधु मंत्री अनेक राजा उमराव परिवारके लोक सबनिकूं शुभ वचन कह विदा भए । सबनिकी बहुत दिलासाकर छातीसूं लगाए, उनके आंसू पूंछे । उनने घनी ही विनती करी जो यहां ही रहो, सो न मानी । सामंत तथा हाथी घोड़े रथ सबकी ओर कृपादृष्टि कर देख्या । बहुरि बड़े २ सामंत हाथी घोड़े भेट लाए सो रामने न राखे । सीता अपने पतिकूं विदेश गमनकूं उद्यमी देख ससुर

अर सासूकूं प्रणामकर नाथके संग चाली जैसें शची इंद्रके साथ चालै। अर लक्ष्मण स्नेहकर पूर्ण रामकूं विदेशगमनकूं उद्यमी देख चित्तमें क्रोधकर चिंतवता भया। जो हमारे पिताने स्त्रीके कहेतें यह कहा अन्याय कार्य विचारथा जो रामको टार औरको राज्य दिया। धिक्कार है स्त्रीनिकूं जो अनुचित काम करती शंका न करैं, स्वार्थविषैं आसक्त है चित्त जिनका, अर यह बड़ा भाई महानुभाव पुरुषोत्तम है सो ऐसे परिणाम मुनिनके होय हैं। अर मैं ऐसा समर्थ हू जो समस्त दुराचारिनिका पराभवकर भरतकूं राज्यलक्ष्मीतैं रहित करूं, अर राज्यलक्ष्मी श्रीरामके चरणनिमें लाऊं? परंतु यह बात उचित नाहीं, क्रोध महा दुखदाई है जीवनिकूं अंध करै है। पिता तो जिनदीक्षाकूं उद्यमी भया अर मैं क्रोध उपजाऊं, सो योग्य नाहीं। अर मोहि ऐसा विचारकर कहा? योग्य अर अयोग्य पिता जानें, अथवा बडा भाई जानै. जामैं पिताकी कीर्ति उज्ज्वल होय सो कर्तव्य है। मोहि काहूसूं कछु न कहना, मैं मौन पकड बड़े भाईके संग जाऊंगा। कैसा है यह भाई? साधु समान हैं भाव जाके, ऐसा विचारकर कोप तज धनुष-बाण लेय समस्त गुरुजननिकूं प्रणामकर महाविनय संपन्न रामके लार चाल्या, दोऊ भाई जैसें देवालयतैं देव निसरैं तैसें राजमंदिरतें नीसरे। अर माता पिता सकल परिवार अर भरत शत्रुघ्नसहित इनके वियोगतें अश्रुपात करि मानों वर्षाऋतु करते संते राखवेकूं चाले सो राम लक्ष्मण अति पिताभक्त अर सबोधवेकूं महापंडित विदेश जायवेहीका है निश्चय जिनके, सो माता-पिताकी बहुत स्तुतिकर वारंवार नमस्कारकर बहुत धैर्य बंधाय पीठ पीछे फेरे सो नगरमें हाहाकर भया। लोक वार्ता करै हैं हे मात! यह कहा भया, यह कौनने मति उपजाई। या नगरीहीका अभाग्य है अथवा सकल पृथ्वीका अभाग्य है। हे मात! हम तो अब यहां न रहेंगे, इनके लार चालेंगे। ये महा समर्थ हैं। अर देखो यह सीता नाथके संग चाली है, अर यह रामकी सेवा करणहारा लक्ष्मण भाई है। धन्य है यह जानकी विनयरूप वस्त्र पहिरे भरताके संग जाय है। नगरकी नारी कहै हैं हम सबनिकूं शिक्षा देनहारी यह सीता महापतिव्रता हैं। या समान और नारी नाहीं जो महापतिव्रता होय सो याकी उपमा पावें, पतिव्रतानिकै भरतार ही देव हैं अर देखो यह लक्ष्मण माताकूं रोवती छोड़ बड़े भाईके संग जाय है। धन्य याकी भक्ति, धन्य याकी प्रीति, धन्य याकी शक्ति, धन्य याकी क्षमा, धन्य याकी विनयकी अधिकता। या समान और नाहीं। अर दशरथ भरतकूं यह कहा आज्ञा करी जो तू राज्य लेहु। अर राम लक्ष्मणकूं यह कहा बुद्धि उपजी जो अयोध्याकूं छांड़ि चाले, जा कालमें जो होनी होय सो होय है, जाके जैसा कर्म उदय होय, तैसा ही होय' जो भगवानके ज्ञानमें भासा है सो होय, दैवगति दुर्निवार है, यह बात बहुत अनुचित होय है, यहांके देवता कहां गए? ऐसे लोगनिके मुखध्वनि होती भई। सब लोक इनके लार चालवेकूं उद्यमी भए। घरनितैं निकसे, नगरीका उत्साह जाता रह्या, शोककर पूर्ण जो लोक

तिनके अश्रुपातनिकरि पृथ्वी मजल होय गई,जैसैं समुद्रकी लहर उठै है तैसैं लोक उठे। रामके संग चले, मनैं किए हू लोक न रहैं, रामकूं भक्तिकर लोक पूजैं,संभाषण करैं,सो राम पैंड पैंडमें विघ्न मानैं,इनका भाव चलवेका,अर लोक राख्या चाहैं हैं। कईएक लार चले,रामका विदेश गमन मानों सूर्य देख न सक्या सो अस्त होने लग्या। अस्त समय सूर्यके प्रकाशने सर्व दिशा तजी, जैसैं भरत चक्रवर्ती मुक्तिके निमित्त राज्यसंपदा तजी हुती। सूर्यके अस्त होते परम रागको धरती संती संध्या सूर्यके पीछे ऐसैं चाली, हो जैसैं सीता रामके पीछे चाली। अर समस्त विज्ञानका विध्वंस करणहारा अंधकार जगतमें व्याप्त भया, मानों रामके गमनकरि तिमिर विस्तरयो, लोग लार लागे,सो रहैं नाहीं, तब राम लोकनिके टारिवेकूं श्रीअरनाथ तीर्थंकरके चैत्यालयविषैं निवास करना विचारया, संसारके तारणहारे भगवान तिनका भवन सदा शोभायमान महासुगंध अष्टमंगल द्रव्यनिकर मंडित, जाके तीन दरवाजे, ऊंचा तोरण सो राम लक्ष्मण सीता प्रदक्षिणा देय चैत्यालय मांहि पैठे समस्त विधिके वेत्ता दोय दरवाजे तक तो लोक चले गए। तीसरे दरवाजे पर द्वारपालने लोकनिकूं रोक्या जैसैं मोहनीयकर्म मिथ्यादृष्टिनिकूं शिवपुर जायवेतैं रोकै, राम लक्ष्मण धनुष बाण अर बखतर बाहिर मेल भीतर दर्शनकूं गए। कमल समान हैं नेत्र जिनके, श्रीअरनाथका प्रतिबिंब रत्ननिके सिंहासनपर विराजमान महाशोभायमान महासौम्य कायोत्सर्ग श्रीवत्सलक्षणकर देदीप्यमान है उरस्थल जिनका, प्रकट हैं समस्त लक्षण जिनके, संपूर्ण चंद्रमा समान वदन, फूले कमलसे नेत्र, कथनविषैं अर चिंतवनविषैं न आवै ऐसा है रूप जिनका, तिनका दर्शनकर भावसहित नमस्कार कर ये दोऊ भाई परम हर्षकूं प्राप्त भए। कैसे हैं दोऊ? बुद्धि,पराक्रम, रूप,विनयके भरे जिनेंद्रकी भक्तिविषैं तत्पर,रात्रि कूं चैत्यालयके समीप रहे। तहां इनकूं वसे जान माता कौशल्यादिक पुत्रनिविषैं है वात्सल्य जिनका आयकर आंसू डारती वारंवार उरसूं लगावती भईं। पुत्रनिके दर्शनविषैं अतृप्त विकल्परूप हिंडोलविषैं झूलै है चित्त जिनका, गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं--

हे श्रेणिक! सर्व शुद्धतामें मनकी शुद्धता महा प्रशंसा योग्य है। स्त्री पुत्रकूं भी उरसे लगावै, अर पतिकूं भी उरसे लगावै,परंतु परिणामनिका अभिप्राय जुदा जुदा है। दशरथकी चारों ही राणी गुणरूप लावण्यताकर पूर्ण महामिष्टवादिनी पुत्रनिसूं मिल पतिपै गईं, जायकर कहती भईं, कैसा है पति? सुमेरुसमान निश्चल है भाव जाका। राणी कहै हैं हे देव! कुलरूप जहाज शोकरूप समुद्रविषैं डूबै है सो थांभो। राम लक्ष्मणकूं पीछा ल्यावो, तब राजा कहते भए यह जगत विकाररूप मेरे आधीन नाहीं। मेरी इच्छा तो यह ही है कि सर्व जीवनिकूं सुख होय काहूकूं दुख न होय, जन्म जरामरणरूप पराधीनकरि कोई जीव पीड्या न जाय परंतु ये जीव नाना प्रकारके कर्मनिकी स्थितिकूं धरै हैं तातैं कौन विवेकी वृथा शोक करै। बांधवादिक

इष्टपदार्थनिके दर्शनविषैं प्राणिनिकूं तृप्ति नाहीं, तथा धन अर जीतव्य इनकरि तृप्ति नाहीं। इंद्रियनिके सुख पूर्ण न होय सकैं अर आयु पूर्ण होय तब जीव देहकूं तज और जन्म धरै, जैसैं पक्षी वृक्षकूं तज चला जाय है तुम पुत्रनिकी माता हो पुत्रनिकूं ले आवो पुत्रनिके राज्यका उदय देख विश्रामकूं भजो। मैंने तो राज्यका अधिकार तज्या, पापक्रियातैं निवृत्त भया, भव-भ्रमणतैं भयकूं प्राप्त भया। अब मैं मुनिव्रत धारूंगा या भांति राजा राणिनिसों कही। निर्मोहताके निश्चयकूं प्राप्त भया सकल विषयाभिलाषरूप दोषनितैं रहित सूर्य समान है तेज जाका सो पृथिवी में तप संयमका उद्योत करता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै दशरथका वैराग्य वर्णन करनेवाला इकतीसवां पर्व पूर्ण भया॥३१॥

बत्तीसवां पर्व

[राम-लक्ष्मणका वन गमन और भरतका राज्याभिषेक]

अथानंतर राम लक्ष्मण क्षण एक निद्रा कर अर्धरात्रिके समय जब मनुष्य सोय रहे लोकनिका शब्द मिट गया, अर अंधकार फैलगया ता समय भगवानकूं नमस्कारकर वस्त्रतर पहिर धनुष बाण लेय सीताकूं बीचमें लेकर चाले, घर-घर दीपकनिका उद्योत होय रहा है, कामीजन अनेक चेष्टा करैं हैं। ये दोऊ भाई महाप्रवीण नगरके द्वारकी खिड़कीकी ओरसे निकसि दक्षिण दिशाका पंथ लिया, रात्रिके अंतमें दौड़कर सामंत लोक आय मिले राघवके संग चलनेकी है अभिलाषा जिनके, दूरतैं राम लक्ष्मणकूं देख महा विनयके भरे असवारी छोड़ प्यादे आए, चरणारविंदकों नमस्कारकरि निकट आय वचनालाप करते भए। बहुत सेना आई अर जानकीकी बहुत प्रशंसा करते भए जो याके प्रसादतैं हम राम लक्ष्मणकों आय मिले यह न होती तो ये धीरे धीरे न चलते तो हम कैसैं पहुचते। ये दोऊ भाई पवन-समान शीघ्रगामी हैं अर यह सीता महासती हमारी माता है, या समान प्रशंसा योग्य पृथ्वीविषैं और नाहीं। ये दोऊ भाई नरोत्तम सीताकी चाल प्रमाण मंद मंद दो कोस चाले। खेतनिविषैं नानाप्रकारके अन्न हरे होय रहे हैं, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे हैं, अर वृक्ष महारमणीक दीखैं हैं। अनेक ग्राम नगरादिमें ठौर ठौर लोक पूजैं हैं भोजनादि सामग्रीकरि, अर बड़े बड़े राजा बड़ी फौजसे आय मिले जैसैं वर्षाकालमें गंगा जमुनाके प्रवाहविषैं अनेक नदियनिके प्रवाह आय मिलैं। कैइक सामंत मार्गके खेदकरि इनका निश्चय जान आज्ञा पाय पीछे गए अर कैइक लज्जाकर, कैइक भयकर, कैइक भक्ति कर लार प्यादे चले जाय हैं सो राम लक्ष्मण क्रीड़ा करते

परियात्रा नामा अटवीविषैं पहुंचे। कैसी है अटवी ? नाहर अर हाथीनिके समूहनिकर भरी, महा भयानक वृक्षनिकर रात्रिसमान अंधकारकी भरी, जाके मध्य नदी है ताके तट आए। जहां भीलनिका निवास है, नाना प्रकारके मिष्ट फल हैं । आप तहां तिष्ठकर कैएक राजनिकों विदा किया, अर कैएक पीछे न फिरे, रामने बहुत कहा तो भी संग ही चाले सो सकल नदीको महा भयानक देखते भए। कैसी है नदी ? पर्वतनिसों निकसती महानील है जल जाका, प्रचंड हैं लहर जामें, महा शब्दायमान अनेक जे ग्राह मगर तिनकर भरी दोऊ ढांहां विदारती, कल्लोलनिके भयकर उड़ें हैं तीरके पक्षी जहां ऐसी नदीको देखकर सकल सामंत त्रासकर कंपायमान होय राम लक्ष्मणकूं कहते भए हे नाथ ! कृपाकर हमें भी पार उतारहु, हम सेवक भक्तिवंत हमसे प्रसन्न होवो, हे माता जानकी लक्ष्मणसे कहो जो हमकूं पार उतारें, या भांति आसूं डारते अनेक नरपति नाना चेष्टाके करणहारे नदीविषैं पड़ने लगे। तब राम बोले अहो अब तुम पाछे फिरो। यह वन महा भयानक है, हमारा तुमारा यहां लग ही संग हुता, पिताने भरतकूं सबका स्वामी किया हैं सो तुम भक्तिकर तिनकूं। सेवहु तब वे कहते भए हे नाथ ! हमारे स्वामी तुम ही हो, महादयावान हो, हमपर प्रसन्न होवो हमको मत छोडहु, तुम विना यह प्रजा निराश्रय भई आकुलतारूप कहो कौनकी शरण जाय ? तुम समान और कौन है ? व्याघ्र सिंह अर गजेंद्र सर्पादिकका भरा भयानक जो यह वन तामें तुम्हारे संग रहेंगे। तुम विना हमारे स्वर्ग हू सुखकारी नाहीं। तुम कही पाछे जावो सो चित्त फिरै नाहीं, कैसे जाहिं ? यह चित्त सब इंद्रियनिका अधिपति याहीतै कहिए हैं जो अद्भुत वस्तुमें अनुराग करै। हमारे भोगनिकर घरकर तथा स्त्री कुटुम्बादिकर कहा ? तुम नररत्न हो, तुमको छोड कहां, जाहिं। हे प्रभो ! तुमने बालक्रीडाविषैं भी हमसों कबहू वंचना न करी, अब अत्यंत निठुरताकूं धारी हो। हमारा अपराध कहा ? तिहारे चरणरजकर परमवृद्धिकूं प्राप्त भए, तुम तो भृत्य-वत्सल हो । अहो माता जानकी ! अहो लक्ष्मण धीर ! हम सीस नवाय हाथ जोड विनती करै हैं, नाथकूं हमपर प्रसन्न करहु। ये वचन सबनि कहे, तब सीता अर लक्ष्मण रामके चरणनिकी ओर निरख रहें। राम बोले जाहु। यही उत्तर है। सुखसो रहियो ऐसा कहकर दोनों धीर नदीके विषैं प्रवेश करते भए। श्रीराम सीताका कर गह सुखसे नदीमें लैगए जैसैं कमलिनीकों दिग्गज लेजाय। वह असराल नदी राम लक्ष्मणके प्रभावकर नाभि-प्रमाण बहने लगी, दोऊ भाई जलविहारविषैं प्रवीण क्रीड़ा करते चले गए। रामके हाथ गहे ऐसी शोभैं मानों साक्षात् लक्ष्मी ही कमलदलमें तिष्ठी है। राम लक्ष्मण क्षणमात्रविषैं नदी पार भए वृक्षनिके आश्रय आय गए। तब लोकनिकी दृष्टितैं अगोचर भए, तब कई एक तो विलाप करते आसूं डारते घरनिकूं गए, अर कई एक राम लक्ष्मणकी ओर धरी है दृष्टि जिनने सो काष्ठसे होय रहे, अर कई एक मूर्च्छा खाय धरतीपर पडे अर कई एक ज्ञानको प्राप्त

होय जिनदीक्षाको उद्यमी भए, परस्पर कहते भए—जो धिक्कार है या असार संसारकों, अर धिक्कार इन क्षणभंगुर भोगनिकों, ये काले नागके फण समान भयानक हैं। ऐसे शूरवीरनिकी यह अवस्था, तो हमारी कहा बात ? या शरीरको धिक्कार, जो पानीके बुदबुदा समान निस्सार, जरा मरण इष्टवियोग अनिष्टसंयोग इत्यादि कष्टका भाजन है। धन्य हैं वे महापुरुष भाग्यवंत उत्तम चेष्टाके धारक, जे मरकट (बंदर) की भौंह समान लक्ष्मीको चंचल जान तजिकर दीक्षा धरते भए। या भांति अनेक राजा विरक्त होय दीक्षाको सन्मुख भए। तिनने एक पहाड़की तलहटीमें सुंदर वन देख्या अनेक वृक्षनिकर मंडित महासघन, नानाप्रकारके पुष्पनिकर शोभित, जहां सुगंधके लोलुपी भ्रमर गुंजार करैं हैं तहां महा पवित्र स्थानकमें तिष्ठते ध्यानाध्ययनविषैं लीन महातपके धारक साधु देखे। तिनकों नमस्कारकर वे राजा जिननाथका जो चैत्यालय तहां गए। ता समय पहाड़निके शिखरविषैं, अथवा रमणीक वननिविषैं अथवा नदीनिके तटविषैं, नगर ग्रमादिकविषैं जिनमंदिर हुते तहां नमस्कारकरि एक समुद्र समान गम्भीर मुनिनके गुरु सत्यकेतु आचार्य तिनके निकट गए, नमस्कारकर महाशांत रसके भरे आचार्यसे वीनती करते भए—हे नाथ ! हमको संसार समुद्रतैं पार उतारहु, तब मुनि कही तुमको भव-पार उतारनहारी भगवती दीक्षा है सो अंगीकार करहु। यह मुनिकी आज्ञा पाय ये परम हर्षकूं प्राप्त भए। राजा विदग्धविजय मेरुक्रूर संग्रामलोलुप, श्रीनागदमन, धीर शत्रुदमन अर विनोद कंटक, सत्यकठोर, प्रियवर्धन इत्यादि निर्ग्रंथ होते भए तिनका गज तुरंग रथादि सकल साज सेवक लोकनिनैं जायकरि उनके पुत्रादिकनिकूं सौंप्या, तब वे बहुत चिंतावान भए। बहुरि समझकर नाना प्रकारके नियम धारते भए। केयक सम्यग्दर्शन कूं अंगीकारकर संतोषकूं प्राप्त भये, केयक निर्मल जिनेश्वरदेवका धर्म श्रवणकरि पापतैं परान्मुख भए। बहुत सामंत राम लक्ष्मणकी वार्ता सुन साधु भए, केयक श्रावक के अणुव्रत धारते भए। बहुत रानी आर्यिका भईं, बहुत श्राविका भईं, केयक सुभट रामका सर्व वृत्तांत भरत दशरथपर जाकर कहते भए सो सुनकर दशरथ अर भरत कछुयक खेदकूं प्राप्त भए।

अथानंतर राजा दशरथ भरतको राज्याभिषेक कर कछुयक जो रामके वियोग कर व्याकुल भया हुता हृदय सो समतामें लाय विलाप करता जो अंतःपुर ताहि प्रतिबोधि नगरतैं वनकूं गए। सर्वभूतहित स्वामीको प्रणामकरि बहुत नृपनिसहित जिनदीक्षा आदरी। एकाकी विहारी जिनकल्पी भए। परम शुक्लध्यानकी है अभिलाषा जिनके तथापि पुत्रके शोककर कबहुंक कछुइक कलुषता उपज आवै सो एक दिन ये विचक्षण विचारते भए कि संसारके दुखका मूल यह जगतका स्नेह है इसे धिक्कार हो, या करि कर्म बंधैं हैं। मैं अनन्त जन्म धरे तिनविषैं गर्भ-जन्म बहुत धरे, सो मेरे गर्भ-जन्मके अनेक माता-पिता भाई-पुत्र कहां गये ? अनेक बार मैं देवलोकके भोग भोगे, अर अनेक बार नरकके दुख भोगे, तिर्यंचगतिविषैं मेरा शरीर अनेक बार

इन जीवनिने भख्या, इनका मैं भख्या नाना रूप ये योनियें तिनविषैं मैं बहुत दुख भोगे, अर बहुत वार रुदन किया। अर रुदनके शब्द सुने। अर बहुत वार वीणाबांसुरी आदि वादित्रोंके नाद सुने, गीतसुने, नृत्य देखे, देवलोकविषै मनोहर अप्सरानिके भोग भोगे, अनेक बार मेरा शरीर नरकविषैं कुल्हाड़निकर काटा गया, अर अनेक बार मनुष्यगतिविषैं महा सुगन्ध महा वीर्य करणहारा षट्रस संयुक्त अन्न आहार किया। अर अनेक वार नरकविषैं गला सीसा अर तांबा नारकियोंने मार मार मुझे प्याया अर अनेक वार सुर नर गतिविषैं मनके हरणहारे सुन्दर रूप देखे अर सुन्दर रूप धारे। अर अनेक वार नरकविषैं महा कुरूप धारे अर नाना प्रकारके त्रास देखे। कैयक बार राजपद देवपदविषैं नाना प्रकारके सुगन्ध सूंघे तिनपर भ्रमर गुंजार करैं। अर कैयक वार नरककी महा दुर्गन्ध सूंघी। अर अनेक वार मनुष्य तथा देवगतिविषैं महालीलाकी धरणहारी, वस्त्राभरण मंडित, मन की चोरनहारी जे नारी तिनसों आलिंगन किया। अर बहुत वार नरकविषैं कूटशाल्मलि वृक्ष तिनके तीक्ष्ण कंटक अर प्रज्वलिती लोहकी पुतलीनिसे स्पर्श किया? या संसारविषैं कर्मनिके संयोगतैं मैं कहा कहा न देखा, कहा कहा न सूंघा, कहा कहा न सुना, कहा कहा न भखा अर पृथिवीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकायविषैं ऐसा देह नाहीं जो मैं न धारा, तीनलोकविषैं ऐसा जीव नाहीं जासूं मेरे अनेक नाते न भए, ये पुत्र मेरे कई वार पिता भए, माता भए, शत्रु भए, मित्र भए, ऐसा स्थानक नाहीं, जहां मैं न उपजा, न मूआ। ये देह भोगादिक अनित्य या जगतविषैं कोई शरण नाहीं, यह चतुर्गतिरूप संसार दुखका निवास है, मैं सदा अकेला हू ये षट्द्रव्य परस्पर सबही भिन्न हैं, यह काय अशुचि, मैं पवित्र, ये मिथ्यात्वादि अव्रतादि कर्म आस्रवके कारण हैं, सम्यक्त व्रत संयमादि संवरके कारण हैं। तपकर निर्जरा होय है। यह लोक नानारूप मेरे स्वरूपतैं भिन्न या जगतविषैं आत्मज्ञान दुर्लभ है अर वस्तुका जो स्वभाव सोई धर्म तथा जीव दया धर्म सो मैं महाभाग्यतैं पाया। धन्य ये मुनि जिनके उपदेशतैं मोक्षमार्ग पाया सो अब पुत्रनिकी कहा चिंता, ऐसा विचारकर दशरथ मुनि निर्मोह दशाकूं प्राप्त भए, जिन देशोंमें पहिले हाथी चढ़े, चमर ढुरते, छत्र फिरते हुते, अर महारण संग्रामविषैं उद्धत वैरिनिकूं जीते तिन देशनिविषैं निर्ग्रन्थ दशा धरे, बाईस परीषह जीतते, शांतिभाव संयुक्त विहार करते भए। अर कौशल्या तथा सुमित्रा पतिके वैरागी भए अर पुत्रनिके विदेश गए महाशोकवंती भई, निरंतर अश्रुपात डारें तिनके दु:खकूं देख, भरत राज्य विभूतिको विष समान मानता भया। अर केकई तिनकूं दुखी देख उपजी है करुणा जाके पुत्रको कहती भई हे पुत्र! तू राज्य पाया, बड़े बड़े राजा सेवा करैं हैं, परन्तु राम लक्ष्मण विना यह राज्य शोभै नाहीं सो वे दोऊ भाई महाविनयवान उन विना कहा राज्य, अर कहा सुख, अर कहा देशकी शोभा, अर कहा तेरी धर्मज्ञता? वे दोऊ कुमार अर वह सीता राजपुत्री सदा सुखके भोगनहारे पाषाण-

दिककर पूरित जे मार्ग ताविषैं वाहन विना कैसैं जावैंगे ? अर तिन गुण-समुद्रनिकी ये दोनों माता निरन्तर रुदन करैं हैं, सो मरणकूं प्राप्त होयगीं, तातैं तुम शीघ्रगामी तुरंगपर चढ़ शिताबी जावो, उनको ले आवो, तिनसहित महासुखसों चिरकाल राज करियो, अर मैं भी तेरे पीछे ही उनके पास आऊं हूं। यह माताकी आज्ञा सुन बहुत प्रसन्न होय ताकी प्रशंसा कर अति आतुर भरत हजार अश्वसहित रामके निकट चला। अर जे रामके समीप वापिस आए हुते तिनकूं संग ले चला, आप तेज तुरंगपर चढ़ा उतावली चाल वनविषैं आया। वह नदी असराल वहती हुती सो तामें वृक्षनिके लठे गेर बेड़े बांध क्षणमात्रमें सेना सहित पार उतरे, मार्गविषैं नर नारिनसों पूछते जांय जो तुम राम लक्ष्मण कहीं देखे ? वे कहैं हैं यहांते निकट ही हैं। सो भरत एकाग्र-चित्त चले गए। सघन वनमें एक सरोवरके तटपर दोऊ भाई सीता सहित बैठे देखे। समीप हैं धनुष बाण जिनके, सीताके साथ ते दोऊ भाई घने दिवसविषैं आए अर भरत छह दिनमें आया, रामकूं दूरते देख भरत तुरंगतैं उतर पांय पियादा जाय रामके पायनि पर मूर्च्छित होय गया तब राम सचेत किया। भरत हाथ जोड़ सिर नवाय रामसूं वीनती करता भया।

हे नाथ ! राज्य देयवेकर मेरी कहा विडम्बना करी। तुम सर्व न्यायमार्गके जाननहारे, महा प्रवीण मेरे या राज्य करि कहा प्रयोजन ? तुम विना जीवेकर कहा प्रयोजन ? तुम महा उत्तम चेष्टाके धरणहारे मेरे प्राणनिके आधार हो। उठो अपने नगर चलें। हे प्रभो ! मोपर कृपा करहु, राज्य तुम करहु, राज्य योग तुम ही हो, मोहि सुखकी अवस्था देहु। मैं तिहारे सिरपर छत्र फेरता खड़ा रहूंगा अर शत्रुघ्न चमर ढारेगा, अर लक्ष्मण मंत्रीपद धारेगा। मेरी माता पश्चात्तापरूप अग्निकर जरै है अर तिहारी माता अर लक्ष्मणकी माता महाशोक करै है, यह बात भरत करैं हैं, ताही समय शीघ्र रथपर चढ़ी अनेक सामंतनिसहित महा शोककी भरी केकई आई, अर राम लक्ष्मण कूं उरसूं लगाय बहुत रुदन करती भई। रामने धैर्य बंधाया, तब केकई कहती भई - हे पुत्र ! उठो अयोध्या चालो, राज्य करहु, तुम विन मेरे सकल पुर वन समान है। अर तुम महा बुद्धिमान हो, भरतकूं सिखाय लेहु बहुरि हम स्त्रीजन नष्टबुद्धि हैं, मेरा अपराध क्षमा करहु। तब राम कहते भए-हे मात ! तुम तो सब बातनिविषैं प्रवीण हो। तुम कहा न जानौ हो, क्षत्रियनिका यही विरुद है जो वचन न चूकें, जो कार्य बिचारया ताहि और भांति न करैं। हमारे ताततैं जो वचन कह्या सो हमकूं अर तुमकूं निवाहना, या बातविषैं भरतकी अकीर्ति न होयगी। बहुरि भरतसूं कहा कि हे भाई ! तू चिंता मत करै, तू अनाचारतैं शंकै है सो पिताकी आज्ञा अर हमारी आज्ञा पालवेतैं अनाचार नाहीं, ऐसा कहकर वनविषैं सब राजानिके समीप भरतका श्रीरामने राज्याभिषेक किया अर केकईकूं प्रणामकर बहुत स्तुतिकर बारंबार संभाषणकर भरतकूं उरसूं लगाय बहुत दिलासा करी, नीठितैं विदा किया। केकई अर भरत राम लक्ष्मण सीताके समीपतैं पाछे नगरकूं चाले,

भरत रामकी आज्ञा प्रमाण प्रजाका पिता—समान हुआ, राज्यविषैं सर्व प्रजाकूं सुख, कोई अनाचार नाहीं, ऐसा निःकंटक राज्य है तौहू भरतका क्षणमात्र राग नाहीं, तीनों काल श्रीअरनाथकी बंदना करै है अर मुनिनके मुखतैं धर्म श्रवण करै, द्युति भट्टारक नामा जे मुनि, अनेक मुनि करै हैं सेवा जिनकी, तिनके निकट भरतने यह नियम लिया कि रामके दर्शनमात्रतैं ही मुनिव्रत धारूंगा। तब मुनि कहते भए कि--हे भव्य! कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके, ऐसे राम जौ लग न आवैं तौ लग तुम गृहस्थके व्रत धारहु। जे महात्मा निर्ग्रंथ हैं तिनका आचरण अति बिषम है सो पहिले श्रावक के व्रत पालने तासूं यतिका धर्म सुखसूं सधै। जब वृद्ध अवस्था आवैगी तब तप करैंगे, यह वार्ता कहते भए अनेक जड़बुद्धि मरणकूं प्राप्त भए। महा अमोलक रत्नसमान यतिका धर्म, जाकी महिमा कहनेविषैं न आवै ताहि जे धारै हैं तिनकी उपमा कौनकी देहि। यतिके धर्मतैं उतरता श्रावकका धर्म है सो जे प्रमादरहित करै हैं ते धन्य हैं। यह अणुव्रत हू प्रबोधका दाता है जैसैं रत्नद्वीपविषैं कोऊ मनुष्य गया अर वह जो रत्न लेय सोई देशांतरविषैं दुर्लभ है तैसैं जिनधर्म नियमरूप रत्ननिका द्वीप है। ताविषैं जो नियम लेय सोई महाफलका दाता है जो अहिंसारूप रत्नकूं अंगीकारकर जिनवरकूं भक्तिकर अरचै सो सुरनरके सुख भोग मोक्षकूं प्राप्त होय। अर जो सत्यव्रतका धारक,मिथ्यात्वका परिहारकर भावरूप पुष्पनिकी मालाकर जिनेश्वरकूं पूजै है,ताकी कीर्ति पृथिवीविषैं विस्तरै है अर आज्ञा कोई लोप न सकै। अर जो परधनका त्यागी जिनेंद्रकूं उरविषैं धारै, वारंवार जिनेंद्रकूं नमस्कार करै जो नव निधि चौदह रत्नका स्वामी होय अक्षयनिधि पावै। अर जो जिनराजका मार्ग अंगीकार कर परनारीका त्याग करै सो सबके नेत्रनिकूं आनंदकारी मोक्ष-लक्ष्मीका वर होय। अर जो परिग्रहका प्रमाण कर संतोष धर जिनपतिका ध्यान करै सो लोकपूजित अनंत महिमाकूं पावै। अर आहारदानके पुण्यकर महा सुखी होय ताकी सब सेवा करैं। अर अभयदानकर निर्भयपद पावैं, सर्व उपद्रवतैं रहित होय। अर ज्ञानदानकर केवलज्ञानी होय सर्वज्ञपद पावै, अर औषधिदानके प्रभावकर रोगरहित निर्भयपद पावै। अर जो रात्रिकूं आहार का त्याग करै सो एक वर्षविषैं छह महीना उपवासका फल पावै यद्यपि गृहस्थपदके आरंभविषैं प्रवृत्तै है तो हू शुभ गतिके सुख पावै। जो त्रिकाल जिनदेवकी वंदना करै ताके भाव निर्मल होंय, सर्व पापका नाश करै। अर जो निर्मल भावरूप पहुपनिकर जिननाथकूं पूजै सो लोकविषैं पूजनीक होय। अर जो भोगी पुरुष कमलादि जलके पुष्प तथा केतकी मालती आदि पृथ्वीके सुगंध पुष्पनिकर भगवानकूं अरचै सो पुष्पकविमानकूं पाय यथेष्ट क्रीड़ा करै। अर जो जिनराजपर अगर चंदनादि धूप खेवै सो सुगंध शरीरका धारक होय। अर जो गृहस्थी जिनमंदिरविषैं विवेकसहित दीपोद्योत करै सो देवलोकविषैं प्रभाव संयुक्त शरीर पावै। अर जो जिनभवनविषैं छत्र चमर झालरी पताका दर्पणादि मंगलद्रव्य चढ़ावै अर

जिनमंदिरकूं शोभित करैं सो आश्चर्यकारी विभूति पावै। अर जो जल-चंदनादितैं जिनपूजा करै सो देवनिका स्वामी होय महा निर्मल सुगंध शरीर जे देवांगना तिनका वल्लभ होय। अर जो नीरकर जिनेंद्रका अभिषेक करै सो देवनिकर मनुष्यनितैं सेवनीक चक्रवर्ती होय, जाका राज्याभिषेक देव विद्याधर करैं। अर जो दुग्धकरि अरहंतका अभिषेक करै सो चीरसागरके जलसमान उज्ज्वल विमानविषैं परम कांति धारक देव होय बहुरि मनुष्य होय मोक्ष पावै। अर जो दधिकर सर्वज्ञ वीतरागका अभिषेक करै सो दधि समान उज्ज्वल यशकूं पायकर भवोदधिकूं तरै। अर जो घृतकर जिननाथका अभिषेक करैं सो स्वर्ग विमानमैं महा बलवान देव होय परपराय अनंत वीर्यकूं धरै। अर जो ईख-रसकर जिननाथका आभषेक करै सो अमृतका आहारी सुरेश्वर होय नरेश्वर पद पाय मुनीश्वर होय अविनश्वर पद पावै। अभिषेकके प्रभाव-कर अनेक भव्यजीव देव अर इंद्रनिकरि अभिषेक पावते भए, तिनकी कथा पुराणनिमें प्रसिद्ध है जो भक्तिकर जिनमंदिरविषैं मयूरपिच्छादिककर बुहारी देय सो पापरूप रजतैं रहित होय परम विभूति आरोग्यता पावै। अर जो गीत नृत्य वादित्रादिकर जिनमंदिरविषैं उत्सव करै ते स्वर्गविषैं परम उत्साहकूं पावै। अर जो जिनेश्वरके चैत्यालय करावै सो ताके पुण्यकी महिमा कौन कह सकै, सुर-मंदिरके सुख भोग परंपराय अविनाशी धाम पावै। अर जो जिनेंद्रकी प्रतिमा विधिपूर्वक करावै सो सुरनरके सुख भोगि परम पद पावै। व्रत विधान तप दान इत्यादि शुभ चेष्टानिकरि प्राणी जे पुण्य उपार्जैं हैं सो समस्त कार्य जिनबिंब करावनेके तुल्य नाहीं। जो जिनबिंब करावै सो परंपराय पुरुषाकार सिद्धपद पावैं। अर जो भव्य जिनमंदिरके शिखर चढ़ावै सो इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादिक सुख भोग लोकके शिखर पहुचै। अर जो जीर्ण जिनमंदिरनिकी मरम्मत करावै सो कर्मरूप अजीर्णकूं हर निर्भय निरोग पद पावै। अर जो नवीन चैत्यालय कराय जिनबिंब पधराय प्रतिष्ठा करै सो तीन लोकविषैं प्रतिष्ठा पावै अर जो सिद्धक्षेत्रादि तीर्थनिकी यात्रा करै सो मनुष्य जन्म सफल करै। अर जो जिनप्रतिमाके दर्शनका चिंतवन करै ताहि एक उपवासका फल होय, अर दर्शनको उद्यमका अभिलाषी होय सो बेलाका फल पावै। अर जो चैत्यालय जायवेका आरंभ करै, ताहि तेलाका फल होय, अर गमन किए चौलाका फल होय अर कछुएक आगे गए पंच उपवासका फल होय, आधी दूर गए पक्षोपवासका फल होय अर चैत्यालयके दर्शनते मासोपवासका फल होय अर भाव भक्तिकर महास्तुति किए अनंत फल प्राप्ति होय। जिनेंद्रकी भक्ति समान और उत्तम नाहीं। अर जो जिनसूत्र लिखवाय ताका व्याख्यान करैं करावें, पढ़ें पढ़ावें, सुनें सुनावें, शास्त्रनिकी तथा पंडितनिकी भक्ति करें वे सर्वांगके पाठी होय केवलपद पावें। जो चतुर्विध संघकी सेवा करैं सो चतुर्गतिके दुख हर पंचमगति पावैं। मुनि कहै हैं—हे भरत! जिनेंद्रकी भक्तिकर कर्म क्षय होय, अर कर्म क्षय

भए अक्षयपद पावै ये वचन मुनिके सुन राजा भरत प्रणामकर श्रावकका व्रत अंगीकार किया। भरत बहुश्रुत अतिधर्मज्ञ महाविनयवान श्रद्धावान चतुर्विध संघकूं भक्तिकर अर दुखित जीवनिकूं दयाभावकर दान देता भया। सम्यग्दर्शनरत्नकूं उरविषैं धारता, अर महासुंदर श्रावकके व्रतविषैं तत्पर न्यायसहित राज्य करता भया।

भरत गुणनिका समुद्र ताका प्रताप अर अनुराग समस्त पृथिवीविषैं विस्तरता भया। ताके देवांगना समान ड्योढ़ सौ राणी तिनविषैं आसक्त न भया, जलमें कमलकी न्याईं अलिप्त रहा। जाके चित्तमें निरंतर यह चिंता वरते, कि कब यतिके व्रत धरूं, निर्ग्रंथ हुवा पृथिवीविषैं विचरूं। धन्य हैं वे पुरुष जे धीर सर्व परिग्रहका त्याग कर तपके बल कर समस्त कर्मनिकूं भस्मकर सारभूत जो निर्वाणका सुख सो पावैं हैं! मैं पापी संसारविषैं मग्न प्रत्यक्ष देखूं हूं जो यह समस्त संसारका चरित्र क्षणभंगुर है। जो प्रभात देखिये सो मध्याह्नविषैं नाहीं। मैं मूढ़ होय रहा हूं जे रंक विषयाभिलाषी संसारमें राचैं हैं ते खोटी मृत्यु मरैं हैं, सर्प व्याघ्र गज जल अग्नि शस्त्र विद्युत्पात शूलारोपण असाध्य रोग इत्यादि कुरीतितैं शरीर तजेंगे। यह प्राणी अनेक सहस्रों दुख का भोगन हारा संसार विषैं भ्रमण करै है। बड़ा आश्चर्य है अल्प आयुमें प्रमादी होय रह्या है जैसैं कोई मदोन्मत्त क्षीरसमुद्रके तट सूता तरंगोंके समूहसे न डरै, तैसैं मैं मोहकर उत्पन्न भव-भ्रमणसे नाहीं डरूं हूं। निर्भय होय रहा हू, हाय हाय! मै हिंसा आरम्भादि अनेक जे पाप तिन कर लिप्त मैं राज्य कर कौनसे घोर नरकमें जाऊंगा? कैसा है नरक, बाण खड्ग चक्रके आकार तीक्ष्ण पत्र हैं जिनके, ऐसे शाल्मलीवृक्ष जहां हैं। अथवा अनेक प्रकार तिर्यञ्चगति ताविषैं जाऊंगा। देखो जिनशास्त्र सारिखा महा ज्ञानरूपशास्त्र ताहूकों पापयरि मेरा मन पाप युक्त होय रह्या है। निस्पृह होकर यतिका धर्म नाहीं धारै है सो न जानिए कौन गति जाना है ऐसी कर्मनिकी नाशनहारी जो धर्मरूप चिंता ताकूं निरंतर प्राप्त हुआ जो राजा भरत सो जैनपुराणादि ग्रंथनिके श्रवणविषै आसक्त हैं, सदैव साधुनकी कथाविषैं अनुरागी रात्रि दिन धर्ममें उद्यमी होता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै दशरथका वैराग्य रामका विदेशगमन भरतका राज्य वर्णन करनेवाला बत्तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥३२॥

तेतीसवां पर्व

[वज्रकरण चोर कथानक]

अथानंतर श्री रामचंद्र लक्ष्मण सीता जहां एक तापसीका आश्रम है तहां गए। अनेक तापस जटिल नानाप्रकारके वृक्षनिके वक्कल पहिरे, अनेक प्रकारके स्वादु फल तिनकर पूर्ण है मठ जिनके, वनविषैं, वृक्षसमान बहुत मठ देख विस्तीर्ण पत्तोंकर छाए हैं मठ जिनके, अथवा घासके

फूलनिकर आच्छादित हैं निवास जिनके, विना वाहे सहज ही उगे जे धान्य ते उनके आंगनमें सूके हैं अर मृग भयरहित आंगनमें बैठे जुगाले हैं, अर तिनके निवास विषैं सूवा मैना पढैं हैं अर तिनके मठनिके समीप अनेक गुलक्यारी लगाय राखीं हैं सो तापसनिको कन्या मिष्ट जलकर पूर्ण जे कलश ते थांवलनिमें डारै हैं। श्रीरामचन्द्रकूं आए जाने तापस नाना प्रकारके मिष्टफल सुगन्ध पुष्प मिष्ट जल इत्यादिक सामिग्रीनिकर बहुत आदरतै पाहुनगति करते भए। मिष्ट वचनका संभाषणकर, रहनेको कुटी मृदुपल्लवनिकी शय्या इत्यादि उपचार करते भए। तापस सहज ही सबनिका आदर करै हैं इनका महा रूपवान अद्भुत पुरुष जान बहुत आदर किया। रात्रिकूं वसकर ये प्रभात उठकर चाले। तब तापस इनकी लार चाले,इनके रूपकूं देख अनुरागी होते भए, पाषाण हू पिघलै तौ मनुष्यनिकी कहा बात। ते तापस सूके पत्रनिके आहारी इनके रूपकूं देख अनुरागी होते भए, जे वृद्ध तापस हैं ते इनकूं कहते भए--तुम यहां ही रहो, तो यह सुखका स्थानक है अर कदाचित् न रहै तो या अटवीविषैं सावधान रहियो। यद्यपि यह बनी जल फल पुष्पादिकर भरी है तथापि विश्वास न करना, नदी वनी नारी ये विश्वास योग्य नाहीं, सो तुम तो सर्व बातनिमैं सावधान ही हो। फिर राम लक्ष्मण सीता यहातैं आगैं चले, अनेक तापसिनी इनके देखवेकी अभिलाषकरि बहुत विह्वल भई संती दूरलग पत्र पुष्प फल ईंधनादिकके मिसकर साथ चली आई, कई एक तापसिनी मधुर वचनकर इनकूं कहती भईं जो तुम हमारे आश्रमविषैं क्यों न रहो, हम तिहारी सब सेवा करें, यहांतैं तीन कोसपर ऐसी वनी है जहां महासघन वृक्ष हैं, मनुष्यनिका नाम नाहीं। अनेक सिंह व्याघ्र दुष्ट जीवनिकर भरी, जहां ईंधन अर फल फूलके अर्थ तापसहू न आवैं। डाभकी तीक्ष्ण अणीनिकर जहां संचार नाहीं। वन महा भयानक है अर चित्रकूट पर्वत अति ऊंचा दुर्लंघ्य विस्तीर्ण पड्या है तुम कहा नहीं सुन्या है जो निशंक चले जावो हो? तब राम कहते भए--अहो तापसिनी हो! हम अवश्य आगें जावैंगे, तुम अपने स्थानक जाहु। कठिनतातैं तिनकूं पाछे फेरीं। ते परस्पर इनके गुण रूपका वर्णन करतीं अपने स्थानक आईं। ये महा गहन वनविषैं प्रवेश करते भए। कैसा है वह वन? पर्वतके पाषाणनिके समूहकरि महा कर्कश अर बड़े बड़े जे वृक्ष तिनपर आरूढ बेलनिके समूह जहां, अर क्षुधाकर अति क्रोधायमान जे शार्दूल तिनके नखनिकर विदारे गए हैं वृक्ष जहां,अर सिंहनिकर हते गए जे गजराज तिनके रुधिरकर रक्त भए जे मोती सो ठौर २ विखर रहे हैं, अर माते जे गजराज तिन कर भग्न भए हैं तरुवर जहां, अर सिंहिनीकी ध्वनि सुनकर भाग रहे हैं कुरंग जहां, अर सूते जे अजगर तिनके श्वासनिकी पवनकरि गूंज रही हैं गुफा जहां, शूकरनिके समूहकर कर्दमरूप होय रहे हैं तुच्छ सरोवर जहां,अर महा अरण्य भैंसे तिनके सींगनकर भग्न भए हैं बबइयनिके स्थल जहां, अर फणकूं ऊंचे फिरै हैं भयानक सर्प जहां अर कांटनिकर बींधा है पूंछका

अग्रभाग जिनका, ऐसी जे सुरैंगाय सो खेदखिन्न भई हैं, अर फैल रहे हैं कटेरी आदि अनेक प्रकारके कंटक जहां, अर विष पुष्पनिकी रजकी वासनाकर घूमें हैं अनेक प्राणी जहां, अर गैंडानिके नखनिकर विदारे गए हैं वृक्षनिके पींड अर भ्रमते रोझनके समूह तिनकर भग्न भए हैं पल्लवनिके समूह जहां। अर नाना प्रकारके जे पक्षिनिके समूह तिनके जो क्रूर शब्द उनकर वन गूंज रहा है, अर बंदरनिके समूह तिनके कूदनेकर कम्पायमान हैं वृक्षनिकी शाखा जहां, अर शीघ्र वेगकूं धरैं पर्वतसों उतरते जलके जे प्रवाह तिनकर विदारी गई है पृथ्वी जहां, अर वृक्षनिके पल्लवनिकर नाहीं दीखे हैं सूर्यकी किरण जहां अर नानाप्रकारके फल फूल तिनकर भरा, अनेक प्रकारकी फैल रही है सुगंध जहां नानाप्रकारकी जे औषधि तिनकरि पूर्ण अर वनके जे धान्य तिनकरि पूरित, कहूंएक नील कहूंएक रक्त कहूंएक हरित नानाप्रकार वर्णकूं धरैं जो वन तामैं दोऊ वीर प्रवेश करते भए। चित्रकूटपर्वतके महा मनोहर जे नीझरनें तिनविषैं क्रीड़ा करते वनकी अनेक सुन्दर वस्तु देखते परस्पर दोऊ भाई बात करते वनके मिष्टफल आस्वादन करते किन्नर देवनिके हू मनकूं हरैं ऐसा मनोहर गान करते पुष्पनिके परस्पर आभूषण बनावते, सुगंधद्रव्य अंगविषैं लगावते, फूल रहे हैं सुन्दर नेत्र जिनके, महा स्वच्छन्द अत्यन्त शोभाके धारणहारे सुर नर नागनिके मनके हरणहारे नेत्रनिकूं प्यारे, उपवनकी नाईं भीमवनमें रमते भए। अनेक प्रकारके सुन्दर जे लतामण्डप तिनविषैं विश्राम करते नाना प्रकार कथा करते विनोद करते रहस्यकी बातैं करते, जैसैं नंदनवनविषैं देव भ्रमण करैं तैसैं अतिरमणीक लीलासूं वनविहार करते भए।

अथानंतर साढ़े चार मासमें मालव देशविषैं आए सो देश अत्यंत सुंदर नाना प्रकारके धान्योंकर शोभित, जहां ग्राम पट्टन घने, सो केतीक दूर आयकर देखे तो वस्ती नाहीं, तब एक बटकी छाया बैठ दोऊ भाई परस्पर बतरावते भए जो काहेतैं यह देश उजाड़ दीखै है? नाना प्रकारके खेत फल रहे है, अर मनुष्य नाहीं, नानाप्रकारके वृक्ष फल फूलनिकर शोभित हैं अर पौंड़े सांठेके वाड़ बहुत हैं, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे हैं। नाना प्रकारके पक्षी केलि कर रहे हैं। यह देश अति विस्तीर्ण मनुष्यनिके संचार विना शोभै नाहीं, जैसैं जिनदीक्षाकूं धरैं मुनि वीतराग भावरूप परम संयम विना शोभै नाहीं। ऐसी सुन्दर वार्ता राम लक्ष्मणसूं करैं हैं तहां अत्यंत कोमल स्थानक देख रत्नकम्बल बिछाय श्रीराम बैठे, निकट धरया है धनुष जिनके, अर सीता प्रेमरूप जलकी सरोवरी श्रीरामकेविषैं आसक्त है मन जाका, सो समीप बैठी। श्रीरामने लक्ष्मणकूं आज्ञा करी तू बट ऊपर चढकर देख कछु वस्ती दीखै है सो आज्ञा प्रमाण देखता भया अर कहता भया कि हे देव! विजयार्धपर्वत समान ऊंचे जिनमंदिर दीखै हैं जिनके शरदके बादल समान शिखर शोभै हैं, ध्वजा फरहरैं हैं अर ग्राम हू बहुत दीखै हैं कूप वापी सरोवरनि

करि मंडित हैं अर विद्या धरनिके नगर समान दीखै हैं, खेत फल रहे हैं परंतु मनुष्य कोई नाहीं दीखैं है। न जानिये लोक परिवार सहित कहां भाज गए हैं, अथवा क्रूरकर्मके करणहारे म्लेच्छ बांधकर लेगए हैं। एक दरिद्री मनुष्य आवता दीखै है। मृगसमान शीघ्र आवै है, रूक्ष हैं केश जाके, मलकर मंडित है शरीर जाका, लंबी दाढी कर आच्छादित है उरस्थल अर फाटे वस्त्र पहिरे, फाटे हैं चरण जाके, ढरै है पसेव जाके मानों पूर्व जन्मके पापकूं प्रत्यक्ष दिखावै है। तब राम आज्ञा करी जो शीघ्र जाय याकूं ले आओ। तदि लक्ष्मण बटतैं उतर दरिद्रीके पास गए। तब दरिद्री लक्ष्मणकूं देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। जो यह इंद्र है, वरुण है अथवा नागेन्द्र है, तथा नर है, किन्नर है, चंद्रमा है कि सूर्य है, अग्निकुमार है कि कुवेर है, यह कोऊ महा तेजका धारक है, ऐसा विचारता संता डरकर मूर्च्छा खाय भूमिविषैं गिर पड्या। तब लक्ष्मण कहते भए--हे भद्र! भय न करहु। उठ उठ ऐसा कहि उठाया अर बहुत दिलासाकरि श्रीरामके निकट ले आया, सो दरिद्री पुरुष क्षुधा आदि अनेक दुखनिकर पीडित हुतौ सो रामकूं देख सब दुख भूल गया। राम महासुंदर सौम्य है मुख जिनका, कांतिके समूहतैं विराजमान, नेत्रनिकूं उत्साहके करणहारे महाविनयवान सीता समीप बैठी है, सो मनुष्य हाथ जोड सिर पृथिवीसूं लगाय नमस्कार करता भया। तब आप दयाकर कहते भए--तू छायाविषैं आय बैठ, भय न करि। तब वह आज्ञा पाय दूर बैठ्या, रघुपति अमृतरूप वचनकर पूछते भए तेरा नाम कहा, अर कहांतैं आया, अर कौन है? तब वह हाथ जोड़ि विनती करता भया—हे नाथ! मैं कुटुम्बी (कुनबी) हूं मेरा नाम सिरगुप्त है दूरतैं आऊं हूं। तब आप बोले यह देश उजाड़ काहेतैं है? तब वह कहता भया हे देव! उज्जयिनी नाम नगरी ताके पति राजा सिंहोदर प्रसिद्ध, प्रतापकर नवाए हैं बड़े २ सामंत जानैं, देवनि समान है विभव जाका, अर एक दशांगपुरका पति वज्रकर्ण सो सिंहोदरका सेवक अत्यंत प्यारा सुभट जानैं स्वामीके बड़े २ कार्य किए सो निर्ग्रंथ मुनिकूं नमस्कारकर धर्म श्रवणकर तानैं यह प्रतिज्ञा करी जो मैं देव गुरु शास्त्र टार औरनिकूं नमस्कार न करूं। साधुके प्रसादकर ताकूं सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति भई सो पृथिवीविषैं प्रसिद्ध है। आप कहा अब लों वाकी वार्ता न सुनी? तब लक्ष्मण रामके अभिप्रायतैं पूछते भए जो वज्रकर्णपर कौन भांति संतनकी कृपा भई। तब पंथी कहता भया--हे देवराज! एकदिन वज्रकर्ण दशारण्य वनविषैं मृगयाकूं गया हुता, जन्महीतैं पापी क्रूरकर्मका करणहारा इंद्रियनिका लोलुपी महामूढ़ शुभक्रियातैं पराङ्मुख महासूक्ष्म जिनधर्मकी चर्चा सो न जानै कामी क्रोधी लोभी अन्ध भोग सेवनकर उपजा जो गर्व सोई भया पिशाच ताकर पीड़ित, सो वनविषैं भ्रमण करै सो ताने ग्रीष्म समयविषैं एक शिलापर तिष्ठता संता सत्पुरुषनिकर पूज्य ऐसा महामुनि देख्या। चार महीना सूर्यकी किरणका आताप सहनहारा महातपस्वी पक्षीसमान निराश्रय सिंहसमान निर्भय सो तप्तायमान जो शिला ताकर तप्त शरीर

ऐसे दुर्जय तीव्र तापका सहनहारा सज्जन सो ऐसे तपोनिधि साधुकूं देख वज्रकर्ण तुरंगपर चढ्या वरछी हाथमें लिए, कालसमान महाक्रूर पूछता भया। कैसैं हैं साधु? गुणरूप रत्ननिके सागर, परमार्थके वेत्ता, पापनिके घातक, सब जीवनिके दयालु, तपोविभूतिकर मंडित तिनसूं वज्रकर्ण कहता भया—

हे स्वामी! तुम या निर्जन वनविषैं कहा करो हो? ऋषि बोले आत्मकल्याण करैं हैं जो पूर्वैं अनंत भवविषैं न आचरया, तब वज्रकर्ण हंसकर कहता भया या अवस्थाकरि तुमकूं कहा सुख है। तुम तपकर रूप लावण्यरहित शरीर किया। तिहारे अर्थ काम नाहीं, वस्त्राभरण नाहीं कोई सहाई नाहीं। स्नान सुगंध लेपनादि रहित हो, पराए घरनिके आहार कर जीविका पूरी करो हो, तुम सारिखे मनुष्य कहा आत्महित करैं। तब याकूं काम भोग कर अत्यंत आर्तिवंत देख महादयावान संयमी बोले--कहा तूने महा घोर नरककी भूमि न सुनी है जो तू उद्यमी होय पापनिविषैं प्रीति करै है। नरककी महाभयानक सात भूमि हैं ते महादुर्गंधमई देखी न जांय, स्पर्शी न जांय सुनी न जांय, महातीक्ष्ण लोहेके कांटेनिकर भरी जहां नारकीनिकूं घानीमें पेलें हैं, अनेक वेदना त्रास होय है, छुरियों कर तिल तिल काटिए हैं अर ताते लोह समान ऊपरले नरकनिका पृथिवीतल, अर महाशीतल नीचले नरकनिका पृथिवीतल ताकर महा पीडा उपजै है, जहां महा अंधकार महा भयानक रौरवादि गर्त असिपत्रवन महा दुर्गंध वैतरणी नदी जे पापी माते हाथिनिकी न्याई निरंकुश हैं ते नरकविषैं हजारां भांतिके दुःख देखैं हैं। हम तोहि पूछै हैं तो सारिखे पापारंभी विषयातुर कहा आत्महित करैं हैं। ये इंद्रायणके फलसमान इंद्रियनिके सुख तू निरंतर सेय कर सुख मानै है सो इनमें हित नाहीं, ये दुर्गतिके कारण हैं। आत्माका हित वह करै है जो जीवनिकी दया पाले, मुनिके व्रत धार अथवा श्रावकके व्रत आदरै, निर्मल है चित्त जिनका, जे महाव्रत तथा अणुव्रत नाहीं आचरै हैं ते मिथ्यात्व अव्रतके योगतैं समस्त दुःखके भाजन होय है, तैंने पूर्वजन्मविषैं कोई सुकृत किया हुता, ता कर मनुष्य देह पाया,अब पाप करैगा तो दुर्गति जायगा, ये विचारे निर्बल निरपराध मृगादि पशु अनाथ, भूमि ही है शय्या जिनके, चंचल नेत्र सदा भयरूप वनके तृण अर जल कर जीवनहारे, पूर्व पापकर अनेक दुखनिकर दुखी,रात्रि हू निद्रा न करैं, भयकर महा कायर सो भले मनुष्य ऐसे दीननिकूं कहा हनें, तातैं जो तू अपना हित चाहै है तो मन वचन काय कर हिंसा तज, जीवदया अंगीकार करि, ऐसे मुनिके श्रेष्ठ वचन सुनिकरि वज्रकर्ण प्रतिबोधकूं प्राप्त भया जैसैं फला वृक्ष नव जाय तैसैं साधुके चरणारविंदकूं नव गया, अश्वतैं उतर साधुके निकट गया, हाथ जोड़ प्रणाम कर अत्यंत विनयकी दृष्टि कर चित्तमें साधुकी प्रशंसा करता भया। धन्य हैं ये मुनि परिग्रहके त्यागी, जिनकूं मुक्तिकी प्राप्ति होय है, अर या वनके पक्षी अर

मृगादि पशु प्रशंसा योग्य हैं जे इस समाधिरूप साधुका दर्शन करै हैं, अर अति धन्य हूं मैं जो मोहि आज साधुका दर्शन भया। ये तीन जगतकर वंदनीक हैं, अब मैं पापकर्मतैं निवृत्त भया। ये प्रभु ज्ञानस्वरूप नखनिकर बंधु-स्नेहमई संसाररूप जो पींजरा ताहि छेदकर सिंहकी न्याई निकसे ते साधु देखो मनरूप वैरीकूं वशकरि नग्नमुद्रा धार शील पालै हैं। अतृप्त आत्मा पूर्ण वैराग्यकूं प्राप्त नाहीं भया तातैं श्रावकके अणुव्रत आचरूं ऐसा विचार कर साधुके समीप श्रावकके व्रत आदरे, अर अपना मन शांतिस्वरूप जलसे धोया, अर यह नियम लिया जो देवाधिदेव परमेश्वर परमात्मा जिनेंद्रदेव अर तिनके दास महाभाग्य निर्ग्रंथ मुनि अर जिनवाणी इन विना औरनिकूं नमस्कार न करूं, प्रीतिवर्धन नामा जे मुनि तिनके निकट वज्रकर्ण अणुव्रत आदरे अर उपवास धारे, मुनि याकूं विस्तार कर धर्मका व्याख्यान कह्या, जाकी श्रद्धाकर भव्यजीव संसारपासतैं छूटैं। एक श्रावकका धर्म एक यतिका धर्म इसमें श्रावकका धर्म गृहावलंबन संयुक्त अर यतिका धर्म निरालम्ब निरपेक्ष, दोऊ धर्मनिका मूल सम्यक्त्वकी निर्मलता तप अर ज्ञानकर युक्त अत्यंत श्रेष्ठ जो प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोगरूपविषैं जिनशासन प्रसिद्ध है। यतिका धर्म अतिकठिन जान अणुव्रतविषैं बुद्धि ठहराई अर महाव्रतकी महिमा हृदयमें धारी जैसैं दरिद्रीके हाथमें निधि आवै अर वह हर्षकूं प्राप्त होय तैसैं धर्मध्यानकूं धरता संता आनंदकूं प्राप्त भया। यह अत्यन्त क्रूरकर्मका करणहारा एक साथ ही शांत दशाकूं प्राप्त भया, या बातकर मुनि भी प्रसन्न भए। राजा तादिन तो उपवास किया, दूजे दिन पारणा कर दिगंबरके चरणारविंदकूं प्रणामकर अपने स्थानक गया। गुरुके चरणारविंदकूं हृदयमें धारता संता संदेहरहित भया। अणुव्रत आराधे। चित्तमें यह चिंता उपजी जो उज्जैनीका राजा जो सिंहोदर ताका मैं सेवक सो ताका विनय किए विना मैं राज्य कैसैं करूं? तब विचारकर एक मुद्रिका बनाई जामें श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमा पधराई दक्षिण अंगुष्ठमें पहरी, जब सिंहोदरके निकट जाय तब मुद्रिका विषैं प्रतिमा ताहि वारंवार नमस्कार करै सो याका कोऊ वैरी हुता तानैं यह छिद्र हेर सिंहोदरतैं कही जो यह तुमकूं नमस्कार नाहीं करै है। जिनप्रतिमाकूं करै है, तब सिंहोदर पापी क्रोधकूं प्राप्त भया अर कपटकर वज्रकर्णकूं दशांगनगरतैं बुलावता भया, सम्पदाकर उन्मत्त याके मारवेकूं उद्यमी भया। सो वज्रकर्ण सरलचित्त सो तुरंग पर चढ़ उज्जयिनी जायवेकूं उद्यमी भया, तासमय एक पुरुष जवान पुष्ट अर उदार है शरीर जाका, दंड जाके हाथ मैं सो आयकर कहता भया। हे राजा! जो तू शरीरतैं और राज्यभोगतैं रहित भया चाहै है तो उज्जयिनी जाहु, सिंहोदर अति क्रोधकूं प्राप्त भया है, तू नमस्कार न करा तातैं तोहि मारया चाहै है तू भले जानै सो कर, यह वार्ता सुनकर वज्रकर्ण विचारी कि कोऊ शत्रु मोविषैं अर नृपविषैं भेद किया चाहै है तानै

मंत्रकर यह पठाया होय। बहुरि विचारी जो याका रहस्य तो लेना तब एकांतविषैं ताहि पूछता भया तू कौन है अर तेरा नाम कहा अर कहांतैं आया है अर यह गोप्य मंत्र तूनैं कैसैं जान्या ? तब वह कहता भया कुंदननगरविषैं महा धनवंत एक समुद्रसंगम सेठ है जाके यमुना स्त्री ताके वर्षाकालमें विजुरीके चमत्कार समय मेरा जन्म भया, तातैं मेरा विद्युदंग नाम धरया सो मैं अनुक्रमतैं नवयौवनकूं प्राप्त भया। व्यापारके अर्थ उज्जयिनी गया तहां कामलता वेश्याकूं देख अनुरागकर व्याकुल भया। एक रात्रि तासूं संगम किया सो वाने प्रीतिके बंधन-कर बांध लिया जैसैं पारधी मृगकूं पांसितैं बांधै। मेरे बापने बहुत वर्षनिमें जो धन उपार्ज्या हुता सो मैं ऐसा कुपूत वेश्याके संग कर षटमासमें सब खोया जैसैं कमलविषैं भ्रमर आसक्त होय तैसैं ताविषैं आसक्त भया। एक दिन वह नगरनायिका अपनी सखीके समीप अपने कुंडलनिकी निंदा करती हुती सो मैं सुनी तब वासैं पूछी, तब तानैं कही धन्य है रानी श्रीधरा महासौभाग्यवती ताके काननिमें जैसे कुंडल हैं तैसे काहूके नाहीं, तब मैं मनमें चिंतई जो मैं रानीके कुंडल हरकर याकी आशा पूर्ण न करूं तो मेरे जीने कर कहा, तब कुंडल हरनेकूं मैं अंधेरी रात्रिविषैं राजमंदिर गया सो राजा सिंहोदर कुपित होरहा था अर रानी श्रीधरा निकट बैठी हुती सो रानी पूछी हे देव ! आज निद्रा काहेतैं न आवै है ? तब राजा कही हे रानी ! मैं वज्रकर्णकूं छोटेतैं मोटा किया, अर मोहि सिर न नवावै सो वाहि जब तक न मारूं तब तक आकुलताके योगतैं निद्रा कहां आवै ? एते मनुष्यनितैं निद्रा दूर भागै—अपमानसे दग्ध, अर कुटुंबी निर्धन, शत्रुने आय दबाया अरु जीतने समर्थ नाहीं, अर जाके चित्तमे शल्य, तथा कायर, अर संसारतैं विरक्त, इनतैं निद्रा दूर ही रहै है, यह वार्ता राजा रानीकूं कही। सो मैं सुनकर ऐसा होय गया मानों काहूने मेरे हृदयमें वज्रकी दीनी। सो कुंडल लेयवेकी बुद्धि तज यह रहस्य लेय तेरे निकट आया, अब तुम वहां जावो मत। कैसे हो तुम जिनधर्ममें उद्यमी हो। अर निरंतर साधुनिके सेवक हो। अंजनगिरि पर्वतसे हाथी मद झरे तिन पर चढ़े योद्धा बखतर पहिरे अर महा तेजस्वी तुरंगनिके असवार चिलते पहिरे महाक्रूर सामंत तेरे मारवेके अर्थ राजाकी आज्ञातैं मार्ग रोके खड़े हैं तातैं तू कृपाकर अवार वहां मत जाय। मैं तेरे पांयन परूं हूँ। मेरा वचन मान, अर तेरे मनमें प्रतीत नहीं आवै तो देख वह फौज आई, धूरके पटल उठे हैं, महा शब्द होते आवै हैं, यह विद्युदंगके वचन सुन वज्रकर्ण परचक्रकूं आवता देख याकूं परम मित्र जान लार लेय अपने गढ़विषैं तिष्ठ्या। सिंहोदरके सुभट दरवाजेमें आवने न दिए तब सिंहोदर सर्व सेना लार ले चढ़ आया सो गढ़ गाढ़ा जान अपने कटकके लोग इनके मारवेके डरतैं तत्काल गढ़ लेवेकी बुद्धि न करी, गढ़के समीप डेरे कर वज्रकर्णके समीप दूत भेज्या सो अत्यंत कठोर वचन कहता भया। तू जिनशासनके गर्वकरि मेरे ऐश्वर्यका कंटक

भया, जे घरखोवा यति तिनने तोहि बहकाया, तू न्यायरहित भया, देश मेरा दिया खाय, माथा अरहंतकूं नवावै, तू महा मायाचारी है तातैं शीघ्र ही मेरे समीप आयकर मोहि प्रणाम कर,नातर मारा जायगा। यह वार्ता दूतने वज्रकर्णसूं कही तब वज्रकर्ण जो जवाब दिया सो दूत जाय सिंहोदरसूं कहै है, हे नाथ! वज्रकर्णकी यह वीनती है जो देश नगर भण्डार हाथी घोड़े सब तिहारे हैं सो लेहु, मोहि स्त्रीसहित धर्मद्वार देय काढ़ देहु, मेरा तुमतैं उजर नाहीं परंतु मैं यह प्रतिज्ञा करी है जो जिनेन्द्र, मुनि अर जिनवाणी इन विना और कूं नमस्कार न करूं सो मेरा प्राण जाय तौ हू प्रतिज्ञा भंग न करूं, तुम मेरे द्रव्यके स्वामी हो,आत्माके स्वामी नाहीं। यह वार्ता सुन सिंहोदर अति क्रोधकूं प्राप्त भया, नगरकूं चारों तरफसे घेरया अर देश उजाड़ दिया, सो दरिद्री मनुष्य श्रीरामसूं कहै है हे देव! देश उजाड़नेका कारण मैं तुमसूं कह्या। अब मैं जाऊं हूँ, यहांतैं नजदीक मेरा ग्राम है सो ग्राम सिंहोदरके सेवकनिनैं बाल्या, लोगनिके विमान तुल्य घर हुते सो भस्म भए। मेरी तृण काष्टकर रची कुटी सो हू भस्म भई होयगी, मेरे घरमें एक छाज एक माटीका घट एक हांडी यह परिग्रह हुता सो लाऊं हूं। मेरे खोटी स्त्री तानैं क्रूर वचन कह मोहि पठाया है अर वह वारंवार ऐसे कहै है जो सूने गांवमें घरनिके उपकरण बहुत मिलेंगे सो जायकर ले आवहु सो मैं जाऊं हू। मेरे बड़े भाग्य जो आपका दर्शन भया, स्त्रीने मेरा उपकार किया जो मोहि पठायो। यह वचन सुन श्रीराम महा दयावान पंथीकूं दुखी देख अमोलक रत्ननिका हार दिया सो पंथी प्रसन्न होय चरणारविंदकूं नमस्कार कर हार लेय अपने घर गया द्रव्यकर राजनिके तुल्य भया।

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मणसूं कहते भए हे भाई! यह जेष्ठका सूर्य अत्यन्त दुस्सह जब अधिक चढ़ेता पहिले ही चलो या नगरके समीप निवास करैं। सीता तृषाकर पीड़ित है सो याहि जल पिलावैं अर आहारकी विधि भी शीघ्र ही करैं ऐसा कहि आगैं गमन किया, सो दशांगनगरके समीप जहां श्री चन्द्रप्रभका चैत्यालय महा उत्तम है तहां आए अर श्रीभगवानकूं प्रणामकर सुखसूं तिष्ठे अर आहारकी सामग्री निमित्त लक्ष्मण गए, सिंहोदरके कटकमें प्रवेश करते भए। कटकके रक्षक मनुष्यनिनैं मनै किए। तब लक्ष्मण विचारी ये दरिद्री अर नीच कुल इनतैं मैं कहा विवाद करूं यह विचार नगरकी ओर आए सो नगरके दरवाजे अनेक योधा बैठे हुते अर दरवाजेके ऊपर वज्रकर्ण तिष्ठा हुता, महा सावधान सो लक्ष्मणकूं देख लोक कहते भए, तुम कौन हो अर कहांतैं कौन अर्थ आए हो? तब लक्ष्मण कही दूरतैं आए हैं अर आहार निमित्त नगरमें आए हैं तब वज्रकर्ण इनकूं अति सुंदर देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया अर कहता भया हे नरोत्तम! माहि प्रवेश करो, तब यह हर्षित होय गढ़में गया, वज्रकर्ण बहुत आदरसूं मिल्या, अर कहता भया जो भोजन तैयार है सो आप कृपाकर यहां ही भोजन करहु। तब लक्ष्मण कही

मेरे गुरुजन बड़े भाई और भावज श्री चंद्रप्रभके चैत्यालयविषै बैठे हैं तिनकूं पहिले भोजन कराय मैं भोजन करूंगा। तब वज्रकर्णने कही बहुत भली बात, वहां ले जाइये, उन योग्य सब सामग्री है ले जावो, अपने सेवकनि हाथ ताने भांति भांतिकी सामग्री पठाई, सो लक्ष्मण लिवाय लाए। श्रीराम लक्ष्मण अर सीता भोजन कर बहुत प्रसन्न भए। श्रीराम कहते भए--हे लक्ष्मण! देखो वज्रकर्णकी बड़ाई, जो ऐसा भोजन कोऊ अपने जमाईको हू न जिमावै सो विना परचै अपने ताईं जिमाए, पीनेकी वस्तु महामनोहर, अर व्यंजन महामिष्ट, यह अमृत तुल्य भोजन जाकरि मार्गका खेद मिट्या अर जेठके आतापकी तप्त मिटी, चांदनी समान उज्वल दुग्ध महा सुगंध गुंजार भ्रमर जापरि करै हैं, अर सुंदर घृत सुंदर दधि मानों कामधेनुके स्तननिकरि उपजाया दुग्ध ताकरि निरमापे हैं ऐसे व्यंजन ऐसे रस और ठौर दुर्लभ हैं, ता पंथीने पहिले अपने ताईं कहा हुता जो यह अणुव्रतका धारी श्रावक है, अर जिनेंद्र मुनींद्र जिनसूत्र टार औरनिकूं नमस्कार नाहीं करै है सो ऐसा धर्मात्मा व्रत शीलका धारक आपने आगे शत्रुकरि पीड़ित रहै तो अपने पुरुषार्थ कर कहा? अपना यही धर्म है जो दुखीका दुख निवारैं, साधर्मीका तो अवश्य निवारैं। यह अपराध रहित साधु सेवाविषैं सावधान महाजिनधर्मी, जाके लोक जिनधर्मी ऐसे जीवकूं पीड़ा काहे उपजै? यह सिंहोदर ऐसा बलवान है जो याके उपद्रवतैं वज्रकर्णकूं भरत भी न बचाय सकै। तातैं हे लक्ष्मण! तुम याकूं शीघ्र ही सहाय करो, सिंहोदर पै जावो, अर वज्रकर्णका उपद्रव मिटै सो करहु, हम तुमकूं कहा सिखावैं, जो यूं कहियो तुम महाबुद्धिमान हो, जैसैं महा मणि प्रभा-सहित प्रकट होय हैं तैसैं तुम महा बुद्धि पराक्रमके घर प्रकट भए हो। या भांति श्रीरामने भाईके गुण गाए, तब भाई लक्ष्मण लज्जा कर नीचे मुख होय गए। नमस्कार कर कहते भये हे प्रभो! जो आप आज्ञा करोगे सोई होयगा, महाविनयवान लक्ष्मण रामकी आज्ञा प्रमाण धनुष बाण लेय धरतीकूं कंपायमान करते संते शीघ्र ही सिंहोदर पै गए, सिंहोदरके कटकके रखवारे पूछते भए तुम कौन हो? लक्ष्मण कहीं मैं राजा भरतका दूत हूँ, तब कटकमें पैठने दिया, अनेक डेरे उलंघ राजद्वार गया। द्वारपाल राजासूं मिलाया सो महा बलवान सिंहोदरकूं तृणसमान गिनता संता कहता भया—हे सिंहोदर! अयोध्याका अधिपति भरत तानै यह आज्ञा करी है जो वृथा विरोधकर कहा? वज्रकर्णसूं मित्रभाव करहु, तब सिंहोदर कहता भया—हे दूत! तू राजा भरतसूं या भांति कहियो जो अपना सेवक होय अर विनयमार्गसे रहित होय ताहि स्वामी समझाय सेवामें लावै, यामें विरोध कहा? यह वज्रकर्ण दुरात्मा मानो मायाचारी कृतघ्न मित्रनिका निंदक चाकरीचूक आलसी मूढ़ विनयाचार रहित, खोटो अभिलाषाका धारक, महाक्षुद्र, सज्जनता-रहित है सो याके दोष जब मिटै जब यह मरणकों प्राप्त होय, अथवा याहि राज्य-रहित करूं, तातैं तुम कछु मत कहो, मेरा सेवक है

जो चाहूँगा सो करूंगा। तब लक्ष्मण बोले—बहुत उत्तरनि करि कहा यह परम हितु है या सेवकका अपराध क्षमा करहु। ऐसा जब कह्या तब सिंहोदर क्रोध करि अपने बहुत सामंतनिकूं देख गर्वकूं धरता सन्ता उच्च स्वरमूं कहता भया यह वज्रकर्ण तो महामानी है ही, अर तू याके कार्यकूं आया सो तू महामानी है। तेरा तन अर मन मानों पाषाणतैं निर्माप्या है रंचमात्र हू नम्रता तोमैं नाहीं, तू भरतका मूढ सेवक है, जानिये है जो भरतके देशमें तो सारिखे मनुष्य होवेंगे। जैसैं सीजती भरी हांडी माहीसूं एक चावल काढकर नरम कठोरकी परीक्षा करिए है तैसैं एक तेरे देखवेकरि सबनिकी बानिगी जानी जाय है। तब लक्ष्मण क्रोधकर कहते भए, मैं तेरी बाकी सन्धि करावेकूं आया हूँ तोहि नमस्कार करवेकूं न आया, बहुत कहनेसूं कहा? थोड़े ही में समझहु। वज्रकर्णसूं सन्धि कर लेहु नातर मारा जायगा, ये वचन सुन सबही सभा के लोक क्रोधकूं प्राप्त भए। नाना प्रकारके दुर्वचन कहते भए अर नाना प्रकार क्रोधकी चेष्टाकूं प्राप्त भए। कैयक छुरी लेय कैयक कटारी भाला तलवार लेयककरि याके मारवेकूं उद्यमी भए। हुंकार शब्द करते अनेक सामंत लक्ष्मणकूं बेढ़ते भए जैसैं पर्वतकूं मच्छर रोकैं तैसैं रोकते भए, सो यह धीर वीर युद्ध क्रियाविषैं पंडित शीघ्र क्रियाके वेत्ता चरणके घातकर तिनकूं दूर उड़ाय दिए। कैयक गोडनितैं मारे, कैयक कुहनितैं पछाड़े, कैयक मुष्टिप्रहारकरि चूर्णकर डारे, कैयकनिके केश पकड़ पृथ्वीपर पाड़ि मारे, कैयकनिकूं परस्पर सिर भिड़ाय मारे, या भांति अकेले महाबली लक्ष्मणने अनेक योधा विध्वंस किये। तब और बहुत सामंत हाथी घोड़निपर चढ़ बखतर पहिर लक्ष्मणके चौगिरद फिरैं नाना प्रकारके शस्त्रनिके धारक। तब लक्ष्मण जैसैं सिंह स्यालनिकों भगावै तैसैं तिनकूं भगावता भया। तब सिंहोदर कारी घटा समान हाथी पर चढ़ कर अनेक सुभटनिसहित लक्ष्मणतैं लड़वेकूं उद्यमी भया। अनेक योधा मेघ समान लक्ष्मण रूप चन्द्रमाकूं बेढ़ते भए सो सर्व योधा ऐसे भगाए जैसे पवन आकके डोडनिके जे फफूंदे तिनकूं उड़ावै। ता समय महा योधानिकी कामिनी परस्पर वार्ता करैं हैं, देखो यह एक महा-सुभट अनेक योधनिकरि बेढ्या है परंतु यह सबकूं जीतै है, कोऊ याहि जीतिवे समर्थ नाहीं, धन्य याहि, धन्य याके माता-पिता इत्यादि अनेक वार्ता सुभटनिकी स्त्री करैं हैं। अर लक्ष्मण सिंहोदरकूं कटक सहित चढ्या देख कर गजका थंभ उपाड्या, अर कटकके सन्मुख गया जैसैं अग्नि वनकूं भस्म करै तैसैं कटकके बहुत सुभट विध्वंस किए अर जो दशांगनगरके योधा नगरके दरवाजे ऊपर वज्रकर्णके समीप बैठे हुते सो फूल गए हैं मुख जिनके स्वामीसूं कहते भए—हे नाथ! देखो यह एक पुरुष सिंहोदरके कटकतैं लड़ै है, ध्वजा रथ चक्र भग्न कर डारे, परम ज्योतिका धारी है खड्ग समान है कांति जाकी, समस्त कटककूं व्याकुलतारूप भ्रमरमें डारया है, सब तरफ सेना भागी जाय है जैसैं सिंहतैं मृगनिके समूह भागैं। अर भागते थके सुभट

परस्पर बतरावें हैं कि बक्तर उतार धरो, हाथी घोड़े छोड़ो, गदा खाड़ेमें डार देहु, ऊंचे शब्द न करहु, ऊंचे शब्दको सुनकर शस्त्रके धारक देख यह भयानक पुरुष आय मारेगा। अरे भाई! यहांतैं हाथी ले जावो कहां थांभ राखा है, गैल देऊ। अरे दुष्ट सारथी! कहां रथकूं थांभ राख्या है। अर घोड़े आगे करहु, यह आया यह आया या भांतिके वचनालाप करते महा-कष्टकूं प्राप्त भए, सुभट संग्राम तज आगैं भागे जाय हैं नपुंसक समान होय गए। यह युद्धमें क्रीड़ाका करणहारा कोई देव है, तथो विद्याधर है, अथवा काल है, अक वायु है? यह महाप्रचंड सब सेनाकूं जीतकर सिंहोदरकूं हाथीसे उतार गलेमें वस्त्र डार बांध लिए जाय हैं जैसें बलदको बांध धनी अपने घर ले जाय, यह वचन वज्रकर्णके योधा वज्रकर्णसूं कहते भए तब वह कहता भया—हे सुभट हो! बहुत चिंताकर कहा? धर्मके प्रसादतैं सब शांति होयगी। अर दशांगनगरकी स्त्री महलनिके ऊपर बैठी परस्पर वार्ता करैं हैं, हे सखी! या सुभटकी अद्भुत चेष्टा, जो एक पुरुष अकेला नरेंद्रकूं बांध लिए जाय है। अहो धन्य याका रूप! धन्य याकी कांति, धन्य याकी शक्ति, यह कोई अतिशयका धारी पुरुषोत्तम है। धन्य हैं वे स्त्री, जिनका यह जगदीश्वर पति हुआ है तथा होयगा। अर सिंहोदरकी पटरानी बाल तथा वृद्धनि सहित रोवती संती लक्ष्मणके पांयनि पड़ी, अर कहती भई—हे देव! याहि छोड़ देहु, हमैं भरतारकी भीख देहु। अब जो तिहारी आज्ञा होयगी सो करेगा। तब आप कहते भए यह आगैं बड़ा वृक्ष है तासूं बांध याहि लटकाऊंगा। तब वाकी रानी हाथ जोड़ बहुत वीनती करती भई—हे प्रभो! आप रोस भए हो तो हमें मारो, याहि छांड़ो, कृपा करो, प्रीतमका दुख हमें मत दिखावो, जे तुम सारिखे पुरुषोत्तम हैं ते स्त्री अर बालक वृद्धनिपर करुणा ही करैं हैं। तब आप दयाकर कहते भए—तुम चिंता करहु, आगे भगवानका चैत्यालय है तहां याहि छोड़ेंगे। ऐसा कह आप चैत्यालयमें गए जायकर श्रीरामतैं कहते भए—हे देव! यह सिंहोदर आया है, आप कहो सो करैं। तब सिंहोदर हाथ जोड़ कांपता संता श्रीरामके पांयनि परया अर कहता भया—हे देव! तुम महाकांतिके धारी परम तेजस्वी हो, सुमेरु सारिखे अचल पुरुषोत्तम हो, मैं आपका आज्ञाकारी, यह राज्य तिहारा, तुम चाहो ताहि देहु। मैं तिहारे चरणारविंद की निरंतर सेवा करूंगा। अर रानी नमस्कार कर पतिकी भीख मांगती भई, अर सीता सतीके पांयन परी अर कहती भई—हे देवी! हे शोभने! तुम स्त्रीनिकी शिरोमणि हो, हमारी करुणा करो। तब श्रीराम सिंहोदरकूं कहते भए मानो मेघ गाज्या। अहो सिंहोदर! तोहि जो वज्रकर्ण कहे सो कर या बातकरि तेरा जीतव्य है और बातकर नाहीं, या भांति सिंहोदरकूं रामकी आज्ञा भई। ताही समय जे वज्रकर्णके हितकारी हुते तिनकूं भेज वज्रकर्णकूं बुलाया सो परिवार सहित चैत्यालय आया, तीन प्रदक्षिणा देय भगवानकूं नमस्कार करि चन्द्रप्रभ स्वामीकी अत्यन्त

स्तुतिकर रोमांच होय आए। बहुरि वह विनयवान दोनों भाईनके पास आय स्तुतिकर शरीरकी आरोग्यता पूछता भया अर सीताकी कुशल पूछी। तब श्रीराम अत्यन्त मधुर ध्वनिकर वज्रकर्णकूं कहते भए—हे भव्य! तेरी कुशलकरि हमारे कुशल है। या भांति वज्रकर्णकी अर श्रीरामकी वार्ता होय है तबही सुंदर भेष धरे विद्युदंग आय श्रीराम लक्ष्मणकी स्तुति कर वज्रकर्णके समीप आया। सर्व सभाविषैं विद्युदंगकी प्रशंसा भई जो यह वज्रकर्णका परम मित्र है। बहुरि श्रीरामचन्द्र प्रसन्न होय वज्रकर्णसूं कहते भए तेरी श्रद्धा महा प्रशंसा योग्य है। कुबुद्धीनिके उत्पातकरि तेरी बुद्धि रंचमात्र भी न डिगी जैसैं पवनके समूहकरि सुमेरुकी चूलिका न डिगै। मोहिकूं देख तेरा मस्तक न नया सो धन्य है तेरी सम्यक्तकी दृढ़ता,जे शुद्ध तत्त्वके अनुभवी पुरुष हैं तिनकी यही रीति है जो जगतकर पूज्य जे जिनेंद्र तिनकूं प्रणाम करैं। बहुरि मस्तक कौनकौं नवावैं? मकरंद रसका आस्वाद करणहारा जो भ्रमर सो गंधर्व (गधा) की पूंछपै कैसे गुंजार करै? तू बुद्धिमान है, धन्य है, निकट भव्य है,चन्द्रमा हूते उज्ज्वल बल कीर्त्ति तेरी पृथ्वीमें विस्तरी है या भांति वज्रकर्णके सांचे गुण श्रीरामचन्द्रने वर्णन कीये तब वह लज्जावान् होय नीचा मुख कर रह्या, श्रीरघुनाथसूं कहता भया—हे नाथ! मोपर यह आपदा तो बहुत पड़ी हुती परन्तु तुम सरीखे सज्जन जगतके हितु मेरे सहाई भए। मेरे भाग्य करि तुम पुरुषोत्तम पधारे। या भांति वज्रकर्ण ने कही तब लक्ष्मण बोले तेरी वांछा जो होय सो करैं, वज्रकर्ण ने कही तुम सारिखे उपकारी पुरुष पायकर मोहि या जगतविषैं कछु दुर्लभ नाहीं। मेरी यही विनती है मैं जिनधर्मी हूं,मेरे तृणमात्रको भी पर-पीडाकी अभिलाषा नाहीं। अर यह सिंहोदर तो मेरा स्वामी हैं तातैं याहि छोड़ो, ये वचन जब वज्रकर्ण कहे तब सबके मुखतैं धन्य धन्य यह ध्वनि होती भई जो देखो यह ऐसा उत्तम पुरुष है द्वेष प्राप्त भए भी पराया भला ही चाहै। जे सज्जन पुरुष हैं ते दुर्जनहूका उपकार करैं, अर जे आपका उपकार करैं ताका तौ करैं ही करैं। लक्ष्मणने वज्रकर्णकूं कही जो तुम कहोगे सो ही होयगा। सिंहोदरको छोड़ा अर वज्रकर्णका अर सिंहोदरका परस्पर हाथ पकड़ाय परम मित्र किए। वज्रकर्णकूं सिंहोदरका आधा राज्य दिवाया, अर जो माल लूटा हुता सो हू दिवाया। अर देश धन सेना आधा आधा विभाग कर दिया। वज्रकर्णके प्रसादकरि विद्युदंग सेनापति भया। अर वज्रकर्ण राम लक्ष्मणकी बहुत स्तुति करि अपनी आठ पुत्रीनिकी लक्ष्मणसों सगाई करी। कैसी है ते कन्या? महाविनयवंती सुन्दर भेष सुन्दर आभूषणकौं धरैं। अर राजा सिंहोदरकूं आदि देय राजानिकी परम कन्या तीनसौ लक्ष्मणकूं दई। सिंहोदर अर वज्रकर्ण लक्ष्मणसूं कहते भए—ये कन्या आप अंगीकार करहु, तब लक्ष्मण बोले—विवाह तो तब करूंगा जब अपने भुजा कर राज्य स्थान जमाऊंगा। अर श्रीराम तिनसूं कहते भए—हमारे अब तक देश नाहीं है तातैं राज भरतकूं दिया है,तातैं चन्दनगिरिके समीप तथा दक्षिण समुद्र-

के समीप स्थानक करेंगे तब हमारी दोऊ मातानिकूं लेनेकूं मैं आऊंगा, अथवा लक्ष्मण आवेगा। ता समय तिहारी पुत्रीनिकूं परणकर लेआवेगा, अब तक हमारे स्थानक नाहीं, कैसैं पाणिग्रहण करैं? जब या भांति कहीं, तब वे सब राजकन्या ऐसी होय गई जैसा जाड़ेका मारया कमलनिका वन होय। तब मनमें विचारती भई—वह दिन कब होयगा जब हमकूं प्रीतमके संगमरूप रसायनकी प्राप्ति होयगी। अर जो कदाचित प्राणनाथका विरह भया तो हम प्राण त्याग करेंगी इन सबका मन विरहरूप अग्निकर जलता भया। यह विचारती भई एक ओर महा औंडा गर्त अर एक ओर महाभयंकर सिंह, कहा करैं? कहां जावैं? विरहरूप व्याघ्रकूं पतिके संगमकी आशातैं वशीभूत कर प्राणनिकूं राखेंगी, यह चितवन करती संती अपने पिताकी लार अपने स्थानक गई। सिंहोदर वज्रकर्ण आदि सब ही नरपति, रघुपतिकी आज्ञा लेय घर गए, ते राजकन्या उत्तम चेष्टाकी धरणहारी माता पितादि कुटुम्बकरि अत्यंत है सन्मान जिनका। अर पतिमें है चित्त जिनका, सो नाना विनोद करती पिताके घरमें तिष्टती भईं। अर विद्युदंगने अपने माता पिताकूं कुटुम्बसहित बहुत विभूतिसे बुलाया तिनके मिलापका परम उत्सव किया। अर वज्रकर्ण अर सिंहोदरके परस्पर अति प्रीति बढी। अर श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण अर्ध रात्रिकूं चैत्यालयतैं चाले धीरे २ अपनी इच्छा प्रमाण गमन करैं हैं अर प्रभात समय जे लोक चैत्यालयमें आए ते श्रीरामकूं न देख शून्य हृदय होय अति पश्चात्ताप करते भए।

अथानंतर राम लक्ष्मण जानकीकूं धीरे धीरे चलावते अर रमणीक वनमे विश्राम लेते अर महामिष्ट स्वादु फलका रसपान करते, क्रीडा करते, रसभरी वातैं करते, सुंदर चेष्टाके धरणहारे चले। चलते-चलते नलकूवर नामा नगर आए। कैसा है नगर? नाना प्रकारके रत्ननिके जे मंदिर तिनके उतंग शिखरनिकर मनोहर, अर सुंदर उपवनोंकरि मंडित जिनमंदिरनिकरि शोभित, स्वर्गसमान निरंतर उत्सवका भरया लक्ष्मीका निवास है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै राम लक्ष्मण कृत वज्रकर्णका उपकार वर्णन करनेवाला तेतीसवा पर्व पूर्ण भया ॥३३॥

चौंतीसवां पर्व

[बालिखिल्यका कथानक]

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मण और सीता नलकूवर नामा नगरके परम सुंदर वनमें आय तिष्ठे, कैसा है वह वन? फल-पुष्पनिकर शोभित जहां भ्रमर गुंजार करैं हैं, अर कोयल बोलैं हैं। सो निकट सरोवरी तहां लक्ष्मण जलके निमित्त गए, सो ताही सरोवरीपर क्रीड़ाके

निमित्त कल्याणमाला नाम राजपुत्री राजकुमारका भेष किए आई हुती। कैसा है राजकुमार ? महा रूपवान नेत्रनिकूं हरणहारा सर्वकूं प्रिय महा विनयवान कांतिरूप निर्झरनिका पर्वत श्रेष्ठ हाथीपर चढ्या सुंदर प्यादे लार जो नगरका राज्य करै सो सरोवरीके तीर लक्ष्मणकूं देख मोहित भया। कैसा है लक्ष्मण ? नीलकमल समान श्याम सुंदर लक्षणनिका धारक राजकुमार एक मनुष्यकूं आज्ञा करी जो इनकूं ले आव, सो मनुष्य जायकर हाथ जोड़ नमस्कार कर कहता भया हे धीर ! यह राजपुत्र आपसूं मिल्या चाहै है सो पधारिए। तब लक्ष्मण राजकुमारके समीप गए। सो हाथीतैं उतरकर कमल-तुल्य जे अपने कर तिनकर लक्ष्मणका हाथ पकड वस्त्रनिके डेरामें लेगया, एक आसनपर दोऊ बैठे। राजकुमार पूछता भया आप कौन हो, कहां तैं आए हो ? तब लक्ष्मण कही मेरे बड़े भाई मो विना एक क्षण न रहैं सो उनके निमित्त अन्न पान सामग्री कर उनकी आज्ञा लेय तुमपर आऊंगा तब सब बात कहूंगा। यह बात सुन राजकुमार कही जो रसोई यहां ही तैयार भई है सो यहां ही तुम अर वे भोजन करोगे। तदि लक्ष्मणसे आज्ञा पाय सुंदर भात दाल नाना विध व्यंजन, नवीन घृत कपूरादि सुगंध द्रव्यनिसहित दधि, दुग्ध अर नाना प्रकार पीनेकी वस्तु मिश्रीके स्वाद जामें ऐसे लाड़ू अर पूरी सांकली इत्यादि नाना प्रकार भोजनकी सामग्री, अर वस्त्र आभूषण माला इत्यादि अनेक सुगंध नाना प्रकार तैयार किए। अर अपने निकटवर्ती जो द्वारपाल ताहि भेज्या सो जायकर सीतासहित रामकूं प्रणाम कर कहता भया—हे देव ! या वस्त्र-भवनविषैं तिहारा भाई तिष्ठै है, अर या नगरके नाथने बहुत आदरतैं विनती करी है। वहां छाया शीतल है अर स्थान मनोहर सो आप कृपाकर पधारौ तो मार्गका खेद निवृत्त होय। तब आप सीतासहित पधारे जैसैं चांदनीसहित चांद उद्योत करै। कैसे हैं आप माते हाथी समान है चाल जिनकी, लक्ष्मण सहित नगरका राजा दूर हीतैं देख उठकर सामने आया। सीतासहित राम सिंहासनपर विराजे, राजाने आरती उतार कर अर्घ दिए अति सन्मान किया, आप प्रसन्न होय स्नानकर भोजन किया सुगंध लगाई। बहुरि राजा सबनिकूं सीख देय विदा किए, ए चार ही रहे एक राजा अर तीन ए। राजा सबनिकूं कह्या जो मेरे पिताके पासतैं इनके हाथ समाचार आए हैं सो एकांत की वार्ता है कोई आवने न पावै, जो आवेगा ताहि मैं मारूंगा। बड़े २ सामंत द्वारे राखे एकांतविषैं इनके आगै लज्जा तज कन्या जो राजाका भेष धारे हुती सो तज अपना स्त्रीपदका रूप प्रगट दिखाया। कैसी है कन्या लज्जाकर नम्रीभूत है मुख जाका, अर रूपकर मानो स्वर्गकी देवांगना है, अथवा नागकुमारी है, ताकी कांतिकरि समस्त मंदिर प्रकाशरूप होय गया मानो चंद्रमाका उदय भया, चंद्रमा किरणोंकरि मंडित है याका मुख लज्जा अर पुलकनकर मंडित है मानों यह राजकन्या साक्षात् लक्ष्मी ही, कमलनिके वनतैं आय तिष्ठी है अपनी लावण्यता रूप सागरविषैं मानों मंदिरकूं गर्क किया है। जाकी द्युति

आगैं रत्न अर कंचन द्युतिरहित भासैं हैं। जाके स्तन युगलसे कांतिरूप जलकी तरंगनि समान त्रिवली शोभै है अर जैसैं मेघपटलकूं भेद निशाकर निकसै तैसैं वस्त्रकूं भेद अंगकी ज्योति फैल रही है। अर अत्यंत चिकने सुगंध कारे बांके पतले लंबे केश तिनकरि विराजित है प्रभा-रूप वदन जाका मानो कारी घटामें विजुरीके समान चमकै हैं अर महासूक्ष्म स्निग्ध जो रोमनिकी पंक्ति, ताकर विराजित मानों नीलमणिकरि मंडित सुवर्णकी मूर्ति ही है। तत्काल नररूप तज नारीका रूपकर मनोहर नेत्रनिकी धरनहारी सीताके पायनि लाग समीप जाय बैठी, जैसें लक्ष्मी रतिके निकट जाय बैठे। सो याका रूप देख लक्ष्मण कामकर बींधा गया, और ही अवस्था होय गई, नेत्र चलायमान भए। तब श्रीरामचंद्र कन्यातैं पूछते भए, तू कौनकी पुत्री है अर पुरुषका भेष कौन कारण किया तब वह महामिष्टवादिनी अपना अंग वस्त्रतैं ढांक कहती भई–हे देव! मेरा वृत्तांत सुनहु, या नगरका राजा बालिखिल्य महा सुबुद्धि सदाचारवान श्रावकके व्रत धार महादयालु जिनधर्मियोंपर वात्सल्य अंगका धारणहारा, राजा के पृथ्वी रानी ताहि गर्भ रह्या सो मैं गर्भविषैं आई। अर म्लेच्छनिका जो अधिपति तासूं संग्राम भया। मेरा पिता पकड्या गया। सो मेरा पिता सिंहोदरका सेवक सो सिंहोदरने यह आज्ञा करी जो बालिखिल्यके पुत्र होय सो राज्य का कर्त्ता होय, सो मैं पापिनी पुत्री भई। तब हमारे मंत्री सुबुद्धि तानै मनसूवाकर राज्यके अर्थ मोहि पुत्र ठहराया। सिंहोदरकूं वीनती लिखी कल्याणमाल मेरा नाम धरया अर बड़ा उत्सव किया सो मेरी माता अर मंत्री ये तो जानैं है जो यह कन्या है और सब कुमार ही जानैं हैं सो एते दिन मैं व्यतीत किए अब पुण्यके प्रभावतैं आपका दर्शन भया। मेरा पिता बहुत दुःखसूं तिष्ठै है म्लेच्छनिका बंदी है। सिंहोदर हू ताहि छुडायवे समर्थ नाहीं अर जो द्रव्य देशविषैं उपजै है सो सब म्लेच्छके जाय है। मेरी माता वियोगरूप अग्निकर तप्तायमान जैसैं दूजके चंद्रमाकी मूर्ति क्षीण होय तैसी होय गई है। ऐसा कहकर दुखके भारकर पीड़ित है समस्त अंग जाका सो मुरझाय गई अर रुदन करती भई। तदि श्रीरामचंद्रने अत्यंत मधुर वचन कहकर धैर्य बंधाया, सीता गोदमें लेय बैठी। मुख धोया और लक्ष्मण कहते भए–हे सुंदरी! सोच तज, अर पुरुषका भेषकरि राज्य करि, कैयक दिननिमैं म्लेच्छनिकूं पकड़ा अर अपने पिताकूं छूट्या ही जान, ऐसा कहकर परम हर्ष उपजाया। सो इनके वचन सुनकर कन्या पिताकूं छूट्या ही जानती भई। श्रीराम लक्ष्मण देवनकी नाईं तीन दिन यहां बहुत आदरतैं रहे। बहुरि रात्रिमें सीतासहित उपवनतैं निकसकर गोप चले गए। प्रभात समय कन्या जागी, तिनकूं न देख व्याकुल भई, अर कहती भई, वे महापुरुष मेरा मन हर ले गए, मो पापिनीकूं नींद आगई सो गोप चले गए। या भांति विलापकर मनको थांभ हाथी पर चढ़ पुरुषके भेष नगरविषैं गई अर राम लक्ष्मण कल्याणमालाके विनयकर हरया गया है चित्त जिनका, अनुक्रमतैं मेकला नामा

नदी पहुचे। नदी उतर क्रीड़ा करते अनेक देशनिकूं उलंघि विन्ध्याटवीकूं गए, पंथमें जाते संते गुवालनिने मनैं किए कि यह अटवी भयानक है तिहारे जाने योग्य नाहीं, तब आप तिनकी बात न मानी, चले ही गए। कैसी है वनी? कहीं एक लताकर मंडित जे शालवृक्षादिक तिनकरि शोभित है, अर नाना प्रकारके सुगंध वृक्षनिकर भरी महासुगंधरूप है, अर कहीं एक दावानलकर जले वृक्ष तिनकर शोभारहित है जैसैं कुपुत्र-कलंकित गोत्र न शोभै।

अथानंतर सीता कहती भई कंटकवृक्षके ऊपर बांई ओर काग बैठ्या है सो यह तो कलहकी सूचना करै है, अर दूसरा एक काग क्षीरवृक्षपर बैठा है सो जीत दिखावै है तातैं एक मुहूर्त थिरता करहु या मुहूर्तविषैं चालैं आगे कलहके अंत जीत है मेरे चित्तमें ऐसा भासै है। तब क्षणएक दोऊ भाई थंभे, बहुरि चाले, आगे म्लेच्छनिकी सेना दृष्टि पड़ी ते दोऊ भाई निर्भय धनुष-बाण धारे म्लेच्छनिकी सेनापर पड़े सो सेना नाना दिशानिकूं भाग गई। तदि अपनी सेनाका भंग देखि और म्लेच्छनिकी सेना शस्त्र धरैं बहुत म्लेच्छ वस्तर पहिरैं आए सो ते भी लीलामात्रमें जीते। तब वे सब म्लेच्छ धनुष-बाण डार पुकार करते पतिपैं जाय सब वृत्तांत कहते भए। तब वे सब म्लेच्छ परम क्रोधकर धनुष-बाण लीए महा निर्दई बड़ी सेनासूं आए। शस्त्रनिके समूहकरि संयुक्त वे काकोनदजातिके म्लेच्छ पृथिवीविषैं प्रसिद्ध सर्व मांसके भक्षी राजानिहूकरि दुर्जय ते कारी घटासमान उमड़ि आए। तदि लक्ष्मणने क्रोधकर धनुष चढ़ाया तब वन कंपायमान भया, वनके जीव कांपने लग गए। तब लक्ष्मणने धनुषके शर बांधा तब सब म्लेच्छ डरे वनमें दशों दिश आंधेकी न्याई भटकते भए। तब महा भयकर पूर्ण म्लेच्छनिका अधिपति रथसे उतर हाथ जोड़ प्रणामकर पांयनि परया अर अपना सब वृत्तांत दोऊ भाइनिसूं कहता भया। हे प्रभो! कौशांबी नाम नगरी है तहां एक विश्वानल नामा ब्राह्मण अग्निहोत्री ताके प्रतिसंध्या नामा स्त्री तिनके मैं रौद्रभूतनामा पुत्र सो द्यूत कलामें प्रवीण बाल अवस्था हीतैं क्रूरकर्मका करणहारा सो एक दिन चोरीतैं पकड्या गया अर सूली देवेकूं उद्यमी भए तदि एक दयावंत पुरुषने छुड़ाया सो मैं कांपता देश तज यहां आया। कर्मानुयोगकर काकोनद जातिके म्लेच्छनिका अधिपति भया, महाभ्रष्ट पशुसमान व्रत क्रिया रहित तिष्ठूं हूं। अब तक महासेनाके अधिपति बड़े-बड़े राजा मेरे सन्मुख युद्ध करवेकूं समर्थ न भए, मेरी दृष्टिगोचर न आए, सो मैं आपके दर्शनमात्रहीतैं वशीभूत भया। धन्य भाग्य मेरे जो मैंने तुम पुरुषोत्तम देखे, अब मोहि जो आज्ञा देहु सो करूं। आपका किंकर आपके चरणारविंदकी चाकरी सिरपर धरूं हूं, अर यह विंध्याचल पर्वत अर या स्थानक निधिकर पूर्ण है बहुत धनकर पूर्ण युक्त है आप यहां राज्य करहु मैं तिहारा दास ऐसा कहकर म्लेच्छ मूर्च्छा खायकर पायनि परया जैसैं वृक्ष निर्मूल होय गिर पड़ै। ताहि विह्वल देख श्री रामचन्द्र दयारूप वेढ़े कल्पवृक्ष समान

कहते भए, उठ-उठ डरे मत, बालिखिल्यकूं छोड़ तत्काल यहां मंगाय अर ताका आज्ञाकारी मंत्री होय कर रह, म्लेच्छनिकी क्रिया तजो पापकर्मतैं निवृत्त हो, देशकी रक्षा कर। या भांति किए तेरी कुशल है। तब याने कही--हे प्रभो! ऐसा ही करूंगा। यह वीनती कर आप गया अर महारथका पुत्र जो बालिखिल्य ताहि छोड्या, बहुत विनयसंयुक्त ताके तैलादि मर्दन कर स्नान भोजन कराय आभूषण पहिराय रथविषैं चढ़ाय श्रीरामचन्द्रके समीप ले जानेकूं उद्यमी किया, तदि बालिखिल्य परम आश्चर्यकूं प्राप्त होय विचारता भया, कहां यह म्लेच्छ महाशत्रु कुकर्मी अत्यंत निर्दयी, अर मेरा एता विनय करै है सो जानिये है जो आज मोहि काहूकी भेंट देगा, अब मेरा जीवन नाहीं, यह विचार सो बालिखिल्य सचिंत चल्या आगै राम लक्ष्मणको देख परम हर्षित भया। रथतैं उतर आय नमस्कार किया अर कहता भया, हे नाथ! मेरे पुण्यके योगतैं आप पधारे, मोहि बंधनतैं छुड़ाया, आप महासुन्दर इन्द्र तुल्य मनुष्य हो, पुरुषोत्तम पुरुष हो। तब रामने आज्ञा करी तू अपने स्थानक जाहु, कुटुंबतैं मिलहु। तब बालिखिल्य रामकूं प्रणामकरि रौद्रभूत सहित अपने नगर गया। श्रीराम बालिखिल्यकूं छुडाय रौद्रभूतकूं दासकरि वहांते चाले। बालिखिल्यकूं आया सुनकर कल्याणमाला महा विभूति सहित सन्मुख आई अर नगरमें महा उत्साह भया, राजा राजकुमारको उरसे लगाय अपनी असवारीमें चढ़ाय नगरविषैं प्रवेश किया, रानी पृथिवीके हर्षसे रोमांच होय आए, जैसा आगे शरीर सुन्दर हुता तैसा पतिके आए भया। सिंहोदरकूं आदि देय बालखिल्यके हितकारी सब ही प्रसन्न भए। अर कल्याणमाला पुत्रीने एते दिवस पुरुषका भेष कर राज थाम्या हुता सो या बातका सबकूं आश्चर्य भया, यह कथा राजा श्रेणिककूं गौतमस्वामी कहे हैं, हे नराधिप! वह रौद्रभूत परद्रव्यका हरणहारा अनेक देशनिका कंटक सो श्रीरामके प्रतापतैं बालखिल्यका आज्ञाकारी सेवक भया। जब रौद्रभूत वशीभूत भया अर म्लेच्छनिकी विषम भूमिमें बालखिल्यकी आज्ञा प्रवर्ती तब सिंहोदर भी शंका मानता भया। अर अति स्नेह सहित सन्मान करता भया, बालिखिल्य रघुपतिके प्रसादतैं परम विभूति पाय जैसा शरद ऋतुमें सूर्य प्रकाश करै तैसा पृथिवीविषैं प्रकाश करता भया। अपनी रानी सहित देवनिकी न्याई रमता भया॥

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै बालिखिल्य का वर्णन करनेवाला चौंतीसवां पर्व पूर्ण भया॥ ३४॥

पैंतीसवां पर्व

[कपिल ब्राह्मण का कथानक]

अथानन्तर राम लक्ष्मण देवनि सारिखे मनोहर नंदनवन सारिखा वन ताविषैं सुखसे विहार करते एक मनोज्ञ देशविषैं आय निकसे जाके मध्य तापती नदी बहै, नाना प्रकारके

पक्षिनिके शब्द करि सुन्दर तहां एक निर्जन वनमें सीता तृषाकर अत्यंत खेदखिन्न भई। तब पतिकूं कहती भई—हे नाथ ! तृषासे मेरा कंठ शोषै है जैसे अनन्त भवके भ्रमणकर खेदखिन्न हुआ भव्य जीव सम्यग्दर्शनकूं वांछै तैसैं मैं तृषासे व्याकुल शीतल जलकूं वांछूं हूँ, ऐसा कहिकर एक वृक्षके नीचे बैठ गई। तब रामने कही हे देवि ! हे शुभे ! तू विषादकूं मत प्राप्त होहु, नजीक ही यह आगे ग्राम है जहां सुन्दर मंदिर है, उठ, आगे चल; या ग्राममें तोहि शीतल जलकी प्राप्ति होयगी, ऐसा जब कह्या तब उठकर सीता चली मंद-मंद गमन करती गजगामिनी ता सहित दोऊ भाई अरुणनामा ग्राममें आए तहां महा धनवान किसान रहैं। तहां ही एक ब्राह्मण अग्निहोत्री कपिलनामा प्रसिद्ध ताके घरमें आय उतरे, ता अग्निहोत्रीकी शालामें क्षण एक बैठ खेद निवारया। कपिलकी ब्राह्मणी जल लाई सो सीता पिया,तहां विराजे। अर वनतैं ब्राह्मण बिल्व तथा छीला वा खेजड़ा इत्यादि काष्ठका भार बांधे आया, दावानल समान प्रज्वलित जाका मन महाक्रोधी कालकूट विषसमान वचन बोलता भया। उल्लू समान है मुख जाका अर करमें कमण्डल, चोटीमें गांठ दिए, लांबी डाढ़ी, यज्ञोपवीत पहिरे उंछवृत्ति कहिए अन्नको काटकर ले गए पीछे खेतनतैं अन्न कण वीन लावैं या भांति है आजीविका जाकी सो इनकूं बैठा देख वक्र मुखकर ब्राह्मणीकूं दुर्वचन कहता भया हे—पापिनी ! इनकूं घरमें काहेको प्रवेश दिया,मैं आज तोहि गायनिके वासमें बांधूगा। देख ! इन निर्लज्ज ढीठ पुरुष ऩ्रकर धूमरोंने मेरा अग्निहोत्रका स्थान मलिन किया। यह वचन सुन सीता रामतैं कहती भई, हे प्रभो ! या क्रोधीके घरमें न रहना,वनमें चलिए जहां नाना प्रकारके पुष्प फल तिनकर मंडित वृक्ष शोभै हैं, निर्मल जलके भरे सरोवर हैं तिनमें कमल फूल रहे हैं, अर मृग अपनी इच्छासे क्रीड़ा करते हैं। तहां ऐसे दुष्ट पुरुषनिके कठोर वचन न सुनिए है। यद्यपि यह देश धनसे पूर्ण है अर स्वर्ग सारिखा सुन्दर है, परंतु लोग महाकठोर हैं, अर ग्रामीजन विशेष कठोर ही होय हैं सो विप्रके रूखे वचन सुन ग्रामके सकल लोक आए, इन दोऊ भाइनिका देवनिसमान रूप देख मोहित भए। ब्राह्मणकूं एकांतमें ले जाय लोक समझावते भये--ये एक रात्रि यहां रहै हैं तेरा कहा उजाड़ है। ये गुणवान विनयवान रूपवान पुरुषोत्तम हैं। तब द्विज सबसे लडया अर सबसे कह्या, तुम मेरे घर काहे आए, परे जाहु। अर मूर्ख इनपर क्रोधकर आया जैसे श्वान गजपर आवै, इनकूं कहता भया रे अपवित्र हो, मेरे घरतैं निकस्यो, इत्यादि कुवचन सुन लक्ष्मण कुपित भए, ता दुर्जनके पांव ऊंचेकर नाडि नीचेकर भ्रमाया भूमिपर पछाडने लगा तब श्रीराम परम दयालु ताहि मनें किया, हे भाई ! यह कहा ? ऐसे दीनके मारवेकरि कहा ? याहि छोड़ देहु, याके मारनेतैं बडा अपयश है। जिनशासनमें शूरवीरकूं एते न मारने--यति ब्राह्मण गाय पशु स्त्री बालक वृद्ध। ये दोष संयुक्त होंय तो भी

हनने योग्य नाहीं, या भांति राम भाईकूं समझाया, विप्र छुडाया, अर आप लक्ष्मणकूं आगेकरि सीतासहित कुटीतैं निकसे, आप जानकीसे कहै हैं हे प्रिये! धिक्कार है नीचकी संगतिकूं जिसकर मनमें विकारका कारण महापुरुषनिकर त्याज्य क्रूर वचन सुनिए महाविषम वनमें वृक्षनिके नीचे वास भला, अर आहारादिक विना प्राण जावैं तो भले परंतु दुर्जनके घर क्षण एक रहना योग्य नाहीं। नदिनिके तटविषै पर्वतनिकी कंदरानिविषैं रहेंगे बहुरि ऐसे दुष्टके घर न आवेंगे। या भांति दुष्टके संगकूं निंदते ग्रामसे निकस राम वनकूं गए, वहां वर्षा समय आय प्राप्त भया। समस्त आकाशको श्याम करता संता अर अपनी गर्जना कर शब्दरूप करी है पर्वतकी गुफा जानैं, ग्रह नक्षत्र तारानिके समूहको ढांककर शब्दसहित विजुरीके उद्योतकर मानो अंबर हंसै है, मेघ पटल ग्रीष्मके तापकूं निवारकर पंथिनिकी बिजुरीरूप अंगुरिनिकरि डरावता संता गाजे है। श्याम मेघ आकाशमें अंधकार करता संता जलकी धाराकर मानों सीताकूं स्नान करावैं है जैसें गज लक्ष्मीकूं स्नान करावैं। ते दोऊ वीर वनमें एक बड़ा वटका वृक्ष ताके डाहला घरके समान तहां विराजे, सो एक इभकर्ण नामा यक्ष उस वटमें रहता हुता सो इनको महा तेजस्वी जानकर अपने स्वामीकूं नमस्कारकर कहता भया--हे नाथ! कोई स्वर्गतैं आए हैं, मेरे स्थानक-विषैं तिष्ठे हैं। जिनने अपने तेजकर मोहि स्थानतैं दूर किया है, वहां मैं जाय न सकूं हूं। तब यक्षके वचन सुनकर यक्षाधिपति अपने देवनिसहित वटका वृक्ष जहां राम लक्ष्मण हुते तहां आया, महाविभवसंयुक्त वनक्रीडाविषैं आसक्त नूतन है नाम जाका दूर हीतें दोऊ भाईनिकूं महा रूपवान देख अवधिकरि जानता भया जो ये बलभद्र नारायण हैं तब वह इनके प्रभावकर अत्यंत वात्सल्यरूप भया। क्षणमात्रमें महामनोज्ञ नगरी निरमापी तहां सुखसूं सोते हुए प्रभात सुंदर गीतोंके शब्दनिकर जागे। रत्नजडित सेजपर आपकूं देख्या अर मंदिर महामनोहर बहुत खणका अति उज्ज्वल अर सम्पूर्ण सामग्रीकर पूर्ण, अर सेवक सुन्दर बहुत आदरके करनहारे, नगर-में रमणीक शब्द, कोट दरवाजेनिकर शोभायमान ते पुरुषोत्तम महानुभाव तिनका चित्त ऐसे नगर-कूं तत्काल देख आश्चर्यकूं न प्राप्त भया। यह क्षुद्र पुरुषनिकी चेष्टा है जो अपूर्व वस्तु देख आश्चर्यको प्राप्त होंय। समस्त वस्तु कर मंडित वह नगर तहां वे सुन्दर चेष्टाके धारक निवास करते भए, मानों ये देव ही हैं। यक्षाधिपतिने रामके अर्थ नगरी रची, तातैं पृथिवीपर रामपुरी कहाई। ता नगरीविषैं सुभट मंत्री द्वारपाल नगरके लोग अयोध्या समान होते भए। राजा श्रेणिक गौतमस्वामीको पूछै हैं हे प्रभो! ये तो देवकृत नगरविषैं विराजे, अर ब्राह्मणकी कहा बात? सो कहो तब गणधर बोले-वह ब्राह्मण अन्य दिन दांतला हाथमें लेय वनमें गया, लकडी ढूंढते अकस्मात् ऊंचे नेत्र किये। निकट ही सुंदर नगर देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भया। नाना प्रकारके रंगकी ध्वजा उन कर शोभित शरदके मेघसमान सुंदर महल देखे। अर एक राजमहल महाउज्ज्वल मानों

कैलाशका बालक है सो ऐसा देखकर मनमें विचारता भया। जो यह अटवी मृगनितैं भरी जहां में लकड़ी लेने निरंतर आवता हुता सो यहां रत्नाचल समान सुंदर मंदिरनितैं संयुक्त नगरी कहांसू बसी? सरोवर जलके भरे कमलनिकरि शोभित दीखे हैं जो मैं अब तक कभी न देखे, उद्यान महामनोहर जहां चतुर जन क्रीडा करते दीखै हैं अर देवालय महाध्वजानिकर संयुक्त शोभै हैं, अर हाथी घोड़े गाय भैंस तिनके समूह दृष्टि आवै हैं। घंटादिकके शब्द होय रहे हैं। यह नगरी स्वर्गतैं आई है, अथवा पातालतैं निसरी हैं, कोऊ महाभाग्यके निमित यह स्वप्न है, अक देवमाया हैं, अक गन्धर्वनिका नगर हैं, अक मैं पित्तकर व्याकुल भया हू? याके निकटवर्ती जो मैं सो मेरे मृत्युका चिन्ह दीखे है, ऐसा विचारकर विप्र विषादकूं प्राप्त भया। सो एक स्त्री नाना प्रकारके आभरण पहरे देखी ताके निकट जाय पूछता भया--- हे भद्रे! यह कौनकी पुरी है? तब वह कहती भई यह रामकी पुरी है,तूने कहा न सुनी? जहां राम राजा जाके लक्ष्मण भाई, सीता स्त्री। अर नगरके मध्य यह बड़ा मंदिर है शरदके मेघ समान उज्ज्वल, जहां वह पुरुषोत्तम विराजे हैं। कैसा है पुरुषोत्तम? लोकविषैं दुर्लभ है दर्शन जाका। सो ताने मनवांछित द्रव्यके दानकरि सब दरिद्री लोक राजानि समान किये। तब ब्राह्मण बोला--हे सुंदरी! कौन उपाय कर वाहि देखूं सो तू कह, ऐसे काष्ठका भार डार कर हाथ जोड़ ताके पांयनि परथा। तब वह सुमाया नामा यक्षिणी कृपाकर कहती भई--हे विप्र! या नगरी के तीन द्वार हैं। जहां देव हू प्रवेश न कर सकैं, बड़े बड़े योधा रक्षक बैठे हैं। रात्रिमैं जागैं हैं जिनके मुख सिंह गज व्याघ्र तुल्य हैं तिनकरि भयकूं मनुष्य प्राप्त होय हैं, यह पूर्व द्वार है जाके निकट, बड़े बड़े भगवानके मंदिर हैं। मणिके तोरणकरि मनोज्ञ तिनमें इंद्र कर वंदनीक अरहंतके बिंब विराजे हैं अर जहां भव्य जीव सामायिक स्तवन आदि करैं हैं। अर जो नमोकारमंत्र भाव सहित पढ़ैं हैं सो माहिं प्रवेश कर सकै हैं। जो पुरुष अणुव्रतका धारी गुणशीलकरि शोभित है ताको राम परम प्रीतिकर वांछै हैं। यह वचन यक्षिणीके अमृत समान सुनकर ब्राह्मण परम हर्षकूं प्राप्त भया। धन आगमका उपाय पाय, यक्षिणीकी बहुत स्तुति करी, रोमांच कर मंडित भया है सर्व अंग जाका सो चारित्रशूर नामा मुनिके निकट जाय हाथ जोड नमस्कार कर श्रावककी क्रियाका भेद पूछता भया। तदि मुनिने श्रावकका धर्म याहि सुनाया, चारों अनुयोगका रहस्य बताया। सो ब्राह्मण धर्मका रहस्य जान मुनिकी स्तुति करता भया--हे नाथ! तिहारे उपदेशकरि मेरे ज्ञानदृष्टि भई जैसैं तृषावानकूं शीतल जल,अर ग्रीष्मके तापकर तप्तायमान पंथीकूं छाया, अर क्षुधावानकूं मिष्टान्न, अर रोगीकूं औषधि मिलै, तैसैं कुमार्गमैं प्रतिपन्न जो मैं सो मोहि तिहारा उपदेश रसायन मिल्या। जैसैं समुद्रविषैं डूबतेकूं जहाज मिलै। मैं यह जैनका मार्ग सर्व दुःखनिका दूर करणहारा तिहारे प्रसादकरि पाया, जो

अविवेकीनिकूं दुर्लभ है, तीन लोकमें मेरे तुम समान कोऊ हितू नाहीं जिनकर ऐसा जिनधर्म पाया। ऐसा कहकर मुनिके चरणारविंदकूं नमस्कार कर ब्राह्मण अपने घर गया। अति हर्ष-कर फूल रहे है नेत्र जाके,स्त्रीसूं कहता भया, हे प्रिये! मैंने आज गुरुके निकट अद्भुत जिनधर्म सुन्या है जो तेरे बापने, अथवा मेरे बापने, अथवा पिताके पिताने भी न सुन्या। अर हे ब्राह्मणी! मैंने एक अद्भुत वन देख्या तामें एक महामनोज्ञ नगरी देखी, जाहि देख अचरज उपजै, परंतु मेरे गुरुके उपदेशकरि अचरज नाहीं उपजै है। तब ब्राह्मणी कही, हे विप्र! तैं कहा देख्या, अर कहा २ सुन्या, सो कहहु। तब ब्राह्मण कही,--हे प्रिये! मैं हर्ष थकी कहने समर्थ नाहीं, तब बहुत आदर कर ब्राह्मणी बारंबार पूछया। तब ब्राह्मण कही--हे प्रिये! मैं काष्ठके अर्थ वनविषैं गया हुता। सो वनविषैं एक महा रमणीक रामपुरी देखी,ता नगरीके समीप उद्यानविषैं एक नारी सुंदर देखी, सो वह कोई देवता होयगी महा मिष्टवादिनी। मैंने पूछया या नगरी कौनकी है। तब वाने कही यह रामपुरी है,जहां राजा राम श्रावकनिकूं मनवांछित धन देवै हैं। तब मैं मुनिपै जाय जैनवचन सुने सो मेरा आत्मा बहुत तृप्त भया, मिथ्यादृष्टि कर मेरा आत्मा आताप युक्त हुता सो आताप गया। जिनधर्मकूं पायकर मुनिराज मुक्तिके अभिलाषी सर्व परिग्रह तज महा तप करें, सो वह अरहंतका धर्म त्रैलोक्यविषैं एक महानिधि मैं पाया। ये बहिर्मुख जीव वृथा क्लेश करैं हैं। मुनि थकी जैसा जिनधर्मका स्वरूप सुन्या हुता तैसा ब्राह्मणीकूं कहा। कैसा है जिनधर्मका स्वरूप? उज्ज्वल है। अर कैसा है ब्राह्मण निर्मल है चित्त जाका। तब ब्राह्मणी सुन कर कहती भई मैं भी तिहारे प्रसादकरि जिनधर्मकी रुचि पाई अर जैसे कोई विष फलका अर्थी महा-निधि पावै, तैसैं ही तुम काष्ठादिकके अर्थी धर्म की इच्छातैं रहित श्रीअरहंतका धर्म रसायन पाया अब तक तुमने धर्म न जान्या। अपने आंगनविषैं आए सत्पुरुष तिनका निरादर किया,उपवासादि-करि खेद-खिन्न दिगंबर तिनकूं कबहुं आहार न दिया, इंद्रादिक कर वंदनीक जे अरहंत देव तिनकूं तजकर ज्योतिषी व्यंतरादिकनिकूं प्रणाम किया। जीवदयारूप जिनधर्म अमृत तज अज्ञानके योगतैं पापरूप विषका सेवन किया। मनुष्य देहरूप रत्नदीप पाय साधुनिकरि परखा धर्मरूप रत्न तज विषयरूप कांचका खंड अंगीकार किया। जे सर्वभक्षी दिवस रात्रि आहारी, अव्रती, कुशीली तिनकी सेवा करी। भोजनके समय अतिथि आवै अर जो निर्बुद्धि अपने विभवप्रमाण अन्नपानादि न दे ताके धर्म नाहीं। अतिथि पदका अर्थ तिथि कहिये उत्सवके दिन तिनविषैं उत्सव तजें,जाके तिथि कहिये विचार नाहीं अर सर्वथा निस्पृह धनरहित साधु सो अतिथि कहिये। जिनके भाजन नाहीं,कर ही पात्र है वे निर्ग्रंथ आप तिरैं, औरनिकूं तारैं अपने शरीरमें हू निःस्पृह काहू वस्तुविषैं जिनका लोभ नाहीं। ते निःपरिग्रही मुक्तिके कारण जे दशलक्षण धर्म तिनकर, शोभित हैं या भांति ब्राह्मणने ब्राह्मणीकूं धर्मका स्वरूप कह्या। तब वह सुशर्मा नामा ब्राह्मणी मिथ्यात्व

रहित होती भई जैसैं चन्द्रमाके रोहिणी शोभैं अर बुधके भरणी सोहै तैसैं कपिलके सुशर्मा शोभती भई। ब्राह्मण ब्राह्मणीकूं वाही गुरुकै निकट लेगया, जाके निकट आप व्रत लिये हुते सो स्त्रीको हू श्राविकाके व्रत दिवाये। कपिलकूं जिनधर्मविषैं अनुरागी जान और हू अनेक ब्राह्मण समभाव धारते भए। मुनिसुव्रतनाथका मत पायकर अनेक सुबुद्धि श्रावक श्राविका भए। अर जे कर्मनिके भारकर संयुक्त मानकर ऊंचा है मस्तक जिनका, वे प्रमादी जीव थोड़े ही आयुविषैं पापकर घोर नरकविषैं जाय हैं। कैयक उत्तम ब्राह्मण सर्व संगका परित्यागकर मुनि भए, वैराग्यकर पूर्ण मनविषैं ऐसा विचार किया—यह जिनेंद्रका मार्ग अब तक अन्य जन्ममें न पाया, महा निर्मल अब पाया, ध्यानरूप अग्निविषैं कर्मरूप सामग्री भाव घृतसहित होम करेंगे सो जिनके परम वैराग्य उदय भया ते मुनि ही भए। अर कपिल ब्राह्मण महा क्रियावान श्रावक भया। एक दिवस ब्राह्मणीकूं धर्मकी अभिलाषिनी जान कहता भया—हे प्रिये! श्रीरामके देखवेकूं रामपुरी क्यों न चालैं। कैसे हैं राम महापराक्रमी, निर्मल है चेष्टा जिनकी, अर कमल सरीखे हैं नेत्र जिनके, सर्व जीवनिके दयालु भव्य जीवनि पर है वात्सल्य जिनका, जे प्राणी आशामें तत्पर नित्य उपायविषैं हैं मन जिनका, दरिद्ररूप समुद्रमें मग्न, उदर पूर्ण करनेकूं असमर्थ, तिनकूं दरिद्ररूप समुद्रतैं पार उतार परम सम्पदाकूं प्राप्त करैं हैं, या भांति कीर्ति जिनकी पृथ्वीविषैं फैल रही है महाआनन्दकी करणहारी। तातैं हे प्रिये! उठ, भेंट ले कर चालें अर मैं सुकुमार बालककूं कांधे लूंगा। ऐसे ब्राह्मणीकूं कह तैसे ही कर दोऊ हर्षके भरे उज्ज्वल भेषकर शोभित रामपुरीकूं चाले। सो उनकूं मार्गविषैं भयानक नागकुमार दृष्टि आए, बहुरि व्यंतर विकराल वदन अट्टहास करते नजर आए। इत्यादि भयानक रूप देख ये दोऊ निकंप हृदय होयकर या भांति भगवानकी स्तुति करते भए--श्रीजिनेश्वर तांई निरंतर मन वचन कायकर नमस्कार होहु। कैसे हैं जिनेश्वर? त्रैलोक्यकर वंदनीक हैं। संसार कीचसे पार उतारे हैं, परम कल्याणके देनहारे हैं, यह स्तुति पढ़ते ये दोऊ चले जावैं हैं। इनकूं जिनभक्त जान यक्ष शांत होय गए, ये दोऊ जिनालयमें गए, नमस्कार होहु जिनमंदिरकूं ऐसा कह दोऊ हाथ जोड़ अर चैत्यालयकी प्रदक्षिणा दई अर मांही जाय स्तोत्र पढ़ते भए—हे नाथ! महाकुगतिका दाता मिथ्यामार्ग ताहि तजकर बहुत दिनमें तिहारा शरण गहा। चौबीस तीर्थंकर अतीत कालके अर चौबीस वर्तमान कालके अर चौबीस अनागत कालके तिनकूं मैं वंदूं हूं। अर पंच भरत पंच ऐरावत पंच विदेह ये पंद्रह कर्मभूमि तिनविषैं जे तीर्थंकर भए, अर वर्तें हैं, अर अब होवेंगे तिन सबनिकूं हमारा नमस्कार होहु। जो संसार समुद्रसूं तिरैं अर औरनिकूं तारैं ऐसे श्रीमुनि-व्रतनाथके तांई नमस्कार होहु तीन लोकमैं जिनका यश प्रकाश करै है, या भांति स्तुतिकर अष्टांग दण्डवतकरि ब्राह्मण स्त्रीसहित श्रीरामके अवलोकनकूं गए। मार्गमें बड़े २ मंदिर

महाउद्योतरूप ब्राह्मणीकूं दिखाये। अर कहता भया—ये कुंदनके पुष्प समान उज्ज्वल सर्व कामना पूर्ण नगरीके मध्य रामके मंदिर हैं, जिनकरि यह नगरी स्वर्गसमान शोभै है। या भांति वार्ता करता ब्राह्मण राजमंदिरविषैं गया। सो दूरहीतैं लक्ष्मणकूं देख व्याकुलताकूं प्राप्त भया, चित्तमें चितारे है—वह श्याम सुंदर नीलकमल समान प्रभा जाकी ऐसा यह, मैं अज्ञानी दुष्ट वचननि करि दुखाया, इन्हें त्रास दीनी। पापनी जिह्वा महा दुष्टनी काननकूं कटुक भाखे। अब कहा करूं? कहां जाऊं? पृथ्वीके छिद्रमें बैठूं अब मोहि शरण किनका? जो यह मैं जानता अक ये यहां ही नगरी बसाए रहे हैं तो मैं देश त्यागकर उत्तर दिशाकूं चला जाता। या भांति विकल्परूप होय ब्राह्मणीकूं तज ब्राह्मण भागा, सो लक्ष्मणने देख्या। तब हंसकर रामकूं कहा–वह ब्राह्मण आया है अर मृगकी नाईं व्याकुल होय मोहि देख भागै है। तब राम बोले याकूं विश्वास उपजाय शीघ्र लावो। तब जन दौड़े दिलासा देय लाए डिगता अर कांपता, निकट आय भय तज दोऊ भाईनिके आगे भेंट मेल 'स्वस्ति' ऐसा शब्द कहता भया अर अतिस्तवन पढ़ता भया। तब राम बोले—हे द्विज! तैं हमकूं अपमानकर अपने घरतैं काढ़े हुते अब काहे पूजै है। तब विप्र बोला—हे देव, तुम प्रच्छन्न महेश्वर हो, मैं अज्ञानतें न जाने तातैं अनादर किया है जैसैं भस्मतैं दबी अग्नि जानी न जाय। हे जगन्नाथ! या लोककी यही रीति है, धनवानकूं पूजिये है। सूर्य शीतऋतुमे ताप रहित होय है सो तामे कोई नाहीं शंकै है। अब मैं जाना तुम पुरुषोत्तम हो। हे पद्मलोचन! ये लोक द्रव्यकूं पूजै हैं, पुरुषको नाहीं पूजैं हैं। जो अर्थकर युक्त होय ताहि लौकिक जन मानै हैं। अर परम सज्जन हैं अर धनरहित हैं तो ताहि निःप्रयोजन जन जान न मानैं हैं। तब राम बोले, हे विप्र! जाके अर्थ, ताके मित्र, जाके अर्थ ताके भाई, जाके अर्थ, सोई पण्डित, अर्थ विना न मित्र, न सहोदर, जो अर्थकर संयुक्त है, ताके परजन हू निज होय जाय हैं अर धन वही जो धर्मकरयुक्त, अर धर्म वही जो दयाकरयुक्त, अर दया वही जहां मांस-भोजनका त्याग। जब सब जीवनिका मांस तजा तब अभक्ष्यका त्याग कहिए ताके और त्याग सहज ही होंय, मांसके त्याग विना और त्याग शोभै नाहीं। ये बचन रामके सुन विप्र प्रसन्न भया अर कहता भया—हे देव! जो तुम सारिखे पुरुषहूंकरि महापुरुष पूजिए हैं तिनका भी मूढ़ लोक अनादर करैं हैं। आगे सनत्कुमार चक्रवर्त्ती भए। बड़ी ऋद्धिके धारी, महारूपवान जिनका रूप देव देखने आए, सो मुनि होयकर आहारकूं ग्रामादिकविषैं गए। महा आचार प्रवीण सो निरंतराय भिक्षाकूं न प्राप्त होते भए। एक दिवस विजयपुर नाम नगरविषैं एक निर्धन मनुष्यने आहार दिया, याके पंच आश्चर्य भए। हे प्रभो! मैं मंदभाग्य तुम सारिखे पुरुषनिका आदर न किया सो अब मेरा मन पश्चात्तापरूप अग्नि कर तपै है, तुम महारूपवान तुम देख महाक्रोधीका क्रोध जाता रहै अर आश्चर्यकूं प्राप्त होय ऐसा

कहकर सोचकर कपिल गृहस्थ रुदन करता भया। तदि श्रीरामने शुभ वचनकरि संतोष्या अर सुशर्मा ब्राह्मणीकूं जानकी संतोषती भई। बहुरि राघवकी आज्ञा पाय स्वर्णके कलशनिकरि सेवकनिने द्विजकूं स्त्रीसहित स्नान कराया, अर आदरसों भोजन कराया। नाना प्रकारके वस्त्र अर रत्ननिके आभूषण दिए बहुत धन दिया सो लेयकर कपिल अपने घर आया। मनुष्यनिकूं विस्मयका करणहारा धन याके भया। यद्यपि याके घरविषैं सब उपकार सामग्री अपूर्व है तथापि या प्रवीणका परिणाम विरक्त घरविषैं आसक्त नाहीं, मनविषैं विचारता भया आगे मैं काष्ठके भारका वहनहारा दरिद्री हुता, सो श्रीरामदेवने तृप्त किया। याही ग्रामविषैं मैं शोषित शरीर अभूषित हुता सो रामने कुबेर समान किया। चिंता दुखरहित किया, मेरा घर जीर्ण तृणका जाके अनेक छिद्रकादि अशुचि पक्षिनिकी बीटकर लिप्त अब रामके प्रमादकरि अनेक स्वर्णके महल भए, बहुत गोधन, बहुत धन, काहू वस्तुकी कमी नाहीं। हाय २ मैं दुर्बुद्धि कहा किया? वे दोऊ भाई चन्द्रमा समान वदन जिनके कमल नेत्र मेरे घर आए हुते, ग्रीष्मके आतापकरि तप्तायमान सीता सहित, सो मैंने घरते निकासे। या बातकी मेरे हृदयविषैं महाशल्य है, जो लग घरविषैं बसूं हूं तौं लग खेद मिटै नाहीं, तातैं गृहारम्भका परित्यागकर जिनदीक्षा आदरूं। जब यह विचारी, तब याकूं वैराग्यरूप जान समस्त कुटुम्बके लोक अर सुशर्मा ब्राह्मणी रुदन करते भए। तब कपिल सबकूं शोकसागरविषैं मग्न देख निर्ममत्वबुद्धिकरि कहता भया। कैसा है कपिल? शिवसुखविषैं है अभिलाषा जाकी, हो प्राणी हो! परिवारके स्नेहकरि अर नाना प्रकारके मनोरथनिकरि यह मूढ़ जीव भवातापकर जरै है, तुम कहा नाहीं जानौ हो? ऐसा कह महा विरक्त होय दुखकर मूर्छित जो स्त्री ताहि तज अर सब कुटुम्बकूं तज, अठारह हजार गाय अर रत्ननिकर पूर्ण घर अर घरके बालक स्त्रीकूं सौंप आप सर्वारम्भ तज दिगम्बर भया। स्वामी आनंदमतिका शिष्य भया। कैसे हैं आनंदमति? जगतविषैं प्रसिद्ध तपोनिधि गुण शीलके सागर। यह कपिल मुनि गुरुकी आज्ञा-प्रमाण महातप करता भया। सुंदर चारित्रका भार धर परमार्थविषैं लीन है मन जाका, वैराग्यविभूतिकर अर साधुपदकी शोभाकर मंडित है शरीर जाका। सो जो विवेकी यह कपिलकी कथा पढ़ै सुनै ताहि अनेक उपवासनिका फल होय सूर्य समान ताकी प्रभा होय॥

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं देवनिकर नगरका बसावना वा कपिल ब्राह्मणका वैराग्य वर्णन करनेवाला पैंतीसवां पर्व पूर्ण भया॥३५॥

छत्तीसवां पर्व

[लक्ष्मणके वनमालाकी प्राप्ति]

अथानंतर वर्षाऋतु पूर्ण भई। कैसी है वर्षाऋतु? श्याम घटाकरि महा अंधकाररूप जहां जल असराल बरसैं अर बिजुरिनिके चमत्कारकर भयानक वर्षाऋतु व्यतीत भई,

शरदऋतु प्रगट भई, दशों दिशा उज्ज्वल भई, तब वह यक्षाधिपति श्रीरामसूं कहता भया, कैसे हैं श्रीराम ? चलवेका है मन जिनका। यक्ष कहै है हे देव ! हमारी सेवामें जो चूक होय सो क्षमा करो। तुम सारिखे पुरुषनिकी सेवा करवेकूं कौन समर्थ है। तब राम कहते भए--हे यक्षाधिपते ! तुम सब बातोंके योग्य हो, अर तुम पराधीन होय हमारी सेवा करी सो क्षमा करियो। तब इनके उत्तम भाव विलोक अति हर्षित भया, नमस्कारकर स्वयंप्रभ नामा हार श्रीरामकी भेंट किया। महा अद्भुत अर लक्ष्मणकूं मणिकुण्डल चांद सूर्य सारिखे भेंट किए। अर सीताकूं कल्याणनामा चूड़ामणि महा देदीप्यमान दिया अर महामनोहर मनवांछित नादकी करनहारी देवोपनीत वीणा दई ते अपनी इच्छातैं चाले। तब यक्षराज पुरी संकोच लई, अर इनके जायवेका बहुत शोक किया। अर श्रीरामचन्द्र यक्षकी सेवाकर अति प्रसन्न होय आगैं चले देवोंकी न्याई रमते नाना प्रकारकी कथाविषैं आसक्त नाना प्रकारके फलनिके रसके भोक्ता पृथिवीपर अपनी इच्छासूं चलते भ्रमते, मृगराज तथा गजराजनिकर भरया जो महाभयानक वन ताहि उलंघकर विजयपुर नामा नगर पहुचे। तासमय सूर्य अस्त भया अंधकार फैल्या आकाशविषैं नक्षत्रनिके समूह प्रगट भए, तदि वे नगरतैं उत्तर दिशाकी तरफ न अति निकट, न अतिदूर, कायर लोगनिकूं भयानक जो उद्यान तहां विराजे।

अथानंतर नगरका राजा पृथिवीधर जाके इन्द्राणी नामा राणी स्त्रीके गुणनिकरि मंडित वाके वनमाला नामा पुत्री महासुन्दर सो बाल अवस्थाहीतैं लक्ष्मणके गुण सुन अति आसक्त भई। बहुरि सुनी दशरथने दीक्षा धरी अर केकईके वचनतैं भरतकूं राज्य दिया, राम लक्ष्मण परदेश निकसे हैं ऐसा विचार याके पिताने कन्याका इंद्रनगरका राजा ताका पुत्र जो बालमित्र महासुन्दर ताहि देनी विचारी सो यह वृत्तांत वनमाला सुना हृदयविषैं विराजै है लक्ष्मण जाके तब मनविषैं विचारी कंठफांसी लेय मरण भला, परंतु अन्य पुरुषका संबंध शुभ नाहीं, यह विचार सूर्यसूं संभाषण करती भई हे भानो ! तुम अस्त होय जावो शीघ्र ही रात्रिकूं पठावहु, अब दिनका एकक्षण मोहि वर्ष समान बीतै है सो मानो याके चिंतवनकर सूर्य अस्त भया। कन्याका उपवास है, संध्या समय माता पिताकी आज्ञा लेय श्रेष्ठ रथविषैं चढ़ वनयात्राका बहानाकर रात्रिविषैं तहां आई जहां राम लक्ष्मण तिष्ठे हुते सो यानैं आनकर ताही वनविषैं जागरण किया। जब सकल लोक सोय गए तब यह मंद-मंद पैर धरती वनकी मृगी समान डेरातैं निकस वनविषैं चाली सो यह महासती पद्मिनी ताकै शरीरकी सुगन्धताकर वन सुगन्धित होय गया। तब लक्ष्मण विचारता भया यह कोई राजकुमारी महा श्रेष्ठ मानो ज्योतिकी मूर्ति ही है सो महा शोकके भार कर पीड़ित है मन जाका यह अपघात कर मरण वांछै है सो मैं याकी चेष्टा छिपकर देखूं, ऐसा विचारकर छिपकर बटके वृक्ष तले बैठ्या मानों कौतुकयुक्त देव कल्प-

वृक्षके नीचे बैठे । ताही वटके तले हंसनीकीसी है चाल जाकी, अर चन्द्रमा समान है वदन जाका, कोमल है अंग जाका, ऐसी वनमाला आई जलसूं आला वस्त्रकर फांसी बनाई अर मनोहर वाणीकर कहती भई—हो या वृक्षके निवासी देवता ? कृपाकर मेरी बात सुनहु, कदाचित् वनविषें विचरता लक्ष्मण आवै तो तुम ताहि ऐसे कहियो जो तिहारे विरहकरि महा दुःखित वनमाला तुमविषें चित्त लगाय वटके वृक्षविषें वस्त्रकी फांसी लगाय मरणकूं प्राप्त भई हम या देखी । अर तुमकूं यह सन्देशा कह्या है जो या भवविषें तो तिहारा संयोग मोहि न मिल्या, अब परभवविषें तुमही पति हूजियो यह वचन कह वृक्षकी शाखासूं फांसी लगाय आप फांसी लेने लगी, ताही समय लक्ष्मण कहता भया—हे मुग्धे ! मेरी भुजाकर आलिंगन योग्य तेरा कंठ ताविषें फांसी काहेकूं डारै है ? हे सुन्दरवदनी, परमसुन्दरी ! मैं लक्ष्मण हू जैसा तेरे श्रवणविषें आया है तैसा देख अर प्रतीति न आवै तो निश्चयकर लेहु । ऐसा कह ताके करसे कमलथकी भ्रमरोंके समूहके समान फांसी हर लीनी । तब वह लज्जाकरयुक्त प्रेमकी दृष्टिकर लक्ष्मणकूं देख मोहित भई । कैसा है लक्ष्मण ? जगतके नेत्रनिका हरणहारा है रूप जाका । परम आश्चर्यकूं प्राप्त भई चित्तविषें चिंतवै है यह कोई मोपर देवनि उपकार किया, मेरी अवस्था देख दयाकूं प्राप्त भए, जैसा मैं सुन्या हुता तैसा दैवयोगतैं यह नाथ पाया, जाने मेरे प्राण बचाए ऐसा चिंतवन करती वनमाला लक्ष्मणके मिलापतैं अत्यंत अनुरागकूं प्राप्त भई ।

अथानन्तर महासुगन्ध कोमल सांथरेपर श्रीरामचंद्र पौढ़े हुते सो जागकर लक्ष्मणकूं न देख जानकीकूं पूछते भए—हे देवी ! यहां लक्ष्मण नाहीं दीखै है, रात्रिके समय मेरे सोवनेकूं पुष्प पल्लवनिका कोमल सांथरा बिछाय आप यहां ही तिष्ठता हुता सो अब नाहीं दीखै है । तब जानकी कही--हे नाथ ! ऊंचा स्वरकर बुलाय लेहु, तब आप शब्द किया । हे भाई ! हे लक्ष्मण ? हे बालक ! कहां गया ! शीघ्र आवहु । तब भाई बोला—हे देव ! आया । वनमालासहित बड़े भाईके निकट आया । आधी रात्रि का समय चंद्रमाका उदय भया, कुमुद फूले, शीतल मंद सुगंध पवन बाजने लागी । ता समय वनमाला कोपल समान कोमल कर जोड़े वस्त्रकर वेढ्या है सब अंग जानै, लज्जाकर नम्रीभूत है मुख जाका, जाना है समस्त कर्तव्य जानै, महाविनयकूं धरती श्रीराम अर सीताके चरणारविंदकूं वन्दती भई । सीता लक्ष्मणकूं कहती भई—हे कुमार ! तैंने चंद्रमाकी तुल्यता करी । तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होय गया । श्रीराम जानकीतैं कहते भए, तुम कैसे जानी ? तब कही--हे देव ! जा समय चन्द्रकला सहित चंद्रमाका उद्योत भया ताही समय कन्यासहित लक्ष्मण आया । तब श्रीराम सीताके वचन सुन प्रसन्न भए ।

अथानन्तर वनमाला महाशुभ शील इनकूं देख आश्चर्यकी भरी प्रसन्न है मुख चंद्रमा जाका, फूल रहे हैं नेत्रकमल जाके, सीताके समीप बैठी । अर ये दोऊ भाई देवनि समान

महासुंदर निद्रारहित सुखतैं कथा वार्ता करते तिष्ठे हैं। अर वनमालाकी सखी जागकर देखैं तो सेज सूनी, कन्या नाहीं, तब भयकर खेदित भई अर महाव्याकुल होय रुदन करती भई ताके शब्दकर योधा जागे, आयुध लगाय तुरंग चढ़ दशों दिशाको दौड़े अर पयादे दौड़े। बरछी अर धनुष है हाथमें जिनके, दशों दिशा ढूंढी। राजाका भय अर प्रीतिकर संयुक्त है मन जाका ऐसे दौडे मानों पवनके बालक हैं। तब कैयक या तरफ दौड़े आए, वनमालाकूं वनविषैं राम लक्ष्मणके समीप बैठी देख बहुत हर्षित होय जायकर राजा पृथ्वीधरको बधाई दई अर कहते भए—हे देव! जिनके पावनेका बहुत यत्न करिये तो भी न मिलें वे सहज ही आए हैं। हे प्रभो! तेरे नगरमें महानिधि आई, विना बादल आकाशतैं वृष्टि भई क्षेत्रविषैं विना बाहे धान ऊगा। तिहारा जमाई लक्ष्मण नगरके निकट तिष्ठै है, जानैं वनमाला प्राण-त्याग करती बचाई। अर राम तिहारे परम हितु सीतासहित विराजे हैं जैसे शचीसहित इंद्र विराजे। ये वचन राजा सेवकनिके सुनकर महाहर्षित होय क्षणएक मूर्च्छित होय गया। बहुरि परम आनन्दकूं प्राप्त होय सेवकनिकूं बहुत धन दिया अर मनविषैं विचारता भया--मेरी पुत्रीका मनोरथ सिद्ध भया। जीवनिके धनकी प्राप्ति अर इष्टका समागम और हू सुखके कारण पुण्यके योगकरि होय हैं। जो वस्तु सैकड़ों योजन दूर अर श्रवणमें न आवै सो हू पुण्याधिकारीके क्षणमात्रविषैं प्राप्त होय हैं। अर जे प्राणी दुखके भोक्ता पुण्यहीन हैं तिनके हाथसे इष्ट वस्तु विलाय जाय है। पर्वतके मस्तकपर तथा वनविषैं सागरविषैं पंथविषैं पुण्याधिकारिनके इष्ट वस्तुका समागम होय हैं। ऐसा मनविषैं चिंतवनकर स्त्रीसूं सब वृत्तांत कह्या, स्त्री बारंबार पूछे है यह जानैं मानों स्वप्न ही हैं बहुरि रामके अधर समान आरक्त सूर्यका उदय भया। तब राजा प्रेमका भरया सर्व परिवारसहित हाथीपर चढ़कर परम कांतियुक्त रामसूं मिलने चाल्या। अर वनमालाकी माता आठ पुत्रनिसहित पालकीपर चढकर चली सो राजा दूर हीतैं श्रीरामका स्थानक देखकर फूल गए हैं नेत्रकमल जाके, हाथीतैं उतर समीप आया। श्रीराम अर लक्ष्मणसूं मिल्या। अर याकी रानी सीताके पांयनि लागी, अर कुशल पूछती भई। वीणा बांसुरी मृदंगादिकके शब्द होते भए, बंदीजन विरद बखानते भए, बड़ा उत्सव भया राजाने लोकनिकूं बहुत दान दिया। नृत्य होता भया, दशों दिशा नादकर शब्दायमान होतीं भईं, श्रीराम लक्ष्मणकूं स्नान भोजन कराया। बहुरि घोडे हाथी रथ तिनपर चढ़े अनेक सामंत अर हिरण समान कूदते प्यादे तिनसहित राम लक्ष्मणने हाथीपर चढ़े संते पुरविषैं प्रवेश किया राजाने नगर उछाया महाचतुर मागध विरद बखाने है मंगल शब्द करै हैं। राम लक्ष्मणने अमोलिक वस्त्र पहरे हारकर विराजे है वक्षस्थल जिनका मलयागिरिके चंदनतैं लिप्त हैं अंग जिनका, नानाप्रकारके रत्ननिकी किरणनिकरि इंद्रधनुष होय रह्या है। दोऊ भाई चांद-सूर्य सारिखे, नहीं वरणे जावै हैं गुण

जिनके, सौधर्म ईशान सारिखे जानकीसहित लोकनिकूं आश्चर्य उपजावते राजमंदिर पधारे, श्रेष्ठ माला धरें सुगन्धकर गुंजार करें हैं भ्रमर जापर, महा विनयवान चंद्रवदन इनकूं देख लोक मोहित भए। कुवेर कासा किया जो वह सुंदर नगर वहां अपनी इच्छाकरि परम भोग भोगते भए। या भांति सुकृतमे है चित्त जिनका महागहन वनविषे प्राप्त भए हू परम विलासकूं अनुभवें हैं। सूर्य समान है कांति जिनकी वे पापरूप तिमिरकूं हरें हैं निज पदार्थके लाभतें आनन्दरूप हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै वनमालाका लाभ वर्णन करनेवाला छत्तीसवा पर्व भया ॥३६॥

सैंतीसवां पर्व

[अतिवीर्य का भरतके साथ युद्धारम्भ और राम-लक्ष्मणसे पराजित हो दीक्षा ग्रहण करना]

अथानंतर एक दिन श्रीराम सुखसे विराजे हुते अर पृथिवीधर भी समीप बैठा हुता, ता समय एक पुरुष दूरका चाल्या महा खेदखिन्न आयकर नम्रीभूत होय पत्र देता भया। सो राजा पृथिवीधरने पत्र लेयकर लेखककूं सौंप्या, लेखकने खोलकर राजाके निकट बांच्या। तामें या भांति लिख्या हुता कि इंद्र समान है उत्कृष्ट प्रभाव जाका, महालक्ष्मीवान, नमैं हैं अनेक राजा जाकूं श्रीनन्द्यावर्त नगरका स्वामी महा प्रबल पराक्रमका धारी, सुमेरुपर्वतसा अचल, प्रसिद्ध शस्त्र-शास्त्रविद्याविषैं प्रवीण, सब राजानिका राजा महाराजाधिराज, प्रतापकर वश किए हैं शत्रु, अर मोहित करी है सकल पृथिवी जानें, उगते सूर्य समान महा बलवान समस्त कर्तव्यविषैं कुशल, महानीतिवान, गुणनिकर विराजमान, श्रीमान पृथिवीका नाथ, महाराजेन्द्र अतिवीर्य सो विजयनगरविषें पृथिवीधरकूं क्षेमपूर्वक आज्ञा करै है, कि जे केई पृथिवीपर सामंत हैं वे भण्डार-सहित अर सर्व सेनासहित मेरे निकट प्रवर्तें हैं, आर्य खंडके अर म्लेच्छ खंडके चतुरंग सेनासहित नाना प्रकारके शस्त्रनिके धरणहारे मेरी आज्ञाकूं शिरपर धारे हैं। अञ्जनगिरि सारिखे आठसै हाथी, अर पवनके पुत्रसम तीन हजार तुरंग, अनेक पयादे तिन सहित महा पराक्रमका धारी महा-तेजस्वी मेरे गुणनिसे खींचा है मन जाका ऐसा राजा विजयशार्दूल आया है, अर अंग देशके राजा मृगध्वज रणोर्मि कलभकेशरी यह प्रत्येक पांचा हजार तुरंग, अर छह सौ हाथी, अर रथ पयादे तिनसहित आए हैं, महा उत्साहके धारी महा न्यायविषैं प्रवीण है बुद्धि जिनकी, अर पांचालदेशका राजा पौंढ्र परम प्रतापकूं धरता न्यायशास्त्रविषैं प्रवीण अनेक प्रचंड बलकूं उत्साहरूप करता हजार हाथी अर सात हजार तुरंगनितैं अर रथ पयादनिकरि युक्त हमारे आया है, अर मगधदेशका राजा सुकेश बड़ी सेनासूं आया है अनेक राजानिसहित जैसैं सैंकड़ानि नदीनि-

के प्रवाहकूं लिए रेवाका प्रवाह समुद्रविषैं आवै, तैसैं ताके संग काली घटा समान आठ हजार हाथी अनेक रथ अर तुरंगनिके समूह हैं, अर वज्रका आयुध धारै है। अर म्लेच्छनिके अधिपति समुद्र, मुनिभद्र, साधुभद्र, नंदन इत्यादि राजा मेरे समीप आए हैं, वज्रधर समान, अर नाहीं निवारया जाय पराक्रम जाका ऐसा राजा सिंहवीर्य आया है, अर राजा वंग अर सिंहरथ ये दोऊ हमारे मामा महा बलवान बड़ी सेनासूं आए हैं अर वत्सदेशका स्वामी मारुदत्त अनेक पयादे अनेक हाथी अनेक रथ अनेक घोड़ानिकर युक्त आया है, अर राजा प्रौष्ठल सौवीर सुमेरु सारिखे अचल प्रबल सेनातैं आए हैं। ये राजा महापराक्रमी पृथिवीपर प्रसिद्ध देवनि सारिखे दश अक्षौहिणी दल सहित आए, तिन राजानि सहित मैं बड़े कटकतैं अयोध्याके राजा भरत पर चढ़ा हू। सो तेरे आयवेकी वाट देखूं हू तातैं आज्ञापत्र पहुचते प्रमाण पयानकर शीघ्र आइयो। किसी कार्यकर विलम्ब न करियो। जसैं किसान वर्षाकूं चाहै तैसैं मैं तेरे आगमनकूं चाहूं हूं। या भांति पत्रके समाचार लेखकने बांचे तब पृथिवीधरने कछु कहनेका उद्यम किया। तासूं पहले लक्ष्मण बोले अरे दूत! भरतके अर अतिवीर्यके विरोध कौन कारणतैं भया। तब वह वायुगत नाम दूत कहता भया— मैं सब बातोंका मरमी हू, सब चरित्र जानूं हू। तब लक्ष्मण बोले हमारे सुनवेकी इच्छा है, तब तानैं कही आपको सुननेकी इच्छा है तो सुनो। एक श्रुतबुद्धि नामा दूत हमारे राजा अतिवीर्यने भरतपर भेज्या सो जायकर कहता भया। इंद्र तुल्य राजा अतिवीर्यका मैं दूत हू, प्रणाम करै हैं समस्त नरेंद्र जाकूं, न्यायके थापनेविषैं महा बुद्धिमान सो पुरुषनिविषैं सिंह समान जाके भयतैं अरिरूप मृग निद्रा नाहीं करै हैं। ताके यह पृथिवी वनिता समान है कैसी है पृथिवी चार तरफके समुद्र सोई है कटिमेखला जाके, जैसैं परणी स्त्री आज्ञाविषैं होय तैसैं समस्त पृथिवी आज्ञाके वश है, सो पृथिवीपति महा प्रबल मेरे मुख होय तुमकूं आज्ञा करै है कि हे भरत! शीघ्र आयकर मेरी सेवा करहु अथवा अयोध्या तज समुद्रके पार जावो, ये वचन सुन शत्रुघ्न महा क्रोधरूप दावानल-समान प्रज्वलित होय कहता भया—अरे दूत! तोहि ऐसे वचन कहने उचित नाहीं। वह भरतकी सेवा करै, अक भरत ताकी सेवा करै? अर भरत अयोध्याका भार मंत्रिनिकूं सौंप पृथिवीके वश करनेके निमित्त समुद्रके पार जाय अक और भांति जाय। अर तेरा स्वामी ऐसे गर्वके वचन कहै है सो गर्दभ माते हाथीकी न्याई गाजे है, अथवा ताकी मृत्यु निकट है, तातैं ऐसे वचन कहै है. अथवा वायुके वश है? राजा दशरथकूं वैराग्यके योगतैं तपोवनको गए जान वह दुष्ट ऐसी बात कहै है। सो यद्यपि तातकी क्रोधरूप अग्नि मुक्तिकी अभिलाषाकर शांत भई, तथापि पिताकी अग्निसे हम स्फुलिंग समान निकसे हैं सो अतिवीर्यरूप काष्ठकूं भस्म करने समर्थ हैं। हाथीनिके रुधिररूप कीच कर लाल भए हैं केश जाके ऐसा जो सिंह सो शांत भया, तो ताका बालक हाथिनिके निपात करने समर्थ

है ये वचन कह शत्रुघ्न बलता जो वांसोंका वन ता समान तड़तड़ात कर महाक्रोधायमान भया। अर सेवकनिकूं आज्ञा करी जो या दूतका अपमान कर काढ़ देवहु, तब आज्ञा प्रमाण सेवकनिने अपराधीकूं श्वानकी न्याईं तिरस्कारकर काढ़ दिया, सो पुकारता नगरीके बाहिर गया। धूलिकरि धूसरा है अंग जाका, दुर्वचनकरि दग्ध अपने धनी पै जाय पुकारया, अर राजा भरत समुद्र-समान गंभीर परमार्थका जाननहारा अपूर्व दुर्वचन सुन कछूएक कोपकूं प्राप्त भया। भरत शत्रुघ्न दोऊ भाई नगरतैं सेनासहित शत्रुपर निकसे, अर मिथिला नगरीका धनी राजा जनक अपने भाई कनक-सहित बड़ी सेनासूं आय भेला भया। अर सिंहोदरकूं आदि दे अनेक राजा भरतसूं आय मिले, भरत बड़ी सेना सहित नन्द्यावर्त पुरके धनी अतिवीर्य पर चढ्या पिता समान प्रजाकी रक्षा करता संता। कैसा है भरत ? न्यायविषैं प्रवीण है अर राजा अतिवीर्य भी दूतके वचन सुन परम क्रोधकूं प्राप्त भया, क्षोभकूं प्राप्त भया जो समुद्र ता समान भयानक सर्व सामंतनिकरि मंडित भरतके ऊपर जाइवेकूं उद्यमी भया है। यह समाचार सुन श्रीरामचन्द्र अपना ललाट दूजके चन्द्रमा समान वक्रकर पृथिवीधरसूं कहते भए—जो अति-वीर्यकूं भरत से ऐसा करना उचित ही है क्योंकि जाने पिता समान बड़े भाईका अनादर किया। तदि राजा पृथिवीधरने रामसूं कही, वह दुष्ट है हम प्रबल जान सेवा करैं हैं। तब मंत्रकर अतिवीर्यकूं जबाब लिख्या कि मैं कागदके पीछे ही आऊं हू अर दूतकूं विदा किया। बहुरि श्रीरामसूं कहता भया अतिवीर्य महाप्रचंड है तातैं मैं जाऊं हू। तब श्रीरामने कही तुम तो यहां ही रहो अर मैं तिहारे पुत्रकूं अर तिहारे जवांई लक्ष्मणकूं ले अतिवीर्यके समीप जाऊंगा। ऐसा कहकर रथपर चढ़ बड़ी सेना सहित पृथिवीधरके पुत्रकूं लार लेय सीता अर लक्ष्मण सहित नन्द्यावर्त नगरीकूं चाले, सो शीघ्र गमनकर नगरके निकट जाय पहुंचे। वहां पृथिवीधरके पुत्रसहित स्नान भोजनकर राम लक्ष्मण सीता ये तीनों मंत्र करते भए। जानकी श्रीरामसूं कहती भई—हे नाथ ! यद्यपि मेरे कहिवेका अधिकार नाहीं, जैसे सूर्यके प्रकाश होते नक्षत्रनिका उद्योग नाहीं, तथापि हे देव ! हितकी वांछाकर मैं कछूइक कहूं हू जैसैं बांसनितैं मोती लेना तैसैं हम सारिखनितैं हितकी बात लेनी (काहू एक बांसके बीड़विषैं मोती निपजैं है)। हे नाथ ! यह अतिवीर्य महासेनाका स्वामी क्रूरकर्मा भरतकर कैसे जीत्या जाय तातैं याके जीतवे-का उपाय तुमसे अर लक्ष्मणते कोई कार्य असाध्य नाहीं। तब लक्ष्मण बोले—हे देवि ! यह कहा कहो हो, आज अथवा प्रभात या अतिवीर्यकूं मेरे कर हता ही जानहु। श्रीरामके चरणार-विंदकी जो रजकर पवित्र है सिर मेरा, मेरे आगे देव भी टिक नाहीं सकैं, क्षुद्र मनुष्य अति-वीर्यकी तो कहा बात ? जब तक सूर्य अस्त न होय तातैं पहिले ही या क्षुद्रवीर्यकूं मूवा ही देखियो। यह लक्ष्मणके वचन सुन पृथिवीधरका पुत्र गर्जना कर ऐसे कहता भया। तदि

श्रीराम भौंह फेर ताहि मनै कर लक्ष्मणसे कहते भए महा धीरवीर है मन जाका, हे भाई ! जानकी कही सो युक्त है, यह अतिवीर्य बलकर उद्धत है, रणविषैं भरतके वश करनेका पात्र नाहीं, भरत याके दसवैं भाग भी नाहीं। यह दावानल समान, याका वह मतंग गज कहा करै, यह हाथिनिकर पूर्ण, रथ पयादनिकर पूर्ण, यासूं जीतवे भरत समर्थ नाहीं जैसैं केशरी सिंह महा-प्रबल है, परन्तु विंध्याचल पर्वतके ढाहिवे समर्थ नाहीं, तैसैं भरत याकूं जीतैं नाहीं, सेनाका प्रलय होवेगा। जहां निःकारण संग्राम होय वहां दोनों पक्षनिके मनुष्यनिका क्षय होय। अर यदि इस दुरात्मा अतिवीर्यने भरतकूं वश किया, तब रघुवंशिनके कष्टका कहा कहना। अर इनविषैं संधि भी सूझै नाहीं, शत्रुघ्न अति मानी बालक सो उद्धत वैरीसूं दोष किया, यह न्याय-विषैं उचित नाहीं। अंधेरी रात्रिविषैं रौद्रभूत सहित शत्रुघ्नने दूरके दौरा जाय अतिवीर्यके कटक-विषैं धाड़ा दिया, अनेक योधा मारे, बहुत हाथी घोड़े काम आए। अर पवन सारिखे तेजस्वी हजारों तुरंग अर सातसै अंजनगिरि समान हाथी लेगया। सो तूने कहा लोगनिके मुखतैं न सुनी ? यह समाचार अतिवीर्य सुन महाक्रोधकूं प्राप्त भया। अर अब महा सावधान है रणका अभिलाषी है। अर भरत महामानी है सो यासूं युद्ध छोड़ संधि न करै। तातैं तू अतिवीर्यकूं वशकर, तेरी शक्ति सूर्यकूं भी तिरस्कार करवे समर्थ है। अर यहांतैं भरतहू निकट है सो हमकूं आपा न प्रकाशना, जे मित्रकूं न जनावै अर उपकार करैं ते पुरुष अद्भुत प्रशंसा करने योग्य है, जैसैं रात्रिका मेघ, या भांति मंत्रकर रामकूं अतिवीर्यके पकड़वेकी बुद्धि उपजी, रात्रि तो प्रमाद रहित होय समीचीन लोगनितैं कथाकर पूर्ण करी, सुखसों निशा व्यतीत भई, प्रातःसमय दोऊ वीर उठकर प्रातःक्रियाकर एक जिनमंदिर देख्या सो ताविषैं प्रवेशकर जिनेन्द्रका दर्शन किया। तहां आर्यिकानिका समूह विराजता हुता तिनकी वंदना करी, अर आर्यिकानिकी जो गुरानी वरधर्मा महा शास्त्रकी वेत्ता सीताकूं याके समीप राखी, आप भगवानकी पूजाकर लक्ष्मण-सहित नृत्यकारिणी स्त्रीका भेष कर लीलासहित राजमंदिरकी तरफ चाले, इंद्रकी अप्सरा तुल्य नृत्यकारिणीकूं देख नगरके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए लार लागे। ये महा आभूषण पहिरे सर्व लोकके मन अर नेत्र हरते राजद्वार गए, चौवीसों तीर्थंकरनिके गुण गाए, पुराणोंके रहस्य बताए, प्रफुल्लित हैं नेत्र जिनके, इनकी ध्वनि राजा सुन इनके गुणनिका खैंचा समीप आया, जैसैं रस्सीका खैंचा जलकेविषैं काष्ठका भार आवै। नृत्यकारिणीने नृपके समीप नृत्य किया। रेचक कहिए भ्रमण अंग मोड़ना, मुलकना, अवलोकना, भौंहनिका फेरना, मंद मंद हंसना, जंघा बहुरि करपल्लव तिनका हलावना, पृथिवीकूं स्पर्शि शीघ्र ही पगनिका उठा-वना, रागका दृढ़ करना, केशरूप फांसका प्रवर्तना, इत्यादि चेष्टारूप कामबाणनिकर सकल-लोकनिकूं बींधे। स्वरनिके ग्राम यथास्थान जोड़वेकरि अर बीणाके बजायवेकर सबनिकूं मोहित

किए जहां नर्त्तकी खड़ी रहै वहां सकल सभाके नेत्र चले जांय, रूपकर सबनिके नेत्र, स्वरकर सबनिके श्रवण, गुणकर सबनिके मन बांध लिए। गौतम स्वामी कहे हैं हे श्रेणिक! जहां श्रीराम लक्ष्मण नृत्य करैं, अर गावैं बजावैं तहां देवनिके मन हरे जांय तो मनुष्यनिकी कहा बात? श्रीऋषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरनिके यश गाय सकल सभा वश करी, राजाकूं संगीत-करि मोहित देख शृंगाररससे वीररसमें आए, आंख फेर, भौंहें फेर, महा प्रबल तेजरूप होय अतिवीर्यकूं कहते भए—हे अतिवीर्य! तैं कहा दुष्टता आरम्भी तोहि यह मन्त्र कौनने दिया, तैं अपने नाशके निमित्त भरतसों विरोध उपजाया, जिया चाहै तो महाविनयकर तिनकूं प्रसन्नकर दास होय तिनके निकट जावहु, तेरी रानी बड़े वंशकी उपजी कामक्रीड़ाकी भूमि विधवा न होय, तोहि मृत्युकूं प्राप्त भए सब आभूषण डार शोभारहित होयगी जैसैं चन्द्रमा विना रात्रि शोभा रहित होय, तेरा चित्त अशुभविषैं आया है सो चित्तकूं फेर नमस्कार कर। हे नीच! या भांति न करेगा तो अबार ही मारा जायगा, राजा अनरण्यके पोता अर दशरथके पुत्र तिनके जीवते तू कैसैं अयोध्याका राज्य चाहै है। जैसैं सूर्यके प्रकाश होते चन्द्रमाका प्रकाश कैसे होय? जैसे पतंग दीपविषैं पड़ मूवा चाहै है तैसे तू मरण चाहै है। राजा भरत गरुड़-समान महा-बली तिनसे तू सर्प-समान निर्बल बराबरी करै है? यह वचन भरतकी प्रशंसाके अर अपनी निंदाके नृत्यकारिणीके मुखतैं सुन सकल सभा सहित अतिवीर्य क्रोधकूं प्राप्त भया लाल नेत्र किए। जैसे समुद्रकी लहर उठै है तैसैं सामंत उठे अर राजाने खड्ग हाथमें लिया, ता समय नृत्य-कारणीने उछल हाथसों खड्ग खोस लिया अर सिरके केश पकड़ बांध लिया। अर नृत्यकारिणी अतिवीर्यके पक्षी राजा तिनसों कहती भई, जीवनेकी वांछा राखो तो अतिवीर्यका पक्ष छोड़ भरतपै जाहु, भरतकी सेवा करहु, तब लोकनिके मुखतैं ऐसी ध्वनि निकसी, महा शोभायमान गुणवान भरत भूप जयवंत होऊ। सूर्य समान है तेज जाका, न्यायरूप किरणनिके मंडलकर शोभित, दशरथके वंशरूप आकाशविषैं चन्द्रमा समान लोककूं आनन्दकारी, जाका उदय थकी लक्ष्मीरूपी कुमुदिनी विकासकूं प्राप्त होय शत्रुनिके आतापतैं रहित परम आश्चर्यकूं धरती संती। अहो यह बड़ा आश्चर्य जो नृत्यकारिणीकी यह चेष्टा जो ऐसे नृपतिकूं पकड़ लेय, तो भरतकी शक्तिका कहा कहना? इन्द्रहूकूं जीतैं, हम या अतिवीर्य सों आय मिले, सो भरत महाराज कोप भए होयगे, न जानिये कहा करैंगे। अथवा वे दयावंत पुरुष हैं जाय मिलें, पायनि परें कृपा ही करेंगे, ऐसा विचारि अतिवीर्यके मित्र राजा कहते भए। अर श्रीराम अतिवीर्यकूं पकड़ हाथीपर चढ़ि जिनमंदिर गए। हाथीसूं उतर जिनमंदिरविषै जाय भगवानकी पूजा करी, अर वरधर्मा आर्यिकाकी वन्दना करी, बहुत स्तुति करी, रामने अतिवीर्य लक्ष्मणकूं सौंप्या, लक्ष्मणने केश गह दृढ़ बांध्या, तब सीता कही याहि ढीला करहु, पीड़ा मत देवहु, शांतता भजहु। कर्मके

उदयकरि मनुष्य मतिहीन होय जाय है आपदा मनुष्यनिमें ही होय, बड़े पुरुषनिकूं सर्वथा परकी रक्षा ही करना, सत्पुरुषनिकूं सामान्य पुरुषका हू अनादर न करना, यह तो सहस्र राजानिका शिरोमणि है तातैं याहि छोड़ देवहु। तुम यह वश किया अब कृपा ही करना योग्य है। राजानिका यही धर्म है जो प्रबल शत्रुनिकूं पकड़ छोड दें, यह अनादि कालकी मर्यादा है। जब या भांति सीता कही तब लक्ष्मण हाथ जोड प्रणामकर कहता भया--हे देवि ! तिहारी आज्ञासे छोडबेकी कहा बात ? ऐसा करूं जो देव याकी सेवा करें, लक्ष्मणका क्रोध शांत भया। तब अतिवीर्य प्रतिबोधकूं पाय श्रीरामसूं कहता भया--हे देव ! तुम बहुत भला किया, ऐसी निर्मल बुद्धि मेरी अबतक कबहू न भई हुती सो तिहारे प्रतापतैं भई। तब श्रीराम ताहि हार मुकुटादि-रहित देख विश्रामके बचन कहते भए। कैसे हैं रघुवीर ? सौम्य है आकार जिनका। हे मित्र ! दीनता तज जैसा प्राचीन अवस्थामें धैर्य हुता तैसा ही धरि, बड़े पुरुषनिके ही संपदा अर आपदा दोऊ होय है। अब तोहि कुछ आपदा नाहीं, इस क्रमागत नंद्यावर्तपुरका राज्य भरतका आज्ञाकारी होय करवो कर। तब अतिवीर्य कही मेरे अब राज्यकी वांछा नाहीं, मैं राज्यका फल पाया। अब मैं और ही अवस्था धारूंगा। समुद्र-पर्यन्त पृथिवीका वश करणहारा महामानका धारी जो मैं सो कैसा पराया सेवक हो राज्य करूं, याविषैं पुरुषार्थ कहा ? अर यह राज्य कहा पदार्थ, जिन पुरुषनि षट् खंडका राज्य किया ते तृप्त न भए तो मैं पांच ग्रामोका स्वामी कहा अल्प विभूतिकर तृप्त होऊंगा ? जन्मांतरविषैं किया जो कर्म ताका प्रभाव देखहु, जो मोहि कांतिरहित किया जैसैं राहु चन्द्रमाकूं कांतिरहित करै, यह मनुष्यदेह सारभूत देवनहूतें अधिक मैं वृथा खोई, नवा जन्म धरनेकूं कायर सो तुमने प्रतिबोध्या, अब मैं ऐसी चेष्टा करूं जाकर मुक्ति प्राप्त होय, या भांति कहकर श्रीराम लक्ष्मणकू क्षमा कराय वह राजा अतिवीर्य केसरी सिंह जैसा है पराक्रम जाका, श्रुतधरनामा मुनीश्वरके समीप जाय हाथ जोड़ नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! मैं दिगंबरी दीक्षा वांछूं हूं। तब आचार्य कही यही बात योग्य है। या दीक्षाकर अनन्त सिद्ध भए अर होवेंगे। तब अतिवीर्य वस्त्र तज केशनिकूं लुंच कर महाव्रतका धारी भया। आत्माके अर्थविषैं मग्न, रागादि परिग्रहका त्यागी विधिपूर्वक तप करता पृथिवी पर विहार करता भया। जहां मनुष्यनिका संचार नाहीं, वहां रहै। सिंहादि क्रूर जीवनिकर युक्त जो महागहन वन अथवा गिरि शिखर गुफादि तिनविषैं निर्भय निवास करै, ऐसे अतिवीर्य स्वामीकूं नमस्कार होहु, तजी है समस्त परिग्रहकी आशा जाने, अर अंगीकार किया है चारित्रका भार जाने, महाशीलके धारक नानाप्रकार तपकर शरीरका शोषणहारा प्रशंसा योग्य महामुनि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र रूप सुन्दर हैं आभूषण, अर दशों दिशा ही वस्त्र जिनके, साधुनिके जे मूलगुण उत्तरगुण वे ही हैं संपदा जिनके, कर्म हरिवेकूं उद्यमी संयमी मुक्तिके वर योगीन्द्र तिनकूं नमस्कार होहु, यह अतिवीर्य

मुनिका चरित्र जो सुबुद्धि पढ़े सुने सो गुणनिकी वृद्धिकूं प्राप्त होय, भानु समान तेजस्वी होय और संसारके कष्टतैं निवृत्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं अतिवीर्यका वैराग्य वर्णन करनेवाला सैंतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३७ ॥

अड़तीसवां पर्व

[लक्ष्मणके जितपद्माकी प्राप्ति]

अथानन्तर श्रीरामचंद्र महा न्यायके वेत्ता अतिवीर्यका पुत्र जो विजयरथ ताहि अभिषेक कराय पिताके पदविषैं थाप्या, ताने अपना समस्त वित्त दिखाया सो ताका ताकूं दिया, अर ताने अपनी बहिन रत्नमाला लक्ष्मणकूं देनी करी सो तिनने प्रमाण करी, ताके रूपकूं देख लक्ष्मण हर्षित भए मानों साक्षात् लक्ष्मी ही है। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण जिनेंद्रकी पूजाकरि पृथ्वीधरके विजयपुर नगरविषैं वापिस गए अर भरतने सुनी जो अतिवीर्यकूं नृत्यकारिणीने पकड्या सो विरक्त होय दीक्षा धरी तब शत्रुघ्न हास्य करने लाग्या। तब ताहि मनेकर भरत कहते भये—अहो भाई! राजा अतिवीर्य महा धन्य है, जे महादुखरूप विषयनिकूं तज शांतभावकूं प्राप्त भए, वे महास्तुति योग्य हैं तिनकी हांसी कहा? तपका प्रभाव देखहु जो रिपु हू प्रणाम योग्य गुरु होय हैं। यह तप देवनिकूं दुर्लभ है, या भांति भरत अतिवीर्यकी स्तुति करै है ताही समय अतिवीर्यका पुत्र विजयरथ आया अनेक सामंतनिसहित, सो भरतकूं नमस्कारकर तिष्ठ्या। क्षणिक और कथाकर जो रत्नमाला लक्ष्मणकूं दई ताकी बड़ी बहिन विजयसुंदरी नानाप्रकार आभूषण की धरणहारी भरतकूं परणाई, अर बहुत द्रव्य दिया, सो भरत ताकी बहिन परणकरि बहुत प्रसन्न भए, विजयरथसूं बहुत स्नेह किया, यही बड़ेनिकी रीति है, अर भरत महा हर्षथकी पूर्ण है मन जाका, तेज तुरंगपर चढ्या अतिवीर मुनिके दर्शनकूं चाल्या, सो जा गिरिपर मुनि विराजे हुते तहां पहिले मनुष्य देख गए हुते सो लार हैं तिनकूं पूछते जाय हैं कहां महामुनि हैं, कहां महामुनि? वे कहै हैं-आगे विराजे हैं। सो जा गिरिपर मुनि हुते वहां जाय पहुचे, कैसा है गिरि? विषम पाषाणनिके समूहकरि महा अगम्य, अर नाना प्रकारके वृक्षनिकरि पूर्ण, पुष्पनिकी सुगंधकर महासुगंधित, अर सिंहादिक क्रूर जीवनिकरि भरया। सो राजा भरत अश्वतैं उतर महा विनयवान मुनिके निकट गए। कैसे हैं मुनि? राग-द्वेषरहित हैं शांत भई हैं इंद्रियां जिनकी शिलापर विराजमान निर्भय अकेले जिनकल्पी अतिवीर्य मुनींद्र महातपस्वी ध्यानी मुनिपदकी शोभाकर संयुक्त तिनकूं देख भरत आश्चर्यकूं प्राप्त भया। फूल गए हैं नेत्रकमल जाके, रोमांच होय आए। हाथ जोड़ नमस्कारकर साधुके चरणारविंदकी पूजाकर महा

नम्री भूत होय मुनिभक्तिविषैं है प्रेम जाका, सो स्तुति करता भया। हे नाथ! परम तत्त्वके वेत्ता तुम ही या जगतविषैं शूरवीर हो, जिनने यह जैनेंद्री दीक्षा महा दुर्द्धर धारी। जे महंत पुरुष विशुद्ध कुलविषैं उत्पन्न भए हैं, तिनकी यही चेष्टा है, या मनुष्य लोककूं पाय जो फल बड़े पुरुष वांछै हैं सो आपने पाया। अर हम या जगतकी मायाकरि अत्यंत दुखी हैं। हे प्रभो! हमारा अपराध क्षमा करहु, तुम कृतार्थ हो, पूज्य पदकूं प्राप्त भए, तुमको वारंवार नमस्कार होहु, ऐसा कहकर तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड़ नमस्कारकर मुनिसंबंधी कथा करता संता गिरितैं उतर तुरंगपर चढ़ हजारों सुभटनिकर संयुक्त अयोध्या आया। समस्त राजानिके निकट सभाविषैं कहा कि वे नृत्यकारिणी समस्त लोकनिके मनकूं मोहित करती अपने जीवितविषैं हू निर्लोभ प्रबल नृपनिकूं जीतनहारी कहां गई? देखो आश्चर्यकी बात, अतिवीर्यके निकट मेरी स्तुति करें, अर ताहि पकड़े, स्त्री वर्गविषैं ऐसी शक्ति कहांतैं होय? जानिए है जिनशासनकी देविनिने यह चेष्टा करी। ऐसा चितवन करता संता प्रसन्न चित्त भया। अर शत्रुघ्न नाना प्रकारके धान्यकर मंडित जो धरा ताके देखवेकूं गया, जगतविषै व्याप्त है कीर्ति जाकी। बहुरि अयोध्या आया परम प्रतापकूं धरैं अर राजा भरत अतिवीर्यकी पुत्री विजयसुंदरीसहित सुख भोगता सुखसूं तिष्ठै जैसैं सुलोचना सहित मेघेश्वर तिष्ठथा। यह तो कथा यहां ही रही, आगैं श्रीराम लक्ष्मणका वर्णन करै हैं।

अथानंतर राम लक्ष्मण सर्वलोककूं आनन्दके कारण केयक दिन पृथिवीधरके पुरविषैं रहे। जानकीसहित मंत्र कर आगैं चलवेकूं उद्यमी भए, तब सुंदर लक्षणकी धरणहारी वनमाला लक्ष्मणसूं कहती भई, नेत्र सजल होय आए। हे नाथ! मैं मंदभागिनी मोहि आप तज जावो हो तो पहिले मरणतैं क्यों बचाई? तब लक्ष्मण बोले हे प्रिये! तू विषाद मत करै, थोडे दिनमें तेरे लेवेकूं आवै हैं। हे सुन्दरवदनी! जो तेरे लेयवेको शीघ्र ही न आवै तो हमको वह गति हूजौ जो सम्यग्दर्शनरहित मिथ्यादृष्टिकी होय है। हे वल्लभे! जो शीघ्र ही तेरे निकट न आवैं तो हमको वह पाप होय जो महामानकर दग्ध साधुनिके निंदकनिके होय है। हे गजगामिनी! हम पिताके वचन पालिवे निमित्त दक्षिणके समुद्रके तीर निसंदेह जाय हैं। मलयाचलके निकट कोई परम स्थानकर तोहि लेवे आवेंगे। हे शुभमते! तू धैर्य राख, या भांति कहकर अनेक सौगंधकर अति दिलासा देय आप सुमित्राके नन्दन लक्ष्मण श्रीरामके संग चलवेकूं उद्यमी भए। लोकनिकूं सूते जान रात्रिकूं सीतासहित गोप्य निकसे। प्रभातविषैं इनकूं न देखकर नगरके लोक परम शोककूं प्राप्त भए। राजाकूं अतिशोक उपज्या, वनमाला लक्ष्मण विना घर सूना जानती भई, अपना चित्त जिनशासनविषैं लगाय धर्मानुरागरूप तिष्ठी। राम लक्ष्मण पृथिवीविषैं विहार करते नर-नारिनिकूं मोहते पराक्रमी पृथिवीकूं आश्चर्यके कारण धीरे २ लीलातैं

विचरैं हैं। जगतके मन अर नेत्रनिकूं अनुराग उपजावते रमैं हैं। इनकूं देख लोग विचारैं हैं जो यह पुरुषोत्तम कौन पवित्र गोत्रविषैं उपजे हैं। धन्य है वह मात जाकी कुक्षिविषैं ये उपजे, अर धन्य हैं वे नारी जिनकूं ये परणे, ऐसा रूप देवनिकूं दुर्लभ, ये सुन्दर कहांतैं आए, अर कहां जाय हैं,इनके कहा वांछा है, परस्पर स्त्रीजन ऐसी वार्ता करैं हैं। हे सखी! देखो, दोऊ कमलनेत्र चंद्रमा सारिखे अद्भुत वदन जिनके,अर एक नारी नागकुमारी समान अद्भुत देखी। न जानिये वे सुर हुते वा नर हुते। हे मुग्धे! महापुण्य बिना उनका दर्शन नाहीं। अब तो वे दूर गए, पाछे फिरो, वे नेत्र अर मनके चोर जगतका मन हरते फिरैं हैं इत्यादि नर नारिनिके आलाप सुनते सबकूं मोहित करते वे स्वेच्छाविहारी शुद्ध हैं चित्त जिनके नाना देशनिविषैं विहार करते क्षेमांजली नामा नगरविषैं आए ताके निकट कारी घटा समान सघन वनविषैं सुखसूं तिष्ठे जैसैं सौमनसवनमे देव तिष्ठैं। तहां लक्ष्मण महा सुंदर अन्न अर अनेक व्यंजन तैयार किए अर दाखनिका रस सो श्रीराम सीता सहित लक्ष्मण भोजन किया।

अथानंतर लक्ष्मण श्रीरामकी आज्ञा लेय क्षेमांजली नाम पुरके देखवेकूं चाले, महासुन्दर माला पहिरे अर पीताम्बर धारे सुन्दर है रूप जिनका, नाना प्रकारकी बेल वृक्ष तिन-करि युक्त वन अर निर्मल जलकी भरी नदी, अर नाना प्रकारके क्रीड़ागिरि अनेक धातुके भरे अर ऊंचे २ जिनमन्दिर अर मनोहर जलके निपान अर नाना प्रकारके लोक तिनकूं देख नगरविषैं प्रवेश किया। कैसा है नगर? नाना प्रकारके व्यापारकर पूर्ण,सो नगरके लोक इनका अद्भुत रूप देख परस्पर वार्ता करते भए, तिनके शब्द इनने सुने जो या नगरके राजाके जित-पद्मानामा पुत्री है ताहि वह परणे जो राजाके हाथकी शक्तिकी चोट खाय जीवता बचे, सो कन्याकी कहा बात? स्वर्गका राज्य देय तौ भी यह बात कोई न करै। शक्तिकी चोटतैं प्राण ही जाय तब कन्या कौन अर्थ? जगतविषैं जीतव्य सर्व वस्तुतैं प्रिय हैं तातैं कन्याके अर्थ प्राण कौन देय, यह वचन सुनकर महाकौतुकी लक्ष्मण काहूकूं पूछते भए—हे भद्र! यह जितपद्मा कौन है? तब वह कहता भया--यह कालकन्या पंडित-मानिनी सर्व लोक प्रसिद्ध तुम कहा न सुनी? या नगरका राजा शत्रुदमन, जाके राणी कनकप्रभा, ताके जितपद्मा पुत्री रूपवंती गुणवंती जाके वदनने कमलकूं जीत्या है। अर गात्रकी शोभाकर कमलिनी जीती, तातैं जितपद्मा कहावै है। नवयौवन मंडित सर्व कला पूर्ण अद्भुत आभूषणकी धरणहारी ताहि पुरुष नाम रुचै नाहीं, देवनिका दर्शन हू अप्रिय,मनुष्यनिकी तो कहा बात? जाके निकट कोई पुल्लिंग शब्द उच्चारण हू न कर सकै, यह कैलाशके शिखर-समान जो उज्ज्वल मंदिर ताविषै कन्या तिष्ठै है। सकड़नि सहेली जाकी सेवा करैं हैं, जो कोई कन्याके पिताके हाथकी शक्ति-की चोटतें बचे ताहि कन्या वर। लक्ष्मण यह वार्ता सुन आश्चर्यकूं प्राप्त भया। अर कोप

उपज्या, मनमें विचारी महागर्वित दुष्ट चेष्टा-संयुक्त यह कन्या ताहि देखूं ? यह चिंतवन कर राजमार्ग होय विमान समान सुन्दर घर देखता, अर मदोन्मत्त हाथी कारी घटा समान, अर तुरंग चंचल अवलोकता अर नृत्यशाला निरखता राजमंदिरविषैं गया। कैसा है राजमंदिर ? अनेक प्रकारके झरोखानिकर ध्वजानिकर मंडित, शरदके बादर समान उज्ज्वल मंदिर जहां कन्या तिष्ठै है, महामनोहर रचनाकर संयुक्त ऊंचे कोटकर वेष्टित सो लक्ष्मण जाय द्वारपर ठाढ़ा भया, इन्द्रके धनुष समान अनेक वर्णका है तोरण जहां, सुभटनिके समूह अनेक देशनिके नाना प्रकार भेंट लेयकर आए हैं, कोई निकसे हैं कोई जाय हैं, सामंतनिकी भीड़ होय रही है। लक्ष्मणकूं द्वारमें प्रवेश करता देख द्वारपाल सौम्य वाणीसूं कहता भया—तुम कौन हो, अर कौनकी आज्ञातैं आए हो। कौन प्रयोजन राजमंदिरमें प्रवेश करो हो ? तब कुमारने कही राजाकूं देखा चाहै हैं तू जाय राजासों पूछ, तब वह द्वारपाल अपनी ठौर दूजेको राख आप राजातैं जाय वीनती करता भया—हे महाराज ! आपके दर्शनकूं एक महारूपवान पुरुष आया है, द्वारै तिष्ठ है, नील कमल समान है वर्ण जाका, अर कमललोचन महाशोभायमान सौम्य शुभ मूर्ति है। तब राजाने प्रधानकी ओर निरख आज्ञा करी आव, तदि द्वारपाल लक्ष्मणकूं राजाके समीप लेय गया, सो समस्त सभा याकूं अति सुन्दर देख हर्षकी वृद्धिकूं प्राप्त भई, जैसें चन्द्रमाकूं देख समुद्रकी शोभा वृद्धिकूं प्राप्त होय। राजा याकूं प्रणाम-रहित देदीप्यमान विकट-स्वरूप देख कछुइक विकारकूं प्राप्त होय पूछता भया--तुम कौन हो, कौन अर्थ कहांतैं यहां आए हो ? तदि लक्ष्मण वर्षाकालके मेघ समान शब्द करते भए--मैं राजा भरतका सेवक हू, पृथ्वीको देखवेकी अभिलाषाकरि विचरूं हू। तेरी पुत्रीका वृत्तांत सुन यहां आया हू। यह तेरी पुत्री महादुष्ट मरकनी गाय है। नहीं भग्न भए हैं मानरूपी सींग जाके, यह सर्व लोकनिकूं दुःख-दायिनी वर्ते है, तब राजा शत्रुदमनने कही मेरी शक्तिकूं जो सहार सके सो जितपद्माकूं वरै। तब लक्ष्मण कहता भया तेरी एक शक्तिकरि मेरे कहा होय। तू अपनी समस्त शक्तिकरि मेरे पंच शक्ति लगाय, या भांति राजाके अर लक्ष्मणके विवाद भया। ता समय झरोखातैं जितपद्मा लक्ष्मणकूं देख मोहित भई अर हाथ जोड़ इशारा कर मनै करती भई, जो शक्तिकी चोट मत खावो। तब आप सैन करते भए तू डरै मत, या भांति समस्याविषैं ही धैर्य बंधाया। अर राजासूं कही, काहे कायर होय रह्या है, शक्ति चलाय अपनी शक्ति हमकूं दिखा, तब राजा कही, तू मूवा चाहै है, तो झेल, महाकोपकर प्रज्वलित अग्नि समान एक शक्ति चलाई, सो लक्ष्मणने दाहिने करतैं ग्रही जैसैं गरुड़ सर्पकूं ग्रहै। अर दूसरी शक्ति बायें हाथतैं गही, अर तीजी चौथी दोनों कांखविषैं गही सो चारों शक्तिनिकूं गहै लक्ष्मण ऐसे शोभैं है मानो चौंदता हस्ती है तब राजा पांचवीं शक्ति चलाई सो दांतनितैं गही, जैसे मृगराज मृगीको गहै। तब देवनिके समूह हर्षित होय पुष्पवृष्टि करते भए,

अर दुन्दुभी बाजे बजाते भए। लक्ष्मण राजासूं कहते भए और है तो और भी चला, तब सकल लोक भयकर कंपायमान भए। राजा लक्ष्मणका अखंड बल देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। लज्जाकर नीचा होय गया। अर जितपद्मा लक्ष्मणके रूप अर चरित्र कर खैंची थकी आय ठाढ़ी भई, वह कन्या सुन्दरवदनी मृगनयनी लक्ष्मणके समीप ऐसी शोभती भई, जैसैं इंद्रके समीप शची होय। जितपद्माकूं देख लक्ष्मणका हृदय प्रसन्न भया। महा संग्रामविषैं जाका चित्त स्थिर न होय, सो याकै स्नेहकरि वशीभूत भया, लक्ष्मण तत्काल विनयकर नम्रीभूत होय राजाकूं कहता भया--हे माम! हम तुम्हारे बालक हैं। हमारा अपराध क्षमा करहु, जे तुम सारिखे गम्भीर नर हैं ते बालकनिकी अज्ञान-चेष्टा कर अर कुवचन कर विकारकूं नाहीं प्राप्त होय हैं। तब शत्रुदमन अति हर्षित होय हाथीकी सूंड-समान अपनी भुजानिकर कुमारसूं मिल्या अर कहता भया--हे धीर। मैं महायुद्धविषैं माते हाथिनिकूं क्षणमात्रविषैं जीतनहारा सो तूने जीत्या, अर वनके हर्ता पर्वत-समान तिनकूं मद-रहित करनहारा जो मैं सो तुम मोहि गर्वरहित किया। धन्य तिहारा पराक्रम, धन्य तिहारा रूप, धन्य तिहारी निर्गर्वता, महा विनयवान अद्भुत चरित्रके धरणहारे तुमसे तुमहीं हो, या भांति राजाने लक्ष्मणके गुण सभाविषैं वर्णन किये। तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होय गया।

अथानन्तर राजाकी आज्ञाकर मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके शब्द सेवक करते भए अर याचकनिकूं अतिदान देय उनकी इच्छा पूर्ण करते भए। नगरकेविषैं आनन्द वर्त्या, राजाने लक्ष्मणसूं कहा -हे पुरुषोत्तम! मेरी पुत्रीका तुम पाणिग्रहण किया चाहो हो तो करो, लक्ष्मणने कहा मेरे बड़े भाई अर भावज नगरके निकट तिष्ठैं हैं तिनकूं पूछो, तिनकी आज्ञा होय सो तुमको हमको करनी उचित है। वे सर्व नीके जाने हैं। तब राजा पुत्रीकूं अर लक्ष्मण-कूं रथमें चढ़ाय सर्व कुटुम्ब सहित रघुवीर पै चाल्या, सो क्षोभकूं प्राप्त हुआ जो समुद्र ताकी गर्जना समान याकी सेनाका शब्द सुनकर अर धूलके पटल उठते देखकर सीता भयभीत होय कहती भई हे नाथ! लक्ष्मणने कुछ उद्धत चेष्टा करी या दिशाविषैं उपद्रव दृष्टि आवै है तातैं सावधान होय जो कुछ करना होय सो करहु। तब आप जानकीकूं उरसूं लगाय कहते भए--हे देवि! भय मत करहु ऐसा कहकर उठ धनुष ऊपर दृष्टि धरी, तब ही मनुष्यनिके समूहके आगे स्त्रीजन सुन्दर गान करती देखी। बहुरि निकट ही आईं। सुन्दर हैं अंग जिनके, स्त्रीनिकूं गावती अर नृत्य करती देख श्रीरामकूं विश्वास उपज्या, सीता सहित सुखसूं विराजे। स्त्रीजन सब आभूषण-मंडित अति मनोहर मंगलद्रव्य हाथमें लिये हर्षके भरे हैं नेत्र, जिनके, रथसूं उतर कर आईं, अर राजा शत्रुदमन भी बहुत कुटुम्ब-सहित श्रीरामके चरणारविंदकूं नमस्कार कर बहुत विनयसूं बैठ्या। लक्ष्मण अर जितपद्मा एक साथ रथविषैं बैठे आए हुते, सो उतर

कर लक्ष्मण श्रीरामचन्द्रकूं अर जानकीकूं सीस नवाय प्रणामकर महा विनयवान दूर बैठ्या। श्रीराम राजा शत्रुदमनसे कुशल प्रश्न वार्ता करि सुखसूं विराजे। रामके आगमनकरि राजाने हर्षित होय नृत्य किया, महा भक्तिकरि नगरमें चलवेकी विनती करी, श्रीराम अर सीता अर लक्ष्मण एक रथविषैं विराजे। परम उत्साहसूं राजाके महल पधारे। मानों वह राजमंदिर सरोवर ही है। स्त्रीरूप कमलनितैं भरया, लावण्यरूप जल है जाविषैं, शब्द करते जे आभूषण तेई हैं सुन्दर पक्षी जहां। यह दोऊ वीर नवयौवन महाशोभाकरि पूर्ण कैयक दिन सुखसूं विराजे, राजा शत्रुदमन करै है सेवा जिनकी।

अथानन्तर सर्व लोकके चित्तकूं आनंदके करणहारे राम लक्ष्मण महाधीर वीर सीता सहित अर्धरात्रिकूं उठ चाले, लक्ष्मणने प्रिय वचनकर जैसे वनमालाकूं धैर्य बंधाया हुता तैसे जितपद्माको धैर्य बंधाया बहुत दिलासाकर आप श्रीरामके लार भए, नगरके सर्व लोक अर नृपको इनके चले जानेकी अति चिंता भई, धैर्य न रह्या। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं हे मागधाधिपति! ते दोउ भाई जन्मांतरके उपार्जे जे पुण्य तिनकरि सब जीवनिके वल्लभ जहां जहां गमन करैं तहां तहां राजा प्रजा सब लोक सेवा करैं, अर यह चाहैं कि न जावें तो भला। सब इंद्रियनिके सुख अर महा मिष्ट अन्न-पानादि विना ही यत्न इनकूं सर्वत्र सुलभ, जे पृथिवीविषैं दुर्लभ वस्तु हैं ते सब इनकूं प्राप्त होय। महा भाग्य भव्य जीव सदा भोगनितैं उदास हैं ज्ञानके अर विषयनिके वैर है। ज्ञानी ऐसा चितवन करैं हैं इन भोगनिकर प्रयोजन नाहीं। ये दुष्ट नाशकूं प्राप्त होय, या भांति यद्यपि भोगनिकी सदा निन्दा ही करैं हैं, भोगनित विरक्त ही हैं दीप्तिकरि जीत्या है सूर्य जिनने, तथापि पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावतैं पहाड़के शिखरविषैं निवास करैं हैं तहां हू नाना प्रकार सामग्रीका संयोग होय है जब लग मुनिपदका उदय नाहीं तब लग देवों समान सुख भोगवैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै जितपद्माका व्याख्यान करनेवाला अड़तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥३८॥

उनतालीसवां पर्व

[देशभूषण-कुलभूषण मुनिका कथानक]

अथानंतर ये दोऊ वीर महाधीर सीता सहित वनविषैं आए। कैसा है वन? नानाप्रकारके वृक्षनि कर शोभित, अनेक भांतिके पुष्पनिकी सुगंधिताकर महासुगंध, लतानिके मंडपनिकरि युक्त, तहां राम लक्ष्मण रमते रमते आए। कैसे हैं दोनों समस्त देवोपनीत सामग्रीकर शरीरका है

आधार जिनके, कहूइक मूगोंके रंग समान महा सुंदर वृक्षनिका कूंपल लेय श्रीराम जानकीके कर्णाभरण करैं हैं, कहूँइक छोटा वृक्षविषैं लग रही जो बेल ताकर हिंडोला बनाय दोऊ भाई झोटा देय देय जानकीकूं झुलावैं हैं अर आनंदकी कथा कर सीताकूं विनोद उपजावैं हैं, कभी सीता रामसों कहै है--हे देव ! यह बेलि यह वृक्ष कैसा महामनोज्ञ दीखैं हैं, अर सीताके शरीर-की सुगंधताकर भ्रमर आय लगे हैं, सो दोऊ उड़ावैं हैं या भांति नानाप्रकारके वननिविषैं धीरे धीरे विहार करते दोऊ धीर मनोज्ञ हैं चरित्र जिनके जैसैं स्वर्गके वनविषैं देव रमैं तैसैं रमते भए, अनेक देशनिकूं देखते अनुक्रमकर वंशस्थल नगर आए ! ते दोऊ पुण्याधिकारी तिनकूं सीताके कारण थोड़ी दूर ही आवनेविषैं बहुत दिन लागे,सो दीर्घ कालहू दु.ख क्लेशका देनहारा न भया, सदा सुखरूप ही रहे । नगरके निकट एक वंशधर नामा पर्वत देख्या, मानूं पृथिवीकूं भेदकर निकस्या है जहां बांसनिके अति समूह तिनकरि मार्ग विषम है ऊंचे शिखरनिकी छायाकरि मानों सदा संध्याकूं धारै है, अर निर्झरनोंकर मानों हंसै है सो नगरतैं राजा प्रजाकूं निकसती देख श्रीरामचंद्र पूछते भए— अहो कहा भयकर नगर तजो हो ? तब कोई कहता भाय आज तीसरा दिन है । रात्रिके समय या पहाडके शिखरविषैं ऐसी ध्वनि होय है जो अबतक कबहु नाहीं सुनी, पृथ्वी कंपायमान होय है, अर दशों दिशा शब्दायमान होय हैं वृक्षनिकी जड़ उपड़ जाय है, सरोवरनिका जल चलायमान होय है । ता भयानक शब्दकर सर्व लोकनिके कान पीड़ित होय हैं मानों लोहेके मुद्गरनि कर मारे । कोई एक दुष्ट देव जगतका कंटक हमारे मार-वेके अर्थ उद्यमी होय है या गिरिपर क्रीड़ा करै है ताके भयकर संध्या समय लोक भागैं हैं, प्रभातविषैं बहुरि आवैं हैं पांच कोस परे जाय रहैं हैं जहां वाकी ध्वनि न सुनिये । यह वार्ता सुनि सीता राम लक्ष्मण सों कहती भई, जहां यह सर्व लोक जाय हैं वहां अपनहू चालैं । जे नीतिशास्त्रके वेत्ता हैं अर देश कालकूं जानकर पुरुषार्थ करैं हैं ते कदाचित् आपदाकूं नाहीं प्राप्त होय हैं । तब दोऊ धीर हंसकर कहते भये—तू बहुत कायर है सो यह लोक जहां जाय हैं तहां तू भी जाहु, प्रभात सब आवें तब तू आइयो । हम तो आज या गिरिपर रहेंगे । यह अत्यंत भयानक कौनकी ध्वनि होय है सो देखेंगे यही निश्चय है । यह लोक रंक हैं भयकर पशु बालकनिकूं लेय भागैं हैं, हमकूं काहूका भय नाहीं । तब सीता कहती भई, तिहारे हठको कौन हरिवे समर्थ, तिहारा आग्रह दुर्निवार है । ऐसा कहकर वह पतिके पीछे चाली, खिन्न भए हैं चरण जाके । पहाडके शिखरपर ऐसी शोभै मानों निर्मल चंद्रकांति ही है । श्रीरामके पीछे और लक्ष्मणके आगे सीता कैसी सोहे, मानों चंद्रकांति अर इंद्रनीलमणिके मध्य पुष्पराग मणि ही है। ता पर्वतका आभूषण होती भई । राम लक्ष्मणकूं यह डर है जो यह कहीं गिरिसे गिर न पड़ै । तातैं याका हाथ पकड़ लिए जाय हैं, वे निर्भय पुरुषोत्तम विषम हैं पाषाण जाके ऐसे पर्वतकूं

उलंघ कर सीतासहित शिखरपर जाय पहुंचे। तहां देशभूषण नामा दोय मुनि महाध्यानारूढ दोऊ भुज लुंबाए कायोत्सर्ग आसन धरैं खड़े, परम तेजकर युक्त समुद्र सारिखे गंभीर, गिरि-सारिखे स्थिर, शरीर अर आत्माकूं भिन्न भिन्न जाननहारे, मोह-रहित नग्न-स्वरूप यथाजातरूपके धरनहारे, कांतिके सागर नवयौवन परम सुंदर महासंयमी, श्रेष्ठ हैं आकार जिनके, जिन-भाषित धर्मके आराधनहारे तिनकूं श्रीराम लक्ष्मण देखकर हाथ जोड़ नमस्कार करते भए। अर बहुत आश्चर्यकूं प्राप्त भए, चित्तविषैं चिंतवते भए जो संसारके सर्व कार्य असार हैं। दुःखके कारण हैं। मित्र द्रव्य स्त्री सर्व कुटुंब अर इंद्रियजनित सुख यह सब दुःख ही हैं, एक धर्म ही सुखका कारण है। महा भक्तिके भरे दोऊ भाई परम हर्षकूं धरते विनयकरि नम्रीभूत हैं शरीर जिनके, मुनिनिके समीप बैठे। ताही समय असुरके आगमनतैं महा भयानक शब्द भया। मायामई सर्प अर विच्छू तिनकर दोनों मुनिनका शरीर वेष्टित होय गया, सर्प अति भयानक महा शब्दके करणहारे, काजल समान कारे, चलायमान है जिह्वा जिनकी, अर अनेक वर्णके अति स्थूल विच्छु तिनकरि मुनिनके अंग वेढ़े देख राम लक्ष्मण असुरपर कोपकूं प्राप्त भए। सीता भयकी भरी भरतारके अंगसूं लिपट गई, तब आप कहते भए—तू भय मत करै, याकूं धैर्य बंधाय दोऊ सुभट निकट जाय सांप विच्छु मुनिनके अंगतैं दूर किए, चरणारविंदकी पूजा करी, अर योगीश्वरनिकी भक्ति वंदना करते भए। श्रीराम वीण लेय बजावते भए, अर मधुर स्वरसूं गावते भए। अर लक्ष्मण गान करते भए गानविषैं ये शब्द गाए-महा योगीश्वर धीर वीर, मन वचन कायकर वंदनीक हैं, मनोज्ञ है चेष्टा जिनकी, देवनिहूविषैं पूज्य महाभाग्य-वंत, जिनने अरहंतका धर्म पाया, जो उपमारहित अखंड महा उत्तम, तीन भुवनविषैं प्रसिद्ध जे महामुनि जिनधर्मके धुरंधर ध्यानरूप वज्रदंडकरि महामोहरूप शिलाकूं चूर्ण कर डारैं, अर जे धर्मरहित प्राणिनिकूं अविवेकी जान दयाकर विवेकके मार्ग लयावे। परम दयालु आप तिरैं औरनिकूं तारैं। या भांति स्तुति करि दोऊ भाई ऐसे गावैं जो वनके तिर्यंचनिहूके मन मोहित भए। अर भक्तिकी प्रेरी सीता ऐसा नृत्य करती भई, जैसा सुमेरुके विषैं शची नृत्य करै। जाना है समस्त संगीत शास्त्र जानै, सुंदर लक्षणकूं धरे, अमोलक हार मालादि पहिरे, परम लीला-करि युक्त दिखाई है प्रगटपणे अद्भुत नृत्यकी कला जानैं, सुंदर है बाहुलता जाकी, हावभावादि-विषैं प्रवीण, मंद मंद चरणनिकूं धरती महा लयकूं लिए गावती गीत अनुसार भावकूं बतावती अद्भुत नृत्य करती महा शोभायमान भासती भई। अर असुरकृत उपद्रवकूं मानूं सूर्य देख न सकया सो अस्त भया, अर संध्या हू प्रकट होय जाती रही, आकाशविषैं नक्षत्रनिका प्रकाश भया। दशो दिशाविषैं अंधकार फैल गया। ता समय असुरकी मायाकरि महारौद्र भूतनिके गण हडहड हंसते भए, महा भयंकर हैं मुख जिनके, अर राक्षस खोटे शब्द करते भए, अर

मायामई स्यालिनी मुखतैं भयानक अग्निकी ज्वाला काढती शब्द बोलती भई, अर सैकड़ों कलेवर भयकारी नृत्य करते भए, मस्तक भुजा जंघादितैं अग्निवृष्टि होती भई। अर दुर्गंधसहित स्थूल बूंद लोहूकी बरसती भई, अर डाकिनी नग्न-स्वरूप लावैं हाडोंके आभरण पहिरे, क्रूर है शरीर जिनके, हालैं हैं स्तन जिनके, खड्ग है हाथमें जिनके, वे दृष्टिविषैं आवती भई, अर सिंह व्याघ्रादिक कैसे मुख, तप्त लोह-समान लोचन, हस्तविषैं त्रिशूल धारे, होंठ डसते कुटिल हैं भौंह जिनकी, कठोर हैं शब्द जिनके, ऐसे अनेक पिशाच नृत्य करते भए। पर्वतकी शिला कंपायमान भई, अर भूकंप भया, इत्यादि चेष्टा असुरने करी, सो मुनि शुक्लध्यानविषैं मग्न किछु न जानते भए। ये चेष्टा देख जानकी भयकूं प्राप्त भई पतिके अंगसे लग गई, तब श्रीराम कहते भए—हे देवि! भय मत करहु, सर्व विघ्नके हरणहारे जे मुनिके चरण तिनका शरण गहहु, ऐसा कहकर सीताकूं मुनिके पायन मेल आप लक्ष्मणसहित धनुष हाथविषैं लिए महाबली मेघसमान गरजे, धनुषके चढ़ायवेका ऐसा शब्द भया जैसा वज्रपातका शब्द होय, तब वह अग्निप्रभ नामा असुर इन दोऊ वीरनिकूं बलभद्र नारायण जान भाग गया, बाकी सर्व चेष्टा विलाय गई। श्रीराम लक्ष्मणने मुनिका उपसर्ग दूर किया, तत्काल देशभूषण कुलभूषण मुनिनिको केवल ज्ञान उपज्या, चतुरनिकायके देव दर्शनकूं आए। विधिपूर्वक नमस्कारकर यथायोग्य बैठे। केवलज्ञानके प्रतापतैं केवलीके निकट रात-दिनका भेद न रहे। भूमिगोचरी अर विद्याधर केवलीकी पूजाकर यथायोग्य बैठे, सुर नर विद्याधर सब ही धर्मोपदेश श्रवण करते भए। राम लक्ष्मण हर्षितचित्त सीतासहित केवलीकी पूजाकर हाथ जोड नमस्कारकर पूछते भए—हे भगवान्! असुरने आपकूं कौन कारण उपसर्ग किया, अर तुम दोऊविषैं परस्पर अति स्नेह काहेतैं भया। तब केवलीकी दिव्यध्वनि होती भई—पद्मिनीनामा नगरीविषैं राजा विजयपर्वत गुणरूप धान्यके उपजिवेका उत्तम क्षेत्र जाके धारणीनामा स्त्री अर अमृतसुरनामा दूत, सर्व शास्त्रविषैं प्रवीण, राज-काजविषैं निपुण, लोक रीतिको जानैं, अर याकूं गुण ही प्रिय, जाके उपभोगा नामा स्त्री, ताकी कुक्षि विषैं उपजे, उदित मुदित नामा दोय पुत्र व्यवहारमें प्रवीण सो अमृतसुरनामा दूतकूं राजाने कार्य निमित्त बाहिर भेज्या सो वह स्वामी भक्त वसुभूति मित्र सहित चला। वसुभूति पापी याकी स्त्रीसूं आसक्त दुष्टचित्त सो रात्रिविषैं अमृतसुरको खड्गसे मार नगरीमें वापिस आया, लोगनितैं कही मोहि वापिस भेज दिया है अर ताकी स्त्री उपभोगा, तासे यथार्थ वृत्तांत कहा। तब वह कहती भई। मेरे दोऊ पुत्रनिको मारि, जो हम दोऊ निश्चिंत तिष्ठैं। सो यह वार्ता उदितकी बहूने सुनी अर कहे हुते सर्व वृत्तांत उदितसैं कहे। यह बहू सासके चरित्रकूं पहिले भी जानती हुती, याकों वसुभूतिकी बहूने समाचार कहे हुते जो परदाराके सेवनतैं पतिसे विरक्त हुती सो

उदितने सब बातोंसे सावधान होय मुदितको भी सावधान किया। अर वसुभूतिका खड्ग देख पिताके मरणका निश्चयकर उदितने वसुभूतिको मारा सो पापी मरकर म्लेच्छकी योनिकूं प्राप्त भया। ब्राह्मण हुता सो कुशीलके अर हिंसाके दोषतैं चांडालका जन्म पाया। एक समय मतिवर्धननामा आचार्य मुनिनिविषैं महातेजस्वी पद्मिनी नगरी आए सो वसन्ततिलकनामा उद्यानमें संघसहित विराजे अर आर्यिकानिकी गुरानी अनुधरा धर्मध्यानविषैं तत्पर सोहू आर्यिकानिके संघसहित आई सो नगरके समीप उपवनविषैं तिष्ठी। अर या वनमें मुनि विराजे हुते ता वनके अधिकारी आय राजासूं हाथ जोड़ विनती करते भए—हे देव! आगेको या पीछेको कहो संघ कौन तरफ जावे? तब राजा कही जो कहा बात है ते कहते भए—उद्यानविषैं मुनि आए हैं जो मनैं करें तो डरें, जो नहीं मनैं करें तो तुम कोप करो यह हमको बड़ा संकट है। स्वर्गके उद्यान समान यह वन है अब तक काहूको याविषैं आने न दिया, परन्तु मुनिनिका कहा करें, ते दिगम्बर देवनिकर न निवारे जावैं हम सारिखे कैसे निवारैं? तब राजा कही, तुम मत मने करो जहां साधु विराजे सो स्थानक पवित्र होय है। सो राजा बड़ी विभूतिसूं मुनिनिके दर्शनको गया ते महाभाग्य उद्यानमें विराजे हुते वनकी रजकरि धूसरे है अंग जिनके, मुक्ति योग्य जो क्रिया ताकरि युक्त, प्रशांत हैं हृदय जिनके, कैयक कायोत्सर्ग धरे दोनों भुजा लुंबाय खड़े हैं, कैयक पद्मासन धरे विराजे हैं, बेला तेला चौला पंच उपवास दश उपवास पक्ष-मासादि अनेक उपवासनिकरि शोषा है अंग जिनने, पठन-पाठनविषैं सावधान, भ्रमर समान मधुर हैं शब्द जिनके, शुद्ध स्वरूपविषैं लगाया है चित्त जिनने, सो राजा ऐसे मुनिनिकूं दूरसे देख गर्वरहित होय गजतैं उतर सावधान होय सर्व मुनिनिको नमस्कार कर आचार्यके निकट जाय तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकर पूछता भया—हे नाथ! जैसी तिहारे शरीरमें दीप्ति है तैसे भोग नाहीं। तब आचार्य कहते भए यह कहां बुद्धि तेरी, तू शूरवीर, याकूं स्थिर जानै है, यह बुद्धि संसारकी बढ़ावनहारी है जैसे हाथीके कान चपल तैसा जीतव्य चपल है, यह देह कदलीके थंभसमान असार है, अर ऐश्वर्य स्वप्न तुल्य है, घर कुटुम्ब पुत्र कलत्र बांधव सब असार हैं, ऐसा जानकर या संसारकी मायाविषैं कहा प्रीति? यह संसार दुःखदायक हैं। यह प्राणी अनेक बार गर्भवासके संकट भोगवे है। गर्भवास नरक तुल्य महा भयानक, दुर्गंध कृमिजाल कर पूर्ण, रक्त श्लेषमादिका सरोवर, महा अशुचि कर्दमका भरा है यह प्राणी मोहरूप अंधकार करि अंध भया गर्भवाससूं नहीं डरै है। धिक्कार है या अत्यन्त अपवित्र देहकूं सब अशुभका स्थानक क्षणभंगुर, जाका कोई रक्षक नाहीं। जीव देहकूं पोषै वह याहि दुःख देय सो महा कृतघ्न, नसा-जालकर बेढ़ा, चर्मकरि ढका, अनेक रोगनिका पुंज, जाके आगमनकरि ग्लानिरूप ऐसे देहमें जे प्राणी स्नेह करै हैं, ते ज्ञानरहित अविवेकी हैं। तिनके कल्याण कहांते होय? अर या शरीरविषैं इन्द्रिय चोर बसै हैं। ते बलात्कार धर्मरूप धनकूं

हरै हैं। यह जीवरूप राजा कुबुद्धिरूप स्त्रीसूं रमै हैं, अर मृत्यु याकूं अचानक ग्रसा चाहै है। मनरूप माता हाथी विषयरूप वनविषैं क्रीड़ा करै है। ज्ञानरूप अंकुशतैं याहि वशकर वैराग्यरूप थंभसूं विवेकी बांधै हैं। यह इन्द्रियरूप तुरंग मोहरूप पताकाकूं धरै,परस्त्रीरूप हरित तृणनिविषैं महा लोभकूं धरते शरीररूप रथकूं कुमार्गमें पाड़ै है। चित्तके प्रेरे चंचलता धरे हैं तातैं चित्तको वश करना योग्य है। तुम संसार,शरीर,भोगनितैं विरक्त होय भक्ति कर जिनराजकूं नमस्कार करहु, निरन्तर सुमरहु,जाकरि निश्चयतैं संसार-समुद्रकूं तिरहु। तप-संयमरूप बाणनिकरि मोहरूप शत्रुको हन लोकके शिखर अविनाशीपुरका अखंड राज्य करहु, निर्भय निजपुरविषैं निवास करहु। यह मुनिके मुखतैं वचन सुनकर राजा विजयपर्वत सुबुद्धि राज्य तज मुनि भया। अर वे दूतके पुत्र दोऊ भाई उदित मुदित जिनवाणी सुन मुनि होय महीविषैं विहार करते भए। सम्मेदशिखरकी यात्राकूं जाते हुते सो काहू प्रकार मार्ग भूल वनविषैं जाय पड़े। वह वसुभूति विप्रका जीव महारौद्र भील भया हुता तानें देखे। अति क्रोधायमान होय कुठार-समान कुवचन बोले, इनकूं खड़े राखे अर मारवेकूं उद्यमी भया। तब बडा भाई उदित मुदितसे कहता भया—हे भ्रात! भय मत करहु, क्षमा ढालको अंगीकार करहु। यह मारवेको उद्यमी भया हैं सो हमने बहुत दिन तपसूं क्षमाका अभ्यास किया है सो अब दृढता राखनी। यह वचन सुन मुदित बोला, हम जिनमार्गके सरधानी, हमकूं कहां भय, देह तो विनश्वर ही है। अर यह वसूभूतिका जीव है जो पिताके बैरतैं मारा हुता। परस्पर दोऊ मुनि ए वार्ता कर शरीरका ममत्व तज कायोत्सर्ग धार तिष्ठे। वह मारवेको आया सो म्लेच्छ कहिए भील ताके पतिने मने किया, दोऊ मुनि बचाए। यह कथा सुनि रामने केवलीसूं प्रश्न किया-हे देव! वाने बचाए सो वासूं प्रीतिका कारण कहा? तब केवलीकी दिव्यध्वनिविषैं आज्ञा भई। एक यक्षस्थान नाम ग्राम तहां सुरप अर कर्षक दोऊ भाई हुते। एक पक्षीकूं पारधी जीवता पकड़ ग्राममें लाया सो इन दोऊ भाईनिने द्रव्य देय छुड़ाया, सो पक्षी मरकर म्लेच्छपति भया- अर वे सुरप कर्षक दोऊ वीर उदित मुदित भए। ता परोपकारकर वाने इनको बचाए जो कोई जैनी नेकी करै है सो वह भी तासूं नेकी करै हैं,अर जो काहूसूं बुरी करै है वाहूसूं वह हू बुरी करै है। यह संसारी जीवनिकी रीति है तातैं सबनिका उपकार ही करहु। काहू प्राणीसूं वैर न करना। एक जीवदया ही मोक्षका मार्ग है, दया विना ग्रंथनिके पढवेकरि कहा? एक सुकृत ही सुखका कारण सो करना, वे उदित मुदित मुनि उपसर्गतैं छूट सम्मेदशिखरकी यात्राकूं गए अन्य हू अनेक तीर्थनिकी यात्रा करी। रत्नत्रयका आराधनकरि समाधितैं प्राण तज स्वर्गलोक गए। अर वह वसुभूतिका जीव जो म्लेच्छ भया हुता सो अनेक कुयोनिविषैं भ्रमणकर मनुष्य देह पाय तापसव्रत धर, अज्ञान तपकर मर ज्योतिषी देवनिकेविषैं अग्निकेतु नामा क्रूर देव भया। अर भरतक्षेत्रके विषम अरिष्टपुर नगर,जहां राजा प्रियव्रत महा भोगी ताके दो रानी महा गुणवती एक कनकप्रभा दूजी पद्मावती, सो वे उदित मुदितके जीव स्वर्गसूं चयकर

पद्मावती रानीके रत्नरथ विचित्ररथ नामा पुत्र भए। अर कनकप्रभाके वह ज्योतिषी देव चयकर अनुधर नामा पुत्र भया। राजा प्रियव्रत पुत्रकूं राज्य देय भगवानके चैत्यालयविषैं छह दिनका अनशन धार देह त्याग स्वर्गलोक गया।

अथानंतर एक राजाकी पुत्री श्रीप्रभा लक्ष्मीसमान सो रत्नरथने परणी। ताकी अभिलाषा अनुधरके हुती सो रत्नरथतैं अनुधरका पूर्व जन्म तो वैर हुता, बहुरि नया वैर उपजा सो अनुधर रत्नरथकी पृथिवी उजाड़ने लगा। तब रत्नरथ अर विचित्ररथ दोऊ भाइनि अनुधरकूं युद्धमें जीत देशतैं निकाल दिया सो देशतैं निकासनेतैं अर पूर्व वैरतैं महा क्रोधकूं प्राप्त होय जटा अर वक्कलका धारी तापसी भया, विषवृक्ष समान कषाय-विषका भरया। अर रत्नरथ विचित्ररथ महातेजस्वी चिरकाल राजकर, मुनि होय तपकर स्वर्गविषैं देव भए। महासुख भोग तहांतैं चयकर सिद्धार्थ नगरके विषैं राजा क्षेमंकर रानी विमला तिनके महासुंदर देशभूषण कुलभूषण नामा पुत्र होते भए। सो विद्या पढ़नेके अर्थ घरमें उचित क्रीड़ा करते तिष्ठें, ता समय एक सागरघोष नामा पंडित अनेक देशनिमें भ्रमण करता आया, सो राजा पंडितकूं बहुत आदरसूं राखा अर ये दोऊ पुत्र पढ़नेकूं सौंपे सो महा विनयकर संयुक्त सर्वकला सीखीं, केवल एक विद्या-गुरुको जानैं, या विद्याको जानैं और कुटुम्बमें काहूको न जानैं। तिनके एक विद्याभ्यासहीका कार्य, विद्यागुरुतैं अनेक विद्या पढ़ीं। सर्व कलाके पारगामी होय पितापै आए सो पिता इनकूं महाविद्वान सर्व कला-निपुण देखकर प्रसन्न भया। पंडितको मनवांछित दान दिया। यह कथा केवली रामसूं कहैं है वे देशभूषण कुलभूषण हम हैं। सो कुमार अवस्थामे हमने सुनी जो पिताने हमारे विवाहके अर्थ राजकन्या मंगाई हैं। यह वार्ता सुनकर परम विभूतिके धरे तिनकी शोभा देखवेको नगर बाहिर जायवेके उद्यमी भए, सो हमारी बहिन कमलोत्सवा कन्या झरोखेमैं बैठी नगरीकी शोभा देखती हुती, सो हम तो विद्याके अभ्यासी कबहू काहूको न देखा न जाना, हम न जानैं यह हमारी बहिन हैं। अपनी मांग जान विकाररूप चित्त भया, दोऊ भाईनिके चित्त चले, दोऊ परस्पर मनविषैं विचारते भए याहि मैं परणूं, दूजा भाई परणा चाहैं तो ताहि मारूं? सो दोऊके चित्तविषैं विकारभाव अर निर्दयीभाव भया। ताही समय बन्दीजनके मुख ऐसा शब्द निकसा कि राजा क्षेमंकर विमला रानी सहित जयवन्त होवे जाके दोनों पुत्र देवनि समान। अर यह झरोखेविषैं बैठी कमलोत्सवा इनकी बहिन सरस्वती समान, दोऊ वीर महागुणवान अर बहिन महागुणवंती ऐसी संतान पुण्याधिकारीनिके ही होय है। जब यह वार्ता हमने सुनी तब मनविषैं विचारी, अहो देखो मोह कर्मकी दुष्टता, जो हमारे बहिनकी अभिलाषा उपजी? यह संसार असार महा दुःखका भरा, हाय जहां ऐसा भाव उपजै, पापके योग करि प्राणी नरक जांय वहां महादुःख भोगैं, यह विचारकर हमारे ज्ञान उपजा सो वैराग्यको उद्यमी भए। तब माता पिता स्नेहसूं व्याकुल भए। हमने सबसूं ममत्व तज

दिगम्बरी दीक्षा आदरी, आकाशगामिनी रिद्धि सिद्ध भई। नानाप्रकारके जिन-तीर्थादिविषैं विहार किया, तप ही है धन जिनके। अर माता पिता राजा क्षेमंकर अगले भी भवका पिता सो हमारे शोकरूप अग्निकर तप्तायमान हुवा सर्व आहार तज मरणको प्राप्त भया सो गरुड़ेंद्र भया। भवनवासी देवनिविषैं गरुड़कुमार जातिके देव तिनका अधिपति, महा सुंदर, महा पराक्रमी, महा-लोचन नाम सो आयकर यह देवनिकी सभाविषैं बैठा है। अर वह अनुधर तापसी विहार करता कौमुदी नगरी गया अपने शिष्यनिके समूह करि वेढ़ा तहां राजा सुमुख, ताके रानी रतिवती परम सुंदरी सैंकडा राननिविषैं प्रधान, अर ताके एक मदना नृत्यकारिणी मानों मदनकी पताका ही है, अति सुंदर रूप अद्भुत चेष्टाकी धरणहारी, ताने साधुदत्त मुनिके समीप सम्यग्दर्शन ग्रह्या, तबतें कुगुरु कुदेव कुधर्मकूं तृणवत जाने। ताके निकट एक दिन राजा कही यह अनुधर तापसी महातपका निवास हैं। तब मदनाने कही--हे नाथ! अज्ञानीका कहा तप, लोकविषैं पाखण्ड रूप है। यह सुनकर राजाने क्रोध किया। तू तपस्वी की निंदा करै है। तब वाने कही आप कोप मत करहु, थोड़े ही दिनविषैं याकी चेष्टा दृष्टि पडेगी, ऐसा कहकर घर जाय अपनी नागदत्ता नामा पुत्रीको सिखाय तापसीके आश्रम पठाई, सो वह देवांगना-समान परम चेष्टाकी धरणहारी महा विभ्रम-रूप तापसीको अपना शरीर दिखावती भई, सो याके अंग उपंग महा सुंदर निरखकर अज्ञानी तापसीका मन मोहित भया, अर लोचन चलायमान भए, जा अंगपर नेत्र गए वहां ही मन बंध गया, काम-बाणनिकरि तापसी पीड़ित भया। व्याकुल होय देवांगना समान जो यह कन्या ताके समीप आय पूछता भया, तू कौन है अर यहां कहां आई है? संध्याकालविषैं सब ही लघु वृद्ध अपने स्थानकविषैं तिष्ठैं हैं। तू महासुकुमार अकेली वनमें क्यों विचरै है? तब वह कन्या मधुर शब्दकर याका मन हरती संती दीनताको लिये बोली, चंचल नीलकमल समान है लोचन जाके, हे नाथ! दयावान, शरणागत-प्रतिपाल आज मेरी माताने मोहि घरते निकास दई, सो अब मैं तिहारे भेषकर तिहारे स्थानक रहना चाहूं हूं, तुम मोसों कृपा करहु। रात दिन तिहारी सेवाकर मेरा यह लोक परलोक सुधरेगा। धर्म अर्थ काम इनविषैं कौनसा पदार्थ है जो तुमविषैं न पाईए। परम निधान हो, मैं पुण्यके योगतें तुम पाये। या भांति कन्याने कही, तब याका मन अनुरागी जान विकल तापसी कामकर प्रज्वलित बोला--हे भद्रे! मैं कहा कृपा करूं, तू कृपाकर प्रसन्न होहु। मैं जन्मपर्यंत तेरी सेवा करूंगा, ऐसा कहकर हाथ चलावनेका उद्यम किया, तब कन्या अपने हाथसूं मनै कर आदरसहित कहती भई--हे नाथ! मैं कुमारी कन्या, ऐसा करना उचित नाहीं, मेरी माताके घर जायकर पूछो, घर भी निकट ही है जैसी मोपर तिहारी करुणा भई है, तैसैं मेरी मांको प्रसन्न करहु। वह तुमको देवेगी, तब जो इच्छा होय सो करियो? यह कन्याके वचन सुन मूढ तापसी व्याकुल होय तत्काल कन्याकी लार रात्रिको ताकी

माताके पास आया। कामकर व्याकुल हैं सर्व इंद्रियां जाकी, जैसैं माता हाथी जलके सरोवरविषैं पैठें तैसैं नृत्यकारिणीके घरविषैं प्रवेश किया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकमे कहै हैं—

हे राजन्! कामकर ग्रसा हुवा प्राणी न स्पर्शे, न स्वादे, न सूंघै, न देखे, न सुने, न जाने, न डरे, अर न लज्जा करे। महा मोहसे निरंतर कष्टकूं प्राप्त होय है जैसैं अंधा प्राणी सर्पनिके भरे कूपमें पड़े तैसैं कामांध जीव स्त्रीके विषयरूप विषम कूपमें पड़ै। सो वह तापसी नृत्यकारिणीके चरणमें लोट अति अधीन होय कन्याकूं याचता भया। ताने तापसीको बांध राखा। राजाको समस्या हुती सो राजाने आय कर रात्रिको तापसो बंधा देखा। प्रभात तिरस्कारकरि निकास दिया, सो अपमान कर लज्जायमान महा दुःखको धरता संता पृथिवीविषैं भ्रमणकर मूवा, अनेक कुयोनिविषैं जन्म मरण किए बहुरि कर्मानुयोगकर दरिद्रीके घर उपजा। जब यह गर्भमें आया तब ही याकी माताने याके पिताको क्रूर वचन कहकर कलह किया सो उदास होय विदेश गया अर याका जन्म भया। बालक अवस्था हुती तब भीलनि देशके मनुष्य बन्द किये सो याकी माता भी बन्दीमें गई, सब कुटुम्ब-रहित यह परम दुखी भया। कईएक दिन पीछे तापसी होय अज्ञान तप कर ज्योतिषी देवनिविषैं अग्निप्रभ नामा देव भया। अर एक समय अनन्तवीर्य केवलीकूं धर्मविषैं निपुण जो शिष्य तिनने पूछ्या, कैसे हैं केवली? चतुरनिकायके देव अर विद्याधर तथा भूमिगोचरी तिनकरि सेवित। हे नाथ! मुनिसुव्रत नाथके मुक्ति गये पीछे तुम केवली भए, तुम समान संसारका तारक कौन होयगा? तब तिनने कही देशभूषण कुलभूषण होवेंगे। केवलज्ञान अर केवलदर्शनके धरणहारे, जगत्विषैं सार जिनका उपदेश पायकर लोक संसार समुद्रकूं तिरेंगे। ये वचन अग्निप्रभने सुने सो सुनकर अपने स्थानक गया। इन दिननिमें कुअवधि कर हमकूं या पर्वतविषैं तिष्ठे जान 'अनन्तवीर्य केवलीका वचन मिथ्या करूं' ऐसा गर्व धर पूर्व वैरकर उपद्रव करनेकूं आया। सो तुमकूं बलभद्र नारायण जान भयकर भाज गया। हे राम! तुम चरम-शरीरी तद्भव-मोक्षगामी बलभद्र हो। अर लक्ष्मण नारायण है, ता सहित तुमने सेवा करी, अर हमारे घातिया कर्मके क्षयसे केवलज्ञान उपज्या। या प्रकार प्राणीनिके वैरका कारण सर्व वैरानुबन्ध है ऐसा जानकर जीवनिके पूर्वभव श्रवण कर हे प्राणी हो! रागद्वेष तज निश्चल होवो। ऐसे महापवित्र केवलीके वचन सुन सुर नर असुर वारम्वार नमस्कार करते भये। अर भवदुःखतें डरे। अर गरुडेन्द्र परम हर्षित होय केवलीके चरणारविन्दकूं नमस्कार कर महा स्नेहकी दृष्टि विस्तारता लहलहाट करैं हैं मणि-कुण्डल जाके, रघुवंशमें उद्योत करणहारे जे राम तिनसों कहता भया—हे भव्योत्तम! तुम मुनिनिकी भक्ति करी सो मैं अति प्रसन्न भया। ये मेरे पूर्व भवके पुत्र हैं। जो तुम मांगो सो मैं देहुं। तब श्रीरघुनाथ क्षणएक विचार कर बोले तुम देवनिके स्वामी हो, कभी हमपै आपदा परै तो हमें चितारियो साधुनि

की सेवाके प्रसादसे यह फल भया जो तुम सारिखोंसे मिलाप भया। तब गरुडेंद्रने कही तुम्हारा वचन मैं प्रमाण किया, जब तुमकूं कार्य पडेगा तब मैं तिहारे निकट ही हूं, ऐसा कहा, तब अनेक देव मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके नाद करते भये। साधुनिके पूर्व भव सुन कईएक उत्तम मनुष्य मुनि भये, कईएक श्रावकके व्रत धारते भए। वे देशभूषण कुलभूषण केवली जगत्-पूज्य सर्व संसारके दुःखसे रहित नगर ग्राम पर्वतादि सर्व स्थानविषैं विहार करें धर्मका उपदेश देते भये, यह दोऊ केवलिनिके पूर्वभवका चरित्र जे निर्मल स्वभावके धारक भव्य जीव श्रवण करैं, वे सूर्य समान तेजस्वी पापरूप तिमिरकूं शीघ्र ही हरें।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै देशभूषण कुलभूषण केवलीका चरित्र वर्णन करनेवाला उनतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥३९॥

चालीसवां पर्व

[रामगिरि पर श्रीरामचन्द्रका पदार्पण]

अथानन्तर केवली के मुखतैं रामचन्द्रको चरम-शरीरी कहिये तद्भव-मोक्षगामी सुनकर सकल राजा जय जय शब्द कहकर प्रणाम करते भये। अर वंशस्थलपुरका राजा सुरप्रभ महा निर्मल-चित्त राम लक्ष्मण सीताकी भक्ति करता भया। महलनिके शिखरकी कांतिकरि उज्वल भया है आकाश जहां, ऐसा जो नगर, तहां चलनेकी राजा प्रार्थना करी, परन्तु रामने न मानी, वंशगिरिके शिखर हिमाचलके शिखर समान सुन्दर जहां नलिनी वनविषैं महा रमणीक विस्तीर्ण शिला तहां आय हंस समान विराजे। कैसा है वन? नाना प्रकारके वृक्ष अर लतानि करि पूर्ण अर नाना प्रकारके पक्षी करैं हैं नाद जहां, सुगन्ध पवन चालै है, भांति भांतिके फल पुष्प तिनकरि शोभित, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे हैं, स्थानक अति सुन्दर, सर्व ऋतुकी शोभा जहां बन रही है, शुद्ध आरसीके तल समान मनोज्ञ भूमि, पांच वर्णके रत्ननि करि शोभित, जहां कुंद, मौलसिरी, मालती, स्थलकमल जहां अशोक वृक्ष, नागवृक्ष, इत्यादि अनेक प्रकारके सुगन्ध वृक्ष फूल रहे हैं। तिनके मनोहर पल्लव लहलहाट करैं हैं तहां राजाकी आज्ञा कर महा भक्तिवन्त जे पुरुष तिनने श्रीरामकूं विराजनेके निमित्त वस्त्रनिके महा मनोहर मण्डप बनाये सेवक जन महा चतुर सदा सावधान। अति आनंदके करणहारे मंगलरूप वाणीके बोलनहारे, स्वामीकी भक्तिविषैं तत्पर तिनने बहुत तरहके चौडे ऊंचे वस्त्रनिके मण्डप बनाये, नाना प्रकारके चित्राम हैं जिनमें, अर जिनपर ध्वजा फर हरैं हैं मोतिनकी माला जिनके लटके हैं, क्षुद्र घंटिकानिके समूह कर युक्त अर जहां मणिनिकी झालर लूंब रही है महा देदीप्यमान सूर्यकी सी

किरण धरै अर पृथिवीपर पूर्ण कलश थापे हैं। अर छत्र चमर सिंहासनादि राज-चिन्ह तथा सर्व सामग्री धरैं हं, अनेक मंगलद्रव्य हैं ऐसे सुन्दर स्थलविषैं सुखसों तिष्ठै हैं, जहां जहां रघुनाथ पांव धरें तहां तहां पृथिवीपर राजा अनेक सेवा करें। शय्या आसन मणि सुवर्णके नाना प्रकारके उपकरण अर इलायची, लवंग, ताम्बूल, मेवा मिष्टान्न तथा श्रेष्ठवस्त्र अद्भुत आभूषण अर महा सुगन्ध नाना प्रकारके भोजन दधि दुग्ध घृत भांति-भांति अन्न इत्यादि अनुपम वस्तु लावें या भांति सब ठौर सब जन श्रीरामकूं पूजें, वंशगिरिपर श्रीराम लक्ष्मण सीताके रहिवेको मण्डप रचे तिनमें किसी ठौर गीत कहीं नृत्य कहीं वादित्र बाजैं हैं। कहू सुकृतकी कथा होय है अर नृत्यकारिणी ऐसा नृत्य करैं मानों देवांगना ही हैं। कहीं दान बटै है। ऐसे मंदिर बनाए जिनका कौन वर्णन कर सकै ? जहां सर्व सामग्री पूर्ण, जो याचक आवैं सो विमुख न जाय। दोनों भाई सब आभरणनिकरि युक्त सुन्दर वस्त्र धरें मनवांछित दानके करणहारे, महा यशकर मण्डित, अर सीता परम सौभाग्यकी धरणहारी, पापके प्रसंगसूं रहित, शास्त्रोक्त रीतिकर रहे, ताकी महिमा कहांतक कहिए। अर वंशगिरिविषैं श्रीरामचंद्रने जिनेश्वरदेवके हजारों अद्भुत चैत्यालय बनवाये, महा दृढ़ हैं स्तंभ जिनके, योग्य है लंबाई चौड़ाई ऊंचाइ जिनकी अर सुंदर झरोखानिकरि शोभित, तोरण सहित है द्वार जिनके, कोट अर खाई कर मंडित सुंदर ध्वजानिकरि शोभित वंदनाके करणहारे भव्यजीव तिनके मनोहर शब्द संयुक्त मृदंग वीणा बांसुरी झालरी झांझ मजीरा शंख भेरी इत्यादि वादित्रनिके शब्दकर शोभायमान निरंतर आरंभये हैं महा उत्सव जहां, ऐसे रामके रचे रमणीक जिनमंदिर तिनकी पंक्ति शोभती भई। तहां पंच वर्णके प्रतिबिंब जिनेंद्र सर्व लक्षणनि कर संयुक्त सर्व लोकनिकरि पूज्य विराजते भए। एक दिन श्रीराम कमललोचन लक्ष्मणसूं कहते भए--हे भाई ! यहां अपने ताईं दिन बहुत बीते, अर सुखसूं या गिरि पर रहे, श्रीजिनेश्वरके चैत्यालय बनायवेकर पृथिवीमें निर्मल कीर्ति भई। अर या वंशस्थलपुरके राजाने अपनी बहुत सेवा करी, अपने मन बहुत प्रसन्न किए। अब यहां ही रहें तो कार्यकी सिद्धि नाहीं। अर इन भोगनिकर मेरा मन प्रसन्न नाहीं, ये भोग रोगके समान हैं ऐसा ही जानूं हूं तथापि ये भोगनिके समूह मोहि क्षणमात्र नाहीं छोडैं हैं। सो जबतक संयमका उदय नाहीं तबतक ये विना यत्न आय प्राप्त होय हैं। या भवविषै जो कर्म यह प्राणी करै है ताका फल परभवमें भोगवै है, अर पूर्व उपार्जे जे कर्म तिनका फल वर्तमान कालविषैं भोगै है। या स्थलमें निवास करते अपने सुख संपदा है परंतु जे दिन जांय हैं वे फेर न आवैं। नदीका वेग, अर आयुके दिन, अर यौवन गए वे फेर न आवें। या कर्ण-रवा नाम नदीके समीप दंडक वन सुनिये है, वहां भूमिगोचरनिकी गम्यता नाहीं, अर वहां भरतकी आज्ञाकाहू प्रवेश नाहीं, वहां समुद्रके तट एक स्थान बनाय निवास करेंगे, यह रामकी आज्ञा सुन लक्ष्मणने विनती करी— हे नाथ !

आप जो आज्ञा करोगे सोई होयगा। ऐसा विचार दोऊ वीर महाधीर इंद्र-सारिखे भोग भोगि वंशगिरितैं सीता सहित चाले। राजा सुरप्रभ वंशस्थलपुरका पति लार चाल्या सो दूरतक गया। आप विदा किया सो मुश्किलसे पीछे बाहुडा, महा शोकवंत अपने नगरमें आया। श्रीरामका विरह कौन कौनको शोकवंत न करै। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं--हे राजन्! वह वंशगिरि बडा पर्वत, जहां अनेक धातु सो रामचंद्रने जिनमंदिरनिकी पंक्ति कर महा शोभायमान किया। कैसे हैं जिनमंदिर? दिशानिके समूहकूं अपनी कांति करि प्रकासरूप करै हैं ता गिरिपर श्रीरामने परम सुंदर जिनमंदिर बनाए, सो वंशगिरि रामगिरि कहाया या भांति पृथिवीपर प्रसिद्ध भया, रवि समान है प्रभा जाकी।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिका विषै रामगिरिका वर्णन करनेवाला चालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥४०॥

इकतालीसवां पर्व

[जटायु पक्षी का उपाख्यान]

अथानंतर राजा अनरण्यके पोता, दशरथके पुत्र राम लक्ष्मण सीतासहित दक्षिण दिशाके समुद्रकूं चाले, कैसे हैं दोऊ भाई? महा सुखके भोक्ता। नगर ग्राम तिनकर भरे जे अनेक देश तिनको उलंघ कर महा वनविषैं प्रवेश करते भए। जहां अनेक मृगनिके समूह हैं, अर मार्ग सूझै नाहीं, अर उत्तम पुरुषनिकी वस्ती नाही। जहां विषम स्थानक सो भील भी विचर न सकें,नाना प्रकारके वृक्ष अर बेल तिनकर भरया महा विषम अति अंधकाररूप जहां पर्वतनिकी गुफा गंभीर निर्झरने झरैं हैं ता वनविषैं जानकी प्रसंगतैं धीरे धीरे एक एक कोश रोज चाले। दोऊ भाई निर्भय अनेक क्रीड़ाके करणहारे नर्मदा नदी पहुचे। जाके तट महारमणीक प्रचुर तृणनिके समूह, अर सघनता धरे महा छायाकारी अनेक वृक्ष फल पुष्पादिकरि शोभित, अर याके समीप पर्वत, ऐसे स्थानकूं देख दोऊ भाई वार्ता करते भए-यह वन अति सुन्दर,अर नदी सुन्दर,ऐसा कहकर रमणीक वृक्षकी छायाविषैं सीता-सहित तिष्टे। क्षणएक तिष्ठकर तहांके रमणीक स्थानक निरख कर जलक्रीड़ा करते भए। बहुरि महामिष्ट आरोग्य पक्व फल फूलनिके आहार बनाए,सुखकी है कथा जिनके, तहां रसोईके उपकरण अर वासन माटीके, अर बांसनिके नाना प्रकार तत्काल बनाए, महास्वादिष्ट सुन्दर सुगंध, आहार वनके धान सीताने तैयार किए, भोजनके समय दोऊ वीर मुनिके आयवेके अभिलाषी द्वारापेक्षणको खडे, ता समय दो चारण मुनि आए, सुगुप्ति अर गुप्ति हैं नाम जिनके,ज्योति-पटलकर संयुक्त है शरीर जिनका, अर सुन्दर है दर्शन जिनका,

मति श्रुति अवधि तीन ज्ञान विराजमान, महाव्रतके धारक, परम तपस्वी सकल वस्तुकी अभिलाषा रहित, निर्मल हैं चित्त जिनके, मासोपवासी महाधीर वीर शुभ चेष्टाके धरणहारे, नेत्रनिकूं आनन्दके कर्ता, शास्त्रोक्त आचारकर संयुक्त है शरीर जिनका, सो आहारकूं आए सो दूरतैं सीताने देखे। तब महा हर्षके भरे हैं नेत्र जाके अर रोमांचकर संयुक्त है शरीर जाका, पतिसों कहती भई—हे नाथ, ! हे नर-श्रेष्ठ ! देखहु ! देखहु ! तपकर दुर्बल शरीर दिगंबर कल्याणरूप चारण-युगल आए। तब राम कही हे प्रिये ! हे पंडिते ! हे सुन्दर-मूर्ते ! वे साधु कहां हैं ? हे रूप आभरणकी धरणहारी, धन्य हैं भाग्य तेरे, तूने निर्ग्रन्थ-युगल देखे, जिनके दर्शनतैं जन्म जन्मके पाप जाय हैं,भक्तिवंत प्राणीके परम कल्याण होय, जब या भांति रामने कही तब सीता कहती भई—ये आए, ये आए। तब ही दोनो मुनि रामके दृष्टि परे, जीवदयाके पालक, ईर्यासमिति सहित, समाधानरूप हैं मन जिनके। तब श्रीरामने सीता-सहित सन्मुख जाय नमस्कार कर महा भक्तियुक्त श्रद्धा-सहित मुनिकूं आहार दिया, आरणी भैंसोंका, अर वनकी गायोंका दुग्ध, अर छुहारे गिरी दाख नाना प्रकारके वनके धान्य, सुंदर घी, मिष्टान्न इत्यादि मनोहर वस्तु विधिपूर्वक तिनकरि मुनिकूं पारणा करावते भए। ते मुनि भोजनके स्वादके लोलुपतासूं रहित निरंतराय आहार करते भए। जब रामने अपनी स्त्री सहित भक्तिकर आहार दिया, तब पंचाश्चर्य भए—रत्ननिकी वर्षा, पुष्पवृष्टि, शीतल मंद सुगंध पवन, अर दुंदुभी बाजे,जय जयकार शब्द। सो जा समय रामके मुनिनिका आहार भया,ता समय वनविषें एक गृध पक्षी अपनी इच्छानुसार वृक्षपर तिष्ठै था, सो अतिशयकर संयुक्त मुनिनकूं देख अपने पूर्वभव जानता भया कि कईएक भव पहिले मैं मनुष्य हुता, प्रमादी अविवेककर जन्म निष्फल खोया, तप संयम न किया, धिक्कार मो मूढ-बुद्धिकूं। अब मैं पापके उदयकरि खोटी योनिविषें आय पड्या,कहा उपाय करूं ? मोहि मनुष्यभवविषें पापी जीवनि भरमाया, वे कहिबेके मित्र, अर महाशत्रु। सो उनके संगमें धर्मरत्न तज्या, अर गुरुनिके वचन उलंघ महापाप आचर्या। मैं मोहकर अंध अज्ञान-तिमिर कर धर्म न पहिचान्या। अब अपने कर्म चितार उरविषें जलूं हूं। बहुत चिंतवनकर कहा, दुखके निवारनेके अर्थ इन साधुनिकी शरण गहूं, ये सर्वसुखके दाता,इनसूं मेरे परम अर्थकी प्राप्ति निश्चय सेती होयगी। या भांति पूर्वभवके चितारनेतैं प्रथम तो परम शोककूं प्राप्त भया। बहुरि साधुनिके दर्शनतैं तत्काल परम हर्षित होय अपनी दोऊ पांख हलाय आंसुनिकर भरे हैं नेत्र जाके, महा विनयकर मण्डित पक्षी वृक्षके अग्रभागतैं भूमिविषैं पड़्या, सो महामोटा पक्षी ताके पड़नेके शब्दकरि हाथी अर सिंहादि वनके जीव भयकर भाग गए, अर सीता भी आकुलचित्त भई। देखो, यह ढीठ पक्षी मुनिनिके चरणविषें कहांसूं आय पड़्या, कठोर शब्दकर घना ही निवार्या। परंतु वह पक्षी मुनिनिके चरणनिके धोवनविषैं आय पड़्या, चरणोदकके

प्रभाव कर क्षणमात्रविषैं ताका शरीर रत्नोंकी राशि-समान नाना प्रकारके तेजकर मण्डित होय गया, पांव तो स्वर्णकी प्रभाको धरते भए, दोऊ पांव वैडूर्यमणि-समान होय गए, अर देह नाना प्रकारके रत्ननिकी छविको धरता भया, अर चूंच मूंगा-समान आरक्त भई। तब यह पक्षी आपकूं अर रूपकूं देख परम हर्षकूं प्राप्त होय मधुर नादकर नृत्य करवेकूं उद्यमी भया। देवनिके दुन्दुभी समान है नाद जाका, नेत्रनितैं आनन्दके अश्रुपात करता ऐसा शोभता भया, जैसा मोर, मेहके आगमनविषैं नृत्य करै तैसा मुनिके आगै नृत्य करता भया। महा मुनि विधिपूर्वक पारणाकर वइर्यमणि-समान शिलापर विराजे। पद्मराग मणि-समान हैं नेत्र जाके ऐसा पक्षी पांख संकोच मुनिनिके पावोंको प्रणामकर आगै तिष्ठा। तब श्रीराम फूले कमल समान हैं नेत्र जिनके, पक्षीकूं प्रकाशरूप देख आप परम आश्चर्यकूं प्राप्त भए। साधुनिके चरणारविंदको नमस्कारकर पूछते भए। कैसे हैं साधु, अठाईस मूलगुण चौरासी लाख उत्तरगुण, वेही हैं आभूषण जिनके। वारंवार पक्षीकी ओर निरख राम मुनिसूं कहते भए–हे भगवन्! यह पक्षी प्रथम अवस्थाविषैं महा विरूप अंग हुता सो क्षणमात्रविषैं सुवर्ण अर रतननिके समूहकी छवि धरता भया, यह अशुचि सर्व मांसका आहारी दुष्ट गृद्धपक्षी आपके चरणनिके निकट तिष्ठकर महाशांत भया सो कौन कारण? तब सुगुप्ति नामा मुनि कहते भए--हे राजन्! पूर्वं या स्थल-विषै दंडकनामा सुन्दर देश हुता, जहां अनेक ग्राम नगर पट्टण संवाहण मटब घोष खेट कर्वट द्रोणमुख हुते। वाड़िकर युक्त, सो ग्राम, कोट खाई दरवाजेनिकर मंडित सो नगर, अर जहां रत्ननिकी खान सो पट्टण, पर्वतके ऊपर सो संवाहन अर जाहि पांचसौ ग्राम लागे सो मटंब, अर गायनिके निवास गुवालनिके आवास सो घोष, अर जाके आगे नदी सो खेट, अर जाके पीछे पर्वत सो कर्वट, अर समुद्रके समीप सो द्रोणमुख इत्यादि अनेक रचनाकर शोभित, तहां कर्णकुंडल नामा नगर महामनोहर ताविषैं या पक्षीका जीव दंडकनामा राजा हुता, महा प्रतापी प्रचंड उदय धरे पराक्रम संयुक्त-भग्न किये हैं शत्रुरूप कंटक जानैं, महा मानी बड़ी सेनाका स्वामी सो या मूढने अधर्मकी श्रद्धाकर पापरूप मिथ्या शास्त्र सेया, जैसैं कोई घृतका अर्थी जलकूं मथे। याकी स्त्री दंडीनिकी सेवक हुती तिनसों अति अनुरागिणी, सो वाके संगकर यह भी ताके मार्गकूं धरता भया स्त्रीनिके वश हुवा पुरुष कहा कहा न करै। एक दिवस यह नगरके बाहिर निकस्या, सो वनविषैं कायोत्सर्ग धरे ध्यानारूढ मुनि देखे। तब या निर्दईने मुनिके कंठविषैं मूवा सर्प डारया। कैसा हुता यह? पाषाण समान कठोर हुता चित्त जाका, सो मुनि ध्यान धरे मौनसूं तिष्ठे, अर यह प्रतिज्ञा करी, जौ लग कोई मेरे कंठतैं सर्प दूर न करैं तोलग मैं हलन-चलन नाहीं करूं, योगरूप ही रहूं। सो काहूने सर्प दूर न किया, मुनि खड़े ही रहे। बहुरि कैयक दिननिविषैं राजा ताही मार्ग गया। ताही समय काहू भले मनुष्यने सांप काढ्या अर मुनिके

पास बैठ्या हुता सो राजा वा मनुष्यकूं पूंछा जो मुनिके कंठतैं सांप कौन काढ्या, अर कब काढ्या ? तब वाने कही—हे नरेंद्र किसी नरकगामीने ध्यानारूढ मुनिके कंठविषैं मूवा सर्प डारया हुता, सो सर्पके संयोगसे साधुका शरीर अतिखेद-खिन्न भया,इनके तो कोई उपाय नहीं। आज सर्प मैंने काढ्या है। तब राजा मुनिको शांतस्वरूप कषायरहित जान प्रणामकर अपने स्थानक गया। उस दिनसे मुनियोंकी भक्तिविषैं अनुरागी भया और किसीकूं उपद्रव न करै। तब यह वृत्तांत रानी-ने दंडियोंके मुखसे सुना कि राजा जिनधर्मका अनुरागी भया,तब या पापिनीने क्रोधकर मुनियोंके मारनेका उपाय किया। जे दुष्ट जीव हैं वे अपने जीनेका भी यत्न तज पराया अहित करें। सो पापिनीने अपने गुरुको कहा--तुम निर्ग्रंथ मुनिका रूपकर मेरे महलमें आवो और विकार चेष्टा करहु। तब याने याही भांति करी। सो राजा यह वृत्तांत जानकर मुनियोंसे क्रुद्ध भया और मंत्री आदि दुष्ट मिथ्यादृष्टि सदा मुनियोंकी निन्दा ही करते। अन्य भी और जे क्रूरकर्मी मुनियोंके अहितु थे जिन्होंने राजाकूं भरमाया। सो पापी राजा मुनियोंको घानीविषैं पेलिवे की आज्ञा करता भया, आचार्यसहित सर्व मुनि घानीमें पेले। एक साधु बहिर्भूमि गया पीछे आवता हुता सो किसी दयावानने कही अनेक मुनि पापी राजाने यंत्रमें पेले हैं तुम भाग जावो,तुम्हारा शरीर धर्म-का साधन है, सो अपने शरीरकी रक्षा करहु। तब यह समाचार सुन संघके मरणके शोककर चुभी है दुःखरूप शिला जाके क्षणएक वज्रके स्तंभ-समान निश्चल होय रहा। बहुरि न सहा जाय ऐसा दुःख ताकर क्लेश रूप भया। सो मुनिरूप जो पर्वत उसकी समभावरूप गुफासे क्रोधरूप केसरी सिंह निकस्या, जैसैं आरक्त अशोकवृक्ष होय, तैसैं मुनिके नेत्र आरक्त भए,तेजकर आकाश संध्या-के रंगसमान होय गया,कोप कर तप्तायमान जो मुनि ताके सर्व शरीरविषैं पसेवकी बूंद प्रकट भई। फिर कालाग्नि समान प्रज्वलित अग्नि-पूतला निकस्या,सो धरती आकाश अग्निरूप होय गए,लोक हाहाकार करते मरणकूं प्राप्त भए, जैसैं बांसोंका वन बलैं तैसैं देश भस्म होय गया। न राजा, न अंतःपुर,न पुर, न ग्राम,न पर्वत, न नदी,न वन,न कोई प्राणी कुछ भी देशमैं न बच्या। महा ज्ञान वैराग्यके योगकर बहुत दिनोंमें मुनिने समभावरूप जो धन उपार्ज्या हुता,सो तत्काल क्रोधरूप रिपुने हरा। दंडक देशका दंडक राजा पापके प्रभावकर प्रलय भया और देश प्रलय भया। सो अब यह दंडक वन कहावै है। कैयक दिन तो यहां तृण भी न उपज्या। फिर घने काल पीछे मुनियोंका विहार भया, तिनके प्रभावकरि वृक्षादिक भए। यह वन देवोंको भी भयंकर है, विद्याधरोंकी क्या बात ? सिंह व्याघ्र अष्टापदादि अनेक जीवोंसे भरया और नाना प्रकारके पक्षियोंकर शब्दरूप है और अनेक प्रकारके धान्यसे पूर्ण है। वह राजा दंडक महा प्रबल शक्तिका धारक हुता सो अपराधकर नरक तिर्यंचगतिविषैं बहुत काल भ्रमण-कर यह गृद्ध पक्षी भया। अब इसके पापकर्मकी निवृत्ति भई, हमकूं देख पूर्वभव स्मरण

भया। ऐसा जान जिन-आज्ञा मान संसार-शरीर-भोगतैं विरक्त होय धर्मविषै सावधान होना। परजीवोंका जो दृष्टांत है सो अपने शांत-भावकी उत्पत्तिका कारण है या पक्षीकूं अपनी विपरीत चेष्टा पूर्वभवकी याद आई है सो कंपायमान है। पक्षीपर दयालु होय मुनि कहते भए--हे भव्य! अब तू भय मत करै, जा समय जैसी होनी होय, सो होय; रुदन काहेको करै है, होनहारके मेटबे समर्थ कोऊ नाहिं। अब तू विश्रामकूं पाय सुखी होय, पश्चात्ताप तज, देख कहां यह वन और कहां सीतासहित श्रीरामका आवना और कहां हमारा वनचर्याका अवग्रह जो वनमें श्रावकके आहार मिलेगा तो लेवेंगे! और कहां तेरा हमको देख प्रतिबुद्ध होना, कर्मोंकी गति विचित्र है, कर्मोंकी विचित्रतासे जगतकी विचित्रता है। हमने जो अनुभव्या और सुना देखा है सो कहें हैं-पक्षीके प्रतिबोधवेके अर्थ रामका अभिप्राय जान सुगुप्ति मुनि अपना और दूजा गुप्ति मुनि दोनोंका वैराग्यका कारण कहते भए—एक वाराणसी नगरी वहां अचल नामा राजा विख्यात उसके रानी गिरदेवी गुणरूप रत्नोंकर शोभित, उसके एक दिन त्रिगुप्तिनामा मुनि शुभ चेष्टाके धरणहारे आहारके अर्थ आए। सो रानीने परम श्रद्धाकर तिनकूं विधिपूर्वक आहार दिया। जब निरंतराय आहार हो चुका तब रानीने मुनिकूं पूछी—हे नाथ! यह मेरा गृहवास सफल होयगा या नहीं। भावार्थ—मेरे पुत्र होगा या नहीं। तब मुनि वचनगुप्ति भेद इसके संदेह निवारणके अर्थ आज्ञा करी, तेरे दोय पुत्र विवेकी होंयगे सो हम दोय पुत्र त्रिगुप्ति मुनिकी आज्ञा भए पीछे भए इसलिए सुगुप्ति और गुप्ति हमारे नाम माता पिताने राखे। सो हम दोनों राजकुमार लक्ष्मीकर मंडित सर्वकलाके पारगामी लोकोंके प्यारे नाना प्रकारकी क्रीडा कर रमते घरमें तिष्ठे।

अथानन्तर एक और वृत्तांत भया, गन्धवती नामा नगरी वहांके राजाका पुरोहित सोम उसके दोय पुत्र एक सुकेतु दूजा अग्निकेतु, तिनविषैं अतिप्रीतिसों सुकेतुका विवाह भया, विवाहकर यह चिन्ता भई कि कभी इस स्त्रीके योगकर हम दोनों भाइयोमें जुदायगी न होय। फिर शुभकर्मके योगसे सुकेतु प्रतिबुद्ध होय अनन्तवीर्यस्वामीके समीप मुनि भया और लहुरा भाई अग्निकेतु भाईके वियोगकर अत्यंत दुखी होय वाराणसीविषैं उग्र तापस भया। तब बड़ा भाई सुकेतु जो मुनि भया हुता सो छोटे भाईकूं तापस भया जान संबोधवेके अर्थ आयवेका उद्यमी भया गुरुपै आज्ञा मांगी। तब गुरुने कहा तू भाईको संबोधा चाहै है तो यह वृत्तान्त सुन। तब इसने कहा, हे नाथ! वृत्तान्त क्या, तब गुरुने कही वह तुमसों मत पक्षका वाद करेगा और तुम्हारे वादके समय एक कन्या गंगाके तीर तीन स्त्रियों सहित आवेगी। गौर है वर्ण जाका, नाना प्रकारके वस्त्र पहिरे, दिनके पिछले पहिर आवेगी, तो इन चिह्नोंकर जान तू भाईसे कहियो इस कन्याका कहा शुभ-अशुभ होनहार है, सो कहो। तब वह विलखा होय तोकूं कहेगा मैं तो

न जानू, तुम जानो हो तो कहो ? तब तू कहियो इस पुरविषैं एक प्रवर नामा श्रेष्ठी धनवंत उसकी यह रुचिरा नामा पुत्री है सो आजतैं तीसरे दिन मरणकर कंबर ग्रामविषैं विलास नामा कन्याके पिताका मामा उसके छेली होयगी, ताहि ल्याली मारेगा, सो मरकर गाडर होयगी। फिर भैंस, भैंससे उसी विलासके विधुरा नामा पुत्री होयगी। यह वार्ता गुरु कही, तब सुकेतु सुनकर गुरुकूं प्रणामकर तापसीनिके आश्रम आया। जा भांति गुरु कही हुती ताही भांति तापससों कही और ताही भांति भई। वह विधुरा नामा विलासकी पुत्रीकूं प्रवर नामा श्रेष्ठी परणे लाग्या, तब अग्निकेतु कही यह तेरी रुचिरा नामा पुत्री सो मर कर अजा गाडर भैंस होय तेरे मामाके पुत्री भई, अब तू याहि परनै सो उचित नाहीं, और विलासकूं भी सर्व वृत्तांत कहा, कन्याके पूर्वभव कहे, सो सुनकर कन्याकूं जातिस्मरण भया। कुटुंबसे मोह तज सब सभाकूं कहती भई--यह प्रवर मेरा पूर्वभवका पिता है सो ऐसा कह आर्यिका भई और अग्निकेतु तापस मुनि भया। यह वृत्तांत सुनकर हम दोनों भाइयोंने महा वैराग्यरूप होय अनंतवीर्यस्वामीके निकट जनेंद्रव्रत अंगीकार किए। मोहके उदयकर प्राणियोंके भव-वनके भटकावनहारे अनेक अनाचार होय हैं। सद्गुरुके प्रभावकर अनाचारका परिहार होय है, संसार असार है। मातापिता बांधव मित्र स्त्री संतानादिक तथा सुख दुख सब ही विनश्वर हैं ऐसा सुनकर पक्षी भव-दुखसे भयभीत भया, धर्म-ग्रहणकी वांछा कर वारंवार शब्द करता भया। तब गुरु कही-हे भद्रे ! तू भय मत कर, श्रावकके व्रत लेवो, जाकर फिर दुखकी परंपरा न पावै अब तू शांत भाव धर, काहू प्राणीकूं पीडा मत करै, अहिंसा व्रत धर, मृषा वाणी तज, सत्यव्रत आदर, परवस्तुका ग्रहण तज, परदारा तज, तथा सर्वथा ब्रह्मचर्य भज, तृष्णा तज, सन्तोष भज, रात्रि-भोजनका परिहार कर, अभक्ष आहारका परित्याग कर, उत्तम चेष्टाका धारक होहु और त्रिकाल सन्ध्याविषैं जिनेंद्रका ध्यान धरहु। हे सुबुद्धि ! उपवासादि तपकर नानाप्रकारके नियम अंगीकार कर, प्रमाद रहित होय इंद्रियां जीत साधुवोंकी भक्तिकर देव अरहंत, गुरु निर्ग्रंथ, दयामयी धर्मका निश्चय कर। या भांति मुनिने आज्ञा करी। तब पक्षी वारंवार नमस्कारकर मुनिके निकट श्रावकके व्रत धारता भया। सीताने जानी यह उत्तम श्रावक भया, तब हर्षित होय अपने हाथसे बहुत लड़ाया। ताहि विश्वास उपजाय दोऊ मुनि कहते भये--यह पक्षी तपस्वी शांत चित्त भया कहां जायगा, गहन वनविषैं अनेक क्रूर जीव हैं, या सम्यग्दृष्टि पक्षीकी तुम सदा काल रक्षा करनी। यह गुरुके वचन सुन सीता पक्षीके पालिवेरूप है चित्त जाका, अनुग्रहकर राख्या। राजा जनककी पुत्री या पक्षीकूं करकमलकर विश्वासती संती कैसी शोभती भई, जैसैं गरुडकी माता गरुडकूं पालती शोभै। श्रीराम लक्ष्मण पक्षीको जिनधर्मी जान अतिधर्मानुराग करते भये। अर मुनिनिकी स्तुतिकर नमस्कार करते भये। दोनों चारण मुनि आकाशके मार्ग गए, सो जाते कैसे शोभते भये मानों

धर्मरूप समुद्रकी कल्लोल ही हैं। अर एक वनका हाथी मदोन्मत्त वनमें उपद्रव करता भया। ताकूं लक्ष्मण वशकर तापर चढ़ रामपै आए। सो गजराज गिरिराज सारिखा ताहि देख राम प्रसन्न भए। अर वह ज्ञानी पक्षी मुनिकी आज्ञा प्रमाण यथाविधि अणुव्रत पालता भया, महाभाग्यके योगतैं राम लक्ष्मण सीताका ताने समीप पाया। इनके लार पृथिवीविषैं विहार करैं। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिककूं कहै हैं--हे राजन्! धर्मका माहात्म्य देखो, याही जन्मविषैं वह विरूप पक्षी अद्भुत रूप होय गया, प्रथम अवस्थाविषैं अनेक मांसका आहारी, दुर्गंध निंद्य पक्षी सुगन्धके भरे कंचन कलश समान महासुगन्ध सुन्दर शरीर होय गया, कहूइक अग्निकी शिखासमान प्रकाशमान, अर कहूइक वैडूर्यमणि समान, कहूइक स्वर्ण समान, कहूइक हरितमणिकी प्रभाकूं धरे शोभता भया, राम लक्ष्मणके समीप वह सुन्दर पक्षी श्रावकके व्रतधार महास्वाद संयुक्त भोजन करता भया। महाभाग्य पक्षीके जो श्रीरामकी संगति पाई। रामके अनुग्रहतैं अनेक चर्चाधार दृढव्रती महाश्रद्धानी भया। श्रीराम ताहि अति लडावें, चन्दनकर चर्चित है अंग जाका, स्वर्णकी किंकिणी कर मण्डित, रत्नकी किरणनिकर शोभित है शरीर जाका, ताके शरीरविषैं रत्न हेमकर उपजी किरणनिकी जटा तातैं याका नाम श्रीरामने जटायू धरया। राम लक्ष्मण सीताकूं यह अति प्रिय, जीती है हंसकी चाल जाने, महा सुन्दर मनोहर चेष्टाकूं धरैं, रामका मन मोहता भया, ता वनके और जे पक्षी वे देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह व्रती तीनों संध्याविषैं सीताके साथ भक्तिकर नम्रीभूत हुआ अरहन्त सिद्ध साधुनिकी वन्दना करैं। महा दयावान् जानकी जटायू पक्षी पर अतिकृपाकर सावधान भई, सदा याकी रक्षा करैं। कैसी है जानकी जिनधर्मतैं है अनुराग जाका। वह पक्षी महा शुद्ध अमृत समान फल, अर महा पवित्र सोधा अन्न, निर्मल छाना जल इत्यादि शुभ वस्तुका आहार करता भया। पक्षी अविधि छोड़ विधि रूप भया। श्रीभगवानकी भक्ति विषैं अति लीन जो जनककी पुत्री सीता जब ताल बजावे, अर राम लक्ष्मण दोऊ भाई तालके अनुसार तान लावें, तब यह जटायू पक्षी रवि-समान है कांति जाकी, परम हर्षित भया ताल अर तानके अनुसार नृत्य करैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं जटायुका व्याख्यान करनेवाला इकतालीसवां पर्व पूर्ण भया॥ ४१॥

बयालीसवां पर्व

[श्रीरामका दंडकवन-निवास]

अथानंतर पात्र दानके प्रभावकर राम लक्ष्मण सीता या लोकमें रत्न-हेमादि सम्पदाकर युक्त भए। एक सुवर्णमयी रत्न-जडित अनेक रचनाकर सुन्दर ताके मनोहर स्तंभ रमणीक

वाड़ि बीच विराजवेका सुंदर स्थानक अर जाके मोतिनकी माला लूंबे, सुंदर झालरी, सुगंध चंदन कपूरादि कर मंडित, जामें सेज आसन वादित्र वस्त्र सर्व सुगंध कर पूरित ऐसा एक विमान समान अद्भुत रथ बनाया, जाके चार हाथी जुड़ें ताविषैं बैठे राम, लक्ष्मण सीता जटायु सहित रमणीक वनविषैं विचरें, जिनको काहूंका भय नाहीं, काहूकी घात नाहीं, काहू ठौर एक दिन, काहू ठौर पंद्रह दिन, काहू ठौर एक मास, मनवांछित क्रीडा करैं। यहां निवास करैं, अक यहां निवास करैं असी है अभिलाषा जिनके, नवीन शिष्यकी इच्छाकी न्याई इनकी इच्छा अनेक ठौर विचरती भई। महा निर्मल जे नीझरने तिनकूं निरखते ऊंची नीची जायगा टार समभूमि निरखते, ऊंचे वृक्षनिकूं उलंघकर धीरे धीरे आगे गए अपनी स्वेच्छाकर भ्रमण करते ये धीर वीर सिंह समान निर्भय दंडकवनके मध्य जाय प्राप्त भए। कैसा है वह स्थानक, कायर-निकूं भयंकर, जहां पर्वत विचित्र शिखरके धारक जहां रमणीक निझरनें झरें। जहांते नदी निकसैं, जिनका मोतिनके हार-समान उज्ज्वल जल जहां अनेक वृक्ष वड़ पीपल, बहेड़ा पीलू सरसी, बड़े बड़े सरल वृक्ष धवल वृक्ष कदंब तिलक जातिके वृक्ष लोध वृक्ष अशोक जम्बूवृक्ष पाटल आम्र आंवला इमिली चम्पा कणडीर शालिवृक्ष ताड़वृक्ष प्रियंगू सप्तच्छद तमाल नाग-वृक्ष नन्दीवृक्ष अर्जुन जातिके वृक्ष पलाश वृक्ष मलयागिरि चन्दन केसरि भोजवृक्ष हिंगोटवृक्ष काला अगर अर सुफेद अगर कुन्दवृक्ष पद्माकवृक्ष कुरंजवृक्ष पारिजातवृक्ष मिजन्यां केतकी केवडा महुआ कदली खैर मदनवृक्ष नींबू खजूर छुहारे चारोली नारंगी बिजौरा दाडिम नारियल हरडें कैथ किरमाला विदारीकंद अगथिया करंज कटाली कूठ अजमोद कौंच कंकोल मिर्च लवंग इला-यची जायफल जावत्री चव्य चित्रक सुपारी तांबूलोंकी वेलि रक्तचन्दन बेत श्यामलता मीठासींगी हरिद्रा अरलू सहिंजडा कुड़ा वृक्ष पदमाख पिस्ता मौलश्री बीलवृक्ष द्राक्षा बदाम शाल्मलि इत्यादि अनेक जातिके वृक्ष तिनकर शोभित है। अर स्वयमेव उपजे नाना प्रकारके धान्य अर महारसके भरे फल अर पौंडे (सांठे) इत्यादि अनेक वस्तुनिकर वह वन पूर्ण, नाना प्रकारके वृक्ष नाना प्रकारकी बेल नानाप्रकारके फल फूल तिनकर वन अति सुन्दर, मानों दूजा नन्दनवन ही है सो शीतल मन्द सुगंध पवन कर कोमल कूंपल हालें, सो ऐसा सोहै मानों वह वन रामके आइवे कर हर्ष कर नृत्य करै है। अर सुगंध पवन कर उठी जो पुष्पकी रज, सो इनके अंगसूं आय लगै सो मानों अटवी आलिंगन ही करै है। अर भ्रमर गुंजार करै हैं, सो मानों श्रीरामके पधारने कर प्रसन्न भया वन गान ही करै है, अर महा मनोज्ञ गिरिनके नीझरनिके छांटेनिके उछरिवेके शब्द कर मानों हंसै ही हैं, अर भैरुण्ड जातिके पक्षी तथा हंस सारिस कोयल मयूर सिचांड कुरुचि सूवा मैना कपोत भारद्वाज इत्यादि अनेक पक्षिनके ऊंचे शब्द होय रहे हैं सो मानों श्रीराम लक्ष्मण सीताके आइवेका आदर ही करै हैं। अर मानों वे पक्षी कोमल वाणीकर

ऐसा वचन कहै हैं कि महाराज भले ही यहां आवो, अर सरोवरनि विषैं सफेद श्याम अरुण कमल फूल रहे हैं सो मानों श्रीरामके देखवेकूं कौतूहलतैं कमलरूप नेत्रनिकर देखवेकूं प्रवर्तें हैं। अर फलनिके भारकर नम्रीभूत जो वृक्ष सो मानों रामकूं नमैं हैं। अर सुगंध पवन चालैं है सो मानों वह रामके आयवेसूं आनन्दके स्वांस लेय है, सो श्रीराम सुमेरुके सौमनसवन समान वनकूं देखकर जानकीसूं कहते भए—कैसी है जानकी, फूले कमल समान हैं नेत्र जाके, पति कहै है—हे प्रिये! देखो यह वृक्ष बेलनिसूं लिपटे पुष्पनिके गुच्छनिकर मण्डित मानों गृहस्थ समान ही भासैं है। अर प्रियंगुकी बेल मौलश्रीके वृक्षसूं लगी कैसी शोभैं है जैसी जीवदया जिनधर्मसूं एकताकूं धरैं सोहै, अर यह माधवीलता पवन कर चलायमान जे पल्लव तिनके समीपके वृक्षनिकों स्पर्शे है जैसे विद्या विनयवानकूं स्पर्शे है। अर हे पतिव्रते! यह वनका हाथी मदकर आलसरूप हैं नेत्र जाके सो हथिनीके अनुरागका प्रेरया कमलनिके वनमें प्रवेश करैं है जैसे अविद्या कहिए मिथ्यापरणति ताका प्रेरा अज्ञानी जीव विषयवासनाविषैं प्रवेश करै, कैसा है कमलका वन? विकसि रहे जे कमल-दल तिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं। अर हे दृढ़व्रते! यह इंद्रनीलमणि समान श्यामवर्ण सर्प बिलतें निकसकर मयूरकूं देख भागकर पीछे बिलमें धसें है जैसै विवेकतैं काम भाग भव-वनमें छिपैं। अर देखो सिंह केशरी महा सिंह साहसरूप चरित्र इस पर्वतकी गुफामें तिष्ठा हुता सो अपने रथका नाद सुन निद्रा तज गुफाके द्वार आय निर्भय तिष्ठै है। अर वह बघेरा क्रूर है मुख जाका गर्वका भरया मांजरे नेत्रनिका धारक मस्तक पर धरी है पूंछ जाने, नखनिकर वृक्षकी जड़कूं कुचरैं। अर मृगनिके समूह दूबके अंकुर तिनके चरिवेकूं चतुर अपने बालकनिकूं बीचकर मृगीनि-सहित गमन करैं हैं सो नेत्रनिकर दूरहीसों अवलोकन करते अपने ताईं दयावंत जान निर्भय भए विचरैं हैं। यह मृग मरणसूं कायर सो पापी जीवनिके भयतैं अति सावधान है तुमकूं देख अति प्रीतिकूं प्राप्त भए विस्तीर्ण नेत्रकर वारंबार देखैं हैं। तुम्हारेसे नेत्र इनके नाहीं तातैं आश्चर्यकूं प्राप्त भए हैं। अर यह वनका शूकर अपनी दांतली कर भूमिकूं विदारता गर्वका भरया चला जाय है लग रह्या है कर्दम जाके। अर हे गजगामिनी! या वनविषैं अनेक जातिके गजनिकी घटा विचरैं है सो तुम्हारीसी चाल तिनकी नाहीं तातैं तिहारी चाल देख अनुरागी भए हैं। अर ये चीते विचित्र अंग अनेक वर्णकर शोभैं हैं जैसे इन्द्रधनुष अनेक वर्णकर सोहै है। हे कला-निधे! यह वन अनेक अष्टापदादि क्रूर जीवनिकर भरया है, अर अति सघन वृक्षनिकर भरया है, अर नाना प्रकारके तृणनिकर पूर्ण है, कहीं एक महासुंदर है जहां भयरहित मृगनिके समूह विचरैं हैं। कहूंइक महाभयंकर अति गहन है जैसे महाराजनिका राज्य अति सुंदर है तथापि दुष्टनिकूं भयंकर है। अर कहूंइक महा मदोन्मत्त गजराज वृक्षनिकूं उखाड़ैं हैं जैसैं मानी

पुरुष धर्मरूप वृक्षकूं उखाड़ै हैं, कहूंइक नवीन वृक्षनिके महासुगन्ध समूहपर भ्रमर गुंजार करैं हैं जैसैं दातानिके निकट याचक आवैं। काहू ठौर वन लाल होय रहा है। काहू ठौर श्वेत। काहू ठौर पीत, काहू ठौर हरित, काहू ठौर श्याम, काहू ठौर चंचल, काहू ठौर निश्चल, काहू ठौर शब्द सहित, काहू ठौर शब्द रहित, काहू ठौर गहन, काहू ठौर विरले वृक्ष, काहू ठौर सुभग, काहू ठौर दुर्भग, काहू ठौर विरस, काहू ठौर सरस, काहू ठौर सम, काहू ठौर विषम, काहू ठौर तरुण, काहू ठौर वृक्षवृद्धि, या भांति नाना विध भासै हैं। यह दण्डकवन विचित्र गति लिए है जैसैं कर्मनिका प्रपंच विचित्र गति लिए है। हे जनकसुते! जे जिनधर्मकूं प्राप्त भए हैं ते ही या कर्म-प्रपंचतैं निवृत्त होय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। जीवदया समान कोऊ धर्म नाहीं, जो आप समान परजीवनिकूं जान, सर्व जीवनिकी दया करैं, तेई भवसागरसूं तिरैं। यह दण्डक नामा पर्वत जाके शिखर आकाशसों लग रहे हैं। ताका नाम यह दण्डक वन कहिए। या गिरिके ऊंचे शिखर हैं, अर अनेक धातुकर भरथा है जहां अनेक रंगनिकर आकाश नाना रंग होय रह्या है। पर्वतमें नाना प्रकारकी औषधि हैं कैयक ऐसी जड़ी हैं जे दीपक समान प्रकाशरूप अंधकारकूं हरैं तिनकूं पवनका भय नाहीं, पवनमें प्रज्वलित रहें। और या गिरितैं नीझरने झरैं हैं जिनका सुन्दर शब्द होय है जिनके छांटोंकी बूंद मोतिनकी प्रभा धरैं है। या गिरिके स्थान कैयक उज्ज्वल कैयक नील कई आरक्त दीखै हैं अर अत्यन्त सुन्दर सोहै हैं, सूर्यकी किरण गिरिके शिखरके वृक्षनिके अग्रभागविषैं आय पड़ै हैं अर पत्र पवनकरि चंचल हैं सो अत्यन्त सोहै हैं, हे सुबुद्धिरूपिणि! या वनविषैं कहूंइक वृक्ष फूलनिके भारकर नम्रीभूत होय रहे हैं, अर कहूंइक नाना रंगके जे पुष्प तेई भए पट तिनकर शोभित हैं, अर कहूं इक मधुरशब्द बोलनहारे पक्षी तिनकरि शोभित है। हे प्रिये! या पर्वततैं यह क्रौंचरवा नदी जगत प्रसिद्ध निकसी है जैसे जिनराजके मुखतैं जिनवाणी निकसै, या नदीका जल ऐसा मिष्ट है जैसी तेरी चेष्टा मिष्ट है। हे सुकेशी! या नदीमें पवनकरि उठैं हैं लहर अर किनारेके वृक्षनिके पुष्प जलमें पड़ै हैं सो अति शोभित है। कैसी है नदी? हंसनिके समूह अर झागनिके पटलनिकरि अति उज्ज्वल है, अर ऊंचे शब्दकर युक्त है जल जाका, कहूंइक महा विकट पाषाणनिके समूह तिनकर विषम है, अर हजारां ग्राह मगर तिनकरि अति भयंकर है, अर कहूंइक अति वेगकर चला आवै है जलका जो प्रवाह ताकर दुर्निवार है, जैसें महा मुनिनके तपकी चेष्टा दुर्निवार है। कहूं इक शीतल वहै है, कहूं इक वेगरूप वहै है, कहूंइक काली शिला, कहूंइक श्वेत शिला, तिनकी कांतिकर जल नील श्वेत दुरंग होय रहा है, मानो हलधर-हरिका स्वरूप ही है। कहूंइक रक्त शिलानिके किरणकी समूहकर नदी आरक्त होय रही है, जैसे सूर्यके उदयकर पूर्व दिशा आरक्त होय। अर कहूंइक हरित पाषाणके समूहकर जलविषैं हरितता भासै है सो सिवालकी शंका करै पीछे जाय रहे हैं। हे कांते! यहां कमलनिके समूहविषैं मकरंदके लोभी भ्रमर निरन्तर भ्रमण कर हैं अर

मकरन्दकी सुगंधताकर जल सुगंध मय होय रहा है अर मकरन्दके रंगनिकर जल सुरंग होय रहा है परन्तु तिहारे शरीरकी सुगंधता समान मकरन्दकी सुगंधि नाहीं, अर तिहारे रंग समान मकरंदका रंग नाहीं, मानों तुम कमलवदनी कहावो हो ! सो तिहारे मुखकी सुगंधताहीसे कमल सुगंधित है अर यह भ्रमर कमलनिकूं तज तिहारे मुखकमलपर गुंजार कर रहे हैं। अर या नदीका जल काहू ठौर पाताल समान गंभीर है, मानों तिहारे मनकी-सी गम्भीरताकूं धरैं हैं, अर कहू इक नीलकमलनिकर तिहारे नेत्रनिकी छायाकूं धरैं है। अर यहां अनेक प्रकारके पक्षिनिके समूह नाना प्रकार क्रीडा करै हैं, जैसै राजपुत्र अनेक प्रकारकी क्रीडा करै। हे प्राणप्रिये ! या नदीके पुलिनकी वालू रेत अति सुन्दर शोभित है जहां स्त्री सहित खग कहिये विद्याधर, अथवा खग कहिए पक्षी आनंदकरि विचरै हैं ! हे अखंडव्रते ! यह नदी अनेक विलासनिकूं धरै समुद्रकी ओर चली जाय हैं जैसैं उत्तम शीलकी धरणहारी राजानिकी कन्या भरतारके परणवेकूं जाय, कैसे हैं भरतार ? महामनोहर प्रसिद्ध गुणके समूहकूं धर शुभ चेष्टा कर युक्त जगतविषै विख्यात हैं। हे दयारूपिनी ! इस नदीके किनारेके वृक्ष फल फूलनिकर युक्त नानाप्रकार पक्षिनिकर मंडित जलकी भरी कारी घटा समान सघन शोभाकूं धरैं है। या भांति श्रीरामचंद्रजी अति स्नेहके भरे वचन जनकसुतासूं कहते भए, परम विचित्र अर्थकूं धरै। तब वह पतिव्रता अति हर्षके समूह करि भरी पतिसूं प्रसन्न भई परम आदरसूं कहती भई।

हे करुणानिधे ! यह नदी निर्मल है जल जाका, रमणीक हैं तरंग जाविषैं हंसादिक पक्षिनिके समूह कर सुंदर है, परंतु जैसा तिहारा चित्त निर्मल है, तैसा नदीका जल निर्मल नाहीं। अर जैसे तुम सघन अर सुगंध हो, तैसा वन नाहीं। अर जैसे तुम उच्च अर स्थिर हो, तैंसे गिरि नाहीं। अर जिनका मन तुममें अनुरागी भया है तिनका मन और ठौर जाय नाहीं। या भांति राजसुताके अनेक शुभ वचन श्रीराम भाई सहित सुनकर अतिप्रसन्न होय याकी प्रशंसा करते भए। कैसे हैं राम ? रघुवंशरूप आकाशविषैं चंद्रमा समान उद्योतकारी हैं, । नदीके तटपर मनोहर स्थल देख हाथिनिके रथसे उतर लक्ष्मण प्रथम ही नाना स्वादकूं धरै सुन्दर मिष्ट फल लाया अर सुगंध पुष्प लाया। बहुरि राम सहित जल क्रीडाका अनुरागी भया, कैसा है लक्ष्मण, गुणनिकी खान है मन जाका, जैसी जलक्रीडा इंद्र नागेन्द्र चक्रवर्ती करैं तैसी राम लक्ष्मणने करी। मानों वह नदी श्रीरामरूप कामदेवकूं देख रतिसमान मनोहर रूप धारती भई। कैसी है नदी, लहलहाट करती जे लहर तिनकी माला कहिए पंक्ति ताकरि मर्दित किए हैं श्वेत श्याम कमलनिके पत्र जाने, अर उठे हैं झाग जामें, भ्रमररूप हैं चूडा जाके, पक्षिनिके जे शब्द तिनकर मानो मिष्ट शब्द करैं हैं। वचनालाप करै है। राम जलक्रीडाकर कमलनिके वनविषैं छिप रहे बहुरि शीघ्र ही आए। जनकसुतासूं जलकेलि करते भए। इनकी चेष्टा देख

वनके तिर्यंच हू और तरफसे मन रोक एकाग्र चित्त होय इनकी ओर निरखते भए। कैसे हैं दोऊ वीर कठोरतासे रहित है मन जिनका, अर मनोहर है चेष्टा जिनकी, सीता गान करती भई। सो गानके अनुसार रामचंद्र ताल देते भए मृदंगनिकरि। अति सुंदर राम जलक्रीडाविषैं आसक्त अर लक्ष्मण चौगिरद फिरैं, कैसा है लक्ष्मण भाईके गुणनिविषै आसक्त है बुद्धि जाकी, राम अपनी इच्छा प्रमाण जलक्रीडाकर समीपके मृगनिकूं आनंद उपजाय जलक्रीडातैं निवृत भए, महाशस्त जे वनके मिष्टफल तिनकर क्षुधा निवारणकर लतामंडपविषैं तिष्ठे। जहां सूर्यका आताप नाहीं,ये देवनि सारिखे सुन्दर नानाप्रकारकी सुंदर कथा करते भए। सीतासहित अति आनन्दसूं तिष्ठे। कसी है सीता? जटायुके मस्तकपर हाथ है जाका, तहां राम; लक्ष्मणसूं कहैं हैं-हे भ्रात! यह नानाप्रकारके वृक्ष स्वादु फलकर संयुक्त, अर नदी निर्मल जलकी भरी, अर जहां लतानिके मंडप, अर यह दंडक नामा गिरि अनेक रत्ननिकर पूर्ण, यहां अनेक स्थानक क्रीडा करनेके हैं तातैं या गिरिके निकट एक सुन्दर नगर बसावें। अर यह वन अत्यंत मनोहर औरनितैं अगोचर, यहां निवास हर्षका कारण हैं। यहां स्थानककर हे भाई! तू दोऊ मातानिके लायवेकूं जाहु, वे अत्यंत शोकवंती हैं सो शीघ्र ही लावहु। अथवा तू यहां रह अर सीता तथा जटायु भी यहां रहै, मैं मातानिके ल्यायवेकूं जाऊंगा। तब लक्ष्मण हाथ जोड़ नमस्कारकर कहता भया। जो आपकी आज्ञा होयगी सो होयगा, तब राम कहते भए। अब तो वर्षाऋतु आई अर ग्रीष्म ऋतु गई। यह वर्षाऋतु अति भयंकर है जाविषै समुद्र समान गाजते मेघघटानिके समूह विचरैं हैं चालते अंजनगिरि समान, दशों दिशाविषैं श्यामता होय रही है। बिजुरी चमकै है बगुलानिकी पंक्ति विचरै है, अर निरंतर बादलनिके जल वरसैं है जैसैं भगवानके जन्मकल्याणकविषैं देव रत्न धारा बरसावैं। अर देख हे भ्रात! यह श्याम घटा तेरे रंगसमान सुंदर जलकी बूंद बरसावै हैं जैसैं तू दानकी धारा बरसावै। ये बादर आकाशविषैं विचरते विजुरीके चमत्कारकर युक्त बड़े बड़े गिरिनकूं अपनी धाराकर आछादते ध्वनि करते संते कैसे सोहै हैं जैसे तुम पीत वस्त्र पहिरे अनेक राजानिकूं आज्ञा करते पृथिवीकूं कृपादृष्टिरूप अमृतकी वृष्टिकर सींचते सोहो। हे वीर! ये कयक बादर पवनके वेगसे आकाशविषैं भ्रमैं हैं जैसे यौवन अवस्थाविषैं असंयमियोंका मन विषय-वासनाविषैं भ्रमै अर यह मेघ नाजके खेत छोड़ वृथा पर्वतकेविषैं बरषैं हैं जैसैं कोई द्रव्यवान पात्रदान अर करुणादान तज वेश्यादिक कुमार्गविषै धन खोवै। हे लक्ष्मण! या वर्षाऋतुविषैं अतिवेगसूं नदी बहै है अर धरती कीचसूं भर रही है। अर प्रचंड पवन बाजै है भूमिविषैं हरितकाय फैल रही है अर त्रसजीव विशेषतासे हैं, यां समयविषैं विवेकनिका विहार नाहीं। ऐसे वचन श्रीरामचंद्रके सुनकर सुमित्राका नन्दन लक्ष्मण बोला-हे नाथ! जो आप आज्ञा करोगे सोही मैं करूंगा। ऐसी

सुन्दर कथा करते दोऊ वीर महाधीर सुन्दर स्थानकविषैं सुखसूं वर्षाकाल पूर्ण करते भए। कैसा है वर्षाकाल? जासमय सूर्य नाहीं दीखै है ॥

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं दंडकवनविषैं निवास वर्णन करनेवाला बयालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥४२॥

तेतालीसवां पर्व

[रावणके भानजे शंबूकका सूर्यहास खड्ग-साधन और लक्ष्मण के हाथसे मरण]

अथानंतर वर्षाऋतु व्यतीत भई, शरदऋतुका आगमन भया, मानों यह शरदऋतु चंद्रमाकी किरणरूप बाणनिकरि वर्षारूप वैरीकूं जीत पृथिवीविषैं अपना प्रताप विस्तारती भई। दिशारूप जे स्त्री सो फूल रहे हैं फूल जिनके ऐसे वृक्षनिकी सुगंधताकर सुगंधित भई है अर वर्षा समयविषैं कारी घटानिकर जो आकाश श्याम हुता सो अब चंद्रकांतिकर उज्ज्वल शोभता भया मानों क्षीरसागरके जलकरि धोया है। अर बिजलीरूप स्वर्ण सांकलकर युक्त वर्षाकालरूपी गज पृथिवीरूप लक्ष्मीकूं स्नान कराय कहां जाता रहा। अर शरदके योगतैं कमल फूले तिनपर भ्रमर गुंजार करते भए, हंस क्रीडा करते भए, अर नदीनके जल निर्मल होय गए। दोऊ किनारे महासुंदर भासते भए मानो शरदकालरूप नायककूं पाय सरितारूप कामिनी कांतिकूं प्राप्त भई है। अर वन वर्षा अर पवनकर छूटे कैसे शोभते भए मानो निद्राकरि रहित जाग्रत दशाकूं प्राप्त भए हैं। सरोवरविषैं सरोजनिनिपर भ्रमर गुंजार करै हैं। अर वनविषैं वृक्षनिपर पक्षी नाद करैं हैं सो मानो परस्पर वार्ता ही करैं हैं। अर रजनीरूप नायिका नाना प्रकारके पुष्पनिकी सुगन्धता कर सुगंधित निर्मल आकाशरूप वस्त्र पहिरे चन्द्रमारूप तिलक धरे मानो शरदकालरूप नायकपै जाय है। अर कामीजननिकूं काम उपजावती केतकीके पुष्पनिकी रज कर सुगन्ध पवन चलै है। या भांति शरद ऋतु प्रवरती, सो लक्ष्मण बडे भाईकी आज्ञा मांग सिंह-समान महा पराक्रमी वन देखवेकूं अकेला निकस्या सो आगे गए। सुगन्ध पवन आई तब लक्ष्मण विचारते भए--यह सुगंध काहेकी है ऐसी अद्भुत सुगन्ध वृक्षनिकी न होय अथवा मेरे शरीरकी हू ऐसी सुगन्ध नाहीं, यह सीताजीके अंगकी सुगन्ध होय, तथा रामजीके अंगकी सुगंध होय, तथा कोऊ देव आया होय ऐसा संदेह लक्ष्मणकूं उपजा। सो यह कथा राजा श्रेणिक सुन गौतम स्वामीसूं पूछता भया--हे प्रभो! जो सुगन्धकर वासुदेवकूं आश्चर्य उपजा सो वह सुगन्ध काहेकी? तब गौतम गणधर कहते भए। कैसे हैं गौतम? संदेहरूप तिमिर दूर करवेकूं सूर्य हैं। सर्वलोककी चेष्टाकूं जानै हैं पापरूप रजके उडावनेको पवन हैं।

गौतमस्वामी कहै हैं--हे श्रेणिक ! द्वितीय तीर्थंकर श्री अजितनाथ तिनके समोशरणमें मेघवाहन विद्याधर रावणका बड़ा, शरणे आया, ताहि राक्षसनिके इंद्र महाभीमने त्रिकूटाचल पर्वतके समीप राक्षसद्वीप तहां लंका नामा नगरी सो कृपाकर दई अर यह रहस्यकी बात कही, हे विद्याधर ! सुनहु भरत क्षेत्रके दक्षिण दिशाकी तरफ लवणसमुद्रके उत्तरकी ओर पृथिवीके उदर विषैं एक अलंकारोदय नामा नगर है सो अद्भुत स्थानक है। अर नानाप्रकार रत्ननिकी किरणनिकरि मंडित है। देवनिकूं भी आश्चर्य उपजावै तो मनुष्यनिकी कहा बात, भूमिगोचरीनिकूं तो अगम्य है, अर विद्याधरकूं भी अतिविषम है, चिंतवनविषैं न आवै, सर्व गुणनिकरि पूर्ण है। जहां मणिनिके मंदिर हैं, परचक्रतैं अगोचर है, सो कदाचित तुमकूं अथवा तेरे सन्तानके राजनिकूं लंकाविषैं परचक्रका भय उपजै तो अलंकारोदयपुरविषैं निर्भय भए तिष्ठियो याहि पाताललंका कहै हैं। ऐसा कहकर महाभीम बुद्धिमान राक्षसनिके इंद्रने अनुग्रहकर रावणके बडेनिकूं लंका अर पाताललंका दई अर राक्षसद्वीप दिया सो यहां इनके वंशमें अनेक राजा भए। बड़े २ विवेकी व्रतधारी भए सो ये रावणके बड़े विद्याधर कुलविषैं उपजे हैं देव नाहीं, विद्याधर अर देवनिविषैं भेद है। जैसा तिलक अर पर्वत कर्दम अर चंदन, पाषाण अर रत्नविषै बड़ा भेद, देवनिकी शक्ति बड़ी कांति बड़ी अर विद्याधर तो मनुष्य हैं क्षत्री वैश्य शूद्र यह तीन कुल हैं। गर्भवासके खेद भुगतैं हैं विद्याधर साधनकर आकाशविषैं विचरैं हैं सो अढ़ाई द्वीप पर्यंत गमन करैं हैं, अर देव गर्भवाससे उपजै नाहीं महासुंदर स्वरूप, पवित्र, धातु उपधातुकर रहित, आंखनिकी पलक लगे नाहीं, सदा जाग्रत, जरारोग रहित, नवयावन तेजस्वी उदार सौभाग्यवंत महासुखी स्वभावहीतैं विद्यावंत अवधिनेत्र, चाहैं जैसा रूप करैं, स्वेछाचारी देव विद्याधरनिका कहा संबंध। हे श्रेणिक ! ये लंकाके विद्याधर राक्षसद्वीपविषैं बसैं, तातैं राक्षस कहाए। ये मनुष्य क्षत्रीवंशी विद्याधर हैं, देव हू नाहीं, राक्षस हू नाहीं, इनके वंशविषैं लंकाविषैं अजितनाथके समयतैं लेकर मुनिसुव्रतनाथके समय पर्यंत अनेक सहस्र राजा प्रशंसा करने योग्य भए। कई सिद्ध भए, कई सर्वार्थसिद्ध गए, कई स्वर्गविषैं देव भए, कई एक पापी नरक गए। अब ता वंशविषैं तीन खण्डको अधिपति जो रावण सो राज्य करै है ताकी बहिन चन्द्रनखा रूपकरि अनूपम सो महा पराक्रमवंत खरदूषणने परणी। वह चौदह हजार राजानिका शिरोमणि रावणकी सेनाविषैं मुख्य सो दिग्पाल समान अलंकारपुर जो पाताललंका वहां थाने रहे है, ताके संबूक अर सुन्द ये दो पुत्र रावणके भानजे, पृथिवीविषैं अतिमान्य भए। सो गौतम स्वामी कहै हैं। हे श्रेणिक ! माता पिताने संबूककूं बहुत मने किया। तथापि कालका प्रेरया सूर्यहास खड्ग साधिवेके अर्थ महाभयानक वनविषैं प्रवेश करता भया, शास्त्रोक्त आचारकूं आचारता संता सूर्यहास खड्गके साधिवेकूं उद्यमी भया। एक ही अन्नका आहारी, ब्रह्मचारी

जितेंद्रिय विद्या साधिवेकूं बांसके बीडेमें यह कहकर बैठा, कि जब मेरा पूर्ण साधन होयगा, तब ही मैं बाहिर आऊंगा, ता पहिली कोई बीडेमें आवेगा, अर मेरी दृष्टि पडेगा, तो ताहि मैं मारूंगा। ऐसा कह कर एकांत बैठा, सो कहां बैठा ? दंडकवनमें क्रौंचरवा नदीके उत्तर तीर वांसके बीडेमें बैठा, बारह वर्ष साधन किया खड्ग प्रकट भया। सो सात दिनविषैं यह न लेय ता खड्ग परके हाथ जाय अर यह मारा जाय। सो चन्द्रनखा निरंतर पुत्रके निकट भोजन लेय आवती सो खड्ग देख प्रसन्न भई अर पतिसूं जाय कही कि संबुकको सूर्यहास खड्ग सिद्ध भया। अब मेरा पुत्र मेरुकी प्रदक्षिणा कर तीन दिनमें आवेगा सो यह तो ऐसे मनोरथ करै, अर ता वनविषैं भ्रमता लक्ष्मण आया। हजारां देवनिकरि रक्षायोग्य खड्ग स्वभाव सुगंध अद्भुत रत्न सो गौतम कहै हैं। हे श्रेणिक ! वह देवोपनीत खड्ग महासुगंध दिव्य गंधादिकर लिप्त, कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी माला तिनकरि, युक्त, सो सूर्यहास खड्गकी सुगंध लक्ष्मणकूं आई, लक्ष्मण आश्चर्यकूं प्राप्त भया और कार्य तज सीधा शीघ्र ही बांसकी ओर आया, सिंहसमान निर्भय देखता भया। वृक्षनिकरि आच्छादित महाविषम स्थल जहां बेलनिके समूह अनेक जाल, ऊंचे पाषाण तहां मध्यविषैं समभूमि सुन्दर क्षेत्र, श्रीविचित्ररथमुनिका निर्वाणक्षेत्र, सुवर्णके कमलनिकरि पूरित, ताके मध्य एक वांसनिका बीडा ताके ऊपर खड्ग आय रहा है सो ताकी किरणके समूहकरि वांसनिका बीडा प्रकाशरूप होय रहा है। सो लक्ष्मणने आश्चर्यकूं पाय निशंक होय खड्ग लिया अर ताकी तीक्ष्णता जाननेके अर्थ बांसके बीडापर वाहिया सो संबूक सहित बांसका बीडा कट गया, अर खड्गके रक्षक सहस्रों देव लक्ष्मणके हाथविषैं खड्ग आया जान कहते भए तुम हमारे स्वामी हो, ऐसा कह नमस्कार कर पूजते भए।

अथानंतर लक्ष्मणकूं बहुत बेर लगी जान रामचंद्र सीतासूं कहते भए, लक्ष्मण कहां गया, हे भद्र ! जटायू तू उड़कर देख लक्ष्मण आवै है। तब सीता बोली हे नाथ ! वह लक्ष्मण आया, केसरकर चरचा है अंग जाका नाना प्रकारकी माला अर सुंदर वस्त्र पहिरे, अर एक खड्ग अद्भुत लिए आवै है सो खडगसूं ऐसा सोहै है जैसा केसरी सिंहसूं पर्वत शोभै। तब राम आश्चर्यकूं प्राप्त भया है मन जिनका अति हर्षित होय लक्ष्मणकूं उठकर उरसे लगाय लिया, सकल वृत्तांत पूछया। तब लक्ष्मण सर्व बात कही, आप भाई सहित सुखसे विराजे नाना प्रकारकी कथा करैं। अर संबूककी माता चंद्रनखा प्रतिदिन एक ही अन्नका भोजन लावती हुती सो आगे आय कर देखे तो वांसका बीडा कटा पड़ा है, तब विचारती भई जो मेरे पुत्रने भला न किया, जहां इतने दिन रहा अर विद्या सिद्ध भई ताही वीडेको काटा सो योग्य नाहीं। अब अटवी छोड कहां गया ? इत उत देखे तो अस्त होता जो सूर्य ताके मंडल समान कुंडल सहित सिर पड़ा है,ताहि देखकर मूर्च्छा आय गई। सो मूर्च्छा याका परम उपकार किया। नातर पुत्रके

मरण करि यह कहां जीवै ? बहुरि केतीक बेरमें याहि चेत भया, तब हाहाकार कर उटी। पुत्रका कटा मस्तक देख शोककर अतिविलाप किया, नेत्र आंसुनिसूं भर गए, अकेली वनमें कुरचीकी न्याई पुकारती भई—हा पुत्र! बारह वर्ष अर चार दिन यहां व्यतीत भए तैसैं तीन दिन और हू क्यों न निकसि गए ? तोहि मरण कहांते आया, हाय पापी काल मैं तेरा कहा बिगाड्या जो नेत्रनिका निधि पुत्र मेरा तत्काल विनास्या ? मैं पापिनी परभवमें काहूको बालक हता, सो मेरा बालक हता गया। हे पुत्र! आर्तिका मेटनहारा एक वचन तो मुखसूं कह। हे वत्स! आ, अपना मनोहर रूप मोहि दिखा। ऐसी माया रूप अमंगल क्रीडा करना तोहि उचित नाहीं। अब तक तैं माताकी आज्ञा कबहू न लोपी, अब निःकारण यह विनयलोप कार्य करना तोहि योग्य नाहीं, इत्यादिक विकल्पकर विचारती भई निःसंदेह मेरा पुत्र परलोककूं प्राप्त भया, विचारा कुछ और ही हुता, अर भया कुछ और ही, यह बात विचारमें न हुती सो भई। हे पुत्र! जो तू जीवता अर सूर्य-हास खडग सिद्ध होता तो जैसे चंद्रहासके धारक रावणके सन्मुख कोऊ नाहीं आय सकै हैं, तैसै तेरे सन्मुख कोऊ न आय सकता। मानों चंद्रहास मेरे भाईके हाथमैं स्थानक किया सो अपना विरोधी सूर्यहास ताहि तेरे हाथमें न देख सक्या। अर तू भयानक वनमें अकेला निर्दोष नियम-का धारी ताहि मारवेकूं जाके हाथ चले, सो ऐसा पापी खोटा वैरी कौन है ? जा दुष्टने तोहि हत्या। अब वह कहां जीवता जायगा। या भांति विलाप करती पुत्रका मस्तक गोदमें लेय चूमती भई, मूंगासमान आरक्त हैं नेत्र जाके। बहुरि शोक तज क्रोधरूप होय शत्रुके मारवेकूं दौड़ी, सो चली चली तहां आई, जहां दोऊ भाई विराजे हुते। दोऊ महा रूपवान मन मोहिवेके कारण तिनकूं देख याका प्रबल क्रोध तत्काल जाता रहा, तत्काल राग उपजा मनविषै चिंतवती भई, इन दोऊनिमें जो मोहि इच्छैं ताहि मैं सेवूं यह विचार तत्काल कामातुर भई, जैसैं कमलनिके वनविषै हंसनी मोहित होय, अर महा ह्रदविषैं भैंस अनुरागिनी होय, अर हरे धानके खेतविषैं हरिणी अभिलाषिणी होय, तैसैं इनविषैं यह आसक्त भई, सो एक पुन्नागवृक्षके नीचे बैठी रुदन करै, अतिदीन शब्द उचारै, वनकी रज कर धूसरा होय रहा है अंग जाका, ताहि देखकर राम-की रमणी सीता अति दयालुचित्त उठकर ताके समीप आय कहती भई। तू शोक मत कर, हाथ पकड़ ताहि शुभ वचन कह धैर्य बंधाय रामके निकट लाई, तब राम ताहि कहते भए—तू कान है ? यह दुष्ट जीवनिका भरा वन ताविषैं अकेली क्यों विचरै है ? तब वह कमल सरीखे हैं नेत्र जाके, अर भ्रमरकी गुंजार समान है वचन जाके सो कहती भई—हे पुरुषोत्तम! मेरी माता तो मरणकूं प्राप्त भई सो मोकूं गम्य नाहीं, मैं बालक हुती। बहुरि ताके शोककर पिता भी परलोक गया। सो मैं पूर्वले पापतै कुटुंबरहित दंडक वनविषैं आई, मेरे मरणकी अभिलाषा सो या भयानक वनमें काहूं दुष्ट जीवने न भखीं, बहुत दिननतैं या वनविषैं भटक रही हूं, आज मेरे

कोऊ पापकर्मका नाश भया सो आपका दर्शन भया। अब मेरे प्राण न छूटें, ता पहिले मोहि कृपा-कर इच्छहु, जो कन्या कुलवंती शीलवन्ती होय ताहि कौन न इच्छै सब ही इच्छैं। यह याके लज्जा-रहित-वचन सुनकर दोऊ भाई नरोत्तम परस्पर अवलोकनकर मौनसू तिष्ठे। कैसे है दोऊ भाई, सर्वशास्त्रनिके अर्थका जो ज्ञान सोई भया जल ताकरि धोया है मन जिनका, कृत्य अकृत्यके विवेकविषै प्रवीण, तब वह इनका चित्त निष्काम जान निश्वास नाख कहती भई मैं जावूं, तब राम लक्ष्मण बोले जो तेरी इच्छा होय सो कर। तब वह चली गई। ताके गए पीछे राम लक्ष्मण सीता आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर यह क्रोधायमान होय शीघ्र पतिके समीप गई। अर लक्ष्मण मनमें विचारता भया जो यह कौनकी पुत्री कौन देशविषै उपजी, समूहसे बिछुरी मृगी समान यहां कहांसूं आई। हे श्रेणिक! यह कार्य कर्तव्य, यह न कर्तव्य, याका परिपाक शुभ वा अशुभ, ऐसा विचार अविवेकी न जानें। अज्ञानरूप तिमिरकरि आच्छादित है बुद्धि जिनकी। अर प्रवीण बुद्धि महाविवेकी अविवेकतैं रहित है सो या लोकविषैं ज्ञानरूप सूर्यके प्रकाशकर योग्य अयोग्यकूं जान अयोग्यके त्यागी होय योग्य क्रियाविषैं प्रवृत्ते है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै शंबूकका वध वर्णन करनेवाला तेतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥४३॥

चवालीसवां पर्व

[रावण द्वारा सीताका हरण और रामका विलाप वर्णन]

अथानन्तर जैसै ह्रद का तट फूट जाय, अर जलका प्रवाह विस्तारकूं प्राप्त होय, तैसै खरदूषणकी स्त्रीका राम लक्ष्मणसे राग उपजा हुता सो उनकी अवांछातैं विध्वंस भया। तब शोकका प्रवाह प्रकट भया, अतिव्याकुल होय नाना प्रकार विलाप करती भई, आर्तिरूप अग्निकर तप्तायमान है अंग जाका जैसे बछडे बिना गाय विलाप करै, तैसे शोक करती भई, झरे हैं नेत्रनिके आंसू जाके सो विलाप करती पति देखी, नष्ट भया है धैर्य जाका, अर धूरकर धूसरा है अंग जाका, बिखर रहे हैं केशनिके समूह जाके, अर शिथिल होय रही है कटिमेखला जाकी, अर नखनिकर विदारे गये हैं वक्षस्थल कुच अर जंघा जाकी, सो रुधिरकरि आरक्त हैं अर आवरण-रहित, लावण्यता-रहित अर फट गई हैं चोली जाकी जैसे माते हाथीने कमलनिकूं दलमली होय तैसी याहि देख पति धैर्य बंधाय पूछता—भया हे कांते! कौन दुष्टने तोहि ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त करी सो कहो, वह कौन है जाहि आज आठवां चंद्रमा है, अथवा मरण ताके निकट आया है। वह मूढ़ पहाड़के शिखरपर चढ़ सोवै है, सूर्यसे क्रीड़ाकर अंधकूपमें

पड़ै है। दैव तासूं रूसा है, मेरी क्रोधरूप अग्नि विषैं पतंगकी नांई पड़ेगा। धिक्कार ता पापी अविवेकीकूं वह पशु समान अपवित्र, अनीति युक्त यह लोक परलोक भ्रष्ट, जानैं तोहि दुखाई, तू बड़वानलकी शिखा समान है, रुदन मत कर और स्त्रीनि सारिखी तू नाहीं। बड़े वंशकी पुत्री बड़े घर परणी आई है। अबही ता दुराचारीकूं हस्त तलते हण परलोककूं प्राप्त करूंगा जैसैं सिंह उन्मत्त हाथीकूं हणै। या भांति जब पतिने कही तब चंद्रनखा महा कष्ट थकी रुदन तज गदगद वाणीसूं कहती भई—अलखनिकर आछादित हैं कपोल जाके, हे नाथ! मैं पुत्रके देखवेकूं वनविषैं नित्य जाती हुती सो आज पुत्रका मस्तक कटा भूमिमें परया देख्या अर रुधिरकी धाराकर बांसोंका बीड़ा आरक्त देख्या। काहू पापीने मेरे पुत्रकूं मार खड़गरत्न लिया। कैसा है खड़ग देवनिकर सेवने योग्य सो मैं अनेक दुःखनिका भाजन भाग्य रहित पुत्रका मस्तक गोदमें लेय विलाप करती भई सो जा पापीने संबूककूं मारया हुता ताने मोहिसूं अनीति विचारी, भुजाकर पकड़ी, मैं कही मोहि छाड़, सो पापी नीचकुली छाड़ै नाहीं, नखनिकरि दांतननिकरि विदारी, निर्जन वनविषैं मैं अकेली वह बलवान पुरुष मैं अबला तथापि पूर्व पुण्यसे शील बचाय महाकष्टतैं मैं यहां आई। सर्व विद्याधरनिका स्वामी तीन खण्डका अधिपति तीनलोकविषैं प्रसिद्ध रावण काहूसे न जीत्या जाय सो मेरा भाई, अर तुम खरदूषण नामा महाराज दैत्यजातिके जे विद्याधर तिनके अधिपति सो मेरे भरतार तथापि मैं दैवयोगतैं या अवस्थाकूं प्राप्त भई। ऐसे चंद्रनखाके वचन सुन महा क्रोधकर तत्काल जहां पुत्रका शरीर मृतक पड़या हुता तहां गया सो मूवा देखकर अति खेदखिन्न भया। पूर्व अवस्थाविषैं पुत्र पूर्णमासीके चंद्रमा समान हुता सो महा भयानक भासता भया। खरदूषणने अपने घर आय अपने कुटुम्बसे मन्त्र किया। तब कैयक मंत्री कर्कशचित्त हुते वे कहते भए हे देव! जाने खड़ग रत्न लिया अर पुत्र हता ताहि जो ढीला छोड़ोगे तो न जानिए कहा करै, सो ताका शीघ्र यत्न करहु। अर कैएक विवेकी कहते भए हे नाथ! यह लघु कार्य नाहीं, सर्व सामन्त एकत्र करहु अर रावणपैंहू पत्र पठावहु। जिनके हाथ सूर्यहास खड़ग आया, ते समान पुरुष नाहीं, तातैं सर्व सामंत एकत्रकर जो विचार करना होय सो करहु शीघ्रता न करहु। तदि रावणके निकट तो तत्काल दूत पठाया दूत शीघ्रगामी अर तरुण, सो तत्काल रावण पै गया। रावण उत्तर पीछा आवै ताके पहिले खरदूषन अपने पुत्रके मरणकर महा द्वेषका भरया सामन्तनिसूं कहता भया, वे रंक विद्यावल-रहित भूमिगोचरी हमारी विद्याधरनिकी सेनारूप समुद्रके तिरवेकूं समर्थ नाहीं। धिक्कार हमारे सूरापनकूं, जो औरका सहारा चाहैं हैं। हमारी भुजा हैं वही सहाई हैं अर दूजा कौन? ऐसा कहकर महा अभिमानकूं धरै शीघ्रही मंदिरसूं निकस्या; आकाशमार्ग गमन किया तेजरूप हैं मुख जाका, सो ताहि सर्वथा युद्धकूं सन्मुख जान

चौदह हजार राजा संग चाले, सो दण्डक वनमें आए तिनकी सेनाके वादित्रनिके शब्द समुद्रके शब्द समान सीता सुनकर भयकूं प्राप्त भई। हे नाथ! कहा है, कहा है! ऐसे शब्द कह पतिके अंगसूं लगी जैसे कल्पबेल कल्पवृक्षसूं लगै। तब आप कहते भए हे प्रिये! भय मत-कर। याहि धैर्य बंधाय विचारते भए यह दुर्धर शब्द सिंहका है अक मेघका है अक समुद्रका है अक दुष्ट पक्षिनका है, अक आकाश पूर गया है? तब सीतासूं कहते भए—हे प्रिए! ए दुष्टपक्षी हैं जे मनुष्य अर पशुनिकूं लेजाए हैं धनुषके टंकारतै इनैं भगाऊं हूं, इतनेहीमें शत्रु-की सेना निकट आई, नाना प्रकारके आयुधनिकर युक्त सुभट दृष्टि परे, जैसै पवनके प्रेरे मेघ घटानिके समूह विचरैं, तैसैं विद्याधर विचरते भए। तब श्रीराम विचारी ये नंदीश्वर द्वीपकूं भगवानकी पूजाके अर्थ देव जाय हैं। अथवा बांसनिके बीड़में काहू मनुष्यकूं हतकर लक्ष्मण खड्ग रत्न लाया अर वह कन्या बन आई हुती सो कुशील स्त्री हुती,तातैं ये अपने कुटुम्बके सामंत प्रेरे हैं। तातैं अब परसेना समीप आए निश्चिंत रहना उचित नाहीं, धनुषकी ओर दृष्टि धरी, अर बक्तर पहिरनेकी तैयारी करी। तब लक्ष्मण हाथ जोड़ सिर नवाय विनती करता भया—हे देव! मोहि तिष्ठते आपकूं एता परिश्रम करना उचित नाहीं। आप राजपुत्रीकी रक्षा करहु, मैं शत्रुनिके सन्मुख जाऊं हूं। सो जो कदाचित भीड़ पड़ेगी तो मैं सिंहनाद करूंगा, तब आप मेरी सहाय करियो। ऐसा कहकर बक्तर पहर शस्त्र धार लक्ष्मण शत्रुनिके संमुख युद्धकूं चाल्या। सो वे विद्याधर लक्ष्मणकूं उत्तम आकारका धरनहारा वीराधिवीर श्रेष्ठ पुरुष देख जैसे मेघ पर्वतकूं बेढ़ै तैसैं बेढते भए। शक्ति मुद्गर सामान्य चक्र बरछी बाण इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षा करते भए सो अकेला लक्ष्मण सर्व विद्याधरनिके चलाए बाण अपने शस्त्रानकरि निवारता भया। अर आप विद्याधरनिकी ओर आकाशमें वज्रदंड बाण चला-वता भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं। हे राजन्! अकेला लक्ष्मण विद्याधरनिकी सेनाकूं बाणनिकरि ऐसा रोकता भया जैसे संयमी साधु आत्मज्ञानकर विषयवा-सनाकूं रोकें, लक्ष्मणके शस्त्रनिकरि विद्याधरनिके सिर रत्ननिके आभरणकर मंडित कुंडलनि-करि शोभित आकाशसे धरतीपर परें, मानों अम्बररूप सरोवरके कमल ही हैं, योधानिसहित पर्वत समान हाथी पड़े अर अश्वनिसहित सामंत पड़े, भयानक शब्द करते,होंठ डसते ऊर्ध्वगामी बाणनिकर वासुदेव बाहनसहित योधानिकूं पीडता भया, ताही समय पुष्पकविमानविषैं बैठ्या रावण आया,शम्बूकके मारणहारे पुरुषनिपर उपज्या है महाक्रोध जाकूं सो मार्गमें रामके समीप सीता महा सतीकूं तिष्ठती देखता भया सो देखकर महामोहकूं प्राप्त भया। कैसी है सीता, जाहि लखि रतिका रूप भी या समान न भासै मानो साक्षात् लक्ष्मी ही है, चंद्रमा समान सुन्दर वदन भिजयांके फूलसमान अधर, केसरीकी कटि समान कटि, लहलहात करते चंचल

कमलपत्र समान लोचन, अर महा गजराजके कुंभस्थलके शिखर समान कुच, नवयौवन सर्व गुणनिकर पूर्ण कांतिके समूहकरि संयुक्त है शरीर जाका, मानो कामके धनुषकी पिणच ही है अर नेत्र जाके कामके बाण ही हैं मानो नामकर्मरूप चितेरेने अपनी चपलता निवाहनेके निमित्त स्थिरताकर सुखसूं जैसी चाहिए तैसी बनाई है। जाहि लखे रावणकी बुद्धि हरी गई। महारूपके अतिशयकूं धरे जो सीता ताके अवलोकनसे शम्बूकके मारवेवारेपर जो क्रोध हुता सो जाता रह्या, अर सीता पर रागभाव उपज्या। चित्तकी विचित्र गति है, मनमें चिंतवता भया या विना मेरा जीतव्य कहां, अर जो विभूति मेरे घरमें है ताकरि कहा? यह अद्भुतरूप अनुपम महासुंदर नवयौवन, मोहि खरदूषणकी सेनामें आया कोई न जाने ता पहिले याहि हरकर घर लेजाऊं, मेरी कीर्ति चंद्रमा समान निर्मल सकल लोकमें विस्तर रही है सो छिपकर लेजानेमें मलिन न होय। हे श्रेणिक! अर्थी दोषकूं न गिनै, तातैं गोप्य लेजाइवेका यत्न किया। या लोकमें लोभ समान और अनर्थ नाहीं। अर लोभमें परस्त्रीके लोभसमान महा अनर्थ नाहीं। रावणने अवलोकनी विद्यासूं वृत्तान्त पूछ्या सो वाके कहेसे याके नाम कुल सब जानें, लक्ष्मण अनेकनिसूं लडनहारा एक युद्धमें गया, अर यह राम हैं। यह इनकी स्त्री सीता है अर जब लक्ष्मण गया तब रामसूं ऐसा कह गया जो मोपै भीड पड़ेगी तब सिंहनाद करूंगा तब तुम मेरी सहाय करियो सो वह सिंहनाद मैं करूं, तब यह राम धनुष बाण लेय भाईपै जायवैंगे अर मैं सीताकूं लेजाऊंगा जैसैं पक्षी मांसकी डलीकूं लेजाय अर खरदूषणका पुत्र तो इनने माराही हुता अर ताकी स्त्रीका अपमान किया सो वह शक्ति आदि शस्त्रनिकर दोऊ भाइनिकूं मारहीगा जैसैं महाप्रबल नदीका प्रवाह दोऊ ढाहे पाडे, नदीके प्रवाहकी शक्ति छिपी नाहीं है तैसैं खरदूषणकी शक्ति काहूतैं छिपी नाहीं, सब कोऊ जानैं हैं ऐसा विचारकर मूढमति कामकर पीड़ित रावण मरणके अर्थ सीताके हरणका उपाय करता भया। जैसै दुर्बुद्धिबालक विषके लेनेका उपाय करै॥

अथानंतर लक्ष्मण अर कटक-सहित खरदूषण दोऊमें महायुद्ध होय रहा है शस्त्रनिका प्रहार होय रहा है, अर इधर कपटकर रावणने सिंहनाद किया, तामें वारंबार राम राम यह शब्द किया, तब राम जानी कि यह सिंहनाद लक्ष्मण किया, सुनकर व्याकुल चित्त भए। जानी भाईपैं भीड़ पड़ी, तब रामने जानकीकूं कह्या—हे प्रिये! भय मत करहु क्षण एक तिष्ठ, ऐसा कह निर्मल पुष्पनिविषैं छिपाई अर जटायूकूं कहा—हे मित्र! यह स्त्री अबला जाति है याकी रक्षा करियो, तुम हमारे मित्र हो सहधर्मी हो ऐसा कहकर आप धनुष बाण लेय चाले, सो अपशकुन भए सो न गिने, महासतीकूं अकेली वनविषैं छोड़ शीघ्र ही भाईपैं गए। महारणमें भाईके आगैं जाय ठाढे रहे, ता समय रावण सीताकूं उठायवेकूं आया। जैसा माता हाथी कमलिनीकूं लेनै आवै, कामरूप दाहकर प्रज्वलित है मन जाका, भूल गई है समस्त धर्मकी

बुद्धि जाकी, सीताकूं उठाय पुष्पक विमान पर धरने लाग्या तब जटायुपक्षी स्वामीकी स्त्रीकूं हरता देख क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भया। उड़कर अतिवेगतैं रावणपर पड्या, तीक्ष्ण नखनिकी अणी अर चूंचसे रावणका उरस्थल रुधिरसंयुक्त किया, अर अपनी कठोर पांखनिकर रावणके वस्त्र फाड डाले, रावणका सर्व शरीर खेदखिन्न भया, तब रावणने जानी यह सीताकूं छुड़ावेगा, झंझट करेगा, तेतैं याका धनी आन पहुचेगा, सो याहि मनोहर वस्तुका अवरोधक जान महाक्रोधकर हाथकी चपेटसे मारया सो अति कठोर हाथकी घातसे पक्षी विह्वल होय पुकारता संता पृथिवीमें पड़ा मूर्च्छाकूं प्राप्त भया। तब रावण जनकसुताकूं पुष्पक विमानमें धर अपने स्थान ले चाल्या। हे श्रेणिक! यद्यपि रावण जानै है यह कार्य योग्य नाहीं। तथापि कामके वशीभूत हुवा सर्व विचार भूल गया। सीता महासती आपकूं परपुरुषकर हरी जान रामके अनुरागसे भीज रहा है चित्त जाका महा शोकवंती होय आर्ति रूप विलाप करती भई, तब रावण याहि निज भरतारविषैं अनुरक्त जान रुदन करती देख कछूइक उदास होय विचारता भया जो यह निरंतर रोवै है अर विरहकर व्याकुल है, अपने भरतारके गुण गावै है, अन्य पुरुषके संयोगका अभिलाष नाहीं सो स्त्री अवध्य हैं तातैं मैं मार न सकूं। अर कोऊ मेरी आज्ञा उलंघैं तो ताहि मारूं। अर मैं साधुनिके निकट व्रत लिया हुता जो परस्त्री मोहि न इच्छै ताहि मैं न सेऊं सो मोहि व्रत दृढ राखना, याहि कोऊ उपायकर प्रसन्न करूं? उपाय किए प्रसन्न होयगी जैसैं क्रोधवंत राजा शीघ्र ही प्रसन्न न किया जाय तैसैं हठवंती स्त्री भी वश न करी जाय। जो कछु वस्तु है सो यत्नतैं सिद्ध होय है मनवांछित विद्या, परलोककी क्रिया, अर मन भावनी स्त्री ये यत्नसे सिद्ध होय, यह विचारकर रावण सीताके प्रसन्न होयवेका समय हेरै, कैसा है रावण मरण आया है निकट जाके।

अथानंतर श्रीरामने बाणरूप जलकी धाराकर पूर्ण जो रणमंडल तामें प्रवेश किया। सो लक्ष्मण देख कर कहता भया। हाय! हाय! एते दूर आप क्यों आए--हे देव! जानकीकूं अकेली वनविषैं मेल आए। यह वन अनेक विग्रहका भरया है। तब राम कह्या मैं तेरा सिंहनाद सुन शीघ्र ही आया। तब लक्ष्मण कहा आप भली न करी, अब शीघ्र जहां जानकी है तहां जाहु, तब राम जानी, वीर तो महाधीर है, याहि शत्रुका भय नाहीं। तब याकूं कही तू परम उत्साह रूप है बलवान वैरीकूं जीत, ऐसा कहकर आप सीताकी उपजी है शंका जिनको, सो चंचल चित्त होय जानकीकी दिश चाले, क्षणमात्रमें आय देखे तो जानकी नाहीं, तदि प्रथम तो विचारी कदाचित् सुरतिभंग भया हू बहुरि निर्धारण देखें तो सीता नाहीं, तब आप हाय सीता ऐसा कह मूर्च्छा खाय धरती पर पड़े। सो धरती रामके विलापसे कैसी सोहती भई जैसैं भरतारके मिलापसे भार्या सोहै। बहुरि सचेत होय वृक्षनिकी ओर दृष्टि धर प्रेमके भरे अत्यंत आकुल होय

कहते भए--हे देवी ! तू कहां गई, क्यों न बोलहु, बहुत हास्यकरि कहा ? वृक्षनिके आश्रय बैठी होय तो शीघ्र ही आवहु, कोपकर कहा ? मैं तो शीघ्र ही तिहारे निकट आया। हे प्राण-बल्लभे ! यह तिहारा कोप हमें सुखका कारण नाहीं, या भांति विलाप करते फिरै हैं। सो एक नीची भूमिमें जटायुकूं कंठगत प्राण देख्या, तब आप पक्षीकूं देख अत्यंत खेदखिन्न होय याके समीप बैठ नमोकार मंत्र दिया, अर दर्शन ज्ञान चरित्र तप ये चार आराधना सुनाई, अरहंत सिद्ध साधु केवली प्रणीत धर्मका शरण लिवाया। पक्षी श्रावकके व्रतका धरणहारा श्रीरामके अनुग्रहकरि समाधिमरण कर स्वर्गविषैं देव भया, परंपराय मोक्ष जायगा, पक्षीके मरणके पीछे आप यद्यपि ज्ञानरूप हैं, तथापि चारित्रमोहके वश होय महाशोकवन्त अकेले वनविषैं प्रियाके वियोगके दाहकर मूर्छा खाय पडे, बहुरि सचेत होय महाव्याकुल महासती सीताकूं ढूंढते फिरैं, निराश भए दीन वचन कहैं। जैसे भूतके आवेशकर युक्त पुरुष वृथा आलाप करैं। छिद्र पाय महा भीम वनमें काहू पापीने जानकी हरी सो बहुत विपरीत करी, मोहि मार्‍या अब,जो कोई मोहि प्रिया मिलावै अर मेरा शोक हरै,ता समान मेरा परम बांधव नाहीं। हो वनके वृक्ष हो ! तुम जनकसुता देखी ? चंपाके पुष्प समान रंग, कमलदल लोचन, सुकुमार चरण, निर्मल स्वभाव, उत्तम चाल, चित्तको उत्सव करणहारी, कमलके मकरंद समान सुगंध मुखका स्वांस स्त्रीनिके मध्य श्रेष्ठ, तुमने पूर्व देखी होय तो कहो ! या भांति वनके वृक्षनिसूं पूछै हैं सो वे एकेंद्री वृक्ष कहा उत्तर देवैं। तब राम सीताके गुणनिकरि हर्‍या है मन जाका, बहुरि मूर्छा खाय धरतीपर पड़े बहुरि सचेत होय महा क्रोधायमान वज्रावर्त धनुष हाथमें लिया, फिणच चढाई, टंकोर किया, सो दशों दिशा शब्दायमान भई,सिंहनिकूं भयका उपजावनहारा नरसिंहने धनुषका नाद किया। सो सिंह भाग गए, गजनिके मद उतर गए। तब धनुष उतार अत्यंत विषादकूं प्राप्त होय बैठकर अपनी भूलका सोच करते भए, हाय हाय मैं मिथ्या, सिंहनादके श्रवणकर विश्वास मान वृथा, जाय प्रिया खोई, जैसे मूढ जीव कुश्रुतका श्रवण कर विश्वास मान अविवेकी होय शुभगतिकूं खोवै,सो मूढके खोयबेका आश्चर्य नाहीं,परंतु मैं धर्मबुद्धि वीतरागके मार्गका श्रद्धानी असमझ होय असुरकी मायामें मोहित हुवा, यह आश्चर्यकी बात है। जैसैं या भव वनविषैं अत्यंत दुर्लभ मनुष्यकी देह महापुण्य कर्मकर पाई, ताहि वृथा खोवे सो बहुरि कब पावे ? अर त्रैलोक्यविषैं दुर्लभ महारत्न ताहि समुद्रमें डारे, बहुरि कहां पावै ? तैसैं वनितारूप अमृत मेरे हाथसूं गया। बहुरि कौन उपायकरि पाइये ? या निर्जन वनविषैं कौनकूं दोष दूं। मैं ताहि तजकर भाईपै गया सो कदाचित कोपकर आर्या भई होय। अरण्य वनविषैं मनुष्य नाहीं कौनकूं जाय पूछैं, जो हमकूं स्त्रीकी वार्ता कहै। ऐसा कोई या लोकविषैं दयावान् श्रेष्ठ पुरुष है जो मोहि सीता दिखावै, वह महासती शीलवंती, सर्व पापरहित, मेरे हृदय-

कूं वल्लभ मेरा मनरूप मंदिर ताके विरहरूप अग्निकर जरै है सो ताकी वार्तारूप जलके दानकर कौन बुझावे ? ऐसा कहकर परम उदास, धरतीकी ओर है दृष्टि जाकी, बारंबार कछुइक विचार कर निश्चल होय तिष्ठे। एक चकवीका शब्द निकट ही सुन्या सो सुनकर ताकी ओर निरखा। बहुरि विचारी या गिरिका तट अत्यंत सुगंध होय रहा है सो याही ओर गई होय, अथवा यह कमलनिका वन है यहां कौतूहलके अर्थ गई होय, आगे याने यह वन देखा हुता सो स्थानक मनोहर है, नानाप्रकार पुष्पनिकर पूर्ण है, कदाचित तहां क्षणमात्र गई होय सो यह विचार आप वहां गए। वहां हू सीताकूं न देख्या, चकवी देखी, तब विचारी वह पतिव्रता मेरे बिना अकेली कहां जाय ? बहुरि व्याकुलताकूं प्राप्त होय जायकर पर्वतसूं पूछते भए--हे गिरिराज ! तू अनेक धातुनिकरि भरया है मैं राजा दशरथका पुत्र रामचंद्र तोहि पूछूं हू, कमल सारिखे नेत्र हैं जाके, सो सीता मेरे मनकी प्यारी हंसगामिनी सुंदर स्तनके भारकरि नम्रीभूत है अंग जाका किंदूरी समान अधर, सुंदर नितंब सो तुम कहू देखी, वह कहां है ? तब पहाड कहा जवाब देय, इनके शब्दसे गूंजा। तब आप जानी कछु याने स्पष्ट न कही,जानिए है याने न देखी, वह महासती काल प्राप्त भई, यह नदी प्रचंड तरंगनिकी धरनहारी अत्यंत वेगकूं धरै वहै है, अविवेकवंती ताने मेरी कांता हरी, जैसैं पापकी इच्छा विद्याकूं हरै। अथवा कोई क्रूर सिंह क्षुधातुर भख गया होय ? वह धर्मात्मा साधुवर्गनिकी सेवक सिंहादिकके देखते ही नखादिके स्पर्श बिना ही प्राण देय। मेरा भाई भयानक रणविषैं संग्राममें है सो जीवनेका संशय ही है। यह संसार असार है अर सर्व जीवराशि संशय रूप ही है, अहो यह बड़ा आश्चर्य है जो मैं संसारका स्वरूप जानूं हूं अर दुखतैं शून्य होय रहा हूं। एक दुख पूरा नहीं परै है, अर दूजा और आवै है, तातैं जानिए है यह संसार दुखका सागर ही है। जैसैं खोडे पगकूं खंडित करना, अर दाहे मारेको भस्म करना, अर डिगेकूं गर्तमें डारना, रामचंद्रजीने वनविषैं भ्रमणकर मृग सिंहादिक अनेक जंतु देखे, परंतु सीता न देखी तब अपने आश्रम आय अत्यंत दीन वदन धनुष उतार पृथिवीमें तिष्ठे। बारंबार अनेक विकल्प करते क्षणएक निश्चल होय मुखसे पुकारते भए। हे श्रेणिक ! ऐसे महापुरुषनिकूं भी पूर्वोपार्जित अशुभके उदयसूं दुख होय है ऐसा जानकर अहो भव्यजीव हो ! सदा जिनवरके धर्ममें बुद्धि लगावो, संसारतें ममता तजो। जे पुरुष संसारके विकारसूं परान्मुख होय अर जिनवचनकूं नाहीं आराधैं, वे संसारकेविषैं शरणरहित पापरूप वृक्षके कटुक फल भोगवैं हैं, कर्मरूप शत्रुके आतापसे खेद-खिन्न हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिका विषै सीताहरण व रामका विलाप वर्णन करनेवाला चवालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥४४॥

पैंतालीसवां पर्व

[रामके सीता-वियोग-जनित सन्तापका वर्णन]

अथानन्तर लक्ष्मणके समीप युद्धविषैं खरदूषणका शत्रु विराधितनामा विद्याधर अपने मंत्री अर शूरवीरनि सहित शस्त्रनिकर पूर्ण आया सो लक्ष्मणकूं अकेला युद्ध करता देख महानरोत्तम जान अपने स्वार्थकी सिद्धि इनमें जान प्रसन्न भया, महा तेजकर देदीप्यमान शोभता भया, वाहनतैं उतर गोड़े धरती लगाय हाथ जोड़ सीस नवाय अति नम्रीभूत होय परम विनयसूं कहता भया—हे नाथ ! मैं आपका भक्त हूं, कछुइक मेरी विनती सुनो, तुम सारिखेनिका संसर्ग हम सारिखेनिके दुखका क्षय करनहारा है, वाने आधी कही आप सारी समझ गए। ताके मस्तक पर हाथ धर कहते भए तू डरे मत, हमारे पीछे खडा रह, तब वह नमस्कार कर अति आश्चर्यकूं प्राप्त होय कहता भया हे प्रभो ! यह खरदूषण शत्रु महाशक्तिकूं धरै है, याहि आप निवारहु। अर सेनाके योधानिकरि मैं लडूंगा ऐसा कह खरदूषणके योद्धानिसूं विराधित लड़ने लाग्या। दौड़कर तिनके कटकपर पऱ्या, अपनी सेनासहित झलझलाट करै है आयुधनिके समूह ताके,विराधित तिनकूं प्रगट कहता भया--मैं राजा चंद्रोदयका पुत्र विराधित घने दिननिविषैं पिताका वैर लेवे आया हूं युद्धका अभिलाषी, अब तुम कहां जावो हो, जो युद्धमें प्रवीण हो तो खडे रहो, मैं ऐसा भयंकर फल दूंगा जैसा यम देय,ऐसा कहा तब तिन योद्धानिके अर इनके महा संग्राम भया अनेक सुभट दोऊ सेनानिके मारे गए। पियादे प्यादेनिसूं,घोड़निके असवार घोड़निके असवारनिसूं,हाथीनिके असवार हाथीनिके असवारनिसूं रथी रथीनिसूं परस्पर हर्षित होय युद्ध करते भए। वह वाहि बुलावे, वह वाहि बुलावे, या भांति परस्पर युद्धकर दशों दिशानिकूं बाणनिकरि आच्छादित करते भए।

अथानंतर लक्ष्मण अर खरदूषणका महायुद्ध भया जैसैं इंद्र असुरेंद्रके युद्ध होय, ता समय खरदूषण क्रोधकर मंडित लक्ष्मणसूं लाल नेत्रकर कहता भया--मेरा पुत्र निर्वैर, सो तूने हत्या, अर हे चपल ! तुने मेरी कांताके कुच मर्दन किए, सो पापी अब मेरी दृष्टिसूं कहां जायगा ? आज तीक्ष्ण बाणनिकरि तेरे प्राण हरूंगा, तैं जैसे कर्म किए हैं तैसा फल भोगवेगा ? हे क्षुद्र निर्लज्ज परस्त्री संगलोलुपी ! मेरे सन्मुख आयकर परलोक जाहु। तब ताके कठोर वचननिकर प्रज्वलित भया है मन जाका सो लक्ष्मण वचनकर सकल आकाशकूं पूरता संता कहता भया—अरे क्षुद्र ! वृथा काहे गाजै है जहां तेरा पुत्र गया वहां तोहि पठाऊंगा, ऐसा कहकर आकाशके विषैं तिष्ठता जो खरदूषण ताहि लक्ष्मणने रथरहित किया अर ताका धनुष तोड्या, अर ध्वजा उडाय दई अर प्रभारहित किया तब वह क्रोधकर भऱ्या पृथिवीके विषैं पड्या

जैसे क्षीणपुण्य भया देव स्वर्गतैं पड़ै। बहुरि महासुभट खड्ग लेय लक्ष्मण पर आया तब लक्ष्मण सूर्यहास खड्ग लेय ताके सन्मुख भया। इन दोऊनिमें नाना प्रकार महायुद्ध भया देव पुष्पवृष्टि करते भए, अर धन्य २ शब्द करते भए, बहुरि महा युद्धके विषैं सूर्यहास खड्गकर लक्ष्मणने खरदूषणका सिर काट्या, सो निर्जीव होय खरदूषण पृथिवीविषैं परया मानों स्वर्गसूं देव परया सूर्यसमान है तेज जाका मानों रत्न पर्वतका शिखर दिग्गजने ढाहा।

अथानंतर खरदूषणका सेनापति दूषण विराधितकूं रथ रहित करवेकूं आरम्भता भया। तदि लक्ष्मण बाणकरि मर्मस्थलविषैं घायल किया सो घूमता भूमिमें परया। अर लक्ष्मण-ने खरदूषणका समुदाय अर कटक अर पाताल लंकापुरी विराधितकूं दीनी अर लक्ष्मण अतिस्नेहका भरया जहां राम तिष्ठे हैं तहां आया, आकर देखै तो आप भूमिमें पड़े हैं, अर स्थानकमें सीता नाहीं। तब लक्ष्मणने कही--हे नाथ! कहां सोवो हो, जानकी कहां गई, तब राम उठ कर लक्ष्मणकूं घावरहित देख कछु इक हर्षकूं प्राप्त भए। लक्ष्मणकूं उरसे लगाया, अर कहते भए—हे भाई! मैं न जानूं जानकी कहां गई, कोई हर लेगया, अथवा सिंह भख गया, बहुत हेरी सो न पाई, अति सुकुमार शरीर उद्वेग कर विलय गई तब लक्ष्मण विषादरूप होय क्रोध-कर कहता भया—हे देव! सोचके प्रबन्धकर कहा? यह निश्चय करो कोई दुष्टदैत्य हर ले गया है, जहां तिष्ठे है सो लावेंगे, आप संदेह न करो। नाना प्रकारके प्रिय वचननिकरि रामकूं धैर्य बंधाया अर निर्मल जलकरि सुबुद्धिने रामका मुख धुवाया। ताही समय विशेष शब्द सुन राम पूछी, यह शब्द काहेका है? तब लक्ष्मणने कहा--हे नाथ! यह चन्द्रोदय विद्याधरका पुत्र विराधित याने रणमें मेरा बहुत उपकार किया, सो आपके निकट आया है, याकी सेनाका शब्द है। या भांति दोऊ वीर वार्ता करैं हैं। अर वह बड़ी सेना सहित हाथ जोड़ नमस्कार-कर जय जय शब्द कह अपने मंत्रीनि सहित विनती करता भया—आप हमारे स्वामी हो, हम सेवक हैं, जो कार्य होय, ताकी आज्ञा देहु। तदि लक्ष्मण कहता भया, हे मित्र! काहू दुराचारीने ये मेरे प्रभु तिनकी स्त्री हरी है ता विना रामचन्द्र जो शोकके वशी होय कदाचित् प्राणकूं तजे, तो मैं भी अग्निमें प्रवेश करूंगा, इनके प्राणनिके आधार मेरे प्राण हैं, यह तू निश्चय जान! तातैं यह कार्य कर्तव्य है, भले जाने सो कर। तब यह बात सुन वह अति दुःखित होय नीचा मुख कर रहा, अर मनमें विचारता भया--एते दिन मोहि स्थानक भ्रष्ट हुए भए, नाना प्रकार वन विहार किया, अर इन मेरा शत्रु हना स्थानक दिया, तिनकी यह दशा है, मैं जो २ वेलि पकरूं हू सो सो उपड़ जाय है, यह समस्त जगत् कर्माधीन है। तथापि मैं कछू उद्यम कर इनका कार्य सिद्ध करूं, ऐसा विचार अपने मंत्रीनिसू कहा--पुरुषोत्तमकी स्त्री-रत्न पृथिवीविषैं जहां होय, तहां जल स्थल आकाश पुर वन गिरि ग्रामादिकमें यत्नकर हेरहु,

यह कार्य भए मनवांछित फल पावोगे ऐसी राजा विराधितकी आज्ञा सुन यशके अर्थी सब दिशाकूं विद्याधर दौड़े।

अथानंतर एक अर्कजटीका पुत्र रत्नजटी विद्याधर सो आकाशमार्गमें जाता हुता तानै सीताके रुदनकी 'हाय राम, हाय लक्ष्मण' यह ध्वनि समुद्रके ऊपर आकाशमे सुनी, तब रत्नजटी वहां आय देखै तो रावणके विमानमें सीता बैठी विलाप करै है। तब सीताको विलाप करती देख रत्नजटी क्रोधका भरया रावणसों कहता भया–हे पापी दुष्ट विद्याधर ऐसा अपराध कर कहां जायगा, यह भामण्डलकी बहिन है रामदेवकी रानी है। मैं भामण्डलका सेवक हू, हे दुर्बुद्धे! जिया चाहै तो याहि छोड। तब रावण अति क्रोधकर युद्धकूं उद्यमी भया। बहुरि विचारी कदाचित युद्धके होते अति विह्वल जो सीता सो मर जावे तो भला नहीं। तातैं यद्यपि यह विद्याधर रंक है तथापि याहि न मारना, ऐसा विचार रावण महाबलीने रत्नजटीकी विद्या हर लीनी, अर आकाशतैं पृथिवीविषैं परया, मंत्रके प्रभावकरि धीरा धीरा स्फुलिंग की न्याई समुद्रके मध्य कम्बुद्वीपमे आय परया, आयु कर्मके योगतैं जीवता बचा जैसे वणिकका जहाज फट जाय अर जीवता बचै, सो रत्नजटी विद्या खोय जीवता बच्या सो विद्या तो जाती रही जाकरि विमान विषैं बैठ घर पहुचैं, सो अत्यंत स्वास लेता कम्बुपर्वतपर चढ़ दिशाका अवलोकन करता भया, समुद्रकी शीतल पवनकर खेद मिटया, सो वन-फल खाय कम्बुपर्वत पर रहै, अर जो विराधितके सेवक विद्याधर सब दिशा नाना भेषकर दौड़े हुते ते सीताकूं न देख पाछे आए। सो उनका मलिन मुख देख रामने जानी सीता इनकी दृष्टि न आई, तब राम दीर्घ स्वांस नांख कहते भए—

हे भले विद्याधर हो तुमने हमारे कार्यके अर्थ अपनी शक्ति प्रमाण अति यत्न किया, परन्तु हमारे अशुभका उदय, तातैं अब तुम सुखसूं अपने स्थानक जाहु,हाथतैं बडवानलमें गया रत्न बहुरि कहां दीखै, कर्मका फल है सो अवश्य भोगना,हमारा तिहारा निवारया न निवरै,हम कुटुम्बतैं छूटे, वनमें पैठे, तो हू कर्मशत्रुकूं दया न उपजी तातै हम जानी हमारे असाताका उदय है. सीता हू गई, या समान और दुख कहा होयगा, या भांति कहकर राम रोवने लागे, महाधीर नरनिके अधिपति, तब विराधित धैर्य बंधायवे विषैं पंडित नमस्कारकर हाथ जोड कहता भया—हे देव। आप एता विषाद कहा करो, थोडे ही दिनमें आप जनकसुताकूं देखोगे। कैसी है जनकसुता? निःपाप है देह जाकी। हे प्रभो! यह शोक महाशत्रु है शरीरका नास करै और वस्तुकी कहा बात, तातैं आप धैर्य अंगीकार करहु, यह धैर्य ही महापुरुषनिका सर्वस्व है आप सरिखे पुरुष विवेकके निवास हैं धैर्यवन्त प्राणी अनेक कल्याण देखै। अर आतुर अत्यन्त कष्ट करै तो हू इष्ट वस्तुकूं न देखैं। अर यह समय बिषादका नाहीं, आप मन लगाय

सुनहु विद्याधरनिका महराजा खरदूषण मारथा, सो अब याका परिपाक महाविषम है, सुग्रीव किहकंधापुरका धनी, अर इंद्रजीत कुम्भकर्ण त्रिशिर अक्षोभ भीम क्रूरकर्मा महोदर इनकूं आदि दे अनेक विद्याधर महा योधा बलवन्त याके परम मित्र हैं सो याके मरणके दुःखतैं क्रोधकूं प्राप्त भए होंगे, ये समस्त नाना प्रकार युद्धमें प्रवीण हैं, हजारां ठौर रणविषैं कीर्ति पाय चुके हैं, अर वैताड्य पर्वतके अनेक विद्याधर खरदूषणके मित्र हैं अर पवनञ्जयका पुत्र हनूमान जाहि लखे सुभट दूरहीतैं डरैं, ताके सन्मुख देव हू न आवे सो खरदूषणका जमाई है तातैं वह हू याके मरणका रोष करैगा। तातैं यहां वनविषैं न रहना, अलंकारोदय नगर जो पाताललंका ताविषै विराजिये। अर भामंडलकूं सीताके समाचार पठाइये, वह नगर महादुर्गम है तहां निश्चल होय कार्यका उपाय सर्वथा करेंगे, या भांति विराधित विनती करी, तब दोऊ भाई चार घोड़निका रथ तापर चढकर पाताललंकाकूं चाले सो दोऊ पुरुषोत्तम सीता विना न शोभते भए जैसैं सम्यग्दृष्टि विना ज्ञान-चारित न सोहै चतुरंग सेनारूप सागरकरि मंडित दंडकवनतैं चाले, विराधित अगाऊ गया, तहां चन्द्रनखाका पुत्र सुन्दर, सो लडबेकूं नगरके बाहिर निकस्या तानैं युद्ध किया, सो ताकूं जीत नगरमें प्रवेश किया, देवनिके नगर समान वह नगर रत्नमई तहां खरदूषणके मंदिरविषै विराजे सो महामनोहर सुरमंदिर समान वह मंदिर तहां सीता विना रंचमात्र हू विश्रामकूं न पावते भए, सीतामें है मन रामका सो रामकूं प्रियाके समीपकर वनहू मनोज्ञ भासता हुता, अब कांताके वियोगकर दग्ध जो राम तिनकूं नगर मंदिर विन्ध्याचलके वन समान भासैं।

अथानंतर खरदूषणके मन्दिरमें जिनमंदिर देखकर रघुनाथ प्रवेश किया वहां अरहंतकी प्रतिमा देखकर रत्न मई पुष्पनिकर अर्चा करी, क्षण एक सीताका संताप भूल गए, जहां जहां भगवान्‌के चैत्यालय हुते, तहां तहां दर्शन किया। प्रशांत भई है दुःखकी लहर जिनके, रामचंद्र खरदूषणके महल विषैं तिष्ठे हैं। अर सुन्दर, अपनी माता चन्द्रनखा सहित पिता अर भाईके शोक कर महाशोक सहित लंका गया। यह परिग्रह विनाशीक है अर महा दुःखका कारण है, विघ्न कर युक्त है, तातैं हे भव्य जीव हो तिनविषैं इच्छा निवारहु। यद्यपि जीवनिके पूर्व कर्मके सम्बंधसूं परिग्रहकी अभिलाषा होय है, तथापि साधुवर्गके उपदेशकरि यह तृष्णा निवृत्त होय है जैसैं सूर्यके उदयतैं रात्रि निवृत्त होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामको सीताका वियोग अर पाताल लंकाविषैं निवास वर्णन करनेवाला पैंतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥४५॥

छयालीसवां पर्व

[लंकाके मायामयी कोट का वर्णन]

अथानंतर रावण सीताकूं लेय । विमानके ऊंचे शिखर पर तिष्ठा धीरे चालता भया जैसे आकाशविषैं सूर्य चाले। शोक कर तप्तायमान जो सीता ताका मुखकमल कुमलाय गया देख रतिके राग कर मूढ भया है मन जाका ऐसा जो रावण सो सीताके चौगिर्द फिरैं, अर दीन वचन कहै—हे देवि! कामके बाण कर मैं हता जाऊं हूँ, सो तोहि मनुष्यकी हत्या होयगी। हे सुन्दरि! यह तेरा मुखरूप कमल सर्वथा कोप-संयुक्त है तो हू मनोज्ञते अधिक मनोज्ञ भासै है। प्रसन्न हो, एक बेर मेरी ओर दृष्टि धर देख तेरे नेत्रनिकी कांतिरूप जलकर मोहि स्नान कराय, अर जो कृपादृष्टि कर नाहीं निहारैं,तो अपने चरण कमल करि मेरा मस्तक तोड़, हाय हाय तेरी क्रीडाके वनविषैं मैं अशोक वृक्ष ही क्यों न भया, जो जो तेरे चरण कमलकी पगथलीकी घात अत्यंत प्रशंसा योग्य सो मोहि सुलभ होती। भावार्थ अशोक वृक्ष स्त्रीके पगथलीके घातसे फूलै। हे कृशोदरि! विमानके शिखर पर तिष्ठी सर्व दिशा देख, मैं सूर्यके ऊपर आकाशविषैं आया हू। मेरु कुलाचल अर समुद्र सहित पृथिवी देख मानों काहू सिलावटने रची है, ऐसे वचन रावणने कहे। तब वह महा सती शीलका सुमेरु पटके अंतर अरुचिके अक्षर कहती भई। हे अधम! दूर रह, मेरे अंगका स्पर्श मत कर, अर ऐसे निंद्य वचन कभी मत कह। रे पापी! अल्प आयु! कुगतिगामी! अपयशी! तेरे यह दुराचार तोहिकूं भयकारी है, परदाराकी अभिलाषा करता तू महादुःख पावेगा। जैसे कोई भस्म कर दबी अग्निपर पांव धरै तो जरै, तैसे तू इन कर्मनिकर बहुत पछतावेगा। तू महा मोहरूप कीचकरि मलिन चित्त है, तोहि धर्मका उपदेश देना वृथा है, जैसे अंधके निकट नृत्य करे। हे क्षुद्र! जे पर स्त्रीकी अभिलाषा करैं हैं वे इच्छा मात्र ही पापको बांधकर नरकविषैं महाकष्टकूं भोगैं हैं, इत्यादि रूक्ष वचन सीता रावणसूं कहै। तथापि कामकर हता है चित्त जाका सो अविवेकसूं पाछा न भया। अर खर-दूषणकी जे मदद गए हुते परम हितु शुक हस्त प्रहस्तादिक, वे खरदूषणके मुवे पीछे उदास होय लंका आए। सो रावण काहूकी ओर देखै नाहीं, जानकीकूं नाना प्रकारके वचनकर प्रसन्न करै सो वह कहां प्रसन्न होय? जैसे अग्निकी ज्वालाकूं कोई पीय न सकै। अर नागके माथेकी मणिको न लेय सकै, तैसै सीताकूं कोई मोह न उपजाय सकैं। बहुरि रावण हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार कर नाना प्रकारके दीनताके वचन कहे,सो सीता याके वचन कछू न सुने। अर मंत्री आदि सन्मुख आए, सर्व दिशानितैं सामंत आए। राक्षसनिके पति जो रावण सो अनेक लोकनिकर मंडित होता भया, लोक जय जयकार शब्द करते भए। मनोहर गीत नृत्य वादित्र

होते भए। रावण इंद्रकी न्याईं लंकाविषैं प्रवेश किया, सीता चित्तमें चितवती भई, ऐसा राजा अमर्यादाकी रीति करैं, तब पृथिवी कौनके शरण रहै,। जब लग रामचंद्रकी कुशल क्षेमकी वार्ता मैं न सुनूं, तब लग खान-पानका मेरे त्याग है। रावण देवारण्य नामा उपवन स्वर्गसमान परम सुन्दर, जहां कल्पवृक्ष, वहां सीताको मेलकर अपने मंदिर गया, ताही समय खरदूषणके मरणके समाचार आए सो महाशोककर रावणकी अठारा हजार रानी ऊंचे स्वरकर विलाप करती भई। अर चंद्रनखा रावणकी गोदविषैं लोटकर अति रुदन करती भई, हाय मैं अभागिनी हती गई, मेरा धनी मारा गया मेहके झरने समान रुदन किया, अश्रुपातका प्रवाह बहा, पति अर पुत्र दोऊके मरणके शोकरूप अग्निकर दग्धायमान है हृदय जाका, सो याहि विलाप करती देख याका भाई रावण कहता भया-हे वत्से! रोयवेकर कहा, या जगत्के प्रसिद्ध चरित्रको कहा न जान है। विना काल कोऊ वज्रसे भी हता न मरे अर जब मृत्युकाल आवे, तब सहजही मर-जाय। कहां वे भूमिगोचरी रंक, अर कहां तेरा भरतार विद्याधर दैत्यनिका अधिपति खरदूषण ताहि वे मारें, यह कालहीका कारण है। जाने तेरा पति मारा ताको मैं मारूंगा या भांति बहिनकूं धैर्य बंधाय कहता भया-अब तू भगवान्‌का अर्चनकर, श्राविकाके व्रत धार, चंद्रनखाकूं ऐसा कहकर रावण महलविषैं गया सर्पकी न्याईं निश्वास नाखता सेजपर पड़ा। वहां पटरानी मन्दोदरी आयकर भरतारकूं व्याकुल देख कहती भई-हे नाथ! खरदूषणके मरणकर अति व्याकुल भए हो, सो तिहारे सुभट कुलविषैं यह बात उचित नाहीं। जे शूरवीर हैं तिनके मोटी आपदाविषैं हू विषाद नाहीं, तुम वीराधिवीर क्षत्री हो, तिहारे कुलमें तिहारे पुरुष अर तिहारे मित्र रण संग्रामविषै अनेक क्षय भये, सो कौन-कौनका शोक करोगे। तुम कबहू काहूका शोक न किया, अब खरदूषणका एता सोच क्यों करो हो? पूर्वै इंद्रके संग्रामविषैं तिहारा काका श्रीमाली मरणकूं प्राप्त भया। अर अनेक बांधव रणमें हते गए, तुम काहूका कभी शोक न किया, आज ऐसा सोच दृष्टि क्यों पड़ा है जैसा पूर्वे कबहू हमारी दृष्टि न पड़ा। तब रावण निश्वास नाख बोला हे सुन्दरि! सुन, मेरे अन्त:करणका रहस्य तोहि कहू हू, तू मेरे प्राण-निकी स्वामिनी है, अर सदा मेरी वांछा पूर्ण करै है जो तू मेरा जीतव्य चाहै है तो कोप मत कर, मैं कहू, सो कर, सर्व वस्तुका मूल प्राण हैं। तब मन्दोदरी कही जो आप कहो सो मैं करूं,। तब रावण याकी सलाह लेय विलखा होय कहता भया-हे प्रिये! एक सीता नामा स्त्री, स्त्रीनिकी सृष्टिविषैं ऐसी और नाहीं सो वह मोहि न इच्छै तो मेरा जीवन नाहीं,मेरा लाव-ण्यता रूप माधुर्यता सुंदरता ता सुंदरीकूं पायकर सफल होय। तब मंदोदरी याकी दशा कष्टरूप जान हंसकर दांतनिकी कांतिरूप चांदनीकूं प्रकाशती संती कहती भई हे नाथ! यह बड़ा आश्चर्य है तुम सारिखे प्रार्थना करें अर वह तुमको न इच्छै, सो मंदभागिनी है,। या

संसारमें ऐसी कौन परम सुंदरी है जाका मन तिहारे देखे खंडित न होय, अर मन मोहित न होय, अथवा वह सीता कोई परम उदयरूप अद्भुत त्रैलोक्य सुंदरी है जाको तुम इच्छो हो, अर वह तुमको नाहीं इच्छै है, ये तिहारे कर हस्तीकी सुंडसमान, रत्न जड़ित बाजूनिकरि युक्त तिन करि उरसे लगाय बलात्कार क्यों न सेवहु। तब रावण कही या सर्वांगसुन्दरीसूं मैं बलात्कार नाहीं गहू ताका कारण सुन—अनंतवीर्य केवलीके निकट मैं एक व्रत लिया है, वे भगवान् देव इन्द्रादिक कर वंदनीक ऐसा व्याख्यान करते भए—या संसारविषै भ्रमण करते जे जीव परम दुखी तिनके पापनिकी निवृत्ति निर्वाणका कारण है एक भी नियम महा फलकूं देय है अर जिनके एक भी व्रत नाहीं वे नर जर्जर कलश-समान निगुण हैं। जिनके मोक्षका कारण कोई नियम नाहीं तिन मनुष्यनिमें अर पशुनिमें कछु अन्तर नाहीं, तातैं अपनी शक्तिप्रमाण पापनिको तजहु, सुकृतरूप धनको अंगीकार करहु, जातैं जन्मके आंधेकी न्याईं संसाररूप अन्धकूपमें न परो। या भांति भगवान्के मुखरूप कमलतैं निकसे वचनरूप अमृत पीकर कैएक मनुष्य तो मुनि भए, कैएक अल्प शक्ति अणुव्रतकूं धारणकर श्रावक भए, कर्मके संबंधतैं सबकी एक तुल्य शक्ति नाहीं, वहां भगवान् केवलीके समीप एक साधु मोसे कृपा कर कहता भया—हे दशानन! कछू नियम तुमहू लेहु, तू दया-धर्मरूप रत्न-नदीविषैं आया है। सो गुणरूप रत्ननिके संग्रह विना खाली मति जाहु। ऐसा कही तब मैं प्रमाणकर देव असुर विद्याधर मुनि सबकी साक्षी व्रत लिया कि जो परनारी मोहि न इच्छै ताहि मैं बलात्कार न सेऊं। हे प्राणप्रिये! मैं विचारी जो मोसे रूपवान नरको देख ऐसी कौन नारी है जो मान करै, तातैं मैं बलात्कार न सेऊं। राजानिकी यही रीति है जो वचन कहे सो निवाहैं, अन्यथा महा दोष लागै। तातैं मैं प्राण तजूं, ता पहिले सीताको प्रसन्न कर, घरके भस्म गए पीछे कुवां खोदना वृथा है। तब मंदोदरी रावणकूं विह्वल जान कहती भई—हे नाथ! तिहारी आज्ञा-प्रमाण ही होयगा, ऐसा कह देवारण्यनामा उद्यानविषैं गई, अर ताकी आज्ञा पाय रावणकी अठारह हजार रानी गईं, मंदोदरी जायकर सीताकूं या भांति कहती भई—हे सुन्दरी! हर्षके स्थानकविषैं कहा विषाद कर रही है, जा स्त्रीके रावण पति सो जगतविषैं धन्य है। सब विद्याधरनिका अधिपति सुरपतिका जीतनहारा तीनलोकविषैं सुंदर ताहि क्यों न इच्छै, निर्जन वनके निवासी निर्धन शक्तिहीन भूमिगोचरी तिनके अर्थ कहा दुःख करै है, सर्वलोकविषैं श्रेष्ठ ताहि अंगीकारकरि क्यों न सुख करै? अपने सुखका साधन कर, याविषैं दोष कहा। जो कुछ करिए है सो अपने सुखके निमित्त करिए है अर मेरा कहा जो न करेगी तो जो कुछ तेरा होनहार है सो होगा। रावण महा बलवान् है कदाचित् प्रार्थना-भंगतैं कोप करै तो तेरा या बातमे अकारज ही है। अर राम लक्ष्मण तेरे सहाई है, सो रावणके कोप किए उनका भी जीवित बचना नाहीं। तातैं शीघ्र ही विद्याधरनिका जो ईश्वर ताहि अंगीकार कर, जाके प्रसादतैं परम ऐश्वर्यको पायकर देवनेकेसे सुख भोगवै।

जब ऐसा कहा तब जानकी अश्रुपातकर पूर्ण हैं नेत्र जाके, गद्गद् वाणीकर कहती भई।

हे नारी,यह वचन तूने सबही विरुद्ध कहे। तू पतिव्रता कहावै है। पतिव्रतानिके मुखतैं ऐसे वचन कैसैं निकसैं। यह शरीर मेरा छिद जावे भिद जावे हत जावे,परंतु अन्य पुरुषकूं मैं न इच्छूं, रूपकर सनत्कुमार समान होवे, अथवा इंद्र समान होवे,तौ मेरे कौन अर्थ ? मैं सर्वथा अन्य पुरुषकूं न इच्छूं। तुम सब अठारह हजार रानी भेली होयकर आई हो, सो तिहारा कहा मैं न करूं, तिहारी इच्छा होय सो करो। ताही समय रावण आया, मदनके आतापकरि पीडित,जैसैं तृषातुर माता हाथी गंगाके तीर आवे, तैसे सीताके समीप आय मधुर वाणीकर आदरसूं कहता भया, हे देवि! तू भय मत करै। मैं तेरा भक्त हू। हे सुंदरि! चित्त लगाय एक विनती सुन, मैं तीन लोकमें कौन वस्तुकर हीन,जो तू मोहि न इच्छै ? ऐसा कहकर स्पर्शकी इच्छा करता भया। तब सीता क्रोधकर कहती भई—पापी! परे जा, मेरा अंग मत स्पर्शै। तदि रावण कहता भया कोप अर अभिमान तज प्रसन्न हो, शची इंद्राणी समान दिव्य भोगनिकी स्वामिनी होहु। तब सीता बोली—कुशीली पुरुषका विभव मल समान है। अर शीलवंत हैं तिनके दरिद्रता ही आभूषण हैं। जे उत्तम वंशविषै उपजे हैं तिनके शीलकी हानिकरि दोऊ लोक बिगरैं हैं तातैं मेरे तो मरण ही शरण है। तू परस्त्रीकी अभिलाषा राखै है सो तेरा जीतव्य वृथा है। जो शील पालता जीवै है, ताहीका जीतव्य सफल है। या भांति जब सीता तिरस्कार किया तब रावण क्रोधकर मायाकी प्रवृत्ति करता भया। रानी अठारह हजार सब जाती रहीं, अर रावणकी मायाके भयतैं सूर्य अस्त होय गया। मद झरती मायामई हाथिनिकी घटा आई, यद्यपि सीता भयभीत भई तथापि रावणके शरण न गई। बहुरि अग्निके स्फुलिंग बरसते भए, अर लहलहाट करैं हैं जीभ जिनकी ऐसे सर्प आए, तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि महा क्रूर वानर, फारे हैं मुख जिन्होंने उछल उछल आए अतिभयानक शब्द करते भए, तथापि सीता रावणके शरण न गई। अर अग्निके ज्वाला समान चपल हैं जिह्वा जिनकी ऐसे मायामई अजगर तिनने भय उपजाया तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि अंधकार समान श्याम ऊंचे व्यंतर हुंकार शब्द करते आए, भय उपजावते भए तथापि सीता रावणके शरण न गई। या भांति नानाप्रकारकी चेष्टाकर रावणने उपसर्ग किए तथापि सीता न डरी, रात्रि पूर्ण भई, जिनमंदिरनि विषैं वादित्रनिके शब्द होते भए द्वारनिके कपाट उघरे, मानों लोकनिके लोचन ही उघरे। प्रातसंध्याकर पूर्व दिशा आरक्त भई, मानों कुंकुमके रंगकरि रंगी ही है। निशाका अंधकार सर्व दूरकर, चंद्रमाको प्रभारहित कर सूर्यका उदय भया। कमल फूले, पक्षी विचरने लगे, प्रभात भया तब प्रातक्रिया कर विभीषणादि रावणके भाई खरदूषणके शोककर रावणपै आए। सो नीचा मुख किए, आंसू डारते भूमिविषै तिष्ठे। तासमय पटके अंतर शोककी भरी जो सीता ताके रुदनके शब्द विभीषण-

ने सुने, अर सुनकर कहता भया यह कौन स्त्री रुदन करै है ? अपने स्वामीतैं विछुरी है याका शोकसंयुक्त शब्द दुखको प्रकट दिखावै है। ये विभीषणके शब्द सुन सीता अधिक रोवने लगी, सज्जनको देख शोक बढै ही है। विभीषण पूछता भया हे बहिन! तू कौन है? तब सीता कहती भई, मैं राजा जनककी पुत्री, भामंडलकी बहिन राम की रानी, दशरथ मेरा सुसरा, लक्ष्मण मेरा देवर, सो खरदूषणतैं लडने गया ताके पीछे मेरा स्वामी भाईकी मदद गया, मैं वनविषैं अकेली रही सो छिद्र देख या दुष्टचित्तने हरी सो मेरा भरतार मो विना प्रण तजेगा? तातैं हे भाई! मोहि मेरे भरतारपै शीघ्र ही पठाय देहु। ये वचन सीताके सुन विभीषण रावणसे विनय कर कहता भया हे देव! यह परनारी अग्निकी ज्वाला है, आशीविष सर्पके फणसमान भयंकर है, आप काहेकूं लाए अब शीघ्रही पठाय देहु। हे स्वामी! मैं बालबुद्धि हू परंतु मेरी विनती सुनो मोहि आपने आज्ञा करी हुती जो तू उचित बात हमसो कहियो कर, तातैं आपकी आज्ञातैं मैं कहू हू। तिहारी कीर्तिरूप वेलिके समूह कर सर्व दिशा व्याप्त होय रही हैं ऐसा न होय जो अपयशरूप अग्निकर यह कीर्तिलता भस्म होय। यह परदाराका अभिलाष अयुक्त, अति भयंकर महानिंद्य, दोऊ लोकका नाश करणहारा जाकरि जगतविषैं लज्जा उपजै उत्तम जननिकरि धिक्कार शब्द पाइए है। जे उत्तम जन हैं तिनके हृदयकूं अप्रिय ऐसा अनीति कार्य कदाचित् कर्तव्य नाहीं। आप सकल वार्ता जानो हो, सब मर्यादा आप हीते रहे आप विद्याधरनिके महेश्वर, यह बलता अंगारा काहेकूं हृदयमें लगावो, जो पापबुद्धि परदारा सेवै हैं सो नरकविषैं प्रवेश करैं हैं जैसे लोहेका ताता गोला जलमें प्रवेश करै तैसैं पापी नरकमें पडे हैं। ये वचन विभीषणके सुनकर रावण बोला हे भाई! पृथिवीपर जो सुंदर वस्तु हैं ताका मैं स्वामी हूँ सर्व मेरी ही वस्तु है परवस्तु कहांसि आई। ऐसा कहकर और बात करने लगा। बहुरि महानीतिका धारी मारीच मंत्री क्षणएक पीछे कहता भया देखो यह मोहकर्मकी चेष्टा, रावणसारिखे विवेकी सर्व-रीतिको जानै ऐसे कर्म करै, सर्वथा जे सुबुद्धि पुरुष है तिनकूं प्रभातही उठकर अपनो कुशल अकुशल चिंतवनो, विवेकसे न चूकना, या भांति निरपेक्ष भया महाबुद्धिमान् मारीच कहता भया तब रावणने कछू पाछो जबाब न दिया उठकर खड़ा हो गया, त्रैलोक्य मंडन हाथीपर चढि सब सामंतनिसहित उपवनतैं नगरकूं चाल्या, बरछी खड्ग, तोमर, चमर, छत्र ध्वजा आदि अनेक वस्तु हैं हाथनिमैं जिनके ऐसे पुरुष आगे चले जाय हैं, अनेक प्रकार शब्द होय हैं चंचल हैं ग्रीवा जिनकी ऐसे हजारां तुरंगनिपर चढे सुभट चले जाय हैं अर कारी घटासमान मद झरते गाजते गजराज चले जाय हैं, अर नाना प्रकारकी चेष्टा करते उछलते पयादे चले जाय हैं, हजारां वादित्र बाजे, या भांति रावणने लंकामें प्रवेश किया। रावणके चक्रवर्ती की सम्पदा तथापि सीता तृणसे हू जघन्य जाने, सीताका निष्कलंक मन यह लुभायवेकूं समर्थ न भया

जैसे जलविषैं कमल अलिप्त रहै, तैसैं सीता अलिप्त रहै। सर्व ऋतुके पुष्पनिकरि शोभित नाना प्रकारके वृक्ष,अर लतानिकरि पूर्ण ऐसा प्रमद नामा वन तहां सीताकूं राखी। वह वन नंदनवन समान सुंदर जाहि लखे नेत्र प्रसन्न होंय, फुल्लगिरिके ऊपर यह वन सो देखे पीछे और ठौर दृष्टि न लगे, जाहि लखे देवनिका मन उन्मादकूं प्राप्त होय, मनुष्यनिकी कहा बात, ? वह फुल्लगिरि सप्तवनकरि वेष्टित सोहै जैसैं भद्रशालादि वनकर सुमेरु सोहै है।

हे श्रेणिक! सात ही वन अद्भुत हैं उनके नाम सुन—प्रकीर्णक, जनानन्द सुखसेव्य, समुच्चय, चारणप्रिय, निबोध, प्रमद। तिनमें प्रकीर्ण पृथिवीविषैं ताके ऊपर जनानन्द तहां चतुर जन क्रीड़ा करैं। अर तीजा सुखसेव्य अति मनोज्ञ सुन्दर वृक्ष अर वेल कारी घटा समान सघन सरोवर सरिता वापिका अतिमनोहर, अर समुच्चयविषें सूर्यका आताप नाहीं, वृक्ष ऊंचे, कहूँ ठौर स्त्री क्रीडा करैं, कहूँ ठौर पुरुष अर चारणप्रिय वनविषैं चारण मुनि ध्यान करैं, अर निबोध ज्ञानका निवास, सबनिके ऊपर अति सुन्दर प्रमद नामा वन ताके ऊपर जहां तांबूलका वेल केतकीनिके बीडे जहां स्नानक्रीडा करवेको उचित रमणीक वापिका कमलनिकर शोभित हैं, अर अनेक खणके महल अर जहां नारंगी विजोरा नारियल छुहारे ताडवृक्ष इत्यादि अनेक जातिके वृक्ष सर्वही पुष्पनिके गुच्छनि कर शोभैं हैं जिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं अर जहां वेलिनके पल्लव मन्द पवन कर हालैं हैं। जा वनविषैं सघन वृक्ष समस्त ऋतुनिके फल फूलनिकर कारी घटा समान सघन हैं मोरनके युगलकर शोभित हैं ता वनकी विभूति मनोहर वापी सहस्रदल कमल हैं मुख जिनके सो नील कमल रूप नेत्रनिकर निरखे हैं। अर सरोवरविषैं मन्द मन्द पवनकर कल्लोल उठै हैं सो मानों सरोवरी नृत्य ही करैं हैं। अर कोयल बोलै हैं सो मानों वचनालाप ही करैं हैं, अर राज-हंसनीके समूहकर मानों सरोवरी हंसे ही है। बहुत कहिवे कर कहा वह प्रमादनामा उद्यान सर्व उत्सवका मूल भोगिनिका निवास नन्दन वनहूतैं अधिक ता वनमें एक अशोकमालिनी नामा वापी कमलादि कर शोभित, जाके मणि स्वर्णके सिवाण, विचित्र आकारकूं धरै हैं द्वार जाके जहां मनोहर महल जाके सुन्दर झरोखे, तिनकर शोभित जहां नीझरने झरै हैं वहां अशोक वृक्षके तले सीता राखी। कैसी है सीता ? श्रीरामजीके वियोगकर महा शोककूं धरै है जैसे इन्द्रतें विछुरी इंद्राणी। रावणकी आज्ञातैं अनेक स्त्री विद्याधरी खड़ी ही रहैं नाना प्रकारके वस्त्र सुगंध आभूषण जिनके हाथमें, भांति भांतिकी चेष्टा कर सीताकूं प्रसन्न किया चाहैं। दिव्यगीत दिव्यनृत्य दिव्यवादित्र अमृत सारिखे दिव्यवचन तिनकर सीताकूं हर्षित किया चाहैं, परन्तु यह कहां हर्षित होय ? जैसैं मोक्ष संपदाकूं अभव्य जीव सिद्ध न कर सकै तैसैं रावणकी दूती सीताकूं प्रसन्न न कर सकीं। ऊपर ऊपर रावण दूती भेजै, कामरूप दावानलकी प्रज्वलित ज्वाला ताकर व्याकुल महा उन्मत्त भांति-भांतिके

अनुरागके वचन सीताकूं कह पठावे यह कछू जबाब नहीं देय। दूती जाय रावणसों कहैं हे देव ! वह तो आहार पानी तज बैठी है, तुमको कैसैं इच्छै, वह काहूसों बात न करै निश्चल अंगकर तिष्ठै है, हमारी ओर दृष्टिही नाहीं धरै, अमृत हूते अति स्वादु दुग्धादि कर मिश्रित बहुत भांति नाना प्रकारके व्यंजन ताके मुख आगे धरे हैं सो स्पर्शै नाहीं यह दूतिनीकी बात सुन रावण खेदखिन्न होय मदनाग्निकी ज्वाला कर व्याप्त है अंग जाका महा आरतरूप चिन्ताके सागरमें डूबा। कबहूँ निश्वास नाखे, कबहू सोच करे, सूक गया है मुख जाका, कबहू कछूइक गावै, कामरूप अग्नि कर दग्ध भया है हृदय जाका, कछु इक विचार २ निश्चल होय है, अपना अंग भूमिमें डार देय, फिर उठें सूनासा होय रहे, विना समझे उठि चाले, बहुरि पीछा आवे जैसे हस्ती सूंड पटके तैसें भूमिमें हाथ पटके, सीताको बराबर चितारता आंखनितें आंसू डारे, कबहूँ शब्द कर बुलावे कबहू हुकार शब्द करे कबहूँ चुप होय रहे कबहूँ वृथा बकवाद करै, कबहू सीता सीता बार बार बके, कबहू नीचा मुख कर नखनिकरि धरती कुचरै, कबहू हाथ अपने हिये लगावे, कबहू बाहू ऊंचा करै, कबहू सेजपर पड़े, कबहू उठ बैठे, कबहू कमल हिये लगावे, कबहू दूर डार देय, कबहू शृंगारका काव्य पढ़े, कबहू आकाशकी ओर देखे, कबहू हाथ से हाथ मसले कबहू पगसे पृथिवी हणे निश्वास रूप अग्निकर अधर श्याम होय गए। कबहू कह-कह शब्द करै, कबहू अपने केश बखेरे कबहू बांधे, कबहू जंभाई लेय, कबहू मुखपर अंचल डारे. कबहू वस्त्र सर्व पहिर लेय, सीताके चित्राम बनावे, कबहू अश्रुपातकर आर्द्र करे, दीन भया हाहाकार शब्द करे, मदन-ग्रह कर पीड़ित अनेक चेष्टा करै, आशा रूप ईंधन कर प्रज्वलित जो कामरूप अग्नि उसकर उसका हृदय जरे, और शरीर जले, कभी मनमें चिंतवे कि मैं कौन अवस्थाकूं प्राप्त भया जिसकर अपना शरीर भी नहीं धार सकूं हूं। मैं अनेक गढ़ और सागरके मध्य तिष्ठे बड़े बड़े विद्याधर युद्धविषैं हजारां जीते और लोकविषैं प्रसिद्ध जो इंद्र नामा विद्याधर सो बन्दीगृह विषैं डारा, अनेक युद्धविषैं जीते राजाओंके समूह अब मोहकर उन्मत भया मैं प्रमादके वश प्रवर्ता हूँ। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहे हैं—हे राजन् ! रावण तो कामके वश भया। और विभीषण महाबुद्धिमान मंत्रविषैं निपुणताने सब मंत्रियोंको इकट्ठाकर मंत्र विचारया। कैसा है विभीषण, रावणके राज्यका भार जिसके शिरपर पड़या है समस्त शास्त्रोंके ज्ञानरूप जलकर धोया है मन रूप मैल जिसने रावणके उस समान और हितु नाहीं, विभीषणको सर्वथा रावणके हित हीका चितवन है सो मंत्रियोंसे कहता भया--अहो वृद्ध हो ! राजाकी तो यह दशा, अब अपने ताईं कहा कर्त्तव्य सो कहो ? तब विभीषणके वचन सुन संभिन्नमति मंत्री कहता भया हम कहा कहें, सर्व कार्य विगड़ा, रावणकी दाहिनी भुजा खरदूषण था सो मुवा और विराधित क्या पदार्थ सो स्यालसे सिंह भया, लक्ष्मणके युद्धविषैं सहाई भया और बानर-

वंशी जोरसे वस रहे हैं इनका आकार तो कछु और ही और इनके चित्तमैं कछु और ही। जैसैं सर्प ऊपर तो नरम माही विष। अर पवनका पुत्र जो हनूमान सो खरदूषणकी पुत्री अनंगकुसमाका पति सो सुग्रीवकी पुत्री परणा है सुग्रीवकी पक्ष विशेष है। यह वचन संभिन्नमतिके सुन पंचमुख मंत्री मुसकाय बोल्या-तुम खरदूषणके मरणकर सोच किया सो शूरवीरनिकी यही रीति है संग्राम विषैं शरीर तजैं। अर एक खरदूषणके मरण कर रावणका क्या घट गया जैसैं पवनके योगसे समुद्रसे एक जलकी कणिका गई तो समुद्रका क्या न्यून भया ? अर तुम औरोंकी प्रशंसा करो हो, सो मेरे चित्तमें लज्जा उपजै है। कहां रावण जगत्का स्वामी, और कहां वे वनवासी भूमि-गोचरी ? लक्ष्मणके साथ सूर्यहास खड्ग आया तो क्या ? और विराधित आय मिला तो क्या ? जैसैं पहाड़ विषम है और सिंहको संयुक्त है तो भी क्या दावानल न दहै ? सर्वथा दहै। तब सहस्रमति मंत्री माथा हलाय कहता भया—कहां ये अर्थहीन बातें कहो हो, जिसमें स्वामीका हित हो सो करना, दूसरा स्वल्प है और हम बड़े हैं यह विचार बुद्धिमान्का नाहीं। समय पाय एक अग्निका कणका सकल मंडलको दहै। अर अश्वग्रीवके महासेना थी और सर्व पृथिवीविषैं प्रसिद्ध हुवा था सो छोटेसे त्रिपृष्टिने रणमें मार लिया इसलिए और यत्न तज लंकाकी रक्षा का यत्न करो। नगरी परम दुर्गम करौ कोई प्रवेश न कर सकै, महा भयानक मायामई यन्त्र सर्व दिशामें विस्तारो, और नगरमें परचक्रका मनुष्य न आवने पावै, अर लोकको धैर्य बंधाओ अर सर्व उपायकर रक्षा करौ जिसकर रावण सुखकूं प्राप्त हो। अर मधुर वचनकर नाना वस्तुओं की भेंटकर सीताकूं प्रसन्न करो जैसैं दुग्ध पायवेसे नागिनी प्रसन्न करिए और बानर वंशी योधाओंकी नगरके बाहिर चौकी राखो ऐसे किए कोऊ परचक्रका धनी न आय सकै। अर यहांकी बात परचक्रमें न जाय या भांति गढ़का यत्न कीये तब कौन जाने सीता कौनने हरी और कहां है ? सीता विना राम निश्चय सेती प्राण तजेगा जिसकी स्त्री जाय सो कैसे जीवै, अर राम मूवा तब अकेला लक्ष्मण क्या करेगा अथवा रामके शोककर लक्ष्मण अवश्य मरै न जीवै, जैसैं दीपकके गए प्रकाश न रहै। अर यह दोनों भाई मुए तब अपराधरूप समुद्रमें डूबा जो विराधित सो क्या करेगा। और सुग्रीवका रूपकर विद्याधर उसके घरमें आया सो रावण टार सुग्रीवका दुख कौन हरै, मायामई यन्त्रकी रखवारी सुग्रीवको सौंपी जिससे वह प्रसन्न होय रावण इसके शत्रुका नाश करै। लंकाकी रक्षाका उपाय मायामई यन्त्र कर करना। यह मंत्रकर हर्षित होय सब अपने अपने घर गए, विभीषणने मायामई यन्त्रकर लंकाका यत्न किया। अर अधः ऊर्ध्व तिर्यकसे कोऊ न आय सकै नाना प्रकारकी विद्याकर लंका अगम्य करी। गौतम गणधर कहै हैं—हे श्रेणिक ! संसारी जीव सर्व ही लौकिक कार्यमें प्रवृत्त हैं व्याकुल चित्त हैं अर जे व्याकुलता रहित निर्मल चित्त हैं तिनकूं जिनवचनके अभ्यास टाल और कर्तव्य नाहीं, अर

जो जिनेश्वरते भाषा है सो पुरुषार्थ विना सिद्ध नाहीं, अर भले भवितव्यके विना पुरुषार्थकी सिद्धि नाहीं, इसलिए जे भव्य जीव हैं वे सर्वथा संसारसे विरक्त होय मोक्षका यत्न करो, नर नारक देव तिर्यंच ये चार ही गति दुःखरूप हैं अनादिकालसे ये प्राणी कर्मके उदयकर युक्त रागादिमैं प्रवृत्तै हैं, इसलिए इनके चित्तमें कल्याणरूप वचन न आवै अशुभका उदय मेट शुभकी प्रवृत्ति करै तब शोकरूप अग्निकर तप्तायमान न होय ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं लंकाकी मायामयी कोटका वर्णन करनेवाला छियालीसवा पर्व पूर्ण भया ॥४६॥

सैंतालीसवां पर्व

[विटरूप सुग्रीव के वधका कथानक]

अथानंतर किहकंधापुरका स्वामी जो सुग्रीव सो उसका रूप बनाय विद्याधर इसके पुरमें आया, और सुग्रीव कांताके विरहकर दुखी भ्रमता संता वहां आया जहां खरदूषणकी सेना-के सामंत मूए पड़े थे। बिखरे रथ मूए हाथी मूए घोडे छिन्न भिन्न होय रहे हैं शरीर जिनके, कैयक राजावों का दाह होय है, कैयक सुसके हैं, कईएकनिकी भुजा कट गई है, कईएकनिकी जंघा कट गई हैं, कईयोंकी आंत गिर पड़ा है, कइओंके मस्तक पड़े हैं, कईयोंको स्याल भखै हैं, कईयोंको पक्षी चूथे हैं, कैयकोंके परिवार रोवैं हैं, कैइयकोंको टांगि गखे हैं, यह रणखेतका वृत्तांत देख सुग्रीव किसीकूं पूछता भया तब उसने कही खरदूषण मारा गया। तब सुग्रीवने खरदूषणका मरण सुन अति दुःख किया, मनमें चिंतवे है बड़ा अनर्थ भया, वह महाबलवान था जिससे मेरा सर्व दुःख निवृत्त होता सो कालरूप दिग्गजने मेरा आशारूप वृक्ष तोडा, मैं हीन पुण्य अब मेरा दुःख कैसे शांत होय ? यद्यपि विना उद्यम जीवकूं सुख नाहीं. तातैं दुःख दूर करवेका उद्यम अंगीकार करूं, तब हनुमान पै गया। हनुमान दोनोंका समानरूप देख पीछे गया, तब सुग्रीवनै विचारी कौन उपाय करूं जिससे चित्तकी प्रसन्नता होय। जैसे, नवा चांद निरखे हर्ष होय जो रावणके शरणे जाऊं तो रावण मेरा और शत्रुका एकरूप जान शायद मुझे ही मारे। अथवा दोनोंको मार स्त्री हर लेय, वह कामांध है, कामांधका विश्वास नाहीं। मंत्र दोष अपमान दान पुण्य वित्त शूरवीरता कुशील मनका दाह यह सब कुमित्रकूं न कहिए। जो कहे खता पावैं तातैं संग्राममें खरदूषणकूं मारया ताहीके शरणे जाऊं,वह मेरा दुःख हरै और जिसपैं दुःख पड़ा होय सो दुखीके दुःखको जानै। जिनकी तुल्य अवस्था होय तिनही विषैं स्नेह होय। सीताके वियोग का सीता पतिहीको दुःख उपजा है ऐसा विराधितके निकट अति प्रीतिकर दूत पठाया। सो

दूत जाय सुग्रीवके आगमका वृत्तांत विराधितसूं कहता भया, सो विराधित सुनकर मनमें हर्षित भया, विचारी बड़ा आश्चर्य है सुग्रीव जैसे महाराज मुझसूं प्रीति करवेकी इच्छा करें, सो बड़ोंके आश्रयसे क्या न होय ? मैं श्रीराम लक्ष्मणका आश्रय किया इसलिए सुग्रीवसे पुरुष मोसे स्नेह किया चाहै हैं। सुग्रीव आया मेघकी गाज समान वादित्रनिके शब्द होते आए सो पाताललंकाके लोग सुनकर व्याकुल भए। तब लक्ष्मणने विराधितसूं पूछा वादित्रनिका शब्द कौनका सुनिए है ? तब अनुराधाका पुत्र विराधित कहता भया—हे नाथ ! यह वानरवंशियोंका अधिपति, प्रेमका भरा तिहारे निकट आया है किहकंधापुरके राजा सूर्यरजके पुत्र पृथिवी पर प्रसिद्ध बड़ा बाली छोटा सुग्रीव सो बालीने तो रावणकूं सिर न नवाया, सुग्रीवकूं राज्य देय वैरागी भया, सब परिग्रह तज सुग्रीव निष्कंटक राज्य करै। ताके सुतारा स्त्री जैसे शची संयुक्त इन्द्र रमै तैसे सुग्रीव सुतारा सहित रमै। जिसके अंगद नामा पुत्र, गुण रत्नों कर शोभायमान जिसकी पृथिवी पर कीर्ति फैल रही है यह बात विराधित कहै है, अर सुग्रीव आया ही, राम और सुग्रीव मिले, रामकूं देख फूल गया है मुखकमल जाका, सुवर्णके आंगनमें बैठे अमृत-समान वाणी कर योग्य संभाषण करते भए, सुग्रीवके संग जे वृद्ध विद्याधर हैं, वे रामसूं कहते भए—हे देव ! यह राजा सुग्रीव किहकंधापुरका पति महाबली गुणवान पुरुषनिकूं प्रिय, सो कोई एक दुष्ट विद्याधर माया कर इनका रूप बनाय इनकी स्त्री सुतारा और राज्य लेयवेका उद्यमी भया है, ये वचन सुन राम मनमें चितवते भए, यह कोई मुझसे भी अधिक दुखिया है इसके बैठे ही दूजा पुरुष इसके घरमें आय धसा है, इसके राज्य विभव है, परन्तु कोई शत्रुको निवारिवे समर्थ नाहीं। लक्ष्मणने समस्त कारण सुग्रीवके मन्त्री जामवंतको पूछया, जामवंत सुग्रीवके मन-तुल्य हैं। तब वह मुख्य मंत्री महा विनय संयुक्त कहता भया,—हे नाथ ! कामकी फांसी कर बेढ्या वह पापी सुताराके रूपपर मोहित भया मायामई सुग्रीवका रूप बनाय राजमंदर आया सो सुताराके महल में गया। सुतारा महासती अपने सेवकनिसूं कहती भई यह कोई दुष्ट विद्याधर विद्यासे मेरे पतिका रूप बनाय आवै है, पापकर पूर्ण सो इसका आदर सत्कार कोई मत करो, वह पापी शंकारहित जायकर सुग्रीवके सिंहासनपर बैठ्या और ताही समय सुग्रीव भी आया, अर अपने लोकनिकूं चितावान देखा, तब विचारी मेरे घरमें काहेका विषाद है, लोक मलिन वदन ठौर ठौर भेले होय रहे हैं, कदाचित अंगद मेरुके चैत्यालयोंकी बन्दनाके अर्थ सुमेरु गया न आया होय, अथवा रानीने काहू पर रोष किया होय, अथवा जन्म जरा मरण कर भयभीत विभीषण वैराग्यकूं प्राप्त भया होय, उसका सोच होय, ऐसा विचारकर द्वारे आया रत्नमईद्वार गीत गान-रहित देख्या, लोक सचिंत देखे। मनमें विचारी यह मनुष्य और ही होगये। मन्दिरके भीतर स्त्री जनोंके मध्य अपनासा रूप किए दुष्ट विद्याधर बैठ्या देख्या, दिव्य हार पहिरे, सुन्दर

बस्त्र मुकटकी कांतिमें प्रकाश रूप। तब सुग्रीव क्रोध कर गाजा जैसे वर्षा कालका मेघ गाजै और नेत्रनिकी आरक्ततासूं दशों दिशा आरक्त होय गई जैसे सांझ फूलै। तब वह पापी कृत्रिम सुग्रीव भी गाजा जैसे माता हाथी मदकर विह्वल होय तैसा काम कर विह्वल सुग्रीवसूं लडवेकूं उठ्या दोऊ होंठ डसतैं भ्रकुटी चढाय युद्धकूं उद्यमी भए। तब श्रीचन्द्रादि मन्त्रियोंने मने किए और सुतारा पटराणी प्रकट कहती भई यह कोई दुष्ट विद्याधर मेरे पतिका रूप बनाय आया है, देह और बल और वचनोंकी कांति से तुल्य भया है परन्तु मेरे भरतारमें महापुरुषोंके लक्षण हैं सो इसमें नाहीं जैसै तुरंग और खरकी तुल्यता नाहीं,तैसें मेरे पतिकी और इसकी तुल्यता नाहीं। या भांति रानी सुताराके वचन सुनकर भी कैएक मंत्रीनिने न मानी जैसै निर्धनका वचन धनवान न माने। सादृश्यरूप देखकर हरा गया है चित्त जिनका, सो कुछ मन्त्रियोंने भेले होय मन्त्र किया पंडितनिकूं इतनोंके वचनोंका विश्वास न करना बालक अतिवृद्ध स्त्री मद्यपायी वेश्यासक्त इनके वचन प्रमाण नाहीं। और स्त्रीनिकूं शीलकी शुद्धि राखनी, शीलकी शुद्धि विना गोत्रकी शुद्धि नाहीं, स्त्रियोंको शील का ही प्रयोजन है इसलिये राजलोकमें दोनों ही न जाने पावें, बाहिर रहैं। तब इनका पुत्र अंगद तो माताके वचनसे इनकी पक्ष आया और जांबूनद कहै है हम भी इनहींके संग रहैं। अर इनका पुत्र अंगद सो कृत्रिम सुग्रीवकी पक्ष है और सात अक्षोहणी दल इनके है और सात उसपै हैं नगरकी दक्षिणके ओर वह राखा, उत्तरकी ओर यह राखे, अर बालीका पुत्र चंद्ररश्मि उसने यह प्रतिज्ञा करी जो सुतारा के महल आवैगा, उसे ही खड्ग कर मारूंगा। तब यह सांचा सुग्रीव स्त्रीके विरह कर व्याकुल शोकके निवारवे निमित्त खरदूषण पै गया, सो खरदूषण तो लक्ष्मण के खड्ग कर हता गया। फिर यह हनूमान पै गया, जाय प्रार्थना करी, मैं दुःख कर पीडित हू, मेरी सहाय करो, मेरा रूपकर कोई पापी मेरे घरमें बैठ्या है सो मोहि महा बाधा है, जायकर उसे मारो। तब सुग्रीवके वचन सुन हनुमान वडवानल समान क्रोधकर प्रज्वलित होय अपने मंत्रियनि सहित अप्रतीघात नामा विमानमें बैठ किहकंधापुर आया। सो हनूमानकूं आया सुन वह मायामई सुग्रीव हाथी चढ लडिवेकूं आया सो हनूमान दोनोंका सादृश्य रूप देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया मनमें चितवता भया ये दोनों समान रूप सुग्रीव ही हैं इनमेंसे कौनको मारूं कछु विशेष जाना न पडे। विना जाने सुग्रीव ही को मारूं तो बडा अनर्थ होय। एक मुहूर्त अपने मंत्रिनिसूं विचारकर उदासीन होय हनूमान पीछा निजपुर गया। सो हनुमानकूं गए सुग्रीव बहुत व्याकुल भया मनमें विचारता भया हजारां विद्या अर माया तिनसे मण्डित महाबली महाप्रताप रूप वायुपुत्र सो भी सन्देह कूं प्राप्त भया, सो बड़ा कष्ट अब कौन सहाय करै। अतिव्याकुल होय दुःख निवारवे अर्थ स्त्रीके वियोगरूप दावानल कर तप्तायमान आपके शरण आया है, आप शरणागत प्रतिपालक हैं। यह सुग्रीव अनेक गुणनि कर शोभित है, हे रघुनाथ! प्रसन्न

होहु याहि अपना करहु, तुम सारिखे पुरुषनिका शरीर पर-दुःखका नाशक है ऐसे जांबूनदके वचन सुन राम लक्ष्मण और विराधित कहते भए, धिक्कार होवे परदारा-रत पापी जीवनिकूं। रामने विचारी, मेरा और इसका दुःख समान है सो यह मेरा मित्र होयगा मैं इसका उपकार करूं अर यह पाछा मेरा उपकार करेगा। नहीं तो मैं निर्ग्रंथ मुनि होय मोक्षका साधन करूंगा, ऐसा विचारकर राम सुग्रीवसूं कहते भए—हे सुग्रीव! मैं सर्वथा तुझे मित्र किया जो तेरा स्वरूप बनाय आया है उसे जीत तेरा राज्य तुझे निष्कंटक कराय दूंगा और तेरी स्त्री तोहि मिलाय दूंगा अर तेरा काम होय पीछे तू सीताकी सुध हमें आन देना कि कहां है। तब सुग्रीव कहता भया—हे प्रभो! मेरा कार्य भए पीछे जो सातदिनमें सीताकी सुध न लाऊं तो अग्निमें प्रवेश करूं। यह बात सुन राम प्रसन्न भए, जैसे चन्द्रमाकी किरणकरि कुमुद प्रफुल्लित होय। रामका मुखरूप कमल फूल गया सुग्रीवके अमृतरूप वचन सुनिकर रोमांच खड़े होय आए। जिनराजके चैत्यालयमें दोनों परम मित्र भए, यह वचन किया,परस्पर कोई द्रोह न करें। बहुरि राम लक्ष्मण रथ चढ अनेक सामन्तनि सहित सुग्रीवके साथ किष्हकंधापुर आए नगरके समीप डेराकर सुग्रीवने मायामयी सुग्रीवपै दूत भेज्या। सो दूतकूं ताने खेद दिया अर मायामई सुग्रीव रथमें बैठ बड़ी सेना सहित युद्धके निमित्त निकस्या। सो दोऊ सुग्रीव परस्पर लड़े। मायामई सुग्रीव और सांचे सुग्रीवके आयुधनि कर नाना प्रकारका युद्ध भया, अंधकार होय गया, दोऊ ही खेदकूं प्राप्त भए, घनी वेरमें मायामई सुग्रीवने सांचे सुग्रीवके गदाकी दीनी सो गिर पड्या तब वह मायामई सुग्रीव इसकूं मूवा जान हर्षित होय नगरमें गया अर सांचा सुग्रीव मूर्च्छित होय परथा सो परिवारके लोक डेरामें लाये, तब सचेत होय रामसूं कहता भया, हे प्रभो! मेरा चोर हाथमें आया हुता सो नगरमें क्यों जाने दिया, जो रामचंद्रकूं पायकर मेरा दुःख नाहीं मिटैं तो या समान दुःख कहा? तब राम कही तेरा और उसका रूप देखकर हम भेद न जान्या तातैं तेरा शत्रु न हन्या। कदाचित् विना जाने तेरा ही अगर नाश होय तो योग्य नाहीं। तू हमारा परम मित्र है तेरे और हमारे जिनमंदिरमें वचन हुवा है।

अथानंतर रामने मायामई सुग्रीवकूं बहुरि युद्धके निमित्त बुलाया, सो वह बलवान् क्रोधरूप अग्नि कर जलता आया राम सन्मुख भए, वह समुद्रतुल्य अनेक शस्त्रोंके धारक सुभट तेई भए ग्राह उनकर पूर्ण ता समय लक्ष्मणने सांचा सुग्रीव पकड़ राख्या कि कभी स्त्रीके वैरसे शत्रुके सन्मुख न जाय। अर श्रीरामकूं देखकर मायामई सुग्रीवके शरीरमें जो वैताली विद्या हुती, सो ताकूं पूछकर ताके शरीरतैं निकासी तब सुग्रीवका आकार मिट वह साहसगति विद्याधर इन्द्रनीलके पर्वत समान भासता भया जैसे सांपकी कांचली दूर होय तैसे सुग्रीवका रूप दूर होय गया। तब जो आधी सेना वानरवंशनिकी यामें मेली भई थी यातैं जुदा होय युद्धकूं उद्यमी

भई, सब वानरवंशी एक होय नाना प्रकारके आयुधनिकरि साहसगतिसूं युद्ध करते भए सो साहसगति महा तेजस्वी प्रबल शक्तिका स्वामी सब वानरवंशिनिकूं दशों दिशाकूं भजाये, जैसैं पवन धूलकूं उड़ावै। बहुरि साहसगति धनुष बाण लेय रामपै आया सो मेघमंडल समान बाणनिकी वर्षा करता भया। उद्धत है पराक्रम जाका साहसगतिके और श्रीरामके महा युद्ध भया। प्रबल है पराक्रम जिनका ऐसे राम रणक्रीडामें प्रवीण क्षुद्रबाणनिकरि साहसगतिका बक्तर छेद्या और तीक्ष्ण बाणनिकरि साहसगतिका शरीर चालिनी समान कर डारया सो प्राणरहित होय भूमिमें परया। सबनि निरख निश्चय किया जो यह प्राणरहित है। तब सुग्रीव राम लक्ष्मणकी महास्तुति कर इनकूं नगरमें लाया, नगरकी शोभा करी, सुग्रीवको सुताराका संयोग भया। सो भोगसागरमें मग्न होय गया, रात दिनकी सुध नाहीं। सुतारा बहुत दिननिमें देखी, सो मोहित होय गया। अर नन्दनवनकी शोभाकूं उलंघै है ऐसा आनन्दनामा वन वहां श्रीरामकूं राखे। ता वनकी रमणीकताका वर्णन कौन कर सकै जहां महामनोज्ञ श्रीचंद्रप्रभु-का चैत्यालय वहां राम लक्ष्मण पूजा करी, अर विराधितकूं आदि दे सर्व कटकका डेरा वनमें भया खेदरहित तिष्ठे, सुग्रीवकी तेरह पुत्री रामचंद्रके गुण श्रवण कर अति अनुराग भरी वरि-वेकी बुद्धि करती भई, चन्द्रमा समान है मुख जिनका तिनके नाम सुनों, चन्द्राभा, हृदयावली हृदयधर्म्मा, अनुधरी, श्रीकांता, सुन्दरी, सुरवती देवांगना समान है विभ्रम जाका, मनोवाहिनी मनमें वसनहारी, चारुश्री, मदनोत्सवा, गुणवती अनेक गुणनिकरि शोभित, अर पद्मावती फूले कमल समान है मुख जाका, तथा जिनमती सदा जिनपूजामें तत्पर ए त्रयोदश कन्या लेकर सुग्रीव रामपै आया, नमस्कारकर कहता भया हे नाथ? ये इच्छाकरि आपकूं वरै हैं, हे लोकेश! इन कन्यानिके पति होवो। इनका चित्त जन्महीतैं यह भया जो हम विद्याधरनिकूं न वरें, आपके गुण श्रवणकर अनुरागरूप भई हैं, यह कहकर रामको परणाई, ये कन्या अति लज्जाकी भरी नम्रीभूत हैं मुख जिनके रामका आश्रय करती भई, महासुन्दर नवयौवन जिनके गुण वर्णनमें न आवैं विजुरी समान सुवर्णसमान कमल के गर्भ समान, शरीरकी कांति जिनकी ताकर आकाशविषैं उद्योत भया। वे विनयरूप लावण्यताकर मंडित रामके समीप तिष्ठीं सुंदर है चेष्टा जिनकी। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं हे मगधाधिपति! पुरुषनिमें सूर्यसमान श्रीराम सारिखे पुरुष तिनका चित्त विषय वासनातैं विरक्त है परन्तु पूर्व जन्मके सम्बन्धसूं कई एक दिन विरक्तरूप गृहमें रह बहुरि त्याग करेंगे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराणसंस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं सुग्रीवका आख्यान वर्णन करनेवाला सैंतालीसवां पर्व पूर्ण भया॥ ४७॥

अड़तालीसवां पर्व

[लक्ष्मण का कोटि शिला उठाकर नारायण होनेकी परीक्षा करना]

अथानन्तर ते सुग्रीवकी कन्या रामके मनमोहिवेके अर्थ अनेक प्रकारकी चेष्टा करती भई मानो देवलोकहीतैं उतरी है, वीणादिकका बजावना, मनोहर गीतका गावना, इत्यादि अनेक सुन्दर लीला करती भई, तथापि रामचन्द्रका मन न मोहा, सर्व प्रकारके विस्तीर्ण विभव प्राप्त भए, परन्तु रामने भोगनिविषैं मन न किया। सीताविषैं अत्यन्त दत्तचित्त समस्त चेष्टारहित महा आदरकरि सीताकूं ध्यावते तिष्ठे, जैसे मुनिराज मुक्तिको ध्यावैं। वे विद्याधरकी पुत्री गान करैं, सो उनकी ध्वनि न सुनैं, अर देवांगना-समान तिनका रूप सो न देखें। रामकूं सर्व दिशा जानकीमई भासें, और कछू भासै नाहीं, और कथा न करैं। ए सुग्रीवकी पुत्री परणी, सो पास बैठी, तिनकूं हे जनकसुते! ऐसा कह बतरावैं, काकसे प्रीतिकर पूछें--अरे काक! तू देश २ भ्रमण करै है, तैंने जानकी हू देखी? अर सरोवरविषैं कमल फूल रहे हैं तिनकी मकरन्द कर जल सुगन्ध होय रहा है तहां चकवा चकवीके युगल कलोल करते देख चितारैं सीता बिन रामकूं सर्व शोभा फीकी लागैं, सीताके शरीरके संयोगकी शंकाकरि पवनसूं आलिंगन करै कदाचित् पवन सीताजीके निकटतैं आई होय। जा भूमिमें सीताजी तिष्ठै हैं ता भूमिकूं धन्य गिनैं। अर सीता बिना चंद्रमाकी चांदनीकूं अग्नि समान जान मनमें चितवैं--कदाचित् सीता मेरे वियोगरूप अग्निकरि भस्म भई होय। अर मंदमंद पवनकर लतानिकूं हालती देख जानैं हैं यह जानकी ही है। अर बेलपत्र हालते देख जानैं जानकीके वस्त्र फरहरैं हैं, अर भ्रमरसंयुक्त फूल देख जानैं, ये जानकीके लोचन ही हैं। अर कोंपल देख जानैं ये जानकीके करपल्लव ही हैं, अर श्वेत श्याम आरक्त तीनों जातिके कमल देख जानें सीताके नेत्र तीन रंगकूं धरैं हैं अर पुष्पनिके गुच्छे देख जानैं ये जानकीके शोभायमान स्तन ही हैं, अर कदलीके स्तंभविषैं जंघानिकी शोभा जानैं, अर लाल कमलनिविषैं चरणनिकी शोभा जानैं, संपूर्ण शोभा जानकीरूप ही जानैं।

अथानंतर सुग्रीव सुताराके महलविषैं ही रहा, रामपै आय बहुत दिन भए तब रामने विचारी, ताने सीता न देखी। मेरे वियोगकर तप्तायमान भई वह शीलवंती मर गई, तातैं सुग्रीव मेरे पास नाहीं आवै। अथवा वह अपना राज्य पाय निश्चिंत भया, हमारा दुःख भूल गया। यह चिंतवनिकरि रामकी आंखनितैं आंसू पड़े, तब लक्ष्मण रामकूं सचिंत देख कोपकर लाल भए हैं नेत्र जाके, आकुलित है मन जाका, नांगी तलवार हाथमें लेय सुग्रीव ऊपर चाल्या, सो नगर कंपायमान भया। सम्पूर्ण राज्यका अधिकारी तिनकूं उलंघ सुग्रीवके महलमें जाय ताकूं कहा, रे पापी! अपने परमेश्वर राम तो स्त्रीके दुखकर दुखी, अर

तू दुर्बुद्धि स्त्रीसहित सुखसों राज्य करै, रे विद्याधर-वायस, विषयलुब्ध दुष्ट ! जहां रघुनाथने तेरा शत्रु पठाया है तहां मैं तोहि पठाऊंगा। या भांति अनेक क्रोधके उग्र वचन लक्ष्मण कहे, तब वह हाथ जोड़ नमस्कारकर लक्ष्मणका क्रोध शांत करता भया। सुग्रीव कहै है, हे देव ! मेरी भूल माफ करहु, मैं करार भूल गया, मो सारिखे क्षुद्र मनुष्यनिके खोटी चेष्टा होय है। अर सुग्रीवकी सम्पूर्ण स्त्री कांपती हुई लक्ष्मणकूं अर्घ देय आरती करती भई, अर हाथ जोड़ नमस्कारकर पतिकी भिक्षा मांगती भई। तब आप उत्तम पुरुष तिनकूं दीन जान कृपा करते भए। यह महन्त पुरुष प्रणाममात्र ही करि प्रसन्न होंय, अर दुर्जन महादान लेकर हू प्रसन्न न होंय। लक्ष्मणने सुग्रीवकूं प्रतिज्ञा चिताय उपकार किया, जैसें यक्षदत्तकूं माताका स्मरण कराय मुनि उपकार करते भए। यह वार्ता सुन राजा श्रेणिक गौतमस्वामीसूं पूछे है, हे नाथ ! यक्षदत्तका वृत्तांत मैं नीका जानना चाहूं हूँ। तब गौतम स्वामी कहते भए—हे श्रेणिक ! एक क्रौंचपुर नगर, तहां राजा यक्ष, राणी राजिलता, ताके पुत्र यक्षदत्त सो एक दिन एक स्त्रीकूं नगरके बाहर कुटीमे तिष्ठती देख कामबाणकर पीड़ित होय ताकी ओर चाल्या। रात्रिविषैं तब अयन नामा मुनि याकूं मना करते भए। यह यक्षदत्त खड्ग है जाके हाथमें सो विजुरीके उद्योतकरि मुनिकूं देखकर तिनके निकट जाय विनय संयुक्त पूछता भया—हे भगवान् ! काहे को मोहि मने किया ? तब मुनि कहा जाको देख तू कामवश भया है सो स्त्री तेरी माता है, तातैं यद्यपि सूत्रमें रात्रिको बोलना उचित नाहीं, तथापि करुणाकर अशुभ कार्यतैं मनै किया। तब यक्षदत्तने पूछा हे स्वामी ! यह मेरी माता कैसे है ? तब मुनि कही सुन, एक मृत्यकावती नगरी, तहां कणिक नामा वणिक, ताके धू नामा स्त्री, ताके बन्धुदत्त नामा पुत्र, ताकी स्त्री मित्रवती लतादत्तकी पुत्री, सो स्त्रीकूं छाने गर्भ राखि, बन्धुदत्त जहाज बैठी देशांतर गया। ताकूं गए पीछे याकी स्त्रीके गर्भ जान सासू ससुरने दुराचारिणी जान घरसे निकाल दई, सो उत्पलका दासीको लार लेय बड़े सारथीकी लार पिताके घर चाली। सो उत्पलकाको सर्पने डसी वनमें मुई। अर यह मित्रवती शीलमात्र ही हैं सहाय जाके सो क्रौंचपुरविषैं आई, अर महाशोक की भरी ताके उपवनविषैं पुत्रका जन्म भया, तब यह तो सरोवरविषैं वस्त्र धोयवे गई अर पुत्र-रत्न कंबलमें बेढा, सो कंबल-संयुक्त पुत्रकूं श्वान लेय गया सो काहूने छुड़ाया, राजा यक्षदत्त-कूं दिया, ताके रानी राजिलता अपुत्रवती सो राजाने पुत्र रानीको सौंप्या, ताका यक्षदत्त नाम धरया, सो तू अर वह तेरी माता वस्त्र धोय आई सो ताहि न देखि विलाप करती भई, एक देव पुजारीने ताहि दया कर धैर्य बंधाया तू मेरी बहिन है, ऐसा कह राखी, सो यह मित्रवती सहाय-रहित लज्जाकर अकीर्तिके भयसे थकी बापके घर न गई। अत्यन्त शीलकी भरी जिनधर्म-विषैं तत्पर दरिद्रीको कुटीविषैं रहै, सो तैं भ्रमण करता देख कुभाव किया। अर याका पति

बंधुदत्त रत्नकंबल दे गया हुता, ताविषैं ताहि लपेट सो सरोवर गई हुती, सो रत्नकंबल राजाके घरमें है अर वह बालक तू है या भांति मुनि कही। तब यह नमस्कारकर खड्ग हाथमें लेय राजा यक्षपै गया, अर कहता भया—या खड्ग कर तेरा सिर काटूंगा, नातर मेरे जन्मका वृत्तांत कहो। तब राजा यक्ष यथावत वृत्तांत कहा। अर वह रत्नकंबल दिखाया, सो लेयकर यक्षदत्त अपनी माता कुटीमें तिष्ठै थी तासूं मिला, अर अपना बन्धुदत्त पिता ताकूं बुलाया महा उत्सव अर महा विभवकर मंडित माता पितासूं मिला, यह यक्षदत्तकी कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कही—जैसे यक्षदत्तको मुनिने माताका वृत्तांत जनाया तैसें लक्ष्मणने सुग्रीव को प्रतिज्ञा विस्मरण होय गया हुता सो जनाया। सुग्रीव लक्ष्मणके संग शीघ्र ही रामचन्द्रपै आया, नमस्कार किया, अर अपने सब विद्याधर सेवक महाकुलके उपजे बुलाए। वे या वृत्तांतको जानते हुते, अर स्वामी कार्यविषैं तत्पर तिनकूं समझाय कर कहा सो सर्व ही सुनो--रामने मेरा बड़ा उपकार किया। अब सीताकी खबर इनकूं लाय दो, तातैं तुम दिशानिकूं जाओ, अर सीता कहां है, यह खबर लावो। समस्त पृथिवीपर जल स्थल आकाशविषैं हेरो, जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र धातकीखण्ड, कुलाचल, वन, सुमेरु, नाना प्रकारके विद्याधरनिके नगर, समस्त अस्थानक सर्व दिशा ढूंढो।

अथानंतर ये सब विद्याधर सुग्रीवकी आज्ञा सिर पर धारकर हर्षित भए सब ही दिशानिकूं शीघ्र ही दौड़े; सब ही विचारें, हम पहिली सुध लावें, तासों राजा अति प्रसन्न होय। अर भामंडलकूं हू खबर पठाई जो सीता हरी गई ताकी सुध लेवो, तब भामंडल बहिनके दुःखकर अति ही दुःखी भया, हेरनेका उद्यम किया। अर सुग्रीव आप भी ढूंढनेकूं निकसा, सो ज्योतिषचक्रके ऊपर होय विमानमें बैठ्या देखता भया दुष्ट विद्याधरनिके नगर सर्व देखे, सो समुद्रके मध्य जम्बूद्वीप देखा, वहां महेंद्र पर्वत पर आकाशसे सुग्रीव उतरा, तहां रत्नजटी तिष्टे था सो डरा जैसे गरुड़तैं सर्प डरैं। बहुरि विमान नजीक आया तब रत्नजटी जाना कि यह सुग्रीव है। लंकापतिने क्रोधकर मोपर भेजा सो मोहि मारेगा, हाय मैं समुद्रमें क्यों न डूब मूया अंतर द्वीपविषैं मारा जाऊंगा? विद्या तो रावण मेरी हर लेय गया अब प्राण हरने याहि पठाया, मेरी यह वांछा हुती, जैसे तैसे भामंडल पर पहुचं तो सर्व कार्य होय सो न पहुच सक्या, यह चिंतवन करै है, इतनेमें ही सुग्रीव आया, मानों दूसरा सूर्य ही है, द्वीपका उद्योत करता आया सो याको वनकी रजकर धूसरा देख दया कर पूछता भया, हे रत्नजटी! पहिले तू विद्या कर संयुक्त हुता अब हे भाई! तेरी कहा अवस्था भई? या भांति सुग्रीव दया कर पूछा सो रत्नजटी अत्यंत कंपायमान कछु कह न सकै। तब सुग्रीव कही, भय मत कर, अपना वृत्तांत कह, बारंबार धैर्य बंधाया, तब रत्नजटी नमस्कार कर कहता भया--रावण दुष्ट सीताकूं हरण कर ले जाता हुता, सो ताके अर

मेरे परस्पर विरोध भया, मेरी विद्या छेद डारी, अब विद्यारहित जीवितविषैं सन्देह चिन्तावान तिष्ठे था सो हे कपिवंशके तिलक ! मेरे भाग्यतैं तुम आए। ये वचन रत्नजटीके सुन सुग्रीव हर्षित होय ताहि संग लेय अपने नगरमें श्रीराम पै लाया, सो रत्नजटी राम-लक्ष्मणसों सबके समीप हाथ जोड़ नमस्कार कर कहता भया—हे देव ! सीता महासती है, ताकूं दुष्ट निर्दई लंकापति रावण हर लेगया, सो रुदन करती विलाप करती विमानमें बैठी मृगी समान व्याकुल मैं देखी, वह बलवान बलात्कार लिए जाता हुता सो मैंने क्रोधकर कहा--यह महासती मेरे स्वामी भामण्डलकी बहिन है, तू छोड़ दे, सो वाने कोपकर मेरी विद्या छेदी, वह महा प्रबल, जाने युद्धमें इन्द्रकूं जीता पकड़ लिया, अर कैलाश उठाया, तीन खण्डका स्वामी, सागरांत पृथिवी जाकी दासी, जो देवनिहू करि न जीता जाय, सो ताहि मैं कैसे जीतूं ? ताने मोहि विद्यारहित किया। यह सकल वृत्तांत राम देवने सुनकर ताकूं उरसे लगाया, अर वारंवार ताहि पूछते भये। बहुरि राम पूछते भए--हे विद्याधरो ! कहो लंका कितनी दूर है ? तब वे विद्याधर निश्चल होय रहे, नीचा मुख किया, मुख की छाया और ही होय गई, कछु जवाब न दिया। तब रामने उनका अभिप्राय जाना जो यह हृदयविषैं रावणतैं भयरूप हैं मन्द दृष्टिकर तिनकी ओर निहारे। तब वे जानते भए--हमकूं आप कायर जानो हो, लज्जावान होय हाथ जोड़ सिर नवाय कहते भये--हे देव ! जाके नाम सुनैं हमकूं भय उपजै है, ताकी बात हम कैसे कहैं कहां हम अल्प शक्तिके धनी, अर कहां वह लंकाका ईश्वर, तातैं तुम यह हठ छोडो, अब वस्तु गई जानो। अथवा तुम सुनो हो, तो हम सब वृत्तांत कहें, सो नीके उरमें धारो। लवणसमुद्रविषैं राक्षसद्वीप प्रसिद्ध है, अद्भुत संपदाका भरा, सो सातसौ योजन चौड़ा है, अर प्रदक्षिणाकर किंचित् अधिक इकीस सौ योजन वाकी परिधि है। ताके मध्य सुमेरु तुल्य त्रिकूटाचल पर्वत है, सो नव योजन ऊंचा पचास योजनके विस्ताररूप, नानाप्रकारके मणि अर सुवर्ण कर मण्डित, आगैं मेघवाहनको राक्षसनिके इन्द्रने दिया हुता। ता त्रिकूटाचलके शिखरपर लंका नाम नगरी, शोभायमान रत्नमई जहां विमान समान घर अर अनेक क्रीड़ा करनेके निवास, तीस योजनके विस्तार लंकापुरी महाकोट खाईकर मण्डित, मानों दूजी वसुंधरा ही है। अर लंकाके चौगिरद बड़े बड़े रमणीक स्थानक हैं, अति मनोहर मणि सुवर्णमई, जहां राक्षसनिके स्थानक हैं, तिनविषैं रावणके बन्धुजन बसै हैं। संध्याकार सुवेल कांचन ह्लादन पोधन हंस हरि सागरघोष अर्धस्वर्ग इत्यादि मनोहर स्थानक वन-उपवन आदिकरि शोभित देवलोक समान हैं। जिनविषैं भ्रात, पुत्र, मित्र, स्त्री बांधव, सेवकजन सहित लंकापति रमै हैं सो विद्याधरनि सहित क्रीडा करता देख लोकनिकूं ऐसी शंका उपजै है मानो देवनि सहित इंद्र ही रमै है। जाका महाबली विभीषणमा भाई औरनिकरि युद्धमें न जीता जाय ता समान बुद्धि देवनिमें नाहीं अर ता समान मनुष्य नाहीं ताही करि रावण का राज्य पूर्ण है, अर रावण का कुम्भकर्ण त्रिशूलका धारक जाकी युद्धमें टेढी भौं हैं देव भी देख सकें नाहीं, तो मनुष्यनिकी

कहा बात ? अर रावणका पुत्र इन्द्रजीत पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध है अर जाके बड़े २ सामन्त सेवक हैं, नानाप्रकार विद्याके धारक शत्रुनिके जीतनहारे, अर जाका छत्र पूर्ण चन्द्रमा समान जाहि देखकर बैरी गर्वकूं तजै हैं तातैं सदा रण संग्राममें जीत ही जीतकर सुभटपनेका विरद प्रकट किया है सो रावणके छत्रकूं देख तिनका सर्व गर्व जाता रहै। अर रावणका चित्रपट देखे, अथवा नाम सुनें शत्रु भयकूं प्राप्त होय, जो एसा रावण तासों युद्ध कौन कर सकै ? तातैं यह कथा ही न करना और बात करो। यह बात विद्याधरनिके मुखतैं सुनकर लक्ष्मण बोला मानों मेघ गाजा। तुम एती प्रशंसा करो हो, सो सब मिथ्या है। जो वह बलवान हुता तो अपना नाम छिपाय स्त्रीकूं चुराकर काहे लेगया ? वह पाखण्डी अतिकायर अज्ञानी पापी नीच राक्षस ताके रंचमात्र भी शूरवीरता नाहीं। अर राम कहते भए -बहुत कहने करि कहा, सीताकी सुध ही कठिन हुती अब सुध अई, तब सीता आय चुकी। अर तुम कहो और बात करो, और चिन्तवन करो, सो हमारे और कछु बात नाहीं,और कछु चिंतवन नाहीं। सीताकूं लावना यही उपाय है। रामके वचन सुनकर वृद्ध विद्याधर क्षण एक विचारकर बोले--हे देव ! शोक तजो, हमारे स्वामी होवो, अर अनेक विद्याधरनिकी पुत्री गुणनिकर देवांगना समान, तिनके भरतार होवो, अर समस्त दुःखकी वृद्धि छोड़ो। तब राम कहते भए--हमारे और स्त्रीनिका प्रयोजन नाहीं, जो शचीसमान स्त्री होय तो भी हमारे अभिलाष नाहीं। जो तिहारी हममें प्रीति है तो सीता हमें शीघ्र ही दिखावो। तब जांबूनद कहता भया, हे प्रभो ! या हठको तज, एक क्षुद्र पुरुषने कृत्रिम मयूरका हठ किया ताकी न्याईं स्त्रीका हठकर दुखी मत होवो। यह कथा सुन—

एक वेणातट ग्राम तहां सर्वरुचि नामा गृहस्थ ताके विनयदत्त नामा पुत्र, ताकी माता गुणपूर्णा, अर विनयदत्तका मित्र विशालभूत सो पापी विनयदत्तकी स्त्रीसों आसक्त भया, स्त्रीके वचनकरि विनयदत्तकूं कपटकरि वनविषैं लेगया, सो एक वृक्षके ऊपर बांध वह दुष्ट घर उठि आया। कोई विनयदत्तके समाचार पूछे तो ताहि कछु मिथ्या उत्तर देय सांचा होय रहै। अर जहां विनयदत्त बांधा हुता, तहां एक क्षुद्र नामा पुरुष आया वृक्षके तले बैठा। वृक्ष महा सघन विनयदत्त कुरलावता हुता, क्षुद्र देखै तो दृढ बंधनकर मनुष्य वृक्षकी शाखाके अग्रभाग बंधा है, तब क्षुद्र दयाकर ऊपर चढा, विनयदत्तको बंधनतें निवृत्त किया। विनयदत्त द्रव्यवान सो क्षुद्रकूं उपकारी जान अपने घर लेगया। भाईतैं हू अधिक हित राखे, विनयदत्तके घर उत्साह भया। अर वह विशालभूत कुमित्र दूर भाग गया, क्षुद्र विनयदत्तका परम मित्र भया सो क्षुद्रका एक रमनेका पत्रमयी मयूर सो पवनकर उड्या राजपुत्रके घर जाय पड्या, सो ताने राख मेल्या, ताके निमित्त क्षुद्र महा शोककर मित्रकूं कहता भया—मोहि जीवता इच्छै है तो मेरा वही मयूर लाव, विनयदत्त कहा मैं तोहि रत्नमई मयूर कराय दूं अर सांचे मोर मंगाय दूं। वह पत्रमई

मयूर पवनतैं उड गया सो राजपुत्रने राखा, मैं कैसे लाऊं ? तब क्षुद्र कही मैं वही लेऊं, रत्ननिके न लूं, न सांचे लूं। विनयदत्त कहे जो चाहो सो लेहु वह मेरे हाथ नाहीं, क्षुद्र बारम्बार वही मांगे सो वह तो मूढ हुता, तुम पुरुषोत्तम होय ऐसे क्यों भूलो हो। वह पत्रनिका मयूर राजपुत्रके हाथ गया, विनयदत्त कैसे लावै। तातैं अनेक विद्याधरनिकी पुत्री सुवर्ण समान वर्ण जिनका, श्वेत श्याम आरक्त तीन वर्णकूं धारै हैं नेत्र कमलनिके सुंदर पीवर हैं स्तन जिनके, कदली समान जंघा जिनकी, अर मुखकी कांतिकर शरदकी पूर्णमासीके चंद्रमाकूं जीते, मनोहर गुणनिकी धरणहारी, तिनके पति होऊ। हे रघुनाथ! महाभाग्य! हमपर कृपा करहु, यह दुःखका बढावनहारा शोक संताप छोडहु। तदि लक्ष्मण बोले—हे जाम्बूनद! तै यह दृष्टांत यथार्थ न दिया, हम कहै हैं सो सुनहु—एक कुसुमपुर नामा नगर, तहां एक प्रभव नामा गृहस्थ, जाके यमुना नामा स्त्री, ताके धनपाल बंधुपाल गृहपाल पशुपाल क्षेत्रपाल ये पांच पुत्र, सो यह पांचों ही पुत्र यथार्थ गुणनिके धारक, धनके कमाऊ कुटुम्बके पालिवेविषैं उद्यमी, सदा लौकिक धन्धे करैं। क्षणमात्र आलस नाहीं, अर इन सबनितैं छोटा आत्म श्रेय नामा कुमार सो पुण्यके योगकरि देवनि कैसे भोग भोगवै, सो याकों माता पिता अर बड़े भाई कटुक वचन कहें। एक दिन यह मानी नगर बाहिर भ्रमै था सो कोमल शरीर खेदकूं प्राप्त भया उद्यम करवेकूं असमर्थ सो आपका मरण बांछता हुता ता समय याके पूर्व पुण्य कर्मके उदयकरि एक राजपुत्र याहि कहता भया, हे मनुष्य! मैं पृथुस्थान नगर के राजका पुत्र भानुकुमार हू सो देशांतर भ्रमणकूं गया हुता, सो अनेक देश देख, पृथिवीविषैं भ्रमण करता दैवयोगतैं कर्मपुर गया, सो एक निमित्तज्ञानी पुरुषकी संगतिविषैं रहा ताने मोहि दुखी जान करुणाकर यह मंत्रमई लोहका कडा दिया, अर कही यह सब रोगका नाशक है, बुद्धिवर्द्धक है, ग्रह सर्प पिशाचादिकका वश करणहारा है, इत्यादि अनेक गुण हैं सो तू राख, ऐसे कह मोहि दिया। अर अब मेरे राज्यका उदय आया। मैं राज्य करवेकूं अपने नगर जावूं हू, यह कड़ा मैं तोहि दूं हू। तू मरे मत, जो वस्तु आपपै आई अपना कार्य कर काहूकूं दे डारो तो यह महाफल है सो लोकविषैं ऐसे पुरुषनिकूं मनुष्य पूजैं हैं। आत्म श्रेयको ऐसा कह राजकुमार अपना कड़ा देय अपने नगर गया। अर यह कड़ा लेय अपने घर आया। ताही दिन ता नगरके राजाकी रानीकूं सर्पने डसी हुती, सो चेष्टा-रहित होय गई। ताहि मृतक जान जरावेकूं लाए हुते, सो आत्मश्रेयने मंत्रमई लोहेके कडेके प्रसादकरि विषरहित करी, तब राजा अति दान देय बहुत सत्कार किया, आत्मश्रेयके कडेके प्रसादकरि महाभोग सामग्री भई, । सब भाइनविषैं यह मुख्य ठहरा। पुण्यकर्मके प्रभावकरि पृथिवीविषैं प्रसिद्ध भया। एक दिन कडेकूं वस्त्रविषैं बांध सरोवर गया, सो गोह आय कडेकूं लेय महावृक्षके तले ऊंडा बिल है ताविषैं पैठ गई, बिल शिलानिकरि आच्छादित सो गोह बिल विषैं बैठी भयानक शब्द करे। आत्म-

श्रेयने जाना कड़ेकूं गोह बिलविषै लेगई गर्जना करै है। तब आत्मश्रेय वृक्ष जडतें उखाड शिला दूर कर गोहका बिल चूर कर डारा अर बहुत धन लिया। सो राम तो आत्मश्रेय हैं, अर सीता कड़े समान है,लंका बिल समान है, रावण गोह समान है तातैं हो विद्याधरो! तुम निर्भय होवो,ये लक्ष्मणके वचन जांबूनदके वचननिकूं खंडन करनहारे सुनकर विद्याधर आश्चर्यकूं प्राप्त भए।

अथानंतर जांबूनद आदि सब रामसूं कहते भए हे देव! अनंतवीर्य योगींद्रकूं रावणने नमस्कार कर अपने मृत्युका कारण पूछथा, तब अनंतवीर्यकी आज्ञा भई-जो कोटिशिलाकूं उठावेगा, ताकरि तेरी मृत्यु है, तब ये सर्वज्ञके वचन सुन रावणने विचारी ऐसा कौन पुरुष है जो कोटिशिलाकूं उठावै? ये वचन विद्याधरनिके सुन लक्ष्मण बोले मैं अबही यात्राकूं वहां चालूंगा तब सबही प्रमाद तज इनके लार भए। जांबूनद महाबुद्धि, सुग्रीव, विराधित, अर्कमाली, नल नील इत्यादि नामी पुरुष विमानविषैं राम लक्ष्मणकूं चढाय कोटिशिलाकी ओर चाले। अंधेरी रात्रिविषैं शीघ्र ही जाय पहुँचे, शिलाके समीप उतरे, शिला महा मनोहर सुर-नर-असुरनिकरि नमस्कार करने योग्य, ये सर्व दिशाविषैं सामंतनिकूं रखवारे राख शिलाकी यात्राकूं गए, हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार किया, सुगंध कमलनिकरि तथा अन्य पुष्पनिकरि शिलाकी अर्चा करी। चंदनकर चरची, सो शिला कैसी शोभती भई, मानो साक्षात् शची ही है। ताविषैं जे सिद्ध भए तिनकूं नमस्कारकर हाथ जोड़ भक्तिकर शिलाकी तीन प्रदक्षिणा दई। सब विधिविषैं प्रवीण लक्ष्मण कमर बांध महा विनयकूं धरता संता नमोकारमंत्रमें तत्पर महा भक्तिकरि स्तुति करवेकूं उद्यमी भया। अर सुग्रीवादि वानरवंशी सब ही जयजयकार शब्दकर महा स्तोत्र पढ़ते भए, एकाग्रचित्तकर सिद्धनिकी स्तुति करैं हैं, जो भगवान् सिद्ध त्रैलोक्यके शिखर महादैदीप्यमान हैं अर वे सिद्ध स्वरूपमात्र सत्ताकर अविनश्वर हैं, तिनका बहुरि जन्म नाहीं, अनंतवीर्यकर संयुक्त, अपने स्वभावमें लीन, महा समीचीनता युक्त, समस्त कर्म-रहित, संसार-समुद्रके पारगामी, कल्याण-मूर्ति, आनंद-पिंड, केवलज्ञान केवलदर्शनके आधार, पुरुषाकार परमसूक्ष्म अमूर्ति अगुरुलघु असंख्यात-प्रदेशी अनंतगुणरूप सर्वकूं एक समयमें जानैं, सब सिद्ध समान, कृतकृत्य, जिनके कोई कार्य करना रहा नाहीं। सर्वथा शुद्ध भाव सर्वद्रव्य सर्व क्षेत्र सर्व काल सर्व भावके ज्ञाता,निरंजन,आत्मज्ञानरूप शुक्लध्यान अग्निकर अष्टकर्म वनके भस्म करणहारे,अर महाप्रकाशरूप प्रतापके पुंज,जिनकूं इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि पृथिवीके नाथ सब ही सेवैं, महास्तुति करैं, ते भगवान् संसारके प्रपंचतैं रहित अपने आनंदस्वभाव, तिनमई अनंत सिद्ध भये अर अनन्त होंहिगे। अढ़ाई द्वीपके विषै मोक्षका मार्ग प्रवृत्तै है, एकसौ साठ महाविदेह अर पांच भरत, पांच ऐरावत, एकसौ सत्तर क्षेत्र, तिनके आर्यखंडविषैं जे सिद्ध भए अर होहिंगे तिन सबनिकूं हमारा नमस्कार होहु। या भरतक्षेत्रविषै यह कोटिशिला यहांतैं सिद्धशिलाकूं प्राप्त भए ते

हमकूं कल्याणके कर्त्ता होहु । जीवनिकूं महामंगलरूप, या भांति चिरकाल स्तुतिकर चित्तविषैं सिद्धनिका ध्यान कर सब ही लक्ष्मणकूं आशीर्वाद देते भए—

या कोटिशिलातैं जे सिद्ध भए वे सर्व तिहारा विघ्न हरैं, अरिहंत सिद्ध साधु जिन-शासन ये सर्व तुमकूं मंगलके करता होहु, या भांति शब्द करते भए । अर लक्ष्मण सिद्धनिका ध्यान कर शिलाकूं गोडे प्रमाण उठावता भया । अनेक आभूषण पहिरे भुज-बंधन कर शोभा-यमान है भुजा जाकी सो भुजानिकरि कोटिशिला उठाई तब आकाशविषैं देव जय जय शब्द करते भए । सुग्रीवादिक आश्चर्यकूं प्राप्त भए । कोटिशिलाकी यात्राकर बहुरि सम्मेदशिखर गए अर कैलाशकी यात्रा कर, भरतक्षेत्रके सर्व तीर्थ वंदे, प्रदक्षिणा करी, सांझ समय विमान बैठ जय जय कार करते संते राम लक्ष्मणके लार किहकूंधापुर आए । आप अपने अपने स्थानक सुखतैं शयन किया बहुरि प्रभात भया सब एकत्र होय परस्पर वार्त्ता करते भए—देखो,अब थोडेही दिनमें इन दोऊ भाईनिका निष्कंटक राज्य होयगा । ये परम शक्तिकूं धरैं हैं । वह निर्वाणशिला इनने उठाई सो यह सामान्य मनुष्य नाहीं, यह लक्ष्मण रावणकूं निसंदेह मारेगा । तब कैयक कहते भए रावणने कैलास उठाया सो बाहूका पराक्रम घाट नाहीं । तब और कहते भए ताने कैलाश विद्याके बलतैं उठाया, सो आश्चर्य नाहीं तब कैयक कहते भये काहेकूं विवाद करौ जगतके कल्याण अर्थ इनका उनका हित कराय देवौ या समान और नाहीं रावणतैं प्रार्थनाकर सीता लाय रामकूं सौंपौ, युद्धतैं कहा प्रयोजन है । आगैं तारकमेरु महा बलवान भए सो संग्रामविषैं मारे गए । वे तीनखंडके अधिपति महाभाग्य, महापराक्रमी हुते । अर और हू अनेक राजा रणविषैं हते गए तातैं साम कहिए परस्पर मित्रता श्रेष्ठ है । तब ये विद्याकी विधिमें प्रवीण पर-स्पर मंत्रकर श्रीरामपै आए अति भक्तितैं रामके समीप नमस्कारकर बैठे, कैसे शोभते भए जैसैं इंद्रके समीप देव सोहैं । कैसे हैं राम ? नेत्रनिकूं आनंदके कारण सो कहते भए अब तुम काहे ढील करो हो, मो बिना जानकी लंकाविषैं महादुःखकरि तिष्ठै है । तातैं दीर्घ सोच छांडि अवार ही लंकाकी तरफ गमनका उद्यम करहु । तब जे सुग्रीवके जांबूनदादि मंत्री राजनीतिमें प्रवीन हैं ते रामसूं वीनती करते भए—हे देव ! हमारे ढील नाहीं परन्तु यह निश्चय कहो सीताके लायवे हीका प्रयोजन है अक राक्षसनितैं युद्ध करना है, यह सामान्य युद्ध नाहीं विजय पावना अति कठिन है । वह भरत क्षेत्रके तीन खंडका निष्कंटक राज करै है । द्वीप-समुद्रनिकेविषैं रावण प्रसिद्ध है जासूं धातुकीखंड द्वीपके शंका माने । जंबूद्वीपविषैं जाकी अधिक महिमा अद्भुतकार्यका करणहारा, सबके उरका शल्य है, सो युद्ध-योग्य नाहीं । तातैं रणकी बुद्धि छांड़ि हम जो कहैं सो करहु । हे देव ! ताहि युद्ध सन्मुख करिवेमें जगतकूं महाक्लेश उपजै है, । प्राणीनिके समूहका विध्वंस होय है,समस्त उत्तम क्रिया जगततैं जाय है तातैं विभी-

षण रावणका भाई, सो पापकर्म रहित श्रावकव्रतका धारक है, रावण ताके वचनकूं उलंघै नाहीं, तिन दोऊ भाईनिमें अंतराय रहित परम प्रीति है सो विभीषण चातुर्यतातैं समझावेगा अर रावणहू अपयशतैं शंकेगा। लज्जाकर सीताकूं पठाय देगा तातैं विचारकर रावणपै ऐसा ऐसा पुरुष भेजना, जो बातैं करने में प्रवीण होय, अर राजनीतिमें कुशल होय, अनेक नय जाने, अर रावणका कृपापात्र हो, ऐसा हेरहु। तब महोदधि नामा विद्याधर कहता भया तुम कछु सुनी है लंकाकी चौगिरद मायामई यंत्र रचा है सो आकाशके मार्गतैं कोऊ जाय सकै नाहीं पृथिवीके मार्गतैं जाय सकै नाहीं। लंका अगम्य है, महाभयानक, देख्या न जाय ऐसा मायामईयंत्र बनाया है सो इतने बैठे हैं तिनमें तो ऐसा कोऊ नाहीं जो लंकाविषैं प्रवेश करै तातैं पवनंजयका पुत्र श्रीशैल जाहि हनूमान कहै हैं सो महा विद्याबलवान पराक्रमी प्रतापरूप है ताहि जांचो, वह रावणका परम मित्र है, अर पुरुषोत्तम है, सो रावणकूं समझाय विघ्न टारेगा। तब यह बात सबने प्रमाण करी। हनूमानके निकट श्रीभूत नामा दूत शीघ्र पठाया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं-हे राजन्! महा बुद्धिमान होय, अर महाशक्तिकूं धरे होय, अर उपाय करैं तो भी होनहार होय सो ही होय जैसैं उदयकालमें सूर्यका उदय होय ही तैसैं जो होनहार सो होय ही।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं कोटिशिला उठावानेका व्याख्यान वर्णन करनेवाला अडतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥४८॥

उनंचासवां पर्व

[हनुमान का लंकाको प्रस्थान]

अथानन्तर श्रीभूतनामा दूत पवनके वेगतैं शीघ्रही आकाशके मार्गसों लक्ष्मीका निवास जो श्रीपुरनगर, अनेक जिन-भवन तिनकरि शोभित तहां गया, जहां मन्दिर सुवर्ण रत्नमई सो तिनकी माला करि मण्डित, कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल, सुन्दर झरोखनिकरि शोभित, मनोहर उपवनकर रमणीक, सो दूत नगरकी शोभा अर नगरके अपूर्व लोग देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। बहुरि इन्द्रके महल समान राजमंदिर तहांकी अद्भुत रचना देख थकित होय रहा। हनुमान खरदूषणकी बेटी अनंगकुसमा रावणकी भानजी ताके खरदूषणका शोक,कर्मके उदयकरि शुभ अशुभ फल पावै, ताहि कोई निवारिवे शक्त नाहीं, मनुष्यनिकी कहा शक्ति, देवनिहूकरि अन्यथा न होय। दूतने द्वारे आय अपने आगमनका वृत्तांत कहा, सो अनंगकुसमाकी मर्यादा नामा द्वारपाली दूतकूं भीतर लेय गई अनंगकुसमाने सकल वृत्तांत पूछया सो श्रीभूतने नमस्कार

कर विस्तारसूं कहा, दंडकवनमें श्रीराम लक्ष्मणका आवना, शम्बूकका बध, खरदूषणतैं युद्ध, बहुरि भले भले सुभटनिसहित खरदूषणका मरण, यह वार्ता सुन अंनगकुसमा मूर्च्छाकूं प्राप्त भई। तब चन्दनके जलकरि सींच सचेत करी अनंगकुसमा अश्रुपात डारती विलाप करती भई—हाय पिता, हाय भाई! तुम कहां गए। एक वार मोहि दर्शन देवो, वचनालाप करो महा भयानक वनमें भूमिगोचरीनि तुमकूं कैसे हते? या भांति पिता अर भाईके दुःखकरि चन्द्रनखाकी पुत्री दुखी भई सो महा कष्टकरि सखिनिने शांतिताकूं प्राप्त करी। अर जे प्रवीण उत्तम जन हुते, तिन बहुत संबोधी। तब यह जिनमार्गविषैं प्रवीण समस्त संसारके स्वरूपकूं जान लोकाचारकी रीति-प्रमाण पिताके मरणकी क्रिया करती भई। बहुरि दूतकूं हनूमान महाशोकके भरे सकल वृत्तांत पूछते भए। तब इनकूं सकल वृत्तांत कहा, सो हनूमान खरदूषणके मरणकरि अति क्रोधकूं प्राप्त भया। भौंह टेढी होय गई, मुख अर नेत्र आरक्त भए। तब दूतने कोप निवारिवेके निमित्त मधुर स्वरनिकरि विनती करी-हे देव! किहकंधापुरके स्वामी सुग्रीव तिनकूं दुख उपजा, सो तो आप जानो ही हो, साहसगति विद्याधर सुग्रीवका रूप बनाय आया, तातैं पीडित भया सुग्रीव श्रीरामके शरणें गया सो राम सुग्रीवका दुख दूर करवे निमित्त किहकंधापुर आए। प्रथम तो सुग्रीव अर वाके युद्ध भया सो सुग्रीवकरि वह जीता न गया। बहुरि श्रीरामके अर वाके युद्ध भया सो रामकूं देख वैताली विद्या भाग गई। तब वह साहसगति सुग्रीवके रूपरहित जैसा हुता तैसा होय गया। महायुद्धविषैं रामने ताहि मारया, सुग्रीवका दुःख दूर किया। यह बात सुन हनूमानका क्रोध दूर भया। मुखकमल फूला, हर्षित होय कहते भए—

अहो श्रीरामने हमारा बड़ा उपकार किया। सुग्रीवका कुल अकीर्तिरूप सागरमें डूबे था, सो शीघ्र ही उद्धारा, सुवर्ण कलश-समान सुग्रीवका गोत्र सो अपयशरूप ऊंडे कूपमें डूबता हुता। श्रीराम सन्मतिके धारकने गुणरूप हस्तकरि काढ्या। या भांति हनूमान बहुत प्रशंसा करी, अर सुखके सागरविषैं मग्न भए। हनूमानकी दूजी स्त्री सुग्रीवकी पुत्री पद्मरागा पिताके शोकका अभाव सुन हर्षित भई। ताके बड़ा उत्साह भया। दान पूजा आदि अनेक शुभ कार्य किए। हनूमानके घरविषैं अनंगकुसमाके घर खरदूषणका शोक भया, अर पद्मरागाके सुग्रीवका हर्ष भया, या भांति विषमताकूं प्राप्त भए घरके लोग तिनको समाधान कर हनूमान किहकंधा-पुरकूं सन्मुख भए। महा ऋद्धिकर युक्त सेनासूं हनुमान चल्या, आकाशविषैं अधिक शोभा भई, महा रत्नमई हनूमानका विमान ताकी किरणनिकरि सूर्यकी प्रभा मंद होय गई। हनूमानकूं चालता सुन अनेक राजा लार भए, जैसैं इंद्रकी लारें बड़े बड़े देव गमन करैं आगैं पीछे दाहिनी बाईं ओर अनेक राजा चाले जाय हैं, विद्याधरनिके शब्दकरि आकाश शब्दमई होय गया। आकाशगामी अश्व अर गज तिनके समूहकरि आकाश चित्रामरूप होय गया। महातुरंग-

निकरि संयुक्त, ध्वजानि कर शोभित, सुन्दर रथ तिनकर आकाश शोभायमान भासता भया। अर उज्ज्वल छत्रनिके समूहकर शोभित, आकाश ऐसा भासै मानो कुमुदनिका वन ही है। अर गंभीर दुंदुभिनिके शब्दनिकरि दशों दिशा ध्वान-रूप होय गई मानों मेघ गाजै है। अर अनेकवर्णके आभूषण तिनकी ज्योतिके समूहकरि आकाश नाना रंगरूप होय गया, मानो काहू चतुर रंगरेजाका रंगा वस्त्र है। हनूमानके वादित्रनिका नाद सुन कपिवंशी हर्षित भए, जैसैं मेघकी ध्वनि सुन मोर हर्षित होय। सुग्रीवने सब नगरकी शोभा कराई, हाट बाजार उजाले, मन्दिरनिपर ध्वजा चढाई, रत्ननिके तोरणनिकर द्वार शोभित किए। हनूमानके सब सन्मुख गए, सबका पूज्य देवनिकी न्याईं नगरविषैं प्रवेश किया। सुग्रीवके मंदिर आए, सुग्रीवने बहुत आदर किया। अर श्रीरामका समस्त वृत्तांत कहा। तब ही सुग्रीवादिक हनूमान-सहित परम हर्षकूं धरते श्रीरामके निकट आए सो हनूमान रामकूं देखता भया, महा-सुन्दर सूक्ष्म स्निग्ध श्याम सुगन्ध वक्र लंबे महामनोहर हैं केश जिनके, सो लक्ष्मीरूप वेल तिन-कर मंडित महा सुकुमार है अंग जिनका, सूर्य-समान प्रतापी, चंद्रसमान कांतिधारी, अपनी कांतिकर प्रकाशके करणहारे, नेत्रनिका आनन्दके कारण, महा मनोहर अतिप्रवीण आश्चर्यके करणहारे, मानों स्वर्गलोकते देवही आए हैं, देदीप्यमान निर्मल स्वर्णके कमलके गर्भ समान है प्रभा जिनकी, सुंदर श्रवण, सुंदर नासिका, सर्वांग सुंदर मानों साक्षात् कामदेव ही हैं, कमल-नयन, नवयौवन, चढे धनुष समान भौंह जिनकी, पूर्णमासीके चंद्रमा समान वदन, महा मनोहर मूंगा समान लाल होंठ, कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल दंत, शंख समान कंठ, मृगेन्द्र समान साहस, सुन्दर कटि, सुन्दर वक्षस्थल महाबाहु श्रीवत्सलक्षण, दक्षिणावर्त गम्भीर नाभि, आरक्त कमल समान कर चरण, महा कोमल गोल पुष्ट दोऊ जंघा अर कछुवेकी पीठ-समान चरणके अग्रभाग, महा कांतिकूं धरैं, अरुण नख, अतुल बल महायोधा महा गंभीर महा उदार समचतुरस्रसंस्थान वज्रवृषभनाराचसंहनन, मानों सर्व जगत्त्रयकी सुन्दरता एकत्र कर बनाये हैं महाप्रभाव—संयुक्त, परंतु सीताके वियोगकरि व्याकुल चित्त मानों शची-रहित इंद्र विराजे हैं, अथवा रोहिणी-रहित चन्द्रमा तिष्ठै है। रूप सौभाग्य कर मंडित, सर्व शास्त्रनिके वेत्ता, महाशूरवीर जिनकी सर्वत्र कीर्ति फैल रही है, महा बुद्धिमान् गुणवान्, ऐसे श्रीराम तिनकूं देख कर हनूमान आश्चर्यकूं प्राप्त भया। तिनके शरीरकी कांति हनुमान पर जा पड़ी, प्रभाव देखकर वशीभूत भया पवनका पुत्र मनमें विचारता भया—ये श्रीराम दशरथके पुत्र भाई लक्ष्मण लोक-श्रेष्ठ याका आज्ञाकारी, संग्रामविषैं जाके चंद्रमा-समान उज्ज्वल छत्र देख साहसगतिकी विद्या वैताली ताके शरीरतैं निकस गई। अर इंद्रहूकूं मैं देख्या है परंतु इनकूं देखकर परम आनंदसंयुक्त हृदय मेरा नम्रीभूत भया। या भांति आश्चर्यकूं प्राप्त भया। अंजनीका पुत्र, श्रीराम कमललोचन ताके दर्शनकूं आगे आया अर लक्ष्मणने पहिले ही रामते कह राखी हुती सो हनूमानकूं दूरहीतैं देख उठे, उरसे लगाय मिले, परस्पर अतिस्नेह भया, हनूमान अति विनयकर बैठा, आप श्रीराम सिंहासन पर विराजे,

भुज-बंधनकरि शोभित है भुजा जिनकी,महा निर्मल नीलाम्बर मंडित राजनिके चूड़ामणि महा सुन्दर हार पहिरे ऐसे सोहैं मानों नक्षत्रिनि सहित चंद्रमा ही है अर दिव्य पीताम्बर धारे हार कुण्डल कर्पूरादि-संयुक्त सुमित्राके पुत्र श्रीलक्ष्मण कैसे सोहै हैं मानों विजुरी-सहित मेघ ही है। अर वानरवंशिनिका मुकुट देवनिसमान पराक्रम जाका, राजा सुग्रीव कैसा सोहै मानो लोकपाल ही है, अर लक्ष्मणके पीछे बैठा विराधित विद्याधर कैसा सोहै मानों लक्ष्मण नरसिंहका चक्र रत्न ही है,रामके समीप हनुमान कैसा शोभता भया जैसैं पूर्णचन्द्रके समीप बुध सोहै है, अर सुग्रीवके दोय पुत्र एक अंगज दूजा अंगद सो सुगंधमाला अर वस्त्र आभूषणादिकर मंडित ऐसे सोहैं मानों यह कुबेर ही हैं अर नल नील अर सैकडों राजा श्रीरामकी सभाविषैं ऐसे सोहैं जैसैं इंद्रकी सभाविषैं देव सोहै अनेक प्रकार की सुगंध अर आभूषणनिका उद्योत ताकरि सभा ऐसी सोहै मानो इंद्रकी सभा है। तब हनूमान आश्चर्यकूं पाय अतिप्रीतिकूं प्राप्त भया, श्रीरामकौं कहता भया—

हे देव! शास्त्रमें ऐसा कहा है प्रशंसा परोक्ष करिए, प्रत्यक्ष न करिए। परन्तु आपके गुणनिकर यह मन वशीभूत भया प्रत्यक्ष स्तुति करै है। अर यह रीति है कि आप जिनके आश्रय होय, तिनके गुण वर्णन करैं सो जैसी महिमा आपकी हमने सुनी हुती तैसी प्रत्यक्ष देखी, आप जीवनिके दयालु, महा पराक्रमी, परम हितू गुणनिके समूह, जिनके निर्मल यशकर जगत् शोभायमान है। हे नाथ! सीताके स्वयम्बर विधानविषैं हजारों देव जाकी रक्षा करैं ऐसा वज्रावर्त धनुष आपने चढ़ाया सो वह हम सब पराक्रम सुने। जिनका पिता दशरथ, माता कौशल्या, भाई लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, स्त्रीका भाई भामंडल, सो राम जगत्पति तुम धन्य हो, तिहारी शक्ति धन्य, तिहारा रूप धन्य, सागरावर्त धनुषका धारक लक्ष्मण सो सदा आज्ञाकारी धन्य यह धैर्य, धन्य यह त्याग, जो पिताके वचन पालिवे अर्थ राज्यका त्यागकर महा भयानक दण्डक वनमें प्रवेश किया। अर आप हमारा जैसा उपकार किया तैसा इन्द्र हू न करै। सुग्रीवका रूपकर साहसगति आया हुता, सुग्रीवके घरमें सो आप कपिवंशका कलंक दूर किया, आपके दर्शनकर बैताली विद्या साहसगतिके शरीरतैं निकस गई। आप युद्धविषैं ताहि हत्या सो आपने तो हमारा बड़ा उपकार किया। अब हम कहा सेवा करैं। शास्त्रकी यह आज्ञा है जो आपसों उपकार करै अर ताकी सेवा न करै ताके भाव शुद्धता नाहीं। अर जो कृतघ्न उपकार भूले सो न्याय धर्मतैं बहिर्मुख है, पापनिविषैं महापापी है अर पारधीनमें पारधी है, निर्दई है सो बातैं सत्पुरुष संभाषण न करैं। तातैं हम अपना शरीर तजकर तिहारे कामकूं उद्यमी हैं। मैं जाय लंकापतिकूं समझाय तिहारी स्त्री तिहारे लाऊंगा। हे राघव! महाबाहू, सीताका मुखरूप कमल पूर्णमासीके चन्द्रमा-समान कांतिका पुंज, आप निस्संदेह शीघ्र ही सीता देखोगे। तब जांबूनद मंत्री हनुमानकूं परम हितके वचन कहता भया। हे वत्स वायुपुत्र! हमारे सबनिके एक तू ही आश्रय है, सावधान लंकाकूं जाना, अर काहूसों कदाचित् विरोध न करना। तब

हनुमान कही आपकी आज्ञा-प्रमाण ही होयगा।

अथानंतर हनुमान लंका चलिवेकूं उद्यमी भया, तब राम अति प्रीतिकूं प्राप्त भए एकांतमें कहते भए—हे वायुपुत्र ! सीताकूं ऐसे कहियो कि हे महासती ! तिहारे वियोगकरि रामका मन एक क्षण भी सातारूप नाहीं, अर रामने यों कही ज्यों लग तुम पराए वश हो त्यों लग हम अपना पुरुषार्थ नाहीं जानै हैं। अर तुम महानिर्मल शील करि पूर्ण हो, अर हमारे वियोगकरि प्राण तजा चाहौ हो सो प्राण तजो मति, अपना चित्त समाधान रूप राखहु, विवेकी जीवनिकूं आर्त्त रौद्रतैं प्राण न तजने। मनुष्य देह अति दुर्लभ है, ताविषैं जिनेन्द्रका धर्म दुर्लभ है, ताविषैं समाधिमरण दुर्लभ है, जो समाधिमरण न होय तो यह मनुष्य देह तुषवत् असार है। अर यह मेरे हाथकी मुद्रिका जाकर ताहि विश्वास उपजै सो ले जावहु अर उनका चूड़ामणि महा प्रभावरूप हमपै ले आइयो। तब हनूमान कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा, ऐसा कहकर हाथ जोड़ नमस्कार कर बहुरि लक्ष्मणतैं नम्रीभूत होय बाहिर निकस्या। विभूतिकर परिपूर्ण अपने तेजकरि सर्व दिशाकूं उद्योत करता सुग्रीवके मन्दिर आया, अर सुग्रीवसों कही---जौलग मेरा आवना न होय तौलग तुम बहुत सावधान यहां ही रहियो, या भांति कहकर सुंदर है शिखिर जाके ऐसा जो विमान तापर चढ्या ऐसा शोभना भया जैसा सुमेरुके ऊपर जिनमंदिर शोभै, परम ज्योति करि मंडित उज्ज्वल छत्रकर शोभित हंससमान उज्वल चमर जापर ढुरैं हैं अर पवन समान अश्व चालते, पर्वत समान गज, अर देवनिकी सेना समान सेना ताकरि संयुक्त, या भांति महा विभूतिकरि युक्त आकाशविषैं गमन करता रामादिक सर्वने देख्या। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं, राजन् यह जगत् नाना प्रकारके जीवनिकरि भर्या हैं, तिनमें जो कोई परमार्थके निमित्त उद्यम करै हैं सो प्रशंसा योग्य है, अर स्वार्थतैं जगत् ही भरा है जे पराया उपकार करैं ते कृतज्ञ हैं प्रशंसा योग्य हैं, अर जे निःकारण उपकार करें हैं उनके तुल्य इन्द्र चंद्र कुबेर भी नाहीं। अर जे पापी कृतघ्नी पराया उपकार लोपै हैं वे नरक निगोदके पात्र हैं अर लोकनिंद्य हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं हनुमानका लंकाकी दिशा गमन वर्णन करनेवाला उनचासवां पर्व पूर्ण भया ॥४६॥

पचासवां पर्व

[हनूमानका अपने नाना राजा महेंद्रके साथ युद्ध और मिलाप]

अथानंतर अंजनीका पुत्र आकाशविषैं गमन करता परम उदयकूं धरैं कैसा शोभता भया मानों बहिन समान जानकी ताहि लायवेकूं भाई भामंडल जाय है। कैसे हैं हनुमान !

श्रीरामकी आज्ञाविषैं प्रवर्तें हैं महा विनयरूप ज्ञानवंत शुद्धभाव रामके कामका चित्तमें उत्साह सो दिशा मंडल अवलोकते लंकाके मार्गविषैं राजा महेंद्रका नगर देखते भये मानों इन्द्रका नगर है। पर्वतके शिखर पर नगर बसै हैं जहां चंद्रमा समान उज्ज्वल मंदिर हैं सो नगर दूरहीतैं नजर आया तब हनुमानने देखकरि मनमें चिंतया यह दुर्बुद्धि महेंद्रका नगर है वह यहां तिष्ठै है, मेरा काहेका नाना, मेरी माताको जाने संताप उपजाया था। पिता होयकर पुत्रीका ऐसा अपमान करे, जो जाने नगरमें न राखी तब माता वनमें गई जहां अनंतगति मुनि तिष्ठे हुते, तिनने अमृत रूप वचन कहकर समाधान करी सो मेरा उद्यानविषैं जन्म भया, जहां कोई बंधु नाहीं, मेरी माता शरणे आवे, अर यह न राखे यह क्षत्रीका धर्म नाहीं। तातैं याका गर्व हरूं। तब क्रोधकर रणके नगारे बजाए, अर ढोल बाजते भए, शंखनिकी ध्वनि भई योधानिके आयुध झलकने लगे, राजा महेंद्र परचक्र आया सुनकर सर्व सेना सहित बाहर निकस्या दोऊ सेनाविषैं महायुद्ध भया। महेंद्र रथमें चढ़ा, माथे छत्र फिरता धनुष चढाय हनुमान पर आया, सो हनुमानने तीन बाणनिकरि ताका धनुष छेद्या जैसैं योगीश्वर तीन गुप्ति कर मानकूं छेदें। बहुरि महेंद्रने दूजा धनुष लेवेका उद्यम किया ताके पहिले ही बाणनिकरि ताके घोड़े छुटाय दिए सो रथके समीप भ्रमै जैसे मनके प्रेरे इन्द्रिय विषयनिमें भ्रमै। बहुरि महेंद्रका पुत्र विमानमें बैठ हनुमानपर आया सो हनुमानके अर वाके बाण चक्र कनक इत्यादि अनेक आयुधनिकरि परस्पर महा युद्ध भया। हनुमानने अपनी विद्याकरि वाके शस्त्र निवारे, जैसे योगीश्वर आत्म चिंतवनकर परीषहके समूहकूं निवारैं। ताने अनेक शस्त्र चलाये सो हनुमानके एकहू न लाग्या, जैसे मुनिको कामका एक भी बाण न लगै। जैसे तृणनिके समूह अग्निमें भस्म होंय तैसैं महेंद्रके पुत्रके सर्व शस्त्र हनुमानपर विफल गए। अर हनुमानने ताहि पकड़ा जैसे सर्पको गरुड़ पकड़े। तब राजा महेंद्र महारथी पुत्रकूं पकड़ा देख महा क्रोधायमान भया हनुमान पर आया, जैसे साहसगति रामपर आया हुता। हनुमानहू महा धनुषधारी सूर्यके रथ समान रथपर चढ़ा, मनोहर है उरविषैं हार जाके, शूरवीरनिमें महाशूरवीर, नानाके सन्मुख भया सो दोऊनिमें करोत कुठार खड्ग बाण आदि अनेक शस्त्रनिकरि पवन अर मेघकी न्याइं महा युद्ध भया, दोऊ सिंह समान महा उद्धत महाकोपके भरे बलबंत अग्निके कण-समान रक्त नेत्र दोऊ अजगर समान भयानक शब्द करते परस्पर शस्त्र चलावते, गर्व हास-संयुक्त प्रकट हैं शब्द जिनके परस्पर ऐसे शब्द करैं हैं धिक्कार तेरे शूरपनेको, तू कहा युद्ध कर जाने इत्यादि वचन परस्पर कहते भए। दोऊ विद्याबलकरि युक्त परम युद्ध करते बारम्बार अपने लोगनिकरि हाकार जय जयकारादिक शब्द करावते भए। राजा महेंद्र महाविक्रिया शक्तिका धारक क्रोधकर प्रज्वलित है शरीर जाका, सो हनुमानपर आयुधनिके समूह डारता भया, भुशुंडी फरसा बाण शतघ्नी मुदगर गदा पर्वतनिके शिखर शालवृक्ष बट-

वृक्ष इत्यादि अनेक आयुध हनुमानपर महेंद्र चलाए सो हनूमान व्याकुलताकूं प्राप्त न भया जैसे गिरिराज महामेघके समूहकरि कंपायमान न होय। जेते महेंद्रने बाण चलाए सो हनूमानने उनको विद्याके प्रभावकरि सब चूर डारे। बहुरि अपने रथतें उछल महेंद्रके रथमें जाय पड़े दिग्गज-की सूंड समान अपने जे हाथ तिनकरि महेंद्रकूं पकड़ लिया अर अपने रथमें आए, शूरवीर-निकरि पाया है जीतका शब्द जाने, सर्वही लोक प्रशंसा करते भए। राजा महेंद्र हनुमानकूं महाबलवान् परम उदयरूप देख महा सौम्य वाणीकर प्रशंसा करता भया–हे पुत्र! तेरी महिमा जो हमने सुनी हुती सो प्रत्यक्ष देखी। मेरा पुत्र प्रसन्नकीर्ति जो अब तक काहूने न जीता, रथनूपुरका स्वामी राजा इन्द्र ताकरि न जीता गया, विजियार्धगिरिके निवासी विद्याधर तिनमें महाप्रभाव संयुक्त सदा महिमाकूं धरै मेरा पुत्र सो तैंने जीता अर पकड़ा। धन्य पराक्रम तेरा महाधैर्यको धरे तेरे समान और पुरुष नाहीं अर अनुपमरूप तेरा, अर संग्राम विषैं अद्भुत पर-क्रम, हे पुत्र हनुमान! तूने हमारे सब कुल उद्योत किये। तू चरमशरीरी अवश्य योगीश्वर होयगा विनय आदि गुणनिकरि युक्त परम तेज की राशि कल्याणमूर्ति कल्पवृक्ष प्रकट भया है, तू जगतविषैं गुरु कुलका आश्रय अर दुःखरूप सूर्यकर जे तप्तायमान हैं तिनकूं मेघसमान। या भांति नाना महेंद्रने अति प्रशंसा करी, अर आंख भर आई, अर रोमांच होय आए, मस्तक चूमा छाती से लगाया। तब हनूमान नमस्कार कर हाथ जोड़ अति विनयकर क्षमा करावते भए। एकक्षणमें और ही होय गए हनूमान कहे हैं–हे नाथ! मैं बाल बुद्धिकर जो तिहारा अविनय किया सो क्षमा करहु। अर श्रीरामका किहकंधापुर आवनेका सकल वृत्तांत कहा आप लंकाकी ओर जावनेका वृत्तांत कहा। अर कही मैं लंका होय कार्यकर आऊंहूं तुम किहकंधापुर जावो, रामकी सेवा करो ऐसा कहकर हनूमान आकाशके मार्ग लंकाकूं चाले जैसे स्वर्गलोकको देव जाय। अर राजा महेंद्र रानी सहित तथा अपने प्रसन्नकीर्ति पुत्र सहित अंजनी पुत्रीके गया, अंजनीको माता पिता अर भाईको मिलाप भया सो अति हर्षित भई। बहुरि महेंद्र किहकन्धापुर आए सो राजा सुग्रीव विराधित आदि सन्मुख गए श्रीरामके निकट लाए राम बहुत आदरसे मिले,। जे राम सारिखे महंत पुरुष महातेज प्रतापरूप निर्मल चित्त हैं अर जिनने पूर्वजन्म विषैं दान व्रत तप आदि पुण्य उपार्जे हैं तिनकी देव विद्याधर भूमिगोचरी सब ही सेवा करैं जे महा गर्ववंत बलवंत पुरुष हैं ते सब तिनके वश होवें। तातैं सर्व प्रकार अपने मनको जीत सत्कर्ममें यत्नकर, हे भव्यजीव हो ता सत्कर्मके फलकर सूर्य समान दीप्तिकूं प्राप्त होहु॥

इतिश्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं महेंद्रका अर अंजनाका बहुरि हनुमानका श्रीरामके निकट आवनेका वर्णन करनेवाला पचासवां पर्व पूर्ण भया॥५०॥

इकावनवां पर्व

[श्रीरामके गंधर्व कन्याओं की प्राप्ति]

अथानंतर हनूमान आकाशविषैं विमानमें बैठे जाय हैं अर मार्ग में दधिमुख नामा द्वीप आया, तामें दधिमुख नामा नगर जहां दधि समान उज्ज्वल मन्दिर सुन्दर सुवरणके तोरण काली घटासमान सघन उद्यान, पुरुषनिकरि युक्त स्फटिक मणि समान उज्ज्वल जलकी भरी वापिका, सोपाननि कर शोभित कमलादिक कर भरी, गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं-हे राजन् ! या नगरतैं दूर वन तहां तृण बेल वृक्ष कांटनिके समूह सूके वृक्ष दुष्ट सिंहादिक जीवनिके नाद महा भयानक प्रचण्ड पवन जाकरि वृक्ष गिर पड़े सूक गये हैं सरोवर जहां, अर गृद्ध उल्लूक आदि दुष्ट पक्षी विचरैं। ता वनविषैं दोय चारणमुनि अष्टदिनका कायोत्सर्ग धरे खड़े थे, अर तहांते चार कोस तीन कन्या महा मनोज्ञ नेत्र जिनके जटा धरे सफेद वस्त्र पहरे विधिपूर्वक महा तपकर निर्मल चित्त जिनका मानों कन्या तीन लोककी आभूषण ही हैं।

अथानंतर वनमें अग्नि लागी सो दोऊ मुनि धीर वीर वृक्षकी न्याईं खड़े समस्त वन दावानल करि जरे, ते दोऊ निर्ग्रंथ योगयुक्त मोक्षाभिलाषी रागादिकके त्यागी प्रशांत वदन शान्त चित्त निष्पाप अवांछक नासादृष्टि, लंबी हैं भुजा जिनकी, कायोत्सर्ग धरे जिनके जीवना मरना तुल्य, शत्रु मित्र समान कांचन पाषाण समान, सो दोऊ मुनि जरते देख हनुमान कम्पायमान भया, वात्सल्य गुणकरि मंडित महाभक्ति संयुक्त वैयाव्रत करिवेकों उद्यमी भया। समुद्रका जल लेयकर मूसलाधार मेह बरसाया सो क्षणमात्रविषै पृथिवी जलरूप होय गई। वह अग्नि ता जलकरि हनुमानने ऐसे बुझाई जैसें मुनि क्षमाभाव रूप जलकरि क्रोधरूप अग्निकूं बुझावैं। मुनिनका उपसर्ग दूर कर तिनकी पूजा करता भया अर वे तीनों कन्या विद्या साधती हुती सो दावानलके दाहकर व्याकुलताका कारण भया हुता सो हनुमानके मेघकर वनका उपद्रव मिटा सो विद्या सिद्धि भई,सुमेरुकी तीन प्रदक्षिणा करि मुनिनिके निकट आयकर नमस्कार करती भई अर हनुमान की स्तुति करती भई—अहो तात धन्य तिहारी जिनेश्वरविषैं भक्ति,तुम काहू तरफ जाते हुते सो साधुनिकी रक्षा करी हमारे कारण करि वनमें उपद्रव भया सो मुनि ध्यानारूढ ध्यानतैं न डिगे। तब हनुमानने पूछी तुम कौन,अर निर्जन स्थानकमें कौन कारण रहो हो ? तब सबनिमें बडी बहिन कहती भई-यह दधिमुख नामा नगर जहां राजा गन्धर्व ताकी हम तीन पुत्री, बड़ी चंद्ररेखा दूजी विद्युतप्रभा तीजी तरंगमाला सर्वगोत्रकूं वल्लभ सो जेते विजयार्धके विद्याधर राजकुमार हैं वे सब हमारे विवाहके अर्थ हमारे पितासूं याचना करते भए। अर एक दुष्ट अंगारक सो अति अभिलाषी निरंतर कामके दाहकर आतापरूप तिष्ठै, एक दिन हमारे पिताने अष्टांग निमित्तके वेत्ता जे मुनि तिनकूं पूछी हे

भगवान् ! मेरी पुत्रिनिका वर कौन होयगा ? तब मुनि कही जो रणसंग्रामविषैं साहसगतिकूं मारेगा, सो तेरी पुत्रिनिका वर होयगा, तब मुनिके अमोघ वचन सुनकर हमारे पिताने विचारी, विजयार्धकी उत्तर श्रेणीविषैं जो साहसगति ताहि कौन मार सकै, जो ताहि मारै सो मनुष्य या लोकविषैं इंद्रके समान है। अर मुनिके वचन अन्यथा नाहीं सो हमारे माता पिता अर सकल कुटुम्ब मुनिके वचनपर दृढ भए। अर अंगारक निरंतर हमारे पितासूं याचना करै सो पिता हमकूं न देय तब वह अति चिंतावान् दुःखरूप वैरकूं प्राप्त भया। अर हमारे यही मनोरथ उपजा जो वह दिन कब होय हम साहसगतिके हनिवेवारेकूं देखें सो मनोऽनुगामिनी नाम विद्या साधिवेकूं या भयानक वनविषैं आई, सो अनुगामिनीनामा विद्या साधते हमकूं बारवां दिन है अर मुनिनिको आठमा दिन है। आज अंगारकने हमको देख क्रोधकर वनविषै अग्नि लगाई, जो छहवर्ष कछु इक अधिक दिननिविषैं विद्या सिद्ध होय हमको उपसर्गतैं भय न करवेकर बारह ही दिनविषैं विद्या सिद्ध भई। या आपदाविषैं हे महाभाग ! जो तुम सहाय न करते तो हमारा अग्निकर नाश होता, अर मुनि भस्म होते, तातैं तुम धन्य हो। तब हनुमान कहते भए तिहारा उद्यम सफल भया, जिनके निश्चय होय तिनकूं सिद्ध होय ही। धन्य निर्मल बुद्धि तिहारी, बडे स्थानकविषैं मनोरथ, धन्य तिहारा भाग्य, ऐसा कहकर श्रीरामके किहकंधापुर आवनेका सकल वृत्तांत कहा। अर अपने रामकी आज्ञा प्रमाण लंका जायवेका वृत्तांत कहा। ताही समय वनके दाह शांत होयवेका अर मुनि उपसर्ग दूर होनेका वृत्तांत राजा गन्धर्व सुन हनुमानपैं आया। विद्याधरनिके योगकरि वह वन नंदनवन जैसा शोभता भया। अर राजा गंधर्व हनुमानके मुखकरि श्रीरामका किहकंधापुर विराजनेका हाल सुन अपनी पुत्रीनिसहित श्रीरामके निकट आया। पुत्री महा विभूतिकर रामकूं परणाई, राम महा विवेकी ये विद्याधरनिकी पुत्री अर महाराज विभूतिकर युक्त हैं तोहू सीता विना दशों दिशा शून्य देखते भए, समस्त पृथिवी गुणवान् जीवनितैं शोभित होय है अर गुणवंतनि विना नगर गहन वन तुल्य भासै है। कैसे हैं गुणवान् जीव ? महा मनोहर है चेष्टा जिनकी अर अति सुन्दर हैं भाव जिनके। ये प्राणी पूर्वोपार्जित कर्मके फलकरि सुख दुख भोगवे हैं तातैं जो सुखके अर्थी हैं वे जिनरूप सूर्यकरि प्रकाशित जो पवित्र जिनमार्ग ताविषैं प्रवृत्ते हैं।

इतिश्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषैं रामको राजा गंधर्व की कन्यानिका लाभ वर्णन करनेवाला इक्कावनवां पर्व पूर्ण भया ॥५१॥

बावनवां पर्व

[हनुमानके लंकासुन्दरीका लाभ]

अथानन्तर महा प्रतापकर पूर्ण महाबली हनुमान जैसे सुमेरुको सौम जाय तैसैं

त्रिकूटाचलको चला। सो आकाशविषैं जाती जो हनुमानकी सेना ताका महा धनुषके आकार मायामई यंत्रकर निरोध भया तब हनूमान अपने समीपी लोकनितैं पूछी जो मेरी सेना कौन कारण आगे चल न सके ? यहां गर्वका पर्वत असुरनिका नाथ चमरेन्द्र है, अथवा इन्द्र है, तथा या पर्वतके शिखरविषैं जिनमंदिर हैं, अथवा चरमशरीरी मुनि हैं ? तब हनुमानके ये वचन सुनकर पृथुमति मन्त्री कहता भया--हे देव ! यह क्रूरतासंयुक्त मायामई यंत्र है। तब आप दृष्टि धर देखा, कोटविषैं प्रवेश कठिन जाना, मानों यह कोट विरक्त स्त्रीके मन समान दुःप्रवेश है, अनेक आकारकूं धरे वक्रता करि पूर्ण, महा भयानक सर्वभक्षी पूतली जहां देव भी प्रवेश न कर सकैं। जाज्वल्यमान तीक्षण हैं अग्र भाग जिनके, ऐसे करोतनिके समूहकर मण्डित, जिह्वाके अग्रभाग करि रुधिरकूं उगलते, ऐसे हजारां सर्प तिनकरि भयानक फण, ते विकराल शब्द करे हैं, अर विषरूप अग्निके कण बरसे हैं, विषरूप धूमकरि अन्धकार होय रहा है। जो कोई मूर्ख सामन्तपनाके मानकरि उद्धत भया प्रवेश करै ताहि मायामई सर्प ऐसे निगलैं जैसे सर्प मेंढकको निगलैं, लंकाके कोटका मंडल जोतिष चक्रतैं हू ऊंचा, सर्व दिशानिविषैं दुर्लंघ, अर देखा न जाय प्रलयकालके मेघ समान भयानक शब्द कर संयुक्त, अर हिंसारूप ग्रन्थनिकी न्याई अत्यन्त पापकर्मनिकरि निरमापा ताहि देख कर हनुमान विचारता भया यह मायामई कोट राक्षसनिके नाथने रचा है सो अपनी विद्याकी चातुर्यता दिखाई है। अर अबमैं विद्याबलकरि याहि उपाडता मंता राक्षसनिका मद हरूं जैसे आत्मध्यानी मुनि मोह मदकूं हरे। तब हनूमान युद्धविषैं मनकर समुद्रसमान जो अपनी सेना सो आकाशविषैं राखी, अर आप विद्यामई बक्तर पहिर हाथ विषैं गदा लेकर मायामई पुतलीके मुखविषैं प्रवेश किया, जैसैं राहुके मुखविषैं सूर्य प्रवेश करै। अर वा मायामई पतलीकी कुक्षि सोई भई पर्वतकी गुफा अन्धकारकर भरी सो आप नरसिंहरूप तीक्ष्ण नखनिकर विदारी। अर गदाके घातकरि कोट चूरण किया, जैसे शुक्लध्यानी मुनि निर्मल भावनिकरि घातिया कर्मकी स्थिति चूरण करैं।

अथानंतर यह विद्या महा भयंकर भंगकूं प्राप्त भई, तब मेघकी ध्वनि समान ध्वनि भई, विद्या भाग गई कोट विघट गया, जैसे जिनेन्द्रके स्तोत्रकरि पापकर्म विघट जाय। तब प्रलयकालके मेघ समान भयंकर शब्द भया। मायामई कोट बिखरा देख कोटका अधिकारी वज्रमुख महा क्रोधायमान होय शीघ्र ही रथपर चढ़ हनुमान पर विना विचारे मारवेकूं दौड्या, जैसे सिंह अग्निकी ओर दौड़े। जब ताहि आया देख पवनका पुत्र महा योधा युद्ध करिवेकूं उद्यमी भया। तब दोऊ सेनाके योधा प्रचण्ड नाना प्रकारके वाहननिपर चढे अनेक प्रकारके आयुध धरे परस्पर लड़ने लगे। बहुत कहने करि कहा ? स्वामीके कार्य ऐसा युद्ध भया जैसा मानके अर मार्दवके युद्ध होय। अपने अपने स्वामीकी दृष्टिविषैं योधा गाज गाज युद्ध करते

भए जीवनविषैं नाहीं है स्नेह जिनके। फिर हनुमानके सुभटनि कर वज्रमुखके योधा क्षणमात्रविषैं दशों दिशाकूं भाजे। अर हनुमानने सूर्यहूते अधिक है ज्योति जाकी ऐसे चक्र शस्त्रकरि वज्रमुखका सिर पृथिवीपर डारा। यह सामान्य चक्र है चक्री अर्धचक्रिनिके सुदर्शनचक्र होय है। युद्धविषैं पिताका मरण देख लंकासुन्दरी वज्रमुखकी पुत्री पिताका जो शोक उपजा हुता ताहि कष्टतैं निवार, क्रोधरूप विषकी भरी, तेज तुरंग जुते हैं जाके ऐसे रथपर चढी कुंडलनिके उद्योतकरि प्रकाशरूप है मुख जाका, वक्र हैं भौंह जाकी, उल्कापातका स्वरूप सूर्य मंडल समान तेजधारी क्रोधके वश कर लाल हैं नेत्र जाके, क्रूरताकर डसे हैं किंदूरी समान होंठ जाने, मानों क्रोधायमान शची ही है; सो हनुमानपर दौडी अर कहती भई--रे दुष्ट! मैं तोहि देखूं, जो तोमैं शक्ति है तो मोतैं युद्धकर, जो क्रोधायमान भया रावण न करै सो मैं करूंगी, हे पापी! तोहि यममंदिर पठाऊंगी, तू दिशाकूं भूल अर अनिष्ट स्थानकूं प्राप्त भया ऐसे शब्द कहती वह शीघ्र ही आई। सो आवतीका हनुमानने छत्र उडाय दिया। तब वाने बाणनिकर इनका धनुष तोड डारा, अर शक्ति लेय चलावै ता पहिले हनुमान बीच ही शक्तिकूं तोड डारी। तब वह विद्याबल कर गंभीर वज्रदंडसमान बाण अर फरसी बरछी चक्र शतघ्नी मूसल शिला इत्यादि वायुपुत्रके रथपर बरसावती भई, जैसे मेघमाला पर्वतपर जलकी धारा बरसावै। नाना प्रकारके आयुधनिके समूह करि वानै हनुमानकूं बेढ़ा, जैसे मेघपटल सूर्यकूं आच्छादै। तब हनुमान विद्याकी सब विधिविषैं प्रवीण महापराक्रमी ताने शत्रुनिके समूह अपने शस्त्रनिकर आप तक न आवने दिये तोमरादिक बाणनिकरि तोमरादिक बाण निवारे अर शक्तितैं शक्ति निवारी। या भांति परस्पर अतियुद्ध भया, याके बाण वाने निवारे, वाके बाण याने निवारे, बहुत बेरतक युद्ध भया, कोई नाहीं हारै, सो गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—

हे राजन्! हनुमानको लंकासुंदरी बाणशक्ति इत्यादि अनेक आयुधनिकरि जीतती भई, अर कामके बाणनिकरि स्वयं पीड़ित भई। कैसे हैं कामके बाण? मर्मके विदारण हारे। कैसी है लंकासुंदरी. साक्षात् लक्ष्मीसमान रूपवंती कमल लोचन, सौभाग्य गुणनिकरि गर्वित, सो हनुमानके हृदयविषैं प्रवेश करती भई, जाके कर्ण पर्यंत बाणरूप तीक्ष्ण कटाक्ष नेत्ररूप धनुषतैं कढ़े ज्ञान-धैर्यके हरणहारे, महा सुन्दर दुर्द्धर मनके भेदनहारे प्रवीण अपनी लावण्यताकरि हरी है सुन्दरताई जिनने तब हनुमान मोहित होय मनमें चिंतवता भया जो यह मनोहर आकार महाललित बाहिर तो विद्याबाण अर सामान्य बाण तिनकरि मोहि भेदै है और आभ्यन्तर मेरे मनकूं कामके बाणकरि बींधै है यह मोहि बाह्याभ्यंतर हनै है तन मनको पीडै है या युद्धविषैं याके बाणनिकरि मृत्यु होय तो भली परन्तु याके विना स्वर्गविषैं जीवना भला नाहीं, या भांति पवनपुत्र मोहित भया। अर वह लंकासुन्दरी याके रूपकूं देख मोहित भई, क्रूरतारहित

करुणाविषैं आया है चित्त जाका। तब जो हनुमानके मारिवेकूं शक्ति हाथमें लीनी हुती सो शीघ्र ही हाथतें भूमिमें डार दई, हनुमानपर न चलाई। कैसे हैं हनुमान ? प्रफुल्लित है तन अर मन जिनका, अर कमल दलसमान हैं नेत्र जिनके, अर पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है मुख जिनका, नवयौवन मुकुटविषैं वानर का चिन्ह साक्षात् कामदेव हैं। लंकासुन्दरी मनमें चिंतवती भई याने मेरा पिता मारथा सो बड़ा अपराध किया। यद्यपि द्वेषी है तथापि अनुपम रूपकर मेरे मनकूं हरै है जो या सहित काम-भोग न सेऊं तो मेरा जन्म निष्फल है। तब विह्वल होय एक पत्र तामें अपना नाम सो बाणकूं लगाय चलाया। तामें ये समाचार हुते, हे नाथ ! देवनिके समूहकरि न जीती जाऊं ऐसी मैं सो तुमने कामके बाणनिकरि जीती। यह पत्र बांच हनुमान प्रसन्न होय रथतैं उतर जायकर तासूं मिले जैसैं काम रतिसे मिलै। वह प्रशांत वैर भई संती आंसू ढारती तातके मरणकर शोक-रत, तब हनुमान कहते भए—हे चंद्रवदनी ! रुदन मत करै तेरे शोककी निवृत्ति होहु। तेरे पिता परम क्षत्री महा शूरवीर तिनकी यही रीति जो स्वामीकार्यके अर्थ युद्धमें प्राण तजैं। अर तुम शास्त्रविषैं प्रवीण हो सो सब नीके जानैं हो, या राज्यविषै यह प्राणी कर्मनिके उदयकर पिता पुत्र बांधवादिक सबको हनै है तातैं तुम आर्तध्यान तजो, ये सकल प्राणी अपना उपार्ज्या कर्म भोगवै हैं निश्चय मरणका कारण आयुका अन्त है अर पर-जीवनिमित्त मात्र हैं, इन वचननिकरि लंकासुन्दरी शोकरहित भई। या भांति या सहित कैसी सोहती भई जैसैं पूर्णचंद्रसे निशा सोहै। प्रेमके समूहकर पूर्ण दोऊ मिलकर संग्रामका खेद विस्मरण होय गए, दोऊनिका चित्त परस्पर प्रीतिरूप होय गया। तब आकाशविषैं स्तम्भिनी विद्याकर कटक थांभा, अर सुन्दर मायामई नगर बसाया, जैसी सांझकी आरक्तता होय ता समान लाल देवनिके नगर समान मनोहर जामें राजमहल अत्यन्त सुन्दर सो हाथी घोड़े विमान रथों पर चढ़े बड़े बड़े राजा नगरमें प्रवेश करते भए। नगर ध्वजानिकी पंक्तिकर शोभित सो यथा-योग्य नगरमें तिष्ठै महा उत्साहसे संयुक्त रात्रिमें शूरवीरनिके युद्धका वर्णन जैसा भया तैसा सामंत करते भए। हनुमान लंकासुन्दरीके संग रमता भया।

अथानंतर प्रभात हो हनुमान चलवेकूं उद्यमी भए, तब लंकासुन्दरी महाप्रेमकी भरी ऐसे कहती भई—हे कांत ! तुम्हारे पराक्रम न सहे जांय ऐसे अनेक मनुष्योंके मुख रावणने सुने होवेंगे सो सुनकर अतिखेद-खिन्न भया होयगा तातैं तुम लंका काहेको जावो, तब हनुमान ने उसे सकल वृत्तांत कहा जो रामने वानरवंशियोंका उपकार किया सो सबोंका प्रेरा रामके प्रति उपकार निमित्त जाऊं हूं। हे प्रिये ! रामका सीतासे मिलाप कराऊं, राक्षसनिका इन्द्र सीताकूं अन्याय मार्गसे हर ले गया है, सो मैं सर्वथा लाऊंगा। तब ताने कहा-तुम्हारा और रावण का वह स्नेह नाहीं, स्नेह नष्ट भया सो जैसैं स्नेह कहिए तैल ताके नष्ट होयवेकरि दीपककी

शिखा नाहीं रहै है तैसैं स्नेहके नष्ट होयवेकरि संबंधका व्यवहार नाहीं रहे है। अब तक तुम्हारा यह व्यवहार था तुम जब लंका आवते तब नगर उछावतैं गली गलीमें हर्ष होता, मंदिर ध्वजानिकी पंक्तिसे शोभित होते, जैसैं स्वर्गमें देव प्रवेश करैं तैसैं तुम प्रवेश करते। अब रावण प्रचंड दशानन तुमविषैं द्वेषरूप है, सो निःसंदेह तुमकूं पकड़ेगा। तातैं जब तिहारे उनके संधि होय तब मिलना योग्य है। तब हनुमान बोले—हे विचक्षणे! जायकर ताका अभिप्राय जाना चाहू हू। और वँह सीता सती जगत्में प्रसिद्ध है अर रूपकर अद्वितीय है जाहि देखकर रावणका सुमेरु-समान अचल मन चला है। वह महा पतिव्रता हमारे नाथकी स्त्री, हमारी माता समान ताका दर्शन किया चाहू हू। या भांति हनुमानने कही और सब सेना लंकासुन्दरीके समीप राखी और आप तो विवेकनीसे विदा होयकर लंकाको सन्मुख भए। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं--हे राजन्! या लोकविषैं यह बड़ा आश्चर्य है जो यह प्राणी क्षणमात्रमें एक रस को छोड़कर दूजे रसमें आ जाय, कभी विरसको छोड़कर रसमें आ जाय। कबहू रसको छोड़कर विरस में आ जाय। या जगतविषैं इन कर्मनिकी अद्भुत चेष्टा है, संसारी सर्व जीव कर्मोंके आधीन हैं। जैसैं सूर्य दक्षिणायनसे उत्तरायण आवे तैसैं प्राणी एक अवस्थासे दूजी अवस्थामें आव।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिका विषै हनुमान कै लंकासुन्दरीका लाभ वर्णन करनेवाला बावनवा पर्व पूर्ण भया ॥५२॥

तिरेपनवां पर्व

[हनुमानका लंकामें जाकर सीतासे भेट कर लंका नष्ट-भ्रष्ट करना]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं हे श्रेणिक! वह पवनका पुत्र महा प्रभावके उदयकर संयुक्त थोड़े ही सेवकनि सहित निःशंक लंकाविषैं प्रवेश करता भया। बहुरि प्रथमही विभीषणके मंदिरमें गया, विभीषणने बहुत सन्मान किया। फिर क्षणएक तिष्ठकर परस्पर वार्ता कर हनुमान कहता भया-जो रावण आधे भरतक्षेत्रका पति सर्वका स्वामी ताहि यह कहा उचित जो दरिद्र मनुष्यकी न्याई चोरी कर परस्त्री लावे? जे राजा हैं सो मर्यादाके मूल हैं, जैसैं नदीका मूल पर्वत, राजा ही अनाचारी होय तो सर्वलोकमें अन्ययाकी प्रवृत्ति होइ। ऐसे चरित्र किए राजाकी सर्वलोकमें निंदा होय, तातैं जगतके कल्याण निमित्त रावणकूं शीघ्रही कहो, न्यायको न उलंघे। यह कहो हे नाथ! जगत्में अपयशका कारण यह कर्म है जिससे लोक नष्ट होय सो न करना, तुम्हारे कुलका निर्मल चरित्र केवल पृथिवीपर ही प्रशंसा योग्य नाहीं, स्वर्गमें भी देव हाथ जोड़ नमस्कार कर तिहारे बड़ोंकी प्रशंसा करैं हैं। तिहारा यश सर्वत्र प्रसिद्ध है। तब विभीषण कहता भया-मैं बहुत बार भाईकूं समझाया, परंतु मानैं नाहीं। अर जिस दिनसे

सीता ले आया उस दिनसे हमसे बात भी न करै । तथापि तिहारे वचनसे मैं बहुरि दबाय कर कहूगा । परन्तु यह हठ उससे छूटना कठिन है अर आज ग्यारहवां दिन है, सीता निराहार है, जलहू नाहीं लेय है, तो भी रावणकूं दया नाहीं उपजी, या कामतैं विरक्त नाहीं होय है । ए बात सुनकर हनुमानकूं अति दया उपजी । प्रमद नामा उद्यान जहां सीता विराजैं है तहां हनुमान गया । ता वनकी सुन्दरता देखता भया नवीन जे बेलनिके समूह तिनकरि पूर्ण अर तिनके लाल पल्लव सोहैं मानों सुन्दर स्त्रीके करपल्लव ही हैं । अर पुष्पनिके गुच्छों पर भ्रमर गुंजार करैं हैं और फलनिकरि शाखा नम्रीभूत होय रही है, अर पवनसे हाले हैं, कमलोंकर जहां सरोवर शोभित हैं और देदीप्यमान बेलनिकरि वृक्ष वेष्टित हैं मानों वह वन देववन समान है, अथवा भोगभूमि समान है, पुष्पनिकी मकरन्दसे मंडित मानो साक्षात् नंदनवन है । अनेक अद्भुतताकर पूर्ण हनुमान कमललोचन वनकी लीला देखता संता सीताके दर्शन निमित्त आगे गया । चारों तरफ वनमे अवलोकन किया सो दूर हीतैं सीताकूं देखा । सम्यग्दर्शन सहित महासती ताहि देखकर हनुमान मनमें चिंतवता भया यह रामदेवकी परम सुन्दरी महासती निर्धूम अग्नि समान अंसुवनसे भर रहे हैं नेत्र जाके, सोच सहित बैठी मुखसे हाथ लगाय सिरके केश बिखर रहे हैं, कृश है शरीर जिसका, सो देखकर हनुमान बिचारता भया-धन्य रूप या माताका लोकविषैं, जीते हैं सर्वलोक जिसने, मानो यह कमलसे निकसी लक्ष्मी ही विराजै है दुखके समुद्रमें डूब रही है तोहू या समान और कोई नारी नाहीं । मैं जैसे होय तैसे इसे श्रीरामसे मिलाऊं इसके और रामके काज अपना तनदूं । याका और रामका विरह न देखूं यह चिंतवनकर अपना रूप फेर मंद मंद पाव धरता हनुमान आगे जाय श्रीरामकी मुद्रिका सीताके पास डारी सो शीघ्रही उसे देख रोमांच होय आए और कछू इक मुख हर्षित भया, सो समीप बैठी थीं जो नारीं वे इसकी प्रसन्नताके समाचार जायकर रावणकूं कहती भई सो वह तुष्टायमान होय इनकूं वस्त्र रत्नादिक देता भया और सीताकूं प्रसन्नवदन जान कार्यकी सिद्धि चिंतता भया, सो मंदोदरीकूं सर्व अंतःपुरसहित सीतापै पठाई, सो अपने नाथके वचनसे सर्व अन्तःपुर सहित सीतापैं आई सो सीताकूं मन्दोदरी कहती भई—

हे बाले ! आज तू प्रसन्न भई सुनी सो तैंने हमपर बड़ी कृपा करी । अब लोकका स्वामी रावण उसे अंगीकार कर जैसी देवलोककी लक्ष्मी इंद्रकूं भजै । ये वचन सुन सीता कोप कर मंदोदरीसे कहती भई-हे खेचरी ! आज मेरे पतिकी वार्ता आई है, मेरे पति आनन्दसे हैं, इसलिए मोहि हर्ष उपजा है । तब मन्दोदरीने जानी इसे अन्न जल किये ग्यारह दिन भए सो वायमे बकै है । तब सीता मुद्रिका ल्यावनहारासूं कहती भई, हे भाई ! मैं इस समुद्रके अंतर्द्वीपविषैं भयानक वनमें पड़ी हूं, सो कोऊ उत्तम जीव मेरा भाई समान अतिवात्सल्य धारणहारा मेरे पतिकी

मुद्रिका लेय आया है सो प्रगट दर्शन देहु। तब हनुमान महा भव्य जीव सीताका अभिप्राय जान मनमें विचारता भया, जो पहिले पराया उपकार विचारे, बहुरि अतिकायर होय छिप रहे सो अधम पुरुष है। अर जे परजीवको आपदाविषैं खेद-खिन्न देख पराई सहाय करैं, तिन दयावन्तोंका जन्म सफल है। तब समस्त रावणकी स्त्रीं मन्दोदरी आदि देखै हैं अर दूरहीसे सीताकूं देख हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार करता भया। कैसा है हनुमान? महा निशंक कांतिकर चन्द्रमासमान, दीप्ति कर सूर्यसमान, वस्त्र आभरणकर मंडित, रूपकर अतुल्य मुकुटमें वानरका चिन्ह, चन्दन कर चर्चित है सर्व अंग जाका, महा बलवान वज्रवृषभनाराचसंहनन, सुंदर केश रक्त होठ कुंडलके उद्योतकरि महा प्रकाशरूप मनोहर मुख गुणवान महाप्रतापसंयुक्त सीताके निकट आवता कैसा सोभता भया मानो भामंडल भाई लेयवेकूं आया है। प्रथम ही अपना कुल गोत्र माता पिताका नाम सुनायकर बहुरि अपना नाम कहा। बहुरि श्रीरामने जो कहा हुता सो सर्व कहा, अर हाथ जोड विनती करी हे साध्वी! स्वर्गविमानसमान महलोंमें श्रीराम विराजे हैं परंतु तिहारे विरहरूप समुद्रमें मग्न काहू ठौर रतिकूं नाहीं पावे हैं, समस्त भोगोपभोग तजे मौन धरे तिहारा ध्यान करैं हैं, जैसैं मुनि शुद्धताकूं ध्यावैं, एकाग्रचित्त तिष्ठै हैं। वे वीणाका नाद अर सुंदर स्त्रियोंके गीत कदापि नाहीं सुनै है अर सदा तिहारी ही कथा करैं हैं तिहारे देखवेके अर्थ केवल प्राणोंको धरैं हैं। यह वचन हनुमानके सुन सीता आनंदकूं प्राप्त भई। बहुरि सजल नेत्र होय कहती भई-(सीताके निकट हनुमान महा विनयवान हाथ जोड खडा है) जानकी बोली—

हे भाई! अब दुःखके सागरविषैं पडी हूं अशुभके उदयकरि पतिके समाचार सुन तुष्टायमान भई तोहि कहा दूं? तब हनुमान प्रणामकर कहता भया—हे जगतपूज्य! तिहारे दर्शन ही से मोहि महा लाभ भया। तब सीता मोती समान आंसुनिकी बूंद नाखती हनुमानसे पूछती भई--हे भाई! यह नगर ग्राह आदि अनेक जलचरोंकर भरा महा भयानक समुद्र ताहि उलंघकर तू कैसे आया? अर सांचे कहो, मेरा प्राणनाथ तैंने कहां देख्या? अर लक्ष्मण युद्धविषैं गया हुता सो कुशल क्षेमसूं हैं अर मेरा नाथ कदाचित् तोहि यह संदेसा कहकरे परलोक प्राप्त हुवा होय, अथवा जिनमार्गविषैं महाप्रवीण सकल परिग्रहका त्यागकर तप करता होय, अथवा मेरे वियोगतैं शरीर शिथिल होय गया अर अंगुरीतैं मुद्रिका गिर पडी होय, यह मेरे विकल्प है। अब तक मेरे प्रभुका तोसों परिचय न हुता, सो कौन भांति मित्रता भई, सो सब मोसूं विशेषता कर कहो। तब हनुमान हाथ जोड़ सिर नवाय कहता भया—हे देवि? सूर्यहास खड्ग लक्ष्मणकूं सिद्ध भया। अर चंद्रनखाने धनीपैं जाय धनीकूं क्रोध उपजाया सो खरदूषण दंडकवनविषैं युद्ध करवेकूं आया। अर लक्ष्मण उससे युद्ध करवेकूं गये, सो तो सब वृत्तांत तुम जानो हो।

बहुरि रावण आया अर आप श्रीरामके पास विराजती हुतीं सो रावण यद्यपि सर्व शास्त्रका वेत्ता हुता, अर धर्म अधर्मका स्वरूप जाने हुता, परंतु आपकूं देखकर अविवेकी होय गया, समस्त नीति भूल गया, बुद्धि जाती रही। तिहारे हरिवेके कारण कपटकर सिंहनाद किया, सो सुनकर राम लक्ष्मणपै गये, अर यह पापी तुमकूं हर ले आया। बहुरि लक्ष्मण रामसों कही-तुम क्यों आये, शीघ्र जानकीपै जावहु। तब आप स्थानक आए, तुमकूं न देखकर महा खेद-खिन्न भए। तिहारे ढूंढनेके कारण वनविषै बहुत भ्रमे। बहुरि जटायुको मरता देखा तब ताहि णमोकर मंत्र दिया अर चार आराधना सुनाय संन्यास देय पक्षीका परलोक सुधारा। बहुरि तिहारे विरहकर महादुखी सोचसे परे। अर लक्ष्मण खरदूषणकूं हन रामपै आया, धैर्य बंधाया अर चंद्रोदयका पुत्र विराधित लक्ष्मणसे युद्ध ही विषै आय मिला हुता। बहुरि सुग्रीव रामपै आया, अर साहसगति विद्याधर जो सुग्रीवका रूपकर सुग्रीवकी स्त्रीका अर्थी भया हुता, सो रामकूं देख साहसगतिकी विद्या जाती रही, सुग्रीवका रूप मिट गया। अर साहसगति रामसूं लडा सो साहसगतिकूं रामने मारा, सुग्रीवका उपकार किया। तब सबने मोहि बुलाय रामसूं मिलाया। अब मैं श्रीरामका पठाया तिहारे छुड़ाइवे अर्थ यहां आया हूं परस्पर युद्ध करना निःप्रयोजन है। कार्यकी सिद्धि सर्वथा नयकर करना। अर लंकापुरीका नाथ दयावान है विनय-वान है धर्म अर्थ कामका वेत्ता है कोमल हृदय है सौम्य है वक्रतारहित है सत्यवादी महा-धीरवीर है सो मेरा वचन मानेगा ताहि रामपै पठावेगा। याकी कीर्ति महा निर्मल पृथिवी-विषैं प्रसिद्ध है अर यह लोकापवादतैं डरैं है। तब सीता हर्षित होय हनुमानसे कहती भई हे कपिध्वज! तो सरीखे पराक्रमी धीरवीर विनयवान मेरे पतिके निकट केतेक हैं? तब मंदो-दरी कहती भई—हे जानकी! तैं यह कहा समझ कर कही। तू याहि न जाने है तातैं ऐसा पूछै है या सरीखा भरतक्षेत्रमें कौन है या क्षेत्रमें यह एक ही है यह महा सुभट युद्धमें कई वार रावणका सहाई भया है, यह पवनका पुत्र अंजनाका सुत रावणका भानजा जमाई है। चंद्रनखाकी पुत्री अनंगकुसुमा परणी है, या एकने अनेक जीते हैं सदा लोक याके दर्शनकूं वांछै हैं। चंद्रमाकी किरणवत् याकी कीर्ति जगत्में फैल रही है। लंकाका धनी याहि भाईनितैं भी अधिक गिनै है यह हनुमान पृथिवीविषैं प्रसिद्ध गुणनिकर पूर्ण है। परन्तु यह बड़ा आश्चर्य है कि भूमिगोचरियों का दूत होय आया है। तब हनुमान कही-तुम राजा मयकी पुत्री अर रावणकी पटरानी दूती होय कर आई हो। जा पतिके प्रसादतैं देवनिकैसे सुख भोगे, ताहि अकार्यविषैं प्रवर्तते मनै नाहीं करो हो। और ऐसे कार्यकी अनुमोदना करो हो। अपना वल्लभ विषका भरा भोजन करै ताहि नाहीं निवारो हो, जो अपना भला बुरा न जानै ताका जीतव्य पशु समान है। अर तिहारा सौभाग्यरूप सबतैं अधिक अर पति परस्त्रीरत भया ताका दूतीपना करो हो। तुम सब बातानविषैं

प्रवीण परमबुद्धिमती हुती सो प्राकृत जीवनिसमान अविधि कार्य करो हो। तुम अर्धचक्रीकी महिषी कहिए पटरानी हो सो अब मैं महिषी कहिए भैंस समान जानूं हूं। यह वचन हनुमानके मुखतैं सुन मंदोदरी क्रोधरूप होय बोली—अहो तू दोषरूप है, तेरा वाचालपना निरर्थक है। जो कदाचित् रावण यह बात जानैं कि यह रामका दूत होय सीतापै आया है तो जो काहूसं न करै ऐसी तोसों करै। अर जाने रावणका बहनेऊ चन्द्रनखाका पति मारा ताके सुग्रीवादिक सेवक भए, रावणकी सेवक छांडी सो वे मंदबुद्धि हैं, रंक कहा करेंगे? इनकी मृत्यु निकट आई है, तातैं भूमिगोचरीके सेवा भए हैं। ते अतिमूढ निर्लज्ज तुच्छ वृत्ति कृतघ्नी वृथा गर्वरूप होय मृत्युके समीप तिष्ठैं हैं। ये वचन मंदोदरीके सुनकर सीता क्रोधरूप होय कहती भई—हे मंदोदरी! तू मंदबुद्धि है जो वृथा ऐसे कहै है, तैं मेरा पति अद्भुत पराक्रमका धनी कहा नाहीं सुना है, शूरवीर अर पंडितनिकी गोष्ठीविषैं मेरा पति मुख्य गाइए है, जाके वज्रावर्त धनुषका शब्द रण संग्रामविषैं सुनकर महा रणधीर योधा धैर्य नाहीं धारे हैं। भयसं कम्पायमान होयकर दूर भागै हैं अर जाका लक्ष्मण छोटा भाई लक्ष्मीका निवास शत्रुपक्षके क्षय करवेकूं समर्थ जाके देखते ही शत्रु दूर भाग जावैं। बहुत कहिवेकरि कहा? मेरा पति राम लक्ष्मणसहित समुद्र तरकर शीघ्र ही आवै है सो युद्ध विषैं थोडे ही दिननिविषैं तू अपने पतिकूं मूवा देखैगी मेरा पति प्रबल पराक्रमका धारी है, तू पापी भरतारकी आज्ञारूप दूती होय आई है सो शिताब ही विधवा होयगी अर बहुत रुदन करेगी। ये वचन सीताके मुखतैं सुनकर मन्दोदरी राजा मयकी पुत्री अतिक्रोधकूं प्राप्त भई। अठारा हजार रानी हाथोंकर सीताके मारवेकूं उद्यमी भई और अति क्रूरवचन कहती सीता पर आईं। तब हनुमान बीच आनकर तिनकूं थांभी, जैसैं पहाड नदीके प्रवाहकूं थांभै। ते सब सीताको दुखका कारण वेदनारूप होय हनिवेकूं उद्यमी भई थीं सो हनूमानने वैद्यरूप होय निवारा। तब ये सब मंदोदरी आदि रावणकी रानी मानभंग होय रावणपै गई, क्रूर हैं चित्त जिनके। तिनकूं गए पीछे हनुमान सीतासूं नमस्कार करि आहारके निमित्त विनती करता भया, हे देवि! यह सागरांत पृथिवी श्रीरामचंद्रकी है तातैं यहांका अन्न उनहीका है वैरिनिका न जानो। या भांति हनुमानने सम्बोधी अर प्रतिज्ञा भी यही हुती कि जो पतिके समाचार सुनूं तब भोजन करूं, सो समाचार आए ही। तब सीता सब आचारमें विचक्षण महा साध्वी शीलवंती दयावंती देश-कालकी जाननेवारी आहार लेना अंगीकार करती भई। तब हनुमानने एक ईरा नामकी स्त्री कुलपालिकाकूं आज्ञा करी जो शीघ्र ही श्रेष्ठ अन्न लावो। अर हनुमान विभीषणके पास गया ताहीके भोजन किया। अर तासूं कही सीताको भोजनकी तयारी कराय आया हूं कर ईरा जहां डेरे हुते वहां गई सो चार मुहूर्तमें सर्व सामग्री लेकर आई दर्पण समान पृथिवीकूं चंदनसूं लीपा और महा सुगंध विस्तीर्ण निर्मल सामग्री और सुवर्णादिकके भाजन भोजन धराय लाई। केएक पात्र

घृतके भरे हैं, कैएक चावलनिकरि भरे हैं, चावल कुंदके पुष्पसमान उज्ज्वल और कैएक पात्र दालसों भरे हैं, और अनेक रस नाना प्रकारके व्यंजन दूध दही महा स्वादरूप भांति भांतिका आहार सो सीता बहुत क्रिया संयुक्त रसोई कर ईरा आदि समीपवर्तियोंको यहां ही न्योते। हनुमानसे भाईका भाव कर अति वात्सल्य किया। महा श्रद्धासंयुक्त है अन्तःकरण जाका ऐसी सीता महा पतिव्रता भगवानकूं नमस्कारकर अपना नियम समाप्तकर त्रिविध पात्रनिकूं भोजन करावनेका अभिलाषकर महा सुन्दर श्रीराम तिनकूं हृदयविषैं धार, पवित्र है अंग जाका दिन-विषैं शुद्ध आहार करती भई। सूर्यका उद्योत होय तब ही पवित्र मनोहर पुण्यका बढावनहारा आहार योग्य है रात्रिकूं योग्य नाहीं। सीता भोजन कर चुकी अर कछु इक विश्रामकूं प्राप्त भई तब हनुमानने नमस्कारकर विनतीकरि--हे पतिव्रते! हे पवित्रे! हे गुणभूषणे! मेरे कांधे चढहु अर समुद्र उलंघ क्षण मात्रमें रामके निकट ले जाऊं। तिहारे ध्यानमें तत्पर महाविभवसंयुक्त जे राम तिनकूं शीघ्र ही देखहु। तिहारे मिलापकर सबहीकूं आनन्द होइ। तब सीता रुदन करती कहती भई--हे भाई! पतिकी आज्ञा बिना मेरा गमन योग्य नाहीं, जो पूछी कि तू बिना बुलाए क्यों आई, तो मैं कहा उत्तर दूंगी। तातैं रावणने उपद्रव तो सुना होयगा सो अब तुम जावो, तोहि यहां विलंब उचित नाहीं। मेरे प्राणनाथके समीप जाय मेरी तरफसे हाथ जोड़ नमस्कार कर मेरे मुखके वचन या भांति कहियो--हे देव! एक दिन मो सहित आपने चारण मुनिकी वन्दना करी, महा स्तुति करी, अर निर्मल जलकी भरी सरोवरी कमलनिकर शोभित जहां जलक्रीड़ा करी ता समय महां भयंकर एक वनका हाथी आया सो वह हाथी महाप्रबल आपने क्षण मात्रमें वशकर सुन्दर क्रीडा करी। हाथी गर्वरहित निश्चल किया। अर एक दिन नन्दन वन समान वनविषैं मैं वृक्षकी शाखाकूं नवाती क्रीडा करती हुती सो भ्रमर मेरे शरीरकूं आय लगे सो आपने अति शीघ्रताकर मुझे भुजासे उठाय लई अर आकुलता रहित करी, अर एक दिन सूर्य उद्योत समय आपके समीप सरोवरके तट तिष्ठती थी तब आप शिक्षा देयवेके काज कछू इक मिसकर कोमल कमल नालकी मेरे मधुरसी दीनी, अर एक दिन पर्वतपर अनेक जातिके वृक्ष देखे मैं आपकूं पूछी--हे प्रभो! यह कौन जातिके वृक्ष हैं महामनोहर, तब आप प्रसन्न मुखकर कही हे देव! ये नन्दनी वृक्ष है, अर एक दिन करणकुण्डल नामा नदीके तीर आप विराजे हुते अर मैंहू हुती ता समय मध्यान्ह समय चारण मुनि आए सो तुम उठकर महा भक्तिकर मुनिकूं आहार दिया तहां पंचाश्चर्य भए, रत्नवर्षा, कल्पवृक्षोंके पुष्पनिकी वर्षा, सुगन्ध जलकी वर्षा, शीतल मन्द सुगन्ध पवन, दुन्दुभी बाजे अर आकाशविषैं देवनिंने यह ध्वनि करी धन्य ये पात्र, धन्य ये दाता, धन्य ये दान, ये सब रहस्यकी बातें कहीं। अर चूडामणि सिरतैं उतार दिया जो याके दिखानेसे उनकूं विश्वास आवेगा। अर यह कहियो मैं जानूं हू आपकी कृपा मोपै अत्यंत

है तथापि तुम अपने प्राण यत्नसूं राखियो तिहारेसे मेरा वियोग भया अब तिहारे यत्नसे मिलाप होयगा, ऐसा कह सीता रुदन करती भई। तब हनुमानने धैर्य बंधाया अर कही, हे माता! जो तुम आज्ञा करोगी सो ही होयगा और शीघ्र ही स्वामीसों मिलाप होयगा यह कह हनुमान सीतासे विदा भया। अर सीताने पतिकी मुद्रिका अंगुरीमें पहिर ऐसा सुख माना मानों पतिका समागम भया।

अथानन्तर वनकी नारी हनुमानकूं देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भईं अर परस्पर ऐसी बात करती भई--यह कोई साचात् कामदेव है, अथवा देव है, सो वनकी शोभा देखवेकूं आया है। तिनमें कोई एक काम कर व्याकुल होय वीन बजावती भईं, किन्नरी देवीयोंकेसे हैं स्वर जिनके, कोईइक चन्द्रवदनी वामें हस्तविषैं दर्पण राख अर याका प्रतिबिम्ब दर्पणमें देखती भई, देखकर आसक्त मन भई। या भांति समस्त स्त्रियोंको संभ्रम उपजाय हार माला सुन्दर वस्त्र धरें देदीप्यमान अग्निकुमार देववत् सोहता भया।

इतनेमें वनविषैं अनेक वार्ता रावणने सुनी, तब क्रोधरूप होय रावण महानिर्दयी किंकर युद्धविषैं जे प्रवीण हुते ते पठाए। अर तिनकूं यह आज्ञा करी कि मेरी क्रीड़ाका जो पुष्पोद्यान तहां मेरा कोई एक द्रोही आया है सो अवश्य मार डारियो। तब ये जायकर वनके रक्षकनिकूं कहते भए--हो वनके रक्षक हो! तुम कहा प्रमादरूप होय रहे हो,कोई उद्यानविषैं दुष्ट विद्याधर आया है सो शीघ्र ही मारना अथवा पकड़ना। वह महा अविनयी है, वह कौन है कहां है? ऐसे किंकरनिके मुखतैं ध्वनि निकसी। सो हनुमानने सुना, अर धनुषके धरणहारे शक्तिके धरणहारे, गदाके धरणहारे, खड्गके बरछीके धरणहारे, अनेक लोग आवते हनूमानने देखे तब पवनका पूत सिंह हूतैं अधिक है पराक्रम जाका मुकुटविषैं रत्नजड़ित वानरका चिह्न ताकर प्रकाश किया है आकाश जाने आप उनकूं अपनेरूप दिखाया, उगते सूर्य समान क्रोध होंठ डसता लाल नेत्र। तब याके भयकरि सब किंकर भागे, तब और क्रूर सुभट आए शक्ति तोमर खड्ग चक्र गदा धनुष इत्यादि आयुध करविषैं धरैं अर अनेक शस्त्र चलावते आए। तब अंजनाका पुत्र शस्त्ररहित हुता सो वनके जे वृक्ष ऊंचे ऊंचे थे, उनके समूह उपाड़ अर पर्वतनिकी शिला उपाड़ी सो रावणके सुभटनिपर अपनी भुजानिकर वृक्ष अर शिला चलाईं मानों काल ही है सो बहुत सामंत मारे। कैसी है हनुमानकी भुजा? महा भयंकर जो सर्प ताके फण समान है आकार जिनका, शाल वृक्ष पीपल बड़ चम्पा नींब अशोक कदम्ब कुन्द नाग अर्जुन धव आम्र लोध कटहल बड़े बड़े वृक्ष उपार उपार अनेक योधा मारे कैयक शिलावोंसे मारे, कैयक मुक्कों अर लातोंसे पीस डारे, समुद्र समान रावणके सुभटोंकी सेना क्षणमात्रविषैं बखेर डारी कैयक मारे कैयक भागे। हे श्रेणिक? मृगनिके जीतवेकूं मृगराजका कौन सहाई होय। अर शरीर

बलहीन होय तो घनोंकी सहायकर कहा? ता वनके सबही भवन अर वापिका अर विमान सारिखे उत्तम मंदिर सब चूर डारे केवल भूमि रह गई, वनके मन्दिर अर वृक्ष विध्वंस किए सो मार्ग होय गया, जैसे समुद्र सूक जाय अर मार्ग हो जाय। फोरि डारी है हाटोंकी पंक्ति, अर मारे हैं अनेक किंकर, सो बाजार ऐसा होय गया मानों संग्रामकी भूमि है, उतंग जे तोरण सो पड़े अर ध्वजावोंकी पंक्ति पड़ी सो आकाशसे मानों इन्द्र धनुष पड़ा है, अर अपनी जंघातें अनेक वर्ण रत्ननिके महल ढाहे सो अनेक वर्णके रत्ननिकी रजकर मानों आकाशविषैं हजारों इन्द्रधनुष चढ़े हैं, अर पायनिकी लातनकरि पर्वतसमान ऊंचे घर फोर डारे तिनका भयानक शब्द होता भया। अर कईयक तो हाथनिसे मारे, अर कईयक पगोंसे मारे, अर छातीसे, अर कांधेसे, या भांति रावणके हजारों सुभट मारे सो नगरविषैं हाहाकार भया, अर रत्नोंके महल गिर पड़े, तिनका शब्द भया अर हाथिनिके थंभ उतार डारे, अर घोड़े पवन मंडल पानोंकी न्याईं उड़े उड़े फिरे हैं, अर वापी फोर डारी, सो कीचड़ रह गया समस्त लंका व्याकुल भई मानो चाक चढाई हैं। लंकारूप सरोवर राक्षसरूप मीनोंसे भरा सो हनुमानरूप हाथीने गाह डारा, तब मेघ-वाहन बक्तर पहिर बड़ी फौज लेय आया अर ताके पीछे इन्द्रजीत आया सो हनुमान उनसे युद्ध करने लगा। लंकाकी बाह्यभूमिविषैं महायुद्ध भया जैसा खरदूषणके अर लक्ष्मणके युद्ध भया हुता। अर हनुमान चार घोड़ोंके रथपर चढ़ धनुषबाण लेय राक्षसनिकी सेना पर दौड़ा।

तब इन्द्रजीतने बहुत बेर तक युद्धकर हनुमानकूं नाग फांस से पकरथा अर नगरमे ले आया सो याके आयवेसे पहिले ही रावणके निकट हनुमानकी पुकार हो रही थी, अनेक लोग नाना प्रकार कर पुकार कर रहे हुते कि सुग्रीव का बुलाया यह अपने नगरतें किहकंधा-पुर आया, रामसों मिला, अर तहांते या ओर आया सो महेंद्रकूं जीता अर साधवोंके उपसर्ग निवारे, दधिमुखकी कन्या रामपै पठाई, अर वज्रमई कोट विध्वंसा वज्रमुखकूं मारा, अर ताकी पुत्री लंकासुन्दरी अभिलाषवंती भई सो परणी, अर ता संग रमा, अर पुष्पनामा वन विध्वंसा, वनपालक विह्वल करे अर बहुत सुभट मारे अर घटरूप जे स्तन तिनकर सींच २ मालियोंकी स्त्रियोंने पुत्रोंकी नाईं जे वृक्ष बढ़ाए हुते ते उपार डारे अर वृक्षोंसे बेल दूर करी विधवा स्त्रियोंकी नाईं भूमिविषैं पड़ी तिनके पल्लव सूक गए। अर फल फूलोंसे नम्रीभूत नाना प्रकारके वृक्ष मसान कैसे वृक्ष कर डारे। सो यह अपराध सुन रावणकूं अतिकोप भया हुता। इतनेमें इन्द्र-जीत हनुमानकूं लेकर आया सो रावणने याकूं लोहकी सांकलनिकर बन्धाया अर कहता भया यह पापी निलज्ज दुराचारी है। अब याके देखवेकर कहा? यह नाना अपराधका करणहारा ऐसे दुष्टको क्यों न मारिये। तब सभाके लोक सब ही माथा धुनकर कहते भए—हे हनुमान! जाके प्रसादतैं पृथिवीविषैं तूं प्रभुताकूं प्राप्त भया ऐसे स्वामीके प्रतिकूल होय भूमिगोचरीका दूत भया

रावणकी ऐसी कृपा पीठ पीछे डार दई ऐसे स्वामीकूं तज जे भिखारी निर्धन पृथिवीमें भ्रमते फिरते दोनों वीर तिनका तूं सेवक भया। अर रावणने कहा कि तू पवनका पुत्र नाहीं,काहू और कर उपजा है, तेरी चेष्टा अकुलीनकी प्रत्यक्ष दीखै है जे जार-जात हैं तिनके चिन्ह अंगमें नाहीं दीखै हैं, जब अनाचारको आचरै तब जानिए यह जार-जात है। कहां केशरी सिंहका बालक स्यालका आश्रय करे नीचका आश्रयकर कुलवंत पुरुष न जीवें अब तू राजद्वारका द्रोही है, निग्रह करवे योग्य है? तब हनुमान यह वचन सुन हंसा अर कहता भया—न जानिए कौनका निग्रह होय। या दुर्बुद्धिकर तेरी मृत्यु नजीक आई है कैएक दिनविषैं दृष्टि परैगी। लक्ष्मणसहित श्रीराम बड़ी सेनासे आवै है सो किसीसे रोके न जांय जैसैं पर्वतनितैं मेघ न रुकैं। अर जैसैं कोई नाना प्रकारके अमृत समान आहार कर तृप्त न भया अर विषकी एक बूंद भखे नाशकूं प्राप्त होय, तैसें हजारां स्त्रिनिकर तू तृप्तायमान न होय अर पर स्त्रीकी तृष्णाकर नाशकूं प्राप्त होयगा। जो शुभ अर अशुभकर प्रेरी, बुद्धि होनहार माफिक होय है सो इन्द्रादि कर भी अन्यथा न होय, दुर्बुद्धिविषैं सैकड़ां प्रियवचनकर उपदेश दीजिये तोहु न लगै, जैसा भवितव्य होय सोही होय। विनाशकाल आवै तब बुद्धिका नाश होय। जैसैं कोऊ प्रमादी विषका भरा सुगंध मधुर जल पीवै तो मरणकूं पावै, तैसें हे रावण? तू परस्त्रीका लोलुपी नाशकूं प्राप्त होयगा। तू गुरु परिजन वृद्ध मित्र प्रिय बांधव मंत्री सबनिके वचन उलंघकर पापकर्मविषैं प्रवर्ता है सो दुराचाररूप समुद्रविषैं कामरूप भ्रमरके मध्य आय नरकके दुख भोगेगा। हे रावण! तू रत्नश्रवा राजाके कुलक्षय का कारण नीचपुत्र भया। तोकर राक्षसवंशनिका क्षय होयगा,आगैं तेरे वंशमें बड़े बड़े मर्यादाके पालनहार पृथिवीविषैं पूज्य मुक्तिके गमन करणहारे भए। अर तू उनके कुलविषैं पुलाक कहिए न्यून पुरुष भया। दुर्बुद्धि मित्रकूं कहना निरर्थक है। जब हनुमानने यह वचन कहे तब रावण क्रोधकर आरक्त होय दुर्वचन कहता भया—यह पापी मृत्युसे नाहीं डरै है, वाचाल है, तातैं शीघ्र ही याके हाथ पांव ग्रीवा सांकलनिसूं बांधकर अर कुवचन कहते ग्रामविषैं फेरो, क्रूर किंकर लार घर घर यह वचन कहो—भूमिगोचरियोका दूत आया है याहि देखहु, अर श्वान बालक लार सो नगरकी लुगाई धिक्कार देवें, अर बालक धूर उड़ावैं, अर स्वान भौंकैं सर्व नगरी विषैं या भांति इसे फेरो, दुख देवो। तब वे रावणकी आज्ञाप्रमाण कुवचन बोलते ले निकसे सो यह बन्धन तुड़ाय ऊंचा चल्या जैसैं यति मोहफांस तोड़ मोक्षपुरीकूं जाय आकाशतैं उछल अपने पगोंकी लातोंकर लंकाका बड़ा द्वार ढाया तथा और एक छोटे दरवाजे ढाहे इन्द्रके महल तुल्य रावणके महल हनुमानके चरणनिके घातसे बिखर गए जिनके बड़े बड़े स्तम्भ हते। अर महलके आस पास रत्न सुवर्णका कोट हुता सो चूर डारा, जैसैं वज्रपातके मारे पर्वत चूर्ण होजांय। तैसैं रावणके घर हनुमानरूप वज्रके मारे चूर्ण होय गए। यह हनुमान-

के पराक्रम सुन सीताने प्रमोद किया अर हनुमानकूं बंधा सुन विषाद किया हुता। तब वज्रोदरी पास बैठी हुती ताने कहा-हे देवि! वृथा काहेकूं रुदन करै यह सांकल तुड़ाय आकाशमें चला जाय है सो देख। तब सीता अति प्रसन्न भई अर चित्तमें चिंतवती भई यह हनुमान मेरे समाचार पतिपै जाय कहेगा सो आशीस देती भई अर पुष्पांजलि नाखती भई कि तू कल्याणसे पहुचियो समस्त ग्रह तुझे सुखदाई होंय, तेरे विघ्न सकल नाशकूं प्राप्त होंय, तू चिरंजीव हो। या भांति परोक्ष असीस देती भई। जे पुण्याधिकारी हनुमान सारिखे पुरुष हैं वे अद्भुत आश्चर्यकूं उपजावैं हैं। कैसे हैं वे पुरुष? जिन्होंने पूर्वजन्ममें उत्कृष्ट तप व्रत आचरे हैं, अर सकल भुवनमें विस्तरै हैं ऐसी कीर्तिके धारक हैं। अर जो काम किसीसे न बनै सो करवे समर्थ हैं, अर चिंतवनमें न आवे ऐसा जो आश्चर्य उसे उपजावैं हैं, इसलिए सर्व तजकर जे पंडितजन हैं वे धर्मकूं भजो, अर जे नीचकर्म हैं वे खोटेफलके दाता हैं इसलिए अशुभकर्म तजो। अर परमसुखका आस्वाद तामें आसक्त जे प्राणी सुन्दर लीलाके धारकर वे सूर्यके तेजकूं जीतै ऐसे होय हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमानका लंकासूं पाछा आवनेका वर्णन करनेवाला तिरेपनवां पर्व पूर्ण भया ॥५३॥

चौवनवां पर्व

[राम लक्ष्मणका लंकाको प्रस्थान]

अथानन्तर हनुमान अपने कटकमें आय किहकन्धापुरकूं आया। लंकापुरीमें विघ्नकर आया, ध्वजा छत्रादि नगरीकी मनोज्ञता हर आया, किहकन्धापुरके लोग हनुमानकूं आया जान बाहिर निकसे नगरमें उत्साह भया। यह धीर उदार है पराक्रम जाका, नगरमें प्रवेश करता भया सो नगरके नर-नारियोंको याके देखवेका अतिसंभ्रम भया, अपना जहां निवास तहां जाय सेनाके यथायोग्य डेरे कराए, राजा सुग्रीवने सब वृत्तांत पूछा, सो ताहि कहा। बहुरि रामके समीप गए। राम यह चिंतवन कर रहे हैं कि हनुमान आया है सो यह कहेगा कि तिहारी प्रिया सुखसूं जीवै है। हनुमानने ताही समय आय रामकूं देखा, महाक्षीण वियोगरूप अग्निसे तप्तायमान जैसे हाथी दावानल कर व्याकुल होय महाशोकरूप गर्तविषैं पड़े तिनकूं नमस्कार-कर हाथ जोड़ हर्षित वदन होय सीताकी वार्ता कहता भया, जेते रहस्यके समाचार कहे हुते ते सब वर्णन किये, अर सिरका चूड़ामणि सौंप निश्चिंत भया। चिन्ता कर वदनकी और ही छाया होय रही है, आंसू पड़ैं हैं। सो राम याहि देखकर रुदन करने लग गए, अर उठकर मिले। श्रीराम

यों पूछें है हे हनुमान ! सत्य कहो, मेरी स्त्री जीवै है ? तब हनुमान नमस्कारकर कहता भया हे नाथ ! जीवै है, आपका ध्यान करै है। हे पृथिवीपते ! आप सुखी होवो, आपके विरह कर वह सत्यवती निरंतर रुदन करै है, नेत्रनिके जलकर चतुर्मास कर राखा है, गुणके समूहको नदी सीता ताके केश बिखर रहे हैं, अत्यन्त दुखी है अर बारम्बार निश्वास नाखती चिंताके सागरमें डूब रही है। स्वभावहीकरि दुर्बल शरीर है अर विशेष दुर्बल होय गई है। रावणकी स्त्री आराधैं हैं परन्तु उनसे संभाषण करै नाहीं। निरंतर तिहारा ही ध्यान करै है। शरीरका संस्कार सब तज बैठी है हे देव ! तिहारी रानी बहुत दुःखसे जीवै है। अब तुमकूं जो करना होय सो करो। ये हनुमानके वचन सुन श्रीराम चिंतावान् भए मुखकमल कुमलाय गया। दीर्घ निश्वास नाखते भए अर अपने जीतव्यकूं अनेक प्रकार निंदते भए। तब लक्ष्मणने धैर्य बंधाया। हे महाबुद्धि ! कहा सोच करो हो, कर्तव्यविषैं मन धरो। अर लक्ष्मण सुग्रीवसूं कहता भया—हे किहकंधाधिपते। तू दीर्घसूत्री है। अब सीताके भाई भामंडलकूं शीघ्र ही बुलावहु, रावणकी नगरी हमकूं अवश्य ही जाना है। कै तो जहाजनिकरि समुद्र तिरैं अथवा भुजानिनैं। ये बात सुन सिहनाद नामा विद्याधर बोला—आप चतुर महाप्रवीण होयकर ऐसी बात मत कहो, अर हम तो आपके संग हैं परन्तु ऐसा करना जाविषैं सबका हित होय। हनुमानने जाय लंकाके वन विध्वंसे अर लंकाविषैं उपद्रव किया, सो रावणकूं क्रोध भया है सो हमारी तो मृत्यु आई है। तब जामवंत बोला तू नाहर होयकर मृगकी न्याईं कहा कायर होय है, अब रावण ह भयरूप हैं अर वह अन्यायमार्गी है वाकी मृत्यु निकट आई है। अर अपनी सेनामें भी बडे बडे योधा महारथी हैं। विद्या विभवकर पूर्ण हैं हजारां आश्चर्यके कार्य जिन्होंने किये हैं तिनके नाम धनगति, भूतानन्द, गजस्वन, क्रूरकेलि, किल भीम, कुंड, गोरवि अंगद नल नील, तडिद्वक्त्र, मंदर, अशनि, अर्णव, चंद्रज्योति, मृगेंद्र, वज्रदंष्ट्र, दिवाकर अर उल्काविद्या, लांगूलविद्या, दिव्यशस्त्रविषैं प्रवीण, जिनके पुरुषार्थमे विघ्न नाहीं, ऐसे हनुमान महाविद्यावान अर भामंडल विद्याधरोंका ईश्वर महेंद्रकेतु अति उग्र है पराक्रम जाका, प्रसन्नकीर्ति उद्वृत्त अर ताके पुत्र महा बलवान तथा राजा सुग्रीवके अनेक सामंत महा बलवान् हैं, परम तेजके धारक वरतैं हैं अनेक कार्यके करणहारे, आज्ञाके पालनहारे ये वचन सुनकर विद्याधर लक्ष्मणकी ओर देखते भए। अर श्रीरामकूं देखा सो सौम्यतारहित महाविकरालरूप देखा अर भृकुटि चढ़ा महा भयंकर मानों कालके धनुष ही हैं। श्रीराम लक्ष्मण लंकाकी दिशा क्रोधके भरे लाल नेत्रकर चौके मानों राक्षसनिके क्षय करनेके कारण ही हैं। बहुरि वही दृष्टि धनुषकी ओर धरी, अर दोनों भाइयोंका मुख महा क्रोधरूप होय गया कोप कर मंडित भये, सिरके केश ढीले होय गये मानों कमलके स्वरूप ही हैं, जगतकूं तामसरूप तमकर व्याप्त किया चाहैं

हैं ऐसा दोऊनिका मुख ज्योतिके मंडल मध्य देख सब विद्याधर गमनकूं उद्यमी भए संभ्रमरूप है चित्त जिनका राघवका अभिप्राय जानकर सुग्रीव हनुमान सर्व नाना प्रकारके आयुध अर संपदा कर मंडित चलवेकूं उद्यमी भए। राम लक्ष्मण दोनों भाइनिके प्रयाण होनेके वादित्रनिके समूहके नादकर पूरित हैं दशों दिशा, सो मार्गसिर वदी पंचमीके दिन सूर्यके उदय समय महा उत्साह सहित भले भले शकुन भए ता समय प्रयाण करते भए। कहा कहा शकुन भए सो कहिए हैं—निर्धूम अग्निकी ज्वाला दक्षिणावर्त देखी, अर मनोहर शब्द करते मोर, अर वस्त्राभूषण संयुक्त सौभाग्यवती नारी, सुगन्ध पवन, निर्ग्रंथ मुनि, छत्र, तुरंगोंका गम्भीर हींसना, घंटाका शब्द, दहीका भरा कलश, काग पांख फैलाए मधुर शब्द करता, भेरी अर शंखका शब्द, अर तिहारी जय होवे, सिद्धि होवे, नंदो, बधो, ऐसे वचन इत्यादि शुभ शकुन भए। राजा सुग्रीव श्रीरामके संग चलवेकूं उद्यमी भए। सुग्रीवके ठौर ठौर सुविद्याधरोंके समूह आए। कैसा है सुग्रीव? शुक्लपक्षके चंद्रमा समान है प्रकाश जाका, नानाप्रकारके विमान, नानाप्रकारकी ध्वजा, नाना प्रकारके वाहन, नाना प्रकारके आयुध, उन सहित बड़े बड़े विद्याधर आकाशविषैं जाते शोभते भए। राजा सुग्रीव हनुमान शल्य दुर्मर्षण नल नील काल सुषेण कुमुद इत्यादि अनेक राजा श्रीरामके लार भए तिनके ध्वजावों पर देदीप्यमान रत्नमई वानरोंके चिह्न मानों आकाशके ग्रसवेकूं प्रवर्ते हैं अर विराधित की ध्वजापर नाहरका चिन्ह नीझरने समान देदीप्यमान अर जांबुकी ध्वजापर वृक्ष, अर सिंहरवकी ध्वजा में व्याघ्र अर मेघकांतकी ध्वजामें हाथीका चिन्ह, इत्यादि राजानिकी ध्वजामें नाना प्रकारके चिन्ह, इनमें भूतनाद महातेजस्वी लोकपाल समान सो फौजका अग्रसर भया, अर लोकपाल समान हनुमान भूतनादके पीछे सामंतनिके चक्र सहित परम तेजकूं धरे लंकापर चढ़े सो अति हर्षके भरे शोभते भए जैसे पूर्वं रावणके बड़े सुकेशीके पुत्र माली लंकापर चढ़े हुते, अर अमल किया हुता तैसैं। श्रीरामके सन्मुख विराधित बैठा, अर पीछे जामवंत बैठा, बांई भुजा सुषेण बैठा, दाहिनी भुजा सुग्रीव बैठा, सो एक निमिषमें वेलंधरपुर पहुंचे। तहांका समुद्रनामा राजा सो उसके अर नलके परम युद्ध भया सो समुद्रके बहुत लोक मारे गए अर नलने समुद्रको बांधा। बहुरि श्रीरामसे मिलाया अर तहां ही डेरा भए। श्रीरामने समुद्र पर कृपा करी ताका राज्य ताको दिया सो राजाने अति हर्षित होय अपनी कन्या सत्यश्री कमला गुणमाला रत्नचूड़ा स्त्रियोंके गुणकर मंडित देवांगना समान सो लक्ष्मणसे परणाई तहां एक रात्रि रहे। बहुरि यहांसे प्रयाणकर सुवेल पर्वतपर सुवेल-नगर गए वहां राजा सुवेल नाम विद्याधर ताकूं संग्राममें जीत रामके अनुचर विद्याधर क्रीड़ा करते भए जैसैं नन्दनवनविषैं देव क्रीड़ा करैं। तहां अक्षय नाम वनमें आनंदसे रात्रि पूर्ण करी। बहुरि प्रयाणकर लंका जायवेकूं उद्यमी भए। कैसी है लंका? ऊंचे कोटसे युक्त सुवर्णके मंदिरनिकर पूर्ण कैलाशके

शिखर समान है आकार जिनके अर नाना प्रकारके रत्ननिके उद्योतकर प्रकाशरूप अर कमलनिके वन तिनसे युक्त वापी कूप सरोवरादिक कर शोभित नाना प्रकार रत्नोंके ऊंचे जे चैत्यालय तिनकर मंडित महापवित्र इन्द्रकी नगरी समान। ऐसी लंकाकूं दूरतैं देखकर समस्त विद्याधर रामके अनुचर आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर हंसद्वीपविषैं डेरे किये, तहां हंसपुर नगर राजा हंसरथ ताहि युद्धविषैं जीत हंसपुरमें क्रीड़ा करते भए। तहांतैं भामंडलपर बहुरि दूत भेजा, अर भामंडलके आयवेकी वांछाकर तहां निवास किया। जा जा देशमें पुण्याधिकारी गमन करें, तहां तहां शत्रुनिकी जीत, महाभोग उपभोगको भजें। इन पुण्याधिकारी उद्यमवंतोंसे कोई परे नाहीं है, सब आज्ञाकारी हैं। जा जो उनके मनमें अभिलाषा होय सो सब इनकी मूठीमें हैं तातैं सर्व उपायकर त्रैलोक्यमें सार ऐसा जो जिनराजका धर्म सो प्रशंसा योग्य है। जो कोई जगजीत भया चाहै वह जिनधर्मकूं आराधो। ये भोग क्षणभंगुर हैं, इनकी कहा बात? यह वीतरागका धर्म निर्वाण देनेहारा है अर कोई जन्म लेय तो इन्द्र चक्रवर्त्यादिक पदका देनहारा है ता धर्मके प्रभावतैं ये भव्य जीव सूर्यसे अधिक प्रकाशको धरै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं राम लक्ष्मणका लंकागमन वर्णन करनेवाला चौवनवा पर्व पूर्ण भया ॥५४॥

पचवनवां पर्व

[राम-लक्ष्मणसे विभीषणका समागम]

अथानन्तर रामका कटक समीप आया जान प्रलयकालके तरंग समान लंका क्षोभकूं प्राप्त भई। अर रावण कोपरूप भया, अर सामन्त लोक रण--कथा करते भए, जैसा समुद्रका शब्द होय तैसै वादित्रनिके नाद भए सर्व दिशा शब्दायमान भई। अर रण भेरीके नादतैं सुभट महाहर्षकूं प्राप्त भए। सब साजबाज सज स्वामीके हित स्वामीके निकट आए, तिनके नाम मारीच अमलचन्द्र भास्कर सिंहप्रभ हस्त प्रहस्त इत्यादि अनेक योधा आयुधनिकरि पूर्ण स्वामीके समीप आए।

अथानन्तर लंकापति महायोधा संग्रामके निमित्त उद्यमी भया, तब विभीषण रावणपै आए प्रणामकर शास्त्रमार्गके अनुसार अति प्रशंसायोग्य सबकूं सुखदाई आगामी कालमें कल्याणरूप वर्तमान कल्याणरूप ऐसे वचन विभीषण रावण से कहता भया। कैसा है विभीषण? शास्त्रविषैं प्रवीण महा चतुर नय प्रमाणका वेत्ता भाईको शान्त वचन कहता भया—हे प्रभो! तिहारी कीर्ति कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल महाविस्तीर्ण महाश्रेष्ठ इन्द्र-समान पृथिवी पर विस्तर रही है सो परस्त्रीके निमित्त यह कीर्ति क्षणमात्र में क्षय होयगी, जैसै सांझके बादलकी रेखा। तातैं हे

स्वामी ! हे परमेश्वर ! हम पर प्रसन्न होवो, शीघ्र ही सीताकूं रामके समीप पठावो, यामें दोष नाहीं, केवल गुण ही है। सुखरूप समुद्रमें आप निश्चय तिष्ठो। हे विचक्षण ! जे न्यायरूप महा भोग हैं वे सब तुम्हारे स्वाधीन हैं अर श्रीराम यहां आए हैं, सो बड़े पुरुष हैं, तिहारे तुल्य हैं सो जानकी तिनकूं पठाय देवहु। सर्व प्रकार अपनी वस्तु ही प्रशंसा योग्य है, पर वस्तु प्रशंसा योग्य नाहीं। यह वचन विभीषणके सुन इन्द्रजीत रावणका पुत्र पिताके चित्तकी वृति जान विभीषणकूं कहता भया अत्यंत मानका भरा अर जिनशासनसे विमुख है। साधो ! तुमकूं कौनने पूछा, अर कौनने अधिकार दिया, जाकरि या भांति उन्मत्तकी नाईं वचन कहो हो। तुम अत्यंत कायर हो, अर दीन लोकनिकी नाईं युद्धमे डरो हो तो अपने घरके विवरमें बैठो ? ऐसी बातनिकर कहा, ऐसा दुर्लभ स्त्रीरत्न पायकर मूढोंकी न्याई कौन तजै ? तुम काहेकूं वृथा वचन कहो, जा स्त्रीके अर्थ सुभट पुरुष संग्रामविषैं तीक्ष्ण खड्गकी धारा करि महाशत्रुनिकूं जीत कर वीर लक्ष्मी भुजानिकरि उपार्जे हैं तिनके कायरता कहा ? कैसा है संग्राम ? मानों हाथिनिके समूहसे जहां अंधकार होय रहा है, अर नाना प्रकारके शस्त्रनिके समूह चलै हैं जहां अति भयानक है। यह वचन इंद्रजीतके सुनकर इंद्रजीतकूं तिरस्कार करता संता विभीषण बोला--रे पापी ! अन्यायमार्गी कहा तू पुत्रनामा शत्रु है ? तोकूं शीत-वायु उपजी है, अपना हित नाहीं जानै है, शीतवायुकी पीडा अर उपाय छांड शीतल जलविषैं प्रवेश करै तो अपने प्राण खोवे, अर घरविषैं आग लागै अर ता अग्निविषै सूके इंधन डारे तो कुशल कहांसे होय ? अहो मोहरूप ग्राहकर तू पीड़ित है तेरी चेष्टा विपरीत है, यह स्वर्णमई लंका जहां देवविमानमे घर, लक्ष्मणके तीक्ष्ण बाणोंसे चूर्ण न होहि जाइ, ता पहिले जनकसुता पतिव्रताकूं रामपै पठाय देहु, सर्वलोकके कल्याणके अर्थ शीघ्र ही सीताको पठाना योग्य है। तेरे बाप कुबुद्धिने यह सीता नाहीं आनी है, राक्षसरूप सर्पोंका विल जो यह लंका ताविषैं विषनाशक जडी आनी है। सुमित्राका पुत्र लक्ष्मण सोई भया क्रोधायमान सिंह, ताहि तुम गज-समान निवारवे समर्थ नाहीं, जाके हाथ सागरावर्त धनुष अर आदित्यमुख अमोघबाण अर जिनके भामंडलसा सहाई सो लोकोंसे कैसे जीता जाय। अर बड़े बड़े विद्याधरनिके अधिपति जिनसे जाय मिले, महेंद्र मलय हनुमान सुग्रीव त्रिपुर इत्यादि अनेक राजा और रत्नद्वीपका पति वेलंधरका पति संध्या हरद्वीप हैहयद्वीप आकाशतिलक केली किल दधिवक्र अर महाबलवान विद्याके विभवकरि पूर्ण अनेक विद्याधर आय मिले। या भांतिके कठोर वचन कहता जो विभीषण तापर महाक्रोधायमान होय खड्ग काढ रावण मारवेकूं उद्यमी भया, तब विभीषण भी महाक्रोधके वश होय रावणसूं युद्ध करवेकूं वज्रमई स्तंभ उपारथा। ये दोनों भाई उग्रतेजके धारक युद्धकूं उद्यमी भए सो मंत्रियोंने समझाय मने किए। विभीषण अपने घर गया। रावण अपने महल गया।

बहुरि रावणने कुंभकरण इंद्रजीतको कठोरचित्त होय कहा जो यह विभीषण मेरे अहितमें तत्पर है, अर दुरात्मा है वाहि मेरी नगरीसे निकासो, या अनर्थीके रहिवेकरि कहा ? मेरा अंग ही मोसे प्रतिकूल होय तो मोहि न रुचै। जो यह लंकाविषैं रहै अर मैं याहि न मारूं तो मेरा जीवना नाहीं, ऐसी वार्ता विभीषण सुनकर कही--मैं हू कहा रत्नश्रवाका पुत्र नाहीं ? ऐसा कह लंकातैं निकसा। महासामंतनि सहित तीस अक्षौहिणी दल लेयकर रामपै चाल्या (तीस अक्षौहिणी केतेक भए ताका वर्णन) छह लाख छप्पन हजार एकसौ हाथी, अर एते ही रथ,अर उगणीस लाख अडसठ हजार तीनसौ तुरंग,अर बत्तीस लाख अस्सी हजार पांचसै पयादा, विद्युत्धन इन्द्रवज्र इंद्रप्रचंड चपल उद्धत एक अशनिसन्घात काल महाकाल ये विभीषण संबंधी परम सामंत अपने कुटुंब अर सब समुदाय सहित नानाप्रकार शस्त्रनिकरि मंडित रामकी सेनाकी तरफ चाले, नानाप्रकारके वाहननिकर युक्त आकाशकूं आच्छादित कर सर्व परिवारसहित विभीषण हंसद्वीप आया सो उस द्वीपके समीप मनोज्ञ स्थल देख जलके तीर सेनासहित तिष्ठा जैसे नंदीश्वर द्वीपकेविषैं देव तिष्ठैं। विभीषणकूं आया सुन वानरवंशिनिकी सेना कंपायमान भई जैसे शीतकालविषैं दलिद्री कांपे, लक्ष्मणने सागरावर्त धनुष अर सूर्यहास खड्गकी तरफ दृष्टि धरी, अर रामने वज्रावर्त धनुष हाथ लिया, अर सब मंत्री भेले होय मंत्र करते भए जैसे सिंहसे गज डरें, तैसैं विभीषणसे वानरवंशी डरे। ताही समय विभीषणने श्रीरामके निकट विचक्षण द्वारपाल भेजा सो रामपै आय नमस्कार कर मधुर वचन कहता भया—हे देव ! इन दोनों भाइनिविषैं जबतें रावण सीता लाया तब हीसे विरोध पड़ा, अर आज सर्वथा बिगड गई, तातैं आपके पांयनि आया है, आपके चरणारविंदकूं नमस्कार पूर्वक विनती करै है। कैसा है विभीषण ? धर्मकार्यविषैं उद्यमी है, यह प्रार्थना करी है कि आप शरणागत प्रतिपाल हो, मैं तिहारा भक्त शरणे आया हू जो आज्ञा होय सोही करूं आप कृपा करनेयोग्य हैं। यह द्वारपालके वचन सुन रामने मंत्रीनिसूं मंत्र किया तब रामसे सुमतिकांत मंत्री कहता भया कदाचित् रावण-ने कपटकर भेजा होय तो याका विश्वास कहा ? राजानिकी अनेक चेष्टा हैं। अर कदाचित् कोई वातकर आपसमें कलुष होय बहुरि मिलि जांय कुल अर जल इनके मिलने-का अचरज नाहीं। तब महाबुद्धिवान मतिसमुद्र बोला--इनमें विरोध तो भया यह बात सबसे सुनिए है अर विभीषण महा धर्मात्मा नीतिवान है शास्त्ररूप जलकर धोया है चित्त जाका महा दयावान है, दीन लोकनि पर अनुग्रह करै हैं, अर मित्रनिमें दृढ़ है, अर भाईपनेकी बात कही सो भाईपनेका कारण नाहीं, कर्मका उदय जीवनिके जुदा जुदा होय है। इन कर्मनिके प्रभावकर या जगतविषै जीवनिकी विचित्रता है। या प्रस्तावविषैं एक कथा है सो सुनहु--एक गिरि एक गौभूत वे दोऊ भाई ब्राह्मण हुते सो एक राजा सूर्यमेघ हुता, ताके रानी मतिक्रिया,

ताने दोनोंकूं पुण्यकी वांछाकर भातमें छिपाय सुवर्ण दिया। सो गिरिकपटीने भातविषै स्वर्ण जान गोभूतकूं छलकर मारया, दोनोंका स्वर्ण हर लिया सो लोभसे प्रीतिभंग होय है। और भी कथा सुनो—कौशांबी नगरीविषैं एक बृहद्धन नामा गृहस्थी, ताके पुरविंदा नामा स्त्री, ताके पुत्र अहिदेव महिदेव, सो इनका पिता मूवा तब ये दोऊ भाई धन के उपार्जने निमित्त समुद्रमें जहाज में बैठ गए सो सर्वद्रव्य देय एक रत्न मोल लिया सो वह रत्नकूं जो भाई हाथमे लेय ताके ये भाव होंय कि मैं दूजे भाईकूं मारूं सो परस्पर दोऊ भाइनिके खोटे भाव भए तब घर आये। वह रत्न माताकूं सौंपा सो माताके ये भाव भए कि दोऊ पुत्रनिकूं विष देय मारूं। तब माता अर दोनों भाइयोंने वा रत्नसे विरक्त होय कालिन्दी नदी में डारा सो रत्नकूं मछली निगल गई सो मछलीकूं धीवरने पकरी। अर अहिदेव महीदेवहीके बेची, सो अहिदेव महीदेवकी बहिन मछलीकूं विदारती हुती सो रत्न निकरया। याहूके ये भाव भए कि माताकूं और दोऊ भाईनिकूं मारूं। तब याने सकल वृत्तांत कह्या कि या रत्नके योगसे मेरे ऐसे भाव होय हैं जो तुमकूं मारूं। तब रत्नकूं चूर डारया, माता बहिन अर दोऊ भाई संसारके भावसे विरक्त होय जिनदीक्षा धरते भए। तातैं द्रव्यके लोभकर भाइनिमें वैर होय है अर ज्ञानके उदयकर वैर मिटै है। अर गिरिने तो लोभके उदयसे गोभूतकूं मारया, अर अहिदेवके महिदेवके वैर मिट गया। सो महाबुद्धि विभीषणका द्वारपाल आया है ताकूं मधुर वचनकर विभीषणकूं बुलाओ। तब द्वारपालसों स्नेह जताया, अर विभीषणकूं अति आदरसूं बुलाया। विभीषण रामकेसमीप आया सो राम विभीषणका अति आदर कर मिले, विभीषण विनती करता भया—हे देव! हे प्रभो! निश्चयकर मेरे इस जन्मविषैं तुम ही प्रभु हो, श्रीजिननाथ तो इस जन्म परभवके स्वामी, अर रघुनाथ या लोकके स्वामी। या भांति प्रतिज्ञा करी। तब श्रीराम कहते भए तुझे निःसंदेह लंकाका धनी करूंगा, सेनामें विभीषणके आवनेका उत्साह भया। अर ताही समय भामण्डल भी आया। कैसा है भामंडल? अनेक विद्या सिद्ध भई हैं जाकूं। सर्व विजियार्धका अधिपति, जब भामंडल आया तब राम लक्ष्मण आदि सकल हर्षित भए। भामण्डलका अति सन्मान किया आठ दिन हंसद्वीपविषैं रहे। बहुरि लंकाकूं सन्मुख भए नाना प्रकारके अनेक रथ अर पवनसे भी अधिक तेजकूं धरें बहुत तुरंग, अर मेघमालासे गयंदोंके समूह अर अनेक सुभटनि सहित श्रीरामने लंकाकूं पयान किया। समस्त विद्याधर सामन्त आकाशकूं आच्छादते संते रामके संग चाले सबमें अग्रसर वानरवंशी भए। जहां रणक्षेत्र थापा है तहां गए, संग्रामभूमि बीस योजन चौड़ी है अर लंबाईका विस्तार विशेष है। वह युद्धभूमि मानों मृत्युकी भूमि है या सेनाके हाथी गाजे अर अश्व हींसे। अर विद्याधरनिके वाहन सिंह हैं तिनके शब्द भए अर वादित्र बाजे। तब सुनकर रावण अति हर्षकूं प्राप्त भया। मनविषैं विचारी बहुत दिननिमें मेरे रणका उत्साह भया, समस्त

सामन्तनिकूं आज्ञा दई जो युद्धके उद्यमी होवो सो समस्त ही सामंत आज्ञा प्रमाण आनंदकर युद्धकूं उद्यमी भए। कैसा है रावण ? युद्धविष है हर्ष जाकूं, जाने कबहु सामंतनिकूं अप्रसन्न न किया सदा प्रसन्न ही राखे, सो अब युद्धके समय सबहीं एकचित्त भए। भास्कर नामा पुर तथा पयोदपुर, कांचनपुर, व्योमपुर, वल्लभपुर, गंधर्वगीतपुर शिवमंदिर, कंपनपुर, सूर्योदयपुर, अमृतपुर, शोभासिंहपुर, नृत्यगीतपुर, लक्ष्मीगतिपुर किन्नरपुर, बहुनादपुर, महाशैलपुर, चक्रपुर, स्वर्णपुर सीमंतपुर मलयआनंदपुर श्रीगृहपुर श्रीमनोहरपुर रिपुंजयपुर शशिस्थानपुर मार्तंडप्रभपुर विशालपुर ज्योतिर्दंडपुर परिष्योधपुर अश्वपुर रत्नपुर इत्यादि अनेक नगरोंके स्वामी बड़े २ विद्याधर मंत्रिनिसहित महा प्रीतिके भरे रावणपै आए, सो रावण राजावोंको सन्मान करता भया जैसे इंद्र देवनिका करै है, शस्त्र वाहन बक्तर आदि युद्धकी सामग्री सब राजावोंकूं देता भया, चार हजार अक्षौहिणी रावणके होती भई। अर दो हजार अक्षौहिणी रामके होती भई। सो कौन भांति ? हजार अक्षौहणीदल तो भामंडलका, अर हजार सुग्रीवादिका। या भांति सुग्रीव अर भामंडल ये दोऊ मुख्य अपने मंत्रीनि सहित तिनसों मंत्रकर राम लक्ष्मण युद्धकूं उद्यमी भए। अनेक वंशके उपजे अनेक आचरणके धरणहारे नाना जातिनिसे युक्त नानाप्रकार गुण क्रियासूं प्रसिद्ध नानाप्रकार भाषाके बोलनहारे विद्याधर श्रीराम रावणपै भेले भए। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं--हे राजन् ! पुण्यके प्रभावकरि मोटे पुरुषनिके वैरी भी अपने मित्र होय हैं अर पुण्यहीनोंके चिर-कालके सेवक अर अतिविश्वासके भाजन ते भी विनाशकालमें शत्रुरूप होय परणवैं है। या असार संसारविषैं जीवनिकी विचित्रगति जानकर यह चिंतवन करना चाहिए कि मेरे भाई सदा सुखदाई नाहीं, तथा मित्र बांधव सबही सुखदाई नाहीं, कबहु मित्र शत्रु होजाय, कबहु शत्रु मित्र हो जाय, ऐसे विवेकरूप सूर्यके उदयसे उरविषै प्रकाशकर बुद्धिवंतोंको सदा धर्मही चिंतवना।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै बिभीषणका रामसूं मिलाप अर भामंडलका का आगमन वर्णन करनेमाला पचपनवा पर्व पूर्ण भया ॥५५॥

छप्पनवां पर्व

[राम और रावणकी सेनाका प्रमाण वर्णन]

अथानंतर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीकूं पूछता भया—हे प्रभो ! अक्षौहिणीका परिमाण आप कहो। तब गौतम का दूजा नाम इंद्रभूति है सो इन्द्रभूति कहते भए—हे मगधाधिपति ! अक्षौहिणी-का प्रमाण तोहि संक्षेपसे कहै हैं सो सुन—आगमविषै आठ भेद कहे हैं ते सुन, प्रथम भेद पत्ति, दूजा भेद सेना, तीजा भेद सेनामुख, चौथा गुल्म, पांचवां वाहिनी, छठा पृतना, सातवां चमू

आठवां अनीकिनी । सो अब इनके यथार्थ भेद सुन । एक रथ, एक गज, पांच पयादे, तीन तुरंग, इसका नाम पत्ति है । अर तीन रथ, तीन गज, पन्द्रह पयादे, नव तुरंग, याकूं सेना कहिए । अर नव रथ, नव गज, पैंतालिस पयादा, सत्ताइस तुरंग, याहि सेनामुख कहिए । अर सत्ताइस रथ, सत्ताइस गज, एक सौ पैंतिस पयादा इक्यासी अश्व इसे गुल्म कहिए । अर इक्यासी रथ, इक्यासी गज चारसै पांच पयादे, दोसौ तैंतालिस अश्व.इसे वाहिनी कहिए। अर दोयसौ तियालिस रथ, दोयसौ तियालिस गज, बारासा पंद्रह पयादे, सातसौ उनतीस घोडे, याहि पृतना कहिए । अर सातसौ गुणतीस रथ, सातसौ गुणतीस गज, छत्तीससै पैंतालिस पयादे, इक्कीससौ सतासी तुरंग, इसे चमू कहिए । अर इक्कीससौ सतासी रथ, इक्कीससौ सत्तासी गज, दश हजार नौसौ पैंतीस पयादे, अर पैंसठसौ इकसठ तुरंग, इसे अनीकिनी कहिए । सो पत्तिसे लेय अनीकिनी तक आठ भेद भए । सो यहांलों तो तिगुने तिगुने बढ़े । अर दश अनीकिनीकी एक अक्षौहिणी होय है, ताका वर्ण रथ इक्कीस हजार आठसौ सत्तर, अर गज इक्कीस हजार आठसौ सत्तर, पयादे एक लाख नौ हजार तीनसौ पचास, अर घोडे पैंसठ हजार छह सौ दश, यह एक अक्षौहिणीका प्रमाण भया । ऐसी चार हजार अक्षौहिणी कर युक्त जो रावण ताहि अति बलवान जानकर भी किहक-न्धापुरके स्वामी सुग्रीवकी सेना श्रीरामके प्रसादसूं निर्भय रावणके सन्मुख होती भई । श्रीरामकी सेनाकूं अतिनिकट आए हुए नाना पक्षकूं धरें जो लोक सो परस्पर या भांति वार्ता करते भए देखो रावणरूप चन्द्रमा, विमानरूप जे नक्षत्र. तिनके समूहका स्वामी, अर शास्त्रमें प्रवीण सो परस्त्रीकी इच्छा रूप जे बादल तिनसूं आच्छादित भया है । जिसके महाकांतिकी धरणहारी अठा-रह हजार रानी तिनसे तो तृप्त न भया, अर देखहु एक सीताके अर्थ शोककरि व्याप्त भया है । अब देखिये राक्षसवंशी अर वानरवंशी इनमें कौन का क्षय होय ? रामकी सेनामें पवनका पुत्र हनुमान महा भयंकर देदीप्यमान, जो शूरता सोई भई उष्णकिरण उनसे सूर्य तुल्य है याभांति कैयक तो रामके पक्षके योधावोंके यश वर्णन करते भए । अर कैयक समुद्रसे भी अतिगंभीर जो रावणकी सेना ताका वर्णन करते भये । अर कैयक जो दण्डकवनमें खरदूषणका अर लक्ष्मणका युद्ध भया था उसका वर्णन करते भए, अर कहते भए चन्द्रोदयका पुत्र विराधित सो है शरीर तुल्य जिनके ऐसे लक्ष्मण तिनने खरदूषण हत्या । अतिबलके स्वामी लक्ष्मण तिनका बल क्या तुमने न जान्या कैयक ऐसे कहते भए । अर कैयक कहते भए कि राम लक्ष्मणकी क्या बात वे तो बड़े पुरुष हैं एक हनुमानने केते काम किए, मन्दोदरीका तिरस्कार कर सीताकूं धैर्य बंधाया अर रावणकी सेना जीत लंकामें विघ्न किया कोट दरवाजे ढाहे, या भांति नाना प्रकारके वचन कहते भए । तब एक सुवक्रनामा विद्याधर हंसकर कहता भया कि कहां समुद्र समान रावणकी सेना और कहां गायके खुर समान वानरवंशियोंका बल ? जो रावण इन्द्रकूं पकड़ लाया और सबोंका जीतनहारा

सो वानरवंशियोंसे कैसे जीता जाय ? सर्व तेजस्वियोंके सिरपर तिष्ठै है, मनुष्यनिमें चक्रवर्तीके नामकूं सुनै कौन धैर्य धरै। अर जिसके भाई कुम्भकरण महाबलवान त्रिशूलका धारक युद्धमें प्रलयकालकी अग्नि समान भासै है सो जगतमें प्रबल पराक्रमका धारक कौनकरि जीता जाय ? चन्द्रमासमान जाके छत्रकूं देखकर शत्रुवोंका सेनारूप अंधकार नाशकूं प्राप्त होय है सो उदार तेजका धनी उसके आगे कौन ठहर सकै ? जो जीतव्यकी बांछा तजै, सो ही उसके सन्मुख होय। या भांति अनेक प्रकारके रागद्वेषरूप वचन सेनाके लोग परस्पर कहते भए। दोनों सेनामें नानाप्रकार की वार्ता लोकनिके मुख होती भई। जीवनिके भाव नाना प्रकारके हैं रागद्वेषके प्रभावसे जीव निज कर्म उपार्जै हैं सो जैसा उदय होय है तैसैं ही कार्यमें प्रवृत्ते है जैसें सूर्यका उदय उद्यमी जीवोंको नाना कार्यमें प्रवृत्तावै है तैसें कर्मका उदय जीवनिके नाना प्रकारके भाव उपजावे है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराणसंस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै दोऊ कटकनिकी सख्या का प्रमाण वर्णन करनेवाला छप्पनवां पर्व पूर्ण भया ॥५६॥

सत्तावनवां पर्व

[रावणका युद्धके लिए सदल-बल प्रयाण]

अथानन्तर पर सेनाके समीपकूं न सह सकै ऐसे मनुष्य वे शूरापनेके प्रकट होनेकरि अति प्रसन्न होय लडवेकूं उद्यमी भए, योधा अपने घरोंसे विदा होय सिंह सारिखे लंकासे निकसे कोईयक सुभटकी नारी रणसंग्रामका वृत्तान्त जान अपने भरतारके उरसे लग ऐसे कहती भई--हे नाथ ! तिहारे कुलकी यही रीति है जो रणसंग्रामसे पीछे न होंय। अर जो कदाचित् तुम युद्धतैं पीछे होवोगे तो मैं सुनते ही प्राणत्याग करूंगी। योधाओंके किंकरोंकी स्त्रियें कायरोंकी स्त्रियोंको धिक्कार शब्द कहै, या समान और कष्ट क्या ? जो तुम छाती घाव खाय भले दिखाय पीछे आवोगे तो घाव ही आभूषण है। अर टूट गया है बक्तर अर करैं हैं अनेक योधा स्तुति या भांति तुमकूं मैं देखूंगी तो अपना जन्म धन्य गिनूंगी अर सुवर्णके कमलनिसों जिनेश्वरकी पूजा कराऊंगी। जे महायोधा रणमें सन्मुख होय मरणकूं प्राप्त होंय तिनका ही मरण धन्य है। अर जे युद्ध में पराङ्मुख होय धिक्कार शब्दसे मलिन भये जीवैं हैं तिनके जीवनेसे क्या ? अर कोईयक सुभटानी पतिसे लिपट या भांति कहती भई--जो तुम भले दिखाय कर आवोगे तो हमारे पति हो, अर भागकर आवोगे तो हमारे तुम्हारे सम्बन्ध नाहीं। अर कोई इक स्त्री अपने पतिसूं कहती भई हे प्रभो ! तिहारे पुराने घाव अब विघट गए, इसलिए नवे घाव लगे शरीर अति शोभै। वह दिन होय जो तुम वीरलक्ष्मीके वर प्रफुल्लित वदन हमारे आवो अर हम तुमकूं

हर्षसंयुक्त देखें। तुम्हारी हार हम क्रीडामें भी न देख सकें तो युद्धमें हार कैसे देख सके। अर कोईयक कहती भई कि हे देव! जैसें हम प्रेमकर तिहारा वदन कमल स्पर्श करें हैं तैसें वक्षस्थलमें लगे घाव हम देखें तब अति हर्ष पावें। और कैयक रौताणी अति नवोढा हैं परन्तु संग्राममें पतिकूं उद्यमी देख प्रौढाके भावकूं प्राप्त भई। अर कोईयक मानवती घने दिननिसूं मान कर रही थी सो पतिकूं रणमें उद्यमी जान मान तज पतिके गले लागी, अर अति स्नेह जनाया, रणयोग्य शिक्षा देती भई। और कोईयक कमलनयनी भरतारके वदनकूं ऊंचाकर स्नेहकी दृष्टि-कर देखती भई, अर युद्धमें दृढ करती भई। अर कोईयक सामंतनी पतिके वक्षस्थलमें अपने नखका चिन्हकर होनहार शस्त्रोंके घावनकूं मानो स्थानक करती भई। या भांति उपजी है चेष्टा जिनके ऐसी राणी रौताणी अपने प्रीतमोंसे नानाप्रकारके स्नेहकर वीररसमें दृढ करती भई। तब महासंग्रामके करणहारे योधा तिनसूं कहते भए हे प्राणवल्लभे! नर वेई हैं जे रणमें प्रशंसा पावें, तथा युद्धके सन्मुख जीव तजैं तिनकी शत्रु कीर्ति करें, हाथिनिके दांतनिमें पग देय शत्रुवोंके घाव करें, तिनकी शत्रु कीर्ति करैं। पुण्यके उदय विना ऐसा सुभटपना नाहीं, हाथियोंके कुंभस्थल विदारणहारे नरसिंह तिनकूं जो हर्ष होय है सो कहिवेकूं कौन समर्थ है। हे प्राणप्रिये! क्षत्रीका यही धर्म है जो कायरनिकूं न मारे, शरणागतकूं न मारैं, न मारिवे देय। जो पीठ देय उसपर चोट न करैं, जिसपै आयुध न होंय वासों युद्ध न करैं सो बाल वृद्ध दीनकूं तज हम योधाओंके मस्तकपर पड़ेंगे तुम हर्षित रहियो, हम युद्धमें विजयकर तुमसे आय मिलेंगे। या भांति अनेक वचन कर अपनी अपनी रौताणियोंको धैर्य बंधाय योधा संग्रामके उद्यमी घरसे रणभूमिकूं निकसे। कोई एक सुभटानी चलते पतिके कंठमें दोनों भुजासे लिपट गई, अर हिंदती भई जैसे गजेंद्रके कंठमें कमलिनी लटके। अर कोईयक रौताणी बक्तर पहिरे पतिके अंगसे लग अंगका स्पर्श न पाया सो खेद-खिन्न होती भई। अर कोईयक अर्द्धबाहुलिका कहिए पेटी सो बल्लभके अंगसे लगी देख ईर्षाके रससे स्पर्श करती भई कि हम टार इनके दूजी इनके उरसे कौन लगे, यह जान लोचन संकोचे। तब पति प्रियाकूं अप्रसन्न जान कहते भए हे प्रिये! यह आधा बक्तर है स्त्रीवाची शब्द नाहीं। तब पुरुषका शब्द सुन हर्षकूं प्राप्त भई। कोईयक अपने पतिकूं ताम्बूल चबावती भई अर आप तांबूल चाबती भई। कोईयक पतिने रुखसत करी तौ भी केतीक दूर पतिके पीछे पीछे जाती भई, पतिके रणकी अभिलाषा सो इनकी ओर निहारें नाहीं। अर रणकी भेरी बाजी सो योधावोंका चित्त रणभूमिमें, अर स्त्रीनिसे विदा होना सो दोनों कारण पाय योधावोंका चित्त मानों हिंडोले हींदता भया रौतानियोंको तज रोवत चाले तिन रौतानियोंने आंसू न डारे, आंसू अमंगल हैं। अर कैयक योधा युद्धमें जायवेकी शीघ्रताकर बक्तरभी न पहिर सके, जो हथियार हाथ आया सो ही लेकर गर्वके भरे निकसे। रणभेरी सुन

उपजा है हर्ष जिनकूं शरीर पुष्ट होय गया सो बक्तर अंग में न आवे। अर कईयक योधावोंके रणभेरीका शब्द सुन हर्ष उपजा सो पुराने घाव फट गए तिनमें सूं रुधिर निकसता भया। अर किसीने नवा बक्तर बनाय पहिरा सो हर्षके होने से टूट गया सो मानों नया बक्तर पुराने बक्तर-के भावकूं प्राप्त भया। अर काहूके सिरका टोप ढीला होय गया सो प्राणवल्लभा दृढ कर देती भई। अर कोईयक सुभट संग्रामका लालसी उसके स्त्री सुगन्ध लगायवेकी अभिलाषा करती भई सो सुगन्धमें चित्त न दिया युद्धकूं निकसा। अर वे स्त्रियां व्याकुलतारूप अपनी अपनी सेजपर पड रहीं। प्रथमही लंकासे हस्त प्रहस्त राजा युद्धकूं निकसे। कैसे हैं दोनों? सर्वमें मुख्य जो कीर्ति सोई भया अमृत उसके आस्वादमें लालसी और हाथियोंके रथ पर चढे, नहीं सह सके हैं वैरियोंका शब्द अर महाप्रतापके धारक शूरवीर सो रावणकूं विना पूछे ही निकसे। यद्यपि स्वामी की आज्ञा करे विना कार्य करना दोष है तथापि धनीके कार्यकूं विना आज्ञा जाय तो दोष नाहीं गुणके भावकूं भजै है। मारीच सिंहजघ्राण स्वयंभू शंभू प्रथम विस्तीर्ण बलसे मंडित शुक अर सारण चांद सूर्यसारिखे, गज अर बीभत्स तथा वज्राक्ष वज्रभूति गंभीरनाद नक्र मकर बज्रघोष उग्रनाद सुंद निकुंभ कुंभ संध्याक्ष विभ्रमक्रूर माल्यवान खरनिस्वन जंबूमाली शिखावीर दुर्द्धर्ष महाबल यह सामंत नाहरनिके रथ चढ़े निकसे। अर वज्रोदर शक्रप्रभ कृतांत विकटोदर महारव अशनिघोष चंद्र चंद्रनख मृत्युभीषण वज्रोदर धूम्राक्ष मुदित विद्युज्जिह्व महामाली कनक क्रोधन क्षोभण धुंधुर उद्दाम डिंडी डिंडम डिंभव प्रचंड डंबर चंड कुंड हाला-हल इत्यादि अनेक राजा व्याघ्रोंके रथ चढ़े निकसे। वह कहे मैं आगे रहूँ, वह कहे मैं आगे रहू, शत्रुके विध्वंस करनेकूं है प्रवृत्त बुद्धि जिनकी, विद्याकौशिक विद्याविख्यात सर्पबाहू महाद्युति शंख प्रशंख राजभिन्न अंजनप्रभ पुष्पचूड़ महारक्त घटास्त्र पुष्पखेचर अनंगकुसुम काम कामावर्त स्मरायण कामाग्नि कामराशि कनकप्रभ शिलीमुख सौम्यवक्त्र महाकाम हैमगौर यह पवन सारिखे तेज तुरंगनिके रथ चढ़े निकसे। अर कदम्ब विटप भीम भीमनाद भयानक शार्दूल सिंह चलांग विद्युदंग ल्हादन चपल चोल चंचल इत्यादि हाथनिके रथ चढ़े निकसे। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं हे मगधाधिपति! कहां लग सामंतोंके नाम कहें। सबमें अग्रेसर अढाई कोड़ि निर्मलवंशके उपजे राक्षसनिके कुमार देवकुमार तुल्य पराक्रमी प्रसिद्ध है यश जिनके, सकल गुणनिके मंडन, युद्धकूं निकसे। महाबलवान मेघवाहन कुमार इन्द्रके समान रावणका पुत्र अतिप्रिय इन्द्रजीत सो भी निकसा। जयंतसमान धीरबुद्धि कुंभकर्ण सूर्य्यके विमान तुल्य ज्योतिप्रभव नामा विमान उसमें आरूढ़ त्रिशूलका आयुध धरे निकसा। अर रावण भी सुमेरुके शिखर तुल्य पुष्पकनाम अपने विमानपर चढ़े इन्द्रतुल्य पराक्रम जिसका सेनाकर आकाश भूमिकूं आच्छादित करता हुवा देदीप्यमान आयुधनिकूं धरे सूर्यसमान ज्योति जिसकी

सो भी अनेक सामतनि सहित लंकासे बाहर निकसा । वे सामंत शीघ्रगामी बहुरूपके धरणहारे वाहनोंपर चढ़े । कैयकनिके रथ, कैयकनिके तुरंग, कैयकनिके हाथी, कैयनिके सिंह, तथा शूर-सांभर वलध भैंसा उष्ट्र मीढ़ा मृग अष्टापद इत्यादि स्थलके जीव, अर मगर मच्छ आदि अनेक जलके जीव, अर नाना प्रकारके पक्षी, तिनका रूप धरे देवरूपी वाहन तिनपर चढ़े अनेक योधा रावणके साथी निकसे, भामंडल अर सुग्रीवपर रावणका अतिक्रोध सो राक्षसवंशी इनसे युद्धकूं उद्यमी भए । रावणकूं पयान करते अनेक अपशकुन भए तिनका वर्णन सुनो । दाहिनी तरफ शल्य कहिए सेही मंडलकूं बांधे भयानक शब्द करती प्रयाणका निवारण करै है अर गृद्ध पक्षी भयंकर अपशब्द करते आकाशमें भ्रमते मानों रावणका क्षय ही कहै हैं और अन्य भी अनेक अपशकुन भए स्थलके जीव, आकाशके जीव अति व्याकुल भए क्रूर शब्द करते भए रुदन करते भए । सो यद्यपि राक्षसनिके समूह में सब ही पंडित हैं शास्त्रका विचार जानें हैं तथापि शूरवीरताके गर्वसे मूढ़ भए महा सेनासहित संग्रामके अर्थी निकसे, कर्मके उदयसे जीवनिका जब काल आवै है तब अवश्य ऐसाही कारण होय है, कालको इन्द्र भी निवारिवे शक्य नाहीं औरनिकी कहा बात । वे राक्षसवंशी योधा बड़े बड़े बलवान युद्धमें दिया है चित्त जिन्होंने अनेक वाहनोंपर चढ़े नाना प्रकारके आयुध धरैं अनेक अपशकुन भए तो भी न गिने निर्भय भए रामकी सेनाके सन्मुख आए ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै रावणकी सेना लंकातै निकसि युद्धके अर्थ आवनेका व्याख्यान करनेवाला सत्तावनवां पर्व पूर्ण भया ॥५७॥

अट्ठावनवां पर्व

[युद्धमें हस्त-प्रहस्तके मरणका वर्णन]

अथानंतर समुद्र समान रावणकी सेनाकूं देख नल नील हनुमान जाम्वन्त आदि अनेक विद्याधर रामके हित रामके कार्यकूं तत्पर, महा उदार शूरवीर अनेक प्रकार हाथियोंके रथ चढ़े कटकसे निकसे, सन्मान जाय मित्र चंद्रप्रभ रतिवर्द्धन कुमुदावर्त महेंद्र भानुमंडल अनुधर दृढ़रथ प्रीतिकंठ महाबल समुन्नतबल सर्वज्योति सर्वप्रिय बलसवसार, सर्वद, शरभ भर अभृष्ट निर्विनष्ट संत्रास विघ्नसूदन नाद बरबर पाप लोल पाटन मंडल संग्रामचपल इत्यादि विद्याधर नाहरोंके रथ चढ़े निकसे, विस्तीर्ण है तेज जिनका नाना प्रकारके आयुध धरे अर महासामंतपनाका स्वरूप लिए प्रस्तार हिमवान भंग प्रियरूप इत्यादि सुभट हाथियोंके रथ चढ़े निकसे, दुःप्रेक्ष पूर्णचंद्र विधि, सागरघोष प्रियविग्रह स्कंध चंदन पादप चंद्रकिरण अर प्रतिघात महा भैरवकीर्तन दुष्टसिंह

कटि क्रष्ट समाधि बहुल हल इंद्रायुध गतत्रास संकट प्रहार ये नाहरनिके रथ चढ़े निकसे। विद्युत-कर्ण बलशील सुपक्षरचन घन संमेद विचल साल काल क्षत्रवर अंगद विकाल लोलक काली भंग भंगोर्मि अजित तरंग तिलक कील सुषेण तरल बली भीमरथ धर्म मनोहरमुख सुखप्रमत्त मर्दक मत्तसार रत्नजटी शिव भूषण दूषण कौल विघट विराधित मेरू रण खनि क्षेम वेला आक्षेपी महाभर नक्षत्र लुब्ध संग्राम विजय जय नक्षत्रमाल क्षोद अति विजय इत्यादि घोड़ोंके रथ चढ़े निकसे। कैसे हैं रथ मनोरथ समान शीघ्र वेगकूं धरैं। अर विद्युत वाह मरुद्वाह सानु मेघवाहन रवियान प्रचंडालि इत्यादि नाना प्रकारके वाहनोंपर चढ़े युद्धकी श्रद्धाकूं धरैं हनुमानके संग-निकसे। अर विभीषण रावणका भाई रत्नप्रभ नामा विमानपर चढ़ा श्रीरामका पक्षी अति शोभता भया। अर युद्धावर्त वसंत कांत कौमुदिनंदन भूरि कोलाहल हेड भावित साधु वत्सल अर्धचंद्र जिनप्रेम सागर सागरोपम मनोज्ञ जिन जिनपति इत्यादि योधा नाना वर्णके विमानोंपर चढ़े महाप्रबल सन्नाह कहिए बखतर पहिरे युद्धकों निकसे। राम लक्ष्मण सुग्रीव हनुमान ये हंस विमान चढ़े जिनके आकाशविषैं शोभते भए, रामके सुभट महामेघमाला सारिखे नानाप्रकारके वाहन चढ़े लंकाके सुभटनिसूं लड़वेकूं उद्यमी भए। प्रलयकालके मेघ समान भयंकर शब्द शंख आदि वादित्रनिके शब्द होते भए, झंझा भेरी मृदंग कंपाल धुधुमंदय आमलातके हक्कार दुंदुकांन उरदर हेमगुंज काहल वीणा इत्यादि अनेक बाजे बाजते भए। अर सिंहोंके तथा हाथियोंके भैंसोंके रथोंके ऊंटोंके मृगोंके पक्षियोंके शब्द होते भए तिनसे दशों दिशा व्याप्त भई। जब राम रावणकी सेनाका संघट्ट भया तब लोक समस्त जीवनेके संदेहकूं प्राप्त भए, पृथ्वी कंपायमान भई, पहाड़ कांपे, योधा गर्वके भरे निगर्वमें निकसे, दोनों कटक अति प्रबल लखिवे न आवें। इन दोनों सेनामें युद्ध होने लगा सामान्यचक्र करोत कुठार सेल खड्ग गदा शक्ति बाण भिंडिपाल इत्यादि अनेक आयुधनिकरि परस्पर युद्ध होता भया। योधा हेलाकर योधाओंको बुलावते भए, कैसे हैं योधा शस्त्रोंसे शोभित हैं भुजा जिनकी, अर युद्धका है सर्वसाज जिनके ऐसे योधावोंपर पड़ते भए, अतिवेगसे दौड़े परसेनामें प्रवेश करते भए परस्पर अतियुद्ध भया, लंकाके योधाओंने वानरवंशी योधा दबाए जैसैं सिंह गजोंको दबावैं। फिर वानरवंशियोंके प्रबल योधा अपने योधावोंका भंग देखकर राक्षसोंके योधावोंको हतते भए। अर अपने योधावोंको धैर्य बंधाया वानर-वंशियोंके आगे लंकाके लोगोंको चिगते देख बड़े बड़े स्वामी भक्त रावणके अनुरागी महाबलसे मंडित हाथियोंके चिन्हकी है ध्वजा जिनके, हाथियोंके रथ चढ़े, महायोधा हस्त प्रहस्त वानरवंशियों पर दौड़े अर अपने लोगोंको धैर्य बंधाया—हो सामंत हो! भय मत मत करो! हस्त प्रहस्त दोनों महा तेजस्वी वानरवंशियोंके योधाओंको भगावते भए तब वानरवंशियोंके नायक महा प्रतापी हाथियोंके रथ चढ़े, महा शूरवीर परम तेजके धारक

सुग्रीवके काकाके पुत्र नल नील महा भयंकर क्रोधायमान होय नानाप्रकार शस्त्रनिके युद्ध करवेकूं उद्यमी भए। अनेक प्रकारके शस्त्रनिसे घनी बेर युद्ध भया। दोनों तरफके अनेक योधा मुवे। नलने उछलकर हस्तको हता अर नीलने प्रहस्तकूं हता, जब यह दोनों पड़े तब राक्षसनिकी सेना पराङ्मुख भई। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—हे मगधाधिपति! सेनाके लोग सेनापतिकूं जब लग देखें तब लग ही ठहरें। अर सेनापति नाश भए सेना विखर जाय जैसैं मालके टूटे अरहटकी घड़ी विखर जाय, अर सिर विना शरीर भी न रहै यद्यपि पुण्याधिकारी बड़े राजा सब बातमें पूर्ण हैं तथापि विना प्रधान कार्यकी सिद्धि नाहीं, प्रधान पुरुषनिका संबंध कर मनवांछित कार्यकी सिद्धि होय है अर प्रधान पुरुषनिके संबंध बिना मंदताकूं भजे हैं जैसे राहुके योगसे सूर्यको आच्छादित भए किरणोंका समूह मन्द होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं हस्त प्रहस्तका मरण वर्णन करनेवाला अठावनवां पर्व पूर्ण भया ॥५८॥

उनसठवां पर्व

[हस्त-प्रहस्त, नल नीलके पूर्वभवका वर्णन]

अथानंतर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसूं पूछता भया—हे प्रभो! हस्त प्रहस्त जैसैं सामंत महा विद्यामें प्रवीण हुते, बड़ा आश्चर्य है नल नीलने कैसे मारे? इनके पूर्वभवका विरोध है, के याही भवका? तब गणधर देव कहते भए—हे राजन्! कर्मनिकर बंधे जीव तिनकी नाना गति हैं, पूर्वकर्मके प्रभावकर जीवनिकी यही रीति है जानैं जाकूं मारा, सो वहहू ताकूं मारन हारा है, अर जाने जाकूं छुडाया सो ताका छुडावनहारा है। यालोकमें यही मर्यादा है। एक कुशस्थलनामा नगर वहां दोय भाई निर्धन, एक माताके पुत्र इंधक अर पल्लव ब्राह्मण खेतीका कर्म करैं, पुत्र स्त्री आदि जिनके कुटुंब बहुत स्वभावहीसे दयावान साधुनिकी निंदातैं पराङ्मुख सो एक जैनी मित्रके प्रसंगतैं दानादि धर्मके धारक भए अर एक दूजा निर्धन युगल सो महा निर्दई मिथ्यामार्गी हुते राजाके दान बटा सो विप्रनिमें परस्पर कलह भया, सो इंधक पल्लवको इन दुष्टोंने मारा, सो दानके प्रसादतैं मध्य भोगभूमिमें उपजे! दोय पल्यका आयु पाय मूए सो देव भए। अर वे क्रूर इनके मारणहारे अधर्म परिणामनिकर मूवे सो कालिंजर नामा वनमें सूस्या भए मिथ्यादृष्टि साधुनिके निंदक पापी कपटी तिनकी यही गति है। बहुरि तिर्यञ्चगतिमें चिरकाल भ्रमण कर मनुष्य भए सो तापसी भए, बढी हैं जटा जिनके फल पत्रादिके आहारी तीव्र तप कर शरीर कृश किया, कुज्ञानके अधिकारी दोनों मूए सो विजयार्धकी दक्षिण श्रेणीमें अरिंजयपुर तहांका राजा अग्निकुमार रानी अश्विनी, ताके ये दोय पुत्र जगत् प्रसिद्ध रावणके सेनापति भए। अर ते दोऊ

भाई इंधक अर पल्लव देवलोकतैं चयकर मनुष्य भए। बहुरि श्रावकके व्रत पाल स्वर्गमें उत्तम देव भए। अर स्वर्गतैं चयकर किहकंधापुरविषैं नल नील दोनों भाई भए। पहिले हस्त प्रहस्तके जीवने नल नीलके जीव मारे हुते सो नल नीलने हस्त प्रहस्त मारे, जो काहूकूं मारे है सो ताकर मारा जाय है। अर जो काहूकूं पाले है सो ताकर पालिए है। जो जासूं उदासीन रहे है सो तासूं भी उदासीन रहै। जाहि देख निःकारण क्रोध उपजे सो जानिए परभवका शत्रु है अर जाहि देख चित्त हर्षित होय सो निःसंदेह परभवका मित्र है, जो जलविषैं जहाज फट जाय है अर मगर मच्छादि बाधा करै हैं, अर थलविषैं म्लेच्छ बाधा करैं हैं, सो अब पापका फल है। पहाड समान माते हाथी अर नानाप्रकारके आयुध धरे अनेक योधा, अर महा तेजकूं धरें अनेक तुरंग, अर वक्तर पहिर बड़े बड़े सामंत इत्यादि जो अपार सेनासूं युक्त जो राजा अर निःप्रमाद तौ भी पुण्यके उदयविना युद्धमें शरीरकी रक्षा न होय सकै। अर जहां तहां तिष्ठता अर जाके कोऊ सहाई नाहीं ताकी तप अर दान रक्षा करै; न देव सहाई, न बांधव सहाई। अर प्रत्यक्ष देखिए है,धनवान् शूरवीर कुटुम्बका धनी सर्व कुटुम्बके मध्य मरण करै है कोऊ रक्षा करने समर्थ नाहीं। पात्रदानसे व्रत अर शील अर सम्यक्त अर जीवनिकी रक्षा होय है। दयादानसे जाने धर्म न उपार्जा, अर बहुत काल जीया चाहे सो कैसे बनै? इन जीवनिके कर्म तप बिना न विनसे, ऐसा जानकर जो पंडित है तिनकूं वैरियों पर भी क्षमा करनी। क्षमा समान और तप नाहीं। जे विचक्षण पुरुष हैं वे ऐसी बुद्धि न धरे कि यह दुष्ट बिगाड करे हैं। या जीवका उपकार अर बिगाड केवल कर्माधीन हैं,कर्म ही सुख-दुःख का कारण है ऐसा जानकर जे विचक्षण पुरुष हैं ते बाह्य सुख-दुःखके निमित्त कारण अन्य पुरुषनिपर रागद्वेषभाव न धरैं। अन्धकारसे आच्छादित जो पंथ तामें नेत्रवान् पृथिवीपर पडे सर्प पर पग धरैं, अर सूर्यके प्रकाशसे मार्ग प्रकट होय तब नेत्रवान सुखसे गमन करैं तैसे जो लग मिथ्यारूप अंधकारसे मार्ग नाहीं अवलोके तौलग नरकादि विवरमें पडैं, अर जब ज्ञान सूर्यका उद्योत होय तब सुखसे अविनाशीपुर जाय पहुचे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषा वचनिकाविषै हस्त-प्रहस्त नल-नीलके पूर्वभवका वर्णन करनेवाला उनसठवां पर्व पूर्ण भया ॥५९॥

साठवां पर्व

[राम-लक्ष्मणको अनेक विद्याओंका लाभ]

अथानन्तर हस्त प्रहस्त, नल नीलने हते सुन बहुत योधा क्रोधकर युद्धकूं उद्यमी भए। मारीच सिंहजघन जघन स्वयंभू शंभु ऊर्जित शुक सारण चन्द्र अर्क जगत्बीभत्स निस्वन ज्वर उग्र क्रमकर वज्राक्ष घातनिष्ठुर गंभीरनाद संनाद इत्यादि राक्षस पक्षके योधा सिंह, अश्व,

रथ आदि पर चढ़ कर आय वानरवंशियोंकी सेनाकूं क्षोभ उपजावते भए। तिनकूं प्रबल जान वानरवंशियोंके योधा युद्धकूं उद्यमी भए। मदन मदनांकुर संताप प्रथित आक्रोश नन्दन दुरित अनघ पुष्पास्त्र विघ्न प्रियंकर इत्यादि अनेक वानरवंशी योधा राक्षसनिसे लडते भए। याने वाकूं ऊंचे स्वरसे बुलाया वाने याकूं बुलाया इनके परस्पर संग्राम भया, नानाप्रकारके शस्त्रनिकरि आकाश व्याप्त होय गया। संताप तो मारीचसे लड़ता भया। अर प्रस्थित सिंहजघनसे, अर विघ्न उद्यानसे, अर आक्रोश सारणसे, ज्वर नन्दनसे, इन समान योधावोंमें अद्भुत युद्ध भया। तब मारीचने संतापका निपात किया, अर नंदनने ज्वरके वक्षस्थलमें बरछी दई, अर सिंहकटिने प्रथितके, अर उद्दामकीर्तिने विघ्नकूं हणा। ता समय सूर्य अस्त भया, अपने अपने पतिकूं प्राणरहित भए सुन इनकी स्त्री शोकके सागरमें मग्न भई सो उनकी रात्रि दीर्घ होती भई।

दूजे दिन महा क्रोधके भरे सामन्त युद्धकूं उद्यमी भए वज्राक्ष अर क्षुभितार, मृगेंद्रदमन अर विधि, शंभू अर स्वयम्भू, चन्द्रार्क अर वज्रोदर, इत्यादि राक्षस पक्षके बड़े बड़े सामंत अर वानर वंशियोंके सामंत परस्पर जन्मांतरके उपार्जित वैर तिनसे महा क्रोधरूप होय युद्ध करते भए अपने जीवनमें निःस्पृह। संक्रोधने महाक्रोधकर क्षपितारिको महा ऊंचा स्वरकर बुलाया। अर बाहुबलीने मृगारिदमनकूं बुलाया। अर वितापीने विधिकूं बुलाया इत्यादि अनेक योधा परस्पर युद्ध करते भए। अर योधा अनेक मूए शार्दूलने वज्रोदरकूं घायल किया अर क्षपितारि संक्रोधको मारता भया, अर शंभूने विशालद्युति मारा, अर स्वयम्भूने विजयकूं लोहयष्टिसे मारा, अर विधिने वितापीकूं गदासे मारथा बहुत कष्टसे या भांति योधावोंने युद्धमें अनेक योधा हते सो बहुत बेर तक युद्ध भया।

राजा सुग्रीव अपनी सेनाकूं राक्षसनिकी सेनासे खेद-खिन्न देख आप महा क्रोधका भरा युद्ध करवेकूं उद्यमी भया, तब अंजनीका पुत्र हनुमान हाथिनिके रथपर चढा राक्षसनिसूं युद्ध करता भया। सो राक्षसनिके सामंतनिके समूह पवनपुत्रकूं देखकर जैसे नाहरकूं देख गाय डरे तैसे डरते भए। अर राक्षस परस्पर बात करते भए कि यह हनुमान वानरध्वज आज घनों-की स्त्रीनिकूं विधवा करेगा। तब याके सन्मुख माली आया। ताहि आया देख हनुमान धनुष-विषैं बाण तान सन्मुख भए, तिनमें महायुद्ध भया। मंत्री मन्त्रीनिसे लड़ने लगे, रथी रथीनिसूं लड़ने लगे, घोडनिके असवार घोडनिके असवारनिसूं लडते भए, हाथिनिके असवार हाथिनिके असवारनिसूं लड़ते भए। सो हनुमानकी शक्तिकरि माली पराङ्मुख भया। तब वज्रोदर महा पराक्रमी हनुमानपर दौडा, युद्ध करता भया, चिरकाल युद्ध भया सो हनुमानने वज्रोदरकूं रथ-रहित किया, तब वह और दूजे रथपर चढ हनुमान पर दौड़ा। तब हनुमानने बहुरि ताकूं रथरहित किया। तब बहुरि पवनसे हू अधिक वेग है जाका ऐसे रथपर चढ़ हनुमानपर दौडा।

तब हनुमानने ताहि हता सो प्राणरहित भया। तब हनुमानके सन्मुख महाबलवान रावणका पुत्र जंबूमाली आया सो आवते ही हनुमानकी ध्वजा छेद करता भया। तब हनुमानने क्रोधसे जम्बूमालीका बक्तर भेद्या धनुष तोड़ डारया, जैसे तृणको तोडैं। तब मंदोदरीका पुत्र नवा बक्तर पहिर हनुमानके वक्षस्थलविषैं तीक्ष्ण बाणनिसे घाव करता भया सो हनुमानने ऐसा जाना मानो नवीन कमलकी नालिकाका स्पर्श भया। कैसा है हनुमान? पर्वतसमान निश्चल है बुद्धि जाकी। बहुरि हनुमानने चन्द्रवक्र नामा बाण चलाया सो जम्बूमालीके रथके अनेक सिंह जुते हुते सो छूट गए, तिनहीके कटकविषैं पड़े तिनकी विकराल दाढ, विकराल वदन, भयंकर नेत्र, तिनकरि सकल सेना विह्वल भई। मानों सेनारूप समुद्रविषैं ते सिंह कल्लोलरूप भए उछलते फिरै हैं अथवा दुष्ट जलचर जीवनिसमान विचरै हैं, अथवा सेनारूप मेघनिषैं विजलीसमान चमकै हैं, अथवा संग्रामही भया संसारचक्र ताविषैं सेनाके लोक तेई भए जीव, तिनकूं ये रथके छूटे सिंह कर्मरूप होय महादुखी करैं हैं, इनसे सर्वसेना दुःखरूप भई तुरंग गज रथ पियादे सब ही विह्वल भए, रावणका उद्यम तज दशों दिशाकूं भाजे। तब पवनका पुत्र सर्वोको पेल रावण तक जाय पहुँचा। दूरसे रावणको देखा, सिंहके रथपर चढा हनुमान धनुषबाण लेय रावणपर गया, रावण सिंहोंसे सेनाकूं भयरूप देख अर हनुमानकूं काल समान महादुर्द्धर जान आप युद्ध करवेकूं उद्यमी भया। तब महोदर रावणकूं प्रणामकर हनुमानपर महाक्रोधसे लडवेकूं आया, सो याके अर हनुमानके महायुद्ध भया। ता समयविषैं वे सिंह योधावोंने वश किए, सो सिंहोंको वशीभूत भए देख महाक्रोधकर समस्त राक्षस हनुमान पर पड़े। तब अंजनाका पुत्र महाभट पुण्याधिकारी तिन सबकूं अनेक बाणनिसे थांभता भया, अर अनेक राक्षसनिने अनेक बाण हनुमानपर चलाए, परन्तु हनुमानको चलायमान न करते भए। जैसे दुर्जन अनेक कुवचनरूप बाण संयमीके लगावैं, परन्तु तिनके एक न लागे तैसैं हैं हनुमानके राक्षसनिका एक बाण भी न लाग्या। अनेक राक्षसनिकरि अकेला हनुमानकूं बेढा देख वानरवंशी विद्याधर युद्धके निमित्त उद्यमी भए, सुषेण नल नील प्रीतिंकर विराधित संत्रासित हरिकट सूर्यज्योति महाबल जांबूनदके पुत्र। कैई नाहरनिके रथ कैई गजनिके रथ कैई तुरंगनिके रथ चढ रावणकी सेनापर दौड़े, सो वानरवंशीनिने रावणकी सेना सब दिशाविषैं विध्वंस करी जैसे क्षुधादि परीषह तुच्छ व्रतियोंके व्रतोंको भंग करें। तब रावण अपनी सेनाकूं व्याकुल देख आप युद्ध करवेकूं उद्यमी भया तब कुम्भकरण रावणकूं नमस्कारकर आप युद्धकूं चला तब याहि महाप्रबल योधा रणमें अग्रगामी जान सुषेण आदि सबही वानरवंशी व्याकुल भए। जब वे चन्द्ररश्मि जयस्कंध चन्द्राहु रतिवर्धन अंग अंगद सम्मेद कुमुद कशमंडल बलि चंड तरंगसार रत्नजटी जय वेलक्षिपी वसन्त कोलाहल इत्यादि अनेक योधा रामके पक्षी कुम्भकर्णसे युद्ध करने लगे। तो कुम्भकर्णने सबको

निद्रा नामा विद्यासे निद्राके वश किए जैसै दर्शनावरणीय कर्म दर्शनके प्रकाशकूं रोकै तैसै कुम्भकर्णकी विद्या वानरवंशीनिके नेत्रनिके प्रकाशकूं रोकती भई सब ही कपिध्वज निद्रासे घूमने लगे। अर तिनके हाथनिसे हथियार गिर पडे तब इन सबोंको निद्रावश अचेतन समान देख सुग्रीवने प्रतिबोधिनी विद्या प्रकाशी सो सब वानरवंशी प्रतिबोध भए। अर हनुमानादि युद्धकूं प्रवर्ते। वानरवंशीनिके बलमें उत्साह भया अर युद्धमें उद्यमी भए अर राक्षसनिकी सेना दबी तब रावण आप युद्धकूं उद्यमी भए, तब बड़ा बेटा इंद्रजीत हाथ जोड शिर नवाय बीनती करता भया—हे तात! हे नाथ! यदि मेरे होते आप युद्धकू प्रवर्तें तो हमारा जनम निष्फल है, जो तृण नखहीसे उपड़ आवे उसपर फरसी उठावना कहा? तातें आप निश्चिंत होवें, मैं आपकी आज्ञाप्रमाण करूंगा। ऐसा कहकर महाहर्षित भया पर्वतसमान त्रैलोक्यकंटक नामा गजेंद्रपर चढ युद्धकूं उद्यमी भया। कैसा है गजेन्द्र? इंद्रके गज समान अर इंद्रजीतकूं अतिप्रिय अपना सब साज लेय मंत्रीनिसहित ऋद्धिसे इंद्र समान रावणका पुत्र कपिनपर क्रूर भया सो महाबलका स्वामी मानी आवर्त प्रमाण ही वानर वंशीनिका बल अनेक प्रकारके आयुधनिकरि जो पूर्ण हुता सो सर्व विह्वल किया। सुग्रीवकी सेनामें ऐसा सुभट कोई न रहा जो इद्रजीतके बाणनिकरि घायल न भया। लोक जानते भए जो यह इंद्रजीत कुमार नाहीं अग्निकुमारोंका इंद्र हैं, अथवा सूर्य है। सुग्रीव अर भामंडल ये दोऊ अपनी सेनाकूं इंद्रजीत कर दबी देख युद्धकूं उद्यमी भए। इनके योधा इंद्रजीतके योधनिसे अर ये दोनों इंद्रजीतसे युद्ध करवे लगे सो परस्पर योधा योधावोंको हंकार कर बुलावते भए। शस्त्रोंसे आकाशमें अंधकार होय गया, योधानिके जीवनेकी आशा नाहीं, गजसे गज, रथसे रथ तुरंगसे तुरंग, सामंतोंसे सामंत उत्साहकर युद्ध करते भए। अपने अपने नाथके अनुरागविषैं योधा परस्पर अनेक आयुधनिकर प्रहार करते भए। ताही समय इंद्रजीत सुग्रीवकूं समीप आया देख ऊंचे स्वरकर अपूर्व शस्त्ररूप दुर्वचननिकर छेदता भया—अरे वानरवंशी पापी स्वामिद्रोही! रावणसे स्वामीको तज स्वामीके शत्रुका किंकर भया। अब मुझसे कहां जायगा तेरे शिरको तीक्ष्ण बाणनिकर तत्काल छेदूंगा। वे दोनों भाई भूमिगोचरी तेरी रक्षा करें। तब सुग्रीव कहता भया—ऐसे वृथा गर्वके वचन कर कहा तू मानशिखर पर चढा है, सो अबारही तेरा मान भंग करूंगा! जब ऐसा कहा तब इंद्रजीतने कोपकर धनुष चढाय बाण चलाया अर सुग्रीवने इंद्रजीत पर चलाया, दोनों महा योधा परस्पर बाणनिकर लड़ते भए, आकाश बाणनिसे आच्छादित होय गया। मेघवाहनने भामंडलको हंकारा सो दोनों भिड़े। अर विराधित अर वज्रनक्र युद्ध करते भए, सो विराधितने वज्रनक्रके उरस्थलमें चक्रनामा शस्त्रकी दई, अर वज्रनक्रने विराधितके दई, शूरवीर घात पाय शत्रुके घाव न करैं तो लज्जा है, चक्रनिकरि बक्तर पीसे गए तिनके अग्निकी कणिका उछली सो मानों आकाशसे उल्काओंके समूह पड़े हैं। लंकानाथके पुत्रने सुग्रीवपै अनेक

शस्त्र चलाए। लंकेश्वरके पुत्र संग्राममें अटल हैं जा समान दूजा योधा नाहीं। तब सुग्रीवने वज्रदंडसे इंद्रजीतके शस्त्र निराकरण किए। जिनके पुण्यका उदय है तिनका घात न होय। फिर क्रोधकर इंद्रजीत हाथीसे उतर सिंहके रथ चढ़ा समाधानरूप है बुद्धि जाकी, नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र अर सामान्य शस्त्र इनमें प्रवीण सुग्रीव पर मेघबाण चलाया सो संपूर्ण दिशा जलरूप होय गई। तब सुग्रीवने पवनबाण चलाया सो मेघबाण विलाय गया, अर इंद्रजीतका छत्र उडाया, अर ध्वजा उडाई। अर मेघवाहनने भामंडल पर अग्निबाण चलाया सो भामंडलका धनुष भस्म होय गया, अर सेनामें अग्नि प्रज्वलित भई। तब भामण्डलने मेघवाहनपर मेघबाण चलाया, सो अग्निबाण विलाय गया अर अपनी सेनाकी बहुरि रक्षा करी। मेघवाहनने भामंडलकूं रथ रहित किया। तब भामण्डल दूजे रथ चढ़ युद्ध करवे लगा। मेघवाहनने तामसबाण चलाया सो भामंडलकी सेनामें अन्धकार होय गया, अपना पराया कुछ सूझे नाहीं, मानों मूर्च्छाकूं प्राप्त भए। तब मेघवाहनने भामंडलकूं नागपशसे पकड़ा मायामई सर्प सर्व अंगमें लिपट गए, जैसे चंदनके वृक्षके नाग लिपट जावैं, कैसे हैं नाग भयंकर जे फण तिनकर महा विकराल, भामण्डल पृथिवीपर पड़ा। अर याही भांति इंद्रजीतने सुग्रीवको नागपाशकर पकड़ा सो धरतीपर पड़ा। तब विभीषण जो विद्याबलमें महाप्रवीण श्रीराम लक्ष्मणसूं दोऊ हाथ जोड़ सीस नवाय कहता भया--हे राम! महाबाहु, हे लक्ष्मण महावीर! इन्द्रजीतके बाणनिसे व्याप्त भई सब दिशा देखहु धरती अर आकाश बाणनिकर आच्छादित है, उल्कापातके स्वरूप नागबाण तिनकरि सुग्रीव अर भामण्डल दोऊ भूमिविषैं बंधे पड़े हैं। मंदोदरीके दोनों पुत्रोंने अपने दोनों महाभट पकड़े अपनी सेनाके जे दोनों मूल थे वे पकड़े गए, तब हमारे जीवनकरि कहा? इन विना सेना शिथिल होय गई है, देखो दशों दिशाकूं लोक भागे हैं अर कुम्भकर्णने महायुद्धविषैं हनुमानकूं पकडा है कुम्भकरणके बाणनिकरि हनुमान जरजरे भए, छत्र उड गये, ध्वजा उड़ गई, धनुष टूटा बक्तर टूटा, रावणके पुत्र इंद्रजीत अर मेघवाहन युद्ध विषैं लग रहे हैं अब वे आयकर सुग्रीव भामण्डलकूं ले जायंगे, सो वे न ले जावें ता पहिले ही आप उनकूं ले आवें। वे दोनों चेष्टारहित हैं सो मैं उनके लेवेकूं जाऊं हूं। अर आप भामंडल सुग्रीवकी सेना निर्नाथ होय गई है सो उसे थांभहु। या भांति विभीषण राम लक्ष्मणसे कहे हैं ता ही समय सुग्रीवका पुत्र अंगद छाने छाने कुम्भकर्ण पर गया अर उसका उत्तरासन वस्त्र परे किया सो लज्जाके भारकर व्याकुल भया वस्त्रको थांभे तौ लग हनुमान इसकी भुजा--फांससे निकस गया जैसे नवा पकडा पक्षी पिंजरेसे निकस जाय। हनुमान नवीन ज्योतिकूं धरे अर अंगद दोनों एक विमान बैठे ऐसे शोभते भए मानों देव ही हैं। अर अंगदका भाई अंग अर चंद्रोदयका पुत्र विराधित इन सहित लक्ष्मण सुग्रीवकी अर भामंडलकी सेनाकूं धैर्य बंधाय थांभते भए। अर विभीषण इन्द्र-

जीत मेघवाहनपर गया। सो विभीषण कूं आवता देख इंद्रजीत मनमें विचारता भया--जो न्याय विचारिए तो हमारे पितामें अर यामें कहा भेद है? तातैं याके सन्मुख लड़ना उचित नाहीं, सो याके सन्मुख खड़ा न रहना यही योग्य है। अर ये दोनों भामंडल सुग्रीव नागपाशमें बंधे सो निःसन्देह मृत्युकूं प्राप्त भए, अर काकातैं भाजिए तो दोष नाहीं, ऐसा विचार दोनों भाई महा अभिमानी न्यायके वेत्ता विभीषणसे टरि गए। अर विभीषण त्रिशूलका है आयुध जाके रथसे उतर सुग्रीव भामंडलके समीप गया सो दोनोंको नागपाशसे मूर्च्छित खेद देख-खिन्न होता भया। तब लक्ष्मण रामसूं कही हे नाथ! ए दोनों विद्याधरनिके अधिपति महासेनाके स्वामी महा शक्तिके धनी भामंडल सुग्रीव रावणके पुत्रनि शस्त्र-रहित कीए मूर्च्छित होय पड़े हैं सो इन वगैर आप रावणकूं कैसैं जीतेंगे? तब रामकूं पुण्यके उदयसे गरुडेन्द्रने वर दिया था सो चितार लक्ष्मणसे राम कहते भए हे भाई! वंशस्थल गिरिपर देशभूषण कुलभूषण मुनिका उपसर्ग निवारा उस समय गरुणेंद्रने वर दिया था ऐसा कह महालोचन रामने गरुडेन्द्रको चितारा सो सुख अवस्थामें तिष्ठै था सो सिंहासन कंपायमान भया। तब अवधि कर राम लक्ष्मणकूं काम जान चिंतावेग नामा देवकूं दोय विद्या देय पठाया, सो आयकर बहुत आदरसूं राम लक्ष्मणसे मिल्या। अर दोऊ विद्या तिनकूं दई, श्रीरामको सिंहवाहिनी विद्या दई, अर लक्ष्मणकूं गरुडवाहिनी विद्या दई। तब यह दोनों धीर विद्या लेय चिन्तावेगको बहुत सन्मान कर जिनेन्द्र-की पूजा करते भए, अर गरुडेन्द्रकी बहुत प्रशंसा करी। वह देव इनको जलबाण अग्निबाण पवन-बाण इत्यादि अनेक दिव्य शस्त्र देता भया, अर चांद सूर्य सारिखे दोनों भाइयोंको छत्र दिए, अर चमर दिए, नाना प्रकारके रत्न दिए कांतिके समूह। अर विद्युद्वक्र नाम गदा लक्ष्मणको दई, अर हल मूसल दुष्टोंको भयके कारण रामकूं दिए। या भांति वह देव इनको देवोपनीत शस्त्र देय अर सैकडों आशिष देय अपने स्थानक गया, यह सर्व धर्मका फल जानो जो समयमें योग्य वस्तुकी प्राप्ति होय, विधि पूर्वक निर्दोष धर्म आराधा होय उसके ये अनुपम फल हैं, जिनकूं पायकरि दुःखकी निवृत्ति होय महावीर्यके धनी आप कुशलरूप अर औरनिकूं कुशल कर मनुष्यलोककी सम्पदाकी कहा बात? पुण्याधिकारियोंकूं देवलोककी वस्तु भी सुलभ होय है तातैं निरंतर पुण्य करहु, अहो प्राणि हो जो सुख चाहो तो प्राणियोंको सुख देवो, जिस धर्म-के प्रसादसे सूर्य समान तेजके धारक होवो अर आश्चर्यकारी वस्तुनिका संयोग होय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषा वचनिका विषै
राम लक्ष्मणकूं अनेक विद्याका लाभ वर्णन करने वाला
सांठवां पर्व पूर्ण भया ॥६०॥

इकसठवां पर्व

[सुग्रीव भामंडलका नागपाशसे बंधन मुक्त होना]

अथानंतर राम लक्ष्मण दोऊ वीर तेजके मंडलमें मध्यवर्ती लक्ष्मीके निवास श्रीवत्स लक्षणकू धरे महामनोज्ञ कवच पहिरे सिंहवाहन गरूड़वाहन पर चढे महासुन्दर सेना सागरके मध्य सिंहकी अर गरुडकी ध्वजा धरें परपक्षके क्षय करवेकू उद्यमी महासमर्थ सुभटोंके ईश्वर संग्राम भूमिके मध्य प्रवेश करते भए। आगे आगे लक्ष्मण चला जाय है दिव्य शस्त्रके तेजसे सूर्यके तेजकूं आच्छादित करता हुआ हनुमान आदि बड़े बड़े योधा वानरवंशी तिनकर मंडित वर्णनमें न आवे ऐसा देवों कैसा रूप धरे बारह सूर्यकी-सी ज्योति लिये लक्ष्मणको विभीषणने देखा सो जगतकूं आश्चर्य उपजावैं ऐसे तेजकर मंडित सो गरुडवाहनके प्रतापकर नागपाशका बन्धन भामण्डल सुग्रीवका दूर भया, गरुडके पक्षोंकी पवन क्षीरसागरके जलकूं क्षोभ रूप करे उससे वे सर्प विलाय गये, जैसे साधुवोंके प्रतापसे कुभाव मिट जाय। गरुडके पक्षनिकी कांतिकर लोक ऐसे होय गए मानों सुवर्णके रस कर निरमापे हैं। तब भामण्डल सुग्रीव नागपाशसे छूट विश्रामकूं प्राप्त भए मानों सुख निद्रा लेय जाग अधिक शोभते भए। तब इनकूं देख श्रीवृक्ष प्रथादिक सब विधाधर विस्मयकूं प्राप्त भए। अर सब ही श्रीराम लक्ष्मणकी पूजाकर वीनती करते भए--हे नाथ! आज-की-सी विभूति हम अब तक कभी न देखी, वाहन वस्त्र सम्पदा छत्र ध्वजामें अद्भुत शोभा दीखे है। तब श्रीरामने जबसे अयोध्यासे चले तबसे लेय सर्व वृत्तांत कहा, कुलभूषण देशभूषण-का उपसर्ग दूर किया सो सर्व वृत्तांत कहा तिन्होंको केवल उपजा, अर कही हमसे गरुडेंद्र तुष्टायमान भया सो अबार उसका चिन्तवन किया, उससे यह विद्याकी प्राप्ति भई। तब वे यह कथा सुन परम हर्षकूं प्राप्त भए। अर कहते भए--इस ही भवमें साधु सेवासे परम यश पाइए है, अर अति उदार चेष्टा होय है, अर पुण्यकी विधि प्राप्त होय है, अर जैसा साधु सेवासे कल्याण होय है वैसा न माता पिता न मित्र न भाई कोई जीवोंको न करें। या प्राणी साधुकी सेवा प्रशंसामें लगाया है चित्त जिन्होंने, जिनेंद्रके मार्गकी उन्नतिमें उपजी है श्रद्धा जिनके वे राजा बलभद्र नारायणका आश्रयसे महा विभूतिसे शोभते भए। भव्यजीवरूप कमल तिनकूं प्रफुल्लित करनहारी यह पवित्र कथा उसे सुनकर ये सर्व ही हर्षके समुद्रमे मग्न भए। अर श्रीराम लक्ष्मण-की सेवामें अति प्रीति करते भए। अर भामडल सुग्रीव मूर्च्छा रूप निद्रासे रहित भए हैं नेत्र कमल जिनके श्रीभगवान्‌की पूजा करते भए, वे विद्याधर श्रेष्ठ देवों सारिखे सर्वथा प्रकार धर्ममें श्रद्धा करते भए। जो पुण्याधिकारी जीव हैं सो इस लोकमें परम उत्सवके योगकूं प्राप्त होय

हैं यह प्राणी अपने स्वार्थमे संसारमें महिमा नाहीं पावै है केवल परमार्थसे महिमा होय है, जैसे सूर्य्य पर पदार्थको प्रकाशै वैसे शोभा पावै है।

इतिश्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै सुग्रीव भामंडलका नागपाशतैं छूटना अर हनुमानकी कुंभकर्णकी भुजापाशितैं छूटना राम लक्ष्मणकूं सिंह वाहन गरुडवाहनकी प्राप्ति निरूपण करने वाला इकसठवां पर्व पूर्ण भया ॥६१॥

बासठवां पर्व

[लक्ष्मणके रावणकी शक्तिका लगना और मूर्छित होकर पृथ्वीपर पड़ना]

अथानन्तर श्रीरामके पक्षके योधा महापराक्रमी रणरीतिके वेत्ता शूरवीर युद्धकूं उद्यमी भए। वानरवंशियोंकी सेनासे आकाश व्याप्त भया, अर शंख आदि वादित्रनिके शब्द अर गजोंकी गर्जना अर तुरंगनिके हींसिवेका शब्द सुनकर कैलाशका उठावनहारा जो रावण, अति प्रचंड है बुद्धि जाकी, महामानी देवनि सारिखी है विभूति जाके, महा प्रतापी बलवान सेनारूप समुद्रकर संयुक्त शस्त्रनिके तेजकर पृथ्वीमें प्रकाश करता, पुत्र भ्रातादिक सहित लंकासे निकसा, युद्धकूं उद्यमी भया। दोनों सेनाके योधा बख्तर पहिर संग्राम-के अभिलाषी नाना प्रकार वाहननिविषैं आरूढ अनेक आयुधनिके धरणहारे पूर्वोपार्जित कर्मसे महाक्रोधरूप परस्पर युद्ध करते भए। चक्र करोत कुठार धनुष बाण खड्ग लोहयष्टि वज्र मुद्गर कनक परिघ इत्यादि अनेक आयुधनिसे परस्पर युद्ध भया। घोडेके असवार घोडेके असवारोंसे लडने लगे हाथियोंके असवार हाथियोंके असवारोंसे, रथोंके महाधीर रथियोंसे, लडने लगे, सिंहोंके असवार सिंहोंके असवारोंसे, पयादे पयादोंसे भिडते भए। बहुत बेरमें कपिध्वजोंकी सेना राक्षसोंके योधावोंसे दबी तब नल नील संग्राम करने लगे सो इनके युद्धसे राक्षसोंकी सेना चिगी। तब लंकेश्वरके योधा समुद्रकी कल्लोल सारिखे चंचल अपनी सेनाकूं कंपायमान देख विद्युद्वचन मारीच चन्द्रार्क सुख-सारण कृतांत मृत्यु भूतनाद संक्रोधन इत्यादि महा सामन्त अपनी सेनाकूं धैर्य बंधायकर कपि-ध्वजोंकी सेनाकूं दबावते भए। तब मर्कटवंशी योधा अपनी सेनाकूं चिगा जान हजारों युद्धको उठे सो उठतेही नानाप्रकारके आयुधनिकरि राक्षसनिकी सेनाकूं हनते भए अति उदार है चेष्टा जिनकी। तब रावण अपनी सेनारूप समुद्रकूं कपिध्वज रूप प्रलय कालकी अग्निसे सूकता देख आप कोपकर युद्ध करवेकूं उद्यमी भया। सो रावणरूप प्रलयकालकी पवनसे वानरवंशी सूके पात से उडने लगे। तब विभीषण महायोधा वानरवंशियोंकूं धैर्य बंधाय तिनकी रक्षा करवेकूं आप रावणसे युद्धकूं सन्मुख भया। तब रावण लहुरे भाईकूं युद्धमें उद्यमी देख क्रोधकर निरादर

वचन कहता भया-रे बालक! तू लघुभ्राता है सो मारवे योग्य नाहीं, मेरे सन्मुखसे दूर हो, मैं तुझे देखे प्रसन्न नाहीं। तब विभीषणने रावणसे कही-कालके योगसे तू मेरी दृष्टि पड़ा अब मोसें कहां जायगा? तब रावण अति क्रोधमे कहता भया--रे पुरुषत्वरहित विनष्ट धृष्ट पापिष्ट कुचेष्टि नरक-धिकार! तोकूं तो सारिखे दीनकूं मारे मुझे हर्ष नाहीं, तू निर्बल रंक अवध्य है अर तो सारिखे मूर्ख और कौन,जो विद्याधरोंकी सन्तानोंमें होयकर भूमिगोचरियोंका आश्रय करै, जैसे कोई दुर्बुद्धि पाप कर्मके उदयसे जिनधर्मको तज मिथ्यात्वका सेवन करै। तब बिभीषण बोला--हे रावण! बहुत कहनेकरि कहा, तेरे कल्याणकी बात तुझे कहू हू सो सुन। एती भई तो भी कुछ बिगडा नाहीं,जो तू अपना कल्याण चाहे है तो रामसूं प्रीतिकर, सीता रामकूं सौंप। अर अभिमान तज, रामकूं प्रसन्न कर, स्त्रीके निमित्त अपने कुलको कलंक मत लगावै! अथवा तू मेरे वचन नहीं मानै है सो जानिए है तेरी मृत्यु नजीक आई है। समस्त बलवन्तनिमे मोह महा बलवान है तू मोहसे उन्मत्त भया है। ये वचन भाईके सुनकर रावण अति क्रोधरूप भया तीक्ष्ण बाण लेय विभीषणपर दौड्या, और भी रथ घोडे हाथिनके असवार स्वामी भक्तिमें तत्पर महायुद्ध करते भए। विभीषणने भी रावणकूं आवता देख अर्धचन्द्र बाणसे रावणकी ध्वजा उड़ाई अर रावणने क्रोधकर बाण चलाया सो विभीषणका धनुष तोड्या अर हाथसूं बाण गिरा। तब विभीषणने दूजा धनुष लेय बाण चलाया सो रावणका धनुष तोड्या। या भांति दोनों भाई महायोधा परस्पर जोरसूं युद्ध करते भए। अर अनेक सामंतनिका क्षय भया। तदि इन्द्रजीत महायोधा पिताभक्त पिताकी पक्ष विभीषणपर आया,तब ताहि लक्ष्मणने रोकया जैसै पर्वत सागरकूं रोकै। अर श्रीरामने कुम्भकर्णकूं घेरया अर सिहकटिसे नील अर शम्भूसे नल अर स्वयंभूसे दुर्मती अर घटोदरसे दुर्मुख, शक्रासनसे दुष्ट, चन्द्रनखसे काली, भिन्नांजनसे स्कन्ध, विघ्नसे विराधित अर मयसे अंगद अर कुम्भकर्णका पुत्र जो कुम्भ उससे हनुमानका पुत्र अर सुमालीसे सुग्रीव, अर केतुसे भामंडल, कामसे दृढरथ, क्षोभसे बुध इत्यादि बड़े बड़े राजा परस्पर युद्ध करते भए। अर समस्त ही योधा परस्पर रण रचते भए। वह वाहि बुलावै वह वाहि बुलावै बराबरके सुभट। कोई कहै है मेरा शस्त्र आवै है उसे झेल, कोई कहै है तू हमसे युद्ध योग्य नाही, बालक है वृद्ध है रोगी है निर्बल है तू जा। फलाने सुभट युद्ध योग्य है सो आवो, या भांतिके वचनालाप हाय रहे हैं। कोई कहे हैं याही छेदो,कोई कहे हैं बाण चलावो, कोई कहै है मार लेवो,पकड लेवो, बांध लेवो,ग्रहण करो,छोडो, चूर्ण करो,घाव लगे ताहि सहो,घाव देहु,आगे होवो,मूर्च्छित मत होवो,सावधान होवो,तू कहा डरै है मैं तुझे न मारूं,काय-रनिकूं न मारना, भागोंको न मारना, पडेको न मारना, आयुधरहितपर चोट न करनी, तथा रोगसे ग्रसा मूर्च्छित दीन बाल वृद्ध यति व्रती स्त्री शरणागत तपस्वी पागल पशु पक्षी इत्यादिकूं सुभट न मारै यह सामन्तनिकी वृत्ति है। कोई अपने वंशियोंको भागते देख धिकार शब्द कहै हैं और कहै हैं तू

कायर है नष्ट मति है कांपै, कहां जाय है, धीरा रहो अपने समूहमें खडा रहु, तोसू' क्या होय है, तोसू' कौन डरे, तू काहेको क्षत्री । शूर और कायरनिके परखनेका यह समय है । मीठा मीठा अन्न तो बहुत खाते यथेष्ट भोजन करते अब युद्ध में पीछे क्यों होवो, या भांति वीरोंकी गर्जना और वादित्रनिका बाजना तिनसू' दशों दिशा शब्दरूप भई और तुरंगनिके खुरकी रजसे अंधकार होय गया, चक्र शक्ति गदा लोहयष्टि कनक इत्यादि शस्त्रनिसे युद्ध भया, मानों ये शस्त्र कालकी डाढ़ ही हैं । लोग घायल भए, दोनों सेना ऐसी दीखैं मानों लाल अशोकका वन है, अथवा टेसूका वन है, अथवा पारिभद्र जातिके वृक्षोंका वन है । कोई योधा अपने बखतरको टूटा देख दूजा बखतर पहरता भया, जैसैं साधु व्रतमें दूषण उपजा देख फिर भी छेदोपस्थापना करै । अर कोई दांतोंसे तरवार थाम्भ कमर गाढी कर फिर युद्धकू' प्रवृत्ता । कोईयक सामन्त माते हाथियोके दांतोके अग्रभागसे विदारा गया है वक्षस्थल जाका सो हाथीके चालते जे कान तेई भए बीजना उससे मानों हवासे सुख रूप कर रहे हैं और कोईइक सुभट निराकुल बुद्धि हुआ हाथीके दांतनिपर दोनों भुजा पसार सोवै है मानों स्वामीके कार्यरूप समुद्रसे उतरा । अर कैयक योधा युद्धमें रुधिरका नाला बहावते भए जैसें पर्वतमे गेरुकी खानसे लाल नीझरने बहैं । अर कैयक योधा पृथिवीमें साम्हने मुंहसे पड़े होठ डसते शस्त्र जिनके करमे टेढी भौंह विकराल वदन इस रीतिसे प्राण तजै हैं । अर कैयक भव्यजीव महा सग्रामसू' अत्यंत घायल होय कषायका त्याग कर संन्यास धर अविनाशी पदका ध्यान करते देहकू' तज उत्तम लोककू' पावै हैं, कैयक धीरवीर हाथीनिके दांतनिकू' हाथसे पकडकर उपाड़ते भये रुधिरकी छटा शरीरसे पड़े है । शस्त्र हैं हाथनिमे जिनके ऐसे कैयक काम आय गए तिनके मस्तक गिर पडे, अर सैकडों धड नाचैं हैं, कैयक शस्त्ररहित भए, अर घावोंसे जरजरे भये तृषातुर होय जल पीवनेको बैठे हैं, जीवनकी आशा नाहीं, ऐसे भयंकर संग्रामके होते परस्पर अनेक योधावोंका क्षय भया । इंद्रजीत तीक्ष्ण बाणनिसे लक्ष्मणकू' आच्छादने लगा अर लक्ष्मण उसको, सो इंद्रजीतने लक्ष्मण पर तामस बाण चलाया सो अंधकार होय गया । तब लक्ष्मणने सूर्य बाण चलाया उससे अंधकार दूर भया । फिर इंद्रजीतने आशीविष जातिके नागबाण चलाये सो लक्ष्मण अर लक्ष्मणका रथ नागोंसे वेष्टित होने लगा । तब लक्ष्मणने गरुडबाणके योगसे नागबाणका निराकरण किया जैसें योगी महातपसे पूर्वोपाजित पापोंके समूहकू' निराकरण करै । अर लक्ष्मणने इंद्रजीतकू' रथरहित किया । कैसा है इंद्रजीत ? मंत्रियोंके मध्य तिष्ठै है अर हाथियोंकी घटावोंसे वेष्टित है । सो इंद्रजीत दूजे रथपर अपनी सेनाकू' वचनसे कृपाकर रक्षा करता संता लक्ष्मणपर तम बाण चलावता भया । उसे लक्ष्मणने अपनी विद्यासे निवार इन्द्रजीतपर आशीविष जातिका नागबाण चलाया सो इन्द्रजीत नागबाणसे अचेत होय भूमिमें पडा जैसैं भामंडल पड़ा था और रामने कुम्भकरणकू' रथरहित किया बहुरि

कुम्भकरणने सूर्यबाण रामपर चलाया सो रामने ताका बाण निराकरणकर नागबाणकर ताहि बेढा, सो कुम्भकरण भी नागोंका बेढा थका धरती पर पड़ा।

यह कथा गौतम गणधर राजा श्रेणिकतैं कहै हैं-हे श्रेणिक ! बड़ा आश्चर्य है ते नागबाण धनुषके लगे उल्कापातस्वरूप होय जाय हैं अर शत्रुओंके शरीरके लग नागरूप होय उसको बेढै हैं, यह दिव्य शस्त्र देवोपनीत हैं मनवांछित रूप करै हैं एक क्षणमें बाण, एक क्षणमें दंड, क्षण एकमें पाशरूप होय परिणवे हैं, जैसैं कर्म पाशकर जीव बंधे तैसें नागपाशकर कुंभकरण बंधा सो रामकी आज्ञा पाय भामंडलने अपने रथमें राखा, कुंभकरणकूं रामने भामंडलके हवाले किया। अर इंद्रजीतको लक्ष्मणने पकड़ा, सो विराधितके हवाले किया सो विराधितने अपने रथमें राखा, खेदखिन्न है शरीर जाका। ता समय युद्धमें रावण विभीषणको कहता भया जो यदि तू आपको योधा मानै है तो एक मेरा घाव सह, जाकर रणकी खाज बुझै। यह रावणने कही। कैसा है विभीषण ? क्रोधकर रावणके सन्मुख है अर विकराल करी है रणक्रीडा जाने, रावणने कोपकर विभीषणपर त्रिशूल चलाया, कैसा है त्रिशूल प्रज्वलित अग्निके स्फुलिंगोंकर प्रकाश किया है आकाशमें जाने, सो त्रिशूल लक्ष्मणने विभीषणतक आवने न दिया, अपने बाणकर बीचही में भस्म किया। तब रावण अपने त्रिशूलको भस्म किया देख अति क्रोधायमान भया अर नागेन्द्रकी दई शक्ति महादारुण सो ग्रही अर आगे देखे तो इन्दीवर कहिए नीलकमल ता समान श्याम सुंदर महा दैदीप्यमान पुरुषोत्तम गरुडध्वज लक्ष्मण खडे हैं। तब काली घाटसमान गंभीर उदार है शब्द जाका, ऐसा दशमुख सो लक्ष्मणकूं ऊंचे स्वरकर कहता भया मानों ताडना ही करै है। तेरा बल कहां ? जो मृत्युके कारण मेरे शस्त्र तू झेलै, तू औरनिकी तरह मोहि मत जानै। हे दुर्बुद्धि लक्ष्मण ! जो तू मूवा चाहे है तो मेरा यह शस्त्र झेल। तब लक्ष्मण यद्यपि चिरकाल संग्रामकर अति खेदखिन्न भया है, तथापि विभीषणको पीछेकर आप आगे होय रावणकी तरफ दौड़े। तब रावणने महा क्रोध करि लक्ष्मणपर शक्ति चलाई। कैसी है शक्ति ? निकसे हैं तारावोंके आकार स्फुलिंगनिके समूह जाविषैं सो लक्ष्मणका वक्षस्थल महा पर्वतके तट समान ता शक्तिकर विदारा गया, कैसी है शक्ति ? महा दिव्य अति देदीप्यमान अमोघक्षेपा कहिए वृथा नाहीं है लगना जाका, सो शक्ति लक्ष्मणके अंगसों लग कैसी सोहती भई मानो प्रेमकी भरी वधू ही है। सो लक्ष्मण शक्तिके प्रहारकर पराधीन भया है शरीर जाका सो भूमिपर पड़ा, जैसैं वज्रका मारा पहाड़ पड़े, सो ताहि भूमिपर पड़ा देख श्रीराम कमललोचन शोकको दबाय शत्रुके घात करिवे निमित्त उद्यमी भए, सिहोंके रथ चढ़े क्रोधकर भरे शत्रुको तत्काल ही रथरहित किया। तब रावण और रथ चढा तब रामने रावणका धनुष तोड़ा, बहुरि रावण और धनुष लिया तितने रामने रावणका दूजा रथ भी तोड़ सो रामके बाणनिकर विह्वल हुवा रावण धनुष बाण लेयवे असमर्थ भया तीव्र बाणनिकर राम रावणका रथ तोड़ डारें, वह बहुरि रथ चढै सो अत्यंत खेदखिन्न भया, छेदा है वक्तर जाका

सो छह बार रामने रथरहित किया तथापि रावण अद्भुत पराक्रमका धारी रामकर हता न गया। तब राम आश्चर्य पाय रावणसे कहते भए-तू अल्प आयु नाहीं, कोईयक दिन आयु बाकी हैं तातैं मेरे बाणनिकर न मूवा, मेरी भुजाकर चलाए बाण महा तीक्ष्ण तिनकर पहाड़ भी भिद जाय, मनुष्यकी तो कहा बात? तथापि आयुकर्मने तोकूं बचाया। अब मैं तोहि कहूं सो सुन--हे विद्याधरोंके अधिपति! मेरा भाई संग्राममें शक्तिकर तैनें हना सो याकी मृत्युक्रिया कर मैं तोसो प्रभात ही युद्ध करूंगा तब रावणने कही, ऐसे ही करो, यह कह रावण इंद्रतुल्य पराक्रमी लंकामें गया। कैसा है रावण? प्रार्थनाभंग करिवेकूं असमर्थ है। रावण मनमें विचारै है इन दोनो भाइयोंमें एक यह मेरा शत्रु अति प्रबल था सो तो मैं हत्या, यह विचार कछुइक हर्षित होय महलविषैं गया। कैयक जो योधा युद्धमे जीवते आए तिनकूं देख हर्षित भया। कैसा है रावण? भाइनिमें है वात्सल्य जाके, बहुरि सुनी इन्द्रजीत मेघनाद पकड़े गए अर भाई कुंभकरण पकड़ा गयो सो या वृत्तांनकर रावण अति खेदखिन्न भया। तिनके जीवनेकी आशा नाहीं। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै है-हे भव्योत्तम! अनेकरूप अपने उपार्जे कर्मोंके कारणसे जीवनिके नाना प्रकारकी साता असाता होय है, देख! या जगत्विषैं नाना प्रकारके कर्म तिनके उदयकर जीवनिके नाना प्रकारके शुभाशुभ होय हैं, अर नाना प्रकारके फल होय है, कैयक तो कर्मके उदयकर रणविषै नाशकूं प्राप्त होय हैं, अर कैयक वैरियोंको जीत अपने स्थानककूं प्राप्त होय है, अर काहूकी विस्तीर्ण शक्ति विफल होय जाय है,अर बंधनकूं पावै हैं सो जैसैं सूर्य पदार्थोंके प्रकाशनमें प्रवीण है तैसैं कर्म जीवनिको नाना प्रकारके फल देनेमें प्रवीण है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ,ताकी भाषा वचनिकाविषैं लक्ष्मणके रावणके हाथकी शक्तिका लगना और भूमिविषै अचेत होय पड़ना वर्णन करनेवाला बासठवां पर्व पूर्ण भया ॥६२॥

तिरेसठवां पर्व

[लक्ष्मणके शक्ति-प्रहारसे मूर्च्छित होने पर रामका विलाप]

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मणके शोककरि व्याकुल भए, जहां लक्ष्मण पड़ा हुता तहां आय पृथिवीमंडलका मंडन जो भाई ताहि चेष्टारहित शक्तिसे आलिंगित देख मूर्च्छित होय गए। बहुरि घनी बेरमें सचेत होयकर महा शोकसे संयुक्त दुःखरूप अग्निसे प्रज्वलित अत्यंत विलाप करते भए-हा वत्स! कर्मके योग कर तेरी यह दारुण अवस्था भई, अपन दुर्लंघ्य समुद्र तर यहां आए, तू मेरी भक्तिमें सदा सावधान, मेरे कार्य निमित्त सदा उद्यमी, शीघ्र ही मेरेसे वचनालाप कर, कहा मौन धरे तिष्ठै है? तू न जाने मैं तेरे वियोगकूं एक क्षणमात्र भी सहिवे शक्य नाहीं,उठ मेरे उरसे लग, तेरा विनय कहां गया,तेरे भुज गजके सूंड समान दीर्घ भुजबंधन-

निकर शोभित, सो ये क्रियारहित प्रयोजनरहित होय गए, भावमात्र ही रह गए, अर तू माता पिताने मोहि धरोहर सौंपा हुता, सो अब मैं महानिर्लज्ज तिनकूं कहा उत्तर दूंगा, अत्यन्त प्रेमके भरे अति अभिलाषी राम, हा लक्ष्मण, हा लक्ष्मण, ऐसा जगतमें हितु तो समान नाहीं, या भांतिके वचन कहते भए लोक समस्त देखै हैं अर महादीन भए भाईसूं कहै हैं, तू सुभट-निमें रत्न है, तो विना मैं कैसे जीऊंगा, मैं अपना जीतव्य पुरुषार्थ तेरे विना विफल मानूं हूं, पापोंके उदयका चरित्र मैंने प्रत्यक्ष देखा, मोहि तेरे विना सीता कर कहा, अन्य पदार्थनिकर कहा ? जा सीताके निमित्त तेरे सारिखे भाईकूं निर्दय शक्तिकर पृथिवीपर पडा देखूं हूं सो तो समान भाई कहां ? काम अर्थ पुरुषोंको सब सुलभ है, अर और और संबंधी पृथिवीपर जहां जाइये वहां सब मिलें, परंतु माता पिता अर भाई न मिले। हे सुग्रीव ! तैंने अपना मित्रपणा मुझे अति दिखाया, अब तुम अपने स्थानक जावो, अर हे भामंडल ! तुम भी जावो, अब मैं सीताकी भी आशा तजी, अर जीवनेकी भी आशा तजी, अब मैं भाईके साथ निसंदेह अग्निमें प्रवेश करूंगा। हे विभीषण ! मोहि सीताका भी सोच नाहीं अर भाईका सोच नाहीं, परन्तु तिहारा उपकार हमसे कछु न बना, सो यह मेरे मनमें महा बाधा है। जे उत्तम पुरुष हैं ते पहिले ही उपकार करें, अर जे मध्यम पुरुष हैं ते उपकार पीछे उपकार करें, अर जो पीछे भी न करें, वे अधम पुरुष हैं। सो तुम उत्तम पुरुष हो, हमारा प्रथम उपकार किया, ऐसे भाईसे विरोधकर हमपै आए। अर हमसे तिहारा कछु उपकार न बना तातैं मैं अति आतापरूप हूं। हो भामंडल सुग्रीव, चिता रचो, मैं भाईके साथ अग्निमें प्रवेश करूंगा, तुम जो योग्य हो सो करियो यह कहकर लक्ष्मणकूं राम स्पर्शने लगे। तब जांबूनद महा बुद्धिमान मना करता भया-हे देव ! यह दिव्यास्त्रसे मूर्च्छित भया है, तिहारा भाई सो स्पर्श मत करो। यह अच्छा हो जायगा, ऐसे होय है, तुम धीरताकूं धरो, कायरता तजो, आपदामें उपाय ही कार्यकारी है। यह विलाप उपाय नाहीं, तुम सुभट जन हो, तुमको विलाप उचित नाहीं, यह विलाप करना क्षुद्र लोगोंका काम है, तातैं अपना चित्त धीर करो, कोईयक उपाय अब ही बनै है, यह तिहारा भाई नारायण है सो अवश्य जीवेगा। अबार याकी मृत्यु नाहीं, यह कह सब विद्याधर विषादी भए। अर लक्ष्मणके अंगसे शक्ति निकसनेका उपाय अपने मनमें सब ही चितवते भए। यह दिव्य शक्ति है याहि औषधकर कोऊ निवारवे समर्थ नाहीं। अर कदाचित सूर्य उगा तो लक्ष्मणका जीवना कठिन है, यह विद्याधर बारम्बार विचारते हुए उपजी है चिन्ता जिनके सो कमरबंध आदि सब दूर कर आध निमिषमें धरती शुद्धकर कपड़ेके डेरे खडे किए। अर कटककी सात चौकी मेलीं, सो बड़े बड़े योधा बक्तर पहिरे, धनुष बाण धारे बहुत सावधानीसे चौकी बैठे, प्रथम चौकी नील बैठे धनुषबाण हाथमें धरें हैं, अर दूजी चौकी नल बैठे गदा करमें लिए, अर तीजी

चौकी विभीषण बैठे महा उदार मन त्रिशूल थांभे अर कल्पवृक्षोंकी माला रत्ननिके आभूषण पहरे ईशानइन्द्र समान, अर चौथी चौकी तरकश बांधे कुमुद बैठे महा साहस धरे, पांचवीं चौकी बरछी संभारे सुषेण बैठे महा प्रतापी, अर छठी चौकी महा दृढ़भुज आप सुग्रीव इंद्र सारिखा शोभायमान भिंडिपाल लिए बैठे, सातवीं चौकी महा शस्त्रका निकन्दक तरवार सम्हाले आप भामंडल बैठा, पूर्वके द्वार अष्टापदी ध्वजा जाके ऐसा सोहता भया मानों महाबली अष्टापद ही है, अर पश्चिमके द्वार जाम्बूकुमार विराजता भया, अर उत्तरके द्वार मंत्रियोंके समूह सहित बालीका पुत्र महा बलवान चंद्रमरीच बैठा, या भांति विद्याधर चौकी बैठे सो कैसे सोहते भए जैसे आकाशमें नक्षत्रमंडल भासे। अर वानरवंशी महाभट वे सब दक्षिण दिशाकी तरफ चाकी बैठे या भांति चौकीका यत्नकर विद्याधर तिष्ठे, लक्ष्मणके जीनेमैं संदेह जिनके, प्रबल है शोक जिनका, जीवनिके कर्मरूप सूर्यके उदयकर फलका प्रकाश होय है ताहि न मनुष्य, न देव, न नाग, न असुर, कोई भी निवारवे समर्थ नाहीं। यह जीव अपना उपार्जा कर्म आपही भोगवै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणके शक्ति लगना अर रामका विलाप वर्णन करनेवाला त्रेसठवा पर्व पूर्ण भया ॥६३॥

चौसठवां पर्व

[लक्ष्मणकी शक्ति दूर करनेके उपाय और विशल्याके पूर्वभवका वर्णन]

अथानंतर रावण लक्ष्मणका निश्चयसे मरण जान अर अपने भाई दोऊ पुत्रनिकों बुद्धिमें मरणरूप ही जान अत्यंत दुःखी भया। रावण विलाप करै है— हाय भाई कुंभकरण, परम उदार अत्यन्त हितु कहा ऐसा बन्धन अवस्थाकूं प्राप्त भया, हाय इंद्रजीत मेघनाद महा पराक्रमके धारी हो, मेरी भुजा समान दृढकर्मके योगकर बन्धको प्राप्त भए, ऐसी अवस्था अब तक न भई, मैं शत्रुका भाई हना है सो न जानिए शत्रु व्याकुल भया कहा करै, तुम सारिखे उत्तम पुरुष मेरे प्राणवल्लभ दुःख अवस्थाकूं प्राप्त भए, या समान मोकों अति कष्ट कहा। ऐसे रावण गोप्य भाई अर पुत्रनिका शोक करता भया। अर जानकी लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अति रुदन करती भई—हाय लक्ष्मण! विनयवान गुणभूषण! तू तो मंदभागिनीके निमित्त ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त भया, मैं तोहि ऐसी अवस्थाविषैंही देखा चाहूं हू सो दैवयोगसे देखने नाहीं पाऊं हू। तो सारिखे योधाको पापी शत्रुने हना सो कहा मेरे मरणका संदेह न किया, तो समान पुरुष या संसारमें और नाहीं, जो बड़े भाईकी सेवामें आसक्त है चित्त जाका, समस्त कुटुम्बको तज भाईके साथ निकसा, अर समुद्र तिर यहां आया, ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त भया

तोहि मैं कब देखूंगा। कैसा है तू बालक्रीड़ामें प्रवीण अर महा विनयवान, महा मिष्ट वाक्य अद्भुत कार्यका करणहारा, ऐसा दिन कब होयगा जो तुझे मैं देखूं, सर्व देव सर्वथा प्रकार तेरी सहाय करहु, हे सर्वलोकके मनके हरणहारे, तू शक्तिकी शल्यसे रहित होय। या भांति महा कष्टतैं शोकरूप जानकी विलाप करै। ताहि भावनिकरि अति प्रीतिरूप जो विद्याधरी तिनने धैर्य बन्धाय शांत चित्त करी—हे देवि! तेरे देवरके अब तक मरवेका निश्चय नाहीं, तातैं तू रुदन मत कर। अर महा धीर सामंतोंकी यही गति है, अर पृथिवीविषैं उपाय भी नाना प्रकारके हैं, ऐसें विद्याधरियोंके वचन सुन सीता किंचित निराकुल भई अब गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं–हे राजन्! अब जो लक्ष्मणका वृत्तांत भया सो सुन। एक योधा सुंदर है मूर्ति जाकी, सो डेरोंके द्वारपर पर प्रवेश करता भामंडलने देख्या अर पूछा कि तू कौन, अर कहांसे आया, अर कौन अर्थ यहां प्रवेश करै है, यहां ही रह आगे मत जावो। तब वह कहता भया मोहि महीने ऊपर कई दिन गए हैं मेरे अभिलाषा रामके दर्शनकी है, सो रामका दर्शन करूंगा। अर जो तुम लक्ष्मणके जीवनेकी वांछा करो हो तो मैं जीवनेका उपाय कहूंगा। जब वाने ऐसा कहा, तब भामंडल अति प्रसन्न होय द्वार आप समान अन्य सुभट मेल ताहि लार लेय श्रीरामपै आया। सो विद्याधर श्रीरामसे नमस्कार कर कहता भया--हे देव! तुम खेद मत करो लक्ष्मणकुमार निश्चय सेती जीवेगा। देवगतिनामा नगर, तहां राजा शशिमंडल, राणी सुप्रभा, तिनका पुत्र मैं चंद्रप्रीतम सो एक दिन आकाशविषैं विचरता हुता सो राजा वेलाध्यक्षका पुत्र सहस्रविजय सो वासे मेरा यह वैर कि मैं वाकी मांग परणी, सो मेरा वह शत्रु, ताके अर मेरे महा युद्ध भया, सो ताने चण्डरवा नाम शक्ति मेरे लगाई सो मैं आकाशसे अयोध्याके महेन्द्रनामा उद्यानमें पड़ा, सो मोहि पड़ता देख अयोध्याके धनी राजा भरत आय ठाढे भए, शक्तिसे विदारा मेरा वक्षस्थल देख वे महा दयावान उत्तम पुरुष जीवदाता मुझे चन्दनके जलकर छांटा सो शक्ति निकस गई, मेरा जैसा रूप हुता वैसा होय गया, अर कुछ अधिक भया। वा नरेंद्र भरतने मोहि नवा जन्म दिया आ कर तिहारा दर्शन भया।

यह वचन सुन श्रीरामचन्द्र पूछते भए कि वा गन्धोदककी उत्पत्ति तू जानै है? तब ताने कहा हे देव! जानूं हूँ, तुम सुनो। मैं राजा भरतको पूछी अर ताने मोहि कही, जो यह हमारा समस्त देश रोगनिकर पीड़ित भया सो काहू इलाजसे अच्छा न होय, पृथिवीविषैं कौन-कौन रोग उपजे सो सुनो---उरोघात महादाहज्वर लालपरिश्रम सर्वशूल अर छिरद सोई फोरे इत्यादि अनेक रोग सर्व देशके प्राणियोंको भए, मानों क्रोधकर रोगनिकी धाड़ ही देशविषैं आई। अर राजा द्रोणमेघ प्रजासहित नीरोग तब मैं ताको बुलाया अर कही—हे माम! तुम जैसे नीरोग हो तैसा शीघ्र मोहि अर मेरी प्रजाको करो। तब राजा द्रोणमेघने जाकी सुगंधतासे

दशों दिशा सुगंध होय ता जलकर मोहि सींचा सो मैं चंगा भया। अर ता जलकर मेरा राजलोक भं चंगा अर नगर तथा देश चंगा भया, सर्वरोग निवृत्त भए सो हजारों रोगोंकी करणहारी अत्यंत दुस्सह वायु मर्मकी भेदनहारी ता जलसे जाती रही। तब मैंने द्रोणमेघको पूछा यह जल कहांका है जाकर सर्वरोगका विनाश होय? तब द्रोणमेघने कही—हे राजन्! मेरे विशल्या नामा पुत्री, सर्वविद्याविषैं प्रवीण, महागुणवती सो जब गर्भविषैं आई तब मेरे देशविषैं अनेक व्याधि हुतीं सो पुत्रीके गर्भविषैं आवते ही सर्व रोग गए, पुत्री जिनशासनविषैं प्रवीण है, भगवान्की पूजाविषैं तत्पर है, सर्व कुटुम्बकी पूजनीक है, ताके स्नानका यह जल है, ताके शरीर की सुगन्धतासे जल महा सुगंध है, क्षणमात्रविषैं सर्व रोगका विनाश करै है। ये वचन द्रोणमेघके सुनकर मैं अचिरजकों प्राप्त भया। ताके नगरविषैं जाय ताकी पुत्रीकी स्तुति करी। अर नगरीसे निकस सत्त्वहित नामा मुनिको प्रणामकर पूछा—हे प्रभो! द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या का चरित्र कहो? तब चार ज्ञानके धारक मुनि महावात्सल्यके धरणहारे कहते भए—हे भरत! महाविदेहक्षेत्रविषै स्वर्गसमान पुंडरीक देश, तहां त्रिभुनानंद नामा नगर, तहां चक्रधर नामा चक्रवर्ती राजा राज्य करै, ताके पुत्री अनंगशरा गुण ही हैं आभूषण जाके, स्त्रीनिविषैं ता समान अद्भुत रूप औरका नाहीं, सो एक प्रतिष्ठितपुरका धनी राजा पुनर्वसु विद्याधर चक्रवर्तीका सामन्त सो कन्याकूं देख कामबाणकर पीड़ित होय विमानमें बैठाय लेय गया। सो चक्रवर्तीने क्रोधायमान होय किंकर भेजे सो तासूं युद्ध करते भए, ताका विमान चूर डारा, तब ताने व्याकुल होय कन्या आकाशतैं डारी सो शरदके चन्द्रमाकी ज्योति समान पुनर्वसुकी पर्णलघुविद्याकर अटवीविषैं आय पड़ी, सो अटवी दुष्ट जीवनिकर महा भयानक, जाका नाम श्वापद रौरव जहां विद्याधरोंका भी प्रवेश नाहीं, वृक्षनिके समूहकर महा अंधकाररूप, नाना प्रकारकी बेलनिकर बेढ़े, नानाप्रकारके ऊंचे वृक्षनिकी सघनतासे जहां सूर्यकी किरण भी प्रवेश नाहीं, अर चीता व्याघ्र सिंह अष्टापद गैंडा रीछ इत्यादि अनेक वनचर विचरैं, अर नीची ऊंची विषम भूमि जहां बड़े बड़े गर्त (गढे), सो यह चक्रवर्तीकी कन्या अनंगशरा बालिका अकेली ता वनमें महा भयकर युक्त अति खेदखिन्न होती भई, नदी के तीर जाय दिशा अवलोकनकर माता पिताकूं चितार रुदन करती भई--हाय! मैं चक्रवर्ती की पुत्री मेरा पिता इन्द्रसमान ताके मैं अति लाडली दैवयोगकर या अवस्थाकूं प्राप्त भई अब कहा करूं? या वनका छोर नाही, यह वन देख दुःख उपजे, हाय पिता महा पराक्रमी सकल लोक प्रसिद्ध, मैं या वनमें असहाय पड़ी, मेरी दया कौन करै, हाय माता ऐसे महादुःखकर मोहि गर्भमें राखी, अब काहेसे मेरी दया न करो, हाय मेरे परिवारके उत्तम मनुष्य हो! एक क्षणमात्र मोहि न छोड़ते, सो अब क्यों तज दीनी? अर मैं होती ही क्यों न मर गई, काहेसे दुःखकी भूमिका भई, चाही मृत्यु भी न मिलै, कहा करूं, कहां जाऊं, मैं पापिनी कैसें तिष्ठूं?

यह स्वप्न है कि साक्षात् है। या भांति चिरकाल विलापकर महा विह्वल भई। ऐसे विलाप किए, जिनकूं सुन महा दुष्ट पशुका भी चित्त कोमल होय। यह दीनचित्त क्षुधा तृषासे दग्ध शोकके सागरमें मग्न फल पत्रादिकसे कीनी है आजीविका जाने, कर्मके योग ता वनमे कई शीतकाल पूर्ण किए। कैसे हैं शीतकाल? कमलनिके वनकी शोभाका जो सर्वस्व ताके हरणहारे। अर तिसने अनेक ग्रीष्मके आताप सहे, कैसे हैं ग्रीष्म आताप? सूके हैं जलोंके समूह, अर जले हैं दावानलोंसे अनेक वनवृक्ष, अर जरे हैं मरे हैं अनेक जन्तु जहां। अर जाने ता वनमें वर्षाकाल भी बहुत व्यतीत किए, ता समय जलधाराके अन्धकारकर दब गई है सूर्यकी ज्योति अर ताका शरीर बर्षाका धोया चित्रामके समान होय गया, कांतिरहित दुर्बल विखरे केश मलयुक्त शरीर लावण्यरहित ऐसा होय गया जैसे सूर्यके प्रकाशकर चन्द्रमाकी कलाका प्रकाश क्षीण होय जाय। कैथका वन फलनिकर नम्रीभूत वहां बैठी पिताको चितार या भांतिके वचन कहकर रुदन करै कि मैं जो चक्रवर्तीके तो जन्म पाया अर पूर्व जन्मके पापकर वनविषै ऐसी दुःख अवस्था को प्राप्त भई या भांति आंसुओंकी वर्षा कर चातुर्मासिक किया। अर जे वृक्षोंसे टूटे फल सूक जांय तिनका भक्षण कर अर बेला तेला आदि अनेक उपवासनिकर क्षीण होय गया है शरीर जाका सो केवल फल अर जलकर पारणा करती भई। अर एक ही वार जल ताही समय फल। यह चक्रवर्तीकी पुत्री पुष्पनिकी सेजपर सोवती अर अपने केश भी जाको चुभते सो विषम भूमिपर खेदरहित शयन करती भई। अर पिताके अनेक गुणीजन राग करते तिनके शब्द सुन प्रबोधकूं पावती, सो अब स्याल आदि अनेक वनचरोंके भयानक शब्दकरि रात्रि व्यतीत करती भई। या भांति तीन हजार वर्ष तप किया। सूके फल, तथा सूके पत्र, अर पवित्र जल आहार किए। अर महा वैराग्य को प्राप्त होय खान पानका त्यागकर धीरता धर संलेखणा मरण आरम्भा, एक सौ हाथ भूमि पावोंसे परै न जाऊं यह नियम धारे तिष्ठी, आयुमें छह दिन बाकी हुते अर एक अरहदास नामा विद्याधर सुमेरु की वन्दना करके जावे था सो आय निकसा सो चक्रवर्तीकी पुत्री को देख पिताके स्थानक ले जाना विचारा संलेखणाके योगकर कन्याने मने किया!

तब अरहदास शीघ्र ही चक्रवर्तीपर जाय चक्रवर्तीको लेय कन्यापै आया, सो जासमय चक्रवर्ती आया तासमय एक सर्प कन्याको भखे था सो कन्याने पिताको देख अजगरको अभयदान दिवाया अर आप समाधि मरणकर शरीर तज तीजे स्वर्ग गई। पिता पुत्रीकी यह अवस्था देखकर बाईस हजार पुत्रनिसहित वैराग्यको प्राप्त होय मुनि भया। कन्याने अजगरसे क्षमा कर अजगरको पीड़ा न होने दई सो ऐसी दृढता ताहीसूं बनै। अर वह पुनर्वसु विद्याधर अनंगशराको देखता भया, सो न पाई तब खेदखिन्न होय द्रुमसेन मुनिके निकट मुनि होय महातप किया सो स्वर्गमें देव होय महासुंदर लक्ष्मण भया। अर वह अनंगशरा चक्रवर्तीकी

पुत्री स्वर्गलोकतैं चयकर द्रोणमेघके विशल्या भई अर पुनर्वसुने ताके निमित्त निदान किया हुता सो अब लक्ष्मण याहि वरेगा। यह विशल्या या नगरविषैं या देशविषैं तथा भरतक्षेत्रमें महागुणवंती है, पूर्वभवके तपके प्रभावकर महा पवित्र है, ताके स्नानका यह जल है सो सकल विकारको हरै हैं। याने उपसर्ग सहा, महा तप किया ताका फल है, याके स्नानके जलकर जो तेरे देशमे वायु विषम विकार उपजा हुता सो नाश भया। ये मुनिके वचन सुन भरतने मुनिसे पूछी हे प्रभो मेरे देशमें सर्व लोकोंको रोगविकार कौन कारणसे उपजा ? तब मुनिने कहा गजपुर नगरतैं एक व्यापारी महा धनवन्त विन्ध्य नामा सो गसभ (गधा) ऊंट भैंसा लादे अयोध्यामें आया अर ग्यारह महीना अयोध्यामें रहा, ताके एक भैंसा बहुत बोझके लदनेमे घायल हुआ तीव्र रोगके भारसे पीड़ित या नगरमें मूवा, सो अकामनिर्जराके योगकर अश्वकेतुनामा वायुकुमार देव भया जाका विद्यावर्त नाम, सो अवधिज्ञानसे पूर्वभवको चितारा कि पूर्वभवविषैं मैं भैंसा था, पीठ कट रही हुती, अर महा रोगोंकर पीड़ित मार्गविषैं कीचमें पड़ा हुता सो लोक मेरे सिरपर पांव देय देय गए यह लोक महा निर्दई, अब मैं देव भया सो मैं इनका निग्रह न करूं तो मैं देव काहे-का ? ऐसा विचारि अयोध्या नगरविषैं अर सुकौशल देशमें वायु रोग विस्तारा, सो समस्त रोग विशल्याके चरणोदकके प्रभावसैं विलय गया। बलवानसे अधिक बलवान है सो यह पूर्ण कथा मुनिने भरतसें कही, अर भरतने मोसैं कही सो मैं समस्त तुमको कही। विशल्याका स्नानजल शीघ्र ही मंगावो, लक्ष्मणके जीवनेका अन्य यत्न नाहीं। या भांति विद्याधरने श्रीरामसें कह्या सो सुनके प्रसन्न भये। गौतमस्वामी कहै हैं कि हे श्रेणिक ! जे पुण्याधिकारी हैं तिनको पुण्यके उदय करि अनेक उपाय मिलैं हैं। अहो महंतजन हो, तिन्हैं आपदाविषैं अनेक उपाय सिद्ध होय हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिका विषैं विशल्याका पूर्वभव वर्णन करनेवाला चौसठवा पर्व पूर्ण भया ॥६४॥

पैंसठवां पर्व

[रामके कटकमे विशल्याका आगमन और लक्ष्मणका शक्ति रहित होना]

अथानन्तर ये विद्याधरके वचन सुनकर रामने समस्त विद्याधरनिसहित ताकी अति प्रशंसा करी, अर हनुमान भामंडल तथा अंगद इनकूं मंत्रकर अयोध्याकी तरफ विदा किए। ये क्षणमात्रमें गए जहां महाप्रतापी भरत विराजै हैं, सो भरत शयन करते हुते। तिनकूं रागकर जगावनेका उद्यम किया, सो भरत जागते भए। तब ये मिले सीताका हरण, रावणसे युद्ध, अर लक्ष्मणके शक्तिका लगना ये समाचार सुन भरतको शोक अर क्रोध उपजा। अर ताही समय

युद्धकी भेरी दिवाई सो संपूर्ण अयोध्याके लोक व्याकुल भए, अर विचार करते भए यह राज-मंदिरमें कहा कलकलाट शब्द है ? आधी रातके समय कहा अतिवीर्यका पुत्र आय पड्या ? कोई-यक सुभट अपनी स्त्रीसहित सोता हुता ताहि तजकर अपने वक्तर पहिरे, अर खड्ग हाथमें समारा, अर कोईयक मृगनैनी भोरे बालकको गोद लेय अर कुचोंपर हाथ धर दिशावलोकन करती भई, अर कोईयक स्त्री निद्रारहित भई सोते कंतको जगावती भई, अर कोईयक भरतजीका सेवक जानकर अपनी स्त्रीको कहता भया—हे प्रिये कहा सोवै है ? आज अयोध्यामें कछु भला नाहीं, राजमंदिरमें प्रकाश होय रह्या है, अर रथ, हाथी, घोडे, प्यादे, राजद्वारकी तरफ जाय हैं जो सयाने मनुष्य हुते ते सब सावधान होय उठ खड़े हुए। अर कईयक पुरुष स्त्रीसे कहते भए ये सुवर्णकलश अर मणि रत्नोंके पिटारे तहखानोंमें, अर सुन्दर वस्त्रोंकी पेटी भूमिग्रहमें धरो और भी द्रव्य ठिकाने धरो। अर शत्रुघ्न। भाई निद्रा तज हाथी चढ मंत्रियोंसहित शस्त्रधारक योधावोंको लेय राजद्वार आया और भी अनेक राजा राजद्वार आए सो भरत सबकूं युद्धका आदेश देय उद्यमी भया। तब भामंडल हनुमान अंगद भरतकूं नमस्कार कर कहते भए—हे देव ! लंकापुरी यहांसे दूर है अर बीच समुद्र है। तब भरतने कही कहा करना ? तब उन्होंने विशल्याका वृत्तांत कहा--हे प्रभो ! राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या ताके स्नानका उदक देवहु, शीघ्र ही कृपा करहु जो हम ले जांय सूर्यका उदय भए लक्ष्मणका जीवना कठिन है। तब भरतने कही ताके स्नानका जल क्या वाही ले जावो। माहि मुनिने कही हुती यह विशल्या लक्ष्मणकी स्त्री होयगी। तब द्रोणमेघ के निकट एक निज मनुष्य ताही समय पठाया सो द्रोणमेघने लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अतिकोप किया, अर युद्धकूं उद्यमी भया। अर ताके पुत्र मंत्रिनि सहित युद्धकूं उद्यमी भए तब भरत अर माता केकईने आप द्रोणमेघको जायकर ताको समझाय विशल्याको पठावना ठहराया। तब भामंडल हनुमान अंगद विशल्याकूं विमानमें बैठाय एक हजार अधिक राजाकी कन्या साथ लेय रामकटकमें आए, एक क्षणमात्रमें संग्राम भूमि आय पहुंचे, विमानसे कन्या उतरी, ऊपर चमर ढुरै हैं। कन्याके कमल सारिखे नेत्र सो हाथी, घोड़े बड़े बड़े योधानिको देखती भई। ज्यों ज्यों विशल्या कटकमें प्रवेश करै त्यों त्यों लक्ष्मणके शरीरमें साता होती भई, वह शक्ति देवरूपिणी लक्ष्मणके अंगसे निकसी, ज्योतिके समूहसे युक्त मानों दुष्ट स्त्री घरसे निकसी, देदीप्यमान अग्निके स्फुलिंगोंके समूह आकाशमें उछलते सो वह शक्ति हनुमानने पकड़ी, दिव्य स्त्रीका रूप धरै, तब हनुमानको हाथ जोड़ कहती भई—हे नाथ ! प्रसन्न होवो मोहि छांड़ो, मेरा अपराध नाहीं, हमारी यही रीति है कि हमको जो साधै हम ताके वशीभूत हैं। मैं अमोघविजया नामा शक्ति विद्या तीन लोकविषैं प्रसिद्ध हू सो कैलाश-पर्वतविषैं बालमुनि प्रतिमा योग धरि तिष्टे हुते, अर रावणने भगवानके चैत्यालयमें गान किया, अर अपने हाथनिकी नस बजाई अर जिनेंद्रके चरित्र गाए तब धरणेंद्रका आसन

कंपायमान भया सो धरणेंद्र परम हर्ष धर आए, रावणकूं अति प्रसन्न होय मोहि सौंपी, रावण याचनाविषैं कायर मोहि न इच्छे । तब धरणेंद्रने हठकर दई सो मैं महाविकाल-स्वरूप जाके लागूं ताके प्राण हरूं, कोई मोहि निवारवे समर्थ नाहीं । एक या विशल्या सुंदरीको टार, मैं देवोंकी जीतनहारी सो मैं याके दर्शन हीतैं भाग जाऊं, याके प्रभावकर मैं शक्तिरहित भई, तपका ऐसा प्रभाव है जो चाहे तो सूर्यको शीतल करै, अर चंद्रमाको उष्ण करै। याने पूर्व जन्मविषैं अति उग्र तप किए, मिरूनाके फूल समान याका सुकुमार शरीर सो याने तपविषैं लगाया, ऐसा उग्र तप किया, जो मुनिहूतें न बनै,मेरे मनमें संसारविषैं यही भासै है जो ऐसे तप प्राणी करैं, वर्षा शीतल आताप अर महा दुस्सहपवन तिनसे यह सुमेरुकी चूलिका समान न कांपी,धन्य रूप याका,धन्य याका साहस,धन्य याका धर्मविषैं दृढ मन,याकासा तप और स्त्रीजन करने समर्थ नाहीं, सर्वथा जिनेंद्रचन्द्रके मतके अनुसार जे तपको धारण करैं हैं ते तीनलोकको जीतैं हैं । अथवा या बातका कहा आश्चर्य, जा तपकर मोक्ष पाइए ताकर और कहा कठिन ? मैं पराए आधीन जो मोहि चलावै ताके शत्रुका मैं नाश करूं, सो याने मोहि जीती, अब मैं अपने स्थानक जाऊं हू, सो तुम तो मेरा अपराध क्षमा करहु । या भांति शक्ति देवीने कहा तब तत्वका जानन-हारा हनुमान ताहि विदाकर अपनी सेनामें आया । अर द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या अति लज्जाकी भरी रामके चरणारविन्दकूं नमस्कार हाथ जोड़ ठाढी भई । विद्याधर लोक प्रशंसा करते भए, अर नमस्कार करते भए,अर आशीर्वाद देते भए, जैसे इंद्रके समीप शची जाय तिष्ठै तैसे वह विशल्या सुलक्षणा महा भाग्यवती सखियोंके वचनसे लक्ष्मणके समीप तिष्ठी। वह नव यौवन जाके मृगी, कैसे नेत्र, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान मुख जाका, अर महा अनुरागकी भरी उदार मन पृथिवीविषैं सुखसे सूते जो लक्ष्मण तिनको एकांतविषैं स्पर्श कर अर अपने सुकुमार करकमल सुन्दर तिनकर पतिके पांव पलोटने लगी। अर मलयागिरि चन्दनसे पतिका सर्व अंग लिप्त किया, अर याकी लार हजार कन्या आई थीं तिनने याके करसे चन्दन लेय विद्याधरनिके शरीर छांटे, सो सब घायल आछे भए । अर इंद्रजीत कुम्भकर्ण मेघनाद घायल भए हुते सो उनको हू चन्दनके लेपसे नीके किये, सो परम आनन्दको प्राप्त भए, जैसे कर्मरोगरहित सिद्धपरमेष्ठी परम आनन्दको पावें । और भी जे योधा घायल भए हुते हाथी घोडे पियादे सो सब नीके भए, घावोंकी शल्य जाती रही । सब कटक अच्छा भया । अर लक्ष्मण जैसे सूता जागै तैसे वीणाके नाद सुन अति प्रसन्न भए । अर लक्ष्मण मोहशय्या छोडते भए, स्वांस लिए आंख उघड़ी उठकर क्रोधके भरे दशों दिशा निरखि ऐसे वचन कहते भए--कहां गया रावण, कहां गया वो रावण ? ये वचन सुन राम अति हर्षित भए, फूल गए हैं नेत्र कमल जिनके महा आनंदके भरे बड़े भाई रोमांच होय गया है शरीरमें जिनके, अर अपनी भुजानिकर भाईसे मिलते भए, अर कहते भए

हे भाई ! वह पापी तोहि शक्तिसे अचेत कर आपको कृतार्थ मान घर गया। अर या राजकन्या-के प्रसादतें तू नीका भया। अर जामवन्तको आदि देय सब विद्याधरनिने शक्तिके लागवे आदि निकसवे पर्यंत सर्व वृत्तांत कहा। अर लक्ष्मणने विशल्या अनुरागकी दृष्टिकरि देखी। कैसी है विशल्या ? श्वेत श्याम आरक्त तीन वर्ण कमल तिन समान हैं नेत्र जाके, अर शरदकी पूर्णिमा-के चन्द्रमा समान है मुख जाका, अर कोमल शरीर क्षीण कटि दिग्गजके कुंभस्थल समान स्तन हैं जाके, नव यौवन मानों साक्षात् मूर्तिवन्ती कामकी क्रीड़ा ही है, मानों तीन लोककी शोभा एकत्रकर नामकर्मने याहि रचा है, ताहि लक्ष्मण देख आश्चर्यको प्राप्त होय मनमें विचारता भया--यह लक्ष्मी है अक इंद्रकी इंद्राणी है, अथवा चंद्रकी कांति है ? यह विचार करे है, अर विशल्याकी लारकी स्त्री कहती भई--हे स्वामी ! तिहारा यासूं विवाहका उत्सव हम देखा चाहै हैं। तब लक्ष्मण मुलके, अर विशल्याका पाणिग्रहण किया, अर विशल्याकी सर्व जगत्में कीर्ति विस्तरी। या भांति जे उत्तम पुरुष हैं अर पूर्वजन्ममें महा शुभ चेष्टा करी है तिनको मनोज्ञ वस्तुका संबंध होय है अर चांद सूर्यकी-सी उनकी कांति होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै विशल्याका समागम वर्णन करनेवाला पैंसठवा पर्व पूर्ण भया ॥६५॥

छयासठवां पर्व

[रावणके द्वारा रामके पास दूत भेजना]

अथानन्तर लक्ष्मणका विशल्यासूं विवाह अर शक्तिका निकासना यह सब समाचार रावणने हलकारनिके मुख सुने अर सुनकर मुलकि कर मंदबुद्धि कर कहता भया—शक्ति निकसी, तो कहा ? अर विशल्या व्याही तो कहा ? तब मारीच आदि मंत्री मंत्रमें प्रवीण कहते भए—हे देव ! तिहारे कल्याणकी बात यथार्थ कहेंगे, तुम कोप करो, अथवा प्रसन्न होवो, सिंहवाहनी गरुड़वाहनी विद्या राम लक्ष्मणको यत्न विना सिद्ध भई, सो तुम देखी। अर तिहारे दोऊ पुत्र अर भाई कुम्भकरणको तिन्होंने बांध लिए सो तुम देखे। अर तिहारी दिव्य शक्ति सो निरर्थक भई, तिहारे शत्रु महाप्रवल हैं उनकर जो कदाचित तुम जीते भी तो भ्राता पुत्रोंका निश्चय नाश है, तातैं ऐसा जानकर हमपर कृपा करो, हमारी विनती अब तक आपने कदापि भंग न करी तातैं सीताको तजो। अर जो तिहारे धर्म बुद्धि सदा रही है सो राखहु, सर्वलोककूं कुशल होय राघवसे संधि करो, यह बात करनेमें दोष नाहीं, महागुण है। तुम ही कर सर्वलोकविषैं मर्यादा चलै है, धर्मकी उत्पत्ति तुमसे है, जैसे समुद्रतैं रत्ननिकी उत्पत्ति होय। ऐसा कहकर बड़े मंत्री हाथ जोड़ नमस्कार करते भए। अर हाथ जोड़ विनती करते भए। सबने यह मंत्र किया जो एक सामंत दूतविद्या-

विषैं प्रवीण संधिके अर्थि रामपै पठाइये सो एक बुद्धिसे शुक्रसमान, महा तेजस्वी प्रतापवान मिष्टवादी ताहि बुलाया, सो मंत्रिनिने महासुंदर महा अमृत औषधि समान वचन कहे। परन्तु रावणने नेत्रकी समस्या कर मंत्रिनिका अर्थ दूषित कर डाला, जैसैं कोई विषसे महा औषधिको विषरूप कर डारे। तैसे रावण सन्धिकी बात विग्रहरूप जताई सो दूत स्वामीको नमस्कार कर जायवेकूं उद्यमी भया। कैसा है दूत? बुद्धिके गर्वकर लोकको गोपद समान निरखै है, आकाशके मार्ग जाता रामके कटकको भयानक देख दूतको भय न उपजा। याके वादित्र सुन वानरवंशियोंकी सेना क्षोभको प्राप्त भई। रावणके आगमकी शंका करी जब नजीक आया तब जानी यह रावण नाहीं कोई और पुरुष है! तब वानरवंशियोंकी सेनाको विश्वास उपजा। दूत द्वारे आय पहुचा। तब द्वारपालने भामंडलसों कही। भामण्डलने रामसे विनतीकर कहा, केतेक लोकनि सहित निकट बुलाया अर ताकी सेना कटकमें उतरी।

रामसे नमस्कार कर दूत वचन कहता भया—हे रघुचन्द्र! मेरे वचननिकर मेरे स्वामीने तुमको कुछ कहा है सो चित्त लगाय सुनहु, युद्धकर कछु प्रयोजन नाहीं, आगे युद्धके अभिमानी बहुत नाशको प्राप्त भए, तातैं प्रीति ही योग्य है, युद्धकर लोकनिका क्षय होय, अर महा दोष उपजै हैं अपवाद होय है, आगे संग्रामकी रुचिकर राजा दुर्वतक शंख धवलांग असुर सम्बरादि अनेक राजा नाशको प्राप्त भए, तातैं मेरे सहित तुमको प्रीति ही योग्य है। और जैसे सिंह महा पर्वतकी गुफाको पायकर सुखी होय है तैसे अपने मिलापकर सुख होय है। मैं रावण जगत् प्रसिद्ध, कहा तुमने न सुना, जाने इन्द्रसे राजा बन्दीगृहविषैं किए, जैसे कोई स्त्रीनिको अर सामान्यलोकोंको पकडे तैसे इन्द्र पकड़ा। अर जाकी आज्ञा सुर असुरनिकर न रोकी जाय, न पातालविषै, न जल विषैं, न आकाशविषैं, आज्ञाको कोई न रोक सके नाना प्रकारके अनेक युद्धोंका जीतनहारा वीर लक्ष्मी जाको वरै ऐसा मैं सो तुमको सागरांत पृथिवी विद्याधरोंसे मंडित दूं हू अर लंकाके दोय भागकर बांट दूं हू—भावार्थ समस्त राज्य अर आधी लंका दूं हू,तुम मेरा भाई अर दोनो पुत्र मोपै पठावो,अर सीता मोहि देवो जाकर सब कुशल होय। अर जो तुम यों न करोगे तो जो मेरे पुत्र भाई बन्धनमें हैं तिनको तो बलात्कार छुटाय लूंगा, अर तुमको कुशल नाहीं। तब राम बोले मोहि राज्यसे प्रयोजन नाहीं, अर और स्त्रियोंसे प्रयोजन नाहीं, सीता हमारे पठावो, हम तिहारे दोऊ पुत्र अर भाईको पठावें। अर तिहारी लंका तिहारे ही रहो, अर समस्त राज्य तुम ही करो, मैं सीतासहित दुष्ट जीवनिसंयुक्त जो वन ताविषैं सुखसूं विचरूंगा। हे दूत! तू लंकाके धनीसे जाय कह, याही बातमें तिहारा कल्याण है और भांति नाहीं। ऐसे श्रीरामके सर्व पूज्य वचन सुख साताकर संयुक्त तिनको सुनकर दूत कहता भया—हे नृपति! तुम राज काज विषैं समझते नाहीं, मैं तुमकूं बहुरि कल्याणकी बात कहूँ हू निर्भय होय समुद्र उलंघ

आए हो सो नीके न करी। अर यह जानकीकी आशा तुमको भली नाहीं, यदि लंकेश्वर कोप भया तब जानकीकी कहा बात ? तिहारा जीवना भी कठिन है। अर राजनीतिविषैं ऐसा कहा है जे बुद्धिवान हैं तिनको निरंतर अपने शरीरकी रक्षा करनी। स्त्री अर धन इनपर दृष्टि न धरनी। अर जो गरुड़ेन्द्रने सिंहवाहन गरुड़वाहन तुमपै भेजे तो कहा, अर तुम छल छिद्र कर मेरे पुत्र अर सहोदर बांधे तो कहा ? जौंलग मैं जीवूं हूं तौलग इन बातोंका गर्व तुमको वृथा है। जो तुम युद्ध करोगे तो न जानकीका, न तिहारा जीवन, तातैं दोऊ मत खोवहु सीताका हठ छांडहु। अर रावण यह कही है जे बड़े बड़े राजा विद्याधर इन्द्रतुल्य पराक्रम जिनके सो समस्त शास्त्रविषैं प्रवीण, अनेक युद्धनिके जीतनहारे, ते मैं नाशको प्राप्त किए हैं। तिनके कैलाशपर्वतके शिखर-समान हाडनके समूह देखो। जब ऐसा दूतने कहा, तब भामण्डल क्रोधायमान भया, ज्वाला-समान महा विकराल मुख, ताकी ज्योतिसे प्रकाश किया है आकाशविषैं जानैं। भामंडलने कही—रे पापी दूत स्याल ! चातुर्यता रहित दुर्बुद्धि वृथा शंकारहित कहा भासै है ? सीताकी कहा वार्ता ? सीता तो राम लेंगेही, यदि श्रीराम कोपे तब रावण राक्षस कुचेष्टित पशु कहा ? ऐसा कह ताके मारवेकूं खड्ग सम्हारया तब लक्ष्मणने हाथ पकड़, अर मने किया। कैसे हैं लक्ष्मण ? नीति ही हैं नेत्र जिनके, भामंडलके क्रोधकर रक्त नेत्र होय गए, वक्र होय गये, जैसी सांझकी लाली होय, तैसा लाल वदन होय गया। तब मंत्रिनिने योग्य उपदेश कहे समताकूं प्राप्त किया। जैसैं विषका भरा सर्प मंत्रसे वश कीजिए है। हे नरेन्द्र ! क्रोध तजो, यह दीन तिहारे योग्य नाहीं, यह तो पराया किंकर है, जो वह कहावै सो कहै, याके मारवेकर कहा ? स्त्री, बालक, दूत, पशु, पक्षी, वृद्ध, रोगी, सोता, आयुधरहित, शरणागत, तपस्वी, गाय, ये सर्वथा अवध्य हैं। जैसैं सिंह कारी घटा समान गाजते जे गज तिनका मर्दन करनहारा, सो मींडकनिपर कोप न करै, तैसैं तुमसे नृपति दूतपर कोप न करैं, यह तो वाके शब्दानुसारी है जैसैं छायापुरुष है (छायापुरुषकी अनुगामिनी है) अर सूवाको ज्यों पढ़ावैं, तैसैं पढ़ै, अर यंत्रको ज्यों बजावैं त्यों बजै, तैसैं यह दीन वह बकावै त्यों बकै। ऐसे शब्द लक्ष्मणने कहे। तब सीताका भाई भामंडल शांतचित्त भया। श्रीराम दूत को प्रकट कहते भए—रे मूढ दूत ! तू शीघ्र ही जा, अर रावणको ऐसे कहियो तू ऐसो मूढ मंत्रियोंका बहकाया खोटे उपायकर आपा ठगावेगा। तू अपनी बुद्धि कर विचार, किसी कुबुद्धिको पूछै मत, सीताका प्रसंग तज, सर्व पृथिवीका इन्द्र हो पुष्पक विमानमें बैठा जैसैं भ्रमै था तैसैं विभवसहित भ्रम, यह मिथ्या हठ छोड़ दे, क्षुद्रनिकी बात मत सुनहु, करने योग्य कार्य विषैं चित्त धर, जो सुखकी प्राप्ति होय। ये वचन कह श्रीराम तो चुप होय रहे अर और पुरुषनिने दूतको बहुरि बात न करने दई निकाल दिया। दूत रामके अनुचरनिने तीक्ष्ण बाणरूप वचननिकर बींधा, अर अति निरादर किया तब

रावणके निकट गया, मनविषैं पीड़ा थका, सो जायकर रावणसूं कहता भया—हे नाथ ! मैं तिहारे आदेश प्रमाण रामसों कही जो या पृथिवी नाना देशनिकर पूर्ण समुद्रांत महा रत्ननिकी भरी विद्याधरोंके समस्त पट्टनसहित मैं तुमको दूं हूं, अर बड़े बड़े हाथी रथ तुरंग दूं हूँ, अर यह पुष्पक विमान लेवहु, जो देवोंसे न निवारा जाय याविषैं बैठ विचरो, अर तीन हजार कन्यायें अपने परिवारकी तुमको परिणाय दूं, अर सिंहासन सूर्य समान, अर चंद्रमा समान छत्र वे लेहु, अर निःकंटक राज करो, एती बात मुझे प्रमाण है जो तिहारी आज्ञाकर सीता मोहि इच्छे, यह धन अर धरा लेवो अर मैं अल्प विभूति राखि बेंतहीके सिंहासन पर रहूंगा। विचक्षण हो तो एक वचन मेरा मानहु सीता मोहि देवहु। ए वचन मैं वार वार कहे सो रघुनन्दन सीताका हठ न छोड़ैं, केवल वाके सीताका अनुराग है और वस्तुकी इच्छा नाहीं। हे देव ! जैसें मुनि महा शांतचित्त अठाईस मूलगुणोंकी क्रिया न तजैं, वह क्रिया मुनिव्रतका मूल है, तैसें राम सीताकूं न तजैं, सीता ही रामके सर्वस्व है। कैसी है सीता ? त्रैलोक्यविषैं ऐसी सुन्दरी नाहीं। अर रामने तुमसूं यह कही है कि हे दशानन ! ऐसे सर्वलोकनिंद्य वचन तुमसे पुरुषनिकूं कहना योग्य नाहीं, ऐसे वचन पापी कहै हैं। उनकी जीभके सौ टूक क्यों न होंय ? मेरे या सीता बिना इन्द्रके भोगनिकर कार्य नाहीं। यह सर्व पृथिवी तू भोग, मैं वनवास ही करूंगा। अर तू परदारा हरकर मरवेको उद्यमी भया है, तो मैं अपनी स्त्रीके अर्थ क्यों न मरूंगा ? अर मुझे तीन हजार कन्या देहै सो मेरे अर्थ नाहीं, मैं वनके फल अर पत्रादिक ही भोजन करूंगा अर सीता-सहित वनमें विहार करूंगा। अर कपिध्वजोंका स्वामी सुग्रीव ताने हंसकर मोहि कही—जो कहा तेरा स्वामी आग्रहरूप ग्रहके वश भया है ? कोऊ वायुका विकार उपजा है जो ऐसी विपरीत वार्ता रंक हुवा बकै है ? अर कहा लंकामें कोऊ वैद्य नाहीं, अक मंत्रवादी नाहीं, वायके तैलादिककर यत्न क्यों न करै, नातर संग्रामविषैं लक्ष्मण सर्व रोग निवारेगा। भावार्थ—मारेगा।

तब यह सुन मैं क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भया, अर सुग्रीवसूं कही—रे वानर-ध्वज ! तू ऐसैं वकै है, जैसैं गजके लार स्वान बकै। तू रामके गर्वकर मूवा चाहै है, जो चक्र-वर्तीकूं निन्दाके वचन कहै है ? सो मेरे अर सुग्रीवके बहुत बात भई। अर विराधितसे कहा अधिक कहा कहो तिहारी ऐसी शक्ति है, मेरे अकेलेके ही साथ युद्ध कर ले, अर रामसों कहा-हे राम ! तुम महारणविषैं रावणका पराक्रम न देखा, कोऊ तिहारे पुण्यके योग कर वह वीर विक-राल क्षमामें आया है। वह कैलाशका उठावनहारा, तीन जगतमें प्रसिद्ध प्रतापी, तुमसे हित किया चाहै है, अर राज्य देय है, ता समान और कहा ! तुम अपनी भुजानिकर दशमुखरूप समुद्रकूं कैसैं तरौगे। कैसा है दशमुखरूप समुद्र ? प्रचंड सेना सोई भई तरंगनिकी माला तिन कर पूर्ण है, अर शस्त्ररूप जलचरनिके समूह कर भरा है। हे राम ! तुम कैसे रावणरूप भयंकर

वनविषैं प्रवेश करोगे? कैसा है रावण रूप वन? दुर्गम कहिए जाविषैं प्रवेश करना कठिन है, अर व्याल कहिए दुष्ट गज, तेई भए नाग, तिनकर पूर्ण है, अर सेनारूप वृक्षनिके समूहकर महा विषम है। हे राम! जैसे कमलपत्रकी पवनकर सुमेरु न डिगै, अर सूर्यकी किरण कर समुद्र न सूकै, अर बलदके सींगोंसे धरती न उठाई जाय, तैसैं तुम सारिखे नरनिकर नरपति दशानन जीता न जाय। ऐसे प्रचंड वचन मैं कहे, तब भामंडलने महाक्रोधरूप होय मोहि मारिवेकूं खड्ग काढ्या, तब लक्ष्मणने मनें किया, जो दूतकूं मारना न्यायमें नहीं कहा। स्यालपर सिंह कोप न करै, जो सिंह गजेन्द्रके कुम्भस्थल अपने नखनिसैं विदारै। तातैं हे भामंडल! प्रसन्न होवहु, क्रोध तजहु। जे शूरवीर नृपति हैं महा तेजस्वी, ते दीननिपर प्रहार न करै। जो भयकर कंपायमान होय ताहि न हनैं। श्रवण कहिए मुनि, अर ब्राह्मण कहिए व्रतधारी गृहस्थी, अर शून्य कहिए सूना, अर स्त्री बालक वृद्ध पशु पक्षी दूत ए अवध्य हैं, इनको शूरवीर सर्वथा न हनैं, इत्यादि वचननिके समूहकर लक्ष्मण महापंडित ताने समझाय भामंडलकूं प्रसन्न किया। अर कपिध्वजनिके कुमार महाक्रूर तिन वज्र-समान वचननिकर मोहि बींधा, तब मैं उनके असार वचन सुन आकाशमें गमनकर आयु-कर्मके योगसे आपके निकट आया हू। हे देव! जो लक्ष्मण न होय तो आज मेरा मरण ही होता, जो शत्रुनिके अर मेरे विवाद भया सो मैं सब आपसूं कहा, मैं कछु शंका न राखी। अब आपके मनमें जो होय सो करो, हम सारिखे किंकर तो वचन करें हैं जो कहो सो करैं। या भांति दूत दशमुखसे कहता भया। यह कथा गौतम गणधर श्रेणिकसे कहैं हैं—हे श्रेणिक! जो अनेक शास्त्रनिके समूह जानें, अर अनेक नयविषें प्रवीण होय, अर जाके मंत्री भी निपुण होय, अर सूर्य सारिखा तेजस्वी होय तथापि मोहरूप मेघपटलकर आच्छादित भया प्रकाश-रहित होय है यह मोह महा अज्ञानका मूल विवेकियोंको तजना योग्य है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रावणके दूतका आगमन बहुरि पाछा रावण पर गमन वर्णन करनेवाला छियासठवां पर्व पूर्ण भया ॥६६॥

सरसठवां पर्व

[बहुरूपिणी विद्या साधनके लिए रावण द्वारा शान्तिनाथ मन्दिर में पूजाका आयोजन]

अथानंतर लंकेश्वर अपने दूतके वचन सुन, क्षण एक मंत्रके ज्ञाता मन्त्रियोंसे मन्त्रकर, कपोलपर हाथ धर अधोमुख होय कछुएक चितारूप तिष्ठा अपने मनमें विचारै है--जो शत्रुकूं युद्धविषैं जीतूं हूं तो भ्राता पुत्रनिकी अकुशल दीखै है, अर जो कदाचित् वैरिनिके कटकमें मैं

रतिहावकर कुमारनिकूं ले आऊं तो या शूरतामें न्यूनता है । रतिहात्र क्षत्रियोंके योग्य नाहीं,कहा करूं, कैसैं मोहि सुख होय ? यह विचार करते रावणकूं यह बुद्धि उपजी जो मैं बहुरूपिणी विद्या साधूं । कैसी है बहुरूपिणी जो कदाचित् देव युद्ध करे तो भी न जीती जाय, ऐसा विचारकर सर्व सेवकनिकूं आज्ञा करी-श्रीशांतिनाथके मंदिरमें समीचीन तोरणादिकनिकर अति शोभा करहु, अर सर्व चैत्यालयनिमें विशेष पूजा करहु। सर्व भार पूजा प्रभावनाका मंदोदरीके सिरपर धरया । गौतम गणधर कहे हैं--हे श्रेणिक ! वह श्रीमुनिसुव्रतनाथ वीसमां तीर्थंकरका समय, ता समय या भरत-क्षेत्रविषैं सर्व ठौर जिनमंदिर हुते, यह पृथिवी जिनमंदिरनिकर मंडित हुती, चतुर्विध संघकी विशेष प्रवृत्ति, राजा श्रेष्ठि ग्रामपति अर प्रजाके लोग सकल जैनी हुते, सो महारमणीक जिन-मंदिर रचते, जिनमंदिर जिनशासनके भक्त जो देव तिनसे शोभायमान, वे देव धर्मकी रक्षामें प्रवीण, शुभ कार्यके करणहारे, ता समय पृथिवी भव्यजीवनिकरि भरी ऐसी सोहती मानों स्वर्ग-विमान ही है । ठौर ठौर पूजा, ठौर ठौर प्रभावना, ठौर ठौर दान । हे मगधाधिपति ! पर्वत पर्वत-विषैं, गांव गांवविषैं नगर नगरविषैं, वन वनविषैं, मंदिर मंदिरविषैं, जिनमंदिर हुते, महा शोभा-कर संयुक्त, शरदके पूनोंके चन्द्रमासमान उज्ज्वल, गीतोंकी ध्वनिकर मनोहर, नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्दकर मानों समुद्र गाजै है । अर तीनों संध्या वंदनाकूं लोग आवैं, सो साधुवोंके संगसे पूर्ण नानाप्रकारके आश्चर्यकर संयुक्त, नाना प्रकारके चित्रामको धरैं, अगर चंदनका धूप अर पुष्पनिकी सुगंधताकर महा सुगन्धमई, महा विभूतिकरि युक्त, नाना प्रकारकर शोभित, महा विस्तीर्ण, महा उतंग, महा ध्वजानिकर विराजित, तिनमें रत्नमई तथा स्वर्णमई पंचवर्णकी प्रतिमा विराजैं, विद्याधरनिके स्थानविषैं अति सुन्दर जिनमंदिरनिके शिखर तिनकर अति शोभा होय रही है । ता समय नाना प्रकारके रत्नमई उपवनादिसे शोभित जे जिनभवन तिनकर यह जगत् व्याप्त, अर इंद्रके नगर समान लंकाका अंतर बाहिर जिनेंद्रके मंदिरनिकर मनोज्ञ था सो रावणने विशेष शोभा कराई । अर आप रावण अठारह हजार राणी वेई भई कमलनिके वन तिनको प्रफुल्लित कर्ता वर्षाके मेघ समान है स्वरूप जाका सो महा नागसमान है भुजा जाकी पूर्णमासीके चंद्रमा समान वदन सुंदर केतकीके फूल समान लाल होंठ विस्तीर्ण नेत्र स्त्रीनिका मन हरणहारा लक्ष्मण--समान श्याम सुंदर दिव्यरूपका धरणहारा सो अपने मंदिरनिविषैं तथा सर्व क्षेत्रविषैं जिनमंदिरनिकी शोभा करावता भया । कैसा है रावणका घर ? लग रहे हैं लोगनिके नेत्र जहां, अर जिनमंदिरनिकी पंक्तिकर मंडित नाना प्रकारके रत्नमई मंदिरके मध्य उतंग श्रीशांतिनाथका चैत्यालय, जहां भगवान् शांतिनाथ जिनकी प्रतिमा विराजै। जे भव्य जीव हैं ते सकल लोकचरित्र-को असार अशाश्वता जानकर धर्मविषैं बुद्धि धरैं जिनमंदिरनिकी महिमा करैं । कैसे हैं जिनमंदिर ? जगत्कर वंदनीक हैं अर इंद्रके मुकुटके शिखरविषैं लगे जे रत्न तिनकी ज्योतिको

अपने चरणनिके नखोंकी ज्योतिकर बढावनहारे हैं, धन पावनेका यही फल जो धर्म करिए। सो गृहस्थका धर्म दान पूजारूप अर यतिका धर्म शांतभावरूप। या जगतविषैं यह जिनधर्म मनवांछित फलका देनहार है, जैसें सूर्यके प्रकाशकर नेत्रनिके धारक पदार्थनिका अवलोकन करैं हैं तैसैं जिनधर्मके प्रकाशकर भव्यजीव निज भावका अवलोकन करैं हैं।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीशांतिनाथके चैत्यालयका वर्णन करनेवाला सरसठवां पर्व पूर्ण भया ॥६७॥

अड़सठवां पर्व

[लंकामे अष्टान्हिक महा महोत्सव के समय सिद्ध चक्रव्रतकी आराधना]

अथानंतर फाल्गुण सुदी अष्टमीसूं लेय पूर्णमासी पर्यंत सिद्धचक्रका व्रत है जाहि अष्टाह्निका कहै है सो इन आठ दिननिमें लंकाके लोग, अर लशकरके लोग नियम ग्रहणको उद्यमी भए। सर्व सेनाके उत्तम लोक मनमें यह धारणा करते भए जो यह आठ दिन धर्मके हैं सो इन दिननिमें न युद्ध करैं, न और आरम्भ करैं, यथाशक्ति कल्याणके अर्थ भगवान्की पूजा करेंगे, अर उपवासादि नियम करेंगे। इन दिननिविषैं देव भी पूजा प्रभावनाविषैं तत्पर होय हैं। क्षीरसागरके जे सुवर्णके कलश जलकर भरे तिनकर देव भगवान्का अभिषेक करैं हैं। कैसा है जल? सत्पुरुषनिके यशसमान उज्ज्वल। अर और भी जे मनुष्यादिक हैं तिनकूं भी अपनी शक्तिप्रमाण पूजा अभिषेक करना। इंद्रादिक देव नंदीश्वर द्वीप जायकर जिनेश्वरका अर्चन करैं हैं तो कहा ये मनुष्य अपनी शक्तिप्रमाण यहांके चैत्यालयनिका पूजन न करैं? करैं ही करैं। देव स्वर्ण-रत्ननिके कलशनिकरि अभिषेक करैं हैं अर मनुष्य अपनी संपदा प्रमाण करैं, महा निर्धन मनुष्य होय तो पलाशपत्रनिके पुटहीसे अभिषेक करैं। देव रत्न स्वर्णके कमलनिसे पूजा करैं हैं, निर्धन मनुष्य चित्तही रूप कमलनिसे पूजा करैं हैं। लंकाके लोक यह विचारकर भगवान्के चैत्यालयनिकूं उत्साहसहित ध्वजा पताकादिकर शोभित करते भए, वस्त्र स्वर्ण रत्नादिकर अति शोभा करी रत्ननिकी रज अर कनकरज तिनके मंडल मांडे, अर देवालयनिके द्वार अति सिंगारे, अर मणि सुवर्णके कलश कमलनिसे ढके दधि दुग्ध घृतादिसे पूर्ण मोतियोंकी माला है कंठमें जिनके, रत्ननिकी कांतिकर शोभित, जिनबिंबोंके अभिषेकके अर्थ भक्तिवंत लोक लाये, जहां भोगी पुरुषोंके घरमें सैकड़ों हजारों मणिसुवर्णोंके कलश हैं। नंदनवनके पुष्प, अर लंकाके वननिके नाना प्रकारके पुष्प, कर्णिकार अतिमुक्त कदंब सहकार चंपक पारिजात मंदार, जिनकी सुगंधताकर भ्रमरनिके समूह गुंजार करैं हैं, अर मणि सुवर्णादिकके कमल तिनकर पूजा करते

भए। अर ढोल मृदंग ताल शंख इत्यादि अनेक वादित्रनिके नाद होते भए। लंकापुरके निवासी वैर तज आनन्दरूप होय आठ दिनमें भगवानकी अति महिमाकर पूजा करते भए, जैसें नंदीश्वर द्वीपविषैं देव पूजाके उद्यमी होंय तैसें लंकाके लोक लंकाविषैं पूजाके उद्यमी भए। अर रावण विस्तीर्ण प्रतापका धारक श्रीशांतिनाथके मंदिरविषैं जाय पवित्र होय भक्तिकर महा मनोहर पूजा करता भया जैसें पहिले प्रतिवासुदेव करैं। गौतम गणधर कहै हैं--हे श्रेणिक! जे महा विभव-कर युक्त भगवानके भक्त महाविभूतिवंत अति महिमाकर प्रभुका पूजन करैं हैं तिनके पुण्यके समूहका व्याख्यान कौन कर सकै? वे उत्तम पुरुष देवगतिके सुख भोगें बहुरि चक्रवर्तियोंके भोग पावैं, बहुरि राज्य तज जैनमतके व्रत धार महा तपकर परम मुक्ति पावैं। कैसा है तप? सूर्यहूतैं अधिक है तेज जाका।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराणसंस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं श्रीशांतिनाथके चैत्यालयविषैं अष्टान्हिकाका उत्सव वर्णन करनेवाला अडसठवां पर्व पूर्ण भया॥६८॥

उनहत्तरवां पर्व

[रावणका आष्टान्हिका पर्वके समय लोगोंको व्रत-नियम धारण करनेका आदेश]

अथानन्तर महाशांतिका कारण श्रीशांतिनाथका मंदिर कैलाशके शिखर अर शरदके मेघ समान उज्ज्वल, महा देदीप्यमान, मंदिरोंकी पंक्तिकर मंडित, जैसें जम्बूद्वीपके मध्य महा उतंग सुमेरु पर्वत सोहै तैसें रावणके मंदिर-के मध्य जिनमंदिर सोहता भया। तहां रावण जाय विद्याके साधनमें आसक्त है चित्त जाका, अर स्थिर है निश्चय जाका, परम अद्भुत पूजा करता भया। भगवानका अभिषेक कर अनेक वादित्र बजावता, अति मनोहर द्रव्यनिकर, महासुगन्ध धूपकर, नानाप्रकारकी सामग्री कर, शांतचित्त भया शांतिनाथकी पूजा करता भया मानों दूजा इंद्र ही है। शुक्ल वस्त्र पहिरे महासुन्दर जे भुजबंध तिनकर शोभित हैं भुजा जाकी, सिरके केश भली भांति बांध तिनपर मुकुट धर, तापर चूडामणि लहलहाट करती महाज्योतिकूं धरे, रावण दोनों हाथ जोड गोडोंसें धरतीकूं स्पर्शता मन वचन कायकर शांतिनाथकूं प्रणाम करता भया। श्रीशांतिनाथके सन्मुख निर्मल भूमिमें खडा अत्यन्त शोभता भया। कैसी है भूमि? पद्मराग मणिकी है फर्श जाविषैं, अर रावण स्फटिकमणिकी माला हाथविषैं, अर उरविषैं धरे कैसा सोहता भया मानों बकपंक्तिकर संयुक्त कारी घटाका समूह ही है, वह राक्षसनिका अधिपति महा धीर विद्याका साधन आरम्भता भया। जब शांतिनाथके चैत्यालय गया ता पहिले मंदोदरीको यह

आज्ञा करी जो तुम मंत्रिनिकूं, अर कोटपालकूं बुलायकर यह घोषणा नगरमें फेरियो जो सर्व-लोक दयाविषैं तत्पर नियम धर्मके धारक होवैं, समस्त व्यापार तज जिनेंद्रकी पूजा करहु। अर अर्थी लोगनिकूं मनवांछित धन देवहु, अहंकार तजहु। जौंलग मेरा नियम न पूरा होय तौंलग समस्त लोग श्रद्धाविषैं तत्पर संयमरूप रहो, जो कदाचित कोई बाधा करै, तो निश्चयसेती सहियो, महाबलवान होय सो बलका गर्व न करियो। इन दिवसनिविषैं जो कोऊ क्रोधकर विकार करेगा सो अवश्य सजा पावेगा। जो मेरे पितासमान पूज्य होय, अर इन दिननिविषैं कषाय करै, कलह करै ताहि मैं मारूं, जो पुरुष समाधिमरणकर युक्त न होय, सो संसारसमुद्रको न तिरैं जैसैं अंधपुरुष पदार्थनिकूं न परखे तैसैं अविवेकी धर्मकूं न निरखैं। तातैं सब विवेकरूप रहियो, कोऊ पापक्रिया न करने पावैं। यह आज्ञा मंदोदरीको कर रावण जिनमंदिर गए। अर मंदोदरी मंत्रियोंको अर यमदंडनामा कोटपालकूं द्वारे बुलाय पतिकी आज्ञा करती भई। तब सबने कही जो आज्ञा होय-गी सो ही करैंगे। यह कह आज्ञा सिरपर धर घर गए अर संयमसहित नियम धर्मके उद्यमी होय नृपकी आज्ञा प्रमाण करते भए। समस्त प्रजाके लोग जिनपूजाविषैं अनुरागी होते भए। अर समस्त कार्य तज सूर्यकी कांतितें हू अधिक है कांति जिनकी ऐसे जे जिनमंदिर तिनविषैं तिष्ठे, निर्मल भावकर युक्त संयम नियमका साधन करते भये॥

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं लंक के लोगनिका अनेकानेक नियम धारण वर्णन करनेवाला उन्हत्तरवां पर्व पूर्ण भया॥६९॥

सत्तरवां पर्व

[रावणका विद्या साधना और वानर वंशी कुमारों केद्वारा लंकामे उपद्रव करना]

अथानन्तर श्रीरामके कटकमें हलकारोंके मुख यह समाचार आए। कि रावण बहु-रूपिणी विद्याके साधनको उद्यमी भया श्रीशांतिनाथके मंदिरमें विद्या साधे है, चौबीस दिनमें यह बहुरूपणी विद्या सिद्ध होयगी। यह विद्या ऐसी प्रबल है जो देवनिका मद हरै। सो समस्त कपि-ध्वजनिने यह विचार किया कि जो वह नियम में बैठा विद्या साधै है सो ताकों क्रोध उपजावैं यह विद्या सिद्ध न होय, तातैं रावणको कोप उपजावनेका यत्न करना, जो वाने विद्या सिद्ध कर पाई तो इन्द्रादिक देवनिकरहू न जीता जाय, हम सारिखे रंकनिकी कहा बात? तब विभीषण कही--जो कोप उपजावनेका उपाय शीघ्रही करो। तब सबने मंत्र कर रामसूं कहा कि लंका लेने का यह समय है। रावणके कार्यमें विघ्न करिए, अर अपनेकूं जो करना होय सो करिए। तब कपिध्व-जनिके यह वचन सुन श्रीरामचन्द्र महाधीर महा पुरुषनिकी है चेष्टा जिनकी, सो कहते भए--हो

विद्याधर हो ! तुम महामूढताके वचन कहो हो, क्षत्रिनिके कुलका यह धर्म नाहीं, जो ऐसे कार्य करें। अपने कुलकी यह रीति है जो भयकर भाजे ताका वध न करना, तो जे नियमधारी जिन-मंदिरमें बैठे हैं, तिनसे उपद्रव कैसे करिए। यह नीचनिके कर्म हैं सो कुलवंतनिको योग्य नाहीं। यह अन्याय प्रवृत्ति क्षत्रियनिकी नाहीं, कैसे हैं क्षत्री ? महामान्यभाव अर शस्त्रकर्मविषै प्रवीण। यह वचन रामके सुन सबने विचारी जो हमारा प्रभु श्रीराम महा धर्मधारी है, उत्तम भावका धारक है सो इनकी कदाचित् हू अधर्मविषैं प्रवृत्ति न होयगी। तब लक्ष्मणकी जानमें इन विद्याधरनि-ने अपने कुमार उपद्रवको विदा किए, अर सुग्रीवादिक बड़े बड़े पुरुष आठ दिनका नियम धर तिष्ठे, अर पूर्ण चन्द्रमा--समान वदन जिनके कमल समान नेत्र नाना लक्षणके धरणहारे सिंह व्याघ्र वराह गज अष्टापद इनकर युक्त जे रथ तिनविषै बैठे, तथा विमाननिमें बैठे, परम आयुधनि-को धरे कपियोंके कुमार रावणको कोप उपजायवेका है अभिप्राय जिनके मानों यह असुरकुमार देव ही हैं, प्रीतंकर दृढरथ चन्द्राभ रतिवर्धन वातायन गुरुभार सूर्यज्योति महारथ सामंत बल नंदन सर्वदृष्ट सिंह सर्वप्रिय नल नील सागर घोषपुत्र सहित पूर्ण चन्द्रमा स्कंध चन्द्र मारीच जांबव संकट समाधि बहुल सिंहकट चन्द्रासन इन्द्रामणि बल तुरंग सब इत्यादि अनेक कुमार तुरंगनिके रथ चढ़, अर अन्य कैयक सिंह वाराह गज व्याघ्र इत्यादि मनहूतैं चंचल जे वाहन तिनपर चढ़े पयादनिके पटल तिनके मध्य महातेजको धरे नानाप्रकारके चिन्ह तिनकरि युक्त हैं छत्र जिनके, अर नानाप्रकारकी ध्वजा फहरैं हैं, जिनके, महा गंभीर शब्द करते, दशोंदिशाको अच्छादित करते, लंकापुरीमें प्रवेश करते भए। मनविषैं विचार करते भए बड़ा आश्चर्य है जो लंकाके लोक निश्चिंत तिष्ठैं हैं। जानिये है कछू संग्रामका भय नाहीं,अहो लंकेश्वरका बड़ा धैर्य महागंभीरता देखहु, जो कुम्भकरणसे भाई अर इंद्रजीत मेघनादसे पुत्र पकड़े गए हैं तो हू चिंता नाहीं, अर अक्षादिक अनेक योधा युद्धविषैं हते गए, हस्त प्रहस्त सेनापति मारे गए, तथापि लंकापतिको शंका नाहीं, ऐसा चिंतवन करते परस्पर वार्तालाप करते नगरमें बैठे। तथा विभीषणका पुत्र सुभूषण कपि कुमारनिकूं कहता भया तुम निर्भय लंकामें प्रवेश करहु, बाल वृद्ध स्त्री इनसूं तो कछु न कहना, अर सबकूं व्याकुल करेंगे। तब याका वचन मान विद्याधर कुमार महा उद्धत कलहप्रिय आशीविष समान प्रचण्ड व्रतरहित चपल चंचल लंकाविषैं उपद्रव करते भए। सो तिनके महा भयानक शब्द सुन लोक अति व्याकुल भए। अर रावणके महल हू में व्याकुलता भई जैसें तीव्र पवनकर समुद्र क्षोभकूं प्राप्त होय तैसैं लंका कपि कुमारनिसूं उद्वेग को प्राप्त भई। रावणके महलविषै राजलोकनिकूं चिंता उपजी। कैसा है रावणका मन्दिर ? रत्ननिकी कांतिकर दैदीप्यमान है, अर जहां मृदंगादिकके मंगल शब्द होवैं हैं, जहां निरन्तर स्त्रीजन नृत्य करैं हैं। अर जिनपूजाविषै उद्यमी राजकन्या धर्म मार्गविषैं आरूढ सो शत्रुसेनाके क्रूर शब्द सुन आकुलता

उपजी, स्त्रीनिके आभूषणनिके शब्द होते भए मानों बीणा बाजै हैं। सब मनमें विचारती भई--न जानिए कहा होय। या भांति समस्त नगरीके लोग व्याकुलताकूं प्राप्त होय विह्वल भए, तब मन्दोदरीका पिता राजा मय विद्याधरनिविषै दैत्य कहावै सो सब सेनासहित बक्तर पहर आयुध धार महा पराक्रमी युद्धके अर्थ उद्यमी होय राजद्वार आया जैसे इन्द्रके भवन हिरण्यकेशी देव आवै। तब मंदोदरी पितासे कहती भई--हे तात! जा समय लंकेश्वर मंदिर पधारे ता समय आज्ञा करी जो सब लोक सम्बररूप रहियो, कोई कषाय मत करियो, तातैं तुम कषाय मत करहु। ये दिन धर्मध्यानके हैं सो धर्म सेवो और भांति करोगे तो स्वामीकी आज्ञा भंग होगी, अर तुम भला फल न पावोगे। ये वचन पुत्रीके सुन राजा मय उद्धतता तज महा शांत होय शस्त्र डारते भए, जैसे अस्त समय सूर्य किरणोंको तजै, मणियोंके कुंडलनि कर मंडित अर हार कर शोभै है वक्षस्थल जाका, अपने जिनमंदिरमें प्रवेश करता भया। अर ये वानरवंशी विद्याधरनिके कुमारनिने निज मर्यादा तज नगरका कोट भंग किया, वज्रके कपाट तोड़े दरवाजे तोडे।

अथानंतर इनको देख नगरके वासियोंको अति भय उपज्या, घर घरमें ये बात होय हैं भजकर कहां जाइए, ये आए, बाहिर खड़े मत रहो, भीतर धसो, हाय मात, यह कहा भया? हे तात देखो, हे भ्रात हमारी रक्षा करो, हे आर्यपुत्र, महा भय उपजा है ठिकाने रहो। या भांति नगरीके लोक व्याकुलताके वचन कहते भए। लोक भाग रावणके महलविषै आए अपने वस्त्र हाथनिमें लिए अति विह्वल बालकनिको गोदमें लिए स्त्रीजन कांपती भागी जाय हैं, कैयक गिर पडीं सो गोडे फूट गए, कैयक चली जाय हैं हार टूट गए सो बड़े बड़े मोती बिखरै हैं, जैसे मेघमाला शीघ्र जाय तैसे जाय हैं। त्रासको पाई जो हिरणी ता समान हैं नेत्र जिनके, अर ढीले होय गए हैं केशनिके बंधन जिनके, अर कोई भयकर प्रीतमके उरसे लिपट गई। या भांति लोकनिको उद्वेगरूप महा भय भीत देख जिनशासनके देव श्रीशांतिनाथके मंदिरके सेवक अपनी पक्षके पालनेको उद्यमी करुणावंत जिनशासनके प्रभाव करनेकूं उद्यमी भए। महाभैरव आकार धरे शांतिनाथके मंदिरसे निकसे नाना भेष धरे विकराल हैं दाढ जिनकी, भयंकर है मुख जिनका, मध्याह्नके सूर्य समान तेज हैं नेत्र जिनके, होंठ डसते दीर्घ है काया जिनकी, नाना वर्ण भयंकर शब्द महा विषम भेषको धरे, विकराल स्वरूप तिनकूं देखकर वानरवंशियोंके पुत्र महा भयंकर अत्यंत विह्वल भए। वे देव क्षणविषैं सिंह, क्षणविषैं मेघ, क्षणविषैं हाथी, क्षणविषैं सर्प, क्षणविषैं वायु, क्षणविषैं वृक्ष, क्षणविषैं पर्वत, सो इनकर कपिकुमारनिको पीड़ित देख कटकके देव मदद करते भए। देवनिमें परस्पर युद्ध भया लंकाके देव कटकके देवनिसे, अर कपिकुमार लंकाके सन्मुख भए तब यक्षनिके स्वामी पूर्णभद्र महाभद्र महा क्रोधकूं प्राप्त भए दोनों यक्षेश्वर परस्पर वार्ता करते भए-देखो ए निर्दई कपिनिके पुत्र महाविकारकूं प्राप्त भए हैं। रावण तो निराहार

होय देहविषैं निस्पृह, सर्व जगत्का कार्य तज पोसे बैठा है सो ऐसे शांत चितकूं यह छिद्र पाय पापी पीड़ा चाहे हैं सो यह योधावोंकी चेष्टा नाहीं। यह वचन पूर्णभद्रके सुन मणिभद्र बोला-अहो पूर्णभद्र! रावणका इंद्र भी पराभव करिवे समर्थ नाहीं, रावण सुंदर लक्षणनिकर पूर्ण शांत स्वभाव है। तब पूर्णभद्रने कही-जो लंकाको विघ्न उपजा है सो आपां दूर करेंगे,यह वचन कहकर दोनों धीर सम्यग्दृष्टि जिनधर्मी यक्षनिके ईश्वर युद्धकूं उद्यमी भए सो वानरवंशनिके कुमार और उनके पक्षी देव सब भागे। ये दोनों यक्षेश्वर महावायु चलाय पाषाण बरसावते भए अर प्रलय कालके मेघ समान गाजते भए। तिनके जांघोंकी पवनकर कपिदल सूके पानकी न्याई उड़े, तत्काल भाग गए। तिनके लार ही ये दोनों यक्षेश्वर रामके निकट उलाहना देनेको आए। सो पूर्णभद्र सुबुद्धि रामको स्तुति कर कहते भए—राजा दशरथ महा धर्मात्मा तिनके तुम पुत्र, अर अयोग्य कार्यके त्यागी, सदा योग्य कार्यनिके उद्यमी शास्त्रसमुद्रके पारगामी, शुभ गुणनिकर सकलविषै ऊंचे, तिहारी सेना लंकाके लोकनिकूं उपद्रव करै, यह कहांकी बात? जो जाका द्रव्य हरै सो ताका प्राण हरै है, यह धन जीवनिके बाह्य प्राण हैं। अमोलक हीरे वैडूर्य मणि मूंगा मोती पद्मराग मणि इत्यादि अनेक रत्ननिकरि भरी लंका उद्वेगको प्राप्त करी। तब यह वचन पूर्णभद्रके सुन रामका सेवक गरुड़केतु कहिए लक्ष्मण नीलकमल समान,सो तेजसे त्रिविध-रूप वचन कहता भया। ये श्रीरघुचंद तिनके रानी सीता प्राणहूंतै प्यारी, शीलरूप आभूषणकी धारणहारी, वह दुरात्मा रावण छलकर हर ले गया ताका पक्ष तुम कहा करो? हे यक्षेन्द्र! हमने तिहारा कहा अपराध किया, अर तानैं कहा किया,जो तुम भृकुटी बांकी कर अर संध्याकी ललाई समान अरुण नेत्रकर उलाहना देनेको आए सो योग्य नाहीं। एती वार्ता लक्ष्मणने कही अर राजा सुग्रीव अति भयरूप होय पूर्णभद्रको अर्घ देय कहता भया-हे यक्षेन्द्र! क्रोध तजो, अर हम लंकाविषैं कछु उपद्रव न करें। परन्तु यह वार्ता है रावण बहुरूपिणी विद्या साधै है सो जो कदाचित् ताकूं विद्या सिद्ध होय तो वाके सन्मुख कोई ठहर न सकै, जैसैं जिनधर्मके पाठकके सन्मुख वादी न टिकैं तातैं वह क्षमावंत होय विद्या साधै है सो ताकूं क्रोध उपजावेंगे जो विद्या साध न सकै जैसैं मिथ्यादृष्टि मोक्षकूं साध न सकै। तब पूर्णभद्र बोले-ऐसे ही करो परंतु लंकाके एक जीर्ण तृणकूं भी बाधा न कर सकोगे। अर तुम रावणके अंगको बाधा मत करो, अर अन्य बातनिकर क्रोध उपजावो। परंतु रावण अति दृढ है ताहि क्रोध उपजना कठिन है। ऐसे कह वे दोनों यक्षेंद्र भव्यजीवनिविषैं है वात्सल्य जिनका, प्रसन्न हैं नेत्र जिनके, मुनिनिके समूहोंके भक्त वैयाव्रतविषैं उद्यमी जिनधर्मी अपने स्थानक गए। रामको उलाहना देने आए थे सो लक्ष्मणके वचननि कर लज्जावान् भए, समभावकर अपने स्थानक गए सो जाय तिष्ठे। गौतम-स्वामी कहै हैं-हे श्रेणिक! जौलग निर्दोषता होय तौंलग परस्पर अति प्रीति होय। अर सदोषता

भए प्रीतिभंग होय जैसें सूर्य उत्पात सहित होय तो नीका न लगै ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथताकी भाषा वचनिकाविषैं रावणका विद्या साधना अर कपिकुमारनिका लंका गमन बहुरि पूर्णभद्र मणिभद्रका कोप, क्रोधकी शांति वर्णन करनेवाला सत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७०॥

इकहत्तरवां पर्व

[रावणके बहुरूपिणी विद्याका सिद्ध होना]

अथानंतर पूर्णभद्र मणिभद्रकूं शांतभाव जान सुग्रीवका पुत्र अंगद तानैं लंकाविषैं प्रवेश किया, सो अंगद किहकंधनामा हाथी चढ्या मोतिनिकी माला कर शोभित, उज्वल चमरनिकर युक्त ऐसा सोहता भया जैसा मेघमालाविषैं पूर्णमासीका चंद्रमा सोहै, अति उदार महा सामंत तथा स्कंध इंद्र नील आदि बड़ी ऋद्धिकर मंडित तुरंगनिपर चढ़े कुमार गमनको उद्यमी भए। अर अनेक पयादे चन्दन कर चर्चित हैं अंग जिनके, तांबूलनिकर लाल अधर, कांधे ऊपर खड्ग धरे, सुन्दर वस्त्र पहिरे, स्वर्णके आभूषणकर शोभित सुंदर चेष्टा धरैं, आगे पीछे अगल बगल पयादे चले जांय हैं, वीण बांसुरी मृदंगादि वादित्र बाजै हैं, नृत्य होता जाय है कपिवंशियोंके कुमार लंकाविषैं ऐसे पैठें जैसें स्वर्गपुरीविषैं असुरकुमार प्रवेश करै हैं। अंगदकूं लंकाविषैं प्रवेश करता देख स्त्रीजन परस्पर वार्ता करती भई—देखहु ! यह अंगदरूप चंद्रमा दशमुखकी नगरीविषैं निर्भय चला जाय है, याने कहा आरंभा ? आगे अब कहा होयगा ? या भांति लोक बात करै हैं। ए चले चले रावणके मंदिरविषैं गए सो मणियोंका चौक देख इन्होंने जानी ये सरोवर हैं सो त्रासको प्राप्त भए। बहुरि निश्चय देख मणियोंका चौक जाना तब आगे गए सुमेरुकी गुफा समान महारत्ननिकर निर्मापित मंदिरका द्वार देख्या, मणियोंके तोरणनिकर देदीप्यमान तहां अंजन पर्वत सारिखे इंद्रनीलमणिनिके गज देखे महास्कंध कुम्भस्थल जिनके स्थूल दंत अत्यंत मनोज्ञ, अर तिनके मस्तकपर सिंहनिके चिह्न जिनके सिरपर पूंछ हाथिनिके कुम्भस्थलपर सिंह विकराल वदन तीक्ष्ण दाढ डरावने केश तिनको देख पयादे डरे। जानिए सांचे ही हाथी हैं तब भयकर भागे अति विह्वल भए। अंगदने नीके समझाए तब आगे चले। रावणके महलविषैं कपिवंशी ऐसे जावैं जैसैं सिंहकी गुफाविषैं मृग जांय, अनेक द्वार उलंघ आगे जावेकूं समर्थ भए, घरनिकी रचना गहन सो ऐसैं भटकैं जैसैं जन्मका अंधा भ्रमैं, स्फटिकमणिके महल तहां आकाशकी आशंकाकर भ्रमकूं प्राप्त भए, अर इंद्र नीलमणिकी भांति सो अंधकारस्वरूप भासैं मस्तकविषैं शिलाकी लागी सो आकुल होय भूमिमें पडे, वेदनाकर व्याकुल है नेत्र जिनके, काहुप्रकार मार्ग पाय आगे गए जहां स्फटिक मणिकी भांति सो घननिके गोडे फूटे, ललाट फूटे, दुखी भए, तब

उलटे फिरे सो मार्ग न पावैं। आगे एक रत्नमई स्त्री देखी साक्षात् स्त्री जान तासैं पूछते भए सो वह कहा कहै ? तब महा शंकाके भरे आगे गए विह्वल होय स्फटिकमणिकी भूमिमें पड़े, आगे शांतिनाथके मंदिरका शिखर नजर आया, परंतु जाय सकै नाहीं, स्फटिककी भीति आड़ी, तब वह स्त्री दृष्टि पडी थी त्यों एक रत्नमई द्वारपाल दृष्टि परया, हेमरूप बैतकी छडी जाके हाथमें ताहि कही—श्रीशांतिनाथके मंदिरका मार्ग बताओ, सो वह कहा बतावै ? तब वाहि हाथसूं कूट्या सो कूटनहारेकी अंगुरी चूर्ण होय गई। बहुरि आगे गए, जाना यह इंद्रनीलमणिका द्वार है, शांतिनाथके चैत्यालयमें जानेकी बुद्धि करी, कुटिल हैं भाव जिनके आगे एक वचन बोलता मनुष्य देखा ताके केश पकडे अर कहा तू हमारे आगे आगे चल, शांतिनाथका मंदिर दिखाय। जब वह अग्रगामी भया तब ए निराकुल भए श्रीशांतिनाथके मंदिर जाय पहुँचे। पुष्पांजलि चढाय जयजय शब्द किए स्फटिकके थंभनिके ऊपर बडा विस्तार देख्या सो अचरजकूं प्राप्त भए मनमें विचारते भए जैसैं चक्रवर्तीके मंदिरमें जिनमंदिर होय तैसैं हैं। अंगद पहिले ही वाहनादिक तज भीतर गया, ललाटपर दोनों हाथ धर नमस्कार करि तीन प्रदक्षिणा देय स्तोत्र पाठ करता भया, सेना लार थी सो बाहिरले चौकविषैं छांडी। कैसा है अंगद? फूल रहे हैं नेत्र जाके रत्ननिके चित्रामकर मंडल लिखा सोलह स्वप्नेका भाव देखकर नमस्कार किया आदि मंडपकी भीतिविषै वह धीर भगवान्को नमस्कार कर शांतिनाथके मंदिरविषै गया, अति हर्षका भरा भगवानकी वंदना करता भया बहुरि देखै तो सन्मुख रावण पद्मासन धरैं तिष्टै है, इंद्रनीलमणिकी किरणनिके समूह समान है प्रभा जाकी, भगवानके सन्मुख बैठा है जैसैं सूर्यके सन्मुख राहु बैठा होय। विद्याको ध्यावै जैसैं भरत जिनदीक्षाको ध्यावै, सो रावणसूं अंगद कहता भया—हे रावण! कहो अब तेरी कहा वार्ता ? तोसूं ऐसी करूं जैसी यम न करै, तैंने कहा पाखंड रोप्या ? धिक्कार तो पापकर्मीकूं, वृथा शुभक्रियाका आरंभ किया है, ऐसा कहकरि याका उत्तरासन उतारया अर याकी रानीनिकूं याके आगे कूटता भया, कठोर वचन कहता भया। अर रावणके पास पुष्प पड़े हुते सो उठाय लिए, अर स्वर्णके कमलनिकर भगवानकी पूजा करी। बहुरि रावणसूं कुवचन कहता भया। अर रावणके हाथमें स्फटिककी माला छिनाय लई, सो मणियां बिखर गईं। बहुरि मणियें चुनी, माला पोय रावणके हाथविषैं दई, बहुरि छिनाय लई, बहुरि पोय गलेविषैं डाली बहुरि मस्तक पर मेली। बहुरि रावणका राजलोक सोई भया कमलनिका वन ताविषैं ग्रीष्मकर तप्तायमान जो वनका हाथी ताकी न्याईं प्रवेश किया अर निःशंक भया राजलोकमें उपद्रव करता भया, जैसैं चंचल घोड़ा कूदता फिरै तैसे चपलता करि भ्रमण किया, काहूके कंठविषैं कपड़ेका रस्सा बनाय बांध्या, अर काहूके कंठविषैं उत्तरासन डार थंभविषै बांध बहुरि छोड़ दिया, काहूको पकड अपने मनुष्यनिसे कही याहि बेच आवो, ताने हंसकर कही पांच दीनारनिको बेच

आया या भांति अनेक चेष्टा करी। काहूके काननविषैं घुंघुरू घाले, अर केशनिविषैं कटिमेखला पहिराई, काहूके मस्तकका चूड़ामणि उतार चरणनिविषैं पहिराया अर काहूको परस्पर केशनिकर बांधी। अर काहूके मस्तकविषैं शब्द करते मोर बैठाए। या भांति जैसे सांड गायनिके समूहविषैं प्रवेश करैं अर तिनकूं अति व्याकुल करैं, तैसैं रावणके समीप सब राजलोकनिकूं क्लेश उपजाया। अर अंगद क्रोधकर रावणसूं कहता भया—हे अधम राक्षस! तैंने कपटकर सीता हरी, अब हम तेरे देखते तेरी समस्त स्त्रीनिकूं हरैं हैं तोमें शक्ति होय तो यत्न कर, ऐसा कहकर याके आगे मंदोदरीकूं पकड़ ल्याया जैसे मृगराज मृगीकूं पकड़ ल्यावै। कंपायमान हैं नेत्र जाके, चोटी पकड़ खींचता भयो जैसें भरत राजलक्ष्मीको खींचैं। अर रावणसूं कहता भया—देख! यह पटरानी तेरे जीवहुतैं प्यारी मंदोदरी गुणवंती ताहि हम हर ले जांय हैं। यह सुग्रीवके चमरग्राहणी चेरी होयगी सो मन्दोदरी आंखनितैं आंसू डारती भई, अर विलाप करने लगी। रावणके पायनविषैं प्रवेश करैं कभी भुजानिविषैं प्रवेश करैं अर भरतारसों कहती भई हे नाथ! मेरी रक्षा करहु। ऐसी दशा मेरी कहा न देखो हो, तुम क्या और ही होय गए। तुम रावण हो, अक और ही हो। अहो जैसी निर्ग्रंथ मुनिकी वीतरागता होय, तैसी तुम वीतरागता पकड़ी, सो ऐसे दुःखमें यह अवस्था कहा? धिक्कार तिहारे बलको, जो या पापीका सिर खड्गसों न काटो। तुम महा बलवान् चांद सूर्य समान पुरुषोंका पराभव न सहो, सो ऐसे रंकका कैसे सहो। हे लंकेश्वर! ध्यानविषैं चित्त लगाया न काहूकी सुनो, न देखो, अर्धपर्यंकासन धर बैठे, अहंकार तज दिया, जैसा सुमेरुका शिखर अचल होय, तैसे अचल होय तिष्ठे सर्व इन्द्रियनिकी क्रिया तजी, विद्याके आराधनविषैं तत्पर निश्चल शरीर महाधीर ऐसे तिष्ठे हो मानों काष्ठके हो, अथवा चित्रामके हो, जैसे राम सीताको चिंतवे तैसे तुम विद्याको चिंतवो हो, स्थिरता कर सुमेरुके तुल्य भए हो। जब या भांति मंदोदरी रावणसे कहती भई, ताही समय बहुरूपिणी विद्या दशों दिशाविषै उद्योत करती जय जयकारका शब्द उच्चारती रावणके समीप आय ठाढी भई, अर कहती भई—हे देव! आज्ञामें उद्यमी मैं तुमको सिद्ध भई, मोहि आदेश देवहु। एक चक्री अर्धचक्रीको टार तिहारी आज्ञासे विमुख होय ताहि वश करूं या लोकविषैं तिहारी आज्ञाकारिणी हूं। हम सारिखनिकी यही रीति है जो हम चक्रवर्तियोंसे समर्थ नाहीं, जो तू कहे तो सर्व दैत्यनिको जीतूं देवनिकूं वश करूं, जो तोसे अप्रिय होय ताहि वशीभूत करूं, अर विद्याधर तो मेरे तृणसमान हैं। यह विद्याके वचन सुन रावण योग पूर्ण कर ज्योतिका धारक उदार चेष्टाका धरणहारा शांतिनाथके चैत्यालयकी प्रदक्षिणा करता भया। ताही समय अंगद मंदोदरीको छांड़ आकाश गमन कर रामके समीप आया, कैसा है अंगद? सूर्य समान है तेज जाका।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषा वचनिका विषै श्रीशांतिनाथके मंदिरमें रावणको बहुरूपिणीविद्याके सिद्ध होनेका वर्णन करनेवाला इकहत्तरवां पर्व पूर्ण भया॥७१॥

बहत्तरवां पर्व

[रावणका युद्धकेलिए पुनः संकल्प]

अथानंतर रावणकी अट्ठारह हजार स्त्री रावणके पास एक साथ सब ही रुदन करती भई, सुन्दर है दर्शन जिनका। हे स्वामिन्! सर्व विद्याधरनिके अधीश! तुम हमारे प्रभु सो तुमको होते संते मूर्ख अंगदने आयकर हमारा अपमान किया। तुम परम तेजके धारक सूर्य समान सो ध्यानारूढ हुते, अर विद्याधर आगिया (जुगनू) समान सो तिहारे मुंह आगिला छोहरा सुग्रीवका पुत्र पापी हमको उपद्रव करै। तिनके वचन सुनकर रावण सबको दिलासा करता भया अर कहता भया--हे प्रिये! वह पापी ऐसी चेष्टा करै है सो मृत्युके पाशकर बंधा है। तुम दुख तजो, जैसें सदा आनन्दरूप रहो हो ताही भांति रहो, मैं सुग्रीवको निग्रीव कहिए मस्तक-रहित भूमिपर प्रभात ही करूंगा। अर वे दोनों भाई राम लक्ष्मण भूमिगोचरी कीट समान हैं तिनपर कहा कोप, ये दुष्ट विद्याधर सब इनपै भेले भए हैं तिनका क्षय करूंगा, हे प्रिये! मेरी भौंह टेढी करनेहीमें शत्रु विलाय जाय, अर अब तो बहुरूपिणी महाविद्या सिद्ध भई, मोसे शत्रु कहा जीवें। या भांति सब स्त्रीनिकूं महाधैर्य बंधाय मनमें जानता भया मैं शत्रु हते। भगवान्के मंदिरसे बाहिर निकसा, नाना प्रकारके वादित्र वाजते भए, गीत नृत्य होते भए, रावणका अभिषेक भया, कामदेव समान है रूप जाका स्वर्ण रत्ननिके कलशनिकर स्त्री स्नान करावती भई। कैसी हैं स्त्री कांतिरूप चांदनीसे मंडित है शरीर जिनका, चन्द्रमा समान वदन, अर सुफेद मणिनिके कलशनिकर स्नान करावें। सो अद्भुत ज्योति भासती भई। अर कई एक स्त्री कमल समान कांतिको धरे-मानों सांझ फूल रही है, अर उगते सूर्य समान सुवर्णके कलश-निकर स्नान करावें, सो मानों सांझ ही जल बरसै हैं, अर कई एक स्त्री हरितमणिके कलशनि-कर स्नान करावती अति हर्षकी भरी शोभै हैं मानो साक्षात् लक्ष्मी ही हैं। कमलपत्र हैं कलश-निके मुखपर। अर कैयक केलेके गर्भ समान कोमल महासुगंध शरीर जिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं वे नाना प्रकारके सुगंध उबटनाकरि रावणको नाना प्रकारके रत्नजडित सिंहासनविषैं स्नान करावती भई। सो रावणने स्नानकर आभूषण पहिरे महा सावधान भावनिकर पूर्ण शांतिनाथके मंदिरमें गया। वहां अरहंतदेवकी पूजाकर स्तुति करता भया, बारंबार नमस्कार करता भया। बहुरि भोजनशालामें आया चार प्रकारका उत्तम आहार किया अशन पान खाद्य स्वाद्य। बहुरि भोजनकर विद्याकी परख निमित्त क्रीडा भूमिविषैं गया, वहां विद्याकर अनेकरूप बनाय नाना-प्रकारके अद्भुत कर्म विद्याधरनिसे न बनैं सो बहुरूपिणी विद्यासे किए, अपने हाथकी घातकरि भूकंप किया, रामके कटकविषैं कपियोंको ऐसा भय उपजा मानों मृत्यु ही आई। अर रावणकूं

मंत्री कहते भए--हे नाथ ! तुम टार राघवका जीतनहारा और नाहीं, राम महा योधा हैं और क्रोधवान होवैं तब कहा कहना ? सो ताके सन्मुख तुम ही आवहु अर कोई रणविषैं रामके सन्मुख आवनेको समर्थ नाहीं।

अथानंतर रावणने बहुरूपिणी विद्यासे मायामई कटक बनाया अर आप उद्यानविषैं जहां सीता तिष्ठै तहां गया मंत्रिनिकरि मंडित जैसैं देवनिकर संयुक्त इंद्र होय, सो सूर्यसमान कांतिकरि युक्त आवता भया तब ताकूं आवता देख विद्याधरी सीतासों कहती भई--हे शुभे ! महाज्योतिवंत रावण पुष्पक विमानसे उतरकर आया जैसैं ग्रीष्म ऋतुविषैं सूर्यकी किरणकरि आतापकूं पाता गजेंद्र सरोवरीके ओर आवै तैसैं कामरूप अग्निसे तापरूप भया आवै है। यह प्रमदनामा उद्यान पुष्पनिकी शोभाकर शोभित जहां भ्रमर गुंजार करै हैं। तब सीता बहुरूपिणी विद्याकर संयुक्त रावणकूं देखकर भयभीत भई मनमें विचारै है याके बलका पार नाहीं, सो राम लक्ष्मण हू याहि न जीतैंगे। मैं मंदभागिनी रामकूं, अथवा लक्ष्मणकूं, अथवा अपने भाई भामंडलकूं मत हना सुनूं। यह विचार कर व्याकुल है चित्त जाका कांपती चिंतारूप तिष्ठै है, तहां रावण आया सो कहता भया--हे देवी ! मैं पापीने तुझे कपटकर हरी सो यह बात क्षत्री-कुलविषैं उत्पन्न भए हैं जे धीर अतिवीर तिनको सर्वथा उचित नाहीं, परन्तु कर्म की गति ऐसी है, मोहकर्म बलवान है, अर मैं पूर्व अनंतवीर्यस्वामीके समीप व्रत लिया हुता जो परनारी मोहि न इच्छै ताहि मैं न ग्रहूं,उर्वशी रंभा अथवा और मनोहर होय तौ भी मेरे प्रयोजन नाहीं। यह प्रतिज्ञा पालते संते मैं तेरी कृपा ही की अभिलाषा करी, परन्तु बलात्कार रमी नाहीं। हे जगतविषैं उत्तम सुंदरी ! अब मेरी भुजानिकर चलाए जे बाण तिनसे तेरे अवलंबन राम लक्ष्मण भिदे ही जान, अर तू मेरे संग पुष्पक विमानमें बैठ आनंद से विहार कर। सुमेरुके शिखर चैत्य वृक्ष अनेक वन उपवन नदी सरोवर अवलोकन करती विहार कर। तब सीता दोऊ हाथ काननिपर धर गदगद वाणीसे दीन शब्द कहती भई—हे दशानन ! तू बड़े कुलविषैं उपजा है तो यह करियो जो कदाचित् संग्रामविषैं तेरे अर मेरे वल्लभके शस्त्रप्रहार होय तो पहले यह संदेशा कहे वगैर मेरे कंथकूं मत हतियो, यह कहियो—हे पद्म ! भामंडलकी बहिनने तुमकूं यह कहा है जो तिहारे वियोगकरि महाशोकके भारकरि महा दुखी हूं मेरे प्राण तिहारे तक ही हैं मेरी दशा यह भई है जैसैं पवनकी हती दीपककी शिखा, हे राजा दशरथके पुत्र ! जनककी पुत्रीने तुमकूं बारंबार स्तुतिकर यह कही है तिहारे दर्शनकी अभिलाषाकर यह प्राण टिक रहे हैं,ऐसा कहकर मूर्च्छित होय भूमिमें पड़ी,जैसैं माते हाथीतैं भग्न करी कल्पवृक्षकी वेल गिर पड़ै। यह अवस्था महासतीकी देख रावणका मन कोमल भया, परम दुःखी भया,यह चिन्ता करता भया,अहो कर्मनिके योगकर इनका निःसन्देह

स्नेहका क्षय नाहीं, अर धिक्कार मोकूं मैं अति अयोग्य कार्य किया जो ऐसे स्नेहवान् युगलका वियोग किया, पापाचारी महा नीच जन समान मैं नि:कारण अपयशरूप मलसे लिप्त भया शुद्ध चंद्रमा समान गोत्र हमारा, मैं मलिन किया। मेरे समान दुरात्मा मेरे वंश में न भया, ऐसा कार्य काहूने न किया, सो मैंने किया। जे पुरुषोंमें इन्द्र हैं ते नारीको तुच्छ गिनै है, यह स्त्री साक्षात् विष तुल्य है क्लेशकी उत्पत्तिका स्थानक, सर्पके मस्तककी मणि समान, अर महा मोहका कारण। प्रथम तो स्त्रीमात्र ही निषिद्ध है, अर परस्त्रीकी कहा बात? सर्वथा त्याज्य ही है। परस्त्री नदी समान कुटिल महा भयंकर धर्म अर्थका नाश करणहारी सदा संतोंको त्याज्य ही है। मैं महा पापकी खान अब तक यह सीता मुझे देवांगनाहूतैं अति प्रिय भासती भई सो अब विषके कुंभ-तुल्य भासै है यह तो केवल रामसूं अनुरागिनी है। अब लग यह न इच्छती थी परंतु मेरे अभिलाषा हुती। अब जीर्ण तृणवत् भासै है यह तो केवल रामसे तन्मय है मोसूं कदाचित् न मिलै, मेरा भाई महापंडित विभीषण सब जानता हुता सो मोहि बहुत समझाया मेरा मन विकार-कूं प्राप्त भया सो न मानी तासूं द्वेष किया। जब विभीषणके वचननिकरि मैत्रीभाव करता तो नीकै था महा युद्ध भया, अनेक हते गए अब कैसी मित्रता? यह मित्रता सुभटनिकूं योग्य नाहीं। अर युद्ध करके बहुरि दया पालनी यह बनै नाहीं, अहो मैं सामान्य मनुष्यकी नाईं संकटमें पड़ा हू, जो कदाचित् जानकी रामपै पठावै तौ लोग मोहि असमर्थ जानैं, अर युद्ध करिए तो महा हिंसा होय। कोई ऐसे हैं जिनके दया नाहीं केवल क्रूरतारूप हैं, ते भी कालक्षेप करैं हैं, अर कोईयक दयावान् है, संसार कार्यसे रहित हैं, ते सुखसे जीवैं हैं। मैं मानी युद्धाभिलाषी अर कछू करुणाभाव नाहीं, सो हम सारिखे महा दुखी हैं। अर रामके सिंहवाहन अर लक्ष्मणके गरुडवाहन विद्या सो इनकर महा उद्योत हैं सो इनकूं शस्त्ररहित करूं, अर जीवते पकड़ूं बहुरि बहुत धन दूं तो मेरी बड़ी कीर्ति होय, अर मोहि पाप न होय, यह न्याय है। तातैं यही करूं, ऐसा मनमें धारि महा विभवसंयुक्त रावण राजलोकविषैं गया जैसैं माता हाथी कमलनिके वनविषैं जाय। बहुरि विचारी अंगदने बहुत अनीति करी या बाततैं अति क्रोध किया, अर लाल नेत्र होय आए रावण होंठ डसता वचन कहता भया--वह पापी सुग्रीव नाहीं दुग्रीव है ताहि निर्ग्रीव कहिए मस्तक रहित करूंगा ताके पुत्र अंगदसहित चन्द्रहास खड्गकर दोय टूंक करूंगा। अर तमोमंडलको लोग भामंडल कहै हैं सो वह महा दुष्ट है ताहि दृढबंधनसे बांधि लोहके मुगदरोंसे कूट मारूंगा! अर हनुमानकूं तीक्ष्ण करोंतकी धारसे काठके युगलमें बांध विदाराऊंगा। वह महा अनीति है, एक राम न्यायमार्गी है, ताहि छाड़ूंगा। अर समस्त अन्यायमार्गी हैं तिनकूं शस्त्रनिकर चूर डारूंगा, ऐसा विचारकर रावण तिष्ठा। अर उत्पात सैकड़ों होने लगे, सूर्यका मण्डल आयुध समान तीक्ष्ण दृष्टि पड़ा, पूर्णमासीका चन्द्रमा अस्त होय गया आसन पर भूकम्प भया, दशों

दिशा कम्पायमान भई, उल्कापात भए, शृगाली (गीदड़ी) विरस शब्द बोलती भई, तुरंग नाड हिलाय विरस विरूप हींसते भए, हाथी रूक्ष शब्द करते भये, सूण्डसे धरती कूटते भए, यक्षनिकी मूर्तिके अश्रुपात पड़े, सूर्यके सन्मुख काग कटुक शब्द करते भए, ढीले पांख किए महा व्याकुल भए, सरोवर जलकर भरे हुते ते शोषको प्राप्त भए, अर गिरियोंके शिखर गिर पड़े, अर रुधिरकी वर्षा भई, थोड़े ही दिनमें जानिए है लंकेश्वरकी मृत्यु होय ऐसे अपशकुन और प्रकार नाहीं। जब पुण्य क्षीण होय तब इन्द्र भी न बचें पुरुषमें पौरुष पुण्यके उदयकरि होय है जो कछू प्राप्त होना होय सोई पाइए है, हीनाधिक नाहीं। प्राणियोंके शूरवीरता सुकृतके बलकर है।

देखहु रावण नीतिशास्त्रके विषै प्रवीण समस्त लौकिक नीति रीति जाने, व्याकरण-का पाठी, महा गुणनिकर मंडित, सो कर्मनिकर प्रेरा संता अनीतिमार्गकूं प्राप्त भया मूढबुद्धि भया लोकविषैं मरण उपरांत कोई दुःख नाहीं। सो याकूं अत्यंत गर्वकर विचारे नाहीं, नक्षत्रनि-के बलकरि रहित अर ग्रह सर्व ही क्रूर आए सो यह अविवेकी रणक्षेत्रका अभिलाषी होता भया। प्रतापके भंगका है भय जाकूं, अर महा शूरवीरताके रससे युक्त यद्यपि अनेक शास्त्रनिका अभ्यास किया है तथापि युक्त अयुक्तकूं न देखै। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं— हे मगधा-धिपति! रावण महामानी अपने मनविषैं विचारैं है सो सुन–सुग्रीव भामण्डलादिक समस्तकूं जीती अर कुम्भकरण इंद्रजीत मेघनादकूं छुडाय लंकामें लाऊंगा, बहुरि वानरवंशिनिका वंश नाश अर भामंडलका पराभव करूंगा, अर भूमिगोचरिनिकूं भूमिविषैं न रहने दूंगा, अर शुद्ध विद्याधरनिकूं धराविषैं थापूंगा, तब तीन लोकके नाथ तीर्थंकर देव अर चक्रायुध बलभद्र नारा-यण हम सारिखे विद्याधर कुलहीविषै उपजैंगे ऐसा वृथा विचार करता भया। हे मगधेश्वर! जा मनुष्यने जैसे संचित कर्म किए होंय तैसा ही फल भोगवै। ऐसैं न होय तो शास्त्रोंके पाठी कैसै भूलैं। शास्त्र हैं सो सूर्य समान हैं ताके प्रकाश होते अन्धकार कैसे रहै, परंतु जे घूघूसमान मनुष्य हैं तिनकूं प्रकाश न होय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं रावणके युद्धका निश्चय वर्णन करनेवाला बहत्तरवा पर्व पूर्ण भया ॥७२॥

तेहत्तरवां पर्व

[मन्दोदरीका युद्धके लिए मना करना तथापि रावणका हठ न छोड़ना]

अथानंतर दूजे दिन प्रभातही रावण महादैदीप्यमान आस्थान मंडपविषैं तिष्ठया सूर्यके उदय होते संते सभाविषैं कुबेर वरुण ईशान यम सोम समान जे बड़े बड़े राजा तिनकरि

सेवनीक जैसैं देवनिकर मंडित इंद्र विराजे तैसैं राजानिकरि मंडित सिंहासन पर विराज्या। परम कांतिकूं धरैं जैसैं ग्रह तारा नक्षत्रनिकर युक्त चंद्रमा सोहै अत्यंत सुगंध मनोज्ञ वस्त्र पुष्पमाला अर महामनोहर गजमोतिनिके हार तिनकरि शोभै है उरस्थल जाका, महा सौभाग्यरूप सौम्य दर्शन सभाकूं देखकर चिंता करता भया जो भाई कुम्भकरण इंद्रजीत मेघनाद यहां नाहीं दीखैं हैं सो उन विना यह सभा सोहै नाहीं, और पुरुष कुमुदरूप बहुत हैं, पर वे पुरुष कमलरूप नाहीं सो यद्यपि रावण महारूपवान सुंदर वदन हुते, अर फूल रहे हैं नेत्र कमल जाके, महा-मनोज्ञ तथापि पुत्र भाईकी चिंतासे कुमलाया वदन नजर आवता भया। अर महा क्रोधरूप कुटिल हैं भृकुटी जाकी मानो क्रोधका भरया आशीविष सर्प ही है, महा भयंकर होठ डसे, महा विकरालस्वरूप मंत्री देखकर डरे, आज ऐसा कौनसा कोप भया यह व्याकुलता भई। तब हाथ जोड सीस भूमिमें लगाय राजा मय उग्र शुक लोकाक्ष सारण इत्यादि धरतीकी ओर निरखते चलायमान हैं कुण्डल जिनके, विनती करते भए—हे नाथ! तिहारे निकटवर्ती योधा सब ही यह प्रार्थना करैं हैं प्रसन्न होहु, अर कैलाशके शिखरतुल्य ऊंचे महल जिनके मणियोंकी भीति, मणियोंके झरोखा, तिनमें तिष्ठती भ्रमररूप हैं नेत्र जिनके ऐसी सब रानियोंसहित मंदोदरी सो याहि देखती भई। कैसा देख्या? लाल हैं नेत्र जाके प्रतापका भरा ताहि देखकर मोहित भया है मन जाका, रावण उठकर आयुधशालामें गया। कैसी है आयुधशाला? अनेक दिव्य शस्त्र अर सामान्य शस्त्र तिनमे भरी, अमोघ बाण अर चक्रादिक अमोघ रत्ननिसूं भरी जैसें वज्रशाला-में इंद्र जाय। जा समय रावण आयुधशालामें गया ता समय अपशकुन भए, प्रथम ही छींक भई सो शकुनशास्त्रविषैं पूर्वदिशाकूं छींक होय तो मृत्यु, अर अग्निकोणविषैं शोक, दक्षिणमें हानि, नैऋत्यमें शुभ, पश्चिमविषैं मिष्ट आहार, वायुकोणमें सर्व संपदा, उत्तरविषैं कलह, ईशानविषैं धना-गम, आकाशविषैं सर्व संहार, पातालविषै सर्व संपदा, ये दशों दिशाविषैं छींकके फल कहे। सो रावणकूं मृत्युकी छींक भई। बहुरि आगे मार्ग रोके महा नाग निरख्या, अर हा शब्द, ही शब्द, धिक् शब्द, कहां जाय है यह वचन होते भए। अर पवनकर छत्रके वैडूर्यमणिका दण्ड भग्न भया, अर उत्तरासन गिर पड्या, काग दाहिना बोला इत्यादि और भी अपशकुन भए ते युद्धतैं निवारते भए, वचनकर कर्मकर निवारते भए। जे नाना प्रकारके शकुनशास्त्रविषैं प्रवीण पुरुष हुते वे अत्यंत आकुल भए। अर मंदोदरी शुक सारण इत्यादि बडे बडे मंत्रिनकूं बुलाय कहती भई—तुम स्वामीकूं कल्याणकी बात काहेकूं न कहो? अब तक कहा अपनी अर उनकी चेष्टा न देखी। कुंभकर्ण इंद्रजीत मेघनादमे बंधनविषैं आए, वे लोकपाल समान महातेजके धारक अद्भुत कार्यके करणहारे। तब नमस्कारकर मंत्री मंदोदरीसे कहते भए हे स्वामिनी! रावण महामानी यमराजसा क्रूर आपही आप प्रधान है, ऐसा या लोकविषैं कोई नाहीं जाके वचन रावण मानै, जो कुछ होनहार है

ताप्रमाण बुद्धि उपजै है, बुद्धि कर्मानुसारिणी है, सो इंद्रादिककर तथा देवनिके समूहकर और भांति न होय। संपूर्ण न्यायशास्त्र अर धर्मशास्त्र तिहारा पति सब जानै है परन्तु मोहकरि उन्मत्त भया है। हम बहुत प्रकार कह्या सो काहू प्रकार मानै नाहीं, जो हठ पकड्या है सो छांडै नाहीं, जैसैं वर्षाकालके समागमविषैं महाप्रवाहकर संयुक्त जो नदी ताका तिरना कठिन है, तैसैं कर्मनिका प्रेरा जो जीव ताका संबोधना कठिन है। यद्यपि स्वामीका स्वभाव दुर्निवार है, तथापि तिहारा कहा करै तो करै, तातैं तुम हितकी बात कहो, यामैं दोष नाहीं। यह मंत्रिनिने कही तब पटरानी साक्षात् लक्ष्मी समान निर्मल है चित्त जाका सो कंपायमान पतिके समीप जायवेकूं उद्यमी भई। महा निर्मल जलसमान वस्त्र पहिरे, जैसैं रति कामके समीप जाय तैसैं चाली, सिरपर छत्र फिरै हैं, अनेक सहेली चमर ढारै हैं, जैसैं अनेक देविनिकर इंद्राणी इंद्रपै जाय तैसैं यह सुंदर वदनकी धरणहारी पतिपै गई, निश्वास नाखती पांय डिगते शिथिल होय गई है कटि मेखला जाकी, भरतारके कार्यविषै सावधान अनुरागकी भरी, ताहि स्नेहकी दृष्टिकरि देखती भई, आपका चित्त शस्त्रनिविषै अर वक्तरविषै तिनकूं आदरसे स्पर्शे है सो मंदोदरीसे कहते भए--हे मनोहरे! हंसनी समान चालकी चलनहारी हे देवी! ऐसा कहा प्रयोजन है जो तुम शीघ्रतासे आवो हो। हे प्रिये! मेरा मन काहेकूं हरो हो, जैसैं स्वप्नविषैं निधान! तब वह पतिव्रता पूर्णचन्द्रमा-समान है वदन जाका, फूले कमलसमान नेत्र, स्वतः उत्तम चेष्टाकी धरणहारी, मनोहर जे कटाक्ष वेई भए बाण सो पतिकी ओर चलावनहारी, महाविचक्षण मदनका निवास है अंग जाका, महामधुर शब्दकी बोलनहारी, स्वर्णके कुंभसमान हैं स्तन जाके, तिनके भारकर नय गया है उदर जाका, दाडिमके बीज समान दांत मूंगासमान लाल अधर, अत्यंत सुकुमार अति सुंदरी भरतारकी कृपाभूमि सो नाथकूं प्रणाम कर कहती भई--हे देव! मोहि भरतारकी भीख देवो, आप महादयावंत धर्मात्माओंसे अधिक स्नेहवंत, मैं तिहारे वियोगरूप नदीविषैं डूबूं हूं, सो महाराज मोहि निकासो। कैसी है नदी? दुःखरूप जलकी भरी संकल्प विकल्परूप लहरकर पूर्ण है, हे महाबुद्ध! कुटुम्बरूप आकाशविषैं सूर्यसमान प्रकाशके कर्त्ता एक मेरी विनती सुनहु—तिहारा कुलरूप कमलोंका वन महा विस्तीर्ण प्रलय हुआ जाय है सो क्यों न राखहु। हे प्रभो! तुम मोहि पटराणीका पद दिया हुता सो मेरे कठोर वचननिकूं क्षमा करो, जे अपने हितू हैं तिनका वचन औषध समान ग्राह्य है परिणाम सुख दाई विरोध-रहित स्वभावरूप आनंदकारी है। मैं यह कहूं हूं तुम काहेकूं संदेहकी तुला चढो हो। यह तुला चढिवेकी नाहीं, काहेकूं आप संताप करो हो, अर हम सबनिकूं संताप करो हो, अब हू कहा गया? तिहारा सब राज तुम सकल पृथिवीके स्वामी अर तिहारे भाई पुत्रनिकूं बुलाय लेहु, तुम अपना चित्त कुमार्गतैं निवारो, अपना मन वश करो तिहारा मनोरथ अत्यंत अकार्यविषैं

प्रवरता है सो इंद्रियरूप तरल तुरंगोंको विवेकरूप दृढ लगामकर वश करो, इंद्रियनिके अर्थ कुमार्गविषैं मनको कौन प्राप्त करै, तुम अपवादका देनहारा जो उद्यम ताविषैं कहा प्रवर्तो हो, जैसैं अष्टापद अपनी छाया कूपविषैं देख क्रोधकर कूपविषैं पड़े, तैसैं तुम आपही क्लेश उपजाय आपदामें पडो हो, यह क्लेशका कारण जो अपयशरूप वृक्ष ताहि तजकर सुखसे तिष्ठो, कलिके थंभसमान असार यह विषय ताहि कहा चाहो हो, यह तिहारा कुल समुद्र समान गंभीर प्रशंसा योग्य ताहि शोभित करो, यह भूमिगोचरोंकी स्त्री बडे कुलवंतनिकूं अग्निकी शिखा समान है ताहि तजो। हे स्वामी! जे सामंत सामंतसों युद्ध करैं हैं वे मनविषैं यह निश्चय करैं हैं हम मरैंगे। हे नाथ! तुम कौन अर्थ मरो हो, पराई नारी ताके अर्थ कहा मरणा? या मरिवेविषैं यश नाहीं, अर उनकूं मारे तिहारी जीत होय तौहू यश नाहीं, क्षत्री मरैं हैं यशके अर्थ तातैं सीतासम्बन्धी हठको छांडो। अर जे बड़े बड़े व्रत हैं तिनकी महिमा तो कहा कही, एक यह परदारपरित्याग ही पुरुषके होय तो दोऊ जन्म सुधरैं, शीलवंत पुरुष भवसागर तिरैं। जो सर्वथा स्त्रीका त्याग करैं सो तो अति श्रेष्ठ ही है। काजल समान कालिमाकी उपजावनहारी यह परनारी तिनविषैं जे लोलुपी तिनविषैं मेरु समान गुण होंय तोहू तृण समान लघु होय जांय। जो चक्रवर्तीका पुत्र होय, अर देव जाका पक्षमें होय, अर परस्त्रीके संगरूप कीचविषैं डूबै तो महा अपयशकूं प्राप्त होय। जो मूढमति परस्त्रीसे रति करैं हैं सो पापी आशीविष भुजंगिनीसे रमैं है, तिहारा कुल अत्यंत निर्मल सो अपयशकर मलिन मत करो, दुर्बुद्धि तजो, जे महाबलवान हुते अर दूसरोंको निर्बल जानते अर्ककीर्ति अशनघोषादिक अनेक नाशकूं प्राप्त हुए। सो हे सुमुख! तुम कहा न सुने। ये वचन मंदोदरीके सुन रावण कमलनयन कारी घटा समान है वर्ण जाका, मलयागिरिचंदन कर लिप्त मंदोदरीसे कहता भया--हे कांते! तू काहेकूं कायर भई, मैं अर्ककीर्ति नाहीं जो जयकुमारसे हारा, अर मैं अशनघोष नाहीं जो अमिततेजसे हारा, अर और हू नाहीं। मैं दशमुख हूं, तू काहेकूं कायरताकी बात कहै है, मैं शत्रुरूप वृक्षनिके समूहकूं दावानलरूप हूं। सीता कदाचित् न दूं, हे मंदमानसे तू भय मत करै, या कथा कर तोहि कहा? तोकों सीताकी रक्षा सौंपी है सो रक्षा भली भांति कर। अर जो रक्षा करिवेकूं समर्थ नाहीं तो शीघ्र मोहि सौंप देवो। तब मंदोदरी कहती भई तुम उससे रतिसुख वांछो हो तातैं यह कहो हो, मोहि सौंप देवो, सो यह निर्लज्जताकी बात कुलवंतोंको उचित नाहीं। बहुरि कहती भई तुमने सीताके कहा माहात्म्य देखा जो ताहि बारंबार वांछो हो, वह ऐसी गुणवंती नाहीं, ज्ञाता नाहीं, रूपवंतियोंका तिलक नाहीं, कलाविषैं प्रवीण नाहीं, मनमोहनी नाहीं, पतिके छांदे चलनेवारी नाहीं, ता सहित रतिविषैं बुद्धि करो हो, सो हे कंत! यह कहा वार्ता, अपनी लघुता होय है सो तुम नाहीं जानो हो। मैं अपने मुख अपनी प्रशंसा कहा करूं, अपने मुख

अपने गुण कहे गुणोंकी गौणता होय है, अर पराए मुख सुने प्रशंसा होय है, तातैं मैं कहा कहूं तुम सब नीके जानो हो, विचारी सीता कहा ? लक्ष्मी भी मेरे तुल्य नाहीं, तातैं सीताकी अभिलाषा तजो, मेरा निरादरकर तुम भूमिगोचरिणीकूं इच्छो हो, सो मंदमति हो, जैसे बालबुद्धि वैडूर्य मणिको तज कांचको इच्छै, ताका कछू दिव्यरूप नाहीं, तिहारे मनविषैं क्या रुची, यह ग्राम्यजनकी नारी समान अल्पमति ताकी कहा अभिलाषा ? अर मोहि आज्ञा देवो सोई रूप धरूं, तिहारे चित्तकी हरणहारी मैं लक्ष्मीका रूप धरूं। अर आज्ञा करो तो शची इन्द्राणीका रूप धरूं। कहो तो रतिका रूप धरूं। हे देव ! तुम इच्छा करो सोई रूप धरूं, यह वार्ता मन्दोदरीकी सुन रावणने नीचा मुख किया। अर लज्जावान भया। बहुरि मन्दोदरी कहती भई- तुम परस्त्री आसक्त होय अपनी आत्मा लघु किया। विषयरूप आमिषकी आसक्ति है जाके सो पापका भाजन है, धिक्कार है ऐसी क्षुद्र चेष्टाकूं।

यह वचन सुन रावण मंदोदरीसे कहता भया–हे चंद्रवदनी ! कमललोचने ! तुम यह कही जो कहो जैसा रूप बहुरि धरूं, सो औरोंके रूपसे तिहारा रूप कहा घटती है, तिहारा स्वतः ही रूप मोहि अति वल्लभ है, । हे उत्तमे ! मेरे अन्य स्त्रीनि कर कहा ? तब हर्षितचित्त होय कहती भई–हे देव ! सूर्यको दीपकका उद्योत कहा दिखाइये, मैं जो हितके वचन आपको कहे सो औरोंसे पूंछ देखो मैं स्त्री हूँ, मेरेमें ऐसी बुद्धि नाहीं, शास्त्रमें कही है जो धनी सबही नय जानैं हैं। परन्तु दैवयोग थकी प्रमादरूप भया होय तो जे हितु हैं, ते समझावें, जैसे विष्णुकुमार स्वामीको विक्रियाऋद्धिका विस्मरण भया तो औरोंके कहे कर जाना। यह पुरुष यह स्त्री ऐसा विकल्प मंदबुद्धिनिके होय है, जे बुद्धिमान हैं हितकारी वचन सबहीका मान लेंय, आपका कृपाभाव मो ऊपर है तो मैं कहुँ हू तुम परस्त्रीका प्रेम तजो, मैं जानकीकूं लेकर राम पैं जाऊं अर रामकूं तिहारे पास ल्याऊं, अर कुंभकर्ण इन्द्रजीत मेघनादकूं लाऊं अनेक जीवनिकी हिंसा कर कहा ? ऐसे वचन मन्दोदरीने कहे। तब रावण अति क्रोधकर कहता भया शीघ्र ही जावो जावो, जहां तेरा मुख न देखूं तहां जावो। अहो तू आपको वृथा पंडित मानै है आपकी ऊंचता तज परपक्षकी प्रशंसामें प्रवरती, तू दीनचित्त है योधावोंकी माता, तेरे इन्द्रजीत मेघनाद कैसे पुत्र, अर मेरी पटराणी, राजा मयकी पुत्री, तोमें एती कायरता कहांसे आई ? ऐसा कहा तब मंदोदरी बोली–हे पति ! सुनो जो ज्ञानियोंके मुख बलभद्र नारायण प्रतिनारायणका जन्म सुनिये है पहिला बलभद्र विजय नारायण त्रिपृष्ट, प्रतिनारायण अश्वग्रीव दूजा बलभद्र अचल नारायण द्विपृष्ट प्रतिहरि तारक इसभांति अबतक सात बलभद्र नारायण हो चुके सो इनके शत्रु प्रतिनारायण इन्होंने हते। अब तुम्हारे समय यह बलभद्र नारायण भए हैं अर तुम प्रतिवासुदेव हो, आगे प्रतिवासुदेव हठ कर हते गए तैसैं तुम नाशको इच्छो हो, जे बुद्धिमान है तिनको

यही कार्य करना जो या लोक परलोकमें सुख होय, अर दुःखके अंकुरकी उत्पत्ति न होय, सो करना यह जीव चिरकाल विषयसे तृप्त न भया तीन लोकविषैं ऐसा कौन है जो विषयोंसे तृप्त होय तुम पापकर मोहित भए हो सो वृथा है। अर उचित तो यह है तुमने बहुकाल भोग किए अब मुनिव्रत धरो, अथवा श्रावकके व्रतधर दुःख नाश करो, अणुव्रतरूप खड्गकर दीप्त है अंग जाका नियमरूप छत्रकर शोभित सम्यग्दर्शनरूप बक्तर पहिरे, शीलरूप ध्वजा कर शोभित अनित्यादि बारह भावना तेई चंदन तिनकर चर्चित है अंग जाका, अर ज्ञानरूप धनुषको धरे वश किया है इन्द्रियनिका बल जानै, शुभ ध्यान अर प्रतापकर युक्त मर्यादारूप अंकुशकर संयुक्त निश्चलरूप हाथीपर चढा जिनभक्ति की है महाभक्ति जाके दुर्गतिरूप कुनदी सो महा कुटिल पापरूप है वेग जाका, अतिदुःसह सो पंडितनिकर तिरिये है, ताहि तिरकर सुखी होवो। अर हिमवान सुमेरु पर्वतविषैं जिनालयको पूजते संते मेरे सहित ढाई द्वीपमें विहार कर, अर अष्टादश सहस्र स्त्रीनिके हस्तकमलपल्लव तिनकर लड़ाया संता सुमेरु पर्वतके वनविषैं क्रीड़ा कर, अर गंगाके तटपर क्रीडा कर, अर और भी मनवांछित प्रदेशनिविषैं रमणीक क्षेत्रनिविषैं हे नरेंद्र सुखसे विहार कर। या युद्धकर कछू प्रयोजन नाहीं, प्रसन्न होवहु, मेरा वचन सर्वथा सुखका कारण है यह लोकापवाद मत करावहु। अपयशरूप समुद्रमें काहेकूं डूबो हो, यह अपवाद विष-तुल्य महानिन्द्य परम अनर्थका कारण भला नाहीं, दुर्जन लोक सहज ही परनिन्दा करैं सो ऐसी बात सुनकर तो करैं ही करैं, या भांतिके शुभ वचन कह वह महासती हाथ जोड़ पतिका परम-हित वांछती पतिके पांयनि पड़ी।

तब रावण मन्दोदरीकूं उठायकर कहता भया—तू निःकारण क्यों भयकूं प्राप्त भई। सुन्दरवदनी! मोसे अधिक या संसारविषैं कोई नाहीं, तू स्त्रीपर्यायके स्वभावकर वृथा काहेकूं भय करै है! तैनैं कही जो यह बलदेव नारायण हैं सो नाम नारायण अर नाम बलदेव भया तो कहा? नाम भए कार्यकी सिद्धि नाहीं, नाम नाहर भया तो कहा? नाहरके पराक्रम भए नाहर होय, कोई मनुष्य सिद्ध नाम कहाया तो कहा सिद्ध भया? हे कांते! तू कहा कायरताकी वार्ता करै? रथनूपुरका राजा इंद्र कहावता सो कहा इन्द्र भया? तैसैं यह भी नारायण नाहीं, या भांति रावण प्रतिनारायण ऐसे प्रबल वचन स्त्रीको कह महा प्रतापी क्रीड़ा भवनविषैं मन्दोदरी सहित गया जैसैं इन्द्र इन्द्राणीसहित क्रीड़ागृहविषैं जाय। सांझके समय सांझ फूली, सूर्य अस्तसमय किरण संकोचने लगा, जैसैं संयमी कषायोंको संकोचै, सूर्य आरक्त होय अस्तिकूं प्राप्त भया, कमल मुद्रित भए, चकवा चकवी वियोगके भयकर दीन वचन रटते भए, मानों सूर्यकूं बुलावै, अर सूर्यके अस्त होयवेकर ग्रह नक्षत्रनिकी सेना आकाशविषैं विस्तरी मानों चन्द्रमाने पठाई। रात्रिके समय रत्नदीपोंका उद्योत भया दीपोंकी प्रभाकर लंका नगरी

ऐसी शोभती भई मानों सुमेरुकी शिखा ही है। कोऊ वल्लभा वल्लभसे मिलकर ऐसे कहती भई एक रात्रि तो तुम सहित व्यतीत करेंगे, बहुरि देखिए कहा होय ? अर कोई एक प्रिया नाना प्रकारके पुष्पनिकी सुगन्धताके मकरंदकर उन्मत्त भई स्वामीके अंगविषैं मानों महा कोमल पुष्पनिकी वृष्टि ही पड़ी। कोई नारी कमल तुल्य हैं चरण जाके, अर कठिन हैं कुच जाके, महा सुंदर शरीरकी धरणहारी सुन्दरपतिके समीप गई। अर कोई सुन्दरी आभूषणनिकूं पहरती ऐसी शोभती भई मानों स्वर्ण रत्नोंको कृतार्थ करै है। भावार्थ—ता समान ज्योति रत्न स्वर्णनिविषैं नाहीं, रात्रि समय विद्याकरि विद्याधर मनवांछित क्रीड़ा करते भए। घर घरविषैं भोगभूमिकीसी रचना होती भई, महा सुंदर गीत अर वीण बांसुरियोंका शब्द तिनकर लंका हर्षित भई मानों वचनालाप ही करै हैं। अर ताम्बूल सुगन्ध माल्यादिक भोग अर स्त्री आदि उपभोग सो भोगोपभोगनिकरि लोग देवनिकी न्याई रमते भए। अर कैयक नारी अपने वदनकी प्रतिबिम्ब रत्ननिकी भीतिनिविषैं देखकर जानती भई कि कोई दूजी स्त्री मंदिरमें आई है सो ईर्षाकर नीलकमलसे पतिकूं ताड़ना करती भई। स्त्रीनिके मुखकी सुगन्धताकर सुगन्ध होय गया अर वर्फके योगकर नारिनिके नेत्र लाल होय गए। अर कोईयक नायिका नवोढ़ा हुती अर प्रीतमने अमल खवाय उन्मत्त करी सो मन्मथ कर्मविषैं प्रवीण प्रौढ़ाके भावकूं प्राप्त भई लज्जारूप सखीकूं दूरकर उन्मत्ततारूप सखीने क्रीड़ाविषैं अत्यन्त तत्पर करी, अर घूमैं हैं नेत्र जाके अर स्खलित हैं वचन जाके, स्त्री पुरुषनिकी चेष्टा उन्मत्तताकर विकटरूप होती भई। नरनारिनिके अधर मूंगा समान शोभायमान दीखते भए नर नारी मदोन्मत्त भए सो न कहनेकी बात कहते भये, अर न करनेकी बात करते भये, लज्जा छूट गई, चंद्रमाके उदयकर मदनकी वृद्धि भई ऐसा ही तो इनका यौवन ऐसेही सुंदर मंदिर, अर ऐसा ही अमलका जोरसूं सब ही उन्मत्त चेष्टाका कारण आय प्राप्त भया, ऐसी निशाविषैं प्रभातविषैं होनहार है युद्ध जिनके सो संभोगका योग उत्सवरूप होता भया। अर राक्षसनिका इन्द्र सुंदर है चेष्टा जाकी सो समस्त ही राजलोककूं रमावता भया बारम्बार मन्दोदरीसूं स्नेह जनावता भया। याका वदनरूप चन्द्र निरखते रावणके लोचन तृप्त न भये मंदोदरी रावणसूं कहती भई--मैं एक क्षणमात्र हू तुमको न तजूंगी। हे मनोहर ! सदा तिहारे संग ही रहूगी जैसैं वेल बाहुबलिके सर्व अंगसूं लगी तैसैं रहूगी, आप युद्धविषैं विजयकर वेग ही आवो, मैं रत्ननिकूं चूर्णकर चौक पूरूंगी, अर तिहारे अर्घपाद्य करूंगी, प्रभुकी महामख पूजा कराऊंगी, प्रेमकर कायर है चित्त जाका अत्यंत प्रेमके वचन कहते निशा व्यतीत भई। अर कूकड़ा बोलें, नक्षत्रनिकी ज्योति मिटी, संध्या लाल भई अर भगवान्के चैत्यालयनिविषैं महा मनोहर गीतध्वनि होती भई, अर सूर्यलोकका लोचन उदयकूं सन्मुख भया अपनी किरणनिकर सर्व दिशाविषैं उद्योत करता संता प्रलयकालके अग्निमण्डल समान है आकार जाका, प्रभात समय भया। तब सब

रानी पतिकूं छोड़ती उदास भई, तब रावणने सबकूं दिलासा करी, गम्भीर वादित्र बाजे, शंखोंके शब्द भए रावणकी आज्ञाकर जे युद्धविषै विचक्षण हैं महाभट महा अहंकारकूं धरते परम उद्धत अतिहर्षके भरे नगरसे निकसे, तुरंग हस्ती रथोंपर चढ़े खड्ग धनुष गदा बरछी इत्यादि अनेक आयुधनिकूं धरे, जिनपर चमर ढुरते छत्र फिरते महा शोभायमान देवनि जैसे स्वरूपवान् महा प्रतापी विद्याधरनिके अधिपति योधा शीघ्र कार्यके करणहारे, श्रेष्ठ ऋद्धिके धारक युद्धकूं उद्यमी भए। ता दिन नगरकी स्त्री कमलनयनी करुणाभावकरि दुखरूप होती भई सो तिनकूं निरखे दुर्जनका चित्त भी दयाल होय कोईयक सुभट घरसे युद्धकूं निकसा, अर स्त्री लार लगी आवै है ताहि कहता भया--हे मुग्धे! घर जावो हम सुखसूं जाय हैं। अर कोईयक स्त्री भरतार चले हैं तिनकूं पीछेसूं जाय कहती भई हे कंत! तिहारा उत्तरासन लेवो तब पति सन्मुख होय लेते भए! कैसी है मृगनयनी? पतिके मुख देखवेकी है लालसा जाके। अर कोईयक प्राणवल्लभा पतिकूं दृष्टिसे अगोचर होते संते सखियोंसहित मूर्च्छा खाय पड़ी। अर कोईयक पतिसूं पाछी आय मौन गह सेजपर परी मानों काठकी पुतली ही है। अर कोईयक शूरवीर श्रावकके व्रतका धारक पीठ पीछे अपनी स्त्रीकूं देखता भया, अर आगैं देवांगनाओंकूं देखता भया। भावार्थ-जे सामंत अणुव्रतके धारक हैं वे देवलोकके अधिकारी हैं। अर जे सामंत पहिले पूर्णमासीके चन्द्रमा समान सौम्यवदन होते वे युद्धके आगमनविषै कालसमान क्रूर आकार होय गए। सिर पर टोप धरे बक्तर पहिरे शस्त्र लिए तेज भासते भए।

अथानंतर चतुरंग सेना संयुक्त धनुष छत्रादिककर पूर्ण मारीच महा तेजकूं धरे युद्धका अभिलाषी आय प्राप्त भया, फिर विमलचंद्र आया महा धनुषधारी, अर सुनन्द आनंद नंद इत्यादि हजारों राजा आए सो विद्याकर निरमापित दिव्य रथ तिनपर चढ़े अग्नि कैसी प्रभाकूं धरैं मानो अग्निकुमार देव ही हैं। कैयक तीक्ष्ण शस्त्रोंकर संपूर्ण हिमवान पर्वतसमान जे हाथी उनपर सर्वदिशावोंकूं आच्छादते हुए आए जैसैं विजुरीसे संयुक्त मेघमाला आवें। अर कैयक श्रेष्ठ तुरंगोंपर चढ़े पांचों हथियारोंकर संयुक्त शीघ्र ही ज्योतिष लोककूं उल्लंघ आवते भए नाना प्रकारके बड़े बड़े वादित्र और तुरंगोंका हींसना, गजोंका गर्जना, पयादोंके शब्द, योधानिके सिंहनाद बन्दीजनोंके जय जय शब्द, अर गुणीजनोंके गीत वीररसके भरे इत्यादि और भी अनेक शब्द भेले भए, धरती आकाश शब्दायमान भए, जैसैं प्रलयकालके मेघपटल होवैं तैसैं निकसे मनुष्य हाथी घोड़े रथ पियादे परस्पर अत्यंत विभूतिकर देदीप्यमान बड़ी भुजानिसे बक्तर पहिर उतंग हैं उर स्थल जिनके, विजयके अभिलाषी और पयादे खड्ग संभाले हैं महा चंचल आगे आगे चले जांय हैं स्वामीके हर्ष उपजावनहारे तिनके समूहकर आकाश पृथिवी और सर्व दिशा व्याप्त भई, ऐसे उपाय करते भी या जीवके पूर्व कर्मका जैसा उदय है तैसा ही होय है। यह

प्राणी अनेक चेष्टा करै है, परन्तु अन्यथा न होय, जैसा भवितव्य है तैसा ही होय, सूर्य हू और प्रकार करिवे समर्थ नाहीं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रावणका युद्धविषैं उद्यमी होनेका वर्णन करनेवाला तेहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७३॥

चौहत्तरवां पर्व

[रावणका राम लक्ष्मण के साथ युद्ध]

अथानन्तर लंकेश्वर मंदोदरीसूं कहता भया–हे प्रिये ! न जानिये बहुरि तिहारा दर्शन होय, वा ना होय ? तब मंदोदरी कहती भई–हे नाथ ! सदा वृद्धिकूं प्राप्त होवो, शत्रुवोंकूं जीत शीघ्र ही आय हमको देखोगे, अर संग्रामसे जीते आओगे, ऐसा कहा अर हजारों स्त्रियोंकर अवलोकता संता राक्षसोंका नाथ मंदिरसे बाहिर गया महा विकटताकूं धरे विद्याधर निरमाप्या ऐंद्रनामा रथ ताहि देखता भया, जाके हजार हाथी जुपें, मानों कारी घटाका मेघ ही है। हे नाथ ! हाथी मदोन्मत्त, झरे है मद जिनके, मोतियोंकी माला तिनकरि पूर्ण, महा घंटाके नादकर युक्त ऐरावत समान, नाना प्रकारके रंगोंसे शोभित, जिनका जीतना कठिन अर विनयके धाम अत्यन्त गर्जनाकर शोभित ऐसे सोहते भए मानों कारी घटाके समूह ही हैं। मनोहर है प्रभा जिनकी ऐसे हाथियोंके रथ चढ्या रावण सोहता भया भुजबन्धकर शोभायमान हैं भुजा जाकी मानों साक्षात् इन्द्र ही है। विस्तीर्ण हैं नेत्र जाके, अनुपम है आकार जाका, अर तेज कर सकल लोकविषैं श्रेष्ठ १० हजार आप समान विद्याधर तिनके मंडलकर युक्त रणविषैं आया सो वे महा बलवान देवों सारिखे अभिप्रायके वेत्ता रावणकूं देखि सुग्रीव हनुमान क्रोधकूं प्राप्त भए। अर जब रावण चढ्या तब अत्यंत अपशकुन भए--भयानक शब्द भए, अर आकाशविषैं गृध्र भ्रमते भए, आच्छादित किया है सूर्यका प्रकाश जिन्होंने, सो ये क्षयके सूचक अपशकुन भए परंतु रावणके सुभट न मानते भए युद्धकूं आए ही। अर श्रीरामचंद्र अपनी सेनाविषैं तिष्ठते सो लोकनिसूं पूछते भए-हे लोको ! या नागरीके समीप यह कौन पर्वत है ? तब सुषेणादिक तो तत्कालही जवाब न देय सके, अर जांबुवादिक कहते भए–यह बहुरूपिणी विद्यासे रचा पद्मनाग नामा रथ है घनेनिकूं मृत्युका कारण। अंगदने नगरविषैं जायकर रावणकूं क्रोध उपजाया सो अब बहुरूपिणी विद्या सिद्ध भई, हमसे महा शत्रुता लिए है सो तिनके वचन सुनकर लक्ष्मण सारथीसे कहता भया मेरा रथ शीघ्र ही चलाय। तब सारथीने रथ चलाया। अर जैसैं समुद्र गाजै ऐसे वादित्र बाजे। वादित्रोंके नाद सुनकर योधा

त्रिकट है चेष्टा जिनकी, लक्ष्मणके समीप आए। कोईयक रामके कटकका सुभट अपनी स्त्रीको कहता भया--हे प्रिये ! तू शोक तज, पाछी जावहु, मैं लंकेश्वरकूं जीत तिहारे समीप आऊंगा, या भांति गर्वकर प्रचंड जे योधा वे अपनी अपनी स्त्रीनिकूं धैर्य बंधाय अन्तःपुरसे निकसे, परस्पर स्पर्धा करते वेगसे प्रेरे हैं वाहन रथादिक जिन्होंने ऐसे महायोधा शस्त्रके धारक युद्धकूं उद्यमी भए। भूतस्वननामा विद्याधरनिका अधिपति महा हाथियोंके रथ चढा निकस्या गंभीर है शब्द जाका। या विधि और भी विद्याधरनिके अधिपति हर्ष सहित रामके सुभट क्रूर हैं आकार जिनके क्रोधायमान होय रावणके योधानिसूं जैसा समुद्र गाजै तैसैं गाजते, गंगाकी उतंग लहर समान उछलते, युद्धके अभिलाषी भए। अर राम लक्ष्मण डेरानिसूं निकसे, कैसे हैं दोऊ भाई ? पृथिवीविषैं व्याप्त हैं अनेक यश जिनके, क्रूर आकारकूं धरे, सिंहनिके रथ चढे, बखतर पहिरे, महा बलवान उगते सूर्यसमान श्रीराम शोभते भए। अर लक्ष्मण गरुडकी है ध्वजा जाके, अर गरुडके रथ चढ्या कारी घटा समान है रंग जाका, अपनी श्यामताकर श्याम करी हैं दशों दिशा जाने, मुकुटकूं धरे, कुण्डल पहिरे, धनुष चढाय बखतर पहिरे बाण लिए जैसा सांझके समय अंजनगिरि सोहै तैसैं शोभता भया। गौतम स्वामी कहैं हैं— हे श्रेणिक ! बड़े बड़े विद्याधर नाना प्रकारके वाहन अर विमाननिपर चढे युद्ध करिवेकूं कटकसूं निकसे। जब श्रीराम चढे तब अनेक शुभ शकुन आनंदके उपजावनहारे भए। रामको चढ्या जान रावण शीघ्र ही दावानल समान है आकार जाका युद्धकूं उद्यमी भया, दोनों ही कटकके योधा जे महा सामंत तिनपर आकाशसे गंधर्व अर अप्सरा पुष्पवृष्टि करती भई। अंजनगिरिसे हाथी महावतोंके प्रेरे मदोन्मत्त चले, पियादों कर बेढे अर सूर्यके रथ समान रथ चंचल हैं तुरंग जिनके सारथीनिकर युक्त जिनपर महा योधा चढे युद्धको प्रवर्तें, अर घोडोंपर चढे सामंत गंभीर हैं नाद जिनके परम तेजकूं धरे गाजते भए। अर अश्व हींसते भए, परम हर्षके भरे देदीप्यमान हैं आयुध जिनके अर पियादे गर्वके भरे पृथिवीविषैं उछलते भए खड्ग खेट बरछी है हाथविषैं जिनके युद्धकी पृथिवीविषैं प्रवेश करते भये ! परस्पर स्पर्धा करैं हैं दौडे हैं, योधानिविषैं परस्पर अनेक आयुधनिकर तथा लाठी मूका लोहयष्टिनिकर युद्ध भया, परस्पर केशग्रहण भया, खड्ग कर विदारा गया है शरीर जिनका कैयक बाणकर बींधे गए तथापि योधा युद्धके आगे ही भए, मारैं हैं प्रहार करैं हैं गाजैं हैं घोडे व्याकुल भए भ्रमैं हैं। कैयक आसन खाली होय गए, असवार मारे गए, मुष्टियुद्ध गदायुद्ध भया, कैयक बाणनिकर बहुत मारे गए, कैयक खड्ग कर, कैयक सेलोंकर घाव खाए, बहुरि शत्रुकूं घायल करते भए, कैयक मनवांछित भोगनिकर इंद्रियनिकूं रमावते सो युद्ध विषैं इंद्रियें इनको छोडती भई। जैसे कार्य परे कुमित्र तजै। कैयकके आंतनिके ढेर होय गए तथापि खेद न मानते भए शत्रुनि पर जाय पड़े अर शत्रुसहित आप प्राणांत भए, डसे हैं हौंठ जिन्होंने। जे राजकुमार देवकुमार सारिखे सुकुमार, रत्ननि-

के महलोंके शिखरविषैं क्रीडा करते महा भोगी पुरुष स्त्रीनिके स्तनकर रमाए संते वे खड्ग चक्र कनक इत्यादि आयुधनिकर विदारे संते संग्रामकी भूमिविषैं पड़े, विरूप आकार तिनको गृध्र पक्षी अर स्याल भषैं हैं। अर जैसैं रंगमहलमें रंगकी रामा नखोंकर चिह्न करतीं अर निकट आवती तैसै स्याली नख दंतनिकर चिह्न करैं हैं अर समीप आवैं हैं। बहुरि स्वासके प्रकाशकर जीवते जानि वे डर जांय हैं जैसे डाकिनी मंत्रवादीसे दूर जांय। अर सामंतनिकूं जीवते जानि यक्षिणी डर करैं उड़ जाती भई, जैसे दुष्ट नारी चलायमान हैं नेत्र जिसके पतिके समीपसे जाती रहे। जीवोंके शुभाशुभ प्रकृतिका उदय युद्धविषैं लखिए है दोनों बराबर अर कोईकी हार होय, कोई-की जीत होय। अर कबहू अल्प सेनाका स्वामी महा सेनाके स्वामीको जीते, अर कोईयक सुकृत-के सामर्थ्यसे बहुतोंको जीते। अर कोई बहुत भी पापके उदयसे हार जाय। जिन जीवोंने पूर्व भवविषैं तप किया वे राज्यके अधिकारी होय विजयको पावें हैं, अर जिन्होने तप न किया अथवा तप भंग किया तिनकी हार होय है। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं--हे श्रेणिक! यह धर्म मर्मकी रक्षा करै है, अर दुर्जयको जीतै हैं, धर्मही बड़ा सहाई है, बड़ा पक्ष धर्मका है, धर्म सब ठौर रक्षा करै हैं। घोड़ोंकर युक्त रथ, पर्वत समान हाथी, पवन समान तुरंग असुर कुमार-से पयादे इत्यादि सामग्री पूर्ण है परंतु पूर्वपुण्यके उदय विना कोई राखिवे समर्थ नाहीं। एक पुण्याधिकारी ही शत्रुवोंको जीतै है, इस भांति राम-रावणके युद्धकी प्रवृत्तिविषैं योधावोंकर योधा हते गए तिनकर रणक्षेत्र भर गया, अवकाश नाहीं। आयुधोंकर योधा उछलैं हैं परैं हैं सो आकाश ऐसा दृष्टि पड़ता भया मानों उत्पातके बादलोंकर मंडित है।

अथानन्तर मारीच चन्द्रनिकर वज्राक्ष शुकसारण और भी राक्षसोंके अधीश तिन्होंने रामका कटक दबाया। तब हनुमान चन्द्र मारीच नील मुकुंद भूतस्वन इत्यादि रामपक्षके योधा तिन्होंने राक्षसनिकी सेना दबाई तब रावणके योधा कुंद कुम्भ निकुम्भ विक्रम क्रमाण जंबूमाली काकबली सूर्यार मकरध्वज अशनिरथ इत्यादि राक्षसनिके बड़े बड़े राजा शीघ्रही युद्धकूं उठे तब भूधर अचल सम्मेद निकाल कुटिल अंगद सुषेण कालचन्द्र उर्मितरंग इत्यादि वानरवंशी योधा तिनके संमुख भए, उनही समान, तासमय कोई सुभट प्रतिपक्षी सुभट विना दृष्टि न पड्या। भावार्थ--दोनों पक्षके योधा परस्पर महा युद्ध करते भए। अर अंजनाका पुत्र हाथिनके रथपर चढ़कर रणमें क्रीड़ा करता भया जैसैं कमलनिकर भरे सरोवरमें महागज क्रीड़ा करै। गौतम-गणधर कहै हैं--हे श्रेणिक! वा हनुमान शूरवीरने राक्षसनिकी बड़ी सेना चलायमान करी, उसे रुचा जो किया। तब राजा मय विद्याधर दैत्यवंशी मंदोदरीका बाप क्रोधके प्रसंगकर लाल हैं नेत्र जाके सो हनुमानके सन्मुख आया। तब वह हनुमान कमल समान हैं नेत्र जाके, बाणवृष्टि करता भया सो मयका रथ चकचूर किया। तब वह दूजे रथ चढ़कर युद्धको उद्यमी भया, तब

हनुमानने बहुरि रथ तोड़ डाला। तब मयको विह्वल देख रावणने बहुरूपिणी विद्याकर प्रज्वलित उत्तम रथ शीघ्र ही भेजा सो राजा मयने वा रथपर चढकर हनुमानसे युद्ध किया अर हनुमानका रथ तोड़ा। तब हनुमानको दबा देख भामंडल मदद आया सो मयने बाणवर्षाकर भामंडलका भी रथ तोड़ा। तब राजा सुग्रीव इनके मदद आए सो मयने ताकूं शस्त्ररहित किया, अर भूमिमें डारा। तब इनकी मदद विभीषण आया सो विभीषणके अर मयके अत्यंत युद्ध भया, परस्पर बाण चले सो मयने विभीषणका बक्तर तोड़ा सो अशोकवृक्षके पुष्प समान लाल होय तैसी लालरूप रुधिरकी धारा विभीषणके पड़ी। तब वानरवंशियोंकी सेना चलायमान भई। अर राम युद्धकूं उद्यमी भए, विद्यामई सिंहनिके रथ चढे शीघ्र ही मय पर आए अर वानरवंशीनिकूं कहते भए तुम भय मत करहु। रावणकी सेना बिजुरी सहित कारी घटा-समान तामें उगते सूर्य-समान श्रीराम प्रवेश करते भए, अर परसेनाका विध्वंस करवेकूं उद्यमी भए तब हनुमान भामंडल सुग्रीव विभीषणकूं धैर्य उपजा अर वानरवंशिनिकी सेना युद्ध करवेकूं उद्यमी भई। रामका बल पाय रामके सेवकनिका भय मिटा परस्पर दोनों सेनाके योधानिविषैं शस्त्रोंका प्रहार भया सो देख देख देव आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर दोनो सेनाविषैं अंधकार होय गया प्रकाशरहित लोक दृष्टि न पड़ें, श्रीराम राजा मयको बाणनिकर अत्यंत आच्छादते भए, थोड़े ही खेद कर मयकूं विह्वल किया, जैसें इंद्र चमरेंद्रकूं करें। तब रामके बाणोंकर मयकूं विह्वल देखे रावण काल-समान क्रोधकर राम पर धाया। तब लक्ष्मण रामकी ओर रावणकूं आवता देख महातेज कर कहता भया—हो विद्याधर! तू किधर जाय है मैं तोहि आज देख्या, खड़ा रहो। हे रंक! पापी चोर परस्त्रीरूप दीपकके पतंग अधम पुरुष दुराचारी, आज मैं तोसों ऐसी करूं जैसी काल न करै। हे कुमानुष! श्रीराघवदेव समस्त पृथिवीके पति तिन्होंने मोहि आज्ञा करी है जो या चोरकूं सजा देहु। तब दशमुख महा क्रोध कर लक्ष्मणसूं कहता भया—रे मूढ़ तैंने कहा लोकप्रसिद्ध मेरा प्रताप न सुना? या पृथिवीविषैं जे सुखकारी सार वस्तु हैं सो सब मेरी ही हैं, मैं राजा पृथिवी पति जो उत्कृष्ट वस्तु सो मेरी, घंटा गजके कंठविषैं सोहै, स्वानके न सोहै है, तैसें योग्य वस्तु मेरे घर सोहै, औरके नाहीं। तू मनुष्यमात्र वृथा विलाप करै, तेरी कहा शक्ति? तू दीन मेरे समान नाहीं, मैं रंकसे क्या युद्ध करूं? तू अशुभके उदयसे मोसे युद्ध किया चाहे है सो जीवनसे उदास भया है मूवा चाहै है। लक्ष्मण बोले-तू जैसा पृथिवीपति है तैसा मैं नीके जानूं हूं। आज तेरा गाजना पूर्ण करूं हूं। जब ऐसा लक्ष्मणने कहा तब रावणने अपने बाण लक्ष्मण पर चलाए, अर लक्ष्मणने रावण पर चलाए, जैसे वर्षाके मेघ जलवृष्टिकर गिरिकूं आच्छादित करें, तैसें बाण वृष्टिकर वाने वाकूं बेध्या, अर वाने वाकूं बेध्या। सो रावणके बाण लक्ष्मणने वज्रदंडकर बीचही तोड़ डारे, आप तक आवने न दिए, बाणोंके समूह छेद भेद तोड़े फोड़े चूर कर डारे, सो धरती

आकाश बाणखंडनिकर भर गए। लक्ष्मणने रावणकूं सामान्य शस्त्रनिकरि विह्वल किया, तब रावणने जानी यह सामान्य शस्त्रनिकर जीता न जाय, तब लक्ष्मण पर रावणने मेघबाण चलाया सो धरती आकाश जल-रूप होय गए ! तब लक्ष्मणने पवनबाण चलाया क्षणमात्रमें मेघबाण विलय किया। बहुरि दशमुखने अग्निबाण चलाया सो दशों दिशा प्रज्वलित भईं। तब लक्ष्मणने वरुणशस्त्र चलाया सो एक निमिषमैं अग्निबाण नाशकूं प्राप्त भया। बहुरि लक्ष्मणने पापबाण चलाया सो धर्मबाणकर रावणने निवारया। बहुरि लक्ष्मणने ईंधनबाण चलाया सो रावणने अग्निबाण कर भस्म किया। बहुरि लक्ष्मणने तिमिरबाण चलाया सो अंधकार होय गया, आकाश वृक्षनिके समूहकर आच्छादित भया। कैसे हैं वृक्ष ? आसार फलनिकूं बरसावें हैं आसार पुष्पनिके पटल छाय गए, तब रावणने सूर्यबाण कर तिमिरबाण निवारया अर लक्ष्मण पर नागबाण चलाया, अनेक नाग चले विकराल हैं फण जिनके, तब लक्ष्मणने गरुड़बाणकर नागबाण निवारया, गरुड़की पाखोंपर आकाश स्वर्णकी प्रभारूप प्रतिभासता भया। बहुरि रामके भाईने रावण पर सर्पबाण चलाया, प्रलयकालके मेघ समान है शब्द जाका, अर विषरूप अग्निके कणनिकर महाविषम तब रावणने मयूरबाणकर सर्पबाण निवारा। अर लक्ष्मणपर विघ्नबाण चलाया सो विघ्नबाण दुर्निवार ताका उपाय सिद्धबाण सो लक्ष्मणकूं याद न आया तब वज्र-दंड आदि अनेक शस्त्र चलाए। रावण हू सामान्य शस्त्रनिकर युद्ध करता भया, दोनों योधा-निमें समान युद्ध भया जैसा त्रिपृष्ठ अर अश्वग्रीवके युद्ध भया हुता, तैसा लक्ष्मण रावणके भया। जैसा पूर्वोपार्जित कर्मका उदय होय तैसा फल होय, तैसी क्रिया करैं, जे महाक्रोधके वश में हैं अर जो कार्य आरम्भा ताविषैं उद्यमी हैं ते नर तीव्र शस्त्रकूं न गिनैं, अर अग्निकूं न गिने, सूर्यको न गिने, वायुको न गिने।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं रावण लक्ष्मणका युद्ध वर्णन करनेवाला चौहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७४॥

पचहत्तरवां पर्व

[रावणका लक्ष्मणपर चक्र चलाना और लक्ष्मणकी प्रदक्षिणा कर उनके हाथ आना]

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे भव्योत्तम ! दोनों ही सेनाविषैं तृषावंतनिकूं शीतल मिष्ट जल प्याइये है, अर क्षुधावन्तोंको अमृत-समान आहार दीजिए है, अर खेदवन्तोंकूं मलयागिरि चंदनसे छिड़किये है ताड़वृक्षके बीजनेसे पवन करिए है, बरफके वारिसे छांटिये है तथा और हू उपचार अनेक कीजिए है, अपना पराया कोई होहू सबके यत्न कीजिए हैं, यही संग्रामकी रीति है। दश दिन युद्ध करते भए दोऊ ही महावीर अभंग चित्त रावण लक्ष्मण

दोनों समान जैसा वह तैसा वह, सो यक्ष गंधर्व किन्नर अप्सरा आश्चर्यकूं प्राप्त भए, अर दोऊनिका यश गावते भए, दोऊनिपर पुष्पवर्षा करी। अर एक चंद्रवर्धन नामा विद्याधर ताकी आठ पुत्री सो आकाशविषैं विमानमें बैठी देख तिनकूं कौतूहलसे अप्सरा पूछती भई-तुम देवियों सारिखी कौन हो ? तिहारी लक्ष्मणविषैं विशेष भक्ति दीखै है, अर तुम सुन्दर सुकुमार शरीर हो ? तब वे लज्जासहित कहती भई तुमको कौतूहल है तो सुनो, जब सीताका स्वयम्बर हुआ तब हमारा पिता हम सहित तहां आया था, तहां लक्ष्मणको देख हमकूं देनी करी। अर हमारा भी मन लक्ष्मणविषैं मोहित भया, सो अब यह संग्रामविषैं वर्तै है,न जानिए कहा होय ? यह मनुष्यनिविषैं चन्द्रमा समान प्राणनाथ है जो याकी दशा सो हमारी। ऐसे इनके मनोहर शब्द सुनकर लक्ष्मण ऊपरकूं चौंके,तब वे आठों ही कन्या ऊके देखवेकर परम हर्षकूं प्राप्त भई अर कहती भई-रे नाथ! सर्वथा तिहारा कार्य सिद्ध होहु। तब लक्ष्मणकूं विघ्नबाणका उपाय सिद्ध बाण याद आया, अर प्रसन्न वदन भया,सिद्धबाण चलाय विघ्न बाण विलय किया। अर आप महाप्रतापरूप युद्धकूं उद्यमी भया जो जो शस्त्र रावण चलावै सो सो रामका वीर महाधीर शस्त्रनिविषैं प्रवीण छेद डारै। अर आप बाणनिके समूहकर सर्व दिशा पूर्ण करी जैसैं मेघपटलकर पर्वत आच्छादित होय। रावण बहुरूपिणी विद्याके बलकरि रणक्रीडा करता भया। लक्ष्मणने रावणका एक सीस छेदा, तब दोय सीस भए दोय छेद तब चार भए। अर दोय भुजा छेदीं तब चार भई। अर चार छेदी तब आठ भई। या भांति ज्यों ज्यों छेदी त्यों त्यों दुगुनी भई,अर सीस दुगुणे भए। हजारों सिर अर हजारों भुजा भई। रावणके कर हाथीके सूंड समान भुजबन्धन कर शोभित अर सिर मुकुटोंकर मंडित तिनकर रणक्षेत्र पूर्ण किया। मानों रावणरूप समुद्र महा भयंकर ताके हजारों सिर वेई भए ग्राह,अर हजारों भुजा वेई भई तरंग तिनकर बढ़ता भया। अर रावणरूप मेघ जाके बाहुरूप बिजुरी, अर प्रचण्ड हैं शब्द, अर सिर ही भए शिखर तिनकर सोहता भया। रावण अकेला ही महासेना समान भया अनेक मस्तक तिनके समूह, जिनपर छत्र फिरे मानों यह विचार लक्ष्मणने याहि बहुरूप किया जो आगे मैं अकेले अनेकनिसूं युद्ध किया अब या अकेलेसे कहा युद्ध करूं तातैं याहि बहुशरीर किया। रावण प्रज्वलित वनसमान भासता भया रत्ननिके आभूषण अर शस्त्रनिकी किरणनिके समूहकर प्रदीप्त रावण लक्ष्मणकूं हजारों भुजानिकर बाण शक्ति खडक बरछी सामान्य चक्र इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षाकर आच्छादता भया। सो सब बाण लक्ष्मणने छेदे। अर महाक्रोधरूप होय सूर्य समान तेजरूप बाणनिकर रावणकूं आच्छादनेकूं उद्यमी भया, एक दोय तीन चार पांच छह दस बीस शत सहस्र मायामई रावणके सिर लक्ष्मणने छेदे हजारों सिर भुजा भूमिविषैं पडे, सो रणभूमि उनकर आच्छादित भई ऐसी सौहै मानो सर्पनिके फणनि सहित कमलनिके वन हैं। भुजोंसहित सिर पडे वे उल्कापातसे भासें। जेते रावणके बहुरूपिणी विद्याकर सिर अर भुज भए

तेते सब सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणने छेदे, जैसैं महामुनि कर्मनिके समूहको छेदे। रुधिरकी धरा निरन्तर पड़ी तिनकर आकाशविषैं मानों सांझ फूली, दोय भुजाका धारक लक्ष्मण ताने रावणकी असंख्यात भुजा विफल करीं, कैसे हैं लक्ष्मण ? महा प्रभावकर युक्त हैं। रावण पसेवके समूह कर भर गया है अंग जाका, स्वास कर संयुक्त है मुख जाका, यद्यपि महाबलवान हुता तथापि व्याकुल चित भया। गौतमस्वामी कहै हैं-हे श्रेणिक ! बहुरूपिणी विद्याके बलकर रावणने महा भयंकर युद्ध किया, पर लक्ष्मणके आगे बहुरूपिणी विद्याका बल न चला। तब रावण मायाचार तज सहज रूप होय क्रोधका भरा युद्ध करता भया, अनेक दिव्यशस्त्रनिकर अर सामान्य शस्त्र-निकर युद्ध किया परन्तु वासुदेवको जीत न सक्या। तब प्रलय कालके सूर्य समान है प्रभा जाकी, परपक्षका क्षय करणहारा जो चक्ररत्न ताहि चिन्तता भया। कैसा है चक्ररत्न ? अप्रमाण प्रभावके समूहकूं धरे मोतिनिकी झालरियोंकर मंडित महा देदीप्यमान, दिव्य वज्रमई महा अद्भुत नाना प्रकारके रत्ननिकर मंडित है अंग जाका, दिव्यमाला अर सुगन्धकर लिप्त अग्नि-के समूह तुल्य धारानिके समूहकर महा प्रकाशवन्त वैडूर्य मणिके सहस्र आरे तिनकर युक्त जिसका दर्शन सहा ना जाय, सदा हजार यक्ष जाकी रक्षा करैं, महा क्रोधका भरा जैसा कालका मुख होय ता समान वह चक्र चिंतवते ही करविषैं आया, जाकी ज्योतिकर जोतिष देवोंकी प्रभा मन्द होय गई, अर सूर्यकी कांति ऐसी होय गई मानों चित्रामका सूर्य है, अर अप्सरा विश्वावसु तुंबरु नारद इत्यादि गंधर्वनिके भेद आकाशविषैं रणका कौतुक देखते हुते सो भयकर परे गए। अर लक्ष्मण अत्यन्त धीर शत्रुको चक्र संयुक्त देख कहता भया, हे अधम नर ! याहि कहा ले रहा है जैसे कृपण कौडीको लेय है ? तेरी शक्ति है तो प्रहार कर, ऐसा कह्या तब वह महा क्रोधा-यमान होय दांतनिकर डसे हैं होंठ जाने लाल हैं नेत्र जाके, चक्रकूं फेर लक्ष्मणपर चलाया। कैसा है चक्र ? मेघमंडल समान है शब्द जाका, अर महा शीघ्रताकूं लिए प्रलयकालके सूर्यसमान मनुष्यनिकूं जीतव्यके संशयका कारण, ताहि सन्मुख आवता देख लक्ष्मण वज्रमई है मुख जिनका ऐसे बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भया, अर श्रीराम वज्रावर्त धनुष चढाय अमोघ बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भए, अर हल मूशलनिकूं भ्रमावते चक्रके सन्मुख भए, अर सुग्रीव गदाकूं फिराय चक्रके सन्मुख भए, अर भामंडल खड्गकूं लेकर निवारिवेकूं उद्यमी भए, अर विभीषण त्रिशूल ले ठाढ़े भए, अर हनुमान मुद्गर लांगूल कनकादि लेकर उद्यमी भए, अर अंगद पारण नामा शस्त्र लेकर ठाढ़े भए, अर अंगदका भाई अंग कुठार लेकर महा तेजरूप खडे भए, और हू दूसरे श्रेष्ठ विद्याधर अनेक आयुधनिकर युक्त सब एक होयकर जीवनेकी आशा तज चक्रके निवारिवेकूं उद्यमी भए, परन्तु चक्रकूं निवार न सके। कैसा है चक्र ? देव करैं हैं सेवा जाकी, ताने आयकर लक्ष्मणकूं तीन प्रदक्षिणा देय अपना स्वरूप विनयरूप कर लक्ष्मणके करविषै तिष्ठा सुखदाई शान्त

है आकार जाका। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं--हे मगधाधिपति! राम लक्ष्मण-का महाऋद्धिकूं धरै यह माहात्म्य तोहि संक्षेपसे कहा। कैसा है इनका माहात्म्य? जाहि सुने परम आश्चर्य उपजे अर लोकविषै श्रेष्ठ है। कैयकके पुण्यके उदयकर परम विभूति होय है, अर कैयक पुण्यके क्षयकर नाश होय हैं जैसैं सूर्यका अस्त भये चंद्रमाका उदय होय है तैसें लक्ष्मणके पुण्यका उदय जानना।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं लक्ष्मणके चक्ररत्नकी उत्पत्ति वर्णन करनेवाला पचहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७५॥

छहत्तरवां पर्व

[राम-लक्ष्मणके साथ रावणका महा युद्ध और रावणका बध]

अथानंतर लक्ष्मणके हाथविषै महासुंदर चक्ररत्न आया देख सुग्रीव भामंडलादि विद्याधरनिके अधिपति अति हर्षित भए अर परस्पर कहते भए--आगैं भगवान अनंतवीर्य केवली-ने आज्ञा करी जो लक्ष्मण आठवां वासुदेव है, अर राम आठवां बलदेव है, सो यह महाज्योति चक्रपाणि भया अति उत्तम शरीरका धारक, याके बलका कौन वर्णन कर सके। अर यह श्रीराम बलदेव जाके रथकूं महातेजवंत सिंह चलावैं, जाने राजा मयको पकड़ा, अर हल मूसल महा रत्न दैदीप्यमान जाके करविषै सोहैं। यै बलभद्र नारायण दोऊ भाई पुरुषोत्तम प्रगट भए पुण्यके प्रभावकर परम प्रेमके भरे लक्ष्मणके हाथविषैं सुदर्शन चक्रकूं देख राक्षसनिका अधिपति चित्तविषै चितारै है जो भगवान् अनन्तवीर्यने आज्ञा करी हुती सोई भई। निश्चय सेती कर्मरूप पवनका प्रेरा यह समय आया, जाका छत्र देख विद्याधर डरते अर परकी महासेना भाग जाती, परसेना की ध्वजा अर छत्र मेरे प्रतापसे बहे बहे फिरते, अर हिमाचल विंध्याचल है स्तन जाके, समुद्र है वस्त्र जाके, ऐसी यह पृथिवी मेरी दासी समान आज्ञाकारिणी हुती ऐसा मैं रावण सो रणविषैं भूमिगोचरिनिने जीत्या यह अद्भुत बात है, कष्टकी अवस्था आय प्राप्त भई, धिक्कार या राज्यलक्ष्मीकूं कुलटा स्त्रीसमान है चेष्टा जाकी, पूज्य पुरुष या पापिनीकूं तत्काल तजैं। यह इंद्रियनिके भोग इंद्रायणके फल समान इनका परिपाक विरस है अनन्त दुःख सम्बन्धके कारण साधुनिकर निंद्य हैं, पृथिवीविषैं उत्तम पुरुष भरत चक्रवर्त्यादि भए ते धन्य हैं जिन्होंने निःकंटक छहखंड पृथिवीका राज्य किया अर विषके मिले अन्नकी न्याई राज्यकूं तज जिनेन्द्र व्रत धार रत्नत्रयकूं आराधनकर परमपदकूं प्राप्त भए हैं, मैं रंक विषयाभिलाषी मोह बलवानने मोहि जीत्या, यह मोह संसार-भ्रमणका कारण धिक्कार मोहि जो मोहके वश होय ऐसी चेष्टा करी।

रावण तो यह चिंतवन करै है। अर आया है चक्र जाके ऐसा जो लक्ष्मण महा तेजका धारक सो विभीषणकी ओर निरख रावणसे कहता भया--हे विद्याधर ! अब हू कछू न गया है, जानकीकूं लाय श्रीरामदेवकूं सौंप दे, अर यह वचन कह कि श्रीरामके प्रसादकर जीवूं हू, हमको तेरा कछु चाहिये नाहीं, तेरी राज्यलक्ष्मी तेरे ही रहो। तब रावण मंद हास्यकर कहता भया--हे रंक ! तेरे वृथा गर्व उपजा है अबार ही अपना पराक्रम तोहि दिखावूं हू। हे अधमनर! मैं तोहि जो अवस्था दिखाऊं सो भोग, मैं रावण पृथिवीपति विद्याधर, तू भूमिगोचरी रंक? तब लक्ष्मण बोले--बहुत कहिवेकर कहा ? नारायण सर्वथा तेरा मारणहारा उपजा। तब रावणने कहा इच्छामात्र ही नारायण हूजिए है तो जो तू चाहे सो क्यों न हो, इन्द्र हो, तू कुपुत्र पिताने देशसे बाहिर किया, महा दुखी दरिद्री वनचारी भिखारी निर्लज्ज, तेरी वासुदेव पदवी हमने जानी, तेरे मनविषैं मत्सर है सो मैं तेरे मनोरथ भंग करूंगा। यह घेघली समान चक्र है ताकर तू गर्वा है सो रंकोंकी यही रीति है, खलिका टूंक पाय मनविषैं उत्सव करै। बहुत कहिवेकर कहा ? ये पापी विद्याधर तोसूं मिले हैं तिनसहित अर या चक्रसहित वाहनसहित तेरा नाशकर तोहि पातालकूं पहुचाऊंगा। ये रावणके वचन सुनकर लक्ष्मणने कोपकर चक्रको भ्रमाय रावणपर चलाया। वज्रपातके शब्दसमान भयंकर है शब्द जाका, अर प्रलयकालके सूर्यसम न तेजकूं धरे चक्र रावणपर आया। तब रावण बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भया, बहुरि प्रचंड दंड अर शीघ्रगामी वज्रनागकर चक्रके निवारनेका यत्न किया, तथापि रावणका पुण्य क्षीण भया सो चक्र न रुका, नजीक आया। तब रावण चन्द्रहास खड्ग लेकर चक्रके समीप आया चक्रके खड्गकी दई सो अग्निके कणनिकर आकाश प्रज्वलित भया, खड्गका जोर चक्रपर न चला, सन्मुख तिष्ठता जो रावण महाशूरवीर राक्षसनिका इन्द्र ताका चक्रने उरस्थल भेदा सो पुण्य क्षयकर अंजनगिरिसमान रावण भूमिविषैं परया, मानों स्वर्गसे देव चया, अथवा रतिका पति पृथिवीविषैं परया ऐसा सोहता भया मानों वीररसका स्वरूप ही है, चढ रही है भौंह जाकी, डसे हैं होंठ जाने। स्वामीकूं पड़ा देख समुद्र समान था शब्द जाका ऐसी सेना भागिवेकूं उद्यमी भई। ध्वजा छत्र वहे वहे फिरे समस्त लोक रावणके विह्वल भए, विलाप करते भागे जाय हैं कोई कहै हैं रथकूं दूरकर मार्ग देहु, पीछेसूं हाथी आवै है, कोई कहे हैं विमानकूं एकतरफ कर। अर पृथिवीका पति पड़ा, महा भयंकर अनर्थ भया, भयकर कंपायमान वह तापर पड़े वह तापर पड़े। तब सबको शरणरहित देखि भामंडल सुग्रीव हनुमान रामकी आज्ञासे कहते भए भय मत करो भय मत करो, धैर्य बंधाया अर वस्त्र फेरया काहूको भय नाहीं। तब अमृत समान कानोंको प्रिय ऐसे वचन सुन सेनाकूं विश्वास उपज्या। यह कथा गौतम गणधर राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे राजन् ! रावण ऐसा महा विभूतिकूं भोगै समुद्रपर्यंत पृथिवीका राज्यकर पुण्य पूर्ण भए अन्तदशाकूं प्राप्त भया।

तातैं ऐसी लक्ष्मीकूं धिक्कार है, यह राजलक्ष्मी महा चंचल पापका स्वरूप, सुकृतके समागमके आशाकर वर्जित ऐसा मनविषैं विचारकर हो बुद्धिजन हो तप ही है धन जिनके ऐसे मुनि होवो। कैसे हैं मुनि? तपोधन सूर्यसे अधिक है तेज जिनका मोह-तिमिरकूं हरै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रावणका वध वर्णन करनेवाला छिहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७६॥

सतहत्तरवां पर्व

[रावणके वियोगसे रावणके परिवार और रणवासका विलाप करना]

अथानन्तर विभीषणने बड़े भाईकूं पड़ा देख महा दुःखका भरया अपने घातके अर्थ छुरी विषैं हाथ लगाया सो याकूं मरणकी हरणहारी मूर्च्छा आय गई, चेष्टाकर रहित शरीर हो गया। बहुरि सचेत होय महा दाहका भरया मरनेकूं उद्यमी भया। तब श्रीरामने रथसे उतर हाथ पकड़कर उरसे लगाया, धैर्य बंधाया। फिर मूर्च्छा खाय पड्या अचेत होय गया श्रीरामने सचेत किया तब सचेत होय विलाप करता भया जिसका विलाप सुन करुणा उपजे, हाय भाई, उदार क्रियावन्त सामंतोंके पति महाशूरवीर रणधीर शरणागतपालक महा मनोहर, ऐसी अवस्थाकूं क्यों प्राप्त भए? मैं हितके वचन कहे सो वाकों न माने, यह क्या अवस्था भई जो मैं तुमकूं चक्रके विदारे पृथिवी-विषैं परे देखूं हूं। हे देव विद्याधरोंके महेश्वर, हे लंकेश्वर! भोगोंके भोक्ता पृथिवीविषैं कहा पौढे? महाभोगोंकर लड़ाया है शरीर जिनका यह सेज आपके शयन करने योग्य नाहीं। हे नाथ! उठो, सुन्दर बचनके वक्ता मैं तुम्हारा बालक मुझे कृपाके बचन कहो, हे गुणाकर कृपाधार, मैं शोकके समुद्रविषैं डूबूं हूं सो मुझे हस्तावलंबन कर क्यों न काढो, इस भांति विभीषण विलाप करै है डार दिये हैं शस्त्र अर बक्तर भूमिविषैं जाने।

अथानन्तर रावणके मरणके समाचार रणवासविषैं पहुचे सो राणियां सब अश्रुपात-की धाराकर पृथिवी तलको सींचती भई अर सर्व ही अन्तःपुर शोककर व्याकुल भया। सकल राणी रणभूमिविषैं आई गिरती पड़ती गिरती पडती, डिगे हैं चरण जिनके वे नारी पतिकूं चेतनारहित देख शीघ्रही पृथिवीविषैं पडीं। कैसा है पति पृथिवीकी चूडामणि है। मंदोदरी, रंभा चन्द्राननी, चन्द्रमण्डला, प्रवरा, उर्वशी, महादेवी, सुंदरी, कमलानना, रूपिणी, रुक्मिणी, शीला, रत्नमाला, तनूदरी श्रीकांता, श्रीमती, भद्रा कनकप्रभा, मृगावती, श्रीमाला, मानवी, लक्ष्मी आनंदा, अनंगसुंदरी, वसुंधरा, तडिन्माला, पद्मा, पद्मावती, सुखादेवी, कांति, प्रीति, संध्यावली, सुभा, प्रभावती, मनोवेगा, रतिकांता, मनोवती, इत्यादि अष्टादश सहस्त्र राणी अपने अपने परिवारसहित अर सखिनिसहित महाशोककी भरी रुदन करती भई। केयक मोहकी भरी

मूर्च्छाकूं प्राप्त भई सो चन्दनके जलकर छांटी कुमलाई कमलिनी समान भासती भई। कैयक पतिके अंगसे अत्यंत लिपटकर परी अंजनगिरिसों लगी संध्याकी द्युतिको धरती भई। कैयक मूर्च्छासे सचेत होय उरस्थल कूटती भई पतिके समीप मानों मेघके निकट विजुरी हीं चमकै है। कैयक पतिका वदन अपने अंगविषैं लेयकर विह्वल होय मूर्च्छाकूं प्राप्त भई। कैयक विलाप करैं हैं--हाय नाथ! मैं तिहारे विरहसे अतिकायर मोहि तजकर तुम कहां गए, तिहारे जन दुःख-सागरविषैं डूबे हैं सो क्यो न देखो, तुम महाबली महासुन्दर परम ज्योतिके धारक विभूति कर इंद्र-समान मानों भरतक्षेत्रके भूपति पुरुषोत्तम महाराजनिके राजा मनोग्य विद्याधरनिके महेश्वर कौन अर्थ पृथिवी में पौढे। उठो,हे कांत! करुणानिधे? स्वजनवत्सल! एक अमृत-समान वचन हमसे कहो। हे प्राणेश्वर प्राणवल्लभ! हम अपराध-रहित तुमसे अनुरक्त चित्त हमपर तुम क्यों कोप भए हमसे बोलो ही नाहीं, जैसे पहिले परिहास कथा करते तैसे क्यों न करो, तिहारा मुख-रूपी चन्द्र कांतिरूप चांदनी कर मनोहर प्रसन्नतारूप जैसे पूर्व हमें दिखावते हुते तैसे हमे दिखावो, अर यह तिहारा वक्षस्थल स्त्रियोंकी क्रीडाका स्थानक महासुन्दर ताविषैं चक्रकी धारा-ने कैसे पग धारा? अर विद्रुम समान तिहारे ये लाल अधर अब क्रीडारूप उत्तरके देनेको क्यो न स्फुरायमान होय हैं? अबतक बहुत देर लगाई क्रोध कबहू न किया, अब प्रसन्न होवो, हम मान करतीं तो आप प्रसन्न करते मनावते। इन्द्रजीत मेघवाहन स्वर्गलोकसे चयकर तिहारे उपजे सो यहां भी स्वर्गलोक कैसे भोग भोगे, अब दोऊ बन्धनविषैं हैं, अर कुम्भकर्ण बंधनविषैं है, सो महा पुण्याधिकारी सुभट महागुणवंत श्रीरामचंद्र तिनसे प्रीतिकर भाई पुत्रको छुडावहु। हे प्राणवल्लभ प्राणनाथ! उठो, हमसे हित की बात करो, हे देव! बहुत देर सोवना कहा? राजा-निकूं राजनीतिविषैं सावधान रहना सो आप राज्य काजविषैं प्रवर्तो। हे सुंदर हे प्राणप्रिय! हमारे अंग विरहरूप अग्निकर अत्यंत जरे हैं सो स्नेहरूप जलकर बुझावो। हे स्नेहियोंके प्यारे! तिहारा यह वदनकमल और ही अवस्थाकूं प्राप्त भया है सो याहि देख हमारे हृदयके टूक क्यों न हो जावें, यह हमारा पापी हृदय वज्रका है दुःखका भाजन जो तिहारी यह अवस्था जानकर विनस न जाय है। यह हृदय महा निर्दई है। हाय विधाता, हम तेरा कहा बुरा किया जो तैनें निर्दई होयकर हमारे सिरपर ऐसा दुःख डारया। हे प्रीतम, जब हम मान करतीं तब तुम उरसे लगाय हमारा मन दूर करते, अर वचनरूप अमृत हमको प्यावते महा प्रेम जनवाते हमारा प्रेमरूप कोप ताके दूर करवेके अर्थ हमारे पायनि पडते, सो हमारा हृदय वशीभूत होय जाता, अत्यंत मनोहर क्रीडा करते, हे राजेश्वर हमसे प्रीति करो, परम आनंदकी करणहारी वे क्रीडा हमको याद आवै हैं सो हमारा हृदय अत्यंत दाहको प्राप्त होय है, तातैं अब उठो हम तिहारे पायनि पड़ैं हैं,नमस्कार करैं हैं जे अपने प्रियजन होंय तिनसे बहुत कोप न करिये प्रीति-

विषैं कोप न सोहै। हे श्रेणिक ! या भांति रावणकी राणी ये विलाप करती भई जिनका विलाप सुनकर कौनका हृदय द्रवीभूत न होय ?

(राम-लक्ष्मण आदिके द्वारा विभीषणका शोक-निवारण)

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मण भामण्डल सुग्रीवादिक सहित अति स्नेहके भरे विभीषणकूं उरसे लगाय आंसू डारते महाकरुणावंत धैर्य बंधावनेविषैं प्रवीण ऐसे वचन कहते भए--लोक वृत्तांतसे सहित हे राजन् ! बहुत रोयवे कर कहा ? अब विषाद तजहु, यह कर्मकी चेष्टा तुम कहा प्रत्यक्ष नाहीं जानो हो ? पूर्वकर्मके प्रभावकरि प्रमोदकूं धरते जे प्राणी तिनके अवश्य कष्टकी प्राप्ति होय है ताका शोक कहा ? अर तुम्हारा भाई सदा जगत्के हितविषैं सावधान, परम प्रीतिका भाजन, समाधानरूप बुद्धि जिसकी, राजकार्यविषै प्रवीण प्रजाका पालक, सर्वशास्त्रनिके अर्थकर धोया है चित्त जाने, सो बलवान् मोहकर दारुण अवस्थाकूं प्राप्त भया, अर विनाशकूं प्राप्त भया। जब जीवनिका विनाशकाल आवै तब बुद्धि अज्ञानरूप होय जाय है। ऐसे शुभ वचन श्रीरामने कहे। बहुरि भामंडल अति माधुर्यताकूं धरे वचन कहते भए। हे विभीषण महाराज, तिहारा भाई रावण महा उदारचित्तकर रणविषैं युद्ध करता संता वीर मरणकर परलोककूं प्राप्त भया। जाका नाम न गया ताका कछुही न गया। ते धन्य हैं जिन सुभटता कर प्राण तजे। ते महा पराक्रमके धारक वीर, तिनका कहा शोक ? एक राजा अरिंदमकी कथा सुनो।

अक्षपुर नामा नगर तहां राजा अरिंदम जाके महाविभूति सो एक दिन काहू तरफसे अपने मन्दिर शीघ्र गामी घोड़े चढा अकस्मात् आया सो राणीकूं शृंगाररूप देख अर महलकी अत्यंत शोभा देख रानीकूं पूछ्या--तुम हमारा आगमन कैसे जाण्या। तब रानीने कही--कीर्तिधरनामा मुनि अवधिज्ञानी आज आहारको आए थे तिनको मैंने पूछ्या राजा कब आवेंगे सो तिन्होंने कह्या राजा आज अचानक आवेंगे। यह बात सुन राजा मुनिपै गया अर ईर्ष्याकर पूछता भया--हे मुनि ? तुमकूं ज्ञान है तो कहो मेरे चित्तमें क्या है ? तब मुनिने कहा तेरे चित्तमें यह है कि मैं कब मरूंगा ? सो तू आजसे सातवे दिन वज्रपातसे मरेगा, अर विष्टामें कीट होयगा। यह मुनिके वचन सुन राजा अरिंदम घर जाय अपने पुत्र प्रीतिकरको कहता भया--मैं मरकर विष्टाके घरमें स्थूल कीट होऊंगा ऐसा मेरा रंगरूप होयगा, सो तू तत्काल मार डारियो ये वचन पुत्रकूं कह आप सातवें दिन मरकर विष्टामें कीडा भया सो प्रीतिकर कीटके हनिवेकूं गया सो कीट मरनेके भयकरि विष्टामें पैठि गया। तब प्रीतिकर मुनिपै जाय पूछता भया--हे प्रभो ! मेरे पिताने कही थी जो मैं मलमें कीट होऊंगा सो तू हनियो। अब वह कीट मरवेसूं डरै है, अर भागै है। तब मुनिने कही तू विषाद मत कर, यह जीव जिस गतिमें जाय है वहां ही रम रहै है, इसलिए तू आत्मकल्याण कर, जाकरि पापोंसे छूटे। अर यह जीव सब ही अपने अपने कर्मका फल भोगवे हैं, कोई काहूका नाहीं, यह संसारका स्वरूप महादुखका कारण जान

प्रीतिंकर मुनि भया, सर्व वांछा तजी। तातैं हे विभीषण! यह नाना प्रकार जगत्की अवस्था तुम कहा न जानो हो, तिहारा भाई महा शूरवीर दैवयोगसे नारायणने हता। संग्राममें अभिहत महा प्रधान पुरुष ताका सोच कहा? तुम अपना चित्त कल्याणमें लगावो, यह शोक दुखका कारण ताको तजहु। यह वचन कर प्रीतिंकरकी कथा भामंडलके मुखसे विभीषणने सुनी। कैसी है प्रीतिंकर मुनिकी कथा प्रतिबोध देनेमें प्रवीण, अर नाना स्वभावकर संयुक्त अर उत्तम पुरुषोंकर कहिवे योग्य, सो सर्व विद्याधरनिने प्रशंसा करी। सुनकर विभीषणरूप सूर्य शोकरूप मेघ पटल-से रहित भया लोकोत्तर आचारका जाननेवाला।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै विभीषणका शोकनिवारण वर्णन करनेवाला सतहत्तरवा पर्व पूर्ण भया ॥७७॥

अठहत्तरवां पर्व

[अनन्तवीर्य केवलीके समीप इन्द्रजीत, मेघनाद तथा मंदोदरी आदिका दीक्षा लेना]

अथानंतर श्रीरामचन्द्र भामण्डल सुग्रीवादि सबनिसूं कहते भए, जो पंडितोंके वैर वैरीके मरण-पर्यन्त ही है। अब लंकेश्वर परलोककूं प्राप्त भए सो यह महानर हुते इनका उत्तम शरीर अग्नि संस्कार करिए। तब सबनि प्रमाण करी, अर विभीषणसहित राम लक्ष्मण जहां मंदोदरी आदि अठारह हजार राणीनि सहित जैसे कुररी (मृगी) पुकारै तैसे विलाप करती हुती, सो वाहनसे उतर समस्त विद्याधरनि सहित दोऊ वीर तहां गए सो वे राम-लक्ष्मणकूं देखि अति विलाप करती भई, तोड़ डारे हैं सर्व आभूषण जिन्होंने, अर धूलकर धूसरा है अंग जिनका। तब श्रीराम महादयावन्त नानाप्रकारके शुभ वचनिकर सर्व राणीनिकों दिलासा करी, धैर्य बंधाया, अर आप सब विद्याधरनिकूं लेकर रावणके लोकाचार गए, कपूर अगर मलयागिरि चंदन इत्यादि नानाप्रकारके सुगन्ध द्रव्यनिकर पद्मसरोवरपर प्रतिहरिका दाह भया। बहुरि सरोवरके तीर श्रीराम तिष्ठे, कैसे हैं राम? महा कृपालु है चित्त जिनका, गृहस्थाश्रमविषैं ऐसे परिणाम कोई विरलेके होय है। बहुरि आज्ञा करी-कुम्भकर्ण इंद्रजीत मेघनादकूं सब सामंतनि-सहित छोडहु। तब कैयक विद्याधर कहते भए-वे महाक्रूर चित्त हैं अर शत्रु हैं, छोडवे योग्य नाहीं, बन्धनहीविषैं मरें। तब श्रीराम कहते भए--यह क्षत्रियनिका धर्म नाहीं, जिनशासनविषैं क्षत्रीनिकी कथा कहा तुमने नाहीं सुनी है। सूतेको, बंधेको, डरतेको, शरणागतकूं, दन्तविषै तृण लेतेको, भागेको, बाल वृद्ध स्त्रीनिकूं न हने, यह क्षत्रीका धर्म शास्त्रनिमें प्रसिद्ध है। तब सबनि कही आप जो आज्ञा करी सो प्रमाण। रामकी आज्ञा-प्रमाण बड़े-बड़े योधा नाना-

प्रकारके आयुधनिकूं धरे तिनके ल्यायवेकूं गए, कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनाद मारीच तथा मन्दोदरीका पिता राजा मय इत्यादि पुरुषनिको स्थूल बन्धनसहित सावधान योधा लिए आवें हैं सो माते हाथी-समान चले आवे हैं। तिनकूं देख वानरवंशी योधा परस्पर बात करते भए जो कदाचित् इन्द्रजीत मेघनाद कुम्भकरण रावणकी चिता जरती देख क्रोध करैं तो कपिवंशनिमें इनके सन्मुख लड़नेकूं कोई समर्थ नाहीं। जो कपिवंशी जहां बैठा था तहांसे उठ न सका। अर भामंडलने अपने सब योधानिकूं कहा जो इन्द्रजीत मेघनादकूं यहां तक बन्धेही अति यत्नसे लाइयो, अबार विभीषणका भी विश्वास नाहीं है, जो कदाचित भाई भतीजेनिको निर्धन देख भाईके वैर चितारे सो याकूं विकार उपजि आवे, भाईके दुखकर बहुत तप्तायमान है यह विचार भामंडलादिक तिनकूं अति यत्नकर राम-लक्ष्मणके निकट लाये। सो वे महा विरक्त रागद्वेष-रहित, जिनके मुनि होयवेके भाव, महा सौम्य दृष्टिकर भूमि निरखते आव, शुभ हैं आनन जिनके। वे महा धीर यह विचारैं हैं कि या असार संसार सागरविषै कोई सारताका लवलेश नाहीं, एक धर्मही सब जीवनिका बांधव है, सोई सार है, ये मनमें विचारैं हैं जो आज बन्धनसूं छूटें तो दिगंबर होय पाणिपात्र आहार करें। यह प्रतिज्ञा धरते रामके समीप आए। इन्द्रजीत कुम्भकर्णादिक विभीषणकी ओर आय तिष्ठे, यथायोग्य परस्पर संभाषण भया। बहुरि कुम्भकर्णादिक श्रीराम लक्ष्मणसूं कहते भए—अहो तिहारा परम धैर्य परम गंभीरता, अद्भुत चेष्टा, देवनिहु कर न जीता जाय ऐसा राक्षसनिका इन्द्र रावण, मृत्युकूं प्राप्त किया, पंडितनिके अति श्रेष्ठ गुणनिका धारक शत्रुहु प्रशंसा-योग्य है। तब श्रीराम लक्ष्मण इनकूं बहुत साता उपजाय अति मनोहर वचन कहते भए। तुम पहिले महा भोगरूप जैसैं तिष्ठवो थे तैसैं तिष्ठो। तब वह महाविरक्त कहते भए---अब इन भोगनिसूं हमारे कछु प्रयोजन नाहीं। यह विष-समान महादारुण महामोहके कारण महाभयंकर महा नरक निगोदादि दु:खदाई जिनकर कबहू जीवके साता नाहीं। विचक्षण हैं ते भोगसम्बन्धकूं कबहू न वांछे। लक्ष्मणने घना ही कहा, तथापि तिनका चित्त भोगासक्त न भया। जैसैं रात्रिविषैं दृष्टि अंधकाररूप होय, अर सूर्यके प्रकाश कर वही दृष्टि प्रकाशरूप होय जाय, तैसे ही कुम्भकर्णादिककी दृष्टि पहिले भोगासक्त हुती सो ज्ञानके प्रकाश कर भोगनितैं विरक्त भई। श्रीरामने तिनके बन्धन छुड़ाए, अर इन सबनिसहित पद्मसरोवरविषैं स्नान किया। कैसा है सरोवर? सुगंधित है जल जाका, ता सरोवरविषैं स्नानकर कपि अर राक्षस सब अपने स्थानक गए।

अथानंतर कैयक सरोवरके तीर बैठे विस्मयकर व्याप्त हैं चित्त जिनका शूरवीरोंकी कथा करते भए, कैयक क्रूर कर्मको उलाहना देते भए, कैयक हथियार डारते भए, कैयक रावणके गुणोंकर पूर्ण है चित्त जिनका सो पुकारकर रुदन करते भए, कैयक कर्मनिकी विचित्र

गतिकी वर्णन करते भए, अर कैयक संसार-वनकूं निंदते भए। कैसा है संसार-वन, जा थकी निकसना अतिकठिन है। कैयक मार्गविषैं अरुचिको प्राप्त भए, राज्यलक्ष्मीकूं महाचंचल निरर्थक जानते भए, अर कैयक उत्तम बुद्धि अकार्यकी निंदा करते भए, कैयक रावणकी गर्वकी भरी कथा करते भए, श्रीरामके गुण गावते भए, कैयक लक्ष्मणकी शक्तिका गुण वर्णन करते भए, कैयक सुकृतके फलकी प्रशंसा करते भए, निर्मल है चित्त जिनका। घर घर मृतकोंकी क्रिया होती भई, बाल वृद्ध सबके मुख यही कथा। लंकाविषैं सर्व लोक रावणके शोककरि अश्रुपात डारते चातुर्मास्य करते भए। शोककर द्रवीभूत भया है हृदय जिनका, सकल लोकनिके नेत्रनितैं जलके प्रवाह बहे सो पृथिवी जलरूप होय गई, अर तत्वोंकी गौणता दृष्टि पड़ी, मानों नेत्रोंके जलके भयकर आताप घुसकर लोकोंके हृदयविषें पैठा। सर्व लोकोंके मुखसे यह शब्द निकसे--धिकार धिक्कार, अहो बड़ा कष्ट भया, हाय हाय यह क्या अद्भुत भया, या भांति लोक विलाप करैं हैं, आंसू डारैं हैं। कैयक भूमिविषें शय्या करते भए मौन धार मुख नीचा करते भये, निश्चल है शरीर जिनका मानों काष्ठके हैं। कैयक शस्त्रोंकूं तोड़ डारते भये, कैयकोंने आभूषण डार दिए, अर स्त्रीके मुखकमलसे दृष्टि संकोची। कैयक अति दीर्घ उष्ण निस्वास नाखैं हैं सो कलुष होय गए अधर जिनके मानों दुखके अंकुर हैं, अर कैयक संसारके भोगनिसे विरक्त होय मनविषैं जिनदीक्षाका उद्यम करते भए।

अथानंतर पिछले पहिर महासंघ सहित अनंतवीर्य नामा मुनि लंकाके कुसुमायुध नामा वनविषैं छप्पन हजार मुनि-सहित आए। जैसे तारनिकर मंडित चंद्रमा सोहै तैसैं मुनिनिकर मंडित सोहते भए। जो ये मुनि रावणके जीवते आते तो रावण मारा न जाता, लक्ष्मणके अर रावणके विशेष प्रीति होती। जहां ऋद्धिधारी मुनि तिष्ठैं तहां सर्व मंगल होवें, अर केवली विराजै वहां चारों ही दिशाओंमें दोय सौ योजन पृथिवी स्वर्ग-तुल्य निरुपद्रव होय, अर जीवनिके वैरभाव मिट जावें। जैसे आकाशविषैं अमूर्तत्व अवकाश-प्रदानता निर्लेपता अर पवनविषै सुवीर्यता निसंगता, अग्निविषैं उष्णता, जलविषैं निर्मलता, पृथिवीविषैं सहनशीलता, तैसे स्वतः स्वभाव महामुनि लोककूं आनन्द दायक होय है ? अनेक अद्भुत गुणोंके धारक महामुनि तिन-सहित स्वामी विराजे। गौतम स्वामी कहै हैं--हे श्रेणिक ! तिनके गुण कौन वर्णन कर सकै, जैसैं स्वर्णका कुंभ अमृतका भरया अति सोहै तैसैं महामुनि अनेक ऋद्धिके भरे सोहते भए। निर्जंतु स्थानक वहां एक शिला ता ऊपर शुक्ल ध्यान धर तिष्ठें सो ताही रात्रिविषैं केवलज्ञान उपज्या, जिनके परम अद्भुत गुण वर्णन किए पापनिका नाश होय। तब भवनवासी असुरकुमार नागकुमार गरुड़-कुमार विद्युतकुमार अग्निकुमार पवनकुमार मेघकुमार द्वीपकुमार उदधिकुमार दिक्कुमार ये दश प्रकार तथा अष्ट प्रकार व्यंतर किन्नर-किंपुरुष महोरग गंधर्व यक्ष राक्षस भूत पिशाच, तथा पंच प्रकार ज्यो-

तिषी सूर्य चन्द्र ग्रह नक्षत्र तारा,अर सोलह स्वर्गके सब ही स्वर्गवासी ये चतुरनिकायके देव सौधर्म इंद्रादिक सहित धातुकीखंड द्वीपके विषैं श्रीतीर्थंकर देवका जन्म भया हुता सो सुमेरुपर्वतविषैं क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराए,जन्मकल्याणकका उत्सवकर प्रभुकूं माता पिताकूं सौंपि तहां उत्सवसहित तांडव नृत्यकर प्रभुकी बारबार स्तुति करते भए। कैसे हैं प्रभु ? बाल अवस्थाकूं धरैं हैं,परंतु बाल अवस्थाकी अज्ञान चेष्टासूं रहित हैं। तहां जन्मकल्याणकका समय साधकर सब देव लंकाविषैं अनंतवीर्य केवलीके दर्शनकूं आए। कैयक विमान चढे आए, कैयक राजहंसनिपर चढे आए,अर कैयक अश्व सिंह व्याघ्रादिक अनेक वाहननिपर चढ़े आए। ढोल मृदंग नगरे वीण बांसुरी झांझ मंजीरे शंख इत्यादि नाना प्रकारके वादित्र बजावते, मनोहर गान करते, आकाशमंडलकूं आच्छादते, केवलीके निकट महाभक्तिरूप अर्ध रात्रिके समय आए, तिनके विमाननिकी ज्योतिकर प्रकाश होय गया, अर वादित्रनिके शब्दकर दशों दिशा व्याप्त होय गई, राम लक्ष्मण यह वृत्तांत जान हर्षकूं प्राप्त भए, समस्त वानरवंशी अर राक्षसवंशी विद्याधर इंद्रजीत कुम्भकर्ण मेघनाद आदि सब राम लक्ष्मणके संग केवलीके दर्शनके लिए जायवेकूं उद्यमी भए। श्रीराम लक्ष्मण हाथी चढे, अर कैयक राजा रथपर चढे, कैयक तुरंगनि पर चढ़े छत्र चमर ध्वजा करि शोभायमान महा भक्तिकर संयुक्त,देवनि सारिखे महा सुगन्ध है शरीर जिनके, अति उदार अपने वाहननितैं उतर महाभक्तिकर प्रणाम करते स्तोत्र पाठ पढते केवलीके निकट आए। अष्टांग दण्डवतकर भूमिविषैं तिष्ठे,धर्म श्रवणकी है अभिलाषा जिनके, केवलीके मुखतैं धर्म श्रवण करते भए। दिव्यध्वनिमें यह व्याख्यान भया जो ये प्राणी अष्टकर्मसे बंधे महा दुखके चक्रपर चढे चतुर्गतिविषैं भ्रमण करैं हैं,आर्त रौद्र ध्यानकर युक्त नाना प्रकारके शुभाशुभ कर्मनिकूं करैं हैं, महामोहिनीयकर्मने ये जीव बुद्धिरहित किये तातैं सदा हिंसा करैं हैं, असत्य वचन कहै हैं, पराए मर्म भेदका वचन कहै हैं, परनिंदा करैं है, पर द्रव्य हरैं हैं, परस्त्रीका सेवन करैं हैं, प्रमाणरहित परिग्रहकूं अंगीकार करैं हैं बढ्या है महा लोभ जिनके। वे कैसे हैं, महा निद्यकर्म कर शरीर तज अधोलोकविषैं जाय हैं। तहां महा दुखके कारण सप्त नरक तिनके नाम-रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा,बालुकाप्रभा,पंकप्रभा,धूमप्रभा तमप्रभा, महातमप्रभा, सदा महा दुःखके कारण सप्त नरक अंधकारकर युक्त दुर्गंध, सूंघा न जाय, देख्या न जाय,स्पर्शा न जाय,महा भयकर महा विकराल है भूमि जिनकी,सदा दुर्वचन त्रास नाना प्रकारके छेदन भेदन तिनकर सदा पीडित नारकी खोटे कर्मनितैं पापवन्धकर बहुत काल सागरनि पर्यंत महा तीव्र दुःख भोगव हैं। ऐसा जानि पंडित विवेकी पापबंधतैं रहित होय धर्मविषैं चित्त धरहु। कैसे हैं विवेकी ? व्रत नियमके धरणहारे, निःकपट स्वभाव, अनेक गुणनिकर मंडित, वे नानाप्रकारके तपकर स्वर्गलोककूं प्राप्त होय हैं। बहुरि मनुष्यदेह पाय मोक्ष प्राप्त होय हैं अर जे धर्मकी अभिलाषासे रहित हैं, ते कल्याणके मार्गतैं रहित वारंवार जन्म मरण करते महादुखी

संसारविषैं भ्रमण करैं हैं जे भव्यजीव सर्वज्ञ वीतरागके वचनकर धर्मविषैं तिष्ठैं हैं ते मोक्षमार्गी शील सत्य शौच सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकर जब लग अष्टकर्मका नाश न करैं, तब लग इंद्र अहमिंद्र पदके उत्तम सुखको भोगवे हैं। नाना प्रकारके अद्भुत सुख भोग वहांसे चयकर महा-राजाधिराज होय, बहुरि ज्ञान पाय जिनमुद्रा धर महा तपकर केवलज्ञान उपाय अष्टकर्म-रहित सिद्ध होय हैं, अनन्त अविनाशी आत्मिक स्वभावमयी परम आनंद भोगवे हैं। यह व्याख्यान सुन इंद्रजीत मेघनाद अपने पूर्वभव पूछते भये। सो केवली कहै हैं–एक कौशांबी नामा नगरी तहां दो भाई दलिद्री एकका नाम प्रथम, दूजेका नाम पश्चिम। एक दिन विहार करते भवदत्त-नामा मुनि वहां आए सो यह दोनो भाई धर्म श्रवणकर ग्यारमी प्रतिमाके धारक क्षुल्लक श्रावक भए। सो मुनिके दर्शनकूं कौशांबी नगरीका राजा इन्द्र नामा राजा आया। सो मुनि महाज्ञानी राजकूं देख जान्या याके मिथ्यादर्शन दुर्निवार है। अर ताही समय नंदीनामा श्रेष्ठी महा जिन-भक्त मुनिके दर्शनकूं आया। ताका राजाने आदर किया, ताकूं देख प्रथम अर पश्चिम दोऊ भाई-निमेंसे छोटे भाई पश्चिमने निदान किया जो मैं या धर्मके प्रसादकरि नंदी सेठके पुत्र होऊं। सो बड़े भाईने अर गुरुने बहुत संबोध्या, जो जिनशासनविषैं निदान महानिंद्य है सो यह न समझा कुबुद्धि निदानकर दुखित भया मरण कर नंदीके इंदुमुखी नामा स्त्री ताके गर्भविषैं आया। सो गर्भविषैं आवते ही बड़े बड़े राजानिके स्थानकनिविषैं कोटका निपात, दरवाजेनिका निपात इत्यादि नाना प्रकारके चिह्न होते भए। बड़े बड़े राजा याकूं नाना प्रकारके निमित्तकर महा नर जान जन्महोसे अति आदर संयुक्त दूत भेज भेज कर द्रव्य पठाय सेवते भए। यह बड़ा भया, याका नाम रतिवर्धन, सो सब राजा याकूं सेवैं कौशांबी नगरीका राजा इंदु भी सेवा करैं। नित्य आय प्रणाम करैं। या भांति यह रतिवर्धन महाविभूति कर संयुक्त भया। अर बड़ा भाई प्रथम मरकर स्वर्गलोक गया, सो छोटे भाईके जीवकूं संबोधवेके अर्थ क्षुल्लकका स्वरूप धर आया। सो यह मदोन्मत्त राजा मदकर अंधा होय रह्या सो क्षुल्लककूं दुष्ट लोकनिकर द्वार-विषैं पैठने न दिया। तब देवने क्षुल्लकका रूप दूरकर रतिवर्धनका रूप किया, तत्काल ताका नगर उजाड़ उद्यान कर दिया, अर कहता भया--अब तेरी कहा वार्ता? तब वह पांयनि परि स्तुति करता भया। तब ताकूं सकल वृत्तांत कह्या जो आपां दोऊ भाई हुते। मैं बड़ा, तू छोटा। सो क्षुल्लकके व्रत धारे, सो तैं नंदीसेठकूं देख निदान किया सो मरि नंदीके घर उपज्या, राज-विभूति पाई, अर मैं स्वर्गविषैं देव भया। यह सब वार्ता सुनि रतिवर्धनकूं सम्यक्त उपजा, मुनि भया अर नंदीकूं आदि दे अनेक राजा रतिवर्धनके संग मुनि भए। रतिवर्धन तपकरि जहां भाईका जीव देव हुता तहां ही देव भया। बहुरि दोऊ भाई स्वर्गतैं चयकर राजकुमार भए। एकका नाम उर्व दूजेका नाम उर्वस, राजा नरेंद्र रानी विजयाके पुत्र। बहुरि जिनधर्मका आराधन

करि स्वर्गविषैं देव भए। वहांसे चयकरि तुम दोऊ भाई रावणके रानी मंदोदरी ताके इंद्रजीत मेघनाद पुत्र भए। अर नंदीसेठकै इंदुमुखी रतिवर्धनकी माता सो जन्मांतरविषैं मंदोदरी भई। पूर्व जन्मविषैं स्नेह हुता सो अब हू माताका पुत्रसे अतिस्नेह भया। कैसी हैं मंदोदरी? जिन-धर्मविषैं आसक्त है चित्त जाका, यह अपने पूर्व भव सुन दोऊ भाई संसारकी मायातैं विरक्त भए। उपजा है महावैराग्य जिनकूं, जैनेश्वरी दीक्षा आदरी। अर कुंभकर्ण मारीच राजा मय और हू बड़े बड़े राजा संसारतैं महाविरक्त होय मुनि भए, तजे हैं विषय कषाय जिन्होंने, विद्याधर राज-की विभूति तृणवत् तजी, महा योगीश्वर होय अनेक ऋद्धिके धारक भए, पृथिवीविषैं विहार करते भव्यनिकूं प्रतिबोधते भए। श्रीमुनिसुव्रतनाथके मुक्ति गए पीछे तिनके तीर्थविषैं यह बड़े बड़े महापुरुष भए, परम तपके धारक अनेक ऋद्धिसंयुक्त। ते भव्यजीवनिकूं बारंबार वंदिवे योग्य हैं। अर मंदोदरी पति अर पुत्र दोउनिके विरहकरि अतिव्याकुल भई महा शोककर मूर्च्छाकूं प्राप्त भई! बहुरि सचेत होय कुररी (मृगी)की न्याई विलाप करती भई। दुखरूप समुद्र-विषैं मग्न होय,हाय पुत्र, इंद्रजीत मेघनाद! यह कहा उद्यम किया, मैं तिहारी माता अतिदीन ताहि क्यों तजी? यह तुमको कहा योग्य, जो दुखकरि तप्तायमान माता ताका समाधान किए वगैर उठ गए। हाय पुत्र हो! तुम कैसैं मुनिव्रत धारोगे? तुम देवनिसारिखे महा भोगी, शरीरकूं लडावनहारे,कठोर भूमिपर कैसैं शयन करोगे? समस्त विभव तजा,समस्त विद्या तजी,केवल अध्यात्मविद्याविषैं तत्पर भए। अर राजा मय मुनि भया,ताका शोक करै है--हाय पिता! यह कहा किया? जगत् तजि मुनिव्रत धारया तुम मोतैं तत्काल ऐसा स्नेह क्यों तज्या? मैं तिहारी बालिका, मोतैं दया क्यों न करी, बाल्यावस्थाविषैं मोपर तिहारी अतिकृपा हुती। मैं पिता अर पुत्र अर पति सबसे रहित भई, स्त्रीके यही रक्षक हैं। अब मैं कौनके शरण जाऊं, मैं पुण्यहीन महा दुखकूं प्राप्त भई? या भांति मंदोदरी रुदन करै, ताका रुदन सुन सबहीकूं दया उपजै, अश्रुपातकरि चातुर्मास कीया। ताहि शशिकांता आर्यिका उत्तम वचनकरि उपदेश देती भई--हे मूर्खिणी! कहा रोवै? या संसारचक्रविषैं जीवनिने अनंत भव धारे, तिनमें नारकी अर देवनि-के तो संतान नाहीं। अर मनुष्य अर तिर्यंचनिके हैं सो तैं चतुर्गति भ्रमण करते मनुष्य तिर्यंचनिके भी अनंत जन्म धारे, तिनविषैं तेरे अनेक पिता पुत्र बांधव भए, तिनकूं जन्म जन्ममें रुदन किया, अब कहा विलाप करै है। निश्चलता भज, यह संसार असार है, एक जिनधर्म ही सार है। तू जिनधर्मका आराधन कर, दुखसे निवृत्त होहु। ऐसे प्रतिबोधके कारण आर्यिकाके मनोहर वचन सुन मंदोदरी महा विरक्त भई। उत्तम है गुण जाविषैं समस्त परिग्रह तजकरि एक शुक्ल वस्त्र धारि आर्यिका भई। कैसी है मंदोदरी? मन वचन कायकरि निर्मल जो जिनशासन ताविषैं अनुरागिणी है, अर चंद्रनखा रावणकी बहिन हू याही आर्यिकाके निकट

दीक्षा धरि आर्यिका भई। जा दिन मंदोदरी आर्यिका भई ता दिन अडतालीस हजार आर्यिका भई।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं इन्द्रजीत मेघनाद कुंभकरणका वैराग्य अर मंदोदरी आदि रानीनिका वर्णन करनेवाला अठहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७८॥

उन्यासीवां पर्व

[राम और सीताका मिलाप]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं--हे राजन् ! अब श्रीराम लक्ष्मणका महाविभूतिसों लंकाविषै प्रवेश भया सो सुन। महा विमाननिके समूह अर हाथीनिकी घटा अर श्रेष्ठ तुरंगनिके समूह, अर मंदिर समान रथ, अर विद्याधरनिके समूह, अर हजारां देव, तिनकरि युक्त दोऊ भाई महाज्योतिकूं धरे लंकामें प्रवेश करते भए। तिनकूं लोक देखि अति हर्षित भए, जन्मांतरके धर्मके फल प्रत्यक्ष देखते भए। राजमार्गकेविषै जाते श्रीराम लक्ष्मण तिनकूं देख नगरके नर अर नारिनिको अपूर्व आनंद भया। फूलि रहे हैं मुख जिनके, स्त्री झरोखानिविषै बैठी जालीनिमें होय देखै हैं। कमल समान हैं मुख जिनके, महा कौतुककरि युक्त परस्पर वार्ता करै हैं--हे सखी ! देखहु--यह राम राजा दशरथका पुत्र, गुणरूप रत्ननिकी राशि, पूर्णमासीके चंद्रमा समान है वदन जाका, कमल-समान हैं नेत्र जाके, अद्भुत पुण्यकर यह पद पाया है, अति-प्रशंसा योग्य है आकार जाका, धन्य है वह कन्या जिन्होंने ऐसे वर पाए। जानैं यह वर पाए तानैं कीर्तिका थंभ लोकविषै थाप्या, जानैं जन्मांतरविषै धर्म आचरया होय सो ही ऐसा नाथ पावै, तासमान अन्य नारी कौन ? राजा जनककी पुत्री महाकल्याणरूपिणी जन्मांतिरविषै महा-पुण्य उपार्जे हैं तातें ऐसे पति याहि जैसें शची इंद्रके, तैसें सीता रामके। अर यह लक्ष्मण वासु-देव चक्रपाणि शोभै है जाने असुरेंद्र-समान रावण रणविषै हता, नीलकमलसमान कांति जाकी, अर गौर कांतिकर संयुक्त जो बलदेव श्रीरामचंद्र तिनसहित ऐसे सोहै जैसे प्रयागविषै गंगा यमुनाके प्रवाहका मिलाप सोहै। अर यह राजा चंद्रोदयका पुत्र विराधित है जातें लक्ष्मणसूं प्रथम मिलापकर विस्तीर्ण विभूति पाई। अर यह राजा सुग्रीव किहकंधापुरका धनी महा पराक्रमी जाने श्रीरामदेवसूं परम प्रीति जनाई। अर यह सीताका भाई भामंडल राजा जनकका पुत्र चंद्रगति विद्याधरके पल्या सो विद्याधरनिका इंद्र है। अर यह अंगदकुमार राजा सुग्रीवका पुत्र जो रावण-कूं बहुरूपिणी विद्या साधते विघ्नकूं उद्यमी भया। अर हे सखी ! यह हनुमान महासुंदर उतंग हाथिनिके रथ चढ्या पवनकरि हाले है वानरके चिन्हकी ध्वजा जाके, जाहि देखि रणभूमिविषै शत्रु

पलाय जांय सो राजा पवनका पुत्र अंजनीके उदरविषै उपज्या, जानैं लंकाके कोट दरवाजे ढाहे। ऐसी वार्ता परस्पर स्त्रीजन करै हैं तिनके वचनरूप पुष्पनिकी मालानिकरि पूजित जो राम सो राजमार्ग होय आगे आए। एक चमर ढारती जो स्त्री ताहि पूछया हमारे विरहके दुःखकरि तप्तायमान जो भामंडलकी बहिन सो कहां तिष्ठै है? तब वह रत्ननिके चूडाकी ज्योति करि प्रकाशरूप है भुजा जाकी सो आंगुरीकी समस्याकरि स्थानक दिखावती भई—हे देव! यह पुष्पप्रकीर्णनामा गिरि नीझरनानिके जलकरि मानों हास्य ही करै हैं, तहां नंदनवन-समान महा मनोहर मन, ताविषै राजा जनककी पुत्री कीति शील है परिवार जाके सो तिष्ठै है।

या भांति रामजीसे चमर ढारती स्त्री कहती भई। अर सीताके समीप जो उर्मिका नाम सखी सब सखिनिविषैं प्रीतिकी भजनहारी सो अंगुरी पसार सीताकूं कहती भई—हे देवि! चन्द्रमा समान है छत्र जाका, अर चांद सूर्य समान हैं कुंडल जाके, अर शरदके नीझरने समान हार जाकैं, सो पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र तिहारे वल्लभ आए। तिहारे वियोगकरि मुखविषैं अत्यंत खेदकूं धरैं, हे कमलनेत्रे! जैसे दिग्गज आवैं तैसे आवे हैं। यह वार्ता सुनि सीताने प्रथम तो स्वप्न समान वृतांत जाण्या। बहुरि आप अति आनन्दको धरैं जैसे मेघपटलसे चंद्र निकसे तैसैं हाथीतैं उतरि आये,जैसैं रोहिणीके निकट चंद्रमा आवैं तैसैं आये। तब सीता नाथकूं निकट आया जान अति हर्षकी भरी उठकरि सन्मुख आई। कैसी है सीता? धूरकरि धूसर हैं अंग, अर केश बिखर रहे हैं, श्याम परि गए हैं होंठ जाके, स्वभाव ही करि कृश हुती अर पतिके वियोगकरि अत्यंत कृश भई, अब पतिके दर्शनकरि उपज्या है अतिहर्ष जाकूं प्राणकी आश बंधी, मानों स्नेहकी भरी शरीरकी कांतिकरि पतिसूं मिलाप ही करै है, अर मानों नेत्रनिकी ज्योतिरूप जलकरि पतिकूं स्नान ही करावै है अर क्षणमात्रविषैं बढ़ गई है शरीरकी लावण्यतारूप सम्पदा, अर हर्षके भरे जे निश्वास तिनकरि मानों अनुरागका बीज बोवै है! कैसी है सीता? रामके नेत्रनिकूं विश्रामकी भूमि, अर पल्लव-समान जे हस्त तिनकरि जीते हैं लक्ष्मीके करकमल जानैं, सौभाग्यरूप रत्ननिकी खान सम्पूर्ण चंद्रमा-समान है वदन जाका, चंद्र कलंकी यह निःकलंक, बिजुरी समान है कांति जाकी, वह चंचल यह निश्चल, प्रफुल्लित कमल-समान हैं नेत्र जाके, मुखरूप चंद्रकी चंद्रिकाकरि अति शोभाकूं प्राप्त भई है। यह अद्भुत वार्ता है कि कमल तो चंद्रकी ज्योतिकरि मुद्रित होय है, अर याके नेत्रकमल मुखचंद्रकी ज्योतिकरि प्रकाशरूप हैं। कलुषतारहित उन्नत हैं स्तन जाके मानों कामके कलश ही हैं, सरल है चित्त जाका सो कौशल्याका पुत्र रानी विदेहकी पुत्रीकूं निकट आवती देखी, कथनविषैं न आवै ऐसे हर्षकूं प्राप्त भया। अर यह रतिसमान सुंदरी रमणकूं आवता देख विनयकिरि हाथ जोड़ खड़ी अश्रुपातकरि भरे हैं नेत्र जाके, जैसैं शची इंद्रके निकट आवै, रति कामके निकट

आवै, दया जिनधर्मके निकट आवै, सुभद्रा भरतके निकट आवै, तैसे ही सीता सती रामके समीप आई, सो घने दिननिका वियोग ताकरि खेदखिन्न रामने मनोरथके सैकड़ानिकर पाया है नवीन संगम जाने सो महाज्योतिका धरणहारा सजल है नेत्र जाके, भुजबन्धनकरि शोभित जे भुजा, तिनकरि प्राणप्रियासूं मिलता भया। ताहि उरसूं लगाय सुखके सागरविषैं मग्न भया, उरसूं जुदी न कर सके, मानों विरहसे डरै है। अर वह निर्मल चित्तकी धरणहारी प्रीतिके कंठविषैं अपनी भुजपांसि डारि ऐसी सोहती भई जैसे कल्पवृक्षनिसूं लिपटि कल्पबेलि सोहै, भया है रोमांच दोउनिके अंगविषैं, परस्पर मिलापकरि दोऊ ही अति सोहते भये। ते देवनिके युगल समान हैं जैसैं देव देवांगना सोहैं तैसैं सोहते भये। सीता अर रामका समागम देखि देव प्रसन्न भये सो आकाशतैं दोनोंनिपर पुष्पनिकी वर्षा करते भए सुगंध जलकी वर्षा करते भए, अर ऐसे वचन मुखतैं उचारते भए--अहो अनुपम है शील जाका ऐसी शुभ चित्त सीता धन्य है, याकी अचलता गंभीरता धन्य है, व्रत शीलकी मनोज्ञता भी धन्य है, जाका निर्मलपन धन्य है। सतीनिविषैं उत्कृष्ट यह सीता, जानैं मनहुकरि द्वितीय पुरुष न इच्छया, शुद्ध है नियम व्रत जाका। या भांति देवनि प्रशंसा करी, ताही समय अतिभक्तिका भरया लक्ष्मण आय सीताके पांयनि परया, विनयकरि संयुक्त सीता अश्रुपात डारती ताहि उरसूं लगाय कहती भई--हे वत्स! महाज्ञानी मुनि कहते हुते जो यह वासुदेव पदका धारक है सो प्रगट भया, अर अर्धचक्री पदका राज तेरे आया, निर्ग्रंथके वचन अन्यथा न होंय। अर तेरे यह बड़े भाई पुरुषोत्तम बलदेव, जिन्होंने विरहरूप अग्निविषैं जरती जो मैं सो निकासी। बहुरि चंद्रमा समान है ज्योति जाकी ऐसा भाई भामंडल बहिनके समीप आया, ताहि देखि अति मोहकरि मिली। कैसा है भाई? महा विनयवान है अर रणमें भला दिखाया है पराक्रम जाने। अर सुग्रीव वा हनुमान नल नील अंगद विराधित चंद्र सुषेण जांबव इत्यादिक बड़े-बड़े विद्याधर अपना नाम सुनाय वन्दना अर स्तुति करते भये, नाना प्रकारके वस्त्र आभूषण कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी माला सीताके चरणके समीप स्वर्णके पात्रविषैं मेल भेंट करते भये। अर स्तुति करते भये--हे देवि! तुम तीन लोकविषैं प्रसिद्ध हो, महा उदारताकूं धरो हो, गुण सम्पदाकर सबनिमें बड़ी हो, देवनिकरि स्तुति करने योग्य हो, अर मंगलरूप है दर्शन तिहारा जैसे सूर्यकी प्रभा सूर्यसहित प्रकाश करै तैसें तुम श्रीरामचंद्र सहित जयवंत होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिका
विषैं राम और सीताका मिलाप वर्णन करनेवाला
उन्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥७९॥

अस्सीवां पर्व

[विभीषणका अपने दादा आदिको संबोधन]

अथानंतर सीताके मिलापरूप सूर्यके उदयकरि फूल गया है मुख कमल जाका, ऐसे जो राम सो अपने हाथकरि सीताका हाथ गह उठे ऐरावत गजसमान जो गज तापर सीतासहित आरोहण किया, मेघ-समान वह गज ताकी पीठपर जानकीरूप रोहिणी करि युक्त रामरूप चंद्रमा सोहते भये, समाधानरूप है बुद्धि जिनकी दोऊ अति प्रीतिके भरे प्राणिनिके समूहकूं आनंदके करता बड़े-बड़े अनुरागी विद्याधर लार, लक्ष्मण लार, स्वर्ग-विमान तुल्य रावणका महल तहां श्रीराम पधारे। रावणके महलके मध्य श्रीशांतिनाथका मंदिर अतिसुंदर, तहां स्वर्णके हजारों थंभ नाना प्रकारके रत्नोंकरि मंडित मंदिरकी मनोहर भीति जैसैं महाविदेहके मध्य सुमेरुगिरि सोहै तैसें रावणके मंदिरविषै श्रीशांतिनाथका मंदिर सोहै। जाहि देखे नेत्र मोहित होय जांय, तहां घंटा बाजै है ध्वजा फहरै हैं, महा मनोहर वह शांतिनाथका मंदिर वर्णन विषै न आवै। श्रीराम हाथीतैं उतरे नागेंद्र समान है पराक्रम जाका, प्रसन्न नेत्र महालक्ष्मीवान जानकीसहित किंचित् काल कायोत्सर्गकी प्रतिज्ञा करी, प्रलंबित हैं भुजा जाकी महा प्रशांत हृदय सामायिककूं अंगीकार करि हाथ जोड़ि शांतिनाथ स्वामीका स्तोत्र समस्त अशुभ कर्मका नाशक पढ़ते भए—हे प्रभो! तिहारे गर्भावतारविषै सर्वलोकविषै शांति भई, महा कांतिकी करणहारी, सर्व रोगकी हरणहारी, जाकरि सकल जीवनिकूं आनन्द उपजै। अर तिहारे जन्मकल्याणकविषैं इंद्रादिक देव महा हर्षित होय आए, क्षीरसागरके जलकरि सुमेरुके पर्वतपर तिहारा जन्माभिषेक भया। अर तुमने चक्रवर्ती पद धर जगत्का राज्य किया, बाह्य शत्रु बाह्य चक्रसे जीते, अर मुनि होय माहिले मोह रागादिक शत्रु ध्यानकरि जीते, केवलबोध लह्या, जन्म जरा मरणसे रहित जो शिवपुर कहिए मोक्ष ताका तुम अविनाशी राज्य लिया, कर्मरूप वैरी ज्ञान शस्त्रतैं निराकरण किए। कैसे हैं कर्मशत्रु? सदा भव-भ्रमणके कारण, अर जन्म जरा मरण भयरूप आयुधनिकर युक्त सदा शिवपुर पंथके निरोधक। कैसा है वह शिवपुर? उपमारहित नित्य शुद्ध जहां परभावका आश्रय नाहीं केवल निजभावका आश्रय है अत्यन्त दुर्लभ सो तुम आप निर्वाणरूप औरनिकूं निर्वाणपद सुलभ करौ हो, सर्व जगत्कूं शांतिके कारण हो। हे श्रीशांतिनाथ! मन वचन कायकरि नमस्कार तुमकूं। हे जिनेश, हे महेश! अत्यन्त शांत दशाकूं प्राप्त भए हो स्थावर जंगम सर्व जीवनिके नाथ हो, जो तिहारे शरण आवै तिनके रक्षक हो, समाधि-बोधिके देनहारे, तुम एक परमेश्वर सर्वके गुरु, सबके बांधव हो, मोक्षमार्गके प्ररूपणहारे, सर्व इन्द्रादिक देवनिकर पूज्य, धर्मतीर्थके कर्ता हो, तिहारे प्रसाद करि सर्व दुखसे रहित जो परम स्थानक ताहि मुनि-

राज पावैं हैं। हे देवाधिदेव! नमस्कार है तुमकूं सर्व कर्म विलय किया है। हे कृतकृत्य! नमस्कार तुमकूं,पाया है परम शांतिपद जिन्होंने,तीनलोककूं शांतिके कारण सकल स्थावर जंगम जीवनिके नाथ, शरणागतपालक समाधिबोधके दाता महाकांतिके धारक हे प्रभो! तुम ही गुरु, तुम ही बांधव, तुम ही मोक्षमार्गके नियंता परमेश्वर,इन्द्रादिक देवनिकरि पूज्य धर्मतीर्थके कर्ता जिनकरि भव्य जीवनिकूं सुख होय,सर्व दुखके हरणहारे,कर्मनिके अंतक नमस्कार तुमकूं। हे लब्धलभ्य! नमस्कार तुमकूं। लब्धलभ्य कहिए पाया है पायवे योग्य पद जिन्होंने,महाशांत स्वभावविषैं विराजमान सर्व दोष रहित हे भगवान्, कृपा करहु वह अखंड अविनाशी पद हमें देवहु, इत्यादि महास्तोत्र पढ़ते कमल-नयन श्रीराम प्रदक्षिणा देकर वंदना करते भए। महा विवेकी पुण्य कर्मविषैं सदा प्रवीण। अर रामके पीछे नम्रीभूत है अंग जाका, दोऊ कर जोड़ महासमाधानरूप जानकी स्तुति करती भई। श्रीरामके शब्द महा दुंदुभी समान अर जानकी महा मिष्ट कोमल वीणा समान बोलती भई। अर विशल्या-सहित लक्ष्मण स्तुति करते भए, अर भामंडल सुग्रीव तथा हनुमान मंगल स्तोत्र पढ़ते भए,जोड़े हैं कर कमल जिनने,अर जिनराजविषैं पूर्ण है भक्ति जिनकी,महा गान करते मृदंगादि बजावते महाध्वनि करते भए, सो मयूर मेघकी ध्वनि जानि नृत्य करते भए। बारंबार स्तुति प्रणाम करि जिनमंदिरविषैं यथायोग्य तिष्ठे। ता समय राजा विभीषण अपने दादा सुमाली अर तिनके लघुवीर सुमाल्यवान अर सुमालीके पुत्र रत्नश्रवा रावणके पिता तिनकूं आदि दे अपने बड़े तिनका समाधान करता भया। कैसा है विभीषण? संसारकी अनित्यताके उपदेशविषैं अत्यन्त प्रवीण सो बड़निसूं कहता भया—हे तात! ए सकल जीव अपने उपार्जे कर्मनिकूं भोगवैं है, तातैं शोक करना वृथा है। अर अपना चित्त समाधान करहु, आप जिन-आगमके वेत्ता महा शांत चित्त अर विचक्षण हो, औरनिकूं उपदेश देयवे योग्य, आपकूं हम कहा कहैं, जो प्राणी उपज्या है सो अवश्य मरणकूं प्राप्त होय है, अर यौवन पुष्पनिकी सुगंधता-समान क्षणमात्रविषैं और रूप होय है, अर लक्ष्मी पल्लवनिकी शोभासमान शीघ्र ही और रूप होय है अर बिजुरीके चमत्कार समान यह जीतव्य है, अर पानीके बुदबुदासमान बंधुनिका समागम है, अर सांझके बादरके रंग समान यह भोग हैं, अर यह जगत्की करणी स्वप्नकी क्रिया समान है, जो ये जीव पर्यायार्थिक नयकरि मरण न करैं तो हम भवांतरतैं तिहारे वंशविषैं कैसे आवते? हे तात! अपना ही शरीर विनाशीक है तो हितू जनका अत्यंत शोक काहेकूं करिए, शोक करना मूढ़ता है। सत्पुरुषनिको शोकके दूर करिवे अर्थि संसारका स्वरूप विचारना योग्य है। देखे सुने अनुभवे जे पदार्थ वे उत्तम पुरुषनिकूं शोक उपजावैं, परंतु विशेष शोक न करना। क्षणमात्र भया तो भया, शोककरि बांधवका मिलाप नाहीं, बुद्धिभ्रष्ट होय है, तातैं शोक न करना। यह विचारना या संसार

असारविषैं कौन-कौन सम्बन्ध भए, या जीवके कौन-कौन बांधव भए, ऐसा जानि शोक तजना अपनी शक्ति-प्रमाण जिनधर्मका सेवन करना। यह वीतरागका मार्ग संसार सागरका पार करणहारा है, सो जिनशासनविषैं चित्त धरि आत्मकल्याण करना इत्यादि मनोहर मधुर वचननिकर विभीषणने अपने बड़ेनिका समाधान किया।

(रामका सर्व सेना सहित विभीषणके घर भोजनके लिए आमंत्रण)

अथानन्तर विभीषण अपने निवास गया अर अपनी विदग्धनामा पटरानी, समस्त व्यवहारविषैं प्रवीण, हजारां राणीनिमें मुख्य ताहि श्रीरामके नौतिवेकूं भेज्या, सो आयकरि सीतासहित रामकूं अर लक्ष्मणकूं नमस्कारकरि कहती भई—हे देव! मेरे पतिका घर आपके चरणारविन्दके प्रसंगकरि पवित्र करहु, आप अनुग्रह करिवे योग्य हो, या भांति रानी वीनती करी। तब ही विभीषण आया, अति आदरतैं कहता भया—हे देव! उठिये, मेरा घर पवित्र करिए! तब आप याके लार ही याके घर जायवेकूं उद्यमी भए, नाना प्रकारके वाहन कारी घटा-समान गज अति उत्तंग, अर पवन समान चंचल तुरंग, अर मन्दिर-समान रथ इत्यादि नाना प्रकारके जे वाहन तिनपर आरूढ अनेक राजा तिन सहित विभीषणके घर पधारे, समस्त राजमार्ग सामंतनिकरि आच्छादित भया। विभीषणने नगर उछाला, मेघकी ध्वनि-समान वादित्र बाजते भए, शंखनिके शब्दकरि गिरिकी गुफा नाद करती भई, झंझा भेरी मृदंग ढोल हजारों बाजते भए, लपाक काहल धुंधु अनेक बाजे अर दुंदुभी बाजे, दशो दिशा वादित्रनिके नादकरि पूरी गई। ऐसे ही तो वादित्रनिके शब्द, अर ऐसे ही नाना प्रकारके वाहननिके शब्द, ऐसे ही सामंतनिके अट्टहास, तिनकर दशों दिशा पूरित भाई। कैयक सिंह शार्दूल पर चढे हैं, कैयक हाथीनिपर, कैयक तुरगनिपर चढ़े हैं, नाना प्रकारके विद्यामई तथा सामान्य वाहन तिनपर चढे चाले। नृत्यकारिणी नृत्य करैं हैं, नट भाट अनेक कला अनेक चेष्टा करैं हैं, अति सुंदर नृत्य होय है, बंदीजन बिरद बखानैं हैं, ऊंचे स्वरसे स्तुति करैं हैं। अर शरदकी पूर्णमासीके चंद्रमा समान उज्ज्वल छत्रनिके मंडल करि अंबर छाय रहा है, नाना प्रकारके आयुधनिकी कांति करि सूर्यकी कांति दबि गई है, नगरके सकल नर नारीरूप कमलनिके वनकूं आनंद उपजावते भानु-समान श्रीराम विभीषणके घर आए। गौतमस्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! ता समयकी विभूति कही न जाय, महा शुभ लक्षण जैसी देवनिके शोभा होय तैसी भई। विभीषणने अर्घपाद्य किए, अति शोभा करी। श्रीशांतिनाथके मंदिरतैं लेय अपने महलतक महा मनोज्ञ तांडव किए, आप श्रीराम हाथीसे उतर सीता अर लक्ष्मण सहित विभीषणके घरमें प्रवेश करते भए। विभीषणके महलके मध्य पद्मप्रभु जिनेन्द्रका मंदिर, रत्ननिके तोरणनिकरि मंडित, कनकमई ताके चौगिर्द अनेक जिनमंदिर, जैसे पर्वतनिकैं मध्य सुमेरु सोहै,

तैसे पद्मप्रभुका मंदिर सोहै, सुवर्णके हजारा थंभ तिनके ऊपर अति ऊंचे दैदीप्यमान अति विस्तार संयुक्त जिनमंदिर सोहैं, नाना प्रकारके मणिनिके समूहकरि मंडित अनेक रचनाकूं धरै, अति सुंदर पद्मराग मणिमई। पद्मप्रभु जिनेंद्रकी प्रतिमा अति अनुपम विराजै, जाकी कांतिकरि मणिनिकी भूमिविषैं मानों कमलनिकर वन फूल रहे हैं। सो राम लक्ष्मण सीतासहित वंदनाकरि स्तुतिकरि यथायोग्य तिष्ठे।

अथानंतर विद्याधरनिकी स्त्री राम लक्ष्मण सीताके स्नानकी तैयारी करावती भई, अनेक प्रकारके सुगन्ध तैल तिनके उबटना किए, नासिकाकूं सुगन्ध अर देहकूं अनुकूल पूर्व दिशाकूं मुखकर स्नानकी चौकी पर विराजे, बडी ऋद्धिकर स्नानकूं प्रवरते। सुवर्णके मरकत मणिके हीरानिके स्फटिक मणिके इंद्रनीलमणिके कलश सुगंध जलके भरे तिनकर स्नान भया, नाना प्रकारके वादित्र बाजे, गीत गान भए। जब स्नान होय चुका तब महापवित्र वस्त्र आभूषण पहिरे, बहुरि पद्मप्रभुके चैत्यालय जाय वंदना करी। विभीषणने रामकी मिजमानी करी, ताके विस्तार कहां लग कहिए। दुग्ध दही घी शर्वतकी बावड़ी भरवाई पक्वान्न अर अन्नके पर्वत किए, अर जे अद्भुत वस्तु नन्दनादि वन विषैं पाइए ते मंगाई, मनकूं नासिकाकूं सुगंध,नेत्रोंकूं प्रिय अति स्वादकूं धरैं,जिह्वाकूं वल्लभ षट्रस सहित भोजनकी तैयारी करी, सामग्री तो सर्व सुन्दर ही हुती, अर सीताके मिलापकर रामकूं अति प्रिय लागी। रामके चित्तकी प्रसन्नता कथनविषैं न आवै,जब इष्टका संयोग होय तब पांचों इंद्रियनिके सर्व ही भोग प्यारे लागें नातर नाहीं। जब अपने प्रीतमका संयोग होय तब भोजन भली भांति रुचै, सुंदर रुचै सुंदर वस्त्रका देखना रुचै, रागका सुनना रुचै,कोमल स्पर्श रुचै,मित्रके संयोगकर सर्व मनोहर लगै। अर जब मित्रका वियोग होय तब सब स्वर्ग तुल्य भी नरक तुल्य भासैं। अर प्रियके समागमविषैं महा विषम वन स्वर्ग तुल्य भासै,महा सुंदर अमृत-सारिखे रस, अर अनेक वर्णके अद्भुत भक्ष्य,तिनकर राम लक्ष्मण सीताकूं तृप्त किए अद्भुत भोजन क्रिया भई। भूमिगोचरी विद्याधर परिवारसहित अति सन्मानकर जिमाए,चन्दनादि सुगंधके लेप किए, तिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं,अर भद्रसाल नंदनादिक बनके पुष्पनिसे शोभित किये,अर महा सुंदर कोमल महीन वस्त्र पहिराए,नाना प्रकारके रत्ननिके आभूषण दिए। कैसे हैं आभूषण? जिनके रत्ननिकी ज्योतिके समूहकरि दशों दिशाविषैं प्रकाश होय रहा है। जेते रामकी सेनाके लोक हुते ते सब विभीषणने सन्मान कर प्रसन्न किये,सबके मनोरथ पूर्ण किये,रात्रि अर दिवस सब विभीषण हीका यश करैं, अहो यह विभीषण राक्षसवंशका आभूषण है, जाने राम लक्ष्मणकी बड़ी सेवा करी, यह महा प्रशंसा योग्य है, मोटा पुरुष है, यह प्रभावका धारक जगत्विषैं उतंगताकूं प्राप्त भया जाके मंदिरविषैं श्रीराम लक्ष्मण पधारे। या भांति विभीषणके गुणग्रहणविषैं तत्पर विद्याधर होते भए। सर्व लोक सुखसूं तिष्ठैं, राम लक्ष्मण सीता अर

विभीषणकी कथा पृथिवीविषैं प्रवरती ।

(राम-लक्ष्मण का लंका में सुख पूर्वक ६ वर्ष बिताना)

अथानन्तर विभीषणादिक सकल विद्याधर राम लक्ष्मणका अभिषेक करनेकूं विनय-कर उद्यमी भए । तब श्रीराम लक्ष्मणने कहा--अयोध्याविषैं हमारे पिताने भाई भरतकूं अभिषेक कराया, सो भरत ही हमारे प्रभु हैं । तब सबने कही आपकूं यही योग्य है । परन्तु अब आप त्रिखंडी भए तो यह मंगल स्नान योग्य ही है, यामें कहा दोष है । अर ऐसी सुननेविषैं आवै है भरत महा धीर है, अर मन वचन कायकरि आपकी सेवाविषैं प्रवर्ते है, विक्रियाकूं नाहीं प्राप्त होय है, ऐसा कह सबने राम लक्ष्मणका अभिषेक किया, जगत्‌विषैं बलभद्र नारायणकी अति प्रशंसा भई, जैसैं स्वर्गविषैं इंद्र प्रतिइंद्रकी महिमा होय तैसैं लंकाविषैं राम लक्ष्मणकी महिमा भई । इन्द्रके नगर समान वह नगर महा भोगनिकर पूर्ण तहां राम लक्ष्मणकी आज्ञासूं विभीषण राज्य करै है । नदी सरोवरनिके तीर,अर देश पुर ग्रामादिविषैं विद्याधर राम लक्ष्मणही का यश गावते भए, विद्याकर युक्त अद्भुत आभूषण पहिरे सुंदर वस्त्र मनोहर हार सुगंधादिकके विलेपन उनकर युक्त क्रीडा करते भए जैसैं स्वर्गविषैं देव क्रीडा करैं । अर श्रीरामचंद्र सीताका मुख देखते तृप्तिकूं न प्राप्त भए । कैसा है सीताका मुख ? सूर्यके किरणकरि प्रफुल्लित भया जो कमल ता समान है प्रभा जाकी, अत्यंत मनकी हरणहारी जो सीता ता सहित राम निरंतर रमणीय भूमिविषैं रमते भए । अर लक्ष्मण विशल्या सहित रतिकूं प्राप्त भए । मनवांछित सकल वस्तुका है समागम जिनके,उन दोऊ भाईनिके बहुत दिन भोगोपभोगयुक्त सुखसे एक दिवस समान गए ।

एक दिन लक्ष्मण सुंदर लक्षणनिका धरणहारा विराधितकूं अपनी जे स्त्री तिनके लेयवे अर्थ पत्र लिख बड़ी ऋद्धिसे पठावता भया सो जायकर कन्यानिके पितानिकूं पत्र देता, भया, माता पितानिने बहुत हर्षित होय कन्यानिकूं पठाई सो बड़ी विभूतिसूं आई, दशांग नगरके स्वामी वज्रकर्णकी पुत्री रूपवती महारूपकी धरणहारी, अर कूवर स्थानके नाथ बालिखिल्यकी पुत्री कल्याणमाला परमसुंदरी, अर पृथ्वीपुर नगरके राजा पृथ्वीधरकी पुत्री बन-माला गुण-रूपकर प्रसिद्ध, अर खेमांजलीके राजा जितशत्रुकी पुत्री जितपद्मा, अर उज्जैन नगरीके राजा सिंहोदरकी पुत्री यह सब लक्ष्मणके समीप आई,विराधित ले आया जन्मांतरके पूर्ण पुण्यसे, अर दया,दान मन-इन्द्रियोंको वश करना,शील संयम गुरुभक्ति महा उत्तम तप इन शुभ कर्मनिकर लक्ष्मणसा पति पाइए । इन पतिव्रतानिनैं पूर्व महा तप किए हुते, रात्रि-भोजन तज्या, चतुर्विधसंघ-की सेवा करी, तातैं वासुदेव पति पाए उनको लक्ष्मणही वर योग्य, अर लक्ष्मणके ऐसे ही स्त्री योग्य, तिनकरि लक्ष्मणकूं अर लक्ष्मणकर तिनकूं अति सुख होता भया । परस्पर सुखी भए । गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे श्रेणिक ! जगत्‌विषैं ऐसी संपदा नाहीं, ऐसी शोभा

नाहीं,ऐसी लीला नाहीं,ऐसी कला नाहीं, जो इनके न भई । राम लक्ष्मण अर इनकी रानी तिनकी कथा कहां लग कहैं । अर कहां कमल कहां चन्द्र इनके मुखकी उपमा पावैं, अर कहां लक्ष्मी अर कहां रति, इनकी रानियोंकी उपमा पावैं । राम लक्ष्मणकी ऐसी संपदा देख विद्याधरनिके समूहकूं परम आश्चर्य होता भया । चंद्रवर्धनकी पुत्री अर अनेक राजानिकी कन्या तिनसूं श्री-राम लक्ष्मणका अति उत्सवसे विवाह होता भया । सर्व लोककूं आनंदके करणहारे वे दोऊ भाई महा भोगनिके भोक्ता मनवांछित सुख भोगते भए । इन्द्र प्रतीन्द्र समान आनंदकरि पूर्ण लंकाविषैं रमते भए,सीताविषैं है अत्यंत राग जिनका ऐसे श्रीराम तिन्होंने छह वर्ष लंकाविषैं व्यतीत किए, सुखके सागरविषैं मग्न सुंदर चेष्टाके धरणहारे रामचंद्र सकल दुःख भूल गए ।

(इन्द्रजीत आदिका निर्वाण-गमन)

अथानंतर इंद्रजीत मुनि सर्व पापनिके हरनहारे अनेक ऋद्धिसहित विराजमान पृथिवी-विषैं विहार करते भए । वैराग्यरूप पवनकरि प्रेरी ध्यानरूप अग्निकरि कर्मरूप वन भस्म किए । कैसी है ध्यानरूप अग्नि ? क्षायिक सम्यक्त्वरूप अरण्यकी लकड़ी ताकरि करी है । अर मेघ-वाहन मुनि भी विषयरूप ईंधनको अग्निसमान आत्मध्यानकर भस्म करते भए केवलज्ञानकूं प्राप्त भए,केवलज्ञान जीवका निजस्वभाव है । अर कुंभकर्णमुनि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रके धारक शुक्ल लेश्याकरि निर्मल जो शुक्लध्यान ताके प्रभावकरि केवलज्ञानकूं प्राप्त भए । लोक अर अलोक इनकूं अवलोकन धरते मोहरज-रहित इंद्रजीत कुंभकर्ण केवली आयु पूर्णकरि अनेक मुनिनि सहित नर्मदाके तीर सिद्धपदकूं प्राप्त भए । सुर असुर मनुष्यनिके अधिपतिनिकरि गाइए है उत्तम-कीर्ति जिनकी शुद्ध शीलके धरणहारे महादैदीप्यमान जगदबन्धु समस्त ज्ञेयके ज्ञाता जिनके ज्ञानसमुद्रविषैं लोकालोक गायके खुरसमान भासै, संसारका क्लेश महाविषम ताके जलसे निकसे जा स्थानक गए । बहुरि यत्न नाहीं तहां प्राप्त भए उपमारहित निर्विघ्न अखंड सुखकूं प्राप्त भए जे कुंभकर्णादिक अनेक सिद्ध भए ते जिनशासनके श्रोतावोंकूं आरोग्य पद देवैं । नाश किए हैं कर्मशत्रु जिन्होंने ते जिन स्थानकोंसे सिद्ध भए हैं वे स्थानक अद्यापि देखिये है वे तीर्थ भव्यनि-करि वंदवे योग्य है, विंध्याचलकी वनीविषैं इंद्रजीत मेघनाद तिष्ठे सो तीर्थ मेघरव कहावै है, अर जांबुमाली महा बलवान् तूणीमंतनामा पर्वततैं अहमिंद्र पदकूं प्राप्त भए सो पर्वत नाना प्रकारके वृक्ष अर लतानिकरि मंडित अनेक पक्षिनिके समूहकरि तथा नानाप्रकारके वनचरनिकर भरया । अहो भव्यजीव हो ! जीवदया आदि अनेक गुणनिकर पूर्ण ऐसा जो जिनधर्म, ताके सेवनेसे कछु दुर्लभ नाहीं, जैनधर्मके प्रसादसे सिद्ध पद अहमिंद्र पद इत्यादिके पद सर्व ही सुलभ हैं । जम्बूमालीका जीव अहमिंद्र पदसे ऐरावतक्षेत्रविषैं मनुष्य होय केवल उपाय सिद्धपदकूं प्राप्त

होवेंगे। अर मंदोदरीका पिता चारण मुनि होय महा ज्योतिकूं धरे अढाईद्वीपविषै कैलाश आदि निर्वाण क्षेत्रनिकी अर चैत्यालयनिकी वंदना करते भए देवनिका है आगमन जहां,सो मय महामुनि रत्नत्रयरूप आभूषण करि मंडित महाधैर्यधारी पृथिवीविषै विहार करैं। अर मारीच मंत्री महामुनि स्वर्गविषै बड़ी ऋद्धिके धारी देव भए, जिनका जैसा तप तैसा फल पाया। सीताके दृढ व्रतकरि पतिका मिलाप भया, जाकूं रावण डिगाय सक्या नाहीं। सीताका अतुल धैर्य अद्भुत रूप महानिर्मल बुद्धि भरतारविषैं अधिक स्नेह जो कहनेविषै न आवैं। सीता महा गुणनिकरि पूर्ण शीलके प्रमादतैं जगत्‌विषैं प्रशंसा-योग्य भई। कैसी है सीता? एक निजपतिविषैं है संतोष जाके भवसागरकी तरणहारी परंपराय मोक्षकी पात्र जाकी साधु प्रशंसा करें। गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! जो स्त्री विवाह ही नहीं करै, बालब्रह्मचर्य धारै सो तो महाभाग्य ही है। अर पतिव्रताका व्रत आदरे, मनवचनकायकरि पर पुरुषका त्याग करै तो यह व्रत भी परम रत्न है स्त्रीकूं स्वर्ग अर परंपराय मोक्ष देवनेकूं समर्थ है। शीलव्रत समान और व्रत नाहीं,शील भवसागरकी नाव है। राजा मय मंदोदरीका पिता राज्य अवस्थाविषैं मायाचारी हुता, अर कठोर परिणाम हुता,तथापि जिनधर्मके प्रसादकरि रागद्वेष रहित हो अनेक ऋद्धिका धारक मुनि भया।

(मय महामुनिका तपो वर्णन)

यह कथा सुन राजा श्रेणिक गौतमस्वामीकूं पूछते भए—हे नाथ! मैं इंद्रजीतादिकका माहात्म्य सब सुन्या,अब राजा मयका माहात्म्य सुना चाहू हू। अर हे प्रभो! जो या पृथिवीविषै पतिव्रता शीलवंती हैं निज भरतारविषैं अनुरक्त हैं वे निश्चयसे स्वर्ग मोक्षकी अधिकारिणी हैं तिनकी महिमा मोहि विस्तारसूं कहो। तब गणधर कहते भये--जे निश्चयकरि सीता समान पतिव्रता शीलकूं धारण करैं हैं,ते अल्प भवमें मोक्ष होय हैं। पतिव्रता स्वर्ग ही जांय, परंपराय मोक्ष पावें, अनेक गुणनिकर पूर्ण। हे राजन् जे मनवचनकायकरि शीलवंती हैं चित्तकी वृत्ति जिन्होंने रोकी है ते धन्य हैं, घोड़ेनिमें हाथीनिमें लोहेनिविषै पाषाणविषै वस्त्रनिविषै जलविषैं वृक्षनिविषैं वेलनिविषैं स्त्रीनिविषैं पुरुषनिविषैं बड़ा अंतर है। सबही नारियोंमें पतिव्रता न पाइए, अर सबही पुरुषनिमें विवेकी नाहीं। जे शील रूप अंकुशकरि मनरूप माते हाथीकूं वश करैं ते पतिव्रता हैं। पतिव्रता सबही कुलविषैं होय हैं। अर वृथा पतिव्रताका अभिमान किया तो कहा? जे जिनधर्मसे बहिर्मुख हैं ते मनरूप माते हाथीकूं वश करिवे समर्थ नाहीं। वीतरागकी वाणीकरि निर्मल भया है चित्त जिनका ते ही मनरूप हस्तीकूं विवेकरूप अंकुशकरि वशीभूत करि दया शीलके मार्गविषैं चलायवे समर्थ हैं। हे श्रेणिक! एक अभिमाना स्त्री ताकी संक्षेपमे कथा कहिए है--सो सुन, यह प्राचीन कथा प्रसिद्ध है एक धान्यग्राम नामा ग्राम तहां नोदन

नामा ब्राह्मण, ताके अभिमाना नामा स्त्री, सो अग्निनामा ब्राह्मणकी पुत्री मानिनी नाम माताके उदरविषैं उपजी, सो अति अभिमानकी धरणहारी, सो नोदन नामा ब्राह्मण क्षुधाकर पीडित होय अभिमानाकूं तज दई, सो गजवनविषैं करूरुह नाम राजाकूं प्राप्त भई, वह राजा पुष्पप्रकीर्ण-नगरका स्वामी लंपट सो ब्राह्मणीकूं रूपवती जान ले गया, स्नेहकर घरविषैं राखी। एक समय रतिविषैं तानैं राजाके मस्तकविषैं चरणकी लात दई। प्रातःसमय सभाविषैं राजाने पंडितनिकूं पूछ्या--जानैं मेरा सिर पांव कर हता होय ताका कहा करना ? तब मूर्ख पंडित कहते भए--हे देव ! ताका पांव छेदना, अथवा प्राण हरना। ता समय एक हेमांक नामा ब्राह्मण राजाके अभिप्रायका वेत्ता कहता भया--ताके पांवकी आभूषणादिकरि पूजा करनी। तब राजाने हेमांककूं पूछी--हे पंडित ! तुमने रहस्य कैसैं जाना ? तब तानैं कही--स्त्रीके दंतनिके तिहारे अधरनिविषैं चिन्ह दीखे, तातैं यह जानी स्त्रीके पांवकी लागी। तब राजाने हेमांकको अभिप्रायका वेत्ता जान अपना निकट कृपापात्र किया, बडी ऋद्धि दई सो हेमांकके घरके पास एक मित्रयशानामा विधवा ब्राह्मणी महादुःखी अमोघसर नाम ब्राह्मणकी स्त्री रहै, सो अपने पुत्रकूं शिक्षा देती भई। भरतारके गुण चितार चितार कहती भई--हे पुत्र ! बालअवस्थाविषैं जो विद्याका अभ्यास करै सो हेमांककी न्याइं महाविभूतिकूं प्राप्त होय। या हेमांकने बालअवस्थाविषैं विद्याका अभ्यास किया सो अब याकी कीर्ति देख, अर तेरा बाप धनुषबाण विद्याविषैं अति प्रवीण हुता ताके तुम मूर्ख पुत्र भए, आंसू डार माताने ए वचन कहे। ताके वचन सुन माताकूं धैर्य बंधाया, महा अभिमानका धारक यह श्रीवर्धित नामा पुत्र विद्या सीखनेके अर्थि व्याघ्रपुर नगर गया सो गुरुके निकट शस्त्र शास्त्र सर्व विद्या सीख्या। अर या नगरके राजा सुकांतकी शीला नामा पुत्री ताहि ले निकस्या। तब कन्याका भाई सिंहचंद्र या ऊपर चढ्या, सो या अकेलेने शस्त्रविद्याके प्रभावकरि सिंहचंद्रकूं जीत्यो अर स्त्रीसहित माताके निकट आया। माताकूं हर्ष उपज्या, शस्त्रकलाकरि याकी पृथिवीविषैं प्रसिद्ध कीर्ति भई। सो शस्त्रके बलकरि पोदनापुरके राजा करूरुहकूं जीत्या। अर व्याघ्रपुरका राजा शीलाका पिता मरणकूं प्राप्त भया। ताका पुत्र सिंहचंद्र शत्रुनिने दबाया सो सुरंगके मार्ग होय अपनी रानीकूं ले निकस्या। राज्यभ्रष्ट भया पोदनापुरविषैं अपनी बहिनका निवास जान तंबोलीके लार पाननिकी झोली सिरपर धरे स्त्री सहित पोदनापुरके समीप आया। रात्रिकूं पोदनापुरके बनविषैं रह्या। ताकी स्त्री सर्पने डसी, तब यह ताहि कांधे धर जहां मय महा मुनि विराजे हुते, वे वज्रके थंभ समान महा निश्चल कायोत्सर्ग धरैं, अनेक ऋद्धिके धारक तिनकूं सर्व-औषधि ऋद्धि उपजी हुती, सो तिनके चरणारविंदके समीप सिंहचंद्रने अपनी रानी डारी। सो तिनके ऋद्धिके प्रभावकरि रानी निर्विष भई। स्त्रीसहित मुनिके समीप तिष्ठै था, ता मुनिके दर्शनकूं विनयदत्त नाम श्रावक आया ताहि सिंहचंद्र मिल्या, अर अपना सर्व वृत्तांत कह्या। तब

तानैं जायकरि पोदनापुरके राजा श्रीवर्धितकूं कह्या जो तिहारा स्त्रीका भाई सिंहचंद्र आया है। तब वह शत्रु जान युद्धकूं उद्यमी भया। तब विनयदत्तने यथावत् वृत्तांत कह्या जो तिहारे शरण आया है। तब ताहि बहुत प्रीति उपजी अर महाविभूतिसूं सिंहचंद्रके सन्मुख आया, दोऊ मिले अति हर्ष उपज्या। बहुरि श्रीवर्धित मय मुनिकूं पूछता भया--हे भगवान्! मैं मेरे अर अपने स्वजनोंके पूर्व भव सुना चाहू हू? तब मुनि कहते भए--एक शोभपुरनामा नगर वहां भद्राचार्य दिगंबरने चौमासेविषैं निवास किया सो अमलनामा नगरका राजा निरंतर आचार्यके दर्शनको आवै सो एक दिवस एक कोढिनीकी स्त्री ताकी दुर्गंध आई, सो राजा पांव पयादा ही भाग अपने घर गया, ताकी दुर्गंध सह न सका। अर वह कोढनी चैत्यालय दर्शनकरि भद्राचार्यके समीप श्राविकाके व्रत धारे, समाधिमरणकरि देवलोकको गई। वहांते चयकर तेरी स्त्री शीला भई। अर वह राजा अमल अपने पुत्रकूं राज्यभार सौंप आप श्रावकके व्रत धारे, आठ ग्राम पुत्र पैं ले संतोष धरया, शरीर तज देवलोक गया, वहांसे चयकरि तू श्रीवर्धित भया।

अब तेरी माताके भव सुन--एक विदेशी क्षुधाकरि पीड़ित ग्रामविषैं आय भोजन मांगता भया सो जब भोजन न मिला तब महा कोपकरि कहता भया कि मैं तिहारा ग्राम बालूंगा, ऐसे कटुक शब्द कह निकस्या। देवयोगसे ग्रामविषैं आग लगी सो ग्रामके लोगनिने जानी ताने लगाई। तब क्रोधायमान होय दौड़े, अर ताहि ल्याय अग्निविषैं जराया सो महादुखकरि राजाकी रसोइणी भई। मरकरि नरकविषैं घोर वेदना पाई। तहांसे निकसि तेरी माता मित्रयशा भई। अर पोदनापुरविषैं एक गोवाणिज गृहस्थ ताके भुजपत्रा स्त्री, सो गोवाणिज मरकरि तेरी स्त्रीका भाई सिंहचन्द्र भया। अर वह भुजपत्रा ताकी स्त्री रतिवर्धना भई। पूर्व भवविषैं पशुओंपर बोझ लादे थे सो या भवविषैं भार वहै। ये सबके पूर्व जन्म कहकरि मय महा मुनि आकाश मार्ग विहार कर गए। अर पोदनापुरका राजा श्रीवर्धित सिंहचंद्रसहित नगरविषैं गया। गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! यह संसारकी विचित्र गति है। कोईयक तो निर्धनसे राजा होजाय, अर कोईयक राजासे निर्धन होजाय है। श्रीवर्धित ब्राह्मणका पुत्र सो राज्यभ्रष्ट होय राजा होय गया, अर सिंहचंद्र राजाका पुत्र सो राज्यभ्रष्ट होय श्रीवर्धितके समीप आया। एक गुरुके निकट प्राणी धर्मका श्रवण करैं तिनविषैं कोई समाधिमरणकरि सुगति पावै, कोई कुमरण करि दुर्गति पावै। कोई रत्ननिके भरे जहाज-सहित समुद्र उलंघि सुखसे स्थानक पहुँचे, कोई समुद्रविषैं डूबै, कोईकूं चोर लूट लेय जावे ऐसा जगत्का स्वरूप विचित्र गति जान जे विवेकी हैं ते दया दान विनय वैराग्य जप तप इंद्रियोंका निरोध शांतता आत्म ध्यान तथा शास्त्राध्ययनकरि आत्म कल्याण करैं। ऐसे मय मुनिके वचन सुन राजा श्रीवर्धित अर पोदनापुरके बहुत लोक शांतचित्त होय जिनधर्मका आराधन करते भए।

यह मय महामुनि अवधिज्ञानी, महागुणवान, शान्तचित्त, समाधिमरण कर ईशान स्वर्गविषैं उत्कृष्ट देव भये। यह मय मुनिका माहात्म्य जे चित्त लगाय पढ़ैं सुनैं, तिनकूं वैरियोंकी पीड़ा न होय सिंह-व्याघ्रादि न हतैं, सर्पादि न डसैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं मयमुनिका माहात्म्य वर्णन करनेवाला अस्सीवां पर्व पूर्ण भया ॥८०॥

इक्यासीवां पर्व

[कौशल्याका राम-लक्ष्मणके विना शोकाकुल होना और नारदका आकर समझाना]

अथानन्तर लक्ष्मणके बड़े भाई श्रीरामचन्द्र स्वर्गलोक समान लक्ष्मीकूं मध्यलोकविषैं भोगते भए। चन्द्र सूर्य समान है कांति जिनकी। अर इनकी माता कौशल्या भरतार अर पुत्रके वियोगरूप अग्निकी ज्वालाकर शोककूं प्राप्त भया है शरीर जाका महलके सातवें खण बैठी, सखियोंकरि मंडित, अतिउदास आंसुनिकर पूर्ण हैं नेत्र जाके जैसे गायको बच्चेका वियोग होय अर वह व्याकुल होय ता समान पुत्रके स्नेहविषैं तत्पर, तीव्र शोकके सागरविषैं मग्न, दशों दिशाकी ओर देखै। महलके शिखरविषैं तिष्ठता जो काग ताहि कहे है—हे वायस! मेरा पुत्र राम आवै तो तोहि खीरका भोजन दूं, ऐसे वचन कहकर विलाप करै, अश्रुपात करि किया है चातुर्मास जिसने, हाय वत्स तू कहां गया, मैं तुझे निरंतर सुखसे लड़ाया था, तेरे विदेश भ्रमणकी प्रीति कहांसे उपजी, कहा पल्लव समान तेरे चरण कोमल, कठोर पंथविषैं पीड़ा न पावैं? महा गहन वनविषैं कौन वृक्षके तले विश्राम करता होयगा? मैं मन्दभागिनी अत्यंत दुखी मुझे तजकर तू भाई लक्ष्मण सहित किस दिशाको गया? या भांति माता विलाप करै ता समय नारद ऋषि आकाश मार्गविषैं आए, पृथिवीमें प्रसिद्ध सदा अढ़ाई द्वीपविषैं भ्रमते ही रहें, सिरपर जटा शुक्ल वस्त्र पहिरे, ताकूं समीप आवता जान कौशल्याने उठकर सन्मुख जाय नारदकूं आदरसहित सिंहासन बिछाय सन्मान किया। तब नारद उसे अश्रुपात सहित शोकवन्ती देख पूछते भए--हे कल्याणरूपिणी! तुम ऐसी दुःखरूप क्यों, तुमकूं दुःखका कारण कहा! सुकौशल महाराजकी पुत्री, लोकविषैं प्रसिद्ध राजा दशरथकी रानी प्रशंसा योग्य, श्रीरामचन्द्र मनुष्यनिविषैं रत्न तिनकी माता महासुंदर लक्षणकी धरणहारी, तुमकूं कौनने रुसाई, जो तिहारी आज्ञा न माने, सो दुरात्मा है अबार ही ताका राजा दशरथ निग्रह करें। तब नारदकूं माता कहती भई---हे देवर्षि! तुम हमारे घरका वृत्तांत नाहीं जानों हो, तातैं कहो हो। अर तिहारा जैसा वात्सल्य या घरसूं था सो तुम विस्मरण किया, कठोर चित्त होय गए, अब

यहां आवना ही तज्या, अब तुम बात ही न बूझो। हे श्रमणप्रिय ! बहुत दिननिविषैं आए। तब नारदने कहा---हे माता ! धातुकीखंड द्वीपविषैं पूर्व विदेहक्षेत्र वहां सुरेंद्ररमण नामा नगर वहां भगवान् तीर्थंकर देवका जन्मकल्याण भया। सो इन्द्रादिक देव आए भगवान्को सुमेरुगिरि लेगए, अद्भुत विभूतिकर जन्माभिषेक किया। सो देवाधिदेव सर्व पापके नाशनहारे तिनका अभिषेक मैं देख्या, जाहि देख धर्मकी बढवारी होय वहां देवनिने आनन्दसूं नृत्य किया। श्रीजिनेंद्रके दर्शनविषै अनुरागरूप है बुद्धि मेरी सो महामनोहर धातकीखंडविषैं तेईस वर्ष मैंने सुखमे व्यतीत किये। तुम मेरी मातासमान सो तुमकूं चितार या जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं आया। अब कैयक दिन इस मंडलहीविषैं रहूंगा। अब मोहि सब वृत्तांत कहो तिहारे दर्शनकूं आया हूँ। तब कौशल्याने सर्व वृत्तांत कहा। भामंडलका यहां आवना, अर विद्याधरनिका यहां आवना, अर भामण्डलकूं विद्याधरनिका राज्य, अर राजा दशरथका अनेक राजानि सहित वैराग्य, अर रामचंद्रका सीता-सहित अर लक्ष्मणके लार विदेशको गमन, बहुरि सीताका वियोग, सुग्रीवादिकका रामसूं मिलाप, रावणसे युद्ध, लंकेशकी शक्तिका लक्ष्मणके लगना, बहुरि द्रोणमेघकी कन्याका तहां गमन,एती खबर तो हमकूं हैं। बहुरि क्या भया सो खबर नाहीं,ऐसा कह महा-दुःखित होय अश्रुपात डारती भई। अर विलाप किया--हाय हाय ! पुत्र तू कहां गया, शीघ्र अब मोसे वचन कह, मैं शोकके सागरविषै मग्न ताहि निकाम,मैं पुण्यहीन तेरे मुख देखे विना महा दुःखरूप अग्निसे दाहकूं प्राप्त भई, मोहि साता देवो। अर सीता बालक, पापी रावण तोहि बंदीगृहविषैं डारी, महा दुखसे तिष्ठती होयगी। निर्दई रावणने लक्ष्मणके शक्ति लगाई सो न जानिए जीवै है कै नाहीं। हाय, दोनों दुर्लभ पुत्र हो। हाय सीता ! तू पतिव्रता काहे दुःखकूं प्राप्त भई। यह वृत्तांत कौशल्याके मुख सुन नारद अति खेदखिन्न भया। वीण धरती विषैं डार दई, अर अचेत होय गया। बहुरि सचेत होय कहता भया, हे माता ! तुम शोक तजहु मैं शीघ्रही तिहारे पुत्रनिकी वार्ता क्षेम कुशलकी लाऊं हूं। मेरे सब बातविषैं सामर्थ्य है यह प्रतिज्ञाकर नारद बीणकूं उठाय कांधे धरी, आकाश मार्ग गमन किया। पवन समान है वेग जाका अनेक देश देखता लंकाकी ओर चाल्या, सो लंकाके समीप जाय विचारी राम लक्ष्मणकी वार्ता कौन भांति जानिवेविषैं आवै ? जो राम लक्ष्मणकी वार्ता पूछिये तो रावणके लोकनिसे विरोध होय, तातैं रावणकी वार्ता पूछिये तो योग्य है। रावणकी वार्ता कर उनकी वार्ता जानी जायगी। यह विचार नारद पद्म सरोवर गया तहां अन्तःपुर सहित अंगद क्रीडा करता हुता। ताके सेवकनिको रावणकी कुशल पूछी। वे किंकर सुनकर क्रोधरूप होय कहते भये--यह दुष्ट तापस रावणका मिलापी है, याकूं अंगदके समीप लेगये जो यह रावणकी कुशल पूछै है। नारदने कहा मेरा रावणसे कछु प्रयोजन नाहीं। तब किंकरनिने कही, तेरा कछू प्रयोजन नाहीं तो

रावणकी कुशल क्यों पूछे था। तब अंगदने हंसकर कहा इस तापसकूं पद्मनाभिके निकट ले जावो। सो नारदको खींचकर ले चले। नारद विचारै है,न जानिए कौन पद्मनाभि है ? कौशल्याका पुत्र होय तो मोसे ऐसी क्यों होय, ये मोहि कहां लेजाय हैं, मैं संशयविषै पड़ा हूँ, जिन शासनके भक्त देव मेरी सहाय करो। अंगदके किंकर याहि विभीषणके मंदिर श्रीराम विराजे हुते, तहां ले गये। श्रीराम दूरसे देख याहि नारद जान सिंहासनसे उठे, अति आदर किया, किंकरनिसे कहा इनसे दूर जावो। नारद श्रीराम लक्ष्मणकूं देख अति हर्षित भया, आशीर्वाद देकर इनके समीप बैठा। तब राम बोले, अहो क्षुल्लक! कहांसे आए बहुत दिननिविषै आए हो, नीके हो ? तब नारदने कहा तिहारी माता कष्टके सागरविषै मग्न है, सो वार्ता कहिवेकूं तिहारे निकट शीघ्र ही आया हू। कौशल्या माता महासती जिनमती निरंतर अश्रुपात डारै है। अर तुम विना महादुखी है, जैसे सिंही अपने बालकविना व्याकुल होय तैसैं अति व्याकुल भई विलाप करै है। जाका विलाप सुन पाषाण भी द्रवीभूत होय। तुमसे पुत्र माताके आज्ञाकारी, अर तुम होते माता ऐसी कष्टरूप रहै यह आश्चर्यकी बात ? वह महागुणवंती सांझ सकारेविषैं प्राणरहित होयगी जो तुम ताहि न देखोगे तो तिहारे वियोगरूप सूर्यकर सूक जायगी तातैं मोपै कृपा कर उठहु ताहि शीघ्र ही देखहु। या संसारविषैं माता समान पदार्थ नाहीं तिहारी दोनों मातानिके दुख करके कैकई सुप्रभा सबही दुखी है। कौशल्या सुमित्रा दोनों मरणतुल्य होय रही हैं, आहार नींद सब गई, रात दिन आंसू डारै हैं, तिनकी स्थिरता तिहारे दर्शन हीसूं होय। जैसें कुररी विलाप करै तैसैं विलाप करें हैं। अर सिर अर उर हाथोंसे कूटै हैं दोनों ही माता तिहारे वियोगरूप अग्निकी ज्वाला कर जरै हैं, तिहारे दर्शनरूप अमृतकी धारकर उनका आताप निवारो। ऐसे नारदके वचन सुन दोनों भाई मातानिके दुखकर अति दुखी भए, शस्त्र डार दीए, अर रुदन करने लगे। तब सकल विद्याधरनिने धैर्य बंधाया। राम लक्ष्मण नारदसूं कहते भए--अहो नारद! तुमने हमारा बड़ा उपकार किया, हम दुराचारी माताकूं भूल गए, सो तुम स्मरण कराया, तुम समान हमारे और वल्लभ नाहीं। वही मनुष्य महा पुण्यवान है जो माताके विनयविषैं तिष्ठैं हैं, दास भए माताकी सेवा करें। जे माताका उपकार विस्मरण करै हैं वे महा कृतघ्न हैं। या भांति माताके स्नेहकरि व्याकुल भया है चित्त जिनका, दोनों भाई नारदकी अति प्रशंसा करते भए।

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मणने ताही समय अति विभ्रम चित्त होय विभीषणकूं बुलाया अर भामंडल सुग्रीवादि पास बैठे हैं। दोऊ भाई विभीषणकूं कहते भए—हे राजन्! इंद्रके भवन समान तेरा भवन, तहां हम दिन जाते न जाने। अब हमारे माताके दर्शनकी अति वांछा है हमारे अंग अति तापरूप हैं सो माताके दर्शनरूप अमृतकर शांतताकूं प्राप्त होवें। अब अयोध्या

नगरीके देखिवेकूं हमारा चित्त प्रवर्त्या है, वह अयोध्या भी हमारी दूजी माता है। तब विभीषण कहता भया--हे स्वामिन् ! जो आज्ञा करोगे सो ही होयगा। अबारही अयोध्याकूं दूत पठावैं जो तिहारी शुभ वार्ता मातानिसूं कहें। अर तिहारे आगमकी वार्ता कहें मातावोंके सुख होय। अर तुम कृपाकर षोडश दिन यहां ही विराजो। हे शरणागत प्रतिपालक, मोसे कृपा करो ऐसा कह अपना मस्तक राम लक्ष्मणके चरण तले धरया, तब राम लक्ष्मणने प्रमाण करी।

(राम लक्ष्मणका मातृ-दर्शनके लिए उत्कण्ठित होना और अयोध्याको जानेका विचार करना)

अथानंतर भले भले विद्याधर अयोध्याकूं पठाए सो दोनों माता महलपर चढ़ी दक्षिण दिशाकी ओर देख रही हुतीं, सो दूरसे विद्याधरनिकूं देख कौशल्या सुमित्रासे कहती भई----हे सुमित्रा, देख। यह दोय विद्याधर पवनके प्रेरे मेघ तुल्य शीघ्र आवे हैं, सो हे श्रावके ! अवश्य कल्याणकी वार्ता कहेंगे। यह दोनों भाइयोंके भेजे आवै हैं। तब सुमित्राने कहा तुम जो कहो हो सो ही होय। यह वार्ता दोऊ मातानिमें होय है, तब ही विद्याधर पुष्पनिकी वर्षा करते आकाशसे उतरे अतिहर्षके भरे भरतके निकट आए। राजा भरत अति प्रमोदका भरया इनका बहुत सन्मान करता भया, अर यह प्रणामकर अपने योग्य आसनपर बैठे, अति सुंदर है चित्त जिनका यथावत् वृत्तांत कहते भए--

हे प्रभो राम लक्ष्मणने रावणकूं हता विभीषणकूं लंकाका राज्य दिया। श्रीरामकूं बलभद्रपद, अर लक्ष्मणकूं नारायणपद प्राप्त भया, चक्ररत्न हाथमैं आया, तिन दोनों भाइयोंके तीन खंडका परम उत्कृष्ट स्वामित्व भया। रावणके पुत्र इंद्रजीत मेघनाद भाई कुंभकरण जो बन्दीगृहमें थे सो श्रीरामने छोड़े। तिन्होंने जिनदीक्षा धर निर्वाणपद पाया। अर गरुडेंद्र श्रीराम लक्ष्मणसे देशभूषण कुलभूषण मुनिके उपसर्ग निवारिवेकरि प्रसन्न भए थे सो जब रावणतैं युद्ध भया उसही समय सिंहविमान अर गरुड़विमान दिये, इस भांति राम लक्ष्मणके प्रतापके समाचार सुन भरत भूप अति प्रसन्न भए, तांबूल सुगंधादिक तिनको दिये। अर तिनकूं लेकर दोनों माताओंके समीप भरत गया, राम लक्ष्मणकी माता पुत्रोंकी विभूतिकी वार्ता विद्याधरोंके मुखसे सुनि आनन्दकूं प्राप्त भईं। ताही समय आकाशके मार्ग हजारों वाहन विद्यामई स्वर्ण रत्नादिकके भरे आए, अर मेघमालाके समान विद्याधरनिके समूह अयोध्यामें आये, जैसे देवनिके समूह आवें ते आकाशविषैं तिष्ठे, नगरविषैं नाना रत्नमई वृष्टि करते भए रत्ननिके उद्योत कर दशों दिशाविषैं प्रकाश भया, अयोध्याविषैं एक एक गृहस्थके घर पर्वत समान सुवर्ण रत्ननिकी राशि करी, अयोध्याके निवासी समस्त लोक ऐसे लक्ष्मीवान किए मानो स्वर्गके देव

ही हैं। अर नगरविषैं यह घोषणा फेरी कि जाके जिस वस्तुकी इच्छा हो सो लेवो। तब सब लोक आय कहते भये हमारे घरमें अटूट भंडार भरे हैं किसी वस्तुकी वांछा नाहीं। अयोध्याविषैं दरिद्रताका नाश भया, राम लक्ष्मणके प्रतापरूप सूर्य करि फूल गए हैं मुख कमल जिनके ऐसे अयोध्याके नर नारी प्रशंसा करते भए। अर अनेक सिलावट विद्याधर महा चतुर आयकर रत्न स्वर्णमई मंदिर बनावते भए, अर भगवान्के चैत्यालय महा मनोज्ञ अनेक बनाये, मानों विंध्याचलके शिखर ही हैं। हजारनि स्तम्भनिकर मंडित नाना प्रकारके मंडप रचे, अर रत्ननिकरि जड़ित तिनके द्वार रचे, तिन मंदिरनि पर ध्वजानिकी पंक्ति फरहरे हैं, तोरणनिके समूह तिन कर शोभायमान जिन मंदिर रचे, गिरिनिके शिखर समान ऊंचे तिनविषैं महा उत्सव होते भए, अनेक आश्चर्य कर भरी अयोध्या होती भई। लंकाकी शोभाकूं जीतनहारी संगीतकी ध्वनि कर दशों दिशा शब्दायमान भई, कारी घटा समान वन उपवन सोहते भए, तिनविषैं नाना प्रकारके फल फूल तिन पर भ्रमर गुंजार करैं हैं, समस्त दिशानिविषैं वन उपवन ऐसे सोहते भए, मानों नन्दनवन ही है। अयोध्यानगरी बारह योजन लम्बी नव योजन चौड़ी अतिशोभायमान भासती भई। सोलह दिनमें विद्याधर शिलावटनिने ऐसी बनाई जाका सौ वर्ष तक भी वर्णन न किया जाय। तहां वापीनिके रत्न स्वर्णके सिवान, अर सरोवरनिके रत्नके तट तिनविषैं कमल फूल रहे हैं, ग्रीष्मविषैं सदा भर पूरही रहें, तिनके तट भगवान्के मंदिर अर वृक्षनिकी पंक्ति शोभाकूं धरैं स्वर्गपुरी समान नगरी निरमापी सो बलभद्र नारायण लंकासूं अयोध्याकी ओर गमनकूं उद्यमी भए। गौतमस्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक जिस दिनसे नारदके मुखसे राम लक्ष्मणने मातानिकी वार्ता सुनी ताही दिनसे सब बात भूल गए, दोनों मातानिहीका ध्यान करते भये। पूर्व जन्मके पुण्य करि ऐसे पुत्र पाइये, पुण्यके प्रभाव करि सर्व वस्तुकी सिद्धि होवै है, पुण्य कर क्या न होय, इसलिये हे प्राणी हो पुण्यविषैं तत्पर होहु जाकरि शोकरूप सूर्यका आताप न होय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिका विषै अयोध्या नगरीका वर्णन करनेवाला इक्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥८१॥

ब्यासीवां पर्व

[राम-लक्ष्मणका अयोध्यामें आगमन]

अथानंतर सूर्य उदय होते ही बलभद्र नारायण पुष्पकनामा विमानविषैं चढ़कर अयोध्याकूं गमन करते भए। नानाप्रकारके वाहननिपर आरूढ विद्याधरनिके अधिपति राम

लक्ष्मणकी सेनाविषैं तत्पर परिवार सहित संग चाले। छत्र अर ध्वजानिकरि रोकी है सूर्यकी प्रभा जिन्होंने, आकाशमें गमन करते दूरसे पृथिवीकूं देखते जाय हैं, पृथिवी गिरि नगर वन उपवनादि कर शोभित, लवण समुद्रकूं उलंघनकरि विद्याधर हर्षके भरे लीला सहित गमन करते आगे आए। कैसा है लवण समुद्र? नाना प्रकारके जलचर जीवनिके समूहकरि भरया है। रामके समीप सीता सती अनेक गुणनिकरि पूर्ण मानों साक्षात् लक्ष्मी ही है सो सुमेरु पर्वतकूं देखकरि रामकूं पूछती भई--हे नाथ! यह जंबूद्वीपके मध्य अत्यंत मनोज्ञ स्वर्ण कमल समान कहा दीखै है? तब राम कहते भए--हे देवि! यह सुमेरु पर्वत है, जहां देवाधिदेव श्रीमुनिसुव्रत-नाथका जन्माभिषेक इंद्रादिक देवनिने किया। कैसे हैं देव? भगवान्के पांचों कल्यानकविषैं जिनके अति हर्ष है। यह सुमेरु रत्नमई ऊंचे शिखरनिकरि शोभित जगतविषै प्रसिद्ध है। अर बहुरि आगे आयकर कहते भए--यह दंडकवन है जहां लंकापतिने तुमकूं हरी, अर अपना अकाज किया। या वन विषैं चारण मुनिकूं हमने पारणा कराया था, याके मध्य यह सुन्दर नदी है। अर हे सुलोचने! यह वंशस्थल पर्वत जहां देशभूषण कुलभूषणका दर्शन किया, ताही समय मुनिनकूं केवल उपज्या। अर हे सौभाग्यवती कल्याणरूपिणी! यह बालखिल्यका नगर जहां लक्ष्मणने कल्याणमाला पाई। अर यह दशांग नगर जहां रूपवतीका पिता वज्रकर्ण परम श्रावक राज्य करे। बहुरि जानकी पृथिवीपतिकूं पूछती भई--हे कांत! यह नगरी कौन जहां विमान समान घर इन्द्रपुरीसे अधिक शोभै हैं? अबतक यह पुरी मैंने कबहू न देखी। ऐसे जानकीके वचन सुन जानकी-नाथ अवलोकन कर कहते भए--हे प्रिये! यह अयोध्यापुरी विद्याधर सिलावटोंने बनाई है लंकापुरीकी ज्योतिकी जीतनहारी।

बहुरि आगे आए तब रामका विमान सूर्यके विमान समान देख भरत महा हस्ती पर चढ़े अति आनन्दके भरे इन्द्र समान परम विभूतिकरि युक्त सन्मुख आए। सर्व दिशा विमाननिकर आच्छादित देखी। भरतकूं आवता देख राम लक्ष्मणने पुष्पक विमान भूमिविषैं उतारा। भरत गजसे उतर निकट आया स्नेहका भरा दोऊ भाईनिकूं प्रणाम करि अर्घपाद्य करता भया। अर ये दोनों भाई विमानसे उतरि भरतसूं मिले, उरसे लगाय लिया, परस्पर कुशल वार्ता पूछी। बहुरि भरतकूं पुष्पक विमानविषैं चढाय लीया। अर अयोध्याविषै प्रवेश किया। अयोध्या रामके आगमनकरि अति सिंगारी है, अर नाना प्रकारकी ध्वजा फरहरे हैं, नाना प्रकारके विमान, अर नाना प्रकारके रथ, अनेक हाथी अनेक घोडे तिनकरि मार्गमें अवकाश नाहीं। अनेक प्रकार वादित्रनिके समूह बाजते भए, शंख, झांझ, भेरी, ढोल झूकल, इत्यादि वादित्रोंका कहां लग वर्णन करिए। महा मधुर शब्द होते भए ऐसेही वादित्रोंके शब्द, ऐसी ही तुरंगोंकी हींस, ऐसी गजोंकी गर्जना, सामन्तोंके अट्टहास, मायामई सिंह व्याघ्रादिकके शब्द ऐसे ही वीणा बांसुरीनिके शब्द

तिनकर दशों दिशा व्याप्त भई, बन्दीजन विरद बखाने हैं, नृत्यकारिणी नृत्य करें हैं, भांड नकल करे हैं, नट कला करें हैं। सूर्यके रथ समान रथ तिनके चित्राकार विद्याधर मनुष्य पशुनिके नाना शब्द सो कहां लग वर्णन करिए ? विद्याधरनिके अधिपतिनिने परम शोभा करी। दोनों भाई महा मनोहर अयोध्याविषैं प्रवेश करते भए अयोध्या नगरी स्वर्गपुरी समान,राम लक्ष्मण इन्द्र प्रतींद्र समान, समस्त विद्याधर देव समान, तिनका कहां लग वर्णन करिए। श्रीरामचन्द्रकूं देख प्रजारूप समुद्रविषैं आनन्दकी ध्वनि बढती भई,भले २ पुरुष अर्घ्यपाद्य करते भए सोई तरंग भई पैंड पैंडविषैं जगतकरि पूज्यमान दोनों वीर महाधीर तिनको समस्त जन आर्शीवाद देते भए—हे देव ! जयवंत होवो, वृद्धिकूं प्राप्त होवहु, चिरंजीव होवहु, नांदो विरधो या भांति असीस देते भए। अर अति ऊंचे विमान समान मंदिर तिनके शिखरविषैं तिष्ठती सुन्दरी फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके, वे मोतिनिके अक्षत डारती भई, सम्पूर्ण पूर्णमासीके चंद्रमा-समान राम कमलनेत्र, अर वर्षाकी घटा-समान लक्ष्मण शुभ लक्षण, तिनके देखिवेकूं नर नारी अनुरागी भए, अर समस्त कार्य तजि झरोखोंविषैं बैठी नारीजन निरखे हैं, सो मानों कमलोंके वन फूल रहे हैं। अर स्त्रीनिके परस्पर संघट्टकर मोतिनके हार टूटे, सो मानों मोतिनकी वर्षा होय है। स्त्रीनिके मुखसे ऐसी ध्वनि निकसै ये श्रीराम जाके समीप राजा जनककी पुत्री सीता बैठी जाकी माता रानी विदेहा है। अर श्रीरामने साहसगति विद्याधर मारा, वह सुग्रीवका आकार धर आया हुता विद्याधरनिविषैं दैत्य कहावैं राजा वृत्रका नाती। अर यह लक्ष्मण रामका लघुवीर इन्द्र तुल्य पराक्रमी, जानें लंकेश्वरकूं चक्रकर हता। अर यह सुग्रीव जाने रामसूं मित्रता करी, अर भामंडल सीताका भाई जिसको जन्मसूं ही देव हर लेगया हुता। बहुरि दयाकर छांड्या सो राजा चंद्रगतिके पल्या, आकाशसूं वनविषैं गिरा राजाने लेकर राणी पुष्पवतीकूं सौंप्या, देवोंने काननविषैं कुंडल पहिराकर आकाशसे डाल्या सो कुंडलकी ज्योतिकर मुख चंद्रसमान भास्या, तातैं भामंडल नाम धरया। अर यह राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित, अर यह पवनका पुत्र हनुमान कपिध्वज, या भांति आश्चर्यकर युक्त नगरकी नारी वार्ता करती भईं।

अथानन्तर राम लक्ष्मण राजमहलविषैं पधारे, सो मंदिरके शिखर तिष्ठती दोनों माता पुत्रनिके स्नेहविषैं तत्पर, जिनके स्तनसे दुग्ध झरे, महा गुणनिकी धरणहारी कौशल्या सुमित्रा अर कैकई सुप्रभा चारों माता मंगलविषैं उद्यमी पुत्रोंके समीप आई, राम लक्ष्मण पुष्पक विमानसे उतरि मातानिसूं मिले माताओंकूं देख हर्षकूं प्राप्त भए, कमल-समान नेत्र दोनों भाई लोकपाल-समान हाथ जोड नम्रीभूत होय अपनी स्त्रियोंसहित मातानिकूं प्रणाम करते भए। वे चारों ही माता अनेक प्रकार असीस देती भई, तिनकी असीस कल्याणकी करणहारी है। अर चारों ही माता राम लक्ष्मणको उरसे लगाय परम सुखकूं प्राप्त भई उनका सुख वे ही जाने,

कहिवेविषैं न आवे। बारम्बार उरसे लगाय सिरपर हाथ धरती भई, आनन्दके अश्रुपात करि पूर्ण हैं नेत्र जिनके, परस्पर माता पुत्र कुशलक्षेम सुख दुखकी वार्ता पूछि परम संतोषकूं प्राप्त भए। माता मनोरथ करती हुती सो हे श्रेणिक! वांछासे अधिक मनोरथ पूर्ण भए, वे माता योधावोंकी जननहारी, साधुओंकी भक्त जिनधर्मविषैं अनुरक्त, सुन्दरचित्त बेटावोंकी बहू सैकडों तिनको देखि चारों ही अति हर्षित भई। अपने योधा पुत्र तिनके प्रभाव करि पूर्व पुण्यके उदय-करि अति महिमा संयुक्त जगत्विषैं पूज्य भईं। राम लक्ष्मणका सागरांपर्यंत कंटक-रहित पृथिवी-विषैं एक छत्र राज्य भया, सबपर यथेष्ट आज्ञा करते भए। राम-लक्ष्मणका अयोध्याविषैं आगमन अर मातावोंसे तथा भाइयोंसे मिलाप रूप यह अध्याय जो पढैं सुनैं, शुद्ध है बुद्धि जाकी सो पुरुष मनवांछित संपदाकूं पावैं, पूर्ण पुण्य उपार्जैं, शुभमति एक ही नियम दृढ होय भावनिकी शुद्धता-से करे तो अतिप्रतापको प्राप्त होय, पृथिवीमें सूर्य-समान प्रकाशकूं करै, तातैं अव्रत तज नियमादिक धारण करो।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिका विषैं अयोध्याविषैं राम-लक्ष्मणका आगमन वर्णन करनेवाला व्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥८२॥

तेरासीवां पर्व

[राम-लक्ष्मणकी राज्य-विभूतिका वर्णन]

अथानन्तर राजा श्रेणिक नमस्कार कर गौतम गणधरकूं पूछता भया--हे देव! श्रीराम लक्ष्मण की लक्ष्मीका विस्तार सुननेकी मेरे अभिलाषा है। तब गौतमस्वामी कहते भए--हे श्रेणिक! राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न इनका वर्णन कौन करि सके, तथापि संक्षेपसे कहैं हैं। राम लक्ष्मणके विभवका वर्णन-हाथी घरके बियालीस लाख, अर रथ एते ही, घोडे नौ कोटि, प्यादे ब्यालीस कोटि, अर तीन खंडके देव विद्याधर सेवक, रामके रत्न चार-हल मूशल रत्नमाला गदा, अर लक्ष्मणके सात-शंख चक्र गदा खडग दंड नागशय्या कौस्तुभमणि। राम लक्ष्मण दोनों ही वीर महाधीर धनुषधारी, अर तिनका घर लक्ष्मीका निवास इन्द्रके भवन तुल्य, ऊंचे दरवाजे अर चतुःश्शाल नामा कोट महा पर्वतके शिखर समान ऊंचा, अर वैजयन्ती नामा सभा महा मनोज्ञ, अर प्रसादकूटनामा अत्यंत उत्तुंग दशों दिशाका अवलोकनका गृह, अर विंध्याचल-पर्वत सारिखा वर्धमानक नामा नृत्य देखिवेका गृह, अर अनेक सामग्रीसहित कार्य करनेका गृह अर कूकडेके अंडे समान महा अद्भुत शीतलकालविषैं सोवनेका गर्भगृह, अर ग्रीष्मविषैं दुपहरीकैं विराजनेका धारा मंडपगृह इकथंभा महामनोहर, अर रानियोंके घर रत्नमई महा सुंदर दोनों भाइयोंकी

सोयवेकी शय्या जिनके सिंहोंके आकार पाए पद्मरागमणिके अति सुन्दर अम्भोदकांड नामा विजुरीकासा चमत्कार धरे, वर्षा ऋतुविषैं पौढ़वेका महल, अर महाश्रेष्ठ उगते सूर्य-समान सिंहासन, अर चंद्रमा-तुल्य उज्ज्वल चमर, अर निशाकर-समान उज्ज्वल छत्र, अर महा सुन्दर विषमोचक नाम पांवडी, तिनके प्रभावसे सुखसे आकाशविषैं गमन करैं, अर अमोलक वस्त्र, अर महा दिव्य आभरण,अभेद्य बक्तर, महामनोहर मणियोंके कुंडल, अर अमोघ गदा खड्ग कनक बाण अनेक शस्त्र महासुन्दर, महारणके जीतनहारे, अर पचास लाख हल, कोटिसे अधिक गाय, अक्षय भंडार अर अयोध्या आदि अनेक नगर जिनविषैं न्यायकी प्रवृत्ति, प्रजा सब सुखी संपदाकर पूर्ण, अर महा मनोहर वन उपवन नानाप्रकार फल पुष्पोंकर शोभित, अर महा सुन्दर स्वर्ण रत्नमई सिवाणोंकर शोभित, क्रीडा करिवे योग्य वापिका अर पुर तथा ग्रामोंविषैं लोक अति सुखी, जहां महल अति सुन्दर, अर किसाणोंको किसी भांतिका दुख नाहीं जिनके गाय भैंसोंके समूह सब भांतिके सुख, अर लोकपालों जैसे सामंत, अर इंद्रतुल्य विभवके धरणहारे महातेजवंत अनेक राजा सेवक, अर रामके स्त्री आठ हजार, अर लक्ष्मणके स्त्री देवांगना समान सोलह हजार, जिनके समस्त सामग्री समस्त उपकरण मनवांछित सुखके देनहारे। श्रीरामने भगवान्के हजारों चैत्यालय कराए जैसे हरिषेण चक्रवर्तीने कराये थे, वे भव्यजीव सदा पूजित, महाऋद्धिके निवास, देश ग्राम नगर वन गृह गली सर्व ठौर ठौर जिनमंदिर करावते भए। सदा सर्वत्र धर्मकी कथा लोक अतिसुखी सुकौशल देशके मध्य इंद्रपुरी-तुल्य अयोध्या, जहां अति उतंग जिनमंदिर जिनका वर्णन किया न जाय। अर क्रीडा करवेके पर्वत मानों देवोंके क्रीडा करिवेके पर्वत हैं, प्रकाशकर मंडित मानों शरदके बादर ही हैं, अयोध्याका कोट अति उतंग समुद्रकी वेदिका-तुल्य महा शिखरकर शोभित स्वर्णरत्नोंका समूह अपनी किरणोंकर प्रकाश किया है आकाशविषैं जिसने, जिसकी शोभा मनसे भी अगोचर। निश्चयसेती यह अयोध्या नगरी पवित्र मनुष्योंकरि भरी सदा ही मनोज्ञ हुती, अब श्रीरामचंद्रने अति शोभित करी। जैसें कोई स्वर्ग सुनिये है जहां महा संपदा है मानों राम लक्ष्मण स्वर्गसे आए सो मानों सर्व संपदा ले आए। आगे अयोध्या हुती तातैं रामके पधारैं अति शोभायमान भई, पुण्यहीन जीवोंको जहांका निवास दुर्लभ,अपने शरीर कर तथा शुभ लोकोंकर तथा स्त्री धनादि कर रामचंद्रने स्वर्ग तुल्य करी। सर्व ठौर रामका यश, परन्तु सीताके पूर्व कर्मके दोषकर मूढ लोग यह अपवाद करें-देखो विद्याधरोंका नाथ रावण उसने सीता हरी सो राम बहुरि ल्याये अर गृहविषैं राखी, यह कहा योग्य? राम महा ज्ञानी बड़े कुलीन चक्री महा शूरवीर तिनके घरविषैं जो यह रीति तो और लोकोंकी क्या बात, इस भांति शठ जन वार्ता करैं।

(भरतका राज्य करते हुए भी विरक्त चित्त रहना और दीक्षा के लिए उद्यमी होना)

अथानंतर स्वर्ग लोककूं लज्जा उपजावे ऐसी अयोध्यापुरी तहां भरत इंद्रसमान भोगनिकर भी रति न मानते भए, अनेक स्त्रीनिके प्राणवल्लभ सो निरंतर राज्य-लक्ष्मीसे उदास, सदा भोगोंकी निंदा ही करें। भरतका मंदिर अनेक मंदिरनिकर मण्डित, नाना प्रकारके रत्ननिकर निर्मापित, मोतिनिकी मालाकर शोभित, फूल रहे हैं वृक्ष जहां, अनेक आश्चर्यका भरा सब ऋतुके विलासकर युक्त, जहां वीण मृदंगादिक अनेक वादित्र बाजैं, देवांगना समान अतिसुन्दर स्त्रीजनोंकर पूर्ण, जाके चौगिरद मदोन्मत्त हाथी गाजैं, श्रेष्ठ तुरंग हींसैं, गीत नृत्य वादित्रनिकरि महामनोहर, रत्नोंके उद्योतकरि प्रकाशरूप महारमणीक क्रीडाका स्थानक, जहां देवोंको रुचि उपजै परंतु भरत संसारसे भयभीत अति उदास, उसे तहां रुचि नाहीं। जैसे पारधीकर भयभीत जो मृग सो किसी ठौर विश्राम न लहै। भरत ऐसा विचार करै कि मैं यह मनुष्य देह महा कष्टसे पाई सो पानीके बुदबुदावत क्षणभंगुर, अर यह यौवन झागोंके पुंज समान अति असार दोषोंका भरा, अर ये भोग अति विरस इनविषैं सुख नाहीं, यह जीतव्य स्वप्न समान, अर कुटुम्बका संबन्ध जैसैं वृक्षनिपर पक्षियोंका मिलाप रात्रिकूं होय प्रभात ही दशों दिशाकूं उड़ जावें, ऐसा जान जो मोक्षका कारण धर्म न करै सो जराकर जर्जरा होय शोकरूप अग्निकर जरै। यह नव यौवन मूढोंकूं वल्लभ याविषैं कौन विवेकी राग करे, कदाचित न करै। यह अपवादके समूहका निवास संध्याके उद्योत समान विनश्वर, अर यह शरीररूपी यन्त्र नाना व्याधिके समूहका घर, पिताके वीर्य माताके रुधिरसे उपजा याविष कहा रति, जैसे ईंधनकर अग्नि तृप्त न होय, अर समुद्र जलसे तृप्त न होय, तैसैं इंद्रियनिके विषयनिकर तृप्ति न होय। यह विषय अनादिसे अनंतकाल सेये, परंतु तृप्तिकारी नाहीं। यह मूढ जीव कामविषैं आसक्त भला बुरा न जानै, पतंग-समान विषयरूप अग्निविषैं पड़े पापी महा भयंकर दुःखकूं प्राप्त होय। यह स्त्रीनिके कुच मांसके पिण्ड, महाबीभत्स गलगंड-समान तिनविषैं कहा रति ? अर स्त्रीनिका मुखरूप बिल, दंतरूप कीडोंकर भरा, तांबूलके रसकरि लाल छुरीके घाव समान, ताविषैं कहा शोभा ? अर स्त्रीनिकी चेष्टा वायु विकार समान विरूपउन्मादकर उपजी उसविषैं कहा प्रीति अर भोग रोग समान हैं महा खेदरूप दुःखके निवास इनविषैं कहा विलास ? अर यह गीत वादित्रोंके नाद रुदन-समान तिनविषैं कहा प्रीति ? रुदनकर भी महल का गुंमट गाजै, अर गानकर भी गाजै। नारियोंका शरीर मल-मूत्रादिककरि पूर्ण, चर्मकर वेष्टित, याके सेवनविषैं कहा सुख होय, विष्टाके कुम्भ तिनका संयोग अतिबीभत्स, अति लज्जाकारी, महा दुःखरूप नारियोंके भोग उनविषैं मूढ सुख मानै ? देवनिके भोग इच्छा उत्पन्न होते ही पूर्ण होंय, तिनकरि

भी जीव तृप्त न भया तो मनुष्योंके भोगोंकरि कहा तृप्त होय ? जैसैं दूभकी अणीपर जो ओस-की बूंद ताकर कहा तृष्णा बुझै ? अर जैसे ईंधनका बेचनहारा सिरपर भार लाय दुखी होय तैसे राज्यके भारका धरणहारा दुखी होय। हमारे बडेनिविषैं एक राजा सौदास उत्तम भोजनकर तृप्त न भया, अर पापी अभक्ष्यका आहारकरि राज्यभ्रष्ट भया, जैसे गंगाके प्रवाहविषैं मांसका लोभी काग मृतक हाथीका शरीर चूथता तृप्त न भया समुद्रविषैं डूब मुवा, तैसे यह विषया-भिलाषी भवसमुद्रविषैं डूबे हैं। यह लोक मींडक समान मोहरूप कीचविषैं मग्न, लोभरूप सर्पके ग्रसे नरकविषैं पड़े हैं। ऐसे चिन्तवन करते शांतचित्त भरतको कैयक दिवस अति विरससे बीते। जैसे सिंह महा समर्थ पींजरेविषैं पड़ा खेदखिन्न रहे, ताके वनविषैं जायवेकी इच्छा तैसैं भरत महाराजके महाव्रत धारिवेकी इच्छा, सो घरविषैं सदा उदास ही रहै, महाव्रत सर्व दुःखका नाशक। एक दिवस वह शांतचित्त घर तजिवेको उद्यमी भया तब कैकईके कहेसे राम लक्ष्मणने थांभा, अर महा स्नेहकर कहते भए-हे भाई! पिता वैराग्यकूं प्राप्त भए, तब तोहि पृथिवीका राज्य दिया सिंहासन पर बैठाया, सो तू हमारा सर्व रघुवंशियोंका स्वामी है लोकका पालनकर, यह सुदर्शनचक्र यह देव अर विद्याधर तेरी आज्ञाविषैं हैं या धराको नारी समान भोग, मैं तेरे सिर पर चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्र लिये खडा रहू, अर भाई शत्रुघ्न चमर ढारे, अर लक्ष्मण सा सुन्दर तेरे मंत्री, अर तू हमारा वचन न मानेगा तो मैं बहुरि विदेश उठ जाऊंगा, मृगोंकी न्याईं वन उपवनविषैं रहूंगा। मैं तो राक्षसोंका तिलक जो रावण ताहि जीत तेरे दर्शनके अर्थ आया। अब तू निष्कंटक राज्य कर, पीछे तेरे साथ मैं भी मुनिव्रत आदरूंगा, इस भांति महा शुभचित्त श्रीराम भाई भरतसूं कहते भए।

तब भरत महानिस्पृह विषयरूप विषसे अतिविरक्त कहता भया— हे देव! मैं राज्य संपदा तुरत ही तजा चाहूं हूं जिसको तज करि शूरवीर पुरुष मोक्ष प्राप्त भए। हे नरेन्द्र! अर्थ काम महा चंचल, महादुख के कारण, जीवोंके शत्रु, महापुरुष करि निंद्य हैं, तिनको मूढ जन सेवैं हैं। हे हलायुध! यह क्षण भंगुर भोग तिनमें मेरी तृष्णा नाहीं, यद्यपि स्वर्ग लोक समान भोग तुम्हारे प्रसाद करि अपने घरमें हैं, तथापि मुझे रुचि नहीं, यह संसार सागर महा भयानक है, जहां मृत्युरूप पातालकुण्ड महा विषम है, अर जन्मरूप कल्लोल उठै हैं, अर राग द्वेषरूप नाना प्रकारके भयंकर जलचर हैं, अर रति अरतिरूप क्षार जलकर पूर्ण है जहां शुभ अशुभ रूप चोर विचरै हैं, सो मैं मुनिव्रतरूप जहाजविषैं बैठकरि संसारसमुद्रकूं तिरा चाहूं हूं। हे राजेंद्र, मैं नानाप्रकार योनिविषैं अनंत काल जन्म मरण किए, नरक निगोदविषैं अनंत कष्ट सहे, गर्भ वासादिविषैं खेदखिन्न भया। यह वचन भरतके सुन बड़े बड़े राजा आंखनिविषैं आंसू डारते भए। महा आश्चर्यकूं प्राप्त होय गद्गद वाणीसे कहते भए--हे महाराज! पिताके वचन पालो

कैयक दिन राज्य करो अर तुम इस राज्यलक्ष्मीकूं चंचल जान उदास भए हो तो कैयक दिन पीछे मुनि हूजियो, अबार तो तुम्हारे बड़े भाई आए हैं तिनको साता देहु। तब भरतने कही मैं तो पिताके वचन-प्रमाण बहुत दिन राज्यसंपदा भोगी, प्रजाके दुख हरे, पुत्रकी न्याईं प्रजाका पालन किया, दान पूजा आदि गृहस्थके धर्म आदरे, साधुवोंकी सेवा करी। अब जो पिताने किया सो मैं किया चाहू हू। अब तुम इस वस्तुकी अनुमोदना क्यों न करो, प्रशंसायोग्य वस्तुविषैं कहा विवाद ? हे श्रीराम ! हे लक्ष्मण ! तुमने महा भयंकर युद्धमें शत्रुवोंको जीत अगले बलभद्र वासुदेवकी न्याई लक्ष्मी उपार्जी सो तुम्हारे लक्ष्मी और मनुष्यों कैसी नाहीं। तथापि राज-लक्ष्मी मुझे न रुचै, तृप्ति न करै। जैसैं गंगादि नदियां समुद्रकूं तृप्त न करैं। इसलिए मैं तत्वज्ञानके मार्गविषैं प्रवरतूंगा। ऐसा कहकरि अत्यंत विरक्त होय राम लक्ष्मणकूं विना पूछे ही वैराग्यकूं उठ्या, जैसैं आगै भरत चक्रवर्ती उठे। यह मनोहर चालका चलनहारा मुनिराजके निकट जायवेकूं उद्यमी भया, तब अति स्नेहकरि लक्ष्मणने थांभा, भरतके करपल्लव ग्रहे लक्ष्मण खडा, ताही समय माता केकई आंसू डारती आई, अर रामकी आज्ञासे दोऊ भाईनिकी रानी सबही आई लक्ष्मी समान है रूप जिनके, अर पवन कर चंचल जो कमल ता समान हैं नेत्र जिनके,आय भरतको थांभती भई। तिनके नाम--सीता, उर्वशी, भानुमती, विशल्या, सुंदरी, ऐन्द्री रत्नवती, लक्ष्मी, गुणमती, बंधुमती, सुभद्रा, कुवेरा, नलकूवरा, कल्याणमाला, चंदिणी, मदमानसोत्सवा,मनोरमा, प्रियनंदा,चन्द्रकांता,कलावती, रत्नस्थली, सरस्वती,श्रीकांता, गुणसागरी, पद्मावती, इत्यादि सब आई जिनके रूप गुणका वर्णन किया न जाय,मनको हरैं हैं आकार जिनके, दिव्य वस्त्र अर आभूषण पहिरे बडे कुलविषैं उपजी सत्यवादनी शीलवन्ती पुण्यकी भूमिका समस्त कालविषैं निपुण सो भरतके चौगिर्द खडीं मानों चारों ओर कमलनिको वन ही फूल रहा है। भरतका चित्त राजसंपदाविषैं लगायवेकूं उद्यमी अति आदरकरि भरतकूं मनोहर वचन कहती भई कि--हे देवर ! हमारा कहा मानों, कृपा करहु, आज सरोवरनिविषैं जलक्रीडा करहु, अर चिंता तजहु। जा बातकरि तिहारे भाईयोंकूं खेद न होय सो करहु, अर तिहारी माताके खेद न होय सो करहु। अर हम तिहारी भावज हैं सो हमारी विनती अवश्य मानिये तुम विवेकी विनयवान हो, ऐसा कहि भरतकूं सरोवर पर ले गई। भरतका चित्त जलक्रीडासे विरक्त, यह सब सरोवरविषैं पैठी, वह विनयकरिसंयुक्त सरोवरके तीर ऊभा ऐसा सोहै मानों गिरिराज ही है। अर वे स्निध सुगंध सुन्दर वस्तुनिकरि याके शरीरका विलेपन करती भई, अर नानाप्रकार जलकेलि करतीं भई, यह उत्तम चेष्टाका धारक काहूपर जल न डारता भया। बहुरि निर्मल जलसे स्नान-करि सरोवरके तीर जे जिनमंदिर वहां भगवान्‌की पूजा करता भया।

(त्रैलोक्यमंडन हाथीका उन्मत्त होना और भरतको देखकर जातिस्मरण होना)

उसी समय त्रैलोक्यमंडन हाथी कारी घटा-समान है आकार जाका, सो गजबंधन तुडाय भयंकर शब्द करता निज आवासथकी निकसा। अपने मद झरिवेकरि चौमासे कैसा दिन करता संता मेघ-गर्जना समान ताका गाज सुनकर अयोध्यापुरीके लोग भयकर कम्पायमान भए। अर अन्य हाथियोंके महावत अपने-अपने हाथीको ले दूर भागे, अर त्रैलोक्यमंडन गिरिसमान नगरका दरवाजा भंग कर जहां भरत पूजा करते थे वहां आया। तब राम लक्ष्मणकी समस्त रानियें भयकर कम्पायमान होय भरतके शरण आई, अर हाथी भरतके नजीक आया। तब समस्त लोक हाहाकार करते भए। अर इनकी माता अति विह्वल भई विलाप करती भई पुत्रके स्नेहविषैं तत्पर महा शंकावान भई। अर राम लक्ष्मण गजबंधनविषैं प्रवीण, गजके पकडनेकूं उद्यमी भए। गजराज महा प्रबल सामान्य जनोंसे देखा न जाय, महा भयंकर शब्द करता अति तेजवान नागफांसि कर भी रोका न जाय। अर महा शोभायमान कमल-नयन भरत निर्भय स्त्रियोंके आगे तिनके बचायवेकूं खडे, सो हाथी भरतकूं देखकर पूर्वभव चितार शांत चित्त भया, अपनी सूण्ड शिथिल कर महा विनयवान भया। भरतके आगे ऊभा भरत याकूं मधुर-वाणी कर कहते भए--अहो गज! तू कौन कारणकरि क्रोधकूं प्राप्त भया? ऐसे भरतके वचन सुन अत्यंत शांतचित्त निश्चल भया सौम्य है मुख जाका ऊभा भरतकी ओर देखै है। भरत महाशूरवीर शरणागतप्रतिपालक ऐसे सोहैं, जैसे स्वर्गविषैं देव सोहैं। हाथीकूं जन्मान्तरका ज्ञान भया, सो समस्त विकारसे रहित होय गया, दीर्घ निश्वास डारे हाथी मनविषैं विचारै है, यह भरत मेरा परममित्र है, छठे स्वर्गविषैं हम दोनो एकत्र थे, यह तो पुण्यके प्रसाद करि वहांसे चयकर उत्तम पुरुष भया, अर मैंने कर्मके योगसे तिर्यंचकी योनि पाई। कार्य-अकार्यके विवेकसे रहित महानिंद्य पशुका जन्म है, मैं कौन योगसे हाथी भया। धिक्कार इस जन्मको अब वृथा क्या सोच? ऐसा उपाय करूं जिससे आत्मकल्याण होय, अर बहुरि संसार भ्रमण न करूं। सोच कीए कहा? अब सर्व प्रकार उद्यमी होय भवदुखसे छूटिवेका उपाय करूं, चितारे हैं पूर्व भव जाने, गजेंद्र अत्यंत विरक्त पाप चेष्टासे परान्मुख होय पुण्यके उपार्जनविषैं एकाग्रचित्त भया। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—हे राजन्! पूर्व जीवने जे अशुभ कर्म कीए वे संतापकूं उपजावें। तातें हे प्राणी हो! अशुभ कर्मको तजि दुर्गतिके गमनसे छूटहु। जैसे सूर्य होते नेत्रवान मार्गविषैं न अटके, तैसे जिनधर्मके होते विवेकी कुमार्गविषैं न पडैं। प्रथम अधर्मको तज धर्मको आदरें, बहुरि शुभ अशुभसे निवृत्त होय आत्म-धर्मसे निर्वाणकूं प्राप्त होवें।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै त्रैलोक्यमंडन हाथीकूं जातिस्मरण होय उपशान्त होनेका वर्णन करनेवाला तिरासीवां पर्व पूर्ण भया ॥८३॥

चौरासीवां पर्व

(त्रैलोक्य मंडन हाथी का आहार-विहार छोडकर और निश्चल निश्चेष्ट होकर मौन ग्रहण करना)

अथानन्तर वह गजराज महा विनयवान धर्मध्यानका चिंतवन करता राम लक्ष्मणने देखा, अर धीरे-धीरे इसके समीप आए, कारी घटा समान है आकार जाका सो मिष्ट वचन बोल पकड्या। अर निकटवर्ती लोकनिकूं आज्ञा करि गजकूं सर्व आभूषण पहिराए, हाथी शांतचित्त भया, तब नगरके लोगोंकी आकुलता मिटी। हाथी ऐसा प्रबल जाकी प्रचण्ड गति विद्याधरोंके अधिपतिसे न रुके, समस्त नगरविषैं लोक हाथीकी वार्ता करैं हैं यह त्रैलोक्य-मंडन रावणका पाट हस्ती है याके बल समान और नाहीं, राम लक्ष्मणने पकड़ा, विकार चेष्टाकूं प्राप्त भया था अब शांतचित्त भया, सो लोकोंके महा पुण्यका उदय है। अर घने जीवोंकी दीर्घ आयु। भरत अर सीता विशल्या हाथी पर चढ़े बड़ी विभूतिसे नगरविषैं आये। अर अद्भुत वस्त्राभरणसे शोभित समस्त रानी नानाप्रकारके वाहनों पर चढ़ी भरतको ले नगरविषैं आईं, अर शत्रुघ्न भाई अश्वपर आरूढ़ महा विभूति सहित महा तेजस्वी, भरतके हाथीके आगे नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्द होते नंदनवन समान वनसे नगरविषैं आए जैसे देव सुरपुरविषैं आवैं। भरत हाथीसूं उतरि भोजनशालाविषैं गए, साधुवोंकूं भोजन देय मित्र बांधवादि सहित भोजन किया, अर भावजोंकूं भोजन कराया, फिर लोक अपने अपने स्थानकूं गए। समस्त लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। हाथी रूठा फिर भरत के समीप खड़ा होय रह्या सो सबोंको आश्चर्य उपजा। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसे कहैं हैं कि हे राजन्! हाथीके समस्त महावत राम लक्ष्मणपै आय प्रणामकरि कहते भए कि हे देव! आज गजराजको चौथा दिन है कछू खाय न पीवे, न निद्रा करै, सर्व चेष्टा तजि निश्चल ऊभा है। जिसदिन क्रोध किया था अर शांत भया उसही दिनसे ध्यानारूढ़ निश्चल वरतै है। हम नानाप्रकारके स्तोत्रों कर स्तुति करें हैं अनेक प्रिय वचन कहैं हैं तथापि आहार पानी न लेय है। हमारे वचन कान न धरे, अपनी सूण्डको दांतोंविषैं लिये मुद्रित लोचन ऊभा है, मानों चित्रामका गज है। जिसे देखे लोकोंको ऐसा भ्रम होय है कि यह कृत्रिम गज है, अथवा सांचा गज है। हम प्रिय वचन कहकर आहार दिया चाहैं हैं सो न लेय, नाना प्रकारके गजोंके योग्य सुंदर आहार उसे न रुचे, चिन्तावान सा ऊभा है, निश्वास डारे है, समस्त शास्त्रोंके वेत्ता, महा पंडित प्रसिद्ध गजवैद्योंके हाथ भी हाथीका रोग न आया। गंधर्व नानाप्रकारके गीत गावें है, सो न सुने। अर नृत्यकारिणी नृत्य करे हैं सो न देखे। पहिले नृत्य देखे था, गीत सुने था अनेक चेष्टा करे था, सो सब तज्या। नानाप्रकारके कौतुक होय है, सो दृष्टि न धरै। मंत्रविद्या औषधादिक अनेक उपाय किए सो न लगे, आहार विहार निद्रा

जलपानादिक सब तजे । हम अति बिनती करै हैं सो न मानै, जैसे रूठे मित्रको अनेक प्रकार मनाइये सो न मानै । न जानिए इस हाथीके चित्तविषै कहा है ? काहू वस्तुसे काहू प्रकार रीझै नाहीं, काहू वस्तुपर लुभावे नाहीं, खिजाया संता क्रोध न करै, चित्राम कासा खडा है । यह त्रैलोक्यमंडन हाथी समस्त सेनाका शृंगार है, जो आपकूं उपाय करना होय सो करो हम हाथीका सब वृत्तांत आपसे निवेदन किया । तब राम लक्ष्मण गजराजकी चेष्टा सुन अति चिंतावान भए। मनमें विचारै हैं यह गजबन्धन तुड़ाय निसरा, कौन प्रकारसे क्षमाकूं प्राप्त भया । अर आहार पानी क्यों न लेय ? दोनों भाई हाथीका सोच करते भए ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै त्रैलोक्यमडन हाथीका वर्णन करनेवाला चौरासीवां पर्व पूर्ण भया ॥८४॥

पचासीवां पर्व

[देशभूषण केवलीके द्वारा भरत और त्रैलोक्यमंडन हाथीके पूर्व भवका वर्णन]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—हे नराधिप ! ताही समय अनेक मुनिनि सहित देशभूषण कुलभूषण केवली जिनका वंशस्थल गिरि ऊपर राम लक्ष्मणने उपसर्ग निवारा हुता, अर जिनकी सेवा करनेकरि गरुडेंद्रने राम लक्ष्मणसे प्रसन्न होय उनको अनेक दिव्यशस्त्र दिए,जिनकर युद्धमें विजय पाई । ते भगवान् केवली सुर असुरनिकर पूज्य,लोक-प्रसिद्ध अयोध्याके नन्दनवन समान महेन्द्रोदय नामा वनविषै महासंघ सहित आय विराजे । तब राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न दर्शनके अर्थ प्रभात ही हाथिनि पर चढि जायवेकूं उद्यमी भए । अर उपजा है जातिस्मरण जाका ऐसा जो त्रैलोक्यमण्डन हाथी, सो आगे आगे चला जाय है । जहां वे दोनो केवली कल्याणके पर्वत तिष्ठें हैं, तहां देवनि समान शुभ चित्त नरोत्तम गये। अर कौशल्या सुमित्रा कैकई सुप्रभा यह चारों ही माता साधु भक्तिविषै तत्पर, जिनशासनकी सेवक स्वर्गनिवासिनी देविनि-समान सैकडां राणीनिसे युक्त चाली। अर सुग्रीवादि समस्त विद्याधर महाविभूति संयुक्त चले, केवलीके स्थानक दूरहीतैं देख रामादिक हाथीतैं उतर आगे गए । दोनों हाथ जोड़ प्रणामकर पूजा करी, आप योग्य भूमिविषै विनयतैं बैठें । तिनके वचन समाधान चित्त होय सुनते भए । ते वचन वैराग्यके मूल रागादिक नाशक क्योंकि रागादिक संसारके कारण अर सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र मोक्षके कारण हैं, केवलीकी दिव्यध्वनिविषै यह व्याख्यान भया—जो अणुव्रतरूप श्रावकका धर्म अर महाव्रत यतिका धर्म यह दोनोही कल्याणके कारण है, यतिका धर्म साक्षात् निर्वाणका कारण अर श्रावकका धर्म परंपराय मोक्षका कारण है । गृहस्थका धर्म

अल्पारम्भ अल्प परिग्रहको लिए कछु सुगम है । अर यतिका धर्म निरारंभ निष्परिग्रह अति कठिन महा शूरवीरनिही तैं सधे है । यह लोक अनादिनिधन जाका आदि-अन्त नाहीं, ताविषें यह प्राणी लोभकर मोहित नाना प्रकार कुयोनिनिविषैं महादुःखकूं पावै है संसारका तारक धर्म ही है, यह धर्म नामा परम मित्र जीवोंका महा हितु है जिस धर्मका मूल जीवदयाकी महिमा कहिवेषैं न आवे ताके प्रसादसे प्राणी मनवांछित सुख पावै है, धर्म ही पूज्य है जे धर्मका साधन करें ते ही पंडित हैं । यह दयामूल धर्म महाकल्याणका कारण जिनशासन विना अन्यत्र नाहीं । जे प्राणी जिनप्रणीत धर्ममें लगे ते त्रैलोक्यके अग्र जो परम धाम हैं वहां प्राप्त भये । यह जिन-धर्म परम दुर्लभ है, या धर्मका मुख्यफल तो मोक्ष ही है, अर गौण फल स्वर्गविषैं इन्द्रपद अर पातालविषैं नागेन्द्रपद, पृथिवीविषें चक्रवर्त्यादि नरेन्द्रपद यह फल है । इस भांति केवलीने धर्मका निरूपण किया, तब प्रस्ताव पाय लक्ष्मण पूछते भए हे प्रभो ! त्रैलोक्यमण्डन हाथी गज बन्धन उपाडि क्रोधकूं प्राप्त भया, बहुरि तत्काल शांत भावकूं प्राप्त भया सो कौन कारण ? तब केवली देशभूषण कहते भए प्रथम तो यह लोकनिकी भीड़ देख मदोन्मतता थकी क्षोभकूं प्राप्त भया । बहुरि भरतकूं देख पूर्वभव चितार शांत भावकूं प्राप्त भया । चतुर्थ कालके आदि या अयोध्या-विषै नाभिराजाके मरु देवीके गर्भविषैं भगवान् ऋषभ उपजे । पूर्वभवविषै षोडश कारण भावना भाए त्रैलोक्यकूं आनदंका कारण तीर्थंकर पद उपार्ज्या । पृथिवीविषैं प्रगट भए, इंद्रादिक देवनिने जिनके गर्भ अर जन्मकल्याणक कीए, सो भगवान् पुरुषोत्तम तीन लोक करि नमस्कार करिवे योग्य पृथिवीरूप पत्नीके पति भए । कैसी है पृथिवी रूप पत्नी विन्ध्याचल गिरि वेई है स्तन जाके, अर समुद्र है कटिमेखला जाकी, सो बहुत दिन पृथिवीका राज्य कीया । तिनके गुण केवली विना अर कोई जानवे समर्थ नाहीं जिनका ऐश्वर्य देख इंद्रादिक देव आश्चर्यकूं प्राप्त भए ।

एक समय नीलांजना नामा अप्सरा नृत्य करती हुती सो विलाय गई, ताहि देख प्रतिबुद्ध भए ते भगवान् स्वयं बुद्ध महामहेश्वर तिनकी लौकांतिक देवनिने स्तुति करी ते जगत् गुरु भरत पुत्रकूं राज्य देय वैरागी भए । इंद्रादिक देवनिने तपकल्याणक किया, तिलकनामा उद्यानविषै महाव्रत धरे तबसे यह स्थान प्रयाग कहाया । भगवानने एक हजार वर्ष तप किया, समेरु समान अचल सर्वपरिग्रहके त्यागी महातप करते भए । तिनके संग चार हजार राजा निकसे, ते परीषह न सह सकनेकर व्रत-भ्रष्ट भए, स्वेच्छविहारी होय वन फलादिक भखते भए । तिनके मध्य मारीच दण्डीका भेष धरता भया । ताके प्रसंगसे सूर्योदय चन्द्रोदय राजा सुप्रभाके पुत्र रानी प्रल्हादना-की कुक्षिविषै उपजे ते भी चारित्र-भ्रष्ट भए मारीचके मार्ग लागे । कुधर्मके आचरणसूं चतुर्गति संसारमें भ्रमे । अनेक भवविषैं जन्म मरण किए । बहुरि चन्द्रोदयका जीव कर्मके उदयसूं नागपुरनामा नगरविषै राजा हरिपतिके राणी मनोलताके गर्भविषै उपज्या, कुलंकर नाम कहाया ।

बहुरि राज्य पाया। अर सूर्योदयका जीव अनेक भव भ्रमण कर उस ही नगरविषै विश्वनामा ब्राह्मण, जिसके अग्निकुंड नामा स्त्री, उसके श्रुतिरत नामा पुत्र भया। सो पुरोहित पूर्व जन्मके स्नेहसे राजा कुलंकरको अतिप्रिय भया। एक दिन राजा कुलंकर तापसियोंके समीप जाय था सो मार्गविषै अभिनन्दन नामा मुनिका दर्शन भया। वे मुनि अवधिज्ञानी सर्व लोकके हितू तिन्होंने राजासे कही तेरा दादा सर्प भया सो तपस्वियोंके काष्ठमध्य तिष्ठे है, सो तापसी काष्ठ विदारेंगे सो तू रक्षा करियो। तब यह तहां गया, जो मुनिने कही थी त्योंही दृष्टि पड़ी, इसने सर्प बचाया अर तापसियोंका मार्ग हिंसारूप जाण्या, तिनसे उदास भया मुनिव्रत धारिवेकू उद्यम किया। तब श्रुतिरत पुरोहित पापकर्माने कही–हे राजन्! तिहारे कुलविषै वेदोक्त धर्म चला आया है, अर तापस ही तिहारे गुरु हैं तातैं तू राजा हरिपतिका पुत्र है तो वेद मार्गका ही आचरण कर, जिनमार्ग मत आचरै। पुत्रकूं राज देय वेदोक्त विधि कर तू तापसका व्रत धर, मैं तेरे साथ तप धरूंगा, या भांति पापी पुरोहित मूढमतिने कुलंकरका मन जिनशासनसे फेरचा। अर कुलंकरकी स्त्री श्रीदामा सो पापिनी परपुरुषासक्त उसने विचारी कि मेरी कुक्रिया राजाने जानी इसलिए तप धारै है सो न जानिए तप धरै, कै न धरै, कदाचित् मोहि मारे तातैं मैं ही उसै मारूं। तब उसने विष देयकर राजा अर पुरोहित दोनों मारे सो मरकर निकुंजिया नामा वनमें पशुघातक पापसे दोनों सुआ भए। बहुरि मींडक भए, मूंसा भए, मोर भए, सर्प भए, कूकर भए, कर्मरूप पवनके प्रेरे तिर्यंच-योनिविषै भ्रमै। बहुरि पुरोहित श्रुतिरतका जीव हस्ती भया, अर राजा कुलंकरका जीव मींडक भया सो हाथीके पगतले दब कर मुवा, बहुरि मींडक भया सो सूके सरोवरविषैं कागने भख्या सो कूकड़ा भया। हाथी मर कर मार्जार भया उसने कुक्कुट भखा। कुलंकरका जीव तीन जन्म कूकड़ा भया सो पुरोहितके जीव मार्जारने भख्या। बहुरि ये दोनों मूसा मार्जार शिशुमार जातिके मच्छ भए सो धीवरने जालविषै पकड़ कुहाडान्सि काटे सो मुवे। दोनों मरकर राजगृही नगरविषैं बह्वाशनामा ब्राह्मण उसकी उल्का नामा स्त्रीके पुत्र भए। पुरोहितके जीवका नाम विनोद राजा कुलंकरके जीवका नाम रमण, सो महा दरिद्री अर विद्या-रहित। तब रमणने विचारी देशांतर जाय विद्या पढ़ूं, तब घरसे निकसा, पृथिवीविषै भ्रमता चारों वेद अर वेदोंके अंग पढ़े। बहुरि राजगृही नगरी आय पहुँचा, भाईके दर्शनकी अभिलाषा, सो नगरके बाहिर सूर्य अस्त होय गया, आकाशविषैं मेघपटलके योगसे अति अन्धकार भया, सो जीर्ण उद्यानके मध्य एक यक्षका मंदिर तहां बैठा। अर याके भाई विनोदकी समिधा नामा स्त्री सो महा कुशीला एक अशोकदत्त नामा पुरुषसे आसक्त सो तासे यक्षके मंदिरका संकेत किया हुता, सो अशोकदत्तकूं तो मार्गविषैं कोटपालके किंकरने पकड्या अर विनोद खड्ग हाथविषैं लिए अशोकदत्तके मारवेकूं यक्षके मंदिर आया सो जार समभि

खडगसे भाई रमणकूं मारा अन्धकारविषैं दृष्टि न पड्या, सो रमण मुवा, विनोद घर गया। बहुरि विनोद भी मुवा सो दोनों अनेक भव धरते भए।

बहुरि विनोदका जीव तो सालवनविषैं आरण भैंसा भया। अर रमणका जीव अंधा रीछ भया, सो दोनों दावानलविषैं जरे, मरकर गिरिवनविषैं भील भए, बहुरि मरकर हिरण भए, सो भीलने जीवते पकड़े। दोनों अति सुन्दर, सो तीसरा नारायण स्वयंभूति श्रीविमलानाथ-जीके दर्शन जायकर पीछा आवे था उसने दोनों हिरण लिए, अर जिनमंदिरके समीप राखे, सो राजद्वारसे इनकूं मनवांछित आहार मिलैं, अर मुनिनिके दर्शन करें, जिनवाणीका श्रवण करें। दिनविषैं रमणका जीव जो मृग हता सो समाधिमरणकर स्वर्गलोक गया, अर विनोदका जीव जो मृग हुता वह आर्तध्यानसे तिर्यंचगतिविषैं भ्रम्या। बहुरि जंबूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं कंपि-ल्यानगर तहां धनदत्त नामा वणिक बाईस कोटि दीनारका स्वामी भया। चार टांक स्वर्णकी एक दीनार होय है। ता वणिकके वारुणी नाम स्त्री उसके गर्भविषैं दूजे भाई रमणका जीव मृग पर्यायसे देव भया था सो भूषण नाम पुत्र भया निमित्तज्ञानीने इसके पितासे कहा कि यह सर्वथा जिन-दीक्षा धरेगा। सुनकर पिता चिंतावान भया पिताका पुत्रसे अधिक प्रेम, इसको घर-हीविषैं राखै, बाहिर निकसने न देय, सब सामग्री वाके घरविषैं विद्यमान, यह भूषण सुंदर स्त्रीनिकर सेव्यमान वस्त्र आहार सुगन्धादि विलेपन कर घरविषैं सुखसे रहे, याकूं सूर्यके, उदय अस्तकी गम्य नाहीं, याके पिताने सकड़ों मनोरथकर यह पुत्र पाया, अर एकही पुत्र, सो पूर्व जन्मके स्नेहसे पिताकूं प्राणसे भी प्यारा, पिता तो विनोदका जीव अर पुत्र रमणका जीव, आगे दोनों भाइ हुते सो या जन्मविषैं पिता पुत्र भए। संसारकी विचत्रगति है ये प्रणी नटवत् नृत्य करैं हैं, संसारका चरित्र स्वप्नके राज्य समान असार है। एकसमय यह धनदत्तका पुत्र भूषण प्रभात समय दुंदुंभी शब्द अर आकाशविषैं देवनिका आगमन देख प्रतिबुद्ध भया। यह स्वभावही से कोमलचित्त धर्मके आचार विषैं तत्पर महाहर्षका भरया दोनो हाथ जोड़ नमस्कार करता, श्रीधर केवलीकी वंदनाकूं शीघ्र ही जाय था, सो सिवाणसे उतरते सर्पने डसा, देह तज महेंद्र नाम जो चौथा स्वर्ग तहां देव भया। तहांतैं चयकर पुष्कर द्वीपविषैं चन्द्रादित्य नामा नगर तहां राजा प्रकाशयश ताके राणी माधवी, ताके जगद्युत नामा पुत्र भया। यौवनके उदयविषैं राज्यलक्ष्मी पाई, परतु संसारसे अति उदास राजविषैं चित्त नाहीं, सो याके वृद्ध मंत्रिनिने कही--यह राज तिहारे कुलक्रमसे चला आवे है सो पालहु, तिहारे राज्य प्रजा सुख रूप हायगी, सो मंत्रिनिके हठसे यह राज्य करैं, राज्यविषैं तिष्ठता यह साधुनिकी सेवा करैं, सो मुनि दानके प्रभावसे देवकुरु भोगभूमि गया। तहांसे ईशान नाम दूजा स्वर्ग तहां देव भया। चार सागर दोय पल्य देवलोकके सुख भाग देवांगनानिकर मंडित नाना प्रकारके भोग भोगि तहांसे चया सो जम्बूद्वीपके पश्चिम विदेह मध्य अचल नामा चक्रवर्तीके रत्नानामा रानीके

अभिराम नामा पुत्र भया, सो महागुणनिका समूह अति सुन्दर जाहि देखि सर्व लोककूं आनंद होय, सो बाल अवस्थाहीसे अतिविरक्त जिन-दीक्षा धारया चाहै, अर पिता चाहै यह घरविषैं रहै। तीन हजार राणी इसे परणाई, सो वे नाना प्रकारके चरित्र करें, परंतु यह विषय सुखकूं विष-समान गिनै, केवल मुनि होयवेकी इच्छा, अति शांतचित्त, परतु पिता घरसे निकसने न देय। यह महा भाग्य महा शीलवान महागुणवान महात्यागी स्त्रियोंका अनुराग नाहीं, याकूं ते स्त्री भांति भांतिके वचनकर अनुराग उपजावैं, अतियत्नकर सेवा करें परन्तु याकूं संसारकी माया गर्तरूप भासै। जैसैं गर्तमें पड़्या गज ताके पकड़नहारे मनुष्य नाना भांति ललचावैं, तथापि गजको गर्त न रुचै, ऐसे याहि जगत्‌की माया न रुचै। यह शांत चित्त पिताके निरोधसे अति उदास भया, घरविषैं रहै तिन स्त्रिनिके मध्य प्राप्त हुवा तीव्र असिधारा व्रत पालै। स्त्रीनिके मध्य रहना, अर शील पालना तिनसे संसर्ग न करना, ताका नाम असिधारा व्रत कहिए। मोतिनके हार बाजूबंद मुकुटादि अनेक आभूषण पहिरे तथापि आभूषणसूं अनुराग नाहीं, यह महाभाग्य सिंहासनपर बैठा निरंतर स्त्रीनिको जिनधर्मकी प्रशंसाका उपदेश देय,त्रैलोक्यविषैं जिनधर्म समान और धर्म नाहीं,ये जीव अनादिकालसे संसार वनविषैं भ्रमण करैं है सो कोई पुण्य कर्मके योगसे जीवोंकूं मनुष्यदेहकी प्राप्ति होय है, यह बात जानता संता कौन मनुष्य संसार कूपविषैं पड़ैं, अथवा कौन विवेकी विषकूं पीवै, अथवा गिरिके शिखरपर कौन बुद्धिमान् निद्रा करै, अथवा मणिकी वांछाकर कौन पंडित नागका मस्तक हाथसे स्पर्शै? विनाशीक ये काम भोग तिनविषैं ज्ञानीकूं कैसै अनुराग उपजे, एक जिनधर्मका अनुराग ही महा प्रशंसा योग्य मोक्षके सुखका कारण है। यह जीवोंका जीतव्य अत्यंत चंचल,याविषैं स्थिरता कहां? जो अवांछक निस्पृह,जिनके चित्त वश है तिनके राज्यकाज अर इंद्रियोंके भोगोंसे कौन काम? इत्यादिक परमार्थके उपदेशरूप याकी वाणी सुनकर स्त्रियें भी शांतचित्त भई, नाना प्रकाके नियम धारती भईं। यह शीलवान् तिनकूं भी शीलविषैं दृढ़चित्त करता भया। यह राजकुमार अपने शरीरविषैं भी रागरहित एकांतर उपवास, अथवा बेला तेला आदि अनेक उपवासोंकर कर्म कलंक खिपावता भया, नाना प्रकारके तपकर शरीरकूं शोखता भया, जैसे ग्रीष्मका सूर्य जलकूं शोखै। समाधान रूप है मन जाका,मन इन्द्रियनिके जीतवेकूं समर्थ यह सम्यग्दृष्टि निश्चल चित्त महाधीर वीर चौंसठ हजार वर्ष लग दुर्धर तप करता भया। बहुरि समाधिमरण करि पंचणमोकार स्मरण करता देह त्याग कर छठा जो ब्रह्मोत्तर स्वर्ग तहां महा ऋद्धिका धारक देव भया। अर जो भूषणके भवविषैं याका पिता धनदत्त सेठ था विनोद ब्राह्मणका जीव सो मोहके योगतैं अनेक कुयोनिविषैं भ्रमणकरि जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र तहां पोदननाम नगर ताविषैं अग्निमुख नामा ब्राह्मण ताके शकुना नाम स्त्री मृदुमतिनामा

पुत्र भया सो नाम तो मृदुमति, परंतु कठोर चित्त अति दुष्ट महाजुवारी अविनयी अनेक अपराधोंका भरा दुराचारी, सो लोकोंके उराहनेसे माता पिताने घरसे निकास्या, सो पृथिवीविषैं परिभ्रमण करता पोदनपुर गया, किसीके घर तृषातुर पानी पीवनेको पैठा सो एक ब्राह्मणी आंसू डारती हुई इसे शीतल जल प्यावती भई, यह शीतल मिष्टजलसे तृप्त हो ब्राह्मणीकूं पूछता भया तू कौनकारण रुदन करै है ? तब ताने कही तेरे आकार एक मेरा पुत्र था सो मैं कठोर चित्त होय क्रोधकर घरसे निकास्या सो तैंने भ्रमण करते कहू दख्या होय तो कह, नील कमल समान तो सारिखा ही है। तब यह आंसू डार कहता भया—हे मात! तू रुदन तज वह मैं ही हूँ। तोहि देखे बहुत दिन भए तातैं मोहि नाहीं पहिचाने है। तू विश्वास गह, मैं तेरा पुत्र हूं। तब वह पुत्र जान राखती भई, अर मोहके योगतैं ताके स्तनोंसे दुग्ध झरा, यह मृदुमति तेजस्वी रूपवान् स्त्रीनिके मनका हरणहारा, धूर्तोंका शिरोमणि, जुवाविषैं सदा जीते, बहुत चतुर अनेक कला जाने, काम-भोगविषैं आसक्त, एक वसंतमाला नामा वेश्या सो ताके अति वल्लभ, अर याके माता पिताने यह काढ़ा हुता सो इसके पीछे वे अति लक्ष्मीकूं प्राप्त भए। पिता कुंडलादिक अनेक भूषण करि मण्डित, अर माता कांचीदामादिक अनेक आभरणोंकर शोभित सुखसूं तिष्ठै। अर एक दिन यह मृदुमति शशांक नगरविषैं राजमंदिरमें चोरीकूं गया सो राजा नन्दिवर्धन शशांक-मुख स्वामीके मुख धर्मोपदेश सुन विरक्त चित्त भया था सो अपनी रानीसूं कहे था कि हे देवी! मैं मोक्ष सुखका देने हारा मुनिके मुख परम धर्म सुना ये इन्द्रियनिके विषय विष-समान दारुण हैं, इनके फल नरक-निगोद हैं, मैं जैनेश्वरी दीक्षा धरूंगा, तुम शोक मत करियो। या भांति स्त्रीकूं शिक्षा देता हुता, सो मृदुमति चोरने यह वचन सुन अपने मनविषैं विचारया, देखो यह राजऋद्धि तज मुनिव्रत धारे है, अर मैं पापी चोरीकर पराया द्रव्य हरूं हूं, धिक्कार मोकूं ऐसा विचारकर निर्मलचित्त होय सांसारिक विषय भोगोंसे उदासचित्त भया, स्वामीचंद्रमुखके समीप सर्व परिग्रहका त्यागकर जिनदीक्षा आदरी, शास्त्रोक्त महादुर्धर तप करता महाक्षमावान् महाप्रासुक आहार लेता भया।

अथानंतर दुर्गनाम गिरिके शिखर एक गुणनिधि नाम मुनि चार महीनेके उपवास धर तिष्ठे थे वे सुर असुर मनुष्यनिकर स्तुति करिवे योग्य महा ऋद्धिधारी चारण मुनि थे सो चौमासेका नियम पूर्णकर आकाशके मार्ग होय किसी तरफ चले गए, अर यह मृदुमति मुनि आहारके निमित्त दुर्गनामागिरिके समीप आलोक नाम नगर वहां आहारकूं आया, जूड़ाप्रमाण पृथिवीकूं निरखता जाय था सो नगरके लोकोंने जानी यह वे मुनि हैं जो चार महीना गिरिके शिखर रहे, यह जानकर अतिभक्तिकर पूजा करी, अर इसे अतिमनोहर आहार दिया, नगरके लोकोंने बहुत स्तुति करी, इसने जानी गिरिपर चार महीना रहे तिनके भरोसे मेरी अधिक

प्रशंसा होय है सो मानका भरया मौन पकड़ रहा, लोकोंसे यह न कही कि मैं और ही हू, अर वे मुनि और थे। अर गुरुके निकट माया शल्य दूर न करी, प्रायश्चित्त न लिया, तातैं तिर्यंच-गतिका कारण भया। तप बहुत किए सो पर्याय पूरीकर छठे देव लोक जहां अभिरामका जीव देव भया था, वहां ही यह गया, पूर्व जन्मके स्नेहकर उसके याके अति स्नेह भया, दोनों ही समान ऋद्धिके धारक अनेक देवांगनाओंकर मंडित, सुखके सागरविषैं मग्न, दोनों ही सागरों पर्यंत सुखसूं रमे सो अभिरामका जीव तो भरत भया, अर यह मृदुमतिका जीव स्वर्गसे चय मायाचारके दोषसे इस जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं उतंग है शिखर जिसके ऐसा जो निकुंज नामा गिरि उसविषैं महागहन शल्लकी नामा वन वहां मेघकी घटा-समान श्याम अति सुंदर गजराज भया, समुद्रकी गाज समान है गर्जना जिसकी, अर पवन समान है शीघ्र गमन जिनका, महा भयंकर आकारकूं धरे, अति मदोन्मत्त, चन्द्रमा-समान उज्वल हैं दांत जिसके, गजराजोंके गुणोंकरि मंडित विजयादिक महाहस्ती तिनके वंशविषैं उपज्या, महा कांतिका धारक ऐरावत-समान अति स्वछंद, सिंह व्याघ्रादिकका हननहारा, महा वृक्षोंका उपारणहारा, पर्वतोंके शिखरका ढाहन-हारा, विद्याधरोंकर न ग्रहा जाय, तो भूमिगोचरियोंकी क्या बात, जाके वाससे सिंहादिक निवास तजि भाग जावैं ऐसा प्रबल गजराज गिरिके वनविषैं नाना प्रकार पल्लवका आहार करता, मानसरोवरविषैं क्रीड़ा करता, अनेक गजों सहित विचरै, कभी कैलाशविषैं विलास करै, कभी गंगाके मनोहर द्रहोंविषैं क्रीड़ा करै, अर अनेक वन गिरि नदी सरोवरविषैं सुंदर क्रीड़ा करै, अर हजारों हथिनीनि सहित रमै, अनेक हाथियोंके समूहका शिरोमणि यथेष्ट विचरता ऐसा सोहै जैसा पक्षियोंके समूहकर गरुड़ सोहै। मेघ समान गर्जता मद नीझरने तिनके झरनेका पर्वत सो एक दिन लंकेश्वरने देखा, सो विद्याके पराक्रमकर महा उग्र उसने यह नीठि नीठि वश किया, इसका त्रैलोक्यमण्डन नाम धरया, सुन्दर हैं लक्षण जिनके जैसैं स्वर्गविषैं चिरकाल अनेक अप्स-राओं सहित क्रीड़ा करी तैसैं हाथियोंकी पर्यायविषैं हजारों हथिनियोंसे क्रीडा करता भया। यह कथा देशभूषण केवली राम लक्ष्मणसूं कहे हैं कि ये जीव सर्व योनिविषैं रति मान लेय हैं, निश्चय विचारिए तो सर्व ही गति दुखरूप हैं। अभिरामका जीव भरत अर मृदुमति-का जीव गज सूर्योदय चन्द्रोदयके जन्मसे लेकर अनेक भवके मिलापी हैं तातैं भरतकूं देखि पूर्व भव चितारि गज उपशांत चित्त भया। अर भरत भोगोंसे पराङ्मुख, दूर भया है मोह जिसका, अब मुनिपद लिया चाहै है, इस ही भवसूं निर्वाण प्राप्त होवेंगे, बहुरि, भव न धरेंगे। श्री ऋषभदेवके समय यह दोनों सूर्योदय चन्द्रोदय नामा भाई थे, मारीचके भरमाए मिथ्यात्वका सेवन कर बहुत काल संसारविषैं भ्रमण किया, त्रस स्थावर योनिविषैं भ्रमै। चंद्रोदयका जीव कैयक भव पीछे राजा कुलंकर, बहुरि कैयक भव पीछे रमण ब्राह्मण, बहुरि कैयक भव धर समाधि-

मरण करणहारा मृग भया। बहुरि स्वर्गविषै देव, बहुरि भूषण नामा वैश्यका पुत्र, बहुरि स्वर्ग, बहुरि जगद्युति नाम राजा, वहांसे भोगभूमि, वहुरि दूजे स्वर्ग देव, वहांसे चयकर महाविदेह क्षेत्रविषैं चक्रवर्तीका पुत्र अभिराम भए। वहांसे छठे स्वर्ग देव, देवसे भरत नरेंद्र सो चरमशरीरी हैं, बहुरि देह न धारेंगे। अर सूर्योदयका जीव बहुत काल भ्रमणकर राजा कुलंकर का श्रुतिरत नामा पुराहित भया, बहुरि अनेक जन्म लेय विनोदनामा विप्र भया। बहुरि अनेक जन्म लेय आर्तध्यानसे मरणहारा मृग भया। बहुरि अनेक जन्म भ्रमणकर भूषणका पिता धनदत्त नामा वणिक, बहुरि अनेक जन्म धर मृदुमति नामा मुनि उसने अपनी प्रशंसा सुन राग किया, मायाचारसे शल्य दूर न करी तपके प्रभावसे छठे स्वर्ग देव भया। वहांसे चयकरि त्रैलोक्यमंडन हाथी अब श्रावकके व्रत धर देव होयगा, ये भी निकट भव्य है। या भांति जीवोंकी गति-आगति जान अर इंद्रियोंके सुख विनाशीक जान या विषम वनकूं तजकर ज्ञानी जीव धर्मविषैं रमहु, जे प्राणी मनुष्यदेह पाय जिन-भाषित धर्म नाहीं करैं हैं वे अनंत काल संसार भ्रमण करेंगे, आत्मकल्याणसे दूर हैं, तातैं जिनवरके मुखसे निकस्या दयामई धर्म मोक्ष प्राप्त करनेकूं समर्थ याके तुल्य और नाहीं, मोहतिमिरका दूर करणहारा, जीती है सूर्यकी कांति जाने सो मनवचन कायकर अंगीकार करो जातैं निर्मल पद पावो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै भरतके अर हाथीके पूर्वभव वर्णन करनेवाला पच्चासीवां पर्व पूर्ण भया ॥८५॥

छयासीवां पर्व

[भरत और कैकयीका दीक्षा ग्रहण करना]

अथानन्तर श्रीदेशभूषण केवलीके वचन महा पवित्र मोह अन्धकारके हरणहारे, संसार सागरके तारणहारे, नानाप्रकारके दुखके नाशक, उनविषैं भरत अर हाथीके अनेक भवका वर्णन सुनकर राम लक्ष्मण आदि सकल भव्यजन आश्चर्यकूं प्राप्त भए, सकल सभा चेष्टारहित चित्राम कैसी होय गई। अर भरत नरेंद्र देवेंद्र-समान है प्रभा जाकी, अविनाशी पदके अर्थि मुनि होयवेकी है इच्छा जिसके, गुरुवोंके चरणविषैं नम्रीभूत है शीस जिसका, महा शांतचित्त परम वैराग्यकूं प्राप्त हुवा। तत्काल उठकरि हाथ जोड केवलीकूं प्रणामकरि महा मनोहार वचन कहता भया—हे नाथ! मैं संसारविषैं अनन्त काल भ्रमण करता नाना प्रकार कुयोनियोंके विषैं संकट सहता दुखी भया, अब मैं संसार भ्रमणसे थका, मुझे मुक्तिका कारण तिहारी दिगम्बरी दीक्षा देवहु। यह आकाशरूप नदी मरणरूप उग्र तरंगकूं धरे, उसविषैं मैं डूबूं हू, सो मुझे हस्तावलम्बन दे

निकासो। ऐसा कहकर केवलीको आज्ञा-प्रमाण तज्या हैं समस्त परिग्रह जिसने अपने हाथोंसे शिरके केश लोंच किये, परम सम्यक्ती महाव्रतकूं अंगीकार कर जिन दीक्षा-धर दिगम्बर भया। तब आकाशविषैं देव धन्य धन्य कहते भए अर कल्पवृक्षके फूलोंकी वर्षा करते भए।

हजारसे अधिक राजा भरतके अनुरागसे राजऋद्धि तज जिनेन्द्री दीक्षा धरते भए, अर कैयक अल्पशक्ति हुते ते अणुव्रत धर श्रावक भये, अर माता केकई पुत्रके वैराग्य सुन आंसुनिकी वर्षा करती भई। व्याकुल चित्त होय दौड़ी सो भूमिविषैं पड़ी, महामोहकूं प्राप्त भई। पुत्रकी प्रीतिकर मृतक-समान होय गया है शरीर जाका सो चन्दनादिकके जलमे छांटी तो भी सचेत न भई, घनी वेर विषै सचेत भई, जमैं वत्स विना गाय पुकारै, तैसे विलाप करती भई। हाय पुत्र! महा विनयवान गुणनिकी खान, मनकूं आल्हादका कारण, हाय तू कहां गया? हे अंगज! मेरा अंग शोकके सागर विषैं डूबै है सो थांभ, तो सारिखे पुत्र विना मैं दुःखके सागर-विषैं मग्न शोककी भरी कैसे जीऊंगी। हाय, हाय यह कहा भया? या भांति विलाप करती माता श्रीराम लक्ष्मणने संबोधकरि विश्रामकूं प्राप्त करी, अति सुन्दर वचननिकर धैर्य बंधाया—हे मात! भरत महा विवेकी ज्ञानवान् है तुम शोक तजहु, हम कहा तिहारे पुत्र नाहीं? आज्ञाकारी किंकर हैं। अर कौशल्या सुमित्रा सुप्रभाने बहुत संबोधा, तब शोकरहित होय प्रतिबोधकूं प्राप्त भई। शुद्ध है मन जाका अपने अज्ञानकी बहुत निंदा करती भई--धिक्कार या स्त्री पर्यायकूं, यह पर्याय महा दोषनिकी खानि है, अत्यंत अशुचि बीभत्स नगरकी मोरी समान, अब ऐसा उपाय करूं जाकर स्त्री पर्याय न धरूं, संसार समुद्रकूं तिरूं यह महा ज्ञानवान् सदाही जिनशासनकी भक्तिवंत हुती, अब महा वैराग्यकूं प्राप्त होय पृथिवीमती आर्यिकाके समीप आर्यिका भई। एक श्वेत वस्त्र धारया, अर सर्व परिग्रह तज निर्मल सम्यक्तकूं धरती सर्व आरम्भ टारती भई। याके साथ तीनसै आर्यिका भई यह विवेकिनी परिग्रह तजकर वैराग्य धार ऐसी सोहती भई जैसी कलंकरहित चंद्रमाकी कला मेघपटलरहित सोहै। श्रीदेशभूषण केवलीका उपदेश सुन अनेक मुनि भये अनेक आर्यिका भई तिनकर पृथ्वी ऐसी सोहती भई जैसे कमलनिकर सरोवरी सोहै। अर अनेक नर नारी पवित्र हैं चित्त जिनके तिन्होंने नानाप्रकारके नियम धर्मरूप श्रावक श्राविकाके व्रत धारे, यह युक्त ही है जो सूर्यके प्रकाश कर नेत्रवान् वस्तुका अवलोकन करैं ही करैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै भरत अर केकईका वैराग्य वर्णन करने वाला छियासीवा पर्व पूर्ण भया॥८६॥

सत्तासीवां पर्व

[त्रैलोक्यमंडन हाथी कास्वर्ग-गमन और भरत महामुनिका निर्वाण-गमन]

अथानन्तर त्रैलोक्यमंडन हाथी अति प्रशांत चित्त केवलीके निकट श्रावकके व्रत

धारता भया। सम्यग्दर्शन संयुक्त महाज्ञानी, शुभक्रियाविषैं उद्यमी हाथी धर्मविषैं तत्पर होता भया। पंद्रह दिनके उपवास तथा मासोपवास करता भया,वृक्षके पत्रनिकर पारणा करता भया। हाथी संसारसूं भयभीत उत्तम चेष्टाविषैं परायण, लोकनिकर पूज्य महाविशुद्धताकूं धरे पृथिवी-विषैं विहार करता भया। कभी पक्षोपवास कभी मासोपवासके पारणा ग्रामादिकविषैं जाय तो श्रावक ताहि अति भक्तिकर शुद्ध अन्न शुद्ध जल कर पारणा करावते भए। क्षीण होय गया है शरीर जाका, वैराग्यरूप खूंटेसे बंधा महा उग्र तप करता भया। यम नियमरूप है अंकुश जाके। बहुरि महा उग्र तपका करणहारा गज शनैः शनैः आहारका त्याग कर अंत संलेषणा धर शरीर तज छठे स्वर्ग देव होता भया। अनेक देवांगनाकरि युक्त, हार-कुंडलादिक आभूषणनिकरि मंडित, पुण्यके प्रभावतैं देवगतिके सुख भोगता भया। छठे स्वर्गहीतैं आया हुता, अर छठे ही स्वर्ग गया, परंपराय मोक्ष पावेगा। अर भरत महामुनि महातपके धारक पृथिवीके गुरु निर्ग्रंथ, जाके शरीरका भी ममत्व नाहीं, वे महाधीर जहां पिछला दिन रहै तहां ही बैठ रहैं, जिनकूं एक स्थान न रहना, पवन सारिखे असंगी, पृथिवीसमान क्षमाकूं धरे, जलसमान निर्मल, अग्नि समान कर्म काष्ठके भस्म करनहारे,अर आकाश समान अलेप, चार आराधनाविषैं उद्यमी, तेरह प्रकार चारित्र पालते विहार करते भए। निर्ममत्व स्नेहके बंधनतैं रहित, मृगेन्द्र सारिखे निर्भय समुद्र समान गंभीर सुमेरु समान निश्चल, यथाजात रूपके धारक, सत्यका वस्त्र पहिरे क्षमारूप खड्गकूं धरे, बाईस परीषहके जीतने हारे, महा तपस्वी,समान हैं शत्रु मित्र जिनके, अर समान है सुख दुख जिनके, अर समान है तृणरत्न जिनके, महा उत्कृष्ट मुनि शास्त्रोक्त मार्ग चलते भए। तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी। सूई समान तीक्ष्ण तृणकी सली पावोंमें चुभैं हैं परंतु ताकी कछु सुध नाहीं। अर शत्रुनिके स्थानकविषैं उपसर्ग सहिवे निमित्त विहार करते भए। तपके संयमके प्रभावकरि शुक्लध्यान उपजा। शुक्लध्यानके बलकर मोहका नाशकर ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय कर्महर लोकालोककूं प्रकाश करणहारा केवलज्ञान प्रगट भया। बहुरि अघातिया कर्म भी दूरकर सिद्धपदकूं प्राप्त भए, जहांतैं बहुरि संसारविषैं भ्रमण नाहीं। यह केकईके पुत्र भरतका चरित्र जो भक्ति कर पढ़ै सुनै, सो सब क्लेशसे रहित होय यश कीर्ति बल विभूति आरोग्यताकूं पावै, अर स्वर्ग मोक्ष पावै। यह परम चरित्र महा उज्ज्वल श्रेष्ठ गुणनिकर युक्त भव्य जीव सुनों जातैं शीघ्र ही सूर्यसे अधिक तेजके धारक होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं
भरतका निर्वाण गमन वर्णन करनेवाला सत्तासीवां
पर्व पूर्ण भया ॥८७॥

अठासीवां पर्व

[राम लक्ष्मणका राज्याभिषेक]

अथानंतर भरतके साथ जे राजा महाधीर वीर, अपने शरीरविषैं भी जिनका अनुराग नाहीं,घरतैं निकसि जैनेश्वरी दीक्षा धरि दुर्लभ वस्तुकूं प्राप्त भए तिनविषैं कैयकनिके नाम कहिए है--हे श्रेणिक तू सुन--सिद्धार्थ, रतिवर्धन,मेघरथ, जांबूनद, शल्य, शशांक, विरस नंदन, नंद, आनंद, सुमति, सदाश्रय, महाबुद्धि सूर्य, इन्द्रध्वज, जनवल्लभ, श्रुतिधर, सुचंद्र, पृथिवीधर, अलंक, सुमति, अक्रोध, कुंदर, सत्यवान्, हरि, सुमित्र, धर्ममित्र, पूर्णचन्द्र, प्रभाकर, नघुष, सुंदन, शांति, प्रियधर्मा इत्यादि एक हजारतैं अधिक राजा वैराग्य धारते भए। विशुद्ध कुल विषैं उपजे, सदा आचारविषैं तत्पर, पृथिवीविषैं प्रसिद्ध हैं शुभ चेष्टा जिनकी, ये महाभाग्य हाथी घोडे रथ पयादे स्वर्ण रत्न रणवास सर्व तजकरि पंच महाव्रत धारते भए। राज्यकूं जिनने जीर्ण तृणवत तज्या वे महाशांत योगीश्वर नानाप्रकारकी ऋद्धिके धारक भए। सो आत्मध्यानके ध्याता कैयक तो मोक्ष गए, कैयक अहमिंद्र भए, कैयक उत्कृष्ट देव भए। अथानंतर भरत चक्रवर्ती सारिखे दशरथके पुत्र भरत तिनकूं घरसे निकसे पीछे लक्ष्मण तिनके गुण चितार चितार अतिशोकवंत भया, अपना राज्य शून्य गिनता भया, शोककरि व्याकुल है चित्त जाका, अति दीर्घ आंसू डारता भया, दीर्घ निश्वास नाखता भया, नील कमल समान है कांति जाकी सो कुमलाय गया, विराधितकी भुजानिपर हाथ धरे, ताके सहारे बैठ्या मंद मंद वचन कहै, वे भरत महाराज गुण ही हैं आभूषण जिनके सो कहां गए? जिन तरुण अवस्था विषैं शरीरसूं प्रीति छांडी,इन्द्र-समान राजा, अर हम सब उनके सेवक, वे रघुवंशके तिलक समस्त विभूति तजकरि मोक्षके अर्थि महादुद्धर मुनिका धर्म धारते भए। शरीर तो अति कोमल, कैसे परीषह सहेंगे? वे धन्य हैं श्रीराम महा ज्ञानवान् कहते भए भरतकी महिमा कही न जाय, जिनका चित्त कभी संसारविषैं न रच्या, जो शुद्ध बुद्धि है तो उनकी ही है, अर जन्म कृतार्थ है तो उनका ही है, जे विषके भरे अन्नकी न्याई राज्यकूं तज करि जिनदीक्षा धरते भए। वे पूज्य प्रशंसा-योग्य परम योगी, उनका वर्णन देवेंद्र भी न कर सके तो औरनिकी कहा शक्ति जो करैं। वे राजा दशरथके पुत्र,केकई-के नंदन तिनकी महिमा हमतें न कही जाय। या भरतके गुण गाते एक मुहूर्त सभाविषैं तिष्ठे, समस्त राजा भरत ही के गुण गाया करें। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण दोऊ भाई भरतके अनुराग-करि अति उद्वेगरूप उठे, सब राजा अपने अपने स्थानकूं गए, घर घर भरतकी चर्चा, सब ही लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह तो उनकी यौवन अवस्था, अर यह राज्य, ऐसे भाई, सब सामग्री पूर्ण, ऐसे ही पुरुष तजैं सोई परमपदकूं प्राप्त होवें, या भांति सब ही प्रशंसा करते भए।

बहुरि दूजे दिन सब राजा मंत्रकर रामपै आए, नमस्कारकरि अति प्रीतिसे वचन कहते भए--हे नाथ ! जो हम असमझ हैं तो आपके, अर बुद्धिवंत हैं तो आपके, हमपर कृपाकर एक बीनती सुनो--हे प्रभो ! हम सब भूमिगोचरी अर विद्याधर आपका राज्याभिषेक करैं,जैसे स्वर्ग विषैं इन्द्रका होय, हमारे नेत्र अर हृदय सफल होवैं, तिहारे अभिषेकके सुखकरि पृथिवी सुखरूप होय । तब राम कहते भए--तुम लक्ष्मणका राज्याभिषेक करो, वह पृथिवीका स्तंभ भूधर है, राजानिका गुरु वासुदेव, राजानिका राजा, सर्व गुण ऐश्वर्यका स्वामी, सदा मेरे चरणनिकूं नमैं, या उपरांत मेरे राज्य कहा ? तब वे समस्त श्रीरामकी अतिप्रशंसा कर जय जयकार शब्द कर लक्ष्मणपै गए, अर सब वृत्तांत कह्या । तब लक्ष्मण सबनिकूं साथ लेय रामपै आया, अर हाथ जोड़ नमस्कार कर कहता भया--हे वीर ! या राज्य के स्वामी आप ही हो, मैं तो आपका आज्ञाकारी अनुचर हू । तब रामने कह्या, हे वत्स ! तुम चक्र के धारी नारायण हो, तातें राज्याभिषेक तुम्हारा ही योग्य है, सो इत्यादि वार्तालापसे दोनो का राज्याभिषेक ठहरा । बहुरि जैसी मेघ की ध्वनि होय तैसी वादित्रनिकी ध्वनि होती, भई दुंदुभी बाजे नगारे ढोल मृदंग वीण तमूरे झालर झांझ मजीरे बांसुरी शंख इत्यादि वादित्र बाजे, अर नाना प्रकारके मंगल गीत नृत्य होते भए, याचकनिकूं मनवांछित दान दीये, सबनिकूं अति हर्ष भया । दोऊ भाई एक सिंहासन पर विराजे, स्वर्ण रत्नके कलश जिनके मुख कमलसे ढके, पवित्र जलसे भरे तिनकर विधिपूर्वक अभिषेक भया । दोऊ भाई मुकट भुजबन्ध हार केयूर कुंडलादिककर मंडित मनोज्ञ वस्तु पहिरे, सुगंधकर चर्चित तिष्ठे विद्याधर भूमिगोचरी तथा तीन खंडके देव जय जय शब्द कहते भए । यह बलभद्र श्रीराम हलमूसलके धारक, अर यह वासुदेव श्रीलक्ष्मण चक्रका धारक जयवंत होहु । दोऊ राजेंद्रनिका अभिषेककरि विद्याधर बड़े उत्साहसे सीता अर विशिल्याका अभिषेक करावते भए, सीता रामकी रानी, अर विशल्याका लक्ष्मणकी, तिनका अभिषेक विधिपूर्वक होता भया ।

अथानंतर विभीषणको लंका दई, सुग्रीवकूं किहकंधापुर, हनुमानकूं श्रीनगर अर हनूरुह द्वीप दिया, विराधितकूं नागलोक समान अलंकापुरी दिया, नल नीलकूं किहकंधपुर दिया, समुद्रकी लहरोंके समूहकरि महाकौतुकरूप, अर भामंडलकूं वैताढ्यकी दक्षिण श्रेणिविषैं रथनूपुर दिया, समस्त विद्याधरनिका अधिपति किया, अर रत्नजटीकूं देवोपनीत नगर दिया, अर और हू यथायोग्य सबनिकूं स्थान दिए, अपने पुण्यके उदय योग्य सबही राम-लक्ष्मणके प्रतापतैं राज्य पावते भए । रामकी आज्ञाकरि यथायोग्य स्थानमें तिष्ठे । जे भव्यजीव पुण्यके प्रभावका जगतविषैं प्रसिद्ध फल जान धर्मविषैं रति करैं हैं वे मनुष्य सूर्यसे अधिक ज्योति पावै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं राम-लक्ष्मणका राज्याभिषेक वर्णन करनेवाला अठासीवां पर्व पूर्ण भया ॥८८॥

नवासीवां पर्व

(शत्रुघ्नका राजा मधुको जीतनेके लिए मथुरापर आक्रमण)

अथानंतर राम लक्ष्मण महा प्रीतिकरि भाई शत्रुघ्नसूं कहते भए, जो तुमको रुचै सो देश लेवहु। जो तुम आधी अयोध्या चाहो तो आधी अयोध्या लेवहु, अथवा राजगृह, अथवा पोदनापुर, अथवा पौंड्रसुंदर इत्यादि सैकड़ो राजधानी हैं, तिनविषै जो नीकी सो तिहारी। तब शत्रुघ्न कहता भया--मोहि मथुराका राज्य देवो। तब राम बोले—हे भ्रात! वहां राजा मधुका राज्य है, अर वह रावणका जमाई है, अनेक युद्धनिका जीतनहारा, ताकू चमरेंद्रने त्रिशूल रत्न दिया है, ज्येष्ठके सूर्य समान दुस्सह है, अर देवनिसे दुर्निवार हैं, ताकी चिंता हमारे भी निरंतर रहै है। वह राजा मधु हरिवंशियोंके कुलरूप आकाशविषैं सूर्य समान प्रतापी है जाने वंशविषैं उद्योत किया है अर जाका लवणार्णव नामा पुत्र विद्याधरनिहू करि असाध्य है। पिता पुत्र दोऊ महाशूरवीर है, तातैं मथुरा टार और राज्य चाहो सोही लेवहु। तब शत्रुघ्न कहता भया--बहुत कहिवेकरि कहा? मोहि मथुरा ही देवहु जो मैं मधुके छातेकी न्याई मधुकूं रणसंग्रामविषै न तोड़ लूं तो दशरथका पुत्र शत्रुघ्न नाहीं। जैसैं सिंहनिके समूहकूं अष्टापद तोड़ डारै, तैसैं ताके कटकसहित ताहि न चूर डारूं तो मैं तिहारा भाई नाहीं। जो मधुकूं मृत्यु प्राप्त न कराऊं तो मैं सुप्रभाकी कुक्षिविषै उपजा ही नहीं, या भांति प्रचंड तेजका धरणहारा शत्रुघ्न कहता भया। तब समस्त विद्याधरनिके अधिपति आश्चर्यकूं प्राप्त भए, अर शत्रुघ्नकी बहुत प्रशंसा करते भए। शत्रुघ्न मथुरा जायवेकूं उद्यमी भया। तब श्रीराम कहते भए, हे भाई! मैं एक याचना करूं हू सो मोहि दक्षिणा देहु। तब शत्रुघ्न कहता भया--सबके दाता आप हो, सब आपके याचक हैं, आप याचहु सो वस्तु कहा? मेरे प्राणहीके नाथ आप हो तो और वस्तु की कहा बात। एक मधुसे युद्ध तो मैं न तजूं, अर कहो सोही करूं। तब श्रीरामने कही—हे वत्स! तू मधुसे युद्ध करै तो जासमय वाके हाथ त्रिशूलरत्न न होय तासमय करियो। तब शत्रुघ्नने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा, ऐसा कह भगवान्‌की पूजाकर, णमोकार मंत्र जप, सिद्धनिकूं नमस्कार-करि, भोजनशालाविषै जाय भोजनकरि, माताके निकट आय आज्ञा मांगी। तब वे माता अति-स्नेहतैं याके मस्तकपर हाथ धर कहती भई--हे वत्स! तू तीक्ष्ण बाणनिकर शत्रुनिके समूहकूं जीत। वह योधाकी माता अपने योधापुत्रसे कहती भई—हे पुत्र! अब तक संग्रामविषै शत्रुनिने तेरी पीठ नाहीं देखी है, अर अबहू न देखैंगे, तू रण जीत आवेगा, तब मैं स्वर्णके कमलनिकर श्रीजिनेन्द्रकी पूजा कराऊंगी, वे भगवान् त्रैलोक्य मंगलके कर्ता, आप महामंगलरूप, सुर असुर-निकर नमस्कार करिवे योग्य, रागादिकके जीतनहारे तोहि मंगल करैं। वे परमेश्वर पुरुषोत्तम

अरहंत भगवन्त अत्यंत दुर्जेय मोहरिपु जीता, वे तोहि कल्याणके दायक होहु, सर्वज्ञ त्रिकाल-दर्शी स्वयंबुद्ध तिनके प्रसादतैं तेरी विजय होहु। जे केवलज्ञानकरि लोकालोककूं हथेलीविषै आंवलाकी न्याई देखै हैं, ते तोहि मंगलरूप होहु। हे वत्स! वे सिद्धपरमेष्ठी अष्टकर्मकर रहित अष्टगुण आदि अनंत गुणनिकर विराजमान, लोकके शिखर तिष्टें ते सिद्ध तोहि सिद्धिके कर्ता होहु। अर आचार्य भव्यजीवनिके परम आधार तेरे विघ्न हरैं, जे कमल-समान अलिप्त, सूर्यस-मान तिमिर हर्ता, अर चन्द्रमा समान आल्हादके कर्ता, भूमि-समान क्षमावान्, सुमेरु समान अचल, समुद्र समान गम्भीर, आकाश समान अखंड, इत्यादि अनेक गुणनिकर मंडित हैं। अर उपाध्याय जिनशासनके पारगामी तोहि कल्याणके कर्ता होहु। अर कर्म-शत्रुनिके जीतवेकूं महा शूरवीर, बारह प्रकार तपकरि जे निर्वाणको साधैं हैं, ते साधु तोहि महावीर्यके दाता होहु। या भांति विघ्नकी हरणहारी मंगलकी करणहारी माता आशीस दई, सो शत्रुघ्न माथे चढाय माताकूं प्रणामकरि बाहिर निकस्या! स्वर्णकी सांकलनिकर मंडित जो गज तापर चढ्या सो ऐसा सोहता भया जैसैं मेघमालाके ऊपर चंद्रमा सोहै। अर नानाप्रकारके वाहननिपर आरूढ अनेक राजा संग चाले, सो तिनकरि ऐसा सोहता भया जैसा देवनिकर मंडित देवेंद्र सोहै। राम लक्ष्मणकी भाईसूं अधिक प्रीति सो तीन मंजिल भाईके संग गये। तब भाई कहता भया—हे पूज्य पुरुषोत्तम! पीछे अयोध्या जावहु, मेरी चिंता न करो, मैं आपके प्रसादतैं शत्रुनिको निस्संदेह जीतूंगा। तब लक्ष्मणने समुद्रावर्त नामा धनुष दिया, प्रज्वलित हैं मुख जिनके पवन सारिखे वेगकूं धरे ऐसे बाण दिए, अर कृतांतवक्रकूं लार दिया। अर लक्ष्मण-सहित राम पीछे अयोध्या आए परंतु भाईकी चिंता विशेष।

अथानंतर शत्रुघ्न महा धीर-वीर बड़ी सेना कर संयुक्त मथुराकी तरफ गया, अनुक्रम-से यमुना नदीके तीर जाय डेरे दिये, जहां मंत्री महासूक्ष्मबुद्धि मंत्र करते भये। देखो, इस बालक शत्रुघ्नकी बुद्धि जो मधुकूं जीतवेकी वांछा करी है। यह नयवर्जित केवल अभिमान कर प्रवर्त्या है, जा मधुने पूर्व राजा मांधाता रणविषैं जीत्या, सो मधु देवनिकर विद्याधरनिकर न जीत्या जाय, ताहि यह कैसैं जीतेगा? राजा मधु सागर-समान है, उछलते पियादे तेई भये उत्तंग लहर, अर शत्रुनिके समूह तेई भये ग्रह, तिनकर पूर्ण ऐसे मधु-समुद्रकूं शत्रुघ्न भुजानिकर तिरया चाहै है सो कैसे तिरेगा? तथा मधुभूपति भयानक वन समान है ताविषै प्रवेशकर कौन जीवता निसरै। कैसा है राजा मधुरूप वन? पयादेके समूह तेई हैं वृक्ष जहां, अर माते हाथिनि-कर महा भयंकर, अर घोडनिके समूह तेई हैं मृग जहां। ये वचन मंत्रिनिके सुन कृतांतवक्र कहता भया—तुम साहस छोड़ ऐसे कायरताके वचन क्यों कहो हो? यद्यपि वह राजा मधु चमरेंद्र कर दिया जो अमोघ त्रिशूल ताकर अति गर्वित है, तथापि ता मधुको शत्रुघ्न सुंदर

जीतेगा, जैसे हाथी महाबलवान् है अर सूंडकर वृक्षनिकूं उपाडे है, मद झरैं है, तथापि ताहि सिंह जीतै है। यह शत्रुघ्न लक्ष्मी अर प्रतापकरि मंडित है, महाबलवान् है, शूरवीर है, महा पंडित, प्रवीण है, अर याके सहाई श्रीलक्ष्मण हैं, अर आप सबही भले मनुष्य याके संग हैं तातैं यह शत्रुघ्न अवश्य शत्रुकूं जीतेगा। जब ऐसे वचन कृतांतवक्त्रने कहे, तब सबही प्रसन्न भए। अर पहिलेही मंत्रीजनानिने जो मथुरामें हलकारे पठाये हुते ते आयकर सर्व वृत्तांत शत्रुघ्नसूं कहते भए। हे देव! मथुरा नगरीकी पूर्व दिशाकी ओर अत्यंत मनोज्ञ उपवन है तहां रणवास-सहित राजा मधु रमै है। राजाके जयंती नाम पटरानी है ता सहित वनक्रीडा करै है। जैसे स्पर्शन इन्द्रियके वश भया गजराज बंधनविषैं पड़ै है, तस राजा मोहित भया विषयनिके बंधन विषै पड़्या है महाकामी, आज छठा दिन है कि सर्व राज्य काज तज प्रमादके वश भया वनविषैं तिष्ठै है, कामान्ध मूर्ख तिहारे आगमनकूं नाहीं जानै है। अर तुम ताके जीतवेकूं वांछा करी है ताकी ताहि सुध नाहीं। अर मंत्रिनिने बहुत समझाया सो काहूकी बात धारे नाहीं, जैसे मूढ रोगी वैद्यकी औषध न धारै। इस समय मथुरा हाथ आवे तो आवे। अर कदाचित् मधुपुरीविषैं धसा तो समुद्रसमान अथाह है। यह वचन हलकारोंके मुखसे शत्रुघ्न सुनकर कार्यविषैं प्रवीण ताही समय बलवान् योधानिके सहित दौड़कर मथुरा गया, अर्धरात्रिके समय सर्व लोक प्रमादी हुते, अर नगरी राजा-रहित हुती, सो शत्रुघ्न नगरविषैं जाय पैठा, जैसें योगी कर्मनाश कर सिद्धपुरीविषैं प्रवेश करैं, तैसे शत्रुघ्न द्वारकूं चूरकर मथुराविषैं प्रवेश करता भया। मथुरा महामनोज्ञ है, तब बंदीजननिके शब्द होते भये जो राजा दशरथका पुत्र शत्रुघ्न जयवंत होहु ये शब्द सुनके नगरीके लोक परचक्रका आगमन जान अति व्याकुल भए, जैसें लंका अंगदके प्रवेशकर अतिव्याकुल हुती तैसैं मथुराविषै व्याकुलता भई। कई एक कायर हृदयकी धरनहारी स्त्री हुतीं तिनके भयकर गर्भपात होय गये, अर कैयक महाशूरवीर कलकलाट शब्द सुन तत्काल सिंहकी न्याई उठे, शत्रुघ्न राजमंदिर गया, आयुधशाला अपने हाथ कर लीनी अर स्त्री बालक आदि जे नगरीके लोक अति त्रासकूं प्राप्त भए तिनकूं महामधुर वचनकर धैर्य बंधाया, जो यह श्रीराम राज्य है, यहां काहूकूं दुख नाहीं। तब नगरीके लोक त्रास-रहित भए। अर शत्रुघ्नको मथुराविषैं आया सुन राजा मधु महाकोपकर उपवनतैं नगरकूं आया, सो मथुराविषैं शत्रुघ्नके सुभटोंकी रक्षा कर प्रवेश न कर सक्या। जैसैं मुनिके हृदयविषैं मोह प्रवेश न कर सके, नाना प्रकारके उपायकर प्रवेश न पाया, अर त्रिशूलहू ते रहित भया, तथापि महाभिमानी मधुने शत्रुघ्नसे संधि न करी युद्ध हीकूं उद्यमी भया। तब शत्रुघ्नके योधा युद्धकूं निकसे, दोनों सेना समुद्र-समान तिनविषैं परस्पर युद्ध भया, रथनिके तथा हाथिनके तथा घोडनिके असवार परस्पर युद्ध करते भए, पयादे भिड़े, नाना प्रकारके आयुधनिके धारक महासमर्थ नाना प्रकार आयुधनि कर युद्ध करते

भये। ता समय परसेनाके गर्वकूं न सहता संता कृतांतवक्र सेनापति परसेनाविषैं प्रवेश करता भया। नाहीं निवारी जाय हैं गति जाकी, तहां रणक्रीडा करें है, जैसैं स्वयंभूरमण उद्यानविषै इंद्र क्रीडा करै। तब मधुका पुत्र लवणार्णवकुमार याहि देख युद्धके अर्थि आया, अपने बाणनिरूप मेघकर कृतांतवक्ररूप पर्वतकूं आच्छादित करता भया। अर कृतांतवक्र भी आशीविष तुल्य बाणनिकर ताके बाण छेदता भया, अर धरती आकाशकूं अपने बाणनिकर व्याप्त करता भया। दोऊ महायोधा सिंह समान बलवान गजनिपर चढे क्रोधसहित युद्ध करते भए, वानैं वाकूं रथरहित किया, अर वाने वाकूं। बहुरि कृतांतवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषै बाण लगाया, अर ताका बखतर भेदा, तब लवणार्णव कृतांतवक्र ऊपर तोमर जातिका शस्त्र चलावता भया, क्रोधकर लाल हैं नेत्र जाके दोनों घायल भए, रुधिर कर रंग रहे हैं वस्त्र जिनके, महा सुभटताके स्वरूप दोनों क्रोध कर उद्धत, फूले टेसूके वृक्ष समान सोहते भए, गदा खड्ग चक्र इत्यादि अनेक आयुधनिकर परस्पर दोऊ महा भयंकर युद्ध करते भए बल उन्माद विषादके भरे। बहुत बेर लग युद्ध भया, कृतांत-वक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषैं घाव किया, सो पृथिवीविषैं पड्या, जैसे पुण्यके क्षयतैं स्वर्गवासी देव मध्य लोकविषैं आय पडे। लवणार्णव प्राणान्त भया, तब पुत्रकूं पड़ा देख मधु कृतांतवक्र पर दौडा, तब शत्रुघ्नने मधुकूं रोक्या, जैसैं नदीके प्रवाहकूं पर्वत रोके। मधु महा दुस्सह शोक अर कोपका भरा युद्ध करता भया, सो आशीविषकी दृष्टि समान मधुकी दृष्टि शत्रुघ्नकी सेनाके लोक न सहार सकते भए। जैसें उग्र पवनके योगतैं पत्रनिके समूह चलायमान होय तैसे लोक चलायमान भए। बहुरि शत्रुघ्नकूं मधुके सन्मुख जाता देख धैर्यकूं प्राप्त भए। शत्रुके भयकर लोक तब लग ही डरैं जब लग अपने स्वामीकूं प्रबल न देखैं, अर स्वामीकूं प्रसन्नवदन देख धैर्यकूं प्राप्त होंय। शत्रुघ्न उत्तम रथपर आरूढ मनोज्ञ धनुष हाथविषैं सुन्दर हार कर शौभैं हैं वक्षस्थल जाका, सिरपर मुकुट धरे मनोहर कुंडल पहिरे शरदके सूर्य समान महातेजस्वी अखंडित है गति जाकी, शत्रुके सन्मुख जाता अति सोहता भया जैसैं गजराजपर जाता मृगराज सोहै। अर अग्नि सूके पत्रनिको जलावै, तैसें मधुके अनेक योधा क्षणमात्रविषै विध्वंस किए। शत्रुघ्नके सन्मुख मधुका कोई योधा न ठहर सका, जैसैं जिनशासनके पंडित स्याद्वादी तिनके सन्मुख एकांतवादी न ठहर सकैं। जो मनुष्य शत्रुघ्नसूं युद्ध किया चाहे सो तत्काल विनाशकूं पावैं जैसैं सिंहके आगै मृग। मधुकी समस्त सेनाके लोक अति व्याकुल होय मधुके शरण आये सो मधु महा सुभट शत्रुघ्नकूं सन्मुख आवता देख शत्रुघ्नकी ध्वजा छेदी, अर शत्रुघ्नने बाणनिकर ताके रथके अश्व हते, तब मधु पर्वत समान जो वरुणेंद्र गज तापर चढ्या क्रोधकर प्रज्वलित है शरीर जाका शत्रुघ्नकूं निरंतर बाणनिकर आच्छादने लगा, जैसैं महामेघ सूर्यकूं आच्छादे। सो शत्रुघ्न महा शूरवीरने ताके बाण छेद डारे, मधुका बखतर भेदा, जैसैं अपने घर कोई पाहुना आवैं अर ताकी भले मनुष्य

भलीभांति पाहुनगति करै तैसैं शत्रुघ्न मधुकी रणविषै शस्त्रनिकर पाहुनगति करता भया।

(शत्रुघ्नको अजेय जान राजा मधुका संसारसे विरक्त हो संन्यास धारण करना)

अथानंतर मधु महा विवेकी शत्रुघ्नकूं दुर्जय जान अर आपकूं त्रिशूल आयुधसे रहित जान, पुत्रकी मृत्यु देख अर अपनी आयु हू अल्प जान मुनिका वचन चितारता भया—अहो जगत्का समस्त ही आरंभ महा हिंसारूप दुखका देनहारा सर्वथा त्याज्य हैं, यह क्षणभंगुर संसारका चरित्र तामें मूढजन राचै ? या संसारविषैं धर्म ही प्रशंसा योग्य है, अर अधर्मका कारण अशुभ कर्म प्रशंसा योग्य नाहीं, महा निंद्य यह पाप कर्म नरक निगोदका कारण है। जो दुर्लभ मनुष्य देहकूं पाय धर्मविषैं बुद्धि नाहीं धारैं हैं सो प्राणी मोह कर्मकरि ठग्या अनंत भव भ्रमण करै है। मुझ पापीने संसार असारकूं सार जाना। क्षणभंगुर शरीरकूं ध्रुव जाना, आत्महित न किया। प्रमादविषैं प्रवरता रोग समान ये इंद्रियनिके भोग भले जान भोगे, जब मैं स्वाधीन हुता तब मोहि सुबुद्धि न आई। अब अन्तकाल आया, अब कहा करूं, घरमें आग लागी, ता समय तालाब खुदवाना कौन अर्थ? अर सर्पने डसा, ता समय देशांतरसे मंत्राधीश बुलवाने, अर दूरदेशसे मणि औषधि मंगवाना कौन अर्थ ? तातैं अब सब चिंता तज निराकुल होय अपना मन समाधानविषैं ल्याऊं ? यह विचार वह धीर-वीर घावकर पूर्ण हाथी चढ्या ही भावमुनि होता भया, अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुनिकूं मनकरि वचनकरि कायकरि बारंबार नमस्कार कर, अर अरहंत सिद्ध साधु तथा केवलि-प्रणीत धर्म यही मंगल हैं, यही उत्तम हैं, इनहींका मेरे शरण है। अढाई द्वीपविषैं पंद्रह कर्मभूमि तिन-विषैं भगवान् अरहंत देव होय हैं वे त्रैलोक्यनाथ मेरे हृदयविषैं तिष्ठो। मैं बारंबार नमस्कार करूं हूं, अब मैं यावज्जीव सब पाप-योग तजे, चारों आहार तजे, जे पूर्व पाप उपार्जे हुते तिनकी निन्दा करूं हूँ, अर सकल वस्तुका प्रत्याख्यान करूं हूं, अनादि कालतैं या संसार वनविषैं जो कर्म उपार्जे हुते ते मेरे दुष्कृत मिथ्या होहु। भावार्थ—मुझे फल मत देहु। अब मैं तत्त्वज्ञान-विषैं तिष्ठा, तजिवे योग्य जो रागादिक तिनकूं तजूं हूँ, अर लेयवे योग्य जो निजभाव तिनकूं लेऊं हूँ, ज्ञान दर्शन मेरे स्वभाव ही हैं सो मोसे अभेद्य हैं, अर जे शरीरादिके समस्त पर पदार्थ कर्मके संयोग कर उपजे, ये मोसे न्यारे हैं, देह त्यागके समय संसारी लोक भूमिका तथा तृणका सांथरा करैं हैं सो सांथरा नाहीं। यह जीव ही पाप बुद्धिरहित होय तब अपना आप ही सांथरा है। ऐसा विचारकर राजा मधुने दोनों प्रकारके परिग्रह भावोंसे तजे अर हाथीकी पीठ पर बैठा ही सिरके केश लोंच करता भया, शरीर घावनिकर अतिव्याप्त है, तथापि महा दुर्धर धैर्यकूं धर करि अध्यात्मयोगविषैं आरूढ होय, कायाका ममत्व तजता भया, विशुद्ध है बुद्धि जाकी।

तब शत्रुघ्न मधुकी परम शांत दशा देखि नमस्कार करता भया। अर कहता भया-हे साधो! मो अपराधीके अपराध क्षमा करहु। देवनिकी अप्सरा मधुका संग्राम देखनेकूं आई हुतीं, आकाशसे कल्पवृक्षनिके पुष्पोंकी वर्षा करती भई। मधुका वीररस अर शांतरस देख देव भी आश्चर्यकूं प्राप्त भए। बहुरि मधु महा धीर एक क्षणमात्रविषैं समाधिमरण कर महासुखके सागरविषैं तीजे सनत्कुमार स्वर्गविषैं उत्कृष्ट देव भया। अर शत्रुघ्न मधुकी स्तुति करता महा विवेकी मथुराविष प्रवेश करता भया। जैसे हस्तिनागपुरविषैं जयकुमार प्रवेश करता सोहता भया तैसा शत्रुघ्न मधुपुरीविषैं प्रवेश करता सोहता भया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं-हे नराधिपति श्रेणिक! प्राणियोंके या संसारविषैं कर्मोंके प्रसंगकरि नाना अवस्था होय हैं तातैं उत्तम जन सदा अशुभ कर्म तज करि शुभ कर्म करो जाके प्रभाव कर सूर्य-समान कांतिकूं प्राप्त होहू।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं मधुका युद्ध अर वैराग्य अर लवणार्णवका मरण वर्णन करनेवाला नवासीवां पर्व पूर्ण भया ॥८९॥

नब्वेवां पर्व

[मथुरामें असुरेन्द्र-कृत उपद्रवसे लोगोंमें व्याकुलता]

अथानन्तर असुरकुमारोंके इन्द्र जो चमरेंद्र महाप्रचंड तिनका दिया जो त्रिशूलरत्न मधुके हुता ताके अधिष्ठाता देव त्रिशूलकूं लेकर चमरेंद्रके पास गए,अतिखेद खिन्न महा लज्जावान होय मधुके मरणका वृत्तांत असुरेंद्रसूं कहते भए। तिनकी मधुसूं अतिमित्रता, सो पातालसे निकसकरि महाक्रोधके भरे मथुरा आयवेकूं उद्यमी भए। ता समय गरुडेंद्र असुरेंद्रके निकट आये, अर पूछते भए-हे दैत्येंद्र! कौन तरफ गमनकूं उद्यमी भए हो? तब चमरेंद्रने कही-जाने मेरा मित्र मधु मारया है, ताहि कष्ट देवेकूं उद्यमी भया हूं। तब गरुडेंद्रने कही-कहा विशल्याका माहात्म्य तुमने न सुणया है? तब चमरेंद्रने कही-वह अद्भुत अवस्था विशल्याकी कुमार अवस्थाविषैं ही हुती, अर अब तो निर्विष भुजंगी-समान है जौलग विशल्याने वासुदेवका आश्रय न किया हुता, तौलग ब्रह्मचर्यके प्रसादतैं असाधारण शक्ति हुती, अब वह शक्ति विशल्याविषैं नाहीं, जे निरतिचार बालब्रह्मचर्य धारैं तिनके गुणनिकी महिमा कहिवेविषैं न आवै, शीलके प्रसादकरि सुर-असुर पिशाचादि सब डरे, जौलग शीलरूप खडगकूं धारैं तौलग सबकर जीत्या न जाय महादुर्जय है। अब विशल्या पतिव्रता है पर ब्रह्मचारिणी नाहीं, तातैं वह शक्ति नाहीं। मद्य मांस मैथुन यह महापाप है इनके सेवनसे शक्तिका नाश होय। जिनका व्रत-शील-नियमरूप कोट भग्न न भया, तिनकूं कोई विघ्न करवे समर्थ नाहीं। एक कालाग्नि नाम रुद्र

महा भयंकर भया, सो हे गरुडेंद्र ! तुम सुना ही होयगा। बहुरि वह स्त्रीसूं आसक्त होय नाशकूं प्राप्त भया। तातैं विषयका सेवन विषमे भी विषम है। परम आश्चर्यका कारण एक अखंड ब्रह्मचर्य है। अब मैं मित्रके शत्रुपै जाऊंगा, तुम तिहारे स्थानक जावहु। ऐसा गरुडेंद्रसूं कहकर चमरेंद्र मथुरा आए। मित्रके मरणकरि कोपरूप मथुराविषै वही उत्सव देख्या जो मधुके समय हुता। तब असुरेंद्रने विचारी--ये लोक महादुष्ट कृतघ्न हैं, देशका धनी पुत्र-सहित मर गया है, अर अन्य आय बैठ्या है, इनकूं शोक चाहिए कि हर्ष ? जाके भुजाकी छाया पाय बहुत काल सुखसूं बसे ता मधुकी मृत्युका दुख इनकूं क्यों न भया ? ये महा कृतघ्न हैं, सो कृतघ्नका मुख न देखिये। लोकनिकरि शूरवीर सेवा योग्य, शूरवीरनिकर पंडित सेवा-योग्य हैं। सो पण्डित कौन जो पराया गुण जानै, सो ये कृतघ्न महामूर्ख हैं, ऐसा विचार कर मथुराके लोकनिपर चमरेंद्र कोप्या इन लोकोंका नाश करूं। यह मथुरापुरी या देशसहित क्षय करूं। महाक्रोधके वश होय असुरेंद्र लोकनिकूं दुस्सह उपसर्ग करता भया, अनेक रोग लोगनिकूं लगाए, प्रलयकालकी अग्नि समान निर्दई होय लोकरूप वनकूं भस्म करवेकूं उद्यमी भया, जो जहां ऊभा हुता सो वहां ही मर गया, अर बैठ्या हुता सो बैठा ही रह गया, सूता था सो सूता ही रह गया, मरी पड़ी। लोककूं उपसर्ग देख मित्र कुल-देवताके भयसे शत्रुघ्न अयोध्या आया सो जीतकर महाशूरवीर भाई आया बलभद्र नारायण अति हर्षित भए। अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भगवान्‌की अद्भुत पूजा करावती भई, अर दुखी जीवनिकूं करुणाकर, अर धर्मात्मा जीवनिकूं अति विनयकर अनेक प्रकार दान देती भई, यद्यपि अयोध्या महा सुंदर है, स्वर्ण-रत्ननिके मंदिरनिकर मंडित है, कामधेनु समान सर्व कामना पूरणहारी, देवपुरीसमान पुरी है तथापि शत्रुघ्नका जीव मथुराविषैं अति आसक्त सो अयोध्याविषैं अनुरागी न होता भया। जैसैं कैयक दिन सीता विना राम उदास रहे, तैसे शत्रुघ्न मथुरा विना अयोध्याविषैं उदास रहै। जीवोंकूं सुंदर वस्तुका संयोग स्वप्न-समान क्षण भंगुर हैं परम दाहकूं उपजावै है ज्येष्ठके सूर्यसे हू अधिक आतापकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिका विषै मथुराके लोकनिकूं असुरेन्द्रकृत उपसर्गका वर्णन करनेवाला नव्वेवा पर्व पूर्ण भया ॥९०॥

इक्यानवेवां पर्व

(शत्रुघ्नके पूर्व भव, तथा मथुरामें अनेक जन्म धारण करनेसे अति अनुराग)

अथानंतर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसूं पूछता भया--हे भगवन् ! कौन कारण कर शत्रुघ्न मथुराहीकूं याचता भया ? अयोध्याहूतैं ताहि मथुराका निवास अधिक क्यों रुचा ? अनेक

राजधानी स्वर्गलोक-समान, सो न वांछी अर मथुरा ही वांछी, ऐसी मथुरासूं कहा प्रीति ? तब गौतमस्वामी ज्ञानके समुद्र सकल सभारूप नक्षत्रनिके चन्द्रमा कहते भए--हे श्रेणिक ! इस शत्रुघ्न के अनेक भव मथुराविषैं भए, तातैं याकूं मधुपुरीसूं अधिक स्नेह भया। यह जीव कर्मनिके संबंधतैं अनादिकालका संसार-सागरविषै बसै है सो अनंत भव धरे। यह शत्रुघ्नका जीव अनंत भव भ्रमणकरि मथुराविषै एक यमनदेव नामा मनुष्य भया, महा क्रूर धर्मसे विमुख सो मरकरि शूकर खर काग ये जन्म धरि अज-पुत्र भया। सो अग्नि विषै जल मूवा, भैंसा जलके लादनेका भया, सो छै वार भैंसा होय दुखसूं मूवा, नीचकुलविषै निर्धन मनुष्य भया। हे श्रेणिक ! महा पापी तो नरककूं प्राप्त होय हैं, अर पुण्यवान् जीव स्वर्ग विषै देव होय हैं,अर शुभाशुभ-मिश्रित करि मनुष्य होय हैं। बहुरि यह कुलंधरनामो ब्राह्मण भया रूपवान् अर शीलरहित, सो एक समय नगरका स्वामी दिग्विजयनिमित्त देशांतर गया ताकी ललिता नाम रानी महलके झरोखा विषैं तिष्ठै हुती सो पापिनी इस दुराचारी विप्रकूं देख कामबाणकर वेधी गई, सो याहि महल-विषै बुलाया। एक आसनपर रानी अर यह बैठि रहे,ताही समय राजा दूरका चल्या अचानक आया अर याहि महलविषैं देख्या, सो रानी मायाचारकर कही--जो यह वंदीजन है, भिक्षुक है, तथापि राजाने न मानी। राजाके किंकर ताहि पकड़कर नृपकी आज्ञातैं आठो अंग दूर करवेके अर्थ नगरके बाहिर ले जाते हुते सो कल्याणनामा साधुने देख कही जो तू मुनि होय तो तोहि छुड़ावें। तब यानैं मुनि होना कबूल किया, तब किंकरानिसे छुड़ाया। सो मुनि होय महातपकरि स्वर्ग विषैं ऋजु विमानका स्वामी देव भया। हे श्रेणिक ! धर्मसे कहा न होय ?

अथानंतर मथुराविषै चंद्रभद्र राजा, ताके रानी धरा, ताके भाई सूर्यदेव अग्निदेव यमुनादेव अर आठपुत्र, तिनके नाम-श्रीमुख संमुख सुमुख इंद्रमुख प्रमुख उग्रमुख अर्कमुख परमुख। अर राजा चंद्रभद्रके दूजी रानी कनकप्रभा ताकूं वह कुलंधर नामा ब्राह्मणका जीव स्वर्गविषैं देव होय तहांतैं चयकर अचल नाम पुत्र भया सो कलावान अर गुणनिकर पूर्ण,सर्व लोकके मनका हरणहारा देवकुमार-तुल्य क्रीडाविषै उद्यमी होता भया।

अथानन्तर एक अंकनामा मनुष्य धर्मकी अनुमोदनाकर श्रावस्ती नगरीविषै एक कंपनाम पुरुष, ताके अंगिका नामा स्त्री, उसके अपनामा पुत्र भयो सो अविनयी। तब कंपने अपकूं घरसे निकास दिया सो महादुखी भूमिविषै भ्रमण करै। अर अचलनामा कुमार पिताकूं अतिवल्लभ सो अचलकुमारकी बड़ी माता धरा, उसके तीन भाई अर आठ पुत्र, तिन्होंने एकांतमें अचलके मारनेका मंत्र किया, सो यह वार्ता अचलकुमारकी माताने जानी। तब पुत्रकूं भगाय दिया सो तिलकवनविषै उसके पांवविषै कांटा लाग्या सो कंपका पुत्र अप काष्ठका भार लेकर आवे सो अचलकुमारकूं कांटेके दुखसूं करुणावंत देख्या। तब अपने काष्ठका भार मेल छुरीसे

कुमारका कांटा काढ़ कुमारकूं दिखाया, सो कुमार अति प्रसन्न भया। अर अपकूं कहा--तू मेरा अचलकुमार नाम याद रखियो, अर मोहि भूपति सुने वहां मेरे निकट आइयो। इस भांति कह अपकूं बिदा किया सो अप गया। अर राजपुत्र महादुखी कौशांबी नगरीके विषै आया महा-पराक्रमी सो बाणविद्याका गुरु जो विशिषाचार्य उसे जीतकर प्रतिष्ठा पाई हुती सो राजाने अचल कुमारकूं नगरविषै ल्यायकर अपनी इंद्रदत्ता नामा पुत्री परणाई। अनुक्रमकरि पुण्यके प्रभावतैं राज्य पाया सो अंगदेश आदि अनेक देशनिकूं जीतकर महा प्रतापी मथुरा आया, नगरके बाहिर डेरा दिया, बड़ी सेना साथ। सब सामन्तोंने सुन्या कि यह राजा चन्द्रभद्रका पुत्र अचलकुमार है, सो सब आय मिले, राजा चंद्रभद्र अकेला रह गया। तब रानी धराके भाई सूर्यदेव अग्निदेव यमुनादेव इनकूं संधि करने ताईं भेजे, सो ये जायकर कुमारकूं देख बिखले होय भागे, अर धराके आठ पुत्रहू भाग गए। अचलकुमारकी माता आय पुत्रकूं लेगई, पितासूं मिलाया, पिताने याकूं राज्य दिया। एक दिन राजा अचलकुमार नटोंका नृत्य देखे था ताही समय अप आया जान इसका वनविषै कांटा काढा था सो ताहि दरवान धक्का देय काढ़े हुते सो राजा मने किए, अपकूं बुलाया बहुत कृपा करी, अर जो वाकी जन्मभूमि श्रावस्ती नगरी हुती सो ताहि दई, अर ये दोनो परममित्र भेले ही रहें। एक दिवस महासंपदाके भरे उद्यानविषै क्रीडाकूं गये सो यशसमुद्र आचार्यको देखकरि दोनों मित्र मुनि भये, सम्यग्दृष्टि परम संयमकूं आराध समाधिमरणकर स्वर्गविषै उत्कृष्ट देव भये। तहांसे चयकर अचलकुमारका जीव राजा दशरथकै यह शत्रुघ्न पुत्र भया। अनेक भवके संबंधसूं याकी मथुरासूं अधिक प्रीति भई। गौतम-स्वामी कहै हैं हे श्रेणिक! वृक्षकी छाया जो प्राणी बैठ्या होय तो ता वृक्षसूं प्रीति होय है, जहां अनेक भव धरे तहांकी कहा बात? संसारी जीवनिकी ऐसी अवस्था है। अर वह अपका जीव स्वर्गतैं चयकर कृतांतवक्र सेनापति भया। या भांति धर्मके प्रसादतैं ये दोनों मित्र संपदाकूं प्राप्त भये। अर जे धर्मसे रहित हैं तिनके कबहू सुख नाहीं। अनेक भवके उपार्जे दुखरूप मल तिनके धोयवेकूं धर्मका सेवन ही योग्य है अर जलके तीर्थनिविषै मनका मैल नाहीं धुवै है। धर्मके प्रसादतैं शत्रुघ्नका जीव सुखी भया। ऐसा जानकर विवेकी जीव धर्मविषै उद्यमी होवो। धर्मकूं सुनकर जिनकी आत्मकल्याणविषै प्रीति नाही होय है तिनका श्रवण वृथा है, जैसें जो नेत्रवान सूर्यके उदय होते कूपविषै पडै तो ताके नेत्र वृथा हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी
भाषावचनिकाविषै शत्रुघ्नके पूर्वभवका वर्णन करने
वाला इक्याणवां पर्व पूर्ण भया ॥९१॥

बानवेवां पर्व

[मथुराके असुरेन्द्र कृत उपद्रवका सप्त चारण ऋषीश्वरोंके प्रभावसे दूर होना]

अथानन्तर आकाशविषैं गमन करणहारे सप्त चारण ऋषि सप्त सूर्य-समान है कांति जिनकी, सो विहार करते निर्ग्रंथ मुनीन्द्र मथुरापुरी आये। तिनके नाम-सुरमन्यु, श्रीनिचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलालस, जयमित्र ये सब ही महाचारित्रके पात्र, अति सुन्दर, राजा श्रीनंदन, रानी धरणीसुंदरीके पुत्र, पृथिवीविषैं प्रसिद्ध पिता-सहित प्रीतिंकरस्वामीका केवलज्ञान देख प्रतिबोधकूं प्राप्त भये थे, पिता अर ये सातों पुत्र प्रीतिंकर केवलीके निकट मुनि भये अर एक महीनेका बालक डमर नामा पुत्र ताकूं राज्य दिया। पिता श्रीनंदन तो केवली भया,अर ये सातों महामुनि चारण ऋद्धि आदि अनेक ऋद्धिके धारक श्रुतकेवली भये। सो चातुर्मासिक विषैं मथुराके वनविषैं वटके वृक्षतलें आय विराजे। तिनके तपके प्रभावकरि चमरेंद्रकी प्रेरी मरी दूर भई, जैसे श्वसुरकूं देखकर व्यभिचारिणी नारी दूर भागै। मथुराका समस्त मण्डल सुखरूप भया, विना बाहे धान्य सहज ही उगे, समस्त रोगनिसूं रहित मथुरापुरी ऐसी शोभती भई जैसे नई बधू पतिकूं देखकर प्रसन्न होय। वह महामुनि रसपरित्यागादि तप अर बेला तेला पक्षोपवासादि अनेक तपके धारक, जिनकूं चार महीना चौमासे रहना। से मथुराके वनविषैं अर चारणऋद्धिके प्रभावतैं चाहे जहां आहार कर आवें, एक निमिष मात्रविषैं आकाशके मार्ग होय पोदनापुर पारणा कर आवैं, बहुरि विजयपुर कर आवैं। उत्तम श्रावकके घर पात्र भोजन कर संयम-निमित्त शरीरकूं राखैं। कर्मके खिपायवेकूं उद्यमी एक दिन वे धीर महा शान्त भावके धारक, जूड़ा-प्रमाण धरती देख विहार कर ईर्यासमितिके पालन हारे आहारके समय अयोध्या आये। शुद्ध भिक्षाके लेनहारे प्रलंबित हैं महा भुजा जिनकी, अर्हद्दत्तसेठके घर आय प्राप्त भए, तब अर्हद्दत्तने विचारी वर्षाकालविषैं मुनिका विहार नाहीं, ये चौमासा पहिले तो यहां आये नाहीं, अर मैं यहां जे जे साधु विराजे हैं गुफामें, नदीके तीर, वृक्षतल, शून्य स्थानकविषैं, वनके चैत्यालयनिविषैं, जहां जहां चौमासा साधु तिष्ठे हैं वे मैं सर्व वंदे। यह तो अब तक देखे नाहीं, ये आचारांग सूत्रकी आज्ञासे परान्मुख, इच्छाविहारी हैं, वर्षाकालविषैं भी भ्रमते फिरै हैं, जिन-आज्ञा परान्मुख, ज्ञानरहित, निराचारी, आचार्यकी आम्नायसे रहित हैं, जिन-आज्ञा पालक होय तो वर्षाविषैं विहार क्यों करैं, सो यह तो उठ गया। अर याके पुत्रकी बधूने अति भक्तिकर प्रासुक आहार दिया सो मुनि आहार लेय भगवानके चैत्यालय आय जहां द्युतिभट्टारक विराजते हुते ये सप्तर्षि ऋद्धिके प्रभावकर धरतीसे चार अंगुल अलिप्त चले आए। अर चैत्यालयविषैं धरतीपर पग धरते आए। आचार्य उठ खडे भए अति आदरसे इनकूं नमस्कार किया, अर जे द्युतिभट्टारकके

शिष्य हुते तिन सबने नमस्कार किया। बहुरि ये सप्त तो जिन वन्दनाकरि आकाशके मार्ग मथुरा गए। इनके गए पीछे अर्हद्दत्त सेठ चैत्यालयविषैं आया तब द्युतिभट्टारकने कही सप्तमहर्षि महायोगीश्वर चारणमुनि यहां आए हुते, तुमने हू वह वंदे हैं? वे महा पुरुष महा तपके धारक हैं चार महीने मथुरा निवास किया है, अर चाहें जहां आहार ले जांय। आज अयोध्याविषैं आहार लिया, चैत्यालय दर्शन कर गए, हमसे धर्मचर्चा करी, वे महा तपोधन गमनगामी शुभ चेष्टाके धरणहारे परम उदार ते मुनि वन्दिवे योग्य हैं। तब वह श्रावकनिविषैं अग्रणी आचार्यके मुखसूं चारण मुनिनि की महिमा सुनकर खेदखिन्न होय पश्चात्ताप करता भया। धिक्कार मोहि, मैं सम्यग्दर्शन-रहित वस्तुका स्वरूप न पिछान्या, मैं अत्याचारी मिथ्यादृष्टि, मो समान और अधर्मी कौन। वे महामुनि मेरे मंदिर आहारकूं आए अर मैं नवधा भक्तिकर आहार न दिया। जो साधुकूं देख सन्मान न करैं, अर भक्तिकर अन्न-जल न देय सो मिथ्यादृष्टि है। मैं पापी पापात्मा पापका भाजन, महा निंद्य, मो समान और अज्ञानी कौन। मैं जिनवाणीसे विमुख, अब मैं जौ लग उनके दर्शन न करूं तौ लग मेरे मनका दाह न मिटै। चारण मुनिनिकी तो यही रीति है चौमासे निवास तो एक स्थान करैं, अर आहार अनेक नगरीविषैं कर आवैं। चारण ऋद्धिके प्रभावकरि उनके अंगसे जीवनिकूं बाधा न होय।

अथानन्तर कार्त्तिककी पूनों नजीक जान सेठ अर्हद्दत्त महासम्यग्दृष्टि नृपतुल्य विभूति जाके, अयोध्यातैं मथुराकूं सर्व कुटुम्ब सहित सप्तऋषिके पूजन-निमित्त चल्या। जाना है मुनिनिका माहात्म्य जाने, अर अपनी बारंबार निन्दा करै है, रथ हाथी पियादे तुरंगनिके असवार इत्यादि बड़ी सेना सहित योगीश्वरनिकी पूजाकूं शीघ्र ही चाल्या। बड़ी विभूति कर युक्त शुभ ध्यानविषैं तत्पर कार्तिक सुदी सप्तमीके दिन मुनिनिके चरणनिविषैं जाय पहुंचा। वह उत्तम सम्यक्त्वका धारक विधिपूर्वक मुनि-वन्दना कर मथुराविषैं अति शोभा करावता भया। मथुरा स्वर्ग-समान सोहती भई। यह वृत्तान्त शत्रुघ्न सुन शीघ्र ही महा तुरंग चढ्या सप्त ऋषिनिके निकट आया अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भी मुनिनिकी भक्ति कर पुत्रके पीछे ही आई। अर शत्रुघ्न नमस्कार कर मुनिनिके मुख धर्म श्रवण करता भया। मुनि कहते भए--हे नृप! यह संसार असार है, वीतरागका मार्ग सार है, जहां श्रावकके बारह व्रत कहे, मुनिके अठाईस मूल गुण कहे, मुनीनिकूं निर्दोष आहार लेना, अकृत अकारित, राग-रहित प्रासुक आहार विधिपूर्वक लीये योगीश्वरोंके तपकी बधवारी होय। तब वह शत्रुघ्न कहता भया--हे देव! आपके आयैं या नगरतैं मरी गई, रोग गए, दुर्भिक्ष गया, सब विघ्न गए, सुभिक्ष भया। सब साता भई, प्रजाके दुख गए, सब समृद्धि भई। जैसे सूर्यके उदयतैं कमलिनी फूलै, कई दिन आप यहां ही तिष्ठो।

तब मुनि कहते भए--हे शत्रुघ्न! जिन-आज्ञा सिवाय अधिक रहना उचित नाहीं, यह

चतुर्थकाल धर्मके उद्योतका कारण हैं याविषैं मुनींद्रका धर्म भव्य जीव धारै हैं, जिन-आज्ञा पालै हैं, महामुनिके केवलज्ञान प्रगट होय हैं। मुनिसुव्रतनाथ सो मुक्त भए, अब नमि, नेमि, पार्श्व, महावीर ये चार तीर्थंकर और होवेंगे। बहुरि पंचमकाल जाहि दुखमाकाल कहिये सो धर्मकी न्यूनतारूप प्रवरतेगा। ता समय पाखंडी जीवनिकर जिनशासन अति ऊंचा है तोहू आच्छादित होयगा, जैसैं रजकर सूर्यका बिंब आच्छादित होय। पाखंडी निर्दई दया धर्मकूं लोपकर हिंसाका मार्ग प्रवर्तन करेंगे। ता समय मसान-समान ग्राम, अर प्रेत-समान लोक कुचेष्टाके करणहारे होवेंगे, महाकुधर्मविषैं प्रवीण क्रूर चोर पाखण्डी दुष्ट जीव तिनकर पृथिवी पीड़ित होयगी, किसान दुखी होवेंगे, प्रजा निर्धन होयगी, महा हिंसक जीव परजीवनिके घातक होवेंगे, निरंतर हिंसाकी बढवारी होयगी, पुत्र माता पिताकी आज्ञासे विमुख होवेंगे, अर माता पिता हू स्नेह-रहित होवेंगे। अर कलिकालविषैं राजा लुटेरे होवेंगे, कोईसुखी नजर न आवेगा। कहिवेके सुखी, वे पापचित्त दुर्गतिकी दायक कुकथा कर परस्पर पाप उपजावेंगे। हे शत्रुघ्न! कलिकालविषैं कषायकी बहुलता होवेगी, अर अतिशय समस्त विलय जावेंगे, चारण-मुनि देव विद्याधरनिका आवना न होयगा। अज्ञानी लोक नग्नमुद्राके धारक मुनिनिकूं देख निन्दा करेंगे, मलिनचित्त मूढजन अयोग्यको योग्य जानेंगे। जैसैं पतंग दीपककी शिखाविषैं पड़ैं, तैसे अज्ञानी पापपंथविषैं पड़ दुर्गतिके दुख भोगेंगे। अर जे महा शांत स्वभाव तिनकी दुष्ट निंदा करेंगे, विषयी जीवनिकूं भक्तिकर पूजेंगे। दीन अनाथ जीवनिकूं दया भावकर कोई न देवेगा सो वृथा जायगा। जैसे शिलाविषैं बीज बोय निरंतर सींचे तो हू कछु कार्यकारी नाहीं, तैसें कुशील पुरुषनिकूं विनय भक्तिकर दीया कल्याणकारी नाहीं। जो कोई मुनिनिकी अवज्ञा करै हैं, अर मिथ्या-मार्गियोंकूं भक्तिकर पूजै हैं सो मलयागिरिचंदनकूं तजकर कंटकवृक्षकूं अंगीकार करै हैं ऐसा जानकर हे वत्स! तू दान पूजा कर जन्म कृतार्थ कर, गृहस्थीकूं दान पूजा ही कल्याणकारी है। अर समस्त मथुराके लोक धर्मविषै तत्पर होवो, दया पालो, साधर्मियोंसे वात्सल्य धारो, जिनशासन-की प्रभावना करहु, घर घर जिनबिंब थापहु, पूजा अभिषेककी प्रवृत्ति करहु, जाकरि सब शांति हो। जो जिनधर्मका आराधन न करेगा, अर जाके घरविषैं जिन-पूजा न होयगी, दान न होवेगा ताहि आपदा पीड़ेगी। जैसे मृगकूं व्याघ्री भखै तैसे धर्म रहितकूं मरी भखैगी। अंगुष्ठ-प्रमाण हू जिनेंद्रकी प्रतिमा जिसके विराजेगी उसके घरविषैं मरी यूं भाजेगी जैसे गरुड़के भयसे नागिनी भागे। ये वचन मुनिनिके सुन शत्रुघ्नने कही—हे प्रभो! ज्यों आप आज्ञा करी त्यों ही लोक धर्मविषैं प्रवर्तेंगे॥

अथानन्तर मुनि आकाश-मार्ग विहार कर अनेक निर्वाण-भूमि वंदकरि सीताके घर आहारकूं आये। कैसे है मुनि? तपही है धन जिनके, सीता महा हर्षकूं प्राप्त होय श्रद्धा

आदि गुणोंकरि मण्डित परम अन्नकर विधिपूर्वक पारणा करावती भई। मुनि आहार लेय आकाश-के मार्ग विहार कर गए। शत्रुघ्नने नगरीके बाहिर अर भीतर अनेक जिनमंदिर कराए, घर-घर जिनप्रतिमा पधराई, नगरी सब उपद्रवरहित भई, वन उपवन फल-पुष्पादिककर शोभित भए, वापिका सरोवरी कमलों कर मंडित सोहती भई, पक्षी शब्द करते भए, कैलाशके तटसमान उज्ज्वल मंदिर नेत्रोंकूं आनंदकारी विमान-तुल्य सोहते भए। अर सर्व किसान लोक संपदाकर भरे सुखसूं निवास करते, गिरिके शिखर समान ऊंचे अनाजोके ढेर गावोविषैं सोहते भए। स्वर्ण रत्नादिककी पृथिवीविषै विस्तीर्णता होती भई, सकल लोक सुखी रामके राज्यविषैं देवो समान अतुल विभूतिके धारक,धर्म अर्थ कामविषै तत्पर होते भए। शत्रुघ्न मथुराविषै राज्य करै, रामके प्रतापसे अनेक राजावोपर आज्ञा करता सोहै, जैसे देवोविषै वरुण सोहै। या भांति मथुरा-पुरीका ऋद्धिके धारी मुनिनिके प्रतापकरि उपद्रव दूर होता भया। जो यह अध्याय बांचै सुनै सो पुरुष शुभ नाम शुभ गोत्र शुभ सातावेदनीयका बंध करै। जो साधुवोंको भक्तिविषैं अनुरागी होय, अर साधुवोंका समागम चाहै, वह मनवांछित फलकूं प्राप्त होय। या साधुवोंके संगकूं पायकरि धर्मकूं आराधकर प्राणी सूर्यसे भी अधिक दीप्तिकूं प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै मथुराका उपसर्ग निवारण वर्णन करनेवाला बानवेवा पर्व पूर्ण भया ॥९२॥

तेरानवेवां पर्व

[रामके श्रीदामा और लक्ष्मणके मनोरमाका प्राप्ति]

अथानंतर विजयार्धकी दक्षिण-श्रेणिविषै रत्नपुर नामा नगर वहां राजा रत्नरथ उसकी रानी पूर्णचन्द्रानना उसके पुत्री मनोरमा महा रूपवती, उसे यौवनवती देख राजा वर ढूंढवेकी बुद्धिकर व्याकुल भया मंत्रियोंसूं मंत्र किया कि यह कुमारी कौनकूं परिणाऊं? या भांति राजाके चितायुक्त कई एक दिन गए। एक दिन राजाकी सभाविषैं नारद आया, राजाने बहुत सन्मान किया। नारद सब ही लौकिक रीतियोंविषै प्रवीण उसे राजाने पुत्रीके विवाहनेका वृत्तांत पूछया। तब नारदने कही--रामका भाई लक्ष्मण महा सुंदर है, जगत्-विषैं मुख्य है, चक्रके प्रभावकर नवाए हैं समस्त नरेंद्र जिसने, ऐसी कन्या उसके हृदयविषैं आनन्ददायिनी होवे, जैसे कुमुदिनीके वनकूं चांदनी आनन्ददायिनी होय। जब या भांति नारदने कही तब रत्नरथके पुत्र हरिवेग मनोवेग वायुवेगादि महामानी स्वजनोके घातकर उपज्या है वैर जिनके प्रलयकालकी अग्नि समान प्रज्वलित होय कहते भए-जो हमारा शत्रु जिसे हम

मारा चाहें उसे कन्या कैसें देवैं ? यह नारद दुराचारी है, इसे यहांसे काढहु । ऐसे वचन राज-पुत्रोंके सुन किंकर नारद पर दौड़े । तब नारद आकाशमार्ग विहारकर शीघ्र ही अयोध्या लक्ष्मणपै आया, अनेक देशांतरकी वार्त्ता कह रत्नरथकी पुत्री मनोरमाका चित्राम दिखाया, सो वह कन्या तीनलोककी सुंदरियोंका रूप एकत्र कर मानों बनाई है । सो लक्ष्मण चित्रपट देख अति मोहित होय कामके वश भया । यद्यपि महा धीर वीर हैं तथापि वशीभूत होय गया । मनविषैं विचारता भया जो यह स्त्रीरत्न मुझे न प्राप्त होय तो मेरा राज्य निष्फल, अर जीतव्य वृथा । लक्ष्मण नारदसूं कहता भया-हे भगवन् ! आपने मेरे गुणकीर्तन किये, अर उन दुष्टोंने आपसूं विरोध किया, सो वे पापी, प्रचंड मानी महा क्षुद्र दुरात्मा कार्यके विचारसूं रहित हैं, उनका मान मैं दूर करूंगा । आप समाधानविषैं चित्त लावो, तिहारे चरण मेरे सिर पर हैं । अर उन दुष्टनिकूं तिहारे पायनि पाड़ंगा, ऐसा कहकर विराधित विद्याधरकूं बुलाया । अर कही रत्नपुर ऊपर हमारी शीघ्र ही तैयारी है, तातैं पत्र लिख सर्व विद्याधरनिकूं बुलावो, रणका सरंजाम करावो ।

तब विराधितने सबनिकूं पत्र पठाये । वे महासेना सहित शीघ्र ही आए लक्ष्मण राम-सहित सर्व नृपोंकूं लेकर रत्नपुरकी तरफ चाले, जैसे लोकपालों सहित इंद्र चाले । जीत जिसके सन्मुख है, नानाप्रकारके शस्त्रोंके समूहकर आच्छादित करी हैं सूर्यकी किरण जानें,सो रत्नपुर जाय पहुँचे उज्ज्वल छत्रकर शोभित । तब राजा रत्नरथ परचक्र आया जान अपनी समस्त सेना-सहित युद्धकूं निकस्या महातेजकर, सो चक्र करोत कुठार बाण खड्ग बरछी पाश गदादि आयुधनिकर तिनके परस्पर महा युद्ध भया अप्सरोंके समूह युद्ध देख योधावों पर पुष्पवृष्टि करते भए । लक्ष्मण परसेनारूप समुद्रके सोखिवेकूं बडवानल-समान आप युद्ध करनेकूं उद्यमी भया, परचक्रके योधारूप जलचरोंके क्षयका कारण । सो लक्ष्मणके भयकर रथोंके तुरंगोंके हाथियोंके असवार सब दशों दिशाओंकूं भागे । अर इन्द्रसमान है शक्ति जिनकी, ऐसे श्रीराम अर सुग्रीव हनुमान इत्यदि सब ही युद्धकूं प्रवरते । इन योधाओंकर विद्याधरोंकी सेना ऐसे भागी, जैसे पवनकर मेघपटल विलाय जावैं । तब रत्नरथ अर रत्नरथके पुत्रोंकूं भागते देख नारदने परम हर्षित होय ताली देय हंसकर कहा-अरे रत्नरथके पुत्र हो ! तुम महा चपल दुराचारी मंद-बुद्धि लक्ष्मणके गुणोंकी उच्चता न सह सके तो अब अपमानकूं पाय क्यों भागो हो ? तब उन्होंने कुछ जवाब नहीं दिया । उसी समय मनोरमा कन्या अनेक सखियों सहित रथपर चढकर महा प्रेमकी भरी लक्ष्मणके समीप आई, जैसें इंद्राणी इंद्रके समीप आवै । उसे देखकर लक्ष्मण क्रोधरहित भए, भ्रुकुटी चढ रही थी सो शीतल वदन भए, कन्या आनन्दकी उपजावनहारी । तब राजा रत्नरथ अपने पुत्रों-सहित मान तज नाना प्रकारकी भेंट लेकर श्रीराम-लक्ष्मण के समीप

आया। राजा देश कालकी विधिकूं जानै है, अर देखा है, अपना अर इनका पुरुषार्थ जिसने। तब नारद सबके बीच रत्नरथकूं कहते भए—हे रत्नरथ! अब तेरी कहा वार्ता? तू रत्नरथ है के रजरथ है, वृथा मान करे हुता सो नारायण-बलदेवोंसे मानकर कहा! अर ताली बजाय रत्नरथके पुत्रोंसे हंसकर कहता भया-- हो रत्नरथके पुत्र हो! यह वासुदेव जिनकूं तुम अपने घरविषैं उद्धत चेष्टा रूप होय मनविषैं आया सो ही कही, अब पायनि क्यों पड़ो हो? तब वे कहते भए--हे नारद! तिहारा कोप भी गुण करै, जो तुम हमसे कोप किया तो बड़े पुरुषोंका सम्बन्ध भया। इनका संबंध दुर्लभ है, या भांति क्षणमात्र वार्ता करि सब नगरविषैं गए। श्रीरामकूं श्रीदामा परणाई, रति समान है रूप जाका। उसे पायकर राम आनन्दसे रमते भए। अर मनोरमा लक्ष्मणकूं परणाई सो साक्षात् मनोरमा ही है। या भांति पुण्यके प्रभावकरि अद्भुत वस्तुकी प्राप्ति होय है। तातैं भव्यजीव सूर्यसे अधिक प्रकाशरूप जो वीतरागका मार्ग उसे जानकर दया धर्मकी आराधना करहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं श्रीदामाका लाभ अर लक्ष्मणकूं मनोरमाका लाभ वर्णन करनेवाला तेरानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९३॥

चौरानवेवां पर्व

[राम-लक्ष्मणके वैभव परिवार आदिका वर्णन]

अथानन्तर और भी विजयार्धके दक्षिण श्रेणीविषैं विद्याधर हुते वे सब लक्ष्मणने युद्धकर जीते। कैसा है युद्ध? जहां नाना प्रकारके शस्त्रोंके प्रहारकरि अर सेनाके संघटकर अंधकार होय रहा है। गौतमस्वामी कहै हैं--हे श्रेणिक! वे विद्याधर अत्यंत दुस्सह महा विषधर समान हुते सो सब राम-लक्ष्मणके प्रतापकर मानरूप विषसे रहित होय गए, इनके सेवक भए। तिनकी राजधानी देवोंकी पुरी-समान तिनके कैयक नाम तुझे कहहु--रविप्रभ वह्निप्रभ कांचनप्रभ मेघप्रभ शिवमंदिर गंधर्वगीति अमृतपुर लक्ष्मीधरपुर किन्नरपुर मेघकूट मर्त्यगति चक्रपुर रथ-नूपुर बहुरव श्रीमलय श्रीगृह अरिंजय भास्करप्रभ ज्योतिपुर चंद्रपुर गंधार, मलय सिंहपुर श्रीवि-जयपुर भद्रपुर यक्षपुर तिलक स्थानक इत्यादि बड़े बड़े नगर सो सब राम लक्ष्मणने वशमे किए। सब पृथिवीकूं जीत, सप्त रत्नकर सहित लक्ष्मण नारायणके पदका भोक्ता होता भया। सप्त-रत्नोके नाम-चक्र शंख धनुष शक्ति गदा खडग कौस्तुभमणि। अर रामके चार-हल मूसल रत्नमाला गदा। या भांति दोनों भाई अभेदभाव पृथिवीका राज्य करैं। तब श्रेणिक गौतम स्वामीकूं

पूछता भया-- हे भगवन् ! तिहारे प्रसादसे मैं राम-लक्ष्मणका माहात्म्य विधिपूर्वक सुन्या। अब लवण अंकुशकी उत्पत्ति अर लक्ष्मणके पुत्रोंका वर्णन सुना चाहू हू सो आप कहो। तब गौतम गणधर कहते भए--हे राजन् ! मैं कहू हू सुन--राम-लक्ष्मण जगतविषैं प्रधान पुरुष निः-कंटक राज्य भोगते भए, तिनके दिन पक्ष मास वर्ष महा सुखमें व्यतीत होय। जिनके बड़े कुलकी उपजी देवांगना समान स्त्री लक्ष्मणके सोलह हजार, तिनविषैं आठ पटरानी कीर्ति समान लक्ष्मी समान रति-समान गुणवती शीलवंती अनेक कलाविषै निपुण, महा सौम्य सुन्दराकार तिनके नाम--प्रथम पटराणी राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या, दूजी रूपवती जिस समान और रूपवान नाहीं, तीजी वनमाला, चौथी कल्याणमाला, पांचमी रतिमाला, छठी जिनरत्ना जिसने अपने मुखकी शोभाकर कमल जीते, सातमी भगवती, आठमी मनोरमा। अर रामके रानी आठ हजार देवांगना, समान, तिनविषै चार पटरानी जगतविषैं प्रसिद्ध कीर्ति जिनविषैं प्रथम जानकी, दूजी प्रभावती, तीजी रतिप्रभा, चौथी श्रीदामा। इन सबोंके मध्य सीता सुन्दर लक्षण ऐसी सोहै ज्यों तारानिविषैं चंद्रकला। अर लक्ष्मणके पुत्र अढाईसै तिनविषैं कैयकोके नाम कहूँ हूँ सो सुन—

वृषभ धारण चन्द्र शरभ मकरध्वज धारण हरिनाग श्रीधर मदन अच्युत यह महा-प्रसिद्ध सुंदर चेष्टाके धारक जिनके गुणनिकर सब लोकनिके मन अनुरागी। अर विशल्याका पुत्र श्रीधर अयोध्यामें ऐसा सोहै जैसा आकाशविषै चन्द्रमा। अर रूपवतीका पुत्र पृथिवीतिलक सो पृथिवीविषै प्रसिद्ध, अर कल्याणमालाका पुत्र महाकल्याणका भाजन मंगल, अर पद्मावतीका पुत्र विमलप्रभ, अर वनमालाका पुत्र अर्जुनवृक्ष, अर अतिवीर्यकी पुत्रीका पुत्र श्रीकेशी, अर भगवतीका पुत्र सत्यकेशी, अर मनोरमाका पुत्र सुपार्श्वकीर्ति ये सब ही महा बलवान् पराक्रमके धारक शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण। इन सब भाईनिमें परस्पर अधिक प्रीति, जैसैं नख मांसमें दृढ कभी भी जुदे न होवे, तैसे भाई जुदे नाहीं। योग्य है चेष्टा जिनकी, परस्पर प्रेमके भरे वह उस-के हृदयमें तिष्ठै, वह वाके हृदयमें तिष्ठै। जैसैं स्वर्गविषै देव रमैं तसैं ये कुमार अयोध्यापुरी में रमते भए। जे प्राणी पुण्याधिकारी हैं, पूर्व पुण्य उपार्जे हैं, महाशुभ चित्त हैं, तिनके जन्मसे लेकर सकल मनोहर वस्तु ही आय मिलै हैं। रघुवंशिनिके साढे चार कोटि कुमार महामनोज्ञ चेष्टाके धारक नगरके वन उपवनादिमें महामनोज्ञ चेष्टासहित देवनिसमान रमते भए। अर राम लक्ष्मणके सोलह हजार मुकुटबंध राजा सूर्यहू तैं अधिक तेजके धारक सेवक होते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिका-
विषै राम-लक्ष्मणकी ऋद्धि वर्णन करनेवाला
चौरानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९४॥

पंचानवेवां पर्व

(सीताको गर्भ-धारण करना और जिन पूजाका दोहला होना)

अथानंतर राम लक्ष्मणके दिन अति आनंदसूं व्यतीत होय हैं, धर्म अर्थ काम ये तीनों इनके अविरुद्ध होते भए। एक समय सीता सुखसूं विमान-समान जो महल ताविषै शरदके मेघ समान उज्ज्वल सेजपर सोवती थी, सो पिछले पहिर वह कमलनयनी दोय स्वप्न देखती भई। बहुरि दिव्य वादित्रनिके नाद सुन प्रतिबोधकूं प्राप्त भई। निर्मल प्रभात भए, स्नानादि देहक्रिया कर सखिनसहित स्वामीपै गई। जायकर पूछती भई—हे नाथ! मैं आज रात्रिविषैं स्वप्न देखे तिनका फल कहो। दोय उत्कृष्ट अष्टापद शरदके चंद्रमासमान उज्ज्वल, अर क्षोभकूं प्राप्त भया जो समुद्र ताके शब्द-समान जिनके शब्द, कैलाशके शिखर-समान सुन्दर सर्व आभरणनिकरि मंडित महामनोहर हैं केश जिनके, अर उज्ज्वल हैं दाढ जिनकी, सो मेरे मुखमें पैठे। अर पुष्पक-विमानके शिखरसे प्रबल पवनके झकोरकर मैं पृथिवीविषै पड़ी। तब श्रीरामचन्द्र कहते भए—हे सुन्दरि! दोय अष्टापद मुखमे पैठे देखै ताके फलकर तेरे दोय पुत्र होयेंगे। अर पुष्पक विमानसे पृथिवीविषै पड़ना प्रशस्त नाहीं, सो कछु चिंता न करो, दानके प्रभावसे क्रूर ग्रह शांत होवेंगे।

अथानन्तर वसन्तसमयरूपी राजा आया, तिलक जातिके वृक्ष फूले सोई उसके बखतर, अर नीम जातिके वृक्ष फूले वेई गजराज तिनपर आरूढ अर आंब मौर आये सो मानों वसंतका धनुष, अर कमल फूले सो वसन्तके बाण, अर केसरी फूले वेई रतिराजके तरकश, अर भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानों निर्मल श्लोकोंकर वसंत नृपका यश गावै हैं। अर कदम्ब फूले तिनकी सुगंध पवन आवै है सोई मानों वसंत नृपके निश्वास भये, अर मालतीके फूल फूले सो मानो वसंत शीतकालादिक अपने शत्रुनिको हंसै है, अर कोयल मिष्ट वाणी बोलै है सो मानों वसंत राजाके वचन है, या भांति वसंतसमय नृपतिकीसी लीला धरे आया। वसंतकी लीला लोकनिकूं कामका उद्वेग उपजावनहारी है बहुरि यह वसंत मानों सिंह ही है, आकोट जातिके वृक्षादिकके फूल वेई हैं नख जाके, अर कुरबक जातिके वृक्षनिके फूल आए तेई भए दाढ जाके अर महारक्त अशोकके पुष्प वेई हैं नेत्र जाके, अर चंचल पल्लव वेई हैं जिह्वा जिसकी, ऐसा वसंत केसरी आय प्राप्त भया लोकोंके मनकी वृत्ति सोई भई गुफा तिनमें पैठा। महेंद्र नामा उद्यान नंदनवन समान सदा ही सुंदर है सो वसंत समय अतिसुंदर होता भया, नाना प्रकारके पुष्पनिकी पाखुंडी अर नाना प्रकारकी कूपल दक्षिणदिशिकी पवनकर हालती भई सो मानों उन्मत्त भई घूमै हैं। अर वापिका कमलादिककरि आच्छादित, अर पक्षिनिके समूह नाद करै हैं, अर लोक सिवाणोंपर तथा तीर पर बैठे हैं, अर हंस सारस चकवा क्रौंच मनोहर शब्द करै

हैं, अर कारंड बोल रहे हैं, इत्यादि मनोहर पक्षिनिके मनोहर शब्दकरि रागी पुरुषनिकूं राग उपजावैं हैं, पक्षी जलविषैं पड़ैं हैं अर उठ हैं तिनकर निर्मल जल कलोलरूप होय रह्या है जल तो कमलादिक कर भरया है अर स्थल जो है सो स्थलपद्मादिक पुष्पनिकर भरे हैं अर आकाश पुष्पनिकी मकरंदकर मंडित होय रह्या है फूलनिके गुच्छे अर लता वृक्ष अनेक प्रकारके फूल रहे हैं,वनस्पतिकी परम शोभा होय रही है ता समय सीता कछु गर्भके भारकर दुर्बल शरीर भई। तब राम पूछते भये--हे कांते! तेरे जो अभिलाषा होय सो पूर्ण करूं। तब सीता कहती भई--हे नाथ! अनेक चैत्यालयनिके दर्शन करिवेकी मेरे वांछा है,भगवान्के प्रतिबिंब पांचों वर्णके लोकविषैं मंगलरूप तिनकूं नमस्कार करिवेकूं मेरा मनोरथ है, स्वर्ण रत्नमई पुष्पनिकर जिनेंद्रकूं पूजूं यह मेरे महा श्रद्धा है, और कहा वांछूं॰ ये सीताके वचन सुनकर राम हर्षित भये,फूल गया है मुख कमल जिनका, राजलोकविषैं विराजते हुते सो द्वारपालीको बुलाय आज्ञा करी कि हे भद्रे! मंत्रिनिकूं आज्ञा पहुचावो जो समस्त चैत्यालयनिविषैं प्रभावना करैं, अर महेंद्रोदयनामा उद्यानविषैं जे चैत्यालय हैं तिनकी शोभा करावें, अर सर्व लोककूं आज्ञा पहुँचावो कि जिनमंदिरविषैं पूजा प्रभावना आदि अति उत्सव करैं, अर तोरण ध्वजा घंटा झालरी चंदोवा सायवान महामनोहर वस्त्रनिके बनावें, तथा सुन्दर समस्त उपकरण देहुरा चढावें, लोक समस्त पृथिवीविषैं जिनपूजा करैं, अर कैलाश सम्मेदशिखर पावापुर चंपापुर गिरनार शत्रुंजय मांगीतुंगी आदि निर्वाण क्षेत्रनिविषैं विशेष शोभा करावो, कल्याणरूप दोहुला सीताकूं उपज्या है, सो पृथिवीविषैं जिनपूजाकी प्रवृत्ति करहु, हम सीतासहित धर्मक्षेत्रनिविषैं विहार करैंगे।

यह रामकी आज्ञा सुन वह द्वारपाली अपने ठौर अन्यकूं राखकर जाय मंत्रिनिकूं आज्ञा पहुचावती भई। अर वे स्वामीकी आज्ञा-प्रमाण अपने किंकरनिकूं आज्ञा करते भए। सर्व चैत्यालयनिविषैं शोभा कराई, अर महा पर्वतोंकी गुफाके द्वार पूर्ण कलश थापे, मोतिनिके हारनिकर शोभित अर विशाल स्वर्णकी भीतिविषैं मणिनिके चित्राम रचे, महेंद्रोदय नाम उद्यानकी शोभा नंदन वनकी शोभा समानकर अत्यन्त निर्मल शुद्धमणिनिके दर्पण थंभविषै थापे, अर झरोखनिके मुखविषैं निर्मल मोतिनिके हार लटकाये सो जल नीझरना समान सोहैं, अर पांच प्रकारके रत्ननिका चूर्णकरि भूमि मंडित करी,अर सहसदल कमल तथा नाना प्रकारके कमल तिनकर शोभा करी,अर पांच वर्णके मणिनिके दंड तिनविषैं महा सुंदर वस्त्रनिके ध्वजा लगाय मंदिरनिके शिखर पर चढाईं,अर नाना प्रकारके पुष्पनिकी माला जिनपर भ्रमर गुंजार करैं ठौर ठौर लुंबाई हैं, अर विशाल वादित्रशाला नाट्यशाला अनेक रची हैं तिनकर वन अति शोभै है मानों नंदन वन ही है। तब श्रीरामचन्द्र इन्द्रसमान सब नगरके लोकनिकर युक्त समस्त राजलोकनिसहित वनविषैं पधारे। सीता अर आप गजपर आरूढ कैसें सोहैं जैसे शची-सहित इन्द्र ऐरावत गजपर चढे सोहै। अर लक्ष्मण भी परम ऋद्धिकूं धरे वनविषैं जाते भए। अर और हू सब लोक आनंद-

सू वनविषैं गये। अर सबनिकूं अन्न-पान वनहीविषैं भया। जहां महा मनोज्ञ लतानिके मंडप अर केलिके वृक्ष तहां रानी तिष्ठी, अर और हू लोक यथायोग्य वनविषैं तिष्ठे। राम हाथीतैं उतरकर निर्मल जलका भरा जो सरोवर नानाप्रकारके कमलनिकर संयुक्त उसविषैं रमते भए,जैसे इन्द्र क्षीर-सागरविषैं रमै तहां क्रीडाकर जलतैं बाहिर आये। दिव्य सामग्रीकर विधिपूर्वक सीता-सहित जिनेन्द्रकी पूजा करते भए, राम महा सुन्दर अर वनलक्ष्मी समान जे वल्लभा तिनकर मंडित ऐसे सोहते भये मानो मूर्तिवन्त वसन्त ही है। आठ हजार रानी देवांगना-समान तिनके सहित राम ऐसे सोहैं मानों ये तारानि कर मण्डित चन्द्र ही है। अमृतका आहार अर सुगंधका विलेपन मनोहर सेज, मनोहर आसन, नाना प्रकारके सुगन्ध माल्यादिक, स्पर्श रस गन्ध रूप शब्द पांचों इंद्रियनिके विषय अति मनोहर रामकूं प्राप्त भए। जिनमन्दिरविषैं भलीविधिसे नृत्य पूजा करी। पूजा प्रभावनाविषैं रामके अति अनुराग होता भया। सूर्यहूतैं अधिक तेजके धारक राम देवांगना-समान सुन्दर जे दारा तिनसहित कैयक दिन सुखसे वनविषैं तिष्ठे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै जिनेन्द्रपूजाकी सीताकूं अभिलाषा गर्भका प्रादुर्भाव वर्णन करनेवाला पिचानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९५॥

छयानवेवां पर्व

[सीताका लोकापवाद और रामके चिन्ता]

अथानंतर प्रजाके लोक रामके दर्शनकी अभिलाषा कर वनहीविषैं आए, जैसें तिसाए पुरुष सरोवरविषैं आवैं। तब बाहिरले दरवानने लोकोंके आवनेका वृत्तांत द्वारपालियोंसूं कह्या। वे द्वारपाली भीतर राजलोकमें रामसूं जायकर कहती भई कि--हे प्रभो! प्रजाके लोक आपके दर्शनकूं आए हैं। अर सीताके दाहिनी आंख फुरकी, तब सीता विचारती भई यह आंख मुझे क्या कहै है? कछू दुःखका आगमन बतावै है, आगे अशुभके उदयकरि समुद्रके मध्यविषैं दुख पाए, तो हू दुष्ट कर्म संतुष्ट न भया। क्या और भी दुख दीया चाहै है,जो इस जीवने रागद्वेष-के योगकर कर्म उपार्जे हैं तिनका फल ए प्राणी अवश्य पावै है, काहूकर निवारा न जाय। तब सीता चितावती होय और राणीनिसूं कहती भई--मेरी दाहिनी आंख फड़कनेका फल कहो। तब एक अनुमतिनामा रानी महा प्रवीण कहती भई—हे देवि! या जीवने जे कर्म शुभ अथवा अशुभ उपार्जे हैं वे या जीवके भले-बुरे फलके दाता हैं कर्महीकूं काल कहिए, अर विधि कहिए, ईश्वर भी कहिए। सब संसारी जीव कर्मनिके आधीन हैं, सिद्ध परमेष्ठी कर्मनिसूं रहित हैं।

बहुरिगुण-दोषकी ज्ञाता रानी गुणमाला सीताकूं रुदन करती देख धैर्य बंधाय

कहती भई--हे देवि ! तुम पतिके सबनिविषैं श्रेष्ठ हो, तुमकूं काहू प्रकारका दुःख नाहीं। अर और रानी कहती भई, बहुत विचारकर कहा ? शांतिकर्म करो, जिनेन्द्रका अभिषेक अर पूजा करावो, अर किमिच्छक दान देवो, जाकी जो इच्छा होय सो ले जावो, दान पूजाकर अशुभका निवारण होय है, तातैं शुभ कार्यकर अशुभकूं निवारो। या भांति इन्होने कही। तब सीता प्रसन्न भई, अर कही--योग्य है दान पूजा अभिषेक अर तप ये अशुभके नाशक हैं। दान धर्म विघ्नका नाशक वैरका नाशक है, पुण्यका अर यशका मूल कारण है, यह विचारकर भद्रकलश नामा भंडारीकूं बुलायकर कही--मेरे प्रसूति होय तौलग किमिच्छकदान निरंतर देवो। तब भद्रकलश-ने कही—जो आप आज्ञा करोगी सो ही होयगा, यह कहकर भंडारी गया। अर जिनपूजादि शुभक्रियाविषैं प्रवर्ती, जितने भगवान्के चैत्यालय हैं तिनविषैं नाना प्रकारके उपकरण चढाए, अर सब चैत्यालयनिविषैं अनेक प्रकारके वादित्र बजवाए मानों मेघ ही गाजे हैं,अर भगवान्के चरित्र पुराण आदिक ग्रंथ जिनमंदिरनिविषैं पधराए, अर दूध दही घृत जल मिष्टान्नके भरे कलश अभिषेककूं पठाए। अर खोजाओंविषैं प्रधान जो खोजा सो वस्त्राभूषण पहरे हाथी चढा नगर-विषैं घोषणा फेरै जाकूं जो इच्छा होय सो ही लेवो। या भांति विधिपूर्वक दान पूजा उत्सव कराए, लोक पूजा दान तप आदिविषैं प्रवर्ते पापबुद्धिरहित समाधानके प्राप्त भए। सीता शांतचित्त धर्मविषै अनुरक्त भई, अर श्रीरामचन्द्र मण्डपविषैं आय तिष्ठे। द्वारपालने जे नगरीके लोक आए हुते ते रामसे मिलाए। स्वर्ण रत्नकर निर्मापित अद्भुत सभाकूं देख प्रजाके लोक चकित होय गए, हृदयकूं आनन्दके उपजावनहारे राम तिनकूं देखकर नेत्र प्रसन्न भए। प्रजाके लोक हाथ जोड़ नमस्कार करते भए, कांपै हैं तन जिनका, अर डरै है मन जिनका। तब राम कहते भए--हे लोको ! तिहारे आगमनका कारण कहो। तब विजय सुराजि मधुमान वसुलो धर काश्यप पिंगल काल क्षेम, इत्यादि नगरके मुखिया मनुष्य निश्चल होय चरणनिकी तरफ चोके। गल गया है गर्व जिनका, राजतेजके प्रतापकरि कछु कह न सके। यद्यपि चिरकालमें सोच सोच कहा चाहैं, तथापि इनके मुखरूप मंदिरसे वाणीरूप वधू न निकसे। तब रामने बहुत दिलासा कर कही तुम कौन अर्थ आए हो सो कहो। या भांति कही तो भी वे चित्राम कैसे होय रहे, कछु न कहैं, लज्जारूप फांसकर बन्धा है कंठ जिनका, अर चलायमान हैं नेत्र जिनके, जैसे हिरणके बालककूं व्याकुल चित्त देख तैसे देखै। तब तिनविषैं मुख्य विजयनाम पुरुष, चलायमान है शब्द जिसका, सो कहता भया —हे देव ! अभयदानका प्रसाद होय। तब रामने कही तुम काहू बातका भय मत करहु,तिहारे चित्तविषैं जो होय सो कहो,तिहारा दुःख दूरकर तुमको साता उपजाऊंगा, तिहारे औगन न लूंगा,गुण ही लूंगा। जैसे मिले हुए दूध जल तिनमें जलकूं टार हंस दूध ही पीवै हैं। श्रीरामने अभयदान दिया तो भी अतिकष्टसे विचार-विचार धीरे स्वरकर विजय हाथ जोड़

सिर नवाय कहता भया—हे नाथ नरोत्तम! एक विनती सुनो, अब सकल प्रजा मर्यादा-रहित प्रवर्ते है। यह लोक स्वभावहीसे कुटिल हैं अर एक दृष्टांत प्रकट पावें तब इनकूं अकार्य करनेविषै कहा भय? जैसे वानर सहज ही चपल है अर महाचपल जो यन्त्रपिंजरा उसपर चढ़ा तब कहा कहना। निर्बलोंकी यौवनवंती स्त्री पापी बलवंत छिद्र पाय बलात्कार हरैं है, अर कोईयक शीलवंती विरहकर पराये घर अत्यन्त दुखी होय हैं तिनकूं केयक सहाय पाय अपने घर ले आवैं हैं सो धर्मकी मर्यादा जाय है,यह न जाय सो यत्न करहु, प्रजाके हितकी वांछा करहु,जिस विधि प्रजाका दुख टरैं सो करहु। या मनुष्य लोकविषैं तुम बड़े राजा हो, तुम समान और कौन, तुम ही जो प्रजाकी रक्षा न करोगे तो कौन करेगा? नदियोंके तट तथा वन उपवन कूप वापिका सरोवरके तीर ग्राम ग्रामविषैं घर घरविषैं सभाविषैं एक यही अपवादकी कथा है और नाहीं कि श्रीराम राजा दशरथके पुत्र सर्व शास्त्रविषैं प्रवीण सो रावण सीताकूं हर ले गया, ताहि घरविषैं ले आये, तब औरनिकूं कहा दोष है। जो बड़े पुरुष करैं सो सब जगत्कूं प्रमाण जिस रीति राजा प्रवर्ते उसही रीति प्रजा प्रवर्ते। "यथा राजा तथा प्रजा" यह वचन है, या भांति दुष्टचित्त निरंकुश भए पृथिवीविषैं अपवाद करैं हैं, तिनका निग्रह करहु। हे देव! आप मर्यादा के प्रवर्तक पुरुषोत्तम हो, एक यही अपवाद तिहारे राज्यविषैं न होता तो तिहारा यह राज्य इंद्र से भी अधिक है। यह वचन विजयके सुनकर क्षणएक रामचन्द्र विषादरूप मुद्गरके मारे चलायमान चित्त होय गए, चित्तविषैं चिंतवते भए--यह कौन कष्ट उपज्या, मेरा यशरूप कमलोंका वन अपयशरूपी अग्निकर जलने लाग्या है, जिस सीताके निमित्त मैं विरहका कष्ट सहा सो मेरे कुलरूप चन्द्रमाकूं मलिन करै है, अयोध्याविषैं मैं सुखके निमित्त आया, अर सुग्रीव हनुमानादिकसे मेरे सुभट सो मेरे गोत्ररूप कुमुदिनीकूं यह सीता मलिन करै है, जिसके निमित्त मैंने समुद्र तिरि रणसंग्रामकर रिपुकूं जीत्या सो जानकी मेरे कुलरूप दर्पणको कलुषित करै है। अर लोक कहैं हैं सो सांच है, दुष्ट पुरुषके घरविषैं तिष्ठी सीता मैं क्यों लाया, अर सीतामे मेरा अति प्रेम जिसे क्षणमात्र न देखूं तो विरहकर अकुलाता रहूं। अर वह पतिव्रता मोमैं अनुरक्त उसे कैसैं तजूं, जो सदा मेरे नेत्र अर उरविषैं बसे महा गुणवती निर्दोष सीता सती उसे कैसे तजूं? अथवा स्त्रियोंके चित्तकी चेष्टा कौन जाने जिनविषैं सब दोषोंका नायक मन्मथ बसै है, धिक्कार स्त्रीके जन्मकूं, सर्वदोषोंकी खान आतापका कारण, निर्मल कुलविषैं उपजे पुरुषोंकूं कर्दम-समान मलिनताका कारण हैं। अर जैसे कीचविषैं फंसा मनुष्य तथा पशु निकल न सके, तैसे स्त्रीके रागरूप पंकविषैं फंसा प्राणी निकस न सकै। यह स्त्री समस्त बल का नाश करणहारी है,अर रागका आश्रय है,अर बुद्धिकूं भ्रष्ट करै है,अर सत्यतैं पटकवेकूं खाई समान है निर्वाण सुखकी विघ्न करणहारी ज्ञानकी उत्पत्तिकूं निवारणहारी भवभ्रमणका कारण

है, भस्मसे दबी अग्निके समान दाहक है, डाभकी सुई समान तीक्ष्ण है, देखवेमात्र मनोज्ञ परंतु अपवादका कारण ऐसी सीता उसे मैं दुख दूर करिवे निमित्त तजूं, जैसें सर्प कांचलीकूं तजै। फिर जिसकर मेरा हृदय तीव्रस्नेहके बन्धनकर वशीभूत सो कैसे तजी जाय ? यद्यपि मैं स्थिर हू तथापि यह जानकी निकटवर्तिनी ,अग्निकी ज्वाला-समान मेरे मनकूं आताप उपजावै है, अर यह दूर रही भी मेरे मनकूं मोह उपजावै । जैसें चन्द्ररेखा दूरही से कुमुदिनीकूं विकसित करै । एक ओर लोकापवादका भय, अर एक ओर सीताके दुर्निवार स्नेह-का भय । अर रागकर विकल्पके सागरविषै पड्या हू । अर सीता सर्व प्रकार देवांगनासे भी श्रेष्ठ महापतिव्रता सती शीलरूपिणी मोसूं सदा एकचित्त उसे कैसे तजूं ? अर जो न तजूं, तो अपकीर्ति प्रकट होय है । इस पृथिवीविषै मोसमान और दीन नाहीं, स्नेह अर अपवादका भय उसविषै लाग्या है मन जिसका, दोनोंकी मित्रताका तीव्र विस्तार वेगकर वशीभूत जो राम सो अपवादरूप तीव्र कष्टकूं प्राप्त भए, सिंहकी है ध्वजा जिसके ऐसे राम तिनकूं दोनो बातोंकी अति आकुलतारूप चिंता असाताका कारण दुस्सह आताप उपजावती भई,जैसे जेष्ठके मध्यान्ह-का सूर्य दुस्सह दाह उपजावै ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं लोकापवाद की चिंताका वर्णन करनेवाला छियानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९६॥

सत्तानवेवां पर्व

[लोकापवादके भयसे सीताका परित्याग और सीताका वनमें विलाप]

अथानन्तर श्रीराम एकाग्र चित्त कर द्वारपालकूं लक्ष्मणके बुलावनेकी आज्ञा करते भये, सो द्वारपाल लक्ष्मणपै गया, आज्ञा-प्रमाण तिनकूं कही। लक्ष्मण द्वारपालके वचन सुनकर तत्काल तुरंगपर चढि रामके निकट आया। हाथ जोड नमस्कारकर सिंहासनके नीचे पृथिवीपर बैठा, रामके चरणोंकी ओर है दृष्टि जाकी, राम उठकर आधे सिंहासन पर ले बैठे, शत्रुघ्न आदि सब ही राजा, अर विराधित आदि सब ही विद्याधर यथायोग्य बैठे । पुरोहित श्रेष्ठी मन्त्री सेना-पति सब ही सभामें तिष्ठे । तब क्षण एक विश्रामकर रामचन्द्रने लक्ष्मणसूं लोकापवादका वृत्तांत कहा , सुनकर लक्ष्मण क्रोधकर लाल नेत्र भए, अर योधावोंकूं आज्ञा करी अवार मैं उन दुर्जनोंके अंत करिवेकूं जाऊंगा, पृथिवीकूं मृषावादरहित करूंगा । जे मिथ्या वचन कहै हैं, तिनकी जिह्वा छेद करूंगा । उपमारहित जो शीलव्रतकी धारणहारी सीता, वाकी जे निन्दा करै हैं तिनका क्षय करूंगा । या भांति लक्ष्मण महा क्रोधरूप भए, नेत्र अरुण होय गए । तब

श्रीराम इन वचनोंसे शांत करते भए—हे सौम्य ! यह पृथिवी सागरां पर्यंत ताकी श्रीऋषभदेवने रक्षा करी, बहुरि भरतने प्रतिपालना करी। अर इक्ष्वाकुवंशके तिलक बड़े बड़े राजा, जिनकी पीठ रणमें रिपुओंने न देखी, जिनकी कीर्तिरूप चान्दनीसे यह जगत् शोभित है, सो अपने वंशविषै अनेक यशके उपजावनहारे भए। अब मैं क्षणभंगुर पापरूप रागके निमित्त यशकूं कैसे मलिन करूं, अल्प भी अकीर्ति जो न टारिए तो वृद्धिकूं प्राप्त होय। अर उन नीतिवान् पुरुषोंकी कीर्ति इंद्रादिक देवोंसूं गाइए है। ये भोग विनाशीक तिनसे कया, जिनसे अकीर्तिरूप अग्नि कीर्तिरूप वनकूं बाले। यद्यपि सीता सती शीलवंती निर्मल चित्त है, तथापि इसको घरविषै राखे मेरा अपवाद न मिटै। यह अपवाद शस्त्रादिकसे हता न जाय। यद्यपि सूर्य कमलोंके वनका प्रफुल्लित करणहारा है अति तिमिरका हरणहारा है, तथापि रात्रिके होते सूर्य अस्त होय है तैसे अपवादरूप रज महा विस्तारकूं प्राप्त भई तेजस्वी पुरुषोंकी कांतिकी हानि करै है सो यह रज निवारनी चाहिए। हे भ्रात ! चंद्रमा-समान निर्मल हमारा गोत्र अकीर्तिरूप मेघमालासूं आच्छादा जाय है सो न आच्छादा जाय यही मेरे यत्न है। जैसैं सूके इधनके समूहविषैं लगी आग जलसूं बुझाए विना वृद्धिकूं प्राप्त होय है, तैसे अकीर्तिरूप अग्नि पृथिवीविषैं विस्तरै है सो निवारे विना न मिटै। यह तीर्थंकर देवोंका कुल महा उज्ज्वल प्रकाशरूप है याकूं कलंक न लगे सो उपाय करहु। यद्यपि सीता महा निर्दोष शीलवंती है तथापि मैं तजूंगा, अपनी कीर्ति मलिन न करूंगा। तब लक्ष्मण कहता भया, कैसा है लक्ष्मण ? रामके स्नेहविषै तत्पर है बुद्धि जाकी। हे देव ! सीताकूं शोक उपजावना योग्य नाहीं, लोक तो मुनिराजोंका भी अपवाद करै हैं जिनधर्मका अपवाद करै है, तो क्या लोकापवादसे धर्म तजिए है ? तैसें लोकापवादमात्रसूं जानकी कैसे तजिए। जो सब सतियोंके सीस विराजै है, काहू प्रकार निंदाके योग्य नाहीं। अर पापी जीव शीलवंत प्राणियोंकी निन्दा करै हैं, क्या तिनके वचनसे शीलवंतोंकूं दोष लागै है ? वे निर्दोष ही हैं। ये लोक अविवेकी है, इनके वचनविषैं परमार्थ नाहीं, विषकर दूषित है नेत्र जिनके वे चंद्रमाकूं श्यामरूप देखै हैं। परंतु चन्द्रमा श्वेत ही है, श्याम नाहीं। तैसैं लोकोंके कहे निष्कलंकियोंकूं कलंक नाहीं लागे है। जे शीलसे पूर्ण हैं तिनकूं आपना आत्मा ही साक्षी है, परजीवनिका प्रयोजन नाहीं। नीच जीवनिके अपवादकरि पण्डित विवेकी क्रोधकूं न प्राप्त होय जैसे श्वानके भोंकनेतैं गजेंद्र नाहीं कोप करै हैं। ये लोक विचित्रगति हैं तरंग समान है चेष्टा जिनकी परदोष कथिवे विषैं आसक्त सो इन दुष्टोंका स्वयमेव ही निग्रह होयगा। जैसैं कोई अज्ञानी शिलाकूं उपाड-कर चंद्रमाकी ओर बगाय (फेंक) बहुरि मारा चाहे सो सहज ही आप निःसन्देह नाशकूं प्राप्त होय है। जो दुष्ट पराए गुणनिकूं न सहि सकै, अर सदा पराई निंदा करै है, सो पापकर्मी निश्चय-सेती दुर्गतिकूं प्राप्त होय है। जब ऐसे वचन लक्ष्मणने कहे, तब श्रीरामचंद्र कहते भये—हे

लक्ष्मण ! तू कहै है सो सब सत्य है, तेरी बुद्धि रागद्वेषरहित अति मध्यस्थ महा शोभायमान् है परंतु जे शुद्ध न्यायमार्गी मनुष्य हैं वे लोकविरुद्ध कार्यकूं तजै हैं। जाकी दशों दिशामें अकीर्ति-रूप दावानलकी ज्वाला प्रज्वलित है, ताकूं जगत्में कहा सुख। अर कहा ताका जीतव्य ? अनर्थका करणहारा जो अर्थ ताकरि कहा ? अर विषकर संयुक्त जो औषधि ताकरि कहा ? अर जो बलवान् होय जीवनिकी रक्षा न करै, शरणागतपालक न होय ताके बलकर कहा, अर जाकर आत्मकल्याण न होय ता आचारणकर कहा ? चारित्र सोई जो आत्महित करै। अर जो अध्यात्म-गोचर आत्माकूं न जाने ताके ज्ञानकर कहा ? अर जाकी कीर्तिरूप वधू अपवादरूप बलवान् हरै, ताका जन्म प्रशस्त नाहीं ऐसे जीवनतैं मरण भला लोकापवादकी बात दूर ही रहो, मोहि यह महा दोष है जा परपुरुषने हरी सीता मैं बहुरि घरमें ल्याया। राक्षसके भवनमें उद्यान तहां यह बहुत दिन रही, अर ताने दूती पठाय मनवांछित प्रार्थना करी, अर समीप आय दुष्ट दृष्टिकर देखी, अर मनमे आए सो वचन कहे, ऐसी सीता मैं घरमे ल्याया या समान और लज्जा कहा ? मो मूढोंसे कहा न होय ? या संसारकी मायाविषै मैं हू मूढ भया। या भांति कहकर आज्ञा करी जो शीघ्र ही कृतांतवक्र सेनापतिकूं बुलावो। यद्यपि दो बालकनिके गर्भसहित सीता है तौ हू याहि तत्काल मेरे घरतैं निकासो, यह आज्ञा करी। तब लक्ष्मण हाथ जोड़ नमस्कारकर कहता भया—हे देव ! सीताकूं तजना योग्य नाहीं, यह राजा जनककी पुत्री, महा शीलवती जिनधर्मिणी कोमल चरण-कमल जाके, महा सुकुमार भोरी सदा सुखिया अकेली कहां जायगी ? गर्भके भारकर संयुक्त परम खेदकूं धरे यह राजपुत्री तिहारे तजे कौनके शरण जायगी। अर आपने देखवेकी कही, सो देखवेकर कहा दोष भया ! जैसैं जिनराजके निकट चढ़ाया द्रव्य निर्माल्य होय है, ताहि देखिए है परंतु दोष नाहीं। अयोग्य अभक्ष्य वस्तु आंखिनिसूं देखिये हैं परंतु देखे दोष नाहीं, अंगी-कार कीये दोष है। तातैं हे नाथ ! मोपर प्रसन्न होहु, मेरी विनती सुनिहु, महा निर्दोष सीता सती तुमविषै एकाग्र है चित्त जाका ताहि न तजो। तब राम अत्यंत विरक्त होय क्रोधमें आय गए अर अप्रसन्न होय कही--लक्ष्मण, अब कछू न कहना, मैं यह अवश्य निश्चय किया। शुभ होवै, अथवा अशुभ होवै,निमानुष वन जहां मनुष्यका नाम नाहीं सुनिए वहां द्वितीय सहायरहित अकेली सीताकूं तजहु। अपने कर्मके योगकरि जीवा अथवा मरो, एक क्षणमात्र हू मेरे देशविषैं अथवा नगरविषै काहूके मंदिरविषै मत रहो। वह मेरी अपकीर्तिकी करणहारी है कृतांतवक्रकूं बुलाया सो चार घोड़का रथ चढ़ा, बड़ी सेनासहित जाका बंदीजन विरद बखानैं हैं, लोक जय जयकार करैं हैं सो राजमार्ग होय आया, जापर छत्र फिरता, अर धनुष चढ़ाय बखतर पहिरे कुण्डल पहिरे, ताहि या विधि आवता देख नगरके नर नारी अनेक विकल्पकी वार्ता करते भए। आज यह सेनापति शीघ्र दौड़ा जाय है सो कौन पर विदा होयगा, आप कौन पर कोप भए हैं

आज काहूका कछू बिगाड़ है, ज्येष्ठके सूर्य-समान ज्योति जाकी, काल-समान भयंकर शस्त्रनिके समूहके मध्य चला जाय है सो आज न जानिए कौन पर कोप है। या भांति नगरके नर-नारी वार्ता करैं हैं। अर सेनापति रामदेव समीप आया, स्वामीकूं सीस नवाय नमस्कार कर कहता भया--हे देव ! जो आज्ञा होय सो ही करूं।

तब रामने कही, शीघ्रही सीताकूं ले जावो, अर मार्गविषै जिनमंदिरनिका दर्शन कराय सम्मेदशिखर अर निर्वाणभूमि तथा मार्गके चैत्यालय तहां दर्शन कराय वाकी आशा पूर्णकर अर सिंहनादनामा अटवी जहां मनुष्यका नाम नाहीं, तहां अकेली मेल उठ आवो। तब ताने कही जो आज्ञा होयगी सोही होयगा कछू वितर्क न करहु। अर जानकीपै जाय कही-हे माता ! उठो रथविषै चढ़ो, चैत्यालयनिकी वांछा है सो करो। या भांति सेनापतिने मधुरस्वर-कर हर्ष उपजाया। तब सीता रथ चढ़ी, चढ़ते समय भगवानकूं नमस्कार किया, अर यह शब्द कहा जो चतुर्विध संघ जयवंत होवें। श्रीरामचन्द्र महाजिनधर्मी, उत्तम आचरणविषैं तत्पर सो जयवंत होहु। अर मेरे प्रसादसे असुन्दर चेष्टा भई होय सो जिनधर्मके अधिष्ठाता देव क्षमा करहु,। अर सखीजन लार भए, तिनसूं कही तुम सुखसे तिष्ठो, मैं शीघ्र ही जिनचैत्यालयनिके दर्शनकर आऊं हूं या भांति तिनसे कही। अर सिद्धनिकूं नमस्कारकर सीता आनन्दसे रथ चढ़ी। सो रत्न स्वर्णका रथ तापर चढी ऐसी सोहती भई जैसी विमान चढी देवांगना सोहै,। वह रथ कृतांतवक्त्रने चलाया सो ऐसा शीघ्र चलाया जैसा भरत चक्रवर्तीका चलाया बाण चलै सो चलते समय सीताकूं अपशकुन भए, सूके वृक्षपर काग बैठा विरस शब्द करता भया अर माथा धुनता भया, अर सन्मुख स्त्री महा शोककी भरी शिरके बाल बिखेरे रुदन करती भई इत्यादि अनेक अपशकुन भए,तो पुणि सीता जिनभक्तिविषैं अनुरागिणी निश्चलचित्त चली गई, अपशकुन न गिने। पहाडनिके शिखर कंदरा अनेक वन उपवन उलंघकर शीघ्र ही रथ दूर गया, गरुडसमान वेग जाका ऐसे अश्वनिकर युक्त, सुफेद ध्वजाकर विराजित सूर्यके रथ समान रथ शीघ्र चला। मनोरथ-समान वह रथ तापर चढी रामकी रानी इंद्राणीसमान सो अति सोहती भई। कृतांतवक्त्र सारथीने मार्गविषैं सीताकूं नाना प्रकारकी भूमि दिखाई, ग्राम नगर वन अर कमलसे फूल रहे हैं सरोवर नाना प्रकारके वृक्ष, कहू सघन वृक्षनिकर वन अन्धकाररूप है, जैसैं अंधेरी रात्रि मेघमालाकर मंडित महा अंधकाररूप भासै कछू नजर न आवै, अर कहू विरले वृक्ष हैं सघनता नाहीं तहां कैसा भासै है जैसा पंचमकालमें भरत ऐरावत क्षेत्रनिकी पृथिवी विरले सत्पुरुषनिकरि सोहै। अर कहू वनी पतझर होय गई है सो पत्ररहित पुष्प-फलादिरहित छायारहित कैसी दीखै जैसैं बडे कुलकी विधवा स्त्री। भावार्थ--विधवा हू पुत्ररूपी पुष्प-फलादि रहित हैं अर आभरण तथा सुंदर वस्त्रादिरहित अर कांतिरहित हैं शोभारहित हैं सो तैसी वनी दीखै है। अर कहूइक

वनविषैं सुन्दर माधुरी लता आम्रके वृक्षसे लगी ऐसी सोहै हैं जसी चपल वेश्या, आम्रसूं लगि अशोककी वांछा करै हैं। अर कैयक दावानलकर वृक्ष जर गए है सो नाहीं सोहै हैं जैसै हृदय क्रोधरूप दावानलकरि जरा न सोहै। अर कहूइक सुंदर पल्लवनिके समूह मंद पवनकर हालते सोहे हैं मानों वसंतराजके आयवेकर वनपंक्तिरूप नारी आनंदसे नृत्य ही करै हैं। अर कहूइक भीलनिके समूह तिनके जे कलकलाट शब्दकर मृग दूर भाग गए है अर पक्षी उड गए हैं अर कहूइक वनी अल्प है जल जिनमें ऐसी नदी तिन कर कैसी भासै हैं जैसी संतापकी भरी विरहिनी नायिका अंसुवनकर भरे नेत्र-संयुक्त भासै। अर कहूइक वनी नाना पक्षिनिके नादकर मनोहर शब्द करै हैं,अर कहूँइक नीझरनोके नादकरि शब्द करती तीव्र हास्य करै है। अर कहूइक मकरंदमें अति लुब्ध जे भ्रमर तिनके गुंजारकरि मानों वनी वसंत नृपको स्तुति ही करै है,अर कहूइक वनी फूलनिकर नम्रीभूत भई शोभाकूं धरै है जैसें सफल पुरुष दातार नम्रीभूत भए सोहै हैं। अर कहूइक वायुकर हालते जे वृक्ष तिनकी शाखा हालै हैं अर पल्लव हालै हैं अर पुष्प पड़ै हैं सो मानों पुष्पवृष्टिही करै हैं। इत्यादि रीतिकूं धरे वनी अनेक क्रूर जीवनिकर भरी ताहि देखती सीता चली जाय है, रामविषै है चित्त जाका, मधुर शब्द सुनकर विचारती भई मानों रामके दुंदुंभी बाजे बाजैं हैं। या भांति चितवती सीता आगें गंगाको देखती भई कैसी है गंगा? अति सुन्दर हैं शब्द जाके अर जाके मध्य अनेक जलचर जीव मीन मकर ग्रहादिक विचरैं हैं तिनके विचरिवेकरि उद्धत लहर उठै हैं तातैं कंपायमान भए हैं कमल जाविषै, अर मूलसे उपाडे हैं तीरके उतंग वृक्ष जाने, अर उखाडे हैं पर्वतनिके पाषाणोके समूह जाने, समुद्रकी ओर चली जाय है,अति गम्भीर है,उज्ज्वल कल्लोलोकर शोभै है,झागोके समूह उठै हैं। अर भ्रमते जे भंवर तिनकर महा भयानक है, अर दोनों ढाहावोंपर बैठे पक्षी शब्द करै हैं सो परम तेजके धारक रथके तुरंग ता नदीको तिर पार भए,पवन समान है वेग जिनका,जैसे साधु संसार समुद्रके पार होय। नदीके पार जाय सेनापति यद्यपि मेरुसमान अचलचित्त हुता तथापि दयाके योगकर अति विषादकूं प्राप्त भया महा दुखका भरया कछू न कहि सके। आंखनितें आसूं निकल आए। रथकूं थांभ ऊंचे स्वरकर रुदन करने लगा, ढीला होय गया है अंग जाका, जाती रही है कांति जाकी। तब सीता सती कहती भई--हे कृतांतवक्त्र! तू काहेकूं महादुखीकी न्याई रोवे है, आज जिनवन्दना-के उत्सवका दिन, तू हर्षमें विषाद क्यों करे है? या निर्जन वनमें क्यो रोवे है। तब वह अति रुदनकर यथावत् वृत्तांत कहता भया। जो वचन विषसमान अग्निसमान शस्त्र-समान है। हे मातः! दुर्जननिके वचनतैं राम अकीर्तिके भयसे जो न तजा जाय तिहारा स्नेह ताहि तजकर चैत्यालयनिके दर्शनकी तिहारे अभिलाषा उपजी हुती सो तुमकूं चैत्यालयोके अर निर्वाणक्षेत्रोंके दर्शन कराय भयानक वनविषै तजी है। हे देवि! जैसे यति रागपरणतिकूं तजै, तैसैं रामने तुमकूं तजी

है। अर लक्ष्मणने जो कहिवेकी हद थी सो कही कछू कमी न राखी, तिहारे अर्थि अनेक न्यायके वचन कहे,परंतु रामने हठ न छोड़ी। हे स्वामिनि ! राम तुमसे नीराग भए,अब तुमकूं धर्म ही शरण है। सो या संसारविषैं न माता, न पिता, न भ्राता, न कुटुम्ब, एक धर्म ही जीवका सहाई है। अब तुमकूं यह मृगोंका भरा वन ही आश्रय है। ये वचन सीता सुनकर वज्रपातकी मारी जैसी होय गई। हृदयविषैं दुखके भारकर मूर्च्छाकूं प्राप्त भई। बहुरि सचेत होय गदगद वाणीसूं कहती भई--शीघ्र ही मोहि प्राणनाथसूं मिलावो। तब वाने कही--हे मातः ! नगरी दूर रही अर रामका दर्शन दूर। तब अश्रुपातरूप जलकी धारासूं मुख-कमल प्रचालती हुई कहती भई कि हे सेनापति ! तू मेरे वचन रामसूं कहियो कि मेरे त्यागका विषाद आप न करणा, परम धैर्यकूं अवलंबनकर सदा प्रजाकी रक्षा करियो, जैसैं पिता पुत्रकी रक्षा करै, आप महान्यायवंत हो, अर समस्त कलाके पारगामी हो। राजाकूं प्रजा ही आनन्दका कारण है। राजा वही जाहि प्रजा शरदकी पूनोके चंद्रमाकी न्याईं चाहे। अर यह संसार असार है, महा भयंकर दुखरूप है जा सम्यग्दर्शनकर भव्यजीव संसारसूं मुक्त होवे हैं सो तिहारे आराधिवे योग्य है, तुम राजतैं सम्यग्दर्शनकूं विशेष भला जानियो। यह राज्य तो अविनाशी सुखका दाता है सो अभव्य जीव निंदा करैं तो उनकी निंदाके भयसे हे पुरुषोत्तम ! सम्यग्दर्शनकूं कदाचित् न तजना, यह अत्यंत दुर्लभ है। जैसै हाथविषैं आया रत्न समुद्रविषैं डालिए तौ बहुरि कौन उपायसूं हाथ आवैं। अर अमृतफल अंधकूपमें डारचा बहुरि कैसैं मिले। जैसै अमृतफलकूं डाल बालक पश्चाताप करै, तैसैं सम्यग्दर्शनसे रहित हुवा जीव विषाद करै है। यह जगत् दुर्निवार है जगत्का मुख बंद करवेकूं कौन समर्थ ? जाके मुखमें जो आवे सो ही कहै। तातैं जगत्की बात सुनकर जो योग्य होय सो करियो। लोक गडलिका प्रवाह है सो अपने हृदयविषैं हे गुणभूषण ! लौकिक वार्ता न धरणी। अर दानसूं प्रीतिके योगकरि जनोंकूं प्रसन्न रखना, अर विमल स्वभावकर मित्रोंकूं वश करना, अर साधु तथा आर्यिका आहारकूं आवैं तिनकूं प्रासुक अन्नसूं अति भक्तिकर निरंतर आहार देना, अर चतुर्विध संघकी सेवा करनी, मन वचन कायकरि मुनिकूं प्रणाम पूजन अर्चनादिकरि शुभ कर्म उपार्जन करना, अर क्रोधकूं क्षमाकरि, मनकूं निगर्वताकरि, मायाकूं निष्कपटताकरि, लोभकूं संतोषकरि जीतना। आप सर्व शास्त्रविषैं प्रवीण हो सो हम तुमकूं उपदेश देनेकूं समर्थ नाहीं, क्योंकि हम स्त्रीजन हैं, आपकी कृपाके योगकरि कभी कोई परिहास्यकरि अविनय भरा वचन कहा हो, तो क्षमा करियो। ऐसा कहकर रथसूं उतर, अर तृण पाषाणकर भरी जा पृथ्वी उसमें अचेत होय मूर्च्छा खाय पड़ी सो जानकी भूमिविषैं पड़ी ऐसी सोहती भई मानों रत्नोंकी राशि ही पड़ी है। कृतांतवक्र सीताकूं चेष्टारहित मूर्च्छित देख महा दुखी भया, अर चित्तविषैं चिंतवता भया-हाय यह महा भयानक वन, अनेक दुष्ट

जीवोंकरि भरया, जहां जे महा धीर शूरवीर होंय तिनके भी जीवनेकी आशा नाहीं तो यह कैसे जीवेगी ? इसके प्राण बचना कठिन हैं, इस महासती माताकूं मैं अकेली बनविषै तजकर जाऊं हू सो मुझ समान निर्दई कौन ? मुझे किसी प्रकारभी किसी ठौर शांति नाहीं,एक तरफ स्वामीकी आज्ञा, अर एक तरफ ऐसी निर्दयता ? मैं पापी दुखके भंवरविषै पड़ा हू, धिक्कार पराई सेवाकूं, जगत्‌विषै निंद्य पराधीनता, जो स्वामी कहे सो ही करना। जैसे यंत्रकूं यंत्री बजावैं त्योंही बाजे सो पराया सेवक यंत्र तुल्य है, अर चाकरसूं कूकर भला जो स्वाधीन आजीविका पूर्ण करै है। जैसैं पिशाचके वश पुरुष ज्यो वह बकावैं त्यों बकै, तैसैं नरेंद्रके वश नर वह जो आज्ञा करे सो करै, चाकर क्या न करै अर क्या न कहै। अर जैसें चित्रामका धनुष निष्प्रयोजन, गुण कहिये फिणचकूं धरै है, सदा नम्रीभूत है, तैसें पर-किंकर निःप्रयोजन गुणकूं धरे है सदा नम्रीभूत है, धिक्कार किंकरका जीवना, पराई सेवा करना तेज-रहित होना है। जैसे निर्माल्य वस्तु निंद्य है तैंसे परकिंकरता निंद्य है। धिग् धिक् पराधीनके प्राण धारणकूं,यह पराधीन पराया किंकर टीकली समान है, जैसैं टीकली परतंत्र होय कूपका जीव कहिए जल हरै है, तैसे यह परतंत्र होय पराए प्राण हरै है। कभी भी चाकरका जन्म मत होवे,पराया चाकर काठकी पुतली समान है ज्यों स्वामी नचावैं त्यों नाचै। उच्चता उज्ज्वलता लज्जा अर कांति तिनसे पर-किंकर रहित है, जैसे विमान पराये आधीन है चलाया चाले,थमाया थमें, ऊंचा चलावे तो ऊंचा चढ़े, नीचा उतारे तो नीचा उतरे। धिकार पराधीनके जीतव्यकूं जो निर्मल अपने मांसकूं बेचनहारा महालघु अपने अधीन नाहीं,सदा परतंत्र। धिकार किंकरके प्राण धारणकूं, मैं पराई चाकरी करी, अर परवश भया, तो ऐसे पाप कर्मकूं करूं हूं, जो इस निर्दोष महासतीकूं अकेली भयानक वनविषैं तजकर जाऊं हू। हे श्रेणिक ! जैसे कोई धर्मकी बुद्धिकूं तजै, तैसें वह सीताकूं वनविषैं तजकर अयोध्याकूं सन्मुख भया अतिलज्जावान होयकर चाल्या। सीता याके गए पाछे केतीक वारमें मूर्च्छासे सचेत होय महा दुखकी भरी यूथ-भ्रष्ट मृगीकी न्याईं विलाप करती भई सो याके रुदनकर मानों सबही वनस्पति रुदन करै हैं, वृक्षनिके पुष्प पड़े हैं सोई मानों आंसू भए। स्वतः-स्वभाव महारमणीक याके स्वर तिनकर विलाप करती भई महा शोककी भरी, हाय कमलनयन राम नरोत्तम, मेरी रक्षा करहु,मोहि वचनालाप करहु। अर तुम तो निरंतर उत्तम चेष्टाके धारक हो, महागुणवंत शांतचित्त हो, तिहारा लेशमात्र हू दोष नाहीं, तुम तो पुरुषोत्तम हो, मैं पूर्वभवविषैं जो अशुभ कर्म किए थे तिनके फल पाये, जैसा करना तैसा भोगना ? कहा करे भर्तार, अर कहा करे पुत्र, तथा माता पिता बांधव कहा करे ? अपना कर्म अपने उदय आवै सो अवश्य भोगना। मैं मन्दभागिनी पूर्व जन्मविषैं अशुभ कर्म किये ताके फलतैं या निर्जन वनविषैं दुखकूं प्राप्त भई। मैं पूर्व भवविषैं काहूका

अपवाद किया, परनिंदा करी होगी, ताके पापकरि यह कष्ट पाया। तथा पूर्व भवविषैं गुरुनिके समीप व्रत लेकर भग्न किया ताका यह फल पाया। अथवा विषफल समान जो दुर्वचन तिनकर काहूकूं अपमान किया तातैं यह फल पाये। अथवा मैं परभवविषैं कमलनिके वनविषैं तिष्ठता चकवा-चकवीका युगल विछोया तातैं मोहि स्वामीका वियोग भया, अथवा मैं परभवविषैं कुचेष्टा कर हंस-हंसिनीका युगल विछोड़ा जे कमलनिकर मंडित सरोवरमें निवास करणहारे, अर बड़े बड़े पुरुषनिकूं जिनकी चालकी उपमा दीजे, अर जिनके वचन अति सुंदर, जिनके चरण चोंच लोचन कमल समान अरुण, सो मैं विछोड़े तिनके दोषकरि ऐसी दुख अवस्थाकूं प्राप्त भई। अथवा मैं पापिनि कबूतर-कबूतरीके युगल विछोड़े हैं, जिनके लाल नेत्र आभिचिरमें समान, अर परस्पर जिनविषैं अतिस्नेह, अर कृष्णागुरु समान जिनका रंग अथवा श्याम घटा-समान, अथवा धूम-समान धूसरे, आरंभी है मुखसे क्रीड़ा जिन्होने अर कंठविषैं तिष्ठै है मनोहर शब्द जिनके सो मैं पापिनी जुदे कीए, अथवा भले स्थानसूं बुरे स्थानमें मेले, अथवा बांधे मारे, ताके पापकरि असंभाव्य दुःख मोहि प्राप्त भया। अथवा वसंतके समय फूले वृक्ष तिनविषैं केलि करते कोकिलीके युगल महामिष्ट शब्दके करणहारे परस्पर भिन्न-भिन्न कीये, नका यह फल है, अथवा ज्ञानी जीवनिके वंदिवे योग्य महाव्रती जितेंद्रिय महा मुनि तिनकी निंदा करी, अथवा पूजा दानविषैं विघ्न किया, अर परोपकारविषैं अंतराय किए, हिंसादिक पाप किए, ग्रामदाह, वनदाह स्त्री बालक पशु घात इत्यादि पाप किए तिनके यह फल हैं, अनछाना पानी पिया रात्रिकूं भोजन किया, बीधा अन्न भखा, अभक्ष्य वस्तुका भक्षण किया, न करिवे योग्य काम किए, तिनका यह फल है। मैं बलभद्रकी पटरानी, स्वर्गसमान महलकी निवासिनी, हजारां सहेली मेरी सेवाकी करणहारी, सो अब पापके उदयकरि निर्जन वनविषैं दुखके सागरविषैं डूबी कैसैं तिष्ठूं? रत्ननिके मंदिरविषैं महा रमणीक बस्त्र तिनकर शोभित सुंदर सेजपर शयन करणहारी मैं यहां पड़ी हू, सब सामग्रीकरि पूर्ण महा रमणीक महलविषैं रहनहारी मैं अब कैसे अकेली वनका निवास करूंगी? महा मनोहर वीण बांसुरी मृदंगादिके मधुर स्वर तिनकर सुख निद्रा की लेनहारी मैं कैसे भयंकर शब्दकर भयानक वनविषैं अकेली तिष्ठूंगी, रामदेवकी पटराणी अपयशरूपी दावानल कर जरी महा दुःखिनी एकाकिनी पापिनी कष्टका कारण जो वन जहां अनेक जातिके कीट अर करकस डाभकी अणी अर कांकरनिसे भरी पृथिवी याविषैं कैसैं शयन करूंगी? ऐसी अवस्था भी पायकर मेरे प्राण न जांय तो ये प्राण ही वज्रके हैं, अहो ऐसी अवस्था पायकरि मेरे हृदयके सौ टूक न होय हैं सो यह वज्रका हृदय है। कहा करूं, कहां जाऊं, कौनसूं कहा कहू, कौनके आश्रय तिष्ठूं? हाय गुणसमुद्र राम! मोहि क्यो तजी? हे महा भक्त लक्ष्मण! मेरी क्यों न सहाय करी। हाय पिता जनक! हाय माता विदेही! यह कहा भया? अहो विद्याधरनिके

स्वामी भामंडल ! मैं दुखके भंवर पड़ी कैसे तिष्ठूं ? मैं ऐसी पापिनी जो मोसहित पतिने परम संपदाकर जिनेंद्रका दर्शन अर्चन चिंतया था सो मोहि इस वनीविषैं डारी।

हे श्रेणिक ! या भांति सीता सती विलाप करै है। अर राजा वज्रजंघ पुंडरीकपुरका स्वामी हाथी पकड़िवे निमित्त वनमें आया था सो हाथी पकड़ बड़ी विभूतिसे पाछे जाय था सो ताकी सेनाके प्यादे शूरवीर कटारी आदि नाना प्रकारके शस्त्र धरे कमर बांधे आय निकसे सो याके रुदनके मनोहर शब्द सुनकर संशयकूं अर भयकूं प्राप्त भए, एक पैंड़ भी न जाय सके। अर तुरंगनीके सवार हू ताका रुदन सुन खड़े होय रहे, उनको यह आशंका उपजी जो या वनविषैं अनेक दुष्ट जीव तहां यह सुंदर स्त्रीके रुदनका नाद कहां होय है ? मृग सुसा रीछ सांप रोझ ल्याली बघेरा आरणे भैंसे चीता गैंडा शार्दूल अष्टापद वनशूकर गज तिनकर विकराल यह वन ताविषैं यह चंद्रकला-समान महामनोज्ञ कौन रोवै है ? यह कोई देवांगना सौधर्म स्वर्गसे पृथिवीविषै आई है। यह विचारकर सेनाके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त होय खड़े रहे। अर वह सेना समुद्र समान, जिसमें तुरंग ही मगर, अर प्यादे मीन, अर हाथी ग्राह हैं। समुद्र भी गाजे अर सेना भी गाजे है, अर समुद्रमें लहर उठै हैं सेनामें सूर्यकी किरणकरि शस्त्रों की जोति उठै है, समुद्र भी भयंकर है सेना भी भयंकर है, सो सकल सेना निश्चल होय रही।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं सीताका वनविषैं विलाप अर वज्रजंघका आगमन वर्णन करनेवाला सत्तानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९७॥

अट्ठानवेवां पर्व

[वनमें वज्रजंघका आगमन और सीताको आश्वासन]

अथानन्तर जैसी महाविद्याकी थांभी गंगा थंभी रहै, तैसैं सेनाकूं थंभा देख राजा वज्रजंघ निकटवर्ती पुरुषोंकूं पूछता भया कि सेनाके थंभनेका कारण क्या है ? तब वह निश्चयकर राजपुत्रीके समाचार कहते भये। उससे पहिले राजाने भी रुदनके शब्द सुने, सुनकर कहता भया जिसका यह मनोहर रुदनका शब्द सुनिये सो कहो कौन है ? तब कई एक अग्रेसर होय जायकर पूंछते भये—हे देवि ! तू कौन है, अर इस निर्जन वनविषै क्यों रुदन करै है, तो समान कोऊ और नाहीं, तू देवी है अक नागकुमारी है, अक कोई उत्तम नारी है ? तू महा कल्याणरूपिणी, उत्तम शरीरकी धरणहारी, तोहि यह शोक कहा ? हमकूं यह बड़ा कौतुक है। तब यह शस्त्रधारक पुरुषकूं देख त्रासकूं प्राप्त भई, कांपै है शरीर जाका, सो भयकरि उनको अपने आभरण उतारकरि देने लगी। तब वे स्वामीके भयकरि यह कहते भये—हे

देवि ! तू क्यों डरै है, शोककूं तज धीरता भज । आभूषण हमकूं काहेकूं देवे है, तेरे ये आभूषण तेरे ही रहो ये तोहि योग्य है। हे माता ! तू विह्वल क्यों होय है, विश्वास गह । यह राजा वज्रजंघ पृथिवीविषै प्रसिद्ध महा नरोत्तम राजनीतिकर युक्त है, अर सम्यग्दर्शन रूप रत्न भूषणकरि शोभित है, कैसा है सम्यग्दर्शन ? जिस समान और रत्न नाहीं, अविनाशी है अमोलिक हैं, काहूसे हरया न जाय, महा सुखका दायक शंकादिक मल रहित सुमेरु सारिखा निश्चल है । हे माता ! जाके सम्यग्दर्शन होवे उसके गुण हम कहां लग वर्णन करैं । यह राजा जिनमार्गके रहस्यका ज्ञाता शरणागत-प्रतिपालक है, परोपकारमें प्रवीण, महा दयावान महा निर्मल पवित्रात्मा निंद्यकर्मसूं निवृत्त, लोकोंका पिता-समान रक्षक, महा दातार जीवोंकी रक्षाविषैं सावधान, दीन अनाथ दुर्बल देहधारियोंकूं माता-समान पालैं है । कार्यका करणहारा सिद्धि शत्रुरूप पर्वतनिकूं वज्रसमान हैं, शस्त्रविद्याका अभ्यासी परधनका त्यागी, परस्त्रीकूं माता बहिन बेटीके समान मानै है, अन्यायमार्गकूं अजगरसहित अन्धकूप समान जानै है, धर्मविषै तत्पर अनुरागी संसारके भ्रमणसे भयभीत सत्यवादी जितेन्द्रिय है, याके समस्त गुण जो मुखसूं कहा चाहै, सो भुजानिकर समुद्रकूं तिरा चाहै है । ये बात वज्रजंघके सेवक कहै है, इतनेविषैं ही राजा आप आया, हाथीसे उतरि बहुत विनय करि सहज ही है सुन्दर दृष्टि जाकी सो सीताने कहता भया—हे बहिन ! वह वज्रसमान कठोर महा असमझ है जो तोहि ऐसे वनमें तजै, अर तोहि तजके जाका हृदय न फट जाय । हे पुण्यरूपिणी ! अपनी अवस्थाका कारण कहि, विश्वासकूं भजि, भय मतकर । अर गर्भका खेद मत कर । तब यह शोककरि पीड़ित चित् बहुरि रुदन करती भई । राजाने बहुत धैर्य बंधाया, तब यह हंसकी न्याई आसूं डार गद्गद वाणीतैं कहती भई—हे राजन् ! मो मन्दभागिनीकी कथा अत्यन्त दीर्घ है, यदि तुम सुना चाहो हो तो चित्त लगाय सुनो । मै राजा जनककी पुत्री, भामण्डलकी बहिन, राजा दशरथके पुत्रकी वधू, सीता मेरा नाम, राम की रानी । राजा दशरथने केकईकूं वरदान दिया हुता सो भरतकूं राज्य देकर राजा वैरागी भये । अर राम लक्ष्मण वनकूं गए सो मैं पतिके संग वनमें रही, रावण कपटसे मोहि हर ले गया, ग्यारहवें दिन मैंने पतिकी वार्ता सुन भोजन किया । पति सुग्रीवके घर रहे बहुरि अनेक विद्याधरनिकूं एकत्रकर आकाशके मार्ग होय समुद्रकूं उलंघ लंका गये, रावणकूं जीत मोहि ल्याये । बहुरि राजरूप कीचकूं तज भरत तो वैरागी भये । कैसे हैं भरत ? जैसे ऋषभदेवके भरत चक्रवर्ती, तिन समान हैं उपमा जिनकी, सो भरत तो कर्मकलंक रहित परधामकूं प्राप्त भये । अर केकई शोकरूप अग्निकर आतापकूं प्राप्त भई, बहुरि वीतरागका मार्ग सार जानकर आर्यिका होय महा तपसे स्त्रीलिंग छेद स्वर्गविषै देव भई । मनुष्य होय मोक्ष पावेगी । राम लक्ष्मण अयोध्याविषै इन्द्रसमान राज्य करै, सो लोक दुष्टचित्त निश्शंक होय अपवाद करते भये कि रावण हरकर सीताकूं ले गया, बहुरि राम ल्याय घरमें राखी । सो राम महा विवेकी धर्म-

शास्त्रके वेत्ता न्यायवन्त ऐसी रीति क्यों आचरैं, जिस रीति राजा प्रवर्ते उसी रीति प्रजा प्रवर्ते सो लोक मर्यादा-रहित होने लगे, कहैं--रामहीके घर यह रीति, तो हमकूं कहा दोष ? अर मैं गर्भसहित दुर्बल शरीर यह चिंतवन करती हुती कि जिनेन्द्रके चैत्यालयोंकी अर्चना करूंगी, अर भरतार भी मुझ सहित जिनेंद्रके निर्वाण स्थानक अर अतिशय स्थानक तिनकूं वंदना करनेकूं भावसहित उद्यमी भये हुते अर मोहि ऐसे कहते थे कि प्रथम तो हम कैलाश जाय श्री ऋषभदेवके निर्वाण क्षेत्र वंदेंगे, बहुरि और निर्वाणक्षेत्रकूं वंदकरि अयोध्याविषै ऋषभ आदि तीर्थंकर देवनिका जन्मकल्याणक है सो अयोध्याकी यात्रा करेंगे, जेते भगवान्‌के चैत्यालय हैं तिनका दर्शन करैंगे, कंपिल्या नगरीविषैं विमलनाथका दर्शन करेंगे, अर रत्न पुरमैं धर्मनाथका दर्शन करैंगे। कैसे हैं धर्मनाथ ? धर्मका स्वरूप जीवनिकूं यथार्थ उपदेशै हैं बहुरि श्रावस्ती नगरी संभवनाथका दर्शन करेंगे। अर चम्पापुरमें वासुपूज्यका अर काकंदीपुरमें पुष्पदंतका, चंद्रपुरीविषै चंद्रप्रभका, कौशांबीपुरीमें पद्मप्रभका, भद्रलपुरमें शीतलनाथका अर मिथिलापुरीमें मल्लिनाथ स्वामीका दर्शन करेंगे, अर वाणारसीमें सुपार्श्वनाथ स्वामीका दर्शन करेंगे, अर सिंहपुरीमें श्रेयांसनाथका, अर हस्तनाग पुरमें शांति कुंथु अरहनाथका पूजन करैंगे। अर हे देवि ! कुशाग्रनगरमे श्रीमुनिसुव्रतनाथका दर्शन करैंगे। जिनका धर्मचक्र अब प्रवर्तै है अर और हू जे भगवानके अतिशय स्थानक महापवित्र हैं पृथिवीमें प्रसिद्ध हैं तहां पूजा करैंगे, भगवान्‌के चैत्यालय अर सुर असुर अर गंधर्वनिकर स्तुति करिवे योग्य हैं, नमस्कार योग्य हैं तिन सबनिकी वंदना हम करैंगे, अर पुष्पक विमानविषैं चढ़ सुमेरुके शिखरपर जे चैत्यालय हैं तिनका दर्शनकरि भद्रशाल वन नंदन वन सौमनस वन तहां जिनेंद्रकी अर्चाकरि अर कृत्रिम अकृत्रिम अढाई द्वीपविषैं जेते चैत्यालय हैं तिनकी वंदनाकरि हम अयोध्याकूं आवैंगे।

हे प्रिये ! भावसहित एक वार हू नमस्कार श्रीअरहंतदेवकूं करैं तो अनेक जन्मके पापनिसे छूटैं हैं। हे कांते ! धन्य तेरा भाग्य जो गर्भके प्रादुर्भावविषैं तेरे जिन वंदनाकी वांछा उपजी। मेरे हू मनमें यही है तो सहित महापवित्र जिनमंदिरनिका दर्शन करूं। हे प्रिये ! पहिले भोगभूमिविषै धर्मकी प्रवृत्ति न हुती, लोक असमझ थे सो भगवान् ऋषभदेवने भव्योंकूं मोक्षमार्गका उपदेश दिया। जिनकूं संसारभ्रमणका भय होय तिनको भव्य कहिये। कैसे हैं भगवान् ऋषभ ? प्रजाके पति जगत्‌विषैं श्रेष्ठ त्रैलोक्यकरि वंदिवे योग्य नानाप्रकार अतिशयकर संयुक्त, सुर नर असुरनिकूं आश्चर्यकारी, ते भगवान् भव्यनिकूं जीवादिक तत्वोंका उपदेश देय अनेकनिकूं तारि निर्वाण पधारे, सम्यक्त्वादि अष्ट गुणमंडित सिद्ध भए, जिनका चैत्यालय सब रत्नमई भरत चक्रवर्तीने कैलाश पर कराया अर पांचसै धनुषकी रत्नमई प्रतिमा सूर्यहूतें अधिक तेजकूं धरे मंदिरविषै पधराई सो विराजै है जाकी अबहू देव विद्याधर गंधर्व किन्नर नाग दैत्य

पूजा करै हैं,जहां अप्सरा नृत्य करै हैं,जो प्रभु स्वयंभू सर्वगति निर्मल त्रैलोक्यपूज्य,जाका अंत नाहीं अनंतरूप अनन्त ज्ञान विराजमान परमात्मा सिद्ध शिव आदिनाथ ऋषभ तिनकी कैलाश पर्वत पर हम चलकर पूजा कर स्तुति करेंगे ? वह दिन कब होयगा, या भांति मोसूं कृपा कर वार्ता करते थे। अर ताही समय नगरके लोक भेले होय आय लोकापवादको दावानलसे दुस्सह वार्ता रामसूं कही सो राम बड़े विचारके कर्ता चित्तमे यह चिंतई यह लोक स्वभावही कर वक्र हैं सो और भांति अपवाद न मिटै या लोकापवादसे प्रिय जनकूं तजना भला, अथवा मरणा भला। लोकापवादतैं यशका नाश होय कल्पांतकाल पर्यंत अपयश जगत्में रहै, सो भला नाहीं, ऐसा विचार महाप्रवीण मेरा पति ताने लोकपवादके भयतैं मोहि महा अरण्यवनमें तजा। मैं दोष-रहित सो पति नीके जाने। अर लक्ष्मणने बहुत कहा सो न माना, मेरे ऐसा ही कर्मका उदय। जे विशुद्ध कुलमें उपजे क्षत्री शुभ चित्त सर्व शास्त्रनिके ज्ञाता तिनकी यही रीति है जो काहू से न डरैं, एक लोकापवादसे डरैं। यह अपने निकासनेका वृत्तांत कह बहुरि रुदन करने लगी शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान है चित्त जाका। सो याकूं रुदन करती अर रजकर धूसरा है अंग जाका महा दीन दुखी देख राजा वज्रजंघ उत्तम धर्मका धरणहारा अति उद्वेगकूं प्राप्त भया, अर याकूं जनककी पुत्री जान समीप आय बहुत आदरसे धैर्य बंधाया, अर कहता भया, हे शुभमते ! तू जिनशासनमें प्रवीण है, शोक कर रुदन मत करै। यह आर्तध्यान दुखका बढावनहारा है। हे जानकी ! या लोककी स्थिति तू जाने है तू महा सुज्ञान अनित्य अशरण एकत्व अन्यत्व इत्यादि द्वादश अनुप्रेक्षावोंकी चिंतवन करणहारी, तेरा पति सम्यग्दृष्टि अर तू सम्यक्त्वसहित विवेकवन्ती है, मिथ्यादृष्टि जीवनिकी न्याई कहा बारम्बार शोक करै ? तू जिन-वाणीकी श्रोता अनेक बार महा मुनिनिके मुख श्रुतिके अर्थ सुने, निरंतर ज्ञान भावकूं धरणहारी तोहि शोक उचित नाहीं। अहो या संसारमे भ्रमता यह मूढ प्राणी वाने मोक्षमार्गकूं न जाना,यातैं कहा कहा दुख न पाये। याकूं अनिष्टसंयोग इष्टवियोग अनेक बार भये। यह अनादिकालसूं भवसा-गरके मध्य क्लेशरूप भंवरमें पड़ा है, या जीवने तिर्यंच-योनिविषैं जलचर थलचर नभचरके शरीर धर वर्षा शीत आताप आदि अनेक दुख पाये, अर मनुष्य देहविषैं अपवाद विरह रुदन क्लेशादि अनेक दुख भोगे,अर नरकविषैं शीत उष्ण छेदन भेदन शूलारोहण परस्पर घात महा दुर्गंध क्षीरकुंडविषैं निपात अनेक रोग अनेक दुख लहे, अर कबहू अज्ञान तपकरि अल्प ऋद्धिका धारक देव हू भया तहां हू उत्कृष्ट ऋद्धिके धारक देवनिकूं देख दुखी भया,अर मरण समय महा दुखी होय विलापकर मूवा। अर कबहू महा तपकर इन्द्रतुल्य उत्कृष्ट देव भया तोहू विषयानुरागकरि दुखी ही भया। या भांति चतुर्गतिविषैं भ्रमण करते या जीवने भववनविषैं आधि-व्याधि, संयोग-वियोग, रोग-शोक, जन्म-मृत्यु,दुख-दाह, दरिद्र-हीनता, नानाप्रकारकी वांछा विकल्पताकर शोच संतापरूप होय अनन्त दुख पाये,अधोलोक मध्यलोक ऊर्ध्वलोकविषैं ऐसा स्थानक नाहीं जहां या जीवने जन्म मरण न किये ?

अपने कर्मरूप पवनके प्रसंगकर भवसागरविषैं भ्रमण करता जो यह जीव ताने मनुष्य देहविषैं स्त्रीका शरीर पाया तहां अनेक दुख भोगे। तेरे शुभ कर्मके उदयकरि राम-सारिखे सुन्दर पति भये, जिनके सदा शुभका उपार्जन सो पुण्यके उदय करि पति-सहित महा सुख भोगे। अर अशुभके उदयतैं दुस्सह दुखकूं प्राप्त भई, लंकाद्वीपविषैं रावण हर कर ले गया तहां पतिकी वार्ता न सुन ग्यारह दिनतक भोजन विना रही। अर जबतक पतिका दर्शन न भया तब तक आभूषण सुगन्ध लेपनादि-रहित रही। बहुरि शत्रुको हत पति ले आये तब पुण्यके उदयतें सुखकूं प्राप्त भई। बहुरि अशुभका उदय आया तब विना दोष गर्भवतीकूं पतिने लोकापवादके भयतैं घरतैं निकासी, लोकापवादरूप सर्पके डसिवेकर पति अचेत चित्त भया सो विना समझे भयंकर वनमें तजी। उत्तम प्राणी पुण्यरूप पुष्पनिका घर ताहि जो पापी दुर्वचनरूप अग्निकर बालै हैं सो आपही दोषरूप दहन करि दाहकूं प्राप्त होय। हे देवि! तू परम उत्कृष्ट पतिव्रता महासती है, प्रशंसायोग्य है चेष्टा जाकी, जाके गर्भाधानविषैं चैत्यालयनिके दर्शनकी वांछा उपजी, अबहू तेरे पुण्यहीका उदय है, तू महा शीलवती जिनमती है, तेरे शीलके प्रसाद करि या निर्जन-वनविषैं हाथीके निमित्त मेरा आवना भया। मैं वज्रजंघ पुण्डरीकपुरका अधिपति राजा द्विरदवाह सोमवंशी महाशुभ आचरणके धारक तिनके सुबंधु महिषी नामा रानी ताका मैं पुत्र, तू मेरे धर्मके विधानकर बड़ी बहिन है। पुंडरीकपुर चालहु, शोक तज। हे बहिन! शोकसे कछू कार्यसिद्धि नाहीं, वहां पुण्डरीकपुरसें राम तोहि ढूंढ कृपाकर बुलावेंगे। राम हू तेरे वियोगसूं पश्चात्तापकरि अति व्याकुल हैं, अपने प्रमादकरि अमोलक महा गुणवान रत्न नष्ट भया, ताहि विवेकी महा आदरसे ढूंढैं ही। तातैं हे पतिव्रते! निसंदेह राम तुझे आदरसूं बुलावेंगे। या भांति वा धर्मात्माने सीताकूं शांतता उपजाई, तब सीता धैर्यकूं प्राप्त भई मानो भाई भामंडल ही मिला। तब वाकी अति प्रशंसा करती भई, तू मेरा अति उत्कृष्ट भाई है, महा यशवंत शूरवीर बुद्धिमान् शांतचित्त साधर्मिनिपर वात्सल्यका करणहारा उत्तम जीव है। गौतम स्वामी कहे हैं—हे श्रेणिक! राजा वज्रजंघ अधिगमसम्यग्दृष्टि, अधिगम कहिए गुरूपदेशकरि पाया है सम्यक्त जाने, अर ज्ञानी है परम तत्वका स्वरूप जाननहारा, पवित्र है आत्मा जाकी, साधु समान है। जाके व्रत गुण शीलकर संयुक्त मोक्षमार्गका उद्यमी, सो ऐसे सत्पुरुषनिके चरित्र दोषरहित पर-उपकारकर युक्त कौनका शोक न निवारैं। कैसे हैं सत्पुरुष? जिनमतविषैं अति निश्चल है चित्त जिनका। सीता कहै है—हे वज्रजंघ! तू मेरे पूर्वभवका सहोदर है सो जो या भवविषैं तैनैं सांचा भाईपना जनाया, मेरा शोक संतापरूप तिमिर हरा, सूर्यसमान तू पवित्र आत्मा है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं सीताकूं वज्रजंघका धैर्य बंधावनेका वर्णन करनेवाला अठानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९८॥

निन्यानवेवां पर्व

[सीताका वज्रजंघके साथ जाना और मार्गमें सर्वत्र सन्मान पाना]

अथानंतर वज्रजंघने सीताके चढ़िवेकूं क्षणमात्रविषैं अद्भुत पालकी मंगाई सो सीता तापर आरूढ़ भई। पालकी विमान-समान महा मनोज्ञ समीचीन प्रमाणकर युक्त, सुंदर हैं थंभ जाके श्रेष्ठ दर्पण थंभोविषैं जड़े हैं, अर मोतिनिकी झालरीकरि पालकी मंडित है, अर चंद्रमा समान उज्ज्वल चमर तिनकर शोभित है, मोतिनके हार जलके बुदबुदे समान शोभैं हैं, अर विचित्र जे वस्त्र तिनकर मंडित है चित्रामकर शोभित है सुंदर हैं झरोखा जाविषैं ऐसी सुख-पालपर चढ़ परम ऋद्धिकर युक्त बड़ी सेना मध्य सीता चली जाय है, आश्चर्यकूं प्राप्त भई कर्मोंकी विचित्रताकूं चिंतवे है। तीन दिनविषैं भयंकर वनकूं उलंघ पुंडरीक देशविषैं आई, उत्तम है चेष्टा जाकी। सर्व देशके लोक माताकूं आय मिले ग्राम ग्रामविषैं भेंट करैं। कैसा है वज्रजंघका देश? समस्त जातिके अन्नकर जहां समस्त पृथिवी आच्छादित होय रही है अर कूकडा उडान नजीक हैं ग्राम जहां रत्ननिकी खान, रूपादिककी खान, सुरपुर जैसे पुर, सो देखती थकी सीता हर्षकूं प्राप्त भई। वन उपवनकी शोभा देखती चली जाय है, ग्रामके महंत भेंटकर नाना प्रकार स्तुति करैं हैं—हे भगवति! हे माता! आपके दर्शनकर हम पाप-रहित भए, कृतार्थ भए, अर बारंबार वंदना करते भए। अर्घपाद्य किए। अर अनेक राजा देवनि-समान आय मिले सो नाना प्रकार भेंट करते भए अर बारंबार वंदना करते भए। या भांति सीता सती पैंड पैंड पर राजा प्रजानिकर पूजी संती चली जाय है। वज्रजंघका देश अतिसुखी, ठौर ठौर वन उपव-नादिकरि शोभित, ठौर ठौर चैत्यालय देख अति हर्षित भई मन विषैं विचारै है जहां राजा धर्मात्मा होय वहां प्रजा सुखी होय ही। अनुक्रमकर पुंडरीकपुरके समीप आए। राजाकी आज्ञातैं सीताका आगमन सुन नगरके सब लोक सन्मुख आए। अर भेंट करते भए, नगरकी अति शोभा करी, सुगधकर पृथिवी छांटी, गली बजार सब सिंगारे, अर इन्द्रधनुष समान तोरण चढाए, अर द्वारनिविषैं पूर्ण कलश थापे, जिनके मुख सुन्दर पल्लवयुक्त हैं, अर मंदिरनिपर ध्वजा चढ़ीं, अर घर घर मंगल गावैं हैं मानो वह नगर आनन्दकर नृत्य ही करै हैं। नगरके दरवाजेपर तथा कोटके कंगूरनिपर लोक खड़े देखे हैं, हर्षकी वृद्धि होय रही है, नगरके बाहिर अर भीतर राजद्वारतक सीताके दर्शनकूं लोक खड़े हैं, चलायमान जे लोकनिके समूह तिनकर नगर यद्यपि स्थावर है तथापि जानिए जंगम होय रह्या है। नाना प्रकारके वादित्र बाजै हैं तिनके नादकर दशों दिशा शब्दायमान होय रही हैं शंख बाजैं है, बंदीजन बिरद बखानैं हैं, समस्त नगरके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए देखै हैं। अर सीताने नगरविषैं प्रवेश किया, जैसैं लक्ष्मी देवलोकविषैं प्रवेश

करै। वज्रजंघके मंदिरविषैं अति सुन्दर जिनमंदिर हैं, सर्व राजलोककी स्त्रीजन सीताके सन्मुख आई, सीता पालकीसूं उतर जिनमंदिरविषैं गई। कैसा है जिनमंदिर? महा सुन्दर उपवनकर वेष्टित है, अर वापिका सरोवरी तिनकर शोभित है, सुमेरु-शिखर समान सुन्दर स्वर्णमई है। जैसैं भाई भामंडल सीताका सन्मान करै, तैसैं वज्रजंघ आदर करता भया। वज्रजंघके समस्त परिवारके लोक अर राजलोककी समस्त रानी सीताकी सेवा करैं, अर ऐसे मनोहर शब्द निरंतर कहै हैं—हे देवते! हे पूज्ये! हे स्वामिनि! हे ईशानने! सदा जयवंत होहु, बहुत दिन जीवो आनन्दकूं प्राप्त होहु, वृद्धिकूं प्राप्त होहु, आज्ञा करहु। या भांति स्तुति करैं अर जो आज्ञा करैं सो सीस चढ़ावैं, अति हर्षसूं दौरकर सेवा करैं अर हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार करैं। वहां सीता अति आनन्दतैं जिनधर्मकी कथा करती तिष्ठै। अर जो सामंतनिकी भेंट आवै, अर राजा भेंट करे, सो जानकी धर्मकार्यविषैं। लगावै यह तो यहां धर्मकी आराधना करै है।

(सेनापतिका अयोध्या वापिस लौटना और सीताका रामसे संदेश कहना)

अर वह कृतान्तवक्र सेनापति तप्तायमान है चित्त जाका, रथके तुरंग खेदकूं प्राप्त भए हुते तिनकूं खेदरहित करता हुआ श्रीरामचन्द्रके समीप आया। याकूं आवता सुन अनेक राजा सन्मुख आये सो कृतान्तवक्र आयकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणनिकूं नमस्कार कर कहता भया--हे प्रभो! मैं आज्ञाप्रमाण सीताकूं भयानक वनविषै मेलकर आया हू वाके गर्भमात्र ही सहाई है। हे देव! वह वन नानाप्रकारके भयंकर जीवनिके अति घोर शब्दकर महा भयकारी है, अर जैसा वैताल कहिये प्रेतनिका वन ताका आकार देखा न जाय तैसैं सघन वृक्षनिके समूह कर अंधकाररूप है, जहां स्वतःस्वभाव आरणे भैंसे अर सिंह द्वेषकर सदा युद्ध करैं है, अर जहां घूघू बसैं हैं सो विरूप शब्द करैं हैं, अर गुफानिविषैं सिंह गुंजार करैं हैं सो गुफा गुंजार रही है, अर महाभयकंर अजगर शब्द करैं हैं, अर चीतानिकर हते गये हैं मृग जहां, कालकूं भी विकराल ऐसा वन ताविषैं हे प्रभो! सीता अश्रुपात करती महा दीनवदन आपकूं जो शब्द कहती भई सो सुनो--आप आत्मकल्याण चाहो हो तो जैसैं मोहि तजी, तैसैं जिनेंद्रकी भक्ति न तजनी। जैसैं लोकनिके अपवादकर मोमैं अति अनुराग हुता, तोहू तजी, तैसैं काहूके कहिवेतैं जिनशासनकी श्रद्धा न तजनी। लोक विना विचारे निर्दोषनिकूं दोष लगावैं हैं जैसैं मोहि लगाया सो आप न्याय करो सो अपनी बुद्धिमें विचार यथार्थ करना, काहूके कहेतैं काहूकूं झूठा दोष न लगवाना। अर सम्यग्दर्शनतैं विमुख मिथ्यादृष्टि जिनधर्मरूप रत्नका अपवाद करैं हैं, सो उनके अपवादके भयतैं सम्यग्दर्शनकी शुद्धता न तजनी, वीतरागका मार्ग उरविषैं दृढ धारणा। मेरे तजनेका या भवविषैं किंचितमात्र दुख है, अर सम्यग्दर्शनकी हानितैं जन्म जन्म-

विषैं दुख है। या जीवकूं लोकविषैं निधि रत्न स्त्री वाहन राज्य सबही सुलभ हैं एक सम्यग्दर्शन रत्न ही महा दुर्लभ है। राजविषैं पापकर नरकविषैं पड़ना है, एक ऊर्ध्वगमन सम्यग्दर्शनके प्रतापहीसे होय। जाने अपना आत्मा सम्यग्दर्शनरूप आभूषणकर मंडित किया सो कृतार्थ भया। ये शब्द जानकीने कहे हैं जिनकूं सुनकर कौनके धर्मबुद्धि न उपजै ? हे देव ! एक तो वह सीता स्वभावहीकर कायर अर महा भयंकर वनके दुष्ट जीवनितैं कैसैं जीवैगी ? जहां महा भयानक सर्पनिके समूह, अर अल्प जल ऐसे सरोवर तिनविषैं माते हाथी कर्दम करैं हैं, अर जहां मृगनिके समूह मृगतृष्णाविषैं जल जानि वृथा दौड व्याकुल होय हैं जैसैं संसारकी मायाविषैं रागकर रागी जीव दुखी होय। अर जहां कौंछिकी रजके संगकर मर्कट अति चंचल होय रहे हैं अर जहां तृष्णासूं सिंह व्याघ्र ल्यालियोंके समूह तिनकी रसनारूप पल्लव लहलहाट करै हैं। अर चिरमसमान लालनेत्र जिनके ऐसे क्रोधायमान भुजंग फुंकार करै हैं, अर जहां तीव्र पवनके संचारकर क्षणमात्रविषैं वृक्षनिके पत्रोंके ढेर होय हैं, अर महा अजगर तिनकी विषरूप अग्निकर अनेक वृक्ष भस्म होय गये हैं। अर माते हाथिनिकी महा भयंकर गर्जना ताकर वह वन अति विकराल है, अर वनके शूकरनिकी सेनाकर सरोवर मलिन जल होय रहे हैं। अर जहां ठौर ठौर भूमिविषैं कांटे अर सांठे अर सांपोंकी वामी अर कंकर पत्थर तिनकर भूमि महा संकटरूप हैं। अर डाभकी अणी सूईतैंहू अति पैनी हैं, अर सूके पान फूल पवनकर उड़े उड़े फिरै हैं ऐसे महा अरण्यविषैं, हे देव ! जानकी कैसैं जीवेगी, मैं ऐसा जानूं हूं क्षणमात्र हू वह प्राण रखिवेको समर्थ नाहीं।

(सीताका सन्देश सुनकर रामका विलाप करना और लक्ष्मणका समझाना)

हे श्रेणिक ! सेनापतिके यह वचन सुन श्रीराम अति विषादकूं प्राप्त भए, कैसे हैं वचन ? जिनकर निर्दईका भी मन द्रवीभूत होय। श्रीरामचन्द्र चिंतवते भए, देखो मो मूढचित्तने दुष्टनिके वचनकरि अत्यत निंद्य कार्य किया। कहां वह राजपुत्री, अर कहां वह भयंकर वन ? यह विचारकर मूर्च्छाकूं प्राप्त भये। बहुरि शीतोपचारकर सचेत होय विलाप करते भए। सीताविषैं है चित्त जिनका, हाय श्वेत श्याम रक्त तीन वर्णके कमल-समान नेत्रनिकी धरणहारी, हाय निर्मल गुणनिकी खान, मुखकर जीता है चन्द्रमा जाने, कमलकी किरण-समान कोमल, हाय जानकी मोसूं वचनालाप कर, तू जाने ही है कि मेरा चित्त तो विना अति कायर है। हे उपमारहित शीलव्रतकी धारणहारी, मेरे मनकी हरणहारी, हितकारी है आलाप जिसके, हे पापवर्जिते निरपराध, मेरे मनकी निवासनी तू कौन अवस्थाकूं प्राप्त भई होयगी ? हे देवि ! वह महा भयंकर वन क्रूर जीवोंकर भरया उसविषैं सर्वसामग्री-रहित कैसैं तिष्ठैगी ? हे मोविषैं आसक्त,

चकोरनेत्र, लावण्यरूप जलकी सरोवरी, महालज्जावती विनयवती तू कहां गई ? तेरे श्वासकी सुगंधकर मुख पर गुंजार करते जे भ्रमर तिनकूं हस्तकमलकर निवारती अति खेदकूं प्राप्त होयगी, तू यूथसे बिछुरी मृगीकी न्याईं अकेली भयंकर वनविषैं कहां जायगी ? जो वन चिंतवन करते भी दुस्सह उसविषैं तू अकेली कैसें तिष्ठैगी ? कमलके गर्भ-समान कोमल तेरे चरण महा-सुंदर लक्षणके धारणहारे कर्कश भूमिका स्पर्श कैसे सहेंगे ? अर वनके भील महा म्लेच्छ कृत्य-अकृत्यके भेदसे रहित है मन जिनका सो तुझे पाकर भयंकर पल्लीविषैं ले गये होवैंगे सो पहिले दुखसे भी यह अत्यंत दुख है तू भयानक वनविषैं मो विना महा दुःखकूं प्राप्त भई होयगी ? अथवा तू खेदखिन्न महा अंधेरी रात्रिविषैं वनकी रजकर मंडित कहीं पड़ी होयगी सो कदाचित् तुझे हाथियोंने दाबी होयगी तो इस समान और अनर्थ कहा ? अर गृद्ध रीछ सिंह व्याघ्र अष्टापद इत्यादि दुष्ट जीवोंकर भरया जो वन ताविषैं कैसें निवास करेगी ? जहां मार्ग नाहीं, विकराल दाढके धरणहारे व्याघ्र महा क्षुधातुर, तिन कैसी अवस्थाकूं प्राप्त करी होयगी जो कहिवेविषैं न आवै ? अथवा अग्निकी ज्वालाके समूहकर जलता जो वन उसविषै अशुभ स्थानककूं प्राप्त भई होयगी, अथवा सूर्यकी अत्यंत दुस्सह किरण तिनके आतापकर लाखकी न्याईं पिघल गई होयगी, छायाविषै जायवेकी नाहीं शक्ति जाकी । अथवा शोभायमान शीलकी धरणहारी मो निर्दईविषै मनकर हृदय फटकर मृत्युकूं प्राप्त भई होयगी ? पहिले जैसें रत्नजटीने मोहि सीताके कुशलकी वार्ता आय कही थी तैसें कोई अब भी कहै ? हाय प्रिये ! पतिव्रते विवेकवती सुखरूपिणी तू कहां गई, कहां तिष्ठेगी, क्या करेगी ? अहो कृतांतवक्र ! कह क्या तैनें सचमुच वनहिविषै डारी, जो कहू शुभ ठौर मेली होय तो तेरे मुखरूप चंद्रसे अमृतरूप वचन खिरैं । जब ऐसो कहा तब सेनापतिने लज्जाके भारकर नीचा मुख किया, प्रभारहित होय गया, कछु कह न सक्या, अति व्याकुल भया मौन गह रह्या । तब रामने जानी सत्य ही यह सीताकूं भयंकर वनविषै डार आया तब मूर्च्छाकूं प्राप्त होय राम गिरे । बहुरि बहुत बेरविषै नीठि नीठि सचेत भए तब लक्ष्मण आए । अन्तःकरणविषै सोचकूं धरे कहते भए—हे देव ! क्यों व्याकुल भए हो, धैर्यको अंगीकार करहु, जो पूर्वकर्म उपार्ज्या हैं उसका फल आप प्राप्त भया, अर सकल लोककूं अशुभके उदयकर दुःख प्राप्त भया । केवल सीताहीकूं दुःख न भया । सुख अथवा दुख जो प्राप्त होना होय सो स्वयमेव ही किसी निमित्तसूं आय प्राप्त होय है, हे प्रभो ! जो कोई किसीकूं आकाशविषै ले जाय, अथवा क्रूर जीवोंके भरे वनविषै डारे, अथवा गिरिके शिखिर धरे तो भी पूर्व पुण्यकर प्राणीकी रक्षा होय हैं सब ही प्रजा दुख कर तप्तायमान है, आसुओं-के प्रवाहकर मानों हृदय लग गया हैं सोई झरैं है । यह वचन कह लक्ष्मण भी अत्यंत व्याकुल होय रुदन करने लगा । जैसा दाहका मारया कमल होय तैसा होय गया है मुखकमल जाका,

हाय माता ! तू कहां गई दुष्टजनोंके वचनरूप अग्निकर प्रज्वलित हैं शरीर जिसका, हे गुणरूप धान्यके उपजावनेकी भूमि बारह अनुप्रेक्षाके चिंतवनकी करणहारी है,शीलरूप पर्वतकी पृथिवी है, सीते ! सौम्य स्वभावको धारक है विवेकिनी दुष्टोके वचन सोई भए तुषार तिनकर दाहा गया है हृदय कमल जाका, राजहंस श्रीराम तिनके प्रसन्न करिवेकूं मानसरोवर समान सुभद्रा सारिखी कल्याणरूप सर्व आचारविषैं प्रवीण लोककूं मूर्तिवन्त सुखकी आशिखा हे श्रेष्ठे ! तू कहां गई ? जैसैं सूर्य विना आकाशकी शोभा कहां, अर चन्द्रमा विना निशाकी शोभा कहां, तैसैं हे माता तो विना अयोध्याकी शोभा कहा ? इस भांति लक्ष्मण विलाप कर रामसूं कहे हैं हे देव ! समस्त नगर बीण बांसुरी मृदंगादिका ध्वनिकर रहित भया है, अहर्निश रुदनकी ध्वनि कर पूर्ण है, गली-गलीविषै, नदियोंके तटविषें, चौहटेविषैं, हाट-हाटविषैं घर-घरविषैं समस्त लोक रुदन करैं हैं, तिनके अश्रुपातकी धारा कर कीच होय रही हैं, मानों अयोध्याविषैं वर्षाकालही फिर आया है। समस्त लोक आंसू डारते गद्‌गद वाणीकर कष्टसूं वचन उचारते, जानकी प्रत्यक्ष नहीं है परोक्ष ही है, तौ भी एकाग्रचित्त भए गुण कीतिरूप पुष्पोंके समूह कर पूजें हैं। वह सीता पति-व्रता समस्त सतियोंके सिरपर विराजे है गुणोंकर महा उज्ज्वल उसके यहां आवने की अभिलाषा सबकूं है यह सर्व लोक माताने ऐसे पाले हैं जैसैं जननी पुत्रकूं पाले, सो सबही महा शोककर गुण चितार चितार रुदन करे हैं। ऐसा कौन है जाके जानकीका शोक न होय ? तातैं हे प्रभो ! तुम सब बातोंविषै प्रवीण हो, अब पश्चात्ताप तजहु, पश्चातापसूं कछु कार्यकी सिद्धि नाहीं जो आप-का चित्त प्रसन्न है तो सीताकूं हेरकर बुलाय लेंगे। अर उनकूं पुण्यके प्रभावकर कोई विघ्न नहीं, आप धैर्य अवलम्बन करिवे योग्य हो। या भांति लक्ष्मणके वचनकर रामचन्द्र प्रसन्न भए कछु एक शोक तज कर्तव्यविषै मन धरया। भद्रकलश भण्डारीकूं बुलाय कर कही तुम सीताकी आज्ञासूं जिस विधि किमिच्छा दान करते थे तैसे ही दिया करो, सीताके नामसूं दान बटे। तब भंडारीने कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा ! नव महीने अर्थियोंकूं किमिच्छा दान बटिवो किया। रामके आठ हजार स्त्री तिनवर सेवमान तौ भी एक क्षणमात्र भी मनकर सीताकूं न विसारता भया। सीता सीता यह आलाप सदा होता भया,सीताके गुणोंकर मोह्या है मन जाका सर्व दिशा सीतामई देखता भया, स्वप्नविषैं सीताकूं या भांति देखै पर्वतकी गुफाविषैं पड़ी है, पृथिवीकी रजकरि मंडित हैं, अर नेत्रनिके अश्रुपात कर चौमासा कर राख्या है, महाशोककर व्याप्त हैं या भांति स्वप्नविषै अवलोकन करता भया। सीताका शब्द करता राम ऐसा चिंतवन करै है–देखो सीता सुंदर चेष्टाकी धरणहारी दूर देशान्तरविषैं है तौ भी मेरे चित्तसूं दूर न होय है। वह माधवी शीलवती मेरे हितविषै सदा उद्यमी। या भांति सदा चितारवो करै। अर लक्ष्मणके उपदेश कर अर सूत्र सिद्धांतके श्रवण कर कछूइक रामका शोक क्षीण भया धैर्यकूं

धरि धर्मध्यानविषैं तत्पर भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं। वे दोनों भाई महा न्यायवंत अखण्ड प्रीतिके धारक, प्रशंसा योग्य गुणोंके समुद्र, रामके हल मूसलका आयुध लक्ष्मणके चक्रायुध, समुद्र पर्यंत पृथिवीकूं भली भांति पालते सन्ते सौधर्म-ईशान इंद्र सारिखे शोभते भए। वे दोनों धीरवीर स्वर्ग समान जो अयोध्या ताविषैं देवों समान ऋद्धि भोगते महा कांतिके धारक पुरुषोत्तम पुरुषोंके इंद्र देवेन्द्र समान राज्य करते भए सुकृतके उदयसूं सकल प्राणियोंकू आनंद देयवेविषै चतुर सुन्दर चरित्र जिनके, सुख सागरविषैं मग्न सूर्य-समान तेजस्वी पृथिवी-विषैं प्रकाश करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं सीताका शोक वर्णन करनेवाला निन्यानवेवा पर्व पूर्ण भया ॥९९॥

सौवां पर्व

[सीताके युगल पुत्रोंकी उत्पत्ति और उनके पराक्रम का वर्णन]

अथानन्तर गौतमस्वामी कहै हैं—हे नराधिप! राम-लक्ष्मण तो अयोध्याविषैं तिष्ठैं हैं, अर अब लवणांकुशका वृत्तांत कहै हैं सो सुन--अयोध्याके सबही लोक सीताके शोकतें पांडुताकूं प्राप्त भये, अर दुर्बल होय गये। अर पुण्डरीकपुरविषैं सीता गर्भके भारकर कछूएक पांडुताकूं प्राप्त भई अर दुर्बल भई। मानूं सकल प्रजा महा पवित्र उज्ज्वल इसके गुण वर्णन करै है सो गुणोंकी उज्ज्वलता कर श्वेत होय गई है। अर कुचोंकी बीटली श्यामताकूं प्राप्त भई सो मानूं माताके कुच पुत्रोंके पान करिवेके पयके घट हैं सो मुद्रित कर राखे हैं। अर दृष्टि क्षीरसागर समान उज्ज्वल अत्यंत मधुरताकूं प्राप्त भई, अर सर्वमंगलके समूहका आधार जिनका शरीर सर्वमंगलका स्थानक जो निर्मल रत्नमई आंगण ताविषैं मंद मंद विचरै सो चरणोंके प्रति-बिंब ऐसे भासैं मानूं पृथिवी कमलनिसूं सीताकी सेवाही करै है। अर रात्रिविषैं चन्द्रमा याके मंदिर ऊपर आय निकसै सो ऐसा भासै मानूं सुफेद छत्र ही है। अर सुगंधके महलविषैं सुंदर सेज ऊपर सूती ऐसा स्वप्न देखती भई कि महागजेंद्र कमलोंके पुटविषै जल भरकर अभिषेक करावै है, अर बारम्बार सखीजनोंके मुख जय-जयकार शब्द सुनकर जाग्रत होय है, परिवारके लोक समस्त आज्ञारूप प्रवर्तैं हैं, क्रीडाविषैं भी यह आज्ञाभंग न सह सकै, सब आज्ञाकारी भए शीघ्रही आज्ञाप्रमाण करैं हैं तो भी सबों पर तेज करैं हैं काहेसूं कि तेजस्वी पुत्र गर्भविषैं तिष्ठे हैं। अर मणियोंके दर्पण निकट हैं तौ भी खड्गविषैं मुख देखै हैं अर वीणा बांसुरी मृदंगादि अनेक वादित्रोंके नाद होय हैं, सो न रुचे, अर धनुषके चढायेवेकी ध्वनि रुचै है। अर सिंहोंके

पिंजरे देख जिनके नेत्र प्रसन्न होय अर जिनका मस्तक जिनेंद्र टार औरकूं न नमैं।

अथानन्तर नव महीना पूर्ण भये श्रावण सुदी पूर्णमासीके दिन श्रवण नक्षत्रके विषैं वह मंगलरूपिणी सर्व लक्षण पूर्ण शरदकी पूनोंके चंद्रमा-समान है वदन जिनका, सुखसूं पुत्र-युगल जनती भई। पुत्रोंके जन्मविषै पुंडरीकपुरकी सकल प्रजा अति हर्षित भई, मानूं नगरी नाच उठी, ढोल नगारे आदि अनेक प्रकारके वादित्र बाजने लगे, शंखोके शब्द भये। राजा वज्रजंघने अति उत्सव किया, बहुत संपदा याचकनिकूं दई, अर एकका नाम अनंगलवण दूजे का नाम मदनांकुश ये यथार्थ नाम धरे। फिर ये बालक वृद्धिकूं प्राप्त भए, माताके हृदयकूं अति अनंदके उपजावनहारे, महा धीर शूरवीरताके अंकुर उपजे। सरसूंके दाणे इनकी रक्षाके निमित्त इनके मस्तक डारे सो ऐसे सोहते गए मानूं प्रतापरूप अग्नि के कणही हैं। जिनका शरीर ताये सुवर्ण समान अति देदीप्यमान सहजस्वभाव तेजकर अतिसोहता भया, अर जिनके नख दर्पणसमान भासते भए। प्रथम बालअवस्थाविषै अव्यक्त शब्द बोले सो सर्वलोकके मनकूं हरैं। अर इनकी मंद मुसकान महामनोज्ञ पुष्पोंके विकसने समान लोकनिके हृदयकूं मोहनी भई। अर जैसैं पुष्पनिकी सुगंधता भ्रमरोंके समूहकूं अनुरागी करै, तैसैं इनकी वासना सबके मनकूं अनुरागरूप करती भई। यह दोनों माताका दूध पान कर पुष्ट भए। अर जिनका मुख महासुंदर सुफेद दांतों कर अति सोहता भया मानूं यह दांत दुग्ध समान उज्ज्वल हास्यरस समान शोभायमान दीखै हैं। धायकी आंगुरी पकड़ आंगनविषैं पांव धरते कौनका मन न हरते भए। जानकी ऐसे सुंदर क्रीड़ाके करणहारे कुमारोंकूं देखकर समस्त दुःख भूलि गई। बालक बड़े भए, अति मनोहर सहज ही सुन्दर हैं नेत्र जिनके, विद्याके पढ़ने योग्य भए तब इनके पुण्यके योगकर एक सिद्धार्थनामा क्षुल्लक शुद्धात्मा पृथिवीविषै प्रसिद्ध वज्रजंघके मन्दिर आया सो महाविद्याके प्रभाव कर त्रिकाल संध्याविषैं सुमेरुगिरिके चैत्यालय वंदि आवे, प्रशांतवदन साधु समान है भावना जाके, धीर केश लुंच करनेसे रंजायमान है मस्तक जाका, अर खंडितवस्त्र मात्र है परिग्रह जाके, उत्तम अणुव्रतका धारक नानाप्रकारके गुणनिकर शोभायमान, जिनशासनके रहस्यका वेत्ता, समस्त कलारूप समुद्रका पारगामी, तपकरि मंडित अति सोहै सो आहारके निमित्त भ्रमता संता जहां जानकी तिष्ठै हुती वहां आया, सीता महासती मानो जिनशासनकी देवी पद्मावती ही है सो क्षुल्लककूं देख अति आदरसे उठकर सन्मुख जाय इच्छाकार करती भई, अर उत्तम अन्न-पानसे तृप्त किया। सीता जिनधर्मियोंकूं अपने भाई-समान जानै है। सो क्षुल्लक अष्टांग निमित्तज्ञानका वेत्ता दोनों कुमारनिकूं देखकर अति संतुष्ट होयकर सीतासे कहता भया----हे देवि! तुम सोच न करो, जिसके ऐसे देवकुमार समान प्रशस्त पुत्र, उसे कहां चिंता?

अथानन्तर यद्यपि क्षुल्लक महा विरक्तचित्त है तथापि दोनों कुमारनिके अनुरागसे

कैयक दिन तिनके निकट रहा। थोड़े दिनोमें कुमारनिकूं शस्त्रविद्याविषैं निपुण किया सो कुमार ज्ञान-विज्ञानविषैं पूर्ण, सर्वकलाके धारक, गुणनिके समूह दिव्यास्त्रके चलायवे अर शत्रुओंके दिव्यास्त्र आवैं तिनके निराकरण करिवेकी विद्याविषैं प्रवीण होते भए। महापुण्यके प्रभावसूं परम शोभाकूं धारें महालक्ष्मीवान, दूर भए हैं मति श्रुति आवरण जिनके, मानों उघड़े निधिके कलश ही हैं। शिष्य बुद्धिमान होय तब गुरुकूं पढ़ायवेका कछू खेद नाहीं, जैसैं मंत्री बुद्धिमान होय तब राजाकूं राज्यकार्यका कछू खेद नाहीं। अर जैसैं नेत्रवान पुरुषनिकूं सूर्यके प्रभाव कर घट-पटादिक पदार्थ सुखसूं भासैं तैसैं गुरुके प्रभावकर बुद्धिवंतकूं शब्द-अर्थ सुखसूं भासैं। जैसैं हंसनिकूं मानसरोवरविषैं आवते कछु खेद नाहीं, तैसैं विवेकवान विनयवान बुद्धिमानकूं गुरुभक्तिके प्रभावसूं ज्ञान आवते परिश्रम नाहीं, सुखसूं अति गुणनिकी वृद्धि होय है। अर बुद्धिमान् शिष्यनिकूं उपदेश देय गुरु कृतार्थ होय हैं, अर कुबुद्धिकूं उपदेश देना वृथा है जैसैं सूर्यका उद्योत घूघूओंकूं वृथा है। यह दोनों भाई देदीप्यमान है यश जिनका अति सुन्दर महा प्रतापी सूर्यकी न्याईं जिनकी ओर कोऊ विलोक न सके, दोऊ भाई चन्द्र सूर्य समान, दोनोंविषैं अग्नि अर पवन समान प्रीति, मानूं वह दोनों ही हिमाचल-विंध्याचलसमान हैं, वज्रवृषभनाराचसंहनन है जिनके, सर्व तेजस्वीनिके जीतिवेकूं समर्थ, सब राजावोंका उदय अर अस्त जिनके आधीन होयगा, महा धर्मात्मा धर्मके धारी, अत्यंत रमणीक जगतकूं सुखके कारण, सब जिनकी आज्ञाविषैं, राजा ही आज्ञाकरी तो औरनिकी कहा बात? काहूकूं आज्ञा-रहित न देख सकया अपने पांवनिके नखनिविषैं अपनाही प्रतिबिम्ब देख न सकैं तो और कौनसे नम्रीभूत होंय। अर जिनकूं अपने नख अर केशोंका भंग न रुचै तो अपनी आज्ञाका भंग कैसैं रुचै? अर अपने सिरपर चूड़ामणि धरिये, अर सिरपर छत्र फिरैं अर सूर्यऊपर होय आय निकसे तो भी न सहार सकें तो औरनिकी ऊंचता कैसैं सहारैं। मेघका धनुष चढ़ा देख कोप करैं तो शत्रुके धनुषकी प्रबलता कैसैं देख सकैं। चित्रामके नृप न नमैं तो भी सहार न सकैं तो भी साक्षात् नृपोंका गर्व कब देख सकैं। अर सूर्य नित्य उदय अस्त होय उसे अल्प तेजस्वी गिनैं, अर पवन महा बलवान है परन्तु चंचल सो उसे बलवान न गिनैं, जो चलायमान सो बलवान काहेका? जो स्थिरभूत अचल सो बलवान्। अर हिमवान पर्वत उच्च है स्थिरीभूत है, परन्तु जड़ अर कठोर कंटक सहित है तातैं प्रशंसा योग्य न गिनैं, अर समुद्र गम्भीर है रत्नोंकी खान है परन्तु खार अर जलचर जीवोंको धरैं, अर शंखोंकर युक्त तातैं समुद्रकूं तुच्छ गिनैं, महा गुणनिके निवास अति अनुपम जेते प्रबल राजा हुते तेज-रहित होय उनकी सेवा करते भये। ये महाराजाओंके राजा सदा प्रसन्नवदन मुखसूं अमृत वचन बोलैं, सबनिकर सेवने योग्य, जे दूरवर्ती दुष्ट भूपाल हुते ते अपने तेजकर मलिन वदन किए, सब मुरझाय गए। इनका तेज ये जन्मे तबसे इन

के साथही उपज्या है। शस्त्रनिके धारणकर जिनके कर अर उदर श्यामताकूं धरैं हैं, सो मानूं अनेक राजावोंके प्रतापरूप अग्निके बुझावनेसूं श्याम हैं। समस्त दिशारूप स्त्री वशीभूत कर देनेवाली भई, महा धीर धनुषके धारक तिनके सब आज्ञाकारी भए। जैसा लवण तैसा ही अंकुश दोनों भाईनिविषै कोई कमी नाहीं, ऐसा शब्द पृथिवीविषै सबके मुख। ये दोनो नवयौवन महा सुन्दर अद्भुत चेष्टाके धरणहारे, पृथिवीविषै प्रसिद्ध समस्त लोकनिकर स्तुति करिवे योग्य, जिनके देखिवेकी सबके अभिलाषा, पुण्य परमाणुनिकर रचा है पिंड जिनका, सुखका कारण है दर्शन जिनका, स्त्रियोंके मुखरूप कुमुद तिनके प्रफुल्लित करनेको शरद्की पूर्णमासीके चन्द्रमा समान सोहते भए। माताके हृदयकूं आनंदके जंगम मंदिर ये कुमार सूर्यसमान कमल नेत्र, देवकुमार-सारिखे, श्रीवत्स लक्षणकर मंडित है वक्षस्थल जिनका, अनंत पराक्रमके धारक संसार-समुद्रके तट आए, चरम शरीर, परस्पर महाप्रेमके पात्र सदा धर्मके मार्गमें तिष्ठै हैं, देवनिका अर मनुष्यनिका मन हरैं हैं।

भावार्थ—जो धर्मात्मा होय सो काहूका कुछ न हरैं, ये धर्मात्मा परधन परस्त्री तो न हरैं परन्तु पराया मन हरैं। इनकूं देख सबनिका मन प्रसन्न होय, ये गुणनिकी हदकूं प्राप्त भए हैं। गुण नाम डोरेका भी है सो हृदपर गांठकूं प्राप्त होय है अर इनके उरविषै गांठ नाहीं महानिष्कपट हैं। अपने तेजकर सूर्यकूं जीतैं हैं, अर कांतिकर चंद्रमाकूं जीतैं हैं, अर पराक्रमकर इंद्रकूं, अर गंभीरताकर समुद्रकूं स्थिरताकर सुमेरुकूं, अर क्षमाकर पृथिवीकूं अर शूरवीरताकर सिंहकूं, चालकर हंसकूं जीतैं हैं। अर महा जलविषै मकर ग्राह नक्रादिक जलचरनिसूं क्रीडा करैं हैं, अर माते हाथियोंसूं तथा सिंह अष्टापदोंसूं क्रीडा करते खेद न गिनै, अर महा सम्यग्दृष्टि उत्तम स्वभाव अति उदार उज्ज्वल भाव, जिनसूं कोई युद्ध न कर सकै, महायुद्धविषै उद्यमी जे कुमार सारिखे मधुकटभ सारिखे, इन्द्रजीत मेघनाद सारिखे योधा जिनमार्गी गुरुसेवाविषै तत्पर जिनेश्वरकी कथाविषैं रस, जिनका नाम सुन शत्रुवोंको त्रास उपजैं। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहते भए-हे राजन्! ते दोनों वीर महाधीर गुणरूप रत्नके पर्वत महा ज्ञानवान् लक्ष्मीवान् शोभा कांति कीर्तिके निवास चित्तरूप माते हाथीके वश करिवेकूं अंकुश महाराजरूप मंदिरके दृढ स्तम्भ पृथिवीके सूर्य उत्तम आचरणके धारक लवण अंकुश नरपति विचित्रकार्यके करणहारे पुंडरीकनगरविषै यथेष्ट देवनिकी न्याई रमै, महा उत्तम पुरुष जिनके निकट, जिनका तेज लख सूर्य भी लज्जावान् होय, जैसे बलभद्र नारायण अयोध्याविषै रमैं तसै यह पुण्डरीकपुरविषै रमैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशका पराक्रम वर्णन करनेवाला एकसौवां पर्व पूर्ण भया ॥१००॥

एक सौ एकवां पर्व

[लवण और अंकुशका दिग्विजय करना]

अथानन्तर अति उदार क्रियाविषैं योग्य अति सुन्दर तिनकूं देख वज्रजंघ इनके परिणायवेविषैं उद्यमी भया, तब अपनी शशिचूला नामा पुत्री लक्ष्मीरानीके उदरविषैं उपजी बत्तीस कन्या सहित लवणकुमारकूं देनी विचारी। अर अंकुशकुमारका भी विवाह ला रही करना सो अंकुशयोग्य कन्या ढूंढिवेकूं चिंतावान भया, फिर मनविषैं विचारी पृथिवीपुर नगरका राजा पृथु, ताकी राणी अमृतवती ताकी पुत्र कनकमाला चन्द्रमाकी किरण समान निर्मल अपने रूप-कर लक्ष्मीकूं जीतै हैं वह मेरी पुत्री शशिचूला समान है यह विचार तापैं दूत भेज्या। सो दूत विचक्षण पृथ्वीपुर जाय पृथुसूं कही। जौं लग दूतने कन्यायाचनके शब्द न कहे तौंलग उसका अति सन्मान किया अर जब याने याचनेका वृत्तांत कहा तब वह क्रोधायमान भया अर कहता भया--तू पराधीन है अर पराई कहाई कहै हैं, तुम दूत जलके धारा समान हो, जा दिशा चलावे वाही दिशा चालो। तुमविषैं तेज नाहीं, बुद्धि नाहीं, जो ऐसे पापके वचन कहै ताकूं निग्रह करूं? पर तू पराया प्रेरा यन्त्र समान है, यन्त्री यन्त्र बजावे है त्यो बाजै तातैं तू हनिवे योग्य नाहीं। हे दूत! १ कुल २ शील ३ धन ४ रूप ५ समानता ६ बल ७ वय ८ देश ९ विद्या ये नव गुण वरके कहे हैं तिनविषैं कुल मुख्य हैं सो जिनका कुल ही न जानिये तिनकूं कन्या कैसे दीजिये? तातैं ऐसी निर्लज्ज बात कहै है सो राजा नीतिसूं प्रतिकूल है सो कुमारी तोपैं न द्यूं। अर कु कहिये खोटी मारी कहिये मृत्यु सो द्यूं। या भांति दूतकूं विदा किया, सो दूतने आयकर वज्रजंघकूं व्यौरा कह्या। सो वज्रजंघ आप ही चढ़कर आधी दूर आय डेरा किये, अर बड़े पुरुषनिकूं भेज बहुरि पृथुसूं कन्या याची, ताने न दई। तब राजा वज्रजंघ पृथुका देश उजारने लगा, अर देशका रक्षक राजा व्याघ्ररथ ताहि युद्धविषैं जीति बांध लिया। तब राजा पृथुने सुना कि व्याघ्ररथकूं राजा वज्रजंघ बांधा, अर मेरा देश उजाड़ै है, तब पृथुने अपना परम मित्र पोदनापुर-का पति परम सेनासूं बुलाया। तब वज्रजंघने पुण्डरीकपुरसूं अपने पुत्र बुलाए, तब पिताकी आज्ञा पाय पुत्र शीघ्र ही चलिवेकूं उद्यमी हुए, नगरविषैं राजपुत्रनिके कूचका नगारा बजा, तब सामन्त बख्तर पहिरे आयुध सजकर युद्धके चलिवेकूं उद्यमी भए। नगरविषैं अति कोलाहल भया, पुंडरीकपुरविषैं जैसा समुद्र गाजै ऐसा शब्द भया। तब सामन्तनिके शब्द सुन लवण अर अंकुश निकटवर्तीनिकूं पूछते भए यह कोलाहल शब्द काहेका है? तब काहूने कही अंकुशकुमार के परणायवे निमित्त वज्रजंघ राजाने पृथुकी पुत्री याची हुती सो ताने न दई, तब राजा युद्धकूं चढ़े। अर अब राजा अपनी सहायताके अर्थ अपने पुत्रनिकूं बुलाया है अर सेना बुलाई है सो

यह सेनाका शब्द है। यह समाचार सुन कर दोऊ भाई आप युद्धके अर्थ अति शीघ्रही जायवेकूं उद्यमी भए। कैसे हैं कुमार? आज्ञा भंगकूं नाहीं सह सकै हैं। तब राजा बज्रजंघके पुत्र इनकूं मनैं करते भए, अर सर्व राजलोक मनैं करते भए, तौ हू इन न मानी। तब सीता पुत्रनिके स्नेहकर द्रवीभूत हुवा है मन जाका, सो पुत्रनिकूं कहती भई--तुम बालक हो, तिहारा युद्धका समय नाहीं। तब कुमार कहते भए- हे माता! तू यह कहा कही, बड़ा भया अर कायर भया तो कहा? यह पृथिवी योधानिकर भोगवे योग्य है अर अग्निका कण छोटा ही होय है अर महा वनकूं भस्म करै है। या भांति कुमारने कही, तब माता इनकूं सुभट जान आंखोंसे हर्ष अर शोकके किंचिन्मात्र अश्रुपात करती भई। ये दोऊ वीर महाधीर स्नान भोजनकर आभूषण पहिरे मन वचन काय कर सिद्धनिकूं नमस्कार कर, बहुरि माताकूं प्रणामकर, समस्त विधिविषैं प्रवीण घरतैं बाहिर आए तब भले भले शकुन भए। दोऊ रथ चढ़ सम्पूर्ण शस्त्रनिकर युक्त शीघ्रगामी तुरंग जोड़ पृथुपर चाले, महा सेनाकर मंडित धनुष-बाण ही है सहाय जिनके, महा पराक्रमी परम उदारचित्त संग्रामके अग्रेसर पांच दिवसमें बज्रजंघपै जाय पहुचे। तब राजा पृथु शत्रुनिकी बड़ी सेना आई सुन आप भी बड़ी सेनासहित नगरसे निकस्या। जाके भाई मित्र पुत्र मामाके पुत्र सबही परम प्रीतिपात्र, अर अंगदेश बंगदेश मगधदेश आदि अनेक देशनिके बड़े बड़े राजा तिन सहित रथ तुरंग हाथी पयादे बड़े कटक सहित बज्रजंघपर आया। तब बज्रजंघके सामंत परसेनाके शब्द सुन युद्धकूं उद्यमी भए। दोऊ सेना समीप भई, तब दोऊ भाई लवणांकुश महा उत्साहरूप परसेना-विषैं प्रवेश करते भए। वे दोऊ योधा महा कोपकूं प्राप्त भए, अति शीघ्र है परावर्त जिनका परसेनारूप समुद्रविषैं क्रीडा करते, सब ओर परसेनाका निपात करते भए, जैसैं बिजलीका चमत्कार जिस ओर चमके उस ओर चमक उठै तैसैं सब ओर मार मार करते भए, शत्रुनितैं न सहा जाय पराक्रम जिनका, धनुष पकड़ते बाण चलाते दृष्टि न पड़ैं। अर बाणनि कर हते अनेक दृष्टि पड़ैं, नाना प्रकारके क्रूर बाण तिनकरि वाहनसहित परसेनाके अनेक घोड़ा पीड़े, पृथिवी दुर्गम्य होय गई, एक निमिषमें पृथुकी सेना भागी जैसैं सिंहके त्रासतूं मदोन्मत्त गजनिके समूह भागैं। एक क्षणमात्रमें पृथुकी सेनारूप नदी लवणांकुशरूप सूर्य तिनके बाणरूप किरणनिकरि शोषकूं प्राप्त भई। कैयक मारे पड़े, कैयक भयतैं पीडित होय भागे, जैसैं आकके फूले उडे उडे फिरैं। राजा पृथु सहायरहित खिन्न होय भागनेकूं उद्यमी भया, तब दोऊ भाई कहते भए--हे पृथु! हम अज्ञातकुल-शील, हमारा कुल कोऊ जाने नाहीं, तिनपै भागता तू लज्जावान् न होय है? तू खड़ा रह, हमारा कुल शील तोहि बाणनिकर बतावैं। तब पृथु भागता हुता सो पीछा फिर हाथ जोड़ नमस्कारकर स्तुति करता भया--तुम महा धीर वीर हो, मेरा अज्ञानता जनित दोष क्षमा करहु, मैं मूर्ख तिहारा माहात्म्य अब तक न जाना हुता, महा धीरवीरनिका कुल

या सामंतताही तें जान्या जाय है, कछु वाणीके कहे न जान्या जाय है, सो अब मैं निःसंदेह भया। वनके दाहकूं समर्थ जो अग्नि सो तेज ही तैं जानी जाय है सो आप परम धीर महाकुल-विषैं उपजे हमारे स्वामी हो, महा भाग्यके योग्य तिहारा दर्शन भया, तुम सबकूं मनवांछित सुखके दाता हो, या भांति पृथुने प्रशंसा करी।

तब दोऊ भाई नीचे होय गए अर क्रोध मिट गया, शांत मन अर शांत मुख होय गए। वज्रजंघ कुमारनिके समीप आया, अर सब राजा आए कुमारनिके अर पृथुके प्रीति भई। जे उत्तम पुरुष हैं वे प्रणाममात्र ही करि प्रसन्नताकूं प्राप्त होय हैं। जैसैं नदीका प्रवाह नम्रीभूत जे बेल तिनकूं न उपाडै, अर जे महा वृक्ष नम्रीभूत नाहीं तिनकूं उपाडै। फिर राजा वज्रजंघकूं अर दोऊ कुमारनिकूं पृथु नगरविषैं ले गया, दोऊ कुमार आनंदके कारण। मदनांकुशकूं अपनी कन्या कनकमाला महाविभूति सहित पृथुने परणाई, एक रात्रि यहां रहे। फिर यह दोऊ भाई विचक्षण दिग्विजय करिवेकूं निकसे, सुह्मदेश मगधदेश अंगदेश बंगदेश जीति पोदनापुरके राजाकूं आदि दे अनेक राजा संग लेय लोकाक्ष नगर गए, वा तरफके बहुत देश जीते कुबेरकांत नामा राजा अतिमानी ताहि ऐसा वश किया जैसें गरुड नागकूं जीतै। सत्यार्थपनेतैं दिन दिन इनकैं सेना बढ़ी, हजारां राजा वश भए अर सेवा करने लगे। फिर लंपाक देश गए,वहां करण नामा राजा अति प्रबल ताहि जीतकर विजयस्थलकूं गए, वहांके राजा सौ भाई तिनकूं अवलो-कनमात्रतैं ही जीति गंगा उतर कैलाश की उत्तर दिशा गए, वहांके राजा नानाप्रकारकी भेंट ले आय मिले। झष कुंतल नामा देश तथा कालांबु नंदि नंदन सिंहल शलभ अनल चल भीम भूतरव इत्यादि अनेक देशाधिपतिनिकूं वशकर सिंधु नदीके पार गये समुद्रके तटके राजा अनेकनिकूं नमाये, अनेक नगर अनेक खेट अनेक अटंब अनेक देश वश कीये भीरुदेश यवन कच्छ चारव त्रिजट नट शक केरल नेपाल मालव अरल शर्वर त्रिशिर वृषाण, वैद्य, काश्मीर, हिंडिंव, अवष्ट, वर्वर पारशैल गोशाल कुमीनर सूर्यारक सनर्त खश विन्ध्य शिखापद,मेखल शूरसेन वाह्लीक उलूक कोशल गांधार सावीर कौवीर,कोहर अन्ध्र काल कलिंग इत्यादि अनेक देश वश कीये,कैसे हैं देश ? जिनविषैं नानाप्रकारकी भाषा अर वस्त्रनिका भिन्न भिन्न पहराव,अर जुदे जुदे गुण, नाना प्रकार-के रत्न अनेक जातिके वृक्ष जिनविषैं अर नाना प्रकार स्वर्ण आदि धनके भरे।

कैयक देशनिके राजा प्रताप हीतैं आय मिले, कैयक युद्धविषै जीति वश किये, कैयक भाग गये बड़े बड़े राजा देशपति अति अनुरागी होय लवणांकुशके आज्ञाकारी होते भये, इनकी आज्ञा-प्रमाण पृथिवीविषैं विचरैं। वे दोनों भाई पुरुषोत्तम पृथिवीकूं जीत हजारां राजनिके शिरो-मणि होते भए। सबनिकूं वशकर लार लीये। नाना प्रकारकी सुन्दर कथा करते, सबका मन हरते, पुण्डरीकपुरकूं उद्यमी भए। वज्रजंघ लार ही है। अति हर्षके भरे अनेक राजनिकी अनेक-

प्रकार भेंट आई सो महाविभूतिकूं लीये अतिसेना कर मंडित पुण्डरीकपुरके समीप आए। सीता सतखणे महल चढ़ी देखै है, राजलोककी अनेक रानी समीप हैं अर उत्तम सिंहासनपर तिष्ठे है, दूरसे आती सेनाकी रजके पटल उठे देख सखीजनकूं पूछती भई--यह दिशाविषैं रजका उड़ाव कैसा है ? तब तिन कही हे देवि ! सेनाकी रज है। जैसैं जलविषै मकर किलोल करैं तैसैं सेनाविषैं अश्व उछलते आवैं हैं, हे स्वामिनि ! ये दोनों कुमार पृथिवी वशकर आए या भांति सखीजन कहे हैं। अर बधाई देनहारे आए, नगरकी अति शोभा भई लोकनिकूं अति आनन्द भया, निर्मल ध्वजा चढ़ाई, समस्त नगर सुगन्धकर छांटा, अर वस्त्र आभूषणनिकर शोभित किया, दरवाजेपर कलश थापे सो कलश पल्लवनिकरि ढके। अर ठौर ठौर वंदनमाला शोभायमान दिखती भई, अर हाट बाजार पाटम्बरादि वस्त्रकर शोभित भए। जैसी श्रीराम लक्ष्मणके आए अयोध्याकी शोभा भई हुती तैसैं ही पुण्डरीकपुरकी शोभा कुमारनिके आएसूं भई। जादिन महाविभूतिसूं प्रवेश किया तादिन नगरके लोगनिकूं जो हर्ष भया सो कहिवेविषैं न आवै। दोऊ पुत्र कृतकृत्य तिनकूं देखकर सीता आनन्दके सागरविषै मग्न भई दोऊ वीर महा धीर आयकर हाथ जोड़ माताकूं नमस्कार करते भए, सेनाकी रजकर धूसरा है अंग जिनका, सीताने पुत्रनिकूं उरसूं लगाय माथे हाथ धरा माताकूं अति आनन्द उपजाय दोऊ कुमार चांद सूर्यकी न्याईं लोकविषैं प्रकाश करते भये।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशका दिग्विजय वर्णन करनेवाला एकसौएकवा पर्व पूर्ण भया ॥१०१॥

एक सौ दोवां पर्व

[लवण-अंकुशका राम-लक्ष्मणके साथ युद्ध]

अथानन्तर ये उत्तम मानव परम ऐश्वर्य धारक प्रबल राजानिपर आज्ञा करते सुखसूं तिष्ठैं। एक दिन नारदने कृतांतवक्रकूं पूछी कि तू सीताकूं कहां मेल आया ? तब ताने कही कि सिंहनाद अटवीविषैं मेली। सो यह सुनकर अति व्याकुल होय ढूंढता, फिरे हुता सो दोऊ कुमार वनक्रीडा करते देखे। तब नारद इनके समीप आया, कुमार उठकर सन्मान करते भए। नारद इनकूं विनयवान् देख बहुत हर्षित भया, अर असीस दई--जैसैं राम लक्ष्मण नरनाथके लक्ष्मी है, तैसी तुम्हारे होहु। तब ये पूछते भये कि हे देव ! राम लक्ष्मण कौन हैं, अर कौन कुलविषैं उपजे हैं, अर कहा उनविषैं गुण हैं, अर कैसा तिनका आचारण है ? तब नारद क्षण एक मौन पकड़ कहते भये--हे दोऊ कुमारो ! कोई मनुष्य भुजानिकर पर्वतकूं उखाड़ै, अथवा

समुद्रकूं तिरै तौहू राम लक्ष्मणके गुण न कहि सकै, अनेक वदननिकर दीर्घ कालतक तिनके गुण वर्णन करैं तौ भी राम लक्ष्मणके गुण कह न सकैं, तथापि मैं तिहारे वचनसूं किंचित्मात्र वर्णन करूं हूं तिनके गुण पुण्यके बढ़ावनहारे हैं।

अयोध्यापुरीविषैं राजा दशरथ होते भए, दुराचाररूप ईंधनके भस्म करिवेकूं अग्नि समान, अर इक्ष्वाकुवंशरूप आकाशविषैं चन्द्रमा, महा तेजोमय सूर्य-समान सकल पृथिवीविषैं प्रकाश करते अयोध्याविषैं तिष्ठें, वे पुरुषरूप पर्वत तिनकरि कीर्तिरूप नदी निकसी, सो सकल जगत्‌कूं आनन्द उपजावती समुद्र पर्यन्त विस्तारकूं धरती भई। ता दशरथ भूपतिके राज्यभारके धुरन्धर ही चार पुत्र महागुणवान भए, एक राम दूजा लक्ष्मण तीजा भरत चौथा शत्रुघ्न। तिनविषैं राम अति मनोहर सर्वशास्त्रके ज्ञाता पृथिवीविषैं प्रसिद्ध सो छोटे भाई लक्ष्मण-सहित अर जनककी पुत्री जो सीता ता सहित पिताकी आज्ञा पालिवे निमित्त अयोध्याकूं तज पृथिवी-विषैं विहार करते दंडकवनविषैं प्रवेश करते भए। सो स्थानक महाविषम जहां विद्याधरनिके गम्यता नाहीं, खरदूषणतें संग्राम भया, रावणने सिंहनाद किया, ताहि सुनकर लक्ष्मणकी सहाय करिवेकूं राम गया, पीछेसूं सीताकूं रावण हर ले गया। तब रामसूं सुग्रीव हनुमान विराधित आदि अनेक विद्याधर मेले भये। रामके गुणनिके अनुरागकरि वशीभूत है हृदय जिनका सो विद्याधरनिकूं लेयकरि राम लंकाकूं गये, रावणकूं जीत सीताकूं लेय अयोध्या आए। स्वर्गपुरी समान अयोध्या विद्याधरनिने बनायी तहां राम लक्ष्मण पुरुषोत्तम नागेंद्र समान सुखसूं राज्य करैं। रामकूं तुम अब तक कैसे न जाना? जाके लक्ष्मणसा भाई ताके हाथ सुदर्शन चक्र सो आयुध जाके, एक एक रत्नकी हजार हजार देव सेवा करैं ऐसे सात रत्न लक्ष्मणके अर चार रत्न रामके। जाने प्रजाके हितनिमित्त जानकी तजी ता रामकूं सकल लोक जानैं ऐसा कोई पृथिवी-विषैं नाही जो रामकूं न जाने। या पृथिवीकी कहा बात? स्वर्गविषैं देवनिके समूह रामके गुण वर्णन करैं हैं।

तब अंकुशने कही हे प्रभो! रामने जानकी काहे तजी, सो वृत्तांत मैं सुना चाहूं हूं। तब सीताके गुणनिकर धर्मानुरागमें है चित्त जाका ऐसा नारद सो आंसू डार कहता भया--हे कुमार हो! वह सीता सती महा कुलविषैं उपजी शीलवती गुणवती पतिव्रता श्रावकके आचार-विषैं प्रवीण रामकी आठ हजार रानी तिनकी शिरोमणि, लक्ष्मी कीर्ति धृति लज्जा तिनकूं अपनी पवित्रतातैं जीतकर साक्षात् जिनवाणीतुल्य। सो कोई पूर्वोपार्जित पापके प्रभावकर मूढ लोक अपवाद करते भए तातैं रामने दुखित होय निर्जन वनविषैं तजी। खोटे लोक तिनकी वाणी सोई भई जेठके सूर्यकी किरण ताकर तप्तायमान वह सती कष्टकूं प्राप्त भई। महा सुकुमार जाविषैं अल्प भी खेद न सहार पड़े मालतीकी माला दीपके आतापकरि मुरझाय सो दावानलका दाह

कैसैं सहार सकै, महा भीम वन जाविषैं अनेक दुष्ट जीव तहां सीता कैसैं प्राणिनिकूं धरै, दुष्ट जीवनिकी जिह्वा भुजंग समान निरपराध प्राणिनिकूं क्यों डसैं ? शुभ जीवनिकी निन्दा करते दुष्टनिके जीभके सौ टूक क्यों न होवैं। वह महा सती पतिव्रतानिकी शिरोमणि पटुता आदि अनेक गुणनिकर प्रशंसा-योग्य अत्यंत निर्मल महा सती, ताकी जो निंदा करैं सो या भव अर पर भवविषैं दुखकूं प्राप्त होय। ऐसा कहकरि शोकके भारकर मौन गहि रहा, विशेष कछू कह न सक्या। सुनकर अंकुश बोले--हे स्वामी ! भयकर वनविषैं रामने सीताकूं तजते भला न किया। यह कुलवंतोंकी रीति नाहीं है, लोकापवाद निवारिवेके और अनेक उपाय हैं, ऐसा अविवेकका कार्य ज्ञानवंत क्यों करैं। अंकुशने तो यही कही। अर अंनगलवण बोल्या यहांसूं अयोध्या केतीक दूर है ?

तब नारद कही यहांसे एकसौ साठ योजन है जहां राम विराजे हैं। तब दोऊ कुमार बोले हम राम लक्ष्मणपर जावेंगे। या पृथ्वीविषैं ऐसा कौन, जाकी हमारे आगे प्रबलता। नारदसूं यह कही। अर वज्रजंघसूं कही--हे मामा ! सुह्मदेश सिंधदेश कलिंगदेश इत्यादि देशनिके राजानिकूं आज्ञापत्र पठावहु जो संग्रामका सब सरंजाम लेकर शीघ्र ही आवैं हमारा अयोध्याकी तरफ कूच है। अर हाथी समारो मदोन्मत्त केते अर निर्मद केते, अर घोडे वायु समान है वेग जिनका सो संग लेवहु, अर जे योधा रणसंग्रामविषैं विख्यात कभी पीठ न दिखावैं तिनकूं लार लेवहु, सब शस्त्र सम्हारो, बक्तरनिकी मरम्मत करावहु, अर युद्धके नगाड़े दिवावहु, ढोल बजावहु, शंखनिके शब्द करावहु, सब सामंतनिकूं युद्धका विचार प्रगट करहु। यह आज्ञाकर दोउ वीर मनविषैं युद्धका निश्चयकरि तिष्ठे मानो दोऊ भाई इंद्र ही हैं। देवनि समान जे देशपति राजा तिनकूं एकत्र करिवेकूं उद्यमी भए। तब राम लक्ष्मणपर कुमारनिकी असवारी सुनि सीता रुदन करती भई। अर सीताके समीप नारदकूं सिद्धार्थ कहता भया--यह अशोभन कार्य तुम कहा आरंभा ? रणविषैं उद्यम करिवेका है उत्साह जिनके ऐसे तुम सो पिता अर पुत्रनिविषैं क्यों विरोधका उद्यम किया ? अब काहू भांति यह विरोध निवारो, कुटुम्बभेद करना उचित नाहीं। तब नारद कही मैं तो ऐसा कछू जान्या नाहीं, इन विनय किया मैं आशीस दई कि तुम राम लक्ष्मणसे होवहु। इनने सुनकर पूछी, राम लक्ष्मण कौन हैं ? मैं सब वृत्तांत कहा। अब भी तुम भय न करहु, सब नीके ही होयगा, अपना मन निश्चल करहु। कुमारनि सुनी कि माता रुदन करै है तब दोऊ पुत्र माताके पास आय कहते भए--हे मात ! तुम रुदन क्यों करो हो सो कारण कहहु। तिहारी आज्ञाकूं कौन लोपै, असुन्दर वचन कौन कहै ता दुष्टके प्राण हरैं। ऐसा कौन है जो सर्पकी जीभतैं क्रीडा करै, ऐसा कौन मनुष्य अर देव जो तुमकूं असाता उपजावै ? हे मात ! तुम कौनपर कोप किया है जापर तुम कोप करहु ताकूं जानिए आयुका अन्त आया है। हमपर कृपाकर कोपका कारण कहहु। या भांति पुत्रनि विनती करी तब माता आंसू डार कहती

भई--हे पुत्र ! मैं काहूपर कोप न किया, न मुझे काहूने असाता दई, तिहारा पितासूं युद्धका आरंभ सुनि मैं दुखित भई रुदन करूं हू। गौतम स्वामी कहै हैं--हे श्रेणिक ! तब पुत्र मातासूं पूछते भए,हे माता ! हमारा पिता कौन ? तब सीता आदिसूं लेय सब वृत्तांत कह्या। रामका वंश अर अपना वंश विवाहका वृत्तांत, अर वनका गमन अपना रावणकर हरण अर आगमन जो नारदने वृत्तांत कह्या हुता सो सब विस्तारसूं कह्या कछु छिपाय न राख्या। अर कही--तुम गर्भविषैं आए तब ही तिहारे पिताने लोकापवादका भयकर मुझे सिंहनाद अटवीविषैं तजी। तहां मैं रुदन करती सो राजा वज्रजंघ हाथी पकड़ने गया हुता सो हाथी पकड़ बाहुडे था मोहि रुदन करती देखी सो यह महा धर्मात्मा शीलवंत श्रावक मोहि महा आदरसूं ल्याय बडी बहिनका आदर जनाया अर अति सन्मानतैं यहां राखी। मैं भाई भामंडल समान याका घर जान्या। तिहारा यहां सन्मान भया, तुम श्रीरामके पुत्र हो, राम महाराजाधिराज हिमाचल पर्वतसूं लेय समुद्रांत पृथिवीका राज्य करै हैं, जिनके लक्ष्मणसा भाई महा बलवान् संग्रामविषैं निपुण है। न जानिए नाथकी अशुभ वार्ता सुनूं अक तिहारी, अथवा देवरकी, तातैं आर्तचित्त भई रुदन करूं हू और कोऊ कारण नाहीं। तब सुनकर पुत्र प्रसन्नवदन भए, अर मातासूं कहते भये--हे माता ! हमारा पिता महा धनुषधारी लोकविषैं श्रेष्ठ लक्ष्मीवान् विशालकीर्तिका धारक है, अर अनेक अद्भुत कार्य किए हैं, परंतु तुमकूं वनविषैं तजी सो भला न किया, तातैं हम शीघ्र ही राम लक्ष्मणका मानभंग करैंगे। तुम विषाद मत करहु। तब सीता कहती भई--हे पुत्र हो ! वे तिहारे गुरुजन हैं उनसूं विरोध योग्य नाहीं, तुम चित्त सौम्य करहु। महा विनयवन्त होय जाय कर पिताकूं प्रणाम करहु, यह ही नीतिका मार्ग है।

तब पुत्र कहते भए--हे माता ! हमारा पिता शत्रुभावकूं प्राप्त भया, हम कैसें जाय प्रणाम करैं, अर दीनताके वचन कैसें कहैं ? हम तो माता तिहारे पुत्र हैं, तातें रणसंग्रामविषैं हमारा मरण होय तो होवो, परंतु योधानिसे निन्द्य कायर वचन तो हम न कहैं। यह वचन पुत्रनिके सुन सीता मौन पकड़ रही। परंतु चित्तमें अति चिन्ता है,दोऊ कुमार स्नानकर भगवान्की पूजाकरि मंगलपाठ पढे,सिद्धनिकूं नमस्कारकरि माताकूं धैर्य बंधाय प्रणामकरि दोऊ महा मंगलरूप हाथीपर चढे मानूं चांद सूर्य गिरिके शिखर तिष्ठे हैं,अयोध्या ऊपर युद्धकूं उद्यमी भए जैसे राम लक्ष्मण लंका ऊपर उद्यमी भए हुते। इनका कूच सुन हजारां योधा पुंडरीकपुरसूं निकसे, सब ही योधा अपना अपना हल्ला देते भए। वह जाने मेरी सेना अच्छी दीखै है वह जाने मेरी,महाकटक संयुक्त नित्य एक योजन कूच करैं सो पृथिवीकी रक्षा करते चले जांय हैं किसीका कछु उजाडैं नाहीं। पृथिवी नानाप्रकारके धान्यकरि शोभायमान् है कुमारनिका प्रताप आगे आगे बढ़ता जाय है मार्गके राजा भेंट दे मिलैं हैं, दस हजार बेलदार कुदाल लिए आगे आगे

चले जाय हैं अर धरती ऊंची नीचीकूं सम करैं हैं, अर कुल्हाडे हैं हाथविषैं जिनके वे भी आगे आगे चले जाय हैं, अर हाथी ऊंट भैंसा बलद खच्चर खजानेके लदे जाय हैं, मंत्री आगे आगे चले जाय हैं अर प्यादे हिरणकी न्याई उछलते जाय हैं, अर तुरंगनिके असवार अति तेजीसे चले जाय हैं, तुरंगनिकी हींस होय रही है अर गजराज चले जाय हैं जिनके स्वर्ण की सांकल अर महा घंटानिका शब्द होय है, अर जिनके कानोंपर चमर शोभै हैं, अर शंखनि की ध्वनि होय रही है, अर मोतिनिकी झालरी पानीके बुदबुदा समान अत्यंत सोहै है, अर सुंदर हैं आभूषण जिनके महा उद्धत जिनके उज्ज्वल दांतनिके स्वर्ण आदिक बंध बंधे हैं, अर रत्न स्वर्ण आदिककी माला तिनकरि शोभायमान चलते पर्वत समान नाना प्रकारके रंगसूं रंगे, अर जिनके मद झरै है, अर कारी घटा समान श्याम प्रचंड वेगकूं धरैं, जिनपर पाखर परी हैं, नाना प्रकारके शस्त्रनिकरि शोभित हैं, अर गर्जना करैं हैं अर जिनपर महादीप्तिके धारक सामन्त लोक चढ़े हैं, अर महावतनिने अति सिखाये हैं, अपनी सेनाका अर परसेनाका शब्द पिछाने हैं, सुंदर है चेष्टा जिनकी। अर घोड़ानिके असवार वखतर पहिरे खेट नामा आयुधनि-कूं धरे बरछी हैं जिनके हाथविषै, घोड़ानिके समूह तिनके खुरनिके घातकर उठी जो रज ताकरि आकाश व्याप्त होय रह्या है, ऐसा सोहै है मानों सुफेद बादलनिसूं मंडित है। अर पियादे शस्त्रनिके समूहकरि शोभित अनेक चेष्टा करते गर्वसे चले जाय हैं, वह जाने मैं आगे चलूं वह जाने मैं। अर शयन आसन तांबूल सुगन्ध माला महा मनोहर वस्त्र आहार विलेपन नाना प्रकारकी सामग्री बटती जाय है ताकरि सबही सेनाके लोक सुखरूप हैं, काहूकूं काहू प्रकारका खेद नाहीं। अर मजल मजलपै कुमारनिकी आज्ञाकरि भले भले मनुष्यनिकूं लोक नानाप्रकारकी वस्तु देवैं हैं उनकूं यही कार्य सौंप्या है सो बहुत सावधान हैं, नानाप्रकारके अन्न जल मिष्टान्न लवण घृत दुग्ध दही अनेक रस भांति भांति खानेकी वस्तु आदरसूं देवैं हैं, समस्त सेनाविषै कोई दीन बुभुक्षित तृषातुर कुवस्त्र मलिन चिंतावान् दृष्टि नाहीं पड़ै है। सेनारूप समुद्रमें नर नारी नाना प्रकारके आभरण पहिरे, सुंदर वस्त्रनिकर शोभायमान, महा रूपवान् अति हर्षित दीखै। या भांति महा विभूति कर मण्डित सीताके पुत्र चले चले अयोध्याके देशविषै आये मानों स्वर्गलोकविषै इन्द्र आए। जा देशविषै यव गेहू चावल आदि अनेक धान्य फल रहे हैं अर पौंडे सांठेनिके वाड़े ठौर ठौर शोभै हैं। पृथिवी अन्न जल तृण कर पूर्ण है अर जहां नदीनिके तीर हू मुनिके समूह क्रीड़ा करैं हैं, अर सरोवर कमलनिके शोभायमान हैं, अर पर्वत नानाप्रकारके पुष्पनिकर सुगंधित होय रहे हैं, अर गीतनिकी ध्वनि ठौर ठौर होय रही है, अर गाय भैंस बलधनिके समूह विचर रहे हैं, अर ग्वालणी विलोवणा विलोवै है, जहां नगरनिसारिखे नजीक नजीक ग्राम हैं, अर नगर ऐसे शोभै हैं मानों सुरपुर ही है। महा तेजकरि युक्त लवणांकुश देशकी शोभा देखते अति

नीतिसे आये काहूकूं काहूही प्रकारका खेद न भया, हाथिनिके मद झरिवेकरि पंथविषै रज दब गई, कीच होय गयी। अर चंचल घोड़निके खुरनिके घातकरि पृथिवी जर्जरी होय गई। चले चले अयोध्याके समीप आए, दूरसे संध्याके बादलनिके रंग समान अति सुंदर अयोध्या देख वज्रजंघकूं पूछी—हे माम! यह महा ज्योतिरूप कौनसी नगरी है तब वज्रजंघने निश्चयकर कही हे देव! यह अयोध्या नगरी है। जाके स्वर्णमई कोट तिनकी यह ज्योति भासै है। या नगरीविषैं तिहारा पिता बलदेव स्वामी विराजै है, जाके लक्ष्मण अर शत्रुघ्न भाई या भांति वज्रजंघने कही। अर दोऊ कुमार शूरवीरताकी कथा करते हुए सुखसूं आय पहुचे। कटकके अर अयोध्याके बीच सरयू नदी रही। दोऊ भाईनिके यह इच्छा कि शीघ्र ही नदीको उतर नगरी लेवे। जैसे कोई मुनि शीघ्र हो मुक्त हुवा चाहै ताहि मोक्षकी आशारूप नदी यथाख्यातचारित्र होने न देय। आशारूप नदीकूं तिरै तब मुनि मुक्त होय तैसे सरयू नदीके योगसे शीघ्र ही नदीतैं पार उतरि नगरीविषैं न पहुँच सके, तब जैसे नन्दन वनविषैं देवनिकी सेना उतरै तैसे नदीके उपवनादिविषैं ही कटकके डेरा कराए।

अथानंतर परसेना निकट आई सुन राम लक्ष्मण आश्चर्यकूं प्राप्त भए, अर दोनों भाई परस्पर बतरावैं ये कोई युद्धके अर्थ हमारे निकट आए हैं सो मूवा चाहै हैं। वासुदेवने विराधितकूं आज्ञा करी—युद्धके निमित्त शीघ्र ही सेना भेली करो, ढील न होय जिन विद्याधरनिके कपियोंकी ध्वजा, अर हाथिनिकी ध्वजा, अर बैलनिकी ध्वजा, सिंहनिकी ध्वजा इत्यादि अनेक भांतिकी ध्वजा तिनकूं वेग बुलाओ सो विराधितने कही जो आज्ञा होयगी सोई होयगा। उसही समय सुग्रीवादिक अनेक राजावोंपर दूत पठाए सो दूतके देखिवेमात्र ही सर्व विद्याधर बड़ी सेनासूं अयोध्या आए। भामंडल भी आया सो भामंडलकूं अत्यंत आकुलता देख शीघ्र ही सिद्धार्थ अर नारद जायकर कहते भए यह सीताके पुत्र हैं। सीता पुण्डरीकपुरविषै है। तब यह बात सुनकर बहुत दुखित भया, अर कुमारोंके अयोध्या आयवेपर आश्चर्यकूं प्राप्त भया अर इनका प्रताप सुन हर्षित भया। मनके वेग समान जो विमान उसपर चढ़कर परिवारसहित पुंडरीकपुर गया, बहिनसूं मिला। सीता भामंडलकूं देख अति मोहित भई आंसू नाखती संती विलाप करती भई, अर अपने ताईं घरसूं काढ़नेका अर पुण्डरीकपुर आयवेका सर्व वृत्तांत कह्या। तब भामंडल बहिनको धैर्य बंधाय कहता भया--हे बहिन! तेरे पुण्यके प्रभावसूं सब भला होयगा। अर कुमार अयोध्या गए सो भला न कीया, जायकर बलभद्र नारायणकूं क्रोध उपजाया। राम लक्ष्मण दोनों भाई पुरुषोत्तम देवोंसे भी न जीते जांय महा योधा हैं अर कुमारोंके अर उनके युद्ध न होय सो ऐसा उपाय करैं इसलिए तुमहू चलो।

तब सीता पुत्रोंकी वधूसंयुक्त भामंडलके विमानविषैं बैठी चली। राम लक्ष्मण महा

क्रोधकर रथ घोटक गज पियादे देव विद्याधर तिनकर मंडित समुद्रसमान सेना लेय बाहिर निकसे, अर घोड़ानिके रथ चढा शत्रुघ्न महा प्रतापी मोतिनके हारकर शोभायमान है वक्षस्थल जाका सो रामके संग भया। अर कृतांतवक्र सब सेनाका अग्रेसर भया जैसैं इन्द्रकी सेनाका अग्रगामी हृदयकेशी नामा देव होय। उसका रथ अत्यंत सोहता भया देवनिके विमान समान जिसका रथ सो सेनापति चतुरंग सेना लिए अतुलबली अतिप्रतापी महा ज्योतिकूं धरे धनुष चढ़ाय बाण लिए चला जाय है, जिसकी श्याम ध्वजा शत्रुवोंसे देखी न जाय। उसके पीछे त्रिमूर्ध्न वह्निशिख सिंहविक्रम दीर्घभुज सिंहोदर सुमेरु बालखिल्य रौद्रभूत जिसके अष्टापदोंके रथ वज्रकर्ण पृथु मारदमन मृगेंद्रहव इत्यादि पांचहजार नृपति कृतांतवक्रके संग अग्रगामी भए। बन्दीजन बखानैं हैं विरद जिनके। अर अनेक रघुवंशी कुमार देखे हैं अनेक रण जिन्होंने शस्त्रोंपर है दृष्टि जिनकी युद्धका है उत्साह जिनके, स्वामिभक्तिविषैं तत्पर महाबलवान् धरतीकूं कंपाते शीघ्रही निकसे, कैयक नानाप्रकारके रथोंपर चढ़े, कैयक पर्वत समान ऊंचे कारी घटा समान हाथिनिपर चढ़े, कैयक समुद्रकी तरंग समान चंचल तुरंग तिनपर चढ़े इत्यादि अनेक वाहनों पर चढ़े युद्धकूं निकसे। वादित्रोंके शब्दोंकर करी है व्याप्त दशों दिशा जिन्होंने, बखतर पहिरे टोप धरे क्रोधकर संयुक्त है चित्त जिनका। तब लव अंकुश परसेनाका शब्द सुन युद्धकूं उद्यमी भए। वज्रजंघकूं आज्ञा करी, कुमारकी सेनाके लोक युद्धके उद्यमी हुते ही। प्रलयकालकी अग्निसमान महाप्रचंड अंगदेश बंगदेश नेपाल बर्बर पौंड्र मागध पारसेल सिंहल कलिंग इत्यादि अनेक देशनिके राजा रत्नांककूं आदि दे महा बलवंत ग्यारह हजार राजा उत्तम तेजके धारक युद्धके उद्यमी भए। दोनों सेनानिका संघट्ट भया, दोनों सेनानिके संगमविषैं देवनिकूं असुरनिकूं आश्चर्य उपजै ऐसा महा भयंकर शब्द भया जैसा प्रलयकालका समुद्र गाजै। परस्पर यह शब्द होते भए- क्या देख रहा है, प्रथम प्रहार क्यों न करै, मेरा मन तोपर प्रथम प्रहार करिवेपर नाहीं तातैं तू ही प्रथम प्रहार कर। अर कोई कहै है एक डिग आगे होवो जो शस्त्र चलाऊं कोई अत्यंत समीप होय गए, तब कहैं हैं खंजर तथा कटारी हाथ लेवो निपट नजीक भए बाणका अवसर नाहीं। कोई कायरकूं देख कहै हैं तू क्यों कांपै है मैं कायरकूं न मारूं तू परे हो, आगैं महायोधा खड़ा है उससे युद्ध करने दे। कोई वृथा गाजै है उसे सामंत कहै हैं--हे क्षुद्र! कहा वृथा गाजे है गाजनेविषैं सामंतपना नाहीं, जो तोविषैं सामर्थ्य है तो आगैं आव, तेरी रणकी भूख भगाऊं। इस भांति योधानिविषैं परस्पर वचनालाप होय रहे हैं, तरवार बहै है भूमिगोचरी विद्याधर सब ही आए हैं, भामंडल पवनवेग वीर मृगांक विद्युद्ध्वज इत्यादि बड़े बड़े राजा विद्याधर बड़ी सेनाकर युक्त महा रणविषैं प्रवीण। सो लवण अंकुशके समाचार सुन युद्धसे पराङ्मुख शिथिल होय गए, अर सब बातोंविषैं प्रवीण हनुमान सो भी सीता-पुत्र जान युद्धसूं शिथिल होय रहा। अर विमानके

शिखरविषैं आरूढ़ जानकीकूं देख सब ही विद्याधर हाथ जोड़ शीस नवाय प्रणामकर मध्यस्थ होय रहे। सीता दोनों सेना देख रोमांच होय आई, कांपै है अंग जाका। लवण अंकुश लहलहाट करै हैं ध्वजा जिनकी राम-लक्ष्मणसूं युद्धकूं उद्यमी भए। रामके सिंहकी ध्वजा, लक्ष्मणके गरुडकी, सो दोनों कुमार महायोधा राम लक्ष्मणसूं युद्ध करते भए। लवण तो रामसे लड़ैं, अर अंकुश लक्ष्मणसे लड़ैं। सो लवने आवते ही श्रीरामकी ध्वजा छेदी, अर धनुष तोड़ा। तब राम हंसकर और धनुष लेयवेकूं उद्यमी भए इतनेविषैं लवने रामका रथ तोड़ा, तब राम और रथ चढ़े, प्रचंड है पराक्रम जिनका, क्रोधकर भृकुटी चढ़ाय ग्रीष्मके सूर्य-समान तेजस्वी जैसैं चमरेंद्रपर इंद्र जाय तैसैं गया। तब जानकीका नन्दन लवण युद्धकी पाहुनिगति करनेकूं रामके सन्मुख आया, रामके अर लवके परस्पर महायुद्ध भया। वाने वाके शस्त्र छेदे वाने वाके, जैसा युद्ध राम अर लवका भया तैसा ही अंकुश अर लक्ष्मणका भया। या भांति परस्पर दोनों युगल लड़े तब योधा भी परस्पर लड़े घोड़ोंके समूह रणरूप समुद्रकी तरंग समान उछलते भए, कोई इक योधा प्रतिपक्षीकूं टूटे बखतर देख दयाकर मौन गह रह्या, अर कईयक योधा मने करते परसेनाविषैं पैठे सो स्वामीका नाम उचारते परचक्रसे लड़ते भए, कईयक महाभट माते हाथियोंसे भिड़ते भए, कईयक हाथियोंके दांतरूप सेजपर रणनिद्रा सुखसूं लेते भए, काहू एक महाभटका तुरंग काम आया सो पियादा ही लड़ने लगा, काहूके शस्त्र टूट गए तो भी पीछे न होता भया, हाथोंसे मुष्टिप्रहार करता भया। अर कोईइक सामंत बाण बाहने चुक गया उसे प्रतिपक्षी कहता भया बहुरि चलाय सो लज्जाकर न चलावता भया। अर कोईयक निर्भयचित्त प्रतिपक्षीकूं शस्त्ररहित देख आप भी शस्त्र तज भुजाओं से युद्ध करता भया ते योधा बड़े दाता रणसंग्रामविषैं प्राण देते भए, परंतु पीठ न देते भए। जहां रुधिरकी कीच होय रही है सो रथोंके पहिए डूब गए हैं सारथी शीघ्र ही नहीं चला सकै है। परस्पर शस्त्रोंके संपातकर अग्नि पड़ रही है, अर हाथियोंकी सूंडके छांटे उछलै हैं। अर सामन्तोंने हाथियोंके कुम्भस्थल विदारे हैं अर सामंतनिके उरस्थल विदारे हैं हाथी काम आय गए हैं तिनकर मार्ग रुक रह्या है अर हाथियोंके मोती विखर रहे हैं वह युद्ध महा भयंकर होता भया जहां सामंत अपना सिर देयकर यशरूप रत्न खरीदते भए, जहां मूर्च्छितपर कोई घात नहीं करैं अर निर्बल पर घात न करैं, सामंतोंका है युद्ध जहां महायुद्धके करणहारे योधा जिनजे जीवनेकी आशा नहीं, क्षोभकूं प्राप्त भया समुद्र गाजे तैसा होय रह्या है शब्द जहां सो वह संग्राम समरस कहिए समान रस होता भया।

भावार्थ—न वह सेना हटी न वह सेना हटी, योधानिविषैं न्यूनाधिकता परस्पर दृष्टि न पडी। कैसे हैं योधा? स्वामीविषैं है परमभक्ति जिनकी अर स्वामीने आजीविका दई थी उसके

बदले यह जीव दिया चाहे हैं प्रचण्ड रणकी है खाज जिनके सूर्य समान तेजकूं धरे संग्रामके धुरंधर होते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशका लक्ष्मणसे युद्ध वर्णन करनेवाला एकसौदोवां पर्व पूर्ण भया ॥१०२॥

एक सौ तीनवां पर्व

[राम लक्ष्मणका लवण-अंकुश के साथ परिचय]

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै हैं-हे श्रेणिक! अब जो वृत्तांत भया सो सुनो, अनंगलवणके तो सारथी राजा वज्रजंघ अर मदनांकुशके राजा पृथु अर लक्ष्मणके विराधित अर रामके कृतांतवक्र। तब श्रीराम वज्रावर्त धनुषकूं चढायकर कृतांतवक्रसूं कहते भए अब तुम शीघ्रही शत्रुवों पर रथ चलाधो, ढील न करो। तब वह कहता भया हे देव! देखो यह घोडे नरवीरके बाणनिकर जरजरे होय रहे हैं इनविषैं तेज नाहीं मानूं निद्राकूं प्राप्त भए हैं, यह तुरंग लोहूकी धाराकर धरतीकूं रंगै है मानूं अपना अनुराग प्रभुकूं दिखावै हैं अर मेरी भुजा इसके बाणनिकर भेदी गई है बक्तर टूट गया है। तब श्रीराम कहते भए-मेरा भी धनुष युद्धकर्मरहित ऐसा होय गया है मानूं चित्रामका धनुष है अर यह मूसल भी कार्यरहित होय गया है अर दुर्निवार जे शत्रुरूप गजराज तिनकूं अंकुश समान यह हल सो भी शिथिलताकूं भजै है शत्रुके पक्षकूं भयंकर मेरे अमोघशस्त्र जिनकी सहस्र सहस्र यक्ष रक्षा करैं वे शिथिल होय गए हैं शस्त्रोंकी सामर्थ्य नाहीं जो शत्रुपर चलैं। गौतमस्वामी कहे हैं— हे श्रेणिक! जैसें अनंगलवणके आगे रामके शस्त्र निरर्थक होय गये तैसैं ही मदनांकुशके आगे लक्ष्मणके शस्त्र कार्यरहित होय गए। वे दोनों भाई तो जानैं कि ये राम लक्ष्मण तो हमारे पिता अर पितृव्य (चचा) हैं सो वे तो इनका अंग बचाय शर चलावैं अर ये उनको जानैं नाहीं सो शत्रु जान कर शर चालदैं लक्ष्मण दिव्यास्त्रकी सामर्थ्य उनपर चलिवे की न जान शर शेल सामान्यचक्र खड्ग अंकुश चलावता भया सो अंकुशने वज्रदण्डकर लक्ष्मणके आयुध निराकरण किए, अर रामके चलाए आयुध लवणने निरा करण किए। फिर लवणने रामकी ओर शेल चलाया अर अंकुशने लक्ष्मणपर चलाया सो ऐसी निपुणतासे दोनोंके मर्मकी ठौर न लागे सामान्य चोट लगी सो लक्ष्मणके नेत्र घूमने लगे विराधितने अयोध्याकी ओर रथ फेरा। तब लक्ष्मण सचेत होय कोपकर विराधितसूं कहता भया--हे विराधित! तैंने क्या किया मेरा रथ फेरया। अब पीछे बहुरि शत्रुका सन्मुख लेवो रणविषैं पीठ न दीजिये। जे शूरवीर हैं तिनकूं शत्रुके सन्मुख मरण भला, परन्तु यह पीठ देना महा निन्द्य-

कर्म, शूरवीरोंकूं योग्य नाहीं। कैसे हैं शूरवीर ? युद्धविषैं बाणनिकरि पूरित है अंग जिनका। जे देव मनुष्यनिकर प्रशंसाके योग्य, वे कायरता कैसे भजैं। मैं दशरथका पुत्र रामका भाई वासुदेव पृथिवीविषैं प्रसिद्ध, सो संग्राममें पीठ कैसे देऊं ? यह वचन लक्ष्मणने कहे तब विराधितने रथकूं युद्धके सन्मुख किया। सो लक्ष्मणके अर मदनांकुशके महा युद्ध भया लक्ष्मणने क्रोधकर महाभयंकर चक्र हाथविषैं लिया महाज्वालारूप देख्या न जाय ग्रीष्मके सूर्य समान सो अंकुश पर चलाया। सो अंकुशके समीप जाय प्रभावरहित होय गया अर उलटा लक्ष्मणके हाथविषैं आया। बहुरि लक्ष्मणने चक्र चलाया सो पीछे आया। या भांति बार-बार पाछे आया, बहुरि अंकुशने धनुष हाथविषैं गह्या तब अंकुशकूं महातेजरूप देख लक्ष्मणके पक्षके सब सामन्त आश्चर्यकूं उपजी यह महापराक्रमी अर्धचक्री उपज्या लक्ष्मणने कोटि शिला उठाई,प्राप्त भए तिनकूं यह बुद्धि अर मुनिके वचन जिनशासनका कथन और भांति कैसे होय ? अर लक्ष्मण भी मनविषैं जानता भया कि ये बलभद्र नारायण उपजे आप अति लज्जावान होय युद्धकी क्रियासे शिथिल भया।

अथानंतर लक्ष्मणकूं शिथिल देख सिद्धार्थ नारदके कहेसूं लक्ष्मणके समीप आय कहता भया--वासुदेव तुम ही हो, जिनशासनके वचन सुमेरुसूं अति निश्चल हैं। यह कुमार जानकीके पुत्र हैं। गर्भविषैं थे तब जानकीकूं वनविषैं तजी। यह तिहारे अंग हैं तातैं इनपर चक्रादिक शस्त्र न चलै। तब लक्ष्मणने दोनों कुमारकोंका वृत्तान्त सुन हर्षित होय हाथसे हथियार डार दिए,बक्तर दूर किया,सीताके दुःखकर अश्रुपात डारने लगा, अर नेत्र घूमने लगे। राम शस्त्र डार बख्तर उतार मोह कर मूर्च्छित भए,चन्दनसे छांटि सचेत किये। तब स्नेहके भरे पुत्रनिके समीप चाले। पुत्र रथसे उतर हाथ जोड़ सीस नवाय पिताके पांयनि पड़े। श्रीराम स्नेहकर द्रवीभूत भया है मन जिनका, पुत्रोंकूं उरसे लगाय विलाप करते भए, आंसुनि कर मेघकासा दिन किया। राम कहै हैं--हाय पुत्र हो ! मैं। मन्दबुद्धि गर्भविषैं तिष्ठते तुमकूं सीता-सहित भयंकर वनविषैं तजे, तिहारी माता निर्दोष। हाय पुत्र हो, मैं कोई विस्तीर्ण पुण्यकरि तुम सारिखे पुत्र पाए सो उदर-विषैं तिष्ठते तुम भयंकर वनविषैं कष्टकूं प्राप्त भए ? हाय वत्स ! यह वज्रजंघ वनविषैं न आवता तो तिहारा मुखरूप चंद्रमा मैं कैसे देखता, ? हाय बालक हो, इन अमोघ दिव्यास्त्रोंकर तुम न हते गए सो पुण्यके उदयकर देवोंने सहाय करी। हाय मेरे अंगज हो ! मेरे बाणनिकर बींधे तुम रणक्षेत्रविषैं पडते तो न जानूं जानकी क्या करती ? सब दुखोंविषैं घरसे काढनेका बड़ा दुःख है सो तिहारी माता महा गुणवन्ती व्रतवन्ती मैं पतिव्रता वनविषैं तजी, अर तुमसे पुत्र गर्भविषैं सो मैं यह काम बहुत विना समझे किया। अर जो कदाचित् तिहारा युद्धविषैं अन्यथा भाव भया होता तो मैं निश्चयसे जानूं हूं शोकसे विह्वल जानकी न जीवती। या भांति रामने विलाप किया। बहुरि कुमार विनय कर लक्ष्मणकूं प्रणाम करते भए। लक्ष्मण सीताके शोकसे

विह्वल, आसू डारता स्नेहका भरया दोनों कुमारनिकूं उरसे लगावता भया। शत्रुघ्न आदि यह वृत्तांत सुन वहां आए, कुमार यथायोग्य विनय करते भये, ये उरसूं लगाय मिले। परस्पर अति प्रीति उपजी। दोनों सेनाके लोक अतिहित कर परस्पर मिले, क्योंकि जब स्वामीकूं स्नेह होय तब सेवकनिके भी होय। सीता पुत्रोंका माहात्म्य देख अति हर्षित होय विमानके मार्ग होय पीछे पुण्डरीकपुरविषैं गई। अर भामंडल विमानसे उतर स्नेहका भरया आंसू डारता भानजोंसे मिला, अति हर्षित भया। अर प्रीतिका भरया हनुमान उरसूं लगाय मिल्या, अर बारंबार कहता भया--भली भई, भली भई। अर विभीषण सुग्रीव विराधित सब ही कुमारनिसूं मिले, परस्पर हित-संभाषण भया, भूमिगोचरी विद्याधर सब ही मिले। अर देवनिका आगमन भया सबोंकूं आनंद उपज्या। राम पुत्रनिकूं पायकर अति आनंदकूं प्राप्त भए, सकल पृथिवीके राज्यसे पुत्रनिका लाभ अधिक मानते भए। जो रामके हर्ष भया सो कहिवेविषैं न आवै अर विद्याधरीं आकाशविषैं आनंदसूं नृत्य करती भई। अर भूमिगोचरिनिकी स्त्री पृथिवीविषैं नृत्य करती भई। अर लक्ष्मण आपकूं कृतार्थ मानता भया, मानों सर्व लोक जीत्या हर्षसूं फूल गए हैं लोचन जिनके। अर राम मनविषैं जानता भया मैं सगर चक्रवर्ती समान हू अर कुमार दोनों भीम अर भगीरथ समान हैं। राम वज्रजंघसे अति प्रीति करता भया जो तुम मेरे भामंडल समान हो, अयोध्यापुरी तो पहले ही स्वर्गपुरी समान थी तो बहुरि कुमारनिके आयवेकरि अति शोभायमान भई, जैसैं सुंदर स्त्री सहज ही शोभायमान होय अर श्रृंगारकरि अति शोभाकूं पावै। श्रीराम लक्ष्मणसहित अर दोऊ पुत्रों सहित सूर्यकी ज्योति समान जो पुष्पक विमान उसविषैं विराजे। सूर्यसमान हैं ज्योति जिनकी राम लक्ष्मण अर दोऊ कुमार अद्भुत आभूषण पहिरे सो कैसी शोभा बनी है मानूं सुमेरुके शिखरपर महा मेघ विजुरीके चमत्कार सहित तिष्ठा है। भावार्थ—विमान तो सुमेरुका शिखर भया, अर लक्ष्मण महामेघका स्वरूप भया, अर राम तथा रामके पुत्र विद्युत समान भए सो ए चढ़कर नगरके बाह्य उद्यानविषैं जिनमंदिर हैं तिनके दर्शनकूं चाले। नगरके कोटपर ठौर-ठौर ध्वजा चढ़ी हैं तिनकूं देखते धीरे-धीरे जाय हैं लार अनेक राजा केई हाथियोंपर चढ़े, केई घोड़ोंपर, केई रथोंपर चढ़े जाय हैं अर पियादोंके समूह जाय हैं। धनुष बाण इत्यादि अनेक आयुध अर ध्वजा छत्रनिकर सूर्यकी किरण नजर नहीं पड़ैं हैं, अर स्त्रीनिके समूह झरोखनिविषैं बैठे देखै हैं। लव अंकुशके देखिवेका सबनिकूं बहुत कौतूहल है, नेत्ररूप अंजुलिनिकर लवणांकुशके सुन्दरतारूप अमृतके पान करैं हैं सो तृप्त नाहीं होय हैं, एकाग्रचित्त भई इनकूं देखैं हैं। अर नगरविषै नर नारिनिकी ऐसी भीड़ भई काहूके हार कुंडलकी गम्य नाहीं। अर नारीजन परस्पर वार्ता करैं हैं, कोई कहै है—हे माता टुक मुख इधर कर, मोहि कुमारनिके देखिवेका कौतुक है। हे अखण्डकौतुक तूने तो घनी बार लगि देखे अब हमें देखने देवो, अपना सिर

नीचा कर ज्यों हमकूं दीखै, कहा ऊंचा सिर कर रही है ? कोई कहै है तेरे सिरके केश बिखर रहे हैं, सो नीके समार। अर कोई कहै है—हे क्षिप्तमानसे, कहिये एक ठौर नाहीं चित्त जाका सो तू कहा हमारे प्राणनिकूं पीडै है ? तू न देखै यह गर्भवती स्त्री खड़ी है, पीड़ित है। कोऊ कहे दुक परे होहु, कहा अचेतन होय रही है, कुमारनिकूं न देखने देहै। यह दोनों रामदेवके कुमार रामदेवके समीप बैठे अष्टमीके चन्द्रमासमान है ललाट जिनका। कोई पूछे है इनविषैं लवण कौन, अर अंकुश कौन, यह तो दोनों तुल्यरूप भासैं हैं। तब कोई कहै है यह लाल वस्त्र पहिरे लवण है अर यह हरे वस्त्र पहिरे अंकुश है। अहो धन्य सीता महापुण्यवती, जिनने ऐसे पुत्र जने। अर कोई कहै है धन्य है वह स्त्री, जिसने ऐसे वर पाए हैं। एकाग्रचित्त भईं स्त्री इत्यादि वार्ता करती भईं, इनके देखिवेविषैं है चित्त जिनका, अति भीड़ भई सो भीड़विषैं कर्णाभरणरूप सर्पकी डाढ़कर डसे गए हैं कपोल जिनके सो न जानती भईं, तद्गत है चित्त जिनका। काहूकी कांचीदाम जाती रही सो वाहि खबर नाहीं, काहूके मोतिनके हार टूटे सो मोती बिखर रहे हैं, मानूं कुमार आए सो ये पुष्पांजलि बरसैं हैं। अर केई एकोकूं नेत्रोंकी पलक नाहीं लगै हैं असवारी दूर गई है तो भी उसी ओर देखै हैं। नगरकी उत्तम स्त्री केई भईं बेल, सो पुष्पवृष्टि करती भईं सो पुष्पनिकी मकरंदकर मार्ग सुगंध होय रह्या है। श्रीराम अति शोभाकूं प्राप्त भए पुत्रनिसहित वनके चैत्यालयनिके दर्शनकर अपने मन्दिर आए। कैसा है मंदिर ? महा मंगलकर पूर्ण है ऐसे अपने प्यारे जनोंके आगमनका उत्साह सुखरूप ताकूं वर्णन कहां लग करिए, पुण्यरूपी सूर्यका प्रकाशकर फूल्या है मन-कमल जिनका ऐसे मनुष्य केई अद्भुत सुखकूं पावै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणसू लवणांकुशका मिलाप वर्णन करनेवाला एक सौ तीनवां पर्व पूर्ण भया ॥१०३॥

एकसौ चारवां पर्व

[रामका सीताकी शील-परीक्षार्थ अग्निकुंडमें प्रवेशकी आज्ञा]

अथानंतर विभीषण सुग्रीव हनुमान मिलकर रामसे विनती करते भये—हे नाथ ! हमपर कृपा करहु, हमारी विनती मानों, जानकी दुखसूं तिष्ठै हैं इसलिए यहां लायवेकी आज्ञा करहु। तब राम दीर्घ उष्ण निश्वास नाख क्षणएक विचारकर बोले-मैं सीताकूं शील-दोषरहित जानूं हूं, वह उत्तम चित्त है। परन्तु लोकापवादकर घरसे काढ़ी है, अब कैसे बुलाऊं ? इसलिये लोकनिकूं प्रतीति उपजायकर जानकी आवै, तब हमारा उसका सहवास होय, अन्यथा कैसे

होय ? इसलिये सब देशनिके राजनिकूं बुलावो, समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी आवें सबनिके देखते सीता शपथ लेकर शुद्ध होय मेरे घरविषैं प्रवेश करै, जैसे शची इन्द्रके घरविषैं प्रवेश करै। तब सबने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा। तब सब देशनिके राजा बुलाये सो बाल वृद्ध स्त्री परिवार सहित अयोध्या नगरी आए, जे सूर्यकूं भी न देखैं घर ही विषैं रहैं वे नारी भी आई। अर लोकनिकी कहा बात ? जे वृद्ध बहुत वृत्तान्तके जाननहारे देशविषैं मुखिया सब देशनिसूं आए। कैयकि तुरंगनिपर चढे, कैयकि रथनिपर चढे, तथा पालकी अर अनेक प्रकार असवारिनिपर चढे बड़ी विभूतिसूं आए। विद्याधर आकाशके मार्ग होय विमान बैठे आए, अर भूमिगोचरी भूमिके मार्ग आए मानो जगत् जंगम होय गया, रामकी आज्ञासे जे अधिकारी हुते तिन्होंने नगरके बाहिर लोकनिके रहनेके लिए डेरे खडे कराए, अर महा विस्तीर्ण अनेक महल बनाए, तिनके दृढ स्तम्भके ऊंचे मंडप उदार झरोखे सुन्दर जाली तिनविषैं स्त्रियें भेली और पुरुष भेले भए। पुरुष यथायोग्य बैठे शपथकूं देखवेकी है अभिलाषा जिनके। जेते मनुष्य आए तिनकी सर्व भांति पाहुनगति राजद्वारके अधिकारियोंने करी, सबनिकूं शय्या आसन भोजन तांबूल वस्त्र सुगन्ध मालादिक समस्त सामग्री राजद्वारसे पहुंची, सबनिकी स्थिरता करी। अर रामकी आज्ञासूं भामंडल विभीषण हनुमान सुग्रीव विराधित रत्नजटी यह बड़े बड़े राजा आकाशके मार्ग क्षणमात्रविषैं पुण्डरीकपुर गए सो सब सेना नगरके बाहिर राखि अपने समीप लोगनि सहित जहां जानकी थी वहां आए, जय जय शब्दकर पुष्पांजलि चढाय पायनिकूं प्रणामकर अति विनयसंयुक्त आंगनविषैं बैठे, तब सीता आंसू डारती अपनी निंदा करती भई—दुर्जनोंके वचनरूप दावानलकरि दग्ध भए हैं अंग मेरे सो क्षीरसागरके जलकर भी सींचे शीतल न होंय। तब वे कहते भए—हे देवि, भगवति, सौम्य उत्तमे ! अब शोक तजो, अर अपना मन समाधानविषैं लावो। या पृथिवीविषैं ऐसा कौन प्राणी है जो तुम्हारा अपवाद करै, ऐसा कौन जो पृथिवीकूं चलायमान करै, अर अग्निकी शिखाकूं पीवै, अर सुमेरुके उठायवेका उद्यम करै, अर जीभकर चांद सूर्यकूं चाटै, ऐसा कोई नाहीं। तुम्हारा गुणरूप रत्ननिका पर्वत कोई चलाय न सकै। अर जो तुम सारिखी महासतियोंका अपवाद करै तिनकी जीभके हजार टूंक क्यों न होवैं ? हम सेवकोंके समूहकूं भेजकर जो कोई भरतक्षेत्रविषैं अपवाद करेंगे उन दुष्टोंका निपात करैंगे। अर जो विनयवान तुम्हारे गुण गायवेविषैं अनुरागी हैं उनके गृहविषैं रत्नवृष्टि करैंगे। यह पुष्पक विमान श्रीरामचन्द्रने भेज्या है उसविषैं आनन्दरूप हो अयोध्याकी तरफ गमन करहु, सब देश अर नगर अर श्रीरामका घर तुम विना न सोहैं, जैसे चन्द्रकला विना आकाश न सोहैं, अर दीपक विना मंदिर न सोहै, अर शाखाविना वृक्ष न सोहै। हे राजा जनककी पुत्री ! आज रामका मुखचन्द्र देखो, हे पंडिते पतिव्रते ! तुमकूं अवश्य पतिका वचन मानना। जब ऐसा

होय ? इसलिये सब देशनिके राजनिकूं बुलावो, समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी आवें सबनिके देखते सीता शपथ लेकर शुद्ध होय मेरे घरविषै प्रवेश करै, जैसें शची इन्द्रके घरविषै प्रवेश करै। तब सबने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा। तब सब देशनिके राजा बुलाये सो बाल वृद्ध स्त्री परिवार सहित अयोध्या नगरी आए, जे सूर्यकूं भी न देखैं घर ही विषैं रहैं वे नारी भी आई। अर लोकनिकी कहा बात ? जे वृद्ध बहुत वृत्तान्तके जाननहारे देशविषैं मुखिया सब देशनिसूं आए। कैयकि तुरंगनिपर चढे, कैयकि रथनिपर चढे, तथा पालकी अर अनेक प्रकार असवारिनिपर चढे बड़ी विभूतिसूं आए। विद्याधर आकाशके मार्ग होय विमान बैठे आए, अर भूमिगोचरी भूमिके मार्ग आए मानो जगत् जंगम होय गया, रामकी आज्ञासे जे अधिकारी हुते तिन्होंने नगरके बाहिर लोकनिके रहनेके लिए डेरे खडे कराए, अर महा विस्तीर्ण अनेक महल बनाए, तिनके दृढ स्तम्भके ऊंचे मंडप उदार झरोखे सुन्दर जाली तिनविषैं स्त्रियें भेली और पुरुष भेले भए। पुरुष यथायोग्य बैठे शपथकूं देखवेकी है अभिलाषा जिनके। जेते मनुष्य आए तिनकी सर्व भांति पाहुनगति राजद्वारके अधिकारियोंने करी, सबनिकूं शय्या आसन भोजन तांबूल वस्त्र सुगन्ध मालादिक समस्त सामग्री राजद्वारसे पहुंची, सबनिकी स्थिरता करी। अर रामकी आज्ञासूं भामंडल विभीषण हनुमान सुग्रीव विराधित रत्नजटी यह बड़े बड़े राजा आकाशके मार्ग क्षणमात्रविषैं पुण्डरीकपुर गए सो सब सेना नगरके बाहिर राखि अपने समीप लोगनि सहित जहां जानकी थी वहां आए, जय जय शब्दकर पुष्पांजलि चढाय पायनिकूं प्रणामकर अति विनयसंयुक्त आंगनविषैं बैठे, तब सीता आंसू डारती अपनी निंदा करती भई—दुर्जनोंके वचनरूप दावानलकरि दग्ध भए हैं अंग मेरे सो क्षीरसागरके जलकर भी सींचे शीतल न होंय। तब वे कहते भए—हे देवि, भगवति, सौम्य उत्तमे ! अब शोक तजो, अर अपना मन समाधानविषैं लावो। या पृथिवीविषैं ऐसा कौन प्राणी है जो तुम्हारा अपवाद करै, ऐसा कौन जो पृथिवीकूं चलायमान करै, अर अग्निकी शिखाकूं पीवै, अर सुमेरुके उठायवेका उद्यम करै, अर जीभकर चांद सूर्यकूं चाटै, ऐसा कोई नाहीं। तुम्हारा गुणरूप रत्ननिका पर्वत कोई चलाय न सकै। अर जो तुम सारिखी महासतियोंका अपवाद करै तिनकी जीभके हजार टूंक क्यों न होवें ? हम सेवकोंके समूहकूं भेजकर जो कोई भरतक्षेत्रविषै अपवाद करेंगे उन दुष्टोंका निपात करैंगे। अर जो विनयवान तुम्हारे गुण गायवेविषै अनुरागी हैं उनके गृहविषै रत्नवृष्टि करेंगे। यह पुष्पक विमान श्रीरामचन्द्रने भेज्या है उसविषैं आनन्दरूप हो अयोध्याकी तरफ गमन करहु, सब देश अर नगर अर श्रीरामका घर तुम विना न सोहैं, जैसैं चन्द्रकला विना आकाश न सोहैं, अर दीपक विना मंदिर न सोहै, अर शाखाविना वृक्ष न सोहै। हे राजा जनककी पुत्री ! आज रामका मुखचन्द्र देखो, हे पंडिते पतिव्रते ! तुमकूं अवश्य पतिका वचन मानना। जब ऐसा

कहा तब सीता मुख्य सहेलियोंको लेकर पुष्पकविमानविषै आरूढ़ होय शीघ्र ही संध्याके समय आई,सूर्य अस्त होय गया सो महेंद्रोदय नामा उद्यानविषै रात्रि पूर्ण करी। आगै रामसहित अयोध्या यहां आवती हुती सो वन अति मनोहर देखती हुती सो अब राम विना रमणीक न भास्या !

अथानंतर सूर्य उदय भया, कमल प्रफुल्लित भए। जैसैं राजाके किंकर पृथिवीविषै विचरै तैंसे सूर्यकी किरणें पृथिवीविषे विस्तरीं। जैसैं शपथकर अपवाद नस जाय, तैसैं सूर्यके प्रतापकर अंधकार दूर भया। तब सीता उत्तम नारियोंकर युक्त रामके समीप चाली, हथिनीपर चढ़ी मनकी उदासीनताकर हर्ती गई है प्रभा जाकी, तो भी भद्र परिणामकी धरणहारी अत्यंत सोहती भई जैसैं चंद्रमाकी कला ताराओंकर मंडित सोहै तैंसे सीता सखियों करि मंडित सोहै। सब सभा विनय संयुक्त सीताकूं देख वंदना करती भई, यह पापरहित धीरताकी धरणहारी रामकी रमा सभाविषें आई, राम समुद्र-समान क्षोभकूं प्राप्त भए। लोक सीताके जायवेकर विषादके भरे थे अर कुमारोंका प्रताप देख आश्चर्यके भरे भए, अब सीताके आयवेकर हर्षके भरे ऐसे शब्द करते भए--हे माता ! सदा जयवंत होवो, नंदो वरधो फूलो फलो। धन्य यह रूप, धन्य यह धैर्य, धन्य यह सत्य, धन्य यह ज्योति, धन्य यह भावुकता, धन्य यह गंभीरता, धन्य निर्मलता ऐसे वचन समस्त ही नर नारीनिके मुखसे निकसे आकाशविषै विद्याधर भूमिगोचरी महा कौतुक भरे पलक-रहित सीताके दर्शन करते भए। अर परस्पर कहते भए पृथिवीके पुण्यके उदयसे जनकसुता पीछे आई। कैयक तो वहां श्रीरामकी ओर निरखै हैं जैसै इन्द्रकी ओर देव निरखैं। कैयक रामके समीप बैठे लव अर अंकुश तिनकूं देख परस्पर कहैं है ये कुमार रामके सदृश ही हैं। अर केईयक लक्ष्मणकी ओर देखें हैं। कैसे हैं लक्ष्मण ? शत्रुओंके पक्षके क्षय करिवेकूं समर्थ। अर केई शत्रुघ्नकी ओर, केईयक भामंडलकी ओर, केईयक हनुमानकी ओर, केईयक विभीषणकी ओर, केईयक विराधितकी ओर, अर केईयक सुग्रीवकी ओर निरखे हैं अर केईयक आश्चर्यकूं प्राप्त भए सीताकी ओर देखैं हैं।

अथानंतर जानकी जायकर रामकूं देख आपकूं वियोग-सागरके अन्तकूं प्राप्त भई मानती भई। जब सीता सभाविषैं आई तब लक्ष्मण अर्घ देय नमस्कार करता भया, अर सब राजा प्रणाम करते भए। सीता शीघ्रताकर निकट आवने लगी तब राघव यद्यपि क्षोभित हैं, तथापि सकोप होय मनमें विचारते भए इसे विषम वनविषैं मेली थी सो मेरे मनकी हरणहारी फिर आई। देखो यह महा ढीठ है, मैं तजी तो भी मोसैं अनुराग नाहीं छांडै है ? यह रामकी चेष्टा जान महासती उदासचित्त होय विचारती भई--मेरे वियोगका अन्त नहीं आया, मेरा मनरूप जहाज विरहरूप समुद्रके तीर आय फटा चाहै है, ऐसी चिंतासे व्याकुलचित्त भई पगके अंगूठेसूं पृथिवी कुचरती भई। बलदेवके समीप भामंडलकी बहिन कैसी सोहै है जैसी इन्द्रके आगे सम्पदा सोहै। तब राम बोले----हे सीते ! मेरे आगे कहा तिष्ठै है, तू परे जा, मैं तेरे देखिवेका

अनुरागी नाहीं, मेरी आंख मध्यान्हके सूर्य अर आशीविष सर्प तिनकूं देख सकै, परंतु तेरे तन-कूं न देख सकै है। तू बहुत मास दशमुखके मंदिरविषैं रही, अब तोहि घरविषैं राखना मोहि कहा उचित? तब जानकी बोली--तुम महा निर्दईचित्त हो, तुमने महा पंडित होयकर भी मूढलोकनिकी न्याई मेरा तिरस्कार कीया सो कहा उचित? मुझ गर्भवतीकूं जिनदर्शनका अभिलाष उपजा हुता सो तुम कुटिलतासूं यात्राका नाम लेय विषम वनविषैं डारी, यह कहां उचित? मेरा कुमरण होता अर कुगति जाती,याविषैं तुमकूं कहा सिद्ध होता? जो तिहारे मनविषैं तजिवेकी हुती तो आर्यिकावोंके समीप मेली होती। जे अनाथ दीन दलिद्री कुटुम्ब-रहित महा-दुखी तिनकूं दुख हरिवेका उपाय जिनशासनका शरण है, या समान और उत्कृष्ट नाहीं। हे पद्मनाभ! तुम करिवेविषैं तो कछू कमी न करी, अब प्रसन्न होवो, आज्ञा करो सो करूं। यह कहकर दुखकी भरी रुदन करती भई। तब राम बोले -मैं जानूं हू तिहारा शील निर्दोष है, अर तुम निष्पाप अणुव्रतकी धरणहारी मेरी आज्ञाकारिणी हो, तिहारे भावनिकी शुद्धता मैं भली भांति जानूं हू। परंतु ये जगत्के लोक कुटिल स्वभाव हैं, इन्होंने वृथा तेरा अपवाद उठाया सो इनकूं संदेह मिटै अर इनकूं यथावत् प्रतीति आवै सो करहु। तब सीताने कहा आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण, जगत्विषैं जेते प्रकारके दिव्य शपथ हैं सो सब करके पृथिवीका संदेह हरूं? हे नाथ! विषोंविषैं महा विष कालकूट है जिसे सूंघकर आशविष सर्प भी भस्म होय जाय सो मैं पीऊं, अर अग्निकी विषम ज्वालाविषैं प्रवेश करूं। अर जो आप आज्ञा करो सो करूं? तब क्षण एक विचारकर राम बोले--अग्निकुण्डविषैं प्रवेश करो। सीता महाहर्षकी भरी कहती भई,यही प्रमाण। तब नारद मनविषैं विचारते भए--यह तो महासती है, परंतु अग्निका कहा विश्वास याने मृत्यु आदरी। अर भामंडल हनुमानादिक महाकोपसे पीडित भए, अर लव अंकुश माताका अग्निविषैं प्रवेश करिवेका निश्चय जान अति व्याकुल भए। अर सिद्धार्थ दोनों भुजा ऊंचीकर कहता भया-हे राम! देवोंसे भी सीताके शीलकी महिमा न कही जाय तो मनुष्य कहा कहै। कदाचित् सुमेरु पातालविषैं प्रवेश करै, अर समस्तसमुद्र सूक जाय, तो भी सीताका शीलव्रत चलायमान न होय। जो कदाचित् चंद्रकिरण उष्ण होय, अर सूर्यकिरण शीतल होय, तो भी सीताकूं दूषण न लगे। मैं विद्याके बलसे पंच सुमेरुविषैं तथा जे कृत्रिम अर अकृत्रिम चैत्यालय शास्वते वहां जिनवंदना करी--हे पद्मनाभ! सीताके व्रतकी महिमा मैं ठौर-ठौर मुनियोके मुखसे सुनी है। तातैं तुम महा विचक्षण हो, महा सतीकूं अग्निप्रवेशकी आज्ञा न करो। अर आकाशविषैं विद्याधर और पृथिवीविषैं भूमिगोचरी सब यही कहते भए, हे देव! प्रसन्न होय सौम्यता भजहु। हे नाथ! अग्नि समान कठोर चित्त न करो। सीता सती है, सीता अन्यथा नाहीं, जे महा पुरुषोंकी रानी होवैं ते कदे ही विकार रूप न होवैं। सब प्रजाके लोक यही वचन कहते भए, अर व्याकुल भए

मोटी मोटी आंसुओंकी बूंद डारते भए ।

तब रामने कही तुम ऐसे दयावान् हो तो पहिले अपवाद क्यो उठाया ? रामने किंकरोंकूं आज्ञा करी-एक तीन सै हाथ चौकोन बापी खोदहु, अर सूके इंधन चन्दन अर कृष्णागुरु तिनकर भरहु,अर अग्नि कर जाज्वल्यमान करहु साक्षात् मृत्युका स्वरूप करहु । तब किंकरनिने आज्ञा-प्रमाण कुदालनिसे खोद अग्निवापिका बनायी, अर ताही रात्रिकूं महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै सकलभूषण मुनिकूं पूर्व वैरके योगकर महा रौद्र विद्युद्वक्र नामा राक्षसीने उपासर्ग किया सो मुनि अत्यन्त उपसर्गकूं जीति केवलज्ञानकूं प्राप्त भये ।

(सकल भूषणकेवलीके पूर्व भव और वैरका कारण)

यह कथा सुनि गौतमस्वामी सूं श्रेणिकने पूछी, हे प्रभो ! राक्षसीके अर मुनिके पूर्व वैर कहा ? तब गौतमस्वामी कहते भये--हे श्रेणिक ! सुन-विजियार्द्ध गिरिकी उत्तरश्रेणीविषैं महा शोभायमान गुंजनामा नगर तहां सिंहविक्रम रानी ताके पुत्र सकलभूषण, ताके स्त्री आठसै, तिनविषै मुख्य किरणमण्डला सो एक दिन उसने अपनी सौतिनके कहेसूं अपने मामाके पुत्र हेमशिखका रूप चित्रपटविषैं लिखा सो सकलभूषणने देख कोप किया । तब सब स्त्रीनिने कही यह हमने लिखवाया है, इसका कोई दोष नाहिं । तब सकलभूषण कोप तजि प्रसन्न भया। एक दिन यह किरणमण्डला पतिव्रता पति-सहित सूती थी सो प्रमादथकी बरडिकर हेमशिख ऐसा नाम कहा । सो वह तो निर्दोष, याके हेमशिखसे भाईकी बुद्धि, अर सकलभूषणने कछू और भाव विचारा, रानीसूं कोप करि वैराग्यकूं प्राप्त भए । अर रानी किरणमंडला भी आर्यिका भई । परन्तु धनीसूं द्वेषभाव, जो याने मोहि झूठा दोष लगाया सो मरकर विद्युद्वक्र नामा राक्षसी भई, सो पूर्व वैर थकी सकलभूषण स्वामी आहारकूं जांय तब यह अंतराय करै, कभी माते हाथियोंके बन्धन तुडाय देय हाथी ग्राममें उपद्रव करैं इनकूं अन्तराय होय? कभी यह आहारकूं जांय तब अग्नि लगाय देय,कभी यह रजोवृष्टि करै,इत्यादि नाना प्रकारके अन्तराय करै, । कभी अश्वका कभी वृषभका रूपकरि इनके सन्मुख आवै, कभी मार्गमे कांटे बखेरै, या भांति यह पापिनी कुचेष्टा करै । एक दिन स्वामी कायोत्सर्ग धर तिष्ठे थे अर इसने शोर किया यह चोर है, सो इसका शोर सुनकर दुष्टोंने पकड़ अपमान किया । बहुरि उत्तम पुरुषोंने छुडाय दिये । एक दिन यह आहार लेकर जाते थे सो पापिनी राक्षसीने काहू स्त्रीका हार लेकर इनके गलेमें डार दिया अर शोर किया कि यह चोर है हार लिये जाय है । तब लोग आय पहुंचे, इनको पीड़ा करी पकर लिया, भले पुरुषोंने छुडाय दिये । या भांति यह क्रूरचित दयारहित पूर्व वैर विरोधसे मुनिकूं उपद्रव करै, गई रात्रिकूं प्रतिमायोग धर महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै विराजे हुते सो राक्षसीने रौद्र उपसर्ग किया, विंतर दिखाये, अर हस्ती

सिंह व्याघ्र सर्प दिखाये, अर रूप गुणमंडित नानाप्रकारकी नारी दिखाई, भांति भांतिके उपद्रव किये। परन्तु मुनिका मन न डिगा, तब केवलज्ञान उपजा। सो केवलज्ञानकी महिमाकर दर्शनकूं इन्द्रादिक देव कल्पवासी भवनवासी व्यंतर जोतिषी कैयक हाथिनीपर चढ़े, कैयक सिंहनिपर चढे, कैयक ऊंट खच्चर मींढा बघेरा अष्टापद इनपर चढें, कैयक पक्षियोंपर चढे, कैयक विमान बैठे, कैयक रथनिपर कैयक पालकी चढे इत्यादि मनोहर वाहनोंपर चढे आए, देवोंकी असवारी-के तिर्यंच नाहीं,देवों ही की माया है,देव ही विक्रियाकरि तिर्यंचका रूप धरै हैं। आकाशके मार्ग होय महाविभूति सहित सर्व दिशाविषैं उद्योत करते आये,मुकुट धरे हार कुण्डल पहिरे अनेक आभूषणनिकर शोभित सकलभूषण केवलीके दर्शनकूं आये। पवनसे चंचल है ध्वजा जिनकी अप्सरानिके समूह अयोध्याकी ओर आए महेन्द्रोदय उद्यानविषैं विराजे हैं तिनके चरणारविंदविषैं है मन जिनका पृथिवीकी शोभा देखते आकाशसे नीचे उतरे अर सीताके शपथ लेनेकूं अग्निकुण्ड तैयार होय रहा हुता सो देखकर एक मेघकेतु नामा देव इन्द्रसे कहता भया--हे देवेंद्र! हे नाथ! सीता महा सतीकूं उपसर्ग आय प्राप्त भया है यह महा श्राविका पतिव्रता शीलवंती अति निर्मल चित्त है इसे ऐसा उपद्रव क्यों होय? तब इंद्रने आज्ञा करी हे मेघकेतु! मैं सकलभूषण केवलीके दर्शन-कूं जाऊं हूं, अर तू महासतीका उपसर्ग दूर करियो। या भांति आज्ञाकर इंद्र तो महेंद्रोदय नामा उद्यानविषैं केवलीके दर्शनकूं गया, अर मेघकेतु सीताके अग्निकुंडके ऊपर आय आकाशविषैं विमानविषैं तिष्ठा। कैसा है विमान? सुमेरुके शिखर समान है शोभा जाकी वह देव आकाशविषै सूर्य-सरीखा देदीप्यमान श्रीरामकी ओर देखै, राम महासुन्दर सब जीवनिके मनकूं हरै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै सकलभूषण केवलीके दर्शनकू देवनिका आगमन वर्णन करनेवाला एक सौ चारवां पर्व पूर्ण भया ॥१०४॥

एक सौ पांचवां पर्व

[सीताका अग्निकुंडमें प्रवेश, और शीलके माहात्म्यसे सरोवररूप परिणत होना]

अथानंतर श्रीराम उस अग्निवापिकाकूं निरखकरि व्याकुल मन भया विचारै है अब इस कांताकूं कहां देखूंगा, यह गुणनिकी खान महा लावण्यताकरि युक्त कांतिकी धरणहारी शीलरूप वस्त्रकरि मंडित मालतीकी माला-समान सुगंध सुकुमार शरीर अग्निके स्पर्शही से भस्म होय जायगी, जो यह राजा जनकके घर न उपजती तो भला था, यह लोकापवाद अर अग्निविषैं मरण तो न होता, इस बिना मुझे क्षणमात्र भी सुख नाहीं, इस सहित वनविषैं वास भला, अर या विना स्वर्गका वास भी भला नाहीं। यह शीलवती परम श्राविका है इसे मरणका भय

नाहीं, इहलोक परलोक मरण वेदना अकस्मात् असहायता चोर यह सप्त भय तिनकर रहित सम्यग्दर्शन इसके दृढ है, यह अग्निविषैं प्रवेश करेगी। अर मैं रोकूं तो लोकनिविषैं लज्जा उपजै। अर यह लोक सब मोहि कह रहे यह महा सती है याहि अग्निकुंडविषैं प्रवेश न करावो,सो मैं न मानी। अर सिद्धार्थ हाथ ऊंचे कर कर पुकारा सो मैं न मानी, सो वह भी चुप होय रहा। अब कौन मिसकर इसे अग्निकुंडविषैं प्रवेश न कराऊं, अथवा जिसके जिस भांति मरण उदय होय है उसी भांति होय है, टारा टरे नाहीं, तथापि इसका वियोग मुझसे सहा न जाय, या भांति राम चिंता करैं है। अर वापीविषैं अग्नि प्रज्वलित भई समस्त नर नारियोंके आंसुवोंके प्रवाह चले, धूमकरि अंधकार होय गया, मानो मेघमाला आकाशविषैं फैल गई। आकाश भ्रमर-समान श्याम होय गया, अथवा कोकिलस्वरूप होय गया, अग्निके धूमकर सूर्य आच्छादित हुवा मानों सीताका उपसर्ग देख न सकया सो दयाकर छिप गया। ऐसी अग्नि प्रज्वली जिसकी दूर तक ज्वाला विस्तरी, मानो अनेक सूर्य ऊगे, अथवा आकाशविषैं प्रलय-कालकी सांझ फूली, जानिये दशों दिशा स्वर्णमई होय गई हैं, मानों जगत् विजुरीमय होय गया, अथवा सुमेरुके जीतिवेकूं दूजा जंगम सुमेरु और प्रकटा। तब सीता उठी,अत्यंत निश्चल-चित्त होय कायोत्सर्गकरि अपने हृदयविषैं श्रीऋषभादि तीर्थंकरदेव विराजे हैं तिनकी स्तुतिकरि सिद्धनिकूं साधुनिकूं नमस्कारकरि श्रीमुनिसुव्रतनाथ हरिवंशके तिलक बीसवां तीर्थंकर जिनके तीर्थ-विषैं ये उपजे हैं तिनका ध्यान करि सर्व प्राणियोंके हितू आचार्य तिनकूं प्रणाम करि, सर्व जीवनिसूं क्षमाभावकरि जानकी कहती भई--मनकरि वचनकरि कायकरि स्वप्नविषैं भी राम विना और पुरुष मैं न जाना, जो मैं झूठ कहती हूं तो यह अग्निकी ज्वाला क्षणमात्रविषैं मुझे भस्म करियो, जो मेरे पतिव्रता-भावविषैं अशुद्धता होय, राम सिवाय पर नर मनसे भी अभि-लाषा होय तो हे वैश्वानर ! मुझे भस्म करियो। जो मैं मिथ्यादर्शिनी पापिनी व्यभिचारिणी हूं तो इस अग्निसे मेरा देह दाहकूं प्राप्त होवै, अर जो मैं महा सती पतिव्रता अणुव्रतधारिणी श्राविका हूं तो मुझे भस्म न करियो, ऐसा कहकर नमोकार मंत्र जप सीता सती अग्निवापिकामें प्रवेश करती भई, सो याके शीलके प्रभावसे अग्नि था सो स्फटिक मणि सारिखा निर्मल शीतल जल होय गया, मानों धरतीको भेदकर यह वापिका पातालसे निकसी। जलविषैं कमल फूल रहे हैं भ्रमर गुंजार करैं हैं, अग्निकी सामग्री सब विलाय गई, न ईंधन न अंगार, जलके झाग उठने लगे, अर अति गोल गंभीर महा भयंकर भ्रमर उठने लगे, जैसी मृदंगकी ध्वनि होय तैसैं शब्द जलविषैं होने भए, जैसा क्षोभकूं प्राप्त भया समुद्र गाजै तैसा शब्द वापीविषैं होता भया। अर जल उछला पहले गोडों तक आया बहुरि कमर तक आया, निमिषमात्रविषैं छाती तक आया। तब भूमिगोचरी डरे अर आकाशविषैं जे विद्याधर हुते तिनकूं भी विकल्प उपजा न

जानिए क्या होय ? बहुरि वह जल लोगोंके कण्ठ तक आया तब अति भय उपजा सिर ऊपर पानी चला तब लोग अति भयकूं प्राप्त भए, ऊंची भुजाकर वस्त्र अर बालकोंको उठाय पुकार करते भए--हे देवि ! हे लक्ष्मी ! हे सरस्वती ! हे कल्याणरूपिणी ! हे धर्मधुरंधरे ! हे मान्ये ! हे प्राणीदया-रूपिणी ! हमारी रक्षा करो हे महासाध्वी मुनिसमान निर्मल मनकी धरणहारी ! दया करो, हे माता ! बचावो बचावो, प्रसन्न होवो । जब ऐसे वचन विह्वल जो लोक तिनके मुखसे निकसे तब माताकी दयासे जल थंभा, लोक बचे । जलविषैं नाना जातिके ठौर ठौर कमल फूले जल साम्यता-कूं प्राप्त भया जे भंवर उठे थे सो मिटे अर भयंकर शब्द मिटे । वह जल जो उछला था मानों वापीरूप वधू अपने तरंगरूप हस्तोंकर माताके चरणयुगल स्पर्शती हुती । कैसे हैं चरणयुगल ? कमलके गर्भसे हू अति कोमल हैं अर नखोंकी ज्योतिकर देदीप्यमान हैं, जलविषैं कमल फूले तिनकी सुगंधताकरि भ्रमर गुंजार करैं हैं सो मानो संगीत करैं हैं अर क्रौंच चकवा हंस तिनके समूह शब्द करैं हैं अति शोभा होय रही है अर मणि स्वर्णके सिवाण बन गए तिनकूं जलके तरंगोंके समूह स्पर्शे हैं अर जिसके तट मरकत मणिकर निर्मापे अति सोहैं हैं ।

ऐसे सरोवरके मध्य एक सहस्रदलका कमल कोमल विमल विस्तीर्ण प्रफुल्लित महाशुभ उसके मध्य देवनिने सिंहासन रच्या रत्ननिकी किरणनिकर मंडित, चंद्रमंडल तुल्य निर्मल, उसमें देवांगनाओंने सीताकूं पधराई, अर सेवा करती भई, सो सीता सिंहासनविषैं तिष्ठी, अति अद्भुत है उदय जाका शची तुल्य सोहती भई । अनेक देव चरणनिके तले पुष्पांजलि चढ़ाय धन्य धन्य शब्द कहते भए, आकाशविषैं कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वृष्टि करते भए, अर नानाप्रकारके दुन्दुभी बाजे तिनके शब्दकर सब दिशा शब्दरूप होती भई, गुंज जातिके वादित्र महामधुर गुंजार करते भये, अर मृदंग बाजते भए, ढोल दमामा बाजे नादि जातिके वादित्र बाजे अर काहल जातिके वादित्र बाजे अर तुरही करनाल आदि अनेक वादित्र बाजे, शंखके समूह शब्द करते भए, अर वीण बाजा ताल झांझ मंजीर झालरी इत्यादि अनेक वादित्र बाजे, विद्याधरनिके समूह नाचते भए, अर देवनिके यह शब्द भए, श्रीमत् जनक राजाकी पुत्री परम उदयकी धरणहारी श्रीमत् रामकी रानी अत्यंत जयवंत होवे, अहो निर्मल शील जाका आश्चर्यकारी ऐसे शब्द सब दिशा-विषैं देवनिके होते भये । तब दोनों पुत्र लवण अंकुश अकृत्रिम है मातासूं हित जिनका सो जल तिरकर अतिहर्षके भरे माताके समीप गए । दोनों पुत्र दोनों तरफ जाय ठाढ़े भए, माताकूं नमस्कार किया सो माताने दोनोंके शिर हाथ धरा । रामचन्द्र मिथिलापुरीके राजाकी पुत्री मैथिली कहिए सीता उसे कमलवासिनी लक्ष्मी-समान देख महा अनुरागके भरे समीप गए । कैसी है सीता ? मानों स्वर्णकी मूर्ति, अग्निविषैं शुद्ध भई है अति उत्तम ज्योतिके समूहकर मंडित है शरीर जाका । राम कहैं हैं, हे देवि ! कल्याणरूपिणी उत्तम जीवनिकर पूज्य महा अद्भुत चेष्टाकी

धरणहारी, शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है मुख जाका, ऐसी तुम सो हमपर प्रसन्न होहु। अब मैं कभी ऐसा दोष न करूंगा, जिसमें तुमकूं दुःख होय। हे शीलरूपिणी मेरा अपराध क्षमा करहु। मेरे आठ हजार स्त्री हैं तिनकी सिरताज तुम हो, मोकूं आज्ञा करहु सो करूं। हे महासती! मैं लोकापवादके भयसे अज्ञानी होयकरि तुमकूं कष्ट उपजाया सो क्षमा करहु। अर हे प्रिये, पृथिवीविषैं मो सहित यथेष्ट विहार करहु। यह पृथ्वी अनेक वन उपवन गिरियों कर मंडित है, देव विद्याधरनिकर संयुक्त हैं। समस्त जगत्‌कर आदरसों पूजी थकी मासहित लोकविषैं स्वर्ग-समान भोग भोगि। उगते सूर्यसमान यह पुष्पकविमान ताविषैं मेरे सहित आरूढ भई सुमेरु पर्वतके वनविषैं जिनमदिर हैं तिनका दर्शन कर। अर जिन जिन स्थाननिविषैं तेरी इच्छा होय वहां क्रीडा कर। हे कांते! तू जो कहे सो ही मैं करूं, तेरा वचन कदाचित् न उलघूं, देवांगना-समान वह विद्याधरी तिनकर मंडित हे बुद्धिवंती तू ऐश्वर्यकूं भज, जो तेरी अभिलाषा होयगी सो तत्काल सिद्ध होयगी। मैं विवेकरहित दोषके सागरविषैं मग्न तेरे समीप आया हू सो साध्वि, अब प्रसन्न होहु।

अथानंतर जानकी बोली--हे राजन्! तिहारा कुछ दोष नाहीं, अर लोकनिका दोष नाहीं, मेरे पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मके उदयसे यह दुःख भया। मेरा काहूपर कोप नाहीं तुम क्यों विषादकूं प्राप्त भए? हे बलदेव! तिहारे प्रसादसे स्वर्ग-समान भोग भोगे, अब यह इच्छा है ऐसा उपाय करूं जिसकर स्त्रीलिंगका अभाव होय। यह महा क्षुद्र विनश्वर भयंकर इंद्रियनिके भोग मूढजनोंकरि सेव्य, तिनकर कहा प्रयोजन? मैं अनंत जन्म चौरासी लक्ष योनिविषैं खेद पाया, अब समस्त दुःखके निवृत्तिके अर्थ जिनेश्वरी दीक्षा धरूंगी। ऐसा कहकर नवीन अशोक वृक्षके पल्लव समान अपने जे कर तिनकर सिरके केश उपाड रामके समीप डारे। सो इन्द्रनीलमणि समान श्याम सचिक्कण पातरे सुगंध वक्र लंबायमान महामृदु महा मनोहर ऐसे केशनिकूं देख-कर राम मोहित होय मूर्च्छा खाय पृथिवीविषैं पड़े सो जौलग इनकूं सचेत करैं तौलग सीता पृथिवीमती आर्यिकापै जायकर दीक्षा धरती भई, एक वस्त्रमात्र है परिग्रह जाके, सब परिग्रह तजकर आर्यिकाके व्रत धरे। महा पवित्रता युक्त परम वैराग्यकर दीक्षा धरती भई, व्रतकर शोभा-यमान जगत्‌के वंदिवे योग्य होती भई। अर राम अचेत भए थे सो मुक्ताफल अर मलायगिरि चंदनके छांटिवेकरि, तथा ताड़के बीजनोंकी पवनकरि सचेत भए तब दशों दिशाकी ओर देखैं, तो सीताकूं न देखकरि चित्त शून्य होय गया। शोक अर विषादकरि युक्त महा गजराजपर चढे, सीताकी ओर चाले। सिरपर छत्र फिरैं हैं, चमर ढुरैं हैं, जैसे देवनिकर मंडित इंद्र चालै तैसैं नरेन्द्रनिकरि युक्त राम चाले। कमलसारिखे हैं नेत्र जिनके कषायके वचन कहते भए, अपने प्यारे जनका मरण भला, परन्तु विरह भला नाहीं। देवनिने सीताका प्रातिहार्य किया, सो भला किया

पर उसने हमकूं तजना विचारा सो भला न किया। अब मेरी रानी जो यह देव न दें तो मेरे अर देवनिके युद्ध होयगा। यह देव न्यायवान् होयकरि मेरी स्त्रीकूं हरैं ऐसे अविचारके वचन कहे। लक्ष्मणसमझावै, सो समाधान न भया। अर क्रोध संयुक्त श्रीरामचंद्र सकलभूषण केवली-की गंधकुटीकूं चाले। सो दूरसे सकलभूषण केवलीकी गंधकुटी देखी। केवली महाधीर सिंहासन पर विराजमान, अनेक सूर्यकी दीप्ति धरें, केवली ऋद्धिकर युक्त पापोंके भस्म करिवेकूं साक्षात् अग्निरूप, जैसैं मेघपटल रहित सूर्यका बिंब सोहै तैसैं कर्मपटलरहित केवलज्ञानके तेजकर परम ज्योतिरूप भासैं हैं, इन्द्रादिक समस्त देव सेवा करैं हैं दिव्यध्वनि खिरै है, धर्मका उपदेश होय है, सो श्रीराम गंधकुटीकूं देखकरि शांतचित्त होय हाथीतैं उतरि प्रभुके समीप गए, तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड़ नमस्कार किया। केवलीके शरीरकी ज्योतिकी छटा राम पर आय पडी सो अति प्रकाशरूप होय गए भाव-सहित नमस्कारकरि मनुष्यनिकी सभाविषैं बैठे। अर चतुरनिकायके देवनिकी सभा नानाप्रकारके आभूषण पहिरे ऐसी भासै मानों केवलीरूप जे रवि तिनकी किरण ही हैं। अर राजानिके राजा श्रीरामचन्द्र केवलीके निकट ऐसे सोहैं मानों सुमेरुके शिखरके निकट कल्पवृक्ष ही हैं। अर लक्ष्मण नरेंद्र मुकट कुंडल हारादिकर शोभित ऐसे सोहैं मानों बिजुरीसहित श्याम घटा ही है। अर शत्रुघ्न शत्रुनिके जीतनहारे ऐसे सोहैं मानों दूसरे कुबेर ही हैं। अर लव अंकुश दोऊ वीर महा धीर महासुन्दर गुण सौभाग्यके स्थानक चांद सूर्यसे सोहैं। अर सीता आर्यिका आभूषणादि-रहित एक वस्त्रमात्र परिग्रह ऐसी सोहै मानों सूर्यकी मूर्ति शांतताकूं प्राप्त भई है। मनुष्य अर देव सब ही विनयसंयुक्त भूमिविषैं बैठे धर्म श्रवणकी है अभिलाषा जिनके। तहां एक अभयघोष नामा मुनि सब मुनिनविषैं श्रेष्ठ संदेहरूप आतापकी शांतिके अर्थ केवलीकूं पूछते भए--हे सर्वोत्कृष्ट सर्वज्ञदेव! ज्ञानरूप शुद्ध आत्मतत्वका स्वरूप नीके जाननेसे मुनिनिकूं केवलबोध होय उसका निर्णय करो। तब सकलभूषण केवली योगीश्वरोंके ईश्वर कर्मोंके क्षयका कारण तत्त्वका उपदेश दिव्यध्वनिकर कहते भए--हे श्रेणिक! केवलीने जो उपदेश दिया ताका रहस्य मैं तुमकूं कहू हू जैसैं समुद्रमेंसे एक बूंद कोई लेय तैसैं केवलीकी वाणी अति अथाह उसके अनुसार संक्षेप व्याख्यान करूं हू, सो सुनो।

हो भव्य जीव हो! आत्मतत्व जो अपना स्वरूप सो सम्यग्दर्शन ज्ञान आनंदरूप अर अमूर्तीक चिद्रूप लोकप्रमाण असंख्य-प्रदेशी अतींद्रिय अखंड अव्याबाध निराकार निर्मल निरंजन परवस्तुसे रहित निज गुण पर्याय स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावकर अस्तित्वरूप है, जिसका ज्ञान निकट भव्यकूं होय। शरीरादिक पर वस्तु असार हैं, आत्मतत्व सार है सो अध्यात्म विद्याकरि पाइये है। वह सबका देखनहारा जाननहारा अनुभवदृष्टिकर देखिये, आत्म-ज्ञानकरि जानिये। अर जड़ पदार्थ पुद्गल धर्म अधर्म काल आकाश ज्ञेयरूप हैं,ज्ञाता नाहीं। अर

यह लोक अनंत अलोकाकाशके मध्य अनंतवें भागविषैं तिष्टै है, अधोलोक मध्यलोक ऊर्ध्वलोक ये तीन लोक, तिनविषैं सुमेरु पर्वतकी जड हजार योजन, उसके तले पाताल लोक है। उसविषैं सूक्ष्म स्थावर तो सर्वत्र हैं, अर बादर स्थावर आधारविषैं हैं। विकलत्रय अर पंचेंद्रिय तिर्यंच नाहीं, मनुष्य नाहीं। खरभाग पंकभागविषैं भवनवासी देव तथा व्यंतरदेवनिके निवास हैं तिनके तले सात नरक हैं तिनके नाम- रत्नप्रभा १ शर्करा २वालुका ३ पंकप्रभा ४ धूमप्रभा ५ तमःप्रभा ६ महातमःप्रभा ७ सो सात ही नरककी धरा महा दुखकी देनहारी सदा अन्धकाररूप है। चार नरकनिविषैं तो उष्णकी बाधा है अर पांचवें नरक उपरले तीन भाग उष्ण अर नीचला चौथा भाग शीत अर छठा नरक शीत ही है अर सातवें महाशीत। ऊपरले नरकविषैं उष्णता है महा विषम अर नीचले नरकविषैं शीत है सो अति विषम। नरककी भूमि महा दुस्सह और परम दुर्गम है जहां राध रुधिरका कीच है। महादुर्गंध है श्वान सर्प मार्जार मनुष्य खर तुरंग ऊंट इनका मृतक शरीर सड़ जाय उसकी दुर्गंधसे असंख्यातगुणी दुर्गंध है। नाना प्रकार दुखनिके सर्व कारण हैं। अर पवन महा प्रचण्ड विकराल चलै हैं, जाकरि भयंकर शब्द होय रह्या है, जे जीव विषय कषाय-संयुक्त हैं कामी हैं क्रोधी हैं पंच इंद्रियोंके लोलुपी हैं, वे जैसैं लोहेका गोला जलविषैं डूबै तैसैं नरकविषैं डूबै हैं। जे जीवनिकी हिंसा करैं मृषा वाणी बोलैं, परधन हरैं परस्त्री सेवैं महा आरम्भी परिग्रही, ते पापके भारकर नरकविषैं पडैं हैं। मनुष्य देह पाय जे निरंतर भोगासक्त भए हैं जिनके जीभ वश नाहीं, मन चंचल, ते प्रचंड कर्मके करणहारे नरक जाय हैं जे पाप करैं, करावैं, पापकी अनुमोदना करैं, ते आर्त रौद्रध्यानी नरकके पात्र हैं। वह वज्राग्निके कुंडमें डारिए हैं,वज्राग्निके दाहकर जलते थके पुकारैं हैं। अग्निकुंडसे छूटैं है तब वैतरणी नदीकी ओर शीतल जलकी वांछाकर जाय है वहां जल महाखार दुर्गंध उसके स्पर्शसे ही शरीर गलजाय है। दुखका भाजन वैक्रियिकशरीर ताकर आयुपर्यंत नाना प्रकार दुख भोगवे हैं। पहिले नरक आयु उत्कृष्ट सागर १ दूजे ३ तीजे ७ चौथे १० पांचवें १७ छठे २२ सातमें ३३ सो पूर्णकर मरैं है, मारेसे मरैं नाहीं। वैतरिणीके दुखसे डरे छायाके अर्थ असिपत्र वनमें जाय है,तहां खड्ग बाण बरछी कटारी समीपत्र असराल पवनकर पडैं हैं, तिनकर तिनका शरीर विदारा जाय है, पछाड़ खाय भूमिमें पडैं। अर तिनकूं कभी कुंभीपाकमें पकावै हैं, कभी नीचा माथा ऊंचा पगकर लटकावै हैं, मुगदरनिसूं मारिए हैं कुहाडोंसे काटिए हैं, करोतनसे विदारिए हैं, घानीमें पेलिए हैं, नाना प्रकारके छेदन भेदन हैं। यह नारकी जीव महा दीन महा तृषाकरि तृषित पीनेका पानी मांगै है तब तांबादिक गाल प्यावैं हैं। ते कहै हैं हमको यहां तृषा नाहीं, हमारा पीछा छोड़ दो। तब बलात्कार तिनकूं पछाड़ संडासियोंसे मुख फार मार मार प्यावै हैं, कंठ हृदय विदीर्ण होय जाय है, उदर फट जाय है। तीजे नरकतक तो परस्पर ही दुःख हैं अर असुरकुमारिनकी प्रेरणा-

से भी दुःख हैं अर चौथेमे लेय सातवें तक असुरकुमारनिका गमन नाहीं, परस्पर ही पीड़ा उपजावै हैं। नरकविषै नीचलेमे नीचले बढ़ता दुख है। सातवां नरक सबनिमें महा दुखरूप है। नारकियोंकू पहिला भव याद आवै हैं अर दूसरे नारकी तथा तीजे लग असुरकुमार पूर्वले कर्म याद करावैं हैं, तुम भले गुरुनिके वचन उलंघ, कुगुरु कुशास्त्रके बलकर मांसकू निर्दोष कहते हुते, नाना प्रकारके मांसकर अर मधु कर अर मदिराकरि कुदेवनिका आराधन करते हुते, सो मांसके दोषतैं नरकविषै पड़े हो, ऐसा कहकरि इनहीका शरीर काट काट इनके मुखविषैं देय हैं अर लोहेके तथा तांबेके गोला बलते पछाड़ पछाड़ संडासियोंसे मुख फाड फाड़, छातीपर पांव देय देय तिनके मुखविषैं घालें हैं। अर मुद्गरोंसे मारैं हैं। अर मद्यपायीकूं मार मार ताता तांबा शीशा प्यावैं हैं। अर परदारारत पापिनकूं वज्राग्निकर तप्तायमान लोहेकी जे पूतली तिनसूं लिपटावें है, अर जे परदारारत फूलनिके सेज सूते हैं तिनकूं सूलनिके सेज ऊपर सुवावैं हैं। अर स्वप्नकी माया-समान असार जो राज्य उसे पायकर जे गर्व हैं अनीति करैं हैं तिनकूं लोहेके कीलोंपर बैठाय मुद्गरांसे मारैं हैं सो महा विलाप करैं हैं, इत्यादि पापी जीवनिकूं नरकके दुख होय हैं, सो कहां लग कहैं एक निमिषमात्र भी नरकमें विश्राम नाहीं, आयुपर्यंत तिलमात्र आहार नाहीं, अर बूंदमात्र जलपान नाहीं, केवल मारहीका आहार है।

तातैं यह दुस्सह दुःख अधर्मके फल जान अधर्मकूं तजहु। ते अधर्म मधुमांसादिक अभक्ष्य भक्षण, अन्याय वचन दुराचार, रात्रि-आहार, वेश्यासेवन परदारागमन स्वामिद्रोह मित्रद्रोह विश्वासघात कृतघ्नता लंपटता ग्रामदाह वनदाह परधनहरण अमार्गसेवन परनिंदा परद्रोह प्राणघात बहु-आरंभ बहुपरिग्रह निर्दयता खोटी लेश्या रौद्रध्यान मृषावाद कृपणता कठोरता दुर्जनता मायाचार निर्माल्यका अंगीकार, माता पिता गुरुओंकी अवज्ञा, बाल वृद्ध स्त्री दीन अनाथनिका पीडन इत्यादि दुष्ट कर्म नरकके कारण हैं वे तज शांतभाव धर जिनशासनकूं सेवहु जाकर कल्याण होय। जीव छै कायके हैं--पृथिवीकाय अप (जल) काय, तेज (अग्नि) काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय त्रसकाय तिनकी दया पालहु। अर जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल छै द्रव्य हैं अर सात तत्व नव पदार्थ पंचास्तिकाय तिनकी श्रद्धा करहु। अर चतुर्दश गुणस्थानका स्वरूप अर सप्तभंगी वाणीका स्वरूप भलीभांति केवलीकी आज्ञा-प्रमाण उरविषैं धरो, स्यात्अस्ति, स्यान्नास्ति स्यात् अस्तिनास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यात्अस्ति-अवक्तव्य, स्यान्नास्ति अवक्तव्य, स्यात् अस्तिनास्ति अवक्तव्य, ये सप्तभंग कहे। अर प्रमाण कहिए वस्तुका सर्वांग कथन, अर नय कहिए वस्तु का एकअंग कथन, अर निक्षेप कहिए नाम स्थापना द्रव्य भाव ये चार, अर जीवनिविषैं एकेंद्रीके दोय भेद सूक्ष्म बादर अर पंचेंद्रीके दोय भेद सैनी असैनी, अर बेइंद्री तेइंद्री चौइंद्री ये सात भेद, जीवोंके हैं सो पर्याप्त अपर्याप्तकर चौदह भेद जीवसमास होय हैं। अर जीवके दोय भेद एक

संसारी एक सिद्ध, जिसमें संसारीके दोय भेद एक भव्य दूसरा अभव्य। जो मुक्ति होने योग्य सो भव्य अर मुक्ति न होने योग्य सो अभव्य। अर जीवका निजलक्षण उपयोग है ताके दोय भेद एक ज्ञान एक दर्शन। ज्ञान समस्त पदार्थकूं जानै, दर्शन समस्त पदार्थकूं देखै। सो ज्ञानके आठ भेद--मति श्रुति अवधि मनःपर्यय केवल कुमति कुश्रुत कुअवधि। अर दर्शनके चार भेद-चक्षु अचक्षु अवधि केवल। अर जिनके एक स्पर्शन इन्द्री होय सो स्थावर कहिये। तिनके भेद पांच पृथिवी अप तेज वायु वनस्पति। अर त्रसके भेद चार-बेइन्द्री तेइन्द्री चौइंद्री पंचेंद्री। जिनके स्पर्शन अर रसना वे द्वेइन्द्री, जिनके स्पर्शन रसना नासिका सो तेइन्द्री, जिनके स्पर्शन रसना नासिका चक्षु वे चौइन्द्री, जिनके स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु श्रोत्र वे पंचेन्द्री। चौइन्द्री तक तो संमूर्च्छन अर असैनी हैं। अर पंचेंद्रीविषै कई सम्मूर्च्छन कई गर्भज, तिनविषैं कई सैनी, कई असैनी। जिनके मन वे सनी अर जिनके मन नाहीं वे असैनी। अर जे गर्भसे उपजैं वे गर्भज, अर जे गर्भविना उपजैं स्वतः स्वभाव उपजैं, वे संमूर्च्छन। गर्भजके भेद तीन--जरायुज अंडज पोतज। जे जराकर मंडित गर्भमें निकसे मनुष्य घोटादिक वे जरायुज, अर जे विना जेरके सिंहादिक सो पोतज, अर जे अंडासे उपजे पक्षी आदिक वे अंडज। अर देव नारकियोंका उपपाद जन्म है, माता पिताके संयोग विना ही पुण्य पापके उदयसे उपजैं हैं। देव तो उत्पादशय्याविषैं उपजैं है, अर नारकी बिलोंमें उपजैं हैं। देवयोनि पुण्यके उदयसे है, अर नारकयोनि पापके उदयसे है। अर मनुष्य जन्म पुण्य पापकी मिश्रतासे है, अर तिर्यंच गति मायाचारके योगसे हैं। देव नारकी मनुष्य इन विना सब तिर्यंच जानने। जीवोंकी चौरासी लाख योनिये हैं उनके भेद सुनो--पृथिवीकाय जलकाय अग्निकाय वायुकाय नित्य निगोद इतरनिगोद ये तो सात सात लाख योनि हैं, सो बयालीस लाख योनि भई। अर प्रत्येकवनस्पति दस लाख, ये बावन लाख भेद स्थावरके भये। अर वेइंद्री तेइन्द्री चौइंद्री ये दोय दोय लाख योनि उसके छै लाख योनि भेद विकलत्रयके भए। अर पंचेंद्री तिर्यंचके भेद चार लाख योनियें सब तिर्यंच योनिके बासठ लाख भेद भए। अर देवयोनिके भेद चार लाख, नरकयोनिके भेद चार लाख, अर मनुष्य योनिके चौदह लाख, ये सब चौरासी लाख योनि महा दुखरूप हैं। इनसे रहित सिद्धपद ही अविनाशी सुखरूप है। संसारी जीव सब ही देहधारी हैं, अर सिद्ध परमेष्ठी देहरहित निराकार हैं। शरीरके भेद पांच---औदारिक वैक्रियक आहारक तैजस, कार्माण। तिनविषैं तैजस कार्माण तो अनादिकालसे सब जीवनकूं लगि रहे हैं तिनका अंतकरि महामुनि सिद्ध पद पावैं हैं औदारिकसे असंख्यातगुणी अधिक वर्गणा वैक्रियकके हैं, अर वैक्रियकतैं असंख्यातगुणी आहारकके हैं अर आहारकतै अनंतगुणी तैजसकी हैं, अर तैजसतैं अनन्तगुणी कार्माणकी हैं। जा समय संसारी जीव देहकूं तजकर दूसरी गतिकूं जाय है ता समय अनाहार कहिए। जितनी देर एक गतिसे दूसरी

गतिविषैं जाते हुए जीवको लगै है उस अवस्थामें जीवकूं अनाहारी कहिए। अर जितना वक्त एक गतिसे दूसरी गतिमें जानेमें लगे सो वह एक समय, तथा दो समय, अधिकतैं अधिक तीन समय लगै है, सो ता समय जीवके तैजस अर कार्माण ये दो ही शरीर पाइये है। वगर शरीर के यह जीव सिवा सिद्ध अवस्थाके और काहू अवस्थामें काहू समय नाहीं होता। या जीवके हर वक्त अर हर गतिमें जन्मते मरते साथ ही रहते हैं जा समय यह जीव घातिया अघातिया दोऊ प्रकारके कर्म क्षय करके सिद्ध अवस्थाकूं जाता है ता समय तैजस अर कार्माणका क्षय होता है। अर जीवनिके शरीरके परमाणुनिकी सूक्ष्मता या प्रकार है-- -औदारिकतैं वैक्रियक सूक्ष्म, अर वैक्रियकतैं आहारक सूक्ष्म आहारकतैं तैजस सूक्ष्म, अर तैजसतैं कार्माण सूक्ष्म है। सो मनुष्य अर तिर्यंचनिके तो औदरिक शरीर हैं, अर देव नारकिनिके वैक्रियक है, अर आहारक ऋद्धिधारी मुनिनिके सन्देह निवारिवेके अर्थ दसमें द्वारसे निकसे सो केवलीके निकट जाय संदेह निवारि पीछा आय दशमे द्वारमे प्रवेश करै है। ये पांच प्रकारके शरीर कहे। तिनमें एक काल एक जीवके कबहू चार शरीर हू पाइये,ताका भेद सुनहु--तीन तो सबही जीवनिके पाइए,नर अर तिर्यंचके औदारिक अर देव नारकनिके वैक्रियक अर तैजस कार्माण सबके हैं तिनमें कार्माण तो दृष्टिगोचर नाहीं, अर तैजस काहू मुनिके प्रकट होय है, ताके भेद दोय हैं----एक शुभ तैजस एक अशुभ तैजस। सो शुभ तैजस तो लोकनिकूं दुखी देख दाहिनी भुजातैं निकसि लोकनिका दुख निवारै है। अर अशुभ तैजस क्रोधके योगकर वामभुजातैं निकसि प्रजाकूं भस्म करै है,अर मुनिकूं हू भस्म करै है। अर काहू मुनिके वैक्रियाऋद्धि प्रकट होय है तब शरीरकूं सूक्ष्म तथा स्थूल करै है सो मुनिके चार शरीर हू काहू समय पाइए, एक काल पांचों शरीर काहू जीवके न होंय।

अथानंतर मध्यलोकमें जंबूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप अर लवण समुद्र आदि असंख्यात समुद्र हैं शुभ हैं नाम जिनके सो द्विगुण द्विगुण विस्तारकूं लिए वलयाकार तिष्ठै हैं,सबके मध्य जंबूद्वीप हैं ताके मध्य सुमेरुपर्वत तिष्ठै है सो लाख योजन ऊंचा है। अर जे द्वीप समुद्र कहे तिनमें जंबूद्वीप लाख योजनके विस्तार है, अर प्रदक्षिणा तिगुणीसे कछुइक अधिक है। जंबूद्वीपविषैं देवारण्य अर भूतारण्य दो वन हैं, तिनविषैं देवनिके निवास है। अर षट् कुलाचल है, पूर्व समुद्रसूं पश्चिमके समुद्रतक लांबे पडे है, तिनके नाम-हिमवान् महाहिमवान् निषध नील रुक्मि शिखरी समुद्रके जलका है स्पर्श जिनके। तिनमें हृद, अर हृदनिमें कमल, तिनमें षट् कुमारिका देवी हैं, श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी। अर जंबूद्वीपमें सात क्षेत्र है--भरत हैमवत हरि विदेह रम्यक हैरण्यवत ऐरावत। अर षट् कुलाचलनिसूं गंगादिक चौदह नदी निकसी है, आदिकेसे तीन, अर अंतकेसे तीन, अर मध्यके चारोंमे दोय दोय यह चौदह है। अर दूजा द्वीप धातकीखण्ड सो लवणसमुद्रतैं दूना है ताविषैं दोय सुमेरुपर्वत हैं अर बारह

कुलाचल, अर चौदह क्षेत्र । यहां एक भरत वहां दोय, यहां एक हिमवान वहां दोय । याही भांति सर्व दुगुणे जानने । अर तीजा द्वीप पुष्कर ताके अर्ध भागविषैं मानुषोत्तर पर्वत है सो अढाई द्वीप ही विषैं मनुष्य पाईये है आगे नाहीं । आधे पुष्करविषैं दोय दोय मेरु, बारा कुलाचल, चौदह क्षेत्र, धातुकीखंडद्वीप समान तहां जानने । अढाई द्वीपविषैं पांच सुमेरु, तीस कुलाचल, पांच भरत, पांच ऐरावत, पांच महाविदेह, तिनमें एक सौ साठ विजय समस्त कर्मभूमि के क्षेत्र एक सौ सत्तर, एक एक क्षेत्रमें छह छह खण्ड तिनमें पांच पांच म्लेच्छ खण्ड एक एक आर्य-खण्ड, आर्यखण्डमें धर्मकी प्रवृत्ति, विदेहक्षेत्र अर भरत ऐरावत इनविषैं कर्मभूमि, तिनमें विदेहमें तो शाश्वती कर्मभूमि, अर भरत ऐरावतमें अठारा कोड़ाकोडी सागर भोगभूमि, दोय कोड़ाकोड़ी सागर कर्मभूमि, अर देवकुरु उत्तरकुरु यह शाश्वती उत्कृष्ट भोगभूमि तिनमे तीन तीन पल्य की आयु, अर तीन तीन कोसकी काय, अर तीन तीन दिन पीछे अल्प आहार सो पांच मेरु संबंधी, पांच देवकुरु पांच उत्तरकुरु, अर हरि अर रम्यक यह मध्य भोगभूमि तिन विषैं दोय पल्यकी आयु अर दोय कोसकी काय, दोय दिन गए आहार, । या भांति पांच मेरु संबंधी पांच हरि, पांच रम्यक, यह दश मध्य भोगभूमि, अर हैमवंत हैरण्यवत यह जघन्य भोगभूमि, तिनमें एक पल्यकी आयु, अर एक कोसकी काय, एक दिनके अंतर आहार, सो पांच मेरु संबंधी पांच हैमवंत पांच हैरण्यवत जघन्य भोगभूमि दश, या भांति तीस भोगभूमि अढाई द्वीपमें जाननी । अर पंच महा विदेह पंच भरत पंच ऐरावत यह पंद्रह कर्मभूमि हैं तिनमें मोक्षमार्ग प्रवर्तं है ।

अढाईद्वीपके आगे मानुषोत्तरके परे मनुष्य नाहीं, देव अर तिर्यंच ही हैं । तिनविषैं जलचर तो तीन ही समुद्रविषैं हैं लवणोदधि कालोदधि तथा अंतका स्वयंभूरमण । इन तीन बिना और समुद्रनिविषैं जलचर नाहीं । अर विकलत्रय जीव अढाईद्वीपविषैं हैं अर स्वयंभूरमणद्वीप ताके अर्ध भागविषैं नागेन्द्र पर्वत है, ताके परे आधे स्वयंभूरमण द्वीपविषै अर सारे स्वयंभूरमण समुद्रविषै विकलत्रय हैं। मानुषोत्तरसूं लेय नागेन्द्र पर्वत पर्यंत जघन्य भोगभूमिकी रीति है वहां तिर्यंचनिकी एक पल्यकी आयु है । अर सूक्ष्म स्थावर तो सर्वत्र तीन लोकमे हैं अर बादर स्थावर आधारविषैं, सर्वत्र नाहीं । एकराजूविषैं समस्त मध्य लोक है । मध्य लोकमें अष्ट प्रकार व्यंतर अर दश प्रकार भवनपतिनिके निवास हैं, अर ऊपर ज्योतिषी देवनिके विमान हैं तिनके पांच भेद-चंद्रमा सूर्य ग्रह तारा नक्षत्र । सो अढाई द्वीपविषैं ज्योतिषी चर हू हैं अर स्थिर हू हैं । आगे असंख्यात द्वीपनिमें ज्योतिषी देवनिके विमान स्थिर ही हैं । बहुरि सुमेरुके ऊपर स्वर्गलोक है तहा सोलह स्वर्ग तिनके नाम--सौधर्म ईशान सनत्कुमार माहेंद्र ब्रह्म ब्रह्मोत्तर लांतव कापिष्ठ शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार आनत प्राणत आरण अच्युत यह सोलह स्वर्ग, तिनमें कल्पवासी

देव देवी हैं अर सोलह स्वर्गनिके ऊपर नव ग्रैवेयक,तिनके ऊपर नव अनुत्तर, तिनके ऊपर पंचोत्तर-विजय वैजयन्त जयन्त अपराजित सर्वार्थसिद्धि। यह अहमिंद्रनिके स्थानक हैं जहां देवांगना नाहीं, अर स्वामी सेवक नाहीं,और ठौर गमन नाहीं। अर पांचवां स्वर्ग ब्रह्म ताके अन्तमें लौकांतिक देव हैं तिनके देवांगना नाहीं, वे देवर्षि हैं। भगवान्‌के तपकल्याणमें ही आवैं। ऊर्ध्वलोकमें देव ही हैं, अथवा पंच स्थावर ही हैं। हे श्रेणिक! यह तीन लोकका व्याख्यान जो केवलीने कह्या ताका संक्षेपरूप जानना। तीन लोकके शिखर सिद्धलोक है ता समान दैदीप्यमान और क्षेत्र नाहीं, जहां कर्मबंधनसे रहित अनंत सिद्ध विराजै हैं मानों वह मोक्ष स्थानक तीन भवनका उज्ज्वल छत्र ही है। वह मोक्ष स्थानक अष्टमी धरा है ये अष्ट पृथिवीके नाम नारक १ भवनवासी २ मानुष ३ ज्योतिषी ४ स्वर्गवासी ५ ग्रैवेयक ६ अर अनुत्तर विमान ७ मोक्ष ८ ये आठ पृथिवी हैं सो शुद्धोपयोगके प्रसादकरि जे सिद्ध भये हैं तिनकी महिमा कही न जाय तिनका मरण नाहीं, बहुरि जन्म नाहीं। महा सुखरूप हैं अनेक शक्तिके धारक समस्त दुःख रहित महा निश्चल सर्वके ज्ञाता द्रष्टा हैं।

यह कथन सुन रामचन्द्र सकलभूषण केवलीसूं पूछते भए—हे प्रभो! अष्टकर्मरहित अष्टगुण आदि अनंतगुणसहित सिद्ध परमेष्ठी संसारके भावनिसे रहित हैं सो दुख तो उनको काहू प्रकारका नाहीं। अर सुख कैसा है? तब केवली दिव्य ध्वनिकर कहते भए–इस तीन लोकविषैं सुख नाहीं, दुख ही है अज्ञानसे वृथा सुख मान रहे हैं। संसारका इन्द्रियजनित सुख बाधासंयुक्त क्षणभंगुर है अष्टकर्म करि बंधे सदा पराधीन, ये जबतक जीव तिनके तुच्छ मात्रहू सुख नाहीं, जैसैं स्वर्णका पिंड लोहकरि संयुक्त होय तब स्वर्णकी कांति दब जाय है तैसैं जीवकी शक्ति कर्मनिकरि दब रही है सो सुखरूप दुख को भोगवे है। यह प्राणी जन्म जरा मरण रोग शोक जे अनंत उपाधि तिनकरि महा पीड़ित है, तनुका अर मनका दुख मनुष्य तिर्यंच नारकीनिकूं है, अर देवनिकूं दुख मनहीका है सो मनका महा दुख है, ताकर पीडित हैं। या संसारविषैं सुख काहेका, ये इंद्रियजनित विषयके सुख इन्द्र धरणेन्द्र चक्रवर्तीनिकूं शहदकी लपेटी खडगकी धारा समान हैं अर विषमिश्रित अन्न समान हैं। अर सिद्धनिके मन इन्द्री नाहीं, शरीर नाहीं, केवल स्वाभाविक अविनाशी उत्कृष्ट निराबाध निरुपम सुख है, ताकी उपमा नाहीं। जैसैं निद्रारहित पुरुषकूं सोयवेकरि कहा, अर निरोगनिकूं औषधिकर कहा? तैसैं सर्वज्ञ वीतराग कृतार्थ सिद्ध भगवान् तिनकूं इन्द्रीनिके विषयनिकर कहा? दीपकूं सूर्य चन्द्रादिककर कहा? जे निर्भय, जिनके शत्रु नाहीं तिनके आयुधनिकरि कहा? जे सबके अंतर्यामी सबकूं देखैं जानैं जिनके सकल अर्थ सिद्ध भए कछु करना नाहीं, वांछा काहू वस्तुकी नाहीं, ते सुखके सागर हैं। इच्छा मनसूं होय है सो मन नाहीं, परम आनंद-स्वरूप क्षुधा तृषादि बाधारहित हैं तीर्थंकर देव

जा सुखकी इच्छा करैं ताकी महिमा कहां लग कहिए अहमिंद्र इंद्र नागेंद्र नरेंद्र चक्रवर्त्यादिक निरंतर ताही पदका ध्यान करैं हैं। अर लौकांतिक देव ताही सुखके अभिलाषी हैं ताकी उपमा कहां लग करैं। यद्यपि सिद्धपदका सुख उपमारहित केवली गम्य है तथापि प्रतिबोधके अर्थ तुमकूं सिद्धनिके सुखका कछु इक वर्णन करैं हैं।

अतीत अनागत वर्तमान तीन कालके तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिक सर्व उत्कृष्ट भूमिके मनुष्यनिका सुख, अर तीन कालका भोगभूमिका सुख, अर इन्द्र अहमिंद्र आदि समस्त देवनिका सुख भूत भविष्यत् वर्त्तमानकालका सकल एकत्र करिये, अर ताहि अनंत-गुणा फलाइए सो सिद्धनिके एक समयके सुख तुल्य नाहीं। काहेसे, ? जो सिद्धनिका सुख निराकुल निर्मल अव्याबाध अखण्ड अतींद्रिय अविनाशी है अर देव मनुष्यनिका सुख उपाधिसंयुक्त बाधासहित विकल्परूप व्याकुलताकरि भरया विनाशीक है। अर एक दृष्टांत और सुनहु--मनुष्यनितैं राजा सुखी, राजनितैं चक्रवर्ती सुखी, अर चक्रवर्तीनितैं व्यंतरदेव सुखी, अर व्यंतरनिसैं ज्योतिषी देव सुखी, तिनसे भवनवासी अधिक सुखी, अर भवनवासीनितैं कल्पवासी सुखी, अर कल्पवासीनितैं नवग्रैवेयकके सुखी, नवग्रैवेयकतैं नव अनुत्तरके सुखी, अर तिनतैं पंचोत्तरके सुखी, पंचोत्तर सर्वार्थसिद्धि समान और सुखी नाहीं। सो सर्वार्थसिद्धिके अहमिंद्रनितैं अनन्तानन्तगुणा सुख सिद्धपदमें है। सुखकी हद सिद्धपदका सुख है। अनंतदर्शन अनंतज्ञान अनंतसुख अनंतवीर्य्य यह आत्माका निज स्वरूप सिद्धनिमें प्रवर्ते है। अर संसारी जीवनिके दर्शन ज्ञान सुख वीर्य कर्मनिके क्षयोपशमसे बाह्य वस्तुके निमित्त थकी विचित्रता लिए अल्परूप प्रवरतै है, यह रूपादिक विषय सुख व्याधिरूप विकल्परूप मोहके कारण इनमें सुख नाहीं, जैसैं फोडा राध रुधिरकरि भरया फूले ताहि सुख कहां ? तैसैं विकल्परूप फोड़ा महा व्याकुलतारूप राधिका भरया जिनके है तिनके सुख कहां ? सिद्ध भगवान् गतागतरहित समस्त लोकके शिखर विराजैं हैं, तिनके सुख-समान दूजा सुख नाहीं। जिनके दर्शन ज्ञान लोकालोककूं देखैं जानैं तिन समान सूर्य कहां ? सूर्य तो उदय अस्तकूं धरै है सकल प्रकाशक नाहीं। वह भगवान् सिद्ध परमेष्ठी हथेलीविषैं आंवलेकी नाई सकल वस्तुकूं देखैं जानैं हैं। छद्मस्थ पुरुषका ज्ञान उन समान नाहीं, यद्यपि अवधिज्ञान मनःपर्ययज्ञानी मुनि अविभागी परमाणु पर्यन्त देखै है अर जीवनिके असंख्यात जन्म जानै है, तथापि अरूपी पदार्थनिकूं न जानै है। अर अनन्तकालकी न जानै, केवली ही जानै, केवलज्ञान केवलदर्शनकरि युक्त तिन समान और नाहीं। सिद्धनिके ज्ञान अनंत, दर्शन अनंत, अर संसारी जीवनिके अल्प ज्ञान अल्प दर्शन, सिद्धनिके अनंत सुख अनन्त वीर्य, अर संसारनिके अल्प सुख अल्प वीर्य। यह निश्चय जानो सिद्धनिके सुखकी महिमा केवलज्ञानी ही जानै, अर चार ज्ञानके धारक हू पूर्ण न जानैं। यह सिद्धपद अभव्योंकूं अप्राप्य है, इस

पदकूं निकट भव्य ही पावै, अभव्य अनंत काल हू काय-क्लेशकरि अनेक यत्न करैं, तौहू न पावै। अनादि कालकी लगी जो अविद्यारूप स्त्री ताका विरह अभव्यनिके न होय, सदा अविद्याकूं लिये भववनविषै शयन करें। अर मुक्तिरूप स्त्रीके मिलापकी वांछाविषैं तत्पर जे भव्य जीव ते कैयक दिन संसारविषै रहैं हैं सो संसारमें राजी नाहीं, तपविषैं तिष्ठते मोक्ष हीके अभिलाषी है? जिनविषैं सिद्ध होनेकी शक्ति नाहीं, उन्हें अभव्य कहिये, अर जे सिद्ध होनहार है उन्हें भव्य कहिये। केवली कहैं हैं—हे रघुनंदन! जिनशासन विना और कोई मोक्षका उपाय नाहीं। विना सम्यक्त कर्मनिका क्षय न होय, अज्ञानी जीव कोटि भवविषे जे कर्म न खिपाय सकै सो ज्ञानी तीन गुप्तिकूं धरे एक मुहूर्त्तविषै खिपावै, सिद्ध भगवान् परमात्मा प्रसिद्ध है सर्व जगत्के लोग उनकूं जाने हैं कि वे भगवान् हैं केवली विना उनकूं कोई प्रत्यक्ष देख न जान सकै, केवलज्ञानी ही सिद्धनिकूं देखैं जानैं है। मिथ्यात्वका मार्ग संसारका कारण या जीवने अनन्त भवविषै धारया। तुम निकट भव्य हो, परमार्थकी प्राप्तिके अर्थ जिनशासनकी अखण्ड श्रद्धा धारहु। हे श्रेणिक! यह वचन सकलभूषण केवलीके सुनि श्रीरामचंद्र प्रणामकरि कहते भये–हे नाथ! या संसार समुद्रतैं मोहि तारहु। हे भगवान्! यह प्राणी कौन उपायकरि संसारके वासतैं छूटे है? तब केवली भगवान् कहते भये–हे राम! सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र मोक्षका मार्ग है,जिनशासनविषैं यह कहा है तत्वका जो श्रद्धान ताहि सम्यग्दर्शन कहिये। तत्त्व अनंत गुण पर्यायरूप है ताके दोय भेद हैं एक चेतन दूसरा अचेतन। सो जीव चेतन है और सर्व अचेतन हैं। अर सम्यग्दर्शन दोय प्रकारतैं उपजैं हैं एक निसर्ग एक अधिगम। जो स्वतःस्वभाव उपजे सो निसर्ग, अर गुरुके उपदेशतैं उपजे सो अधिगम। सम्यग्दृष्टि जीव जिनधर्मविषैं रत है। सम्यक्तके अतीचार पांच हैं—शंका कहिये जिनधर्मविषै संदेह, अर कांक्षा कहिये भोगनिकी अभिलाषा, अर विचिकित्सा कहिये महामुनिकूं देख ग्लानि करनी, अर अन्यदृष्टि प्रशंसा कहिये मिथ्यादृष्टिकूं मनविषै भला जानना, अर संस्तव कहिये वचनकरि मिथ्यादृष्टिकी स्तुति करना इनकारे सम्यक्तविषै दूषण उपजै हैं। अर मैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ ये चार भावना, अथवा अनित्यादि बारह भावना, अथवा प्रशम संवेग अनुकंपा आस्तिक्य अर शंकादि दोष रहितपना जिनप्रतिमा जिनमन्दिर जिनशास्त्र मुनिराजनिकी भक्ति इनकरि सम्यग्दर्शन निर्मल होय है। अर सर्वज्ञके वचन प्रमाण वस्तुका जानना सो ज्ञानकी निर्मलताका कारण है, अर जो काहूतैं न सधे ऐसी दुर्धरक्रिया आचरणी ताहि चारित्र कहिये, पांचों इंद्रियनिका निरोध, मन का निरोध वचनका निरोध, सर्व पापक्रियानिका त्याग सो चारित्र कहिये, त्रस स्थावर सर्व जीवकी दया सबकूं आप-समान जाने सो चारित्र कहिये, अर सुननेवालेके मन अर काननिकूं आनंदकारी स्निग्ध मधुर अर्थसंयुक्त कल्याणकारी वचन बोलना सो चारित्र कपिये, अर मन वचन कायकरि परधनका त्याग करना किसीका विना दिया कछु न लेना अर दिया हुआ

आहारमात्र लेना सो चारित्र कहिये, अर जो देवनिकरि पूज्य महादुर्धर ब्रह्मचर्यव्रतका धारण सो चारित्र कहिये, अर शिवमार्ग कहिये निर्वाणका मार्ग ताहि विघ्नकरणहारी मूर्च्छा कहिये मनकी अभिलाषा ताका त्याग सोई परिग्रहका त्याग सो हू चारित्र कहिये है। ये मुनिनिके धर्म कहे अर जो अणुव्रती श्रावक मुनिनिकूं श्रद्धा आदि गुणनिकरि युक्त नवधा भक्तिकर आहार देना सो एकदेशचारित्र कहिये अर परदारा परधनका परिहार परपीडाका निवारण दयाधर्मका अंगीकार दान शील पूजा प्रभावना पर्वोपवासादिक सो ये देशचारित्र कहिये। अर यम कहिये यावज्जीव पापका परिहार, नियम कहिये मर्यादारूप व्रत तपका अंगीकार, वैराग्य विनय विवेक ज्ञान मन इंद्रियोंका निरोध ध्यान इत्यादि धर्मका आचरण सो एकदेश चारित्र कहिये। यह अनेकगुणकरि युक्त जिनभाषित चारित्र परम धामका कारण कल्याणकी प्राप्तिके अर्थ सेवने योग्य है। जो सम्यग्दृष्टि जीव जिनशासनका श्रद्धानी परनिंदाका त्यागी अपनी अशुभ क्रियाका निंदक जगत्के जीवोंसे न सधै ऐसे दुर्द्धर तपका धारक संयमका साधनहारा सो ही दुर्लभ चारित्र धारिवेकूं समर्थ होय। अर जहां दया आदि समीचीन गुण नाहीं, तहां चारित्र नाहीं। अर चारित्र विना संसारसूं निवृत्ति नाहीं,। जहां दया क्षमा ज्ञान वैराग्य तप संयम नाहीं, तहां धर्म नाहीं, विषय कषायका त्याग सोई धर्म है, शम कहिए समता भाव परम शांत, दम कहिये मन इंद्रियोंका निरोध, संवर कहिये नवीन कर्मका निरोध जहां ये नाहीं तहां चारित्र नाहीं। जे पापी जीव हिंसा करें हैं, झूठ बोलें हैं, चोरी करें हैं, परस्त्री-सेवन करें हैं, महा आरम्भी हैं परिग्रही हैं, तिनके धर्म नाहीं। जे धर्मके निमित्त हिंसा करैं हैं ते अधर्मी अधमगतिके पात्र हैं। जो मूढ जिनदीक्षा लेकर आरंभ करैं हैं सो यति नाहीं, यतिका धर्म आरंभ परिग्रहसूं रहित है। परिग्रह धारियोंकूं मुक्ति नाहीं, जे हिंसामें धर्म जान षट् कायिक जीवोंकी हिंसा करें हैं ते पापी हैं। हिंसाविषैं धर्म नाहीं, हिंसकोंकूं या भव पर भवके सुख नाहीं, शिव कहिए मोक्ष नाहीं। जे सुखके अर्थ धर्मके अर्थ जीवघात करैं हैं सो वृथा है! जे ग्राम क्षेत्रादिकविषैं आसक्त हैं, गाय भैंस राखैं हैं, मारैं हैं बांधैं हैं तोडैं हैं दाहै हैं, उनके वैराग्य कहां? जे क्रय विक्रय करैं हैं रसोई परहैडा आदि आरम्भ राखैं हैं, सुवर्णादिक राखै हैं, तिनकूं मुक्ति नाहीं। जिनदीक्षा निरारम्भ है अतिदुर्लभ है जे जिनदीक्षा धारि जगत्का धंधा करैं हैं वे दीर्घ संसारी हैं। जे साधु होय तैलादिकका मर्दन करैं हैं शरीरका संस्कार करैं हैं पुष्पादिककूं सूंघै हैं, सुगन्ध लगावैं हैं दीपकका उद्योत करै हैं, धूप खेवैं हैं सो साधु नाहीं, मोक्षमार्ग सूं परान्मुख हैं। अपनी बुद्धिकरि जे कहैं हैं हिंसाविषै दोष नाहीं वे मूर्ख हैं, तिनकूं शास्त्रका ज्ञान नाहीं, चारित्र नाहीं।

जे मिथ्यादृष्टि तप करैं हैं ग्रामविषै एक रात्रि बसै हैं, नगरविषैं पांच रात्रि, अर सदा ऊर्ध्वबाहु राखै हैं मास मासोपवास करैं हैं, अर वनविषै विचारैं हैं, मौनी हैं निपरिग्रही हैं, तथापि

दयावान् नाहीं दुष्ट है हृदय जिनका सम्यक्त बीज विना धर्मरूप वृक्षकूं न उगाय सकें। अनेक कष्ट करें तौ भी शिवालय कहिए मुक्ति उसे न लहैं। जे धर्मकी बुद्धिकर पर्वतसूं पडैं, अग्निविषैं जरैं जलविषैं डूबैं, धरतीविषैं गडैं, वे कुमरणकर कुगतिकूं जावैं हैं। जे पापकर्मी कामना-परायण आर्त रौद्र ध्यानी विपरीत उपाय करैं, वे नरक-निगोद लहैं। मिथ्यादृष्टि जो कदाचित् दान दे, तप करै, सो पुण्यके उदयकरि मनुष्य अर देव गतिके सुख भोगै है, परंतु श्रेष्ठ मनुष्य न होय। सम्यग्दृष्टियोंके फलके असंख्यातवें भाग भी फल नाहीं। सम्यग्दृष्टि चौथे गुणठाण अव्रती हैं तौ हू नियमविषैं है प्रेम जिनके सो सम्यग्दर्शनके प्रसादसूं देवलोकविषैं उत्तम देव होवैं। अर मिथ्यादृष्टि कुलिंगी महातप भी करें तो देवनिके किंकर हीन देव होंय, बहुरि संसारभ्रमण करैं। अर सम्यग्दृष्टि भव धरैं तो उत्तम मनुष्य होय, तिनमें देवनिके भव सात मनुष्यनिके भव आठ, या भांति पंद्रह भवविषैं पंचमगति पावैं, वीतराग सर्वज्ञदेवने मोक्षका मार्ग प्रगट दिखाया है परंतु यह विषयी जीव अंगीकार न करें है, आशारूपी फांसीसे बंधे, मोहके वश पड़े, तृष्णाके भरे, पापरूप जंजीरसे जकड़े कुगतिरूप बंदीग्रहविषैं पड़ें हैं। स्पर्श अर रसना आदि इंद्रियोंके लोलुपी दुःखहीकूं सुख मानैं हैं, यह जगत्‌के जीव एक जिनधर्मके शरण विना क्लेश भोगै हैं। इंद्रियोंके सुख चाहैं सौ मिलै नाहीं, अर मृत्युसूं डरैं सो मृत्यु छोडै नाहीं, विफल कामना, अर विफल भयके वश भए जीव केवल तापहीकूं प्राप्त होय हैं। तापके हरिवेका उपाय और नाहीं, आशा अर शंका तजना यही सुखका उपाय है। यह जीव आशाकरि भरया भोगनिका भोग किया चाहै है, अर धर्मविषैं धैर्य नाहीं धरै है, क्लेशरूप अग्नि कर उष्ण, महा आरंभविषैं उद्यमी, कछु भी अर्थ नाहीं पावै है उलटा गांठका खोवै है। यह प्राणी पापके उदयसूं मनवांछित अर्थकूं नाहीं पावै है, उलटा अनर्थ होय है, सो अनर्थ अति-दुर्जय है। यह मैं किया यह मैं करूं हू, यह करूंगा ऐसा विचार करते ही मरकर कुगति जाय है। ये चारों ही गति कुगति हैं, एक पंचमगति निर्वाण सोई सुगति है, जहांसे बहुरि आवना नाहीं! अर जगत्‌विषैं मृत्यु ऐसा नाहीं देखै हैं, जो याने यह किया ? यह न किया, बाल अवस्था आदिसे सर्व अवस्थाविषैं आय दाबै है जैसे सिंह मृगकूं सब अवस्थाविषैं आय दाबै। अहो यह अज्ञानी जीव अहितविषैं हितकी वांछा धरै है अर दुखविषैं सुखकी आशा करै है अनित्यकूं नित्य जानै है भयविषैं शरण मानै है इनके विपरीतबुद्धि है यह सब मिथ्यात्वका दोष है। यह मनुष्यरूप माता हाथी मायारूप गर्तविषैं पड्या अनेक दुखरूप बंधनकरि बंधै है, विषयरूप मांसका लोभी मत्स्यकी नाई विकल्परूपी जालमें पडै है, यह प्राणी दुर्बल बलदकी न्याई कुटुंबरूप कीचमें फंसा खेदखिन्न होय है जैसें वैरियोंसे बंध्या अर अंधकूपमें पड्या, उसका निकसना अति कठिन तैसैं स्नेहरूप फांसीकरि बंध्या संसाररूप अंधकूपविषैं पडा अज्ञानी जीव उसका निकसना अति कठिन है। कोई निकटभव्य जिनवाणीरूप रस्तेकूं गहै अर श्रीगुरु निकासनेवाले होंय तो निकसै।

अर अभव्य जीव जैनेंद्री आज्ञारूप अति दुर्लभ आनन्दका कारण जो आत्मज्ञान उसे पायवे समर्थ नाहीं,जिनराजका निश्चय मार्ग निकटभव्य ही पावै। अर अभव्य सदा कर्मनिकरि कलंकी भए अति क्लेशरूप संसारचक्रविषैं भ्रमैं हैं। हे श्रेणिक! यह वचन श्री भगवान् सकलभूषण केवलीने कहे तब श्रीरामचंद्र हाथ जोड़ सीस नवाय कहते भए--हे भगवन्! मैं कौन उपायकरि भवभ्रमणसूं छूटूं, मैं सकल रानी अर पृथिवीका राज्य तजिवे समर्थ हू, परंतु भाई लक्ष्मणका स्नेह तजिवे समर्थ नाहीं, स्नेह-समुद्रकी तरंगनिविषैं डूबूं हू, आप धर्मोपदेशरूप हस्तावलंबन कर काढहु। हे करुणानिधान! मेरी रक्षा करहु। तब भगवान् कहते भए--हे राम! शोक न कर, तू बलदेव है, कैयक दिन वासुदेव सहित इन्द्रकी न्याई या पृथिवीका राज्य कर जिनेश्वरका व्रत धरि केवलज्ञान पावेगा। ये केवलीके वचन सुनि श्रीरामचन्द्र हर्षकरि रोमांचित भए नयनकमल फूलि गए वदनकमल विकसित भया परम धैर्ययुक्त होते भए। अर रामकूं केवलीके मुखसे चरमशरीरी जान सुर नर असुर सबही प्रशंसाकरि अति प्रीति करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं रामकूं केवलीके मुख धर्मश्रवण वर्णन करनेवाला एकसौ पांचवां पर्व पूर्ण भया ॥१०५॥

एकसौ छहवां पर्व

[राम, लक्ष्मण, रावण, सीता आदि के पूर्वभव]

अथानंतर विद्याधरनिविषैं श्रेष्ठ राजा विभीषण रावणका भाई सुंदर शरीरका धारक रामकी भक्ति ही है आभूषण जाके सो दोऊ कर जोड़ि प्रणामकरि केवलीकूं पूछता भया-हे देवाधिदेव! श्रीरामचन्द्रने पूर्व भवविषैं क्या सुकृत किया जाकरि ऐसी महिमा पाई? अर इनकी स्त्री सीता दण्डकवनतैं कौन प्रसंगकरि रावण हर ले गया, धर्म अर्थ काम मोक्ष चारों पुरुषार्थका वेत्ता अनेक शास्त्रका पाठी कृत्य-अकृत्यकूं जाने, धर्म अधर्मकूं पिछाने, प्रधानगुण सम्पन्न सो काहेसूं मोहके वश होय परस्त्रीकी अभिलाषारूप अग्निविषैं पतंगके भावकूं प्राप्त भया? अर लक्ष्मणने उसे संग्रामविषैं हत्या रावण ऐसा बलवान् विद्याधरनिका महेश्वर अनेक अद्भुत कार्यनिका करणहारा कैसैं ऐसे मरणकूं प्राप्त भया? तब केवली अनेक जन्मकी कथा विभीषणकूं कहते भये--हे लंकेश्वर! राम लक्ष्मण दोनों अनेक भवके भाई हैं, अर रावणके जीवसूं लक्ष्मणके जीवका बहुत भवसे बैर है सो सुन-जम्बूद्वीपके भरत क्षेत्रविषैं एक नगर तहां नयदत्तनामा वणिक् अल्प धनका धनी उसकी सुनंदा स्त्री उसके धनदत्तनामा पुत्र सो रामका जीव, अर दूजा वसुदत्त सो लक्ष्मणका जीव, अर एक यज्ञबलिनामा विप्र वसुदत्तका मित्र सो

तेरा जीव, अर उस ही नगरविषैं एक और वणिक सागरदत्त जिसके स्त्री रत्नप्रभा पुत्री गुणवती सो सीताका जीव, अर गुणवतीका छोटा भाई जिसका नाम गुणवान सो भामण्डलका जीव, अर गुणवतीका रूप यौवन कला कांति लावण्यताकरि मंडित सो पिताका अभिप्राय जान धनदत्तसूं बहिनकी सगाई गुणवानने करी अर उसही नगरमें एक महा धनवान वणिक श्रीकांत सो रावण का जीव जो निरंतर गुणवतीके परिणवेकी अभिलाषा राखै, अर गुणवतीके रूपकर हरा गया है मन जाका सो गुणवतीका भाई लोभी धनदत्तकूं अल्प धनवंत जान श्रीकांतकूं महाधनवंत देख परिणायवेकूं उद्यमी भया।

सो यह वृत्तांत यज्ञवलि ब्राह्मणने वसुदत्तसूं कहा तेरे बड़े भाईकी मांग कन्याका बड़ा भाई श्रीकांतकूं धनवान जान परिणाया चाहै है तब वसुदत्त यह समाचार सुन श्रीकांतके मारिवेकूं उद्यमी भया खड्ग पैनाय अंधेरी रात्रि विषैं श्याम वस्त्र पहिर शब्दरहित धीरा धीरा पग धरता जाय श्रीकांतके घरविषैं गया, सो असावधान बैठा हुता सो खड्गसूं मारया। तब पड़ते पड़ते श्रीकांतने भी वसुदत्तकूं खड्ग मारया सो दोऊ मरे सो विंध्याचलके वनमें हिरण भए। अर नगरके दुर्जन लोक हुते तिन्होंने गुणवती धनदत्तकूं न परिणायवे दीनी कि इसके भाईने अपराध कीया, दुर्जन लोक विना अपराध कोप करैं सो यह तो एक बहाना पाया। तब धनदत्त अपने भाईका मरण अर अपना अपमान तथा मांगका अलाभ जान महा दुखी होय घरसूं निकस विदेश गमन करता भया। अर वह कन्या धनदत्तकी अप्राप्तिकरि अति दुखी भई और भी किसी-कूं न परिणाती भई। अर कन्या मुनिनिकी निंदा अर जिनमार्गकी अश्रद्धा मिथ्यात्वके अनुराग करि पाप उपार्जे काल पाय आर्तध्यानकरि मूई सो जिस वनविषैं दोनों मृग भए हुते तिस वनविषैं यह मृगी भई सो पूर्वले विरोधकरि इसीके अर्थतैं दोनों मृग परस्पर लड़करि मूए, सो वन-सूकर भए, बहुरि हाथी भैंसा बैल वानर गैंडा ल्याली मींढा इत्यादि अनेक जन्म धरते भए अर यह वाही जातिकी तिर्यंचनी होती भई, सो याके निमित्त परस्पर लडकर मूए, जलके जीव थलके जीव होय होय प्राण तजते भए। अर धनदत्त मार्गके खेदकरि अति दुखी, एक दिन सूर्यके अस्त समय मुनिनिके आश्रय गया, भोला कछु जानै नाहीं, साधुनिसूं कहता भया मैं तृषाकरि पीडित हूँ मुझे जल पिलावहु, तुम धर्मात्मा हो। तब मुनि तो न बोले अर कोई जिनधर्मी मधुर वचनकरि इसे संतोष उपजायकरि कहता भया हे मित्र रात्रिकूं अमृत भी न पीवना, जलकी कहा बात? जिससमय आंखनिकर कछू सूझै नाहीं, सूक्ष्म जीव दृष्टि न पड़ै, ता समय हे वत्स, यदि तू अति आतुर भी होय तो भी खानपान न करना, रात्रि आहारविषैं मांस का दोष लागै है। इसलिये तू न कर जाकरि भवसागरविषैं डूबिये। यह उपदेश सुन धनदत्त शांतचित्त भया, शक्ति अल्प थी इसलिए यति न होय सका, दयाकरि युक्त है चित्त

जाका सो अणुव्रती श्रावक भया। बहुरि काल पाय समाधिमरण करि सौधर्म स्वर्गविषै बडी ऋद्धिका धारक देव भया, मुकुट हार भुज-बंधादिककरि शोभित पूर्व पुण्यके उदयसूं देवांगनादिकके सुख भोगे। बहुरि स्वगसूं चयकरि महापुरनामा नगरविषै मेरु नामा श्रेष्ठी ताकी धारिणी स्त्रीके पद्मरुचि नामा पुत्र भया। अर ताही नगरविषै राजा छत्रच्छाय रानी श्रीदत्ता गुणनिकी मंजूषा हुती सो एक दिन सेठका पुत्र पद्मरुचि अपने गोकुलविषै अश्व चढा आया सो एक वृद्धिगति बलदकूं कंठगत प्राण देख्या तब यह सुगंध वस्त्र मालाके धारकने तुरंगतें उतरि अति दयाकरि बैलके कानविषै नमोकार मंत्र दिया सो बलदने चित्त लगाय सुन्या, अर प्राण तजि रानी श्रीदत्ताके गर्भविषै आय उपज्या। राजा छत्रच्छायके पुत्र न था सो पुत्रके जन्मविषै अतिहर्षित भया, नगरकी अतिशोभा करी। बहुत द्रव्य खरच्या, बड़ा उत्सव कीया। वादित्रोंके शब्दकरि देशों दिशा शब्दायमान भई, यह बालक पुण्यकर्मके प्रभावकरि पूर्व जन्म जानता भया सो बलदके भवका शीत आताप आदि महादुख अर मरणसमय नमोकार मंत्र सुन्या ताके प्रभावकरि राजकुमार भया सो पूर्व अवस्था यादकरि बालक अवस्थाविषै ही महाविवेकी होता भया। जब तरुण अवस्था भई तब एक दिन विहार करता बलदके मरणके स्थानक गया अपना पूर्व चरित चितार यह वृषभध्वजकुमार हाथीसूं उतर पूर्वजन्मकी मरणभूमि देख दुखित भया, अपने मरणका सुधारणहारा नमोकारमंत्रका देनहारा उसके जानिवेके अर्थ एक कैलाशके शिखर समान ऊंचा चैत्यालय बनाया अर चैत्यालयके द्वारविषै एक बैलकी मूर्ति जिसके निकट बैठा एक पुरुष नमोकार मंत्र सुनावै है ऐसा एक चित्रपट लिखाय मेल्या। अर उसके समीप समझनेको मनुष्य मेले। दर्शन करिवेकूं मेरुश्रेष्ठीका पद्मरुचि आया सो देख अतिहर्षित भया, अर सो दर्शनकरि पीछे आय बैलके चित्रपटकी ओर निरखकरि मनविषै विचारै है बैलकूं नमोकार मंत्र मैंने सुनाया था सो खड़ा खड़ा देखै जे पुरुष रखवारे थे तिन जाय राजकुमारकूं कही सो सुनते ही बड़ी ऋद्धिसूं युक्त हाथी चढ्यो शीघ्र ही अपने परम मित्रसूं मिलने आया। हाथीसूं उतरि जिनमंदिरविषै गया। बहुरि बाहिर आया पद्मरुचिकूं बैलकी ओर निहारता देख्या राजकुमारने श्रेष्ठीके पुत्रकूं पूछी तुम बैलके चित्रपटकी ओर कहा निरखो हो? तब पद्मरुचिने कही एक मरते बैलको मैंने नमोकार मंत्र दिया था सो कहां उपज्या है यह जानिवेकी इच्छा है। तब वृषभध्वज बोले वह मैं हू, ऐसा कह पायनि पड्या, अर पद्मरुचिकी स्तुति करी, जैसे गुरुकी शिष्य करै। अर कहता भया मैं पशु महाअविवेकी मृत्यु के कष्टकरि दुखी था सो तुम मेरे महा मित्र नमोकारमंत्रके दाता समाधिमरणके कारण होते भए, तुम दयालु पर-भवके सुधारणहारेने महा मंत्र मुझे दिया, उससे मैं राजकुमार भया। जैसा उपकार राजा देव माता सहोदर मित्र कुटुंब कोई न करै तैसा तुमने किया, जो तुमने नमोकार मंत्र दिया

उस समान पदार्थ त्रैलोक्य में नाहीं, ताका बदला मैं क्या दूं, तुम से उऋण नाहीं। तथापि तुमविष मेरी भक्ति अधिक उपजी है जो आज्ञा देवो सो करूं। हे पुरुषोत्तम ! तुम आज्ञा प्रदानकरि मोकूं भक्त करो, यह सकल राज्य लेहु, मैं तुम्हारा दास, यह मेरा शरीर उसकरि इच्छा होय सो सेवा करावो। या भांति वृषभध्वजने कही, तब पद्मरुचिके अर याके अति प्रीति बढ़ी। दोनों सम्यग्दृष्टि राजविषैं श्रावकके व्रत पालते भए, ठौर ठौर भगवान् के बड़े बड़े चैत्यालय कराए तिनमें जिनबिंब पधराए। यह पृथिवी तिनकरि शोभायमान होती भई। बहुरि समाधिमरण करि वृषभध्वज पुण्यकर्मके प्रसादकरि दूजे स्वर्गविषैं देव भया। देवांगनानिके नेत्र-रूप कमल तिनके प्रफुल्लित करनेकूं सूर्य समान होता भया तहां मन वांछित क्रीड़ा करता भया। अर पद्मरुचि सेठ भी समाधिमरण करि दूजे ही स्वर्ग देव भया दोऊ वहां परम मित्र भए। वहांसे चयकरि पद्मरुचिका जीव पश्चिम विदेहविषैं विजयार्धगिरि जहां नंद्यावर्त नगर वहां राजा नंदीश्वर उसकी रानी कनकप्रभा उसके नयनानंद नामा पुत्र भया सो विद्याधरनिके चक्रीपदकी संपदा भोगी। बहुरि महा मुनिकी अवस्था धरि विषम तप किया, समाधिमरणकरि चौथे स्वर्ग देव भया। वहां पुण्य रूप बलके सुख रूप फल महा मनोज्ञ भोगे। बहुरि वहांसे चयकरि सुमेरु पर्वतके पूर्व दिशाकी ओर विदेह वहां क्षेमपुरी नगरी राजा विपुलवाहन, रानी पद्मावती, तिनके श्रीचंद्र नामा पुत्र भया। वहां स्वर्ग समान सुख भोगे। तिनके पुण्यके प्रभाव-सूं दिन दिन राजकी वृद्धि भई, अटूट भंडार भया, समुद्रांत पृथिवी एक ग्रामकी न्याईं वश करी। अर जिसके स्त्री इन्द्राणी समान सो इन्द्रकेसे सुख भोगे, हजारां वर्ष सुखसूं राज्य किया। एक दिन महा संघ सहित तीन गुप्तिके धारक समाधिगुप्ति योगीश्वर नगरके बाहिर आय विराजे तिनकूं उद्यानविषैं आया जान नगरके लोक वन्दनाकूं चले सो महा स्तुति करते वादित्र बजावते हर्षसे जाय हैं। श्रीचन्द्र समीपके लोकनिकूं पूछता भया यह हर्षका नाद जैसा समुद्र गाज तैसा होय है सो कौन कारण है ? तब मंत्रियनिने किंकर दौड़ाए निश्चय किया जो मुनि आए हैं तिनके दर्शनकूं लोक जाय हैं। यह समाचार सुनकर राजा फूले कमल समान भए हैं नेत्र जाके अर शरीरविषैं हर्षकरि रोमांच होय आये, राजा समस्त लोक अर परिवारसहित मुनिके दर्शन-कूं गया। प्रसन्न है मुख जिनका ऐसे मुनिराज तिनकूं राजा देखि प्रणामकरि महा विनयसंयुक्त पृथिवीविषैं बैठा। भव्यजीव रूप कमल तिनके प्रफुल्लित करिवेकूं सूर्य समान ऋषिनाथ तिनके दर्शनसूं राजाकूं अति धर्मस्नेह उपज्या, वे महा तपोधर धर्म शास्त्रके वेत्ता परम गंभीर लोकनि-कूं तत्व ज्ञानका उपदेश देते भए। यतिका धर्म अर श्रावकका धर्म संसार समुद्रका तारणहारा अनेक भेद संयुक्त कह्या। अर प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोगका स्वरूप कह्या। प्रथमानुयोग कहिए उत्तम पुरुषनिका कथन, अर करणानुयोग कहिए तीन लोकका कथन, चर-

णानुयोग कहिए मुनि श्रावकका धर्म, अर द्रव्यानुयोग कहिए षटद्रव्य सप्त तत्व नव पदार्थ पंचास्तिकायका निर्णय । कैसे हैं मुनिराज वक्तानिविषैं श्रेष्ठ हैं । अर आक्षेपिणी कहिए जिनमार्ग उद्योतनी, अर क्षेपिणी कहिए मिथ्यात्वखंडनी अर संवेगिनी कहिए धर्मानुरागिणी अर निर्वेदिनी कहिए वैराग्यकारिणी यह चार प्रकार कथा कहते भए । इस संसार सागरविषैं कर्मके योगसूं भ्रमता जो यह प्राणी सो महा कष्टसूं मोक्षमार्गकूं प्राप्त होय है । संसारके ठाठ विनाशीक हैं, जैसा संध्या समयका वर्ण अर जलका बुदबदा तथा जलके झाग अर लहर अर विजुरीका चमत्कार इन्द्र धनुष क्षण भंगुर हैं,असार हैं,ऐसा जगतका चरित्र क्षण भंगुर जानना । यामैं सार नाहीं । नरक तिर्यंचगति तो दुःखरूप ही हैं, अर देव मनुष्यगतिविषैं यह प्राणी सुख जानै है सो सुख नाहीं, दुःख ही है, जिससे तृप्ति नाहीं सो ही दुःख, जो महेंद्र स्वर्गके भोगनिकरि तृप्त नाहीं भया सो मनुष्यभवके तुच्छ भोगनिकरि कैसैं तृप्त होय ? यह मनुष्यभव भोग योग्य नाहीं, वैराग्य योग्य है । काहू एक प्रकारसूं दुर्लभ मनुष्य देह पाया जैसे दरिद्री निधान पावै सो विषयरसका लोभी होय वृथा खोया मोहकूं प्राप्त भया । जैसे सूके ईंधनसूं अग्निकूं कहां तृप्ति, अर नदीनिके जलकरि समुद्रकूं कहां तृप्ति ? तैसैं विषयसुखसूं जीवनकूं तृप्ति न होय, चतुर भी विषयरूप मदकरि मोहित भया मदताकूं प्राप्त होय है । अज्ञानरूप तिमिरसूं मंद भया है मन जाका सो जलविषैं डूबता खेदखिन्न होय त्यों खेदखिन्न हैं । परंतु अविवेकी तो विषय हीकूं भला जानै है । सूर्य तो दिनकूं ताप उपजावै है अर काम रात्रिदिन आताप उपजावै । सूर्यके आताप निवारिवेके अनेक उपाय हैं, अर कामके निवारिवेका उपाय एक विवेक ही है । जन्म जरामरणका दुःख संसारविषैं भयंकर है जिसका चिंतवन किए कष्ट उपजे । यह कर्म जनित जगत्का ठाठ अरहटके यंत्रकी घडी समान है—रीता भर जाय है, भरा रीता होय है, नीचला ऊपर, ऊपरला नीचे । अर यह शरीर दुर्गंध है, यंत्र समान चलाया चलै है, विनाशीक है, मोह कर्मके योगसूं जीवका कायासूं स्नेह है, जलके बुदबुदा समान मनुष्य भवके उपजे सुख असार जानि बड़े कुलके उपजे पुरुष विरक्त होंय जिनराजका भाषा मार्ग अंगीकार करें हैं । उत्साहरूप बख्तर पहिरैं, निश्चय रूप तुरंगके असवार ध्यानरूप खड्गके धारक, धीर कर्मरूप शत्रुकूं विनाशि निर्वाणरूप नगर लेय हैं । यह शरीर भिन्न अर मैं भिन्न ऐसा चिंतवन करि शरीरका स्नेह तज हे मनुष्यों ! धर्मकूं करो, धर्म समान और नाहीं । अर धर्मनिमें मुनिका धर्म श्रेष्ठ है, जिन महामुनियोंके सुख दुःख दोनों तुल्य, अपना अर पराया तुल्य, जे राग द्वेष रहित महापुरुष हैं वे परम उत्कृष्ट शुक्ल ध्यानरूप अग्निसूं कर्मरूप वनी दुःखरूप दुष्टोंसे भरी भस्म करैं हैं ।

ये मुनिके वचन राजा श्रीचंद्र सुन बोधकूं प्राप्त भया, विषयानुभव सुखतैं वैराग्य होय अपने ध्वजकांतिनामा पुत्रकूं राज्य देय समाधिगुप्त नामा मुनिके समीप मुनि भया । विरक्त

है मन जाका, सम्यक्त्वकी भावनाकरि तीनों योग मन वचन काय तिनकी शुद्धता धरता संता पांच समिति तीन गुप्तिसूं मंडित राग द्वेषसूं परान्मुख रत्नत्रयरूप आभूषणनिका धारक, उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्मकरि मंडित, जिनशासनका अनुरागी, समस्त अंग पूर्वांगका पाठक, समाधानरूप पंच महाव्रतका धारक, जीवनिका दयालु सप्त भयरहित परमधैर्यका धारक, बाईस परीषहका सहनहारा, बेला तेला पक्ष मासादिक अनेक उपवासका करणहारा, शुद्ध आहारका लेनहारा, ध्यानाध्ययनमें तत्पर, निर्ममत्व अतींद्रिय भोगनिकी वांछाका त्यागी, निदान-बधन-रहित महाशांत जिनशासनमें है वात्सल्य जाका,यतिके आचारमें संघके अनुग्रहविषै तत्पर, बाल-के अग्रभागके कोटिवें भागहू नाहीं है परिग्रह जाके, स्नानका त्यागी, दिगंबर, संसारके प्रबंधतैं रहित, ग्रामके वनविषैं एक रात्रि अर नगरके वनविषैं पांच रात्रि रहनहारा, गिरि गुफा गिरि-शिखर नदीके पुलिन उद्यान इत्यादि प्रशस्त स्थानविषैं निवास करणहारा कायोत्सर्गका धारक देहतैं हू निर्ममत्व निश्चल मौनी पंडित महातपस्वी इत्यादि गुणनिकरि पूर्ण कर्म पिंजरकूं जर्जरा-करि काल पाय श्रीचंद्रमुनि रामचंद्रका जीव पांचवें स्वर्ग इंद्र भया। तहां लक्ष्मी कीर्ति कांति प्रतापका धारक देवनिका चूड़ामणि तीन लोकविषैं प्रसिद्ध परम ऋद्धिकरयुक्त महा सुख भोगता भया। नंदनादिक वनविषैं सौधर्मादिक इंद्र याकी संपदाकूं देख रहे हैं, याके अवलोकनकी वांछा रहै महा सुंदर विमान मणि हेममई मोतिनिकी झालरिनिकरि मंडित, वामें बैठा विहार करै दिव्य स्त्रीनिके नेत्रोंकूं उत्सवरूप महासुखतें काल व्यतीत करता भया। श्रीचंद्रका जीव ब्रह्मेंद्र ताकी महिमा, हे विभीषण! वचन कर न कही जाय, केवलज्ञानगम्य है। यह जिनशासन अमोलक परमरत्न उपमारहित त्रैलोक्यविषै प्रगट है, तथापि मूढ न जानैं। श्रीजिनेंद्र मुनींद्र अर जिनधर्म इनकी महिमा जानकर हू मूर्ख मिथ्या अभिमानकरि गर्वित भए धर्मसे परान्मुख रहें जो अज्ञानी या लोकके सुखविषैं अनुरागी भया है सो बालक समान अविवेकी है। जैसे बालक विना समझे अभक्ष्यका भक्षण करै है विषपान करै है तैसे मूढ अयोग्यका आचरण करै है। जे विषयके अनुरागी हैं सो अपना बुरा करैं हैं। जीवोंके कर्म बंधकी विचित्रता है इसलिए सब ही ज्ञानके अधिकारी नाहीं, कैयक महाभाग्य ज्ञानकूं पावैं हैं। अर कैयक ज्ञानकूं पाय और वस्तुकी वांछाकरि अज्ञान दशाकूं प्राप्त होय हैं। अर कैयक महानिंद्य जो यह संसारी जीवनिके मार्ग तिनमें रुचि करैं हैं, वे मार्ग महादोषके भरे हैं जिनमें विषय कषायकी बहुलता है जिनशासनसूं और कोई दुःखतैं छुडायवेका मारग नाहीं, तातैं हे विभीषण! तुम आनंद चित्त होयकर जिनेश्वर देवका अर्चन करहु। इस भांति धनदत्तका जीव मनुष्यसे देव, देवसे मनुष्य होयकर नवमें भव रामचंद्र भया। तसकी विगत--पहिले भव धनदत्त १ दूजे भव पहले स्वर्गदेव २ तीजे भव पद्मरुचि सेठ ३ चौथे भव दूजे स्वर्ग देव ४ पांचवें भव नयनानंद राजा ५ छठे भव चौथे

स्वर्ग देव ६ सातवें भव श्रीचंद्र राजा ७ आठवें भव पांचवें स्वर्ग ८ नवमें भव रामचंद्र ६ आगे मोक्ष। यह तो रामके भव कहे। अब हे लंकेश्वर! वसुदत्तादिकका वृत्तांत सुन--कर्मनिकी विचित्र-गति, ताके योगकरि मृणालकुंड नामा नगर तहां राजा विजयसेन रानी रत्नचूला उसके व्रजकंबु-नामा पुत्र उसके हेमवती रानी उसके शंभु नामा पुत्र पृथ्वीमैं प्रसिद्ध सो यह श्रीकांतका जीव रावण होनहार सो पृथ्वीमें प्रसिद्ध। अर वसुदत्तका जीव राजाका पुरोहित, उसका नाम श्रीभूति सो लक्ष्मण होनहार, महा जिनधर्मी सम्यग्दृष्टि उसके स्त्री सरस्वती उसके वेदवती नामा पुत्री भई, सो गुणवतीका जीव सीता होनहार गुणवतीके भवसूं पूर्व सम्यक्त विना अनेक तिर्यंच योनिविषैं भ्रमणकरि साधुनिकी निंदाके दोषकरि गंगाके तट मरकर हथिनी भई। एक दिन कीचमें फंसी पराधीन होय गया है शरीर जाका नेत्र तिरमिराट अर मंद मंद सांस लेय सो एक तरंगवेग नामा विद्याधर महादयावान् उसने हथिनीके कानमें नमोकार मंत्र दिया सो नमोकार मंत्रके प्रभावकरि मंद कषाय भई अर विद्याधरने व्रत भी दिए सो जिनधर्मके प्रसादसे श्रीभूति पुरोहितके वेदवती पुत्री भई। एक दिन मुनि आहारकूं आए सो यह हंसने लगी। तब पिताने निवारी सो यह शांतचित्त होय श्राविका भई। अर कन्या परमरूपवती सो अनेक राजानिकें पुत्र याके परिणायवेंकूं अभिलाषी भए अर यह राजा विजय सेनका पोता शंभु जो रावण होनहार है सो विशेष अनुरागी भया। अर यह पुरोहित श्रीभूति महा जिनधर्मी सो उसने जो मिथ्यादृष्टि कुबेर समान धनवान् होय तो हू मैं पुत्री न दूं यह मेरे प्रतिज्ञा है। तब शंभुकुमारने रात्रिविषैं पुरोहितकूं मारया सो पुरोहित जिनधर्मके प्रसादतैं स्वर्गलोकविषैं देव भया, अर शंभुकुमार पापी वेदवती साक्षात् देवी समान उसे न इच्छतीकूं बलात्कार परणिवेकूं उद्यमी भया। वेदवतीके सर्वथा अभिलाषा नाहीं, तब कामकरि प्रज्वलित इस पापीने जोरावरी कन्याकूं आलिंगनकरि मुख चुंब मैथुन किया। तब कन्या विरक्त हृदय कांपे शरीर जाका, अग्निकी शिखा समान प्रज्वलित अपने शील घातकरि अर पिताके घातकरि परम दुखकूं धरती लाल नेत्र होय महा कोपकरि कहती भई--अरे पापी! तैंने मेरे पिताकूं मार मो कुमारीसूं बलात्कार विषयसेवन किया सो नीच! मैं तेरे नाशका कारण होऊंगी। मेरा पिता तैंने मारा सो बड़ा अनर्थ किया, मैं पिताका मनोरथ कभी भी न उलंघू। मिथ्यादृष्टि सेवनसूं मरण भला, ऐसा कह वेदवती श्रीभूति पुरोहितकी कन्या हरिकांता आर्यिका-के समीप जाय आर्यिकाके व्रत लेय परम दुर्धर तप करती भई, केशलुंच किए, महातपकरि रुधिर मांस सुकाय दिए। प्रकट दीखै है अस्थि अर नसा जिसके, तपकर सुकाय दिया है देह जिसने समाधिमरणकरि पांचवें स्वर्ग गई पुण्यके उदयकरि स्वर्गके सुख भोगे। अर शंभु संसार-विषैं अनीतिके योगकर अति निंदनीक भया कुटुंब सेवक अर धनसे रहित भया, उन्मत्त होय गया, अर जिनधर्म परान्मुख भया साधुनिकूं देख हंसै निंदा करै, मद्य मांस शहदका आहारी

पापक्रियाविषैं उद्यमी, अशुभ उदयकरि नरक तिर्यंचविषैं महा दुख भोगता भया।

अथानंतर कछु इक पापकर्मके उपशमसे कुशध्वज नामा ब्राह्मण ताके सावित्री नामा स्त्रीके प्रभासकुंद नामा पुत्र भया, सो दुर्लभ जिनधर्मका उपदेश पाय विचित्रमुनिके निकट मुनि भया। काम क्रोध मद मत्सर हरे, आरंभरहित भया, निर्विकार तपकरि दयावान् निस्पृही जितेंद्री पक्ष मास उपवास करै जहां सूर्य अस्त हो तहां शून्य वनविषैं बैठ रहै, मूलगुण उत्तरगुणका धारक बाईस परीषहका सहनहारा ग्रीष्मविषैं गिरिके शिखर रहै, वर्षामें वृक्षतले बसै, अर शीतकालविषैं नदी सरोवरीके तट निवास करै। या भांति उत्तम क्रियाकर युक्त श्री सम्मेदशिखरकी बंदनाकूं गया। वह निर्वाण क्षेत्र कल्याणका मंदिर जाका चिंतवन किये पापनिका नाश होय, तहां कनकप्रभ नामा विद्याधरकी विभूति आकाशविषैं देख मूर्खने निदान किया जो जिनधर्मके तपका माहात्म्य सत्य है तो ऐसी विभूति मैं हू पाऊं। यह कथा भगवान् केवलीने विभीषणकूं कही—देखो जीवनिकी मूढता तीनलोक जाका मोल नाहीं ऐसा अमोलक तपरूप रत्न भोगरूपी मूठी सागके अर्थ बेच्या कर्मके प्रभावकरि जीवनिकी विपर्यय बुद्धि होय है। निदानकरि दुःखित विषम तपकरि वह तीजे स्वर्ग देव भया। तहांतैं चयकरि भोगनिविषैं है चित्त जाका सो राजा रत्नश्रवाके रानी केकसी ताके रावण नामा पुत्र भया, लंकामें महा विभूति पाई। अनेक है आश्चर्यकारी बात जाकी, प्रतापी पृथिवीमे प्रसिद्ध। अर धनदत्तका जीव रात्रि-भोजनके त्यागकरि सुर नर गतिके सुख भोग श्रीचन्द्र राजा होय पंचम स्वर्ग दश सागर सुख भोगि बलदेव भया रूपकर बलकरि विभूतिकरि जा समान जगत्विषैं और दुर्लभ है महामनोहर चंद्रमासमान उज्ज्वल यशका धारक। अर वसुदत्तका जीव अनुक्रमसे लक्ष्मी रूप लताके लिपटनेका वृक्ष वसुदेव भया। ताके भव सुन—वसुदत्त १ मृग २ शूकर ३ हस्ती ४ महिष ५ वृषभ ६ वानर ७ चीता ८ ल्याली ९ मीढा १० अर जलचर स्थलचरके अनेक भव ११ श्रीभूति पुरोहित १२ देवराजा १३ पुनर्वसु विद्याधर १४ तीजे स्वर्गदेव १५ वासुदेव १६ मेघा १७ कुटुंबीका पुत्र १८ देव १९ वणिक् २० भोगभूमि २१ देव २२ चक्रवर्तीका पुत्र २३ बहुरि कैइक उत्तमभव धर पुष्कराद्धके विदेहविषैं तीर्थंकर अर चक्रवर्ती दोय पदका धारी होय मोक्ष पावेगा। अर दशाननके भव--श्रीकांत १ मृग २ सूकर ३ गज ४ महिष ५ वृषभ ६ बांदर ७ चीता ८ ल्याली ९ मीढ़ा १० अर जलचर स्थलचरके अनेक भव ११ शंभु १२ प्रभासकुंद १३ तीजे स्वर्ग १४ दशमुख १५ बालुका १६ कुटुम्बी पुत्र १७ देव १८ वणिक् १९ भोगभूमि २० देव २१ चक्रीपुत्र २२ बहुरि कइएक उत्तम भव धरि भरतक्षेत्रविषैं जिनराज होय मोक्ष पावेगा बहुरि जगत् जालविषैं नाहीं। अर जानकीके भव-गुणवती १ मृगी २ शूकरी ३ हथिनी ४ महिषी ५ गो ६ वानरी ७ चीती ८ ल्याली ९ गारढ १० जलचर स्थलचरके अनेक भव ११ चितोत्सवा १२ पुरोहितकी पुत्री वेद-

वती १३ पांचवें स्वर्ग देवी अमृतवती १४ बलदेवकी पटरानी १५ सोलहवें स्वर्ग प्रतीन्द्र १६ चक्रवर्ती १७ अहमिंद्र १८ रावणका जीव तीर्थंकर होयगा ताके प्रथम गणधर देव होय मोक्ष प्राप्त होयगा। भगवान् सकलभूषण विभीषणसूं कहै हैं श्रीकांतका जीव कैयक भवमें शम्भु प्रभासकुन्द होय अनुक्रमसूं रावण भया जाने अर्द्ध भरतक्षेत्र में सकल पृथ्वी वश करी, एक अंगुल आज्ञा सिवाय न रही। अर गुणवतीका जीव श्रीभूतिकी पुत्री होय अनुक्रमकरि सीता भई, राजा जनककी पुत्री श्रीरामचन्द्रकी पटरानी विनयवती शीलवती पतिव्रतानिमें अग्रेसर भई। जैसें इन्द्रके शची चन्द्रके रोहिणी रविके रेणा चक्रवर्तीके सुभद्रा तैसें रामके सीता सुंदर है चेष्टा जाकी। अर जो गुणवतीका भाई गुणवान् सो भामण्डल भया, श्रीरामका मित्र जनक राजाकी रानी विदेहाके गर्भविषैं युगल बालक भए, भामण्डल भाई सीता बहिन दोनों महा मनोहर। अर यज्ञबलि ब्राह्मणका जीव विभीषण भया। अर बैलका जीव जो नमोकारमन्त्रके प्रभावतैं स्वर्गगति नरगतिके सुख भोगे यह सुग्रीव कपिध्वज भया। भामण्डल सुग्रीव अर तू पूर्व भवकी प्रीति कर तथा पुण्यके प्रभावकरि महा पुण्याधिकारी श्रीराम ताके अनुरागी भए। यह कथा सुन विभीषण बालिके भव पूछता भया। तब केवली कहै हैं—हे विभीषण! तू सुन, राग द्वेषादि दुखनिके समूहकरि भरा यह संसार सागर चतुर्गतिमई ताविषैं वृन्दावनविषैं एक कालेरा मृग, सो साधु स्वाध्याय करते हुते तिनका शब्द अंतकालमें सुनकरि ऐरावत क्षेत्रविषैं दित नामा नगर तहां विहित नामा मनुष्य सम्यग्दृष्टि सुंदर चेष्टाका धारक ताकी स्त्री शिवमती, ताके मेघदत्त नामा पुत्र भया। जो जिनपूजविषैं उद्यमी भगवानका भक्त अणुव्रतधारक समाधिमरण करि दूजे स्वर्ग देव भया। वहांसे चयकरि जम्बूद्वीपविषैं पूर्व विदेह विजयावतीपुरी ताके समीप महा उत्साहका भरया एक मत्तकोकिला नामा ग्राम ताका स्वामी कांतिशोक ताकी स्त्री रत्नांगिनी ताके स्वप्रभ नामा पुत्र भया महासुंदर जाकूं शुभ आचार भावैं। सो जिनधर्मविषैं निपुण संयतनामा मुनि होय हजारों वर्ष विधिपूर्वक बहुत भांतिके महातप किए, निर्मल है मन जाका। सो तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी, तथापि अति निर्गर्व संयोग संबंधविषैं ममताकूं तजि उपशमश्रेणि धार शुक्लध्यानके पहिले पायेके प्रभावतैं सर्वार्थसिद्धि गया सो तैंतीस सागर अहमिंद्र पदके सुख भोगि राजा सूर्यरज ताके बालि नामा पुत्र भया, विद्याधरनिका अधिपति किहकन्धपुरका धनी, जिसका भाई सुग्रीव सो महा गुणवान् सो जब रावण चढ़ आया तब जीवदयाके अर्थ बालीने युद्ध न किया सुग्रीवकूं राज्य देय दिगम्बर भया। सो जब कैलाशविषैं तिष्ठै था अर रावण आय निकस्या क्रोधकरि कैलाशके उठायवेकूं उद्यमी भया सो बाली मुनि चैत्यालयकी भक्तिसूं ढीला सो अंगुष्ठे दाव्या सो रावण दबने लगा, तब रानीने साधुकी स्तुति करि अभयदान दिवाया। रावण अपने स्थानक गया, अर बाली महामुनि गुरुके निकट

प्रायश्चित्तनामा तप लेय दोष निराकरणकरि क्षपकश्रेणी चढ़ कर्म दग्ध किए, लोकके शिखर सिद्धक्षेत्र हैं वहां गए जीवको निज स्वभाव प्राप्त भया। अर वसुदत्तके अर श्रीकांतके गुणवतीके कारण महा वैर उपज्या था सो अनेक भवविषैं दोऊ परस्पर लड़ लड़ मूवे। अर गुणवतीसूं तथा वेदवतीसूं रावणके जीवके अभिलाषा उपजी हुती उस कारणकरि रावणने सीता हरी, अर वेदवती का पिता श्रीभूति सम्यग्दृष्टि उत्तम ब्राह्मण सो वेदवतीके अर्थ शम्भुने हता सो स्वर्ग जाय वहांसे चयकर प्रतिष्ठित नाम नगरविषैं पुनर्वसु नाम विद्याधर भया सो निदान सहित तपकर तीजे स्वर्ग जाय रामका लघु भ्राता महा स्नेहवंत लक्ष्मण भया। अर पूर्वले वैरके योगसूं रावणकूं मारया। अर वेदवतीसूं शंभुने विपर्यय करी, तातैं सीता रावणके नाशका कारण भई। जो जाकूं हतैं सो ताकरि हत्या जाय। तीन खंडकी लक्ष्मी सोई भई रात्रि ताका चन्द्रमा रावण ताहि हतकरि लक्ष्मण सागरांत पृथिवीका अधिपति भया। रावणसा शूर वीर पराक्रमी या भांति मारया जाय, यह कर्मनिका दोष है। दुर्बलसे सबल होय सबलसे दुर्बल होय, घातक है सो हता जाय, अर हता होय सो घातक होय जाय। संसारके जीवनिकी यही गति है। कर्मकी चेष्टाकरि कभी स्वर्गके सुख पावैं, कभी नरकके दुःख पावैं। अर जैसे कोई महा स्वादरूप परम अन्नविषैं विष मिलाय दूषित करैं, तैसे मूढ़ जीव उग्र तपकूं भोगविलास करि दूषित करै है। जैसे कोई कल्प वृक्षकूं काटि कोदूंकी बाढ़ करै, अर विषके वृक्षकूं अमृत रसकरि सींचे, अर भस्मके निमित्त रत्ननिकी राशिकूं जलावै, अर कोयलनिके निमित्त मलयागिरि चन्दनकूं दग्ध करै, तैसे निदान बन्धकर तपकूं यह अज्ञानी दूषित करै। या संसारविषैं सब दोषकी खान स्त्री है, ताके अर्थ कहा कुकर्म अज्ञानी न करे? जो या जीवने कर्म उपार्जे हैं सो अवश्य फल देय हैं, कोऊ अन्यथा करिवे समर्थ नाहीं। जे धर्मविषैं प्रीति करैं, बहुरि अधर्म उपार्जे वे कुगतिकूं प्राप्त होय हैं तिन की भूल कहा कहिए? जे साधु होयकर मद-मत्सर धरै हैं, तिनकूं उग्र तपकरि मुक्ति नाहीं। अर जाके शांति भाव नाहीं संयम नाहीं तप नाहीं उसे दुर्जन मिथ्यादृष्टि के संसार सागर के तिरवेका उपाय कहा। अर जैसैं असराल पवनकरि मदोन्मत्त गजेंद्र उडैं तो सुसाके उडिवेका कहा आश्चर्य? तैसैं संसारकी झूठी मायाविषैं चक्रवर्त्यादिक बड़े पुरुष भूलें तो छोटे मनुष्यनिकी कहा बात। या जगत्‌विषै परम दुःखका कारण वैर भाव है सो विवेकी न करै। आत्म कल्याणकी है भावना जिनके पापकी करणहारी वाणी कदापि न बोलैं। गुणवतीके भवविषै मुनिका अपवाद किया था अर वेदवतीके भवमें एक मंडलिकानामा ग्राम, वहां सुदर्शननामा मुनि वनमें आये लोक वंदना कर पीछे गए अर मुनिकी बहिन सुदर्शना नामा आर्यिका सो मुनिके निकट बैठी धर्म श्रवण करै थी सो वेदवती ने देखकर ग्रामके लोकनिके निकट मुनिकी निंदा करी कि मैं मुनिकूं अकेली स्त्रीके समीप बैठा देख्या, तब कैयकनिने बात मानी, अर कैयक बुद्धिवंतनिने न

मानी। परन्तु ग्राममें मुनिका अपवाद भया, तब मुनिने नियम किया कि यह झूठा अपवाद दूर होय तो आहारकूं उतरना, अन्यथा नाहीं। तब नगरके देवताने वेदवतीके मुखकरि समस्त ग्रामके लोकनिकूं कहाई कि मैं झूठा अपवाद किया। यह बहिन भाई हैं अर मुनिके निकट जाय वेदवतीने क्षमा कराई कि हे प्रभो! मैं पापिनी ने मिथ्यावचन कहे सो क्षमो करहु। या भांति मुनिकी निंदाकरि सीता का झूठा अपवाद भया। अर मुनिसूं क्षमा कराई उसकरि अपवाद दूर भया। तातैं जे जिनमार्गी हैं वे कभी भी परनिंदा न करैं, किसीमें सांचा दोष है तौहू ज्ञानी न कहैं। अर कोऊ कहता होय ताहि मनै करैं, सर्वथा प्रकार पराया दोष ढाकैं। जे कोई परनिंदा करैं हैं सो अनंतकाल संसार बनविषै दुख भोगवे हैं। सम्यग्दर्शन रूप जो रत्न ताका बडा गुण यही है जो पराया अवगुण सर्वथा ढांके जो सांचा भी दोष पराया कहै सो अपराधी है। अर जो अज्ञानसूं मत्सर भावसे पराया झूठा दोष प्रकाशै उस समान और पापी नाहीं, अपने दोष गुरुके निकट प्रकाशने अर पराए दोष सर्वथा ढांकने जो पराई निंदा करैं सो जिनमार्गसे परान्मुख हैं।

यह केवलीके परम अद्भुत वचन सुनकरि सुर असुर नर सब ही आनन्दकूं प्राप्त भए। वैरभावके दोष सुन सब सभाके लोग महादुखके भयकरि कंपायमान भए। मुनि तो सर्व जीवनिसूं निर्वैर हैं, अधिक शुद्ध भाव धारते भए। अर चतुर्निकायके सर्व ही देव क्षमाकूं प्राप्त होय वैरभाव तजते भए। अर अनेक राजा प्रतिबुद्ध होय शांतिभाव धार गर्वका भार तजि मुनि अर श्रावक भए। अर जे मिथ्यावादी थे वह हू सम्यक्तकूं प्राप्त भए। सब ही कर्मनिकी विचित्रता जान निश्वास नाखते भए। धिक्कार या जगतकी मायाकूं, या भांति सब ही कहते भए। अर हाथ जोड़ सीस नवाय केवलीकूं प्रणामकरि सुर असुर मनुष्य विभीषणकी प्रशंसा करते भए जो तिहारे आश्रयसूं हमने केवलीके मुख उत्तम पुरुषनिके चरित्र सुने, तुम धन्य हो। बहुरि देवेंद्र नरेंद्र नागेंद्र सबही आनन्दके भरे अपने परिवार वर्ग सहित सर्वज्ञ देवकी स्तुति करते भए--हे भगवान् पुरुषोत्तम! यह त्रैलोक्य सकल तुमकरि शोभै है तातैं तिहारा सकलभूषण नाम सत्यार्थ है, तिहारी केवलदर्शन केवलज्ञानमई निज विभूति सर्वजगतकी विभूतिकूं जीतकरि शोभै है, यह अनंत चतुष्टय लक्ष्मी सर्व लोकका तिलक है, यह जगत्के जीव अनादि कालके कर्मवश होय रहे हैं महा दुखके सागरमें पड़े हैं, तुम दीननिके नाथ दीनबंधु करुणानिधान जीवनिकूं जिनराजपद देहु। हे केवलिन्! हम भव वनके मृग जन्म जरा मरण रोग शोक वियोग व्याधि अनेक प्रकारके दुख भोक्ता अशुभ कर्मरूप जालविषै पड़े हैं तातैं छूटना अति कठिन है, सो तुम ही छुड़ायवे समर्थ हो, हमकूं निज बोध देवहु जाकरि कर्मका क्षय होय। हे नाथ! यह विषय-वासनारूप गहन वन तामें हम निजपुरीका मार्ग भूल

रहे हैं सो तुम जगत्के दीपक हमकूं शिवपुरीका पंथ दरसावो, अर जे आत्मबोधरूप शांतरसके तिसाए तिनकूं तुम तृषाके हरणहारे महासरोवर हो, अर कर्म-भर्मरूप वनके भस्म करिवेकूं साक्षात् दावानल रूप हो, अर जे विकल्पजाल नाना प्रकारके तेई भए बरफ ताकरि कंपायमान जगत्के जीव तिनकी शीत व्यथा हरिवेकूं तुम साक्षात् सूर्य हो। हे सर्वेश्वर! सर्व-भूतेश्वर जिनेश्वर तिहारी स्तुति करिवेकूं चार ज्ञानके धारक गणधरदेव हू समर्थ नाहीं, तो अर कौन? हे प्रभो तुमकूं हम बारंबार नमस्कार करैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मण विभीषण सुग्रीव सीता भामंडलके पूर्व भव वर्णन करनेवाला एकसौ छैवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०६ ॥

एक सौ सातवां पर्व

[कृतान्तवक्त्र सेनापतिका जिन-दीक्षा लेना]

अथानंतर केवलीके वचन सुन संसार-भ्रमणका जो महा दुःख ताकरि खेदखिन्न होय जिनदीक्षा की है अभिलाषा जाके ऐसा रामका सेनापति कृतांतवक्त्र रामसूं कहता भया—हे देव! मैं या संसार असारविषैं अनादिकालका मिथ्या मार्गकर भ्रमता हुवा दुःखित भया, अब मेरे मुनिव्रत धरिवेकी इच्छा है। तब श्रीराम कहते भए--जिनदीक्षा अति दुर्धर है, तू जगत्का स्नेह तजि कैसैं धारेगा, महा तीव्र शीत उष्ण आदि बाईस परीषह कैसे सहेगा, अर दुर्जन जननिके दुष्ट वचन कंटक तुल्य कैसे सहेगा? अर अब तक तैंने कभी भी दुख सहे नाहीं, कमलकी कर्णिका समान शरीर तेरा सो कैसैं विषम भूमिके दुख सहेगा, गहन वनविषैं कैसैं रात्रि पूरी करेगा? अर प्रगट दृष्टि पड़े हैं शरीरके हाड अर नसाजाल जहां ऐसे उग्र तप कैसैं करेगा, अर पक्ष मास उपवास दोष टाल पर घर नीरस भोजन कैसैं करेगा? तू महा तेजस्वी शत्रुवोंकी सेनाके शब्द न सहि सकै सो कैसैं नीच लोकनिके किए उपसर्ग सहेगा? तब कृतांतवक्त्र बोला--हे देव! जब मैं तिहारे स्नेहरूप अमृतकूं ही तजवेकूं समर्थ भया, तो मुझे कहा विषम है? जबतक मृत्युरूप वज्रकरि यह देहरूप स्तंभ न चिगै ता पहिले मैं महादुःखरूप यह भववन अंधकारमई वाससूं निकस्या चाहूँ हू। जो बलते घरमेंसे निकसै उसे दयावान न रोकै, यह संसार असार महानिंद्य है, इसे तज कर आत्महित करूं। अवश्य इष्टका वियोग होयगा या शरीरके योगकरि सर्व दुख हैं सो हमारे शरीर बहुरि उदय न आवै या उपायविषैं बुद्धि उद्यमी भई। ये वचन कृतांतवक्त्रके सुन श्रीरामके आंसू आए, अर नीठे नीठे मोहकूं दाब कहते भए--मेरीसी विभूतिकूं तज तू तपके सन्मुख भया है सो धन्य है। जो कदाचित् या जन्मविषैं मोक्ष न होय अर देव होय तो

संकटविषैं आय मोहि संबोधियो। हे मित्र! जो तू मेरा उपकार जानै है तो देवगतिमें विस्मरण मत करियो।

तब कृतांतवक्त्रने नमस्कारकर कही हे देव? जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा, ऐसा कह सर्व आभूषण उतारे। अर सकलभूषण केवलीकूं प्रणामकरि अंतर बाहिरके परिग्रह तजे, कृतांतवक्त्र था सो सौम्यवक्त्र होय गया। सुंदर है चेष्टा जाकी, इसको आदि दे अनेक महाराजा वैरागी भए, उपजी है जिनधर्मकी रुचि जिनके निर्ग्रंथव्रत धारते भए। अर कैयक श्रावक व्रतकूं प्राप्त भए, अर कैयक सम्यक्तकूं धारते भए। वह सभा हर्षित होय रत्नत्रय आभूषणकरि शोभित भई। समस्त सुर असुर नर सकलभूषण स्वामीकूं नमस्कारकरि अपने अपने स्थानक गए। अर कमलसमान हैं नेत्र जिनके, ऐसे श्रीराम सकलभूषण स्वामीकूं अर समस्त साधुनिकूं प्रणामकरि महा विनयरूपी सीताके समीप आए। कैसी है सीता? महा निर्मल तपकरि तेज धरे जैसी घृतकी आहुतिकरि अग्निकी शिखा प्रज्वलित होय तैसी पापोंके भस्म करिवेकूं साक्षात् अग्निरूप तिष्ठी है, आर्यिकानिके मध्य तिष्ठती देखी, दैदीप्यमान है किरणनिका समूह जाके, मानों अपूर्व चंद्रकांति तारानिके मध्य तिष्ठी है, आर्यिकानिके व्रत धरे अत्यंत निश्चल है। तजे हैं आभूषण जाने तथापि श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी लज्जा इनकी शिरोमणि सोहै है श्वेत वस्त्रकूं धरे कैसी सोहै है मानों मंद पवनकर चलायमान है फेन कहिए झाग जाके ऐसी पवित्र नदी ही है। अर मानों निर्मल शरद पूनोंकी चांदनी-समान शोभाकूं धरे समस्त आर्यिकारूप कुमुदनियोंकूं प्रफुल्लित करणहारी भासै है, महा वैराग्यकूं धरै मूर्तिवंती जिनशासन-की देवता ही है, सो ऐसी सीताकूं देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया है मन जिनका ऐसे श्रीराम कल्पवृक्ष समान क्षणएक निश्चल होय रहे, स्थिर हैं नेत्र भृकुटी जिनकी जैसे शरदकी मेघमालाके समीप कंचनगिरि सोहै तैसे श्रीराम आर्यिकानिके समीप भासते भए। श्रीराम चित्तविषैं चिंतवते हैं यह साक्षात् चंद्रकिरण भव्यजन कुमुदिनीकूं प्रफुल्लित करणहारी सोहै है, बड़ा आश्चर्य है यह कायर-स्वभाव मेघके शब्दसे डरती, सो अब महा तपस्विनी भयंकर वनविषैं कैसे भयकूं न प्राप्त होयगी? नितंबहीके भारसूं आलस्यरूप गमन करणहारी महा कोमल शरीर तपसूं विलाय जायगी! कहां यह कोमल शरीर, अर कहां यह दुर्द्धर जिनराजका तप? सो अति कठिन है जो दाह बड़े बड़े वृक्षनिकूं दाहे ताकरि कमलिनीकी कहा बात? यह सदा मनवांछित मनोहर आहारकी करणहारी अब कैसै यथालाभ भिक्षाकरि कालक्षेप करेगी? यह पुण्याधिकारिणी रात्रि-विषैं स्वर्गके विमान-समान सुंदर महलमें मनोहर सेजपर पौढती अर बीन बांसुरी मृदंगादि मंगल शब्दकरि निद्रा लेती सो अब भयंकर वनविषैं कैसे रात्रि पूर्ण करैगी? वन तो डाभकी तीक्ष्ण अणियोंकर विषम अर सिंह व्याघ्रादिकके शब्दकरि डरावना, देखहु मेरी भूल जो मूढ, लोकनि-

के अपवादसूं मैं महा सती पतिव्रता शीलवती सुन्दरी मधुर-भाषिणी घरसे निकासी। या भांति चिंताके भारकरि पीड़ित श्रीराम पवनकरि कंपायमान कमल-समान कंपायमान होते भए। फिर केवलीके वचन चितार धैर्य धरि आंसू पोंछि शोकरहित होय महा विनयकरि सीताकूं नमस्कार किया। लक्ष्मण भी सौम्य हैं चित्त जाका हाथ जोड़ि नमस्कारकरि राम सहित स्तुति करता भया—हे भगवति! धन्य तू सती वदनीक है सुंदर है चेष्टा जाकी, जैसे धरा सुमेरुकूं धारै तैसे तू जिनराजका धर्म धारै है। तैंने जिनवचनरूप अमृत पीया उसकरि भवरोग निवारेगी, सम्यक्त ज्ञानरूप जहाजकरि संसार समुद्रकूं तिरैगी। जे पतिव्रता निर्मल चित्तकी धरणहारी है तिनकी यही गति है, अपनी आत्मा सुधारै अर दोऊ लोक अर दोऊ कुल सुधारैं, पवित्र चित्तकरि ऐसी क्रिया आदरी। हे उत्तम नियमकी धरणहारी! हम जो कोई अपराध किया होय सो क्षमा करियो। संसारी जीवनिके भाव अविवेकरूप होय हैं सो तू जिन-मार्गविषै प्रवरती संसारकी माया अनित्य जानी, अर परम आनंदरूप यह दशा जीवनिकूं दुर्लभ है या भांति दोऊ भाई जानकीकी स्तुतिकरि लव अंकुशकूं आगे धरे अनेक विद्याधर महीपाल तिनसहित अयोध्यामें प्रवेश करते भए जैसे देवनिसहित इंद्र अमरावतीमें प्रवेश करैं। अर समस्त रानी नाना प्रकारके वाहननिपरि चढी परिवारसहित नगरमें प्रवेश करती भई, सो रामकूं नगरमें प्रवेश करता देखि मंदिर ऊपर बैठीं स्त्री परस्पर वार्ता करैं हैं यह श्रीरामचंद्र महा शूरवीर, शुद्ध है अंत:करण जिनका, महा विवेकी मूढ़ लोकनिके अपवादसूं ऐसी पतिव्रता नारी खोई। तब कैयक कहती भई--जे निर्मल कुलके जन्मे शूरवीर क्षत्री हैं तिनकी यही रीति है, किसी प्रकार कुलकूं कलंक न लगावै। लोकनिके संदेह दूर करिवे निमित्त रामने उसकूं दिव्य दई, वह निर्मल आत्मा दिव्यमें सांची होय लोकनिके संदेह मेटि जिनदीक्षा धारती भई। अर कोई कहै—हे सखी! जान-की विना राम कैसे दीखैं हैं जैसे विना चांदनी चांद, अर दीप्ति विना सूर्य। तब कोई कहती भई यह आप ही महा कांतिधारी हैं इनकी कांति पराधीन नाहीं। अर कोई कहती भई--सीताका वज्र-चित्त है जो ऐसे पुरुषोत्तम पतिकूं छोडि जिनदीक्षा धारी। तब कोई कहती भई—धन्य है सीता जो अनर्थरूप गृहवासकूं तजि आत्मकल्याण किया। अर कोई कहती भई ऐसे--सुकुमार दोऊ कुमार महा धीर लव अंकुश कैसे तजे गए? स्त्रीका प्रेम पतिसूं छूटे, परंतु अपने जाए पुत्रनिसूं न छूटैं। तब कोई कहती भई--ये दोऊ पुत्र परम प्रतापी है इनका माता क्या करैगी, इनका सहाई पुण्य ही है अर सब ही जीव अपने अपने कर्मके आधीन हैं। या भांति नगरकी नारी वचनालाप करैं है। जानकीकी कथा कौनकूं आनंदकारिणी न होय। अर यह सबही रामके दर्शनकी अभि-लाषिणी रामकूं देखती देखती तृप्त न भई जैसे भ्रमर कमलके मकरंदसूं तृप्त न होय। अर कैयक लक्ष्मणकी ओर देख कहती भई--ये नरोत्तम नारायण लक्ष्मीवान अपने प्रतापकरि वश करी है

पृथिवी जिन्होंने चक्रके धारक उत्तम राज्य लक्ष्मीके स्वामी वैरिनिकी स्त्रीनिकूं विधवा करणहारे रामके आज्ञाकारी हैं। या भांति दोनों भाई लोककरि प्रशंसा योग्य अपने मंदिरमें प्रवेश करते भए जैसे देवेंद्र देवलोकमें करैं। यह श्रीरामका चरित्र जो निरंतर धारण करैं सो अविनाशी लक्ष्मीकूं पावैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं कृतांतवक्त्रके वैराग्यवर्णन करनेवाला एकसौ सातवां पर्व पूर्ण भया ॥१०७॥

एक सौ आठवां पर्व

[लवण अंकुशके पूर्वभव]

अथानंतर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीके मुख श्रीरामका चरित्र सुन मनविषैं विचारता भया कि सीताने लव अंकुश पुत्रनिसूं मोह तज्या सो वह सुकुमार मृगनेत्र निरंतर सुखके भोक्ता कैसैं माताका वियोग सहि सके? ऐसे पराक्रमके धारक उदारचित्त तिनकूं भी इष्ट-वियोग अनिष्ट-संयोग होय है तो औरकी कहा बात? यह विचार करि गणधर देवसूं पूछया--हे प्रभो! मैं तिहारे प्रसादकरि राम-लक्ष्मणका चरित्र सुण्या, अब बाकी लव-अंकुशका चरित्र सुण्या चाहू हूं। तब इंद्रभूति कहिए गौतम स्वामी कहते भए--हे राजन! काकंदी नाम नगरी, तामें राजा रतिवर्द्धन रानी सुदर्शना, ताके पुत्र दोय एक प्रियंकर दूजा हितंकर, अर मंत्री सर्वगुप्त राज्य-लक्ष्मी का धुरंधर सो स्वामिद्रोही राजाके मारिवेका उपाय चिंतवे, अर सर्वगुप्तकी स्त्री विजया-वती सो पापिनी राजासूं भोग किया चाहै। अर राजा शीलवान् परदारपरान्मुख याकी मायाविषैं न आया। तब याने राजासूं कही--मंत्री तुमकूं मारया चाहै है, सो राजाने याकी बात न मानी। तब यह पतिकूं भरमावती भई जो राजा तोहि मार मोहि लिया चाहै है। तब मंत्री दुष्टने सब सामंत राजासूं फोरे, अर राजाका जो सोवनेका महल तहां रात्रिकूं अग्नि लगाई सो राजा सदा सावधान हुता अर महलविषैं गोप्य सुरंग रखाई थी, सो सुरंगके मार्ग होय दोऊ पुत्र अर स्त्रीकूं लेय राजा निकस्या सो काशीका धनी राजा कश्यप महा न्यायवान् उग्रवंशी राजा रतिवर्धनका सेवक था ताके नगरकूं राजा गोप्य चाल्या। अर सर्वगुप्त रतिवर्धनके सिंहासनपर बैठ्या सबकूं आज्ञाकारी किए। अर राजा कश्यपकूं भी पत्र लिख दूत पठाया कि तुम भी आय मोहि प्रणामकरि सेवा करो। तब कश्यपने कही--हे दूत! सर्वगुप्त स्वामिद्रोही है, सो दुर्गतिके दुःख भोगेगा, स्वामिद्रोहीका नाम न लीजै, मुख न देखिये, सो सेवा कैसैं कीजै? ताने राजाकूं दोऊ पुत्र अर स्त्री सहित अग्निमें जलाया, सो स्वामिघात स्त्रीघात अर बालघात

यह महादोष उसने उपार्जे, तातैं ऐसे पापीका सेवन कैसे करिये ? जाका मुख न देखना सो सर्व लोकनिके देखते उसका शिर काटि धनीका वैर लूंगा । तब यह वचन कहि दूत फेरि दिया । दूतने जाय सर्वगुप्तकूं सर्व वृत्तांत कहा, सो अनेक राजानिकरियुक्त महासेनासहित कश्यप ऊपर आया । सो आयकरि कश्यपका देश घेरा, काशीके चौगिर्द सेना पडी, तथापि कश्यपके सुलह-की इच्छा नाहीं, युद्धहीका निश्चय । अर राजा रतिवर्धन रात्रिकेविषैं काशीके वनविषैं आया अर एक द्वारपाल तरुण कश्यपपर भेजा सो जाय कश्यपसूं राजाके आवनेका वृत्तांत कहता भया । सो कश्यप अतिप्रसन्न भया, अर कहां महाराज, कहां महाराज,ऐसे वचन बारंबार कहता भया । तब द्वारपालने कह्या--महाराज वनविषैं तिष्ठे हैं । तब यह धर्मी स्वामिभक्त अतिहर्षित होय परिवार सहित राजापै गया,अर उसकी आरती करी, अर पांव पडकरि जय जयकार करता नगरमें लाया, नगर उछाला, अर यह ध्वनि नगरविषैं विस्तरी कि जो काहूसूं न जीत्या जाय ऐसा रतिवर्धन राजेंद्र जयवंत होहु । राजा कश्यपने धनीके आवनेका अति उत्सव किया, अर सब सेनाके सामंतनिकूं कहाय भेज्या जो स्वामी तो विद्यमान तिष्ठै है अर तुम स्वामिद्रोहीके साथ होय स्वामीसूं लडोगे, कहा यह तुमकूं उचित है ?

तब यह सकल सामंत सर्वगुप्तकूं छोडि स्वामीपै आए अर युद्धविषैं सर्वगुप्तकूं जीवता पकडि काकंदी नगरीका राज्य रतिवर्धनके हाथविषैं आया, राजा जीवता बच्या सो बहुरि जन्मोत्सव किया, महा दान किए, सामंतनिके सन्मान किए, भगवान्‌की विशेष पूजा करी, कश्यपका बहुत सन्मान किया, अति बधाया अर घरकूं विदा किया । सो कश्यप काशीकेविषैं लोकपालनिकी नाई रमै । अर सर्वगुप्त सर्वलोकनिंद्य मृतकके तुल्य भया कोई भेटै नाहीं, मुख देखै नाहीं । तब सर्वगुप्तने अपनी स्त्री विजयावतीका दोष सर्वत्र प्रकाशा जो यानें राजाबीच अर मो बीच अंतर डाल्या । यह वृत्तांत सुन विजयावती अति द्वेषकूं प्राप्त भई जोमैं न राजा-की भई, न धनीकी भई । सो मिथ्या तपकरि राक्षसी भई, अर राजा रतिवर्धनने भोगनितैं उदास होय सुभानुस्वामीके निकट मुनिव्रत धरे सो राक्षसीने रतिवर्धन मुनिकूं अत्यंत उपसर्ग किए । मुनि शुद्धोपयोगके प्रसादतैं केवली भए प्रियंकर हितंकर दोनों कुमार पहिले याही नगरविषैं दामदेव नामा विप्रके श्यामली स्त्रीके सुदेव वसुदेव नामा पुत्र हुते । सो वसुदेवकी स्त्री विश्वा अर सुदेवकी स्त्री प्रियंगु इनका गृहस्थ पद प्रशंसा योग्य हुता । इन श्रीतिलकनामा मुनिकूं आहारदान दिया सो दानके प्रभावकरि दोनों भाई स्त्रीसहित उत्तरकुरु भोगभूमिविषैं उपजे । तीन पल्यकी आयु भयी, साधुका जो दान सोई भया वृक्ष ताके महाफल भोगभूमिविषैं भोगि दूजे स्वर्ग देव भए वहां सुख भोगि चये सो सम्यज्ञानरूप लक्ष्मी करि मंडित पाप कर्मके क्षय करण-हारे प्रियंकर हितंकर भये । मुनि होय ग्रैवेयक गये,तहांतैं चयकरि लवणांकुश भये महाभव्य तद्भव

मोक्षगामी। अर राजा रतिवर्धनकी रानी सुदर्शना प्रियंकर हितंकरकी माता पुत्रनिमें जाका अत्यन्त अनुराग था सो भरतार अर पुत्रनिके वियोगतैं अत्यंत आर्तरूप होय नाना योनिमें भ्रमणकरि किसी एक जन्मविषैं पुण्य उपार्जे यह सिद्धार्थ भया, धर्मविषैं अनुरागी सर्व विद्याविषैं निपुण, सो पूर्व भवके स्नेहसूं लवअंकुशकूं पढाए, ऐसे निपुण किए जो देवनिकरि भी न जीते जांय। यह कथा गौतम स्वामीने राजा श्रेणिकसूं कही। अर आज्ञा करी--हे नृप! यह संसार असार है अर इस जीवके कौन कौन माता पिता न भये, जगत्के सबही संबंध झूठे हैं, एक धर्म हीका संबंध सत्य है, इसलिये विवेकिनिकूं धर्महीका यत्न करना जिसकरि संसारके दुखनिसूं छूटै। समस्त कर्म महानिंद्य, दुःखकी वृद्धिके कारण, तिनकूं तजकरि जैनका भाष्या तपकरि अनेक सूर्यकी कांतिकूं जीत साधु शिवपुर कहिये मुक्ति तहां जाय हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशके पूर्वभवका वर्णन करनेवाला एक सौ आठवां पर्व पूर्ण भया ॥१०८॥

एक सौ नौवां पर्व

[सीताका महा उग्र तपश्चरण करना और समाधिमरणकर स्वर्ग जाना]

अथानंतर सीता पति अर पुत्रनिकूं तजकरि कहां कहां तप करती भई सो सुनहु-कैसी है सीता, लोकविषैं प्रसिद्ध हैं यश जाका। जिस समय सीता भई वह श्रीमुनिसुव्रतनाथजीका समय था। ते बीसवें भगवान् महाशोभायमान भवभ्रमके निवारणहारे, जैसा अरहनाथ अर मल्लिनाथका समय, तैसा मुनिसुव्रतनाथका समय। ताविषैं श्रीसकलभूषण केवली केवलज्ञानकरि लोकालोकके ज्ञाता विहार करैं हैं, अनेक जीव महाव्रती अणुव्रती किए सकल अयोध्याके लोक जिनधर्मविषैं निपुण विधिपूर्वक गृहस्थका धर्म आराधैं, सकल प्रजा भगवान् श्रीसकलभूषणके वचनविषैं श्रद्धावान् जैसैं चक्रवर्तीकी आज्ञाकूं पालैं, तैसे भगवान् धर्मचक्री तिनकी आज्ञा भव्य जीव पालैं, रामका राज्य महाधर्मका उद्योतरूप, जा समय घने लोक विवेकी साधु-सेवाविषैं तत्पर। देखहु जो सीता अपनी मनोज्ञताकरि देवांगनानिकी शोभाकूं जीतती हुती सो तपकरि ऐसी होय गयी मानों दग्ध भई माधुरी लता ही है। महा वैराग्यकरि मंडित अशुभ भावकरि रहित स्त्री पर्यायकूं अति निंदती महातप करती भई। धूरकर धूसर होय रहे हैं केश जाके, अर स्नान रहित शरीरके संस्काररहित, पसेवकरि युक्त गात्र जाविषैं रज आय पड़ै सो शरीर मलिन होय रहा हैं, वेला तेला पक्ष उपवास अनेक उपवासकरि तनु क्षीण किया, दोष टारि शास्त्रोक्त पारणा करै शील व्रत गुणनिविषैं अनुरागिणी, अध्यात्मके विचारकरि अत्यंत

शांत होय गया है चित्त जाका, वश किये हैं इन्द्रिय जानें, औरनितैं न बनैं ऐसा उग्र तप करती भई। मांस अर रुधिरकरि वर्जित भया हैं अंग जाका, प्रकट नजर आवै हैं अस्थि अर नसाजाल जाके मानों काठकी पुतली ही है, सूकी नदी समान भासती भई। बैठ गये हैं कपोल जाके, जूड़ा प्रमाण धरती देखती चलैं, महादयावंती सौम्य है दृष्टि जाकी, तपका कारण देह ताके समाधानके अर्थि विधिपूर्वक भिक्षा वृत्तिकरि आहार करैं। ऐसा तप कीया कि शरीर और ही होय गया। अपना पराया कोई न जानैं। ऐसी जो यह सीता है इसे ऐसा तप करती देख सकल आर्या याहीकी कथा करैं याहिकी रीति देखि और हू आदरैं सबनिविषैं मुख्य भई। या भांति बासठ वर्ष महा तप किये। अर तैंतीस दिन आयुके बाकी रहे तब अनशन व्रत धार परम आराधना आराधि जैसैं पुष्पादिक उच्छिष्ट सांथरेकूं तजिये तैसैं शरीरकूं तज करि अच्युत स्वर्गविषैं प्रतींद्र भई।

[शम्बु और प्रद्युम्नकुमारके पूर्वभव]

गौतम स्वामी कहै हैं, हे श्रेणिक! जिनधर्मका माहात्म्य देखो जो यह प्राणी स्त्री पर्यायविषैं उपजी हुती,सो तपके प्रभावकरि देवोंका प्रभु होय। सीता अच्युतस्वर्गविषैं प्रतींद्र भई, वहां मणिनिकी कांतिकरि उद्योत किया है आकाशविषैं जाने ऐसे विमानविषैं उपजी, मणि कांचनादि महाद्रव्यनिकरि मंडित, विचित्रता धरे परम अद्भुत सुमेरुके शिखर समान ऊंचा है, वहां परम ईश्वरताकरि सम्पन्न प्रतींद्र भया। हजारों देवांगना तिनके नेत्रोंका आश्रय, जैसा तारवोंकरि मंडित चन्द्रमा सोहै तैसा सोहता भया। अर भगवान्की पूजा करता भया, मध्य-लोकमैं आय तीर्थोंकी यात्रा साधुवोंकी सेवा करता भया, अर तीर्थंकरोंके समोशरणमें गणधरोंके मुखसूं धर्म श्रवण करता भया। यह कथा सुनि गौतमस्वामीसूं राजा श्रेणिक ने पूछी--हे प्रभो? सीताका जीव सोलहवें स्वर्ग प्रतींद्र भया उस समय वहां इंद्र कौन था? तब गौतमस्वामीने कही-उस समय वहां राजा मधुका जीव इन्द्र था। उसके निकट यह आया सो वह मधुका जीव नेमिनाथ स्वामीके समय अच्युतेंद्रपदसूं चयकरि वासुदेवकी रुकमणी रानी ताके प्रद्युम्न पुत्र भया। अर उसका भाई कैटभ जांबुवतीके शंबु नाम पुत्र भया। तब श्रेणिकने गौतमस्वामीसूं विनती करी—हे प्रभो? मैं तुम्हारे वचनरूप अमृत पीवता पीवता तृप्त नाहीं, जैसे लोभी जीव धनसूं तृप्त नाहीं। इसलिए मुझे मधुका अर उसके भाई कैटभका चरित्र कहो। तब गणधर कहते भए-एक मगधनामा देश सर्व धान्य करि पूर्ण, जहां चारों वर्ण हर्षसूं बसैं, धर्म काम अर्थ मोक्षके साधन अनेक पुरुष पाइए, अर भगवानके सुंदर चैत्यालय अर अनेक नगर ग्राम तिनकरि वह देश शोभित जहां नदियोंके तट, गिरियोंके शिखर, वनमें ठौर ठौर साधुवोंके संघ विराजे हैं।

राजा नित्योदित राज्य करै, उस देशमें एक शालि नाम ग्राम नगर-सारिखा शोभित, वहां एक ब्राह्मण सोमदेव उसके स्त्री अग्निला पुत्र अग्निभूति वायुभूति सो वे दोनों भाई लौकिक शास्त्रमें प्रवीण, अर पठन पाठन दान प्रतिग्रहमें निपुण, अर कुलके तथा विद्याके गर्वकरि गर्वित मन विषैं ऐसा जाने, हमसे अधिक कोई नाहीं, जिनधर्मतैं परान्मुख रोग समान इन्द्रिनिके भोग तिनहीकूं भले जानै। एकदिन स्वामी नंदिवर्धन अनेक मुनिनिसहित वनविषैं आय विराजे, बडे आचार्य अवधिज्ञानकरि समस्त मूर्तिके पदार्थनिकूं जानै। सो मुनिनिका आगमन सुनि ग्राम के लोक सब दर्शनकूं आए हैं हुवे, अर अग्निभूति वायुभूतिने काहूसूं पूछी जो यह लोक कहां जाय हैं? तब वाने कही नंधिवर्धन मुनि आए हैं तिनके दर्शनकूं जाय हैं। तब सुनकरि दोऊ भाई क्रोधायमान भए जो हम वादकरि साधुनिकूं जीतेंगे। तब इनकूं माता पिता ने मने किया जो तुम साधुनितैं वाद न करो, तथापि इन्होंने न मानी, वादकूं गए। तब इनकूं आचार्यके निकट जाते देखि एक सात्त्विकनामा मुनि अवधिज्ञानी इनकूं पूछते भए--तुम कहां जावो हो? तब इन्होंने कही तुम विषै श्रेष्ठ तुम्हारा गुरु है, उसकूं वादकरि जीतवे जाय हैं। तब सात्त्विक मुनिने कही हमसूं चर्चा करो। तब यह क्रोधकरि मुनिके समीप बैंटे, अर कही तू कहांतैं आया है? तब मुनिने कही तुम कहांतैं आए? तब वह क्रोधकरि कहते भए यह तैं कहा पूछी? हम ग्रामतैं आए हैं, कोई शास्त्रकी चर्चा करहु। तब मुनिने कही यह तो हम जानें हैं तुम शालिग्रामसूं आए हो, अर तिहारे बापका नाम सोमदेव, माताका नाम अग्निला, अर तिहारे नाम अग्निभूति वायुभूति, तुम विप्रकुल हो सो यह तो प्रगट है। परंतु हम तुमसूं यह पूछैं हैं अनादिकालके भववनविषैं भ्रमण करो हो, सो या जन्मविषैं कौन जन्मसूं आए हो? तब इनने कही यह जन्मांतर की बात हमकूं पूछी सो और कोई जानैं है? तब मुनिने कही हम जानैं हैं। तुम सुनो- पूर्वभवविषै तुम दोऊ भाई या ग्रामके वनविषैं परस्पर स्नेह के धारक स्याल हुते विरूपमुख, अर याही ग्रामविषै एक बहुत दिनका वासी पामर नामा पितहड ब्राह्मण सो वह खेतविषै सूर्य अस्त समय क्षुधाकरि पीडित नाडी आदि उपकरण तजकरि आया अर अंजनागिरि तुल्य मेघ माला उठी, सात दिन अहो-रात्रका झड़ भया, सो पामर तो घरसे आय न सक्या अर वे दोऊ स्याल अति क्षुधातुर अंधेरी रात्रिविषैं आहारकूं निकसे, सो पामर के खेतविषैं भीजी नाडी कर्दमकरि लिप्त पडी हुती सो उन भक्षण करी उसकरि विकराल उदर वेदना उपजी, स्याल मूवे, अकामनिर्जराकरि तुम सोमदेवके पुत्र भए। अर वह पामर सात दिन पीछे खेतमें आया सो दोऊ स्याल मूए देखि अर नाडी कटी देखि स्यालनिकी चर्म ले भाथडी करी सो अबतक पामरके घरविषै टंगी है। अर पामर मरकरि पुत्रके घर पुत्र भया सो जातिस्मरण होय मौन पकड्या जो मैं कहा कहों, पिता तो मेरा पूर्वभवका पुत्र अर माता

पूर्व भवकी पुत्रकी वधू, तातैं न बोलना ही भला। सो यह पामरका जीव मौनी यहां ही बैठा है ऐसा कहि मुनि पामरके जीवसूं बोले—अहो तू पुत्रके पुत्र भया सो यह आश्चर्य नाहीं, संसारका ऐसा ही चरित्र है। जैसैं नृत्यके अखाडेमें बहुरूपिया अनेक रूप बनाय नाचै, तैसैं यह जीव नाना पर्यायरूप भेष धर नाचै है, राजातैं रंक होय, रंकसूं राजा होय; स्वामीसूं सेवक, सेवकसूं स्वामी; पितासूं पुत्र, पुत्रसूं पिता, मातासूं भार्या, भार्यासूं माता, यह संसार अरहट की घड़ी है ऊपरली नीचे नीचली ऊपर। ऐसा संसारका स्वरूप जान, हे वत्स! अब तू गूंगापन तजि वचनालाप करहु। या जन्मका पिता है तासे पिता कहि, मातासूं माता कहि, पूर्वभव का कहा व्यवहार रहा? यह वचन सुन वह विप्र हर्षकरि रोमांच होय फूल गए हैं नेत्र जाके मुनिकूं तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि जैसैं वृक्षकी जड़ उखड़ जाय, अर गिर पड़े तैसैं पायनि पड्या। अर मुनिकूं कहता भया—हे प्रभो, तुम सर्वज्ञ हो, सकल लोककी व्यवस्था जानो हो, या भयानक संसार सागरविषैं मैं डूबूं था सो तुम दयाकरि निकास्या, आत्मबोध दिया। मेरे मनकी सब जानी, अब मोहि दीक्षा देवहु, ऐसा कहकरि समस्त कुटुंबका त्याग करि मुनि भया।

यह पामरका चरित्र सुन अनेक लोक मुनि भए, अनेक श्रावक भए अर इन दोनों भाईनिकी पूर्वभवकी खाल लोक ले आए सो इनने देखी, लोकोंने हास्य करी जो यह मांसके भक्षक स्याल थे सो यह दोऊ भाई द्विज बडे मूर्ख जो मुनिनिसूं वाद करने आए। ये महामुनि तपोधन शुद्धभाव सबके गुरु, अहिंसा महाव्रतके धारक, इन समान और नाहीं। यह महामुनि महाव्रतरूप दीक्षा के धारक क्षमारूप यज्ञोपवीत धरें, ध्यानरूप अग्निहोत्रके कर्ता, महाशांत मुक्तिके साधनविषैं तत्पर। अर जे सर्व आरम्भविषैं प्रवरतैं ब्रह्मचर्यरहित वे मुखसूं कहै हैं कि हम द्विज हैं परंतु क्रिया करें नाहीं, जैसे कोई मनुष्य या लोकमें सिंह कहावै देव कहावै, परंतु वह सिंह नाहीं, तैसे यह नाममात्र ब्राह्मण कहावैं परंतु इनमें ब्रह्मत्व नाहीं। अर मुनिराज धन्य हैं परम संयमी महा क्षमावान् तपस्वी जितेंद्री निश्चय थकी ये ही ब्राह्मण हैं। ये साधु महाभद्र-परणामी भगवत्‌के भक्त महा तपस्वी यति धीर वीर मूल गुण उत्तरगुणके पालक इन समान और कोऊ नाही। यह अलौकिक गुण लिये हैं। अर इनहीकूं परिव्राजक कहिये काहेतैं जो वह संसारकूं तजि मुक्तिकूं प्राप्त होंय। ये निर्ग्रन्थ अज्ञान-तिमिरके हर्ता तपकरि कर्मनिकी निर्जरा करें हैं, क्षीण किये हैं रागादिक जिन्होंने महाक्षमावान पापनिके नाशक तातें इनकूं क्षपणक हू कहिए। यह संयमी कषायरहित शरीरत निर्मोह दिगंबर योगीश्वर ध्यानी ज्ञानी पंडित निःस्पृह सो ही सदा बंदिवे योग्य हैं। ए निर्वाणकूं साधैं तातें ये साधु कहिए। अर पंच आचारकूं आप आचरें औरनिकूं आचरावें तातैं आचार्य कहिए, अर आगार कहिए घर ताके त्यागी तातैं अनगार कहिए, शुद्ध

भिक्षाके ग्राहक तातैं भिक्षुक कहिए, अति कायक्लेशकरि अशुभकर्मके त्यागी उज्ज्वल क्रियाके कर्ता तप करते खेद न मानैं तातैं श्रमण कहिए, आत्मस्वरूपकूं प्रत्यक्ष अनुभवैं तातैं मुनि कहिए रागादिक रोगोंके हरिबेका यत्न करैं तातैं यति कहिए, या भांति लोकनिने साधुकी स्तुति करी। अर इन दोनों भाईनिकी निंदा करी। तब यह मानरहित प्रभारहित विलखे होय घर गए, रात्रिकेविषैं पापी मुनिके मारिवेकूं आए। अर वे सात्विक मुनि अपरिग्रही संघकूं तजि अकेले मसान भूमिविषैं अस्थ्यादिकसूं दूर एकांत पवित्र भूमिमें विराजे थे, कैसी है वह भूमि जहां रीछ व्याघ्र आदि दुष्ट जीवोंका नाद होय रहा है, अर राक्षस भूत पिशाचोंकरि भरया है, नागोंका निवास है, अंधकाररूप भयंकर तहां शुद्ध शिला जीव-जंतुरहित उसपर कायोत्सर्ग धरि खडे थे, सो उन पपियोंने देखे। दोनों भाई खड्ग काढ़ि क्रोधायमान होय कहते भए जब तो तोहि लोकोंने बचाया अब कौन बचावेगा ? हम पंडित पृथिवीविषैं श्रेष्ठ प्रत्यक्ष देवता तू निर्लज्ज हमकूं स्याल कहै, यह शब्द कहि दोनों अत्यंत प्रचंड होठ डसतें लाल नेत्र दयारहित मुनिके मारिवेकूं उद्यमी भए। तब वनका रक्षक यक्ष उसने देखे मनविषैं चिंतवता भया–देखो ऐसे निर्दोष साधु ध्यानी, कायासूं निर्ममत्व तिनके मारिवेकूं उद्यमी भए, तब यक्षने इन दोनों भाईकूं कीले, सो हलचल सक नाहीं दोनों पसवारे खडे। प्रभात भया सकल लोक आए देखे तो यह दोनों मुनिके पसवारे कीले खडे हैं, अर इनके हाथविषैं नंगी तलवार है। तब इनकूं सब लोक धिक्कार धिक्कार कहते भए--यह दुराचारी पापी अन्यायी ऐसा कर्म करनेकूं उद्यमी भए, इन समान और पापी नाहीं। और यह दोनों चित्तविषैं चिंतवते भए जो यह धर्मका प्रभाव है, हम पापी थे सो बलात्कार कीले, स्थावरसम करि डारे। अब या अवस्थासूं जीवते बचें तो श्रावकके व्रत आदरें। अर उस ही समय इनके माता पिता आए बारंबार मुनिकूं प्रणामकरि विनती करते भए—हे देव ! यह कुपूत पुत्र हैं इन्होंने बहुत बुरी करी आप दयालु हो जीवदान देवो। तब साधु बोले हमारे काहूसूं कोप नाहीं हमारे सब मित्र बांधव हैं। तब यक्ष लाल नेत्रकरि अति गुंजारसूं बोल्या अर सबोंके समीप सर्व वृत्तांत कह्या कि जो प्राणी सधुवोंकी निंदा करें सो अनर्थकूं प्राप्त होवें जैसे निर्मल कांचविषैं बांका मुखकरि निरखे तो बांका ही दीखैं, तैसे जो साधुवोकूं जैसा भावकरि देखैं तैसा ही फल पावैं जो मुनियोंकी हास्य करै सो बहुत दिन रुदन करै, अर कठोर वचन कहै सो क्लेश भोगवै। अर मुनिका बध करै तो अनेक कुमरण पावै, द्वेष करै सो पाप उपाजैं भव भव दुख भोगवै, अर जैसा करै तैसा फल पावैं। यक्ष कहै है--हे विप्र ! तेरे पुत्रोंके दोषकरि मैं कीले है विद्याके मानकरि गर्वित मायाचारी दुराचारी संयमियोंके घातक हैं। ऐसे वचन यक्षने कहे, तब सोमदेव विप्र हाथ जोडि साधुकी स्तुति करता भया, अर रुदन करता भया, आपकूं निंदता छाती कूटता ऊर्ध्व भुजाकरि स्त्रीसहित विलाप करता भया। तब मुनि परम

दयालु यक्षकूं कहते भए–हे सुंदर ! हे कमल नेत्र ! यह बालबुद्धि हैं, इनका अपराध तुम क्षमा करो, तुम जिनशासनके सेवक हो, सदा जिनशासनकी प्रभावना करो हो, तातैं मेरे कहेसूं इनकूं क्षमा करो। तब यक्षने कही आप कही सो ही प्रमाण वे दोनों भाई छोड़े। तब यह दोनों भाई मुनिकूं प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि साधुका व्रत धरिवेकूं असमर्थ तातैं सम्यक्त्वसहित श्रावकके व्रत आदरते भए जिनधर्मकी श्रद्धाके धारक भए। अर इनके माता पिता व्रत ले छोडते भए सो वे तो अव्रतके योगसूं पहिले नरक गये, अर यह दोनों विप्रपुत्र निसन्देह जिनशासन रूप अमृतका पानकरि हिंसाका मार्ग विषवत् तजते भए, समाधिमरणकरि पहिले स्वर्ग उत्कृष्ट देव भए। वहांसूं चयकरि अयोध्याविषैं समुद्र सेठ उसके धारणी स्त्री उसकी कुक्षिविषैं उपजे नेत्रनिकूं आनंदकारी एकका नाम पूर्णभद्र दूजेका नाम कांचनभद्र, सो श्रावकके व्रत धारि पहिले स्वर्ग गए। अर ब्राह्मण के भवके इनके पिता माता पापके योगसूं नरक गए हुते वे नरकसूं निकसि चांडाल अर कूकरी भए, वे पूर्णभद्र अर कांचनभद्रके उपदेशसं जिनधर्मका आराधन करते भए, समाधिमरणकरि सोमदेव द्विजका जीव चांडालसूं नंदीश्वर द्वीपका अधिपति देव भया, अर अग्निला ब्राह्मणीका जीव कूकरीसं अयोध्याके राजाकी पुत्री होय उस देवके उपदेशसूं विवाहका त्याग करि आर्यिका होय उत्तम गति गई वे दोनों परंपराय मोक्ष पावेंगे।

अर पूर्णभद्र कांचनभद्रका जीव प्रथम स्वर्गसूं चयकरि अयोध्याका राजा हेम, रानी अमरावती उसके मधु कैटभ, नामा पुत्र जगत् विख्यात भए जिनकूं कोई जीत न सकै। महा प्रबल महा रूपवान् जिन्होंने यह समस्त पृथिवी वश करी, सब राजा तिनके आधीन भए। भीम नाम राजा गढके बलकरि इनकी आज्ञा न मानें, जैसें चमरेंद्र असुरकुमारनिका इंद्र नंदनवनकूं पाय प्रफुल्लित होय है, तैसें वह अपने स्थानकके बलकरि प्रफुल्लित रहे। अर एक वीरसेन नाम राजा वटपुरका धनी मधु कटभका सेवक उसने मधु कैटभकूं विनती पत्र लिख्या--हे प्रभो ! भीमरूप अग्निने मेरा देशरूप वन भस्म किया। तब मधु क्रोधकरि बड़ी सेनासूं भीम ऊपरि चढ्या। सो मार्गविषैं वटपुर जाय डेरा किए, वीरसेनने संमुख जाय अति भक्तिकरि मिहमानी करी। उसके स्त्री चन्द्राभा चन्द्रमा-समान है वदन जाका सो वीरसेन मूर्खने उसके हाथ मधुका आरता कराया अर उसहीके हाथ जिमाया। चन्द्राभाने पतिसूं घनी ही कही जो अपने घरविषैं सुंदर वस्तु होय सो राजाकूं न दिखाइए, पतिने न मानी। राजा मधु चंद्राभाकूं देखि मोहित भया, मनविषैं विचारी इस सहित विंध्याचलके वनका वास भला, अर या विना सब भूमिका राज्य भी भला नाहीं, सो राजा अन्याय ऊपर आया। तब मंत्रीने समझाया--अबार यह बात करोगे तो कार्य सिद्ध न होयगा अर राज्य भ्रष्ट होयगा। तब मंत्रियोंके कहेसूं राजा वीरसेनकूं लार लेय भीमपै गया, उसे युद्धविषैं जीत वशीभूत किया। अर और सब राजा वश किए, बहुरि अयोध्या आय चन्द्राभाके

लेयवेका उपाय चिंतया। सर्व राजा वसंतकी क्रीडाके अर्थ स्त्रीसहित बुलाये, अर वीरसेनकूं चंद्राभासहित बुलाया। तब हू चंद्राभाने कही कि मुझे मत ले चलो सो न मानी, ले ही आया। राजाने मासपर्यंत वनविषैं क्रीड़ा करी, अर राजा आये थे तिनकूं दान सन्मानकरि स्त्रियोंसहित विदा किये। अर वीरसेनकूं कैयकदिन राख्या अर वीरसेनकूं भी अतिदान सन्मान करि विदा किया। अर चन्द्राभाके निमित्त कही इनके निमित्त अद्भुत आभूषण बनवाए हैं सो अभी बन नहीं चुके हैं तातैं इनकूं तिहारे पीछे विदा करेंगे। सो वह भोला कुछ समझे नाहीं, घर गया। वाके गए पीछे मधुने चन्द्राभाकूं महलविषैं बुलाया, अभिषेककरि पटरानीपद दिया, सब रानियोंके ऊपर करी। भोगकरि अंध भया है मन जिसका इसे राखि आपकूं इंद्र समान मानता भया। अर वीरसेनने सुना कि चंद्राभा मधुने राखी तब पागल होय कैयक दिनविषैं मंडवनामा तापसका शिष्य होय पंचाग्नि तप करता भया। अर एक दिन राजा मधु न्यायके आसन बैठ्या सो एक परदारारतका न्याय आया सा राजा न्यायविषैं बहुत देरतक बैठे रहे। बहुरि मंदिर विषै गए तब चंद्राभाने हंसकरि कही महाराज, आज घनी वेर क्यों लागी? हम क्षुधाकरि खेद-खिन्न भई, आप भोजन करो तो पीछे भोजन करूं। तब राजा मधुने कही आज एक परनारीरतका न्याय आय पड्या, तातैं देर लागी। तब चंद्राभाने हंसकरि कही जो परस्त्रीरत होय उसकी बहुत मानता करनी। तब राजाने क्रोधकरि कह्या--तुम यह क्या कही? जे दुष्ट व्यभिचारी हैं, तिनका निग्रह करना, जे परस्त्रीका स्पर्श करें संभाषण करें, ते पापी हैं, सेवन करें तिनकी कहा बात? ऐसे कर्म करें तिनकूं महादण्ड दे नगरसूं काढ़ने। जे अन्यायमार्गी हैं वे महा पापी नरकविषैं पडैं हैं अर राजाओंके दंड योग्य हैं तिनका मान कहा? तब रानी चन्द्राभा राजाकूं कहती भई--हे नृप! यह परदारा-सेवन महा दोष है, तो तुम आपकूं दंड क्यों न देवो। तुम ही परदाररत हो तो औरोंकूं कहा दोष? जैसा राजा तैसी प्रजा, जहां राजा हिंसक होय अर व्यभिचारी होय तहां न्याय कैसा? तातैं चुप होय रहो जिस जलकरि बीज उगै अर जगत् जीवै सो जल ही जो जलाय मारे तो और शीतल करणहारा कौन? ऐसे उलाहनाके वचन चंद्राभाके सुन राजा कहता भया--हे देवि! तुम कहो हो सो ही सत्य है, वारंवार इसकी प्रशंसा करी, अर कहा मैं पापी लक्ष्मीरूप पाशकरि वेढ्यो विषयरूप कीचविषैं फंस्या अब इस दोषसूं कैसे छूटूं। राजा ऐसा विचार करै है। अर अयोध्याके सहस्राम्रनामा वनविषैं महासंघसहित सिंहपाद नामा मुनि आए। राजा सुनकरि रणवाससहित अर लोकूंसहित मुनिके दर्शनकूं गया, विधिपूर्वक तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकरि भूमिविषैं बैठ्या जिनेंद्रका धर्म श्रवणकरि भोगोंसूं विरक्त होय मुनि भया। अर रानी चंद्राभा, बड़े राजाकी बेटी रूपकरि अतुल्य सो राज विभूति तजि आर्यिका भई दुर्गतिकी वेदनाका है अधिक भय जिसकूं। अर मधुका भाई कैटभ राजकूं विनाशीक जान महा व्रतधरि मुनि भया। दोऊ

भाई महा तपस्वी पृथिवीविषैं विहार करते भए अर सकल स्वजन परजनके नेत्रनिकूं आनंदका कारण मधुका पुत्र कुलवर्धन अयोध्याका राज्य करता भया। अर मधु सैकड़ों बरस व्रत पाल दर्शन ज्ञान चारित्र तप यही चार आराधना आराधि समाधिमरणकरि सोलहवां अच्युतनामा स्वर्ग वहां अच्युतेंद्र भया, अर कैटभ पंद्रवां आरणनामा स्वर्ग वहां आरणेंद्र भया। गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! यह जिनशासनका प्रभाव जानों जो ऐसे अनाचारी भी अनाचारका त्यागकरि अच्युतेंद्र पद पावें। अथवा इंद्र पदका कहा आश्चर्य? जिनधर्मके प्रसादसूं मोक्ष पावें। मधुका जीव अच्युतेंद्र था उसके समीप सीताका जीव प्रतींद्र भया। अर मधुका जीव स्वर्गसूं चयकरि श्रीकृष्णकी रुक्मिणी रानीके प्रद्युम्न नामा पुत्र कामदेव होय मोक्ष लही। अर कैटभका जीव कृष्णकी जामवंती रानीके शंबु कुमारनामा पुत्र होय परम धामकूं प्राप्त भया। यह मधुका व्याख्यान तुझे कहा। अब हे श्रेणिक बुद्धिवंतोंके मनकूं प्रिय ऐसे लक्ष्मणके अष्ट पुत्र महा धीर वीर तिनका चरित्र पापोंका नाश करणहारा चित्त लगाय सुनहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै राजा मधुका वैराग्य वर्णन करनेवाला एक सौ नौवां पर्व पूर्ण भया ॥१०९॥

एकसौ दसवां पर्व

[लक्ष्मणके आठ कुमारोंका विरक्त होकर दीक्षा लेना और निर्वाण प्राप्त करना]

अथानंतर कांचनस्थान नामा नगर वहां राजा कांचनरथ उसकी रानी शतह्रदा, ताके पुत्री दोय अति रूपवती रूपके गर्वकरि महा गर्वित, तिनके स्वयंवरके अर्थ अनेक राजा भूचर खेचर तिनके पुत्र कन्याके पिताने पत्र लिख दूत भेजि शीघ्र बुलाए। सो दूत प्रथम ही अयोध्या पठाया अर पत्रविषैं लिख्या मेरी पुत्रियोंका स्वयंवर है सो आप कृपाकरि कुमारोंकूं शीघ्र पठावो। तब राम-लक्ष्मणने प्रसन्न होय परम ऋद्धियुक्त सर्व सुत पठाए। दोनों भाइयोंके सकल कुमार लव-अंकुशकूं अग्रेसरकरि परस्पर महा प्रेमके भरे कांचनस्थानपुरकूं चाले, सैकडों विमानविषैं बैठे अनेक विद्याधर लार, रूपकरि लक्ष्मीकरि देवनि सारिखे आकाशके मार्ग गमन करते भये। सो बड़ी सेना सहित आकाशसूं पृथिवीकूं देखते जावें। कांचनस्थानपुर पहुँचे, वहां दोनों श्रेणियोंके विद्याधर राजकुमार आये थे सो यथायोग्य तिष्ठे, जैसे इंद्रकी सभाविषैं नानाप्रकारके आभूषण पहिरे देव तिष्ठैं। अर नंदनवनविषैं देव नानाप्रकारकी चेष्टा करें तैसी चेष्टा करते भये। अर वे दोनों कन्या मंदाकिनी अर चन्द्रवक्त्रा मंगल स्नानकरि सर्व आभूषण पहिरे निज वाससूं रथ चढी निकसीं मानों साक्षात् लक्ष्मी अर लज्जा ही हैं। महा गुणोंकरि पूर्ण तिनके खोजा लार था सो

राजकुमारोंके देश कुल संपत्ति गुण नाम चेष्टा सब कहता भया। अर कही ए आए हैं तिनविषैं कई वानरध्वज, कई सिंहध्वज, कई वृषभध्वज, कई गजध्वज, इत्यादि अनेक भांतिकी ध्वजाकूं धरे महा पराक्रमी हैं,इनविषैं इच्छा होय ताहि वरहु। तब वह सबनिकूं देखती भई, अर यह सब राजकुमार उनकूं देखि संदेहकी तुला विषैं आरूढ भए कि यह रूप गर्वित हैं, न जानिए कौनकूं वरें ऐसी रूपवती हम देखी नाहीं मानों ये दोनों समस्त देवियोंका रूप एकत्रकरि बनाई हैं, यह कामकी पताका लोकनिकूं उन्मादका कारण, इस भांति सब राजकुमार अपने अपने मनविषैं अभिलाषारूप भए। दोनों उत्तम कन्या लव अंकुशकूं देखि कमबाणकरि वेधी गई। उनमें मंदाकिनी नामा जो कन्या उसने लवके कंठविषैं वरमाला डारी, अर दूजी कन्या चंद्रवक्त्राने अंकुशके कंठ विषैं वरमाला डारी। तब समस्त राजकुमारोंके मनरूप पक्षी तनुरूप पिंजरेसूं उड़ गए। अर जे उत्तम जन हुते तिन्होंने प्रशंसा करी, कि इन दोनों कन्याओंने रामके दोनों पुत्र वरे सो नीके करी, ए कन्या इनही योग्य हैं। इस भांति सज्जनोंके मुखसूं बाणी निकसी। जे भले पुरुष हैं तिनका चित्त योग्य संबंधसूं आनंदकूं प्राप्त होय।

अथानंतर लक्ष्मणकी विशल्यादि आठ पटरानी तिनके पुत्र आठ महा सुंदर उदार चित्त शूरवीर पृथिवीविषैं प्रसिद्ध इंद्रसमान सो अपने अढाईसै भाइयोंसहित महाप्रीति युक्त तिष्ठते थे जसे तारावोंमें ग्रह तिष्ठें। सो आठ कुमारनि विना और सब ही भाई रामके पुत्रनिपर क्रोधित भए। जो हम नारायणके पुत्र कांतिधारी कलाधारी नवयौवन लक्ष्मीवान बलवान सेनावान कौन गुणकरि हीन, जो इन कन्यानिने हमकूं न वरया, अर सीताके पुत्र वरे? ऐसा विचारकरि कोपित भए। तब बड़े भाई आठने इनकूं शांतचित्त किए जैसे मंत्रकरि सर्पकूं वश करिए। तिनके समझावेतैं सब ही भाई लव अंकुशसूं शांतचित्त भए। अर मनविषैं विचारते भए जो इन कन्यानिने हमारे बाबाके बेटे बड़े भाई वरे तब ए हमारे भावज सो माता समान हैं, अर स्त्री पर्याय महा निंद्य है, स्त्रीनिकी अभिलाषा अविवेकी करें, स्त्रियें स्वभाव ही तैं कुटिल हैं, इनके अर्थ विवेकी विकारकूं न भजें। जिनकूं आत्मकल्याण करना होय सो स्त्रीनितैं अपना मन फेरैं, या भांति विचार सबही भाई-शांतचित्त भए पहिले सब ही युद्धकूं उद्यमी भए हुते, रणके वादित्रनिका कोलाहल शंख झंझा भेरी झंझार इत्यादि अनेक जातिके वादित्र बाजने लगे,अर जैसे इंद्रकी विभूति देखि छोटे देव अभिलाषी होंय,तैसे ये सब स्वयंवरविषैं कन्यानिके अभिलाषी भए हुते सो बड़े भाईनिके उपदेशतैं विवेकी भये। अर उन आठों बड़े भाइनिकूं वैराग्य उपज्या सो विचारैं हैं यह स्थावर जंगमरूप जगत्के जीव कर्मनिकी विचित्रताके योगकरि नानारूप हैं, विनश्वर हैं, जैसा जीवनिके होनहार हैं तैसा ही होय है, जाके जो प्राप्ति होनी है सो अवश्य होय हैं, और भांति नहीं। अर लक्ष्मणकी रानीका पुत्र हंसकर कहता भया--जो भ्रात हो!

स्त्री कहा पदार्थ है ? स्त्रीनितैं प्रेम करना महा मूढता है, विवेकिनकूं हांसी आवै है जो यह कामी कहा जानि अनुराग करैं हैं। इन दोऊ भाइनिने ये दोनों रानी पाई तौ कहा बड़ी वस्तु पाई ? जे जिनेश्वरी दीक्षा धरें, वे धन्य हैं। केलाके स्तंभ समान असार काम भोग आत्माके शत्रु तिनके वश होय रति अरति मानना महा मूढता है, विवेकिनकूं शोक हू न करना, अर हास्य हू न करना। ए सब ही संसारी जीव कर्मके वश भ्रमजालविषैं पड़े हैं, ऐसा नाहीं करैं हैं जाकर कर्मोंका नाश होय। कोई विवेकी करैं सोई सिद्धपदकूं प्राप्त होय। या गहन संसार वनविषैं ये प्राणी निज पुरका मार्ग भूल रहे हैं, ऐसा करहु जातैं भवदुख निवृत्त होय। हे भाई हो ! यह कर्मभूमि आर्यक्षेत्र मनुष्य देह उत्तम कुल हमने पाया सो एते दिन योंही खोये, अब वीतरागका धर्म आराधि मनुष्य देह सफल करो। एक दिन मैं बालक अवस्थाविषैं पिताकी गोद-विषैं बैठा हुता सो वे पुरुषोत्तम समस्त राजानिकूं उपदेश देते थे वे वस्तुका स्वरूप सुंदर स्वरसूं कहते भए सो मैं रुचिसूं सुएया चारो गतिविषैं मनुष्यगति दुर्लभ है। जो मनुष्य भव पाय आत्म-हित न करैं है सो ठगाए गए जान। दानकरि तो मिथ्यादृष्टि भोगभूमि जावैं, अर सम्यग्दृष्टि दानकरि तपकरि स्वर्ग जांय, परम्पराय मोक्ष जावे। अर शुद्धोपयोग रूप आत्मज्ञानकरि यह जीव याही भव मोक्ष पावै। अर हिंसादिक पापनिकरि दुर्गति लहै जो तप न करै सो भव वन-विषैं भटकै, बारंबार दुर्गतिके दुःख संकट पावै। या भांति विचार वे अष्ट कुमार शूरवीर प्रतिबोधकूं प्राप्त भए, संसार सागरके दुःखरूप भवनिसूं डरे, शीघ्र ही पितापै गए, प्रणामकरि विनयसूं खड़े रहे अर महा मधुर वचन हाथ जोड़ कहते भये--हे तात ! हमारी विनती सुनहु। हम जैनेश्वरी दीक्षा अंगीकार किया चाहें हैं तुम आज्ञा देवहु। यह संसार विजुरीके चमत्कार समान अस्थिर है, केलाके स्तंभ समान असार है, हमकूं अविनाशीपुरके पंथ चलते विघ्न न करहु। तुम दयालु हो कोई महाभाग्यके उदयतैं हमकूं जिनमार्गका ज्ञान भया, अब ऐसा करें जाकरि भवसागरके पार पहुचें। ये काम भोग आशीविष सर्पके फण समान भयंकर हैं, परम दुःखके कारण हम दूर हीतैं छोड्या चाहैं है या जीवके कोई माता पिता पुत्र बांधव नाहीं, कोई याका सहाई नाहीं, यह सदा कर्मके आधीन भववनविषैं भ्रमण करै है याके कौन कौन जीव कौन संबंधी न भए। हे तात ! हमसूं तिहारा अत्यंत वात्सल्य है अर माताओंका है सो ये ही बंधन है। हमने तिहारे प्रसादतैं बहुत दिन नानाप्रकार संसारके सुख भोगे, निदान एक दिन हमारा तिहारा वियोग होयगा, यामें संदेह नाहीं, या जीवने अनेक भोग किए परंतु तृप्त न भया। ये भोग रोग समान हैं इनविषैं अज्ञानी राचें अर यह देह कुमित्र समान है जैसे कुमित्रकूं नानाप्रकार-करि पोषिये परंतु वह अपना नाहीं तैसे यह देह अपना नाहीं, याके अर्थ आत्माका कार्य न करना, यह विवेकिनका काम नाहीं, यह देह तो हमकूं तजैगी हम इससूं प्रीति क्यो न तजें।

यह वचन पुत्रनिके सुन लक्ष्मण परम स्नेह करि विह्वल होय गए, इनकूं उरसूं लगाय मस्तक चूंब बारम्बार इनकी ओर देखते भए, अर गदगद वाणीकरि कहते भए--हे पुत्र हो ! ये कैलाश-के शिखर समान हजारां कनकके स्तंभ तिनविषैं निवास करहु, नाना प्रकार रत्नोंसे निरमाए हैं आंगन जिनके महा सुंदर सर्व उपकरणोंकरि मण्डित मलयागिरि चंदनकी आवै है सुगंध जहां उसकरि भंवर गुंजार करै हैं, अर स्नानादिककी विधि जहां ऐसी मंजनशाला, अर सब सम्पत्तिसूं भरे निर्मल है भूमि जिनकी इन महलोंविषैं देवों समान क्रीडा करहु, अर तिहारे सुंदर स्त्री देवांगना समान दिव्यरूपकूं धरैं शरदके पूनोंके चन्द्रमा समान प्रजा जिनकी अनेक गुणनिकरि मंडित वीन बांसुरी मृदंगादि अनेक वादित्र बजायवेविषैं निपुण, महा सुकंठ सुंदर गीत गायवेविषैं निपुण, नृत्यकी करणहारी जिनेंद्रकी कथाविषैं अनुरागिणी, महापतिव्रता पवित्र तिनसहित वन उपवन तथा गिरि नदियोंके तट निज भवनके उपवन तहां नाना विधि क्रीडा करते देवोंकी न्याई रमो । हे वत्स ! ऐसे मनोहर सुखोंकूं तजकरि जिन-दीक्षा धरि कैसे विषम वन अर गिरिके शिखर कैसे रहोगे । मैं स्नेहका भरया अर तिहारी माता तिहारे शोककरि तप्तायमान तिनकूं तजकरि जाना तुमकूं योग्य नाहीं, कैयक दिन पृथिवीका राज्य करहु । तब वे कुमार स्नेहकी वासनासे रहित भया है चित्त जिनका, संसारसे भयभीत इंद्रियोंके सुखसूं परान्मुख महा उदार महाशूरवीर कुमार श्रेष्ठ आत्मतत्त्वविषैं लाग्या है चित्त जिन-का क्षणएक विचारकर कहते भए–हे पिता ! इस संसारविषैं हमारे माता पिता अनंत भए, यह स्नेहका बन्धन नरकका कारण है, यह घर रूप पिंजरा पापारम्भका अर दुःखका बढावनहारा है, उसमें मूर्ख रति माने है ज्ञानी न मानै । अब कबहू देह-संबंधी तथा मन संबंधी दुख हमकूं न होय निश्चयसे ऐसा ही उपाय करेंगे । जो आत्मकल्याण न करै सो आत्मघाती है, कदाचित् घर न तजे अर मनविषैं ऐसा जाने मैं निर्दोष हू मुझे पाप नाहीं तो वह मलिन है पापी है । जैसे सुफेद वस्त्र अंगके संयोगसे मलिन होय, तैसे घरके संयोगसे गृहस्थी मलिन होय है । जे गृस्थाश्रमविषैं निवास करै हैं, तिनके निरन्तर हिंसा आरंभकर पाप उपजै । तातैं सत्पुरुषोंने गृहस्थाश्रम तजे । अर तुम हमसूं कहो कैयक दिन राज्य भोगो, सो तुम ज्ञानवान् होयकर हमकूं अंधकूपविषैं डारो हो, जैसे तृषाकर आतुर मृग जल पीवै, अर उसे पारधी मारे, तैसैं भोगनिकर अतृप्त जो पुरुष उसे मृत्यु मारे है, जगत्के जीव विषयकी अभिलाषा कर सदा आर्त्तध्यानरूप पराधीन हैं । जे काम सेवैं हैं वे अज्ञानी विषहरणहारी जड़ी विना आशीविषै सर्पसे क्रीडा करे हैं सो कैसे जीवैं ? यह प्राणी मीन-समान गृहरूप तालावविषैं बसते विषयरूप मांसके अभिलाषी रोगरूप लोहेके आंकडेके योगकर कालरूप धीवरके जालविषैं पड़े हैं, भगवान् श्रीतीर्थंकर देव तीन लोकके ईश्वर सुर नर विद्याधरनिकर वंदित यह ही उपदेश देते भये

कि यह जगत्के जीव अपने अपने उपार्जे कर्मोंके वश हैं अर या जगत्कूं तजै सो कर्मोंकूं हतै। तातैं हे तात ! हमारे इष्टसंयोगके लोभकर पूर्णता न होवे, यह संयोग संबंध विजुरीके चमत्कारवत् चंचल है, जे विचक्षण जन हैं वे इनसे अनुराग न करैं। अर निश्चय सेती इस तनुसे अर तनुके संबंधियोंसूं वियोग होयगा, इनविषैं कहा प्रीति ? अर महाक्लेशरूप यह संसार-वन उसावषैं कहा निवास ? अर यह मेरा प्यारा, ऐसी बुद्धि जीवोंके अज्ञानसे है यह जीव सदा अकेला भव-विषैं भटके है, गति-गतिविषैं गमन करता महा दुःखी है।

हे पिता ! हम संसारसागरविषैं झकोला खाते अति खेद-खिन्न भए। कैसा है संसार-सागर ? मिथ्या शास्त्ररूप है दुखदाई द्वीप जिसविषैं, अर मोहरूप है मगर जिसमें, अर शोक संतापरूप सिवानकर संयुक्त सो दुर्जयरूप नादयोंकर पूरित है, अर भ्रमणरूप भंवरके समूहकर भयंकर है, अर अनेक आधि व्याधि-उपाधिरूप कलोलोंकर युक्त है, अर कुभावरूप पाताल कुण्डों-अर अगम है, अर क्रोधादिकर भावरूप जलचरोंके समूहसे भरा है अर वृथा बकवादरूप होय है शब्द जहां, अर ममत्वरूप पवनकर उठे हैं विकल्परूप तरंग जहां, अर दुर्गतिरूप खार जलकर भरा है, अर महा दुस्सह इष्ट वियोग अनिष्ट संयोगरूप आताप सोई हैं बडवानल जहां, ऐसे भव-सागरविषैं हम अनादिकालके खेदखिन्न पड़े हैं। नाना योनिविषैं भ्रमण करते अतिकष्टसूं मनुष्य देह उत्तम कुल पाया है,सो अब ऐसा करेंगे जो बहुरि भवभ्रमण न होय। सो सबसे मोह छुड़ाय आठों कुमार महाशूरवीर घररूप बन्दीखानेसे निकसे। उन महाभाग्योंके ऐसी वैराग्य बुद्धि उपजी जो तीनखंडका ईश्वरपणा जीर्ण तृणवत् तजा। ते विवेकी महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषैं जायकर महाबल नामा मुनिके निकट दिगम्बर भए, सर्व आरम्भरहित अंतर्बाह्य परिग्रहके त्यागी विधिपूर्वक ईर्यासमित पालते विहार करते भए। महा क्षमावान इंद्रियोंके वश करणहारे विकल्प रहित निस्पृही परम योगी महाध्यानी बारह प्रकारके तपकर कर्मोंकूं भस्मकर अध्यात्मयोगसे शुभाशुभ भावोंका निराकरण कर क्षीणकषाय होय केवलज्ञान लह अनंत सुखरूप सिद्धपदकू प्राप्त भए, जगत्के प्रपंचसे छूटे। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—हे नृप ! यह अष्ट कुमारोंका मंगलरूप चरित्र जो विनयवान भक्तिकर पढ़े सुने उसके समस्त पाप क्षय जावैं जैसैं सूर्यकी प्रभाकर तिमिर विलाय जाय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं
लक्ष्मणके आठ कुमारोंका वैराग्य वर्णन करनेवाला
एकसौ दशवां पर्व पूर्ण भया ॥११०॥

एक सौ ग्यारहवां पर्व

[भामंडलका विद्युत्पातसे मरण]

अथानंतर महावीर जिनेंद्रके प्रथम गणधर मुनियोंविषैं मुख्य गौतम ऋषि श्रेणिकसूं भामंडलका चरित्र कहते भए—हे श्रेणिक ! विद्याधरनिकी जो ईश्वरता सोई भई कुटिला स्त्री, उसका विषयवासना रूप मिथ्या सुख सोई भया पुष्प, उसके अनुरागरूप मकरंदविषैं भामंडल-रूप भ्रमर आसक्त होता भया, चित्तमें यह चिंतवै जो मैं जिनेंद्री दीक्षा धरूंगा तो मेरी स्त्रियों का सौभाग्यरूप कमलनिका वन सूक जायगा, ये मेरेसे आसक्त चित्त हैं अर इनके विरहकर मेरे प्राणनिका वियोग होयगा। मैं यह प्राण सुखसूं पाले हैं, इसलिए कैयक दिन राज्यके सुख भोग कल्याणका कारण जो तप सो करूंगा। यह कामभोग दुर्निवार हैं, अर इनकर पाप उपजेगा सो ध्यानरूप अग्निकर क्षणमात्रविषैं भस्म करूंगा, कैयक दिन राज्य करूं, बड़ी सेना राख जे मेरे शत्रु हैं तिनकूं राज्य-रहित करूंगा, वे खड्गके धारी बड़े सामंत मुझसे परान्मुख ते भए खड्गी कहिए गैंडा तिनके मानरूप खड्गकूं भंग करूंगा। अर दक्षिण श्रेणि उत्तर श्रेणि विषैं अपनी अपनी आज्ञा मनाऊं, अर सुमेरु पर्वत आदि पर्वतोंविषैं मरकत मणि आदि नाना जातिके रत्ननिकी निर्मल शिला तिनविषैं स्त्रियों सहित क्रीड़ा करूंगा, इत्यादि मनके मनोरथ करता हुवा भामंडल सैंकडों वर्ष एक मुहूर्तकी न्याईं व्यतीत करता भया। यह किया, यह करूंगा, ऐसा चिंतवन करता आयुका अंत न जानता भया। एक दिन सतखणे महलके ऊपर सुंदर सेजपर पौढ़ा हुता सो विजुरी पड़ी, अर तत्काल कालकूं प्राप्त भया।

दीर्घसूत्री मनुष्य अनेक विकल्प करें, परन्तु आत्माके उद्धारका उपाय न करैं। तृष्णाकर हता क्षणमात्रमें साता न पावै, मृत्यु सिरपर फिरै ताकी सुध नाहीं, क्षणभंगुर सुखके निमित्त दुर्बुद्धि आत्महित न करै, विषय वासनाकर लुब्ध भया अनेक भांति विकल्प करता रहै, सो विकल्प कर्मबंधके कारण हैं। धन यौवन जीतव्य सब अस्थिर हैं, जो इनकूं अस्थिर जान सर्व परिग्रहका त्याग कर आत्मकल्याण करें, सो भवसागर न डूबें। अर विषयाभिलाषी जीव भवविषैं कष्ट सहें हजारों शास्त्र पढ़े, अर शांतता न उपजी तो क्या ? अर एक ही पदकर शांतदशा होय तो प्रशंसा योग्य है। धर्म करिवेकी इच्छा तो सदा करबहु करे, अर करे नाहीं सो कल्याणकूं न प्राप्त होय ! जैसैं कटी पक्षका काग उड़कर आकाशविषै पहुँचा चाहै पर जाय न सकै, जो निर्वाणके उद्यमकर रहित है सो निर्वाण न पावै। जो निरुद्यमी सिद्धपद पावै तो कौन काहेकूं मुनिव्रत आदरै। जो गुरुके उत्तम वचन उरविषैं धार धर्मकूं उद्यमी होय सो कभी खेद-खिन्न न होय। जो गृहस्थ द्वारे आया साधु उसकी भक्ति न करै, आहारादिक न दे, सो अविवेकी

है ? अर गुरुके वचन सुन धर्मकूं न आदरै सो भवभ्रमणसे न छूटै। जो घने प्रमादी हैं अर नाना प्रकारके अशुभ उद्यम कर व्याकुल हैं उनकी आयु वृथा जाय है जैसे हथेलीमें आया रत्न जाता रहे। ऐसा जान समस्त लौकिक कार्यकूं निरर्थक मान दुःख रूप इन्द्रियोंके सुख तिनकूं तज कर परलोक सुधारिवेके अर्थ जिनशासनविषैं श्रद्धा करहु, भामंडल मरकर पात्रदानके प्रभावसूं उत्तम भोगभूमि गया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं भामंडलका मरण वर्णन करनेवाला एकसौ ग्यारहवां पर्व पूर्ण भया ॥१११॥

एक सौ बारहवां पर्व

[हनुमानका संसार-देह और भोगोंसे विरक्त होना]

अथानन्तर राम लक्ष्मण परस्पर महा स्नेहके भरे प्रजाके पिता समान परम हितकारी तिनका राज्यविषैं सुखसूं समय व्यतीत होता भया। परम ईश्वरतारूप अति सुंदर राज्य सोई भया कमलोंका वन उसविषैं क्रीड़ा करते वे पुरुषोत्तम पृथिवीकूं प्रमोद उपजावते भए। इनके सुखका वर्णन कहां तक करैं, ऋतुराज कहिए वसंतऋतु उसमें सुगंध वायु वहै, कोयल बोलैं, भ्रमर गुंजार करैं, समस्त वनस्पति फूलैं, मदोन्मत्त होय समस्त लोक हर्षके भरे शृंगार क्रीड़ा करैं, मुनिराज विषम वनविषैं विराजैं, आत्मस्वरूपका ध्यान करैं, उस ऋतुविषैं राम लक्ष्मण रणवासमहित अर समस्त लोकनि सहित रमणीक वनविषैं तथा उपवनविषैं नानाप्रकारके रंग क्रीड़ा रागक्रीड़ा जलक्रीड़ा वनक्रीड़ा करते भए। अर ग्रीष्म ऋतुविषैं नदी सूकें, दावानल समान ज्वाला बरसै, महामुनि गिरिके शिखर सूर्यके सन्मुख कायोत्सर्ग धर तिष्ठे, उस ऋतुविषैं राम लक्ष्मण धारामंडप महलविषैं अथवा महारमणीक वनविषैं जहां अनेक जलयंत्र चंदन कपूर आदि शीतल सुगंध सामग्री वहां सुखसूं विराजे हैं चमर ढुरे हैं, ताड़के बीजना फिरे हैं निर्मल स्फटिककी शिलापर तिष्ठे हैं अगुरु चंदन कर चर्चे जलकर आर्द्र तर ऐसे कमलदल तथा पुष्पोंके सांथरे पर तिष्ठे महामनोहर निर्मल शीतल जल जिसविषैं लवंग इलायची कपूर अनेक सुगंधद्रव्य उनकर महासुगंध उसका पान करते लतावोंके मंडपविषैं विराजते नाना प्रकारकी सुन्दर कथा करते, सारंग आदि अनेक राग सुनते, सुन्दर स्त्रीनि सहित उष्ण ऋतुकूं बलात्कार शीतकाल सम करते सुखसूं पूर्ण करते भए। अर वर्षाऋतु विषै योगीश्वर तरु तले तिष्ठते महातपकर अशुभ कर्मका क्षय करै हैं बिजरी चमकै है मेघकर अंधकार होय रहा है मयूर बोले हैं। ढाहा उपाड़तीं महाशब्द करती नदी बहै है उस ऋतुविषैं दोनों भाई सुमेरुके

शिखर समान ऊंचे नाना मणिमई जे महल तिनविषै महा श्रेष्ठ रंगीले वस्त्र पहिरे केसरके रंग-कर लिप्त है अंग जिनका, अर कृष्णागुरुका धूप खेए रहे हैं महासुंदर स्त्रियोंके नेत्ररूप भ्रमरोंके कमल सारिखे इन्द्र समान क्रीडा करते सुखसूं तिष्ठे, अर शरदऋतुविषै जल निर्मल होय चन्द्रमाकी किरण उज्ज्वल होय कमल फूले हंस मनोहर शब्द करें, मुनिराज वन पर्वत सरोवर नदीके तीर बैठे चिद्रूपका ध्यान करैं उस ऋतुविषैं राम लक्ष्मण राजलोकों सहित चांदनीसे वस्त्र आभरण पहिरे सरिता सरोवरके तीर नाना विधि क्रीडा करते भए। अर शीतऋतुविषै योगीश्वर धर्मध्यान-को ध्यावते रात्रिविषैं नदी तालावोंके तटपै जहां अति शीत पडे बर्फ बरसै महाठण्डी पवन बाजे तहां निश्चल तिष्ठे हैं, महाप्रचण्ड शीत पवन कर वृक्ष दाहे मारे है अर सूर्यका तेज मन्द होय गया है ऐसी ऋतुविषै राम लक्ष्मण महलनिके भीतरले चौबारोंविषै तिष्ठते मन वांछित विलास करते सुन्दर स्त्रीनिके समूह सहित वीण मृदंग बांसुरी आदि अनेक वादित्रनिके शब्द कानोंको अमृत समान श्रवणकर मनकूं आल्हाद उपजावते दोनों वीर महाधीर देवांसमान अर जिनके स्त्री देवांगना समान वीणाकर जीती है वीणाकी ध्वनि जिन्होंने महापतिव्रता तिनकर आदरते संते पुण्यके प्रभावते सुखसूं शीतकाल व्यतीत करते भए। अद्भुत भोगोंकी सम्पदाकर मण्डित वे पुरुषोत्तम प्रजाकूं आनन्दकारी दोनों भाई सुखसूं तिष्ठे हैं।

अथानंतर गौतमस्वामी कहें हैं—हे श्रेणिक! अब तू हनुमानका वृत्तांत सुन। हनुमान पवनका पुत्र कर्णकुण्डल नगरविषै पुण्यके प्रभावसूं देवनिके सुख भोगवे, जिसकी हजारों विद्या-धर सेवा करें अर उत्तम क्रियाका धारक स्त्रियोंसहित परिवारसहित अपनी इच्छाकरि पृथिवीमें विहार करै श्रेष्ठ विमानविषैं आरूढ परम ऋद्धिकर मंडित महा शोभायमान सुंदर वनोंमें देवनि समान क्रीडा करै। सो वसंतका समय आया, कामी जीवनिकूं उन्मादका कारण अर समस्त वृक्षों-कूं प्रफुल्लित करणहारी प्रिया अर प्रीतमके प्रेमका बढावनहारा सुगंध चले हैं पवन जिसमें ऐसे समयमें अंजनाका पुत्र जिनेंद्रकी भक्तिमें आरूढचित्त अति हर्ष कर पूर्ण हजारों स्त्रीनिसहित सुमेरु पर्वतकी ओर चाल्या, हजारों विद्याधर है संग जिसके, श्रेष्ठ विमानविषैं चढ़े परम ऋद्धि-करि संयुक्त मार्गविषै वनविषै क्रीड़ा करते भए। कैसे हैं वन? शीतल मंद सुगंध चले हैं पवन जहां, नाना प्रकारके पुष्प अर फलों करि शोभित वृक्ष हैं जहां, देवांगना रमें हैं अर कुलाचलों-केविषैं सुंदर सरोवरों करि युक्त अनेक मनोहर वन जिनविषै भ्रमर गुंजार करै हैं अर कोयल बोल रही हैं अर नाना प्रकारके पशु-पक्षियोंके युगल विचरें हैं जहां सर्व जातिके पत्र पुष्प फल शोभे हैं अर रत्ननिकी ज्योतिकरि उद्योतरूप हैं पर्वत जहां अर नदी निर्मल जलकी भरी सुंदर हैं तट जिनके, अर सरोवर अति रमणीक नाना प्रकारके कमलोंके मकरंदकरि रंग रूप होय रहा है सुगंध जल जिनका, अर वापिका अति मनोहर जिनके रत्नोंके सिवान अर तटोंके निकट

बड़े बड़े वृक्ष हैं, अर नदीमें तरंग उठे हैं झागोंके समूहसहित महा शब्द करती बहै हैं जिनमें मगर मच्छ आदि जलचर क्रीडा करें, अर दोनों तटविषै लहलाहट करते अनेक वन उपवन महा मनोहर विचित्रगति लिये शोभै है, जिनमें क्रीडा करिवेके सुंदर महल अर नाना प्रकार रत्ननिकरि निर्मापे जिनेश्वरके मंदिर पापोंके हरणहारे अनेक हैं। पवनपुत्र सुंदर स्त्रियोंकरि सेवित परम उदयकरि युक्त अनेक गिरियोंविषै अकृत्रिम चैत्यालयोंका दर्शनकरि विमानविषै चढ्या स्त्रियोंकूं पृथिवीकी शोभा दिखावता अति प्रसन्नतासूं स्त्रियोंसूं कहै है–हे प्रिये! सुमेरुविषै अति रमणीक जिन मंदिर स्वर्णमयी भासै हैं, अर इनकी शिखर सूर्य समान देदीप्यमान महामनोहर भासै हैं, अर गिरिकी गुफा तिनके मनोहर द्वार रत्नजडित शोभा नाना रंगकी ज्योति परस्पर मिल रही हैं वहां अरति उपजै ही नाहीं। सुमेरुकी भूमितलविषै अतिरमणीक भद्रशालवन है, अर सुमेरुकी कटिमेखलाविषैं विस्तीर्ण नंदनवन, अर सुमेरुके वक्षस्थलविषैं सौमनसवन है, जहां कल्पवृक्ष कल्पलताओंसे वेढे सोहै हैं, अर नानाप्रकार रत्नोंकी शिला शोभित हैं। अर सुमेरुके शिखरमें पांडुक वन है जहां जिनेश्वर देवका जन्मोत्सव होय है। इन चारों ही वनविषैं चार चार चैत्यालय हैं जहां निरंतर देव देवियोंका आगमन है, यक्ष किन्नर गंधर्वोंके संगीतकरि नाद होय रहा है, अप्सरा नृत्य करै हैं, कल्पवृक्षोंके पुष्प मनोहर हैं, नानाप्रकारके मंगल द्रव्यकरि पूर्ण यह भगवान्‌के अकृत्रिम चैत्यालय अनादिनिधन हैं। हे प्रिये! पांडुक वनविषैं परम अद्‌भुत जिन मंदिर सोहै है जिनके देखे मन हरा जाय, महाप्रज्वलित निधूंम अग्नि समान संध्याके बादरोंके रंग समान उगते सूर्य समान स्वर्णमई शोभै हैं, समस्त उत्तम रत्ननिकरि शोभित सुन्दराकार हजारों मोतियोंकी माला तिनकरि मंडित महामनोहर हैं। मालावोंके मोती कैसे सोहै हैं मानों जलके बुदबुदा ही हैं। अर घंटा झांझ मजीरा मृदंग चमर तिनकरि शोभित हैं। चौगिरद कोट ऊंचे दरवाजे इत्यादि परम विभूति करि विराजमान हैं। नाना रंगकी फहराती हुई ध्वजा स्वर्णके स्तंभनि करि देदीप्यमान इन अकृत्रिम चैत्यालयोंकी शोभा कहां लग कहें जिनका सम्पूर्ण वर्णन इन्द्रादिक देव भी न कर सकें। हे कांते! पाण्डुकवनके चैत्यालय मानों सुमेरुके मुकुट ही हैं अति रमणीक हैं।

या भांति महारानी पटरानियोंसे हनुमान बात करते जिनमंदिरकी प्रशंसा करते मंदिरके समीप आए। विमानसूं उतरि महा हर्षित होय प्रदक्षिणा दई। वहां श्रीभगवान्‌के अकृत्रिम प्रतिबिंब सर्व अतिशय विराजमान महा ऐश्वर्य करि मंडित महा तेज पुंज देदीप्यमान शरदके उज्ज्वल बादर तिनमें जैसे चन्द्रमा सोहै तैसे सर्व लक्षणमंडित हनुमान हाथ जोड़ रणवाससहित नमस्कार करता भया। कैसा है हनुमान? जैसे ग्रह तारावोंके मध्य चन्द्रमा सोहै तैसे राज-लोकके मध्य सोहै है जिनेंद्रके दर्शन करि उपज्या है अतिहर्ष जिसकूं सो संपूर्ण स्त्रीजन

अति आनंदकूं प्राप्त भई, रोमांच होय आए, नेत्र प्रफुल्लित भए, विद्याधरी परम भक्तिकरि युक्त सर्व उपकरणों सहित परम चेष्टाकी धरणहारी महापवित्र कुलविषैं उपजी देवांगनाओंकी न्याईं अति अनुरागसे देवाधिदेवकी विधिपूर्वक पूजा करती भई, महा पवित्र पद्महद आदिका जल अर महा सुगंध चंदन मुक्ताफलनिके अक्षत स्वर्णमई कमल तथा पद्मराग मणिमई तथा चंद्रकांति मणिमई तिनकर पूजा करती भई। अर कल्पवृक्षनिके पुष्प अर अमृतरूप नैवेद्य अर महा ज्योति-रूप रत्नोंके दीप चढ़ाए। अर मलयागिरि चन्दन आदि महासुगंध जिनकरि दशोंदिशा सुगंधमई होय रही हैं अर परम उज्ज्वल महाशीतल जल अर अगुरु आदि महापवित्र द्रव्योंकरि उपज्या जो धूप सो खेवती भई, अर महा पवित्र अमृत फल चढावती भई, अर रत्नोंके चूर्णकरि मांडला मांडती भई, महा मनोहर अष्ट द्रव्योंसे पति सहित पूजा करती भई। हनुमान राणिनि सहित भगवानकी पूजा करता कैसे सोहै है जैसा सौधर्म इन्द्र पूजा करता सोहै। कैसा है हनुमान? जनेऊ पहिरे, सर्व आभूषण पहरे, महीन वस्त्र पहिरे, महा पवित्र पापरहित बानरके चिन्हका है देदीप्यमान रत्नमई मुकुट जिसके महा प्रमोदका भरया फूल रहे हैं नेत्रकमल जिसके, सुन्दर है वदन जिसका, पूजाकरि पापनिके नाश करणहारे स्तोत्र तिनकरि सुर असुरोंके गुरु जिनेश्वर तिनके प्रतिबिंबकी स्तुति करता भया। सो पूजा करता अर स्तुति करता इंद्रकी अप्सरावोंने देख्या सो अति प्रशंसा करती भई। अर यह प्रवीण बीण लेयकरि जिनेंद्रचन्द्रके यश गावता भया, जे शुद्ध चित्त जिनेंद्रकी पूजा विषैं अनुरागी हैं सर्व कल्याण तिनके समीप हैं तिनकूं कुछ ही दुर्लभ नाहीं, तिनका दर्शन मंगलरूप है। उन जीवोंने अपना जन्म सुफल किया जिन्होंने उत्तम मनुष्य देह पाय श्रावकके व्रतधरि जिनवरविषैं दृढ भक्ति धारी, अपने करविषैं कल्याणकूं धरे हैं, जन्मका फल तिनही पाया। हनुमानने पूजा स्तुति वंदना करि बीण बजाय अनेक राग गाय अद्भुत स्तुति करी। यद्यपि भगवानके दर्शनसे विछुरनेका नहीं है मन जिसका, तथापि चैत्यालयविषैं अधिक न रहहु, मति कोऊ आसादना लागै, तातैं जिनराजके चरण उर विषैं धरि मंदिरसूं बाहिर निकस्या, विमानोंमें चढे हजारों स्त्रियोंकरि संयुक्त सुमेरुकी प्रदक्षिणा दी, जैसे सूर्य देय, तैसे श्रीशैल कहिए हनुमान सुंदर हैं क्रिया जिसकी सो शैलराज कहिए सुमेरु उसकी प्रदक्षिणा देय समस्त चैत्यालयोंविषैं दर्शन करि भरतक्षेत्रकी ओर सन्मुख भया सो मार्ग विषैं सूर्य अस्त होय गया अर संध्या भी सूर्यके पीछे विलय गई कृष्णपक्षकी रात्रि सो तारारूप बंधुओंकर मंडित चंद्रमा रूप पति विना न सोहती भई। हनुमानने तले उतर एक सुरदुन्दुभी नामा पर्वत वहां सेना सहित रात्रि व्यतीत करी, कमल आदि अनेक सुगंध पुष्पोंसे स्पर्श करि पवन आई उसकरि सेनाके लोक सुखसूं रहे, जिनेश्वर देवकी कथा करतो किए, रात्रिकूं आकाशसूं देदीप्यमान एक तारा टूटया सो हनुमानने देखकरि मनविषै विचारी-हाय हाय इस संसार असार वनविषै देव भी कालवश हैं, ऐसा कोई नाहीं जो

कालसूं बचै, विजुरीका चमत्कार अर जलकी तरंग जैसें क्षण-भंगुर हैं तैसैं शरीर विनश्वर है। इस संसारविषै इस जीवने अनंत भवविषैं दुख ही भोगे, जीव विषयके सुखकूं सुख मानै है सो सुख नाहीं दुख ही है,पराधीन है विषम क्षण भंगुर संसारविषै दुःख ही है,सुख नाहीं होय है। मोहका माहात्म्य है जो अनन्तकाल जीव दुख भोगता भ्रमण करै है अनंत अवसर्पिणी उत्सर्पिणी काल भ्रमणकरि मनुष्य देह कभी कोई पावै है सो पायकरि धर्मके साधन वृथा खोवै है यह विनाशीक सुखविषैं आसक्त होय महासंकट पावे है, यह जीव रागादिकके वश भया वीतराग भावकूं नाहीं जाने है, यह इंद्रिय जैनमार्गके आश्रय विना न जीते जांय, ये इंद्री चंचल कुमार्गविषैं लगाय-करि इस जीवकूं इस भव परभवविषैं दुःखदायी हैं जैसे मृग मीन अर पक्षी लोभके वशसूं वधिकके जालमें पड़ैं हैं, तैसैं यह कामी क्रोधी लोभी जीव जिनमार्गकूं पाए विना अज्ञानके वशसू प्रपंचरूप पारधीके बिछाए विषयरूप जालविषैं पड़ै हैं। जो जीव आशीविष सर्प समान यह मन इंद्री तिनके विषयोंमें रमैं हैं सो मूढ दुःखरूप अग्निविषै जरै हैं जैसैं कोई एक दिन राज्यकरि वर्ष दिन त्रास भोगवे तैसे यह मूढ जीव अल्प दिन विषयोंके सुख भोगि अनन्त काल पर्यंत निगोदके दुख भोगवे है जो विषयके सुखका अभिलाषी है सो दुःखोंका अधिकारी है, नरक निगोदके मूल यह विषय तिनकूं ज्ञानी न चाहैं मोहरूप ठगका ठगा जो आत्मकल्याण न करै सो महा कष्टकूं पावै। जो पूर्व भवविषैं धर्म उपार्जे मनुष्यदेह पाय धर्म का आदर न करै सो जैसे धन ठगाय कोई दुखी होय तैसैं दुखी होय है। अर देवोंके भी भोग भोगि यह जीव मरकरि देवसूं एकेंद्री होय है। इस जीवके पाप शत्रु हैं, अर कोऊ शत्रु मित्र नाहीं। अर यह भोग ही पापके मूल हैं इनसूं तृप्ति न होय, यह महा भयंकर हैं। अर इनका वियोग निश्चय होगा, यह रहने-के नाहीं। जो मैं इस राज्यकूं अर यह जो प्रियजन हैं तिनकूं तजकरि तप न करूं तो अतृप्त भया सुभूमि चक्रवर्तीकी नाईं मरकर दुर्गतिको जाऊंगा। अर यह मेरे स्त्री शोभायमान मृगनयनी सर्व मनोरथकी पूर्णहारी पतिव्रता स्त्रियोंके गुणनिकर मंडित नवयौवन है सो अबतक में अज्ञानसूं तज न सका सो मैं अपनी भूलको कहांतक उलाहना दूं। देखो! मैं सागर-पर्यंत स्वर्गविषैं अनेक देवांगना सहित रम्या, अर देवसूं मनुष्य होय इस क्षेत्रविषैं भया सुन्दर स्त्रियों सहित रम्या, परन्तु तृप्त न भया। जैसे इंधनसूं अग्नि तृप्त न होय, अर नदियोंसूं समुद्र तृप्त न होय, तैसे यह प्राणी नानाप्रकारके विषयसुख तिनकरि तृप्त न होय। मैं नाना-प्रकारके जन्म तिनविषैं भ्रमणकरि खेद खिन्न भया। रे मन! अब तू शांतताकूं प्राप्त होहु, कहा व्याकुल होय रहा है, क्या तैंने भयंकर नरकोंके दुःख न सुने, जहां रौद्रध्यान हिंसक जीव जाय हैं जिन नरकनिविषैं महा तीव्र वेदना असिपत्र वन वैतरणी नदी संकटरूप है सकल भूमि जहां, रे मन तू नरकसूं न डरै है राग द्वेष करि उपजे जे कर्म कलंक तिनकूं तपकरि नाहिं

खिपावे है, तेरे एते दिन यों ही वृथा गए, विषय सुखरूप कूपविषैं पडा अपने अपने आत्माकूं भवपिंजरसूं निकसि पाया है जिन मार्गविषैं बुद्धिका प्रकाश तैंने, तू अनादिकालका संसार भ्रमणसूं खेदखिन्न भया अब अनादिके बंधे आत्माकूं छुड़ाय। हनुमान ऐसा निश्चयकरि संसार शरीर भोगोंसूं उदास भया,जाना है यथार्थ जिनशासनका रहस्य जिसने। जैसे सूर्य मेघरूप पटलसे रहित महा तेजरूप भासै तैसैं मोह पटलसूं रहित भासता भया, जिस मार्ग होय जिनवर सिद्ध पदकूं सिधारे उस मार्गविषैं चलिवेकूं उद्यमी भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमानका वैराग्य चिंतनवर्णन करनेवाला एक सौ बारहवां पर्व पूर्ण भया॥ ११२॥

एक सौ तेरहवां पर्व

[हनुमानका दीक्षा लेना और उग्र तपकर निर्वाण प्राप्त करना]

अथानन्तर रात्रि व्यतीत भई, सोला वानीके स्वर्ण समान सूर्य अपनी दीप्तिकरि जगतविषैं उद्योत करता भया, जैसे साधु मोक्षमार्गका उद्योत करे। नक्षत्रोंके गण अस्त भए, अर सूर्यके उदय करि कमल फूले, जैसे जिनराजके उद्योतकरि भव्य जीवरूप कमल फूलैं। हनुमान महा वैराग्यका भरया जगतके भोगोंसूं विरक्त मंत्रियोंसूं कहता भया जैसे भरत चक्रवर्ती पूर्व तपोवनकूं गए तैसे हम जावेंगे। तब मंत्री प्रेमके भरे परम उद्वेगकूं प्राप्त होय नाथसूं विनती करते भए--हे देव! हमकूं अनाथ न करो प्रसन्न होवो हम तिहारे भक्त हैं हमारा प्रतिपालन करो। तब हनुमानने कही--तुम यद्यपि निश्चयकर मेरे आज्ञाकारी हो, तथापि अनर्थके कारण हो,हितके कारण नाहीं जो संसार समुद्रसूं उतरै अर उसे पीछे सागरमैं डारें ते हितू कैसे? निश्चयथकी उनकूं शत्रु ही कहिए। जब या जीवने नरकके निवासविषैं महादुःख भोगे तब मात्र पिता मित्र भाई कोई ही सहाई न भया। यह दुर्लभ मनुष्य देह अर जिनशासनका ज्ञान पाय बुद्धिमानोकूं प्रमाद करना उचित नाहीं। अर जैसैं राज्यके भोगसूं मेरे अप्रीति भई तैसे तुमसूं भई। यह कर्मजनित ठाठ सर्व विनाशीक हैं निसंदेह हमारा तिहारा वियोग होयगा। जहां संयोग हैं वहां वियोग है, सुर नर अर इनके अधिपति इन्द्र नरेंद्र यह सब ही अपने अपने कर्मोंके आधीन हैं, कालरूप दावानल करि कौन कौन भस्म न भए। मैं सागरां पर्यंत अनेक भव देवोंके सुख भोगे परन्तु तृप्त न भया। जैसे सूके ईंधनकरि अग्नि तृप्त न होय। गति जाति शरीर इनका कारण नामकर्म है जाकरि ये जीव गति गतिविषैं भ्रमण करै है सो मोहका बल महाबलवान है जाके उदयकरि यह शरीर उपज्या है सो न रहेगा, यह संसार वन महाविषम है, जाविषैं ये प्राणी

मोहकूं प्राप्त भए भवसंकट भोगै हैं, उसे उलंघकरि मैं जन्म जरा मृत्यु रहित जो पद तहां गया चाहूं हूँ। यह बात हनुमान मंत्रियोंसूं कही, सो रणवासकी स्त्रियोंने सुनी उसकरि खेद-खिन्न होय महारुदन करती भई। जे समझानेविषैं समर्थ ते उनकूं शांतचित्त करी। कैसे हैं समझावन हारे? नाना प्रकारके वृत्तांतविषैं प्रवीण। अर हनुमान निश्चल है चित्त जाका सो अपने बड़े पुत्रकूं राज्य देय अर सबनिकूं यथायोग्य विभूति देय रत्नोके समूहकरि युक्त देवों के विमान समान जो अपना मन्दिर उसे तजकरि निकस्या। स्वर्ण रत्नमई दैदीप्यमान जो पालकी तापर चढ़ि चैत्यवान नामा वन तहां गया, सो नगरके लोक हनुमानकी पालकी देख सजल नेत्र भए। पालकी पर ध्वजा फरहरैं हैं चमरोंकरि शोभित है मोतियोंकी झालरियोंकरि मनोहर है। हनुमान वनविषैं आया सो वन नानाप्रकारके वृक्षोंकरि मंडित अर जहां सूवा मैना मयूर हंस कोयल भ्रमर सुंदर शब्द करैं हैं। अर नानाप्रकारके पुष्पोंकरि सुगंध है वहां स्वामी धर्म रत्न संयमी धर्मरूप रत्नकी राशि उत्तम योगीश्वर जिनके दर्शनसूं पाप विलाय जावैं, ऐसे सन्त चारण मुनि अनेक चारण ऋद्धियोंकरि मंडित तिष्ठते थे। आकाशविषैं है गमन जिनका सो दूरसूं उनकूं देख हनुमान पालकीसूं उतरया महाभक्तिकरयुक्त नमस्कारकरि हाथ जोड़ि कहता भया-हे नाथ! मैं शरीरादिक परद्रव्योंसूं निर्ममत्व भया यह परमेश्वरी दीक्षा आप मुझे कृपाकर देवहु। तब मुनि कहते भए—अहो भव्य! तैंने भली विचारी, तू उत्तम जन है, जिनदीक्षा लेहु। यह जगत् असार है शरीर विनश्वर है शीघ्र आत्मकल्याण करो। अविनश्वर पद लेवेकी परमकल्याणकारिणी बुद्धि तुम्हारे उपजी है, यह बुद्धि विवेकी जीवके ही उपजै हैं। ऐसी मुनिकी आज्ञा पाय मुनिकूं प्रणामकरि पद्मासन धर तिष्ठा मुकुट कुण्डल हार आदि सर्व आभूषण डारे, जगतसूं मनका राग निवारया, स्त्रीरूप बंधन तुड़ाय, ममता मोह मिटाय, आपकूं स्नेहरूप पाशसे छुड़ाय, विष समान विषय सुख तजकरि वैराग्यरूप दीपकी शिखाकरि रागरूप अंधकार निवारकरि शरीर अर संसारकूं असार जान कमलोंकूं जीतैं, ऐसे सुकमार जे कर तिनकरि शिरके केश लौंच करता भया। समस्त परिग्रहसूं रहित होय मोक्षलक्ष्मीकूं उद्यमी भया महाव्रत धरे, असंयम परिहरे। हनुमानकी लार साढ़े सातसौ बड़े राजा विद्याधर शुद्ध चित्त विद्युद्गतिकूं आदि दे हनुमानके परम मित्र अपने पुत्रोंकूं राज्य देय अठाईस मूलगुण धार योगीन्द्र भए। अर हनुमानकी रानी अर इन राजावोंकी रानी प्रथमतो वियोगरूप अग्निकरि तप्तायमान विलाप करती भईं, फिर वैराग्यकूं प्राप्त होय बंधुमतीनामा आर्यिकाके समीप जाय महा भक्तिकरि संयुक्त नमस्कारकरि आर्यिकाके व्रत धारती भईं। वे महाबुद्धिवंती शीलवंती भवभ्रमणके भयसूं आभूषण डार एक सफेद वस्त्र राखती भईं, शील ही है आभूषण जिनके तिनकूं राज्यविभूति जीर्ण तृण समान भासती भई। अर हनुमान महाबुद्धिमान महातपोधन महापुरुष संसारसूं अत्यंत विरक्त

पंच महाव्रत पंचसमिति तीन गुप्ति धार, शैल कहिए पर्वत उससे भी अधिक, श्रीशैल कहिए हनुमान राजा पवनके पुत्र चारित्रविषैं अचल होते भए। तिनका यश निर्मल इन्द्रादिक देव गावैं, बारंबार वन्दना करैं, अर बड़े बड़े कीर्ति करैं। निर्मल है आचरण जिनका, ऐसा सर्वज्ञ वीतराग देवका भाष्या निर्मल धर्म आचरथा सो भवसागरके पार भया, वे हनुमान महामुनि पुरुषोंविषैं सूर्य समान तेजस्वी जिनेंद्रदेवका धर्म आराधि ध्यान अग्निकरि अष्टकर्मकी समस्त प्रकृति ईंधन रूप तिनकूं भस्मकरि तुंगी गिरिके शिखरसूं सिद्ध भए। केवलज्ञान केवल दर्शन आदि अनंत गुणमई सदा सिद्ध लोकविषैं रहैंगे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमानका निर्वाण गमन वर्णन करनेवाला एकसौ तेरहवां पर्व पूर्ण भया ॥११३॥

एकसौ चौदहवां पर्व

[इन्द्रका अपनी सभामें धर्मोपदेश और श्री रामचन्द्रके भ्रातृ-स्नेहकी चर्चा]

अथानंतर राम सिंहासनपर विराजे थे, लक्ष्मणके आठों पुत्रोंका अर हनुमानका मुनि होना मनुष्योंके मुखसूं सुनकरि हंसे अर कहते भए--इन्होंने मनुष्य-भवके क्या सुख भोगे ? यह छोटी अवस्थामें ऐसे भोग तजकरि योग धारण करैं हैं सो बड़ा आश्चर्य है। यह हठरूप ग्राहकरि ग्रहे हैं। देखो ऐसे मनोहर काम भोग तजि विरक्त होय बैठे हैं, या भांति कही। यद्यपि श्रीराम सम्यग्दृष्टि ज्ञानी हैं तथापि चारित्रमोहके वश कईएक दिन लोकोंकी न्याईं जगत्‌विषैं रहते भये, संसारके अल्प सुख तिनविषैं रमते राम लक्ष्मण न्याय सहित राज्य करते भए। एक दिन महा-ज्योतिका धारक सौधर्म इंद्र परम ऋद्धिकरि युक्त महाधैर्य अर गंभीरताकरि मंडित नाना अलंकार धरे सामानिक जातिके देव जे गुरुजन तुल्य, अर लोकपाल जातिके देव देशपाल तुल्य, अर त्रयस्त्रिंशत् जातिके देव मंत्री समान, तिनकर मंडित तथा अन्य सकल देव सहित इन्द्रासन-विषैं बैठे कैसे सोहै जसे सुमेरु पर्वत और पर्वतोंके मध्य सोहै। महातेज पुंज अद्भुत रत्नोंका सिंहासन उसपर सुखसूं विराजता ऐसा भासै जैसे सुमेरुके ऊपर जिनराज भासैं। चंद्रमा अर सूर्यकी ज्योतिकूं जीते ऐसे रत्नोंके आभूषण पहिरे सुंदर शरीर मनोहर रूप नेत्रोंकूं आनंदकारी जैसी जलकी तरंग निर्मल तैसी प्रभाकर युक्त हार पहिरे ऐसा सोहै मानों सीतोदा नदीके प्रवाह-करि युक्त निषधाचल पर्वत ही है, मुकट कंठाभरण कुण्डल केयूर आदि उत्तम आभूषण पहिरे देवोंकरि मंडित जैसा नक्षत्रोंकरि चंद्रमा सोहै तैसा सोहै है। अपने मनुष्य लोकविषैं चन्द्रमा नक्षत्र ही भासैं तातैं चंद्रमा नक्षत्रोंका दृष्टांत दिया है। चन्द्रमा नक्षत्र जोतिषी देव हैं तिनसूं

स्वर्गवासी देवोंकी अति अधिक ज्योति है। अर सब देवोंसूं इंद्रकी ही अधिक है। अपने तेजकरि दशों दिशाविषैं उद्योत करता सिंहासनविषैं तिष्ठता जैसा जिनेश्वर भासै तैसा भासै। इंद्रके इंद्रासनका अर सभाका जो समस्त मनुष्य जिह्वाकरि सैंकड़ों वर्ष लग वर्णन करैं तौभी न कर सकैं। सभाविषैं इन्द्रके निकट लोकपाल सब देवनिविषैं मुख्य हैं सुन्दर हैं चित्त जिनके स्वर्गसूं चयकरि मनुष्य होय मुक्ति जावैं हैं। सोलह स्वर्गके बारह इंद्र हैं एक एक इंद्रके चार चार लोकपाल एक भवधारी हैं। अर इंद्रनिविषैं सौधर्म सनत्कुमार महेंद्र लांतवेंद्र शतारेंद्र आरणेंद्र यह षट् एक भवधारी हैं अर शची इंद्राणी लौकांतिक देव पंचम स्वर्गके तथा सर्वार्थसिद्धिके अहमिंद्र मनुष्य होय मोक्ष जावे हैं सो सौधर्म इंद्र अपनी सभाविषैं अपने समस्त देवनिकरि युक्त बैठे, लोकपालादिके अपने अपने स्थानक बैठे। सो इंद्र शास्त्रका व्याख्यान करते भए, वहां प्रसंग पाय यह कथन किया-अहो देवो! तुम अपने भावरूप पुष्प निरन्तर महा भक्तिकरि अर्हंत देवकूं चढ़ावो, अर्हंतदेव जगत्का नाथ है समस्त दोषरूप वनके भस्म करिवेकूं दावानल समान है, जिसने संसारका कारण मोहरूप महा असुर अत्यंत दुर्जय ज्ञानकरि मारा, वह असुर जीवोंका बड़ा वैरी निर्विकल्प सुखका नाशक है। अर भगवान् वीतराग भव्य जीवोंकूं संसार समुद्रसे तारिवे समर्थ हैं, संसार समुद्र कषायरूप उग्र तरंगकरि व्याकुल है, कामरूप ग्राहकरि चंचलतारूप, मोहरूप मगरकरि मृत्युरूप है, ऐसे भवसागरसूं भगवान् विना कोई तारिवे समर्थ नाहीं। कैसे हैं भगवान्? जिनके जन्म कल्याणकविषै इंद्रादिक देव सुमेरुगिरि ऊपर क्षीरसागरके जलकरि अभिषेक करावे हैं, अर महा भक्तिकरि एकाग्रचित्त होय परिवार सहित पूजा करै हैं, अर धर्म अर्थ अर काम मोक्ष यह चारों पुरुषार्थ हैं तिनविषैं लगा है चित्त जिनका, जिनेंद्रदेव पृथिवीरूप स्त्रीकूं तजकरि सिद्धरूप वनिताकूं वरते भए। कैसी है पृथिवीरूप स्त्री? विंध्याचल अर कैलाश हैं कुच जिसके, अर अर समुद्रकी तरंग हैं कटिमेखला जिसके। ये जीव अनाथ महा मोहरूप अन्धकार कर आच्छादित तिनकूं वे प्रभु स्वर्गलोकसे मनुष्यलोकविषैं जन्म धरि भवसागरसूं पार करते भए। अपने अद्भुत अनन्तवीर्य कर आठों कर्मरूप वैरी क्षणमात्रविषैं खिपाए, जैसे सिंह मदोन्मत्त हस्तियोंकूं नसावै। भगवान् सर्वज्ञदेवकूं अनेक नामकरि भव्य जीव गावै हैं, जिनेंद्र भगवान् अर्हंत स्वयंभू शंभु स्वयंप्रभु सुगत शिवस्थान महादेव कालंजर हिरण्यगर्भ देवाधिदेव ईश्वर महेश्वर ब्रह्मा विष्णु बुद्ध वीतराग विमल विपुल प्रबल धर्मचक्री प्रभु विभु परमेश्वर परमज्योति परमात्मा तीर्थंकर कृतकृत्य कृपालु संसारसूदन सुर ज्ञानचक्षु भवांतक इत्यादि अपार नाम योगीश्वर गावैं हैं। अर इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्ती भक्तिकरि स्तुति करैं हैं, जो गोप्य हैं अर प्रकट हैं। जिनके नाम सकल अर्थ संयुक्त हैं, जिसके प्रसादकरि यह जीव कर्मसे छूटकरि परम धामकूं प्राप्त होय है। जैसा जीवका स्वभाव है तैसा वहां रहै हैं, जो स्मरण करै उसके पाप विलाय जांय। वह भगवान पुराण

पुरुषोत्तम परम उत्कृष्ट आनंदकी उत्पत्तिका कारण महा कल्याणका मूल देवनिके देव उसके तुम भक्त होवो, अपना कल्याण चाहो हो तो अपने हृदय कमलविषैं जिनराजकूं पधरावो। यह जीव अनादि निधन है, कर्मोंका प्रेरथा भव वनविषैं भटकै है, सर्व जन्मविषैं मनुष्य भव दुर्लभ है सो मनुष्य-जन्म पायकर जे भूले हैं तिनकूं धिक्कार है। चतुर्गतिरूप है भ्रमण जिसविषैं ऐसा संसाररूप समुद्र उसमें बहुरि कब बोध पावोगे। जे अरहंतका ध्यान नाहीं करैं हैं, अहो धिकार उनकूं जे मनुष्यदेह पायकर जिनेंद्रकूं न जपैं हैं। जिनेंद्र कर्मरूप वैरीका नाश करणहारा उसे भूल पापी नाना योनिविषैं भ्रमण करैं हैं। कभी मिथ्या तपकरि क्षुद्र देव होय हैं, बहुरि मरकरि स्थावरयोनिविषैं जाय महा कष्ट भोगै है। यह जीव कुमार्गके आश्रयकरि महा मोहके वश भए इंद्रोंका इंद्र जो जिनेंद्र उसे नाहीं ध्यावैं हैं। देखो मनुष्य हाय करि मूर्ख विषरूप मांसके लोभी मोहिनी कर्मके योगकरि अहंकार ममकारकूं प्राप्त होय हैं, जिनदीक्षा नाहीं धरै हैं, मंदभागियोंके जिनदीक्षा दुर्लभ है। कभी कुतपकरि मिथ्यादृष्टि स्वर्गमें आन उपजे हैं सो हीन देव होय पश्चात्ताप करैं हैं कि हम मध्यलोक रत्नद्वीपविषैं मनुष्य भए थे सो अरहंतका मार्ग न जान्या, अपना कल्याण न किया, मिथ्या तपकरि कुदेव भए। हाय हाय धिक्कार उन पापियोंकूं जो कुशास्त्रकी प्ररूपणाकरि मिथ्या उपदेश देय महा मानके भरे जीवोंकूं कुमार्गविषैं डारैं हैं। मूढोंकूं जिनधर्म दुर्लभ है, तातैं भव भवविषैं दुखी होय हैं। अर नारकी तिर्यंच तो दुखी ही है, अर हीन देव भी दुखी ही हैं। अर बडी ऋद्धिके धारी देव भी स्वर्गसूं चये हैं सो मरणका बडा दुःख है। अर इष्ट वियोगका बडा दुःख है, बड़े देवोंकी भी यह दशा तो और क्षुद्रोंकी कया बात? जो मनुष्य देहविषैं ज्ञान पाय आत्मकल्याण करैं हैं सो धन्य हैं। इंद्र या भांति कहकर बहुरि कहता भया ऐसा दिन कब होय जो मेरी स्वर्गलोकविषैं स्थिति पूर्ण होय, अर मैं मनुष्यदेह पाय विषयरूप वैरियाकूं जीत कर्मोंका नाशकरि तपके प्रभावसूं मुक्ति पाऊं। तब एक देव कहता भया--यहां स्वर्गविषैं तो अपनी यही बुद्धि होय है परन्तु मनुष्य देह पाय भूल जाय हैं। जो कदाचित् मेरे कहेकी प्रतीति न करो तो पंचम स्वर्गका ब्रह्मेंद्र-नामा इंद्र अब रामचंद्र भया है सो यहां तो यों ही कहते थे, अर अब वैराग्यका विचार ही नाहीं। तब शचीका पति सौधर्म इंद्र कहता भया--सब बंधनमें स्नेहका बड़ा बंधन है जो हाथ पग कंठ आदि अंग अंग बंधा होय सो तो छूटै, परंतु स्नेहरूप बंधनकरि बंध्या कैसे छूटे। स्नेहका बंध्या एक अंगुल न जाय सकै। रामचन्द्रके लक्ष्मणसूं अति अनुराग है लक्ष्मणके देखे विना तृप्ति नाहीं, अपने जीवसूं भी उसे अधिक जानै है, एक निमिषमात्र भी लक्ष्मणकूं न देखै तो रामका मन विकल होय जाय सो लक्ष्मणकूं तजकरि कैसें वैराग्यकूं प्राप्त होय? कर्मोंकी ऐसी ही चेष्टा है जो बुद्धिमान भी मूर्ख होय जाय है। देखो, सुनें हैं अपने सर्व भव जिसने ऐसा

विवेकी राम भी आत्महित न करैं। अहो देव हो! जीवोंके स्नेहका बड़ा बंधन है या समान और नाहीं। तातैं सुबुद्धियोंकूं स्नेह तजि संसार सागर तरिवेका यत्न करना चाहिए, या भांति इंद्रके मुखका उपदेश तत्त्वज्ञानरूप अर जिनवरके गुणोंके अनुरागसूं अत्यंत पवित्र उसे सुनकर देव चित्तकी विशुद्धताकूं पाय जन्म जरा मरणके भयसूं कंपायमान भए मनुष्य होय मुक्ति पायवेकी अभिलाषा करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै इन्द्रका देवनिकूं उपदेश वर्णन कनेवाला एकसौ चौदहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११४ ॥

एक सौ पन्द्रहवां पर्व

[लक्ष्मणका मरण और लवण-अंकुश दीक्षा लेना]

अथानंतर इंद्र सभासे उठे, तब सुर कहिए कल्पवासी देव अर असुर कहिए भवनवासी विंतर ज्योतिषी देव इंद्रकूं नमस्कारकरि उत्तम भावधरि अपने अपने स्थानक गए। पहिले दूजे स्वर्ग लग भवनवासी विंतर ज्योतिषीदेव कल्पवासी देवोंकरि ले गए जाय हैं। सो सभामेंके दो स्वर्गवासी देव रत्नचूल अर मृगचूल बलभद्र नारायणके स्नेह परखिवेंकूं उद्यमी भए। मनविषै यह धारणा करी ते दोनों भाई परस्पर प्रेमके भरे कहिये हैं देखैं उन दोनोंकी प्रीति। रामके लक्ष्मणसूं एता स्नेह है जाके देखे विना न रहैं, सो रामका मरण सुनि लक्ष्मणकी क्या चेष्टा होय? लक्ष्मण शोककरि विह्वल भया क्या चेष्टा करै, सो क्षण एक देखकरि आवेंगे। शोककरि लक्ष्मणका कैसा मुख हो जाय, कौनसूं कोप करै, क्या कहे, ऐसी धारणाकरि दोनों दुराचारी देव अयोध्या आए। सो रामके महलविषै विक्रियाकरि समस्त अंतःपुरकी स्त्रीनिका रुदन शब्द कराया अर ऐसी विक्रिया करी द्वारपाल उमराव मंत्री पुरोहित आदि नीचा मुखकरि लक्ष्मणपै आए, अर रामका मरण कहते भए, कि हे नाथ! राम परलोक पधारे। ऐसे वचन सुनकरि लक्ष्मणने मंद पवन-करि चपल जो नील कमल ता समान सुंदर हैं नेत्र जाके, सो हाय यह शब्द हू आधासा कह तत्काल ही प्राण तजे, सिंहासन ऊपर बैठ्या हुता सो वचनरूप वज्रपातका मारया जीवरहित होय गया, आंखकी पलक ज्यों थी त्यों ही रह गई, जीव जाता रह्या, शरीर अचेतन रह गया। लक्ष्मणकूं भ्राताकी मिथ्या मृत्युके वचन रूप अग्निकरि जरा देखि दोनों देव व्याकुल भए लक्ष्मणके जियायवेकूं असमर्थ, तब विचारी याकी मृत्यु इस ही विधि कही हुती, मनविषैं अति पछताए विषाद अर आश्चर्यके भरे अपने स्थानक गए शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान है चित्त जिनका। लक्ष्मणकी वह मनोहर मूर्ति मृतक भई, देव देखि न सके, तहां खड़े न रहे,

निंद्य है उद्यम जिनका। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहैं हैं--हे राजन्। विना विचारे जे पापी कार्य करैं तिनकूं पश्चात्ताप ही होय। देवता गए अर लक्ष्मणकी स्त्री पतिकूं अचेतनरूप देखि प्रसन्न करनेकूं उद्यमी भई कहै हैं—हे नाथ किस अविवेकिनी सौभाग्यके गर्वकरि गर्वितने आपका मान न किया सो उचित न करी। हे देव! आप प्रसन्न होवहु तिहारी अप्रसन्नता हमकूं दुखका कारण है, ऐसा कहकरि वे परम प्रेमकी भरी लक्ष्मणके अंगसूं आलिंगनकरि पायनि पडीं। वे रानी चतुराईके वचन कहिवेविषैं तत्पर कोईयक तो वीण लेय बजावती भई, कोई मृदंग बजावती भई, पतिके गुण अत्यंत मधुर स्वरसूं गावती भई, पतिके प्रसन्न करिवेविषैं उद्यमी है चित्त जिनका कोई एक पतिका मुख देखै है अर पतिके वचन सुनिवेकी है अभिलाषा जिनके। कोई एक निर्मल स्नेहकी धरणहारी पतिके तनुसूं लिपटकरि कुंडलकरि मंडित महासुंदर कांतिके कपोलोंकूं स्पर्शती भई, अर कोईएक मधुरभाषिणी पतिके चरणकमल अपने सिरपर मेलती भई, अर कोई मृगनयनी उन्मादकी भरी विभ्रमकरि कटाक्षरूप जे कमल पुष्प तिनका सेहरा रचती भई, जम्भाई लेती पतिका वदन निरखि अनेक चेष्टा करती भई।

या भांति ये उत्तम स्त्रियें पतिके प्रसन्न करिवेकूं अनेक यत्न करें हैं, परंतु उनके यत्न अचेतन शरीरविषैं निरर्थक भए। वे समस्त रानी लक्ष्मणकी स्त्री ऐसे कंपायमान हैं जैसैं कमलोंका वन पवनकरि कंपायमान होय। नाथकी यह दशा होते संते स्त्रियोंका मन अतिव्याकुल भया, संशयकूं प्राप्त भईं कि क्षणमात्र में यह क्या भया चिंतवनमें न आवै, अर कथनमें न आवे, ऐसा खेदका कारण शोक उसे मनमें धरकरि वे मुग्धा मोहकी मारीं पसर गईं। इंद्रकी इंद्राणी समान है चेष्टा जिनकी ऐसी वे रानी तापकरि तप्तायमान सूक गईं। न जानिए तिनकी सुंदरता कहां जाती रही। यह वृत्तांत भीतरके लोकोंके मुखसूं सुनि श्री रामचंद्र मंत्रियोंकरि मंडित महा संभ्रमके भरे भाईपैं आए, भीतर राजलोकमें गए। लक्ष्मणका मुख प्रभातके चंद्रमा समान मंदकांति देख्या, जैसा तत्कालका वृक्ष मूलसूं उखड पडा होय तैसा भाईको देख्या। मनमें चिंतवते भये—विना कारण भाई आज मोसूं रूस्या है, यह सदा आनंद रूप, आज क्यों विषादरूप होय रहा है? स्नेहके भरे शीघ्र ही भाईके निकट जाय ताकूं उठाय उरसूं लगाय मस्तक चूमते भए। दाहका मारया जो वृक्ष उस समान हरिकूं निरखि हलधर अंगसे लपट गया। यद्यपि जीतव्यताके चिन्ह रहित लक्ष्मणकूं देख्या, तथापि स्नेहके भरे राम उसे मूवा न जानते भए। वक्र होय गई है ग्रीवा जिसकी, शीतल होय गया है अंग जिसका, जगत्की आगल ऐसी भुजा सो शिथिल होय गई, सांसोस्वास नाहीं, नेत्रोंकी पलक लगे न विघटै। लक्ष्मणकी यह अवस्था देखि राम खेदखिन्न होयकरि पसेवसूं भर गए। यह दीनोंके नाथ राम दीन होय गए बारंबार मूर्च्छा खाय पडे, आसुवोंकरि भर गए हैं नेत्र जिनके,

भाईके अंग निरखे, इसके एक नखकी भी रेखा न आई कि ऐसी यह महाबली कौन कारणकरि ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त भया, यह विचार करते संते भया है कंपायमान शरीर जिनका, यद्यपि आप सर्व विद्याके निधान, तथापि भाईके मोहकरि विद्या विसर गई । मूर्च्छाका यत्न जानैं ऐसे वैद्य बुलाए, मंत्र औषधिविषैं प्रवीण कलाके पारगामी ऐसे वैद्य आए । सो जीवता होय तो कछु यत्न करें, वे माथा धुन नीचे होय रहे । तब राम निराश होय मूर्च्छा खाय पड़े, जैसे वृक्षकी जड़ उखड़ जाय अर वृक्ष गिर पड़ै, तैसैं आप पड़े मोतियोंके हार चंदनकरि मिश्रित जल ताड़के बीजनावोंकी पवनकरि रामकूं सचेत किया । तब महाविह्वल होय विलाप करते भए शोक अर विषादकरि महापीड़ित राम आंसुवोंके प्रवाहकरि अपना मुख आच्छादित करते भए । आंसुवोंकरि आच्छादित रामका मुख ऐसा भासै जैसा जलधाराकरि आच्छादित चंद्रमा भासै । अत्यंत विह्वल रामकूं देखि सर्वराजलोकरूप समुद्रसूं रुदनरूप ध्वनि होती भई, दुखरूप सागर-विषैं मग्न सकल स्त्रीजन अत्यर्थपणे रुदन करती भईं, तिनके शब्दकरि दशों दिशा पूर्ण भईं । कैसैं विलाप करैं हैं — हाय नाथ, पृथिवीकूं आनंदके कारण, सर्व सुंदर हमकूं वचनरूप दान देवहु । तुमने विना अर्थ क्यों मौन पकड़ी, हमारा अपराध क्या ? विना अपराध हमकूं क्यों तजो हो तुम तो ऐसे दयालु हो जो अनेक चूक पड़ै, तो क्षमा करो ।

अथानंतर इस प्रस्तावविषैं लव अर अंकुश परम विषादकूं प्राप्त होय विचारते भए कि धिक्कार इस संसार असारकूं । अर इस शरीर-समान और क्षणभंगुर कौन, जो एक निमिष मात्रमें मरणकूं प्राप्त होय । जो वासुदेव विद्याधरोंकरि न जीत्या जाय सो भी कालके जालमें आय पड्या, इसलिये यह विनश्वर शरीर यह विनश्वर राज्य संपदा उसकरि हमारे क्या सिद्धि ? यह विचार सीताके पुत्र फिर गर्भमे आयवेका है भय जिनकूं, पिताके चरणारविंदकूं नमस्कारकरि महेंद्रोदयनामा उद्यानविषैं जाय अमृतेश्वर मुनिकी शरण लेय दोनों भाई महाभाग्य मुनि भए । जब इन दोनों भाइयोंने दीक्षा धरी, तब लोक अतिव्याकुल भए कि हमारा रक्षक कौन ? रामकूं भाई के मरणका बडा दुःख, सो शोकरूप भंवरमें पडे, जिनकूं पुत्र निकसनेकी कुछ सुधि नाहीं । रामकूं राज्यसूं पुत्रोंसूं प्रियायोंसूं अपने प्राणसूं लक्ष्मण अतिप्यारा, यह कर्मोंकी विचित्रता, जिसकरि ऐसे जीवोंकी ऐसी अशुभ अवस्था होय । ऐसा संसार का चरित्र देखि ज्ञानी जीव वैराग्यकूं प्राप्त होय हैं । जे उत्तम जन हैं तिनके कछु इक निमित्त मात्र बाह्य कारण देखि अंतरंग के विकारभाव दूर होय ज्ञानरूप सूर्यका उदय होय है पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षयोपशम होय तब वैराग्य उपजै है ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं लक्ष्मणका मरण अर लवणांकुशका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ पंद्रहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११५ ॥

एकसौ सोलहवां पर्व

[लक्ष्मणकी मृत्यु से दु:खी होकर श्री रामका विलाप करना]

अथानंतर गौतम स्वामी राजा श्रेणिक कहै हैं--हे भव्योत्तम ! लक्ष्मणके काल प्राप्त भए समस्त लोक व्याकुल भए। अर युग प्रधान जे राम सो अति व्याकुल होय सब बातोंसूं रहित भए कछु सुध नाहीं। लक्ष्मणका शरीर स्वभाव ही करि महासुरूप कोमल सुगंध मृतक भया तो जैसेका तैसा, सो श्रीराम लक्ष्मणकूं एक क्षण न तजें कबहू उरसे लगाय लेंय, कभी पपोलें, कभी चूमें, कबहू इसे लेकर आप बैठ जावें कभी लेकर उठ चलें, एकक्षण काहूका विश्वास न करैं, एकक्षण न तजैं, जैसे बालकके हाथ अमृत आवै अर वह गाढ़ा गाढ़ा गहै तैसे राम महाप्रिय जो लक्ष्मण उसकूं गाढ़ा गाढ़ा गहैं अर दीनोंकी नाईं विलाप करैं हाय भाई ! यह तोहि कहा योग्य, जो मुझे तजकरि तैंने अकेले भाजिवेकी बुद्धि करी। मैं तेरा विरह एकक्षण सहायिवे समर्थ नाहीं, यह बात तू कहा न जानै है तू तो सब बातोंविषैं प्रवीण है,अब मोहि दु:खके सागरविषैं डारकरि ऐसा चेष्टा कर है। हाय भ्रात ! यह क्या क्रूर उद्यम किया, जो मेरे विना जाने मेरे विना पूछे कूचका नगारा बजाय दिया। हे वत्स ! हे बालक ! एक बार मुझे वचनरूप अमृत प्याय,तूं तो अति विनयवान हुता, विना अपराध मोसूं क्यों कोप किया ? हे मनोहर ! अब तक कभी मोसूं ऐसा मान न किया,अब कछु और ही होय गया। कह मैं क्या किया, जो तू रूसा। तू सदा ऐसा विनय करता,मुझे दूरसूं आता देखि उठ खडा होय सन्मुख आवता मोहि सिंहासन ऊपर बैठावता, आप भूमिमें बैठता। अब कहा दशा भई, मैं अपना सिर तेरे पायनिमें दूं तौभी नहीं बोलै है, तेरे चरणकमल चंद्रकांत मणिसूं अधिक ज्योतिकूं धरे जे नखोंकरि शोभित देव विद्याधर सेवें हैं। हे देव ! अब शीघ्र ही उठो,मेरे पुत्र वनकूं गये सो दूर न गये हैं,तिनकूं हम तुरंत ही उलटा लावें। अर तुम विना यह तिहारी रानी आर्त्तध्यानकी भरीं कुरचीकी नाईं कलकलाट करैं हैं,तुम्हारे गुणरूप पाशसूं बंधी पृथिवीमें लोटी फिरै हैं। तिनके हार विखर गये हैं अर शीसफूल चूडामणि कटिमेखला कर्णाभरण विखरे फिरें हैं, यह महा विलापकरि रुदन करै हैं, अति आकुल हैं, इनकूं रुदनसूं क्यों न निवारो। अब मैं तुम विना कहा करूं, कहां जाऊं, ऐसा स्थानक नाहीं जहां मोहि विश्राम उपजे, अर यह तिहारा चक्र तुमसूं अनुरक्त इसे तजना तुमकूं कहा उचित। अर तिहारे वियोगमें मोहि अकेला जानि यह शोकरूप शत्रु दवावै है, अब मैं हीनपुण्य कहा करूं, ? मोहि अग्नि ऐसे न दहै अर ऐसा विष कंठकूं न सोखै जैसा तिहारा विरह सोखै है। अहो लक्ष्मीधर, क्रोध तजि, घनी बेर भई। अर तुम ऐसे धर्मात्मा त्रिकाल सामायिकके करणहारे जिनराजकी पूजामें निपुण सो सामायिकका समय टल पूजाका समय टल्या, अब मुनिनिके

आहार देयवेकी बेला है सो उठो । तुम सदा साधुनिके सेवक ऐसा प्रमाद क्यों करो करो हो ? अब यह सूर्य भी पश्चिम दिशाकूं आया, कमल सरोवरमें मुद्रित होय गये, तैसे तिहारे दर्शन विना लोकोंके मन मुद्रित होय गये । या प्रकार विलाप करते करते दिन व्यतीत भया, निशा भई, तब राम सुंदर सेज विछाय भाईकूं भुजावोंमें लेय सूते, किसीका विश्वास नाहीं,रामने सब उद्यम तजा एक लक्ष्मणमें जीव, रात्रिकूं कानोंविषैं कहै हैं--हे देव ! अब तो मैं अकेला हू, तिहारे जीवकी बात मोहि कहो, तुम कौन कारण ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त भये हो, तिहारा वदन चंद्रमाहूतैं अतिमनोहर अब कांति-रहित क्यों भासै है । अर तिहारे नेत्र मंद पवनकरि चंचल जो नील कमल उस समान अब और रूप क्यों भासैं हैं । अहो तुम-कूं कहा चाहिए सो ल्याऊं ? हे लक्ष्मण ! ऐसी चेष्टा करनी तुमकूं सोहै नाहीं, जो मनविषैं होय सो मुखकरि आज्ञा करो, अथवा सीता तुमकूं याद आई होय वह पतिव्रता अपने दुख विषैं महाय थी सो तो अब परलोक गई, तुमकूं खेद करना नाहीं । हे धीर ! विषाद तजो, विद्याधर अपने शत्रु हैं सो छिद्र देख आए, अब अयोध्या लुटेगी, तातैं यत्न करना होय सो करो । अर हे मनोहर ! तुम काहूसूं क्रोध हू करते तब ही ऐसे अप्रसन्न देखे नाहीं, अब ऐसे अप्रसन्न क्यों भासो हो । हे वत्स, अब ये चेष्टा तजो, प्रसन्न होवो, मैं तिहारे पायनि परूं हू, नमस्कार करूं हूं, तुम तो महा विनयवंत हो, सकल पृथिवीविषैं यह बात प्रसिद्ध है कि लक्ष्मण रामका आज्ञाकारी है, सदा सन्मुख है, कभी परान्मुख नाहीं, तुम अतुल प्रकाश जगत्के दीपक हो, मत कभी ऐसा होय जो कालरूप वायुकरि बुझ जावो । हे राजनिके राजन् ! तुमने या लोक-कूं अति आनंदरूप किया तिहारे राज्यमें अचैन किसीने न पाया । या भरतक्षेत्रके तुम नाथ हो अब लोकनिकूं अनाथकरि गमन करना उचित नाहीं, तुमने चक्रकरि शत्रुनिके सकल चक्र जीते, अब कालचक्रका पराभव कैसे सहो हो ? तिहारा यह सुंदर शरीर राज्यलक्ष्मीकरि जैसा सोहता था, वैसा ही मूर्च्छित भया सोहै हैं । हे राजेंद्र ! अब रात्रि भी पूर्ण भई, सन्ध्या फूली, सूर्य उदय होय गया । अब तुम निद्रा तजो, तुम जैसे ज्ञाता श्रीमुनिसुव्रतनाथके भक्त, प्रभातका समय क्यों चूको हो ? जो भगवान् वीतरागदेव मोहरूप रात्रिकूं हर लोकालोकका प्रकट करणहारा केवल ज्ञानरूप प्रताप प्रगट करते भए, वे त्रैलोक्यके सूर्य भव्य जीवरूप कमलोंकूं प्रकट करनहारे तिन का शरण क्यों न सेवो । अर यद्यपि प्रभात समय भया परंतु मुझे अंधकार ही भासे है क्योंकि मैं तिहारा मुख प्रसन्न नाहीं देखूं, तातैं हे विचक्षण ! अब निद्रा तजो, जिनपूजाकरि सभाविषैं तिष्ठो, सब सामंत तिहारे दर्शनकूं खड़े हैं । बड़ा आश्चर्य है सरोवरविषैं कमल फूले तिहारा वदनकमल मैं फूला नाहीं देखूं हू, ऐसी विपरीत चेष्टा तुमने अब तक कभी भी नहीं करी, उठो राज्यकार्यविषैं चित्त लगावो । हे भ्रातः ! तिहारी दीर्घ निद्रासूं जिनमंदिरोंकी सेवाविषैं कमी

पड़े है, संपूर्ण नगरविषै मंगल शब्द मिट गए, गीत नृत्य वादित्रादि बंद हो गये हैं औरोंकी कहा बात ? जे महा विरक्त मुनिराज हैं तिनकूं भी तिहारी यह दशा सुनि उद्वेग उपजै है। तुम जिनधर्मके धारी हो सब ही साधर्मी जन तिहारी शुभ दशा चाहैं है, बीण बांसुरी मृदंगादिकके शब्दरहित यह नगरी तिहारे वियोगकरि व्याकुल भई नहीं सोहै है, कोई अगिले भवमें महाअशुभ कर्म उपार्जे तिनके उदयकरि तुम सारिखे भाईकी अप्रसन्नतासूं महाकष्टकूं प्राप्त भया हूँ। हे मनुष्योंके सूर्य, जैसे युद्धविषैं शक्तिके घावकरि अचेत होय गये थे अर आनंदसूं उठे मेरा दुखदूर किया तैसे ही उठकरि मेरा खेद निवारो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं रामदेवका विलाप वर्णन करनेवाला एकसौ सोलहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११६ ॥

एक सौ सत्तरहवां पर्व

[शोक-संतप्त रामको विभीषणका संबोधन]

अथानंतर यह वृत्तांत सुन विभीषण अपने पुत्रनिसहित अर विराधित सकल परिवार सहित अर सुग्रीव आदि विद्याधरनिके अधिपति अपनी स्त्रियोंसहित शीघ्र अयोध्यापुरी आए। आंसुनिकरि भरे हैं नेत्र जिनके हाथ जोड़ि सीस नवाय रामके समीप आए महा शोकरूप है चित्त जिनके अति विषादके भरे रामकूं प्रणामकरि भूमिनिषैं बैठे, क्षण एक तिष्ठकरि मंद मंद वाणी करि विनती करते भए—हे देव ! यद्यपि यह शोक दुर्निवार है तथापि आप जिनवाणीके ज्ञाता हो, सकल संसारका स्वरूप जानो हो, तातैं आप शोक तजिवे योग्य हो, ऐसा कहि सबही चुप होय रहे। बहुरि विभीषण सब बातनिषै महा विचक्षण सो कहता भया—हे महाराज ! यह अनादि कालकी रीति है कि जो जन्मा सो मूवा, सब संसारविषै यही रीति है, इनहीकूं नाहीं भई, जन्मका साथी मरण है, मृत्यु अवश्य है काहूसूं न टरी, अर न काहूसूं टरै। या संसार पिंजरेविषै पड़े यह जीवरूप पक्षी सबही दुखी हैं कालके वश है मृत्युका उपाय नाहीं। अर सबके उपाय हैं। यह देह निःसंदेह विनाशीक है तातैं शोक करना वृथा है। जे प्रवीण पुरुष हैं वे आत्मकल्याणका उपाय करै हैं रुदन किएसूं मरा न जीवैं, अर न वचनालाप करैं, तातैं हे नाथ ! शोक न करो। यह मनुष्यनिके शरीर तो स्त्री पुरुषनिके संयोगसूं उपजे हैं सो पानीके बुदबुदावत् विलाय जांय इसका आश्चर्य कहा। अहमिन्द्र इन्द्र लोकपाल आदि देव आयुके क्षय भए स्वर्गसूं चये हैं जिनकी सागरोंकी आयु, अर किसीके मारे न मरें, वे भी काल पाय मरें मनुष्यनिकी कहा बात ! यह तो गर्भके खेदकरि पीडित अर रोगनिकरि पूर्ण डाभकी अणीके

ऊपर जो ओसकी बूंद आय पड़े उस समान पडनेकूं सन्मुख हैं, महा मलिन हाड़ोंके पिंजरे ऐसे शरीरके रहिवेकी कहा आशा ? यह प्राणी अपने सुजनोंका सोच करै सो आप क्या अजर अमर हैं ? आप ही कालकी दाढमैं बैठे हैं,उसका सोच क्यों न करें ? जो इनहीकी मृत्यु आई होय, अर और अमर हैं तो रुदन करना। जब सबकी यही दशा है तो रुदन काहेका। जेते देहधारी हैं तेतें सब कालके आधीन है सिद्ध भगवानूके देह नाहीं तातै मरण नाहीं। यह देह जिस दिन उपज्या उसही दिनसूं काल इसके लेयवेके उद्यममें है, यह सब संसारी जीवोंकी रीति है, तातैं संतोष अंगीकार करो, इष्टके वियोगसूं शोक करै सो वृथा है, शोककरि मरै तो भी वह वस्तु पीछी न आवैं तातैं शोक क्यों करिये। देखो काल तो वज्रदण्ड लिए सिरपर खडा है, अर संसारी जीव निर्भय भये तिष्ठै है। जैसै सिंह तो शिर पर खड्या है अर हिरण हरा तृण चरैं है। त्रैलोक्य-नाथ परमेष्ठी अर सिद्ध परमेश्वर तिन सिवाय कोई तीन लोकविषैं मृत्युसूं बच्या सुण्या नाहीं, वे ही अमर है अर सब जन्म मरण करैं हैं। यह संसार विंध्याचलके वन समान कालरूप दावा-नल समान बलै है सो तुम क्या न देखो हो ? यह जीव संसार वनमें भ्रमणकरि अति कष्टसूं मनुष्य देह पावै है सो वृथा खोवै है। काम भोगके अभिलाषी होय माते हाथीकी न्याई बंधन-विषै पड़ै हैं, नरक निगोदके दुख भोगवे हैं। कभी एक व्यवहार धर्मकरि स्वर्गविषैं देव भी होय हैं, आयुके अन्तमें वहांसूं पडै हैं। जैसे नदीके ढाहेका वृक्ष कभी उखड़े ही तैसैं चारों गतिके शरीर मृत्युरूप नदीके ढाहेके वृक्ष हैं, इनके उखडिवेका क्या आश्चर्य है, इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्ती आदि अनंत नाशकूं प्राप्त भए। जैसे मेघकरि दावानल बुझै तैसे शांतिरूप मेघकरि कालरूप दावानल बुझै और उपाय नाहीं। पातालविषैं भूतलविषैं अर स्वर्गविषै ऐसा कोई स्थान नाहीं जहां कालसूं बचै। अर छठें कालके अंत इस भरतक्षेत्रमें प्रलय होयगी, पहाड़ विलय हो जावें-गे, तो मनुष्यनिकी कहा बात ? जे भगवान् तीर्थंकर देव वज्रवृषभनाराचसंहननके धारक जिनके समचतुरस्रसंस्थानक सुर असुर नरोंकरि पूज्य, जो किसी कर जीते न जांय तिनका भी शरीर अनित्य, वे भी देह तजि सिद्धलोकविषैं निज भावरूप रहैं, तो औरोंकी देह कैसैं नित्य होय ? सुर नर नारक तिर्यंचोंका शरीर केलेके गर्भ समान असार हैं। जीव तो देहका यत्न करैं है, अर काल प्राण हरै है जैसैं बिलके भीतरसूं गरुड सर्पकूं ले जाय तैसें देहके भीतरसूं जीवकूं काल ले जाय है। यह प्राणी अनेक मूवोंकूं रोवै हैं हाय भाई, हाय पुत्र, हाय मित्र, या भांति शोक करै है, अर कालरूप सर्प सबोंकूं निगलै हैं, जैसे सर्प मींडककूं निगलै। यह मूढ बुद्धि झूठे विकल्प करैं हैं यह मैं किया यह मैं करूं हू यह करूंगा सो ऐसे विकल्प करता कालके मुखविषैं जाय हैं, जैसैं टूटा जहाज समुद्रके तले जाय। परलोककूं गया जो सज्जन उस के लार कोई जाय सकै तो इष्टका वियोग कभी न होय। जो शरीरादिक पर वस्तुसूं स्नेह करैं हैं, सो

क्लेशरूप अग्निविषैं प्रवेश करें हैं अर इन जीवोंके इस संसारविषैं एते स्वजनोंके समूह भए जिनकी संख्या नाहीं, जे समुद्रकी रेणुकाके कण तिनसूं भी अपार हैं अर निश्चयकरि देखिये तो या जीवके न कोई शत्रु है, न कोई मित्र है। शत्रु तो रागादिक हैं, अर मित्र ज्ञानादिक है। जिनकूं अनेक प्रकारकरि लडाईये अर निज जानिए सो भी वैरकूं प्राप्त भया ताहीकूं महा रोषकरि हणे, जिनके स्तनोंका दुग्ध पाया जिसकरि शरीर वृद्ध भया ऐसी माताकूं भी हनैं हैं। धिक्कार है इस संसारकी चेष्टाकूं जो पहिले स्वामी था अर बार बार नमस्कार करावता सो भी दास होय जाय है तब पायोंकी लातोंसूं मारिये है। हे प्रभो ! मोहकी शक्ति देखो इसके वश भया यह जीव आपकूं नहीं जानै है परकूं आप मानै है, जैसे कोई हाथकरि कारे नागकूं गहै तैसे कनककामिनीकूं गहैं हैं इस लोकाकाशविषैं ऐसा तिलमात्र क्षेत्र नाहीं जहां जीवने जन्म मरण न किए अर नरकविषैं इसकूं प्रज्वलित ताम्बा प्याया अर एती बार यह नरककूं गया जो उसका प्रज्वलित ताम्रपान जोड़िये तो समुद्रके जलसूं अधिक होय। अर सूकर कूकर गर्दभ होय इस जीवने एता मलका आहार किया जो अनंत जन्मका जोडिये तो हजारों विंध्याचलकी राशिसूं अधिक होय। अर या अज्ञानी जीवने क्रोधके वशसूं एते पराए शिर छेदे अर उन्होंने इसके छेदे जो एकत्र करिए तो ज्योतिषचक्रकूं उलंघकरि यह शिर अधिक होवैं। यह जीव नरक प्राप्त भया वहां अधिक दुख पाया, निगोद गया वहां अनंत-काल जन्म मरण किए। यह कथा सुनकरि कौन मित्रसूं मोह मानै, एक निमिषमात्र विषयका सुख उसके अर्थ कौन अपार दुःख सहै। यह जीव मोहरूप पिशाचके वश पड्या संसार वनविषैं भटकै है। हे श्रेणिक ! विभीषण रामसूं कहैं हैं हे प्रभो ! यह लक्ष्मणका मृतक शरीर तजिवे योग्य है अर शोक करना योग्य नाहीं, यह कलेवर उरसूं लगाये रहना योग्य नाहीं। या भांति विद्याधरनिका सूर्य जो विभीषण उसने श्रीरामसूं विनती करी। अर राम महाविवेकी जिनसूं और प्रतिबुद्ध होय तथापि मोहके योगसूं लक्ष्मणकी मूर्तिकूं न तजी, जैसैं विनयवान् गुरुकी आज्ञा न तजै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं लक्ष्मणका वियोग राम का विलाप अर विभीषणका संसारस्वरूप वर्णन करनेवाला एक सौ सत्रवां पर्व पूर्ण भया ॥११७॥

एक सौ अठारहवां पर्व

[देवों द्वारा संबोधने पर रामका शोक-रहित होना और लक्ष्मणके देहका दाह-संस्कार करना]

अथानंतर सुग्रीवादिक सब राजा रामचंद्रसूं विनती करते भए अब वासुदेवकी दग्ध क्रिया करो। तब श्रीरामकूं यह वचन अतिअनिष्ट लगा अर क्रोधकरि कहते भए तुम अपने माता पिता

पुत्र पौत्र सबों की दग्धक्रिया करो, मेरे भाईकी दग्धक्रिया क्यों होय ? जो तुम्हारा पापियोंका मित्र बंधु कुटुंब सो सब नाशकूं प्राप्त होय, मेरा भाई क्यों मरै ? उठो लक्ष्मण इन दुष्टनिके संयोगतैं और ठौर चलें जहां इन पापीनिके कटुकवचन न सुनिये ऐसा कहि भाईकूं उरसूं लगाय कांधे धरि उठ चले । विभीषण सुग्रीवादिक अनेक राजा इनकी लार पीछे पीछे चले आवें । राम काहूका विश्वास न करै, भाईकूं कांधे धरे फिरैं । जैसैं बालकके हाथ विषफल आया अर हितू छुड़ाया चाहै, वह न छोडै तैसैं राम लक्ष्मणके शरीरकूं न छोडैं । आंसुनिकरि भीज रहे हैं नेत्र जिनके, भाईसूं कहते भए- हे भ्राता अब उठो, बहुत बेर भई, ऐसे कहा सोवो हो, अब स्नानकी वेला भई स्नानके सिंहासन विराजो । ऐसा कहि मृतक शरीरकूं स्नानके सिंहासन पर बैठाया अर मोहका भरया राम मणि स्वर्णके कलशोंसूं स्नान करावता भया, अर मुकुट आदि सर्व आभूषण पहिराये अर भोजनकी तैयारी कराई, सेवकोंकूं कही नानाप्रकार रत्न स्वर्णके भाजनमें नानाप्रकारका भोजन ल्यावो उसकरि भाईका शरीर पुष्ट होय । सुंदर भात दाल फुलका नानाप्रकारके व्यंजन नाना प्रकारके रस शीघ्रही ल्यावो । यह आज्ञा पाय सेवक सब सामग्रीकरि ल्याये, नाथके आज्ञाकारी । तब आप रघुनाथ लक्ष्मणके मुखमें ग्रास देवें सो न ग्रसै, जैसैं अभव्य जिनराजका उपदेश न ग्रहैं। तब आप कहते भए--जो तैंने मोसूं कोप किया तो आहारसूं कहा कोप ? आहार तो करो, मोसूं मति बोलो । जैसैं जिनवाणी अमृतरूप है परन्तु दीर्घ संसारीकूं न रुचै तैसे वह अमृतमई आहार लक्ष्मणके मृतक शरीरकूं न रुच्या । बहुरि रामचंद्र कहै हैं--हे लक्ष्मीधर यह नानाप्रकारकी दुग्धादि पीवने योग्य वस्तु सो पीवो, ऐसा कहकरि भाईकूं दुग्धादि प्याया चाहें सो कहा पीवै । यह कथा गौतमस्वामी श्रेणिकसूं कहै है वह विवेकी राम स्नेहकरि जीवतेकी सेवा करिये तैसे मृतक भाईकी करता भया । अर नानाप्रकारके मनोहर गीत वीण बांसुरी आदि नानाप्रकारके नाद करता भया, सो मृतककूं कहा रुचै ? मानों मरा हुवा लक्ष्मण रामका संग न तजता भया । भाईकूं चंदनसूं चर्चा, भुजावोंसूं उठाय लेय, उरसूं लगाय लेय, सिर चूंबै, मुख चूंबै हाथ चूंबै अर कहै हैं--हे लक्ष्मण यह क्या भया--तू तो ऐसा कभी न सोवता अब तो विशेष सोवने लगा । अब निद्रा तजो या भांति स्नेहरूप ग्रहका ग्रहा बलदेव नानाप्रकारकी चेष्टा करै । यह वृत्तांत सब पृथिवीमें प्रकट भया कि लक्ष्मण मूवा, लव अंकुश मुनि भये, अर राम मोहका मारया मूढ होय रहा है । तब वैरी क्षोभकूं प्राप्त भए जैसैं वर्षाऋतुका समय पाय मेघ गाजैं। शंबूकका भाई सुंदर इसका नंदन विरोधरूप है चित्त जिसका सो इन्द्रजीतके वज्रमालीपै आया अर कहा मेरा बाबा अर दादा दोनों लक्ष्मणने मारे सो मेरा रघुवंशिनिसूं वैर है, अर हमारा पाताललंका-का राज्य खोस लिया, अर विराधितकूं दिया अर वानरवंशियोंका शिरोमणि सुग्रीव स्वामिद्रोही होय रामसूं मिला सो राम समुद्र उलंघ लंका आए राक्षसद्वीप उजाड्या, रामकूं सीताका अति

दु:ख सो लंका लेयवेका अभिलाषी भया। अर सिंहवाहिनी अर गरुडवाहिनी दाय महाविद्या राम लक्ष्मणकूं प्राप्त भई तिनकरि इन्द्रजीत कुंभकर्ण बंदीमें किये। अर लक्ष्मणके चक्र हाथ आया उसकरि रावणकूं हत्या। अब कालचक्रकरि लक्ष्मण मूवा सो वानरवंशियोंकी पक्ष टूटी, वानरवंशी लक्ष्मणकी भुजावोंके आश्रयसूं उन्मत्त होय रहे थे अब क्या करेंगे वे निरपक्ष भये। अर रामकूं ग्यारह पक्ष हो चुके बारहवां पक्ष लगा है सो गहला होय रहा है, भाईके मृतक शरीरकूं लिये फिरै है ऐसा मोह कौनकूं होय? यद्यपि राम-समान योधा पृथिवी-में और नाहीं, वह हल मूशलका धरणहारा अद्वितीय मल्ल है, तथापि भाईके शोकरूप कीचमें फंस्या निकसबे समर्थ नाहीं। सो अब रामसूं बैर भाव लेनेका दाव है, जिसके भाईने हमारे वंशके बहुत मारे शंबूकके भाईके पुत्रने इंद्रजीतके बेटेकूं यह कह्या सो क्रोध करि प्रज्वलित भया मंत्रियोंकूं आज्ञा देय रण-भेरी दिवाय सेना भेलीकर शंबूकके भाईके पुत्रसहित अयोध्याकी ओर चाल्या। सेनारूप समुद्रकूं लिए प्रथम तो सुग्रीवपर कोप किया कि सुग्रीवकूं मार अथवा पकड उसके देश खोसलें, बहुरि रामसूं लडें, यह विचार इंद्रजीतके पुत्र वज्रमालीने किया, सुंदरके पुत्र सहित चढ्या तब ये समाचार सुनकरि सब विद्याधर जे रामके सेवक थे वे रामचंद्रके निकट अयोध्यामें आय भेले भए जैसी भीड अयोध्यामें अंकुशके आयवेके दिन भई थी तैसी भई। वैरियोंकी सेना अयोध्याके समीप आई सुनकरि रामचंद्र लक्ष्मणकूं कांधे लिए ही धनुप बाण हाथविषैं सम्हारे विद्याधरनिकूं संग लेय आप बाहिर निकसे। उस समय कृतांतवक्त्रका जीव अर जटायु पक्षीका जीव चौथे स्वर्ग देव भए थे तिनके आसन कंपायमान भए। कृतांतवक्त्रका जीव स्वामी अर जटायु पक्षीका जीव सेवक, सो कृतांतवक्त्रका जीव जटायुके जीवसूं कहता भया हे मित्र, आज तुम क्रोधरूप क्यों भए हो? तब वह कहता भया-जब मैं गृद्ध पक्षी था तो रामने मुझे प्यारे पुत्रकी न्याईं पाल्या, अर जिनधर्मका उपदेश दिया मरणसमय नमोकार मंत्र दिया उस-करि मैं देव भया। अब वह तो भाईके शोककरि तप्तायमान है अर शत्रुकी सेना उस पर आई है। तब कृतांतवक्त्रका जीव जो देव था उसने अवधि जोड़करि कही--हे मित्र मेरा वह स्वामी था मैं उसका सेनापति था, मुझे बहुत लड़ाया, भ्रात पुत्रोंसूं भी अधिक गिण्या। अर मेरे उनके वचन है जब तुमकूं खेद उपजेगा तब तिहारे पास मैं आऊंगा, सो ऐसा परस्पर कहकरि वे दोनों देव चौथे स्वर्गके वासी सुंदर आभूषण पहिरे मनोहर हैं केश जिनके, सो अयोध्याकी ओर आए। दोनों विचक्षण परस्पर दोनों बतराए। कृतांतवक्त्रके जीवने जटायुके जीवसूं कहा तुम तो शत्रुओं-की सेनाकी ओर जावो उनकी बुद्धि हरो, अर मैं रघुनाथके समीप जाऊं हूं। तब जटायुका जीव शत्रुओंकी ओर गया कामदेवका रूपकरि उनकूं मोहित किया, अर उनकूं ऐसी माया दिखाई जो अयोध्याके आगे अर पीछे दुर्गम पहाड़ पड़े हैं, अर अयोध्या अपार है, यह अयोध्या

काहूसूं जीती न जाय। यह कौशलीपुरी सुभटोंकरि भरी है कोट आकाश लग रहे हैं, अर नगरके बाहिर भीतर देव विद्याधर भरे हैं हमने न जानी जो यह नगरी महा विषम है धरतीविषैं देखिए तो आकाशमें देखिये तो देव विद्याधर भर रहे हैं। अब कौन प्रकार हमारे प्राण बचें, कैसे जीवते घर जावें जहां श्रीरामदेव विराजें सो नगरी हमसूं कैसे लई जाय ऐसी विक्रियाशक्ति विद्याधरनिविषैं कहां ? हम विना विचारे ये काम किया जो पटबीजना सूर्यसूं वैर विचारै तो क्या कर सकै अब जो भागो तो कौन राह होयकरि भागो, मार्ग नाही। या भांति परस्पर वार्ता करि कांपने लगे, समस्त शत्रुओंकी सेना विह्वल भई। तब जटायुके जीवने देव विक्रियाकी क्रीडा कर उनकूं दक्षिण-की ओर भागनेका मार्ग दिया वे सब प्राणरहित होय कांपते भागे जैसें सिचान आगे परेवे भागें। आगे जायकरि इंद्रजीतके पुत्रने विचारी जो हम विभीषणकूं कहा उत्तर देंगे अर लोकों-कूं क्या मुख दिखावेंगे ऐसा विचार लज्जावान् होय सुंदरके पुत्र चारों रत्नसहित अर विद्या-धरनि सहित इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमाली रतिवेग नामा मुनिके निकट मुनि भए। तब यह जटायु-का जीव देव उन साधुओंका दर्शनकरि अपना सकल वृत्तांत कहि क्षमा कराय अयोध्या आया, जहां राम भाईके शोककरि बालककीसी चेष्टा कर रहे हैं तिनके संबोधिवेके अर्थ वे दोनों देव चेष्टा करते भए। कृतांतवक्त्रका जीव तो सूके वृक्षकूं सींचने लगा, अर जटायुका जीव मृतक बैल युगल तिनकरि हल वाहवेका उद्यमी भया, अर शिला ऊपर बीज बोने लगा सो ये भी दृष्टांत रामके मनमें न आया। बहुरि कृतांतवक्त्रका जीव रामके आगे जलकूं घृतके अर्थ विलोवता भया। अर जटायुका जीव बालू रेतकूं घानीमें तेलके निमित्त पेलता भया सो इन दृष्टांतनकरि रामकूं प्रतिबोध न भया। और भी अनेक कार्य इसी भांति देवोंने किए, तब रामने पूछी तुम बड़े मूढ़ हो सूका वृक्ष सींचा सो कहा, अर मूवे बैलोंसूं हल बाहना करो सो कहा, अर शिला ऊपर बीज बोवना सो कहा, अर जलका विलोवना अर बालूका पेलना इत्यादि कार्य तुम किए सो कौन अर्थ ? तब वे दोनों कहते भए-तुम भाईके मृतक शरीरकूं वृथा लिए फिरो हो उस-विषैं क्या ? यह वचन सुनकरि लक्ष्मणकूं गाढा उरसूं लगाय पृथिवीका पति जो राम सो क्रोधकरि उनसूं कहता भया-हे कुबुद्धि हो ! मेरा भाई पुरुषोत्तम उसे अमंगलके शब्द क्यों कहो हो, ऐसे शब्द बोलते तुमकूं दोष उपजेगा। या भांति कृतांतवक्त्रके जीवके और रामके विवाद होय है उसही समय जटायुका जीव मूवे मनुष्यका कलेवर लेय रामके आगे आया। उसे देख राम बोले मरेका कलेवर कहेकूं कांधे लिये फिरो हो ? तब उसने कही तुम प्रवीण होय प्राणरहित लक्ष्मणके शरीरकूं क्यों लिये फिरो हो। पराया अणुमात्र भी दोष देखो हो अर अपना मेरु प्रमाण दोष नाहीं देखो हो, सारिखेकी सारिखेसूं प्रीति होय है सो तुमकू मूढ देखि हमारे अधिक प्रीति उपजी है हम वृथा कार्यके करणहारे तिनविषैं तुम मुख्य हो, हम उन्मत्त ताकी ध्वजा

लिए फिरे हैं, सो तुमकूं अति उन्मत्त देखि तुम्हारे निकट आए हैं।

या भांति उन दोनों मित्रोंके वचन सुनि राम मोहरहित भया, शास्त्रनिके वचन चितार सचेत भए। जैसे सूर्य मेघ पटलसूं निकसि अपनी किरणकरि दैदीप्यमान भासै तैसे भरतक्षेत्रका पति राम सोई भया भानु सो मोहरूप मेघपटलसूं निकसि ज्ञान रूपी किरणनिकरि भासता भया। जैसे शरदऋतुमें कारी घटासूं रहित आकाश निर्मल सोहै तैसें रामका मन शोकरूप कर्दमसूं रहित निर्मल भासता भया। राम समस्त शास्त्रनिमें प्रवीण अमृत समान जिनवचन चितार खेदरहित भए, धीरताके अवलंबनिकरि ऐसे सोहैं जैसा भगवानका जन्माभिषेकविषैं सुमेरु सोहै। जैसे महा दाहकी शीतल पवनके स्पर्शसूं रहित कमलोंका वन सोहै अर फूलैं, तैसे शोक-रूप कलुषतारहित रामका चित्त विकसता भया जैसें कोई रात्रिके अन्धकारमें मार्गभूल गया था अर सूर्यके उदयके भए मार्ग पाय प्रसन्न होय, महाक्षुधाकरि पीड़ित मनवांछित भोजन खाय अत्यंत आनन्दकूं प्राप्त होय, अर जैसे कोई समुद्रके तिरिवेका अभिलाषी जहाजकूं पाय हर्षरूप होय, अर वनमें मार्ग भूल नगरका मार्ग पाय खुशी होय, अर तृषाकरि पीड़ित महा सरोवरकूं पाय सुखी होय, रोगकरि पीड़ित रोग-हरण औषधकूं पाय अत्यंत आनंदकूं पावै, अर अपने देश गया चाहै अर साथी देखि प्रसन्न होय, अर बन्दीगृहसूं छूट्या चाहै अर बेडी कटे जैसे हर्षित होय, तैसे रामचंद्र प्रतिबोधकूं पाय प्रसन्न भए। प्रफुल्लित भया है हृदयकमल जिनका परम कांतिकूं धारते आपकूं संसार अंधकूपसूं निकस्या मानते भए। मनमें जानी मैं नया जन्म पाया। श्रीराम विचारैं हैं अहो डाभकी अणीपर पड़ी ओसकी बूंद ता समान चंचल मनुष्यका जीतव्य एक क्षणमात्रमें नाशकूं प्राप्त होय है। चतुर्गति संसारमें भ्रमण करते मैंने अत्यंत कष्टसूं मनुष्यशरीरकूं पाया सो वृथा खोया। कौनके भाई, कौनके पुत्र, कौनका परि-वार, कौनका धन, कौनकी स्त्री, या संसारमें या जीवने अनंत सम्बंधी पाये एक ज्ञान दुर्लभ है। या भांति श्रीराम प्रतिबुद्ध भए तब वे दोनों देव अपनी माया दूरकरि लोकोंकूं आश्चर्यकी करणहारी स्वर्गकी विभूति प्रगट दिखावते भए। शीतल मंद सुगंध पवन बाजी, अर आकाशमें देवोंके विमान ही विमान होय गए, अर देवांगना गावती भई, वीण बांसुरी मृदंगादि बाजते भए। वे दोनों देव रामसूं पूछते भए आप इतने दिवस राज्य किया सो सुख पाया? तब राम कहते भए, राज्यविषैं काहेका सुख? जहां अनेक व्याधि हैं जो याहि तजि मुनि भए वे सुखी। अर मैं तुमकूं पूछूं हूं तुम महा सौम्य वदन कौन हो, अर कौन कारण करि मोसूं इतना हित जनाया? तब जटायुका जीव कहता भया—हे प्रभो! मैं वह गृद्ध पक्षी हू आप मुनिनिकूं आहार दिया, वहां मै प्रतिबुद्ध भया। अर आप मोहि निकट राख्या, पुत्रकी न्याई पाल्या अर लक्ष्मण सीता मोसूं अधिक कृपा करते, सीता हरी गई तादिन मैं रावणसूं युद्धकरि कंठगत

प्राण भया, आपने आय मोहि पंचनमोकारमंत्र दिया, मैं तिहारे प्रसादकरि चौथे स्वर्ग देव भया। स्वर्गके सुखकरि मोहित भया। अबतक आपके निकट न आया। अब अवधिज्ञानकरि तुमकूं लक्ष्मणके शोककरि व्याकुल जान तिहारे निकट आया हूँ। अर कृतांतवक्त्रके जीवने कही-हे नाथ! मैं कृतांतवक्त्र आपका सेनापति हुता, आप मोहि भ्रात पुत्रनितैं हूँ अधिक जान्या अर वैराग्य होते मोहि आप आज्ञा करी हुती जो देव होवो तो हमकूं कबहूँ चिंता उपजै तब चितारियो सो आपके लक्ष्मणके मरणकी चिंता जानि हम तुमपै आए। तब राम दोनों देवनिसूं कहते भए--तुम मेरे परममित्र हो, महाप्रभावके धारक चौथे स्वर्गके महाऋद्धिधारी देव, मेरे संबोधिवेकूं आए, तुमकूं यही योग्य, ऐसा कहकरि रामने लक्ष्मणके शोकसूं रहित होय लक्ष्मणके शरीरकूं सरयू नदीके ढाहे दग्ध किया। श्रीराम आत्मस्वभावके ज्ञाता धर्मकी मर्यादा पालनेके अर्थ शत्रुघ्न भाईकूं कहते भए--हे शत्रुघ्न! मैं मुनिके व्रतधरि सिद्धपदकूं प्राप्त हुआ चाहू हू तू पृथिवीका राज्यकरि। तब शत्रुघ्न कहते भए--हे देव! मैं भोगनिका लोभी नाहीं, जाके राग होय सो राज्य करै, मैं तिहारे संग जिनराजके व्रत धारूंगा, अन्य अभिलाषा नाहीं है। मनुष्यनिके शत्रु ये काम भोग मित्र बांधव जीतव्य इनसूं कौन तृप्त भया, कोई ही तृप्त न भया। तातैं इन सबनिका त्याग ही जीवकूं कल्याणकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषैं लक्ष्मणकी दग्धक्रिया अर मित्रदेवनिका आगमन वर्णन करनेवाला एकसौ अठारहवां पर्व पूर्ण भया॥ ११८॥

एक सौ उन्नीसवां पर्व

[श्री रामका व्रतर्त स्वामीके पास जाकर दीक्षा लेना]

अथानंतर श्रीरामचन्द्रने शत्रुघ्नके वैराग्यरूप वचन सुनि ताहि निश्चयसूं राज्यसूं परान्मुख जानि क्षणएक विचारि अनंगलवणके पुत्रकूं राज्य दिया, सो पिता तुल्य गुणनिकी खानि कुलकी धुराका धरणहारा नमस्कार करैं हैं समस्त सामंत जाकूं, सो राज्यविषैं तिष्ठ्या प्रजाका अति अनुराग है जासूं महा प्रतापी पृथिवीविषैं आज्ञा प्रवर्तावता भया। अर विभीषण लंकाका राज्य अपने पुत्र सुभूषणकूं देय वैराग्यकूं उद्यमी भया। अर सुग्रीवहू अपना राज्य अंगदकूं देयकरि संसार शरीर भोगसूं उदास भया। ये सब रामके मित्र रामकी लार भवसागर तरिवेकूं उद्यमी भए। राजा दशरथका पुत्र राम भरतचक्रवर्तीकी न्याई राज्यका भार तजता भया। कैसा है राम विषसहित अन्न समान जानैं हैं विषय सुख जाने, अर कुलटा स्त्री समान जानी है समस्त विभूति जाने, एक कल्याणका कारण मुनिनिके सेयवे योग्य सुर असुरोंकरि पूज्य श्री मुनि-

सुव्रतनाथका भाख्या मार्ग ताहि उरविषैं धारता भया। जन्म मरणके भयसूं कंपायमान भया है हृदय जाका, ढीले किए हैं कर्मबंध जानैं, धोय डाले हैं रागादिक कलंक जाने, महावैराग्यरूप चित्त है जाका, क्लेश भावसूं निवृत्त जैसा मेघपटलसूं रहित भानु भासैं तैसा भासता भया। मुनिव्रत धारिवेका है अभिप्राय जाके, ता समय अरहदास सेठ आया। तब ताहि श्रीराम चतुर्विध संघकी कुशल पूछते भए। तब वह कहता भया--हे देव! तिहारे कष्टकरि मुनिनिकाहू मन अनिष्ट-संयोगकूं प्राप्त भया, ये बात करैं हैं अर खबर आई है कि मुनिसुव्रतनाथके वंशमें उपजे चार ऋद्धिके धारक स्वामी सुव्रत, महाव्रतके धारक काम-क्रोधके नाशक आए हैं। यह वार्ता सुनकरि महाआनंदके भरे राम रोमांच होय गया है शरीर जिनका, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके, अनेक भूचर खेचर नृपनिसहित जैसैं प्रथम बलभद्र विजय स्वर्णकुंभस्वामीके समीप जाय मुनि भए हुते तैसैं मुनि होनेकूं सुव्रत मुनिके निकट गये। ते महा श्रेष्ठगुणोंके धारक हजारां मुनि मानैं हैं आज्ञा जिनकी, तिनपैं जाय प्रदक्षिणा देय हाथ जोड़ि सिर नवाय नमस्कार किया। साक्षात मुक्तिके कारण महामुनि तिनका दर्शन करि अमृतके सागरविषै मग्न भए। परम श्रद्धा-करि मुनिराजतैं रामचन्द्रने जिनचन्द्रकी दीक्षा धारिवेकी विनती करी—हे योगीश्वरनिके इन्द्र! मैं भव-प्रपंचसूं विरक्त भया तिहारी शरण ग्रहा चाहू हू, तिहारे प्रसादसूं योगीश्वरनिके मार्गविषैं विहार करूं, या भांति रामने प्रार्थना करी। कैसे हैं राम? धोये हैं समस्त रागद्वेषा-दिक कलंक जिन्होंने। तब मुनींद्र कहते भए -हे नरेंद्र! तुम या बातके योग्य ही हो, यह संसार कहा पदार्थ है यह तजकरि तुम जिनधर्म रूप समुद्रका अवगाह करो, यह मार्ग अनादिसिद्ध बाधारहित अविनाशी सुखका देनहारा तुमसे बुद्धिमान ही आदरैं। ऐसा मुनिने कहा, तब राम संसारसूं विरक्त महा प्रवीण जैसैं सूर्य सुमेरुकी प्रदक्षिणा करैं तैसें मुनींद्रकी प्रदक्षिणा करते भए। उपज्या है महाज्ञान जिनकूं, वैराग्यरूप वस्त्र पहिरे बांधी है कर्मोंके नाशकूं कमर जिन्होंने, आशारूप पाश तोड़ि स्नेहका पींजरा दग्धकरि स्त्रीरूप बंधनसूं छूटि मोहका मान मारि हार कुंडल मुकुट केयूर कटिमेखलादि सर्व आभूषण डारि तत्काल वस्त्र तजे। परम तत्वविषैं लगा है मन जिनका वस्त्राभरण यूं तजे ज्यों शरीर तजिए, महासुकुमार अपने कर तिनकरि केशलोंच किए, पद्मासन धरि विराजे शीलके मंदिर अष्टम बलभद्र समस्त परिग्रहकूं तजकरि ऐसे सोहते भए जैसा राहुसूं रहित सूर्य सोहै। पंचमहाव्रत आदरे, पंचसमिति अंगीकार करि तीन गुप्तिरूप गढ़विषैं विराजे मनोदंड वचनदंड कायदंडके दूर करणहारे षटकायके मित्र सप्त भयरहित आठ कर्मोंके रिपु नवधा ब्रह्मचर्यके धारक, दशलक्षण धर्म धारक, श्रीवत्स लक्षणकरि शोभित है उरस्थल जिनका, गुणभूषण सकलदूषणरहित तत्वज्ञानविषैं दृढ़ रामचन्द्र महामुनि भए। देवनि ने पंचाश्चर्य किए सुंदर दुंदुभी बाजे। अर दोनों देव कृतांतवक्त्रका जीव, अर जटायुका जीव

तिनने परम उत्सव किए। जब पृथिवीका पति राम पृथिवीकूं तजि निकस्या तब भूमिगोचरी विद्याधर सब ही राजा आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर विचारते भए-जो ऐसी विभूति ऐसे रत्न यह प्रताप तजकरि रामदेव मुनि भए तो और हमारे कहा परिग्रह ? जाके लोभतैं घरमें तिष्ठैं, व्रत विना हम ऐते दिन योंही खोए, ऐसा विचारकरि अनेक राजा गृहबंधनसूं निकसे, अर रागमई पाशी काटि द्वेषरूप वैरीकूं विनाशि सर्व परिग्रहका त्यागकरि भाई शत्रुघ्न मुनि भए। अर विभीषण सुग्रीव नील नल चंद्रनख विराधित इत्यादि अनेक राजा मुनि भए, विद्याधर सर्व विद्याका त्याग करि ब्रह्मविद्याकूं प्राप्त भए। कैयकनिकूं चारणऋद्धि उपजी। या भांति रामके वैराग्य भए सोलह हजार कछु अधिक महीपति मुनि भए, अर सत्ताईस हजार रानी श्रीमती आर्यिकाके समीप आर्यिका भईं।

अथानन्तर श्रीराम गुरुकी आज्ञा लेय एकविहारी भए, तजे हैं समस्त विकल्प जिन्होंने गिरिनिकी गुफा अर गिरिनिके शिखर अर विषम वन जिनविषैं दुष्टजीव विचरैं वहां श्रीराम जिनकल्पी होय ध्यान धरते भए। अवधिज्ञान उपज्या जाकरि परमाणुपर्यंत देखते भए, अर जगतके मूर्तिक पदार्थ सकल भासे। लक्ष्मणके अनेक भव जाने, मोहका सम्बन्ध नाहीं, तातैं मन ममत्व कूं न प्राप्त होता भया। अब रामकी आयुका व्याख्यान सुनो-कौमारकाल वर्ष सौ १०० मंडलीक पद वर्ष तीन सौ ३०० दिग्विजय वर्ष चालीस ४० अर ग्यारह हजार पांचसौ साठ वर्ष ११५६० तीन खंडका राज्य करि बहुरि मुनि भए। लक्ष्मणका मरण याही भांति था, देवनिका दोष नांहीं। अर भाईके मरण निमित्ततैं रामके वैराग्यका उदय था। अवधिज्ञानके प्रतापकरि रामने अपने अनेक भव जाने। महा धैर्यकूं धरे, व्रत शीलके पहाड़ शुक्ल लेश्याकरि युक्त, महा गंभीर गुणनि सागर, समाधान-चित्त मोक्ष लक्ष्मीविषैं तत्पर शुद्धोपयोगके मार्ग विषैं प्रवर्ते। सो गौतम स्वामी राजा श्रेणिक आदि सकल श्रोताओंसूं कहै हैं जैसे रामचन्द्र जिनेंद्रके मार्गविषैं प्रवरतैं तैसे तुमहू प्रवरतो, अपनी शक्ति प्रमाण महा भक्तिकरि जिनशासनविषैं तत्पर होवो, जिन नामके अक्षर महारत्नोंकूं पायकरि हो प्राणी हो खोटा आचरण तजहु, दुराचार महा दुःखका दाता खोटे ग्रन्थनिकरि मोहित है आत्मा जिनका, अर पाखंड क्रियाकरि मलिन है चित्त जिनका, वे कल्याणके मार्गकूं तजि जन्मके आंधे की न्याई खोटे पन्थमें प्रवरते हैं। कैयक मूर्ख साधुका धर्म नहीं जाने हैं अर नाना प्रकारके उपकरण साधुके बतावें हैं अर निर्दोष जान ग्रहै हैं वे वाचाल हैं। जे कुलिंग कहिये खोटे भेष मूढ़निने आचरे हैं वृथा हैं, तिनसूं मोक्ष नाहीं। जैसे कोई मूर्ख मृतकके भारकूं वहै है वृथा खेद करै हैं। जिनके परिग्रह नाहीं, अर काहूसूं याचना नाहीं, वे ऋषि हैं निर्ग्रंथ उत्तम गुणनिकरि मंडित पंडितोंकरि सेयवे योग्य हैं। यह महाबली बलदेवके वैराग्यका वर्णन सुनि संसारसूं विरक्त होवो जाकरि भवतापरूप सूर्यका आताप न पावो॥

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं श्रीरामका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ उन्नीसवां पर्व पूर्ण भया॥११६॥

एक सौ बीसवां पर्व

[श्रीरामका आहार-निमित्त नगरमें आगमन और अन्तराय होनेके कारण वनमें वापिस गमन]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे भव्योत्तम! रामचंद्रके अनेक गुण धरणेंद्रहू अनेक जीभकरि गायवे समर्थ नाहीं, वे महामुनीश्वर जगतके त्यागी महाधीर पंचोपवासकी है प्रतिज्ञा जिनके सो ईर्यासमिति पालते नंदस्थलीनामा नगरी तहां पारणाके अर्थ गए। उगते सूर्य समान है दीप्ति जिनकी मानों चालते पहाड़ ही हैं महा स्फटिकमणि समान शुद्ध हृदय जिनका, वे पुरुषोत्तम मानों मूर्तिवंत धर्म ही हैं, मानों तीन लोकका आनन्द एकत्र होय राम की मूर्ति निपजी है। महा कांतिके प्रवाहकरि पृथिवीकूं पवित्र करते मानों आकाशविषैं अनेक रंग करि कमलोंका वन लगावते नगरविषैं प्रवेश करते भए। तिनके रूपकूं देखि नगरके सब लोक क्षोभकूं प्राप्त भए लोक परस्पर बतरावें हैं—अहो देखो! यह अद्भुतरूप ऐसा आकार जगत-विषैं दुर्लभ कबहूं देखिवेविषैं न आवैं। यह कोई महापुरुष महासुंदर शोभायमान अपूर्व नर दोनों बाहू लंबाये आवै हैं। धन्य यह धैर्य धन्य यह पराक्रम, धन्य यह रूप, धन्य यह कांति, धन्य यह दीप्ति, धन्य यह शांति, धन्य यह निर्ममत्वता। यह कोई मनोहर पुराण पुरुष है ऐसा और नाहीं। जूडे प्रमाण धरती देखता जीवदया पालता शांतदृष्टि समाधानचित्त जैनका यति चाल्या आवै है। ऐसा कौनका भाग्य जाके घर यह पुण्याधिकारी आहारकरि कौनकूं पवित्र करै? ताके बड़े भाग्य जाके घर यह आहार लेय, यह इन्द्र समान रघुकुलका तिलक अक्षोभ पराक्रमी शीलका पहाड रामचंद्र पुरुषोत्तम हैं, याके दर्शनकरि नेत्र सफल होंय, मन निर्मल होय, जन्म सफल होय। देही पायेका यह फल जो चारित्र पालिए। या भांति नगरके लोक रामके दर्शनकरि आश्चर्यकूं प्राप्त भए। नगरमें रमणीक ध्वनि भई, श्रीराम नगरविषैं पैठें अर समस्त गली अर मार्ग स्त्री पुरुषनिके समूहकरि भरि गया, नरनारी नाना प्रकारके भोजन हैं घरविषैं जिनके प्रासुक जलकी झारी भरे द्वारापेखन करैं हैं। निर्मल जल दिखावते पवित्र धोवती पहिरे नमस्कार करैं हैं। हे स्वामी! अत्र तिष्ठो अन्न जल शुद्ध है या भांतिके शब्द करैं हैं। नाहीं समावै है हृदयविषैं हर्ष जिनके। हे मुनींद्र! जयवंत होवो, हे पुण्यके पहाड! नादो विरदो, इन वचनोंकरि दशों दिशा पूरित भई, घर घरविषैं लोग परस्पर बात करैं हैं स्वर्णके भाजनमें दुग्ध दधि ईखरस दाल भात क्षीर शीघ्र ही तैयार करि राखो, मिश्री मोदक कपूरकरि युक्त शीतल जल सुंदर पूरी शिखिरणी भली भांति विधिसे राखो। या भांति नर-नारिनिके वचनालाप तिनकरि समस्त नगर शब्दरूप होय गया, महासंभ्रमके भरे जन अपने बालकोंको न विलोकते भए। मार्गमें लोक दौड़े सो काहूके धकेसूं कोई गिर पड़े, या

भांति लोकनिके कोलाहल करि हाथी खूंटा उपाडते भए, अर गामविषैं दौडते भए, तिनके कपोलोंसूं मद झरिवेकरि मार्गविषैं जलका प्रवाह होय गया, हाथिनिके भयसूं घोड़े घास तजि तजि बंधन तुड़ाय तुड़ाय भाजे अर हींसते भए, सो हाथी घोड़निकी घमसाणकरि लोक व्याकुल भए। तब दानविषैं तत्पर राजा कोलाहल शब्द सुनि मंदिरके ऊपर आय खड्या रह्या दूरसूं मुनिका रूप देखि मोहित भया। राजाके मुनिसूं राग विशेष, परन्तु विवेक नाहीं, सो अनेक सामंत दौड़ाए अर आज्ञा करी स्वामी पधारे है सो तुम जाय प्रणाम करि बहुत भक्ति विनती करि यहां आहारकूं ल्यावो। सो सामंत भी मूर्ख जाय पायनिपर पड़ि कहते भये--हे प्रभो! राजाके घर भोजन करहु, वहां महा पवित्र सुंदर भोजन हैं, अर सामान्य लोकनिके घर आहार विरस आपके लेयवे योग्य नाहीं। अर लोकोंकूं मनें किए कि तुम कहा दे जानों हो ? यह वचन सुनकरि महामुनि आपकूं अंतराय जानि नगरसूं पीछे चाल्ये। तब सब लोग व्याकुल भए। वे महापुरुष जिन-आज्ञाके प्रतिपालक आचारांगसूत्र-प्रमाण है आचरण जिनका आहारके निमित्त नगरविषैं विहारकरि अंतराय जानि नगरसूं पीछे वनविषैं गए। चिद्रूपध्यानविषैं मग्न कायोत्सर्ग धरि तिष्ठे। वे अद्भुत अद्वितीय सूर्य मन अर नेत्रकूं प्यारा लागे रूप जिनका नगरसूं विना आहार गए तब सब ही खेद-खिन्न भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं राम मुनिका आहारके अर्थि नगरमें आगमन बहुरि लोकनिके कोलाहलतैं अन्तराय पाछा वनमे आना वर्णन करनेवाला एक सौ वीसवां पर्व पूर्ण भया ॥१२०॥

एक सौ इक्कीसवां पर्व

[श्रीरामके वनचर्याका अभिग्रह और वनमें ही आहारका योग मिलना]

अथानंतर राम मुनियोंमें श्रेष्ठ बहुरि पंचोपवासका प्रत्याख्यान करि यह अवग्रह धारते भये कि वनविषैं कोई श्रावक शुद्ध आहार देय तो लेना, नगरमें न जाना। या भांति कांतारचर्याकी प्रतिज्ञा करी। सो एक राजा प्रतिनंद ताकूं दुष्ट तुरंग लेय भागा सो लोकनिकी दृष्टिसूं दूर गया। तब राजाकी पटरानी प्रभवा अति चिंतातुर शीघ्रगामी तुरंग पर आरूढ राजाके पीछेही सुभटनिके समूह करि चाली। अर राजाकूं तुरंग हर ले गया था सो वनके सरोवरनिविषैं कीचमें फंस गया, उतनेहीमें पटरानी जाय पहुँची। राजा रानी पै आया। तब रानी राजासूं हास्यके वचन कहती भई—हे महाराज! जो यह अश्व आपकूं न हरता तो यह नंदनवनसा वन अर मानसरोवरसा सर कैसैं देखते! तब राजाने कही--हे रानी, वनयात्रा अब सुफल भई जो तिहारा दर्शन भया

या भांति दम्पती परस्पर प्रीतिकी बातकरि सखीजन सहित सरोवरके तीर बैठि नानाप्रकार जल-क्रीडा करि दोनों भोजनके अर्थ उद्यमी भए। ता समय श्रीराम मुनि कांतारचर्याके करणहारे या तरफ आहारकूं आए। साधुकी क्रियामें प्रवीण तिनकूं देखि राजा हर्षकरि रोमांच भया रानीसहित संमुख जाय नमस्कारकरि ऐसे शब्द कहता भया--हे भगवन्! यहां तिष्ठो, अन्न जल पवित्र है, प्रासुक जलकरि राजाने मुनिके पग धोए, नवधा भक्ति करि सप्तगुण सहित मुनिकूं महापवित्र क्षीर आहार दिया, स्वर्णके पात्रमें लेयकरि महापात्र जे मुनि तिनके करपात्रमें पवित्र अन्न देता भया। निरंतराय आहार भया, तब देव हर्षित होय पंचाश्चर्य करते भए। अर आप अक्षीण महा ऋद्धिके धारक सो वा दिन रसोईका अन्न अटूट होय गया। पंचाश्चर्यके नाम,-पंच वर्ण रत्नोंकी वर्षा, अर महा सुगंध कल्पवृक्षोंके पुष्पकी वर्षा, शीतल मंद सुगन्ध पवन, दुंदुभी नाद, जय जय शब्द, धन्य यह दान धन्य यह पात्र धन्य यह विधि धन्य यह दाता, नीके करी नीके करी, नादो विरधो फूलो फलो या भांतिके शब्द आकाशमें देव करते भए। अथ नवधा भक्तिके नाम, मुनिको पडगाहना, ऊंचे स्थानक राखना, चरणारविंद धोवना, चरणोदक माथे चढ़ावना, पूजा करनी, मन शुद्ध, वचन शुद्ध, काय शुद्ध, आहार शुद्ध, यह नवधा भक्ति। अर श्रद्धा शक्ति निर्लोभता दया क्षमा अदेखसखापणो नहीं, हर्ष संयुक्त यह दाताके सात गुण। वह राजा प्रतिनंदी मुनिदानसूं देवोंकरि पूज्य भया। अर श्रावकके व्रत धारे निर्मल है सम्यक्त जाके पृथिवीमें सिद्ध होता भया, बहुत महिमा पाई। अर पंचाश्चर्यमें नाना प्रकारके रत्न स्वर्णकी वर्षा भई सो दशों दिशामें उद्योत भया अर पृथिवीका दरिद्र गया, राजा रानी सहित महाविनयवान भक्तिकरि नम्रीभूत महा मुनिकूं विधिपूर्वक निरंतराय आहार देय प्रबोधकूं प्राप्त भया, अपना मनुष्य जन्म सफल जानता भया। अर राम महामुनि तपके अर्थ एकांत रहैं। बारह प्रकार तपके करणहारे तप ऋद्धिकरि अद्वितीय,पृथिवीमें अद्वितीय सूर्य विहार करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम मुनिकूं निरंतराय आहार वर्णन करनेवाला एकसौ इक्कीसवा पर्व पूर्ण भया ॥१२१

एकसौ बाईसवां पर्व

[सीताके जीवका स्वर्गसे आकर रामको मोहित करनेके लिए उपसर्ग करना और रामके कैवल्यकी उत्पत्ति होना]

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं--श्रेणिक! वह आत्माराम महा मुनि बलदेव स्वामी, शांत किए हैं रागद्वेष जानैं, जो और मनुष्योंसूं न बन आवै ऐसा तप

करते भए। महा वनविषैं विहार करते, पंचमहाव्रत पंच समिति तीन गुप्ति पालते, शास्त्रके वेत्ता जितेंद्री जिन धर्ममें है अनुराग जिनका, स्वाध्याय ध्यानमें सावधान, अनेक ऋद्धि उपजी, परंतु ऋद्धिनिकी खबर नाहीं। महा विरक्त निर्विकार बाईस परीषहके जीतनहारे, तिनके तपके प्रभावतैं वनके सिंह व्याघ्र मृगादिकके समूह निकट आय बैठैं, जीवोंका जातिविरोध मिट गया, रामका शांतरूप निरखि शांतरूप भए। श्रीराम महाव्रती चिदानंदविषैं है चित्त जिनका, परवस्तुकी वांछारहित, विरक्त कर्मकलंक हरिवेकूं है यत्न जिनका, निर्मल शिलापर तिष्ठते, पद्मासन धरे आत्मध्यानविषैं प्रवेश करते भए जैसे रवि मेघमालाविषैं प्रवेश करै। वे प्रभु सुमेरु सारिखे अचल है चित्त जिनका पवित्र स्थानविषैं कायोत्सर्ग धरे, निज स्वरूपका ध्यान करते भए, कबहूँक विहार करैं सो ईर्यासमिति पालते जूडा प्रमाण पृथिवी निरखते महा शांत जीवदया प्रतिपाल देव-देवांगनादिक करि पूजित भए। वे आत्मज्ञानी जिन आज्ञाके पालक जैनके योगी ऐसा तप करते भए जो पंचम कालविषैं काहूके चिंतवनविषैं न आवै। एक दिन विहार करते कोटिशिला आए जो लक्ष्मणने नमोकार मंत्र जप कर उठाई हुती सो आप कोटि शिलापर ध्यान धरि तिष्ठे कर्मोंके खिपायवेविषैं उद्यमी क्षपकश्रेणि चढिवेका है मन जिनका।

अथानंतर अच्युत स्वर्गका प्रतींद्र सीताका जीव स्वयंप्रभ नामा अवधिकरि विचारता भया, रामका अर आपका परम स्नेह अपने अनेक भव अर जिनशासनका माहात्म्य अर रामका मुनि होना अर कोटिशिला पर ध्यान धरि तिष्ठना। बहुरि मनविषैं विचारी वे मनुष्यनिके इन्द्र पृथिवीके आभूषण मनुष्यलोकविषैं पति हुते, मैं उनकी स्त्री सीता हुती। देखो कर्मकी विचित्रता, मैं तो व्रतके प्रभावतैं स्वर्गलोक पाया। अर लक्ष्मण रामका भाई प्राणहूतैं प्रिय सो परलोक गया, राम अकेले रह गए। जगतके आश्चर्यके करणहारे दोनों भाई बलभद्र नारायण कर्मके उदयतैं बिछुरे श्रीराम कमल सारिखे नेत्र जिनके शोभायमान हल मूसलके धारक बलदेव महाबली सो वासुदेवके वियोगकरि जिनदेवकी दीक्षा अंगीकार करते भये। राज अवस्थाविषैं तो शस्त्रोंकरि सर्व शत्रु जीते बहुरि मुनि होय मन इन्द्रिय जीते। अब शुक्लध्यान धारकरि कर्म शत्रुकूं जीत्या चाहै हैं असा होय जो मेरी देव मायाकरि कछुइक इनका मन मोहमें आवै, वह शुद्धोपयोगसूं च्युत होय शुभोपयोगविषैं आय यहां अच्युतस्वर्गविषैं आवें मेरे इनके महाप्रीति है, मैं अर वे मेरु नंदीश्वरादिककी यात्रा करें, अर बाईस सागर पर्यंत भेले रहें। मित्रता बढावें अर दोनों मिल लक्ष्मणकूं देखें। यह विचारकरि सीताका जीव प्रतींद्र जहां राम ध्यानारूढ थे तहां आया, इनको ध्यानसूं च्युत करवे अर्थ देवमाया रची। बसन्त ऋतु वनविषैं प्रकट करी, नानाप्रकारके फूल फूले, अर सुगंध वायु बाजने लगी, पक्षी मनोहर शब्द करने लगे अर भ्रमर गुंजार करै हैं, कोयल बोलें हैं, मैना सुवा नाना प्रकारकी ध्वनि कर रहे हैं, आंब मौर आये, भ्रमरोंकरि मण्डित सोहै हैं, कामके बाण जे पुष्प तिनकी सुगन्धता फैल रही है, अर कर्ण-

कार जातिके वृक्ष फूले हैं तिनकरि वन पीत हो रहा है सो मानों वसंत रूप राजा पीतांबरकरि क्रीडाकर रहा है। अर मौलश्रीकी वर्षा होय रही है ऐसी वसन्तकी लीलाकरि आप वह प्रतींद्र जानकीका रूप धरि रामके समीप आया, वह मनोहर वन जहां और कोई जन नाहीं। अर नाना-प्रकारके वृक्ष सब ऋतुके फूल रहे हैं, तासमय रामके समीप सीता सुंदरी कहती भई--हे नाथ! पृथिवीविषैं भ्रमण करते कोई पुण्यके योगतैं तुमकूं देखे, वियोगरूप लहरका भरया जो स्नेहरूप समुद्र ताविषैं मैं डूबूं हू सो मोहि थांभो, अनेक प्रकार रागके वचन कहे, परंतु मुनि अकंप सो वह सीताका जीव मोहके उदयकरि कभी दाहिने कभी बायें भ्रमै, कामरूप ज्वरके योगकरि कंपित है शरीर अर महा सुंदर अरुण हैं अधर जाके, या भांति कहती भई--हे देव! मैं विना विचारि तिहारी आज्ञा विना दीक्षा लीनी मोहि विद्याधरनिने बहकाया, अब मेरा मन तुमविषैं है, या दीक्षा-करि पूर्णता होवै। यह दीक्षा अत्यंत वृद्धनिकूं योग्य है। कहां यह यौवन अवस्था, अर कहां यह दुर्द्धर व्रत? महाकोमल फूल दावानलकी ज्वाला कैसे सहार सकै? अर हजारां विद्याधरनिकी कन्या और हू तुमकूं वरया चाहे हैं मोहि आगे धार ल्याई हैं। कहैं हैं, तिहारे आश्रय हम बल-देवकूं वरें, यह कहैं हैं। अर हजारां दिव्य कन्या नाना प्रकारके आभूषण पहरे राजहंसिनी समान है चाल जिनकी सो प्रतींद्रकी विक्रियाकरि मुनींद्रके समीप आई, कोयलतैं हू अधिक मधुर बोलैं ऐसी सोहैं मानों साक्षात् लक्ष्मी ही हैं। मनकूं आल्हाद उपजावैं, कानोंकूं अमृत समान ऐसा दिव्य गीत गावतीं भईं, अर बीण बांसुरी मृदंग बजावती भईं, भ्रमर सारिखे श्याम केश बिजुरी समान चमत्कार महासुकुमार पातरी कटि, कठोर अति उन्नत हैं कुच जिनके सुंदर शृंगार करे नाना वर्णके वस्त्र पहिरे, हाव भाव विलास विभ्रमकूं धरती मुलकती अपनी कांतिकरि व्याप्त किया है आकाश जिन्होंने मुनिके चौगिर्द बैठी प्रार्थना करती भईं--हे देव! हमारी रक्षा करो। अर कोई एक पूछती भई--हे देव! यह कौन वनस्पति है? अर कोई एक माधवी लताके पुष्पके ग्रहणके मिस बाहु ऊंची करती अपना अंग दिखावती भई, अर कईएक भेली होयकरि ताली देती रासमण्डल रचती भई, पल्लव समान हैं कर जिनके, अर कोई परस्पर जलकेलि करती भई। या प्रकार नाना भांतिकी क्रीडाकरि मुनिके मन डिगायवेका उद्यम करती भई। सो हे श्रेणिक! जैसैं पवनकरि सुमेरु न डिगै तैसें श्रीरामचन्द्र मुनिका मन न डिगै। आत्मस्वरूपके अनुभवी रामदेव सरल हैं दृष्टि जिनकी, विशुद्ध हैं आत्मा जिनका, परीषहरूप वज्रपातसूं न डिगे, क्षपकश्रेणी चढे शुक्लध्यानके प्रथम पाएविषैं प्रवेश किया, रामचंद्रका भाव आत्मविषैं लगि अत्यंत निर्मल भया सो उनका जोर न पहुंच्या। मूढजन अनेक उपाय करैं, परन्तु ज्ञानी पुरुषनिका चित्त न चलै। वे आत्मस्वरूपविषैं ऐसे दृढ भए जो काहू प्रकार न चिगे, प्रतींद्रदेवने मायाकरि रामका ध्यान डिगायवेकूं अनेक यत्न किए परन्तु कछु ही उपाय न चल्या। वे भगवान् पुरुषोत्तम

अनादि कालके कर्मोंकी वर्गणाके दग्ध करवेकूं उद्यमी भए। पहिले पाएके प्रसादतैं मोहका नाशकरि बारहवें गुणस्थान चढे। तहां शुक्लध्यानके दूजे पाएके प्रसादतैं ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायका अंत किया, माघ शुक्ल द्वादशीकी पिछली रात्रि केवलज्ञानकूं प्राप्त भए। केवलज्ञानविषैं सर्व द्रव्य समस्त पर्याय प्रतिभासे, ज्ञानरूप दर्पणमें लोकालोक सब भासे। तब इन्द्रादिक देवनिके आसन कम्पायमान भए। अवधिज्ञानकरि भगवान् रामकूं केवल उपज्या जानकरि केवलकल्याणककी पूजाकूं आए, महा विभूति संयुक्त देवनिके समूह सहित बड़े श्रद्धावान् सब ही इंद्र आए। घातिया कर्मके नाशक अर्हंत परमेष्ठी तिनकूं चारणमुनि अर चतुरनिकायके देव सब ही प्रणाम करते भए। वे भगवान् छत्र चमर सिंहासन आदिकर शोभित त्रैलोक्यकरि वन्दिवे योग्य सयोगकेवली तिनकी गंधकुटी देव रचते भए। दिव्यध्वनि खिरती भई, सब ही श्रवण करते भए। अर बारंबार स्तुति करते भए। सीताका जीव स्वयंप्रभ नामा प्रतींद्र केवलीकी पूजाकरि तीन प्रदक्षिणा देय बारंबार क्षमा करावता भया–हे भगवन्! मैं दुर्बुद्धिने जो दोष किए सो क्षमा करहु। गौतम स्वामी कहे हैं—हे श्रेणिक! वे भगवान् बलदेव अनंत लक्ष्मी कांतिकरि संयुक्त आनंद-मूर्ति केवली तिनकी इंद्रादिक देव महाहर्षके भरे अनादि रीति-प्रमाण पूजा स्तुतिकर विनती करते भए। केवली विहार कीया, तब देवहू विहार करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं रामकूं केवलज्ञानकी उत्पत्ति वर्णन करनेवाला एकसौ बाईसवा पर्व पूर्ण भया ॥१२२॥

एकसौ तेईसवां पर्व

[सीताके जीवका नरकमें जाकर लक्ष्मण और रावणको संबोधना]

अथानंतर सीताका जीव प्रतींद्र लक्ष्मणके गुण चितारि लक्ष्मणका जीव जहां हुता, अर खरदूषणका पुत्र शम्बूक असुरकुमार जातिका देव हुता, तहां जायकरि ताकूं सम्यग्ज्ञानका ग्रहण कराया सो तीजे नरक नारकनिकूं बाधा करावै, हिंसानंद रौद्रध्यानविषै तत्पर, पापी नारकीनिकूं परस्पर लडावै। पापके उदयकरि जीव अधोगति जाय। सो तीजे तक तो असुरकुमारहू लडावैं आगे असुरकुमार न जांय, नारकी ही परस्पर लडैं। जहां कैयकनिकूं अग्निकुण्डविषैं डारैं हैं सो पुकारै हैं। कैयकनिकूं कांटनिकर युक्त शाल्मली वृक्ष तिनपर चढाय घसीटैं हैं, कैयकनिकूं लोहमई मुग्दरनिकरि कूटैं हैं। अर जे मांस-आहारी पापी तिनकूं उनहीका मांस काटि खवावै हैं, अर प्रज्वलित लोहके गोला तिनकूं मुखमें मारि मारि दे हैं। अर कैयक मारके मारे भूमिविषैं लोटै हैं, अर मायामई श्वान मार्जार सिंह व्याघ्र दुष्ट पक्षी भखैं हैं, तहां तिर्यंच नाहीं नरककी विक्रिया

है। कैयकनिकू सूली चढावै हैं, अर वज्रके मुद्गरनितैं मारै हैं, कैयकनिकूं ताता तांबा गालि गालि प्यावें हैं अर कहैं हैं ये मदिरापानके फल हैं। कैयकोंको काठमें बांधकरि करोतोंसूं चीरें हैं, अर कैयकोंको कुठारनिसूं काटै हैं, कैयकोंकूं घानीमें पेलें हैं, कैयककोंकी आंख काढें हैं, कैयकोंकी जीभ काढें हैं, वह क्रूर कैयकोंके दांत तोडें हैं इत्यादि नारकीनिकूं अनेक दुख हैं सो अवधि ज्ञानकरि प्रतींद्र नारकीनिकी पीडा देखि शंबूकके समझायवेकूं तीजी भूमि गया। सो असुरकुमार जातिके देव क्रीडा करते हुते वे तो इनके तेजसूं डर गए। अर शम्बूककूं प्रतींद्र कहते भए--अरे पापी निर्दई तैंनैं यह क्या आरम्भा जो जीवोंकूं दुख देवै है। हे नीच देव! क्रूर कर्म तजि, क्षमा पकड़, यह अनर्थके कारण कर्म तिनकरि कहा। अर यह नरकके दुःख सुनकरि भय उपजै है, तू प्रत्यक्ष नारकीनिकूं पीडा करै है करावै है सो तुझे त्रास नाहीं। यह वचन प्रतींद्रके सुन शंबूक प्रशांत भया। दूसरे नारकी तेज न सह सके, रोवते भए, अर भागते भए। तब प्रतींद्रने कही--हो नारकी हो, मुझसूं मत डरहु, जिन पापनिकरि नरकमें आए हो तिनसूं डरो। जब या भांति प्रतींद्रने कही तब उनमें कैयक मनमें विचारते भए--जो हम हिंसा मृषावाद परधन-हरण परनारि-रमण बहु आरंभ बहु परिग्रहमें प्रवर्ते रौद्र ध्यानी भए उसका यह फल है। भोगनिविषैं आसक्त भए क्रोधादिककी तीव्रता भई, खोटे कर्म कीए उससूं ऐसा दुख पाया। देखहु यह स्वर्गलोकके देव पुण्यके उदयसूं नानाप्रकारके विलास करै हैं रमणीक विमान चढें, जहां इच्छा होय वहां ही जांय, या भांति नारकी विचारते भए। अर शम्बूकका जीव जो असुरकुमार उसकूं ज्ञान उपज्या। फिर रावणके जीवने प्रतींद्रकूं पूछा--तुम कौन हो? तब वाने सकल वृत्तांत कहा--मैं सीताका जीव तपके प्रभावकरि सोलहवें स्वर्गमें प्रतींद्र भया। अर श्रीरामचन्द्र महामुनींद्र होय ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहिनी अंतराय कर्मका नाशकरि केवली भए, सो धर्मोपदेश देते जगतकूं तारते भरतक्षेत्रविषैं तिष्ठैं हैं। नाम गोत्र वेदनी आयुका अंतकरि परमधाम पधारेंगे। अर तू विषयवासना करि विषम भूमिविषैं पड्या। अब भी चेत, ज्यूं कृतार्थ होय। तब रावणका जीव प्रतिबोधकूं प्राप्त भया, अपने स्वरूपका ज्ञान उपज्या। अशुभ कर्म बुरे जाने, मनमें विचारता भया--मैं मनुष्य भव पाय अणुव्रत महाव्रत न आराधे, तातैं इस अवस्थाकूं प्राप्त भया। हाय हाय, मैं कहा किया जो आपकूं दुख समुद्रमें डारया। यह मोहका माहात्म्य है जो जीव आत्महित न कर सके। रावण प्रतींद्रकूं कहै है--हे देव, तुम धन्य हो विषयकी वासना तजी, जिनवचनरूप अमृतकूं पीकर देवोंके नाथ भए। तब प्रतींद्रने दयालु होयकर कही--तुम भय मत करो, चलो हमारे स्थानककूं चलो, ऐसा कहि याके उठायवे-कूं उद्यमी भया। तब रावणके जीवके शरीरके परमाणु विखर गए जैसैं अग्निकरि माखन पिघल जाय। काहु उपायकरि याहि लेजायवे समर्थ न भया, जैसैं दर्पणमें तिष्टती छाया न

ग्रही जाय। तब रावणका जीव कहता भया--हे प्रभो! तुम दयालु हो सो तुमकूं दया उपजे ही। परंतु इन जीवनिने पूर्वे जे कर्म उपार्जे हैं तिनका फल अवश्य भोगै है। विषयरूप मांसका लोभी दुर्गतिकी आयु बांधै है सो आयु पर्यंत दुख भोगवे है यह जीव कर्मोंके आधीन इसका देव क्या करें। हमने अज्ञानके योगसूं अशुभ कर्म उपार्जे हैं इनका फल अवश्य भोगेंगे, आप छुडायवे समर्थ नाहीं। तातैं कृपाकरि वह उपदेश कहो जिसकरि फिर दुर्गतिके दुख न पावैं। हे दयानिधे,तुम परम उपकारी हो। तब देवने कही परमकल्याणका मूल सम्यग्ज्ञान है सो जिन-शासनका रहस्य है अविवेकियोंकूं अगम्य है, तीन लोकमें प्रसिद्ध है। आत्मा अमूर्तिक सिद्ध-समान उसे समस्त परद्रव्योंसूं जुदा जानो। जिनधर्मका निश्चयकरि यह सम्यग्दर्शन कर्मोंका नाशक शुद्ध पवित्र परमार्थका मूल जीवोंने न पाया तातें अनंत भव ग्रहे। यह सम्यग्दर्शन अभव्योंकूं अप्राप्य है, अर कल्याणरूप है जगतमें दुर्लभ है, सकलमें श्रेष्ठ है, सो जो तू आत्मकल्याण चाहै है तो उसे अंगीकार करहु जिसकरि मोक्ष पावै, उससूं श्रेष्ठ और नाहीं,न हुआ, न होयगा। याहीकरि सिद्ध भए हैं, अर होंयगे। जे अर्हंत भगवानने जीवादिक नव पदार्थ भाषे हैं तिनकी दृढ श्रद्धा करनी, उसे सम्यग्दर्शन कहिए। इत्यादि वचनोंकरि रावणके जीवकूं सुरेंद्रने सम्यक्त्व ग्रहण कराया। अर याकी दशा देखि विचारता भया--जो देखो रावणके भवमें याकी कहा कांति थी,महासुंदर लावण्यरूप शरीर था सो अब ऐसा होय गया, जैसा नवीन वन अग्निकरि दग्ध हो जाय। जिसे देखि सकल लोक आश्चर्यकूं प्राप्त होते सो ज्योति कहां गई? बहुरि ताहि कहता भया--कर्मभूमिमें तुम मनुष्य भए थे सो इन्द्रियोंके क्षुद्र सुखके कारण दुराचार-करि ऐसे दुःख रूप समुद्रमें डूबे। इत्यादि प्रतींद्रने उपदेशके वचन कहे, तिनकूं सुनकरि उसके सम्यग्दर्शन दृढ भया। अर मनमेंविचारता भया--कर्मोंके उदयकरि दुर्गतिके दुख प्राप्त भए। तिनकूं भोगि यहांसे छूट मनुष्यदेह पाय जिनराजका शरण गहूंगा। प्रतींद्रसूं कही--अहो देव, तुम मेरा बड़ा हित किया जो सम्यग्दर्शनमें मोहि लगाया। हे प्रतींद्र महाभाग्य, अब तुम जावो, वहां अच्युतस्वर्गमें धर्म्मके फलसूं सुख भोगि मनुष्य होय शिवपुरकूं प्राप्त होवो। जब ऐसा कह्या, तब प्रतींद्र उसे समाधानरूपकरि कर्मोंके उदयकूं सोचते संते सम्यग्दृष्टि वहांसूं ऊपर आया। संसारकी मायासूं शंकित है आत्मा जाका,अर्हंत सिद्ध साधु जिनधर्मके शरणविषैं तत्पर है मन जाका तीन बेर पंचमेरुकी प्रदक्षिणाकरि चैत्यालयोंका दर्शनकरि नारकीनिके दुखसूं कंपायमान है चित्त जाका स्वर्गलोकमेंहू भोगाभिलाषी न भया मानों नारकीनिकी ध्वनि सुनै है। सोलहवें स्वर्गके देवकूं छठे नरक लग अवधिज्ञानकरि दीखै है तीजे नरकके विषैं रावणके जीव-कूं अर शंबूकका जीव जो असुरकुमार देव था ताहि संबोधि सम्यक्त्व प्राप्त कराया। हे श्रेणिक! उत्तम जीवोंसूं पर-उपकार बनै। बहुरि स्वर्गलोकसूं भरतक्षेत्रमें श्रीरामके दर्शनकूं आए, पवनसूं

हू शीघ्रगामी जो विमान तामें आरूढ अनेक देवनिकूं संग लिए नानाप्रकारके वस्त्र पहिरे हार माला मुकुटादिककरि मंडित शक्ति गदा खड्ग धनुष बरछी शतघ्नी इत्यादि अनेक आयुधोंकूं धरे गज तुरंग सिंह इत्यादि अनेक वाहनोंपर चढे मृदंग बांसुरी वीणा इत्यादि अनेक वादित्रनिके शब्द तिनकरि दशोंदिशा पूर्ण करते केवलीके निकट आए। देवोंके वाहन गज तुरंग सिंहादिक तिर्यंच नाहीं, देवोंकी विक्रिया है। श्रीरामकूं हाथ जोड़ि सीस नवाय बारंबार प्रणामकरि सीता-का जीव प्रतींद्र स्तुति करता भया--हे संसारसागरके तारक,तुमने ध्यानरूप पवनकरि ज्ञानरूप अग्नि दीप्त करी,संसाररूप वन भस्म किया अर शुद्ध लेश्यारूप त्रिशूलकरि मोहरिपु हता, वैराग्य रूप वज्रकरि दृढस्नेहरूप पिंजरा चूर्ण किया। हे नाथ,हे मुनींद्र, हे भवसूदन, संसाररूप वनसूं जे डरें हैं तिनकूं तुम शरण हो। हे सर्वज्ञ,कृतकृत्य,जगतगुरु, पाया है पायवे योग्य पद जिन्होंने, हे प्रभो ! मेरी रक्षा करो,संसारके भ्रमणसूं अति व्याकुल है मन मेरा, तुम अनादिनिधन जिनशा-सनका रहस्य जानि प्रबल तपकरि संसारसागरसूं पार भए। हे देवाधिदेव ! यह तुमकूं कहा युक्त ? जो मुझे भववनमें तजि आप अकेले विमलपदकूं पधारे। तब भगवान् कहते भए--हे प्रतींद्र, तू राग तजि, जे वैराग्यमें तत्पर हैं तिनहीकूं मुक्ति है। रागी जीव संसारमें डूबें हैं। जैसें कोई शिलाकूं कंठमें बांधि भुजावों करि नदीकूं नहीं तिर सकै, तैसें रागादिके भारकरि चतुर्गतिरूप नदी न तिरी जाय। जे ज्ञान वैराग्य शील संतोषके धारक हैं वेई संसारकूं तिरें हैं। जे श्रीगुरुके वचनकरि आत्मानुभवके मार्ग लगे वेई भव-भ्रमणसूं छूटैं, और उपाय नाहीं, काहूका भी लेजाया लोकशिखर न जाय, एक वीतराग भावहीसूं जाय। इसभांति श्रीराम भगवान सीताके जीवकूं कहते भए। सो यह वार्ता गौतमस्वामीने राजा श्रेणिकसूं कही। बहुरि कहते भए--हे नृप सीताके जीव प्रतींद्रने जो केवलीसूं पूछी अर इनने कहा सो सुन-प्रतींद्रने पूछी हे नाथ, दशरथादिक कहां गए, अर लव अंकुश कहां जावेंगे ? तब भगवानने कही दशरथ कौशल्या सुमित्रा केकई सुप्रभा अर जनक अर जनकका भाई कनक यह सब तपके प्रभावकरि तेरहवें देवलोक गए हैं, यह सबही समान ऋद्धिके धारी देव हैं। अर लव अंकुश महा भाग्य कर्मरूप रजसूं रहित होय विमलपदकूं इसही जन्मसूं पावेंगे। इस भांति केवलीकी ध्वनि सुनि भामंडलकी गति पूछी-हे प्रभो ! भामंडल कहां गया ? तब आप कहते भए--हे प्रतींद्र,तेरा भाई रानी सुन्दरमालिनी सहित मुनिदानके प्रभावकरि देवकुरु भोगभूमिमें तीन पल्यकी आयुके भोक्ता भोगभूमियां भए। तिनके दानकी वार्ता सुनि—अयोध्यामें एक बहुकोटि धनका धनी सेठ कुलपति उसके मकरानामा स्त्री जिसके पुत्र राजावोंके तुल्य पराक्रमी सो कुलपतिने सुनी सीताकूं वनमें निकासी। तब उसने विचारी वह महागुणवती शीलवती सुकुमार अंग निर्जन वनमें कैसें अकेली रहेगी। धिकार है संसारकी चेष्टाकूं यह विचारि दयालुचित्त होय द्युति भट्टारकके समीप

मुनि भया। अर उसके दोय पुत्र एक अशोक दूजा तिलक यह दोनों मुनि भए सो घुति भट्टारक तो समाधिमरणकरि नवमग्रैवेयकमें अहमिंद्र भए। अर यह पिता पुत्र तीनों मुनि ताम्रचूर्णनामा नगर वहां केवलीकी वंदनाकूं गए सो मार्गमें पचास योजनकी एक अटवी वहां चातुर्मासिक आय पड्या तब एक वृक्षके तले तीनों साधु विराजे मानो साक्षात् रत्नत्रय ही हैं। वहां भामंडल आय निकस्या अयोध्या आवै था सो विषमवनमें मुनिनकूं देखि विचार किया, यह महापुरुष जिन-सूत्रकी आज्ञा-प्रमाण निर्जनवनमें विराजे, चौमासे मुनियोंका गमन नाहीं, अब यह आहार कैसे करैं। तब विद्याकी प्रबल शक्तिकरि निकट एक नगर बसाया जहां सब सामग्री पूर्ण,बाहिर नाना-प्रकारके उपवन सरोवर अर धानके क्षेत्र अर नगरके भीतर बड़ी वस्ती महासंपत्ति, चार महीना आप भी परिवारसहित उस नगरमें रह्या अर मुनियोंके वैयाव्रत किये। वह वन ऐसा था जिसमें जल नाहीं, सो अद्भुत नगर बसाया, जहां अन्न-जलकी बाहुल्यता सो नगरमें मुनियोंका आहार भया। अर और भी दुःखित भुखित जीवोंकूं भांति भांतिके दान दिए। अर सुंदर-मालिनी रानी सहित आप मुनियोंकूं अनेकवार निरंतराय आहार दीया। चतुर्मास पूर्ण भए मुनि विहार करते भए। अर भामंडल अयोध्या आय फिर अपने स्थानक गया। एक दिन सुंदरमा-लिनी रानी सहित सुखसूं शयन करै था सो महलपर बिजुरी पड़ी, राजा रानी दोनो मरकरि मुनिदानके प्रभावसूं सुमेरुपर्वतकी दाहिनी ओर देवकुरु भोगभूमि वहां तीन पल्यके आयुके भोक्ता युगल उपजे सो दानके प्रभावसूं सुख भोगवें हैं। जे सम्यक्तरहित हैं अर दान करैं हैं सो सुपात्रदानके प्रभावसूं उत्तमगतिके सुख पावे हैं सो यह पात्रदान महासुखका दाता है। यह बात सुनि फिर प्रतींद्रने पूछी। हे नाथ, रावण तीजी भूमिसूं निकसि कहां उपजेगा, अर मैं स्वर्गसूं चयकरि कहां उपजूंगा। मेरे अर लक्ष्मणके अर रावणके केते भव बाकी हैं सो कहो!

तब सर्वज्ञदेवने कही—हे प्रतींद्र सुन, वे दोनों विजयावती नगरीमें सुनंदनामा कुटुम्बी सम्यग्दृष्टि उसके रोहिणीनामा भार्या उसके गर्भविषैं अरहदास ऋषिदास नामा पुत्र होवेंगे। महा गुणवान निर्मलचित्त दोनों भाई उत्तम क्रियाके पालक श्रावकके व्रत आराधि समाधि मरण करि जिन-राजाका ध्यान धरि स्वर्गविषैं देव होवेंगे। तहां सागरां पर्यंत सुख भोग स्वर्गसूं चयकरि बहुरि वाही नगरीविषैं बड़े कुलविषैं उपजैंगे सो मुनिनिकूं दान देकर हरिक्षेत्र जो मध्यम भोगभूमि वहां युगलिया होय दोय पल्यकी आयु भोगि स्वर्ग जावेंगे। बहुरि उसही नगरीविषैं राजा कुमार कीर्ति रानी लक्ष्मी तिनके महायोधा जयकांत जयप्रभ नामा पुत्र होवेंगे। बहुरि तपकरि सातवें स्वर्ग उत्कृष्ट देव होवेंगे। देवलोकके महासुख भोगेंगे। अर तू सोलहवां अच्युत स्वर्ग वहांसूं चयकरि या भरतक्षेत्रविषैं रत्नस्थलपुरनामा नगर वहां चौदह रत्नका स्वामी षट्खण्ड पृथिवीका धनी चक्रनामा चक्रवर्ती होयगा। तब वे सातवें स्वर्गसूं चयकरि तेरे

पुत्र होवेंगे। रावणके जीवका नाम तो इन्द्ररथ, अर वासुदेवके जीवका नाम मेघरथ दोनों महा धर्मात्मा होवेंगे, परस्पर उनमें अति स्नेह होयगा। अर तेरा उनसूं अति स्नेह होयगा जिस रावणने नीतिसूं तीन खंड पृथिवीका अखंड राज्य किया अर ये प्रतिज्ञा जन्मपर्यंत निबाही जो परस्त्री मोहि न इच्छे ताहि मैं न सेऊं, सो रावणका जीव इन्द्ररथ धर्मात्मा कैयक श्रेष्ठ भव धरि तीर्थंकर देव होयगा,तीनलोक उसकूं पूजेंगे। अर तू चक्रवर्ती राज्य पद तजि मुनिव्रतधारी होय पंचोत्तरोंविषैं वैजयंतनामा विमान तहां तपके प्रभावसूं अहमिंद्र होवेगा तहांसूं चयकरि रावणका जीव तीर्थंकर उसके प्रथम गणधर होय निर्वाण पद पावेगा। यह कथा श्रीभगवान राम केवली तिनके मुख प्रतींद्र सुनकरि अतिहर्षित भया। बहुरि सर्वज्ञदेवने कही हे प्रतींद्र! तेरा चकवर्ती पदका दूजा पुत्र मेघरथ सो कैयक महाउत्तम भवधरि धर्मात्मा पुष्करद्वीपके महाविदेह क्षेत्रविषैं शतपत्रनामा नगर तहां पंचकल्याणकका धारक तीर्थंकर देव चक्रवर्ती पदकूं धरे होयगा,संसारका त्यागकरि केवल उपजाय अनेकोंकूं तारैगा अर आप परमधाम पधारेगा। ये वासुदेवके भव तोहि कहे। अर मैं अब सात वर्षविषैं आयु पूर्णकरि लोक शिखर जाऊंगा जहांसूं बहुरि आना नाहीं,अर जहां अनंत तीर्थंकर गए अर जावेंगे,अनंत केवली तहां पहुचे जहां ऋषभादि भरतादि विराजे हैं, अविनाशीपुर त्रैलोक्यके शिखर हैं जहां अनंत सिद्ध हैं, वहां मैं तिष्ठूंगा। ये वचन सुनि प्रतींद्र पद्मनाम जे श्रीरामचंद्र सर्वज्ञ वीतराग तिनकूं बार-बार नमस्कार करता भया। अर मध्यलोकके सर्व तीर्थ वंदे, भगवानके कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय अर निर्वाणक्षेत्र वहां सर्वत्र पूजाकरि अर नंदीश्वरद्वीपविषै अंजनगिरि दधिमुख रतिकर तहां बड़े विधानसूं अष्टाह्निकाकी पूजा करी। देवाधिदेव जे अरहंत सिद्ध तिनका ध्यान करता भया, अर केवलीके वचन सुन ऐसा निश्चय भया जो मैं केवली होय चुका, अल्प भव है। अर भाईके स्नेहसूं भोगभूमिविषैं जहां भामण्डलका जीव है तहां उसे देखा, अर उसकूं कल्याणका उपदेश दीया। बहुरि अपना स्थान सोलहवां स्वर्ग वहां गया जाके हजारों देवांगना तिनसहित मानसिक भोग भोगता भया। श्रीरामचंद्रका सत्रह हजार वर्षकी आयु सोलह धनुषकी ऊंची काया कैयक जन्मके पापोंसे रहित होय सिद्ध भये। वे प्रभु भव्यजीवोंका कल्याण करो, जन्म जरा मरण महारिपु जीते परमात्मा भये। जिनशासनविषैं प्रकट है महिमा जिनकी, जन्म जरा मरणका विच्छेदकरि अखंड अविनाशी परम अतींद्रिय सुख पाया, सुर असुर मुनिवर तिनके जे अधिपति तिनकर सेयवे योग्य नमस्कार करवे योग्य दोषोंके विनाशक पचीस वर्ष तपकरि मुनिव्रत पालि केवली भये सो आयुपर्यंत केवलीदशाविषैं भव्योंकूं धर्मोपदेश देय तीन भवनका शिखर जो सिद्धपद वहां सिधारे।

सिद्धपद सकल जीवोंका तिलक है राम सिद्ध भए, तुम रामकूं सीस नवाय नमस्कार करो, राम सुर नर मुनियोंकरि आराधिवे योग्य शुद्ध हैं भाव जिनके, संसारके कारण जे रागद्वेष

मोहादिक तिनसूं रहित हैं, परम समाधिके कारण हैं, अर महामनोहर हैं, प्रतापकरि जीत्या है तरुण सूर्यका तेज जिनने, अर उन जैसी शरदकी पूर्णमासीके चंद्रमामें कांति नाहीं, सर्व उपमारहित अनुपम वस्तु हैं। अर स्वरूप जो आत्मरूप उसमें आरूढ, श्रेष्ठ है चरित्र जिनके श्रीराम यतीश्वरोंके ईश्वर देवोंके अधिपति प्रतींद्रकी मायासूं मोहित न भए, जीवोंके हितू परम ऋद्धिकरि युक्त अष्टम बलदेव पवित्र शरीर शोभायमान अनंत वीर्यके धारो अतुल महिमाकरि मंडित निर्विकार अठारह दोषकरि रहित, अष्टादश सहस्र शीलके भेद तिनकरि पूर्ण, अति उदार अति गंभीर ज्ञानके दीपक तीन लोकमें प्रगट है प्रकाश जिनका अष्टकर्मके दग्ध करणहारे, गुणोंके सागर क्षोभरहित सुमेरुमे अचल, धर्मके मूल कषायरूप रिपुके नाशक समस्त विकल्परहित महानिर्द्वंद्व जिनेंद्रके शासनका रहस्य पाय अंतरात्मासूं परमात्मा भए, उनने त्रैलोक्यपूज्य परमेश्वरपद पाया तिनकूं तुम पूजो। धोय डारे हैं कर्मरूप मल जिनने, केवलज्ञान केवल दर्शनमई योगीश्वरोंके नाथ सब दुःखके दूर करणहारे मन्मथके मथनहारे तिनकूं प्रणाम करो। यह श्रीबलदेवका चरित्र महामनोज्ञ जो भावधर निरंतर बाचैं सुनैं पढैं पढावैं शंकारहित होय महाहर्षका भरा रामकी कथाका अभ्यास करैं तिसके पुण्यकी वृद्धि होय। अर वैरी खडग हाथमें लिए मारिवेकूं आया होय सो शांत होय जाय। या ग्रंथके श्रवणसूं धर्मके अर्थी इष्टधर्मकूं लहैं, यशका अर्थी यशकूं पावै, राज्यभ्रष्ट हुआ अर राज्य-कामना होय तो राज्य पावै, यामें संदेह नाहीं। इष्ट संयोगका अर्थी इष्टसंयोग लहे, धनका अर्थी धन पावे, जीतका अर्थी जीत पावै, स्त्रीका अर्थी सुन्दर स्त्री पावै, लाभका अर्थी लाभ पाव, सुखका अर्थी सुख पावै, अर काहूका कोई वल्लभ विदेश गया होय, अर उसके आयवेकी आकुलता होय सो वह सुखसूं घर आवे। जो मनविषैं अभिलाषा होय सो ही सिद्ध होय, सर्व व्याधि शांत होय, ग्रामके नगरके वनके देव जलके देव प्रसन्न होय,अर नवग्रहोंकी बाधा न होय, क्रूर ग्रह सौम्य होय जाय, अर जे पाप चिंतवनमें न आवें वे विलाय जांय। अर सकल अकल्याण राम कथाकरि क्षय होय जाय, अर जितने मनोरथ हैं वे सब रामकथाके प्रसादतैं पावैं। अर वीतराग भाव दृढ होय उसकरि हजारां भवके उपार्जे पापोंकूं प्राणी दूर करैं, कष्टरूप समुद्रकूं तिर सिद्धपद शीघ्रही पावैं। यह ग्रन्थ महापवित्र है जीवको समाधि उपजावनेका कारण है, नाना जन्ममें जीवने पाप उपार्जे महाक्लेशके कारण तिन का नाशक है, अर नाना प्रकारके व्याख्यान तिनकरि संयुक्त है, जिसमें बड़े बड़े पुरुषोंकी कथा, भव्यजीवरूप कमलोंको प्रफुल्लित करणहारा है, सकल लोककरि नमस्कार करिवे योग्य। श्री-वर्धमान भगवान् उनने गोतमसूं कहा, अर गौतमने श्रेणिकसूं कहा। याहि भांति केवली श्रुत-केवली कहते भए। रामचन्द्रका चरित्र साधुओंकी समाधिकी वृद्धिका कारण सर्वोत्तम महामंगलरूप सोमुनिनिकी परिपाटीकरि प्रकट होता भया। सुंदर है वचन जिसमें समीचीन अर्थकूं धरे अति

अद्भुत इन्द्रगुरुनामा मुनि तिनके शिष्य दिवाकरसेन, तिनके शिष्य लक्ष्मणसेन, तिनके शिष्य रविषेण, तिन जिन-आज्ञानुसार कहा। यह रामका पुराण सम्यग्दर्शनकी सिद्धिका कारण, महा कल्याणका कर्ता, निर्मल ज्ञानका दायक, विचक्षण जीवोंके निरंतर सुनिवे योग्य है। अतुल पराक्रमी अद्भुत आचरणके धारक महासुकृती जे दशरथके नंदन तिनकी महिमा कहां लग कहूं। इस ग्रन्थमें बलभद्र नारायण प्रतिनारायण तिनका विस्ताररूप चरित्र है। जो यामें बुद्धि लगावे तो अकल्याणरूप पापोंकूं तजकरि शिव कहिये मुक्ति उसे अपनी करै। जीव विषयकी वांछाकरि अकल्याणको प्राप्त होय हैं। विषयाभिलाष कदाचित् शांतिके अर्थ नाहीं, देखो विद्याधरनिका अधिपति रावण परस्त्रीकी अभिलाषाकरि कष्टकूं प्राप्त भया, कामके रागकरि हता गया ऐसे पुरुषोंकी यह दशा है तो और प्राणी विषय वासनाकरि कैसे सुख पावे? रावण हजारां स्त्रियोंकरि मण्डित निरन्तर सुख सेवै था सो तृप्त न भया, परदाराकी कामनाकर विनाशकूं प्राप्त भया। इन व्यसनोंकरि जीव कैसैं सुखी होय। जो पापी परदाराका सेवन करै सो कष्टके सागर में पड़ै। अर श्रीरामचन्द्र महा शीलवान परदारा-परान्मुख जिनशासनके भक्त धर्मानुरागी वे बहुत काल राज्य भोग संसारकूं असार जानि वीतरागके मार्गमें प्रवर्ते परमपदकूं प्राप्त भए, और भी जे वीतरागके मार्गमें प्रवर्तेंगे वे शिवपुर पहुचेंगे। इसलिए जे भव्य जीव हैं वे जिन-मार्गकी दृढ़ प्रतीति कर अपनी शक्ति-प्रमाण व्रतका आचरण करो। जो पूर्ण शक्ति होय तो मुनि होवो, अर न्यून शक्ति होय तो अणुव्रतके धारक श्रावक होवो। यह प्राणी धर्मके फलकरि स्वर्ग मोक्षके सुख पावैं हैं अर पापके फलसूं नरक निगोदके फल पावैं हैं यह निःसंदेह जानो। अनादि-कालकी यही रीति है--धर्म सुखदाई, अधर्म दुखदाई। पाप किसे कहिए, अर पुण्य किसे कहिए सो उरविषैं धारो, जेते धर्मके भेद हैं तिनविषैं सम्यक्त्व मुख्य है। अर जितने पापके भेद हैं तिनमें मिथ्यात्व मुख्य है। सो मिथ्यात्व कहा अतत्वकी? श्रद्धा अर कुगुरु कुदेव कुधर्मका आराधन, परजीवकूं पीड़ा उपजावना, अर क्रोध मान माया लोभकी तीव्रता, अर पांच इंद्रियोंके विषय सप्तव्यसनका सेवन, अर मित्रद्रोह कृतघ्न विश्वासघात अभक्ष्यका भक्षण अगम्यविषे गमन, मर्मका छेदक वचन दुर्जनता इत्यादि पापके अनेक भेद हैं वे सब तजने। अर दया पालनी, सत्य बोलना, चोरी न करनी, शील पालना, तृष्णा तजनी, काम लोभ तजने, शास्त्र पढ़ना काहूकूं कुवचन न कहना, गर्व न करना, प्रपंच न करना, अदेखसका न होना शांतभाव धरना पर-उपकार करना परदारा परधन परद्रोह तजना, परपीड़ाका वचन न कहना। बहु आरंभ बहु परिग्रहका त्याग करना, दान देना तप करना, परदुःखहरण इत्यादि जो अनेक भेद पुण्यके हैं वे अंगीकार करने। अहो प्राणी हो सुखदाता शुभ है, अर दुखदाता अशुभ हैं, दारिद्र दुःख रोग पीड़ा अपमान दुर्गति यह सब अशुभके उदयसूं होय हैं, अर सुख संपत्ति सुगति यह सब शुभके उदयसूं

होय हैं। शुभ अशुभ ही सुख दुःखके कारण हैं। अर कोई देव दानव मानव सुख दुखका दाता नाहीं, अपने अपने उपार्जे कर्मका फल सब भोगवे हैं। सब जीवोंसूं मित्रता करना, किसीसे वैर न करना, किसीको दुख न देना, सब ही सुखी हों यह भावना मनमें धरनी। प्रथम अशुभको तज शुभमें आवना, बहुरि शुभाशुभतैं रहित होय शुद्ध पदकूं प्राप्त होना। बहुत कहिवे कर क्या? इस पुराणके श्रवणकर एक शुद्ध सिद्धपदमें आरूढ़ होना, उनके भेद कर्मनिका विलयकरि आनंदरूप रहना। हो पंडित हो! परम पदके उपाय निश्चय थकी जिनशासनमें कहे हैं वे अपनी शक्ति प्रमाण धारण करो, जिसकर भवसागरसे पार होवो। यह शास्त्र अति मनोहर जीवोंको शुद्धताका देनहारा रविसमान सकल वस्तुका प्रकाशक है सो सुनकर परमानंद स्वरूपमें मग्न होवो, संसार असार है जिन धर्म सार है जाकरि सिद्ध पदको पाईये है। सिद्धपद समान और पदार्थ नाहीं, जब श्रीभगवान् त्रैलोक्यके सूर्य वर्द्धमान देवादिदेव सिद्ध लोकको सिधारे तब चतुर्थ कालके तीन वर्ष साढे आठ महीना शेष थे, सो भगवानको मुक्त भए पीछे पंचमकालमें तीन केवली अर पांच श्रुतकेवली भए सो वहां लग तो पुराण पूर्ण रह्या, जैसे भगवानने गौतम गणधरसूं कहा अर गौतमने श्रेणिकसूं कहा। वैसा श्रुतकेवली ने कहा। श्रीमहावीर पीछे बासठ वर्ष लग केवलज्ञान रहा, अर केवली पीछे सौ वर्ष तक श्रुतकेवली रहे। पंचम श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामी तिनके पीछे कालके दोषसूं ज्ञान घटता गया तब पुराणका विस्तार न्यून होता भया। श्री भगवान महावीरकूं मुक्ति पधारे बारह सौ साढे तीन वर्ष भये तब रविषेणाचार्यने अठारह हजार अनुष्टुप् श्लोकोंमें व्याख्यान किया। यह रामका चरित्र सम्यक्त्व-चारित्रका कारण केवली श्रुतकेवली प्रणीत सदा पृथिवीमें प्रकाश करो जिनशासनके सेवक देव जिनभक्तिविषैं परायण जिनधर्मी जीवोंकी सेवा करें हैं जे जिनमार्गके भक्त हैं तिनके सभी सम्यग्-दृष्टि देव आवैं हैं नानाविधि सेवा करे हैं महा आदर संयुक्त सर्व उपायकर आपदामें सहाय करैं हैं अनादिकालसूं सम्यग्दृष्टि देवोंकी ऐसी ही रीति है। जैनशास्त्र अनादि है काहूका किया नाहीं, व्यंजन स्वर यह सब अनादि सिद्ध रविषेणाचार्य कहे हैं मैं कछु नाहीं किया। शब्द अर्थ अकृत्रिम हैं अलंकार छन्द आगम निर्मलचित्त होय नीके जानने। या ग्रंथविषैं धर्म अर्थ काम मोक्ष सर्व हैं। अठारह हजार तेईस श्लोकका प्रमाण पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ है इसपर यह भाषा भई सो जयवंत होवै, जिनधर्मकी वृद्धि होवै राजा प्रजा सुखी होवें॥

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीरामके मोक्षप्राप्तिका वर्णन करनेवाला एक सौ तेईसवां पर्व पूर्ण भया॥१२३॥

भाषाकारका परिचय—

चौपाई–जम्बूद्वीप सदा शुभथान । भरतक्षेत्र ता माहिं प्रमाण । उसमें आरजखंड पुनीत । वसैं ताहिमें लोक विनीत ॥१॥ तिनके मध्य ढुंढार जु देश । निवसैं जैनी लोक विशेष । नगर सवाई जयपुर महा । तासकी उपमा जाय न कहा ॥२॥ राज्य करै माधव नृप जहां । कामदार जैनी जन तहां । ठौर ठौर जिन मंदिर बनें । पूजैं तिनकूं भविजन घने ॥३॥ बसें महाजन नाना जाति । सेवैं जिनमारग बहु न्याति ॥ रायमल्ल साधर्मी एक । जाके घटमें स्वपर विवेक ॥४॥ दयावंत गुणवंत सुजान । पर उपकारी परम निधान ॥ दौलतराम सु ताको मित्र । तासों भाष्यो वचन पवित्र ॥ पद्मपुराण महाशुभ ग्रन्थ । तामें लोकशिखरको पन्थ । भाषारूप होय जो येह । बहुजन बांच करें अति नेह ॥६॥ ताके वचन हियेमें धार । भाषा कीनी मति अनुसार ॥ रविषेणाचारज-कृत सार । जाहि पढैं बुधजन गुणधार ॥७॥ जिनधर्मिनकी आज्ञा लेय । जिनशासनमांही चित देय ॥ आनदसुतने भाषा करी । नंदो विरदो अति रस भरी ॥८॥ सुखी होहु राजा अर लोक । मिटो सबनिके दुख अरु शोक । वरतो सदा मंगलाचार । उतरो बहुजन भवजल पार ॥९॥ सम्वत अष्टादश शत जान । ता ऊपर तेईस बखान (१८२३) शुक्लपक्ष नवमी शनिवार । माघमास रोहिणि ऋख सार ॥१०॥

दोहा—ता दिन सम्पूरण भयो, यहै ग्रन्थ सुखदाय ।
चतुरसंघ मंगल करो, बढै धर्म्म जिनराय ॥११॥
या श्रीरामपुरानके छंद अनूपम जान ।
सहस बीस द्वय पांचसौ भाषा ग्रंथ प्रमान ॥१२॥